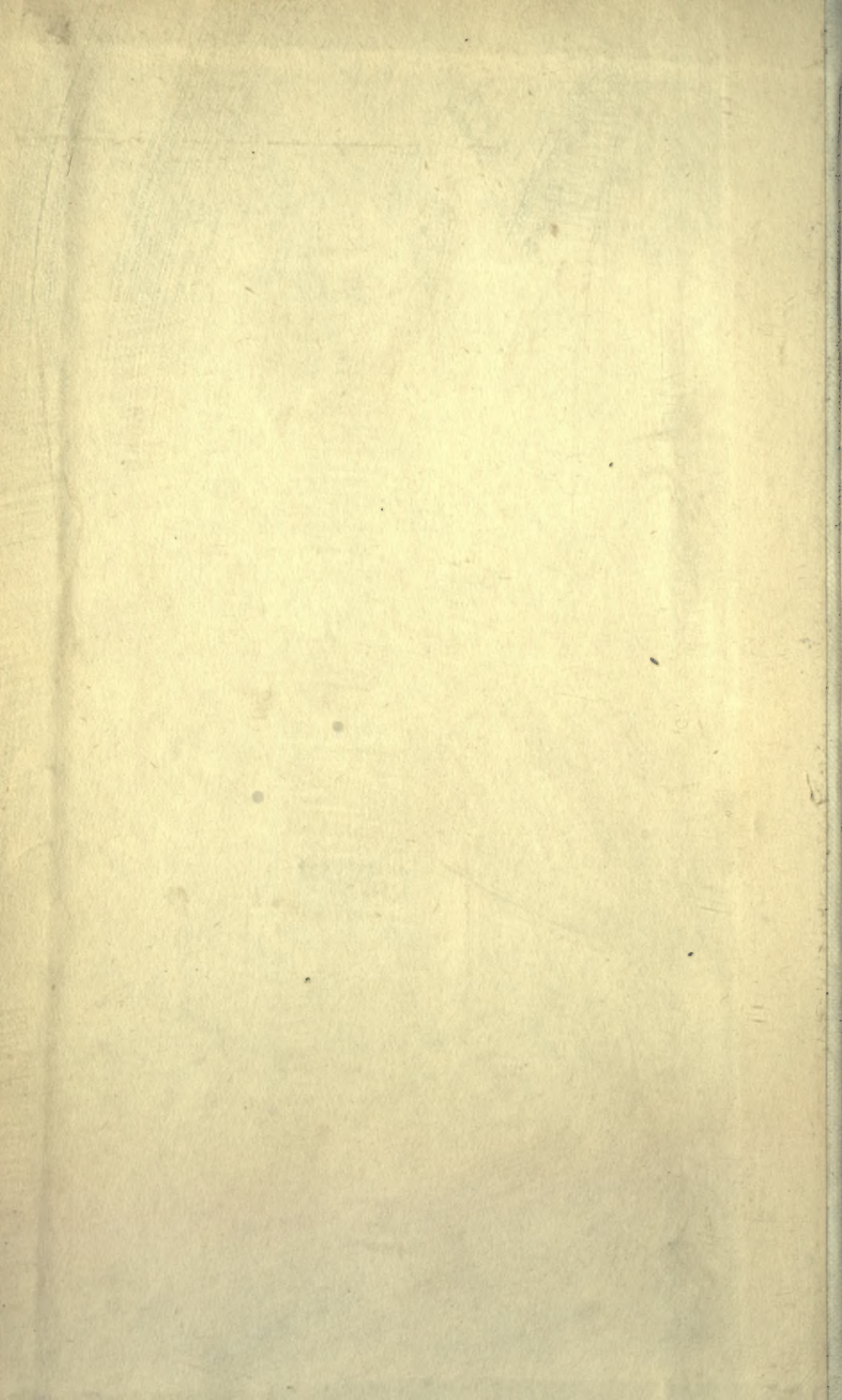


UNIV. OF
TORONTO
LIBRARY





~~Scand. Lit.~~
§.

SKÍRNIR

TÍMARIT HINS ÍSLENZKA BÓKMENTAFÉLAGS

XC. ÁR

RITSTJÓRI
GUÐM. FINNBOGASON
DR. PHIL.



15-5-371
21/6/20

REYKJAVÍK
ÍSAFOLDARPRENTSMÍÐJA — 1916



PT

7351

S5

ay 90-92

Efnisskrá.

	Bls.
Matthías áttæður, eftir <i>Sigurð Guðmundsson</i>	1
Lesturinn og sálarfræðin, eftir <i>Guðm. Finnbogason</i>	17
Röntgensgeislar, eftir <i>Gunnlaug Claessen</i>	32
Draumljóð, eftir <i>Theodóru Thoroddsen</i>	51
Draumur (smásaga), eftir <i>Þóri Bergsson</i>	65
Utan úr heimi, eftir <i>Héðin Valdimarsson</i>	70
Athugasemd, eftir <i>Finn Jónsson</i>	83
Svar, eftir <i>Björn M. Ólsen</i>	84
Rittfregnir, eftir <i>Björn M. Ólsen, Sigurð Nordal, Jón Jónsson,</i> <i>Guðm. Finnbogason, Helga Jónsson, Pál Eggert Ólason</i> .	85
Ísland 1915, eftir <i>Þorstein Gíslason</i>	103
Aldarafmæli hins íslenska Bókmentafélags, eftir <i>Björn M. Ólsen</i> .	113
Útsær (kvæði), eftir <i>Einar Benediktsson</i>	116
Um Þorleif Guðmundsson Repp (með mynd), eftir <i>Pál Eggert Ólason</i>	121
Þegnaskylduvinna, eftir <i>Hermann Jónasson</i>	158
Hvað verður um arfleifð Íslendinga, eftir <i>Bjarna Jónsson frá</i> <i>Vogi</i>	196
Utan úr heimi, eftir <i>Héðin Valdimarsson</i>	205
Snorri Sturluson, eftir <i>Sigurð Nordal</i>	225
Hvað eru Röntgensgeislar?, eftir <i>Þorkel Þorkelsson</i>	256
Traust (saga), eftir <i>Einar S. Frimann</i>	262
Benrögn, eftir <i>Steingrím Matthíasson</i>	275
Utan úr heimi, eftir <i>Héðin Valdimarsson</i>	290
Rittfregnir, eftir <i>Björn M. Ólsen, Holger Wiehe, Jón Helgason,</i> <i>Bjarna Sæmundsson, Sigurð Nordal, Einar Hjörleifsson,</i> <i>Sigurð Guðmundsson</i>	304
Athugasemdir við tímataalsritgerð G. B., eftir <i>Jóhannes L. L.</i> <i>Jóhannsson</i>	332
Forn daganöfn, eftir <i>Jón Jónsson</i>	335

	Bls.
Aldarafmæli hins íslenska Bókmentafélags	337
Ræða, eftir <i>Þorvald Thoroddsen</i>	339
Tunglskinsnótt (kvæði), eftir <i>Guðm. Friðjónsson</i>	343
Landið og þjóðin, eftir <i>Guðm. Finnbogason</i>	347
Edda í kveðskap fyr og nú, eftir <i>Janus Jónsson</i>	358
Dúna Kvaran (saga), eftir <i>Goðmund Kamban</i>	378
Nýjar uppgötvanir um mannsröddina, eftir <i>Alexander Jóhannesson</i>	391
Þjóðareignin, eftir <i>Indriða Einarsson</i>	405
Grátur (smásaga), eftir <i>Marlu Jóhannsdóttur</i>	415
Dómaskipun í fornöld, eftir <i>Finn Jónsson</i>	422
Jöklar á Íslandi í fornöld, eftir <i>Helga Pjeturss</i>	429
Fáfnir og forn þýzka, eftir <i>Helga Pjeturss</i>	431
Þú —! (kvæði), eftir <i>Arna Óla</i>	436
Ritfregnir, eftir <i>Björn M. Ólsen</i> og <i>Goðmund Kamban</i>	437
Leiðrétting, eftir <i>Jóh. L. L. Jóhannsson</i>	448
Prentvillur	448

Skýrslur og reikningar Bókmentafélagsins 1915 I—XXIX

118	119	120	121	122	123	124	125	126	127	128	129	130	131	132	133	134	135	136	137	138	139	140	141	142	143	144	145	146	147	148	149	150	151	152	153	154	155	156	157	158	159	160	161	162	163	164	165	166	167	168	169	170	171	172	173	174	175	176	177	178	179	180	181	182	183	184	185	186	187	188	189	190	191	192	193	194	195	196	197	198	199	200	201	202	203	204	205	206	207	208	209	210	211	212	213	214	215	216	217	218	219	220	221	222	223	224	225	226	227	228	229	230	231	232	233	234	235	236	237	238	239	240	241	242	243	244	245	246	247	248	249	250	251	252	253	254	255	256	257	258	259	260	261	262	263	264	265	266	267	268	269	270	271	272	273	274	275	276	277	278	279	280	281	282	283	284	285	286	287	288	289	290	291	292	293	294	295	296	297	298	299	300	301	302	303	304	305	306	307	308	309	310	311	312	313	314	315	316	317	318	319	320	321	322	323	324	325	326	327	328	329	330	331	332	333	334	335	336	337	338	339	340	341	342	343	344	345	346	347	348	349	350	351	352	353	354	355	356	357	358	359	360	361	362	363	364	365	366	367	368	369	370	371	372	373	374	375	376	377	378	379	380	381	382	383	384	385	386	387	388	389	390	391	392	393	394	395	396	397	398	399	400	401	402	403	404	405	406	407	408	409	410	411	412	413	414	415	416	417	418	419	420	421	422	423	424	425	426	427	428	429	430	431	432	433	434	435	436	437	438	439	440	441	442	443	444	445	446	447	448	449	450	451	452	453	454	455	456	457	458	459	460	461	462	463	464	465	466	467	468	469	470	471	472	473	474	475	476	477	478	479	480	481	482	483	484	485	486	487	488	489	490	491	492	493	494	495	496	497	498	499	500	501	502	503	504	505	506	507	508	509	510	511	512	513	514	515	516	517	518	519	520	521	522	523	524	525	526	527	528	529	530	531	532	533	534	535	536	537	538	539	540	541	542	543	544	545	546	547	548	549	550	551	552	553	554	555	556	557	558	559	560	561	562	563	564	565	566	567	568	569	570	571	572	573	574	575	576	577	578	579	580	581	582	583	584	585	586	587	588	589	590	591	592	593	594	595	596	597	598	599	600	601	602	603	604	605	606	607	608	609	610	611	612	613	614	615	616	617	618	619	620	621	622	623	624	625	626	627	628	629	630	631	632	633	634	635	636	637	638	639	640	641	642	643	644	645	646	647	648	649	650	651	652	653	654	655	656	657	658	659	660	661	662	663	664	665	666	667	668	669	670	671	672	673	674	675	676	677	678	679	680	681	682	683	684	685	686	687	688	689	690	691	692	693	694	695	696	697	698	699	700	701	702	703	704	705	706	707	708	709	710	711	712	713	714	715	716	717	718	719	720	721	722	723	724	725	726	727	728	729	730	731	732	733	734	735	736	737	738	739	740	741	742	743	744	745	746	747	748	749	750	751	752	753	754	755	756	757	758	759	760	761	762	763	764	765	766	767	768	769	770	771	772	773	774	775	776	777	778	779	780	781	782	783	784	785	786	787	788	789	790	791	792	793	794	795	796	797	798	799	800	801	802	803	804	805	806	807	808	809	810	811	812	813	814	815	816	817	818	819	820	821	822	823	824	825	826	827	828	829	830	831	832	833	834	835	836	837	838	839	840	841	842	843	844	845	846	847	848	849	850	851	852	853	854	855	856	857	858	859	860	861	862	863	864	865	866	867	868	869	870	871	872	873	874	875	876	877	878	879	880	881	882	883	884	885	886	887	888	889	890	891	892	893	894	895	896	897	898	899	900	901	902	903	904	905	906	907	908	909	910	911	912	913	914	915	916	917	918	919	920	921	922	923	924	925	926	927	928	929	930	931	932	933	934	935	936	937	938	939	940	941	942	943	944	945	946	947	948	949	950	951	952	953	954	955	956	957	958	959	960	961	962	963	964	965	966	967	968	969	970	971	972	973	974	975	976	977	978	979	980	981	982	983	984	985	986	987	988	989	990	991	992	993	994	995	996	997	998	999	1000
-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	------

Matthías áttæður.

Þín andans tilþrif, fjörtök frjáls og hörð,
sem fagrir tindar rísa upp af heiði.

Eg fæst ei um, þótt hnjúka skilji skörð
og skriður nokkrar grænum hlíðum eyði.

Hannes Hafstein.

Æðsta presti þessa lands, síra Matthíasi, hefir nú hlotnast það, sem fæstum veitist, að komast ungur á níðæðisaldur og öðlast einróma viðurkenning þjóðar sinnar á goðagáfum sínum og æfistarfi í þarfir bókmenta vorra. Eru nú allir fuglar himins og dýr merkurinnar með oss full lofgerðar um háran örninn, sem enn lyftir vængjunum hraustlega til flugs, hvílist á háum hamrastöllum og hreykir þar höfðinu mót himni og sólu.

Síra Matthías hefir oft ort yfirlitskvæði, þar sem hann lætur ágætismenn íslenzkrar sögu líta yfir líf sitt eða flýgur sjálfur yfir kafla úr sögu lands vors. Það á því ekki illa við, að gerð sé tilraun til að gjalda honum líku líkt og líta yfir líf hans og skáldskap. En skáldið og lesendurnir verða að fyrirgefa, að ekki er kostur á að gera honum sömu skil sem hann hefir gert þeim merkismönnum, er hafa verið þeir hepnismenn að komast í hendur honum til skáldlegrar meðferðar.

Braut hans er að sumu leyti hlykkjótt, og tókst seint að koma honum á rétta götu. Mjög ungum er honum komið fyrir hjá móðurbróður sínum til náms, en þar verður lítið úr lærdómi, hvað sem valdið hefir. Skömmu eftir

fermingu fer hann þaðan til Flateyjar og fæst þá nokkur ár við búðarstörf. Þá er hann er rúmlega tvítugur, á hann að verða verzlunarmaður, og hann fer þá utan til verzlunarnáms. Matthías Jochumsson kaupmaður eða verzlunarstjóri! Verzlun Matthíasar Jochumssonar! Það er í senn broslegt og sorglegt að hugsa til slíks! Ef mönnum hefði verið vel ljóst, hvað í honum bjó, hefði aldrei komið til slíkrar ráðagerðar. Kveikir þetta ónotalega grun á, að margir lendi á röngum stað í lífinu.

En verzlunarnemi vor var óvenju hneigður fyrir fagrar mentir. Hann sökti sér ofan í lestur góðra skáldrita, og naut þar einhvernar beztu leiðsagnar, er þá var kostur á meðal Íslendinga. Háskólastúdent Steingrímur Thorsteins-son las með honum »valinn skáldskap, bæði þýzkan og klassiskan, og hann las fyrstur með mér Sæmundareddu, Ossían og þýðingar grískra höfuðskálda« (»Fyrsta utanför min«. Skírnir 1914). Eftir ársdvöl erlendis hverfur hann heim aftur. En svo er að sjá, sem hann hafi ekki þótt efnilegur verzlunarmaður. Þá fyrst er farið að hugsa til að koma honum í skóla. Nærri hálfþrítugur fer hann í latínuskólann, og er það venjulegur kandidatsaldur annarstaðar. Síra Matthías sezt þá fyrst á skólabekk, er beztu námsárin eru flogin framhjá. Eftir það heldur hann fljótt og rակleitt lögboðna skólabraut, og tók prestsvígslu rúmlega þrítugur. Gerðist hann prestur í Kjalarnesþingum, er voru þá eitt hið lélegasta prestakall landsins.

Á næstu árum skella á hann stórir harmar. Meðan hann þjónaði Kjalarnesþingum, fer hann tvívegis utan, ferðaðist til Englands, Noregs og Danmerkur í fyrri förinni. 1874 lætur hann af prestsskap og gerist nú ritstjóri Þjóðólfs nokkur ár og skrifar þar um alt milli himins og jarðar og þar fyrir ofan. En óróinn og útþráin ólga í honum. Hann fer enn til útlanda 1876. Hann ferðast og um Ísland á þessum árum. 1881 fer hann aftur í þjónustu kirkjunnar og fluttist þá að Odda á Rangárvöllum. Bættist þá við einn þátturinn í sögu þessa merkisstaðar, þar sem Sæmundur fróði var prestur mörgum öldum áður,

Jón Loftsson stýrði næstum öllu landinu og Snorri Sturluson ólst upp. Varð hann nú að stunda búskap, og er mælt, að honum hafi þar vel búnast. En útsækin var hann enn. Hann brá sér utan 1885. Hann flyzt búferlum til Akureyrar 1887 og hefir síðan átt þar heima. Hann fær lausn frá prestskap árið 1900 og 2000 kr. eftirlaun. Hann hefir ekki hætt utanferðum sínum, þótt aldur hafi færst yfir hann. Hvað eftir annað hefir hann skroppið út fyrir hafið, og 1893 fór hann til Vesturheims, á Chicagosýninguna miklu. Hefir vist enginn islenskur prestur farið líkt því eins oft utan og hann. Hefir hann þó oftast verið félítill. Sýna þessar utanferðir sérkennileik hans. Svipar honum í þessu til elzta þjóðskálds vors, Egils Skallagrímssonar, sem eirði ekki lengi heima í einu. Forfeður vorir skildu ekki þessa útþrá Egils og eignuðu hana fjölkyngi Gunnhildar kongamóður. Vér vitum, að hún er göfugs eðlis, Braga ættar, og fylgja margra andans manna.

Þá er talin eru svokölluð trúnaðarstörf og stöður hversdagsmanna, getið hjúskapar þeirra og barna, er lokið æfisögu þeirra. Þá byrjar sérsaga afreksmanna og afarmenna. Ef rent er augum yfir verk og æfíkjör síra Matthíasar, sést óðara, að svo mikið liggur eftir hann, að það skipar honum á bekk með afburðamönnum þjóðar vorrar. Hann lýkur ekki námi fyr en um þritugt, verður síðan að hafa bókmentastörf og andlegar iðkanir í hjáverkum, þar til hann er hálfsjötugur, gegnir erfiðum prestaköllum, fæst við búskap og kenslu, á við þröngvan fjárhag og mikla ómegð að stríða og verður oft að eyða orku í að sjá sér þar úrræði og útvegi. Alt fyrir þetta er hann ljóðfrjóasta þjóðskáld vort. Ljóðmæli hans, þýdd og frumort, eru 5 bindi, en ekki alllitið hefir bæzt við, síðan þau komu út. En þau eru ekki nema nokkur hluti verka hans. Hann hefir þýtt nokkur ágætustu skáldrit heimsins á vora fálesnu tungu. Hann hefir glímt við skáldtröllin brezku, Byron og Shakespeare, þýtt »*Manfred*« með hinni mestu snild, »*Othello*«, »*Romeo og Júlíu*«, »*Hamlet*« og »*Macbeth*«. Auk þess hefir hann þýtt »*Brand*« Ibsens og

Friðþjófssögu Tegnér, eitthvert frægasta verk sænskra bókmenta. Á þessar þýðingar hans hefir verið lokið miklu lofsorði. Eg held, að mig misminni það ekki, að einhvern tíma á Hafnarárum mínum hafði danski rithöfundurinn, Otto Borchsenius, í grein um Matthías í »Dannebrog«, það eftir sænska skáldinu og lærdómsmanninum, Viktor Rydberg, að hann mundi vera einhver hinn bezti þýðari, er þá væri uppi. Er dómur slíks manns mikils virði, því að hann gat hér trútt um talað, var höfuðskáld þjóðar sinnar og ágætur þýðari, hefir meðal annars þýtt Faust Goethes á sænsku. Matthías hefir og þýtt sögur herlæknisins, mörg bindi. Enn hefir hann frumsamið leikrit, svo sem Jón Arason og Skugga-Svein, ort Grettisljóð, ritað bæklinga og urmul blaðagreina, verið bæði mikilvirkur og hraðvirkur við blaðastörfin, þótt hann fengist ekki við ritstjórn. Á Akureyri gaf hann tvö ár út blaðið Lýð, (1888—90). Myndu blaðagreinir hans fylla nokkur bindi, ef gefnar væru út í heilu lagi. Í brjósti honum hefir búið og býr enn þörf á að veita öðrum hlutdeild í þeim fróðleik og andans gæðum, er hann hefir aflað sér og hafa snortið hug hans, og er slíkt aðal andans manna. Mér segja og skilríkir menn, að hann sé hverjum manni afkastameiri bréfitari, skrifist á við fjölda manna, bæði utan lands og innan, konur og karla, unga og gamla, háa og lága. Verður það einhvern tíma mikið verk að safna bréfum hans og gefa þau út. Matthías á eftir að komast duglega í hendurnar á málfræðingum og grúskurum seinni tíma.

Síra Matthías er þegar orðinn klassiskur, orðinn úrvalshöfundur í lifanda lífi.

Nýlega eru komin út úrvalsljóð hans (Matthías Jochums-son, Ljóðmæli. Úrval Rvík 1915, Bókaverzlun Sigfúsar Eymundssonar). Dr. Guðm. Finnbogason hefir valið kvæðin. Segir hann í formálanum, að skáldinu verði »að fyrirgefa, að hann hafi ort fleiri góð kvæði en komast fyrir í þessari bók.«

Á útgáfu þessari var þörf af ýmsum rökum. Á þessum úrvalljóðum skilst mönnum líklega betur, en á útgáfunni af öllum kvæðum skáldsins, hve margt fagurt hann hefir ort. Þess er og ekki að dyljast, að útgáfu Östlunds var í ýmsu áfátt. Kvæðin voru öll prentuð í hræigraut, þýðingar og frumort hvað innan um annað, þeim var hvorki raðað eftir efni né aldri, þess ekki getið, hvenær þau væru ort nema um stöku kvæði, t. d. tækifæriskvæði, og við erfiljóðin eru greind dánarár þeirra, er þau eru gerð eftir, en vant er að vita, hvort þau hafi verið ort þegar eftir dauða þeirra eða ef til vill ekki fyrr en löngu síðar. Hér er reynt að bæta úr þessu, þótt nokkuð skorti á, að vel sé. Á eftir fyrirsögnum erfiljóðanna er enn sem fyrr aðeins nefnd dauðarárin, og sumstaðar hefir láðst að tilfæra fæðingarár kvæðanna t. d. við »Fó sturlandsins Freyja,« (frá þjóðhátíðarárinu) og »Jón Arason á aftökustaðnum«. (Það var prentað í Suðra.) Hér eru og falleg kvæði, sem ekki eru í útgáfu Östlunds, svo að allir íslenzkir ljóðavinir verða margs vegna að eignast þetta bindi. Má hér geta ómpýðra vísna til Hannesar Hafsteins, þar sem skáldið býst við svefninum hinsta, sem hann óttast ekki. Hann á heima hjá himnesku valdi. Hjartað finnur það — og það nægir. Lífs-sorg hans er horfin, hann litur með ró lífsfar sitt liða um sjó forlaganna. Það ber til hans árroða og óma frá æðri ströndum.

„Það dagar, það dagar
við dularhafsbrá
og ómarnir berast mér
æðri ströndum frá.“

„Himintónar skiftast
við hjarta míns óð
munarmálið fedra
og mæðra vögguljóð.“

Gerum ráð fyrir, að síra Matthías hefði lokið fullnaðarprófi úr lærða skólanum á skaplegum stúdentsaldri og hefði ekki verið féfátt, svo að hann hefði getað stundað það

nám, er honum lék mestur hugur á. Mér þykir líklegt, að hann hefði þá hvarflað milli norrænna fræða og guðfræði. Líklega hefði guðfræðin þó orðið hlutskarpari.

Í æfisögu Matthíasar (í Minningarritinu Matthías Jochumsson. R. vik 1905) tilfærir Þorsteinn Gislason þessi orð hans: „Eg hafði stöku sinnum stunið því upp við guð að gefa, að eg yrði prestur; hafði gömul kona spáð mér því þá fyrir þremur árum.“ Var hann þá fyrir innan fermingu, er hann hafði orðað þetta við skaparann. En hvernig sem þessu er háttað, þá er það auk Braga aðallega tvent, er skiftir anda hans á milli sín: Íslenzk fræði, tunga vor, fornkvæði og saga, og kristin trú og trúarskoðanir (og í sambandi við það dulræn efni). En andlegum áhuga hans, fjöri og sannleiksprá gat aldrei fullnægt að ein-skorða sig við sérstakar fræðigreinar, sem verður stundum raunalegt hlutskifti mætra manna. Þótt svo megi virðast, sem guðstrúin ætti að leysa lífsgátuna, hefir hann samt ákafan hug á að kynnast ráðningum vísindanna á henni. Þekkingarþorsti hans kemur skýrt fram í þessu erindi:

„Dæmdu mér í danða,
drottinn, meiri þekking
— fyrir veika vitund
vélta margri blekking:
gláðaljós að greina
gegnum rúm og tíma;
víki fyrir vissu
villuljóssins skíma.“

Það hefði farið vel á, að í afmælisriti skáldsins hefði verið tveimur ritgerðum fleira, önnur um Matthías og íslenzkuna, hin um Matthías í kirkjunni, eða með öðrum orðum um sálma hans.

Hér er ekki kostur á að fylla það skarð, enda getur slíkt ekki átt heima í stuttri yfirlitsgrein.

Þeir sem kunna að rannsaka áhrif annarra skálda á síra Matthías og skáldleg leiðarljós hans, ættu að leita vel í íslenzkum bókmentum, áður en þeir fara lengra. Í kvæðum hans kennir áhrifa frá Jónasi og Gröndal, en ekkert hefir víst snortið hann svipað því sem Eddukvæð-

in og sum fornkvæði vor. Hann á sammerkt í því við eldri skáldin, bæði Sveinbjörn Egilsson, Jónas og Gröndal, að hann hefir numið margt af Sæmundar-Eddu. Manni dettur stundum í hug, að hann kunni hana alla utan bókar. Hann hefir mál hennar og blæ einkennilega vel á valdi sínu og leikur sér að háttum hennar. Á þessi fornbúningur oft undarlega vel við, t. d. í kvæðunum um þá bræður, Guðbrand og Sigurð Vigfússonu, þar sem sést vel, hve samgróinn hann er anda Eddukvæðanna, lit þeirra og list, en hefir þó ekki týnt sérkennum sínum, t. d. í þessu erindi:

„Glömrðu gunnhlífar,
en ég geigs kendi,
hlömmuðu hásalir,
hurfu goðmegin.
Hrannir fóru helsingja
hátt á blálofti,
iðnuðu blikvængir
við beran mána“.

Rennur hér einkennilega saman nýtt og gamalt. Skáldskapur Matthíasar birtist hér í búningi fornkvæðanna, bæði máli þeirra og háttum. Seinasta braglinan minnir vist flesta, er lesið hafa Völundarkviðu, á visuorðin: «Skildir þlíku þeira — við enn skarða mána.» Yfir þessum kvæðum hans hvílir einkennilegur forneskjulitur, er heillar vist flesta Íslendinga. Ef til vill kemur þó hvergi eins vel í ljós og í eftirmælunum eftir Stefán prest Jónsson, hve vel fornbúningar vorir geta farið í nútíðarskáldskap, ef málið verður ekki of forneskju blandið t. d.:

„Glúpnad hafði blóðdrekur,
skriðið í bergskoru,
svalt dýr drösnill
drottinlaus á heiði“.

Stundum hrjóta visuorð eða visnabrot úr Eddu með öllu óbreytt inn í ljóð hans, eins og finna má dæmi til hjá Jónasi. T. d. í kvæðinu eftir Björnson: »gullu við gæss« (sbr. Sigurðar kviðu skömmu: »Gullu við — gæss í túni«); tekur hann og orðrétt upp kafla úr Hákonarmálum og heimfærir upp á Björnson. Á kvæðinu um Pál Briem má sjá,

hve mjög hann hefir numið orðaskipun af Eddukvæðunum. Þar stendur þetta erindi, sem er jafnsnjalt að máli og hugsun, hljómlist og myndlist:

„Miðlungsmenn
á miðum úti
viðra vöða
veðurspáir;
en hærri hlær
hrönn og vindi
hugur hetju,
er til himins stefnir“.

Annað vísuorðið, «á miðum úti,» á vísit uppruna að rekja til vísuorðsins »á viðum úti« í Völsungakviðu enni fornu. Er gaman að taka eftir, hvernig nýtt á sér upp-tök í fornu, á sér fjörgamla foreldra.

Orðgnótt Matthíasar í íslenzku hefir lengi verið við-brugðið að makleikum. Þá er eg hygg að málinu á ljóð-mælum hans og þýðingum, veit eg ekki, hvað mér finst mest um: hve mjög hann hefir sogað í sig blæ og anda málsins — en á því veltur þeim mest, er rita vill gott mál, — eða hve fimlega honum farast samsetningar orða eftir lögum forn málsins, eða þá orðasæg hans, sem minnir á stjörnur himins. Orðin þjóta sem gneistaflug út úr hon-um. Hefir þessi orðkyngi ekki alt af bætt kvæði hans, en hefir komið honum að haldi, er hann þýddi rit Shake-speare og Byrons. Án hennar hefði hann alls ekki getað þýtt á vora tungu ágætustu verk orðauðgasta skálds Breta. Honum er jafntamt Eddumál og lifandi sveitamál. Auður íslenzks dala máls sést víst hvergi betur en á þýðingum hans. Eg segi ekki, að sitthvað kunni ekki að mega finna að máli hans. En hann hefir náð svo mörgum og fögrum sprettum úr móðurmáli voru, að ekki er ofhermt, að hann sé óskmögur íslenzkrar tungu, enda ann skáldið þessari fóstru sinni hugástum, og hefir ort til hennar lof-snjöll erindi í kvæðinu til Vestur-Íslendinga.

Það er eðlilegt, að hann geti næstum því endalaust sett saman orð á ramforna vísu, úr því að málblærinn er honum innrættur, eins og hann hefði drukkið hann með

móðurmjólkinni. Þá er hann yrkir undir fornum háttum, fer hann nákvæmlega að eins og fornskáldin. Hann skeytir orðstofna og orð saman. Þessi orð eru einatt næsta afmíkil, t. d. »hlymhrönn« = hlymjandi hrönn (smbr. »hlymgarðr« eða »hryngarðr« hjá Þjóðólfi Arnórssyni), »glymháls« (sambr. »glymröst« = glymjandi röst), »frjódalir«, »fagurhjálmur« (sambr. »fagurlími« í Alvissmálum). Mætti lengi telja slík orð.

Hann ann ekki eingöngu krafti og hljómi setninga og kvæða, heldur fá einstök orð og orðasambönd honum yndis og nautnar. Mun þessi orðnautn einkenna flesta, er gefið er næmt máleyra. Í eyrum margra lætur slíkt sem fáránlegt glamur og orðaglingur. Orðið »Dvalinsmál« hefir náð töfratökum á skáldinu. Sama má segja um lýsingarorðið »svás« og miklu fleiri orð, ekki sízt samsett mannanöfn, heiti, kenningarnöfn og örnefni.

Það er erfitt að gera grein fyrir málgildi kveðskapar Matthíasar og þýðinga. Efnið er órannsakað. Eg veit ekki, hvort hann hefir búið til mörg nýyrði til að merkja hugtök eða hugmyndir, er tungu vora skorti áður orð á. Það er og ókannað, hve mörgum orðum úr mæltu máli hann hefir fyrstur manna auðgað ritmálið. En eg held, að óhætt sé að segja, að hann hafi flestum fremur sýnt auð islenzkunnar, mátt og fimleik, auk þess sem rit hans eru dýrmæt gullnáma öllum þeim, er heyja vilja sér orðaforða og hvessa næmleik sinn á svip og sérkennum islenzkrar islenzku.

Það er auðskilið, að Matthíasi hefir ekki orðið mál höfunda Eddukvæðanna og annarra fornkvæða vorra tornumið. Hann er að eðlisfari líkur þeim. Hann er í senn fræðimaður og skáld sem þeir og höfundar Íslendingasagna. Kennir þessa í sumum kvæðunum. Hann verður sumstaðar að hafa söguskýringar neðanmáls, eins og Eggert Ólafsson, t. d. í einu flughráðasta kvæði sínu, »Skagafirði«, Vígi Snorra Sturlusonar, og hefði sumum vist verið þörf á þeim í kvæðinu til Vestur-Íslendinga. Eg held, að menn skilji betur Eddukvæðin, er þeir hafa

lesið kvæði Matthíasar vel, og að það sé heilræði sumum Eddufræðingum, er þykir gaman að sýna lærdóm sinn á að finna þar sem flest innskot, að kynna sér vel kvæði hans. Matthías hefir mætur á allri sögu Íslands og fræði, og það er engin tilviljun, að hann er einn stofnenda Þjóðmenjasafnsins.

Það má snúa því upp á skáldið, sem hann lætur sögugyðjuna eða fræðidis lands vors segja við Guðbrand Vigfússon látinn.

„Fræðin mín þú kunnir
fastara og betur flestum,
sem eg fæddi á brjósti“.

Það er því eðlilegt einkenni á erfiljóðum hans, að honum hepnast þau eftirmæli bezt, er ort eru eftir fornfræðinga, t. d. Sigurð heitinn málara, Jón Árnason og þá Sigurð og Guðbrand Vigfússonu, er allir fyltu hug sinn fornum rökum og rúnum. Hann dregur listamyndir af andlegum sjóðum þeirra, og lýsir skáldið þar altaf óafvitandi sjálfum sér að nokkru. Og ættjarðarást lifir í ljóðum hans, enda hefir hann ort mörg fósturjarðarkvæði, og hann skortir ekki þjóðarmetnað:

„En á meðan hátt í hæðum
hróður unir listamanns,
sannast mun af fornum fræðum:
Fjallkonan var móðir hans“,

kveður hann um Niels Finsen. Þetta eru seinustu visuorðin í úrvalsljóðunum. Má hafa þau um Matthías, svo ramislenzkur sem hann er í eðli, mentun og anda.

Það hefði mátt gefa út all-álitlegt ljódsafn eftir hann, annars konar en úrvalsljóðin, og kalla Íslendingaljóð. Eg á þar við kvæði þau, er hann hefir kveðið um merkismenn sögu vorrar, og sum erfiljóð hans. Þá hefði alþjóð manna mátt sjá, hvílikt þjóðræknisverk hann hefir þar unnið. Ekkert islenzkt ljóðskáld hefir gert neitt svipað.

Erfiljóð hans eru mörg bandið eða brúin milli sögljóða hans og sálma, milli fræðimannsins og trúmannsins,

mannvinarins og prestsins. Það er eðlilegt, að hann kveði um merkismenn samtíðar sinnar, úr því að honum lætur svo vel að yrkja um mæringa fortíðarinnar. Í erfiljóðunum gaf og færi á því í senn, að líta yfir liðna æfi og lofa guð í hæðum.

Það er íslenzku kirkjunni til litillar virðingar, að hún hefir ekki sýnt síra Matthíasi meiri sóma en hún hefir gert. Og það gegnir furðu, að enginn íslenzkra kennimanna hefir gerst til að rita um sálma hans, finna fyrirmyndir hans þar og meta gildi þeirra.

Ekki þarf lengi að blaða í ljóðmælum hans til að komast að raun um, hve brennheitur trúmaður hann er. Engir vantrúarstormar hafa brotið trúarstofn hans, þótt þeir kunni að hafa sveigt lauf hans og limar. Þorsteinn Gíslason segir, að skáldið hafi kynst rammasta trúleysingja, er hann var á fermingaraldri, og hafi honum staðið stuggur af skoðunum hans. Mér segja og merkar frændkonur skáldsins hér í Reykjavík, að móðurætt hans sé mjög trúhneigð. Eg held, að mönnum sé ekki ljóst, hve geysimikið ber á trúmanninum í ljóðum hans, og truflar það stundum listina, sem Poestion bendir á. Lesi menn erfiljóð hans og taki eftir, hve guðs nafn er þar oft nefnt, og Matthías leggur það ekki við hégóma. Í þessu efni er fróðlegt að lesa vísurnar »Stjórnarmálið«, ortar 1869, er fyrri stjórnarbaráttan við Dani stóð sem hæst. Hann veit eitt ráð, er dugir í stjórn málastríðinu: að horfa »upp til himins, unz heilög sólin skín«. Margir kannast við, að hann endar kvæðið um Skagafjörð á trúaráminning til héraðsmanna. Eg held, að það lýsi vel, hve trúin er rik í hug honum, er hann lætur slíkan veraldarmann sem Snorra Sturluson óska þess í skriftamálum sínum, að guð leyfði honum að ganga í klaustur. Án trúar finst skáldinu hann alls ekki geta lifað:

„Eg trúi, því að alt er annars farið,
og ekkert, sem er mitt, er lengur til“.

Einkennileg er sú trú hans, að einhverir huldur verndarvættir sveimi umhverfis oss og með oss:

„Einn ertu aldrei, svo innir byggjan mín,
því verur eru nærri, sem vilja gæta þín“.

En trú skáldsins kemur auðvitað best í ljós í sálmu hans.

Matthías segir í erindi um Hallgrím Pétursson (Skírnir 1914, bls. 191): »Þegar vér svo virðum H. P. fyrir oss sem sálmaskáld eingöngu, megum vér sleppa öllum sam-
anburði; í þeirri grein ber hann höfuð og herðar eigi ein-
ungis yfir alla samtíðarmenn sína hérlanda, heldur öll
sálmaskáld vor, sem síðan hafa lifað. — — — Þótt þá og
síðan hafi verið ort einstök guðrækin ljóð jafn fögur og
hrifandi, hafa þau verið stutt og á stangli; er margt á
milli að yrkja einn og einn ágætan sálm, og samstíltan
flokk margra sálma, eins og þíningarsálmar H. P. eru.«
Nokkuð kann að vera hæft í þessu. En eg held samt,
að séra Matthías hafi ort alvegurstu sálmana, sem við eig-
um. Mér finnast engir sálmar eins hrifandi og sálmar
hans. Og það er trú mín, að þar takist honum best. Þar
eru engir útúrdúrar, ekkert, sem glepur né spillir áhrif-
unum, mælska og rímlist hleypur þar aldrei með hann í
gönur, þar skortir aldrei efni. Eða hvað getur fegurra
en þessi erindi:

„Hann heyrir stormsins hörpuslátt,
hann heyrir barnsins andardrátt,
hann heyrir sínum himni frá
hvert hjartaslag þitt jörðu á.

Í hendi guðs er hver ein tíð,
í hendi guðs er alt vort stríð,
hið minsta happ, hið mesta fár,
hið mikla djúp, hið litla tár“.

Er það áhrifamikið, að skáldið nefnir í sömu and-
ránni hið smæsta og stærsta: »hið mikla djúp, hið litla
tár«, og hæsta og lægsta: »stormsins hörpuslátt« og »barns-
ins andardrátt«. Hann fer hér líkt að og Jónas í þessum
gullfögru orðum: »Háa skilur hnetti | himingeimur | blað-
skilur bakka og egg«. Og hvergi sannast það betur en

í einum nýárssálminum, að hann nái hæstum tónum »af landsins sonum«, þeim er byrjar svo:

„Aftur að sólunni sveigir nú heimskautið kalda.
Sonurinn týndur í áttbagann girnist að halda.
Sólnanna sól,
sál vor er reikandi hjól,
snú þú oss, Alfaðir alda.“

Guðstrú sira Matthíasar á víst mikinn þátt í bjartsýni hans. Hann trúir því, að lífið hér á jörðunni batni: »Jú, sú trú, að tárin sjatni, | trú mins lífs, að jörðin batni, | sættir mig við guð og geim«. Hann trúir á sigur þess, sem gott er kallað í mannseðlinu, finnur það víða og er tamast að lýsa því. »Ekki er það af eintómum fleðulátum eða smjæðri, að eg kannast fremur við kosti manna en lesti, heldur er mér eiginlegt að lýsa heldur hverri kind með heilu reifi og haustholdum, en horaðri og naktri að vori til«, skrifar hann (»Ferð um fornar stöðvar«, Rvík 1913). Af þessu stafar það, að honum sýnist stundum fara í erfiljóðagerð líkt og sólunni, er skin jafnt á réttláta og rangláta. Erfiljóð hans bera mannúð hans fagurt vitni, og ekki er það kynlegt, þótt hann eigi miklum vinsældum að fagna. Mörgum syrgjendum og grátendum, ekkjum og einstæðingum, hefir hann sent huggunarljóð. Hann yrkir bæði eftir höfðingja og smælingja. Hann er samúðarmaður, samúðar- og mannkærleikaskáld.

„Fast bindur auður og ábati lönd,
andiun þó sameinar betur;
elskan þó best, hennar alveldis hönd
yfir tekur“,

kveður hann. Þessi trú er engin uppgerð né látalæti, heldur á hún sér rætur í upplagi hans og hjarta. »Það, sem maður fyrst rekur augun í hjá sira Matthíasi, næst vexti og ytra útliti, er glaðlega, vingjarnlega viðmótið, hvar sem hann hittist. Það eru engir kaldir, grannir fingurgómar, sem rétt er tylt í hendi manns, þegar hann heilsar, heldur er það heill, hlýr og mjúkur hrammur,

sem grípur um höndina og skekur hana vingjarnlega og ynnilega«, ritar Guðmundur Hannesson. Þessi hlýi hrammur tekur hvarvetna í ljóðmælum hans í hönd lesendunum og vermir þá, hvort sem honum tekst eða bregzt braglistin. Við hálfgrátum, er við heyrum hann raula margar vísur sínar, grátum líklega oftár, er við erum með honum, en með nokkru öðru íslenzku skáldi. Í ljóðmælum hans finnst víst engin haturmál, og þar kennir lítillar andúðar. Hann er að þessu leyti gagnólikur Þorsteini Erlingssyni, og var von, að þeir ættu ekki skap saman. Matthías ræðst sjaldan á, rifur ekkert niður, getur ekki refsað, eins og haft er eftir honum um sjálfan sig. Þó má marka það af »Nýársósok Fjallkonunnar« (sem því miður vantar í úrvalsljóðin) og af »Hringsjá« hans til Valdimars Briems, að hann skortir ekki auga á göllum og glöpum mannanna.

Það sýnir kraftinn og alvöruna í bjartsýni síra Matthíasar, að engir harmar hafa getað feykst henni til. Þá er ritað er um skáldið, er ekki auðið að láta lífssorgar hans ógetið. Hann kveður um hana:

„Vera má, að vissar taugar
visnað hafi í þeirri hviðu;
víst er eitt, að engir strengir
æðra lífs míns skaða biðu“.

Og þetta er víst dagsanna. Þessi mikla sorg hefir meira að segja verið lífgjafi eins allra bezta kvæðis hans, og fjölmörg þeirra eru lauguð og hituð í henni. Er dapurlegt að hugsa til þess, að þau eru slíku verði keypt. Og mun þetta eiga heima um mörg ágætustu skáldrit og kvæði — þau eru sprottin af þjáningum og sársauka.

“Thi Sangerens Bryst, naar han rigest beværter,
er dybt som Gudsmoders velsignet med Smerter,

kveður danskt skáld, Sophus Claussen.

Og fleira hefir blásið á móti. En hörmulegast er þó það, að hann hefir ekki notið sín, ekki orðið það sem efni voru til. Það er ekki gott að verjast þeirri hugsun, er menn eiga við hann samræður, að furða sé, að honum hefir ekki orðið meira úr hæfileikum sínum, svo mikl-

um tilprífum og háum tónum, sem hann hefir þó náð. Alt verður að myndum og líkingum, er hann skynjar og um hugann flýgur, hann kann kynstur af sögum og segir allra manna skemtilegast frá, og mörg athugasemd sýnir skilning hans á mönnum og mannlegu lífi. Sorglega skammsýnir voru þeir, löggjafar vorir á fyrstu löggjafarþingunum, er þeir veittu Matthíasi ekki full skáldalaun, svo að hann gæti helgað líf sitt skáldskap og þýðingum á ágætisverkum útlendra bókmenta, t. d. þýtt öll rit Shakespeare's. Í kringum 1880 hafði síra Matthíasi hugkvæmst svo margt, sem engum nema guðs og Braga úrvöldum gat dottið í hug, og sýnt hvílikur afburðapýðari hann var, að það er ófyrirgefanlegt, að hann var þá neyddur til að stofna bú og sækja um prestakall. Honum eru fyrst veitt sæmileg skáldlaun, er hann er hálfsjötugur. Hagsýnir menn kaupa helst unga gæðinga, en Íslendingar kaupa skáld og andans menn þá fyrst, er þeir gerast gamlir og þeir hafa þrælkað þá beztu ár æfinnar. Eg vona, að menn fyrirgefi, þótt dæmið kunni að vera heldur ruddalegt, en það er vel fallið til skýringar á þessu ráðlagi stjórnámálamanna vorra. Enginn veit, hve langt verður þess að biða, að slíkur pýðari sem Matthías risi upp á meðal vor. Hann finnur sáran til þess, að honum hefir ekki veizt sá þroski, er hann hefði getað tekið og átt að taka:

„Og lengst af æfi á sollnum sævi mitt sigldi far
við skort á þekking, við brask og blekking og barst um mar;
þess geldur hnekkis mitt gáfnaskar,
að gæfan ekki mér betri var“.

Og enn kveður hann:

„Týndu bragarblómin
bætir enginn mér.
Ekki nema óminn
eftirlæt ég hér“.

Og enginn bætir Íslandi »týndu« blómin hans. En merki-

legt er, að ekki verður vart kulda né gremju, er skáldið hugleiðir slíkt hlutskifti.

Af bálför enska stórskáldsins og mannvinarins, Shelleys, er sögð sú saga, að hjartað hafi ekki brunnið, og það hafi verið tekið óskemt úr bálinu. Er sögn þessi merkileg, snertir oss sem opinberun æðri sanninda. Það liggur fyrir okkur flestum, að síbrennandi Surtarlogi eyðir oss og öllum verkum vorum, óðara en þau eru unnin og vér erum horfnir af leikvelli lífsins, svo að ekki sér þar eftir tangur né tötur. Að eins örfáu vinna eldarnir ekki á. Hjartað í síra Matthíasi verður eitt þess örfáa, er lengi stenzl loga tortímingar og tíða.

Sigurður Guðmundsson.

Lesturinn og sálarfræðin.

Fáar mannlegar athafnir eru algengari en lesturinn, og engin algeng athöfn er mannlegri. Hvað sem kann að vera um mál dýranna, þá er víst, að þau eru ólæs. Með lestrinum fá menn í síðuðum löndum meginið af allri fræðslu. Hann er aðalylkillinn að auðæfum andans, forn-um og nýjum. Sjaldan liður svo dagur, að mentaðir menn taki sér ekki bók eða blað í hönd, og þótt þeir geri það ekki, þá mætir auganu í öðruhverju spori letur, sem það les.

Það ætti því að vera skylt, að vita ögn um það í hverju þessi athöfn er fólgin, hvernig vér förum að því að lesa. Lesturinn er ágætt dæmi þess, að það er sitt hvað að kunna eitthvert verk og hitt, að vita gjörla hvernig maður fer að því. Rannsóknir þær, sem gerðar hafa verið á lestrarathöfninni, eru og vel fallnar til að sýna rannsóknaraðferðir sálarfræðinganna og hvernig þær greiða úr ýmsum atriðum, sem ekki verður leyst úr með einfaldri sjálfsathugun. Eg ætla því að skýra nokkuð frá þeim.

Í fljótu bragði kynni að virðast svo sem lesturinn væri fremur einföld athöfn, en í rauninni er hann eitt af þeim störfum, sem flóknust eru og erfiðast er að rannsaka, því við lesturinn koma til greina allar hliðar meðvitundar vorrar, og þó með ýmsu móti eftir því hvernig lesið er.

Fyrst er skynjunin, vér sjáum það sem vér les-um; þá er hugsunin, vér komumst að merkingu hins

lesna; minnið geymir í huganum það sem vér vorum að lesa, meðan vér lesum áfram; skilningurinn finnur þráðinn í því; viljinn ræður því hvernig vér beitum oss við lesturinn; tilfinningin gagntekur oss meira eða minna, eftir því hvert efnið er (og það hefir mikil áhrif á lesturinn sjálfan); og loks eru talhreyfingarnar, hvort sem vér lesum upphátt eða með sjálfum oss. En þótt lesturinn sé svona margþætt athöfn, þá gengur hún svo reiprennandi fyrir æfðum lesara, að hann finnur ekkert til þess hve flókin hún er.

Það sem nú var sagt getur hver maður fundið sjálfur með athugun og íhugun. En hitt, hvern þátt hvert þessara atriða á í lestrinum, hvernig þeim er háttað hverju fyrir sig og hvernig þau vinna saman, um það vissu menn ekki og gátu ekki vitað nema með því að gera tilraunir.

Vér skulum þá fyrst líta á það, hvernig augun starfa, er vér lesum.

Ef vér sitjum beint fyrir framan mann sem er að lesa og gefum nákvæmar gætur að augunum í honum, þá sjáum vér, að þau hreyfast allreglulega eftir línunum, frá einni hlið blaðsíðunnar til annarar. Þetta kemur þó ef til vill enn betur í ljós, ef vér leggjum spegil á blaðsíðuna, andspænis þeirri sem verið er að lesa, og horfum í hann yfir öxlina á lesaranum. Vér getum talið hve margar ferðir augun fara þannig frá vinstri til hægri á einni blaðsíðu, og reynast þær þá jafnmargar og línurnar. Ef vér athugum vel, sést það og, að augun hreyfast ekki jafnt frá vinstri til hægri eftir línunni, heldur í smárykkjum til enda hennar, og fara svo aftur, venjulega í einum rykk, til vinstri að byrjun næstu línu. Þó undarlegt sé, þá höfðu menn ekki veitt þessu eftirtekt, eða að minsta kosti ekki svo kunnugt sé getið þess á prenti, fyr en franskur brautryðjandi í þessum rannsóknum, Javal að nafni, gerði það árið 1879.

Það er þó engan veginn auðvelt að athuga hreyfingar augans þannig beinlínis, einkum ef hart er lesið, og nákvæm vitneskja um hraða þeirra og eðli alt, og hve lengi.

augað nemur staðar á hverjum stað, fæst ekki með því móti. Þess vegna hafa verið fundnar upp hugvitsamlegar aðferðir til að gera hreyfingar augnanna og viðstöður sýnilegar og mælanlegar. Amerískur sálarfræðingur, Huey að nafni, sem mikið hefir gert að lestrarrannsóknunum, bjó



Mynd af lestrarhreyfingum augans, eftir Huey.

Myndin tekur yfir sex línur, sem lesnar voru, og tvær á undan og tvær á eltir, sem ekki voru lesnar. Augunum var þar lítið frjálst yfir línurnar endanna á milli og að eins fest sjón á byrjun þeirra og enda. Breiðu, lóðréttu línurnar og feitu deplarnir sýna hvíldir augans, en litlu deplarnir í láréttnu línunum eru sinn eftir hvern neista. Eyður eru í línunum þar sem visirinn hefir ekki numið við pappírinn.

til næfurþunnan hring, er hann festi á hornhimnu augans. Þetta olli engum óþægindum, af því að augað var deýft með »kokaini«. Á þennan hring var festur laufléttur vogarstangararmur, er stóð í sambandi við eins konar vísi. Oddurinn á þessum vísi snerti hliðina á sívalning, er snerist fyrir úrverki. Um sívalninginn var pappír, svertur í lampareyk. Visirinn ritaði því hreyfingar augans í lampareykinn á pappírnum. Til þess að mæla hraða þeirra, var

rafmagnsstraumur leiddur gegnum visinn til sivalningsins. Straumurinn var slitinn með jöfnu, stuttu millibili (0,0068 úr sek.) og markaði þá neistinn depil á pappirinn.

Slíkar rannsóknir hafa nú sýnt, að augað fylgir hverri línu í smá rykkjum með hvíldum á milli, frá vinstri til hægri, en fer svo í einum rykk aftur til vinstri. Þó ber það við, að augað staðnæmist áður en það nær byrjun næstu línu, eins og til að átta sig, einkum ef línan er löng. Sé lesmálið í meðallagi auðvelt og línulengd eins og í »Skírni«, eru rykkirnir minnst tveir en mest sjö, eftir hverri línu, venjulega fjórir til sex. Rykkirnir verða ekki fleiri eða færri eftir því hvort blaðið er nær eða fjær auganu, en þeim fjölgar er letrið smækkar, eða tekstinn þyngist. Auðvitað verður hver rykkur augans styttri þegar blaðið færist fjær, og smáar hreyfingar þreyta augað meira en langar. Þess vegna hættir mönnum, einkum börnum, við að færa bókina nær augunum, en þar með vex hættan á nærsýni.

Augað byrjar sjaldan alveg fremst á línunni, heldur ögn inni í henni, og skilur þó lengra bil eftir frá endanum. Á »Skírnis«-línu fer það yfir 78—82% af línulengdinni.

Rykkirnir eru mjög mislangir, og eins hvíldirnar milli þeirra.

Ef menn lesa eins hart og þeir geta, fækkar hvíldum hverrar línu, og um leið verða þær styttri. Augnarykkirnir verða að sama skapi lengri, en hraði þeirra vex ekki, enda virðist hann ekki lúta stjórn viljans. Fyrsta hvíldin í hverri línu er lengri en hinar, einkum ef hart er lesið. Það er eins og athyglín sé að búa sig undir það sem á eftir fer.

Tilraunir með börn, 9—11 ára, sýndu að augu þeirra taka fleiri og lengri hvíldir en fullorðinna, en augnarykkirnir eru eins snöggir hjá þeim.

Rykkir augans eru nú svo snöggir, að vér greinum engin orð meðan á þeim stendur. Lesturinn fer því fram í hvíldunum.

Tilraunir hafa sýnt, að fáir augað 30—60 mismunandi áverkanir á sekúndunni, getur það ekki greint þær að, heldur renna þær saman fyrir skynjaninni. Sé t. d. kringlu með hvítum og svörtum geirum til skiftis snúið hratt, þá sér augað ekki hvítu og svörtu geirana, heldur sýnist kringlan grá. Nú eru rykkir augans svo snöggir, að það fær fleiri en 60 áverkanir á víxl af svörtum stöfum og hvítum bilum á sekúndunni. Mætti því búast við að leturlínan yrði að gráu bandi fyrir auganu, en svo er ekki. Hvernig á þessu stendur er óvíst enn þá. Þó hefir verið bent á það, að hver rykkur augans varir oftast ekki meira en fjórðapart af þeim tíma sem hvíldin á undan tekur. Minningin um það sem augað sér á hvíldinni varir, og getur því ef til vill bægt frá meðvitundinni áhrifunum sem augað fær á hreyfingunni, og næsta hvíld máð þau út. Hins vegar kæmi oss það að engu gagni, að sjá línuna sem grátt band, og vér gefum löngum engan gaum að þeim áhrifum sem ekkert stóða oss.

En hve mikið grípur nú augað yfir í hverri hvíld?

Ef vér litum á prentaða blaðsiðu, finst oss vér sjá yfir talsvert svæði nógu vel til að lesa það, en þetta er ímyndun, sem ef til vill kemur af því, að blaðsiðan er nokkurn veginn jafnbjört fyrir sjóninni, og svo gefum vér ekki gaum að ósjálfráðum hreyfingum augnanna. Í raun og veru er það lítið svið, sem augað getur lesið án þess að hreyfast. Þetta má reyna með því að stara á tiltekinn staf í línunni og athuga hve mikið maður getur lesið í kring, en það er ákaflega erfitt, af því auganu hættir við að hreyfast og þreytist fljótt, ef starað er. Hefir það reynst svo, að menn gátu lesið meira af prentuðu máli, ef þeim var sýnt það $\frac{1}{100}$ úr sekúndu en ef sýningin varaði lengur.

Til slíkra rannsókna er venjulega *snarsjáin* (tachistoskop) höfð. Það er verkfæri sem sýnir á örlitlu broti úr sekúndu það sem athuga á. Er því stundum hagað svo, að málmplata með þverrifu á er látin falla framan við línuna sem lesa á. Línan sést þá aðeins meðan rifan fer

framhjá, og því skemur sem hún er mjórri og platan fellur hraðar.

Með snarsjánni má nú prófa hve langa parta úr línu menn geta lesið villulaust í einni svipan. Huey prófaði t. d. fjóra menn og lét línuna sjást $\frac{1}{66}$ úr sekúndu. Þeir lásu á þeim tíma að meðaltali um 11 stafa bil, og svarar það til þess er menn lesa í venjulegum lestri í einni hvíld augans, að meðaltali. En stöku sinnum gátu þeir lesið í einu sem svarar hálfri »Skírnis«-línu.

En hve mikið tekst að lesa í einni svipan, fer mjög eftir orðasambandinu. Auðveldast er að lesa þegar orðin falla í stuðla eða rim, eða eru á annan hátt nátengd, erfiðast að lesa sundurlaus orð. Orðasambandið virðist og ráða miklu um það, hvoru megin við stardepilinn vér lesum meira, en stardepil kalla eg þann stað er vér festum sjón á. Venjulega lesa menn meira hægra megin við stardepilinn, þegar langt er lesið, sem kemur líklega af því, að betur raknar úr minningum vorum áfram en aftur á bak, vér erum t. d. fljótari að telja áfram en öfugt. Orð sem vér festum sjón á vekja grun um hvað eftir muni fara, og hann hjálpar oss til að greina það. Fyrrihluti orðs, sem vér sjáum til hægri, dregur fremur seinni hlutann fram í hugann, heldur en seinni hluti orðs, er vér sjáum lengst til vinstri, fyrri hlutann.

Einkennilegt er það, að menn geta lesið orð í meiri fjarlægð frá stardeplinum en einstaka stafi og þózt þó sjá alla stafi orðsins skýrt. Af ósamstæðum stöfum eins og t. d. *v p þ s r h m* geta menn venjulega ekki lesið meira en 4—5 í senn, þó þeir geti ef til vill lesið 25-stafa-orð á sama tíma. Æfðir lesarar greina í meðallagi langt orð á $\frac{2}{1000}$ úr sek. og eru jafnfljótir að lesa það eins og einstakan staf. Af þessu virðist nú auðsætt, að vér lesum ekki staf fyrir staf, heldur skynjum orðin í heild. Um þetta geta lesendurnir skapað sér skoðun sjálfir, með því að gera tilraunir með lista þann sem hér er prentaður, lesa fyrst stafadálkinn niður eftir eins hart og þeir geta, annaðhvort upphátt eða með sjálfum sér, og marka tím-

ann sem það tekur (helzt með markúri), lesa svo á sama hátt hvern dálkinn af öðrum og bera saman tímana sem þeir taka hver fyrir sig. Í öðrum dálki eru fjöggra stafa, í þriðja átta stafa og í fjórða dálki tólf stafa orð. Tilraunin mun sýna, að stafafjölgunin tefur tiltölulega lítið.

r	bagi	rifrildi	skuldamiðabók
v	axla	hnjóskur	aðfangadagur
æ	rist	aðdjúpur	sýkingarefni
þ	tafl	brullaup	hindurvítnin
ö	frjó	grallari	púðurstikill
z	haft	flaksast	organsláttur
p	ermi	jarteikn	ókunnugleiki
x	iður	postulín	ritþráðarstöð
o	list	þýlyndur	ólastanlegur
á	bygg	jóreykur	mjúkraddaður
b	fans	kampavín	verksummerki
d	dill	dálitill	munnsöfnuður
i	glit	búsifjar	undandráttur
f	pils	álengdar	sveitarsakir
e	áfir	bruggari	tvískinnaður
i	kyrr	flaumósa	skikkanlegur
k	prik	gunnfáni	hverfisteinn
m	fíkn	drýldinn	bráðabirgðir
ó	bris	heilagur	afturkreista
a	seil	einhentur	suddarigning
n	gnýr	ábristir	niðurskurður
y	skál	harðýðgi	ósjálfstæður
u	ásjá	eyjóttur	austurriskur
j	dögg	afskrifa	skrykkjóttur
é	heit	snikkari	huliðshjálmur

En hvað sjáum vér þá í raun og veru þegar vér lesum?

Um það eru nokkrar mismunandi skoðanir, sem eg nú skal drepa á. Þær eru allar byggðar á tilraunum og líklega allar réttar, hver um sitt tilfellið.

Ein skoðunin er sú, að vér lesum ekki heil orð og ekki heldur alla stafi í hverju orði, heldur sjáum í raun og veru aðeins nokkra stafi, sem auðkenna orðið og kalla mætti »kennistafi«, hinum bætum vér við frá sjálfum oss, því að tilraunir sýna, að menn lesa orðið í snarsjánni, ef kennistafirnar eru þar, þótt hina vanti eða aðrir séu settir í staðinn. Þannig mundu menn eflaust lesa *hrngr, gll, svrdgi, flibjlr*, og einkennilegt er það, að menn sjá oft eins skýrt þá stafina sem vantar, eða sýnist réttur stafur vera þar sem rangur er, svo sem þegar mönnum sést yfir prentvillur. Fyrsti stafur hvers orðs er nálega ávalt kennistafur, t. d. mundu fáir sjá að *ugu* ætti að vera *augu* eða að *ygi* ætti að vera *lygi*.

Önnur skoðunin er sú, að vér þekkjum orðin sem heild, af lengd þeirra og lögun, af því að tilraunir sýni að menn geta lesið kunnug orð úr meiri fjarlægð en svo að einstakir stafir verði greindir, enda sé það yfirleitt svo, að vér þekkjum ekki heildina af pörtunum, heldur af forminu, skipulaginu, vér sjáum ekki að - 10 sé 5 eða 21 sé K, og vér sjáum ekki í einni svipan að ^rú ^tt ^sel á að vera lestur.

Þriðja skoðunin fer bil beggja hinna. Hún játar að vér þekkjum orðin að miklu leyti af »kennistöfum«, en leggur þó mikið upp úr heildarsvipnum. Orðið fær einmitt svip, lögun og liðamót eftir hæð, breidd og lögun stafanna, sem í því eru; orð eins og t. d. *mannamunur, góugróður, litilsvirða, náttgalakliður, þjóðvaldsstjórn* hafa hvert sinn svip.

Sannleikurinn mun nú vera sá, að sín af þessum skoðunum kemur heim í hvert skiftið. Vér lesum ekki alltaf eins, stundum þekkjum vér orðið aðallega af »kennistöfunum«, stundum sem heild, stundum í liðum. Því kunnari sem orðin eru eða lesmálið auðveldara, því meir þekkjum vér orðin af svipnum einum, en þegar orðin eru ókunn eða erfið, verður lesturinn líkari því sem á sér

stað hjá byrjendum, og getur jafnvel farið svo, að vér lesum staf fyrir staf.

Um það, hver hluti orðsins sé mikilvægastur við lesturinn, geta menn gengið úr skugga með því að lesa t. d. tólfstafaorðalistann hér að framan, þannig að festa sjónir fyrst á fyrri hluta hvers orðs, eins og mönnum er eðlilegast, og síðan lesa hann þannig, að stardepillinn verði nær enda hvers orðs. Sama má sjá með því að lesa tvo texta, þar sem í öðrum eru feldir burt fyrri hlutar orðanna en í hinum seinni hlutarnir, og athuga hvort betur gengur. Reynist þá svo, að meira er komið undir fyrri hlutanum, enda liggur í voru máli áherzlan á honum, og í fyrstu samstöfunum er venjulega aðalmerking orðsins fólgin. Og svo raknar hér sem annarstaðar greiðar úr minningunum áfram en aftur á bak.

Að efri hluti orðsins má sín meira en neðri hlutinn fyrir skynjun vorri, má sjá með því að leggja t. d. röndina á pappirsblaði eftir miðri línunni, svo að helmingurinn af orðunum standi upp undan eða niður undan blaðinu, og reyna svo að lesa. Að efri hlutinn er meir varðandi, mun koma af því, að miklu fleiri stafir skera sig úr línunni að ofan en að neðan, og svo gefum vér að jafnaði meiri gaum efra parti hlutanna en neðra, og kemur það ef til vill af því, að vér stöndum ekki sjálfir á höfði.

Þá höfum vér og mikinn stuðning við lesturinn af því sem vér sjáum út undan oss. Hefir það verið sýnt með því að láta menn lesa með gleraugum, sem hindruðu alla sjón til hliðar, og truflaðist lesturinn mjög við það.

Margt bendir til, að mönnum megi skifta í tvo flokka, eftir því hvernig skynjan þeirra er varið við lesturinn. Sumir festa sjónina skarpt á því sem þeir lesa, þeir grípa yfir lítið í senn, en lesa nákvæmlega, vita með vissu hvað þeir sjá og geta lítið í eyðurnar. Aðrir grípa yfir stærra bil, hafa hugann aðallega á þýðingu þess sem þeir sjá, lesa orðin í heild, eða jafnvel heilar málsgreinir, og geta drjúgum í eyðurnar. Þeir eru þó ekki ætíð fljótari að lesa en hinir. —

Vér höfum nú séð, hvernig sjónin starfar að lestrinum, og skulum nú víkja að öðrum hliðum hans.

Þegar menn lesa með sjálfum sér, þá er það venjulega svo, að þeir ekki eingöngu sjá orðin sem þeir lesa, heldur hafa þau og yfir í huganum og oftast heyra þau þar líka. Öllum sem þetta mál hafa rannsakað hefir reynst það svo, og þykir því sennilegt, að þetta »innra tal« eigi sér alment stað hjá öllum lesurum, að lesturinn sé fólginnt í því, að snúa riti í tal. Þó er sagt að einstöku mönnum takist að lesa, þótt þeir þylji samtímis eitthvað upphátt, sem hindrar þá í að tala í huganum, t. d. segja ótt og titt 1, 1, 1, 1, 1, 1, eða a, a, a, a, a, og líklegt þykir að vér með æfingu gætum lært að lesa nokkurn veginn með augunum einum; en flestum gengur mjög erfitt að skilja nema örstuttar og auðveldar setningingar, er þeir lesa þannig.

Ef menn vilja vita hvernig »innra tali« þeirra er varið, er hentast að athuga eitt í senn, t. d. lesa kafla lágt og gæta að, hvernig orðin hljóma í huganum; lesa svo annan kafla þannig, að bera orðin skýrt fram í huganum, lesa þar næst með lokuðum og óhreyfðum vörum, o. s. frv. Finnur þá lesarinn fljótt hvað honum er sjálfum eðlilegast.

Menn lesa hraðar lágt en upphátt, því vér getum lesið með sjálfum oss jafnt meðan vér öndum að oss og frá oss, en ekki upphátt meðan vér öndum að oss. Auk þess munu flestir hlaupa á orðunum í huganum, að minsta kosti er þeir lesa hart.

Varahreyfingar eru almennar framan af hjá börnum, er þau lesa lágt, en með aldri og æfingu hverfa þær að mestu hjá flestum.

Vér byrjum eflaust að hafa upp orðin í huganum undir eins og augað hefir greint þau, en talfærin verða þó venjulega litið eitt á eftir augunum, og lengra þegar hart er lesið. Þessu má bezt veita eftirtekt er vér flytjum augun yfir á nýja blaðsíðu; vér eigum þá oftast nokkur orð ósögð á hinni. Amerískur sálfræðingur, Quantz

ad nafni, gerði tilraunir um það, hve margra orða bil væri milli augnanna og raddarinnar við lesturinn. Hann skaut spjaldi yfir blaðsíðuna á tilteknum stöðum, sem lesarinn vissi ekki fyrir, og gáði svo að hve langt hann gæti haldið áfram eftir að lesmálið hvarf sýn. Niðurstaðan varð sú, að það fór eftir því hvar í línunni spjaldið var sett: Þegar lesarinn er að bera fram orð í byrjun línu, er augað að meðaltali 7,4 orð á undan röddinni; í miðri línu 5,1 orð og við enda línu 3,8 orð, að meðaltali 5,4 orð. Komi óþekt orð fyrir, getur auðvitað bilið horfið, og aftur orðið óvenjulangt við alkunnar setningar. Quantz segir, að þeir sem séu fljótir að lesa með sjálfum sér séu og lengst á undan röddinni, er þeir lesi hátt, og heldur hann að talsvert bil milli augna og raddar sé skilyrði þess, að menn geti lesið vel og með greind.

Af því, hvernig skilningur hins lesna truflast, þegar oss er varnað að hafa það upp fyrir oss í huganum, er auðsætt, að þetta »innra tal« er mikil stoð fyrir skilninginn, og er þá eftir að vita hvernig á því stendur. Eðlilegasta skýringin virðist vera sú, að sambandið milli merkingarinnar og orðsins eins og það er talað sé fastara en milli merkingarinnar og orðsins eins og það litur út á pappírnum vegna þess, að vér lærum málið á því að heyra það og tala löngu áður en vér lærum að lesa það.

Um leið og hið »innra tal« vort glæðir meðvitundina um merkingu orðanna, hjálpar það til að hugfesta orðin og þar með halda þræðinum í hugsuninni, en jafnframt rennum vér grun í hvað eftir muni fara. Slikar eftirvæntingar eða ósjálfráðar getgátur eru alt af á öðru leitinu undan lestrinum, reidubúnað að fylla í eyður skynjanarinnar, svo að vér í rauninni ráðum orðin fremur en vér sjáum þau. Að vér rennum grun í aðalhugsun málsgreinarinnar, áður en vér segjum hana, sést á því, hve oft menn mislesa þannig að þeir koma með annað orð en sömu merktngar og það sem í tekstanum stendur, og eins á hinu, að það er tiltölulega auðvelt að segja með öðrum orðum efnið úr því sem maður les um leið.

En hvernig er nú varið meðvitund lesarans um efnið sem hann les um? Yfir það hafa tilraunir seinni ára brugðið nokkru ljósi. Margt er þó enn óljóst í þessu efni, enda má ekki búast við að öllum sé eins varið. Meðvitund lesarans breytist og með hverju augnabliki, eftir því hvað hann les og hvernig hann er fyrir kallaður.

Þegar menn reyna að lesa einhverja alkunna setningu eða orðtæki í snarsjánni, ber það við, að þeir skilja undir eins hugsunina, án þess að hugmyndirnar sem svara til orðanna hvers fyrir sig komi fram í hugann. Oft geta menn þá eftir á veitt því eftirtekt, hvernig þessar hugmyndir koma fram hver af annari. Svipuð verður reynslan er vér lesum hart um eitthvert auðvelt efni. Vér fáum þá oft engar sérstakar hugmyndir, og vitum þó upp á hárfur hvað meint er. Það er því mikill misskilningur, að halda að hugur lesarans sé eins konar óslitin kvikmyndasýning.

Huey gerði tilraunir um þetta með þeim hætti, að hann tók tvær greinar, sína um hvort efnið, klipti orð fyrir orð úr þeim, límdi sitt orðið á hvert spjaldið, ruglaði þeim og sýndi síðan hvert orð 4 sekúndur. Átti lesarinn að þeim liðnum svo að segja hvaða hugmyndir orðið hefði vakið.

Síðar voru sömu greinar sýndar þannig, að linurnar voru límdar saman, hver aftan í aðra í rétttri röð, og lesarinn svo látinn lesa áfram eitt orð eða setningu í senn á 4 sekúndum og gera síðan sömu grein og um einstöku orðin.

Slíkum tilraunum má og haga þannig, að einstök orð eða setningar eru lesnar upp og áheyrandinn látinn segja samstundis hvað honum kemur í hug.

Að skýra frá þessum tilraunum í einstökum atriðum yrði of langt mál, enda geta þeir sem vilja gert þær sjálfir. Býst eg við að margan muni þá furða, hve lítið af ákveðnum hugmyndum ýms einstök orð og jafnvel heilar setningar kalla fram í hugann, og það eins þegar vér skiljum vel. Þráður hugsunarinnar er oft spunninn úr efni sem mjög erfitt er að handsama og lýsa í orðum.

Lestrarhraða manna má prófa með því að láta þá lesa tiltekinn kafla og mæla tímann sem það tekur, ýmist er þeir lesa lágt eða upphátt, eins og þeim er eðlilegt eða eins hart og þeir geta. Menn eru mjög misfljótir að lesa, þó þeir séu þaulvanir lesarar.

Quantz prófaði lestrarhraða 50 amerískra háskóla-stúðenta. Þegar þeir lásu með sjálfum sér og eins og þeim var eðlilegt, las sá seinasti 3,5 orð á sekúndunni, en sá hraðasti 8,8 orð; með hraðlestri las sá seinasti 3,5 orð, en sá hraðasti 12,2. Þegar þeir lásu hátt og með eðlilegum lestri, var lestrarhraðinn 2,6 til 3,9 orð á sekúndinni. Venjulega voru þeir sem eðlilegt var að lesa hart fljótastir í hraðlestri, en seinir lesarar seinir við hvortveggja. Hröðu lesararnir reyndust að meðaltali 37% betri en hinir í því að skýra á eftir rétt frá því sem þeir höfðu lesið.

Til að verða fljótur lesari telur Quantz einkum nauðsynlegt að vera sjónhraður, iðka lestur frá barnæsku, vera fylginn sér og snarhugull.

Lestrarhraðinn fer auðvitað nokkuð eftir því hvað lesið er.

Talið er líklegt, að menn geti vanið sig á að lesa talsvert hraðara með sjálfum sér en áður, án þess að hafa minni not af lestrinum.

Tilraunir þær sem eg nú hefi drepíð á hafa verið gerðar með fullorðið fólk, þaulvana lesara. Eg get ekki að þessu sinni gert grein fyrir því, hvaða munur er á lestri barna og unglinga og fullorðinna, né heldur hinu, að hvaða gagni þessar og aðrar slíkar rannsóknir geta komið, þegar á að skera úr því hver lestrarkenslu aðferð sé best, eða hvernig bækur eiga að vera úr garði gerðar til þess að vér getum lesið sem mest á sem stytstum tíma, með mestu gagni og minstri þreytu. Þó get eg ekki stílt mig um að minnast á eitt atriði, sem jafnframt getur getur verið dæmi þess, hvað leiða má útaf slíkum rannsóknum. Það er linulengdin.

Þegar maður hefir bókina beint fyrir framan sig og

horfir á miðja línu, verður stilling beggja augna jöfn, en því lengra sem dregur frá línumiðju til beggja handa, því ójafnari verður augnastillingin, og það því meir sem línan er lengri, svo framarlega sem lesarinn ekki færir bókina eða höfuðið til, sem yrði mjög þreytandi. Ójöfn augnastilling þreytir augun. Þess vegna eru langar línur skaðlegar. Því lengri sem línan er, því erfiðara er og að finna næstu línu. Það þreytir líka.

Og loks er eitt: Það kostar meiri augnahreyfingar að lesa sama kaflann þegar hann er prentaður í löngum línunum, heldur en þegar hann er í stuttum línunum. Eins og eg gat um áður, byrjar augað ekki fremst í línunni, heldur ögn inni í henni, og skilur svo eftir lengra bil við enda hennar. Maður sér þannig byrjun og enda línunnar út undan sér. Þessir hlutar línunnar eru nokkurn veginn jafn stórir, hvort sem hún er löng eða stutt, og verða því stærri brot af stuttri línu en langri. Þannspærast augnahreyfingar þegar línan er stutt. Huey fann, að menn gátu lesið 25 millimetra línur án þess að hreyfa augun neitt, og stundum jafnvel 30 mm. línur. Á stuttri línu eru og að jafnaði lesin fleiri orð í hverri hvíld. Í dálki með 60 mm. línunum komu hér um bil $3\frac{1}{2}$ orð á hverja hvíld, en í dálkum með 100—120 mm. línunum 2 orð á hverja hvíld. Auk alls þessa er það margsinnis reynt, að augun komast fljótar á lagið með reglubundnar hreyfingar eftir stuttum línunum en löngum, en það greiðir fyrir fljótum lestri.

Þegar á alt þetta er litið, er það skiljanlegt, að Huey kemur með hugleiðingar um það, hvort ekki mundi ef til vill vera hentara að prenta orðin í dálkum hvert niður undan öðru, að dæmi Japana og Kínverja, heldur en í láréttum línunum eins og vér gjörum. Með því móti, segir hann, gæti augað þverskorið orðin, séð byrjun þeirra og enda út undan sér, og þannig fengið það sem þarf til að lesa fjögur eða fimm orð, með hreyfingu sem ekki er lengri en eitt orð tekur nú. Vér gætum þannig ekki að eins sparað oss að minsta kosti þrjá fjórðu hinna þreyt-

andi augnahreyfinga og þrjá fjórðu hvildanna í tilbót, heldur gætum vér og alltaf notað efri og neðri hluta net-himnunnar til að gripa yfir miklu meira lesmál á undan og eftir en vér nú gerum. Lestrarsvið hvers augnabliks ykist þannig til mikils gagns.

Svo mörg eru þessi orð.

En nú er eftir að vita hvernig útgefendum, prenturum og lesendum litist á slíkar bækur.

Guðm. Finnbogason.

Röntgensgeislar.

Að fornu og nýju eru til sagnir um það, að einstöku menn hafi séð gegnum holt og hæðir; en þó við séum ekki svo miklir galdramenn, getur okkur þó tekist á vorum tímum að skygnast gegnum ýmsa hluti, þar á meðal líkamsparta manna og dýra. Þeir sem sérstaklega hagnýta sér þessa list eru auðvitað læknar, því einmitt læknaana skiftir mestu hvernig umhorfs er innan í fólki, þeirra hlutverk er það oft og einatt »að rannsaka hjörtun og nýrun«. Auk læknanna þurfa og ýmsir iðnaðarmenn á þessari list að halda og skal nánara vikið að því síðar.

Alt er þetta bundið við geisla þá sem *Röntgensgeislar* kallast. Nú eru liðin rétt 20 ár síðan þýzkur eðlisfræðingur, *Wilhelm Konrad Röntgen*, þáverandi prófessor við háskólann í Würzburg, fann geisla þá sem við hann eru kendir; sjálfur nefndi hann upprunalega geislana X-geisla og eru þeir líka oft nefndir því nafni meðal vísindamanna.

Eðli geislanna. Það var engin furða þó mönnum þætti, þegar í byrjun, geislar þessir næsta einkenni-legir, sérstaklega í samanburði við þá geisla, sem allir þekkja eitthvað til — ljósgeislana. R-geislar¹⁾ eru ósýnilegir, þ. e. a. s. þeir hafa ekki áhrif á nethimnu augans eins og ljósgeislar. Mikill munur er á hvernig ljósgeislar og R-geislar fá komist gegnum ýmsa hluti. Ljosið fer eins og allir vita hæglega gegnum gler, en R-geislar miklu

¹⁾ Til styttingar kalla eg Röntgensgeisla í grein þessari R-geisla, Röntgensskoðun R-skoðun o. s. frv.

síður; þeim gengur aftur á móti miklu betur að komast í gegnum venjulega gluggahlera úr timbri, heldur en nokkurnveginn þykka gluggarúðu. Í raun og veru komast R-geislar inn í eða gegnum alt sem á vegi þeirra verður, en þó er mjög mikill munur á hve mikið viðnám efnin veita þeim; erfiðast gengur þeim gegnum málma, en stöðvast þó ekki á rás sinni af málmþynnum. Venjulegur fatnaður tefur sama og ekkert fyrir þessum furðulegu geislum og stæði því í rauninni nokkurnveginn á sama hvort sjúklingar væru skoðaðir með geislum, í fótunum eða berir, ef ekki væru í fatnaði manna hringjur, tölur, krækjur og þrjónar, sem trufla skoðunina. — Það er kunnugt, að ljósgeislar brotna þegar þeir lenda skáhalt t. d. á gleri eða vatnsfleti; þetta gera R-geislar ekki, þeir breyta aldrei stefnu sinni, líta hvorki til hægri né vinstri. R-geislar geta valdið »glóri« (fluorescens) þ. e. a. s. komið sumum efnum til þess að lýsa í myrkri; þetta eðli geislanna er notað til þess að framleiða skuggamyndir við svokallaða Röntgenslýsing, sem síðar mun vikið að. — Loks valda R-geislar efnabreytingum og mest er um vert í þessu efni, að þeir hafa sömu áhrif og ljósgeislar á venjulegar ljósmyndaplötur.

Myndun geislanna. Til þess að framleiða R-geisla þarf rafmagn; straumurinn þarf ekki að vera mjög sterkur, en hafa verður hann mjög háa spennu. Rafmagnsspenna er mæld í Voltatali. Spenna þess straums, sem hafður er til ljósa, er venjulega 220 eða 110 Volt, stundum enn lægri; við framleiðslu sterkra R-geisla þarf spennu rafmagnsins að vera margir tugir þúsunda Volt. Straumi með þessari geysiháu spennu er svo veitt gegnum Röntgenslampa, þeir eru úr næfurpunnu gleri. R-lampar, sem notaðir eru á seinni árum, eru oftast nær hnöttóttir, á stærð við mannshöfuð eða minni; þessi stóru glerhylki eru dæld nærri alveg lofttóm. Rafmagnsstraumnum er veitt að lampanum á tveim stöðum, um forskaut og bakskaut, og streymir svo gegnum lampann. Eg gat þess, að R-lamparnir væru nærri því alveg lofttómir og er því

skiljanlegt að rafmagnsstraumurinn þarf að vera há-spentur til þess að komast leiðar sinnar gegnum lampann, þeir sem nasasjón hafa af rafmagnsfræði munu kannast við svokallaða bakskautsgeisla (*K a t o d e - g e i s l a*); þeir myndast þegar rafmagnsstraumi er hleypt gegnum glerhylki, sem að mestu leyti eru lofttóm, t. d. R-lampa. Nú er því svo til hagað, að þessir bakskautsgeislur, á rás sinni inn í lampanum, skella á sérstakan stað, andskautið, sem oftast er haft úr volframi eða öðrum torbræddum málmi; og einmitt á þessum ákveðna litla bletti, þar sem bakskautsgeislarnir mætast og verða fyrir mótstöðu, myndast aðrir geislur, R-geislur eða X-geislur, sem svo streyma gegnum glervegg lampans.

Notkun Röntgensgeisla við sjúkdóma.

R-geisla nota lækna- sumpart beinlinis til lækninga, sumpart til skoðunar á sjúklingum, til þess að leita frekari vitneskju um, hvað gangi að sjúklingunum, heldur en hægt er að fá með öðru móti. Sjúklingana má skoða á tvennan hátt með R-geislum; í fyrsta lagi með svo nefndri Röntgenslýsing, sem sýnir skuggamyndir af líffærunum og hreyfingu þeirra, t. d. hjartans og meltingarfæranna; í öðru lagi með því að taka Röntgensmyndir á ljósmyndaplötur, framkalla þær svo og fara að öðruleyti með þær sem venjulegar ljósmyndir. Það sem einna fyrst var skoðað með R-geislum voru beinbrot og ýmsir aðskotahlutir (*corpora aliena*).

Aðskotahlutir. Svo nefnast þeir hlutir, sem komast inn í líkamann og eiga þar ekki heima, t. d. saumnál, er kann að brotna í fingri á saumastúlku eða peningur, sem barni verður á að gleypa; það er næsta ótrúlegt hvað fólk getur gleypst í sig, ekki síst börn og geðveikir menn. Flest af þessu dóti gengur niður af sjúklingunum með saurnum, en getur þó stundum staðið fast í vélindinu eða neðar í meltingarfærunum. Það vill nú svo.

vel til að mjög margir aðskotahlutir eru úr málni, svo sem prjónar og peningar, öngulbrot, högl og byssukúlur; alt þetta kemur vel fram á R-myndum; ennfreður má nefna hluti úr gúmmi, t. d. falska góma sem stundum hrökkva ofan í fólk, og gleri, sérstaklega ef um blýgler er að ræða. Í stríði því, sem nú geysar í Norðurálfunni, eru auðvitað ógrynnin öll af særðum hermönnum skoðaðir með geislunum til þess að leita uppi byssukúlur og flisar



Nálarbrot í hendi saumastúlku.

úr sprengikúlum, sem oft þarf að ná út til þess að skotsárin geti gróid. Sérstakir Röntgensvagnar eru útbúnir með geislatækjum, sem nauðsynleg eru til þesskonar skoðana, og má því heita svo að særðu hermennirnir séu geislaðir á sjálfum vígvellinum.

R-skoðunin sýnir ekki eingöngu hvort þessir annarlegu hlutir hafa inn í líkamann komist og orðið þar eftir, en á því getur stundum leikið vafi; geislarnir leiða líka í ljós nákvæma legu hlutarins, inni í holdi sjúklingsins

og einmitt þetta er mikilsvert fyrir skurðlækninn þegar til skurðarins kemur; oft er ótrúlega erfitt að finna smáa hluti, t. d. nálarbrot, sem stundum getur færst til langar leiðir frá þeim stað, sem það stakst í.

Beinbrot. Sá partur mannlegs líkama, sem bezt kemur fram á R-myndinni, eru beinin, og má þakka það kalkinu, sem í beinunum er; allskonar sjúkdómar í beinum koma líka greinilega fram, þar á meðal beinbrot. Oft er læknirinn í vafa um hvort bein sé brotið eða ekki, en



Brotinn fótleggur.

varla getur farið hjá því að slíkt komi fram á R-mynd. Þar að auki getum við lesið ýmislegt annað út úr myndinni. Sé sjúklingurinn skoðaður þegar búið er að koma brotinu í stellingar og binda um það, sýnir R-skoðunin hvort beinþípunum hefir verið kipt í það lag, sem nauðsynlegt er til þess að þær geti gróið saman. Eg sagði, að sjúklinginn mætti skoða eftir að lokið væri við að binda um brotið, því myndin af brotinu getur orðið vel skýr í gegnum gipsumbúðir eða þó geislarnir þurfi að fara gegnum pappa- eða tréspelkur. Sjúklingunum er auðvitað miklu þægilegra og þjáningaminna að ekki þarf að hrófla

við umbúðunum meðan skoðunin fer fram. Ef myndin sýnir að beinþípurnar séu skakt settar saman, er auðveldara að laga slíkt undir eins, heldur en brjóta brotið upp seinna, ef skakt grær saman. Stundum sýnir R-skoðunin að brotið muni ekki gróa án uppskurðar; svo illkynjuð geta beinbrot verið. Ekki sízt eru það bein hermannanna, sem oft mölbrotna svo af sprengingum, að herlæknarnir þurfa á allri list sinni að halda til þess að bjarga hinum brotna lim.

Liðhlaup. Annar sá sjúkdómur, sem oftast orsakast af slysum, eru liðhlaup. Oftast nær eru þau svo greinileg, að ekki er um neitt að villast, en stundum er læknirinn þó í vafa um sjúkdómsgreininguna, sér í lagi ef beinin eru bæði brotin og hlaupin úr liði; það gefur að skilja, að þá verður alt flóknara; mjög algengt er að samtímis liðhlaupinu kvarnist meira eða minna úr beininu. Liðhlaupin er hægðarleikur að sjá með geislunum, eins má skoða sjúklinginn eftir að búið er að kippa í liðinn til þess að aðgæta hvort það hafi tekist rétt. Meðfædd liðhlaup eru ekki óalgeng, sérstaklega í augnakörlunum Við lækning á þessum sjúkdómum er R-skoðun ómissandi.

Beinbrot og liðhlaup eru ekki einu sjúkdómarnir í beinum og liðamótum, sem R-skoðunin leiðir í ljós. R-skoðun kemur oft að góðu haldi við ýmsar bólgur, t. d. berkla og fransós, í beinhimnu og beinum; oft grefur veikin sig inn í sjálf liðamótin. Sérstaklega eru þessar R-myndir læknunum góð hjálp þegar um líkamshluti er að ræða, sem erfitt er að komast að með aðra skoðun, t. d. ef skemd er í hryggjarliðum. Berklaveiki í beinum — beináta — lýsir sér margvíslega. Í nafninu beináta felst það, að sjúkdómurinn éti upp beinin, þ. e. a. s. í beinvefinn kemur drep; hann eyðist og í stað hans myndast holur í beinið fullar af grefti; holur þessar eru oft mjög skýrar á R-myndum. Ef beinátan er á yfirborði beinsins, litur oft út á R-myndinni sem nartað eða nagað hafi verið í það.

Börn og unglingar fá stundum illkynjaðar bólgur í

beinmerg og beinhimnu, sem stafa af öðrum sóttkveikjum. Afleiðing þessa sjúkdóms er oft að drep kemur í stærri eða smærri parta beinanna, sem ná þarf í burtu til þess að sjúklingnum batni. R-myndin sýnir nú hvar þessara beinflísa er að leita, hve stórar þær eru og hve margar; það má geta nærri, að skurðlæknum kemur vel að fá þessa vitneskju.



Olubogi úr liði.

Sullir setjast stundum að í beinum, líka k r a b b a-
mei n og fleiri mei n, sem eru gjörsamlega banvæn, nema
hægt sé að taka í burtu þann líkamshluta, t. d. hand
legginn, sem meinið hefir sezt í. R-skoðunin er oft ómet-
anleg hjálp til þess að komast að raun um sjúkdóminn í
tæka tíð; undir því er alt komið.

T e n n u r. Tannlæknar nútímans kappkosta að varð-
veita sem mest af tönnum sjúklinganna, en draga sem
fæstar út; ennfremur rétta þeir tennur, er skakkt standa.
R-myndir af tönnum sýna nú tannlæknunum þann hluta

tannarinnar, sem falinn er í tannholdi og kjálkabeinum, og má oft mikið á því græða; oft sjást ígerðir utan um tannrætur, rótabrot sem leynast kunna í kjálkanum og ýmislegt viðvikjandi óskipulegri tannmyndun.

Þvagaþærin. Af svokölluðum innvortis sjúkdómum voru það sjúkdómar í nýrum og þvagblöðru, sem menn fóru einna fyrst að skoða með R-geislum, sérstaklega þegar lækarnir höfðu grun um steinmyndanir í þessum líffærum. Oft lýsa nýrnasteinar sér svo greinilega, með einkennilegum kvölum í lendunum og blóði og jafnvel smásteinum í þvagini, að ekki er um neitt að villast, enginn vafi leikur á um nýrnastein. En oft er ástand sjúklingsins þannig, að læknirinn er ekki viss í sinni sök. Fram úr þessum efa getur R-skoðunin oftast ráðið, því mönnum telst svo til, að ekki séu nema 2% af steinum, sem ekki koma í ljós við skoðunina; R-skoðunin hefir það líka fram yfir aðrar rannsóknaraðferðir við nýru og þvagblöðru, að hún er sársaukalaus. Læknar eiga sér áhald, sem blöðrukíkir kallast; hann er færður inn um þvagganginn, inn í blöðruna, og hún svo spegluð innan með rafmagnsljósi; líka eru til steinkannar af öðrum gerðum; það gefur að skilja, að slíkar skoðanir eru ekki sársaukalausar og að öðru leyti sjúklingunum ógeðfeldar. Myndirnar sýna ekki eingöngu tilveru steinsins, heldur og hvort um fleiri steina en einn er að ræða, hve stórir steinarnir eru og hvar þeirra er að leita í nýranu. Vitneskja um alt þetta kemur auðvitað að góðu haldi á undan skurðinum, því öðruvísi en með stórum uppskurði er ekki hægt að losa sjúklinga við nýrnasteina, nema þeir séu svo smáir, að sjúklingarnir geti kastað þeim af sér með þvagini.

Mörgum mun kunnugt, að kalk myndast oft í lungum berklaveikra. Séu menn nú haldnir berklaveiki í nýrum, hleðst þar stundum kalk. Ef svo er, kemur það skýrt fram á R-myndum. Hæpið er að verða nokkurs vísari um aðra nýrnasjúkdóma en þá, er þegar hafa verið taldir.

Meltingarfærin. Geislaskoðun á maga og þörmum er mörgum erfiðleikum bundin, enda eru meltingarfærin það svið líkamans, sem R-læknunum einna síðast tókst að ráða við. Vélindi, magi og garnir eru ósýnilegir hlutir á R-myndunum, nema gripið sé til þeirra ráða, að láta sjúklingana neyta fæðu, er kasti sterkum skugga á myndaplötuna. Þetta er sú krókaleið, sem hugvitsömum vísindamönnum hefir hugkvæmst eftir margra ára tilraunir. Baríum og vismút eru efni, sem hræra má saman við graut og gefa sjúklingum að eta; duft þessi gera það að verkum, að fæðan og meltingarfærin koma fram á R-myndaplötuna sem greinilegur skuggi.

Nú getum við rakið leið fæðunnar frá því að sjúklingurinn kyngir henni og þangað til hún er komin á allar götur niður í endagörn. Við látum sjúklinginn fá sér vænan baríum-grautarspón, setjum vélarnar í gang til þess að geta gegnlýst vélindið, gefum sjúklingnum merki þegar hann á að renna niður grautnum og sjáum svo skuggamynd — lifandi mynd — af því, hvernig munnfyllin færist ofan vélindið. Allar R-lýsingar verða að gerast í koldimmu herbergi. Á heilbrigðu fólki gengur þetta viðstöðulaust. En séu þrengsli einhverstaðar — venjulega vegna krabbameins í vélindinu — sést að fæðan nemur þar staðar, en kemst svo misjafnlega fljótt í gegn, eftir því hvað þrengslin eru mikil.

Maga sjúkdómur. Nú er fæðan komin ofan í magann. Fyr á tímum leituðu sjúklingar alt af meðalalækna, ef ólag var á meltingunni; nú er öldin önnur. Á vorum tímum eiga margir þessara sjúklinga heima hjá skurðlæknunum; skurðlækningar á mögum mannanna eru margvislegar; ef þrengsli eru í vélindinu svo að fæðan kemst ekki eðlilega leið ofan í magann, er stundum rist á magaljúklingsins og gert op á magann til þess að koma megi fæðu þar inn; sé maginn siginn, er hann saumaður upp; ef um magasár er að ræða eða krabbamein, er reynt að skera það burt; séu þrengsli í neðra magaopinu, er myndaður nýr gangur milli maga og garna. Enginn góður

læknir gerir þessa skurði án þess að nákvæm og marg-
vísleg rannsókn á maganum sé á undan gengin; mikils-
verður liður á þessari rannsókn er skoðun með R-geislum.



Magasár (við skarðið, sem × stendur við).

Þegar sjúklingurinn er búinn að renna fæðunni niður í magann og R-lýsingin á honum byrjar, er margt að athuga. Fyrst og fremst sést lögun magans, sem oft verður óeðlileg, ef um magasár eða krabbamein er að ræða; maginn getur jafnvel tekið svo miklum myndbreytingum vegna þessara sjúkdóma, að hann greinist í tvo hluti og milli þeirra mjór og langur gangur; það kalla lækningar stundaglas maga. Stundum orsaka sárin djúp vik eða skorur í útlínur magans. Þá er athuguð lega magans, hvort um magasig sé að ræða; enn fremur sjást hreyfingar magavöðvanna; stundum eru þeir slakir, stundum er í þeim krampi.

Mjó girnið kemur lítt í ljós við R skoðanir.

Langinn er betri viðureignar; þrengsli sem oftast stafa af meinsemd eða berklaveiki, koma oft vel fram; enn fremur sést hvort langinn er siginn eða vaxinn við þau líffæri sem að honum liggja.

Lifrin. Stundum geta geislarnir sýnt lifrarsulli, en ýmsar ástæður eru til þess, að R-skoðanir á lifrinni eru miklum vandkvæðum bundnar.

Gallsteinar eru miklu erfiðari viðureignar en nýrnasteinar; gallsteinar eru flestir kalklausir, en myndadír af lifrænum efnum; þess vegna er mjög hæpið að leiða þá í ljós á R-myndunum.

Lungun. Á síðustu árum hefir komið fram ný lækning við lungnatæringu. Ítalskur læknir, Forlanini að nafni, er höfundur þessarar lækningar. Hún er í því fólgin, að stungið er á sjúklingnum og lofti blásið inn í brjósthol hans, inn að lunganu sem sjúkt er. Tilætlunin er sú, að loftið sem inn er blásið þrýsti svo fast að lunganu, að það hætti að hreyfast í hvert sinn er sjúklingurinn dregur andann. — Fáir maður berklaveiki í úlnliðinn, eru lagðar um hann gipsumbúðir, til þess að liðamótin fái fullkomna ró og hvíld; því margfengin reynsla er fyrir því, að ef svo er um búið, eru bezt skilyrði fyrir bata. Að sinu leyti er eins farið með lungað; loftið sem blásið er inn í brjóstholið kemur því í ró með því að

þrýsta því saman. Menn kunna nú að spyrja, hvað þetta komi R-geislunum við. En svo er mál með vexti, að innblásturslækningin er ýmsum erfðleikum bundin, sérstaklega er erfitt fyrir læknið að fá vissu fyrir því með venjulegri hlustun hvað líður samdrætti lungans; oft er lungað að meiru eða minna leyti samloðandi síðunni, en sá samvöxtur þarf að losna. R skoðunin sýnir nú nákvæmlega hvað líður samdrætti lungans, hve langt hann er á veg kominn og hvort yfirleitt eru nokkur tiltök að koma þessari lækningu við. Síðan þessar lækningar fóru að tíðkast hafa flest heilsuhæli fyrir brjóstveika eignast R áhöld.

Oft er það, að hlustunin ein getur ekki skorið úr hvort sjúklingur hafi tekið lungnatæringu, né heldur á hve háu stigi hún kann að vera. Það er því ekki einhlitt að hlusta lungun, stundum verður að vísa sjúklingnum til R-læknis til þess að »sitja fyrir«. Þar sem skemd er í lungunum, koma fram skuggar á myndinni.

Aðrir sjúkdómar í lungum, svo sem ígerðir, sullir og krabbamein, sjást oft vel; líka vessi í brjóstholinu, vegna brjósthimnubólgu.

H j a r t a ð. R-lýsingin sýnir hvernig hjartað dregst saman og þenst út við hvert hjartaslag. Aðallega er það stærð hjartans, sem kemur til greina að athuga með geislunum; myndir af hjartanu verða ekki skýrar nema teknar séu á örlitlum parti úr sekúndu.

Sá eiginleiki R-geislanna, sem vér hingað til aðallega höfum skýrt frá, er geisla-krafturinn, hvernig geislarnir bruna gegn um mannlegt hold án þess að missa kraftinn að miklu mun. Vér dáumst að hve hæglega vér í lifanda lífi með hjálp geislanna fáum séð okkar eigin beinagrind eins og hún verður þegar vér höfum legið áratugi í gróf vorri; vér sjáum lungun og þindina hreyfast við andardráttinn, hjartað dragast sundur og saman, og magann melta það, sem í hann er látið; vér getum sýnt á myndaplötum, svart á hvítu, hvernig kvenfólkið afmyndar brjósthol og kviðarhol með strengdum

»lífstykkjum«, og óteljandi aðra — óverðskuldaða — sjúkdóma leiða geislarnir í ljós. Lesandanum mun varla blandast hugur um, að geislarnir eru læknumum ómetanleg hjálp til rétttrar sjúkdómsgreiningar (diagnose), en við það stýðst aftur rétt meðferð á sjúklingunum.

R-lækningar. Auk þessarar miklu hjálpar, sem geislarnir láta læknum og sjúklingum í té, eru R-geislur líka notaðir beinlínis til lækninga, til þess að vinna bug á sumum sjúkdómum; þetta geta geislarnir einir, án þess að stuðst sé við aðrar lækningaaðferðir. Nokkru eftir að læknar fóru að nota R-geisla kom það í ljós, að geislarnir höfðu mikil áhrif á mannlegt hold; því miður kom þetta í fyrstu fram með sorglegu móti. R-læknarnir urðu varir við skaðvæn áhrif geislanna á hörund sitt; þeir fengu illkynjuð sár á hendur sínar. Þessi sár fengust oft ekki til að gróa, en átu sig inn að beini og upp eftir handleggnum. Sumir R-læknar og eins iðnaðarmenn, er unnu að tilbúningi R-áhalda, mistu fingur og hendur; stundum myndaðist krabbamein í sárunum og reið það auðvitað þessum ógæfusömu mönnum að fullu. Eldri læknarnir á R-stofnunum erlendis bera flestir einhverjar menjar eftir skemdir, sem hörund þeirra hefir orðið fyrir af R-geislunum. Allar þessar hörmungar stafa af því, að í fyrstu vissu menn ekki hve hættulegir geislarnir geta verið, ef hörundinu er ofboðið. R-læknarnir skeyttu því engu, þótt hendur þeirra yrðu stöðugt fyrir áhrifum geislanna, og dagleg störf R-læknanna eru þannig vaxin, að þeim er stórkostleg hættu búin, nema sjerstökum varúðarreglum sé beitt. Nú verja R-læknar hendur sínar með því að brúka hanzka úr blýi og gúmmí; líka svuntu úr sama efni. Enn fremur er því svo hagað, að R-læknirinn getur staðið í skjóli við verndarvegg, fóðraðan blýi, meðan R-lamparnir senda frá sér geisla; læknumum ætti því að vera borgið, ef þeir eru altaf á verði, en misbrestur vill verða á því; sjúklingunum er engin hættu búin, því nú hafa menn tæki til að mæla þann

mesta skamt af R-geislum, sem bjóða má hverjum manni án þess hann saki.

Menn kunna nú að spyrja, hvernig nota megí til lækninga þessa voða-geisla, sem brenna sundur hörund manna og jafnvel valda dauða þeirra; í fljótu bragði virðist einkennilegt, að slíkt geti orðið sjúklingum að liði. Vandinn er að finna hinn rétta geisla-skamt, sem hefir sín áhrif á sjúkdóma þá, sem geislunum er ætlað að lækna, án þess að vinna líkamanum tjón á nokkurn hátt. En veikt hold, t. d. krabbamein, eyðist miklu fyr af R-geislunum heldur en heilbrigða holdið, sem næst er meininu, og hér má því með geislunum koma ár sinni vel fyrir borð. R-læknarnir ganga á lagið og stilla svo til, að geislarnir verki hæfilega lengi á meinsemd þá, sem þeim er ætlað að eyða, en þó ekki svo lengi að heilbrigðum líffærum, sem næst eru meininu, stafi hætta af.

Húðsjúkdómarnir. Aðallega eru það húðsjúkdómar og meinsemdir, sem læknaðir eru með R-geislum. Eg ætla að nefna fáeina algengustu sjúkdómanna, sem dæmi. Eftir sem getur verið mjög þrálátt; það læknað oft með geislunum, jafnvel þótt sjúklingarnir hafi verið verið veikir í mörg ár og reynt ótal smyrslí. Kláði er einn hinn þrálátasti og erfðasti sjúkdómur; eg á ekki við kláða, sem stafar af kláðamaurum; en það eru til sjúklingar, sem eru viðþolslausir af kláða án þess að hægt sé að finna orsök til þess. Mjög oft er það kláði við endaparminn eða fæðingarstaðinn, sem um er að ræða; þetta er ilt ástand og oftast versnar um allan helming þegar þessir veslings sjúklingar taka á sig náðir og leggjast til svefns, vegna rúmhitans. R-geislar eru eina lækningin, sem dugir við þessum óþægilega kvilla.

Margir munu kannast við tjöruleppinn, sem hafður var við geitnakollana í gamla daga. Eina ráðið til þess að lækna geitur er að ná rækilega í burtu, með rótum, höfuðhárnum á þeim blettum, sem geiturnar eru, og hafa menn lengi vitað það; en þetta er ekkert áhlaupa-verk. Ef okkar höfuðhár væru talin, sæist bezt hvíllík

vinna það er fyrir lækna, að reita með töng eitt og eitt hár í senn, ef til vill úr mestum hluta kollsins. Það er óneitanlega fljótlegri aðferð, að smyrja tjöru á lepp, smella honum ofan í geitnakollinn, lofa honum að límast vel föstum og rykkja svo leppnum upp með öllu sem honum fylgir. Fleiri en þeir, sem beinlínis eru hársárir, munu hafa kveinkað sér við þessa lækningu. — R-lækningin leysir hér úr öllum vanda; afmældum skamti af geislunum er hleypt á hársvörðinn; eftir rúmar tvær vikur fara hárin að losna og detta út; með þeim hluta hársins, sem falinn er í hársverðinum, fylgir sveppurinn, sem sjúkdómnum veldur; þar með er sjúkdómurinn læknaður; eftir verður sköllóttur blettur, en eftir nokkrar vikur kemur hárvöxtur á ný. Á þessu sumri hefi eg haft undir hendi á Röntgensstofnun háskólans fjóra sjúklinga með geitur; ein stúlka var búin að hafa sjúkdóminn í tíu ár. Höfuðið var svo útsteypt, að eg neyddist til að gera hana alsköllotta; það er einkennilegt að sjá ungar stúlkur þannig leiknar. Nú hafa allir þessir sjúklingar á ný góðan og þéttan hárvöxt og hafa nú fengið bót á sínum langvinna sjúkdómi. Marga fleiri húðsjúkdóma eru geislarnir notaðir við, en of langt yrði að fara út í það hér.

Algengur kven-sjúkdómur eru æxli á móðurlífinu og fylgir þeim oft mikill og langvarandi blóðmissir. Ef sjúkdómurinn er á háu stigi, var áður fyr ekki um annað að tala en uppskurð; nú er fengin reynsla fyrir því, að margir af þessum sjúklingum læknað með geislum og komast þannig hjá meiri háttar uppskurði.

Meinsemdir. Kærkomnastar eru R-lækningarnar án efa sjúklingum með illkynjuð mein, þ. á. m. krabbamein, sem óefað er sá sjúkdómur, sem almenningur er einna hræddastur við; það er heldur ekki að furða, því fáir þessara sjúklinga fá aftur heilsu sína. Án þess að móðga skurðlækna má óhætt fullyrða, að margir slíkir sjúklingar eru skornir, en fáum batnar. Flestir læknað eru nú sammála, um að R-geislar séu góð hjálp í baráttunni við illkynjaðar meinsemdir. Skilyrðið er, að meinið sé

nálægt yfirborði líkamans, en ekki í innýflunum. — Tökum til dæmis að kona hafi krabbamein í brjóstinu; meinið er skorið burt og oftast hepnast það vel. En hættan er að sjúkdómurinn taki sig upp aftur eftir lengri eða skemri tíma af því að ekki hefir með hnífnum náðst allveg fyrir rætur meinsins. Nú er R-geislum hleypt á sárin opin eða eftir að þau hafa verið saumuð saman, til þess að eyða því sem eftir kann að vera af meininu, en ekki sjáanlegt þegar skorið var. Stundum eru geislarnir líka notaðir án þess að skorið sé fyrst, t. d. við krabbamein í vörinni, sem ekki eru óalgeng, sérstaklega á karlmönnum, sem reykja pípu. Oft fá þessir sjúklingar bata með skurði, en hér fylgir böggull skammrifi, því að við skurðinn missir sjúklingurinn stærri eða smærri parta úr vörinni; hjá þessu má sneiða með geislalækningunni.

Eg hefi að eins drepíð á algengustu R-lækningar, en ætla auðvitað ekki að rekja alla sjúkdóma, sem hægt er að nota geislana við. Eg gizka á, að einhverjum fljúgi nú í hug, hvort þessar lækningar séu ekki mjög sárar, fyrst geislarnir geta skaðskemt svo hold manna, sem fyr er getið, en það eru R-lækningar ekki; þær eru algerlega sársaukalausar. R-geislarnir eru í eðli sínu og áhrifum ákaflega einkennilegir. Svo sem að ofan er getið, eru R-geislar ósýnilegir, hafa ekki áhrif á sjóntaugarnar, bera því enga birtu, en geta þó komið öðrum hlutum til þess, að skína skært. Eins er það, að R-geislar hafa ekki áhrif á tilfinningataugar hörundsins, valda því engum sársauka, en geta þó þegar frá liður valdið djúpum sárum. Þetta er afar einkennilegt og einstakt; geislarnir eru tveggja handa járn og ekki óvita meðfæri. Það sem gerir oss unt að færa oss í nyt blessunarrik áhrif geislanna eru afrek R-visindanna, sem kenna R-læknunum að mæla sjúklingunum tiltekinn geislaskamt, sem á við sjúkdóm þeirra, en vinnur þeim ekki tjón að neinu leyti; en mönnum skilst, að R-lækningar eru ábyrgðarmikið starf.

Notkun Röntgensgeisla í iðnaði.

Því fer fjarri, að læknarnir séu einir um að hagnýta sjer R-geislana. Sjálfum tókst prófessor Röntgen, skömmu eftir að hann fann geislana, að taka R-mynd af byssuhlaupi; á myndinni kom ekki eingöngu fram patrónan, sem byssan var hlaðin, heldur sást líka missmiði á byssuhlaupinu; það kom í ljós, að hlaupið var ekki alstaðar jafnþykkt. Þetta varð til þess að menn tóku að nota geislana við vopnasmíði og annan málmiðnað. Það er ekki lítils vert að geta fundið smásprungur eða aðrar ósýnilegar misfellur á byssuhlaupum áður en farið er að skjóta úr þeim; slíkt kemur greinilega fram á R-myndunum. Geislarnir koma með þessu í veg fyrir slys, sem annars gætu hlotist af skotvopnum þessum. Í járnverksmiðjunum eru járnþútar og steiptar súlur stundum skoðaðar með R-geislum til þess að tryggja sér að ekki séu í þeim sprungur eða holur, er veikt geti burðarafi þeirra um of; jafnvel gegnum panzraðar stálplötur komast geislarnir og sýna misfellur í þeim. Mönnum gæti dottið í hug að þessum furðulegu geislum væri enginn hlutur ómáttugur.

Í verksmiðjum, sem búa til síma (kabel) til rafmagnsveitu, vinna geislarnir mikið gagn, því hvergi má vera slit á þræðinum. Símanir eru eins og menn vita stundum margar mílur að lengd; þó ekki sé nema smá sprunga gegnum símann á einum einasta stað, er alt ónýtt; þá stöðvast rafmagnsstraumurinn í rás sinni eftir símanum. Slík missmiði koma iðulega fyrir í verksmiðjunum, en með geislum má á skömmum tíma skoða margra kílómetra langan þráð og finna bilun á honum. — Í fyrra skoðaði eg á Röntgensstofnun Háskólans slitinn sæsíma af Vestfjörðum, og kom slitið greinilega fram.

Í gimsteinaiðnaði þarf að halda á öruggum aðferðum til að greina dýrustu steinana frá þeim, sem eru minna virði. Nú hafa menn fundið, að ýmsar gimsteinategundir varpa mjög misjafnlega sterkum skugga á

R-myndir. Geislarnir fara t. d. næstum því eins hæglega gegnum demant eins og loft eða vatn; þannig má aðgreina tæran demant frá silfurbergi, hvítum safir eða tópassteinum, sem veita geislunum miklu meira viðnám og gefa því sterkari skugga. Skírar perlur hleypa líka geislunum jafnhæglega gegnum sig og demant, en falsperlur miklu síður.

Matvæli eru líka stundum skoðuð með R-geislum til þess að leiða í ljós falsanir, t. d. ef matvælin eru blönduð ýmsum litarefnum úr málmsamböndum; oft geta eitranir stafað af slíkum fölsunum.

Fundur R-geislanna hefir skapað alveg nýja iðnaðargrein, sem sé tilbúning allra þeirra dýru og margvíslegu áhalda, sem notuð eru á R-stofnunum. Erlendis eru R-áhöld á öllum sjúkrahúsum, nema þeim allra minstu, og flest heilsuhæli þurfa líka á R-vélum að halda. Að framleiðslu R-tækja vinna tugir þúsunda iðnaðarmanna í ýmsum löndum; ein verksmiðja í Berlín segist hafa 800 manns í vinnu, sem eingöngu starfa að R-iðnaði. Vélarnar taka stöðugt breytingum; með hverju ári eru þær fullkomnaðar. Þær ganga líka mikið úr sér; R-lampar, sem kosta hátt á annað hundrað krónur, endast venjulega ekki nema nokkra mánuði, stundum bila þeir jafnvel eftir fárra daga brúkun, og er sjaldan hægt að gera við þá. R-lækningarnar hljóta því alltaf að verða dýrar.

Hvað eru R-geislar? Það veit enginn með vissu. Vísindamennirnir starfa stöðugt að lausn þeirrar gátu. Menn gera sér aðallega tvennskonar hugmynd um hvað geislarnir í raun og veru séu. Önnur kenningin er sú, að R-geislar séu eins og ljósgeislar sveiflur í ljósvakanum; sveiflulengdin sé aðeins miklu minni, ef til vill þúsund sinnum styttri en ljóssveiflurnar, og komist R-geislarnir þessvegna svo hæglega inn á milli frumagna efnanna og þannig gegnum þau; þetta er svokölluð sveiflukennning. Hin hugmyndin, sem menn gera sér um insta-
eðli geislanna, er svonefnd efnis-kennning; samkvæmt

henni ættu R-geislarnir að vera straumur af óendanlega smáum efnis-ögnum, í byrjun knúinn áfram af rafmagni. Að áreiðanlegri niðurstöðu eru menn ekki komnir.

Það eru svo fáir menn, sem í raun og veru hljóta ódauðlegt nafn; einn þessara fáu manna hlýtur prófessor Röntgen að verða, því svo undursamlega hluti hefir hann opinberað mönnunum með geislum sínum. Álfkonan gaf Abdallah smyrsl, sem hafði þá náttúru, að hann gat séð alt gull og silfur, sem fólgði er í skauti jarðarinnar, þegar hann bar smyrslid á augnalok sér. Röntgen gaf mönnunum geisla, sem lofa þeim að sjá gegnum alla lifandi og marga dauða hluti. Mörgum sjúklingum, sem eg skoða á Röntgenstofnun Háskólans, verður að orði: »Á miðöldunum hefðu þið geislalæknarnir verið brendir á báli«. Og þó er Röntgen ekki galdramaður; hann veit að vísu ekki hvað R-geislur eru í insta eðli sínu; það vita menn heldur ekki um rafmagn. En prófessor Röntgen hefir sýnt hvaða skilyrði þurfa að vera fyrir hendi til þess að R-geislur myndist og rannsakað til hlítar þau lögmál eðlisfræðinnar, sem R-geislur lúta. Samt held eg að sjúklingarnir hafi rétt fyrir sér; það var lán, að samtímamenn Röntgens skildu hann og báru gæfu til að færa sér í nyt það ómetanlega gagn, sem geislarnir vinna mannkyninu.

Myndir þær, er fylgja þessari ritgerð, eru teknar eftir Röntgensmyndum teknum í Röntgensstofnun Háskóla Íslands.

Gunnlaugur Claessen.

Draumljóð.

Ókunnugt er mér um það, hvort draumljóð eru sér-eign vor Íslendinga, eða þau eru alþjóðaeign. Hitt er á allra viti, að jafnlangt og sagnir ná aftur í tímann hefir ósjaldan brytt á því, að menn hafi dreymt vísur og stef, er þeir annað tveggja hafa sjálfir kveðið í svefni eða aðrir kveðið við þá.

Í »Þjóðsögum« Jóns Árnasonar og viðar í sagna- og fræðiritum er þó nokkuð prentað af draumljóðum, en þó mun það sanni nær, að miklum mun fleira er til í munn-mælum manna á milli. Álit eg það vel þess vert, að slíku sé til haga haldið og komið á framfæri, og í því skyni er það, að eg hefi tint saman fáeinar draumvísur, er eg hygg að ekki hafi verið prentaðar fyr, og hér fara á eftir, ásamt þeim tildrögum er að þeim liggja.

Ekki skal eg þreyta góðfúsan lesara á bolla-leggingum um það hvaðan mönnum koma slík ljóð, tel það ekki á mínu færi að ráða þær dulrúnir; sömuleiðis tek eg það fram, að það eru að eins örfáar af þessum vísum, er eg tek ábyrgð á að séu í raun og veru draumljóð, þó eg fyrir mitt leyti trúi því að svo sé, þá má vel vera að þetta séu þjóðsagnir einar eða sjálfráður skáldskapur. Eg hefi snapað þetta sitt úr hverri áttinni og sel það ekki dýrara en eg keypti.

Það er ekki ótítt að draumvísur séu skothendar og lélega kveðnar, en sannast að segja hefi eg fremur sneitt hjá að taka þær í þetta litla safn, þó mér hafi borist þær í hendur, en haldið mér við þær einar, er mér hafa virzt

sæmilega kveðnar, því eg er á því, að lélegum kveðskap sé lítt haldandi á lofti, hvort heldur að kveðið er í vöku eða svefni.

Margar voru þær mergjaðar kynjasögurnar, sem mér voru sagðar í æsku, en engin held eg að hafi orðið jafn rótföst í huga mínum og ein saga, er gömul kona sagði mér. Átti hún að hafa gerst á Vestfjörðum, líklega seint á átjándu eða snemma á nítjándu öld:

Fátæk hjón bjuggu í veiðistöð á Vestfjörðum, var bóndinn háseti á skipi, er gekk til fiskjar þaðan úr verinu. Hjónum þessum kom með afbrigðum illa saman. Eitt sinn sem oft var það, að bóndi skyldi á sjó, deildu hjónin að vanda, og urðu kveðjur þeirra að lokum þær, að húsfreyja sagði, að hann skyldi fara til helvítis. Þann sama dag gerði ilt veður, barst mörgum skipum á, þar á meðal því er bóndi reri á, fórst það og skipverjar druknuðu allir.

Næstu nótt eftir dreymir konu bónda, að maður hennar kemur til hennar sjóvotur og í meira lagi svakalegur og kveður:

Kroppurinn liggur kaldur í hlé,
kann ei lengur svamla.
En hvar heldurðu að sálin sé
seimanornin gamla?

Sagt var, að konunni yrði svo mikið um drauminn, að hún brjálaðist og hefði aldrei heila sansa upp frá því. Hefir líklega þózt renna rétt grun í, hvað orðið hafi um sál bónda síns. Eg var ekki heldur á æskuárum mínum í neinum vafa um, hvar hún hefði lent.

Ekki alls fyrir löngu bar það til í Stykkishólmi, að stúlkur tvær sátu að vinnu sinni í húsi einu þar í kaupstaðnum. Verður þá annari þeirra litið út um gluggann og sér tvo menn koma eftir stígnum. Spyr hún stall-systur sína hvort hún þekki þessa menn, og hefir orð á

því hvað annar þeirra sé sélegur, og segir í spaugi, að hún vildi að hún ætti hann að eiginmanni.

Hin segir menn þessa vera framan úr eyjum, og kveðst þekkja þá báða. Feldu þær svo talið.

Næstu nótt eftir dreymir þá stúlkuna, sem orð hafði á því, hvað maðurinn væri eigulegur, að sá hinn sami kemur til hennar, er hann allur sævi drifinn, og kveður vísu þessa:

Kjörinn ei við ektastand,
yndislega stúlkan mín.
Nýt þó sælu lífs um land,
ljómandi hvar gleðin skín.

Visan er sem sjá má lélega kveðin, en eg hefi samt sem áður ekki slept henni úr, því svo bar til að menn þeir, er stúlkurnar áttu talið um, druknuðu á heimleið úr kaupstaðnum sama dag, svo þetta horfir töluvert kynlega hvað við öðru, samræða þeirra stallsystra, druknun manna, sem stúlkunni var ókunnugt um, og svo draumurinn.

Konu undir Jökli, er mist hafði unnnusta sinn í sjóinn, dreymdi skömmu eftir druknun hans, að lagst var ofan að glugga er var yfir rúmi hennar og kveðið:

Líttu í skjáinn skykkjuguá,
og skaltu fá að sanna,
að vofum hjá úr votri lá
vakir þrá til manna.

Stúlkan vaknaði við og þóttist kenna málróðm unnusta síns, en hug brast hana til að líta upp í gluggann, enda virtist henni í sama bili sem einhver rendi sér niður baðstofu-þekjuna.

Í óprentuðu handriti eftir Gísla sagnfræðing Konráðsson, er þess getið, að mann norður á Ströndum, Tómas að nafni, »dreymdi að maður kæmi að sér um nótt og kvæði vísu þessa:

Bezt er að leggja brekin af
og bera vel raunir harðar,

nú er meira en hálf sótt haf
heim til sælu-jarðar.

Nam Tómas visuna og sagði frá henni er hann vaknaði. Næsta dag eftir varð Tómas þessi bráðkvaddur.

Þorvaldur prestur Björnsson, er síðast hélt Mel í Húnaþingi, druknaði þaðan laust eftir síðustu aldamót, með þeim hætti, að hann féll niður um ís að nóttu til. Þá hina sömu nótt og slysið bar til, dreymdi bónda þar nyrðra að prestur legðist á glugga hjá sér og kvæði:

Er á ferðum engin töf,
ekki er gott að skilja.
Sigli eg yfir sollin höf,
svöl er næturkylja.

Djúpum ofar hættu hyl,
hlaðinn þungum vanda,
samt eg horfi sjónum til
sólar-fegri landa.

Gömul kona, er lengi var á vist með foreldrum mínum, sagði mér frá því á æskuárum mínum, að faðir sinn, hann hét Arngrímur og var mesti greindar og sómamaður, hefði sagt, að það hafi sér þótt kynlegast af því er fyrir sig hafi borið um dagana, er mætti honum eitt sinn er hann var á ferð að vetrarlagi.

Hann átti heima inni í Dölum, og var á heimleið utan Skógarströnd. Hafði hann ætlað sér að ná að Vörðufelli, sem er á Inn-ströndinni, sem kölluð er, næsti bær fyrir innan Breiðabólstað. Er það ærið löng bæjarleið, og svo er þar landslagi háttað, að þar eru fell ekki allsmá hvert inn af öðru en holt og mýrar á milli, með smábörðum og lautum, og vegur, að minsta kosti á þeim tíma, fremur óglöggur þegar snjór var á jörðu.

Það var fyrir löngu orðið dagsett, því þetta var í svartasta skammdeginu; tunglskin var, en þess naut að eins öðru hvoru, því loft var skýjað og talsverður skafrenningur. Arngrímur vissi sig samt vera á réttiri

leið og hélt öruggur leiðar sinnar. Alt í einu verður hann þess var, að maður gengur á snið við hann, ekki sá hann í andlit honum, því hann hafði barðastóran hatt á höfði og fremur virtist Arngrími maðurinn skuggalegur. Ganga þeir svo um hrið, að hvorugur yrðir á annan, en loks vikur komumaður sér að Arngrími og segir: »Komdu sæll lagsmaður«. Arngrími varð hálf-hverft við, en svarar þó, og það fremur stuttaralega: »Eg veit ekki hvort eg er lagsmaður þinn eða ekki«. Ekki töluðust þeir fleira við, því í sömu andránni skrikaði Arngrími fótur, og er hann leit upp var komumaður horfinn, og sá hann ekki meira af honum. Tók hann nú að greikka sporið og komst í vökulokin að Vörðufelli. Fékk hann þar gisting og góðan beina. Um nóttina dreymir hann að til sín kæmi maður, þekti hann að þar var kominn félagi hans frá kvöldinu áður. Hann kvað vísu þessa:

Enginn breiðir ofan á mig
 upp í heiðar-drögum;
 fram á greiðum fanna-stig
 feigðin eyðir dögum.

Arngrímur vaknaði við og þóttist sjá manninn ganga frá rúminu.

Búi prófastur Jónsson, er lengi var prestur að Prestbakka í Strandasýslu og dó þar árið 1848, var gáfumaður og hagorður vel, en hafði það til að vera keskinn. Á hans dögum var það að draugurinn Ennis-Móri, er síðar var kendur við Sólheima í Laxárdal, var í almætti sínu þar á ströndunum og gekk þar ljósum logunum. Búi prófastur lagði lítt trúnað á slíkar bábyljur, og eitt sinn er tilrætt var á heimili hans um illa aðsókn Ennismanna og skráveifur þær er Móri gerði, sagði prófastur að þetta væri hjátrú ein og hindurvitni, kvaðst ekki trúa því að Móri væri til, og manaði hann að gera vart við sig eða sýna sig ef hann væri til. Kona prófasts kvað þetta óþarfa hjal, sem bezt væri að láta sem fyrst falla niður.

Næstu nótt, er menn á Prestbakka voru fyrir góðri

stundu gengnir til svefns, vaknar húsfreyja við það, að bóndi hennar biður hana að lofa sér að fara upp fyrir hana í sænginni. Spyr hún hverju slíkt sæti. Segir prófastur að sig hafi dreymt, að kveðið væri á glugga yfir rúmi þeirra hjónanna, með dimmari rödd og dólslegri:

Vaki þú Búi
viljirðu sjá Móra,
kreptur er knúi,
kyrkt hefi eg þá fjóra.
Líttu í ljóra, líttu upp í ljóra.

Við þetta vaknaði sira Búi og varð litið upp í gluggann, og þótti gesturinn fremur ófrýnn, er lá á rúðunni. Kvaðst prófastur ekki myndi oftara bera bríð á að Móri væri til. Nokkrir voru það, er gátu þess til, að sira Búa hefði alls ekki dreymt vísuna, heldur gert þetta af keskni, en hinir voru miklu fleiri, er trúðu því að alt hefði þetta gerst svo sem prófastur sagði frá.

Um síðustu aldamót dó kona á Vesturlandi, er Kristín hét, hún var ekkja og lét eftir sig dóttur eina barna, var telpan um fermingaraldur, er móðir hennar dó. Treg-
aði hún mjög móður sína, sem vonlegt var, þar sem hún stóð eftir munaðarlaus.

Eitt sinn er hún hafði sofnað venju fremur sorgbitin, dreymir hana, að móðir hennar kemur til hennar glæðleg í bragði. Hún strauk hendinni um vanga hennar og kvað:

Við skulum gleyma gráti og sorg,
gott er heim að snúa.
Láttu þig dreyma bjarta borg
búna þeim sem trúu.

Barninu var að vonum mikil huggun að draumnum og vísunni.

Ekki alls fyrir löngu voru á Vesturlandi fóstursystkini, var þeim vel til vana. Þau ólust upp við sjó. Hafði stúlkan oft orð á því hvað öldubljóðið seiddi og hve-

notalegt það myndi vera að láta báruna taka sig í votanfaðminn og vagga sér.

Þegar pilturinn var kominn um tvítugt fór hann í ver. Eina nótt á vertíðinni dreymir fóstursystur hans að hann kemur að henni og kveður:

Eg er á floti út við sker,
öll er þrotin vörnin,
báran vota vaggar mér.
Þú veizt hvað notalegt það er.

Seinna frétti hún að hann hefði druknað í fiskiróðri skömmu áður en hana dreymdi drauminn; fanst lík hans aldrei.

Vinkonur tvær höfðu bundist fastmælum um það, að hvor þeirra er fyr dæi skyldi láta hina vita um liðan sína, væri þess kostur.

Önnur þeirra, er Guðrún hét, hafði ekki mikla trú á því, að slíkt væri framkvæmanlegt, enda kvaðst hún fyrir sitt leyti ásáttust með að sofa og hvilast eftir veraldarvolkið.

Nú bar svo til að Guðrún dó fyr, og beið nú vinkona hennar með óþreyju eftir því að hún vitjaði sín, en það varð þó ekki fyrst um sinn að hún gerði vart við sig.

En er liðin voru þrjú ár frá dauða Guðrúnar dreymir vinkonu hennar eitt sinn, að Guðrún komi til sín. Þykist hún hafa orð á því, hve lengi henni hafi láðst að efna heit sitt og spyr hana jafnframt hvernig henni líði þarna hinum megin. Ekki gaf Guðrún neina skýringu á því hvað sig hefði tafið, en vísu þessa kvað hún:

Svefn er ljúfur, sæng er hæg,
svalað er löngun minni.
Hvöldin verður þreyttum þæg
á þeirri jörð sem hinni.

Konan mundi vísuna er hún vaknaði, en ekki veit eg til að hana dreymdi Guðrúnu oftar.

Mann nokkurn er Jón hét dreymdi fyrir fám árum
kunningja sinn, er var til heimilis í öðrum landsfjórðungi.
Þótti honum hann koma til sín dapur í bragði og kveða:

Veðrið syngur vetrarbrag,
vafið er lyng í klaka.
Vofur kringum dáinn dag
dansa í hring og vaka.

Eg hef hallað höfði á grund,
hlýtt á kallið grimma.
Hittir alla hin hinsta stund,
þeir hníga, og falla í dauðans blund.

Skömmu síðar frétti Jón að þessi vinur hans hefði
orðið úti sömu nóttina og hann dreymdi visurnar. Hafði
Jóni þótt draumurinn svo kynlegur, að hann skrifaði hjá
sér dag og stund þá er hann dreymdi.

Undir Jökli fórst fyrir mörgum árum sexæringur sem
kallaður var »Gammurinn«. Áður en slysið fréttist heim
í sveitir dreymdi konu þar einn skipverjanna, er var
henni nákominn. Kom hann til hennar sjóvotur og kvað:

Aldan freyddi, öldin kveið,
Ægir reiddi hramminn,
höggið greiddi, hrönnin reið
til heljar leiddi Gamminn.

Fyrir nokkrum árum dvaldi kona er Guðrún hét á
Vesturlandi; hún var ógift alla æfi; fremur var hún dul í
skapi, en greind og vel hagarð. Þegar hún var komin á
fimmtugs aldur fór hún í kynnisfór til vinkonu sinnar, er
bjó í næstu sveit. Þetta var á útmánuðum. Á áliðnum
degi kom hún að bæ nokkrum á sveitar enda; átti hún þá
aðeins eftir að fara yfir háls, ekki all-lágan, er skildi
hreppana að. Var heimili vinkonu hennar hinum megin
hálsins, og hafði Guðrún einsett sér að komast þangað
um kvöldið.

Henni var boðin gisting á bæ þeim er fyr getur, en
hún var ófáanleg til að vera þar um nóttina. Hélt hún

svo leiðar sinnar, og var unglingsstúlka, sem henni var kunnug, látin fylgja henni fram undir hálsinn. Fremur var Guðrún fátöluð að þessu sinni, en áður þær skildu kastaði hún fram þessari visu:

Vofur allar eru á ferð
út þá hallar degi.
Eg mun varla öfundsverð
ein á fjallavegi.

Stúlkan nam visuna. Ámálgaði hún við Guðrúnu að snúa heim með sér og þiggja gistinguna. En það var ekki við það komandi, kvað hún engan mega sköpum renna og kvaddi stúlkuna.

Liðu svo nokkrir dagar. Undraðist enginn um Guðrúnu, því veður hélzt allgott til næsta dags. En þriðju nótt eftir dreymdi stúlku þá er Guðrúnu hafði fylgt, að hún kæmi til sín, var hún fól og fannbarin og kvað:

Feigðarelfan fanst mér djúp,
fór sem hugur spáði.
Nú er eg falin fannahjúp
fram á köldu láði.

Stúlkan sagði frá draumnum og vísunni um morguninn. Var nú farið að spyrjast fyrir um ferðir Guðrúnar. Hafði hún ekki komið fram. Var hennar leitað og fanst hún örend skamt frá læk, er féll úr gili þar í hálsinum. Var þess getið til, að hún hefði fallið í lækinn niður um ís, komist að visu upp úr honum aftur, en orðið innkulsá af vosbúðinni, lagst svo fyrir og liðið í brjóst, því frost var nokkuð, þó veður væri að öðru leyti meinlaust.

Fyrir mörgum árum bar það til vestur í Dölum, að ungur maður, Ólafur að nafni, varð úti í fjallgöngum. Var hans lengi leitað og fanst hann ekki.

Um sama leyti eða litlu fyr dó faðir hans, gamall maður forn í skapi. Lagðist sá orðrómur á, þótt undarlegt megi virðast, að það væri af völdum gamla mannsins að Ólafur fyndist eigi. Styrktist og að mun við það,

að kunningja Ólafs, er löngum hafði verið ótrauður í að leita hans, dreymdi um þetta leyti, að Ólafur kæmi til sín og kvæði:

Veit eg að ykkur vilt er sýn,
veldur galdramugga.
Á bersvæði liggja beinin mín,
ber á engan skugga.

Þá er liðin voru tíu ár frá hvarfi Ólafs, fann smala-drengur bein hans fram á fjalli, örskamt frá alfaravegi. Þektist hann af húfu hans, er var ófúin, og fleiri munum, er þar voru hjá beinunum.

Sagði þjóðtrúin, að þá mundi kraftur gamla manns-ins þrotinn, til að villa fyrir leitarmönnum.

Kona, er eg kyntist á Vestfjörðum, sagði mér, að vin-konu sína, er mist hafði mann sinn í sjóinn, dreymdi skömmu eftir lát hans, að hann kæmi til sín þar sem hún lá í sæng sinni og harmaði hann að vanda. Var hann dapur í bragði og mælti fram þessa visu:

Undir þvölum unnarstein
ill er dvöl um nætur,
og sífeld kvölin söm og ein
að sjá þitt ból, þú grætur.

Aðra konu dreymdi unnusta sinn, er einnig var drukn-aður fyrir stuttu. Laut hann ofan að henni og kvað:

Þó kólgu vafinn kroppur minn
hvíli á votum beði,
í ljósaskiftunum leita jeg inn
og langar í horfna gleði.

Merka konu, hagarða vel, er á heima norður í Eyja-firði, dreymdi eitt sinn veturinn 1913—14, að til sín kæmi ókunnur maður, er hana hefir þó dreymt áður, og jafnan svo, að hann hefir sagt henni fyrir stórviðburði. Að þessu sinni kvað hann fyrir henni visu þessa:

Hefst nú sögn um systur tvær,
sárt er að bera gjöldin,
Sigrún grætur, Hildur hlær,
hún á að taka völdin.

Áleit konan og þeir, er hún sagði drauminn, að þetta mundi verða fyrir harðindum og máske fellir. En er ófriðurinn mikli skall yfir sumarið 1914 þótti þeim sem draumurinn væri ráðinn.

Ekki ósvipað þessu að merkingu, þó ólíku sé ver kveðið, virðist það er mann á Vesturlandi dreymdi fyrir fám misserum.

Þóttist hann eiga tal við kunningja sinn um stjórn-málahorfur, bæði hér á landi og annarstaðar. Þykir hon-um þá mann nokkurn bera þar að, var hann mikilúðleg-ur mjög. Hann vék sér að þeim og mælti:

Riddari, blind sár,
ill mun öld.
Yfir það leggur blóðgan skjöld.

Það er sögn, líklega nokkuð forn, að á heimili einu væri að jafnaði glaumur og gleði mikil, og það fremur en góðu hófi gegndi. Ber það þá eitt sinn til, er menn voru gengnir til svefns, að konu þar á bænum, er vön var að standa framarlega í gleðskapnum, dreymdi að við sig var kveðið:

Tíðin naum er tæg og hál
til að láta svona.
Síðar aum og óforsjál
af illum draumi vaknar sál.

Varð hún hugsjúk út af vísunni, en ekki er þess getið að draumurinn boðaði neitt sérstakt.

Foreldrar Friðriks Jónssonar, er löngum var kendur við Hjalteyri, druknuðu á heimleið frá kirkju fyrir miðja níttjándu öld. Börn þeirra voru mörg og flest eða öll í ómegð er þau féllu frá, voru þau öll tekin í fóstur með-lagslaust, nema Friðrik. Var hann 6 ára þegar foreldrar

hans druknuðu, varð enginn til að bjóða honum fóstur, og var honum því komið til Benedikts prests á Hólum í Hjaltadal og lagt með honum. Átti hann allstrangt uppeldi hjá fóstura sínum, sem þótti litt mjúklyndur.

Áður en börnunum var ráðstafað dreymdi Önnu Þorleifsdóttur, ömmusystur Friðriks og þeirra systkina, er annaðist börnin, að Kristín móðir þeirra kæmi á glugga yfir rúmi því er hún svaf í ásamt yngstu börnunum. Var Kristín sorgbitin og kvað:

Harmaljárninn hjartað sker,
hrygðin sár vill spenna.
Friðrik stár í muna mér,
mín því tárin renna.

Anna dóttir Friðriks hefir sagt mér frá þessu.

Það er í munnmælum að prest, er hafði í hyggju að breyta um brauð og býli, hafi dreymt vin sinn látinn. Hygst prestur að fá hjá honum vitneskju um framtíð sína og þykist kveða:

Hvar á að byggja? Hvernig fer?
Hvar á að bera að landi?
Hvað á að tryggja bag minn hér?
Hvað á að liggja fyrir mér.

Þykir honum vinur sinn svara:

Það um varðar þig ei grand,
þér á að nægja vonin.
Guð ákvarðar líf og land,
lán, búgarða, auð og stand.

Og fékk prestur ekki frekari úrlausn.

Þá er að lokum sú sagan er eg tek ábyrgð á, að sé sönn og rétt frá skýrt, því eg heyrði í æsku föður minn, Guðmund prófast Einarsson, segja hana oft en einu sinni; hafði hann sjálfan dreymt vers það er henni fylgir og kveðið það að nokkru leyti sjálfur í svefninum.

Faðir minn var um langt skeið þingmaður Dalamanna. A þingvistum sínum kyntist hann eitt sinn ungum námsmanni, er þá var þingskrifari. Maður sá var glaðlyndur

og skemtinn. Faðir minn unni og hóflegri glaðværð og tókst því með þeim góð vinátta um þingtímann.

Nokkrum mánuðum eftir að faðir minn var heim kominn af þinginu, dreymir hann eitt sinn, að hann þykist kominn til Reykjavíkur og er á gangi þar sem nú heitir Bankastræti, en þá var kallað Bakarastígur. Þar mætir hann vini sínum, þingskrifaranum. Er hann glaður í bragði og segir föður mínum í óspurðum fréttum, að nú sé hann í þann veginn að festa ráð sitt, og sé trúlofaður.

Faðir minn árnaði honum heilla og spyr jafnframt hvert konuefnið sé.

Hinn segir honum ætt hennar, en ekki nafn, en kveðst skyldu sýna honum hana ef hann vilji fylgja sér eftir.

Ganga þeir síðan niður í bæinn og að húsi einu í miðbænum. Þar ganga þeir inn, og visar ungi maðurinn föður mínum til stofu. Fremur var þar skuggsýnt inni. Í öðrum enda stofunnar stóð kona ung og gervileg og segir ungi maðurinn föður mínum að þarna sjái hann nú unnustu sína.

Í sömu svifum brestur sundur gólfið undir fótum konunnar og fellur hún þar niður. Heyrir faðir minn jafnframt kveðið að baki sér:

Sjáið þið nú fúa fjanda,
fótum undan brast hann hér,
þar sem auðgrund á réð standa
og ugði ekki grand að sér.

Þá þykist hann sjálfur bæta við:

Og andskotinn enn í dag
ávalt hefir sama lag,
blómpallur hans býsna friður
brestur þegar mest á riður.

Við þetta hrökk hann upp, mundi hann versið og skrifaði hjá sér.

Með næstu póstferð eftir þetta fekk hann bréf frá Reykjavík; er þess getið þar, meðal annara fréttu, að kunningi, hans þingskrifarinn, sé trúlofaður frændkonu

sinni. Bar það mjög saman við það sem hann sagði föður mínum í draumnum.

Þau giftust síðar, og veit jeg ekki annað en vel færi á með þeim, þó fjárhagur þeirra muni lengstum hafa verið þröngur. Svo draumur þessi hefir annað tveggja verið markleysa ein, eða haft aðra merkingu en þá er næst liggur að smíða sjer.

Theodóra Thoroddsen.

Draumur.

»Eg svaf illa í nótt«, sagði Pálmi, »mig dreymdi erfðan draum og eg gat ekki sofnað lengi eftir að eg hrökk upp.

Mig dreymdi að eg var veikur og bróðir minn var líka veikur og mér þótti læk'nirinn hafa sagt, að við gætum ekki með nokkru móti lifað lengur en til kvelds. Það var um miðjan dag og við vorum þar, sem við áttum heima börn. Eg fann ekkert til líkamlega, en eg háttaði þegar. Bróðir minn lá í rúmi skamt frá mér. Hann er ljóshærður, en mér sýndist hárið dökkt og eg tók eftir því, að hann var ákaflega fögur. Náhvítur. Eg varð óstjórnlega hræddur, hjartað barðist eins og það ætlaði að springa. Skyrtan mín var blaut af svita og eg fann hvernig straumarnir runnu niður andlitið. Móðir mín stóð hjá rúminu. Hún var alvarleg eða döpur í bragði, en þó róleg að sjá. Hún kom með aðra skyrtu.«

»Þú segist hafa orðið hræddur«, sagði eg. »Fanst þér svo óttalegt þótt þú ættir að deyja stundinni fyrir en þú hyggur að muni verða. Hvað fanst þér óttalegt við dauðann?«

»Vissan«, sagði Pálmi, »alveg eins og færi fyrir þér ef þú vissir að þú ættir óumflýjanlega að deyja eftir nokkra klukkutíma. Ef þú ættir til dæmis að deyja í kveld, þótt þú sért nú heill heilsu. Draumurinn var svo raunverulegur, að mér var ómögulegt að finna annað en það væri alt að gerast í vöku. Mér fanst svo hræðilegt að eiga að hverfa inn í myrkrið og eiga að skilja

við alt, sem eg var bundinn við, allar vonir og öll áform. Alt ógert. Og mér fanst svo mikið líf eftir í mér — en var sannfærður um að hjá því varð ekki með nokkru móti komist að skilja við það alt. Eg man hversu eg varð lamaður af skelfingu. Eg lá upp í loft í rúminu og sá hvernig brjóstið gekk upp og niður þegar hjartað barðist. Eg var alveg máttlaus.«

»Hafðirðu þá enga von um að lifa eftir dauðann eða varstu ekkert forvitinn að fá að vita hvort þetta »annað líf« væri til. Langaði þig ekki til að líta bak við tjöldin?«

»Nei. Eina vonin sem eg hafði var að eg tórði til morguns — tórði dálítið lengur en mér var lofað. Von mín var öll bundin við þetta líf. Móðir mín sagði mér að eg lifði kanske til morguns, hún var að reyna að hughreysta mig. Eg spurði hana hvort við bræðurnir yrðum ekki látnir í sömu gröf. Ó, hvað eg átti bágð með að stynja því upp. Jú, það átti að gera það. Mér varð heldur hughæggra við það snöggvast, en svo greip óttinn mig aftur enn ákafar en fyr«.

»Trúir þú alls ekki á annað líf?« spurði eg, »eða hef-irðu enga von um það?«

»Í vöku finst mér það heldur líklegra að við höldum áfram að vera til eftir dauðann«, sagði Pálmi. »Og mér finst eg mundi geta dáið karlmannlegum dauða þótt ekkert væri nema forvitnin, sem hjálpaði mér til þess. En þarna í draumnum var eg alveg lamaður af óttanum, þar komst engin karlmennskuhugsun að. Mér var það óbærilegt að eiga að sofna draumlausum svefni og vakna aldrei aftur, skilja við alt, sem eg átti eftir ógert og alt sem eg þurfti að gera, mér fanst sál mín altöf merkileg til þess að eiga að verða að engu, en annað fanst mér þó ómögulegt. Eg leit á bróður minn. Mér sýndist hann líða líkar kvalir, en hann bar sig samt betur. Hann hafði áður sagt mér það, að hann gæti sætt sig við það, að verða afmáður, hverfa. En nú sá eg af hverju hárið sýndist dökkt. Það var af svita«.

Við sátum þegjandi um stund. Eg var að reyna

að rannsaka minn eigin huga, satt að segja dvaldi hann ekki oft við umhugsunina um dauðann og dóminn, eg var ungur og hraustur. Pálmi sat á móti mér og reykti pípu sína, hann var fögur og dálítið skjálfhentur, tekinn til augnanna. Það var hann ætíð.

»Nú, og hvernig fór svo þetta?« spurði eg.

»Eg hefi áður staðið augliti til auglitis við hræðsluna, sagði hann og röddin skalf dálítið. »Og einmitt af því að eg hefi forðast hana síðan, hefir hún ásótt mig. Hún er dökk — endalaus og óskiljanleg — eins og svefn dauðans. En þó vil eg heldur berjast við hana til eilífðar en sofa til eilífðar. Því þótt hún hafi yfirtökin með köflum og sigri að vissu leyti, þá sigra eg í mörgu og sigurinn yfir því mikla afli hefir óumræðilega gleði í för með sér.«

Hann stóð upp og gekk um gólf.

»Móðir mín gekk til bróður míns. Hún spurði hann hvort hann tæki mikið út. Nei, nei, sagði hann. Finn ekkert til. Svo sneri hann andlitinu frá henni, hann vildi fá að vera einn með hugsanir sínar. Hann sýndist alveg rólegur. Komdu til mín! kallaði eg til hennar, komdu til mín!«

»Hún kom til mín, kraup niður við rúmstokkinn minn og þurkaði af mér svitann. — Þið fáið að vera saman í gröfnni, sagði hún, — og svo kem eg á eftir. Þá finnumst við þar, sem ekkert skilur okkur. — Við fáum að vera saman í gröfnni, hugsaði eg í sálarstriði mínu og skelfingu, en við verðum svo óendanlega langt hver frá öðrum, endalaust langt í svefni eyðileggingarinnar og myrkursins. Hræðslan, hræðslan, breiddi dökka vængi sína yfir mig — kolsvarta vængi sína. — En ef við deyjum, flaug mér skyndilega í huga, þá verð eg ekki einn, hann kemur með, við verðum að vera samferða, svo við töpum ekki hver af öðrum í þessum ókunna heimi. Við verðum að leiðast. Og við verðum að muna eftir að vera alltaf nálægt þeim, sem við elskum, ástvinum okkar, til að taka á móti þeim þegar þeir koma og leiða þá. Eg barðist af alefli við að halda þessari hugsun fram á móti

hræðslunni, halda henni fyrir framan aðrar hugsanir mínar, það voru síðustu forvöð.»

»Skelfing hefirðu tekið út í svefninum«, sagði eg, »eg held helst að þessi draumur hefði engin áhrif haft á mig.«

»Eg gat samt ekki lengi haldið þeirri hugsun«, sagði Pálmi, »hún þoldi ekki að endurtakast, og eg varð aftur undir í viðureigninni við dauðaóttann. Eg fór að reyna að biðja guð, en hugur fylgdi þar ekki huga, því eg þekti ekki guð, trúði því ekki að hann gæti gert neitt fyrir mig. Í vöku hefir mér fundist eg geta trúað á kraft bænarinnar, en þarna í draumnum var eg alveg trúlaus«.

»Og þá kom læknirinn inn. Hann leit á mig. Nú, það er svona, sagði hann, hann er að skilja við. — Eg rauk upp í rúminu. — Þér ljúgið, sagði eg, eg man hvað eg átti bágð með að tala, tungan vafðist mér um tönn, eg var eins og þrumu lostinn af skelfingu, mér fanst sálin vera í ógurlegustu kvölum, en líkaminn óviðkomandi hlutur utan við hana. Mér fanst líkaminn vera dauður og sálin vera að deyja. Þér ljúgið hvíslaði eg, eg er ekki að deyja, eg er friskur, hefi aldrei getað hugsað betur — þarf að skrifa, skrifa og verða frægur. — Eg fann hvernig hræðslan þrengdi sér að mér, þung, þung, alt var fult af henni kring um mig, loftið var þykt svo það komst ekki upp í mig og hugsanirnar rákust á hana — þessar hugsanir, sem eg hafði verið að leita að, sem áttu að gera mig frægan, þær rákust á hana og duttu niður í sjálfar sig, eyðilagðar um aldir alda. — Skrifa, skrifa og verða frægur, — verða frægur, lifa, lifa! og eg vaknaði.«

Pálmi settist niður og lét í pípu sína. Hann fór hægt að því. Hann settist niður eins og hann væri dauðþreyttur, augabrynnar voru dálítið ofar en vant var, varirnar skulfu dálítið — það voru drættir í andlitinu, sem eg hafði séð þar áður og skildi nú hvernig stóð á. Augun voru stærri en vanalega, augasteinarnir sýndust miklu stærri. Hann sat þegjandi stundarkorn og hélt á pípunni, svo tók hann eldspýtur, kveikti í henni og leit á mig bros-

andi. Hann varð á sama augnabliki alveg eins og hann átti af sér að vera.

»Skrifa, skrifa og verða frægur«, sagði hann, »það var hið síðasta af þessum draumi, það var síðasta hugsun mín þegar eg var að deyja, hugsunin sem aldrei rættist og aldrei gat með nokkru móti ræzt. Eg varð að sofna til eilífdar og gleymast. Ekkert lifði eftir af mér, enginn afkomandi, ekkert orð sem gat geymst. Eg hvarf eins og regndropi sem dettur í hafð.«

»Og hvernig leið þér þegar þá vaknaðir?« spurði eg.

»Það fór vel um mig í rúminu þegar eg vaknaði«, sagði Pálmi, »eg var ekki sveittur og hjartað sló rólega. Draumurinn hafði engin áhrif haft á líkamann. Eg settist upp í rúminu, það var kolsvarta myrkur. Á eg að segja þér hvað eg gerði fyrst þegar eg var vel vaknaður?«

»Já, fyrst þú hefir sagt mér söguna að þessu, þá verðurðu að ljúka við hana«, sagði eg.

»Eg þakkaði guði innilega og af verulega hræðum huga fyrir að eg var enn á lífi. Spenti greipar og þakkaði guði.«

Eg gat ekki annað en brosað.

»Þú spentir greipar og þakkaðir guði«, sagði eg.

Þórir Bergsson.

Utan úr heimi.

Herbúnaður atvinnulífsins í Þýzkalandi.

I.

Það tvent, sem er einna markverðast við nítjándu og tuttugustu öldina, er mannfjölgunin og vöxtur framleiðslunnar í heiminum. Arði framleiðslunnar, auðnum, má annaðhvort eyða þegar í stað til neyzlu eða verja honum til frekari framleiðslu, vinna að því að fá meiri framtíðararð. Þessir Draupnis-hæfileikar auðsins, að geta getið af sér aukinn arð, hafa valdið kapphlaupum einstaklinganna um auðinn og sérstaklega sett mark sitt á nítjándu og tuttugustu öldina, sem þess vegna hafa verið nefndar auðmagnstímabilið. En því meiri sem þjóðarauðurinn er, þess betur getur þjóðinni í heild sinni vegnað, þess hægar getar hún staðið straum af mannfjölguninni, þess völdugra er ríkið. Af þessu stafa veðhlaup ríkjanna um auðinn, afl þeirra hluta sem gera skal.

Styrjaldir nítjándu aldarinnar stöfuðu flestar af pólitískum ástæðum. Tilfui Norðurálfustyrjaldarinnar var eins og menn minnst morðið á ríkiserfingjanum í Austurríki, aðdragandinn var Balkanstyrjöldin, en meðal hinna mörgu dýpri orsaka má fyrst og fremst nefna baráttuna milli Þjóðverja og Englendinga um auðmagnið. En auður skapast ekki nema á atvinnusviðinu, og baráttan um auð verður því baráttan um völdin á atvinnusviðinu og heimsmarkaðinum.

Og eins og aðalorök ófriðarins stafar af atvinnusviðinu, svo geisar einnig styrjöldin þar. Þjóðirnar berjast ekki einungis með mönnum, heldur og með auð í ýmislegri mynd. Báðir flokkar reyna að hnekkja atvinnulífi fjandmanna sinna eins og þeim er unt, vegna þess að þeir vita, að þó að miljónir manna séu drepnar, þá fæðast þó aðrir í þeirra stað, en ef möguleikum

fjandmannanna á atvinnusviðinu er hnekt, þá er þar með skorið á lífæð þjóðarinnar og bæði sigri hennar í þessari styrjöld og framtíð heunar sem heimsdrottins spilt um aldir.

Hugsjón Napóleons mikla var að koma Englendingum á kné með því að loka meginlandi Evrópu fyrir verzlun þeirra. Þessa hugsjón Napóleons hafa nú Englendingar tekið upp gagnvart Þjóðverjum. Randamenn umlykja Þjóðverja á alla vegu, þeir hafa völdin á hafinu og hugsjón þeirra er, að beygja Þjóðverja, ef ekki með vopnum, þá með því að spilla verzlun þeirra við önnur lönd.

Þjóðverjar hafa á síðustu áratugum orðið að iðnaðarþjóð, og hafa þeir því stöðugt orðið að flytja meira og meira af matvælum, fódurvörum og vöruefnum (öðrum vörum) inn í landið frá útlöndum, en hafa galdið það með iðnaðarvörum. Nú hætti þessi verzlun alt í einu. Þýzkaland varð, eins og umsetin borg, og leit út fyrir að alt atvinnulífið mundi fara í kaldakol, en bæði herinn og aðra hluta þjóðarinnar skorta það, sem þurfti til að framfleyta lífinu og halda ófriðnum áfram.

Nú varð því að grípa til einhverra ráða. Þrátt fyrir alla sína framsýni höfðu Þjóðverjar einungis búist undir ófrið á hermála- og fjármálasviðinu, en ekki á atvinnusviðinu. Það sem hér varð að gera, varð því að hugsa frá grunni og þó skjótlega, bæði með tilliti til þarfa hersins og atvinnulífsins.

Þó að örðugt sé að afla sér vitneskju um ráðstafanir þær, sem gerðar hafa verið, skal eg reyna að skýra frá því helzta, sem gert hefir verið í tveimur aðalatvinnuvegum Þjóðverja: landbúnaði og iðnaði.

II.

A. Uppskeran á Þýzkalandi varð í minna lagi haustið 1914 og sýnt var, að minka varð neyðlu matvæla á einhvern hátt, ef þau áttu að endast til næstu uppskeru. Nú var um tvent að velja. Ríkið gat látið alla verzlun með matvæli afskiptalausar og búist við, að verðið mundi verða sett svo hátt af kaupmönnum, að birgðirnar entust, en fyrirsjáanlegt var að það mundi því að eins takast, að meiri hluti þjóðarinnar, efnalausir menn, syltu. Eða stjórnin gat tekist á hendur að koma skipulagi á neyðluna, annaðhvort með því að koma á meiri sparnaði í tilbúningi matvæla, ætla mönnum hluta af því, er húsdýr neyttu, setja háverð á vörur o. s. frv., eða jafnvel skamta öllum matvæli úr hnefa.

Ríkisþingið samþykkti óðara lög 4. ágúst 1914, sem gáfu stjórninni heimild til að gera allar nauðsynlegar ráðstafanir á atvinnusviðinu. Auk þess voru þá samþykkt önnur lög, sem gáfu yfirvöldunum heimild til að ákveða háverð á matvælum, að viðlögðum ströngum refsingum, ef menn seldu dýrara, og eignarnámi, ef menn vildu ekki selja. Nú var því víða ákveðið háverð á vöru í smásölu, en það kom að til-
tölulega litlu gagni vegna þess, að bæði var verðið ekki sett til-
tölulega jafnhátt alstaðar, og ekki alstaðar sett háverð, og menn seldu því birgðirnar þar, sem verðið var hæst. Auk þess var ekkert háverð á vörum í heildsölu. Af þessu leiddi verðhækkun þá, er sést af töflunni. Meðalverð í mörkum fyrir 1000 kg.

	Hveiti.	Rúgur.
Júlí	206	174
Ágúst	225	194
September 21—26	250	224
— 26.—3. október	247	222
Október 5.—10.	252	224
— 12.—17.	260	228
— 19.—24.	267	234

Verðið á hveiti og rúg, sem hafði verið fremur hátt í ágúst-mánuði, hækkaði jafnt og þétt. Verðhækkunin á hveiti svaraði til 30% og á rúg 50%. Sama máli var að gegna um aðrar korntegundir.

Sambandsstjórnin neyddist því til að ákveða háverð á rúg og hveiti í öllu ríkinu með tilskipun 28. okt. 1914. Verðið var heildsöluverð á þýzku korni og var ákveðið álíka hátt og markaðsverð á þeim tíma. Tilgangurinn var því einungis að koma í veg fyrir frekari verðhækkun, en ekki að setja sérstaklega lágt verð. Ætlunin var að neyzlan mundi minna, vegna þess hve hátt verðið var, og að þessi ráðstöfun mundi nægja. Eigandi var skyldur að láta birgðir sínar af hendi til sveitarstjórna, ef krafist yrði. Auk þess var skipað fyrir að blanda hveiti með rúg, rúg með kartöflumjöli, bannað að fódra húsdýr með brauðskorni, ölgerð og brennivinsframleiðsla minni að miklum mun.

Brátt sást samt, að ráðstafanir þessar voru ófullnægjandi. Aðalgallinn var, að háverð var aðeins sett á einastöku vörutegundir. Þar sem skortur var á öllum matvælum gátu því hinar vörurnar, sem ekki var sett háverð á, stigið upp úr öllu valdi, og auk þess var ekkert háverð á mjöli né brauði, svo að hægt var að selja það

með geipiverði. Stjórnin varð því nokkru síðar að setja háverð á hafra og kartöflur til manneldis.

Með tilskipunum þeim, sem nefndar hafa verið, hafði stjórnin þannig komið í veg fyrir frekari verðhækkun á helztu kornvörum og gefið góð ráð og skipað fyrir um notkun þeirra. Allar þessar ráðstafanir voru eins að því leyti, að þær miðuðu aðeins óbeint að því að sjá fyrir matvælum, en skiftu sér ekkert af hjá hverjum birgðirnar lentu. Atgerðirnar voru flestar í þágu neytenda, en ríkið lét »frjáls viðskifti« halda áfram eftir sem áður og afskifti þessi urðu eingöngu skoðuð sem leiðréttingar á verstu göllum »frjálsrar samkeðni«, bætur á gömlu fati. Sökum skorts þess á öllum matvælum, sem varð sí og se tilfinnanlegri, stöðuðu þessar ráðstafanir ekki.

Til þess að fá fulla vitneskju um, hvernig ástandið væri landinu, lét stjórnin nú halda rannsókn um allar matvælabirgðir í desember. Ekki hefir árangurinn verið látninn uppi, en þó hefir ástandið ekki virzt glæsilegt, því að nú var gripið til enn strangari aðgerðar. Hafði ekki enn hepnast að koma æskilegu lagi og sparnaði á neyzluna.

Prússastjórn hafði komið því til leiðar, að stofnað hafði verið ófriðarkornvörufélag (Kriegsgetreide-Gesellschaft), sem átti að komast yfir eins mikið af kornvörum og unt væri, til neyflu síðustu mánuðina fyrir næstu uppskeru. Félag þetta, sem var stofnað af löndum, sveitum og stórum iðnaðarfyrirtækjum, mátti ekki gefa meira en 5% í arð og var því ætlað eingöngu til almenningsheilla. Brátt sást nú, að erfitt mundi verða að afla þessara birgða, og vegna eftirspurnar félagsins jókst skorturinn enn þá meira í bráð. Var því fyrst sveitarstjórnnum gefin heimild til að gjöra upptækt korn, en það stóðaði ekki, af því að þetta varð ekki gert alstaðar og eigendur kornvörunnar voru ekki skyldaðir til að gefa skýrslu um birgðir sínar.

Nú var ekki nema um eitt að gera til að tryggja nægan sparnað á matvælum, koma í veg fyrir að verðið hækkaði gegndarlaust og sjá um, að allir fengju nóg til að geta lifað. Sambandsstjórnin neyddist til, þvert á móti vilja sínum, að fyrirskipa 25. janúar 1915 lög hald á öllum hveiti- rúg- og mjölbirgðum í ríkinu, eða hafði almenningur heimtað það fyrir löngu. Ófriðar kornvörufélagið fékk umráðin yfir hveiti og rúg, en sveitastjórnirnar yfir mjöli. Kornvörunnar voru samt ekki gerðar upptækar þegar í stað, en eigendurnir voru skyldaðir til að geyma birgðirnar.

ar óeyddar, þangað til þeirra yrði krafist. Allir voru skyldir að greina frá, hve miklar birgðir þeir hefðu af vörum þessum. Kaupverðið er sett af sveitastjórnnum í námunda við háverðið, og mjölverðið eftir kornverðinu.

Með þessari tilskipun tókst ríkið á hendur einkaverzlun á þýzkum kornvörum (ekki útlendum) og framvegis hefir því enginn umráð yfir sölu á þýzkum kornvörum nema ófriðarkornvörufélagið. Eigendurnir urðu að geymendum birgðanna, mylnurnar komust í þjónustu ríkisins, mjölverðanir og brauðgerðarhús o. fl. urðu að úthlutunarstöðum.

Nú var ekki að eins að ræða um eftirlit, heldur einnig aukinn neyzlusparnað, og var því sett á stofn ríkisniðurjöfnunarstofnun (Reichsverteilungsstelle), sem ákveður í samráði við ófriðarkornvörufélagið niðurjöfnun birgðanna til sveitastjórna, sem svo eiga að annast frekari úthlutun. Úthlutuninni er nú orðið alstaðar hagað þannig, að hverjum manni eru fengnir í hendur brauðmiðar, sem gefa tilkall til ákveðinnar brauðstærðar fyrir ákveðið verð. Öllum er þannig skammtað jafnt úr hnefa. Mönnum hefir reiknast til, að neyzlan á kornvörum hafi þannig verið færð niður um 39—50%. Neyzlan hefir minkað mest í sveitinni og hjá efnalitlu fólki í bæjunum, sem ekki hefir haft ráð á að neyta kjöts o. fl. að jafnaði.

Á þenna hátt tókst Þjóðverjum að láta kornbirgðirnar endast til næstu uppskeru, og það jafnvel svo, að 15. ágúst var 700000 lesta afgangur af korni.

Þegar leið að uppskerunni 1915, fóru menn að ræða hvernig kornvörustefnan setti að vera næsta uppskeruár. Loks var gefin út tilskipun 28. júní um ófriðarhagsstefnu ríkisins. Tilskipun þessi er að mestu einungis heildaryfirlit yfir lög þau sem gerð höfðu verið árinu áður. Þó er framkvæmdarvaldið nú víða falið sveitafélögum. Þannig er af sveitafélögum lagt hald á allt brauðkorn þessarar uppskeru, en þann hlutann, sem þau þurfa ekki á að halda, fá þau í hendur ríkiskornforðabúri, sem sér um hvað við það verði gert. Verðið á brauðkorni er sett álíka hátt og í vetur sem leið.

B. Annar flokkur matvælanna er kjötið. Framan af var þann að sláttra ungum kúm og kálfum, til þess að reyna að koma í veg fyrir að bændur skæru bústofninn niður, vegna fódurskortsins og verðhækkunarinnar á kjöti. Þessi slátrunarbönn minkuðu slátranir, en þá varð fódurskorturinn enn tilfinnanlegri

og auk þess át kvikfénaðurinn þá koravörur, sem annars mundu hafa verið hafðar til manneldis. Bönnum þessum var því létt af, en ýmislegt gert til að auka fódurbirgðir, brennivínsframleiðslan minkuð, ýms sykursambönd notuð til fódurs, því að af sykri var meira en nóg til vegna útflutningsbanns o. s. frv. En þar sem mönnum taldist að Þýskaland skorti 6 milj. lesta af fódurvörum auk kartaflna, þá var einsýnt, að eina ráðið til þess að láta birgðirnar nægja, var að skera niður að meira eða minna leyti. Hægt var að fá menn til þessa á tvennan hátt: gera kvikfjárrækt óarðberandi með því að hækka verð á fódri, auka eftirspurn eftir kjöti á einhvern hátt svo að verðið hækkaði.

1. Alt fyrsta árið var fódurverðið of lágt til að geta vegið á móti verðhækkuninni á kjöti, og gat því ekki gert kvikfjárræktina óarðberandi. Ein af ástæðunum til þess var, að um leið og háverð var sett á rúg og hveiti, var sett mjög lágt háverð á klíð og bygg, til þess að freista manna ekki til að fódra með brauðkorninu.

Til þess að minka notkunina á höfnum, var í janúar bannað að gefa öðrum dýrum en hestum hafra, og var ákveðin viss gjöf á hest; 13. febrúar 1915 var svo háverðið hækkað. Þessi ráðstöfun þótti samt ekki nægja; var því jafnframt verðhækkuninni komið á einkaverzlun á þýzkum höfnum, og var hún fengin í hendur heyfangamiðstöðinni. Auk þess fékk hún í marz einkaverzlun á bygggi.

Hinn 12. febrúar var aðdráttarfélagi bænda — einkonar kaupfélagi — veitt umboðsstjórn og einkasala á öllu syk-urkendu fódri, og loks var því svo í marz fengin í hendur einkaverzlun með klíð. Algert einkaleyfi fékk félagið 4. apríl, þegar fyrirskipað var, að ekki mætti verzla með neitt þýzkt kraftfóður annarstaðar en í félaginu, og voru því fengnar í hendur allar birgðir, sem sætlaðar voru til sölu í landinu. Aðdráttarfélagið selur svo sveitunum fódrið. Ríkiskanslarinn ákveður verðið. Einkaverzlun þessi átti að eins að standa yfir til 31. maí, en hefir verið framlengd.

Utan allrar þessarar tilhögunar voru kartöflurnar, sem kallaðar eru varasjóður Þjóðverja, og hafa þær verið óvanalega mikið notaðar í þessum ófriði bæði til manneldis og skepnufódurs. Í desember var sett háverð á fódurkartöflur. Kartöflur voru þó með þessu háverði ódýrasta skepnufóðrið og voru því notaðar til þess, en komu ekki á markaðinn. Hið lága háverð hafði því

þau áhrif, að menn slátruðu nú ekki, og varð því að hækka háverðið í febrúar. Samt sem áður kom lítið af kartöflum á markinn, og kröfðust þá margir að ríkið gerði karltöflubirgðirnar upp-tækar, en það varð þó ekki. Aftur á móti var í apríl sett á stofn miðstöð fyrir kartöfluaðdrátt, sem átti að koma reglu á kartöflunidirjöfnunina meðal sveitafélaganna. Hver sveit á að halda kartöflutalning, og ef birgðirnar reynast of litlar, getur sveitin fengið keyptar kartöflur hjá miðstöðinni, sem fær þær frá birgum sveitum. Eftir þessar ráðstafanir var um hríð fullnóg af kartöflum, en nú hefir aftur minkað salan á þeim.

2. Auk þessara ráðstafana allra, sem miðuðu að því að gera kvikfjárræktina dýrari en svo, að hún gæti borið sig, voru ýmsar ráðstafanir gerðar til að fá menn til að skera niður, með því að auka eftirspurnina, og hafa þær ráðstafanir átt mestan þátt í því, að svínunum, sem voru um 25 miljónir 1. des. 1914, hafði fækkað niður í $16\frac{1}{2}$ miljón 15. apríl, þ. e. s. um 35 %, og síðar hefir þeim eflaust fækkað mun meira. Aðalástæðan til þessa var, að bæjum og stórum sveitafélögum var gert að skyldu með tilskipun 25. jan. 1915 að sjá um að nægar birgðir væru til af geymanlegum kjötvörum. Af þessu leiddi mikla verðhækkun og slátrónir, og var þá sett háverð á svín. Þegar bæjafélögin höfðu birgt sig upp, var kvöðinni létt af þeim í maí.

Í lok október hafa verið gerðar ýmsar ráðstafanir til að minka kjötneyzluna; þannig er sala á kjöti og kjötvörum bönnuð tvo daga í viku. Þetta hefir samt ekki haft tilætluð áhrif, því að menn birgja sig þá upp til fleiri daga.

Kjötverðið hefir samt hækkað eftir því sem lengra hefir liðið á haustið, og hefir þess vegna hingað og þangað verið sett háverð á kjöt í smásölu, og samhandsráðið mun í nóvember sætla að setja háverð á kjöt alstaðar í Þýskalandi og koma á skömtunar-fyrirkomulagi.

Mjólkurverð og ostverð hefir einnig hækkað mjög, og er búist við, að þar verði bráðlega sett háverð og komið á skömtun-arfyrirkomulaginu.

*

*

*

Það, sem stjórnin hefir lagt einna mesta áherzlu á, er auðvit-að að sjá hvern um fyrir nægum matvælum. Til þess er höfð sérstök stofnun, hervistafangamiðstöðin, (Zentralstelle zur Beschaffung der Heeresverpflegung), sem er undir stjórnarráði utanríkismálanna. Ríkið hefir sett eftirlitsmann með stofnuninni.

Vistafangastjórn hersins skýrir hervistafangamiðstöðinni frá mánaðarþörfum hersins af matvælum og jafnar hún svo vistakröfunum niður á sveitafélagin samkvæmt birgðaskýrslum, sem gerðar eru mánaðarlega í hverri sveit. Sérstakar sveitanefndir sjá svo um útvegum birgðanna frá bændum, félögum og kaupmönnum. Verðið er sett af fastri netnd eftir aðalmarkaðsverði á kornvörum í landinu. Bæði landbúnaðurinn og kornvöruverzlanir eiga fulltrúa í nefnd þessari.

Auk þessarar stofnunar er einnig ríkisinnkaupastofnun í Hamborg. Kaupir hún sérstaklega allar þær útlendar vörur sem herinn þarfnast.

*

*

*

Þjóðverjar byrjuðu með því að setja háverð á brauðkorn. En þegar skortur er á allskonar matvælum, þá er það ekki nóg, heldur þarf að koma skipulagi á neyzluna. Og einn ráðið til að koma því í framkvæmd, þannig að hvorki neyzlan verði of mikil né verðið of hátt, fyrir almenning, er að ríkið leggi löghald á matvælabirgðirnar og skamt í öllum úr hnefa. Eftir því sem minnað hefir um matvæli í Þýskalandi, hefir þetta náð til fleiri vara, en þar sem því hefir verið komið á, hefir það nægt, þó að menn hafi auðvitað orðið að hafa minna viðurværi en áður. Varla er héðan af hægt að búast við því, að Þjóðverjar verði sveltir inni.

III,

Í upphafi ófriðarins leit út fyrir að þýzkur iðnaður mundi verða hart leikinn í ófriðnum. Atvinnurekendur höfðu ekki búið sig undir ófrið, og var því útlit fyrir, að verkemiðjurnar mundi brátt skorta vöruefni þau, sem þær fengu vanalega frá útlöndum, auk þess sem útländamarkaðurinn fyrir iðnaðarvörur lokaðist að mestu. Þar að auki var fjöldi verkamanna kvaddur í herþjónustu. En bráðlega kom nú eftirspurn hersins eftir iðnaðarvörum í stað eftirspurnarinnar frá útlöndum. Þjóðverjar sáu skjótt, að í ófriði þessum var einna mest undir því komið, að sem mest af iðnaðinum ynni í þjónustu hersins, og til þess að koma því til ieiðar og koma skipulagi á framleiðsluna, voru nú gerðar ýmsar ráðstafanir.

Hinn 13. ágústmánaðar 1914 var stofnuð deild í stjórnarráði hermálanna, stjórnardeild fyrir hervöruefni (Kriegsrohstoffabteilung), sem á að sjá hernaðariðnaðnum fyrir næg-

um vöruefnum, koma í veg fyrir óþarfa eyðslu á þeim og koma skipulagi á notkunina. Til þess að komast eftir hvernig ástandið væri í Þýzkalandi, voru svo í byrjun ágústmánaðar sendar fyrirspurnir til atvinnurekenda, og þegar svörin komu, var hægt að sjá hvar og hve mikið væri til í landinu af vöruefnum. Auk þessa þurfti að ákveða hverir fengju afnotarétt á vöruefnum, og voru iðnaðargreinar þær, sem í hlut áttu, hvattar til að koma sjálfar skipulagi sín í milli á aðdrætti og niðurfjöfnun vöruefnanna. Iðngreinar þessar stofnuðu þá í þessu skyni vöruefnahlutafélög, og fengu þau rétt til að leggja löghald á birgðir. Félög þessi eru undir umsjón ríkisins, og hefir umsjónarmaður ríkisins synjunarrétt. Félögin mega ekki gefa neinn ágóða. Samhliða félögum þessum var komið á fót óvilhöllum dóms- og niðurfjöfnunarnefndum, sem skera úr því hvernig vöruefnunum skuli skift niður.

Vöruefnunum er jafnað niður á þann hátt, að verksmiðjurnar geti sem best fullnægt þörfum hersins.

Hernaðarþarfirnar höfðu nú í för með sér umbreytingu iðnaðarins, þannig að friðarstörfin voru minkuð eins og framast var unt og verksmiðjurnar látnar vinna fyrir herinn. Starfabreyting þessi var gerð af iðngreinunum sjálfum með tilstyrk ríkisins; áttu tvö aðal-sambandsfélög iðnaðarins mikinn þátt í þessu, og settu þau á fót sameiginlega ófriðarnefnd. Voru nú nýjar iðngreinar stofnaðar og aftur á móti hætt við ýmiskonar framleiðslu aðra. Telst mönnum nú að fjórir fimtu hlutar iðnaðarins vinni að mestu leyti í þarfir hersins.

Alt var gert til að auka vöruefnabirgðirnar. Innflutningur frá hlutlausum þjóðum var aukinn svo mikið sem unt var, t. d. með undanþágum frá tollskyldu o. fl. Í löndum þeim, sem Þjóðverjar lögðu undir sig, voru settar á fót hagnefndir til þess að útvega vörur þær, sem herinn þarfnast, og koma þeim til miðstöðva á Þýzkalandi, en þar eru þær greindar sundur og síðan sendar þangað sem á að nota þær. Ófriðarhagshlutafélag var stofnað til að hagnýta sér eini þau í óvinalöndum, sem hernaðariðnaðurinn þurfti ekki á að halda. Á þenna hátt hafa Þjóðverjar t. d. tekið að herfangi ull fyrir yfir 500 milljónir marka. Í sjálfru Þýzkalandi var svo vöruefnum safnað saman eins og hægt var. Ríkið lagði löghald á fágæt vöruefni og menn voru skyldir að láta þau af hendi, t. d. koparmuni. Loks breyttu menn til um vöruefni, þ.e.a.s. notuðu nýj-

ar eða aðrar tegundir, sem nóg var til af, í stað vanalegra vöruefna. T. d. er nú víða notað stál og sínk í stað kopars og tins, farið að nota pappírspoka, köfnunarefni unnin úr loftinu (ríkis-einkaframleiðsla), o. fl. Í marz lýsti þýska stjórnin yfir því, að nú væri svo komið, að herinn þyrfti ekki að óttast skort á efni-vörum, hve lengi sem ófriðurinn stæði, og víst er það, að Þjóðverjar standa að ýmsu leyti betur að vígi með vöruefni en í byrjun ófriðarins. Nú hafa þeir og fengið mikið herfang (kopar) í Serbíu og ná alla leið suður til Litlu-Asíu.

Til þess að skifta verkum milli verksmiðjanna, voru höfð ýmis gömul iðnfélög eða stofnuð ný félög. Tekið er tillit til friðarþarfanna eftir því, sem unt er. Til þess að koma í veg fyrir óhæfilega hátt verð, er sett há verð. Séð er um að verkamenn þeir, sem þarf við, séu ekki kvaddir í herþjónustu. Einnig er reynt að koma sem flestum atvinnulausum verkamönnum að vinnu, og ef kaup verkamanna fer niður úr kauptaxta, geta þeir kært og fengið það hækkað. Aftur á móti geta verkamenn ekki hætt ófriðarvinnu að ástæðulausu.

Einungis með þessum og fleirum ráðstöfunum, sem menn vita ekki glöggum um, hefir Þjóðverjum tekist að halda iðnaði sínum við svo að miljónir manna yrðu ekki atvinnulausar, og þó þannig að herinn var látinn ganga fyrir öðru. Í landbúnaði skifti mikið sér ekki beint af sjálfri framleiðslunni, heldur að eins af niðurbjóðnum matvælanna. Iðnaðarframleiðslunni þurfti aftur á móti að breyta algerlega, og sýnir það best á hve traustum grundvelli iðnaðurinn var, að takast skyldi að vinna bug á erfiðleikum.

En auk þessara ráðstafana í iðnaði og landbúnaði, þá hefir ríkið gert ótal margar aðrar í peningamálum, í framfærslumálum, yfirleitt á flestum sviðum þjóðlífsins. Hvervetna er stefnan hin sama: ríkið tekur í taumana. Og þessum atgerðum eiga Þjóðverjar það að þakka, hvernig þeim hefir gengið í þessari styrjöld. Aðrar þjóðir hafa afrekað mikið á mörgum sviðum, en Þjóðverjar hafa gert viðtækari ráðstafanir, gengið á undan og að mörgu leyti hepnast betur, þó að þeir hafi átt við mikla örðugleika að stríða. Sagt er að það hafi verið þýzku skólakennararnir, sem sigruðu Frakka 1870, en nú séu það þýzkir hagfræðingar og atvinnurekendur, sem bjargi Þýzkalandi. Snemma í ófriðinum var stungið upp á því, að stofna eins konar herstjórnarráð á landshagssviðinu, af atvinnurekendum og hagfræðingum. Þetta hefir þó ekki

verið gert algerlega enn þá, þó að jatað sé, að á þann hátt hefði verið hægt að koma í veg fyrir margt fálmt og fát.

IV.

Þó að örðugt sé að skygnast inn í framtíðina, þá mun þó óhætt að segja, að margt af því, sem nú hefir staðist eldraunina, mun standa eftir ófriðinn og ríkið muni framvegis skifta sér meira af atvinnulífínu en hingað til. Liggja til þess ýms drög.

1. Fyrst og fremst til að vera viðbúið ef ófrið ber að höndum. Þannig er haldið fram, að ríkið eigi framvegis að sjá um, að atvinnuvegirnir séu alt af færir til að leggja út í ófrið. Ýmsir hagfræðingar Þjóðverja halda því fram, að sem stórpjós muni þeir að staðaldri vera neyddir til að flytja inn frá útlöndum allmikið af efnivörum og matvælum. Til þess að tryggja sjer, að ekki verði skortur á þessu, eigi ríkið alt af að hafa eins árs birgðir af vörum þessum fyrirbyggjandi (forðabúr).

2. Önnur ástæðan er fjárhagurinn. Fyrir ófriðinn voru skuldir þýzka ríkisins 5000 miljónir marka og árlegar rentur og afborganir af þeim 240 miljónir marka. Skuldirnar aukast gífurlega í ófriðnum. Þjóðverjar hafa nú tekið 25000 miljónir marka innanlandslán til hernaðarins og mun það varla nægja. Af lánum þessum munu þeir verða að gjalda um 1500 milj. marka árlega í rentur og afborgun ($5 + 1\%$). Tekjur ríkisins þurfa því að aukast að miklum mun. Sambandsríkin hafa ráð yfir beinu sköttunum, svo að ekki verður hægt að nota þá. Ekki verður heldur hægt að auka tekjur af eignum ríkisins eins mikið og við þarf hér; til þess eru ríkiseignirnar of litlar. Viðskiftaskatta er ekki heldur hægt að auka að miklum mun, því það mundi leggja of mikil höft á alt viðskiftalífið. Þó að hægt væri ef til vill að hækka tollana svo mikið að fyllt yrði upp í skarðið, þá eru þeir óvinsælir af því, að þeir koma harðast niður á efnalítlu fólki, og stjórnin mun því sjálfsagt varast tollhækkun í lengstu lög, af pólitískum ástæðum. Eini vegurinn út úr þessum ógöngum virðist því vera að ríkið takist á hendur einka verzlun eða einkaframleiðslu af fjölda af vörum.

3. Þriðja ástæðan til afskifta ríkisins af atvinnulífínu eru viðskiftin við útlönd. Varla er reyndar hægt að búast við, að ríkið takist sjálft á hendur verzlun og siglingar, nema ef til vill Hamburg-American-línuna*) og Norddeutscher Lloyd, en

*) Geta má þess, að í Sviss hefir nú verið komið á ríkiseinkainn-

aðalhlutverk ríkisins verður hér, að ráða stefnu viðskiftanna. Þjóðverjar hafa séð af ófriðnum, hve háðir þeir hafa verið útlöndum að mörgu leyti á atvinnu- og fjármálasviðinu. Framvægis vilja þeir vera sjálfum sér nógir, eftir því sem hægt er. Hugsjón þeirra er að koma fótunum undir »lokað verzlunarríki«, sem helzt ætti að ná alla leið frá Norðurlöndum suður til Litlu-Asíu, að minsta kosti sameina Þýskaland og Austurríki sem fastast, og er nú verið að vinna að því. Ríki þessi ættu að vera hvert öðru hliðholl í tolllöggjöf, jafnvel gera tollsamband með tímanum, en afstýra samkepninni frá öðrum löndum með háum tollgarði. Til samans ættu ríki þessi að geta framleitt flestar vörur, sem þyrfti. — Ánk þess ætlast margir til, að stjórnin beini straumi þeim af auði og mönnum, sem Þýskaland hefir yfir að ráða, sem mest inn á við, en því næst til núverandi sambandsmanna sinna og hlutlausra smáþjóða, sem Þjóðverjar gætu náð til með hernum, ef þeir neyddust til þess. —

Allar þessar ráðstafanir og ráðagerðir eru grundvöllurinn undir þeirri nýju stefnu í stjórnmálum, sem nú virðist vera að brjótast fram úr myrkri ófriðarins, greinilegast á Þýskalandi, en þó alstaðar í Norðurálfunni: Herbúnaður atvinnulífsins undir forustu ríkisins. Fyrirmyndin er skipulagið á hernum, þar sem afkastið er mest vegna þess, að þar eru notuð öll fullkornustu verkleg tæki nútímans, stjórnsemi og agi ríkir þar eftir því sem verða má, og allir ganga fram í einingu að sama takmarki, vinna fyrir land og lýð.

En stefna þessi á sér dýpri rætur, þó að hún sé nú fyrst að brjótast fram, sökum ófriðarins. Þjóðirnar hafa fundið, að þörf er á nýjum grundvelli til þess að koma í veg fyrir stefnuleysi og kraftatap hinnar svonefndu »frjálsa samkepni«, sem í upphafi stefndi að þroskun einstaklingsins, en hefir haft í för með sér kúgun fjöldans undir fáa menn, sem ráða yfir auðnum. Í stað þess vilja menn ná öllum landsbúum í samvinnuna, en láta riskið hafa mest áhrif, vegna þess að það er fulltrúi heildarinnar um aldir, getur verið langsýnna og víðsýnna. Fyrir meir álitu stjórnmálaflokkarnir, að alla stund ætti að leggja á framför einstaklingsins, og flutningi á innfluttri kornvöru og stjórn Bretla birgði England upp með sykri í byrjun ófriðarins. Í Noregi hafa einnig verið samþykkt lög 20. ágústmánaðar 1915, sem veita stjórninni heimild til, að koma á einka-innflutningi á nauðsynjavörum, ef þörf gerist, o. fl. Í Austurríki er einkasala á kornvörum.

ríkið væri að eins vegur til að koma því til leiðar, en heildarstefnan miðar að því að þroska fyrst og fremst heildina og þar með einnig einstaklinginn. Hið gamla fyrirkomulag atvinnulífsins stefndi að því, að einstaklingurinn næði í sem mestan fjárgróða, hið nýja að afkast þjóðfélagsins verði sem mest. Skilyrðið fyrir slíkri stefnu er fyrst og fremst breyting hugarfarsins, og einkunnarorð hennar hljóma nú miljónródduð utan úr heiminum frá ófriðarþjóðunum: Einn fyrir alla, allir fyrir einn.

Kaupmannahöfn í nóvember 1915.

Héðinn Valdimarsson.

Heimildir: Brandt: Die deutsche Industrie im Kriege 1914—15. Eltzbacher: Die deutsche Volksernährung und der englische Aushungerungsplan. Archiv für Sozialwissenschaft und Sozialpolitik. Weltwirtschaftliches Archiv. Nationalökonomisk Tidsskrift. Dansk Land. Bladagreinar o. fl.

Athugasemd.

Hr. próf. Bj. M. Olsen hefur í athugasemd við ritgjörð mína um hinn síðasta bardaga Gunnlaugs og Hrafnis í síðasta hefti Skírnis ekki kannast við að jeg hafi hermt orð hans um þetta mál rjett. Þetta kom mjer óvart, því að jeg vil engum rángt gera og síst allra vini mínum B. M. Ó. En jeg fæ ekki sjeð, að jeg hafi gert það. Þau orð sem jeg hafði um skoðun B. M. Ó. voru ekki í tilvísunarmerkjum. Væri ummæli B. M. Ó. rjett, þá hlýtur frásögn sögunnar að vera skáldskapur, og B. M. Ó. hlýtur — finst mjer — að skoða hana þannig, þó að hann kunni að álíta að Gl. og Hr. hafi barist — einhversstaðar annarastaðar í Noregi. Lýsingin er svo nákvæm og svo samtvinnuð þessum stað, að ef ekkert liggur bak við hana, þá er hún tómur skáldskapur og ekkert annað. En svo að menn geti dæmt um málið, vil jeg tilfæra orð B. M. Ó. sjálfs. Eftir að hafa getið þess að hann hafi hvergi fundið nöfnin segir hann:

»Hafi til verið góð og gild (ægte) arfsögn um að orusta G.s og Hr.s hafi háð verið á Dinganesi — og það er ekki ómögulegt — . . verður það að hafa verið á Dinganesi við Sogn (gleiðletrað hér). Þennan stað gat höf. sögunnar ekki notað, úr því að hann á bls. 265 segir frá, að Eiríkur jarl hafði bannað þeim að berjast í hans ríki, og hann (höf.) lætur því orustuna eiga sjer stað á uppdiktuðu (fingeret) Dinganesi í hjeraði á takmörkum Noregs og Svíþjóðar, svo langt frá almannavegi sem hægt var.« Ef þetta væri svo, er það ekki skáldskapur? Annars má nefna það hvernig sem vill. En jeg er eftir sem áður í engum vafa um, að sagan er í öllu verulegu alveg rjett og að hjer er um engan þess konar skáldskap að ræða.

F. J.

Svar.

Athugasemd míns heiðraða vinar hjer að framan hefur ekki sannfært mig um, að jeg hafi í ritgjörð minni um Gunnlaugs-sögu í ritum hins danska Vísindafjelags (7. Række Hist.-filos. Afd. II. 1, á 52. bls. neðanmáls) haldið fram þeirri skoðun, að »frásögnin um hinn síðasta bardaga þeirra Gunnlaugs væri ekki annað en skáldskapur«. Þvert á móti tek jeg það beint fram að frásögn þessi geti verið ruunin frá sannsögulegri arfsögn, að því er sjálfan viðburðinn snertir, bardagann »á Dinganesi« og fall þeirra beggja Gunnlaugs og Hrafns, og er hún þá eitthvað annað og meira enn eintómur skáldskapur. Um hitt hef jeg efast, og efast enn, að bardaginn sje rjett staðsettur í sögunni. Á þeim stað, sem F. J. heldur að sagan eigi við, eru engir »sljettir vellir« og enginn »lækur«, sem þó ætti að vera, ef lísing sögunnar væri nokkuð að marka. Jeg get því als ekki viðurkent, að »lísing sögunnar sje nákvæm« eða »samtvinnuð þessum stað,« eins og F. J. kemst að orði, og jeg skoða það, ekki sem »skáldskap«, heldur sem hugarburð, að orustan hafi staðið þarna.

B. M. Ó.

Ritfregnir.

Jón Jónsson: Íslandssaga. Reykjavík 1915. Bókaverslun Sigf. Eymundssonar.

Bók þessi ætti að vera öllum Íslendingum kærkominn gestur.

Að vísu hefur mart verið ritað, og ritað vel, um sögu Íslendinga bæði að fornu og nýju, einkum þó um elsta kaflann, frá upphafi Íslands bigðar þangað til þjóðveldið leið undir lok. Af ritum á íslensku um sögu vora undir konungsvaldinu niður til vorra tíma kveður langmest að Árbókum Jóns Espólíns. Var það ágætt rit á sinni tíð, enda hefur það verið sá brunnur, sem flestir Íslendingar, leikir menn og lærðir, hafa ausið af sagnafróðleik um þá tíma, sem það nær ifir. Enn menn hafa ekki haft fult gagn af því, einkum sakir þess að þar er hrúgað saman svo mörgum ómerkilegum viðburðum, að lesandanum hættir til að kafna í þeim og missa sjónar á söguheildinni. Hingað til hefur oss tilfinnanlega vantað gott og skilmerkilegt ifirlit ifir alla sögu landsins frá elstu tímum til vorra daga. Agrip eru að vísu til, enn þau eru ekki annað enn magrar beinagrindur, og hafa því ekki fullnægt þörfum vorum.

Nú er bætt úr þessari þörf með þeirri bók, sem hjer liggur firir. Íslandssaga Jóns Jónssonar rekur meginrætti sögu vorrar frá elstu tímum til vorra daga, dregur fram í birtuna þá viðburði, sem mestu máli skifta, lísir þeim átakanlega í snjöllu máli, klæðir þá holdi og blóði, þó að frásögnin sje stutt, sínir orsakir þeirra og afleiðingar, enn missir þó aldrei sjónar á söguheildinni, svo að sagan verður, þegar vel er að gáð, einn óslitinn þráður. Þetta var einmitt það sem vjer þurftum að fá til að átta oss í vöundarhúsi sögu vorrar. Bókin er sannkallaður áttaviti firir hvern þann sem fæst við sögu landsins að fornu og nýju.

Það er ekki litill vandi að velja efni í slíka bók, vinsa úr þá viðburði, sem merkilegir eru, og hafua hinum. Það getur enginn nema sá, sem hefur um langan aldur lagt stund á sögu landsins,

kint sjer vel allar heimildir, vegið þær á metaskálar sögulegra rannsókna, lesið alt, sem um sögu vora hefur verið ritað fir og síðar. Það má kalla, að næstum því hver lína í bókinni beri þess vott, að hún er bigð á viðtækum og nákvæmum sögulegum rannsóknum, og að höf. hefur það til að bera, sem mest er um vert, heilbrigða dómgreind til að skilja gang sögunnar, dæma milli heimildanna, velja hið rjetta, enn hafna hinu ranga. Auðvitað getur það verið álitamál, hvað eigi að taka í slíka bók og hverju að sleppa. Vini mínum, aðjúnkt Þorleifi H. Bjarnason, sem hefur ritað um bókina í »Íðunni«, þikir höf. hafa verið of fjölorður um Guðmund Arason og Sturlungaöldina. Það finst mjer nokkuð vafasamt, því að biskupsdómur Guðmundar, og sjerstaklega deilur hans við höfðingja, marka nokkurs konar tímamót í kirkjusögu landsins, þó að mart megi að Guðmundi finna, og um Sturlungaöldina er það að segja, að breiting sú sem varð á stjórnarfarinu, þegar landið komst undir konung, verður ekki skilin til neinnar hlítar, nema saga Sturlungaaldarinnar sje rakin með talsverðri nákvæmni. Aftur á móti er jeg samþikkur Þ. H. B. um það, að höf. hefði átt að skíra betur frá sögu kirkjulegra mála á 19. öldinni — um það atriði er sama sem ekki neitt í bókinni. Ifir höfuð að tala fer höf. nokkuð fljótt ifir sögu 19. aldarinnar og þess sem af er tuttugustu, nema ifir stjórnálgasöguna, sem er mjög vel sögð, og hlutdrægnislaust að mínu áliti. Ënn þetta finst mjer gera minna til, því að saga þessara níjustu tíma er flestum meira eða minna kunn, svo að þar er síður þörf á fræðslu, enda hægt að afla sjer hennar af öðrum ritum. Hitt er meira vert, að höf. hefur rakið mjög rækilega sögu miðaldanna, frá því er landið komst undir konung til siðaskiftanna, og níja tímans frá siðaskiftunum til loka 18. aldar, því að um þessa kafla sögu vorrar var skorturinn á góðu ifirliti tilfinnanlegastur, þó að ímsar vel samdar ritgjörðir sjeu til un. einstök atriði, ekki síst eftir Jón Jónsson sjálfau.

Höf. er sú list lagin að rita alþíðlega um vísindaleg efni. Jeg er sannfærður um, að hver óbreittur alþíðumaður getur haft full not af þessari bók og get undirskrlfað það, sem Þ. H. B. segir í ritdómi sínum: »Íslandssaga þessi er alþíðubók í orðsins besta skilningi«. Búningur hugsananna er víðast hvar ljós og málið lipurt. Þó bregður sumastaðar firir úreltum fornirðum, sem stiuga óþægilega í stúf við hið óbreitta og eðlilega daglega mál í kring. Á bls. 197 og 309 kemur firir »mælti af stundu«; slíkt finst mjer óþríða og ekki eiga við í bók, sem er ætluð skólum og alþíðu.

Orðið uppsteitur (197. bls.) er ekki ástæða til að knjesetja aftur í málinu, ekki heldur orðið útistöður, sem höf. virðist vera of tamt (191., 280. og 297. bls.). Orðin spýtingar og þakkavaðmál (á 175. bls.) hefðu og þurft skíringar við, sömuleiðis fatabúr (177. bls.). Á 271. bls. hrósar höf. Jóni Gizurarsini fyrir það, að hann í ritgjörð sinni »segilátlaust frá öllu í daglegu máli samtíðar sinnar«. Sömu reglu hefði hann sjálfur átt að filgja stranglega í þessari bók, og gerir það líka víðast hvar, enn stundum vill bregða út af. Á tveim stöðum kemur fyrir orðasambandið »að láta sér nægja með eitthvað« (185. og 205. bls.); er það dönskuskotið, og ætti að vera að láta sjer eitthvað nægja. Enn þetta er undantekning — annars ritar höf. vanalega hreint mál.

Ífir höfuð að tala virðist bókin vera mjög nákvæm og skilrík í frásögu sinni, að svo miklu leiti sem jeg get um dæmt. Á stöku stað bregður þó fyrir vafasömum staðhæfingum eða jafnvel villum, og hafa þeir, sem um bókina hafa ritað, bent á sumt, sem jeg geng fram hjá. Af því að bókin mun vafalaust innan skams koma út í nírrí útgáfu, skal jeg taka fram nokkur vafasöm atriði höf. til athugunar. Í innganginum segir höf. á 5. bls., að af þeim víkingum, sem veittu Englandi heimsókn á víkingaöldinni, hafi þeirna mest kveðið að Ragnari loðbrók. Þessu ætti að sleppa, því að »saga Ragnars loðbrókar er mestmegnis tómur skáldskapur; hann er frægastur allra víkinga í fornum frásögnum, og þó veit enginn með vissu, hvenær hann hefur verið uppi, hverra manna hann hefur verið, hvaða ríki hann hefur ráðið, eða hver afreksverk hann hefur unnið« (Jón próf. Jónsson, Víkingasaga 38. bls.). — Á 16. bls. segir, að Ketill hængr hafi numið »Rangárvöllu alla milli fjals og fjöru«. Hjer filgir höf. Egils sögu, og úr henni hafa þessi takmörk landnámsins slæðst inn í Landnámuhandritin Sturlubók og Hauksbók. Enn það má sanna, að hin elsta heimild, hin upphaflega Landnáma, hefur eignað Katli miklu þrengra landnám (sjá ritgj. mína um afstöðu Egils sögu og Landnámu í Aarb. f. nord. oldkyndighed og historie 1904, 183.—193. bls.). — Á 24. bls. segir, að Grímr geitskór hafi kannað landið »til að sjá út allsherjar þingstað«. Þetta er nokkrum efa bundið. Ari fróði segir að eins, að Grímr »hafi kannað landið alt að ráði Úlfhljóta, áður alþingi væri átt«, og virðist líklegt, að erindi hans í þeirri könnunarferð hafi öllu fremur verið að leita húfanna hjá höfðingjum og laða þá til filgis við hina níju allsherjar stjórnar-

skipun enn að sjá út þingstað. — Mjög er það og vafasamt, að Loftur ríki Guttormsson hafi »haft í skjaldarmerki sínu hvítan val í bláum feldi» (183. bla.), þó að það sje sögn Jóns Gizurarsonar eða, rjettara sagt, áliktun, dregin af því, að afkomendur Lofts í kvennlegg, sinir Jóns Magnússonar á Svalbarði, höfðu þetta skjaldarmerki (sbr. Safn til s. Ísl. I. 672.—673. bls.). Víst er það, að innsigli Lofts er enn til fyrir brjefum og að í því er, ekki valur, heldur ormur (sbr. Aarb. f. nord. oldk. og hist. 1914, 185. bls.).

Þetta og því um líkt, sem jeg og aðrir höfum fundið að efnið bókarinnar, er alt mjög smávægilegt og rírir als ekki gildi bókarinnar í heild sinni, enda má laga það með einum penuadrætti í nírrí útgáfu.

Prentvillur eru ekki sjerlega margar, enn þó nokkrar; einna meinlegust er »2« fyrir 3 á 333. blaðsíðu neðst.

Á formálanum sjest, að bókin er sjerstaklega ætluð til kenslu í hinum æðri mentastofnunum vorum, enn að höf. hefur þó jafnframt haft þarfir íslenskrar alþíðu fyrir augum. Um það hefur orðið ágreiningur, hvort bókin sja hentug skólabók. Þ. H. B. finnur það að henni, að hún sje of löng fyrir mentaskólanemendur og of mikið teigt úr sumum köflum, enn of fljótt farið ífir sögu í síðasta þættinum, um sögu 19. og 20. aldarinnar. Aftur á móti hefur skólastjóri kennaraskólans, herra Magnús Helgason, sagt í mín eiru, að hann hafi notað bókinu við kenslu í kennaraskólanum, það sem af er vetrinum, og felt sig vel við hana; telur hann bókinu mjög vel við hæfi kennaraskólanemenda og ágæta sem handbók fyrir kennara til hliðsjónar við kenslu í barnaskólum, ef þeir kunna að nota hana rjett. *Dissentiant docti*; hjer ber fróðum mönnum ekki saman, og treisti jeg mjer ekki til að skera úr, hvor þeirra hefur rjettara fyrir sjer. Enn þó er jeg saunfærður um, að hinn ágæti sögukennari mentaskólans mundi vel geta með nokkurri fyrirhöfn kent lærisveinum sínum eftir þessari bók, slept því úr, sem honum þikir of aukið, og bætt við öðru, sem honum þikir vanta, og að árangurinn af þeirri kenslu mundi verða miklu betri þekking enn að undanfögnu, þegar kent var eftir hinum mögru og ófullkomnu ágripum.

Hitt jata allir, sem um bókinu hafa skrifað, að hún er ágæt alþíðubók, sem á skilið að komast inn á hvert einasta heimili. Þá er Íslendingum, söguþjóðinni, illa í ætt skotið, ef þeir taka ekki

alíkri bók fegins hendi og þakka ekki höf. þessa góðu gjöf með því að hagníta sjer hana.

Það tel jeg mikið mein, að bókinni filgir ekki skrá ifir manna-nöfn til leiðbeiningar kennurum og öðrum, sem nota hana sem handbók. Enn úr því verður vonandi bætt bráðlega í nírri útgáfu.

Reikjavík 10. janúar 1916.

Björn M. Ólsen.

Ágúst Bjarnason: Yfirlit yfir sögu mannsandans. Vestur-lönd. Reykjavík, 1915. 500 bls.

Þetta er óvenjulega efnismikil bók. Hún byrjar á því að lýsa menningu Ítala á dögum Endurreisnarinnar, skýrir því næst frá siðbót-inni, tildrögum hennar og afleiðingum, og þá frá heimsmyndinni nýju, landafundunum, Kopernikus og Giordano Bruno, Kepler og Newton. En þetta er aðeins inngangurinn. Meginþáttur bókarinnar fjallar um heimspekina á 17. og 18. öld — um menn eins og Descartes, Pascal, Spinoza, Rousseau og Herder, svo að eg nefni nokkur nöfn af handahófi. Lesandinn hefir þá fylgt för mannsandans eftir ein-um af veglegustu köflum brautar hans, frá því að hann rauf kryst-alsþak himnanna, sem miðaldakirkjan hafði hvelft yfir höfuð manna, og braut hlekki skólaspekinnar af hugsuninni — og fram að þeim tíma þegar heimspeki Kants, skáldskapur Goethes og stjórnarbylt-ingin mikla hefja nýtt tímabil, sem enn þá er ekki lokið.

Það eru slíkar bækur, sem framar öðrum benda mönnum á kjarnann í lifsgildi sagnfræðinnar. Það er ekki fróðleikurinn. En það er útsýnið, yfirlitið. Lesandinn sér skoðanir og kenningar fæðast, berjast og falla. Hann lærir umburðarlyndi og gætni. Skyldu ekki sumar skoðanirnar, sem hann sjálfur er sannfærðastur um, sem nú eru alment viðurkendar, eiga eftir að sæta sömu for-lögum? Og vonirnar um framtíð mannkynsins fá byr undir vængi. Nú læra börnin í skólunum það sem spekinga 17. aldarinnar óraði ekki fyrir. Enginn eygir til fulls þau takmörk, sem mannsandan-um eru sett.

En auk þess eru þeir menn, sem látið hafa eftir sig afbragðs-rit, meira en tóm saga. Þeir lifa enn þá. Rousseau og Pascal eiga engu síður fylgismenn og andstæðinga nú en meðan þeir lifðu. Giordano Bruno getur enn þá lyft mönnum til flugs með sér út í ómæli himingeimsins. Spinoza getur ennþá hafið

menn upp úr ástriðum og áhyggjum daglega lífsins í áttina til áralar alheimsins.

Og samt er »saga mannsandans« ekki nema hálsögð í þessum bókum Ágústs Bjarnasonar. Samtímis heimspekingunum, sem hann segir frá, lifa skáld eins og Shakespeare og Racine og málara eins og Rembrandt og Rubens. Auðvitað er það einum manni ofætlan að skrifa um allar kvíslar menningarinnar. En mikið vill meira. Ef alþýðan okkar á að halda áfram að vera best sjálfmentaða alþýða veraldarinnar, þá verður að galopna dyrnar að veizlusal alheimsmenningarinnar fyrir henni. Nú er Ágúst Bjarnason búinn að gefa gott yfirlit yfir sögu heimspekinnar. Hver vill nú halda áfram og skrifa almenna bókmentasögu, um meginstraumana í andlegu lífi 19. aldarinnar o. s. frv.? Verkefnið verða ekki talin. Það vantar menn til þess að skrifa og duglega bóksala, en ekki kaupendur. Eg veit, að rit Ágústs Bjarnasonar, sem þó oft fjalla um torskilin efni, eru keypt mikið og lesin enn þá meira út um allar sveitir. Ekkert sannar betur, að hann hefir náð tilgangi sínum með bókunum: að gera stærstu viðfangsefni mannsandans hugnæm fyrir íslenzkri alþýðu með því að skýra ljóst og skýrt frá því, sem andleg mikilmenni á öllum öldum hafa hugsað um þau.

Sigurður Nordal.

Jón Trausti: Góðir stofnar. Sögur frá fyrri öldum II.–IV. (Veislan á Grund. — Hækkandi stjarna. — Söngva–Borga). Rvfk Bókaverslun Sig. Kristjánssonar.

Íslenzkir skáldsagnahöfundar hafa ekki gert mikið að því hingað til, að velja sér yrkisefni úr sögu vorri, enda er skáldsagnalistin enn þá ung hér á landi að kalla má. Þó hafa nokkrir höfundar riðið á vaðið í því efni, svo sem Torfhildur Hólm, Jónas Jónasson og nú síðast Jón Trausti í Sögum frá Skaftáreldi og sagnabálki þeim, er hann nefnir Góða stofna, og hefir þessari viðleitni verið að maklegleikum vel tekið. Saga vor frá fyrri öldum er stórauðug að hugðnæmum yrkisefnum, einkennilegum mönnum og áhrifamiklum viðburðum, sem einkar vel henta til að færa í skáldlegan búning. Þessi yrkisefni hafa mörg til að bera þannu rómantíska blæ, sem ósjálfrátt heillar ímyndunaraflið, enda eru lífshættirnir að svo mörgu frábrugðnir nútímasniðinu, og sé vel á haldið, leiða slíkar skáldsögur lesandann betur inn í anda og aldarhát liðinna tíma, en löng og ítarleg sögurit. En þessi tegund

skáldsagnalistar er þó þannig vaxin, að talsvert er vandfarið með hana, því ef vel á að vera útheimtir hún hvorttveggja í senn skáldlegt ímyndunarafl og samvirkusamlega rannsóku og meðferð á heimildunum, og hefir sumum höfundum orðið hált á því svelli.

Að vorum dómi hefir Jóni Trausta tekist að mörgu leyti prýðisvel í þeim sögum sínum, er hann byggir á viðburðum fyrri alda. Sögur hans frá Skaftáreldum munu flestum minnisstæðar, sem þær hafa lesið, einkum fyrri blutinn, og eru sumir kaflar í þeim stórfeldir og áhrifamiklir. Í fyrstu sögunni af Góðum stofnum, sem út kom í fyrra (Önnu frá Stóruborg), bregður og víða fyrir góðum glefsum, en í heild sinni stendur hún þó hinum að baki að vorum dómi. Aftur á móti hefir höf. tekist að flestu leyti mjög vel upp í þeim sögum, er hér um ræðir, enda hefir hann valið sér einkar heppileg yrkisefni, því menn þeir og viðburðir, er hann skýrir frá, eru bæði hugðnæmir og einkennilegir, og um leið svo langt um liðið og svo lítið um þá kunnugt í einstökum atriðum, að höf. hefir ærið frjálsar hendur og getur látið ímyndunaraflíð leika mikið til lausum hala. Það er og sýnilegt, að höf. hefir gert sér mikið far um að rannsaka heimildirnar, bera saman frásagnirnar og setja sig sem best inn í anda, siði og aldarhátt á þessum löngu liðnu tímum.

Fyrsta sagan, Veizlan á Grund, segir frá Grundarbardaga, er þeir Smiður Andrésson hirðstjóri og Jón skráveifa voru af lífi teknir. Um þann atburð hafa gengið ýmsar sagnir á fyrri öldum, eigi alls kostar samhljóða, og hefir höf. hér fylgt því, er honum þótti líklegast. Aðalpersóna sögunnar er Grundar-Helga, móðir Bjarnar Jórsalafara, og er talið að hún hafi átt mikinn þátt í þessum atburðum. Hún var ein hin mesta hefðarkona og skörungur á sinni tíð, að því er virðist, og hefir skáldinu tekist prýðisvel að lýsa henni og leiða hana fram í allri sinni dýrð. Hún er bæði sterk og stórbrotin í lund, en þó um leið kvenleg og glæsileg, og undir hinu fasmikla látbragði er eins og votti fyrir laðandi blíðu og viðkvæmni, sem hún heldur í skefjum. Að vorum dómi hefir þó skáldinu ekki síður tekist að lýsa Snjólfíkanúka, skriftaföður Helgu, munkinum, sem hefir í orði kveðnu afneitað heiminum og situr kuflekrýddur og krúnurakaður yfir fornum dýrlingasögum, en er þó svo skapi fariinn undir niðri, að hann verður altekinn af æfintýralöngun og framkvæmdarþrá óðar en hann verður þess áskynja, að eitthvað mikið stendur til, svo engin böud fá haldið honum. Þá er og Skreiðar-Steinn ekki óskemtilegur náungi, stúriun og geðstirður og heimskur eins og hann er,

en þó ber því eigi að neita, að lýsing höf. á honum er nokkuð ýkjukend og öll frásagan um viðskifti þeirra Snjólfra býsna ósennileg, þó að hún sé mjög skemtileg. Yfirleitt er saga þessi prýðisgóð og persónulýsingarnar ágætar, svo það er eins og maður sjái þennan minnisstæða atburð lifandi fyrir augum sér í allri sinni fjölbreyttu og einkennilegu mynd.

Önnur sagan — Hækkandi stjarna — er um þau feðgin Björn bónda Einarsson Jórsalafara og dóttur hans Vatnsfjarðar-Kristínu. Kristín er aðalpersóna sögunnar, og segir í fyrri þættinum af þeim systkinum, Þorleifi og henni, í föðurgarði. Þorleifur var þá í fullum æskublóma, og framtíðin brosti við honum svo glæsileg, sem framast mátti verða, því ekki skorti auðinn og metorðin, en Kristín var á þeim árum mjög heilsutrep, og sýndist varla eiga langt líf fyrir höndum, þótt henni segði jafnan hugur um, að hún mundi lifa bróður sinn. Að þessu leyti hefir höf. alveg nákvæmlega fylgt heimildunum, og sjáum vér ekkert athugavert við lýsingu hans á sjúkdómseinkennum Kristínar, því þetta leiðsluástand hennar kemur vel heim við ýms fyrirbrigði í daglegu lífi á öllum öldum, og er það réttmætt hjá höf., er hann kallar þennan þáttinn »milli tveggja heima.« Þessi þáttur endar á þeim miklu umskiftum, sem verða á hogum þeirra systkinanna, því Þorleifur druknaði vofeiflega, en Kristín reis úr rekkju og náði brátt fullri heilsu. Þetta er og í fullu samræmi við heimildirnar. og hefir höf. ekki gert annað en að færa það í skáldlegan og skemtilegan búning. — Í seinna þætti sögunnar er Kristínu lýst í fylsta blóma, og sagt frá brúðkaupi hennar og Þorleifs Árnasonar frá Auðbrekku, sem lagði grundvöllinn undir hinn mikla auð og gengi ættarinnar á seinni hluta 15. aldar. Brúðkaupinu í Viðey er lýst af miklu fjöri, og allri þeirri glæsilegu viðhöfn, sem því var samfara, og hefir skáldið haft þar víðan leikvöll fyrir ímyndunarafl sitt, en helzti íburðarmiklar hyggjum vér lýsingar hans á skrauti manna í klæðaburði um þær mundir, og mjög vafasamt, að hann lýsi rétt klæðabúnaði kveenna, þótt erfitt sé að segja nokkuð um það með fullri vissu, þar sem engar ísl. myndir eru til frá þeim tímum. Þá gerir hann og vafalaust of mikið úr mannfallinu í Svartadaða, og nær það varla nokkurri átt, að mannfjöldinn hafi verið hér á landi hundrað þúsund tólfræð fyrir pláguna, þótt Espólín hermi það, og tveir þriðjungar manna hafi fallið. En þetta skiftir auðvitað ekki miklu máli í þessu sambandi.

Síðasta sagan er um Söngva-Borgu, dóttur Jóns lög-

manns Sigmundssonar, og Kristínu á Geitaskarði, dóttur Gottskálks biskups, og er það bin alkunna og illræmda viðureign þeirra biskups og lögmanns, sem varpar sorgarskugga á líf aðalpersónunnar og gerir hana að aumingja og auðnuleysingja, þótt upplagið sé gott. Höf. hefir mjög vel tekist að lýsa báðum þessum konum, svo ólíkar sem þær eru að eðlisfari, en ekki verður því neitað, að Kristín dregur alveg til sín athyglina og samúðina, eftir að hún kemur til sögunnar. Höfundurinn hefir bæði í þessari sögu og hinum fyrri tekið sér fyrir hendur að yrkja í miðaldastíl, og er það ekki á hvers manns færi, eða ef til vill á einokis manns færi svo verulega vel sé, því það sem lætur einfaldlega og eðlilega í eyrum í eldri kvæðum, verður oft óeðlilegt og tilgerðarlegt í eftirstælingum. En það má Jón Trausti eiga, að honum hefir tekist óvenju vel að ná réttum blæ í sumum kvæðunum, eða að minsta kosti í sumum vísunum.

Þær sögur Jóns Trausta, sem hér hafa verið gerðar að umtalsefni, eru mjög hugþekkar á marga lund, og óskum vér og vonum, að þær verði kærkominn gestur víða um land, og hins eigi síður, að höf. eigi eftir að finna marga fleiri góða stofna í ættkvíslum vorum og lýsa þeim jafn vel og huglátlega, sem hann hefir gert í þessum sögum.

Jón Jónsson.

Jónas Jónasson: Ljós og skuggar. Smásögur. Reykjavík. Bókaverzlun Sigurðar Kristjánssonar 1915.

Sögur þessar eru gamlir kunningjar úr Íðunni, sögusafni Þjóðólfa og víðar að. Var það vel til fallið að gefa þær út saman. Þær eiga sérstakt sæti í bókmentum vorum, og munu verða lesnar enn, þótt margt sé nú breytt frá þeim tíma, er þær voru ritaðar.

Það hefir ekki verið gleðin yfir manngæzkunni, sem gerði síra Jónas Jónasson að söguskáldi. Mannvonzkan, heimskan og vesöldin, andleg og líkamleg, eru hans yrkisefni í öllum þessum sögum. Hann grípur í sinni sögunni á hverju kýlinu, og þó stundum á fleirum í senn. Í einni er það faðirinn, er neyðir dóttur sína til að giftast manni, sem hún hefir andstygt á; í annari hreppatjórinn, sem níðist á skjólstæðingi sínum, umkomulausri ekkju; í þriðju eru það embættismenn þjóðfélagsins, sem hylma yfir skömmina hver með öðrum; í fjórðu er það óprifið hreppsómaga heimili, með sullaveiki og aðdáun á ósvínum skottulækni; í fimtu ágjarn pró-

fastur; í sjöttu stjórnmálarembingur, vindbóla, sem þýtur upp og hjaðnar samstundis aftur; í sjöundu vitlaus áfengislöggjöf; í áttundu réttleysi leiguliða; í níundu hestaniðingar og í tíundu mein-særi í gróðaskyni og af heigulskap. Ósjálfrátt fljúga manni í hug-orð Bólu-Hjálmars um Akrahrepp:

»Ern því flestir aumingjar,
en illgjarnir þeir, sem betur mega«.

Bókin hefði átt að heita »Skuggar«. Ljós mannlífsins finst þar naumast nema eins og glæta, sem er að kafna undir skugga-jöðrunum. Slíkar bækur hafa að vísu blutverk að vinna. Þær geta oft opnað augu manna fyrir því sem aflaga fer í þjóðfélaginu, — brennimerkt það í almenningsálitinu. En í óvita höndum, einkum útlendra, geta þær líka orðið brennimark á þjóðina alla. Þeim, sem lítið þekkja til, hættir við að dæma þjóðina eftir því, hvernig henni er lýst í skáldsögum; jafnvel hálærðir fagurfræðingar virðast stundum gleyma því, að allar skáldsögur eru »lygisögur«, þó munur sé á, hve líklega er lagið.

Síra Jónas segist í formálanum aldrei hafa ímyndað sér að hann væri skáld. Það er hann nú engu að síður, því að hann segir þannig frá, að persónurnar fá líf, svip og rödd. Frásögnin er svo blátt áfram, svo tilgerðarlaus og fjarri öllu þrumpári, að lesandinn trúir henni. Einmitt af því að höfundurinn virðist ekki gera sér far um að veiða menn með neinum listabrellum, nær hann þeim í snöruna. Samtölin eru oft eins og þau væru hraðrituð af vörum þeirra sem tala, og gera þar fáir betur. Þessi trúverðugleiki er listin í sögunum, og truflast þó á stöku stað við það, að höf. tekur fram í og segir sína skoðun.

Bezta sagan finst mér »Eiður«, þó athugasvert sé hvernig sýslumaður lagar réttarhaldinu. »Eiður« mun vera yngsta sagan, og bendir það á, að höf. muni ef til vill enn eiga eftir að ná hámarki listar-sinnar.

G. F.

Hulda: Æskuástir. Smásögur. Reykjavík. Bókaverzlun Sigurðar Kristjánssonar. 1915.

Eg hefi tvílesið þessa bók — með ánægju. Það er gaman að heyra hljóðið í nýjum streng. Og þessar sögur eru vorblær í íslenskri sagnagerð, hreinn og þýður. Þar er birkiangan og blóm-ilmur frá gróandi dölum. Þarna er skáldkona, og segir frá

íslenskum konum. Og þó það sé fróðlegt að heyra hvað karlmenn finna í sálum kvenna, þá mundi hinu verða trúað betur, sem kona segir frá systur sínum. Reyndar væri synd að segja, að íslenskum konum væri borin illa sagan í bókmentum vorum að fornu eða nýju. Þar eru margar kvenperlur. En ekki ófríkkar hópurinn með þeim sem Hulda leiðir við hönd sér ofan úr dölunum. Þær eru hver annari yndislegri. Einkenni þeirra er óeigingjörn ást, sem veit hvað hún vill, en heimtar ekki meira en fyrir er. Þarna eru íturvaxnar og sjálfstæðar konur, sem drekka bikar saknaðarins með tign yfir hvarmi, ásökunarlaust. Hugljúfari dalablóm hafa ekki vaxið í íslenskum sögum.

Bezta sagan þykir mér »Sumar«, og er merkilegt ef hún fer ekki víðar en um Ísland.

Einn af stærri spámönnum bókmenta vorra hefir kveðið til Huldu, að hún væri »fyrsti gróður vors nýjasta skóla«. Þau orð mega vel fylgja þessari bók.

G. F.

Ljóðmæli eftir Hjálmar Jónsson í Bólu. Jón Þorkelsson hefir búið undir prentun. 1. hefti. Á kostnað Hjálmars Lárusonar. Reykjavík 1915.

Hér er byrjað á útgáfu af kvæðum Bólu-Hjálmars, sem gert er ráð fyrir að verði 3 hefti og taki það af kvæðum hans er til næst og tækt þykir. Flest kvæðin í þessu hefti eru áður óprentuð, enda svo nærri gengið um útgáfuna, að grípa hefir orðið til grískulets til að fleyta sumu sem þar er. Er því enn þörf grískukunnáttu í landinu, þar sem Bólu-Hjálmar verður ekki að fullu lesinn án hennar. Fátt er hér af betri kvæðum Hjálmars, og þó nóg til þess að menn kaupi heftið. Nefni eg t. d. hina snildarfögru þýðingu á latínúvísium Guðmundar heyrara Steinssonar um meistara Jón. Hefir Hjálmar tekið bragarháltinn eftir hinni gallfögru þýðingu Jóns Þorlákssonar á kvæði Hórazar: »Um hvað biður óðarsmiður Appollín«, og er gaman að sjá hvernig hátturinn eykur Hjálmari ásmegin, einmitt af því hann er honum nýr. Ef til vill sést hvergi betur hvílk t vald honum var gefið yfir íslenskunni. Það hefðu orðið merkileg ljósbrot í þeim gimsteini, ef hann hefði fengið að slípast eins og bezt mátti verða af hentugum lífskjörum, í stað þess að »glóa í mannsorpinu« eins og hann kom úr námunni.

Pappírinn í útgáfunni er leiðinlegur.

G. F.

Sigurður Guðmundsson: Ágrip af forníslenskri bókmentasögu. Reykjavík 1915. Bókaverzlun Sigf. Eymundssonar.

Þetta er skólabók handa Mentaskólanum og öðrum skólum, þar sem bókmentasaga Íslands er kend. Segir hún frá bókmentum vorum fram að 1450. Bókin er prýðisvel samín. Höf. hefir tekist að draga fram aðalatriðin og gefa ljóst yfirlit. Þar sem fræðimenn greinir á, skýrir hann stutt og gagnort frá mismunandi skoðunum þeirra og rökunum sem þeir færa, oft með orðum sjálfra þeirra. Lætur hann svo lesandann sjálfan um það hverjum hann vill fylgja. Þetta er viturlega gert. Frásögnin er létt og lipur, og svo skemti-leg, að manni finst að bókin hefði mátt vera lengri, því vegalengd gleymist á góðum vegi. Athugasemdir höf. sjálfs eru glóggar og góðar, og oftast stillir hann orðum sínum vel í hóf. Þó finst mér freklega að orði komist um Íslendingasögur, á bls. 58, ef það á að gilda alment: »En hins vegar virðist auðsætt, að höfundarnir hafi lagað efnið mjög í hendisér til þess að sýna sem bezt skaplyndi þeirra manna, er þeir lýstu, og í því skyni búið til viðræður, athafnir og atburði.« Hví er það auðsætt? Það má fara skáldlega með efni sem fyrir liggur, þó ekkert sé búið til frá rótum, viðræður, athafnir né atburðir. Það má gera það með úr-valinu, úrfellingunni, og samsetningunni. Og vitum vér hve auðugar munnmælasögurnar voru, sem sögubötundarnir höfðu fyrir sér, er þeir »settu sögurnar saman«? Hvað er ósennilegra, að jafn-vel viðræður manna hafi geymst í minnum kynslóð eftir kynslóð, unz þær voru ritaðar, heldur en t. d. lögin? Eg spyr aðeins.

En hvað sem slíku líður, er hókin snjallasta skólabók og ósk-andi að framhaldið komi sem fyrst. G. F.

B. Sæmundsson: Zoologiske Meddelelser fra Island XII og XIII. 50 bls. Sérprentað úr Vidensk. Meddel. fra Dansk naturh. Foren. i Kbhvn. Bd. 65.

Í riti þessu er getið um 15 fiskategundir og 31 fuglategund. Svo lítur út sem fiskaríki Íslands sé tegundaríkt, því að ávalt finnast nýjar og nýjar tegundir svo að segja á hverju ári, og í riti þessu eru taldar upp 7 tegundir, sem bæzt hafa við á seinni árum. Í fyrsta kaflanum eru þessar 7 tegundir taldar upp og nákvæmlega sagt frá hvar þær hafa fundist og ýmsum þeirra lýst að nokkru leyti. Í öðrum kafla ritsins er getið um 8 fiskategundir, sem eru fremur sjaldgæfar hér við land. Er sumum lýst ítarlega t. a. m. *Centrolophus bri-*

tannicus Gthr. með mynd, *Aphanopus* Schmidti B. Sæm. *Phycis borealis* B. Sæm., n. sp. með mynd.

Seinni hluti ritsins er um fuglana. Þar er getið um sjaldgæfa fugla, og nokkrir þeirra eru nýir borgarar í fuglaríki Íslands. Nákvæmlega er sagt frá hvar fuglarnir hafi fundist eða sést og sumum lýst að nokkru leyti.

H. J.

Sturlunga saga. Búið hefir til prentunar **Benedikt Sveinsson.** Fjórða bindi. Reykjavík. Kostnaðarmaður Sigurður Kristjánsson. 1915. xxxij + 436 bls. 8vo.

Þar með er þá lokið alþýðuútgáfu þeirri af Sturlunga sögu, er þeir hafa séð um dr. phil. Björn Bjarnason úr Viðfirði og Benedikt alþingismaður Sveinsson. Hefir dr. Björn gefið út I. og II. bindi en Benedikt III. og IV. bindi og þar með samið allitarlegan formála ásamt vísaskýringum og nafnaskrá, sem fylgja þessu síðasta bindi.

Fá sagnarit munum vér Íslendingar eiga Sturlunga sögu merkari né sannorðari og eigi er frásögu meir litandi en þar í fornritum vorum, enda höfundar sagna þeirra, er í Sturlunga sögu eru komnar, annað tveggja sjónarvottar að atburðum þeim, sem frá er sagt, eða hafa sjónarvotta að heimildarmönnum. Þeir kaflar eru ekki fáir, þar sem svo er sem atburðirnir fari fram fyrir augum lesandans, svo er frásögnin snildarleg. Má t. d. nefna 19.—21. kapítula í Arons sögu Hjörleifssonar, (sem heyrir ekki til þeim eiginlega sagnabálki, sem nefndur er Sturlunga saga, en látin er fylgja í viðbæti við fjórða bindi þessarar útgáfu), um viðskifti þeirra Þórðar kakala og Arons (IV. bindi bls. 211—217). Slíka staði yrði of langt upp að telja.

Sturlunga saga segir frá fjörbrotum hins íslenzka þjóðveldis; hún er saga Íslands um þá öld agaleysis og ójafnaðar, er svo lýkt aði, að landið gekk undir Noregs konung. Grimd, harðýðgi, launráð, svik og slægð einkenna þessa öld og minna um sumt á keisarásögu Rómverja eða vélræði Medici-ættarinnar. Bræður og nákomnir ættingjar og vinir berast á banaspjót. Lög og siðgæði var fótum troðið, frændsemi og sifjar var að vettugi virt, trú og guðrækni var þorrin eða í öfgar komin. Þó eru uppi á þessum óaldartímum meiri mikilmenni en Ísland hefir nokkuru sinni átt. Meiri hetjur og hreystimenn þekkjum vér ekki í frásögn en þar

segir frá. Og eigi er minna um vert atgervismenn andans, sem þá eru uppi. Og innan um alt sukkið og samvizkuleysið finnum vér þó eigi allfáa göfuglynda menn, er sýndu, hverir drengir þeir voru, er á reyndi, og einlæga ættjarðarvini, sem ríkast báru fyrir brjósti heill og hag Íslands. — Öllu þessu er lýst svo í Sturlunga sögu, sem brugðið væri upp fyrir lesendur stórfeldum sjónleik, margaþættum og mikilfenglegum.

En hér er ekki tóm til þess að fara lengra út í þá sálma.

Sturlunga saga hefir jafnan verið lesin allmjög hér á landi. Vottur þess er hinn mikli fjöldi pappírshandrita, sem til er af sögunni. En útgefin var hún fyrst á prenti af hinu íslenska bókmentafélagi 1816—1818 í tveim bindum. Bjarni Thorsteinson, síðar amtmaður, hafði þá útgáfu á hendi með aðstoð nokkurra stúdenta, og voru þeirra verkdrýgstir Sveinbjörn Egilsson og Gísli Brynjólfsson, síðar prestur á Hólmum. Þessi útgáfa sögunnar náði allmikilli útbreiðslu hér á landi og mátti teljast vel af hendi leyst, eftir því sem vænta mátti á þeim tímum.

Í annað sinn er Sturlunga saga útgefin í Öxnafurðu af dr. Guðbrandi Vigfússyni, einnig í tveim bindum, með mörkum formála um fornþókmentir vorar. Eigi náði sú útgáfa mikilli útbreiðslu hér á landi, enda var hún alldýr. En utanlands mun hún hafa selst drjúgum.

Í þriðja sinn er Sturlunga saga gefin út af hinu konunglega norræna fornfræðafélagi, í tveim bindum, árin 1906 og 1911; hafði dr. Kålund þá útgáfu á hendi, og hafði þá áður þýtt söguna á dönsku og gefið út í Kaupmannahöfn árið 1904. Þessi útgáfa Kålungs fullnægir kröfum þeim, sem menn nú gera til vísindalegra útgáfna á fornritum, og eftir henni hafa þeir farið útgefendur Sturlunga sögu, er hún nú kom út í fjórða sinn. Að eins hafa þeir fært samræmi í stafsetninguna og breytt til venjulegrar reglubundinnar fornritastafsetningar, svo sem tíðkast um alþýðlegar fornritaútgáfur. Sömuleiðis hafa þeir tekið upp í textann sumstaðar það, sem framar greindi eða betur þótti horfa í öðrum handritum en aðalhandritunum, sem alt er greinilega tilfært í útgáfu dr. Kålungs. Eru þessir útgefendur þeir menn, að eðki þarf að efa, að þetta muni gert með gát og nákvæmni. Þar á móti hafa þeir farið eftir útgáfu dr. Guðbrands Vigfússonar í skiftingu sagnabálksins í sögur og kápítula, og er það vel, því að flestar ritgerðir um Sturlunga hafa tilvitnað í útgáfu dr. Guðbrands, síðan hún

kom út, og verður þeim, er þær ritgerðir lesa, því hægara fyrir að slá upp í þessari útgáfu.

Þetta síðasta bindi Sturlunga sögu (og sömuleiðis III. bindi) er að öllu leyti úr garði gert af Benedikti alþingismanni Sveins-
sýni, sem er manna nærgætastur og fróðastur á fornþókmentir
vor Íslendinga. Fer þar fyrst ítarlegur formáli með góðri greinar-
gerð á aðalhandritum sögunnar, útgáfum og ritgerðum, er að sög-
unni lúta o. s. frv. Þar eru og ýmsar athuganir frá eiginbrjósti
útgefandans; er þar til að nefna ættfærslu Þórðar Hítnesings og
þeirra Þorvalds hins auðga og Ketils fljóta, er höf. gerir góða grein
fyrir. Þá sýttar og útgefandinn, að sögurnar í Sturlunga sögu, eða
meiri hluti þeirra, séu svo til komnar, að menn hafi beinlínis víðs
vegar um land »gert samtök með sér um að færa
sögurnar í letur«. Ekki hefi eg áður séð þeirri tilgátu
varpað fram, og um hana má þrátta. En vel má vera, að á al-
þingi hafi Sturla Þórðarson ýtt undir menn víðs vegar af landinu
að safna í sögur þeim atburðum, er þá voru mönnum minnstæð-
astir og hver kunni best að greina. Þó er þess að geta, að fáir
fyrirmenn héldu mjög kyrru fyrir á þessari öld; áttu þeir oft ferðir
um fjarlæg héruð og höfðu oft bústaðaskifti, og með þeim sveinar
þeirra og fylgdarmenn og aðrir þeir, sem höfundar eða heimildar-
menn hafa verið að þessum sögum. Voru slíkum mönnum því
margar sveitir kunnar og riðnir voru sömu mennirnir við marga
atburði og bardaga, er gerst höfðu víðs vegar á landinu.

Þá taka við lok Sturlunga sögu, en í viðbæti hefir útgefand-
inn skeytt Arons sögu Hjörleifssonar, svo sem áður er á vikið, og
fer vel á því. Og enn fremur brotum úr Hákonar sögu gamla,
sem Íslendinga varða.

Þá taka við vísnaskýringar á bls. 238—286, allar eftir Bene-
dikt Sveinsson; að sumu leyti styðjast þær við eldri skýringar,
en margt er þar frumlegt og skarplega athugað, svo sem vænta
mega af höf. í þessari grein allir þeir, sem kunnur er fróðleikur
hans í fornum kveðskap og athygli á þau efni. Í þeim efnum
mega ýmsir, þótt frægir séu, vara sig á höf. Hér skal að eins
stuttlega vikið að nokkurum vísnanna.

Tannr Bjarnason kvað svo í níði eitt sinn:

Upp hafa eigi hepnir
ullstaks boðar vaxit
fimm ok fullir vamma
fleinveðrs á bæ einum o. s. frv.

Próf. Finnur Jónsson vill taka þenna vísuhelming svo saman (í Den norsk-islandske skjaldedigtning¹⁾ B. II. bind, bls. 58): Ullstaks boðar fimm hafa vaxit upp á einum bæ, eigi hepnir fleinveðrs ok fullir vamma. — Ullstakksboði virðist eigi góð mannkenning. Eigi hepnir fleinveðrs virðist og óvenjulegt. Þar á móti er fleinveðrs-ullstakks-boði góð mannkenning, einkum er þess er gætt, að vísan er ort til óvirðingar, og ullstakki því skeytt inn í til háðungar, þótt ella mundi fleinveðrs boði nægja. Í þessu atriði sýnist mér Benedikt komast nær hinu rétta.

Sama gegnir um hið alkunna stef úr drápu þeirri, er Snorri Sturluson orkti um Skúla jarl.

Harðmúlaðr var Skúli
rambliks framast miklu
gnaphjarls skapaðr jarla.

Í Den norsk-isl. Skjaldedigt. B. II. b. bls. 60 er harðmúlaðr gnaphjarls rambliks látið þýða »hård mod guldet«, en eigi þekkist það, að múlaðr tákni skaplyndi manna, heldur táknar það að vera með múl, eða hér, þar sem verið er að lofa mann veglega búinn til orrustu, spengur úr hjálminum, er voru úr gnaphjarls ramblíki, þ. e. gulli. Að minsta kosti virðist þessi skýring nær en hin fyrri, og svo hefir Benedikt skilið stefið.

Betur þykir mér og fara á því í vísu Snorra:

Els varð mynd á málum o. s. frv.

að taka saman: Seggr var samr at þiggja sárbaetr, en tregr at gjalda, heldur en aðrar skýringar; andstæðurnar: tregr at gjalda og samr at þiggja standa vel af sér.

Bæði dr. Kálund (í útgáfu sinni af Sturlunga sögu) og próf. Finnur Jónsson í Den norsk-isl. Skjaldedigtning B. II. b. bls. 94 eigna Sturlu Sighvatssyni vísuna

Risu, pás önd lét Ysja o. s. frv.

Í fljótu bragði mætti ætla, að Sturlu Sighvatsson hefði ort vísuna. En bæði er það, að eigi er Sturlu þeim eignaður kveðskapur annarstaðar og efnið hins vegar lítt samrýmanlegt því, að hann hafi getað orkt vísuna, eftir því sem atvik lágu til, því að vísan virðir Vatnsfirðingum nokkuð til vorkunnar, er þeir hefna sín á Sturlu Sighvatssyni. Það er þess vegna líklegra, sem B. Sv. held-

1) Útgefandi Sturlunga sögu mun ekki hafa átt kost á því að hafa þetta merka ritverk til hliðsjónar, er hann samdi skýringar sínar, og eru þær því öldungis óháðar þeim skýringum, er þar finnast og eigi voru áður kunnar.

ur fram, að skáldið sé Sturla Þórðarson, en breytt hafi verið orðalagi á undan vísunni af afritara.

Á bls. 260 (í skýringunum) hefir slæðst inn villa: Ólafr Þórðarson hvítaskáld, en á að vera Ólafr Leggsson, svartaskáld. Vísan kann að hafa verið færð úr lagi í handritunum; á þeirri vísu ætla eg, að skýring próf. Finns Jónssonar (í Den norsk-isl. skjaldedigt. B. II. bind, bls. 97) sé réttari eða eðlilegri að minsta kosti.

Ekki ber saman skýringum á vísu Guðmundar Oddssonar:

»Guldu grimdar fylDIR« o. s. frv.

Má vera, að fyrri hlutinn sé réttara upptekinn í Den norsk-isl. Skjaldedigt. (bls. 92), en fráleit þykir mér þar skýringin á þessum parti síðara helmingsins, sem svo er þar tekinn saman: »létusk tveir fíknir höfðingjar þeirra einn dag framgjarnir«, en þetta er þýtt þannig á dönsku: »to af deres hidsige hövdinge tede sig en dag som meget virkelystne«. Mundi ekki »létusk« hér þýða dóu? Var það ekki einmitt sú »mikla títund«, sem Vestfirðingar »guldu«, að þeir létu hér tvo höfðingja sína? Svo er þessi staður upp tekinn af B. Sv.

Betur falla mér og skýringar Benedikts en annarra á vísu Snorra Sturlusonar:

Tveir lifið, Þórðr, en þeira o. s. frv.

(sbr. Den norsk-isl. skjaldedigt. B. II, bls. 90), og á vísu Sturlu Þórðarsonar:

Skamr er, eldstökkvir, okkar o. s. frv.

(sbr. Den norsk-isl. skjaldedigt. B. II. bind,, bls. 135).

Loks er vísa Gunnars (Sturl. III. bindi, bls. 190, Den norsk-isl. skjaldedigt. B. II. bind, bls. 98). Vísan var orkt svo, »at gaman varð at«. En eftir því sem vísan er skilin á hinum síðar nefnda stað, virðist lítið »gaman at« henni. Fyrri vísubellingurinn hljóðar svo:

Herðar laust hrings Njörðr
horni, varat brynþorn,
á Birni bilgjarn
blunda fyr Geirmund.

Den norsk-isl. skjaldedigt. tekur svo saman: »Hrings Njörðr laust herðar á Birni horni fyr Geirmund; brynþorn varat bilgjarn blunda«. Mjög er ólíklegt, að brynþorn geti verið manukenning, en sverð er rétt kent á þann veg. Sennilegt er að »blundi« hafi verið víðurnefni Bjarnar,

eins og próf. F. J. hefir áðurætlað. B. Sv. hefir tekið víshelminginn svo saman: Bilgjarn hringnjörðr laust á herðar Birni blunda (fyrir Geirmund) horni — varat brynþorn. Þetta virðist miklu nær og með þeim hætti má skilja, að mönnum hafi þótt »gaman at« vísunni. Það er óneitanlega broselegt, er skáldið telur Þorgíla svo bilgjarnan, að hann lýstur á herðar Birni blunda, ekki með brynþorni (þ. e. sverði), heldur með horni, er hann hygst að hefna Geirmundar.

Rúmið leyfir ekki að fara nánara út í þessi efni hér, og væri þó enn á margt að minnast. Yfirleitt virðist Benedikt hafa verið mjög heppinn í skýringum sínum á vísunum og komist nær hinu rétta en aðrir, sem við þær hafa fengist; en að jafnaði eru vísurnar í Sturlungu ekki myrkar né torskildar.

Að endingu fylgir nafnaskrá yfir alla Sturlungu. Eg hefi ekki kannað hana. En sé þó, að lagfært er ýmislegt, sem miður var rétt í hinum fyrri nafnaskráum við Sturlungu og enn fremur hefir höf. víða sett dánardægur og dánarár manna í svigum við nöfn þeirra, og er það til mikilla bóta.

Yfirleitt virðist þessi útgáfa Sturlungu vera útgefendunum til sæmdar og bera af öðrum alþýðuútgáfum fornrita vorra.

Páll Eggert Ólason.

Ísland 1915.

Árið 1915 hefir verið bezta ár hér á landi bæði til lands og sjávar. Veturinn góður frá nýári. Vorið kalt, og sérstaklega þurviðrasamt á Suðurlandi. Eftir miðjan marz gerði hafís vart við sig við Vesturland, en þó ekki til mikilla muna þá. En í maí kom hann að Norðurlandi og var þar mikill ís á reki fram og aftur alt fram í miðjan júlí og truflaði mjög skipaferðir. En úr því varð ís laust. Grasspretta varð tæplega í meðallagi yfirleitt, og ollu því þurviðri sunnanlands, en hafísinn norðanlands. Sumartíðin var góð og hagstæð og varð nýting heyja í bezta lagi, svo að þau urðu eftir sumarið bæði mikil og góð sunnanlands og í meðallagi norðanlands. Garðvextir yfirleitt meiri en í meðallagi. Haustið var gott og bezta tíð fram til ársloka. Skaftafellssýslur eru þó undantekning frá þessu, því þar var rigningasamt síðari hluta sumars og alt haustið, og á Austfjörðum var rosatíð fyrir árslokin.

Eftirtektar verðar eru athuganir þær, sem Mýramenn segjast hafa gert á háttsemi kríunnar þetta sumar og hið næsta á undan. Vorið 1914 var fádæma hart og segja þeir að kríur hafi þá alls ekki orpið. En vorið 1915 urpu þær ekki fyr en seint í júní og voru að því alt fram í ágúst. Þær eru vanar að fara um höfuðdag, en í haust fóru þær ekki fyr en um veturnætur. Sama er að segja um fleiri fugla. Lóur fóru að minsta kosti mánuði síðar en venja er til. Viku af vetri sást stór lóuhópur á Mosfellsheiði.

Aflabrögð voru í bezta lagi þetta ár. Flestir botnvörpungarnir söltuðu afla sinn í janúar og febrúar, og gekk veiðin fremur stírklega. Þeir fáu af þeim, sem fóru með fisk sinn til Englands á þessum tíma, fengu sæmilegt verð fyrir hann. Með marzbyrjun tóku öll botnvörpuskipin að afla í salt, og varð aflinn á vetrarvertíð með langbezta móti. Vorið út af fyrir sig var ekki venjuþetra, og tók þá fyrir afla með fyrra móti. En að samanlögðu var vetraraflí og vorafli miklu meiri en í meðallagi. Þó var óvenjumikið af

upsa í aflanum, en það bætti um, að hann var nú einnig í háu verði. Í júlíbyrjun fóru flest botnvörpuskipin á síldveiðar við Norðurland, og var það þó eigi glæsilegt í upphafi, þar sem alt var fult af ís fram um miðjan júlí. En svo fór, að síldaraflinn varð mikill hjá öllum fjölda skipanna og hjá einstöku skipum afburða góður. Tilkostnaðurinn við þessa veiði var nú tilfinnanlega hærri en nokkrum sinni áður, en síldin altaf í háu verði, og fór þó verðið mjög hækkandi, er á leið, svo að síld hefir aldrei komist í annað eins verð og nú, eða neitt nálægt því. Árangurinn af síldveiðinni varð því sérstaklega góður, og er það í fyrsta sinn, að kunnugra sögn, sem íslenzku botnvörpuskipin hafa í heild sinni grætt verulega á þeirri veiði. Skipin komu heim frá síldveiðunum í lok september og hættu þá flestöll veiðum um hríð og fóru í vetrarlægi. En þau fáu skip, sem þá fóru út á þorskveiðar og seldu afla sinn í Englandi, munu hafa grætt á því. Í byrjun desember fóru flest skipin út aftur og veiddu í salt. Flest af þeim aðeins eina ferð, og varð aflinn fremur lítil vegna ógæfta þá við Vesturland. En í miðjum desember breyttu öll þessi skip til og fóru að afla í ís. Fengu þau þá mjög fljóttekinn afla og seldu hann í Englandi fyrir herra verð en nokkrum sinni hefir áður þekst. Árið hefir yfirleitt verið mjög gott fyrir botnvörpungaútvegið, enda þótt tillit sé tekið til þess, að tilkostnaður við hann er miklu meiri nú en nokkrum sinni áður. Á árinu hafa bæzt við 4 nýir botnvörpungar, 2 í Reykjavík og 2 í Hafnarfirði; einn er í smíðum og kaup ráðgerð á þremur þar fyrir utan. — Þilskipin, sem út hefir verið haldið frá Suðurlandi, eru lítið eitt færri en næsta ár á undan, en afli þilskipanna yfirleitt mun vera þriðjungur meiri nú en í fyrra. Vélbátaraflinn hefir og verið mjög mikill kringum alt land. Ný hreyfing hefir komið upp á árinu í vélbátautgerðinni. Menn eru að fá sér miklu stærri báta en áður og þykir það gefast betur. Þessa stærri vélbáta geta menn einnig notað til síldveiða. Þeir eru 30—40 tonn, með 50—60 h.a. vélum. Þeir eru smíðaðir ýmist í Noregi eða Danmörku og eiga Ísafirðingar og Eyfirðingar þegar nokkra, en margir eru í smíðum, þar á meðal, að sögn, 8—10 fyrir Reykvíkinga.

Í atvinnurekstri og verzlun er árið 1915 mesta veltiár, sem yfir Ísland hefir komið, bæði til lands og sjávar. Verð á útlendum vörum hefir reyndar verið miklu herra en að undanfögnu. En verðhækkunin á innlendu vörum hefir þó verið miklu meiri en því nemur. Allir framleiðendur, til lands og sjávar, hafa stórgrætt.

og efni hafa aukist að miklum mun í landinu. Einstöku útflutningsvörur hafa þó verið í lægra verði en áður, svo sem sæðardúnn, því þar er um munaðarvöru að ræða fremur en nauðsynjavöru. En ull hefir verið í afarháu verði og hefir nú lent mikið af henni til Austurríkis og Þýskalands, en ekki til Ameríku, eins og að undanfögnu. Kjötverð hefir verið mjög hátt, hrossaverð miklu hærra en áður, og sömuleiðis verð á öllum sjávarafurðum. Er það skortur á matvælum hjá ófriðarþjóðunum, einkum miðveldunum, sem hleypt hefir upp verðinu. Frá byrjun ófriðarins hafa Englendingar eftir mætti reynt að hefta vöruflutninga þangað. Herskip þeirra hafa tekið í hafi flest flutningaskip, sem farið hafa milli Íslands og Danmerkur, eða Íslands og Noregs, farið með þau til Skotlands og rannsakað þar farm þeirra. Þetta hefir valdið miklum töfum og truflun á samgöngunum, og auk þess hafa Englendingar lagt höft á verzlunina á þann hátt, að ýmsu af farmi skipanna héðan hafa þeir aðeins slept framhjá sér með þeim skilyrðum, að vörurnar yrðu lagðar fyrir til geymslu í Khöfn og eigi seldar þaðan fyr en að stríðinu loknu.

Landsstjórnin hefir þetta ár, eins og í fyrra, samkvæmt heimildarlögum frá alþingi, keypt mikið af kornmat fyrir landssjóðs reikning, en nú er hann ekki seldur, heldur eru birgðirnar lagðar fyrir til geymslu, mest af þeim í Reykjavík, en þó einnig nokkuð á Norðurlandi. Tveir skipsfarmar af þessum kornmat hafa verið keyptir í New-York og hefir landsstjórnin leigt skip til þess að sækja þangað vörurnar. Einnig hefir landsstjórnin keypt mikið af kolum, og Fiskifélag Íslands hefir með hennar aðstoð keypt olíubirgðir frá Ameríku. Er það »Velferðarnefndin« svo nefnda, sem staðið hefir fyrir þeim ráðstöfunum með landsstjórninni, en sú nefnd var kosin á þingi 1914 og aftur í ár. Einnig hefir stjórnin skipað nefnd, samkv. heimildarlögum, til þess að ákveða verðlag á vörum, ef þurfa þykir, og hefir sú nefnd nýlega sett hámarksverð á mjólk í Reykjavík.

Hið háa verð, sem verið hefir á öllum nauðsynjavörum, hefir komið nokkuð hart niður á öllum þeim, sem ekki fást við framleiðslu, hvorki af sjó eða landi, svo sem verkafólki í kaupstöðum, embættismönnum þar og öðrum þeim, sem vinna fyrir ákveðið kaup, en verða að kaupa af öðrum allar nauðsynjar sínar. Varð mikið tal um það á alþingi, hvernig ætti að ráða bót á þessu, og margar tillögur komu þar fram um það. En það varð að lokum úr, að

samþykkt voru lög um bráðabirgða-verðhækkunartoll á útfluttum íslenskum afurðum og önnur lög um dýrtíðaruppbót á launum lágtlaunaðra embættismanna og sýslunarmanna í þjónustu landsins. Hafði starfstólk laudssímans krafist launaviðbótar og hótað verkfalli, ef þær kröfur yrðu ekki teknar til greina. Varð þetta til þess, að þingið samdi lög gegn verkfallshreyfingum hjá þeim, sem vinna í þarfir hins opinbera. Deilurnar um dýrtíðarráðstafanir, bæði á alþingi og í blöðunum, hafa valdið því, að nokkur kur hefir komið upp milli sveitamanna annars vegar og kaupstaðafólks og sjómanna hins vegar, eða stéttametingur um framlög til almennings þarfa. Nú við áramótin er reynslan sú, að ástæðurnar eru alment með bezta móti, einnig í kaupstöðunum, þrátt fyrir dýrtíðina. Ber ýmislegt til þess. Í fyrsta lagi hefir kaup verkafólks verið hækkað nokkuð frá því, sem áður var, og í öðru lagi hefir atvinna verið meiri og jafnari þetta ár en áður. Fleiri hafa og orðið til þess en að undanförunu að taka þátt í framleiðslunni úr sjónum vegna þess, hve arðvænleg hún hefir verið þetta ár. Hásetar á þilskipum, sem ráðnir eru upp á hlutdeild í aflanum, hafa fengið hærri laun en áður vegna þess, að meira hefir aflast, og kaupafólk úr kaupstöðum, sem unnið hefir til sveita, hefir fengið hærra kaup en venja er til. Alt þetta hefir miðað til þess að jafna nokkuð þann halla, sem annars hefði orðið af hinni miklu verðhækkun á öllum nauðsynjavörum, svo að hann hefir ekki orðið eins tilfinnanlegur þeim, sem hann einkum kemur niður á, og ætla mætti, þegar á hana er litið út af fyrir sig. Í árslokinn nú höfðu færri leitað fátækrastryks í Reykjavík en um sama leyti á undanförunum árum.

Alþing kom saman þetta ár 7. júlí. Stafaði drátturinn á samkomu þess af undangengnu þófi um staðfesting stjórnskrár og fána. Í fréttum frá síðastliðnu ári er skýrt frá horfum þeirra mála í ársbyrjun 1915 og frá upphafi deilu þeirrar, er hófst út af framkomu ráðherra Íslands í ríkisráði 30. nóv. 1914. Framan af árinu var eú deila aðalviðfangsefni stjórnmalaflokkanna og blaðanna. Var því haldið fast fram af hálfu Heimastjórnarflokksins, að staðfesting stjórnskrárinnar yrði ekki látin stranda á þeim ágreiningi, sem komið hafði fram í ríkisráðinu 30. nóv. milli konungs og ráðherra Íslands, og hélt hann því fram, að stjórnskráin yrði lögð fyrir konung til staðfestingar áður en næsta reglulegt alþingi kæmi saman, með því að svo er fyrir mælt í lögum, að þau lög frá alþingi, sem ekki hafa náð konungsstaðfestingu þegar næsta reglu-

legt alþingi kemur saman, skuli niður falla, og hefði þá enn orðið að samþykkja stjórnarskrárfrumvarpið á tveimur þingum, með þingrofi á milli, ef þessu hefði ekki fengist framgengt. Þessi afstaða til málanna var byggð á þeim skilningi, að konungur hefði með ummælum sínum í ríkisráðinu 30. nóv. fullnægt fyrirvaranum, sem alþingi 1914 lét fylgja stjórnarskrársamþykkt sinni, og væri það því ráðherrans sök, er misskilið hefði vilja þingsins, en ekki konungsins, að málið strandaði. En frá ráðherra hálfu var haldið fast við þann skilning á fyrirvaranum, sem hann hafði haldið fram í ríkisráðinu. Leið svo fram í febrúar, og var deilt um þetta fram og aftur, en ráðherra gegndi stjórnarstörfum áfram til bráðabirgða, enda þótt hann hefði beiðst lausnar frá embættinu 30. nóv. Konungur hafði þá lýst yfir því í ríkisráðinu, að ætlun sín væri að kveðja íslenska stjórnámálamenn úr ýmsum flokkum á fund sinn, til þess að reyna að jafna ágreininginn. Nálægt miðjum febrúar fékk Hannes Hafstein fyrv. ráðherra tilmæli um það frá konungi, að hann kæmi á fund hans til ráðagerða, og fór Hafstein þá utan. En um það leyti sem hann var að leggja á stað, kom fram yfirlýsing frá þingmönnum Sjálfstæðisflokksins þess efnis, að þeir féllust á skilning ráðherra á alþingisfyrirvaranum. Höfðu 18 þingmenn skrifað undir þá yfirlýsingu, og nokkrir bættust við síðar. Hafstein var ekki lengi í utanföríuni. En meðan hann dvaldi í Khöfn komu hingað símskeyti frá konungi til þriggja þingmanna í Sjálfstæðisflokknum, og óskaði hann að þeir kæmu á fund sinn til viðtals. Þessir þingmenn voru prófessorarnir Einar Arnórsson og Guðmundur Hannesson, en hinn þriðji Sveinn Björnsson yfirdómslögmaður. Fóru þeir héðan nálægt miðjum marz og voru mánuð í förinni. Í Khöfn hafði vel samist með þeim og konungi, og er þeir komu heim, voru þeir allir sammála um, að greiða fyrir samkomulagi um fyrirvaraágreininginn innan Sjálfstæðisflokksins og vína að því með Heimastjórnarflokknum að úrlausn fengist á stjórnarskrármálinu og fánamálinu. Málaleitunum þeirra var illa tekið af ýmsum í Sjálfstæðisflokknum, og klofnaði flokkurinn út af þessu, því aðrir studdu þá að málum. En nú var svo komið að þrímenn-ingarnir og Heimastjórnarmenn í bandalagi höfðu nægt atkvæðaafll til þess á alþingi, að tryggja þeim ráðherra, sem tæki að sér að koma fram staðfestingu stjórnarskrárlunar og fánamáliu, að þingið léti sér það vel líka. Konungur kvaddi þá Einar Arnórsson prófessor til þess að taka við ráðherraembættinu, og var það 4. maí. Nokkru síðar fór hann á konungs fund, og var stjórnarskráin stað-

fest 19. júní, og sama dag var gefinn út konungsráðsúrskurður um sérstakt flagg handa Íslandi. Síðan hefir dottið niður öll deila um gerð flaggsins, og er nú hið nýja, þrífita flagg alment notað, en bláhvíta flaggið horfið. En töluverð rimma varð á þinginu út af staðfesting stjórnskrárinnar, er lauk svo, að báðar deildir þingsins lýstu ánægju yfir henni, neðri deild með 14 atkv. gegn 10 og efri deild með 8 atkv. gegn 5. Voru þeir sjálfstæðismenn, sem andmæltu staðfestingunni og töldu ráðherra og þrímenningana hafa brugðist flokki sínum, nefndir »þversum-menn«, en hinir, sem féllust á gerðir ráðherra, »langsum-menn«, og hafa þau nöfn haldist síðan á flokksklofningunum, því ekki hefir gróíð um heilt milli þeirra síðan. Voru fjórir flokkarnir á þinginu þetta sumar, þeir tveir, sem nýnefndir eru, Heimastjórnarflokkurinn og Bændaflokkurinn, sem þó var fámennari nú en áður, því að ýmsir höfðu gengið úr honum, bæði á þingi 1914 og í þingbyrjun 1915, og yfir í Heimastjórnarflokkinn, en hann var á þessu þingi fjölmennasti flokkurinn.

Helztu lög frá þinginu, auk þeirra, sem þegar hefir verið minnst á, eru þessi: Um mat á lóðum og löndum í Rvík; um ullarmat; um stofnun vélstjóráskóla í Rvík; um sparisjóði; um dýraverndun; um atvinnu við siglingar; um atvinnu við vélgæzlu á gufuskipum; um heimild fyrir seðlaaukningu Íslands banka; um rafmagnsveitur; um líkbrenslu; um bann gegn tilbúningi áfengra drykkja; um breytingar á bannlögunum; um mæling á túnnum og matjurtagörðum; um hafnargerð á Siglufirði; um kosningar til alþingis; um þingsköp alþingis; um fasteignamat; um fjölgundýralækna.

Nýja stjórnskráin gengur í gildi 19. janúar 1916. Breytingar frá eldri stjórnskránni eru ekki litlar og horfa sumar út á við, en aðrar inn á við. Þetta eru þær helztu, sem út á við horfa: 1. Konungur vinnur eið að stjórnskrá Íslands. 2. Konungur er ábyrgðarlaus og friðhelgur. Eiga þessi ákvæði í stjórnskránni að marka skýrara en áður réttindi landsins. 3. Ákvæðið um, að embættismenn hafi rétt innborinna manna, er felt burt. 4. Fæðing hér á landi eða vistferli um síðastl. 5 ára skeið áður kosning fer fram er orðið kosningarréttarskilyrði til alþingis, en heimilisfesta innanlands kjörgengisskilyrði. 6. Alþingi er lýst friðheilagt, og má enginn raska friði þess né frelsi. Mun þessu ákvæði vera líkt farið og 1. og 2. lið hér á undan. 6. Ef alþingi samþykkir breytingar á sambandi Íslands og Danmerkur, skal leggja það mál und-

ir atkvæði allra kosningabærra manna í landinu til samþykktar eða synjunar og atkvæðagreiðslan vera leynileg. 7. Í stað þess sem staðið hefir síðan 1903, að ráðherra Íslands skuli bera upp lög og mikilvægar stjórnarráðstafanir í »ríkisráðinu,« er nú svo ákvæðið, að þetta skuli ráðherra gera »þar sem konungur ákveður.« Af breytingum, sem aðallega horfa inn á við, eru þessar helztar: 1. Ráðherrum má fjölga með almennum lögum, og verði það gert, flegst landritara-embættið niður. 2. Bráðabirgðafjárlög má ekki gefa út, ef fjárlög fyrir fjárhagstímabilið eru samþykkt af alþingi. 3. Ef meiri hluti hvorrar deildar krefst þess, að aukapíng sé haldið, kveður konungur saman aukapíng. 4. Yfirskoðunarmenn landsreikninganna verða 3, í stað tveggja áður, kosnir í sameinuðu píngi með hlutfallskosningum. 5. Breyta má með einföldum lögum því stjórnarskrárákvæði, að hin evangelíska lútherska kirkja skuli vera þjóðkirkja á Íslandi og að hið opinbera skuli að því leyti styðja hana og vernda. Auk þess er ákvæðið, að utanþjóðkirkjumenn, sem ekki heyra til öðrum trúarflokki, sem viðurkendur er í landinu, skuli gjalda til háskóla Íslands eða einhvers styrktarsjóðs við þann skóla, eftir því sem á verður kveðið, þau gjöld, sem þeim hefði ella borið að greiða þjóðkirkjunni. 6. Konungkjörnir alþingismenn hverfa úr sögunni. Í stað þeirra koma 6 þjóðkjörnir alþingismenn, kosnir til efri deildar með hlutfallskosningum um land alt. Við þær kosningar er kjörgengi og kosningarréttur bundið við 35 ára aldur. Þessir píngmenn skulu kosnir til 12 ára, og fer helmingur þeirra frá sjötta hvert ár, fyrsta skiftið eftir hlutkesti. Píngrof nær ekki til þessara píngmanna. 7. Kosningarrétturinn er aukinn að miklum mun. Fyrst og fremst bætast við smámsaman allar konur, giftar og ógiftar, eftir sömu reglum og karlar, sem nú hafa kosningarétt, og þar að auki vinnuhjú, bæði karlar og konur, þannig, að fyrst bætast við þeir og þær, sem eru 40 ára eða eldri. Næsta ár þeir og þær, sem eru 39 ára og svo koll af kolli þannig, að aldurstakmarkið lækkar um eitt ár í hvert sinn, þangað til allir, sem kosningarréttur er ætlaður, hafa náð honum. Dómarar, sem ekki hafa umboðsstörf með höndum, verða ekki kjörgengir. Þó tekur það ákvæði ekki til þeirra dómara, sem nú skipa landeyfirdóminn.

Eimskipafélag Íslands byrjaði útgerð sína á þessu ári. Fyrsta skip þess, »Gullfoss«, kom til Reykjavíkur 15. apríl, fór þaðan til Ísafjarðar og síðan frá Reykjavík til New-York, eftir tilmælum kaupmanna í Reykjavík. Hitt skipið, »Goðafoss«, kom til Austurlandsins seint í júní og fór fyrstu ferðina norður um land til

Reykjavík. Komust með honum vörur inn á Húnaflóa, en þar var að verða matvöruþröng vegna hafíssins. Bæði skipin þykja vel vönduð og hafa þau haft nóg að gera þetta ár og útgerðin gengið vel, enda þótt hernaðarástandið hafi gert hana allmiklu dýrari og erfiðari en ella hefði verið, bæði með trufluninni, sem vöruskoðun Englendinga hefir valdið, og svo ekki sízt vegna hins háa stríðs-vátryggingargjalds. Í haust ákvað stjórn Eimskipafélagsins að auka hlutaféð um alt að 300 þús. kr. í því skyni að bætt yrði við þriðja skipinu. Á það að verða vöruflutningaskip, um 1500 smálestir að stærð. Síðustu mánuði ársins hefir farið fram söfnun á hlutafé til þess að koma þessu í framkvæmd.

Hafnargerðin í Reykjavík er nú langt komin og eru skip farin að leggjast við bryggju við nýja hafnargarðinn austan við höfnina. Verður hafnargerðinui lokið á næsta ári. Einnig hefir verið unnið að hafnargerð í Vestmannaeyjum, og í Bolungarvík er verið að gera brimbrjót til varnar bátalendingunni þar. Skemdist það verk allmikið í stórviðri í haust. — Brúaðar hafa verið á árinu Hamarsá í Geithellnahreppi, Síká í Hrútafirði og Langadalsá í Norður-Ísafjarðarsýslu, allar með steinsteypubrúm, og er hin fyrstnefnda 35 metrar, önnur 32 og hin þriðja 24 metrar. Í stað gamalla trébrúa voru bygðar steinsteypubrýr á Langá á Mýrum, 20 metra, Bólstaðahlíðará, 13 metra, og Sæmundará á Vatnsskarði, 12 metra. Við tvær flutningabrautir var lokið þetta sumar, Reykjadalabraut og Eyfirðingabraut, og auk þess unnið að Húnvetningabraut, Skagfirðingabraut og Grímsnessbraut. En að þjóðvegum var unnið á Stykkishólmsvegi, Hróarstunguvegi, Hörgárdalsvegi, Krossárdalsvegi og víðar. — Vitar voru bygðir á Grímsey í Steingrímsfirði, við Malarhöfn í Steingrímsfirði og Hólmavík í Steingrímsfirði, og unnið að vitabygging á Ingólfshöfða, en eftir að setja hann upp. Sjómerki voru sett á ýmsum stöðum, svo sem við Raufarhöfn, á Steingrímsfirði og víðar. Sjóvarnargarður var bygður á Siglufjarðareyri. — Að símalagningum hefir verið unnið á svæðinu milli Þórs-hafnar og Húsavíkur og svæðinu milli Djúpavogs og Hornafjarðar. Voru staurar settir niður milli Þórshafnar og Kópaskers, en þráðurinn er ekki kominn á þá. Línar frá Berufirði suður á við er kominn yfir Lónsheiði og hefir á henni verið opnuð bráðabirgðastöð á Svínhólum í Lóni. Línuna milli Eskifjarðar og Norðfjarðar, ásamt símakerfinu á Norðfirði, sem áður vareinstakra manna eign, keypti landsíminn vorið 1915 og lagði síðan línuna milli Norðfjarðar og Mjóafjarðar. Einnig keypti hann á árinu símakerfi Siglufjarðarkaupstaðar.

Af slysum á sjó á árinu eru þessi hin helztu: 14. jan. fórst vélbátur frá Vestmannaeyjum með 5 mönnum. 16. febr. strandaði vélbátur á Lambarífi á Reykjanesi, og annar 11. marz á Bæjarskeri á Miðnesi, en menn fórust þar ekki. 8. apríl fórst bátur úr Grindavík með 9 mönnum. Snemma í maí fórst bátur á Skjálfandaflóa með 2 mönnum. 31. maí strandaði seglskipið »Dagný«, fermt sementi, í Grindavík, en náðist út aftur og var þá nokkuð skemt af farminum. 11. júní fórst vélbátur frá Norðfirði með 4 mönnum. 10. sept. grandaði hrefna báti úr Fljótum með 2 mönnum. 12. sept. strandaði vöruflutningaskipið »Fenrir« á Eyjafirði, en náðist út laskað. 22. sept. fórst bátur með 4 mönnum frá Hvallátrum á Breiðafirði. 23. okt. strandaði vöruflutningaskipið »Haraldur« milli Hvammsfjarðar og Stykkishólms, en varð bjargað og síðan gert við það í Rvík. 29. nóv. fórust 2 bátar úr Bolungarvík og 1 úr Aðalvík og á þeim samtals 17 menn. — Snemma á árinu strandaði enskur botnvörpungur við Fáskrúðsfjörð, og annar, »Tribune« frá Hull, strandaði við Hafnarbjarg á Reykjanesi 8. marz, en af hvorugu skipinu drukuðu menn.

Aðfaranótt 25. apríl varð stórbruni í Reykjavík, hinn mesti, sem orðið hefir hér á landi, og brunnu þar 12 hús, en tveir menn fórust. Eldurinn kom upp í »Hótel Reykjavík« og braun það. Einnig brann Landsbankahúsið að innan, en það var úr steini. Hin húsin, sem brunnu, voru verzlunarhús og íbúðarhús. Tjónið var metið nálægt $\frac{3}{4}$ milj. kr. Önnur helztu brunaslysín á árinu eru þessi: 9. febr. brann bærinn í Dögurðarnesi á Skarðsströnd. 31. marz brann íbúðarhús á Arnarstapa á Snæfellsnesi. 11. júní brann íbúðarhús á Ísafirði. 19. okt. brann allmikið af heyi í Kvíslaseli í Strandasýslu. Í byrjun nóvembr. brann bærinn á Jarlsstöðum í Höfðahverfi.

Helztu mannalát á árinu eru þessi: Síra Benedikt Kristjánsson á Húsavík dó 26. jan.; Einar Magnússon bóndi á Steindórstöðum í Reykholtadal 4. marz; Magnús Steindórsson frá Hnausum 21. marz; Snæbjörn Þorvaldsson fyrv. kaupm. 2. apríl; Ólafur Sveinsson gullsm. í R.vík 9. apríl; Sig. Sigurðsson barnakennari í R.vík 12. apríl; Hjörtur Hjartarson ritstjóri í R.vík 15. apríl; síra Böðvar Eyjólfsson í Arnesi 21. apríl; Guðjón Sigurðsson úrsmiður í R.vík 25. apríl; Júl. Havsteen amtmaður 3. maí; Sigurður Waage fyrv. kaupm. 5. maí; frú María Finsen, Reykjavík, 17 maí; Jón Jensson yfirdómari 25. júní; Jón Stefánsson rithöfundur á Litluströnd (Þorgils gjallandi) 23. júní; Ólafur Jónsson hreppstj. á Geldingaa.

í Borgarf. 4. júlí; Tómas Guðbrandsson hreppstj. í Auðsholti í Biskupstungum 10. júlí; ekkjufrú Hildur Bjarnadóttir (Thorarensens) í Stykkishólmi 20. júlí; Kr. Ó. Þorgrímsson konsúll 18. sept.; Pétur Sæmundssen áður verzlunarstj. á Blönduósi í októbr; G. H. F. Schrader frá Akureyri féll útbyrðis af skipi á leið til Noregs í nóvembr.; Þorsteinn Skaftason ritstj. á Seyðisfirði dó 28. nóv.; frú Sigríður Magnússon frá Cambridge dó í Skodsborgarheilsuhæli í Danmörku í nóvember. Frú Jörgine Sveinbjörnsdóttir 6. des.

Nokkrar tilraunir hafa verið gerðar nú síðari árin í þá átt að leita að kolanámum hér á landi. Hafa lög fundist allvíða, einkum nú að síðustu á Vesturlandi, og nokkuð hefir verið tekið þar af kolum og selt í kaupstöðunum vestanlands og í Reykjavík. En ekki er þó nein ábyggileg reynsla fengin fyrir því enn, hvort námur þær, sem fengist hefir verið við, eru til nokkurrar frambúðar eða ekki. — Félag hefir komist á fót á árinu til þess að vinna salt úr sjó hér við land í stórum stíl, eða rannsaka, hvað tiltækilegt væri í því efni, en framkvæmdir í þá átt eru engar byrjaðar enn. Veitti alþingi fyrir tveimur árum einum manni einkarétt til þessarar saltvinslu, en hann hefir síðan framselt rétt sinn til félagsins.

Á Heilsuhælinu á Vífilsstöðum hefir orðið sú breyting á árinu að landið tekur að sér rekstur þess framvegis frá ársbyrjun 1916. Heilsuhælisfélagið, sem áður hafði á hendi alla umsjón með hælinu, snýr sér upp frá þessu eingöngu að því að styrkja fátæka sjúklinga til þess að leita sér lækninga á hælinu, og hefir það breytt skipulagi sínu í samræmi við það.

Á Háskóla Íslands hafa þetta ár bæzt við 3 aukakennarar: einn í gömlu málunum, grísku og latínu, og er það fast embætti, sem alþingi hefir stofnað. Annar er kennari í danskri tungu og dönskum bókmentum og er hann kostaður af ríkissjóði Dana með fjárveitingu til 5 ára. Þriðji kennir þýzku og þýzkar bókmentir með bráðabirgðastyrk frá alþingi. Hafði þýzka þingið veitt manni fé til þeirrar kenslu 1914 og var hann nýkominn hingað, er stríðið hófst í fyrra sumar, en hvarf þá heim aftur. Frakkar höfðu kostað hér kennara í frönsku frá stofnun háskólans og þar til í fyrra, er stríðið hófst, og munu gera það áfram er ófriðnum linnir.

26. sept. var afhjúpað í Reykjavík líkneski Kristjáns konunga IX., gert af Einari Jónssyni myndhöggvara, og stendur það framman við stjórnarráðshúsið, á hlið við líkneski Jóns Sigurðssonar frá 1911.

P. G.

Aldarafmæli hins íslenska Bókmentafjelags.

Á fundi 9. desember f. á. samþykkti stjórn hins íslenska Bókmentafjelags, að aldarafmælis fjelagsins skyldi minst með hátíðlegri athöfn 15. ágúst næstkomandi.

Þann dag, 15. ágúst, telur stjórnin hinn rjetta afmælisdag fjelagsins í heild sinni.

Frá upphafi vóru fjelögin tvö, eitt hjer í Reykjavík, annað í Kaupmannahöfn. Reykjavíkurfjelagið var eldra; það myndaðist á árinu 1815, enn mátti vart heita fullstofnað, því að lög vóru ekki samin handa því og stjórn ekki kosin af fjelagsmönnum, heldur skipuð til bráðabirgða af aðalstofnanda fjelagsins, hinum fræga visindamanni og ágæta Íslandsvini R. Kr. Rask; hafði hann, áður enn hann fór hjeðan alfarinn að áliðnu sumri 1815, lagt svo undir, að Árni dómkirkjuprestur Helgason, sem má heita annar aðalstofnandi fjelagsins, skyldi vera forseti Reykjavíkurfjelagsins, Sigurður landfógeti Thorgrímsen fjehirðir og Halldór sýslumaður Thorgrímsen skrifari. Hafnarfjelagið var stofnað í marsmánuði 1816, og hjelt það hinn fyrsta fund sinn 30. mars það ár. Á þeim fundi var stjórn kosin, forseti R. Kr. Rask, fjehirðir Grímur Jónsson og skrifari Finnur Magnússon, og samþykkt að fela forseta að semja frumvarp til laga handa fjelaginu og leggja það síðan fyrir fund til samþykta, er það hefði gengið meðal fjelagsmanna. Þessi fundur var haldinn 13. apríl 1816, og er hann kallaður »hin fyrsta reglulega samkoma hins íslenska fjelags í Kaupmanna-

höfn« í fundargerðinni, sem er prentuð sem 6. fylgiskjal aftan við Minningarrit fimtugsafmælis fjelagsins, Khöfn 1867, á 67.—68. bls. Þar stendur og, að Kaupmannahafnarfjlagið sje »stofnað að dæmi eins annars (ö: fjelags), er í fyrra var höfðað á Íslandi og hefur sinn eiginlega aðsetursstað í Reykjavík«. Fundargerð þessi sýnir því ljóslega, að fjelögin voru frá upphafi tvö, enn sú var tilætlun Rasks, að þessi tvö fjelög skyldi sameinast og verða tvær deildir í einu fjlagi, er hjeti hið íslenska Bókmentafjelag, og var grein þess efnis í lagafrumvarpi því, er hann lagði fyrir fundinn. Þetta frumvarp var samþykkt á fundinum 13. apríl 1816, og er því sá dagur hinn rjetti afmælisdagur Hafnardeildarinnar.

Nú vantaði ekki annað enn samþykki Reykjavíkurfjelagsins til þess að þetta frumvarp yrði að lögum. Var það því sent til bráðabirgðastjórnar Reykjavíkurfjelagsins. Var þar fyrst stofnað til fundar 1. ágúst 1816. Á þeim fundi var stjórn kosin og lagafrumvarpið lagt fram, enn ákveðið að geyma ályktun um það til næsta fundar. Var sá fundur haldinn 15. ágúst 1816. Þar var samþykkt lagafrumvarp Hafnarfjelagsins í öllum verulegum atriðum, og þar með varð það að lögum, að fjelögin skyldi úr þessu vera eitt fjelag í tveim deildum, annari í Reykjavík, enn hinn í Kaupmannahöfn, og heita hið íslenska Bókmentafjelag (sbr. Minningarritið 1867, 20. bls.).

Með þessari fundarályktun er því fjlagið fyrst fullstofnað.

Fundardagurinn 15. ágúst 1816 er því sannkallaður afmælisdagur Reykjavíkurdeildarinnar.

Og um leið er hann hinn rjetti afmælisdagur fjelagsheildarinnar.

Þetta voru þær ástæður, sem vöktu fyrir fjelagsstjórninni, þegar hún rjeð af að minnast aldarafmælisins 15. ágúst þ. á.

Það er og að ýmsu leyti hentugra að halda afmælið

15. ágúst heldur enn t. d. 13. apríl, eins og gert var 1866 á fimtugsafmælinu.

Það stendur til, að gefið verði út á árinu Minningarrit aldarafmælisins, og er vonandi, að það verði fullprentað 15. ágúst, svo að þá megi leggja það fram á hátíðinni.

Líkur eru og til, að hátíðin verði fjölsóttari um hásumarið enn hún mundi verða, ef hún væri haldin fyrir sumarmálin.

Annars er fyrirkomulag hátíðahaldsins ekki fastákveðið enn þá. Enn samþykkt hefir stjórnin að láta leggja krans á leiði aðalstofnenda fjelagsins, þeirra R. Kr. Rasks og Árna Helgasonar á aldarafmæliu, og er von um, að fjelagsmenn í Kaupmannahöfn gangist fyrir þessu af fjelagsins hálfu, að því er Rask snertir. Af því að minnisvarðinn á leiði Árna Helgasonar í Garða kirkjugarði er farinn að bila, hefur stjórnin afraðið að láta gera við hann fyrir aldarafmælið.

Reykjavík 25. mars 1916.

Björn M. Ólsen.

Útsær.

Til þín er mín heimþrá, eyðimörk ógna og dýrðar,
ásýnd af norðursins skapi í bliðu og stríðu.

Hjá þjer eru yngstu óskir míns hjarta skirðar.

Útsær — þú ber mjer lífsins sterkustu minning.

— Jeg sje þig hvíla í hamrafanginu víðu;

jeg heyri þig anda djúpt yfir útskaga grynning.

Ofsinn og mildin búa þjer undir bránni;

þú bregður stórum svip yfir dálítið hverfi,

þar lendingarþáran kveðst á við strenginn í ánni,

en upplit og viðmót fólksins tekur þitt gervi.

Hve myndir og skuggar miklast í þínu veldi.

— Jeg man þig um dægur, er skín ei af ári nje kveldi.

Þá lyptirðu þungum og móðum bylgjubarmi

og bikar hins volduga myrkurs þú drekkur á höfn.

Augu þín lykjust undir helsvörtum hvarmi,

en hart þú bindur að ströndunum líkfölu tröfn. —

Þá er eins og líði af landinu svipir af harmi.

Þeir leita í þínum val undir marareldi

— og mæðuandlit svefnþung á svæfli og armi

sjá þá, er varstu bæði lífið og gröfn.

Mjer er sem jeg skygnist yfir sædjúpsins jarðir —
þar er ekki hljómi líft nje geisla af degi.
En eins og vindar leiða hliðanna hjarðir
hafbúann straumurinn áttar á sporlausum vegi.
Og ljósgjafaaugu svipast um undirsjáinn.
Þar sækja hafsins múgar sinn óraróður;
og vegast á til bana í lágum legi,
leiknir í fangbrögðum dauðans, varir og harðir.
Þar beita sjer tálkn og bardar á rastanna gróður,
með bitandi tannir og skafli hvassa sem ljáinn.

Til lands sækir djúpsins líf. Þar merkirðu klettinn
og lætur þig sjást sem þú ert, með flakandi slæður.
Aftur og fram, meðan ertu steininum stæður,
sem stormur í kjarri þú æðir í þaranna runni.
Áin sekkur í sjóinn sem dropi í brunni —
en sá, sem ræður, þig stöðvar við norðlenska blettinn.
Þá brýnirðu róminn og kallar af fjöru að fjalli,
en fjötruðu strandirnar bergmála einum munni.
Rjettlausu frelsi í holskafsisins hvolfandi falli,
jeg heyri þig steypa í rústir og lypta frá grunni.

— Jeg minnst þín löngum, heimur hverfulla mynda,
í hópnum, sem kemur og fer í voldugum borgum,
með óma, sem liða í öræfi hverfandi vinda,
með andlit, sem rísa og sökkva á streymandi torgum.
Bylgjur stynja og deyja í fjöldanna flóði.
Þar finnast ei blóðdropar tveir, sem að öllu jafnast.
Og eins er hvert brimtár og andvarp þitt, sem safnast
í öldustriðsins máttuga, drukknandi hljóði.
En einhversstaðar á alt þetta líf að hafnast
og einhver minnisstrengur nær hverju ljóði.

Því dagar sólina uppi um unaðarnætur.

Þá eldist ei líf við blómsins nje hjartans rætur.

— Hafkyrðin mikla leggst yfir látur og hreiður,
en lágeislinn vakir á þúsund sofandi augum.

Á firðinum varpar öndinni einstöku reyður,
og uppi við land kasta sporðar glampandi baugum.
Báruraddir í vogavöggunum þegja.

Ein vísa er aðeins hvísluð niðri í ósi.

Tíminn er kyr. Hann stendur með logandi ljósi
og litast um eftir hverju, sem vill ekki deyja.

En stoltastur ertu og stærstur í roki á haustin.

Strandmölin grýtir landið. Þú seilst í naustin.

Skýin þau hanga á himninum slitin í tötra. —

Það hrykktir í bænum eins og kippt sje í fjötra.

— Þá bryðurðu gaddinn við grúfandi bátastefnin.

Grunnsjórinn beljar um voginn svo jarðirnar nötra.

En hafáttin er í húmi og blikum til skipta;

hún hleypir skammdegisbrúnum fól undir svefninn.

Þá hamastu, trölíð. Í himininn viltu lypta

hyljum þíns eigin dýpis og álögum svifta.

— Og, altaf jeg man þig um mánaóttuna langa;
þá mæna til stjarnanna skuggar eyja og dranga
og vefjast í löngum örmum, sem risi og rýgur —
en röstin niðar í fjarlægð, með blandaða strauuma.
Þinn barmur aðeins hrærist og hljóðlega stigur
er himneska segulfangið á móti þjer hnígur.

— Andvaka haf, í ómi glitrandi stranda,
aleinn jeg dvel í stjörnuhöll minna drauma
og lifi að nýju þinn ljóma og róm í anda. —
Mín ljettustu spor eru grafin í þína sanda.

Ó, kveldsól á hafsins brotnu, blikandi speglum.
Bjargeyjan klæðist í lit, með snjóbleikum dreglum.
— Lognið það ríkir. En boðarnir bregða hrammi
og bresta sem þrumur yfir dökknandi flæðum.
— Þá skil jeg að heiðnin lifir aldanna æfi
með ódáiðshallir, reistar í norðlægum sævi.
— — Að drykkju er Ægis hirð í hylgrænum klæðum.
Í hálfri gátt stendur Lokasenna frammi.
Og landbrimið mælir á mig í kraptakvæðum —
vor kynstofn reis hæst í lífsins og guðdómsins fræðum.

Fornhelga spekin veit að afl skal mót afli,
en andanum gefur hún seinasta leikinn í tafli.
Guðirnir yrkja í kveðandi brims og bilja
og brjóst hins illa valds er slegið með ótta.
Hamar Þórs hann vegur að Alföður vilja;
Því vikur glottið í Ægisdyrum á flóttu.
— Loki felur sig sjálfan í þjósti og þóttu.
Hann þjakast og elskar í sinnar heiptar viðjum —
og minning hann ber um bros frá litverpum gyðjum
sem bjarma af von í myrkri eilífra nóttu.

Útsær, þú hastar á hjartað og göfgar þess ama.
Þú hylur í þögn vorn fögnuð og gjörir hann ríkan.
— Veröld af ekka, jeg veit engan mátt þjer líkan.
Viljinn sig þekkir hjá þjer og ris yfir hafið —
já, hafið sem á ekki strönd með fjarlægum frama,
en firnaríki í auðnir skýjanna grafið.
Þó deyi hjá þjer okkar vonir, sem nefna sig nöfnum,
og nísti þinn kali vor brjóst, er vald þitt hið sama;
því handan þín enginn átti að búast við höfnum.
Eilífð og himinn er landsýnin þar fyrir stöfnum.

— Sem leikandi börnin á ströndu, er kætast og kvarta með kufung og skel frá þínu banvæna fangi, jeg teyga þinn óm frá stormsins og straumanna gangi, stirnandi, klökka djúp, sem átt ekkert hjarta.

— Missýnir skuggar, mókandi ey og drangi, myndaskipti þín öll, þau skulu mjer fylgja.

Þó kalt sje þitt brjóst, þar sem blikar geislanna sýlgja, þó björgin þú knýir til ákalls, en svarir ei neinu, allt það, sem hjúpur þíns hafborðs gjörir að einu, hnígur að minni sál, eins og ógrynnis bylgja.

Einar Benediktsson.

Um Þorleif Guðmundsson Repp.

120⁹

Tjörn á Vatnsnesi. Voru þau einkenni þeirrar ættar í fyrstu, að menn voru burðamenn miklir, en litlir skapstillingarmenn og sáust lítt fyrir, er hafa vildu eitthvað fram, og stórbrotnir í öllu, og fóru lítt að annarra manna

— Sem leikandi börnin á ströndu, er kætast og kvarta
með kufung og skel frá þínu banvæna fangi,
jég teygja þinn óm frá stormsins og straumanna gangi,
stirnandi, klökka djúp, sem átt ekkert hjarta.

— Missýnir skuggar, mókandi ey og drangi,
myndaskipti þín öll, þau skulu mjer fylgja.
Þó kalt sje þitt brjóst, þar sem blikar geislanna sylgja,
þó björgin þú knýir til ákalls, en svarir ei neinu,
allt það, sem hjúpur þíns hafborðs gjörir að einu,

SKÍRÐIR.

Myndin af Þorleifi Repp, sem átti að fylgja
greininni um hann í þessu hefti, getur því miður
ekki orðið send út til félagsmanna fyrir en með
næsta hefti.

Um Þorleif Guðmundsson Repp.

Þorleifur Repp var fæddur í Reykjadal í Hrepp hinum ytra — þar af mun hann hafa tekið sér nafnið Repp — þann 6. júlídag 1794, og var hann heitinn eftir síra Þorleifi Bjarnasyni í Reykholti (Lbs. 312, fol., bls. 382). Voru foreldrar hans Guðmundur prestur Bøðvarsson og Rósa Egilsdóttir. Síra Guðmundur varð fyrst kapellán hjá síra Agli Eldjárnssyni á Útskálum 1785 og fekk Rósu, dóttur hans, ári síðar; árið 1789 fekk hann Reykjadal og 1809 Kálfatjörn og var þar til þess er hann sagði af sér 1826; bjó síðan um hrið í Móakoti á Vatnsleysuströnd, en fluttist síðan til Reykjavíkur og andaðist þar 1831. »Hann var snotur að gáfum, sagður nokkuð stoltur, hraustmenni til burða« (Prestasögur í Lbs. 312, fol., bls. 382). Faðir síra Guðmundar, en föðurfaðir Þorleifs, var Bøðvar, prestur í Guttormshaga, Högnason, prests á Breiðabólstað í Fljótshlíð, Sigurðssonar. Urðu synir síra Höгна allir prestar, og er sagt, að þeir hafi allir feðgar eitt sinn verið á Þingvelli hempuklæddir, átta synir hans og hann sjálfur hinn níundi, og þótti friður flokkur, því að allir voru þeir stórvaxnir og kempulegir. Er ætt mikil komin af Höгна presti Sigurðssyni. Föðurbróðir Þorleifs var síra Þorvaldur skáld Bøðvarsson. Af Höгна presti var og kominn síra Tómas Sæmundsson á Breiðabólstað í Fljótshlíð og enn síra Ögmundur skáld Sivertsen hinn sterki á Tjörn á Vatnsnesi. Voru þau einkenni þeirrar ættar í fyrstu, að menn voru burðamenn miklir, en litlir skapstillingarmenn og sáust litt fyrir, er hafa vildu eitthvað fram, og stórbrotnir í öllu, og fóru litt að annarra manna

vild, en þó voru þeir frændur margir gáfumenn. Komu sum þessara ættareinkenna berlega í ljós í Þorleifi Repp, svo sem nokkuð má sjá af því, er síðar segir.

Móðir Þorleifs Repps var Rósa Egilsdóttir; henni unni Þorleifur mjög, svo sem sjá má í bréfi hans til Byrgis prófessors Thorlacius úr Lundúnaborg 1821, er hann frétti lát hennar. Faðir hennar var Egill prestur Eldjárnsson á Útskálum. »Síra Egill var vel gáfaður, góður prédikari, gott skáld«. (Prestasögur í Lbs. 312, fol., bls. 378). Eftir hann liggja prentuð eftirmæli eftir Guðrúnu Einarsdóttur, byskupsfrú, og Jón byskup Árnason. »Síra Egill var klagður og dæmdur fyrir óskikkanleg drykkjuskaparorð og óhæfileg« og missti prestskap 1787. Mjög mun það mál hafa þótt af kappi sótt, því að síra Egill var mætur maður. Foreldrar síra Egils voru síra Eldjárn Jónsson, prestur að Möðruvallaklaustri, og Þórvör Egilsdóttir, prests í Glaumbæ, Sigfússonar. Bróðir síra Egils var síra Hallgrímur skáld Eldjárnsson á Grenjaðarstað, móðurfaðir dr. Hallgríms Schevings — er Hallgríms-nafn þeirra runnið frá síra Hallgrími Péturssyni, því að síra Eldjárn var kominn af Guðrúnu, systur hans. Þeir Þorleifur Repp og dr. Hallgrímur Scheving voru því þremenningar að frændsemi.

Önnur börn síra Guðmundar Böðvarssonar og Rósu Egilsdóttur en Þorleifur Repp voru Egill »læknir góður og listamaður, búandi syðra« (Lbs. 312, fol., bls. 382), og Guðrún, kona Einars Hákonarsonar, hattara í Reykjavík; var þeirra sonur síra Ísleifur á Stað í Steingrímsfirði, faðir Jóns verkfræðings og Karólínu¹⁾, konu Guðmundar prófessors Hannessonar, og þeirra systkina.

Þorleifur mun hafa alizt upp hjá foreldrum sínum í Reykjadal, til þess er faðir hans fekk Kálfatjörn (1809). Líklega hefir Þorleifur numið skólalærdóm hjá föður sínum, og kann eg ekkert frá honum að greina fyrr en 1812;

¹⁾ Hún á andlitsmynd þá af Þorleifi Repp, sem myndin er tekin af, er fylgir grein þessari.

Þá er hann kominn í Bessastaðaskóla og er þá um haustið við sætaskipun 7. að ofan í efra bekk, en 1813 er hann 4. að ofan. Heldur mun Þorleifur hafa verið óbráðþroska að líkamsvexti og væskilslegur, eftir því sem ráða er af vitnisburðarbréfi hans, er hann útskrifaðist úr Bessastaðaskóla, eftir tveggja ára skólavist þar, er síðar segir. Vorið 1813 skyldi Þorleifur taka próf, og gekk undir það, en mun ekki hafa lokið því til fulls, að minnsta kosti er vitnisburðarbréf hans eigi gefið út fyrr en þá um haustið, og var sú orsök þess, að Þorleifur hugðist að dveljast enn einn vetur í Bessastaðaskóla, en hvarf frá því vegna óhagstæðra tíma og heilsuleysis, eftir því sem segir í vitnisburðarbréfinu. Þá tóku próf sambekkingar hans og urðu margir þeirra síðar nafnkenndir menn. Þeir voru þessir: Helgi Guðmundsson Thordersen, síðar byskup, Guðmundur Bjarnason, síðar prestur á Hólmum í Reyðarfirði, Sigurður Stefánsson, amtmanns Thorarensens á Möðuvöllum (er andaðist 1817), og Ólafur bróðir hans, síðar læknir, Þórarinn Magnússon Öfjord, síðar sýslumaður í Skaftafellssýslu, Einar Pálsson, síðar prestur á Reynivöllum, Bjarni Pálsson, síðar prestur í Felli í Sléttahlíð, Sigurður frá Ljósavatni Hallgrímsson, síðar prestur á Ólafsvöllum, Þorkell Árnason, síðar prestur í Stafafelli í Lóni. Voru sumir þessara manna síðan með Þorleifi við háskólan í Kaupmannahöfn, þeir Helgi byskup, síra Guðmundur Bjarnason, þeir Stefánssynir, Sigurður og Ólafur, og Þórarinn Öfjord; virðist hafa verið góð vinátta með Þorleifi og sumum þessara manna, einkannlega Helga byskupi, og hélzt vinátta þeirra, meðan þeir lifðu.

Um haustið 1813, þann 20. októberdag, er Þorleifur útskrifaður úr Bessastaðaskóla af Jóni Jónssyni, er þá var settur lektor skólans. Hlaut Þorleifur ágætan vitnisburð; einkannlega er tekið fram, að hann sé öðrum framar hneigður til latínsk og grísk tungumálanáms. Þessir voru vitnisburðir hans:

Í latínu	}	ágætiseinkunn (ágætt lof)
grísku		
latínskum stýl		
íslenzkum stýl		
útskýringu Nýja Testamentisins		
guðfræði		
sagnfræði		
landfræði	}	I. einkunn (mikið lof)
og tölvísi		
I dönsku		
dönskum stýl		
og framburði')		

¹⁾ Vitnisburðarbréfið er enn til með eiginhendi Jóns lektors og er að finna meðal plaggja ýmsra Þorleifs Repps, sem geymd eru í Landsbólasafninu í 4 böggjum og fylgdu handritum bókmenntafélagsins, en eigi hafa enn verið tölusettir inn í handritasafnið. Þetta vitnisburðarbréf finnst eigi meðal þeirra *testimonia dimissorum*, sem Steingrímur byskup safnaði og lét skrifa upp, og er sett eyða fyrir þar (Lbs. 48, fol.). Það er á latínu, eins og títt var um slík skjöl þá, og hljóðar svo:

„Thorleivus Gudmundi Repp, natus die 6to Julii 1794, patrem colit Gudmundum Bødvaridem, sacerdotem ecclesiae Kalvatiörnensis et annexae vigilantissimum, et matrem Rosam Egili filiam.

Ornatissimus juvenis suo jam exemplo probat, quod etiam notius est quam ut multis verborum ambagibus ostendere sit necessum, saepe in gracili corpore magnum habitare ingenium, nam licet natura eum tenuibus finxerit membris, ingenii tamen dotes ei tribuit feliciores quam plurimis, qui ludi nostri litterarii alumnorum albo fuerint adscripti; quas etiam egregias animi dotes per biennium, quo nostris vacavit musis, philologiae tamen Latinae et Graecae inprimis deditus, tanta excoluit industria, ut censores, qui postremo mense Majo eum publice examinatum audivere:

in authoribus Latin: et Graecis interpret:	}	egregiae laudis
stylo Latino et Islandico		
analisi Hebraea—N: Testam: exegesi		
theologia—historia—geographia et arithmetice		
in lingua Danica interpret:	}	magnae laudis
stylo Dan: et declamat:		

encomio cohonestare non dubitarent. — Verum cum ipse et propinqui, ut adhuc unum exercitiis scholasticis consecraret annum, praeoptarent, ex numero dimissorum tunc erat exemptus, quam autem voluntatem cum

Þá var orðið svo áliðið, að eigi var Þorleifi unnt að sigla til háskólans það haust, þótt viljað hefði, því að skip öll voru þá farin frá landinu. Eigi er og víst, að utanferð hafi þá verið ofarlega í huga Þorleifs, líklegra jafnvel, að hann hafi hugsað til prestskapar; að minnsta kosti veitir Geir byskup Vídalín honum prédikunarleyfi, sem þá var títt að veita prestsefnum; er það dagsett þá um veturinn, þann 25. janúardag 1814 og er að finna í skjalaböggjum Þorleifs Repps, þeim er áður var getið.

En hvort sem það hefir þá verið áform Þorleifs að gefa sig í prestskap eða ekki, þá er það þó víst, að brátt hugði hann á annað ráð, því að árið 1814 fór hann héðan af landinu til Kaupmannahafnar til háskólanáms. Kom hann upp frá því aldrei til Íslands aftur lifandi. Eigi munu fararefni hans hafa verið mikil, og hefir þó faðir hans lagt honum þann styrk, er hann mátti, en hann var maður fátækur og skuldugur lengi, að því er hann segir sjálfur í brétum til Þorleifs sonar síns, sem enn eru til nokkur og finna má í skjalaböggjum Þorleifs, þeim er áður var getið.

Haustið 1814 gekk Þorleifur undir examen artium og hlaut einkunnina *satis bonum* og var þá innritaður í stúdéntatölu við háskólann. En árið eftir tók hann svo kallað 2. lærdómspróf (examen philosophicum). Í fyrstu tók Þorleifur að nema læknisfræði, en lagði þó einkum stund á efnafræði og eðlisfræði, og kom það síðar fram í ritum hans, að hann bar gott skyn á þessi efni. Þá var hinn nafnkunni maður *H. C. Ørsted* kennari við Kaup-

temporum varia incommoditate et insalubritate impeditus sequi nequeat, nulli nunc dubitamus adolescentem nostrum, bene moratum, quippe honesta dimissione dignum, rude scholastica donare, atque faustissimis denique eum prosequentes votis, omnibus præclari ingenii fautoribus et patronis ex animo commendamus.

Dabam Lambhusis die 20^o Octobris 1813.

J. Johnæus

Lect. theol. constit.^u

(L. S.).

mannahafnarháskóla í eðlisfræði; hann lýkur miklu lofsorði á þekking og ástundan Þorleifs í vitnisburði, sem enn er til í skjalaböggjum Þorleifs. Eigi reyndist þó Örsted Þorleifi sem bezt síðar, er Þorleifur átti þungan andröður við aðra, svo sem enn verður frá sagt. Svo var Þorleifur þá orðinn fróður í lækningum, að hann samdi ritgerð til úrlausnar vísindalegu verkefni háskólans í læknisfræði, er heiðurspeningi háskólans var heitið fyrir, en eigi mun hann hafa sent þá ritgerð til háskólans. Fyrir kom og það, að hann var látinn vera respondens, sem kallað var, eða svaramaður við dispútáziur í læknisfræði — yfirleitt var Þorleifur talinn skæður andmælandi við dispútáziur háskólans og varð oft til þess að andmæla doktorsefnum — og svo segir Byrgir prófessor Torlacius, að við doktorsdispútáziu í læknisfræði 1821 hafi Þorleifur leyst svo vel af hendi þetta starf sitt, að allir þeir, sem vit hafi haft á, hafi lokið lofsorði á frammistöðu hans.

En eigi lagði Þorleifur stund á læknisfræði lengur en tvö ár og eigi hugði hann á embættispróf í þeirri grein. Eftir það sökkti hann sér af kappi niður í heimspeki og fagurfræði. Árið 1818 var úrlausnarefni fyrir heiðurspening háskólans í heimspeki þetta: »*Exposita notionum, quas homines vocabulo naturæ exprimere soleant, varietate, eaque, quantum fieri queat, ad unum constantemque sensum revocata, diligens explicatio detur ideæ hocce vocabulo insignitæ*«. Þorleifur samdi þá ritgerð til úrlausnar þessu efni og hlaut heiðurspeninginn eftir dómi háskólakennaranna næsta ár (1819) með lofsamlegum ummælum. Þessi ritgerð hans var eigi prentuð, en hún var undirstaða undir ritgerð þeirri, er hann samdi fyrir meistaranafnbót, svo sem síðar segir.

Árið 1823 var úrlausnarefni til þess að öðlast heiðurspening háskólans í fagurfræði á þessa leið: »*At undersøge og med Exempler at oplyse, hvorvidt det er nødvendigt, at et Digt oversættes i samme Versart, hvori det er skrevet*«. Þorleifur samdi enn ritgerð til úrlausnar þessu verkefni og hlaut enn gullpening háskólans fyrir.

Þessi ritgerð hans er prentuð í Kaupmannahöfn 1824 (»Bör et Digt oversættes i samme Versart, hvori det er skrevet?«). Þótt ritgerð þessi sé stutt, sýnir hún, hve ákaflega víðlesinn Þorleifur var; hann vitnar þar jöfnum höndum til danskra, islenzkra, enskra, þýzkra, franskra, ítalskra, spænskra, latínskra, grískra og jafnvel persneskra og serkneskra skálda. Aðalniðurstaðan er sú, að eðli tungnanna sé svo farið, að eigi geti yfirleitt átt vel við að þýða kvæði í sama hætti sem frumkvæðið var ort undir, svo framarlega sem hátturinn sé eigi eiginlegur orðinn tungu þeirri, sem þýtt er á, því að langan tíma þurfi jafnan til þess að festa bragarháttu í máli, og dregur til þessa dæmi.

Nú þótt Þorleifur væri svo lærður í þessum efnum sem sjá má af því, er nú var talið, þá er þó hitt ónefnt enn, hver tungumálagarpur hann var. Svo sem sjá má af vitnisburðarbréfi hans úr Bessastaðaskóla, er hann talinn einkannlega hneigður til forntungnanna, latínu og grísku. Um annað tungumálanám var ekki að ræða í Bessastaðaskóla, nema dönsku og islenzku að nafninu til. Mér er ekki kunnugt um það, hvort Þorleifur hefir á skólaárum sínum lagt stund á önnur tungumál en þau, sem kennd voru í skólanum, en í þeim var hann og afbragð annarra manna. Hitt er víst, að þegar er hann kemur til háskólans, tók hann af alefli að leggja stund á að nema hin lifandi mál, jafnframt því sem hann las læknisfræði og síðan heimspeki og fagurfræði. Og loks síðara hluta háskóla-vistar sinnar tók hann af alhug að leggja stund á málfræðileg vísindi. Það er samhljóða vitnisburður allra háskólakennaranna við Kaupmannahafnarháskóla, að Þorleifur beri langt af öðrum stúdentum að tungumálaþekkingu. Rasmus Rask, einn hinn merkasti málvitringur, sem uppi hefir verið, hafði hinar mestu mætur á Repp, svo sem síðar mun sýnt verða. Og það vitni báru ýmsir skozkir vísindamenn og menntamenn Þorleifi síðar, er hann var á Skotlandi, að þar væri þá enginn í landi, er til jafns kæmist við hann í þekkingu hinna lifandi tungna.

En þótt Þorleifur væri snjall í lifandi málum, þá mun honum þó hafa verið enn léttara um fornmalin, og þó einkum latínu, sem hann talaði og skrifaði viðstöðulaust, og svo segir Þorleifur eitt sinn sjálfur í latínsku bréfi einu, er hann ritaði höfðingja nokkurum skozkum, að nú riti hann honum ekki á ensku, af því að illa liggi á sér og margt ami að, heldur riti hann á latínu, því að þá tungu geti hann jafnan skrifað, hvernig sem á sér liggi. En þá hafði Þorleifur verið sjö ár í Skotlandi, er hann ritaði þetta bréf, og má af þessu marka lærdóm hans í latínu; mun ekki þurfa að telja þetta skrum hjá Þorleifi, því að hann virðist hafa verið maður yfirlætislaus og ósjálfhælinn. Um 1818 er Þorleifur orðinn vel að sér í þýzku, ensku, frakknesku, ítölsku og spönsku. Þá hafði hann og talsvert lagt sig eftir Austurlandamálum, einkum serknesku og persnesku. En síðar miklu var það, að hann lagði sig eftir ungversku (magýarísku) og þeim málum, er þeirri tungu eru skyld.

Þorleifur fékk þegar mikið orð á sig í Kaupmannahöfn fyrir fróðleik og lærdóm, en þó einkum fyrir tungumálaþekking. Svo var orðstir hans mikill, að hinn frægi danski rithöfundur, *Knud Lyne Rahbek*, prófessor, fékk hann til þess að kenna sér íslensku tungu. Og í vitnisburði, sem Rahbek gefur Þorleifi og finna má meðal eftirlátinna skjala Þorleifs (dags. 13. ágúst 1821, á latínu), telur Rahbek hann allra manna lærðastan og skarpvitranastan, og getur þess jafnframt, að Þorleifur sé hið ástúðlegasta og vandaðasta ungmenni. En í latínu varð Þorleifur til þess að veita tilsögn sjálfum háskólakennurunum. Skáldið *Oehlenschläger* fékk Þorleif til þess að segja sér til í latínu, er hann var prófessor og skyldi rita ritgerð í ársrit háskólans og halda latínska ræðu á minningarhátið háskólans um siðabótina. *Oehlenschläger* farast sjálf um svo orð um þetta:

»Árið 1820 hlotnaðist mér sem prófessor að skrifa háskólaboðsritið og halda hina latínsku ræðu við siðabótarhátiðina. Eg hafði um nokkurn tíma áður aftur tekið að leggja mig eftir Rómverjamálinu, er eg hafði vanrækt

frá því að eg las lögfræði á stúdentsárum mínum. Nú las eg af kappi einkum rit Cicerós; en þó skáldin líka, og fannst mér þeirra sérstaklega mest til um Ovidius . . .

En nú skyldi eg rita latínu! Það var raunar fangaráð, ekki dæmalaust, að láta aðra gera það. En með því að mér var alla tíð andstætt að koma öðrum til þess að trúa því, að eg hefði þá leikni eða kunnáttu til að bera, sem eg hafði ekki, þá réð jeg heldur af í guðs nafni á gamalsaldri mínum (eg var þá 40 ára að aldri) að ganga í skóla aftur, taka kennara í latínunni og skrifa hjá honum stýla daglega. Þetta gerði eg líka, og herra *Repp* hjálpaði mér um eins árs tíma mjög dyggilega. Síðan getur Oehlenschläger þess, að hann hafi jafnan átt erfitt með að læra málmyndafræði og því oft sett hrottalegar málvillur í setningar. Því næst segir hann: »Þannig æfði eg mig í latínu um tveggja ára tíma, fyrst hjá herra Repp og síðan hjá vini mínum, Olsen yfirkennara (nú rektor). Eg tók einnig til að tala latínu við Repp, þegar við vorum úti á gangi og gengum út á Frederiksberg. Man eg það enn, að eg nam einu sinni staðar með honum í trjögöngunum, sem liggja utan við kirkjugarðinn á Frederiksberg, í erfðri setningu, og mundi það engum undrum hafa sætt, þótt hinir dauðu hefðu snúið sér við í gröfnum út af setningu minni«. En vel slapp Oehlenschläger frá þessari ræðu sinni og boðsríti bæði í þetta sinn og síðar, er líkt stóð á fyrir honum. (Sjá Oehlenschlägers *Erindringer*. Fjerde Bind. Kh. 1851, bls. 33—34).

Þorleifur hafði mikinn hug á því að fara til annarra landa og auka þar tungumálaþekking sína. Hann leitaði fyrir sér um ferðastyrk nokkurn til þess, úr almennum sjóðum, en enginn ádráttur var honum veittur til þess að fá nokkurn slíkan styrk, og brauzt hann þá í því sjálfur að fara utanlands á sjálfs sin kostnað. Naut hann þar þess, að hann var maður sparneytinn og neyslugrannur, og var hann að því ólíkur frændum sínum sumum. Vel mun það og hafa komið honum, að hann hafði meðferðis hin ágætustu meðmælabréf frá ýmsum hinum mætustu

vísindamönnum og menntamönnum í Danmörku; mun þetta nokkuð hafa greitt götu hans. Þetta var árið 1821 og var förlinn heitið til Lundúnaborgar; dvaldist Þorleifur þar í borginni hátt á annað ár. Leitaði hann nú að aflasér fullkominnar þekkingar í enskri tungu á ýmsan hátt. Þaullas hann nú ensk bókmenntarit, forn og ný, og var vakinn og sofinn í því að hagnýta sér þær menningarheimildir í þessari grein, er hann hafði greiðari aðgöngu að en margir aðrir útlendingar, og var það að þakka ýmsum mikilsmetnum vinum hans og hjálparmönnum, að því er hann segir sjálfur. Hann lét og eigi undir höfuð leggjast að kynna sér þær heimildir og undirstöðurit hinna eldri ensku bókmennta, er fjær mega teljast liggja. Hann las og kynnti sér vandlega í frummálunum rit hinna eldri ítölsku skálda, og sömuleiðis spænskra skálda frá dögum Filippusar konungs II. og upp þaðan, sem annaðhvort höfðu beinlínis verið fyrirmynd hinna ensku skálda eða haft meiri eða minni áhrif á stefnu þeirra, smekkvísi og menning. Það var markmið hans að koma þekkingu sinni í þessari grein í það horf, að hann næði þar heildaryfirliti og gæti skipað öllu því á réttan stað, er framkæmi í brezkum bókmenntum, en einnig að meta rétt gildi þessara bókmennta í samhengi við bókmenntir annarra þjóða.

Í Englandi dvaldist Þorleifur nú fram eftir ári 1822. Meðan Þorleifur var í Lundúnaborg, var hann til húsa hjá *David Ker*; Ker var höfðingi mikill, menntamaður og þá þingmaður í neðri málstofu parlamentsins. Kona Kers var göfugra manna, systir *Castlereaghs lávarðs*, hins nafnkunna stjórnálamanns. Segir Repp svo í bréfi til Byrgis Thorlacius, að þau Ker og kona hans hafi reynzt sér sem væri hann bróðir þeirra eða sonur; gerðist hann nú kunnugur mörgum hinum merkustu Englendingum, er komu í hús Kers, þar á meðal sjálfum *Castlereagh lávarði*, og það var þá ráð þeirra *Castlereaghs* og Kers að koma Þorleifi í prófessorsembætti, er þá var laust í Dyflinni á Írlandi, í latínu og grísku; en þetta fórst fyrir, líklega fyrir

þá sök, að meðmæli prófessoranna við Kaupmannahafnarháskóla, sem Þorleifur var talinn þurfa að sýna, munu hafa komið of seint. Síðara hluta árs 1822 hvarf Þorleifur aftur til Kaupmannahafnar og lagði leið sína um Þýzka-land og dvaldist um tíma í Altona og Kiel. Þá var vegur hans svo mikill, að hann hlaut þá sæmd »að stýra æfingum drottningarinnar [dönsku] í enskri tungu«, eins og hann kemst sjálfur að orði. Mun þessi sæmd, ef til vill, hafa orðið til þess að afla honum öfundarmanna, ásamt öðru. En þessi kynni Þorleifs af drottningunni munu hafa leitt til þess, að hann tileinkaði konungsfólkinu tvö hin fyrstu rit sín.

Um fór sína til Englands skrifaði Þorleifur þá í »Bibliothek for Morskabslæsning« (XII. bindi).

Þorleifur virðist snemma mjög hafa komið í kynni við ýmsa hinna helztu danskra vísindamanna og rithöfunda, er þá voru uppi. Hann var nákunnugur þeim *Rahbek* og konu hans, hinni nafnkunnu menntakonu, *Kamma Rahbek*, og *Oehlenschläger*. Sömu leiðis *Rasmusi Rask*. Enn fremur skáldunum *Poul Möller*, *Christian Winther* og *Christian Thaarup*, og bréf er til frá Thaarup til hans. Hann virðist og hafa tekið mikinn þátt í dönsku stúdentalífi. Hann var einn af stofnendum hins danska stúdentalfélags (den danske Studenterforening), er sett var á laggirnar 1820, og einn af aðalhvatamönnum að því, að »Athenæum« var stofnað, en svo var nefnt lestrarfélag og málfundafélag, er ýmsir lærðir menn stofnuðu með sér í Kaupmannahöfn 9. septbr. 1824; var það mjög sniðið eftir enskum félögum sams konar, og voru lög þess að mestu samin af Repp.

Þá var og Þorleifur um þessar mundir orðlagður kappræðumaður. Var hann bæði ákafur og fylginn sér og óvæginn, við hvern sem var um að eiga; vá hann aldrei orð sín eftir tign eða metorðum þess, er hann átti orðakast við, og kom það honum oft illa, því að þetta varð til þess, að ýmsir fengu óvildarhug til hans. Einkum voru doktorsefni oft skelkaðir við Þorleif, því að hann

tók oft ómjúkum höndum á ritsmiðum þeirra og sýndi fram á, að sumt var eigi þeirra, það er þeir eignuðu sér, heldur væri því hnuplað úr annarra manna ritum. Skál hér getið eins slíks atburðar vegna þess, að ætla má, að þar af hafi Þorleifi stafað óhamingja, er dró til meiri erfiðleika um lífshagi hans síðar meir, heldur en sýnast mætti í fyrsta bragði, og verið hefir undirrót þess, að hann náði aldrei að njóta sín til fulls, slíkur afburða hæflekamaður og gáfumaður, sem hann þó var.

Maður hét *Jens Möller* og var kennari í guðfræði við háskólann í Kaupmannahöfn. Hann var maður kappsamur og fylginn sér og komst skjótt til metorða; hann virðist og hafa verið allóbilgjarn og óvæginn. Hann var vel að sér um margt, og þó einkum málfróður (sjá ævi hans í *Bricka: Dansk biografisk Lexikon*). Hann mætti og vera Íslendingum að nokkuru kunnur fyrir þá sök, að hann kom á fót hér lestrarfélögum, er við hann voru kennd og kölluð »Möllersku lestrarfélögin«, og gaf til þeirra og útvegaði allmikið í bókum. Bróðir hans var og guðfræðingur og »ætlaði sér að verða doktor í guðfræði, og hafði lagt dispútázíu sína undir dóm háskólans, og hún verið dæmd verð þess í alla staði, að hann verði hana fyrir nafnbót þessari. Það var kominn saman múgur og margmenni í sal þann í háskólanum, þar sem athöfnin skyldi fram fara, til þess að hlusta á. Skömmu eftir að annar hinna tilskipuðu andmælanda hafði tekið til máls, kemur fram ungur maður, sem eg [þ: sögumaðurinn, J. Davidsen] man ekki betur en væri íslenskur stúdent [þ: Þorleifur Repp], og rogast með heljarmikinn doðrant undir hendinni, og heimtar að mega tala sem aukaandmælandi. Honum var leyft það. Fletti hann þá upp doðrantinum og sýndi fram á það, að dispútázía doktorsefnisins væri svo að segja orð fyrir orð skrifuð upp úr skruddunni. Eins og geta má nærri, rak alla í rogastanz á því líkri bíræfni. Doktorsefninu varð svo felmt við, að það var nær liðið yfir hann, og varð að styðja hann út úr salnum. Próffessorarnir, sem dæmt höfðu ritið gilt, nögudu sig í hand-

arbökin og dauðskömmuðust sín fyrir, hvernig leikið hafði verið á þá, og að þeir skyldu ekki hafa þekkt það guðfræðirit, sem dispútázían var stolin úr, einkum af því, að það kvað ekki hafa verið alveg óþekkt bók meðal lærðra manna. En — samt varð kandidatinn doktor«. (Sjá Sunnanfara, V. árg. bls. 21, og er hér upp tekið orðrétt það, sem segir um dispútáziuna, eftir sjónar- og heyrnarvotti). Þetta mun vera dispútázía sú, er Byrgir Thorlacius færir að Jens Möller og sneiðir hann um í bréfi til háskólaráðsins 14. marsdag 1826 (J. S. 96, fol). Eru í bréfinu þrjár linur útstrikaðar, en mega þó lesast af glöggum mönnum, og eru þær um þetta. Segir síðar gerr af þessu bréfi.

En af þessum tiltektum Þorleifs gerðist Jens Möller óvinur hans, og varð hann Þorleifi þungur í skauti, sem enn mun sagt verða.

Nú þótt Þorleifur væri svo kunnur meðal danskra menntamanna sem sýnt hefir verið, þá virðist hans gæta minna meðal landa sinna. Raunar hefir íslenzkt stúdentalif í Kaupmannahöfn þá eigi verið með miklum blóma og ekkert íslenzkt stúdentafélag hefir þá verið þar til. En ýmsir voru þá íslenzkir stúdentar í Kaupmannahöfn, er síðar urðu nafnkunnir menn, svo sem *Gísli Brynjólfsson*, síðar doktor og prestur á Hólmum í Reyðarfirði, *Sveinbjörn Egilsson*, síðar rektor, *Gunnlaugur Oddsson*, síðar dómkirkjuprestur. Þar voru og þá sambekkingar Þorleifs, er hann mun hafa haft mök við, *Helgi Thordersen*, síðar byskup, og *Guðmundur Bjarnason*, síðar prestur á Hólmu, og voru báðir gáfumenn miklir og lærdómsmenn. En ekki er mér annað kunnugt um samband Þorleifs við þessa menn en það, að skipzt hafa þeir á bréfum dr. Gíslis Brynjólfsson og hann. Af hinum heldri Íslendingum, sem þá voru í Kaupmannahöfn, hefir Þorleifur verið nákunnugur *Grími Thorkelin*, leyndarskjalaverði, og þó framar *Finni Magnússyni*, prófessor og leyndarskjalaverði, og jafnan studdi Finnur Þorleif síðan. En öllum öðrum fremur mun þó Þorleifur hafa verið handgenginn *Byrgi*

Thorlacius, sem var kennari við háskólann í forntungunum, latínu og grísku. Byrgir Thorlacius var sonur Skúla rektors Thorlacius, Þórðarsonar í Teigi í Fljótshlíð, Brynjólfssonar á Hlíðarenda, Þórðarsonar byskups, Þorlákssonar. Byrgir prófessor var af samtímismönnum sínum talinn hinn lærðasti maður í latínu og grísku, þótt lítið geri Madvig úr lærdómi hans í þessum efnum (sbr. J. N. Madvig: *Livserindringer*. Kh. 1887). Byrgir var öðlingur hinn mesti og valmenni; hann studdi jafnan Íslendinga og fyrirtæki þeirra og taldist til þeirra, þegar þeim mátti vera stuðning að liðsinni hans. Hann hafði mjög miklar mætur á Þorleifi Repp, og kemur það þrásinnis fram í bréfum hans og vitnisburðum, og hélt hann þeirri tryggð við Þorleif, meðan þeir lifðu báðir. Stutt mun hann og hafa Þorleif með fjárframlögum í Lundúnavist hans.

Kynni Þorleifs af þessum fyrimönnum munu hafa leitt til þess, að hann gekk í þjónustu stjórnarnefndar Árnasafns Magnússonar, þótt ekki væri hann stipendiarius, og vann ýmislegt fyrir hana, þar á meðal má geta þess, að eftir hann er hin latínska þýðing á Laxdæla sögu, sem Árnanevnd gaf út 1826.

Að öðru leyti er Þorleifs ekki getið við mál Íslendinga í Kaupmannahöfn þessi ár, og mun hann litt hafa haft sig í frammi þar. Þó er hans getið sem eins af stofnendum Kaupmannahafnardeildar bókmenntafélagsins (sjá Hið íslenska bókmenntafélag. Stofnan félagsins og athafnir um fyrstu fimmtíu árin. Kh. 1867, bls. 64). En ekki er hans getið þar í fundarbókum félagsins og ekki var hann í stjórn þess né þjónustu á nokkurn hátt. Aftur á móti er hans oft getið í fundarbókum félagsins eftir að hann kom frá Skotlandi síðar, og lét hann þá félagsmál allmjög til sín taka, og var lengi varaforseti deildarinnar (frá 27. mars 1839 til 26. apríl 1847). Og heiðursfélagi var hann kjörinn af Kaupmannahafnardeildinni (²⁶/₄ 1847).

Þegar Þorleifur var kominn úr Englandsför sinni 1822 hélt hann enn áfram málfræðanámi um nokkur ár og lagði nú ekki að eins stund á enskar bókmenntir, heldur

málfræðileg vísindi í heild sinni, og kynnti sér þá ýmis tungumál Asiupjóða, í því skyni að bera saman gerð og myndir þeirra tungna við tungur Norðurálfupjóða og geta rakið þróunarsögu málanna fram um þúsundir ára. Ávöxturinn af þessum rannsóknum Þorleifs varð rit það, er hann nefndi *De sermone tentamen*. Þar skýrir hann uppruna tungna og rekur saman orðmyndun og málmyndir í ýmsum tungum. Rit þetta ætlaði hann til dispútáziu fyrir meistaranafnbót og sendi það til háskólans. Eins og venja var til, setti heimspekideildin dómara til þess að dæma um dispútáziuna, og urðu fyrir því kjöri þeir Byrgir prófessor *Thorlacius* sem málfræðingur og *P. E. Müller*, er þá var dózent í heimspeki, sem heimspekingur. Þeir luku lofsorði á ritgerðina og lögðu til þess, að hún væri tekin gild og höfundinum leyft að verja hana fyrir meistaranafnbót. Var ritgerðin síðan prentuð og tiltók þá verandi dekanus heimspekideildarinnar, *G. Wad*, að vörnin skyldi fara fram þann 6. febrúardag 1826, og var sú tilkynning eða auglýsing birt með ritgerðinni, svo sem tíðkast við dispútáziur. Bjóst nú enginn við öðru en að dispútázian mundi fara eins og venja var til, því að aðalatriðið var að fá leyfi til þess að verja ritgerðirnar; þar með var björninn unninn, og enginn hafði verið gerður afturreka við Kaupmannahafnarháskóla, fram til þessa tíma, eftir að svo langt var komið, að leyft var að verja dispútáziur.

En nú vikur sögunni til Jens Möllers. Hann mundi Þorleifi meðferðina á bróður sínum og hugði nú að launa honum lambið grá. Hann fór þess á leit að vera skipaður reglulegur andmælandi við dispútáziuna og mun hafa fengið því framgengt, að honum væri falinn sá starfi, að minnsta kosti kom hann fram við dispútáziuna sem væri hann það. Segir Byrgir *Thorlacius* svo frá, að hann hafi nokkurum dögum áður en dispútázian fór fram í margra manna viðurvist tekið það fram við Jens Möller, að lögskipuð andmælandastörf yrðu ekki látin af hendi við hvern sem væri. Jens Möller bauðst til þess að taka við

af Byrgi Thorlacius andmælandastarfinu, en Byrgir neit-
aði því, og bar það fyrir, að Jens Möller væri guðfræð-
ingur, og hæfði því ekki, að hann tæki að sér starf, sem
málfræðingi bæri, og kvað P. E. Müller ekki heldur geta
látið andmælastarf sitt sem heimspekings af hendi við
hann af sömu ástæðu. Byrgir benti Jens Möller á það,
að honum væri heimilt sem öðrum að andmæla meistara-
efninu úr áheyrandasæti sem aukaandmælandi. En Jens
Möller hefir ekki þótt með því geta náð sér nægilega
kröftuglega niðri á Þorleifi. Svo kom, að Jens Möller
varð ásamt Byrgi Thorlacius reglulegur andmælandi við
dispútáziuna eða var að minnsta kosti talinn svo af stjórn
háskólans, þrátt fyrir andmæli Byrgis Thorlacius, er taldi
hann óbæran til þessa starfs í bréfi sínu til háskólastjór-
narinnar eftir á, og dóm hans í þessu efni því mark-
lausan.

Nú rann upp 6. febrúardagur og hófst þá dispútázian
kl. 10 um morguninn og stóð til kl. 3 um daginn við-
stöðulaust. *Magnús* konferenzráð *Stephensen* í Viðey var
í Kaupmannahöfn þenna vetur og var viðstaddur, þegar
dispútázian fór fram. Hann hefir lýst henni nokkuð í
Ferðarollu sinni, sem prentuð er í Sunnanfara, IX.
árgangi (sjá bls. 88 og 95). Þar virðist mjög hallað mál-
um Þorleifi í óhag, og virðist svo sem Magnús hafi bor-
ið kala til Þorleifs; víst er um það að minnsta kosti, að
sira Guðmundur, faðir Þorleifs, taldi Magnús óvinveittan
sér í bréfi til Þorleifs, dags. þann 15. ágústdag 1818¹⁾.
Fyrir því mun ekki rétt að leggja mikið upp úr né taka
mark á þessum dómi Magnúsar. Þar á móti hefi eg ver-
ið svo heppinn að finna í handritasafni Jóns Sigurðssonar

¹⁾ Sira Guðmundur getur þess þar, að hann muni eiga kost á því
að fá sér veitta Garða á Akranesi, og er hikandi, hvort hann eigi að
þiggja þá eða eigi, og segir: „ . . . veit eg þó ekki, hvað eg gerði, ef
hið almáttuga íslenska konferenzráð væri ekki víst til að spilla fyrir
mér vegna fósturu sinnar og gera mér og eftirkomendum Garðabraud og
bújörð aldeilis óviðtakanlegt.“ — Bréf þetta er að finna í skjalaböggllum
Þorleifs.

(JS. 96, fol.) bréf frá Byrgi Thorlacius til háskólastjórnarinnar, þar sem hann skýrir þetta mál rækilega. Eftir því bréfi verður hér farið að mestu í því, er sagt er frá dispútáziu þessari. Annað bréf er og í sama böggli frá Byrgi Thorlacius til Jens Möllers, og er það prentað sem fylgiskjal aftan við grein þessa.

Jens Möller hóf andmæli sín á því, að ekkert gagn væri í ritgerðinni frá upphafi til enda og að hún væri til óvirðingar háskólanum; þessi ummæli hans voru þeim mun óvirðulegri í garð heimspekideildarinnar sem bæði hafði dekanus sett aftan á titilblaðið hina venjulegu klausu: *Dignum censuit facultas philosophica* (þ. e. heimspekideildin metur ritgerðina verða [varnar]). Þar með var og veitst mjög að hinum sérstöku dómendum ritgerðarinnar, þeim Byrgi Thorlacius og P. E. Müller. Þessi orð Möllers þóttu og áheyrendum all-ósvífin í þeirra garð. Og Byrgir Thorlacius segir í bréfi því, er fyrr getur, til háskólastjórnarinnar, að æskilegt væri, ef slíkt og þvilíkt kæmi fyrir framvegis, að rektor háskólans stæði þá upp og segði: *Absit impudentia!* (þ. e. burt með alla ósvífni!, orð, sem mælt er, að rektorinn hafi sagt við Þorleif Repp, síðar í dispútáziunni).

Í annan stað hélt Jens Möller því fram, að svo ill latína væri á ritgerðinni, að þar væri að finna 600 villur. Þetta var jafnframt hin svæsnasta árás á Byrgi Thorlacius, sjálfan prófessorinn í latínu, sem dæmt hafði ritgerðina gilda. Byrgir kveðst og í fyrr nefndu bréfi sínu munu reyna að vernda sig fyrir slíkum sleggjudómum framvegis. Hann getur þess þar og, að allir, sem vit hafi á latínsku máli, játi það, að einmitt nærgætin meðferð latínunnar ágæti höfundinn og einkenni frá öllum fjölda þeirra, er á latínu rita, og að í ritgerðinni sé að finna 5—6 hirðuleysisvillur og fáeinar sérkreddur.

Auk þessa fann Jens Möller að því, hvornig titilblaðið væri orðað, og enn fremur að tileinkuninni (ritið var tileinkað Christian Frederik, þá prinzi, síðar konungi) og útbýtingu eintakanna, sem allt máttu teljast smámunir og:

ekki hafði verið fundið að af dekanusi deildarinnar. Undir sumt af þessu tók og rektor háskólans, sem þá mun hafa verið *H. C. Ørsted*, og er Þorleifur bar sig upp undan þessu og kvaðst ekki þekkja lagaboðin um þetta efni, enda hafði þeim og ekki verið stranglega fylgt, lét Ørsted því um svarað, að ef hann hefði nokkur mótmæli fram að bera, gæti hann sent kæru. Byrgir Thorlacius fann að framkomu rektors í fyrr nefndu bréfi og kvað stúdentana eigi vera þræla, heldur borgara, þegna konungs, en eigi prófessoranna, og væri skylt að sýna þeim lögin, er þeir krefðust þess.

Byrgir Thorlacius ber Jens Möller beint á brýn, að hann hafi sótt eftir andmælandastarfinu í þeim einum hug að gera meistaraefninu mein (*animus nocendi*); hann getur þess og, að útlendingur einn, sem var viðstaddur athöfnina, hafi spurt, þegar Jens Möller hóf andmæli sín, hver væri þessi óði maður, og er honum var sagt, að þetta væri prófessor í guðfræði, hafi hann sagt: »Unmöglich«! (þ. e. það getur ekki verið!).

Því má nærri geta, hvernig Þorleifi Repp hefir verið innanbrjósts, meðan Jens Möller lét dæluna ganga yfir honum. Sá annmarki var á Þorleifi, að ef hann reiddist eða gert var á hluta hans að ósekju, setti að honum hlátur, og var honum það ósjálfrátt; og svo fór nú einnig. Þetta spillti stórmjög fyrir honum. Og er hann stóð upp til þess að andmæla Jens Möller, þá fekk hann lítt neytt tungutaks, og hafði hláturinn allmjög vald yfir honum, svo að vörn hans fór nokkuð í handaskolum, en hann maður einarður og berorður og kunni ekki að smjæðra né skriða. Svo kom að lyktum, að rektor rak Þorleif úr forsæti, að mælt er, með þessum orðum: »Absit risus, absit scurrilitas! Descende ex cathedra, scurra!« (þ. e. burt með hlátur, burt með fíflaskap! Farðu burt úr forsætinu, fífl, sjá Sunnanfara, V. árg. bls. 21). Þessi framkoma Þorleifs varð honum þyngst til áfellis, og svo telur Byrgir Thorlacius í fyrr nefndu bréfi, en getur þess jafnframt til málsbóta, að hér sé um ósjálfráðan annmarka að ræða.

Sama sagði P. E. Müller á fundi heimspekideildarinnar eftir á, en hann var nákunnugur Þorleifi. Byrgir bendir og á það, að ef slíkir ósjálfráðir líkamlegir gallar eða áskapaðir annmarkar ættu að ráða svo miklu að hamla háskólanafnbótum mönnum til handa, þá mundi hinn nafnkunni prófessor Schiellerup í Noregi (sem stamaði) aldrei hafa getað orðið doktor, og eigi heldur Rasmus prófessor Rask, ef honum kæmi nokkurn tíma til hugar að sækjast eftir þeirri sæmd. Byrgir getur þess einnig, að sjálf vörnin sje ekki skilyrði fyrir því að öðlast nafnbótina, heldur sé hún sett til þess að sýna það, að meistaraefnið hafi ekki stolið ritgerðinni, en það dirfðist enginn að bera Þorleifi á brýn, hvorki Jens Möller né aðrir.

Eftir að vörnin hafði farið fram, sendu þeir Byrgir Thorlacius og Jens Möller hvor um sig álit sitt til heimspekideildarinnar. Lagði Byrgir með því, að Þorleifur fengi nafnbótina, en Jens Möller á móti. Síðan voru greidd atkvæði um málið í heimspekideildinni, og voru 8 atkvæði með því, að vörn Þorleifs væri tekin gild og honum veitt nafnbótin, þar af vildu þó 2 láta veita honum áminning, en 6 atkvæði á móti. En svo segir Byrgir Thorlacius í áður nefndu bréfi, að 5 af þessum 6, sem atkvæði greiddu á móti, hefðu alls eigi lesið ritgerðina, og hefði einn þeirra játað það bæði munnlega og skriflega, en hinir 4 mundu og játa það, ef spurðir væru að viðlögðum drengskap. Háskólaráðið virðist og hafa verið meðmælt Þorleifi, en yfirstjórn háskólamálanna felldi þann úrskurð með bréfi til háskólaráðsins þann 7. marsdag 1826, að Þorleifi skyldi synjað um nafnbótina. Ástæður, sem tilfærðar eru í því bréfi, eru fyrst og fremst álit Jens Möllers og í annan stað telur stjórnin ekki fullnægt 3. gr. tilskipunar um háskólamál 9. jan. 1824, að því leyti sem atkvæði féllu á móti Þorleifi í heimspekideildinni. Byrgir Thorlacius undi hið versta við þenna úrskurð, og það leiddi til þess, að hann skrifaði háskólaráðinu bréf það, sem fyrr er um getið, og Jens Möller skrifaði hann annað, sem prentað er hér fyrir aftan. Má af því sjá, hve

pungt Byrgi féll þetta mál, að hann hefir við orð að segja sig úr háskólaráðinu. Hið fyrr nefnda bréf þykir, því miður, of langt til þess að prentast hér.

Svo lyktaði þá þetta mál, en metinn var Þorleifur jafnan síðan sem magister artium, hvar sem hann fór. Síðar meir, er Þorleifur var aftur kominn til Kaupmannahafnar úr Skotlandi, leitaði hann að fá réttning sinna mála, en H. C. Ørsted, sem var rektor háskólans 1842, synjaði honum jafnvel um endurrit af skjölum þeim, er málið vörðudu, og Þorleifur bað um, öðrum en sjálfum úrskurði yfirstjórnar háskólamálanna, er hann gat eigi skorast undan að senda. Og 1845 synjar háskólaráðið Þorleifi um að veita meðmæli sin með því, að honum yrði þá veitt meistaranafnbótin. (Þessi bréf eru í skjalaböggjum Þorleifs).

Meðan þessu fór fram, var Þorleifur á förum úr Danmörku. Svo var mál með vexti, að yfirstjórn bókasafns merks í Edinborg á Skotlandi, þess er nefnist Advocates' Library, hafði boðið Rasmusi Rask, hinum fræga málvitringi, bókavarðarstöðu við safnið; hafði Rask þá enn lág laun fyrir störf sín í Kaupmannahöfn. Jafnframt hafði bókasafnsstjórnin falið Rask, svo framarlega sem hann vildi ekki þekkjast þetta boð, að útvega safninu í sinn stað mann, sem hann teldi vel hæfan, einkannlega hefði góða þekking á lifandi málum, því að hörgull væri á slíkum mönnum í Skotlandi, þeim er völ væri á til þessa starfs. Rask þá ekki boðið, enda varð hann um það leyti eða skömmu síðar prófessor við Kaupmannahafnarháskóla, en í sinn stað benti hann bókasafnsstjórninni á Þorleif Repp, sem hann taldi afbragð annarra manna í tungumálaþekkingu. Sýnir þetta bezt, hverjar virðingar Rask hafði á Repp, þótt nokkuð kunni að hafa um ráðið ást Rasks á Íslandi og góðvild hans við Íslendinga. Þorleifur tók þessu boði og var þetta bundið fastmælum fyrir árslok 1825, svo að stöðuna hafði Þorleifur fengið áður en dispútázian fór fram. Kjörin voru þau, að Þorleifur skyldi hafa að árslaunum 150 sterlingspund (2700 kr.), eins og Rask hafði verið boðið; laun voru

honum greidd þá frá nýársdegi að telja (1826), og skyldi starf hans aðallega fylgið í skrásetningu, uppröðun bóka og þó einnig afgreiðslu og lestrarsalsumsjá, eftir þörfum safnsins; þó var starfið veitt honum að eins til bráðabirgða, enda talinn undirbókavörður (eða assistant keeper, svo sem Bretar kalla), svo að yfirstjórn safnsins gat vikið honum frá starfinu, þegar hans þætti ekki lengur þörf.

Þegar lokið var dispútáziunni, fór Repp úr Kaupmannahöfn til starfs síns í Edinborg; fór hann um Hamborg, Rotterdam og Lundúnaborg. Í Edinborg dvaldist hann nú það, sem eftir var vetrar og fram á sumarið; en fekk þá tveggja mánaða orlof til þess að bregða sér til Danmerkur og vitja konuefnis síns, er hann þá gekk að eiga; var kona sú dönsk, Nicoline Petrine Thestrup að nafni (sjá Erslevs Forfatter-Lexicon, Supplement). Engi deili kann eg á þeirri konu, en margt göfugra manna og merkra hefir verið í Danmörku með þessu nafni (Thestrup); þá rækt sýndi hún föður Þorleifs, að hún skrifaðist á við hann, þótt hann væri henni ókenndur, svo sem sjá má í bréfum síra Guðmundar, þeim er fyrr var getið. Svo segir Mattías skáld Jochumsson, er sótti þau hjón heim, þegar hann dvaldist fyrst í Kaupmannahöfn, að kona Repps hafi verið fyrirmannleg og prúð að sjá, og þó smávaxin. Börn nokkur áttu þau saman. Eru tvö þeirra — ef fleiri hafa verið — nefnd í stúdentali Brynjólfs kaupmanns Benedictsens (í Lbs. 394, 4to, við nr. 119), dóttir og sonur; er dóttirin nefnd þar Rósa Anna Elisabeth Saga (er fyrsta nafnið móðurnafn Þorleifs), en sonurinn Skarphédinn. En eigi er mér neitt kunnugt um þau annað, og eigi hafa aðrir getað frætt mig neitt um þau, þeir er eg hefi til spurt og líklegastir voru til að vita eitthvað um þetta.

Í Edinborg dvaldist Þorleifur nú um 11 ára bil. Auk bókavarðarstarfsemi sinnar vann hann ýmislegt annað, því að alla ævi var hann iðjumaður mikill. Hann mun hafa fengizt nokkuð við tungumálakennslu, en þó mest við ritstörf. Liggur eftir hann hinn mesti fjöldi ritgerða ýmislegs efnis í enskum og skozkum tímaritum á þessum

tíma og yrði þær hér of langt upp að telja (sjá Erslevs Forfatter-Lexicon og Supplement). Stóðu honum opin hin merkustu tímarit og blöð Breta, svo sem *Morning Herald*, *Blackwoods Magazine*, *Scottish Litterary Gazette*, *The Caledonian Mercury* o. fl. Auk þess ritaði hann greinir í alfræðiritin *Penny Cyclopedia* og *Encyclopedia Britannica* (um bókmenntir Dana í greininni »Denmark«). Lýsti það sér hér í, hve Þorleifur var ákaflega fjölfróður og viðlesinn.

Eigi hafði Þorleifur verið lengi í Skotlandi áður en hann fekk mikið orð á sig fyrir lærdóm. Rekið hefi eg mig á það oftár en einu sinni, að ýmsir eigi ómerkir rithöfundar brezkir leituðu ráða til hans. Og svo slyngur latinumaður þótti hann þar, að ósjaldan voru til hans sóttar leiðbeiningar um réttan rithátt og setningaskipan í latínu af mönnum, sem taldir voru prýðilega lærðir menn. Þessi ár samdi Þorleifur allanga ritgerð: *A historical treatise on trial by jury, wager of law and other coordinate forensic institutions, formerly in use in Scandinavia and in Iceland*, — þ. e. söguleg ritgerð um kviðdóma á Norðurlöndum, samanburður og fyrirkomulag þeirra, rakið eftir hinum fornu lögbókum Svía, Norðmanna, Íslendinga og Dana og síðan saga þeirra fram eftir öldum. Þetta rit kom út í Edinborg 1832. Þetta þótti allmerkt rit og var skömmu síðar þýtt á þýzku (gefið út í Freiburg 1835); hlaut Þorleifur lof í þýzkum blöðum, enskum, frakkneskum og dönskum fyrir ritið. Síðar meir varð þó einn þýzkur maður til þess að finna að ritinu, en lítt mun það hafa verið með rökum. Þá fekkst og Þorleifur þessi árin allmjög við að þýða á ensku þýzk guðfræðirit alllöng (sjá Erslevs Forfatter-Lexicon og Supplement), og fekk sæmileg ritlaun fyrir. Auðvitað mun hann hafa tekið þær þýðingar að sér til þess að bæta kjör sín, en jafnframt sýnir þetta, hvert traust bóksalar báru til hans í meðferð enskrar tungu.

Í þekkingu íslenzkrar málfræði og fornfræði bar Þorleifur mjög af öðrum sinna samtímismanna, og þegar hann

ritaði íslenzku, þá skar orðbragð hans sig mjög úr og var ólíkt því, sem aðrir menntamenn íslenzkir rituðu í þá daga. Málið var hjá honum breint og fagað, hugsunin ákaflega skýr og skipuleg, en orðalag og orðaval jafnan fært til hins forna máls, eigi ósvipað því, er Gisli skólakennari Magnússon ritaði síðar. Þorleifur hafði, svo sem áður er getið, á háskólaárum sínum þýtt Laxdæla sögu á latínu, en auk þess þýddi hann þá og á dönsku ýmsar af forn-sögum vorum og þó einkum þáttum; birtust þær þýðingar í tímaritunum »*Dansk Minerva*« og »*Tilskueren*«. Auk þess ritaði hann þá greinir um fornþekktir vorar í »*Nyeste Skilderie af Kiöbenhavn*« og »*Lidskjalf*«, ritdóma o. fl. Það segir sig sjálft, að í þessum fræðum varð Þorleifur eins konar æðstiréttur í Skotlandi, og í tímarit skozk og ensk skrifaði hann ýmislegt um þessi efni, þó einkum í »*Archæologica Scotica*«. Þá gerði Þorleifur þann fund, er merkur þótti og hann hlaut mikið lof fyrir. Rúnasteinn mikill var í Ruthwell, sem þar við er kenndur, og höfðu hinir helztu lærdómsmenn á þau fræði með Bretum spreytt sig á því að ráða rúnarnar, en enginn getað, svo að hlitanda þætti við skýringarnar, alt til þess er Þorleifur kom til sögunnar; hann fékk ráðið letrið á steininum, sýndi, að það var skráð með engilsaxnesku rúnastafrófi, sem við Exeter er kennt, og væri málið sambland af engilsaxnesku og norrænu. Þetta telur *Finnur* prófessor *Magnússon* vera einn þann merkasta fund, er gerður hafi verið, lútandi að sameinaðri sögu Norðurlanda og Bretlands hins mikla. *Finnur* ritaði síðar ritgerð um steininn og fylgdi fram kenningum Þorleifs (sjá *Annaler for nordisk Oldkyndighed*, 1837, sbr. enn fremur vitnisburð Finns um Þorleif, dags. 1. febr. 1839, sem finnst í skjalaböggjum Þorleifs).

Árið 1834 voru laus tvö prófessorsembætti við háskólan í Glasgow, annað í latínu og grísku, hitt í lifandi málum. Þorleifur hafði hug á að ná í annaðhvort þessara embætta, einkum fornmalakennsluna. Urðu þá ýmsir vinir hans, höfðingjar og vísindamenn með Skotum, sumir ótilkvaddir, til þess að senda meðmæli sín með því, að

Þorleifi yrði veitt annaðhvort embættanna. Þorleifur lét prenta suma þessara vitnisburða til þess að senda með umsókn sinni (*Certificates in favour of Mr. Thorleif Guðmundsson Repp, A. M.*). Það er ekki neitt smáræðishól, sem Þorleifur hlýtur þar fyrir lærdóm sinn, t. d. segir hinn nafnkunni maður, Sir *William Hamilton*, að sú sé skoðun sín, að Þorleifur hafi svo viðtæka málfræðapekking. að enginn maður í öllu Bretaveldi komist þar til jafns við hann. Segist hann hafa heyrt hann tala frakknesku og ítölsku viðstöðulaust, og lík haldi hann, að þekking hans sé í spönsku og portúgölsku og í lifandi málum yfirleitt. En í latínu og grísku sé hann frábærlega vel að sér og kunni til fullnustu ýmsar Austurlandatungur, einkum hebrezku og serknesku. Hann hælir og Þorleifi fyrir geðgæði og þrúðmennsku. Sama vitnisburð bera Þorleifi og ýmsir menn, er hjá honum höfðu lært (t. d. Mont-Stuart Elphinstone) og segja, að hann sé bæði ljúfur kennari, þolinmóður og laginn. Prófessor John Wilson í Edinborg segist engan mann þekkja, er svo margar tungur kunni og svo vel sem Þorleifur. Segist hann oft hafa til hans leitað til þess að fá skýringar lútandi að grískum eða latínskum rithöfundum, og jafnan hafi Þorleifur getað veitt úrlausn, hvort sem um skáld, heimspekinga, mælskumenn eða sagnaritara var að ræða. En lifandi tungur tali Þorleifur flestar svo reiprennandi sem hann væri innborinn maður hverrar þjóðar. Þessu líkir eru vitnisburðir annarra manna. En allt um það hlaut Þorleifur hvorugt embættið; mun það bæði hafa orðið honum þröskuldur í vegi, að hann var útlendingur, því að þeim er metorðaleið jafnan örðug í Bretlandi, og enn hitt, að ekki var trútt um, að Þorleifur væri í nokkurri óvináttu við einn mann, er miklu réð við bókasafnið og líklega heflr verið leitað til umsagnar um Þorleif. Er og eigi ólíklegt, eftir lundarfari Þorleifs, að einhverir fleiri hafi borið kala til hans, því að geði hans var svo farið, að hann var allra manna hreinlyndastur og svo berorður, að nærri hélt ósvifni, eigi sízt við þá menn, er mikillátir voru og hon-

um þóttu eigi hafa manndóm til að vera það, er þeir létust vera. Og af skoðun sinni lét hann aldrei við hvern sem hann átti skipti, ef hann hugðist hafa á réttu að standa. Slikir menn verða sjaldan vinsælir.

En nú er að segja frá starfsemi Þorleifs við bókasafnið. Safn þetta (The Advocates Library) er aðalbókasafnið í Edinborg, bókasafn háskólans þar; þótt það sé aðallega ætlað lögfræðingum og sé stjórnað af lögfræðadeild háskólans, þá er mönnum almennt þó mjög greitt um að fá rit þaðan, og á safnið bækur í öllum greinum, þótt það heiti þessu nafni. Safnið er allgamalt og fjölskrúðugt. Þegar Þorleifur kom að því, hafði það að geyma 150000 binda, að því er talið var. Þorleifur hafði búizt við því, er hann kom að safninu, að hann yrði settur til hinna meiri háttar bókasafnsstarfa, einkum skrásetningar, því að til hinnar einfaldari bókasafnsstarfsemi, afgreiðslu og þess háttar, var litil þörf að sækja mann til safnsins í önnur lönd. En þessi von brást Þorleifi algerlega. Hann var fyrst settur í það verk að skrifa upp bókaskrá safnsins, og það oftast en einu sinni, og afgreiðslu var hann látinn hafa á hendi, þegar einhvern afgreiðslumannanna vantaði. Síðar var honum falin afgreiðsla og umsjá með sögudeild safnsins og enn þar við aukið lagadeildinni. Var Þorleifur allóánægður yfir því að sinna svo óveglegum störfum, er honum þóttu, og ritaði yfirstjórn bókasafnsins bréf um það. Var honum þá fyrst falið á hendur að skrásetja bókasafn þýzks manns nokkurs, er safnið hafði keypt, og síðar sams konar safn spánverskt, og raða þeim viðaukum upp í hillur. Þá gerði og Þorleifur skrá yfir Norðurlandahandrit þau, er safnið átti, sem flest munu hafa verið komin frá Finni prófessor Magnússyni.

En eigi hafði Þorleifur lengi verið við safnið, áður en greinir urðu með honum og yfirmanni þess, dr. *David Irving*. Þorleifur þóttist vera settur til minni háttar starfa en um var samið, en dr. Irving kvað hann illa gegna þeim störfum, er honum var trúað fyrir, og óhlýðnast

fyrirmælum sínum. Þorleifur hafði og dæmt um ritverk eitt, er dr. Irving sá um, í blaði einu skozku og eigi orðið sammála honum um sumt. Enn hafði og Þorleifur borið nokkur ummæli dr. Irving, er hann hafði haft um annan mann í viðurvist Þorleifs og til kala leiddu. Ber Þorleifur dr. Irving illa söguna í bréfum til föður síns, þykir hann lítt lærður og þó mikill af lærdómi sínum. En líklegt er, að Þorleifur hafi hér, sem oftast, ekki kunnað stjórn geðsmuna sinna og gert að tilfinningamálum það, er í upphafi voru smámunir einir, vegna ofurkapps síns og vanstillingar. Lenti nú í kærumálum milli þeirra dr. Irving og Þorleifs og komu til gerðar yfirstjórnar safnsins. Lá við, að Þorleifi yrði vikið frá starfinu, og kvað yfirstjórnin það ærið til saka, að forstöðumaður safnsins væri óánægður með hann og starfsemi hans, þótt ekkert hefði hann til saka unnið. En þó var honum sýnd sú linkind, mest vegna þess, að hann var útlendingur, að hann fékk að halda starfinu til bráðabirgða, og var það síðan endurnýjað og honum haldið enn um nokkur ár við safnið. Þeir, sem nánara vilja kynnst þessu efni, geta lesið *Report of the Committee appointed by the Faculty on 24th January 1829 to inquire into the matters stated in Mr. Repp's Memorial*, sem prentað er í Edinborg 1829, og sömuleiðis *Statement to the Faculty of Advocates, by Thorl. Guðm. Repp . . .*, prentað sama staðar 1834. Það er auðskilið mál, að Þorleifi gat tæplega verið vært við safnið, þess að hann væri til lengdar í fjandskap við forstöðumann þess. En er Þorleifur hvarf úr Edinborg, fékk hann samt prýðilegan vitnisburð bæði frá lögfræðadeildinni og yfirstjórn bókasafnsins, þótt ekki hefði hann beiðzt þess, og er honum hælt þar bæði fyrir verðleika í þarfir bókmenntanna, fyrir starfsemi sína, sem honum var trúað fyrir, og mjög vandaða breytni. Þar með fylgdu og meðmæli frá nærfellt 200 hinna mest metnu lögfróðra embættismanna og lögfræðinga. Þetta, sem hér segir, er tekið úr vitnisburðarbréfi frá Finni prófessor Magnússyni, dags. 1. febr. 1839, því að sjálf meðmælin hefi eg eigi séð.

Í septembermánuði 1837 fluttist Þorleifur alfarinn úr Edinborg eftir 11 ára þarvist. Var honum bæði fyrr og síðar allt það kærast, er brezkast var, og kemur það víða fram, og mjög sömdu þau hjón sig að síðum Breta jafnan í hýbýlum og öllum viðtökum og viðurgerningi innan gátta.

Þorleifur settist nú að í Kaupmannahöfn og átti þar síðan heima, það sem eftir var ævinnar. Gaf hann sig mest við kennslu og varð gott til lærisveina, sem við mátti búast, svo frægur tungumálamaður sem hann var; bar og eigi á vanstillingu hans, er hann kenndi, og svo segja margir, að þá hafi hann verið manna ljúfastur. Sama ár sem Þorleifur settist að í Kaupmannahöfn fekk hann leyfi til þess að halda fyrirlestra við háskólann þar um enska tungu og bókmenntir. Hann vildi verða lektor við háskólann í þessum fræðum, en eigi var þeirri ósk hans sinnt, þótt oft færi hann þess á leit og margir hinna merkustu manna væru því fylgjandi. Mun það eigi hafa litið spillt fyrir honum, að hann gerði alla tíð mjög litið úr hinni dönsku þjóð og fann Dönum fátt eða ekkert til ágætis; eru margar sögur til um meinleg orð hans og ummæli í garð Dana, en eigi hirði eg að greina neitt þess konar hér. Þess gætir og eigi í ritum Þorleifs; jafnan er hann minnst á Dani í riti, ber hann þeim vel söguna, og telur Danmörk fósturjörð sína. Danskur var og sá maður, er Þorleifur mat mest allra manna, jafnan er hann minntist hans, en sá maður var *Rasmus Rask*. Þetta má þó ekki meta til sleikjuskapar hjá Þorleifi, því að flestum mönnum var hann kröfuharðari til Dana um sjálfstæðismál Íslands, er hann tók að gefa sig við þeim málum, svo sem síðar segir.

Eigi vildu og heldur stjórnarvöld Dana, þau er hlut áttu að máli, veita Þorleifi uppreisn fyrir meðferðina á honum í dispútáziu hans fyrrum, þótt hann æskti þess, sem fyrr segir. En löggiltur túlkur varð hann í ensku og þýzku í Kaupmannahöfn 12. december 1839 og hélt því starfi upp þaðan. Hafði hann drjúgar tekjur af því,

mest vegna þýðinga á þessi mál, er honum voru á hendur fólgnar, þeirra er mikið þótti undir, að vandaðar væru. Kennslu hafði hann og á hendi við ýmsa skóla í Kaupmannahöfn, og frá 1. nóvbr. 1843 varð hann fastur kennari við *Det practiske Handels-Academi* þar. Þessi ár fekkst hann og nokkuð við útgáfu kennslubóka. Hann þýddi og jók hina dönsku *málfræði Rasks* á ensku; var hún síðan mest notuð við dönskunám í Bretlandi. *Lestrarbók í ensku* (English stories) gaf hann út, og urðu þrjár útgáfur af henni. *Orðabók á ensku og dönsku* gaf hann út 1845 með manni þeim, er Ferrall hét. Þótti sú orðabók góð á þeim tíma, og kom síðar út 2. útgáfa hennar. Árið 1852 gaf hann út úrvals-kvæðasafn enskt með skýringum á dönsku neðanmáls (*Select poems*).

Yfirleitt hné viðleitni Þorleifs mjög í þá átt að breiða út í Danmörku þekking á enskri menntun og menningu, og varð honum töluvert ágengt í þessu efni. Hann lét sér ekki nægja að vekja þekking Dana á tungu og bókmenntum Breta, heldur ritaði hann tíðum í dönsk blöð um framkvæmdir Breta i verklegum eignum, húsagerð, heilbrigðismál, endurbætur í akuryrkju o. fl., og varð þannig að nokkru leyti til þess að efla nánari sambönd og samgöngur milli Dana og Breta, er síðar leiddu til hinna miklu verzlunarviðskipta, er Danir tóku að hafa við Breta og hafa haft.

Hinum æðri málfræðivísindum sinnti Þorleifur þar á móti lítt þessi ár, enda mun hann lítt hafa haft tíma til þess sökum annríkis við kennslu og áhuga á almennum málum. Þó kom út frá honum rit, er rekur saman ungversk orð og norræn (*Dano-magyariske Optegnelser*, Kh. 1843). Nokkuð ritaði hann og um norræna fornfræði og þýddi íslensk fornrit (í *Memoires de la Société Royale des Antiquaires du Nord*, *Antiquarisk Tidsskrift* og *Annaler for nordisk Oldkyndighed og Historie*).

Þorleifur var mjög svo eindreginn í skoðunum og lá ekki á þeim; hann var og framfaramaður mikill og trúaður fast á umbætur mannkynsins. Því var ekki að undra,

pótt hann hefði hug á almennum málum og gæfi sig við þeim. Jafnvel meðan hann var í Edinborg hafði hann í huga að gefa út dagblað og sendi út boðsbréf um það (1829). En ekki varð þó af þessu fyrirtæki. En er Þorleifur var aftur kominn til Kaupmannahafnar, tók hann ásamt öðrum störfum sínum að gefa sig við blaðamennsku. Var hann um tíma ritstjóri blaðs þess, er »*Dagen*« hét (1838), og samdi hann blaðið mjög að hætti brezkra blaða. Síðan ritaði hann jafnan drjúgum í ýmis dönsk blöð.

Árið 1848 er merkt ár í sögu Danmerkur, sem annarra þjóða. Þá gekk sú alda um Norðurálfu, er losaði um margt það, er lengi hafði staðið, og skolaði burtu, en bar með sér nýjar hugsjónir um stjórnarfar og mannfrelsi. Munu þeir þá hafa verið fáir menntaðra manna eða þeirra, er nokkurn þroska höfðu, er með öllu hafi verið ósnortnir af hinum nýju straumum. Það má líklegt þykja eftir lundarfari og tilfinningamagni Þorleifs, að hann hafi þá og eigi setið aðgerðalaus, enda var svo eigi. Hann tók þá að gefa út blað það, er hann nefndi »*Tiden*«, vikublað, er út komu af 51 tölublöð (frá 25. oktbr. 1848 til 19. jan. 1850). Lagði hann þar Dönum mörg ráð og viturleg um fyrirkomulag stjórnskipunarbreytingar þeirrar, er þar stóð þá fyrir dyrum. Þá samdi hann og lét gefa út sérstaklega *frumvarp að stjórnskipunarlögum handa Danmörku*. Hnigu tillögur hans allar mjög að því að haga stjórninni eftir grundvallarreglum stjórnskipulags Englands, þess lands, er hann taldi fyrirmynd annarra að stjórnarfari. Um þetta leyti mun og Þorleifur hafa þýtt rit *MacCullochs, Om Ejendoms Arv*, er víða kemur inn á svið stjórn mála, en eigi kom það út fyrr en 1852.

Ísland fór ekki varhluta af frelsishræringum þeim, er skóku Norðurálfuna 1848. Má árfæra til þeirra hræringa fulla viðleitni Íslendinga til þess að ná aftur sjálfstæði sínu, pótt aðdragandi væri nokkur, og alþingi væri áður endurreist. Urðu velflestir hinna yngri íslenzkra menntamanna, þeirra er þá voru í Kaupmannahöfn, á eitt band snúnir um sjálfstæðiskröfur þjóðarinnar, og urðu

oddvitar þeirra í þeim málum Brynjólfur Pétursson og Jón Sigurðsson, báðir vænlegir forustumenn, svo sem síðar reyndist til hlítar um hinn síðar nefnda, en eigi var minna traust borið til hins fyrr nefnda, þótt aldur entist honum eigi til fyllinga vona þeirra, er menn báru til hans. En hinir eldri íslenzku menntamenn, er þá voru í Kaupmannahöfn, höfðu allt hægara um sig, allir nema Þorleifur Repp. Hann fyllti þegar flokk þeirra Íslendinga, er fyllstar kröfur gerðu til handa þjóð sinni um sjálfstæðismál hennar. Og eigi fór hann dult með skoðanir sínar, svo sem að líkum réð eftir skapsmunum hans. Fram að þessu hafði Þorleifur litt gefið sig við Íslandsmálum, enda þá og eigi verið þess umkominn, er hann var í Skotlandi. En er hann var aftur seztur að í Kaupmannahöfn, hafði hann mikil mök við Íslendinga og tók þá að gefa sig við málum þeirra, bæði í bókmenntafélaginu og slikt hið sama að almannamálum, sem líklegt mátti þykja um svo rampjóðlegan og einbeittan mann. Þessi ár (1840—1850) höfðu Íslendingar mjög hug á því að losa höft þau, er á verzluninni hvíldu, og stóð Þorleifur framarlega í þeim flokki. Því er sú saga, að 1849, er Páll amtmaður Melsteð skyldi fara með umboð konungs á alþingi, en varð afturreka þrívægis til Kaupmannahafnar, er hann vildi halda til Íslands, sagði Þorleifur við hann, þegar hann varð afturreka hið fyrsta sinn: »Fátt muntú þarflegt haft hafa í fórum þínum, er landvættir blésu svo móti þér«. Segir Þorleifur sjálfur frá þessu (sjá *Tiden*, 45. tölubl., bls. 180, sbr. og Sunnanfari, I. árg. bls. 57). Og eigi hafði Páll þá verzlunarfrelsið meðferðis, segir Þorleifur enn fremur.

Eftir að konungaskipti voru orðin í Danmörku, Kristján VIII. fallinn frá, en Friðrekur VII. tekinn við, væntu Íslendingar bráðari áheyrslu við sjálfstæðismálum sínum, enda hét og stjórnin góðu um í bréfum sínum og lét efna til sérstaks þjóðfundar, er hafa skyldi til meðferðar frumvarp um stjórnarfar landsins. Þorleifur hugðist eigi mega hjá sitja, er þessum málum yrði ráðið til lykta, og réð af að bjóðast Árnesingum fulltrúi á fundinn. Ritaði hann

þeim bréf, er prentað var. Er það bréf svo merkt og einkennir svo vel skoðanir Þorleifs, eigi síður en meðferð hans á íslenzkri tungu, að vert mundi hafa verið að prenta það hér allt í heild sinni, en rúmsins vegna verða að eins teknir hér upp kaflar úr því, upphaf og endir. Munu þeir þá enn hafa verið allfáir Íslendingar, er töldu til réttinda til handa þjóðinni samkvæmt gamla sáttmála, en svo er þá mikill frelsismóður Þorleifs, að minna þykir honum eigi við hlitanda. Svo segir í bréfinu:

Heiðrsmönnum í Repp enum Ytra ok Eystra, á Skeiðum ok í Flóa ok Ölvesi, í Biskupstúngum, Grimsnesi, Grafningi, Þingvallasveit ok Selvági ok öllu Árnesþingi sendir Þorleifr Guðmundsson úr Repp enum Ytra kveðju Guðs ok sína með þeim tilmælum, er hér fylgja.

Frelsi þat, er Forfeðr vorir týndu á þrettánda öld, hefir nú guðlig forsjón eptir 600 ára fært oss aptr, sèr til dýrðar, en oss til hamfingu. Vart þykir mér at kalla megí, at mannligr kraptr eigi lut í endrburði Frelsís á Íslandi; þat hefir komit ókallat, svo sem dagr fylgir heimboðslaut gaungu sólar; en væri þó vel, at vèr veittim viðtökur sem beztar svo göfgum ok ágætum höfðingja sem Frelsit er; ok nú fýsir mik mjök, góðir Bræðr, eptir þrjátígi ok sex ára útivist, at fylla Yðvarn flokk, er þér fagnit höfðingja þessum, ok sjá yfirbragð Íslands ens aldna við atkomu hans, ok berr mér svo fyr sálarskjáinn, þótt ek sè í fjarska staddr, sem heldr birti yfir Íngólfsfell ok Hestfjall, en niðr sè raddfegri ok glaðværri í Þjórsá, énn verit hefir um sex aldirnar seinni. Nú þótt ek vænta þess af Yðvarri mannúð ok bróðurdygd, at þér vildit láta þat eptir mér at vera í Yðrum flokki á slíkum hamíngju degi, þá kemr mér eigi á óvart, at margir spyrji: „Hvat selr þú fram í sumblit, er Frelsi skal fagna?“ ok er einsætt at svara þeirri spurningu með athygli ok einurð.

En til þess at ek mega vera með í sumblinu, vilda ek beiðaz þess af Yðr, Árnessþingsmönnum, at þér vísit mér til Sætis, ok eru þat aðal-tilgaung þessa bréfs, at beiðaz Yðvarra atkvæða til þess at ek mega fá Sæti á Þjóðfundi enum næsta fyrir Yðra hönd.

Eigi berr til beiðni minnar þessarar ein saman einþyckni mín, með því nockrir landar vorir hér í Höfn hafa farit því á flot, at ek skylda beiðaz fulltrúa sætis, er þeir vænta þess af mér, at ek muna í nockrum greinum efla rétt mál ok sönn.

.

Amstri því gjörvöllu, er Danir hafa haft á seinni öldum í lagasetningum fyrir oss, vil ek at vèr létтим með öllu af höndum þeim; ok alla

Landestjórn ok alla Lýðsmentun vil ek efla á Íslandi sjálfu; en Dana Konúgr staðfesti öll Íslands lög, er Alþingi setr, en hlýði þó ráði Valdsmanns á Íslandi, hvort sem hann skal kalla Lögmann eða Jarl.

Af þessum orsökum mun ek þat til leggja, að nýta vel vor en fornu lög, og gæta þess hvervetna, hverjar lagabætr Englar hafa sett á seinni öldum, og hvat af þeim hefir leiðt á þeim eyjum, sem oss eru næstar; ok væntir mik, at lög þau öll er vër setjum í slíkum anda, muni lúta til eflingar Frelsisins og staðfestingar þess. Nú virðiz mér svo, sem Yðr muni skiljaz, góðir Bræður, hvern veg ek muna atkvæði gefa, ef ek em kjörinn fyrir Yðra hönd. Frelsi kref ek fullkomit um trú ok ræðu ok skript ok mannfundi ok kaupverzlun ok alla þá luti, er Íslendingar höfðu fullt Frelsi í fyrir árit 1260; þó at óskerðri vorri hollustu ok trygd viðr enn göfga Dana Konúgr FRÍÐREK ENN SJÖUNDA, er ek vænti þess, með fullri vissu, at hann haldi til fulls GAMLA SÁTTMÁLA Noregs Konúnga við oss.

Nú bið ek Guð vera með Yðr, ok öllum oss, ok stýra vorum mál-efnum gjörvöllum sér til lofs, en oss til heilla, í nafni Jesú Christí.

Skrifat í Kaupmannahöfn, á Mikjálsmessu-aptan, þá er liðnir voru frá holdgun ok hingatburði vors herra Jesú Christi átján hundruð ok fjórir tigr vetra ok níu vetr.

Þorleifur var kosinn af Árnesingum fulltrúi á þjóðfundinn, en eigi sat hann á fundinum og mun heilsufar hans hafa hamlað því, en hann var lítt heill hin síðari ár ævi sinnar. Þó vann hann enn, svo sem hann mátti, bæði að kennslu og ritstörfum; fátt kemur þó rita út eftir hann héðan af. Þó má geta þess, að nú rifjaði hann enn upp aftur fornan lærdóm sinn í læknisfræði og ritaði eða þó þýddi kver um varnir gegn kóleru og annað um smáskammtalækningar.

Ein er sú hlið bókmenntastarfsemi Þorleifs, sem eigi hefir enn verið vikið að, en það er kveðskapur hans. En þar af er það skjótast að segja, að meir orti hann af lærdómi en andagift, enda mun hann lítt hafa haldið á lofti kveðskap sínum og eigi hafa hugað til mikils metnaðar sér til handa fyrir afrek sín í þeirri grein. En allra manna var Þorleifur næmastur fyrir því, er vel var kveðið, og þaulfróður um skáldskap og bókmenntir allra þjóða. Margt er til tækifæriskvæða eftir hann á ýmsum tungum, ensku, dönsku, íslenzku, latínu og jafnvel grísku. Fátt er

prentað eftir hann af kvæðum; þó eru af íslenskum kvæðum »Landavísur« prentaðar í 9. árg. Fjölnis og í Snót, og »Epigrómm« (snúin og eftir stæld á íslensku eftir gríska textanum í dr. Wellesleys Anthologia polyglotta), sem Jón Sigurðsson lét gefa út eftir Þorleif látinn (1864). Í Landavísum Þorleifs ber þó sumt vott um skáldlegar sjónir eða hugsjónaafl. Til dæmis skal hér sett þetta erindi um Ísland:

Grænom lauki gróa túnin;
Gyllir sóley hlíða sillor;
Færa víkr flyðro á vári:
Fuglar syngja í Trölladyngjom;
Saudir strjálást hvítir um heiðar;
Hossar laxi straumr í fossi;
Bella þumor á brúnom fjalla;
Blár es hifinn, snarpr es Kári.

Rit Þorleifs eru talin upp í Erslews Almindeligt Forfatter-Lexicon og Supplement og enn vendilegar í Rithöfundatali Jóns Borgfirðings (handritasafn JS. 103—106, 4to., II: 3, þó verður að nota þá skrá með varkárni).

Hin síðari ár ævi sinnar var Þorleifur lítt heill og banalega hans varð löng, en hann andaðist 4. decemberdag 1857. Þegar hann var úthafinn, voru Íslendingar margir viðstaddir. Enski presturinn í Kaupmannahöfn hélt ræðu yfir kistu hans, og Íslendingar sungu »Allt eins og blómstrið eina« og tvö vers úr Passíusálmunum, »En með því út var leiddur« o. s. frv., svo að hann var seinast kvaddur á tungu þeirra þjóða, er hann unni mest allra. Síðan báru Íslendingar hann í kapelluna, Hólmskirkjukapellu, en þar var lík hans geymt um veturinn. Hafði hann fyrir dauða sinn gert þá ráðstöfun, að lík sitt yrði flutt til Reykjavíkur, svo að hann fengi að hvíla í skauti ættjardar sinnar (Sveinn Skúlason í 6. árg. Norðra, bls. 23—24). Þessari ósk hans var framfylgt, »og það á þann hátt, sem hann mundi helst hafa æskt í lifanda lífi, að koma til Íslands með hinni fyrstu reglulegu gufuskipsferð, sem þangað gengur, og koma við um leið bæði á

Skotlandi og Færeyjum» (Jón Sigurðsson í Skýrslum og reikningum hins ísl. bmf. 1857—58, bls. XX). Hafði Þorleifur þá eigi til Íslands komið frá því að hann sigldi til háskólans 1814. Hann liggur í kirkjugarðinum í Reykjavík, en eigi hefi eg getað fundið leiði hans.

Þorleifur Repp á einkennilegra æviferil en flestir íslenzkir menntamenn. Hann hefir verið flestum mönnum námfúsari, enda varð hann flestum mönnum fróðari. Hann hefir verið meiri tungumálamaður en nokkur Íslendingur, sem uppi hefir verið, og honum hefir verið manna léttast um að tala tungur, en sá hæfileiki virðist ekki einkenna Íslendinga. Hefir honum líkur verið að þessu leyti síra Þorvaldur Bjarnarson, síðast prestur á Mel, enda voru þeir skyldir að frændsemi, og raunar svipaðir um margt, eftir þeim dæmum, sem mér eru sögð af síra Þorvaldi. En ekki liggja þó þau ritstörf eftir Þorleif né rannsóknir í málfræði, sem búast mætti við eftir lærdómi hans, og mun hafa um valdið bæði það, að hann fékk ekki gefið sig við þeim efnum sakir annríkis fyrir daglegu viðurværi, en í annan stað hafði hann hug á mörgu og lagði alúð við öll málefni, þau er hann gaf sig við; dreifðust því kraftar hans. Þorleifur var maður hreinlyndur og einarður, tilfinninganæmur og tilfinningaríkur, og svo berorður, að margir töldu hann ófyrirleitinn í orðum. Mat hann menn lítt eftir metorðum; varð því frami hans minni, en föng voru til. Danavinur var hann lítill, og fór eigi dult með, og oft bituryrtur og meinyrtur í þeirra garð; eru af því ýmsar sögur, þótt hér sé engra getið. Þorleifur var þó maður göfugur í lund og hjálpfús og vandaður á allt sitt ráð, að vitni Steingrims skálds Thorsteinsons, er honum kynntist, góður smámönnum, en þoldi stórmönnum illa stórbokkaskap eða hroka, eigi sízt er honum þóttu þeir miklast af því, er þeir höfðu fátt eða ekki til að bera. Hreinn var hann í svip og mikilúðlegur á yfirbragð, sagði Steingrimur, og svipaði mjög til hinna fyrri Rómverja,

þeirra er vér höfum myndir af. En síra Mattias Jochums-son segir hann mjög hafa haft þá háttsemi, sem tíðum þykir einkenna vísindamenn. Sparneytinn og hófsamur var hann hversdaglega, og samdi sig mjög að síðum Breta, er hann unni mjög; mun hann hafa kunnað vel þeim þjóðkosti þeirra, að þeir eru óáleitnir og óhnýsnir á ann-arra manna hagi; iðjumaður mikill og-afkastasamur, en þó ræðinn og mannblendinn. Viðskyggn og bjartsýnn og hvetjandi mjög til framfara. Ættjarðarvinur mikill og fyllti þann flokk manna, er lengst fóru í sjálfstæðiskröf-um; »það var honum mest fró í banalegunni að fá að heyra, að lík hans mundi geta orðið flutt til Íslands og hvílt í íslenskri mold«, segir Jón Sigurðsson. Ómilda dóma hlaut Þorleifur lifandi og eigi þykir mér hann held-ur njóta til fulls sannmælis hjá þeim, er hans hafa minnt síðan, svo sem dr. Kálund (í smágrein í Bricka: Dansk biografisk Lexikon) og Finnur próf. Jónsson (í smágrein um Þorleif í Salomonsens Konversations-Lexikon), að eg ekki nefni sleggjudóm eftir próf. L. Daae (í Mu-seum, Aarg. 1895, Andet Halvbind, bls. 180). Þorleifur segir sjálfur á einum stað (í ritdómi um rit eftir James Miller, *The Sibil leaves*): »... because truth, because uprightness is essentially one, and this virtue assumes a similar form and guise in all minds, that follow it and worship it. This praise for truth and uprightness (which I humbly conceive is at all times the highest, that can be given to a man) . . .«. Þessi ást Þorleifs á sannleika og hreinskilni einkennir æviferil hans — og varð honum dýr að veraldarmati.

Páll Eggert Ólason.

Fylgiskjal.

Bréf Byrgis prófessors Thorlacius til Jens prófessors Möllers (J. S. 96, fol.).

Den Reppske Sag er da afgjort. De kan nu i fuldt Maal nyde den af Dem tilsigtede Hævns Sødhed, og den Sataniske Glæde at have

bidraget hvad De kunde, til at giøre et uskyldigt Menneske ulykkeligt. Non equidem invideo. Begyndelsen var furialsk og saadan blev ogsaa Enden. At de derved bedrøvede den brave P. E. Muller, og krænkede mig, er naturligviis mod hiin Glæde et Intet.

Det har lykkedes Dem, at mislede et Kongeligt Collegium til at foretrække en det Philosophiske Facultet uvedkommende Persons Votum for samme Facultets Stemme-Fleerhed, ligesom og for Consistorii declarerte og betydelige Pluralitet.

En saa himmelraabende Forfølgelse mod et dueligt og honet Menneske, har rystet mig til det Inderste. Jeg er betænkt paa, at overlevere Hans Majestæt min Ansøgning om at maatte udtræde af Consistorio. Thi jeg har ikke Lyst til 3die Gang, at være Vidne til og blive Gienstand for, en Collegas Ubluhed. Men skulde jeg inden Ansøgningens Indleverelse faae Meddelelse om, at det tillader mig at reise, saa ønsker jeg heller dette, og vil glædes ved snart at kunde drage bort; kun det giør mig da ondt istedetfor Agtelse, at skulle medtage slette Tanker om den Mand, hvem jeg ved mange Leiligheder har viist at jeg ønskede baade at agte og elske. Dog disse mine bittre Erfaringer (derom har De, og De først overbeviist mig) høre til Verdens Gang. Til Nedstæmmelse af Tonen, i Herr Professorens Votum, maa jeg bemærke, at naar De tale om den megen Tak, De hoverer over at have faaet for Universitetets overholdte Værdighed (stakkels Universitet! o sancta simplicitas!), saa bedrager De Dem mærkelig heri. Af en af mine Colleger har jeg hørt den Bemærkning, da jeg beklagede mig over Deres Opførsel: „veed De da ikke hvad odium theologicum betyder?“ En anden Collega sagde ret treffende „husk De ikke hvad det Engelske Politi“ (parallel med Deres saa skiönt paaberaabte Disciplin) „giorde i den Tyrerwhittske Sag, nemlig at det først irriterte og forførte til Oprør, og derpaa anklagede og fik de saaledes Forførte henrettede?“ En Fremmed, som var tilstæde ved Acten, spurgde sin Naboe ved Deres Oppositions Begyndelse: „hvad er det for en Furie?“ Da man sagde: Det er Professor Theologiæ J. M. svarede han: „unmöglich!“ Hvad Studenterne angaaer, da have de fleeste af disse Sandheds og Retfærds Følelse nok, til at bedømme saadan en Furialsk Fremgangsmaade fra den rigtige Side. — Ifald De ikke veed det, saa vil det mere Dem, at De fra Disputationens Dato hedder: Kattedesseren, fordi De Fastelavns Mandag slog Katten af Tønden. Men De vil maaske ikke troe mig, naar jeg siger Dem, at mange Theologiske Studenter forsaavidt gierne have seet, at De ved denne offentlige Leilighed har prostitueret Dem, da de haabe at det foranlediger at De snart søger og faaer et Bispedømme, thi til at være Professor Theologiæ ved Kiøbenhavns Universitet, har De viist at De hverken har Soliditet, Sindighed, Værdighed, eller Veltænkenhed, nok.

Mere end halvsyg efter i Mandags at have læst Universitets-Directionens afgørende Brev Repps Sag angaaende, har jeg siden af Græm-

melse ingen Nat kundet sove, og ingen Dag uden bitter Følelse kundet forrette mit Embede, ligesom jeg formedelst rystende Haand næsten Intet selv har kundet skrive. Taales slige Uværdigheder begaaede af saakaldte dannede Mænd, tænkte jeg, hvad arbejder man da for? Hvad redelig Flid opbygger, nedriver Partiaand. En retskaffen Vandel, en god Samvittighed beskytter ikke mod nedrig Chikane, og lumsk anlagt Undertrykkelse. Dog det sidste naturlige Straf vil ikke udeblive. Jeg besluttede i Tirsdags at skaffe mig Lettelse, ved at nedsætte paa Papiret og bringe til Klarhed Momenterne af denne Sag. Jeg vilde at denne Oplysning skulde giemmes i Consistorii Copiebog, som et Act-Stykke for Fremtiden om en uhørt Fremgangsmaade. Men da den Onsdags-Morgen leveredes Referendarius, kom denne til mig og beklagede sig over det ham ubehagelige i, at skulle oplæse det i Consistorio. Jeg er mig beviidst aldrig i mit Liv at have med mit Vidende bedrøvet noget Menneske, naar jeg ikke dertil nødtes, derfor troede jeg at burde skaane denne sødle Mand, og tog derfor min Skrivelse tilbage. Da min Hensigt ikke var at injuriere, rettede jeg et Par Steder, der efter Professor Bornemans Forklaring kunde synes saadanne. Jeg sender Dem herved bemeldte Oplysning indlagt, at De kan være vidende om dens Indhold. Mærker jeg at den grusomme Forfølgelse i min og Repps Fraværelse vedvarer, skal jeg foranstalte, at dette Document, som nu ikke mere kommer i Consistorio, bliver trykt. Alt deri er factisk, og jeg tør paa tage mig Ansvar for hvert Ord i samme, ligesom jeg og har Vidner at citere naar Retten dertil opfordrer, for Andres i dette Brev anførte.

Skulde nærværende Skrivelse være Dem ubehagelig, saa betænke De, at naar De har krænket P. E. Muller, mig og Repp, fornærmet et heelt Facultet, beskiammet Universitetet, og forarget de ikke Faa, der kiende den paagiældende, saa er Forholdet af min til Deres Haardhed, i alle Tilfælde kun som 1 til 100, og Begyndelsen er animo nocendi giort af Dem.

Khn. d. 18. Marts 1826.

B. Thorlacius.

S. T.

Hr. Prof. Dr. J. Möller.

Pegnskylduvinna.

Erindi flutt í Stúdentafélagi Reykjavíkur 22. jan. 1916, síðar flutt opinberlega í Reykjavík, og ennfremur á Sambandsfundi Ungmennafélaga og víðar og þar með dálitlum viðaukum.

Háttvirtu tilheyrendur!

Það gleður mig innilega, að Stúdentafélagið í Reykjavík hefir enn á ný, eftir nokkurra ára hvíld, tekið þegnskyldumálið til athugunar. Eg votta hér með félaginu þakkir mínar fyrir að veita mér færi á að taka þátt í umræðunum.

Þess lengur, sem eg hugsa um þetta mál, þess betur finn eg, hve mikilvægt það er og þó um leið alvarlegt. Að sönnu er það jafnt sem frá öndverðu bjargföst sannfæring mín, að fá, eða jafnvel engin, af framfaramálum vorum mynduþrinda landi og lýð jafn drjúgum og hróðum skrefum áfram til menningar, vegs og hagsælda sem þegnskylduvinnan, ef hún væri rétt stofnuð og hagkvæmlega rakin. En í þau liðug 12 ár, sem liðin eru frá því eg hreyfði þessu máli fyrst, hefir, því miður, sortnað yfir alvarlegu hliðinni. Eg vil enga dul draga yfir það, að mín lifandi trú og sannfæring er það, að því að eins verði þegnskylduvinnan til blessunar, að það sé hennar fyrsta og síðasta markmið að veita þátttakendunum sem mesta verklega og andlega menningu, en það vaki ekki einungis fyrir, að kostnaðurinn verði sem minstur og arðurinn af vinnunni sem mestur í svipinn. Auðvitað verður að halda spart og gætilega á, og að þegnskylduvinnan veiti sem allra mestan arð í framtíðinni.

Þá skiftir það eigi minna, að sú vakning gæti gripið

almennt um sig, að menn vildu offra nokkrum vikum æfinnar til að starfa eingöngu fyrir ættjörðina, og að því, að gera sjálfa sig nýtari og hæfari til að vinna framvegis fyrir hana, og sig og sína, með réttari vinnubrögðum og verkstjórn og hagkvæmari verkfærum en átt hefir sér stað hingað til, og á því miður enn. Þessi vakning þarf að vera svo einlæg og almenn, að hún geti orðið sá lífsteinn, er græði þau sár, er óbliða og hremmingar náttúrunnar og forsjáleysi forfeðranna hafa bakað voru niðurnidda, hrjáða og hrakta landi.

En svo skiftir ekki minna þegar til vinnunnar sjálfrar kemur, að hverju eigi að vinna, og hvar eigi að vinna í það og það skiftið, og hverjir eigi að stjórna og hafa aðalráðin á hendi. Þar má eigi ráða hreppapólitik, sérplægni og eigingirni einstakra manna eða héraða. Valdafíkn og hlutdrægni má ekki ráða fyrir hæfðileikum. Sundrung, fljótferni og hugsunarleysi má eigi bera ægishjálmi yfir samúð og góðri samvinnu, og hóflegri og hyggilegri framþróun í þessu máli.

Hvað unnið sé og hvar unnið sé, verður einkum að miðast við þau not, er þátttakendur geta haft af vinnunni, og þar næst, hvar vinnan getur haft fljótust og mest gagnsemis-áhrif fyrir þjóðarheildina. Þó verður að gæta sanngirni, svo sem unt er, að vinnan komi sem jafnast niður á héruðin.

Alvarlega hliðin kemur fram við umhugsun um það, hvort hið framantalda geti átt sér stað eða komist í framkvæmd. Kviðinn og vonleysið vaknar, þegar athugað er það sleifaralag, sem er á flestu hjá oss. Menn harma alt of almennt yfir réttarfarinu í landinu, og þá eigi síður yfir Alþingi á síðari tímum. Þingin eru sakfeld um ráðleysi, brúðlunarsemi til hins óþarfa, en vanrækslu á því, er mestu skiftir. Þingmenn eru yfirleitt, en þó ekki undantekningarlaust, sakaðir um hreppapólitik, sérplægni og eigingirni fyrir sig og sína; valdafíkn og metnað, léttúð, meiningarleysi, þekkingarskort og einfeldni. Og þrássinnis heyrir kvartað um það, að það vanti nægilega

sterkan, heiðvirðan kraft, er knýi þingið til að vinna með áhuga og alúð fyrir þjóðarheildina, en ekki sig og sína. Og svipað er naggið um stjórnar- og framkvæmdarvöldin, alt frá Stjórnarráði Íslands og niður í hundanefndir og salernahreinsun.

Eg ætla mér ekki að leggja hér dóm á það, við hve mikil rök þetta hefir að styðjast. En eigi dylst mér, að á ýmsum svæðum sé ástandið iskyggilegra en æskilegt væri.

Ef líkt sleifaralag og hér hefir verið bent til, ætti sér stað við þegnskylduvinnuna, þá væri hún betur óstofnuð. En nú er það trú margra manna og von, að mælirinn sé þegar fylltur. Allir betri menn þjóðarinnar hljóta að vakna bráðlega og segja með festu: »Hingað og ekki lengra«. Þeir treysta því, að núverandi ástand sé að hruni komið, en af rústunum rísi upp vaxandi menning og framþróun í öllu, er til þjóðheilla og hagsælda horfir. Væri nú þetta annað en tálvonir, sem fylsta ástæða er til að ætla, að ekki sé, þá væri hagkvæm og rétt stofnuð þegnskylduvinna ein af hinum bestu lyftistöngum, sem vér höfum yfir að ráða.

Við næstu almennar kosningar til Alþingis verður það borið undir kjósendur, hvort þeir vilji, að reynt sé að koma þegnskylduvinnunni í framkvæmd eða ekki. Þetta er prófsteinn á menningarþroska þjóðarinnar og ættjarðarástar og fórnþýsi hennar vegna. En eg er eigi hræddur um það, að samþykkið fái ekki og það með miklum meiri hluta. Byggi eg það á því, að frá því fyrsta hafa mikilhæfustu menn þjóðarinnar verið málinu eindregið fylgjandi. Má þar á meðal annara nefna fyrstu íslenzku ráðherrana, þá Hannes Hafstein og Björn Jónsson, og biskup landsins, Þórhall Bjarnarson, er allir hafa opinberlega tjáð sig málinu fylgjandi með áhuga. Og Matthías alþingismaður Ólafsson og fleiri mætir menn hafa og fylgt því drengilega, bæði í ræðu og riti. Og á síðasta þingi, þegar málið var enn á ný til umræðu, þá var mikill meiri hluti með því, þótt svona greindi á um leiðir, og

í þann meiri hluta vantaði engan hinna nýtustu þingmanna að minni hyggu og margra annara. Þá má og geta þess, að flest merkari og áhrifameiri þjóðblöðin hafa verið málínu fylgjandi, og síðast en ekki sízt er það stórvægilegt atriði, að margfaldur meiri hluti af »Ungmennafélögum Íslands« er eindreginn með málinu, einmitt þeir mennirnir, sem búast mætti við, að sumir hverir myndu inna þegnskylduvinnuna af hendi. — Þegar eg hefi hugsað um þetta, hefir mér virst í austri roða fyrir nýjum framfaradegi þjóðar vorrar og lands.

Eins og áður er sagt, óttast eg ekki atkvæðagreiðsluna. Eg ber miklu fremur kviðboga fyrir, að mistök kunni að verða á stofnun og framkvæmd þegnskylduvinnunnar. Landstjórn og þingi er mikill vandi á höndum. Mál þetta, sem nefna má stórmál, er algert nýmæli. Alla reynslu vantar því að sjálfsögðu. Sumir hafa við umræður málsins heimtað rök og áætlanir. En það er eigi sanngjarnt. Reynslan ein getur veitt slíkt, svo að fullnægjandi sé. En ef fyrirtækið er hafið með trú á málefnið og trausti til lands og þjóðar, þá munu þjóðarhyggjindin og þjóðarhagsýnin færa það fljótt á réttar og farsælar brautir, ef velvild og áhuga brestur eigi.

Þó að eg kenni mig, að vonum, eigi mann til að rök-ræða þetta mál og koma fram með ábyggilegar áætlanir, þá vil jeg þó hreyfa við ýmsu, er sagt hefir verið opinberlega um málið, og einnig því, er merkir menn hafa látið í ljós við mig um það.

Eitt atriði, sem talsvert hefir verið rætt um, er, hve lengi þegnskylduvinnan á að standa yfir fyrir einstaklinginn. Þegar eg bar tillöguna fyrst fram á alþingi 1903, stakk eg helst upp á 7—8 vikum. Að sönnu þótti mér þetta alt of stuttur tími, en eg þorði þó ekki að ganga lengra. Hugsaði eg, að þá yrði þátttakendum þegnskylduvinnunnar skift niður í þrjá flokka yfir sumarið. Sparaði það um $\frac{1}{3}$ af kostnaði við verkstjóra, starfsmenn, tjöld, áhöld, verkfæri, hesta o. fl. Og svo var það $\frac{1}{3}$ fléttara á þeim, er vinnuna áttu að leysa af hendi, heldur

en eftir því, sem nú virðist almennast álitíð, að þegnskyldan eigi að vara, 12 vikur, fyrir hvern nemanda. En eftir því verður nemendum að eins skift í tvo flokka yfir sumarið. Eg vil eigi draga dul á það, að mér væri lengri tíminn mun kærari, ef óhætt væri að spenna bogann svo hátt, því að á allan hátt væri svo mun meiri not að honum. Að visu yrði það í mörgum sumrum erfitt á öllum nyrðri hluta landsins að hafa þegnskylduvinnu í 24 vikur. En þó að ótíð sé og frost í jörðu, má margt gera til undirbúnings seinni tímanum, svo sem flutninga á efni, grjótupptekt, sprengingar og miklu fleira, og má þar til telja líkamsæfingar, fyrirlestra og umræðufundi. En þegar ótíð hamlar með öllu, þá fellur framan af fyrri tímanum, en aftan af hinum síðari, og eru þó þátttakendur engu að síður taldir að hafa að fullu leyst þegnskylduvinnuna af hendi. Einnig gæti það komið til athugunar að hafa vinnuskeiðið að eins eitt yfir sumarið á norðurhluta landsins, er byrjaði 15.—20. maí.

Ef þegnskylduvinnunni væri skift niður á tvo vinnuflokka, þá hefir mér helzt hugkvæmst, að fyrri flokkur byrjaði vinnuna 1. maí og endaði hana 24. júlí. En síðari flokkurinn byrjaði 29. júlí og endaði vinnuna 20. október.

Eg býst við, að oft þurfi, að minsta kosti einu sinni á sumri, að færa sig alllangt til milli vinnustöðva, ef til vill úr einu héraði í annað. Ætla eg til þess flutnings og svo athugunar og viðgerða á verkfærum, áhöldum o. fl. 4 daga, milli þess er þegnskylduflokkarnir starfa.

Heyrst hafa raddir um það, að 12 vikna tími væri ofstuttur til þess að æskileg not yrðu að þegnskylduvinnunni. En ef tíminn væri lengdur, þá yrði það mjög tilfinnanlegt fyrir marga þátttakendur, og mjög dýrt fyrir landssjóð, ef þeir ættu allir að vinna samtímis, því að þá þyrfti að fjölga verkstjórum og öðrum starfsmönnum við þegnskylduvinnuna um helming, og að sama skapi auka öll tæki til hennar. Eg sleppi því að ræða meira um

þetta og miða áætlanir mínar síðar við alls eigi lengri tíma en 12 vikur fyrir hvern vinnuflokk.

Eg vil geta þess hér, að alls konar misskilningur hefir komið fram hjá sumum með þegnskylduvinnuna. Einkum kvað þó ramt að þessu hjá einstaka manni á síðastliðnu þingi. Gengu sumir að því vísu, að allir ynnu samtímis og helzt á einum stað. En með þessu varð þegnskylduvinnan mikið-kostnaðarbákn fyrir landssjóð, og það með öllu að ástæðulausu. En svo »kastaði tólfunum«, að sá misgáningur komst í fyrstu inn í neðri deild, að telja árlega til þegnskylduvinnu alla, sem voru á aldrinum 17 ára til 25 ára. Eða með öðrum orðum, rétta talan var áttfölduð, og kostnaðurinn því ófyrirsynju átta sinnum hærri en vera bar. Á þenna hátt urðu árleg útgjöld landssjóðs til þegnskylduvinnunnar 1.400.000 kr. hjá háttv. þingmanni Dalamanna, það er að segja, ef kvenfólk tæki einnig þátt í vinnunni. En þegar búið er að deila með 8 í þessa tölu, þá verður árlegi kostnaðurinn 175.000 krónur, eftir þeim forsendum, sem þingmaðurinn bygði á. En fram hjá vinnu-
arðinum var gengið.

Þegar búið var á þinginu að laga þessa reikningsmeineloku, hélt þingmaðurinn því þó fram, að þetta yrði kostnaðurinn fyrsta ár þegnskyldunnar, eins og sjálfsagt væri að kalla þegar alla til vinnunnar frá 25 ára aldri og niður til 17 ára aldurs.

Eg vil ekki tefja tímann með því að eyða fleiri orðum að þessu. En í sambandi við þetta vil eg minnst á atriði, sem er athugavert og talsverðum vandkvæðum bundið. En það er það, að ætíð sé talan sem jöfnust, er tekur árlega þátt í þegnskylduvinnunni. Það skiftir landssjóð miklu fjárhagslega, og einnig hvað öllum áætlunum við kemur, bæði að því er verkstjóra og aðra starfsmenn snertir og allan útbúnað til þegnskylduvinnunnar. Meira skiftir þó þátttakendur að mega sem mestu ráða um það, hvaða ár þeir vinna, og hvort vinnutímabilið þeir kjósa. Eg tel líklegt, að skútumenn og þeir, sem heyskap stunda, kjósi síðara

vinnuskeiðið, og einnig þeir, sem ætla að gefa sig að sild-arvinnu, en svo fari það eftir atvikum um aðra, nema námsmenn, sem eigi hafa nema 3—4 mánaða sumarleyfi. Þá verður að taka á bæði vinnuskeiðin, síðari hluta þess fyrra og fyrri hluta hins síðara. Að sjálfsögðu verður þó landsstjórnin að hafa óbundnar hendur með skrásetninguna, eftir því sem þörf krefur. En gæta ber henni allrar þeirrar nærfærni, sem unt er í þessu efni.

Ef þegnskylduvinna kemst á, sem treysta verður, þá getur eigi komið til mála að kalla þegar á fyrsta ári alla þá, sem eru 24 ára, svo að þeir náist í vinnuna á sínu 25. ári. Það gæti oft verið þeim óbærilega bagalegt, enda ranglátt, að þeim veitist eigi jafnt sem öðrum þátttakendum kostur á því að velja um aldursár til vinnunnar. Þegar því þegnskylduvinna byrjar, álit eg sjálfsagt, að allir séu lausir við hana, sem eru 22 ára eða jafnvel að réttara sé að fara niður að 20 ára aldri, nema mennirnir af fúsum vilja bjóði sig fram til vinnunnar. Það skiftir litlu, þótt menn þessir sleppi frá þegnskylduvinnu. En miklu skiftir að sanngjarnlega og gætilega sé af stað farið. Kemur þetta í veg fyrir, að ofmargir hrúgist að vinnunni í byrjun, eða fjöldamörgum yrði að neita um skrásetningu, sem hvorttveggja gæti haft slæm eftirköst.

Þegar þegnskylduvinnan er komin á fastar laggir, tel eg víst, að ekki verði það nema undantekningar, að kalla þurfi menn til vinnunnar. Flestir munu sjálfkrafa bjóða sig fram um og innan við tvítugsaldurinn, og flestir svo ungir, sem leyft er. Á síðasta þingi var ráðgert að hafa aldurstakmarkið að neðan 17 ár. Eg hafði í byrjun helzt hallast að því að hafa það 18 ár. Að sönnu miðaði eg við 16 ár í Andvararítgjörð minni 1908, af því að eg áleit það byrvænlegra. En við það síðan að veita fjölda af unglingum eftirtekt, með þetta fyrir augum, hallast eg að því, að 18 ára aldurstakmarkið að neðan sé heppilegast, þótt eg geri það eigi að kappsmáli.

Þótt hagkvæmt sé, að menn læri rétt vinnubrögð sem yngstir, og suma geti skift miklu að geta leyst þegn-

skylduvinnuna sem fyrst af hendi, þá vegur það eigi gegn því, sem á móti mælir. Min reynsla er sú, að mikill hluti 17 ára pilta hafi eigi það starfsþol, sem heimta verður í þegnskylduvinnu. Hitt er þó verra, að á þeim aldri hafa margir enn svo sáralitla eftirtekt og athugunargáfu. En á þessu aldursskeiði munar að jafnaði allmiklu með hverju árinu, að því er andlegan og líkamlegan þroska snertir. Eg álit því heppilegra fyrir flesta af nemendum 18 ára takmarkið. Einnig myndi það síður valda óánægju hjá vinnuþiggjendum og hjá þeim er verkinu eiga að stjórna, og skiftir það miklu.

Því var hreyft á síðasta Alþingi, og víðar, að þegnskylduvinnan næði einnig til kvenþjóðarinnar. Eg vil taka það fram, að síðan þegnskyldumálinu var fyrst hreyft, veit eg eigi til þess, að nokkur kona hafi andmælt því, sem hefir látið málið sig svo miklu skifta, að hún hafi hugsað alvarlega um það. Á hinn bóginn hafa margar verið því eindregið fylgjandi. Og þær eru eigi svo fáar, sem hafa látið það í ljós við mig, að þær vildu og teldu það sjálfsagt, að þegnskylduvinnan næði einnig til kvenfólksins. Eg tel því víst, að frá þeirri hlið eigi málefni þetta eindregis fylgis að vænta við atkvæðagreiðsluna. Er mér það því meira gleðiefni, vegna þess, að þegnskylduvinnan er hið fyrsta alþjóðarmál, er konur greiða atkvæði um eftir að þær hafa öðlast kosningarrétt og kjörgengi til Alþingis. Er það góðs viti, ef sú atkvæðagreiðsla getur orðið þeim til sóma og landinu til farsældar.

Að þessu sinni vil eg eigi fara langt út í þetta atriði, því að eg álit, að kvenþjóðin eigi sjálf sem mest að ræða það. Þó vil eg skýra frá aðaldráttunum, sem eg hefi hugsað mér, en þeir eru þessir: Í byrjuninni séu það einungis karlmenn, er taki þátt í þegnskylduvinnunni, en lánist tilraunin vel og sé líkleg til þjóðþrifa, þá verði hún einnig látin ná sem fyrst til kvenþjóðarinnar. Stefnan eða markmiðið sé hið sama, en fyrirkomulagið að ýmsu frábrugðið. Konur vinni einkum að skóggræðslu, garðyrkju, blómrækt og þeim störfum, sem algengast muni

snerta lífsstöðu þeirra framvegis. Og sökum þess að kvenfólk er að jafnaði mun bráðþroskaðra, bæði andlega og líkamlega, en karlmenn, og stofnar einnig að jafnaði hjúskap og búskap yngra en þeir, þá er bæði rétt og sanngjarnt, að aldurstakmark fyrir þær sé tveim árum lægra, eða frá 16—23 ára.

Það hefir allmikið verið rætt um það, hve nauðsynlegt væri að stofna húsmæðraskóla í sveit. Mér hefir aldræi dulist, hve mikilvægt það væri, að 1 eða 2 vel fullkomnir húsmæðraskólar væru á landinu. Stæðu þeir í sveit og væru reknir með allstóru búi, lærðu konur þar til allra þeirra starfa, er æskja verður, að hver kona kunni og skilji, til þess að geta verið góð og myndarleg húsfreyja á fullkomnu heimili, hvort sem það er í sveit, sjávarþorpum eða kaupstöðum. Á slíkum skólum gæti margt kvenna leyst af hendi þegnskyldu sína.

Í sambandi við þetta má geta þess, að ef þegnskylduvinnan kemst á, verður að vera ein föst aðalstöð í landinu eða þegnskylduskóli, er undirbúi kennara og verkstjóra við þegnskylduvinnuna. Þann skóla væri æskilegt, að flestir þeir sæktu, er í þegnskylduvinnu sköruðu fram úr öðrum með stjórnsemi, hagvirkni og allan myndarskap. Þyrfti þá ekki að bera kviðboga fyrir því, að eigi fengjust bráðlega nægilega margir og góðir kennarar og verkstjórar til þegnskylduvinnunnar, heldur og einnig góðir starfsmenn á ýmsum öðrum mikilvægum svæðum í þjóðfélaginu. Við þenna skóla væru einnig framleiddar og ræktaðar til útplöntunar allar þær jurta- og trjátegundir, sem ætla má, að geti orðið til gagns og þrýðis hér á landi. Skóli þessi þyrfti að vera í sveit, en þó eigi langt frá góðum hafnarstað vegna aðflutninga til hans, og fráflutnings á útgræðslu-tegundum og öðrum afurðum. Einnig skiftir miklu, að sem flestum geti veizt kostur á að kynnast skólanum og framkvæmdum hans.

Mjög hagkvæmt álit eg að skóli þessi stæði í sambandi við aðal-húsmæðraskóla landsins. Fyrir þá báða er sameiginlegt alt, sem lýtur að skóggræðslu, garðyrkju

og blómrækt. Enn fremur margt, er heyrir til undirbúnings undir kenslu og verkstjórn við þegnskylduvinnuna, því að eg álit réttast og farsælast, að konur stjórni sem mest sjálfar allri þegnskylduvinnu kvenna. Einnig væri það ekki svo fátt af hinum bóklegu námsgreinum, er sameiginlegt yrði. Og mikill kostur er það við húsmæðra-skóla, að hann hafi sem mest störf og framkvæmdir af höndum að inna.

Að þessu sinni álit eg árangurslaust að ræða nánar um fyrirkomulag þessa skóla, rekstur hans og kostnað við hann.

Nú kem eg að því atriði, sem mun valda mestum ágreiningi og verða aðal-þrætueplið í þessu efni, en það er um fyrirkomulag þegnskylduvinnunnar. Um þetta hafa komið fram allskiftar skoðanir. Vilja sumir, að þegnskyldan sé einnig skattur, er lagður verði á hina yngri menn, sem eru að mestu eða öllu lausir við opinber gjöld, og að landið hafi hennar full not þegar í stað með vegavinnu og öðrum framkvæmdum, er þegar þarf að starfa að. Í sjálfu sér virðist ekki hægt að skoða þetta ranglátt né óeðlilegt. Og þann mikla kost hefir það, að kostnaður fyrir landssjóð við þegnskylduvinnuna verður minstur á þann hátt og auðsær arður í aðra hönd, um leið og unnið er.

En þrátt fyrir þessa auðsæu kosti get eg þó eigi nema að litlu leyti hallast að þessari stefnu. Þegar frá byrjun hneigðist eg að því, að við þegnskylduvinnu ætti að leggja meiri áherzlu á, að hún væri verklegur lýðskóli og veitti þátttakendum ánægju og meiri menningarbrag og félagsskapar. Auðvitað átti einnig að hafa hagnaðarhliðina fyrir augum, en þó einkum fyrir framtíðina með frjósamari, arðvænlegri og fegurri lendum. Og því meira, sem eg hefi hugsað málið, þess sannfærðari hefi eg orðið um það, að þessi stefna sé miklu réttari gagnvart þátttakendum og þeim hagkvæmari. Einnig

að það verði giftudrýgra fyrir þjóðarheildina, og að með framtíðinni verði það blessunarrikara fyrir landið.

Engir hér á landi hafa jafn lengi og stöðugt haft þetta málefni til meðferðar sem »Ungmennafélög Íslands«. Hefir mikill meiri hluti félagsmanna verið því fastlega fylgjandi. Blað þeirra, »Skinfaxi«, hefir, og stöðugt stutt málið, og á síðastliðnu vori skrifar Sigurður magister Guðmundsson mjög ljósar og skynsamar greinar um það. Mér hefir stöðugt virst, að skoðanir »Ungmennafélaganna« um það, hvert markmið þegnskylduvinnunnar ætti að vera, féllu að mestu saman við þær skoðanir, sem eg hefi haft á því frá öndverðu. Tel eg því víst, að það væri mikill vonarsviftir fyrir ungmennti landsins, ef þegnskyldan ætti einungis að vera vinnuskattur á þau, þótt eg viti, að margir vilji fúslega offra þriggja mánaða vinnu sinni fyrir ættjörðina, við störf, er nauðsynlega þurfa að framkvæmast hið allra fyrsta.

En skyldi svo fara, að við þegnskylduvinnuna væri einkum lögð áherzla á það, að hún væri vinnuskattur, þá mætti það þó eigi bregðast, að þeirri hugsjón væri fylgt, að dagleg vinna stæði aðeins yfir í 8 stundir. »Áherzla einkum lögð á reglubundna stjórn og lipra tilsögn, hagkvæm verkfæri, rétt handtök, góða ástundun og hæfilegan röskleika.

»Til líkamsæfinga gangi tvær stundir daglega.

Til hreinlætis og þjónustubragða gangi ein stund, undir nánu eftirliti og tilsögn kennara.

Til fyrirlestra og umræðu um það, sem kent er, gangi ein stund. Áherzla einkum lögð á aflfræði, útskýring á verkfærum, um þrifnað og aðra háttsemi.

Til borðhalds og frjálsra afnota gangi 4 stundir.

Svefn 8 stundir¹⁾.

En þótt þessu væri fylgt við þegnskylduvinnuna, þá má samt óttast, að margir gengju nauðugir til hennar, ef

¹⁾ Það sem hér er innan tilvitnunarmerkja, er tekið úr Andvararitgerð minni 1908 um þegnskylduvinnu.

hún væri aðallega vinnuskattur, og notin því minni af henni fyrir þátttakendur og vinnuþiggjandann en æskilegt væri. Svo væru þarna unnin verk, sem framkvæmd væru engu að síður. En með hinni stefnunni væri einkum unnið að þeim störfum, er annars myndu að nokkru eða öllu falla í útideyðu og vanrækslu, en eru þó engu að síður bráðnaudsýnleg til að bæta og prýða landið og gera það byggilegra. Eg fylgi þeirri stefnu því við þær lauslegu áætlanir, sem eg reyni að setja hér fram og byggja á.

Eg hefi heyrt menn setja fram þær spurningar, hvort til nokkurs væri að yrkja land, nema nægur áburður væri fyrir hendi, og hvort verkefni myndi eigi bráðlega þrjóta.

Verkefnið er óþrjótandi, og svo viðhaldið á því, sem komið verður í framkvæmd. Til að afgirða lönd, grísa skógarleifar og jafnvel til að græða út skóg þarf eigi áburð. Og árnar hafa flutt frá ómunatið ógrynni af áburði árlega til sævar. Hér eru víðáttumikil lönd, er þurfa í félagsskap að takast til áveitu og framræzlu. Þá eru hér og þar til sveita og afrétta afarstór svæði, sem eru óræktarflóar að litlu eða engu nýtir. Og þótt svo hagi til, að eigi sé hægt að rækta þá með áveitu, mætti þó á nokkrum árum gera þá að góðum beitolöndum. En með vaxandi fólksfjölda og velmegun, sem allir treysta á, eykst búfjárstofninn mjög, er heimtar aukin og endurbætt beitolönd. Má það í stórfeldum stil á þennan hátt, og með jurtafærslu og útgræðslu mætti og nokkuð stuðla að þessu. Til eru héruð, þar sem með öllu vanta ýmsar nytjajurtir, sem virðast þó vel geta þróast þar, ef þær væru innfluttar eða sáð til þeirra. Í þessu sambandi detta mér í hug Hnappadalshraunin. Þau virðast yfirleitt mjög ófrjó. En einkennilegt þótti mér, hve víða voru þar reyniviðarangar og einir. Sennilegast er, að fuglar hafi flutt fráein. En hve mikið mætti flýta fyrir endurbót beitolandanna, ef mennirnir hjálpuðu einnig við það, að flytja til fráein, hvernar tegundar sem væru, ef hugkvæm eru fyrir þann og þann staðinn. Og svona má taka einn blettinn af öðrum í öllum fjórðungum landsins.

Eg veit, að til þess að plægja og yrkja lönd í stórum stíl til grasræktar og garðræktar, þarf áburð. En bæði er það, að hann er víðast ver hirtur en vera ætti, og margt látið óhirt, sem nota mætti. Þar sem létt er með að flutninga, gæti og verið hagur að því, að drýgja fyrir sér með erlendum áburði. Það virðist heldur ekki óhæfa að benda til þess, að skeð gæti, að tímarnir færu að styttest, er liða til þess, að vér förum að nota fossana til að vinna áburð úr loftinu; því að það hefir reynst Norðmönnum mjög arðvænlegt.

En ef áhugi og framkvæmd fengist á því, að nota vatnið eins og má til jarðræktar, þá framleiddist af því fódri ómetanlega mikill áburður á þá staði, sem vatni verður eigi við komið til ræktunar. Eg er eigi svo kunnugur hér á Suðurlandi, að eg vilji ræða um þær stórfeldu endurbætur, sem víða væri hægt að gera með vatninu, og hagkvæmt væri að þegnskyldan ynni að. En á Norðurlandi er eg víða allkunnugur, og hefi séð, hve mikilvæg þegnskylduvinnan gæti víða orðið fyrir þann landshluta. Eg vil hér að eins benda til Skagafjarðar. Frá Vindheimabrekku og nær gegnt þeim að austan og langdrægt til sævar mætti leggja alt láglendið undir vatnsrækt. En mestöll vatnsleiðsla og framræzla þar þarf að leggjast í fjelagsskap, og hagar því vel fyrir þegnskylduvinnu. Þetta áveitusvæði er svo víðáttumikið, að annað eins er ekki til hér á landi nema sunnanlands austanfjalls. Væri þetta mikla land alt hagnýtt á réttan hátt, er ómögulegt að renna grun að, hve marga tugi þúsunda hesta það myndi veita árlega af ágætu heyi fram yfir það, sem það veitir nú, og hve mikið land mætti rækta með þeim áburði, sem það hey framleiddi. Meðal annars má nefna landsvæði »vestan vatna«, nálægt 15 km. á lengd. Þar er rennislétt votengi frá Vatnabökkum og upp að Langholtinu. Um breidd þori eg ekki að segja neitt nákvæmt; en víðast mun hún vera 3—4 km. Ofan við þetta votlendisflæmi standa býlin austan á Langholtinu. En þar er víðast vel fallið til túnræktar. Þar vestur af

Langholtinu eru beitolönd. Væru nú þessar votlendur settar í rétta rækt með áveitum og framræzlu, og sá áburður, er framleiddist af heyinu þaðan, ásamt þeim áburði, er taðan framleiddi, notaður til grasræktar, þá mætti telja það góð býli á þessu svæði, er hefðu 300—400 m. breiða landspildu. Frá Sauðárkróki liggur akbrautin suður austan á Langholtinu. Stæðu býlin fram með henni. En á veturna er vegurinn sjálflagður eftir sléttum ísunum fyrir neðan. Að sönnu yrði þröngt með beitolönd. En þó að kýr gengju meiri hluta sumars í afgirðingum á ræktuðu landi, þá ætti engu að síður hvert býli að fá í meðalári 1000—2000 hesta, 100 kílógramma, af heyi, er alt væri af ræktuðu landi, annaðhvort með vatni eða vanalegum áburði.

Þó að eg taki þetta sem dæmi, má víða, bæði á Skagafjarðarláglendinu og ýmsum öðrum stöðum, endurbæta á svipaðan hátt, þegar landið verður tekið til líkrar ræktunar og algeng er í öðrum menningarlöndum.

En hvað ætlast menn til, að vér stöndum lengi og horfum á ræktunarleysi landsins og amlóðahátt vorn gagnvart því? Og enn fremur horfa á þá litlu bletti, sem endurbættir eru hér og þar, skemmast og jafnvel eyðileggjast með öllu fyrir vanþekkingu, vanrækslu og trassaskap? Eða eigum vér í makindum að bíða eftir landsföðurlegri umhyggju og framkvæmdum andstæðinga þegnskylduvinnunnar?

Víða í öðrum löndum hagar oft svo til, eins og t. d. nú, að þegnskylduvinnan gengur til þess að drepa bræður sína og eyðileggja löndin og mannvirkin og leiða hörmungar yfir þjóðirnar. En í stað þessa á þegnskylduvinnan hjá oss að ráðast á viðáttumikil landflæmi og rækta þau eins og síðaðri þjóð er samboðið. Láta plógin brjóta jörðina í tún og matjurtareiti; leggja skurði til áveitu og afræzlu; hlaða öruggar stíflur og leggja brýr og vegi eftir því, sem störf og not þegnskylduvinnunnar krefja; græða út skóga og leggja blómreiti; og yfirleitt gera alt, sem menningin krefur, að gert sé fyrir landið,

svo að það sé vel byggilegt siðraðri þjóð. En þetta næst víða eigi nema með stórfeldum félagsskap og krafti. Fæ-eg tæplega séð aðrar leiðir vænlegri og heppilegri til framkvæmda í þessa átt en þegnskylduvinnuna.

Þá má eigi ganga fram hjá því, að sumir hafa talið það óhæfu að ætlast til þess, að sjómenn væru teknir í þegnskylduvinnu. En margt getur orðið til þess, að menn vilji hætta sjómensku, að heilsan leyfi eigi annað, en sá hinn sami kunni að geta stundað landvinnu. Enginn veit, hvað fyrir kann að koma á langri leið, og ætíð er betra að kunna það, sem þarft er, en kunna eigi. Spekingurinn Benjamin Franklin lætur Rikharð hinn snauða segja: »Sá, sem kann verknað, hann á býsna fjárstofn, og sá, sem hefir atvinnuveg, hann hefir heiðarlegt embætti og arðvænt«.

Nokkuð almennt má það teljast hér á landi, að menn stundi vinnu bæði til lands og sjávar. Einnig eru það ekki fáir sjómenn, er eiga eða hafa ráð yfir landspildu til ræktunar. Enn fremur verður að gæta þess, að ef skútumenn taka síðara vinnuskeið sumarsins, eins og sjálfsagt virðist, þá er það algengast, að þeir missa eigi nema mánaðartíma eða líðlega það frá skútuvinnunni. — Og þetta er að eins eitt sumar af æfinni. En á botnvörpum munu þeir eigi vera tiltölulega margir, sem eru innan við tvitugt. — Og ef skólaskipið fengist, sem treysta verður, þá myndu margir sjómenn geta int þegnskylduvinnu sína af hendi á því. Enn fremur er nú farið að ræða um, að bæjarfélög geri út skip til veiða. Kæmist það á, ætti að vanda þar sem best til alls, svo að sjómenn gætu á þeim skipum leyst af hendi þegnskyldu sína.

Það er athugavert, en þó í raun og veru mjög svonáttúrllegt, að tiltölulega eru þeir margir af andmælendum þegnskylduvinnunnar, sem vegna atvikanna hafa aldrei lært neitt til verka, og aldrei tekið neinn verulegan þátt í þeim, hvorki hér né erlendis. Þó leyfa þeir sér að tala um þetta mál, sem þeir vitanlega bera ekkert skynbragð

á, og dæma um stundvísi, reglusemi við störf og verklega kunnáttu manna hér, samanborið við það sem tíðkast er-
lendis. En þetta er »nýmóðins« islenzkubragur, sem farið
er að tíðka á Alþingi sem annarstaðar.

Mikið hefir verið rætt um það samband, er eg hefi
sett þegnaskylduvinnuna í við landvarnar- eða heræfinga-
skylduna, og hefir það hneykslað suma. Enn fremur segir
Einar garðyrkjufraeðingur Helgason í 3. tölublaði XI. árg.
Lögréttu, að mér sé í þessu efni hermenskubragurinn hjart-
ans mál.

Það virðist því eigi fjarri lagi að athuga, hvað vald-
ið hefir þessu mikla umtali og hneykslunum. Ástæðan er
einungis sú, að í Andvararitgerðinni um þegnaskylduvinnu
1908 segi eg, að þegnaskylduvinnan sé smávægileg
fórn til landsins samanborið við það, sem aðrar þjóðir
offra sínum ættlöndum með landvarnarskyldunni og öllu
því, er af bardögum leiði, þegar til þeirra reki. — En
það er ekki einungis, að einstaklingarnir hafi þungar byrð-
ar af þessu, heldur bera einnig ríkissjóðirnir afskapa
byrðar af því. Líka sagði eg í ritgerðinni það, sem hér
verður tekið orðrétt upp og hljóðar þannig: »Að þeir,
sem vinnunni stjórna, geti kent hana vel, og stjórnir eftir
föstum, ákveðnum reglum, líkt og á sér stað við heræf-
ingar í Danmörku«.

»En með þessu er auðvitað einungis meint, að jafn-
föstum reglum sé fylgt með stundvísi, hlýðni, stjórn-
semi, háttprýði, reglusemi, hreinlæti, og að
réttum handtökum og hreyfingum sé beitt við
starfið. Enn fremur að svipuðum reglum væri fylgt með
vanheilla eða fatlaða menn með undantekningu frá þegn-
skylduvinnunni«.

Þetta er nú alt og sumt.

Að eg benti til heræfinga Dana var sökum þess, að
þær voru hinar einu, er eg þekti dálítið af eigin sjón, og
vissi að Danir stjórnðu þeim mannúðlega. Hefði eg til-
nefnt Þjóðverja, myndi það hafa þótt ganga guðlasti næst,
svo illræmdir voru þeir þá fyrir harðneskju sína við her-

æfingar, þótt allur heimurinn dái þá nú fyrir hermensku og dugnað. Mér hefir skilist á sumum, að heræfingarnar væru að eins skemtilegar líkamsæfingar, sem alls eigi mætti að nokkru leyti bera saman við þegnskylduvinnuna eða þrælavinnuna, er sumir nefna svo. En þetta er hinn mesti misskilningur. Störfin eru mörg og margvísleg. Yfirleitt eru heræfingar mjög erfiðar. Aðaláherzlan er lögð á dugnað og þol, samtök og hlýðni. Halda menn t. d., ef lítið væri annað lært en ganga, hoppa og snúa sér við, axla og hvíla og fleira því um líkt, að herir, sem skifta hundruðum þúsunda, gætu komisi með góðri reglu áfram yfir torfærur með fallbyssur og óhemju alla af öðrum hergögnum og flutningi og eyðileggja allt fram undan, og bæta það svo jafnóðum upp á eftir sér, og fleira því um líkt.

Það er óhætt að segja, að heræfingarnar þýzku hafa verið harður, en fullkominn verklegur skóli, en ekkert barnaglingur.

Líka má benda til þess, að við heræfingar nýliðanna á Englandi síðastliðið sumar gengu um $\frac{9}{10}$ hlutar af starfinu til moksturs, því að nú skiftir svo afarmiklu, að hægt sé að koma upp skotgröfum í flughasti.

Ættjarðarást og fórnfýsi Þjóðverja er viðbrugðið. Þó hefir hvílt á þeim þessi þunga og harða þegnskylduvinna, eða það er að segja heræfingaskyldan. Margir hafa þó gengið nauðugir til hennar og ófúsir lagt út í stríðið, sem nú stendur yfir. En þeir leggja ekki hatur á ættjörð sína fyrir það. Þó halda sumir andstæðingar þegnskylduvinnunnar, að menn mundu fyllast ilsku og úlfúðar til landsins, ef þeir skyldu þurfa að offra nokkrum vikum til þess að temja sér hagkvæm vinnubrögð og stuðla að ræktun þess.

En vér erum Íslendingar og því konungbornir, segja sumir, en ekki þrælbornir.

Loks má geta þess, að í þeim löndum, þar sem heræfingaskyldan er ekki lögboðin og menn bjóða sig fram sem friliða, þá er alt frelsið falið í framboðinu.

Úr því er frjálsræðið farið. Ekkert gildir þá nema bláber hlýðnin, þótt ganga verði beint á móti byssukjöftunum út í dauðann.

Til þegnskylduvinnu munu nær allir bjóða sig friviljuglega fram yngri en þeir eru kallaðir; því að rétt álit eg að kalla menn eigi fyrir en 23 ára. En til þess tíma hafi þeir um frjálst að velja, nær þeir vinna, að svo miklu leyti sem unt er. En komið getur fyrir, að neita verði mönnum úr yngstu deild viðtöku, þegar svo ber við, að fleiri bjóða sig fram en hægt er að taka á móti. En þá, sem eigi hafa leyst þegnskylduvinnuna af hendi 23 ára, verður að kalla eftir svipuðum reglum og algengastar eru í þeim löndum, sem landvarnarskyldu hafa, þegar menn eru kallaðir til heræfinga.

Þegar stríðinu, er nú stendur yfir, linnir, og friður verður saminn, þá má búast við, að svo verði hugsunarhætti þjóðanna farið og um hnúta búið, að til margra ára þurfi ekki að óttast allsherjar Evrópustríð. En þrátt fyrir það mun fjöldi hinna vitrustu manna eigi vilja hætta við landvarnarskylduna, af því að þeir telja hana einna viðtækasta og áhrifamesta uppeldisstofnun þjóðanna. En nú mun hún leiðast á nýjar brautir. Nú eru »borgirnar hrundar og löndin auð« og ríkisskuldirnar og skattarnir nista alt undir heljarfargi sínu. Landvörnin mun þá snúast upp í þegnskylduvinnu til að endurreisa mannvirkin, rækta löndin og græða sárin, er djöfulæði hernáðarins hefir bakað þjóðunum. Það mun enginn efi á því, að það liða eigi langir tímar, unz þegnskylduvinna kemst á í sumum löndum með líku sniði og gert er ráð fyrir hér á landi, nema hvað krafist verður lengri tíma.

Við næstu kosningar verður lagt fyrir kjósendur, hvort vér megum hafa sæmd af því að vera hinir fyrstu með þegnskylduvinnu, eða hvort vér eigum að bíða eftir öðrum þjóðum með hana, til þess að geta apað oss eftir þeim, eins og svo vanalegt er með flest.

Í sambandi við þetta leyfi eg mér að tilfæra dálítinn kafla úr bók Guðm. dr. phil. Finnbogasonar, »Vit og strit«.

Hann segir: »Það er nógu gaman, að árið 1910, eða 7 árum eftir að Hermann Jónasson flutti tillöguna um þegnskylduvinnu á Alþingi Íslendinga, ritaði hinn ágæti ameríski heimspekingur William James grein, sem heitir »Moral equivalent of war«. Hún er um það, hvað koma ætti í stað hermenskunnar, til að varðveita með þjóðunum þær dygðir, sem herþjónustan hefir alið: hugþrýði, harðfengi, fórnfýsi og hlýðni, en þær telur James klettinn, sem ríkin verði á að standa. Og ráðið til að halda þessum dygdum við, þegar herskapurinn hverfur, heldur hann að sé — þegnskylduvinna. James segir meðal annars:

»Það er engin ástæða til að gremjast yfir því, að lífið er hart, að menn verða að strita og þola sársauka. Hnetti vorum er nú einu sinni svo háttað, og vér getum þolað það. En að svo margir menn, fyrir það eitt, hvernig fæðing þeirra og aðstaða hefir atvikast, skuli neyddir til að lifa lífi, sem er ekkert annað en strit og stríð og harðrétti og læging, skuli engi fristund hafa, þar sem aðrir, engu rétt hærra frá náttúrunnar hendi, fá aldrei að smakka minstu vitund af þessu lífsstríði, — það getur vakið gremju í hugsandi sálum. Ef til vill fer svo að lokum, að oss þykir öllum skömm að því, að sumir af oss hafi ekkert nema stríðið eitt, og aðrir ekkert annað en dáðlaust hóglífi. Ef nú — og þarna kemur hugsun mín — í stað útboðsins til herþjónustu kæmi það, að öllum æskulýðnum væri boðið út til að vera um nokkur ár í þeim her, sem stefnt er gegn náttúrunni, þá myndi þetta óréttlæti fara að jafnast og margt annað gott af þessu leiða fyrir þjóðfélagið. Hugsjónir hermenskunnar, hugrekkið og aginn, mundu á æskuárunum ganga inn í hold og blóð þjóðarinnar; enginn mundi verða blindur, eins og óhófsstéttirnar eru nú blindar, fyrir sambandi mannanna við hnöttinn, sem þeir lifa á, og fyrir því, hve grundvöllurinn undir æðra lífi þeirra er altaf súr og harður. Hinir hraustu æskumenn vorir mundu þyrpast til kolanáma og járnna, til vörulesta, til fiskiflota í desember, til diskapvottar, fatapvottar

og gluggaþvottar, til vëgagerðar og til graftar á járnbrautargöngum, til steypusmiðja og kyndihola, og til reisupalla himingnæfra húsa, hver eftir sínu vali. Þar fengju þeir barnaskapinn barinn úr sér, og kæmu aftur heim með hollari samúð og heilbrigðari skoðanir. Þeir hefðu þá goldið sinn blóðskatt, átt sinn þátt í stríði því, er mannkynið hefir frá alda öðli háð við náttúruna; þeir mundu stika jörðina státnari en áður, konum mundi þykja meira til þeirra koma, þeir yrðu betri feður og kennarar komandi kynslóðar.

Svona litur nú William James á málið, hinn víðfrægi heimspekingur, sem fjöldi manna hér á landi kannast við. Hann er ekki hræddur við þegnskylduvinnu, né að leggja með henni jafn þungan skatt og erfiða vinnu á einstaklinginn eins og herþjónustan gerir í þeim löndum, sem jafn harðastar kröfur gera í þeim efnum. Gerir hann ráð fyrir, að þegnskylduvinnan standi yfir um nokkur ár. En þótt þetta myndi eigi verða mjög ægilegt í augum þeirra, sem vanir eru hörðu hermenskuútbóði, þá getur ekki neitt slíkt komið til mála hér á landi.

Nú er lögboðið ákveðið bóklegt nám, sem skilyrði fyrir fermingu. Hér er skrefið stigið það lengra, að farið er fram á, að ungir menn verji 12 vikum til verklegs náms, er lögboðið sé. Og mörgum verður að spyrja: Er það eigi jafn mikilvægt fyrir land og lýð, sem hið lögboðna bóklega nám?

Eg sagði áður, að vinnan færðist til. En þá er að athuga, hvaða gildi það hefir. Landið hefir nú verið bygt um 1040 ár, og á síðari árum hefir, samanborið við fjárhag vorn, miklu fé verið varið til ýmsra búnaðarframkvæmda. En hver er árangurinn? Lítum á landið fyr og nú. Að sönnu eru allvíða litlir blettir hér og þar, sem þótt þeir séu misjafnlega ræktaðir eru byggilegri nú en áður fyr. En meiri hluti landsins er miklu ver farinn nú en á landnámstíð. Það er ekki einungis að græða verður sárin, heldur verður einnig að rækta landið og prýða með endurbótum, jafnt sem önnur lönd.

Komist þegnskyldan ekki á, situr margt í líku horfi og hingað til. Hér og þar verða ræktaðir örlitlir blettir og græddir upp, og það engu síður á útkjálkum og til aðala en í aðal-héruðum. Vill þá oft svo fara, að þegar sú höndin er stirðnuð, sem að þessu vann, fari alt í kalda kol eða eyði. Og svo hættir oss svo hörmulega til þess að láta holklaka og aðra eyðileggingu ónýta á skömmum tíma jarðabæturnar, svo að þeirra gætir ekki eftir nokkur ár — viðhaldið vantar of víða. En á hinn bóginn, ef þegnskylduvinna kemst á með réttu sniði, þá munu menn naumast þekkja landið að 30—50 árum liðnum eftir að hún var fyllilega komin á stofn. Þá munu stór landsvæði á hentugum stöðum plægð, sléttuð og ræktuð með áburði, og enn stærri svæði ræktuð með vatni og framræzlu, þar sem þörf var fyrir. Viðáttumikil lönd, bæði í bygð og til afrétta, sem nú eru óræktarflóar, að litlu eða engu nýtir, munu þá framræstir og orðnir að góðum beitilöndum, og vel fallnir til ræktunar. Jurtagróður landsins hefir verið færður til og á ýmsan hátt hjálpað til að græða upp það, sem gróðurlaust var, og endurbæta á öðrum stöðum. Þá munu sameignar-matjurtagarðar ná á sumum stöðum yfir viðáttumikil svæði. Skógræktarstöðvar vera hjer og þar og allar skógarleifar friðaðar, grisjaðar og vel hirtar. Land og skepnur verður þá friðað með girðingum, þar sem nauðsyn krefur. Víða verða gróðrarstöðvar og fagrir smálundar og blómreitir við býlin. Og á einum eða fleiri stöðum á landinu verða svo fullkomnar gróðrarstöðvar, að þær geta ræktað og framleitt alt það, sem æskilegt er að rækta hér á landi. Og svona má lengi telja.

Þegar því þegnskylduvinnumálið er lagt undir atkvæði þjóðarinnar, þá verður hver og einn atkvæðisbær maður spurður að því, hvort hann vilji að lagt sé fram fé og kraftar, til þess að menn verði framvegis verkhæfari og stjórnsamari en hingað til, og að landið verði sem fyrst endurbætt og prýtt og gert samboðið sjálfu sér og síðaðri þjóð.

Ábyrgðin er því mikil við undirbúning atkvæðagreiðslunnar og á hverjum kjósanda með atkvæði sitt.

Á síðastliðnu hausti skrifaði Einar garðyrkjufræðingur Helgason í »Frey« og lagði þar á móti þegnskylduvinnunni. Og í sama anda skrifar hann nýverið í Lög-réttnu. Mér kom þetta mjög óvörum. Einar hefir þó lært til verka og er því vorkunnarlaust að hafa séð, hve mikið sleifaralag er hjá fjöldanum, að því er vinnubrögð snertir, stundvísí, hlýðni, stjórnsemi og fleira, sem hin brýnasta þörf er að ráða bætur á, ef unt væri. En ekki þarf að efa, að þegnskylduvinnan geti það og geri það, ef hún er rétt framkvæmd. Einar hefir og lengi verið ráðunautur Búnaðarfélags Íslands, en það hefir í allmörg ár fengið vissa menn til að halda plægingaskóla tíma að vorinu. Og nú á síðustu árum hefir einnig verið námsskeið í garðyrkju að vorinu í Gróðrarstöðinni í Reykjavík. Einkum er það kvenfólk, sem hefir tekið þátt í hinu síðarnefnda námsskeiði, og hafa sumar þeirra einnig lagt plægingu fyrir sig.

Þessi námsskeið hafa það sameiginlegt með þegnskylduvinnunni, eins og hún hefir verið hugsuð, að kend er grasrækt og matjurtarækt, og að nemendum eru lagðir til fæðispeningar, og þeir, sem langt eiga að, eitthvað styrktir til ferðanna.

Gallinn er, að þessi námsskeið hafa staðið ofstutt yfir og ekki nema um 20 nemendum veitt árlega móttaka. Þetta er því í raun og veru hvorki heilt né hálf. En hafi þessi námsskeið þó ekki orðið þátttakendum til nota, þá er það eingöngu röngu fyrirkomulagi að kenna, eða þá verkstjórunum eða kennurunum. En um þetta á Einari að vera öllum mönnum kunnugast. Geti vil eg þess þó, að nemendur munu hafa haft talsverð not af þessu. En þeir hafa verið svo sárafáir. Námsskeiðin ofstutt og ástæður þrengri og erfiðari en heimta verður af þegnskylduvinnunni, þegar hún er komin rétt á laggirnar.

Eg ætla ekki að rekja sérstaklega mótbárur manna, hvers út af fyrir sig, til að mótmæla þeim. Yfirleitt má

segja, að öll andmæli gegn þegnaskylduvinnunni séu hin sömu, hvort sem þau hafa komið fram í ræðu eða riti. Þau eru veigalítill og lítið rökstudd, og ósjaldan að meðhaldsmönnum þegnaskyldunnar eru gerð upp orð og hugsanir, sem þeim hefir aldrei til hugar komið, heldur hið gagnstæða. En það er ekki óvanalegt, að óhlutvandir skraffinnar beiti þessu lúalagi, sem hverju góðu máli er til fordjörfunar, og allir mætir menn verða að forðast.

Það skal fúslega játað, að meðhaldsmenn þegnaskylduvinnunnar hafa eigi heldur skrifað eða rætt um málið með gildum rökum. En frá því fyrsta hefir því verið haldið fram af þeim, sem og rétt er, að slíkt væri eigi hægt til hlitar, meðan óráðið væri um fyrirkomulag þegnaskyldunnar, en að það hlyti að verða reynslan, er aðallega ákvæði fyrirkomulagið.

Eg vil nú stuttlega athuga þær helztu mótbárur, er fram hafa komið gegn málinu á Alþingi og svo annarstaðar í ræðu og riti.

1. Þá tel eg fyrst þá mótbáru, sem allmargir hafa snert við, að þegnaskyldutíminn sé svo stuttur, að menn geti ekkert lært sér að gagni á honum.

Um þetta er hægt að deila svo mikið á báðar hliðar, að eg legg eigi út í svo langt mál. Eg vil að eins leyfa mér að segja frá tveimur dæmum af fjöldamörgum, sem borið hafa fyrir mig.

Eg var að vorlagi við jarðabótavinnu. Átti að vinna á nokkrum bæjum til skiftis af sama vinnuflokki. Lögðu menn sér til verkfæri og gistu heima hjá sér á nóttum. Sagði eg mönnunum, nær vinna ætti að byrja að morgninum og bað þá að hafa verkfæri sín í góðu standi og mæta stundvíslega.

Fyrsta morguninn mættu sumir á réttum tíma, en aðrir ekki, og voru þeir að tínast að einn eftir annan. Eg sætti lagi að deginum að segja einslega með hægð við hvern og einn af þeim, að í kveld gæti eg ekki verið að því að láta hann hafa eftirvinnu jafnlangan tíma og hann hefði vantað upp á að morgninum, af því að þetta væri

fyrsti dagurinn. En kæmi slíkt fyrir framvegis, þá sæi hann sjálfur, að eg mætti eigi gagnvart þeim, sem kæmu í tíma, og gagnvart vinnuþiggjanda annað en láta hann hafa eftirvinnu, en það væri miklu leiðinlegra fyrir hann. Sérhver tók þessu mjög vel, og eftir það mættu allir stundvíslega.

Til þess nú að laga þetta atriði þurfti ekki nema einn dag eða réttara sagt eina bendingu.

Svo var annað. Sumir af þessum mönnum komu með spaða, sem voru svo bitlausir og marðir fyrir egg, að drep var að vinna með þeim, þótt ekki væri nema hálf tó verk. Þegar eg sá þetta á vinnubrögðunum, fór eg til þeirra og sagði við þá með hægð, að þeir ofþreyttu sig á því að vinna með óhæfum verkfærum. Eg hafði hjá mér stöðja, klöppu og þjöl. Svo var einn spaðinn tekinn eftir annan og eigi skilið við þá, fyr en þeir stóðu á nóg.

Svo þegar menn tóku aftur við verkfæri sínu, varð flestum að orði: »En sá munur! Þetta er verkfæri, sem þreytir mann eigi«. Eg bað menn svo að gæta þess vel að hafa verkfærin sín ætíð í sem beztu lagi, og gættu þeir þess vendilega eftir það.

Hér þurfti eigi heldur nema einn dag eða eina leiðbeiningu til þess, að gjörbreyting yrði á vinnunni. Og svona má lengi telja, og hve mikilvæg hver vakning er, verður aldrei metið.

2. Að ómögulegt myndi reynast að útvega hæfa verkstjóra.

Medhaldsmenn þegnskylduvinnunnar hafa einnig talið tormeðki á þessu, en þó alls eigi þá torfæru, sem ekki yrði yfirstigin. Þeir sjá ekki heldur alstaðar ljón á veginum, né leita þau uppi. Vér eigum, sem betur fer, margt af mjög efnilegum og áhugasömum mönnum, er hafa talsverða verkhygni og verklega þekkingu til að bera. Og yfirleitt standa þeir öðrum þjóðum alls ekki að baki, hvað stjórnlagi og verklagni snertir, ef þá vantaði ekki nauðsynlega kunnáttu, æfingu og rétta vakningu í þessu efni, er skiftir litlu minna.

Ef nokkrir þeir líklegustu þessara manna væru kostaðir til verklegs náms á góðum erlendum búnaðarskólum og gegndu auk þess landvarnarskyldu, þar sem hagkvæmast þætti í $1\frac{1}{2}$ —1 ár, þá myndu vel hæfir menn fást til starfans. En menn með þessari mentun þurfum við nauðsynlega að fá, hvort sem um þegnskylduvinnu er að ræða eða ekki. Lánist þetta ekki, þá verður í byrjun að fá vel valda erlenda menn, er stæðu fyrir allsherjar þegnskylduvinnuskóla hér á landi, er kendi verkstjórn og þau störf, er gera mætti ráð fyrir, að unnin yrðu í þegnskylduvinnunni. Sumum mun virðast það læging fyrir oss, að sækja menn til útlanda, en það er það alls eigi. Það er heiður vor að fara þær beinustu og beztu leiðir, er til framfara liggja. Einnig má líta til þess, að flest það, sem myndarlegast er hjá oss í verklega átt, hvort sem er til lands eða sjávar, þá hefir kunnáttan á því verið sótt til annarra landa. Er það engin hneisa fyrir oss, því að altítt er, að þjóðirnar læri hver af annara reynslu, það er að segja, ef þær vilja nokkuð læra, en daga eigi uppi sem nátttröll af þekkingardrambi og spiltum skoðunum. Ekki er það heldur einsdæmi, að miklu sé kostað til að kenna mönnum verkstjórn og stjórnsemi, eða halda andmælendur þegnskylduvinnunnar, að þeir tugir þúsunda, er Þjóðverjar hafa af góðum verkstjórum og herforingjum, hafi sprottið upp með grasinu, án náms og kostnaðar?

Einkennilegast af öllu verður þó að álíta, að sömu mennirnir, er halda því fram, að við höfum enga hæfa verkstjóra og á því verði engar bætur ráðnar, reyna þó að hamra það blákalt fram, að oss sé í engu áfátt með stundvísi, hlýðni, stjórnsemi og verklega kunnáttu. Svona gersamlegar mótsagnir virðist mætti telja vægast sagt meiningarlaust og hugsunarlaust blaður eða orðagjálfur.

Í ritgerð minni í Andvara 1908 taldi eg sjálfsgagt, að í byrjuninni væri útboðið til þegnskylduvinnunnar frjálst, en eigi lögboðið, meðan vanta kynni næga og góða kenslukrafta og vel hæfa verkstjóra; og enn fremur meðan verið væri að leita eftir hinu hagkvæmasta fyrirkomulagi við

vinnuna. Reynist þetta eigi einhlítt, mætti með lagaboði kalla þann árgang af mönnum, sem hefðu það aldurstakmark að ofan, er álitid væri rétt að byrja þegnskylduvinnuna með.

Það skiftir mestu að fara hægt, gætilega og skynsamlega á stað, og vanda sem bezt til við allan undirbúning. Mun þá alt ganga farsællega, og þeir agnúar aldrei koma í ljós, er andstæðingar þegnskylduvinnunnar basla við að smíða til að hengja sjálfa sig á.

3. Að kostnaður landssjóðs yrði afarmikill.

Til þessa er því að svara, að eins og áður er tekið fram, verður eigi leyst úr þessu fyr en með reynslunni. Eg vil þó koma hér fram með lauslega áætlun, sem menn geta athugað, deilt um og endurbætt. Eins og nú stendur, myndu árlega eiga að vinna hátt á áttunda hundrað manna, ef árgangarnir væru jafnaldra. En sennilegt er, að vegna vanhalds færðist þessi tala niður undir 700. En sökum þess að fólki fjölgar lítið eitt í landinu, og vissa mun fyrir því, að einstöku menn, sem eldri eru en 25 ára, muni friviljugir æskja að leysa þegnskylduvinnu af hendi, þá set eg töluna 750. Væri nú þegnskylduvinnan 12 vikur fyrir mann, eins og helst var gert ráð fyrir á síðasta Alþingi, þá ynni fyrir það mesta helmingur í 12 vikur fyrri hluta sumars, en hinn helmingurinn síðari hlutann. Yrðu það því nálægt 375 manns, er ynnu samtímis. Eg geri ráð fyrir 9 verkstjórum, en sennilegt er, að þeir séu of fáir, þótt nemendur eigi að taka þátt í verkstjórn. Væru að minsta kosti þrír af verkstjórunum ágæta vel vaxnir starfinu, bæði hvað hæfileika og alla kunnáttu snertir, svo að þessir þegnskyldumenn gætu unnið á þrem stöðum í senn, ef hagkvæmara þætti. Meiri skifting að staðaldri er ekki æskileg vegna menningaráhrifanna og viðkynningarinnar, sem ætlast er til, að þegnskylduvinnan veiti.

Að óreyndu er ekki hægt að segja, hve marga starfsmenn þyrfti til flutninga, matreiðslu og ýmsra annara starfa og snúninga, er ætti eigi að leggja á þá, er þegn-

skylduvinnu leysa af hendi. En setjum svo, að þeir væru 21. Ef þessar tölur reyndust nærri lagi, þá yrðu eftir þeim að dæma 405 manns, er landssjóður þyrfti að leggja til fæðispeninga í 24 vikur eða 168 daga, er eg set til bráðabirgða 1 kr. á dag og mann, er

verða	kr.	68,040
Laun 9 verkstjóra í 168 daga, 6 kr. á dag		
og mann	—	8,910
Laun 21 starfsmanns í 168 daga, 3 kr. á dag og mann	—	10,248
Að óreyndu verður alls eigi hægt að gera nána áætlun um fyrningu, viðhald og vexti af tjöldum, áhöldum, verkfærum, hestum, flutningskostnaði og fleiru. En til þess að jafna tölur og eigi ætti að fara mjög fjarri lagi, set eg það	—	20,802

Útgjöld landssjóðs kr. 108,000

Ef nú 375 manns vinna þegnskylduvinnu í 144 virka daga, 8 stundir á dag, 25 auru á tíma, auk fæðis, verða það tvær krónur á dag, er landið fær í vinnu til sjálfs sín eða þá útborgað frá öðrum.

Verða þá tekjur landssjóðs kr. 108,000

Eftir þessu eiga því tekjur og gjöld landssjóðs að fallast í faðma við þegnskylduvinnuna. En auðvitað getur það ekki orðið með öllu í framkvæmdinni. En þetta ætti að nægja til að sýna, að kostnaður landssjóðs getur aldrei orðið tilfínanlegur. Hér geri eg hann líka hærri en eg hefði áður lauslega áætlað. Bæði er það, að nú er dýrara að lifa en 1908, og svo hneigist eg stöðugt meir og meir að því, að notin verði sem mest fyrir þátttakendur, og sem mest stund sé lögð á ræktun landsins, þótt borgunin komi eigi jafn fljótt í aðra hönd, sem við ýms önnur störf. Og svo er þegnskylduvinnutíminn gerður þriðjungur lengri. En ef sú stefna yrði tekin, að hafa þegar í stað sem mestan arð af vinnunni, þá hlyti kaupið

að verða til muna hærra, og landssjóði því auðsær hagar að vinnunni.

Á öðrum liðum setti landssjóður að spara, t. d. með styrk til búnaðarfélaga, skóggræðslu, sandgræðslu, gróðrarstöðva o. fl. Og þótt svo færi, að hann hefði nokkurn kostnað í svip, væri hann með öllu hverfandi samanborinn við herkostnað þeirra þjóða, sem hann hafa. Þess ber líka að gæta, að eftir því sem þátttakendum þegnskylduvinnunnar fjölgar, þess minni verður kostnaður landssjóðs hlutfallslega við vinnuáðinn.

4. Að þetta legði afarþungan skatt á þá, sem þegnskylduvinnu eiga að inna af hendi.

Eg veit vel, að þessa grýlu reyna sumir að magna sem mest, svo að hún verði sem ægilegust. Ætla þeir með því að tendra upp smámunasemi hjá þjóðinni, en þá væri henni illa gengið, ef sú tilraun tækist. Og svo er annað. Lítilsigldir menn og athugalitlir þola háð mjög illa, hvort sem því er beitt gagnvart þeim sjálfum eða málefnum þeim, er þeir fylgja. En á þeim sannast hið fornkvedna: »margur hyggur mann af sér«, og því treysta þeir á háðið, sem hið bezta og áhrifamesta andlegt vopn, er þeir séu menn til að beita. En þótt oft sé gagnlegt fyrir einstaklinginn að verða fyrir háðinu, þá er alrangt að beita því gagnvart stórmálum, eins og þegnskyldan óncitanlega er, frá hverri hliðinni sem hún er skoðuð. Alvörumálin krefjast þess að verða rædd með alvöru. Og sú kemur tíðin, að þjóðin nær þeim andlegum þroska, að hún getur að verðleikum metið viðlíka drápstilraun sem »Hersöng þegnskylduliðsins«, og annað af svipuðu tagi, gegn mikilvægum landsmálum.

Eg geri ráð fyrir, að þegar fram í sækir, leysi flestir þegnskylduna af hendi á aldrinum frá 18—20 ára. Eg álit því hæfilegt að ætla hverjum pilti til jafnaðar 12 kr. á viku auk fæðis, eða að alls verði að reikna peningatjón hans í 12 vikur 144 krónur, er hann bíður í eitt skifti fyrir öll við þegnskylduvinnuna. En tæplega mun þetta reynast svo mikið til jafnaðar í raun og veru. En alls

verða þetta fyrir 750 manns 108.000 krónur. Og af þessum mönnum vinna minst helmingur, áður en sildvinna byrjar.

Að ætla hverjum manni upp og ofan 100 krónur í kaup á mánuði til jafnaðar, auk fæðis, er gegndarlaus fjarstæða, þótt Einar Helgason haldi því fram í 3. tölubl. XI. árg. Lögréttu. Eg veit, að þetta getur átt sér stað rétt af hendingu um einstaka mann.

Frá því að menn leysa þegnskylduvinnu af hendi, mun að jafnaði mega telja að menn vinni fulla vinnu í nær 30 ár. Menn verða því að hafa lært svo mikið í þegnskylduvinnu, að þeir geti með hagkvæmari verkfærum og vinnubrögðum, verklegri kunnáttu og betri verkstjórn sparað sér um 5 dagsverk á ári yfir þetta nær því 30 ára skeið. En ef nokkurt lag verður á þegnskylduvinnunni, er sjálfsagt verður að heimta og koma í framkvæmd, þá sparar hún hverjum verk hæfum manni margfalt meira. Þegar fram í sækir, verður því mun meira unnið í landinu, þótt þegnskylduvinnan sé alveg dregin frá.

5. Að heimilin mistu tilfinnanlega mikla vinnu, ef menn færu frá þeim í þegnskylduvinnuna. Hér er »stungið á kýlinu«. Frá því fyrsta að þegnskylduvinnunni var hreyft, hefi eg stöðugt fundið, að í raun og veru lægi aðalmótstaðan í því, að erfiðara yrði að fá menn til vanalegrar vinnu. En það er hér sem fyr, að of mikið er gert úr þessu. Matthías alþm. Ólafsson hefir sýnt fram á, að þetta væri hverfandi, þegar þess væri gætt, að það yrðu aðeins 4—5 menn, er mistust 12 vikur á ári úr hverju sveitarfélagi að jafnaði. Og við umræður málsins á þingi, heyrði eg Guðmund alþm. Hannesson segja, að eins og nú stæði, mundu það eigi vera nema tæpir 20 manns, er tækju árlega þátt í þegnskylduvinnu til jafnaðar í allri Húnavatnssýslu.

Því skal ekki neitað, að vinnan færist til, og á einstaka heimili verður unnið minna fyrst í stað en áður var. En eins og þegar er bent til, verður meira unnið í land-

inu, þegar þegnskylduvinnan hefir staðið nokkur ár, þótt þegnskylduliðið sé frádregið eða undanskilið.

6. Að óvanir menn framleiddu minna verk en vana-
legir verkmenn, og því yrði vinnan landssjóði jafnvel dýr-
ari en launuð vinna.

Hér kemur fram sama athugaleysið og fyr. Það kem-
ur eigi til nokkurra mála, að menn á aldrinum 18–20
ára, og sumir 20–25 ára, sem vinna undir góðri verk-
stjórn með hagkvæmum verkfærum, séu landssjóði dýrari
sem matvinnungar, þótt sumir séu vinnunni óvanir, held-
ur en menn upp og ofan með fullu kaupi. Það þarf því
ekki að eyða orðum frekar að þessu.

7. Að þjóðinni væri ekki eins ábótavant í verklega
stefnu og haldið væri fram.

Það er áður sýnt fram á það, að eigi geta aðrir haldið
þessu fram í alvöru en þeir, sem þekkja lítið eða ekkert til
vinnubragða hér og erlendis. Má því ganga fram hjá
þessu atriði.

8. Að menn leystu þegnskylduna af hendi nauðugir.
Engin alvara væri hjá ungum mönnum, þótt þeir mæltu
með henni. Það væri aðeins af því, að þeim þætti hug-
sjónin fögur og fengi stundarhrifningu, er hyrfti frá, þegar
til alvörunnar eða framkvæmdanna kæmi.

Þetta leyfi eg mjer að segja, að sé illkvitnisleg spá,
en engin vissa, og engar líkur til. Eg hefi heldur engin
rök séð færð fyrir þessu, heldur hefir því verið slengt fram
sem orðagjálfri, nema ef það skyldu eiga að teljast rök,
er eg heyrði Sigurð alpm. Eggerz segja á síðasta þingi.
Hann tjáði þar frá því, að hann hefði verið á fundi aust-
an fjalls, þar sem rætt var um þegnskylduvinnuna. Henni
hefði verið hampað af nokkrum ungum mönnum. Bauð
Sigurður þeim þá að vinna ókeypis að vegavinnu og öðr-
um framkvæmdum, en engir gáfu sig fram.

Þetta á nú víst að sanna mikið, en það verður mis-
brestur á því. Það stóð eigi til, að nokkrir gæfu sig fram.
Þeir hafa ef til vill ekki treyst Sigurði sem bezt til verk-
stjórnar og verklegrar kenslu. Hafa líka séð, að öll önn-

ur skilyrði vöntuðu, sem ætlast er til, að þegnskyldan veiti.

9. Að mikið af t'ma, og öðrum kostnaði, gengi til ferða að og frá þegnskylduvinnunni.

Þetta er mjög mikilvægt atriði, sem verður alvarlega að ræða. Snemma í vetur var mjög skynsamleg ritgerð í »Vestra« um þegnskyldumálið, og tók Ísafold síðar útdrátt úr henni. Eg felli mig vel við þá tillögu greinarhöfundarins, að »hreppsnefndir semdu skrár yfir alla þegnskylda menn og sendu sýslunefnd; sýslunefnd ákvæði síðan eftir tillögum hreppsnefnda, hvar í sýslunni skyldi unnið og að hvaða verki. . . . Skyldu hreppstjórar hafa gætur á því, hver í sínum hreppi, að allir þegnskyldir, heilbrigðir menn sæktu vinnuna«.

En svo skiftast leiðir milli mín og heiðraðs höfundar. Eg vil, að ákvarðanir sýslunefnda sendist til landsstjórnar, sem ráði nær verkið verður framkvæmt, og í stað sýslunefnda sé það landsstjórn og verkstjórar, sem hafi umsjón alla með vinnunni, og ábyrgð á því, að lögum, er sett verða um þegnskylduna, sé hlýtt. Og þó að sanngirni mæli með því, að hver þegnskyldur maður vinni innan síns sýslufélags og ferðalög yrðu minst á þann hátt, álit eg, að það vegi ekki nándarnærri á móti þeim ókostum, sem eru því samfara. Þegar unnið væri árlega í hverju sýslu- og bæjarfélagi, þá yrði að jafnaði verkstjórn ófullkomnari og meira einhliða. Verkfæri og áhöld yrðu ófullkomnari og fábreyttari. Þetta hvorttveggja væri óumflýjanlegt, nema svo mikið væri borið í kostnað, að það næmi miklu meira en þeim kostnaði, er leiddi af því, að sumir yrðu að sækja nokkuð langt til vinnunnar.

En það sem mestu skiftir er, að uppeldishliðin á þegnskylduvinnunni minkaði tilfínnaðlega. Samræmi í vinnubrögðunum yrði lakara, og þátttakendur færu að miklu á mis við þann mikla kost, að kynnast sem flestum ókunnugum mönnum á svipuðu reki þeim sjálfum, en sem væru með mjög mismunandi þekkingu, skoðanir og stöðu í þjóðfélaginu. Og þeir færu einnig á mis við að kynnast

óþektum héruðum og mismunandi staðháttum og venjum.

Það er annars einkennilegt, hvað sumir hafa gert af-
skaplega mikið úr ferðakostnaðinum og þeim vandræð-
um, sem af því leiddi, að allir ættu að vinna á einum
stað. Hafa þeir reynt að rífa þessa óhæfu niður fyrir
allar hellur. En hér eru þeir að berjast við sinn eigin
skugga eða imyndan.

Í Andvararitgerð minni 1908 tek eg meðal annars
þetta fram: »Ef þegnskylduvinna kæmist alment á, er
sjálfsgagt, að ein eða fleiri aðalstöðvar væru í hverjum
landsfjórðungi, er færðust sýslu úr sýslu eftir því, sem jafn-
réttið krefði«.

Hér er því gengið að því vísu, að það sé að minsta
kosti unnið samtímis á fjórum stöðum í landinu, og að í
hverjum vinnuflokk séu til jafnaðar tæpt 100 manns. En
í hinni lauslegu áætlun minni, hér að framan, miðaði eg
við þrjá vinnuflokka. Væru þá til jafnaðar í hverjum
um 125 þegnskyldir, 3 stjórnendur og 7 starfsmenn. Það
þarf eigi að taka það fram, að stundum þyrfti tíma og
tíma að skifta sama vinnuflokki í deildir til sérstakra
starfa. Unnið væri í þrem landsfjórðungum samtímis, og
enginn fjórðungur færi á mis við vinnuna nema eitt ár í
bili. Einnig var búist við, að oft bæri við, að vinnustöðv-
ar væru fluttar til, þegar skift er um vinnuskeið að sumr-
inu, og þær jafnvel fluttar úr einni sýslu í aðra. Ætti
því engin sýsla að fara á mis við vinnuna lengur en í
hæsta lagi um 6 ár. Úr þeim landsfjórðungi, sem eigi
væri unnið, væri enginn kallaður til þegnskyldunnar nema
hann væri 23 ára og hefði áður eigi leyst hana af hendi.
Og þegar vinnustöðvar væru fluttar að sumrinu milli
sýslna, þá væri þess gætt við útboðið.

Á þenna hátt verða ferðalög til þegnskylduvinnunn-
ar ekkert meiri né erfiðari, en nokkuð alment á sér stað
með hjúaflutninga og ferðir daglaunafólks. Líka má oft
búast við, að margur leitaði sér atvinnu, yfir hálf t sum-
arið, í grend við það, er hann leysti, eða æskti að leysa

þegnskylduna, svo að ferðir að og frá féllu á ódýra árstíma, svo að þetta væri eigi tilfinnanlegt, hvert sem viðkomendur bæru kostnaðinn sjálfir, eða landsjóður greiddi fæðispeninga, er sanngjarnast væri.

Þegar þetta atriði er því skoðað með gætni og skynsemi, ætti það engum að vaxa í augum.

10. Að rangt hafi verið að leggja þegnskyldumálið óundirbúið fram til atkvæðagreiðslu þjóðarinnar.

Um þetta er þó árangurslaust að deila »eftir dúk og disk«, því að »það er komið, sem komið er«. En eg vil þó láta þá skoðun mína í ljós, að í flestum atvikum sé það viðsjárvert, ef ekki með öllu rangt, að leggja nokkurt mál undir almenna atkvæðagreiðslu kosningabærra manna, nema í frumvarpsformi. Í þessu máli er þó engin hætt á ferðum. Engum einasta manni, mér vitanlega, hefir nokkru sinni komið það til hugar, að demba þegnskyldunni í flughasti yfir þjóðina með afli atkvæða, á einu einasta Alþingi. Það virðist því alls ekki rétt, að bera þessa allsherjaratkvæðagreiðslu saman við atkvæðagreiðsluna um aðflutningsbannið.

Þó að sumir kunni að vera mótfallnir því, að þegnskylduvinna skyldi, á þessu stigi málsins, vera lögð undir þjóðaratkvæði, þá má þó enginn mætur maður láta það, eitt út af fyrir sig, leiða sig til að greiða atkvæði á móti henni. Yrði það einungis til að spilla og tefja fyrir málinu. Gæti það eigi sýnt það, að menn væru óánægðir, hvað meðferð málsins snertir, heldur væri álitid, að menn væru gersamlega mótfallnir hugsjóninni sjálfri, eða þegnskylduvinnumni í hvaða mynd sem hún væri.

Hér verður í raun og veru einungis sú spurning lögð fyrir hvern atkvæðisbæran mann, hvort hann sé þeirri hugsjón hlyntur, að hver einasti verkfær og hraustur maður verji í eitt skifti fyrir öll, yfir eitthvert ákveðið skeið æfinnar, 8—12 vikna tíma, sér til verklegrar lýðmentunar, og til þess að græða landið, yrkja það, bæta og prýða.

Verði meiri hluti með þessu, þá verður landstjórn og

Alþingi að semja lög um þegnskylduna, eða þá frumvarp til laga, ef enn skyldi eiga að leggja málið undir atkvæði þjóðarinnar. Einnig verður þingið að heimila landstjórninni hæfilegt fé til náms verkstjóraefna og svo margs annars.

Eg hefi álitnið hentast, og lít svo á enn, að þegnskylduvinnan eigi ekki að byrja störf sín eftir lögum, heldur eftir reglugerð. Lögin yrðu eigi staðfest, fyrir en nokkur reynsla væri fengin, og þá fyrst kæmist þegnskyldan í almenna framkvæmd. Reynslunnar ætti helst að leita með friliðum.

Hve langur tími liður frá því að mál þetta er fyrir Alþingi 1917, og til þess það er komið í fulla framkvæmd, skiftir ekki mjög miklu. Hvað segja 10—20 ár í lífi þjóðarinnar, þótt þau geti verið mikilsverð í lífi einstaklingsins. Mestu skiftir, að unnið sé stöðugt og vakandi að þessu máli og vel sé til þess stofnað. Mun það þá reynast blessunarrikt og farsælt fyrir land og lýð í framtíðinni. Og þá mun svo fara, að til hinnar lagalegu skyldu þurfi eigi að grípa nema við aumustu labbakúta. En sannast mun, að þeir verða ekki margir.

En færi svo, að málið félli við atkvæðagreiðsluna, sem eg get þó alls ekki trúað að óreyndu, þá er það að eins til að fresta því, unz nýtari, þjóðræknari og hygnari menn ráða mestu um velferðarmál þjóðarinnar. Engu að síður tel eg þó mótatkvæðin morðtilraun gegn þeim frjóanga eða vísi til verklegrar lýðmentunar og þeirra endurbóta landsins, sem hér ræðir um. Væri það illa farið, ef það stafaði að mestu af misskilningi og ókunnugleika á málinu, og ekki ábyrgðarlaust fyrir þá, er til þess stuðla. En réttast virðist, að þeir, sem hafa lítið hugsað málið eða kynt sér það, þegar til atkvæðagreiðslunnar kemur, greiði alls eigi atkvæði, heldur skili auðum seðli. Kapp við atkvæðagreiðsluna mætti ekki eiga sér stað. En nauðsynlegt er og sjálfsagt, að menn reyni sem bezt að skýra málið fyrir sjálfum sér og öðrum, áður en til atkvæða er gengið.

11. Að það væri rangt að halda því fram, að þegnskylduvinnan glæddi ættjarðarást, heldur myndi hið gagnstæða verða ofan á.

Á fáu hefir mig undrað meira en þessu, og þegar því hefir verið mótmælt af sumum, að ættjarðarást aukist hjá mönnum við það að vinna fyrir fósturjörð sína. Það er svo alpekt í manneðlinu, að vorkunnarlaust ætti það að vera fyrir alla, sem hafa óspiltar tilfinningar og heilbrigðar skoðanir, að finna þess ótal dæmi. Móðirin elskar að jafnaði mest það barnið, sem veikast er og hún hefir mestar áhyggjur af og erfiði fyrir. Menn fylgja með samúð þeim, sem þeir hjálpa með framfærslu til menta, setja fætur undir til einhverrar lífsstöðu, eða á hvern hátt, sem hjálpin er veitt. Kveður svo ramt að þessu, að hlýleikurinn verður að jafnaði meiri frá þeim, er hjálpina veitir, en þeim, sem hana þiggur.

Sá, sem leggur mikla alúð við að venja og hirða hvolpinn sinn sem bezt, þykir vænna um þann hundinn en þann, sem aðfenginn er, þótt jafnvænn sé.

Sá, er elur folaldið sitt og trippið sem bezt upp og gefur því mjólk og brauð af sínum skorna skamti, ann miklu meira þeim hestinum en hinum aðfengna, þótt jafnir séu að kostum.

Sá, er slítur kröftum sínum við að prýða og bæta ábyli sitt, ber svo hlýtt þel til þess og handaverka sinna, er hann sér að reynast blessunarrik, að hann hikar við að skifta um jarðir, þótt hagnaðarvon væri. »Röm er sú taug, er rekka dregur, fódurtúna til«.

En það er hin sama taug, er tengir mann við býlið eða þá landið, sem menn hafa ofrað svitadropum sínum til að rækta, bæta og prýða.

Það er annars óþarfi að vera að lýsa þessum tilfinningum. Þær eru svo almennar, þótt einstöku menn þekki þær eigi.

Eg vil samt minnast á eitt atriði. Eins og vita mátti, skildi hinn djúpvitri spekingur og ágætismaður, Benjamín Franklín, vel þessa tilfinningu. Í æfisögu hans er þess

getið, að 1734 væri hann í einu hljóði valinn skrifari á fylkisþinginu. Árið eftir mótmælti einn af nýju þingmönnum vali hans og vildi láta annan verða skrifara. Franklín féll þetta illa, því að þingmaðurinn, sem lagði á móti honum, var gáfaður og vel að sér, og því líklegur til að ráða miklu meðal fulltrúanna. Hann vildi því reyna að ná hylli hans, með heiðvirðum meðöllum. Franklín hafði heyrt, að maður þessi ætti bók, sem bæði var sjaldgæf og merkileg; hann skrifaði honum því bréf nokkru síðar og bað hann að lána sér bókina í fáeina daga. Hann fékk bókina þegar, og sendi hana aftur að viku liðinni með þakklætisbréfi fyrir lánið. Þegar þeir hittust næst á þingi, ávarpaði maðurinn Franklín að fyrra bragði, sem hann var aldrei vanur, og mjög vingjarnlega. Var hann ávalt síðan hinn mesti vinur Franklíns meðan þeir lifðu báðir. »Þetta sýnir«, segir Franklín, »að það er satt, sem mælt er: Sá, sem einu sinni hefir gert þér greiða, mun vera fúsari til greiða við þig aftur en sá, sem þú hefir verið innan handar að fyrra bragði«.

Svona leit nú Franklín á þetta mál.

Ef til vill mun það eigi þykja heyra til, að eg lýsi mínum eigin tilfinningum í þessu efni, en þó ætla eg að hætta á það.

Vorið 1911 var eg staddur í Stykkishólmi. Ungmennafélagið þar vildi koma upp skógræktarstöð, sem lægi í nánd við þorpið. Var eg beðinn að velja staðinn, sem eg gerði, þótt eigi væri nema um óhentuga staði að ræða. Jarðvegur grunnur ofan á þéttu bergi, svo að í votviðrum verður þar víðast of raklent. En þó er miklu bagalegra, að í þurviðrum verður mikils til um of þurt. Og nú í þessum óvenju þurkum á síðastliðnu sumri varð stöðin fyrir skemdum. Ungmennafélagarnir báðu mig einnig að halda fyrirlestur um skógræktarmálið sunnudag síðdegis. Meðal annars hvatti eg þorpsbúa mjög til þess, að sem flestir þeirra eignuðust einn eða fleiri nýgræðinga,

er þeir ræktuðu og önnuðust um. Á þann hátt áleit eg, að skógræktarstöðin yrði þorpsbúum sem fyrst til ánægju og staðnum til prýði. Eg skýrði frá því, að sumstaðar erlendis væri það siður, að brúðhjón gróðursettu eitt tré við giftinguna, og svo eitt tré við fæðingu hvers barns, er þau eignuðust. Svo þegar þetta gengur mann fram af manni, myndast fagrir smálundar kringum býlin.

Eg hreyfði þá einu nýmæli, sem eg minnst eigi að hafa séð eða vitað hreyft áður. En það var það, að gróðursetja minningatré, þegar andlát ástvina bæri að, er geymdi nafn þeirra. Um morguninn áður bar það sorglega slys að höndum, að þegar skip var að draga sig út frá bryggjunni í Stykkishólmi, slitnaði kaðall, og slóst þá endinn með svo miklum krafti á einn skipverja — Ingjald mót-orista Guðmundsson — að hann féll útbyrðis. Þótt hann væri vel syndur, gagnaði það eigi, því að höggið mun hafa svo lamað hann. Ingjaldur druknaði svo þarna fyrir augum margra manna, sem enga björg gátu veitt. Eg gat um þenna atburð og sagði, að með fyrstu ferð frá Reykjavík sendi eg tvo nýgræðinga — björk og reyni — sem eg hefði valið reit fyrir í skógræktarstöðinni, og eg hefði beðið forstöðumenn stöðvarinnar að annast uppeldi á. Svo þegar fram liðu stundir og það kæmi í ljós, hver teinungurinn myndi þroskameiri og fegurri, þá skyldi sá verða minningatré Ingjalds og bera nafn hans.

Þegar eg hefi komið í Stykkishólm síðan, hefir það verið þrá mín að sjá þessa nýgræðinga og endurnýja þá ósk, að þeirra sé vel gætt, og með áhuga held eg spurnum fyrir um þá.

Í sambandi við þetta sagði eg þá frá eftirfylgjandi atriði.

Það var haustið 1882, að eg fekk örlitinn rótaranga af reynitré á Skriðu í Hörgárdal. Eg flutti hann vestur að Hólum í Hjaltadal og gróðursetti hann sunnan undir kirkjunni, þar á leiði Hallgríms bróður míns, þar innan girðinga.

Hallgrímur deyði þá um sumarið.

Lengi barðist þessi litli frjóvangi fyrir tilverunni. Nú er hann þó orðinn vel fjórir metrar á hæð og mjög fall-egur og það þótt hann standi á urðarhól eða gömlum jökulýtum.

Síðan eg fór úr Norðurlandi, er þar ekkert, sem eg þrái jafn mikið að sjá aftur, sem þessa reynihríslu, er eg gróðursetti sjálfur með mikilli fyrirhöfn. Að sönnu hefir það og áhrif, að mér er reiturinn einkar kær, þótt sorgar-reitur sé, því að þar hvíla móðir mín og bróðir undir þessu minningatré.

Næst þessari reynihríslu kysi eg helst að sjá Slútnes og Vaglaskóg. Þar hefi eg þó ekkert unnið að. — En fegurðin laðar til sín.

En hve margir eru ekki þeir reitirnir hér á landi, sem gera mætti eins fagra og enn fegurri en Slútnes og Vaglaskóg, ef þegnskylduvinnan kæmist á og gengi í rétta-stefnu.

Hermann Jónasson.

Hvað verður um arfleifð Íslendinga?

(Alþýðufræðsla Stúdentafélagsins).

I. Arfurinn.

Það er kunnara en frá þurfi að segja, hvílíkir ágætismenn hinir fornu Íslendingar voru. Menn vita það alment, að tunga sú, er þeir fluttu með sér frá Noregi, mótadist svo í höndum þeirra, að engri tungu er gefið meira afl, meiri mýkt, meiri auður og lipurð, meiri skýrleiki eða fegri hljómur. Menn vita, að þeir rituðu á þessa tungu ódauðleg snildarverk. Hið er og kunnugt, að gæfan varð önnur en gjörvuleikurinn. Syrti fljótt yfir, er landið hafði komist undir erlent vald, og reyndust rétt varnarorð Einars Þveræings, er hann skoraði á menn hér á landi að ljá konungi einskis fangstaðar á landi eða þjóð. Því að Íslendingum varð það ofraun, að gæta þess réttar, sem þeir höfðu áskilið sér í gamla sáttmála. Komu því brátt hinar mestu raunaaldir yfir landið, svo að landsmönnum varð ekkert frjálst, en kúgun, óstjórn og sultur á allar hliðar. Þá varð gáfumönnum vorum enginn vegur fær, og urðu þeir að flýja inn í eigið hugskot sitt. Má segja sama um þjóðina, sem Bjarni kvað um Odd Hjaltalin, að hún »gerði sér þar hlátraheim, er heimur grætti«. En þetta varð þó oss til góðs, afkomöndum þeirra, því að af þessum rökum er það runnið, að þjóðin geymdi andarauð fornanna og jók við, þrátt fyrir alt hið mikla bö, sem á hana lagðist.

Nú hafa Íslendingar bætt mjög efnahag sinn hina síðustu áratugi, og hafa sýnt í því kapp með forsjá. Og þótt lengra sé leitað, verður hið sama ofan á. Má segja,

að heila öld hafi þeir unnið að þessu, þótt mestu hafi munað hin síðustu árin. Þessu mega allir fagna, og væri vel, ef hagur vor hefði blómgast svo vel á öllum sviðum. Þar er nú á að líta. Eigi er minna vert að gæta fengins fjár en afla. Vér áttum eigi mikið, þegar einokunarkrumlan réttist upp. Hún hafði tekið alt, sem tækt var. Þó var til eign, sem hún náði ekki. Þá eign nefni eg arf Íslendinga.

Hver er nú þá sá arfur? munuð þér spyrja. En eigi þarf þó þar mörgum blóðum um að fletta, því að það er alkunna, enda nefndi eg hann í upphafi máls míns: tunguna og hinar fornu bókmentir vorar. Þessu sinni mun eg að eins tala um hinn síðastnefnda hluta arfleifðarinnar.

Engin þjóð á Norðurlöndum hefir fengið slíkan bókmentaarf sem vér. Og það veit eg, að hver hinna þjóðanna sem væri, mundi gefa fyrir arf vorn, tunguna og bókmentirnar, hundruð miljóna af krónum, ef slíkt fengist fyrir fé. Er þar fyrst á að minnast kviðurnar í hinni eldri eddu eða Sæmundareddu. Þar fylgist alt að, fegurð málsins og afsmíkil orðsnild og gagnorð, hugnæmt efni, sem er gullnáma þeirra manna, er fræðast vilja um hug og háttu hinna fornu þjóða, feðra vorra og frændþjóða þeirra, og frábær meðferð þess. Má hér minna á Sigurðarkviðurnar, Helgakviðurnar, Völundarkviðu o. fl.

Munu flestir kannast eitthvað við þær kviðurnar, sem eg nefndi fyrstar, enda líður engum úr minni þessi lýsing, sem heyrt hefir:

Svá bar Helgi
af hildingum
sem ítrakaþr
askr af þyrni,
eða dýrkálfr
döggu slunginn,
sá er öfri ferr
öllum dýrum,
en horn glóa
við himin sjálfan.

En Völundarkviðu þekkja miklu færri, og er hún þó einna fegurst af öllum fornum kvæðum. Þar er getið svanmeyja, er þeir Völundur og bræður hans fundu við Úlfsjá í Úlfðöllum. Sátu þær þar og spunnu lín, en svanahamirnir lágu hjá þeim. Þeir gengu að eiga þær, og voru þau ásamt sjö vetur, en allan áttunda veturinn þráðu svanmeyjarnar eða valkyrjurnar sína fyrri iðju. »En enn niunda nauðr of skildi, meyjar fýstusk á myrkvan við«. En þótt menn muni nú lítt til kviðunnar, þá er þó auðsætt af þjóðsögunum, að hugmyndin um svanmeyjarnar hefir lifað frá kyni til kyns. Því að sagan um konu úr sjónum er auðsjáanlega sama saga í öðru gerfi. «Meyjar fýstusk á myrkan við» segir í kviðunni. »Mér er um og ó, eg á sjö börn í sjó og sjö á landi«, sagði konan. Nú tíma höfundur einn hefir tekið sér þetta fyrir yrkisefni, en því miður hrært þar saman við biblíuhugmyndum um Faraó og selina. Þetta ágæta yrkisefni bíður enn þá eftir nægilega hógum manni, er gæti gert úr því snildarverk.

Annars er þarfleysa að nefna sérstakar kviður, því að þar vaða menn í gullsandi, hvar sem þeir stíga. — Enn má minna á skáldakvæði og vísur og nægir að minna á jafnágætt skáld sem Egill var Skallagrímsson. Eg get eigi stilt mig um að nefna nokkur dæmi. Lýsing Egils á Eiríki konungi mun verða minnisstæð hverjum, er les eða heyrir:

Vara þat tunglskin
tryggt at líta
né ógnlaust
Eiríks brá,
þá er ormfránn
ennimáni
skein allvalds
ægigeislaum.

Sjálfslýsing hans í sama kvæði, Arinbjarnardrápu, er einkennileg og góðlátlega spaugsöm:

Né hamfagrt
höldum þótti

skaldfé mitt
 at skata húsum,
 þá er úlfgrátt
 við Yggjar miði
 hattar staup
 af hildi þák.

Síðasta vísa þessa kvæðis sýnir, svo sem ótal aðrar, að það er engin nýjung á íslenskum kveðskap, að skáld noti líkingar og haldi þeim sjálfum sér samkvæmum til enda:

Var ek árvakr,
 bar ek orð saman
 með málþjóns
 morginverkum.
 Hlóð ek lofköst,
 þann er lengi stendr
 óbrotgjarn
 í bragar túni.

Þá ætti helzt hver maður að kunna Sonatorrek hans, því að það er hrein perla í íslenskum skáldskap og allra þjóða skáldskap:

Mjök hefir Rán
 of rysktan mik.
 Emk ofsnauðr
 at ástvinum.
 Sleit marr bönd
 minnar áttar,
 snaran þátt
 af sjálfum mér.

Og svo gengur sorgin nærri honum yfir sonarmissinum, að hann heitast við guðina, svo sem síðar gerði Bólu-Hjálmar. Egill kvað:

Veit ef sök
 sverði rækak
 var ölsmið
 allra tíma.
 Róða vágs bræðr
 ef vega mættak,
 færak andvigr
 Ægis mani.

Þetta er tekið af handahófi úr kvæðum Egils, en það er sannast sagt, að þau eru öll gerð af hinni mestu snild. Og þótt eg hafi eigi nefnt fleiri en Egil, þá eru þó fjöldamörg önnur fornskáld, sem eru prýði bókmenta vorra og væri prýði hvers lands bókmentum, og fult er af gullfallegum lausavísu í sögunum víðsvegar. Mun eg láta nægja að minna á þessa vísu Þóris jökuls, er hann kvað áður en hann var leiddur til höggs:

Upp skaltu á kjöl klifa,
köld er sjávar drifa,
kostaðu huginn at herða,
hér muntu lífit verða.
Skafi beygjattu, skalli,
þó at skúr á þik falli,
ást hafðir þú meylla,
eitt sinn skal hver deyja.

Þá er eigi síður mikils vert um rit forfeðra vorra í óbundnu máli. Þar er þá fyrst á að minnast Íslendingasögur, er hafa alla hina sömu kosti sem kvæðin: gagnorða snilli í máli og meðferð, og sannkallaður námi þeim mönnum, er leita að fornu gulli þjóðmenningar vorrar. Þessar sögur eru ekki skáldskapur, heldur sagnfræði, sem byggja má á, þótt sumstaðar kenni þjóðsagna og hjátrúar og ekki megi taka öllu með trúarinnar augum. Slíkt rýrir eigi tiltrú sögunnar í aðalatriðum. En gjörsamlega ástæðulaust er að kalla þessar sögur skáldskap. Því að alt efni sögunnar hafa höf. haft í munnmælum þeim, er þeir höfðu heyrt frá blautu barnsbeini og rituðu sem réttast þeir kunnu. Sagnaritararnir hafa því alls eigi ort, og ef sögunnar eru skáldskapur, þá eru þær þjóðsögur. En þær eru eigi skáldskapur. Það er alls eigi nein minsta ástæða til að efast um, að þær hafi geymzt réttar á vörum manna, því að þá voru eigi bækur eða ritföng algengt eða almenningseign, og þess vegna urðu menn að leggja miklu meira á minnið og urðu því langtum minnugri en vér erum. Þó þekki eg marga samtíðarmenn vora, sem segja langar sögur rétt og nákvæmlega og samtöl manna orðrétt. Svo

voru mér sagðar fornaldarsögur Norðurlanda, og las eg þær skömmu síðar og sá að sögumaður hafði farið svo með sem fyrr var sagt. En úr því slíkt er altítt um samtíðarmenn vora, þá er þó sannarlega engi ástæða til að ímynda sér, að miklu minnisbetri menn hafi eigi getað gert jafn vel, einkum þar sem sögn hafði verið þeim í stað lesturs í uppvextinum. Það er ekki einu sinni ástæða til að efast um, að mörg tilsvör manna og ræður hafi varðveitst orðrétt, svo að varlega er fullyrðandi, að söguritarinn hafi ráðið orðalagi að öllu. En hver einkenni skáldskapar eru þá eftir? Eg hefi að eins nefnt þessa almennu ástæðu móti því, að rétt sé frá sagt, er menn kalla Íslendingasögur skáldskap, því að hún nægir. Annars eru mörg fleiri rök til þess, sem eg segi hér, t. d. rétthermi sagnanna um heiti manna og staða og um ættir manna. Sú ástæða nægir og ein út af fyrir sig. Eitt má enn þá benda á. Efasemdammennirnir trúa því sem nýju neti, að lögsögumaður hafi þulið upp öll lög landsins á lögbergi, þótt óskrifuð væri. Og hann hefir þó sannarlega ekki mátt breyta mikið um orðalag. En að menn hafi geymt rétta sögu frænda og vina, það þykir þeim ótrúlegt. Ótvíráðlega er þó að minsta kosti Heimskringla eða Sturlunga vísindaleg sögurit, og má ljósast sjá á orðum Snorra sjálfs, hver aðferð hans hefir verið, er hann samdi Heimskringlu sína. Þá hina sömu aðferð hafa hinir beztu og glöggustu vísindamenn nútímans. Um hina ágætu hljóðfræðiritgerð hljóta þó allir að verða sammála, að hún sé hrein og skær vísindi. Er það merkilegt, að einstakur maður hér hefir verið svo glöggur á þessa hluti, þótt þá væri alls ekkert til að byggja á, því að hljóðfræði varð eigi til fyrr en mörgum öldum síðar. Þetta er einstakur viti upp úr hafi aldanna, en sorti til beggja handa.

Auk þessa höfum vér tekið í arf tunguna, sem fyrr var getið, og rétt til fullveldis, þó að illa færi stjórnmálin, gott ætterni og eðlisfar, miklar gáfur og marga fleiri kosti. Ókosti einnig, en um þá tala eg ekki. Lifnaðarháttu, síði og menning á háu stigi, eldgamla menning

hinnar þýðversku þjóðkvíslar. Að þessu sinni spyr eg eigi um fleira en bókmentaarfinn: Hversu förum vér með hann?

II. Meðferðin.

Gullnáma höfðum vér fengið að erfðum, en Íslands óhamingju verður alt að vopni. Danir sendu hingað gáf-
aða íslenzka menn, sem þeir höfðu í sinni þjónustu, og létu þá smala gullinu til Kaupmannahafnar í hrúgum. En áður höfðu þeir búið svo í haginn með stjórn sinni og verzlun, að hér lá alt í kalda koli, svo að engum kom til hugar að varna því, að svo dýrir fjársjóðir væri fluttir úr landi. En þetta varð eigi á vorum dögum og vér eigum enga sök á því. Er oss það gott að vita, því að hætt er við að sala forngripa vorra úr landi verði oss til nægilegs áfellis. Þetta varð nú til þess, að aðrir unnu nám-
ana á undan oss, — eða lögðu til nöfn á titilblöð bók-
anna, þótt Íslendingar hefðu unnið verkið. Nú eru marg-
ar stærri og merkari þjóðir teknar að vinna námana. Það var vel þolandi, að aðrir yrðu fyrri til að gefa út fornrit vor og vinna að þeim, en hitt er óþolandi, að handritin eru horfin í annara hendur, þegar vér viljum byrja.

En lesið getum vér þó bækurnar og notað arf vorn að nokkru leyti. Þetta höfum vér gert áður meir en nú. Vil eg benda á það, að auðséd er á kvæðunum, að hin eldri góðskáld vor hafa verið langtum kunnari eddukvæð-
unum en hin yngri, enda kunnað betur að yrkja.

Litils háttar höfum vér unnið úr námanum. Hafa það gert einstakir fræðimenn vorir, sumir hér á landi, en fleiri erlendis. En þetta þótti oss hvergi nærri nóg. Vér vildum koma hér á fót vísindum í þessari grein, og í því skyni settum vér kennarastól í íslenzkri tungu og íslenzk-
um fræðum í nýstofnaðan háskóla vorn. Valdist til þeirrar stöðu ágætur maður og alpektur vísindamaður í þeirri grein.

Vér fylgismenn háskólans ætluðumst til að þess yrði

skamt að biða, að hingað sækti menn úr öllum löndum til þess að leggja stund á íslenzk fræði, af því að vér vildum að það yrði fastur ásetningur þings og þjóðar, að að hér yrði beztur staður til þess náms, og framkvæmdur yrði sá ásetningur. Auðvitað er þar mikill og illur þröskuldur í vegi, að handrit vor eru í hershöndum erlendis. En þá mundi menn mega búast við því, að hið forna víkingablód hitnaði við mótstöðuna, svo að hrundið yrði úr vegi verstu erfiðleikunum. Þetta verkefni fyrir vísindamenn vora næst nú eigi aftur frá Dönum, úr því það nú lenti þar einu sinni. En Danir mundu vera allir af vilja gerðir til þess að hjálpa oss til að ljósrita (fototypera) öll handritin. Vér þurfum því eigi annað en leggja fram nokkra tugi þúsunda króna til verksins, og er það sannast sagt, að oss er það meira en meðalskömm, ef það dregst lengi. Auðvitað þurfum vér og að fjölga kennurum í svo margbreyttri og mikilsverðri grein sem íslenzk fræði eiga að vera hér. Þetta hvorttveggja væri engin ofætlun og er sjálfsagður hlutur, ef vér ætlum ekki að láta grútarháttinn kyrkja háskólann, langmerkasta og og affarasælasta fyrirtæki vort, ef rétt er með farið.

Þessar ættu og eiga að vera undirtektir vorar undir stofnun háskólans og kenslunnar í íslenzkum fræðum. En hverjar hafa þær orðið? Á þingi urðu harðar deilur um mjög lúsarlega fjárveitingu til þess, að afrita skjöl og handrit vor erlendis. Þó er hitt verra, að enginn verður til þess að nota sér kensluna í því skyni, að verða vísindamaður. Og þau firn hafa heyrst, að kennarar hafi ráðið íslenzkum stúdentum til þess, að nema heldur íslenzku í Kaupmannahöfn en hér, og þeir látið sér að kenning verða. Þetta er þjóðarskömm og morðtilraun við beztu stofnun landsins.

Alþjóð manna rækir og illa þenna arf sinn. Því að miklu minna lesa menn nú hinar fornu bókmentir vorar en fyr. Einkum er illa statt í bæjunum, en íbúar þeirra eru nú orðnir fullur þriðjungur alls landslýðs.

III. Hvað verður um arfinn?

Ef vér vanrækjum hann og kunnum eigi að meta hann, þá verður hann eign útlendra manna, og Íslendingar munu fyrirverða sig sárt á komandi öldum. En þá verður ofseint að naga sig í handarbökin.

Í bezta lagi gætu íslenzkir fræðimenn þá átt hlut í honum með hinum erlendu mönnum.

En ef oss fer eigi sem þeim fuglinum, sem verstur er og dritur í sitt eigið hreiður, heldur vinnum vér með rögg og drengskap að hag vorum og heiðri, þá verður hann alþjóðareign, ávaxtast hér og aflar oss maklegrar virðingar hjá öðrum þjóðum.

Á fyrri öldum varðveitti hafið oss, en er samgöngur eru nú orðnar miklu auðveldari við önnur lönd og margfalt tíðari, þá dugir nú eigi lengur sofandi mótstaða. Nú þurfum vér að vaka og vera á verði, gæta þess, að vér gefum eigi of mikið fyrir pipuna, og beita mannviti og dugnaði til þess að auka og skýra erfðagullið dýra.

Kallar nauðsyn stofninn allan

til að gæta og vegsemd veita

vitru starfi fedra arfi.

Norrænn andi yfir löndin

aldir leiði frægðar heiðar.

Bjarni Jónsson
frá Vogu.

Utan úr heimi.

Byltingar í alþjóðaviðskiftum.

I.

Hinir miklu tímar, sem við lifum á, hafa í för með sér byltingar í lífi þjóðanna, meiri og viðtækari en sögur fara af. Fæðing nýja tímans gengur ekki þrantalaust. Ný verkefni og nýjar lausnir koma fram án afláts á öllum sviðum í baráttu þeirri, sem háð er á bak við tjöldin. Óhætt mun vera að segja, að sem stendur vekja mesta athygli byltingarnar í viðskiftalífi þjóðanna út á við. Eg vil hér sýna, hvernig þær eru í aðaldráttunum.

Fyrst verð eg að skýra frá, hvernig viðskiftin við útlönd fara fram og hverju lögmáli þau lúta.

1. Þegar íbúar einhvers lands eiga viðskifti við útlendinga, þá kemur að því, að þeir skulda hverir öðrum peninga, hvort heldur það er vegna vöruverzlunar, eða það eru vextir af lánum, tekjur af fé, sem menn eiga í öðrum löndum, greiðslur fyrir póstsendingar, símskeyti, umboðslaun, farmgjald, ferðakostnaður í öðrum löndum o. fl. Því nær hvort öðru sem löndin liggja, því meiri og fjölbreyttari eru viðskiftin að jafnaði. Sá hluti viðskiftanna, sem á að gjaldast innan skamms tíma nefnist greiðsluviðskifti landsins við útlönd.

Kröfur þær, sem upp koma á báða bóga vegna þessara viðskifta, eru vanalega ekki greiddar með peningum, heldur með v í x l u m. Menn spara sem sé á þann hátt kostnaðinn við að senda peningana til útlanda, og geta enn fremur oft fengið gjaldfrest gegn því að senda víxil. Þar sem víxlar, sem eiga að greiðast í öðrum löndum en þeim, sem viðtakandi víxilsins á heima í, verða að vera áreiðanlegir og líkir hverir öðrum, þá er hægt að nota þá sem gjaldmiðil. Enskur kaupmaður, sem á inni hjá amerískum kaupmanni, getur t. d. gefið út víxil á hann og selt víxilinn í Eng-

landi einhverjum landa snum, sem skuldar Ameríkumanni, og getur kaupandinn síðan greitt skuldina með því að senda víxilinn til Ameríku til innheimtu. Aftur á móti getur amerískur skuldheimtumaður gefið út víxil á enskan skuldunaut og selt amerískum skuldunaut víxilinn. Eins getur skuldunautur gefið út víxil á sjálfan sig og sent skuldheimtumanni sínum í öðru landi víxilinn, og hann getur svo goldið öðrum sínar skuldir með víxlum. Notkun víxilsins hefir komið því til leiðar, að tvær millilandagreiðslur eru orðnar að tveimur innanlandsgreiðslum.

Vanalega er ekki heppilegt fyrir kaupmenn, sem skulda í útlöndum, að þurfa að leita til annara kaupmanna, sem eiga inni í útlöndum, til að kaupa víxla, því að erfitt mundi vera að finna víxla, sem giltu jafnháa upphæð eins og kaupmaðurinn þyrfti með. Menu nota því oftast bankaana sem milliliði og kaupa víxla hjá þeim á banka í útlöndum, og aftur á móti kaupir bankinn víxla á útlendinga af þeim, sem eiga þá.

Meginþorri skulda þeirra, sem landið á að greiða útlöndum innan skamms tíma, liggur því í bönkunum í víxlum, sem stundum eiga að greiðast við sýningu, stundum eftir ákveðinn tíma.

a. Fyrst athuga eg víxla greiðanlega við sýningu. Verð það, sem kaupandi víxils á útlönd verður að greiða, nefnist gangverð víxilsins. Ef skuldir landanna hvors til annars væru alt af jafnháar, þ. e. a. s. jafnhá upphæð greiðanleg í sömu mynt á sama tíma, þá mundi tilboð og eftirspurn eftir víxlunum vera jafnmikil í báðum löndunum, og verðið yrði þá altaf jafnhátt, gangverð víxilsins væri ákvæðisverð, hlutfallið milli myntfóta landanna. Ákvæðisverð á einu pundi sterling er t. d. á Norðurlöndum 18 kr. 16 aur. En nú eru skuldirnar vanalega misjafnlega miklar á ýmsum tímum, eftir því hvernig viðskiftin falla. Þegar heimalandið á mikið inni hjá útlöndum, eru miklar víxilupphæðir til sölu á markaðinum, en eftirspurnin eftir víxlum á útlönd lítil; verðið á útlöndum víxlum fellur. Ef heimalandið skuldar útlöndum mikið, þá er mikil eftirspurn eftir víxlum á útlönd, en tilboðið lítið, verðið á þeim hækkar. Tilboð og eftirspurn ákveður því víxilgangverðið, en vanalega dæma bankarnir um, hvernig víxilmarkaðurinn sé og hve hátt verðið eigi að vera. Orsökina til verðbreytinganna er fyrst og fremst skuldaviðskifti landsins við útlönd um skamman tíma, greiðsluviðskiftin, og víxilgangverðið er því eins konar veðurmælir, sem sýnir ástand þeirra.

Að jafnaði er þó einungis ákveðið svifrúm fyrir verðbreytingar

á víxlum, sem eiga að greiðast við sýningu. Þegar víxilgangverðið er orðið mjög hátt, þá svarar sem sé betur kostnaði að senda gull til útlanda, heldur en kaupa svo dýra víxla. Verð á víxlum, þar sem rétt að eins svarar kostnaði að senda gull til útlanda, nefnist efri gulldepill, og er hann að jafnaði um 18 kr. 24 aur. fyrir pund sterling í Kaupmannahöfn. Þessir 8 aurar auk ákvæðisverðs, svara því til kostnaðarins við að senda gullbúta til Englands og láta mynta þá þar í enska mynt. Aftur á móti getur víxilgangverðið orðið svo lágt, að svari kostnaði fyrir eiganda víxilsins að senda hann til Englands til innheimtu og flytja gullið til heimalandsins, í staðinn fyrir að selja víxlinn svo lágu verði. Þá er gangverð víxilsins komið að neðra gulldepli, sem er t. d. að jafnaði 18 kr. 07 aur. fyrir pund sterling í Kaupmannahöfn. Þessi 9 auru frádráttur frá ákvæðisverði svarar þá til kostnaðarins við að flytja gull frá Englandi og láta mynta það í Danmörku. Vanalega sjá bankarnir um gullsendingar ef á þarf að halda, en oftast hafa þeir, ef unt er, heldur önnur ráð, sem síðar verður getið um. — Víxlar, greiðanlegir við sýningu, skýra frá hvort greiðsluviðskifti landsins séu því í hag eða ekki.

b. Mikill hluti af víxlum þeim, sem notaðir eru í greiðslum til útlanda, eru þó ekki greiðanlegir við sýningu, heldur eftir einhvern tíma. Þegar ákveða á verð þeirra, þá verður að taka tillit til vaxtanna í því landi, þar sem víxillinn á að greiðast. Menn geta sem sé ekki selt þá þar þegar í stað, nema að frá víxilverðinu verði dregin vextir til gjalds víxilsins, forvextir, og ef þeir eru háir í landinu, þá er affallið á víxlunum mikið, gangverðið lækkar á löngum víxlum. Einnig er hér tekið meira tillit til en á stuttum víxlum, hvort nöfnin á víxlunum eru áreiðanleg og hvort landið, þar sem víxillinn á að greiðast, hafi gott lánstraust. Gangverð á löngum víxlum fellur þó ekki að jafnaði niður fyrir gangverð á stuttum víxlum að frádregnum forvöxtum.

Þegar víxilgangverðið á útlönd hækkar, þá er það til hagnaðar fyrir þá, sem flytja út vörur; þeir fá hærra verð fyrir víxla þá, sem þeir fá frá útlöndum kaupendum. Þegar víxilgangverðið lækkar, þá er það hagnaður fyrir þá, sem kaupa vörur frá útlöndum; þeir fá ódýrari víxla til að greiða skuldina með. Víxilgangverðið gefur bendingu um að auka útflutning eða innflutning þangað til jafnvægi kemst á. Einnig stefnir að því, að vöruverð lækki í heimalandinu, ef mikið hefir verið flutt inn, og hækki ef innflutn-

ingur hefir verið lítill, og er hér einnig bending um að breyta stefnu greiðsluviðskiftanna.

2. Vízilgangverðið fer samt ekki eingöngu eftir greiðsluviðskiftunum, heldur einnig eftir því, hvort lánsmiðill landsins hefir lækkað í verði í samanburði við gull, en gildi peninganna í útlöndum sé jafnt sem fyr, eða ekki. Verð á öllu í landinu (verðlagið, *Prisniveauet*) er sem sé komið undir því, hve mikið er í landinu af gulli, seðlum og öðrum lánsmiðli. Ef nú er gefið út of mikið af seðlum eða veitt of mikið lánstraust, þá eykst kaupmagnið án þess að vörumagnið í landinu hafi aukið, verð á vörum hækkar og peningarnir falla í verði. Ef peningarnir hafa ekki fallið í verði í útlöndum, þá innleysa menn seðla heimalandsins og fá gull fyrir, sem þeir svo senda til útlanda þar sem það er meira virði. Heimalandið tæmist því af gulli, bankarnir hætta að geta leyst inn seðlana og nú bjóða menn meira verð fyrir gull en seðla. Þegar gullið er horfið út úr landinu, eru engin takmörk fyrir gangverðsbreytingum á útlendum víxlum, gulldeplarnir eru horfnir. Þegar orsökinn til lágs víxilgangverðs á heimalandið er sú, að það skuldar útlöndum, þá græða útlendingar á víxilgangverðinu í viðskiftum vegna þess að kaupmagn peninga heimalandsins er óskert. En þegar verðfall peninganna í heimalandinu er orsökinn, þá græða hvorki útlendingar né tapa á lágu víxilverði vegna þess, að þó að þeir fái meiri upphæð í peningum heimalandsins fyrir vörur sínar, þá eru peningar þess því minna virði.

Aftur á móti geta auðvitað þeir, sem eru hepnir, grætt á breytingunum á víxilgangverðinu, jafnt þegar um er að kenna verðfalli peninganna, eins og þegar orsökinn er óhagstæð greiðsluviðskifti landsins. Ef maður semur t. d. um kaup á togara í Þýzka-landi fyrir 250,000 mörk þegar markið er 85 aura virði, þá svarar það til 212,500 króna. Ef markið er nú fallið á gjalddaga niður í 75 aura, þá á maðurinn ekki að greiða meira en 187,500 krónur, þ. e. a. s. hann hefir grætt 25,000 krónur á verðfallinu. En ef markið hefði stigið í verði, þá hefði maðurinn aftur á móti tapað. Viðskiftin eru því orðin miklu áhættumeiri vegna breytinganna í víxilgangverðinu. Lönd, sem eru á þeirri hálu braut, að hafa gefið út of mikið af seðlum eða veitt of mikið lánstraust, skulda vanalega öðrum löndum mikið fé, og þar sem ekkert land getur skuldað öðrum löndum miklar fúlgur til lengdar, þá kemur fyr eða síðar að því eina ráði, sem hægt er að nota, ef landið á ekki að verða gjaldþrota, t. d. á þann hátt, að lögákveða minna verð í

peningum en fyr, að auka útflutning og minka neyðsluna í landinu, hve erfitt sem það kann að verða.

Einnig getur hent, að bæði lánsmiðill og gull falli í verði í samanburði við vörur, ef framleiðslan í heiminum hefir minkað að mun. Það hefir því að eins áhrif á víxilgangverðið, að framleiðslutapið lendi misjafnlega þungt á löndunum.

3. Ýms ráð eru til að hafa áhrif á greiðsluviðskiftin og víxilgangverðið, og má sérstaklega nefna breytingu á vöxtunum í landinu, sérstaklega forvöxtunum, víxlapólitík og lán í útlöndum. Bankarnir, sem eru drotnar atvinnulífsins, eiga að gera þessar ráðstafanir. Því betur stæðir sem bankarnir eru, þess meiri áhrif geta þeir haft á greiðsluviðskiftin og þar með á alt atvinnulíf þjóðarinnar. Einkum verður þetta hlutverk seðlabanka landsins, og því öflugri sem hann er, þess meiri áhrif getur hann haft í þessu efni.

Ef forvextirnir eru hækkaðir, verður arðvænlegra fyrir útlendinga að kaupa langa víxla á landið, því að þeir falla fyrst í verði og gefa þess vegna hærri vexti ef menn eiga þá þangað til gjalddagi er kominn. Eftirspurnin eftir löngum víxlum á heimalandið eykst og þeir hækka í verði. Vegna forvaxtahækkunarinnar verða peningar dýrari í heimalandinu og menn minka innflutning frá útlöndum. Vixlar á útlönd falla því í verði vegna minni eftirspurnar. Ef forvextirnir eru lækkaðir, mundi það hafa gagnstæð áhrif, lækka víxilgangverðið á heimalandið, hækka víxilgangverðið á útlönd.

Bankarnir eiga vanalega inni í hlaupareikningi hjá útlöndum bönkum, og þegar þeir selja víxla á útlönd, gefa þeir vanalega út víxil á þessa inneign. Ef þeir kaupa víxla, sem greiðast eiga í útlöndum, láta þeir vanalega greiða víxilupp-hæðina inn til viðskiftabanka síns í útlöndum. Þegar skuldir til útlanda eru miklar, eru því þessar inneignir miklar. Ef á þarf að halda, geta bankarnir þá fengið um hríð að gefa út víxla á útlöndu bankana, þó að þeir eigi þar ekki inneignir. Á þenna hátt geta bankarnir komið á jafnvægi um hríð milli tilboðs og eftirspurnar eftir víxlum á útlönd.

Bankarnir eiga einnig vanalega birgðir af útlöndum verðbréfum, og þegar greiðsluviðskiftin við útlönd eru óhæg (heimalandið í skuld), geta þeir selt verðbréfin í útlöndum og komið á jafnvægi milli tilboðs og eftirspurnar eftir víxlum á útlönd.

Einnig er hægt að lækka víxilgangverð á útlönd um hríð með því að fá lán í útlöndum. Þá eykst víxifúlgan á útlönd.

Ef víxilgangverð á útlönd er hátt til lengdar, er eina ráðið við því, að auka útflutning og minka neyzluna í landinu.

4. Víxilmarkaðurinn er orðinn alþjóðlegur vegna símanna og gufuskipaferðanna. Ef eitthvert land skuldar öðru landi fé, en á inni í þriðja landinu, þá eru skuldirnar á milli landanna jafnaðar þannig, að landið greiðir skuldheimtulandinu skuldina með víxlum á skuldunautslandið (arbitrage). England hefir verið drotnandi á víxla- eða peningamarkaðinum. Sökum þess að England hefir verzlað við öll lönd, hefir það haft skuldaviðskifti við öll lönd og víxlaviðskifti. Víxlar þessir eru viðurkendir af enskum bönkum og verzlunarhúsum, sem þekt eru um allan heim og þykja því mjög öruggir. Englendingar hafa ætíð heimtað, að viðskiftamenn þeirra gæfu út víxla á pund sterling greiðanleg í Englandi. England hefir þess vegna orðið að peningamiðstöð og skuldajöfnunarstað heimsins og sterlingsvíxillinn að alheimsgjaldmiðli. Á síðustu árunum fyrir ófriðinn fóru þó bæði markvíxillinn og frankavíxillinn að koma fram í peningaviðskiftum heimsins í Suður-ameríku og Litlu-Asíu, og var það einn af liðunum í samkeppi Þýskalands og Frakklands við England um heimsverzlunina.

Eftir að hafa skýrt frá venjulegum gangi heimsviðskiftanna mun eg skýra frá áhrifum þeim, sem ófriðurinn hefir haft á þessu sviði.

II.

Stórveldin höfðu um langan tíma búist undir ófriðinn í fjármálum sínum, og sérstaklega höfðu þau lagt stund á að efla seðlabankana, og var ætlast til að þeir yrðu framkvæmdarstjórar ríkisins í fjármálum og atvinnumálum, þegar ófriðinn bæri að höndum. Einn þátturinn í undirbúningi þessum var að safna gulli inn í seðlabankana, bæði úr landinu sjálfu og frá útlöndum. Urðu menn sérstaklega varir við, að stórveldin drógu til sín mikið gull frá Vesturheimi í byrjun ársins 1914. Seðlabankarnir söfnuðu gullinu úr landinu sjálfu með því að gefa út minni seðla en fyr og varð gullið þá óþarft í daglegum viðskiftum, safnaðist inn í bankahvelfingarnar. Á þenna hátt jók t. d. Þýzki ríkisbankinn gullforða sinn um 440 miljónir marka frá 23. júlí 1911—1914. Ríkin ætluðu svo að nota gullið á ófriðar-

tímum til að geta gefið út fleiri seðla og til að lagfæra víxilgangverðið ef á þyrfti að halda.

Í upphafi ófriðarins var nú alstaðar, nema í Englandi, bannaður útflutningur gulls af hálfu einstaklinga, en seðlabankarnir gátu fengið undanþágur ef þyrfti. Útflutningsbannið hafði þau áhrif, að svifrúmið fyrir víxilgangverðsbreytingar, gulldeplarnir, hurfu, og víxilgangverðið fór nú eingöngu eftir tilboði og eftirspurn eftir vixlum á útlönd. Enn fremur var alstaðar létt af skyldunni að innleysa seðlana nema í Englandi. Vegna þess að lánstraustið bilaði alstaðar, var þörf fyrir meiri lánsmiðil og þá varð seðlabanki hvers lands að hlaupa undir bagga og fá leyfi til að gefa út seðla eftir þörfum viðskiftalífsins. Varð það til þess, að gullið streymdi enn frekar inn í seðlabankann. Þýskaland hafði síðan 1871 geymt í Júlíusarturninum í Spandau 120 milj. marka í gulli, af herkostnaði Frakka, og bætt annari eins upphæð við síðar. Gull þetta átti að nota þegar ófrið bæri að höndum. Nú var það flutt yfir í ríkisbankann og gefnir út seðlar til að geta kvatt herinn saman. Enn fremur nytferðu ríkin sér seðlapressuna. Fyrsta ófriðarárið hafa stórveldin fengið um 16 miljarða króna lán í seðlum til ófriðarþarfa.

Þegar herinn var kvaddur saman minkaði framleiðslan í löndunum og breyttist síðan í hernaðarframleiðslu og varð þá vaxandi eftirspurn eftir útlendum vörum. Við þetta bættist að lagt var útflutningsbann á margar vörur. Greiðsluviðskiptin hlutu þá að verða óhagstæð fyrir ófriðarþjóðirnar og víxilgangverðið á útlönd hátt, lágt á ófriðarþjóðirnar.

Ennfremur kom smámsaman vaxandi *inflation*, uppblástur á öllu vöruverði en verðfall á peningum, vegna ófriðarlánanna og aukinnar seðlaútgáfu, þó að nokkur hluti hennar væri réttmætur vegna þess að lánstraustið bilaði. Þegar t. d. bankarnir lána ríkinu fé út í hönd til ófriðarins, þá verður fyrst um sinn eina breytingin sú, að bankinn hefir minna fé í sjóði, en í þess stað fleiri ríkisskuldabréf, eignamegin. Skuldir bankans eru þær sömu sem fyr. Þegar stjórnin geldur reikninga sína, streyma peningarnir aftur inn í bankann, því að þeir sem selt hafa stjórninni vörur til ófriðarafnota, leggja andvirðið inn í bankana. Bankinn hefir þá fengið aftur reiðufé sitt og hefir nú að auki ríkisskuldabréfin, en skuldirnar hafa hækkað um upphæð sem nemur innlagi vöruseljendanna. Ríkið hefir eytt vörunum og ekkert hefir sparað í landinu, en menn eiga meira inn í bönkum en áður. Kaupmagníð hefir

aukist án þess að vörumagnið í landinu ykist, þ. e. a. s. nú er »inflation«, verðhækkun á vörum. Sama máli er að gegna ef einstaklingar lána ríkinu fé til ófriðarins. Mikill hluti verðhækkunar þeirrar, sem ófriðurinn hefir valdið, stafar einmitt af þessari orsök. Fátæklingarnir verða harðast leiknir af þessu og neyðast til að neyta ódýrari vara en áður vegna hins háa verðs, og á þann hátt neyðast þeir til að spara fyrir þjóðina, án þess að græða sjálfir á þeim sparnaði. Það sem fatæklingar spara við sig í neyzlunni, notar svo ríkið til ófriðarþarfanna, en því meira sem er sparað, þess minni er verðhækkunin. Sökum þessarar vöruverðhækkunar, verðfalls peninganna, hækkar víxilgangverðið á útlönd. En þar sem einnig er vöruverðhækkun í mörgum hlutlausum löndum, þó að hún sé ekki eins mikil þar, þá óskýrast drættirnir að nokkru leyti, vegna þess að peningagildið fellur líka í hlutlausu löndunum.

III.

Eftir þenna inngang um ófriðinn get eg snúið mér að helztu löndunum og sýnt, hvernig víxilgangverðið á þau hefir verið, orsakirnar til þess og ráðstafanir þær, sem gerðar hafa verið til að lagfæra það. Taflan sýnir víxilgangverð í Kaupmannahöfn á ýms lönd víxlar greiðanlegir við sýningu). Hún ætti því að vera samnefnari atvika þeirra, sem getið er um að framan. (1 pund sterl., 100 fráncar, rúblur, mörk, austr. krónur eða dollarar, gilda í dönskum krónum).

		1914					1915					
	Ákvæð isverð	Júl. 10.	Ágúst. 17.	Sept. 16.	Okt. 14.	Nóv. 13.	Des. 14.	Jan. 13.	Febr. 15.	Mars 12.	Apríl 14.	Maí 19.
London	18.16	18.25	18.35	18.50	18.85	18.95	19.20	19.20	19.45	19.50	18.45	18.43
Paris	72.00	72.50	73.30	73.00	75.00	76.00	77.50	77.50	78.00	78.50	73.50	72.75
Pétursborg	192.00	191.25	190.00	189.00	180.00	180.00	175.00	170.00	177.00	176.00	170.00	160.00
Hamborg	88.89	89.05	89.20	89.20	86.50	85.00	88.25	87.00	86.25	84.75	80.00	79.40
Vín	75.61	75.60	75.00	74.00	72.00	72.00	71.00	70.50	70.00	65.00	60.00	60.00
New-York	373.00	375.50	376.00	383.00	389.00	393.00	400.00	405.00	408.00	412.00	397.00	391.00

		1915					1916				
	Ákvæð isverð	Júl. 14.	Júl. 14	Ágúst. 13.	Sept. 13.	Okt. 13.	Nóv. 15.	Des. 6.	Jan. 14.	Febr. 14.	Febr. 25.
London	18.16	18.10	18.50	18.30	18.18	17.97	17.42	16.95	17.55	16.89	16.95
Paris	72.00	70.00	69.50	68.25	66.50	66.50	63.00	62.00	63.25	61.00	61.25
Pétursborg	192.00	140.00	142.00	136.00	136.00	134.00	123.00	121.00	114.00	114.00	117.00
Hamborg	88.89	77.80	78.80	78.90	79.55	78.50	75.90	70.75	69.50	66.00	64.90
Vín	75.61	58.50	58.50	59.00	59.00	56.00	55.00	51.50	48.00	48.00	46.00
New-York	373.00	382.00	392.00	392.00	396.00	389.00	380.00	367.00	372.00	357.00	360.00

Víxilgangverð í Kaupmannahöfn er nú fallið frá ákvæðisverði:
 á England 7⁰/₁₀, á Frakkland 15⁰/₁₀, á Rússland 39⁰/₁₀, á Þýskaland
 27⁰/₁₀, á Austurríki 39⁰/₁₀.

1. England. Kringumstæðurnar eru öðruvísi hér en í hin-
 um ófriðarlöndunum. England er miðstöð peningaviðskiftanna og

menn ættu þess vegna að búast við hærra og jafnara víxilgangverði á England en hin löndin. Víxilgangverðið á England hækkaði líka stöðugt framan af, þangað til eitt sterlingspund var í febrúar 1915 jafnt 19 kr. 50 aur., eða 8% yfir ákvæðisverði. Ástæðan til þessa var að England innheimti þegar í stað hinar miklu víxilkrfur og sjóðlán, sem það hafði á útlönd, og ýms lönd gerðu mikil kaup á vörum í Englandi, en þó sérstaklega í Bandaríkjunum. Þess vegna varð mikil eftirspurn eftir víxlum á England, bæði beint og til að fá gjaldmiðil á Bandaríkin. Menn urðu að greiða vörukaupin út í hönd, vegna þess að lánstraustið brást, og enn fremur varð útflutningur til Englands erfiður. Í Englandi sjálfu voru einkunnarorðin »business as usual«. Menn héldu eins og áður framleiðslunni og verzluninni áfram og græddu á tá og fingri.

Í febrúar 1915 fer svo víxilgangverðið á England að lækka og lækkar nú jafnt og þétt með miklum breytingum, þangað til það er orðið tæpar 17 krónur í desember. Þetta eru afleiðingar ófriðarins, þýzka neðansjavarófriðarins, sem hefst í febrúar, og þýzku sigrana. England finnur nú, að heimsveldið er í hættu statt og breytir stefnu, safnar hundruðum þúsunda hermanna í herinn og leggur aðaláherzluna á, — eftir dæmi Þjóðverja — að framleiða ófriðarvörur víðsvegar um landið. Vöruútflutningur hættir. England lánar Bandamönnum miklar fjárupphæðir. Greiðsluviðskiftin verða þá sífellt óhagstæðari Englendingum, en í hag hlutlausum löndum, sérstaklega Bandaríkjunum, því að Englendingar fara nú að kaupa miklar skotsfærabirgðir þaðan, án þess að hafa vörur til að gjalda með. Víxilgangverðið á England lækkar í Bandaríkjunum og danska víxilgangverðið fylgir (arbitrage).

Nú var England í hættu statt. Auk þess að vörur, sem Englendingar réðu ekki verðinu á, urðu dýrari vegna þess, að gangverð sterlingspundsins hafði lækkað í útlöndum, þá hætti sterlingsvixillin nú að vera sífellt jafngildur gjaldmiðill í heimsverzluninni. Bæði Norðurlönd og Bandaríkin yfirgáfu þess vegna að mestu sterlingvixilinn í verzlun sinni innbyrðis og tóku í hans stað dollaravíxilinn, og auk þess komu fram í heimsverzluninni bæði krónuvíxillinn og gyllinisvíxillinn, þó að minna bæri á þeim en dollaravíxlinum. Það var hætt við því, að England mundi verða að afsala sér peningamarkaðinum og skuldajöfnunaryfirráðunum í hendur Bandaríkjunum. Á svo miklum byltingatímum, eins og nú eru, hefir vaxtapólitík lítil áhrif á víxlagangverðið.

Haustið 1915 reyna Englendingar því að hækka sterlinggang-verðið, fyrst með því að senda gull til ýmissa landa, og fá þeir í því skyni umráð yfir miklum hluta gullforða Bandamanna sinna, en er það stóðar ekki, fá þeir $\frac{1}{2}$ miljarðar dollara lán í Bandaríkjunum, og greiða með því nokkurn hluta skotfæraskuldarinnar. — Síðar nægir þetta ekki, og ætla ríkið þá fyrst að skipa öllum eigendum amerískra verðbréfa að lána ensku stjórninni þau, en úrslitin verða að ríkið kaupir ógrynni af amerískum verðbréfum gegn ámóta háu verði eins og þau eru keypt í kauphöllinni. Ríkið lætur því næst selja verðbréf þessi í Bandaríkjunum. Á þenna hátt minkar skuld Englands til Bandaríkjanna og víxilgangverðið á England hækkar í New-York í janúar og heldur sér í febrúar. Talið er að Englendingar eigi um $3\frac{1}{2}$ miljarð sterlingspunda í verðbréfum, sérstaklega amerískum, svo að það ætti að geta enzt nokkurn tíma, ef alt næðist.

En nú upp á síðkastið hafa Bandaríkjamenn keypt svo mikið af verðbréfum að þeir kæra sig ekki um meira í bili. Í ráði er að Englendingar fái nú lán í Bandaríkjunum gegn verði í verðbréfum.

Eftir að komið var lagi á víxilgangverðið í Bandaríkjunum, sneru Englendingar sér að Hollandi og að öllum líkindum munu þeir svo snúa sér að Norðurlöndum, enda er sterlingspundið þar ekki nema 16 kr. 95 aura virði nú.

Englendingar hættu ekki að innleysa seðlana í upphafi ófriðarins og héldu þeim því í verði, en nú síðastliðið haust eru þeir auðsjáanlega komnir inn á þá hálu braut að afla sér ófriðarlána með óinnleysanlegum seðlum, eins og hin löndin. Þó að mestur hluti verðfallsins á sterlingspundinu sé að kenna greiðsluviðskiftunum, þá er þó einnig um að kenna verðhækkun á vörum.

2. Frakkland. Vixilgangverðið á Frakkland hækkar þangað til í febrúar, og er það sökum þess, að Frakkland innheimti hin miklu sjóðlán sín til annara landa og seldi útlend verðbréf aftur til útlanda. Mönnum telst, að Frakkar muni eiga minst 30 miljarða franka í útlendum verðbréfum. Í febrúar fer víxilgangverðið á Frakkland að lækka og lækkar síðan stöðugt. Þetta er fyrst og fremst því að kenna, að nú voru öll sjóðlánin greidd Frökkum, en auk þess voru Frakkar tregir á að selja verðbréf sín til útlanda. Vöruinnflutningurinn hafði líka aukist, en útflutningur minkað. Frakkland hefir staðist ófriðarkostnaðinn að miklu leyti

með seðlaútgáfu og stuttum lánum, og hefir því orðið meiri verðhækkun á vörum í Frakklandi en í Englandi. Af þessari orsök hefir víxilgangverðið á Frakkland einnig fallið meira. Um áramót 1916 eru Frakkar að hugsa um að koma skipulagi á verzlunina með útlenda víxla.

3. Rússland. Víxilgangverðið á Rússland fellur altaf frá upphafi ófriðarins og er það ekki ungarlegt, því að Rússland hefir næstum eingöngu notað seðlalán til að halda áfram ófriðnum og hefir ekki getað flutt út vörur nema um Archangelsk. Samt hefir það fengið nokkuð té að láni frá vesturþjóðunum gegn því að selja Englandi í hendur nokkuð af gulli því, sem ríkisbankinn átti og gegn veði í kornbirgðunum við Svartahafið (áhlaupin á Hellusundsvígin voru hafin til að ná í þetta veði). — Fyrst á árinu 1916 er Rússland að koma lagi á víxilgangverðið á líkan hátt og Þýskaland (sjá síðar), með því að koma á fót sérstakri deild innan fjármála-stjórnarráðsins, sem hafi með höndum eftirlitið með víxlaverzluninni.

4. Þýskaland. Í upphafi ófriðarins hækkaði víxilgangverðið á Þýskaland, vegna þess að Þýskaland innheimti sjóðlán sín til hlutlausra landa, en bráðlega fer það að lækka aftur og lækkar svo stöðugt, en þó með miklum breytingum, og nú er það að eins 64 kr. 90 aur.

Fyrst og fremst er þetta að kenna því, að greiðsluviðskifti Þýskalands við önnur lönd eru því í óbag, sökum þess að útflutningur hætti að mestu, miklar vörubirgðir voru keyptar á Norðurlöndum og víðar og eftir að Tyrkland og Búlgaría snerust í lið með Þjóðverjum, fengu þau mikinn fjárstyrk frá Þýskalandi. En auk þess verður að taka tillit til þess, að markið hefir fallið í verði. Seðlar hafa verið gefnir út í stórum stíl, eingöngu gegn tryggingu í verðbréfum, og hefir þetta haft verðhækkun á vörum í för með sér.

Þjóðverjar hafa reynt að ráða bót á þessu á ýmsan hátt, sérstaklega með því að selja verðbréf þau, sem þeir hafa átt úr hlutlausum löndum, Norðurlöndum, Hollandi, Sviss og Bandaríkjunum, og með því að senda gull til hlutlausra landa. Þetta hefir þó ekki haft neinn varanlegan árangur, enda hafa gullsendingarnar verið tiltölulega litlar.

Vorið 1915 var því haldið fram í Englandi, að verzlunarbannið gegn Þýskalandi kæmi ekki að tilætluðum notum. Ef frjáls verzlun væri við Þýskaland, mundu Þjóðverjar kaupa miklar vörubirgðir í útlöndum gegn ránverði og mundu fjármál þeirra þá komast í ólag og víxilgangverðið lækka enn meira. Eins og sakir stæðu, þá færu Þjóðverjar á mis við þessar vörur og spöruðu andvirðið. Þessar umvandanir urðu til þess, að enska stjórnin linaði svo á verzlunarbanninu að hægt var að flytja munaðarvörur til Þýskalands, og víxilgangverðið lækkaði þá. Þegar Þýskaland gat fengið vörur frá Balkanskaganum eftir sigurinn þar, hækkaði víxilgangverðið á Balkanlöndin.

Verzlunin í Þýskalandi stefnir stöðugt meira í áttina að verða alger einkaverslun undir umsjón ríkisins. Snemma í vetur var lög-

boðið, að ófriðarkornfélagið í Berlín skyldi hafa á hendi allan kornvöru-innflutning til Þýskalands og álíka tilhögun var komið á smjör- og búfjárinnsflutning. Sökum þessa einkainnflutnings á vörum hætti öll samkepnir þýzkra kaupenda á útlendum mörkuðum og verð á innfluttum vörum lækkaði. Drjúgan þátt í þessu verðfalli átti einnig, að nú var hægt að fá vörur frá Balkanskaganum, og að þessi tilhögun var í sambandi við álíka tilhögun í Austurríki. Ríkið gat nú haft eftirlit með vöru-innfutninginum.

Í sambandi við þetta standa tilraunir ríkisins að koma á eftirliti með peningaverzluninni við útlönd til þess að geta lagfært víxilgangverðið og gert það stöðugra. Í lok janúar fengu nokkrir stórbankar peningaeinkaverzlun við útlönd. Ríkisbankinn hefir eftirlit með því, hve hátt víxilgangverðið er ákveðið. Sérhver maður sem kaupir víxla á útlönd, verður að skýra frá, til hvers hann ætli að nota þá, og ríkið gefur ekki kaupaleyfi ef ekki þykir hentugt, hvernig kaupandi ætlar að nota víxlana. Til að vera undirbúnir þegar friður kæmi höfðu þýzkir vöruinnflytjendur sem sé keypt vörufni, sem áttu að afhendast þegar eftir að ófriðnum væri lokið og námu þessi kaup eingöngu í Bandaríkjunum rúmum 100 miljónum marka. Álitid er, að þetta hafi átt mikinn þátt í gangverðshruninu og ríkið vildi koma í veg fyrir frekari kaup. Ennfremur vildi ríkið tálma því, að flutt væri inn mikið af munaðarvörum. Ekki er enn unt að dæma um, hver áhrif einkaverzlun þessi hafi á víxilgangverðið, en gróðabrállinu vegna verðbreytinganna er hætt.

Í viðskiftum Þýskalands og Norðurlanda hefir vanalega verið notaður markvíxillinn, en í seinni tíð eru Þjóðverjar oft farnir að heimta krónuvíxil, sem er stöðugri í verði og hærri. Þetta er líka gert til þess að geta haft áhrif á gangverð krónuvíxilsins, því að þegar hann er notaður, verður aðalmarkaðurinn á krónum í Þýskalandi og gangverðið á honum sett þar, en þegar markvíxillinn er notaður er markaðurinn á Norðurlöndum og verðið sett af bönkum hér. Á þenna hátt gætu einkaleyfisbankarnir þýzku að miklu leyti ráðið víxilgangverðinu á Norðurlönd.

Í byrjun febrúar eru nú komnar fram enn nýjar atgerðir til þess að koma lagi á greiðsluviðskiftin og víxilgangverðið. Þýzku iðnsamböndin (Kartel) höfðu um tíma heimtað hærri útflutningsverð á vörum sínum en áður og krafist að verðið væri reiknað í gulli. Nú hefir þýzka stjórnin ákveðið lágmarksverð á ýmsum útflutningsvörum, t. d. járn, stáli, sinki, kolum og anilínlitum (sem Þjóðverjar geta einir gert og því ráðið verði). Verðið er oft margfalt hærri en verð það, sem áður hefir verið, og auk þess er krafist að útlendir kaupendur gjaldi markid með ákvæðisverði þ. e. a. s. reikningseiningin sé gull en ekki víxilgangverðið, sem fallið hefir. Þessi tilraun miðar að því að láta útlendinga gjalda hækkun á gangverðinu og velta nokkrum

hluta af ófriðarbyrðunum yfir á hlutlaus lönd. Óvíst er enn hvort það muni takast nú.

5. Austurríki-Ungverjaland. Vixilgangverðið hefir altaf fallið og fallið mikið. Nefna má sömu orsakir sem um vixilgangverðið á Þýskaland. Auk þess voru fjármál ríkisins í óreiðu fyrir heimsófriðinn og tvíríkið hefir því orðið að nota seðla-lán í stórum stíl til að halda ófriðnum áfram. Hafa því austurrískar krónur fallið í verði. Vöruútflutningur er að eins leyfður þeim kaupmönnum, sem selja austurríska-ungverska bankanum í hendur vixla sína á útlönd, og hefir banki þessi peningaeinkaverzlun við útlönd. Bankinn hafði reyndar fyrir ófriðinn mest af útlendum vixlum í Austurríki í sínum höndum, en nú er það lögboðið.

6. Bandaríkin. Vixilgangverðið hefir næstum altaf verið í hag Bandaríkjunum eftir að ófriðurinn hófst. Er það að þakka miklum vörukaupum Englands, Frakklands og hlutlausra þjóða í Bandaríkjunum. Jafnframt er New-York orðin að miklu leyti að peningamarkaði heimsins. Aðalástæðan til þess að þetta gat orðið, eru hin merku ameríska bankalög 1913. Með þeim var komið á nýrri tilhögun í bankaheiminum í Bandaríkjunum. Komið var á fót 11 aðalbönkum, sem áttu að gefa út seðla, og vera eins konar varasjóður fyrir hina bankana þegar illa áraði. Einnig var komið á sameiginlegri forvaxtaþólitík fyrir aðalbankana, en öðrum bönkum, þjóðbönkunum, leyft að viðurkenna vixla og koma á fót útibúum í öðrum löndum. Á þenna hátt komu fram öruggir vixlar, líkir hverir öðrum og bankaviðurkenningar og varð það til þess, að dollarvixillinn gat komið fram í viðskiftum við útlönd. Áður voru Bandaríkjamenn ætíð neyddir til — eins og önnur ríki — að hafa Englinga og sterlingvixilinn fyrir milliliði. Þegar sterlingvixillinn fór svo að falla í verði og allar þjóðir gerðu kaup á vörum í Bandaríkjunum, þá verzlðu menn í dollurum.

Fyrir ófriðinn voru 6 miljarðar dollara í amerískum verðbréfum í höndum Norðurálfumanna, og verzlað var með verðbréf þessi í kauphöllunum í Norðurálfu, en í Bandaríkjunum var engin verzlun með útlend verðbrjef. Nú hefir ófriðurinn haft í för með sér, að Bandaríkin hafa keypt aftur mikinn hluta af verðbréfunum og auk þess lánað Englingum, Frökkum og Norðurlandamönnum og keypt útlend verðbréf. Fjárvaldið er að flytjast úr Norðurálfu til Vesturheims. Wall Street er að sigra Lombard Street. Hvernig var með apann, sem skifti eplinu?

7. Norðurlönd. a. Ófriðurinn hefir yfirleitt haft í för með sér, að greiðsluviðskiftin hafa orðið hinum þremur löndum í hag, sökum mikils vöruútflutnings gegn háu verði og háu farmgjaldi. Talið er að Danmörk hafi bætt greiðsluviðskifti sín um hér um bil 350 miljónir króna á $1\frac{1}{2}$ ófriðarári. Vixilgangverðið hefir því líka verið mjög hagstætt fyrir Norðurlönd, nema rétt í upphafi ófriðarins. Vixilgangverðið á England og Bandaríkin varð hæzt fyrst í marz 1915, sökum vöruinnflutnings og greiðslu á skuldum. En þá hófðu kaupmenn (og ríkin) lokið mestu af kaupunum, sjóðsláanin voru greidd og Norðursjávarlokunin tálmaði frekari innflutna-

ingi. Enn fremur græddu skipaeigendur Norðurlanda of fjár á hækkun farmgjaldanna. Vixilgangverðið á útlönd fór því lækkandi og er það enn.

Einkum hefir vixilgangverðið lækkað mikið á Rússland, Þýskaland og Austurríki. Lönd þessi hafa reynt að koma í veg fyrir þetta með því að selja verðbréf í stórum stíl. Í Danmörku einni hafa menn keypt aftur dönsk verðbréf, sérstaklega veðlánafélags-skuldabréf, fyrir um 200 miljónir króna. Auk þess hafa menn keypt amerísk verðbréf af Þjóðverjum og selt þau aftur til Englands, en þaðan hefir stjórnin selt þau til Bandaríkja. England hefir því í raun og veru fengið nokkurn hluta af skotföngum sínum fyrir þýkt fé, og Þjóðverjar nokkurn hluta af vörum sínum frá Norðurlöndum fyrir enskt fé! Einnig hafa smám saman komið sífelt meiri gullsendingar frá Þýskalandi, Rússlandi og Englandi. Gullforðinn í Þjóðbankanum danska hefir t. d. aukist um 33 milj. kr.

b. Fyrir ófriðinn var ekki vixilgangverð á milli Norðurlanda. Það var að þakka myntsbandinu 1873, er tekin var upp sama myntslátta á Norðurlöndum. Samband þetta varð enn nanara, er aðalbankarnir gerðu samning sín í milli 1885. Þá gerðust bankarnir brautryðjendur innan bankaheimsins, með því að koma á sameiginlegu gírósambandi fyrir Norðurlönd, þ. e. a. s. hver hinna þriggja aðalbanka gat gefið út ávísun greiðanlega við sýningu á hina tvo bankana, þó að þeir ættu ekkert inni hjá bankanum, sem ávísunin var gefin út á, og bankarnir reiknuðu sér enga vexti né umboðslaun fyrir hvern annan. Skuldir bankanna til hvers annars eru greiðanlegar er krafist er, og eiga að greiðast í 10 og 20 króna gullmynt, ef ekki er öðruvísi ákveðið.

Samband þetta er hinn einasti sjáanlegi árangur Norðurlanda-stefnunnar, Norðurlönd eitt. Þegar samningurinn var gerður, gengu menn að því visu, að greiðsluviðskiptin milli Norðurlanda mundu upp og ofan vera jöfn, því að annars mundi verða erfitt fyrir skuldunautsbankann, að geta ætíð greitt skuld sína er krafist yrði. Svo var einnig vanalega til aldamótanna. En frá 1900—05 skuldaði Noregs banki og ríkisbanki Svíþjóðar ætíð Þjóðbankanum danska mikið fé. Eftir 1905 verður sú breyting á, að Þjóðbankinn skuldar nú bönkum Noregs og Svíþjóðar mikið fé. Gallarnir á fyrir-komulaginu komu þó fyrst greinilega í ljós við ófriðinn.

Vegna þess að Danmörk keypti meira af innlendum verðbréfum heim aftur frá ófriðarþjóðunum heldur en Noregur og Svíþjóð, varð meiri eftirspurn eftir vixlum á útlönd til að greiða verðbréfin með, heldur en í Noregi og Svíþjóð. Þjóðbankinn danski hafði reyndar miklar útlendar kröfur til sölu, en vegna þess að þær höfðu fallið í verði, þá vildi bankinn halda verðinu eins háu og hann gat, til að tapa sem minstu á verðhruninu. Það svaraði því kostnaði að kaupa vixla á útlönd yfir í Svíþjóð eða Noregi, þar sem þeir voru ódýrari, og greiða þá með ávísun frá Þjóðbankanum á Noregs banka eða ríkisbanka Svíþjóðar. Fyrir þessa ávísun tóku dönsku bankarnir fyrst að eins lítilshattar aukagjald ($\frac{1}{2}\%$), en er ávísunum á Noreg og Svíþjóð fór að fjölga og Danmörk komst í

seflet meiri skuld við þau, var gjaldið hækkað. Greiðslur til Svíþjóðar hækkuðu í Danmörku fram yfir ákvæðisverð. Nú varð ódýrara að senda seðla yfir um Sundið, því að burðargjaldið á þeim var minna en gjaldið fyrir ávísanirnar. Danskir bankaseðlar flóðu yfir Noreg og Svíþjóð og urðu menn því að setja gangverð á þá þar, þeir voru að eins teknir með afföllum, fyrst $\frac{1}{3}\%$, svo síðar jafnvel 3% . Sama máli var að gegna um póstávísanir. Í Danmörku var svo lagt útflutningsbann á seðla og smápeninga. Með þessu var í raun rétttri myntsambandi Norðurlanda slitið í bili að mestu, en unt hefði verið að komast hjá því, ef þjóðbankinn danski hefði haft hyggilegri víxlápolítík. Til þess að myntsambandið geti staðið örugt, þarf að vera nánara samband milli víxlápolítíkur aðalbankanna, heldur en verið hefir. Nú sem stendur hafa danskir peningar aftur náð ákvæðisverði í Svíþjóð og Noregi.

c. Í upphafi ófriðarins var lagt útflutningsbann á gull á Norðurlöndum (undanþágur fyrir aðalbankana) og frestað innleysingar-skyldu á seðlum. Nú hefir fyrst Svíþjóð og síðar Noregur gert seðlana innleysanlega aftur, en útflutningsbannið á gulli helst, svo að eina afleiðingin af þessu er, að gullið getur dreifst út um landið. Ástæðan fyrir því að seðlarnirnir eru nú innleystir, er, að bankarnir þykjast hafa nóg af gulli og kæra sig ekki um meira.

d. Í miðjum febrúar hefir komið nýtt vandamál fyrir Norðurlönd. Á síðustu tímum hefir England, Rússland og Þýskaland sent allmiklar gullsendingar til Norðurlanda, sérstaklega til Svíþjóðar, til að koma víxilgangverðinu í lag. Í Svíþjóð hefir gullforði ríkisbankans aukist um 47 miljónir króna síðan í nóvember (113—160) og þykir Svíum því nóg um. Ríkisþingið hefir því nú samþykkt lög, sem veita stjórninni heimild til að afnema frjálsa myntsláttu fyrir einstaklinga, en skylda ríkisins var samkvæmt myntsambandslögunum, þegar myntfóturinn varð að gulli að mynta 2480 kr. úr 1 kíló gulls, í 20 kr. eða 10 krónu peningum, gegn $\frac{1}{4}$ eða $\frac{1}{3}$ gjaldi af hundraði. Þetta getur sænska stjórnin samt ekki ákveðið upp á sitt eindæmi, heldur þarf leyfi Noregs og Danmerkur, eða uppsögn myntsambandsins með eins árs fyrirvara. Svíþjóð hefir því farið þess á leit við hin löndin, að þau samþykki samhljóða lög.

Tilgangurinn með þessum lögum sést á því, sem á eftir fer. Víxilgangverðið í Svíþjóð á England er sem stendur um 16 kr. 90 aurar. Sænskir bændur sem selja smjör í Englandi á 2 shilling-pundið og selja þessa 2 sh. aftur fá fyrir þá 169 aura. Bændurnir geta þá eins vel selt smjörið í Svíþjóð fyrir um 169 aura pundið. — Sendi gull til Svíþjóðar svo að sterlinggangverðið í Svíþjóð komist upp í 18 kr. 10 au., þá fá sænskir bændur fyrir 2 sh. sína í Svíþjóð 181 eyrir og þeir vilja nú ekki selja smjörið í Svíþjóð undir því verði. Smjörverðið hækkar þá í Svíþjóð um 12 aura pundið. Ef Svíþjóð neitar að taka við gulli með ákvæðisverði frá Englandi — eins og nú er í

ráði — getur afleiðingin orðið eitt af tvennu. Annaðhvort senda Englendingar (eða aðrir) vörur til að rétta hallaun á víxilgangverðinu og Svíar mundu helst óska þess að fá vörur. Þetta geta ófriðarþjóðirnar samt ekki gert nú svo að um muni. Eða sænsku stjórninni tekst á þenna hátt að halda víxilgangverðinu lágu á England (og útlönd yfirleitt), en afleiðingin verður að verð á öllum vörum, sem Svíþjóð flytur til útlanda og útlönd ákveða verð á, verður lágt í Svíþjóð. Sama máli er að gegna um innflutningsvörur, svo sem t. d. máis, sem bændur kaupa. Málsinn sem kostar t. d. 240 sh. lestin, kostar nú, ef víxilgangverðið er 16,90, alls 202 kr. 80 au., en ef England kæmi víxilgangverðinu upp í 18 kr. 10 au., kostaði málsinn 217 kr. 20 au. lestin. Innflutningsvörur, sem útlönd ákveða verð á, yrðu því einnig ódýrari ef Svíþjóð gæti haldið víxilgangverðinu niðri með því að neita að taka á móti gulli, nema þá gegn lægra verði en vanalega.

Hvað gæti nú England grætt á því að senda gull og hækka víxilgangverðið frá 16,90 upp í 18,10 á sterlingspundið? Sænskt smjör yrði að líkindum ekki ódýrara í Englandi. Þar keppir sænskt smjör við danskt, hollenzkt og ástralskt smjör og ýmsar aðrar tegundir, og 2 sh. verðið á sænska smjörinu mundi því að eins lækka, að smjörverð lækkaði yfirleitt á enska markaðinum. Tilgangur Englendinga er annar. Sænskir bændur yrðu fúsari á að senda smjör sitt til Englands, ef víxilgangverðið hækkaði, og þeir fengju 12 aukum meira fyrir pundið, en vildu síður senda það til Þýskalands, þar sem markið hefði ekki hækkað. England fengi þá fleiri vörur og gæti betur kept við þýzka og austurríska kaupendur í hlutlausum löndum.

Tilgangur sænska þingsins var að halda víxilgangverðinu niðri, til þess að forðast verðhækkun í landinu. Það sem gert er, er í raun og veru að hindra verðhækkunina með því að hækka tíukrónagullpeninginn í verði. Gangverðið 16,90 mundi á vanalegum tímum í Svíþjóð svara til gullsverðs 2300 krónur kílóíð, í stað þess að tíukrónagullpeningurinn er myntaður samkvæmt því að eitt kíló gulls svari til 2480 krónum. Þegar víxilgangverðið er 16,90, fær þess vegna tíukrónagullpeningurinn (og þar með líka seðill) sem hefir inni að halda 4,032 grömm af finu gulli, hærra verð, eins og hann hefði inni að halda 4,346 grömm.

Það sem Svíar eru nú að gera er, að reyna að koma í framkvæmd hinni snildarlegu hugsjón ameríska hagfræðingsins Irving Fisher's, um að gera verðlagið (Prisniveau) í landinu stöðugra, með því að breyta gullefninu í myntunum í öfuga átt við breytingarnar á verðlaginu í landinu. Á þann hátt væri hægt að láta mynteininguna altaf hafa jafnmikið kaupmagn (»a stabilised dollar«).

Ekki er enn hægt að segja um, hvort Danmörk og Noregur vilji gera það sama. Fulltrúar seðlabankanna þriggja ráðgast fyrst um það í Stokkhólmi. En ef svo skyldi fara, að Norðurlönd yrðu ásátt í þessu efni, þá yrði að komast á miklu nánari samvinna milli seðlabankanna, heldur en hefir verið og sameiginleg forvaxta og

viðslapólitík til þess að þetta gæti komið að tilætluðum notum. Ef tilhögun þessi verður samþykkt, þá er þar með seðlabönkunum (ríkinu) ekki einungis veittur réttur til að ákveða öll verð á Norðurlöndum, heldur einnig til að stjórna öllu atvinnulífinu og verða þeir þá skyldugir til að leiða landið út úr öllum ógöngum ófriðarins og viðskiftakreppu þeirri, sem að líkindum kemur, er friður verður saminn.

Eftir að hafa litið á hvernig alþjóðaviðskiftin eru að breytast í ófriðinum, mun eg nú benda á aðaldrættina og hver viðfangsefni virðast liggja fyrir viðskiftalífinu í framtíðinni.

IV.

1. Eitt hið eftirtektaverðasta við þessa styrjöld er hin miklu afskipti ríkisins af ófriðinum á bak við tjöldin, jafnt í viðskiftalífinu sem annarstaðar. Seðlabankarnir hafa fengið margfaldlega aukin völd og eru ekki að eins lánveitendur ríkisins, heldur einnig í raun og veru leiðtogar alls atvinnulífsins. Það er mjög líklegt, að seðlabankarnir verði eflidari eftir ófriðinn heldur en áður, bæði vegna þess að viðskifti þeirra hafa margfaldast í ófriðinum, og vegna þess að þeir hafa sannað, hve mikils virði það er fyrir þjóðfélagið að hafa sér til aðstoðar öflugan seðlabanka, sem er vel stjórnað, ef einhver vandræði ber að höndum. Tíminn sýnir ekki eingöngu, að hagsmunir einstaklinganna verða að lúta hagsmunum þjóðfélagsins, heldur einnig, að grundvöllurinn undir öllu lífi þjóðarinnar er gangur atvinnulífsins.

2. Auk þessa hafa menn hafið rannsóknir á nýjum grundvelli og breytt skoðunum á fjölmörgum sviðum. Þannig um álitid á gullinu. Fáir eru þeir hlutir, sem menn álitu hafa eins óbreytilegt verð eins og gullið. Það var sameiginlegur verðmælis fyrir allan hinn mentaða heim. Þess vegna álitu menn það vera óbrigðula hjálp á erfiðum tímum og nauðsynlegt fyrir fjármálalegan undirbúning ríkjanna undir ófrið. Menn sáu, hvernig Frakklandsbanki hafði veitt ríkinu ómetanlega hjálp 1870, með því að hafa fyrir hendi mikinn gullforða, sem hann gat selt, og í hans stað gefið út óinnleysanlega seðla fyrir ríkið. Menn bjuggust til að gjöra hið sama nú í byrjun ófriðarins og söfnuðu þess vegna gullinu inn í bankahvelfingarnar með því að gefa út smáseðla. En síðar hefir brugðið svo við, að þó að víxilgangverðin féllu niður úr öllu valdi og slöguðu eins og drukkinn maður, þá hafa bankarnir sent tiltölulega lítið gull út úr landinu, en safnað sífellt meiri gullbrúgum, og legið á þeim eins og ormar. Þeir hafa viljað geta sýnt vöxtinn af gullfúlgunni, þrátt fyrir ófriðinn, svo að þjóðin gæti haft fyrir augum hve mikið af efnum ríkisins væri ónotað enn. Menn hafa dýrkað gullkálfinn, en ekki reynt að færa sér hann í nyt.

Þar að auki hafa sést þess dæmi, að gullið getur ekki komið að tilætluðum notum, þegar ekki er hægt að fá vörur þó gull sé í boði. Gullið er þó aldrei annað en ávísun á umráð yfir ákveðnu kaupmagni á vörum eða vinnu,

og heldur því að eins verði, að hægt sé að ná í vörurnar og menn beri traust til þess, að gullið haldi kaupmagni sínu. Þjóðirnar geta komist í sama ástand sem Midas konungur, sem var að svelta í hel innan um gullhrúgurnar.

Ennfremur hafa menn í Austurríki frá 1901 komist á þá skoðun, að hægt sé að vera án gullsins í viðskiftum, en nota annan lánsmiðil í þess stað. Hægt sé að halda lánsmiðlinum í ákvæðisverði bæði innanlands og utan með hyggilegri forvaxta og víxlapólitík. Gullið ætti eftir þessu að vera ónaðsynlegt til að vinna það hlutverk að halda myntfót landsins í sama verði sem útlanda.

Af þessum ástæðum halda nú margir hagfræðingar því fram, að gullið sé ónaðsynlegt í heiminum sem verðmæli, og gullið muni missa verð sitt eftir ófriðinn. Haldið er fram, að eftir ófriðinn muni öll lönd halda áfram — eins og þau gera nú — að sækjast eftir vörum. Þegar þau reyni að kaupa þær og ófriðarlöndin reyni að koma lagi á víxilgangverðin með því að gjalda með gulli og kasti þeim 10 milljörðum í gulli, sem bankarnir eiga, út á heimsmarkaðinn, þá muni engir vilja né geta tekið á móti öllu þessu. Gullið muni þá falla svo mikið í verði, að það hætti að verða almennur verðmæli og verði þaðan af einungis notað í iðnaði. Ef til vill er hægt að skoða það sem bendingu í þessa átt, að Svíþjóð vill ekki lengur taka við gulli með ákvæðisverði.

3. Þá liggur beint fyrir að spyrja um, hvernig ófriðarríkin muni fara að gjalda herkostnaðinn og rétta við víxilgangverðið gagnvart útlöndum. Það getur ekki tekist, nema þjóðfélagið leggi alt í sölurnar, og á verði komið »almennri gjaldskyldu og sparnaðarskyldu«, sem menn þekkja ekki dæmi til áður.

Það er heldur ekki ólíklegt að þau ófriðarlöndin, þar sem víxilgangverðið hefir fallið mest í verði, muni, þegar friður kemst á, ákveða að framvegis skuli gjaldmiðill þeirra að eins gilda nokkurn hluta upprunalegs verðs. Þá munu engir innlendir né útlendir skuldheimtumenn fá meira gildið en það sem yrði ákveðið, að peningarnir framvegis skyldu gilda, og mundu því tapa. Þykir því mjög varhugavert fyrir banka í hlutlausum löndum að eiga miklar innieignir í ófriðarlöndunum. Ríkin mundu, ef þau gerðu þetta, í raun og veru verða gjaldþrota. Því lengur sem ófriðurinn stendur, þess meiri hætta er á að þetta verði. — Einu sinni voru tvær slöngur, sem bitu í halann hvor á annari og átu hvora aðra upp til agna.

Sérstaklega er mikilsvert fyrir okkur Íslendinga, hvernig viðskiftin við hlutlaus lönd verða. Við höfum séð, hvernig Bandaríkin hafa náð miklum hluta af heimsyfirráðunum á peningamarkaðinum, á meðan að England hefir haft fult í fangi að verjast annarstaðar. Það er ólíklegt að England geti eftir ófriðinn fullkomlega náð völdunum aftur á þessu sviði, því að lönd þau sem eiga nú ófrið við England, munu áreiðanlega varast, að svo miklu leyti sem þeim er unt, að nota England sem skuldajöfnun—

arstað í heimsverzlun sinni. Líklegast er því að peningamarkaðurinn muni að minsta kosti fara yfir á fleiri hendur en áður. En því lengur sem ófriðurinn stendur, þess meir safnast peningamarkaðurinn að fullu og öllu í Bandaríkjunum.

Hlutlaus lönd hafa upp og ofan grætt of fjár í þessum ófriði. Það er því mjög líklegt að ófriðarlöndin muni reyna að velta nokkrum hluta af herkostnaðinum yfir á hlutlaus lönd, hvort heldur sem það nú verður með því að leggja útflutningstolla á vörur, sem ófriðarlöndin ráða verðinu á (eins og kolaútflutningstollurinn í Englandi 1901—03, sem goldinn var með herkostnaðurinn í Búastríðinu), eða, eins og Þjóðverjar eru farnir að gera nú, með því að bækkja verð á vörum, sem hlutlaus lönd eru neydd til að kaupa, eða á annan hátt. Í sjálfu sér er ekki nema náttúrulegt, að ófriðarþjóðunum finnist það ekki réttmætt, að hlutlausar þjóðir græði á óförum sínum, en aftur á móti er ekki von, að hlutlausar smáþjóðir, sem eru vanar því að stórþjóðirnar græði á þeim, vilji fúslega sleppa tækifærinu að ná sér upp.

4. Eitt af málum þeim, sem mest eru rædd nú í heiminum, er »ófriðurinn eftir ófriðinn«. Bæði Miðríkin og Bandamenn ráðgera að hefja efnahagslegan ófrið gegn andstæðingunum, þegar friður kemst á. Ætla þeir sér að gera viðskiftasambönd hvor fyrir sig og verja þau með tollgörðum. Ef þetta verður, þá er hætt við því að leikurinn fari að kárna fyrir hlutlausar þjóðir.

Það er því sem stendur ekki útlit fyrir, að alt verði sól og sumar fyrir hlutlaus lönd þegar friður kemst á. Ófriðuriun virðist hafa sýnt að sterkasta afl nútímans er öflug samhögun (organisation). Að eins lönd sem hafa þenna mátt, mega þora að treysta því, að þau sleppi nokkurnvegin óskert. Menn eiga að vona alt hið bezta, en búast við því versta. Við megum því vona, að samúðartilfinningin milli Norðurlanda, sem hefir aukist svo mikið í þessum ófriði, megi bera þann ávöxt, að fram komi heildar-samhögun, varnarsamband milli Norðurlanda í þjóðhagsmálum og hermálum.

Kaupmannahöfn, í febrúarmánuði 1916.

Héðinn Valdimarsson.

Heimildir: Goschen: Foreign Exchange; Heckscher: Världskrigets Ekonomi; Jastrow: Geld und Kredit im Kriege; Cohn: Ökonomische Tilstände; Wirtschaftliche Masnahmen aus Anlasze des Krieges; Economist; Journ. of the Roy. Stat. Soc.; Finantstidende, Statistisk Aarbo o. fl.



Thorl. Gudm. Repp

Snorri Sturluson.

Brot úr mannlýsingu¹⁾.

I.

Snorri Sturluson var ekki einn af þeim mönnum, sem þurfa að beina öllum kröftum sínum að einu takmarki til þess að geta komið nokkru í verk, því að varla hefir nokkur Íslendingur lifað jafnfjölbreyttu lífi og hann. Hann var lögsögumaður, eigandi margra goðorða, átti í sífeldum deilum, bæði á alþingi og í héraði, og reisti rönd við mestu höfðingjum, sem honum voru samlendir. Hann var tvi-vegis utan, komst þar í kynni við Hákon konung og Skúla hertoga, þá af þeim gjafir stórar og nafnbætur, og átti ekki einungis hlut í, hver afskifti þeirra urðu af Íslandi, heldur virðist líka hafa gerst maður Skúla, eftir að þeir konungur voru orðnir ósáttir. Hann lagði mikla stund á að safna auði, átti mörg bú og stór, var hinn mesti fjár-

¹⁾ Grein þessi á ekki að vera nein æfisaga. Eg drep að eins á þá viðburði í lífi Snorra, sem að einhverju leyti lýsa manninum, og þá auðvitað hvorki í tímaröð né samhengi. Og lýsingin er heldur ekki nema brot. Í ritum Snorra mætti benda á ýmislegt, sem lýsir manninum, svo að eg tali nú ekki um rithöfundinn. Eg hefi einkum beint athygli minni að höfðingjanum Snorra, en hefði þó, ef vel hefði átt að vera, þurft að segja miklu meira frá samtímamönnum hans og aldarand-
anum. En vonandi þekkja flestir, sem þetta lesa, Sturlunga sögu meira eða minna. Eg hefi vitnað í Reykjavíkur-útg., því að hún mun í flestra höndum. — Á síðari tímum hafa margir ritað æfisögu Snorra (m. a. Finnur Jónsson biskup, P. A. Munch, Boesen, Gustav Storm, Jón Sigurðsson, Finnur Jónsson prófessor) og hefi eg beinlínis og óbeinlínis haft mikil not af því, þó að eg auðvitað alstaðar hafi reynt að skilja heimildirnar eins og mér sjálfum fanst liggja beinast við.

gæzlumaður« (Sturl. II, 31), »hagur á alt það, er hann tók höndum til og hafði inar beztu forsagnir á öllu því, er gera skyldi« (Sturl. II, 73). Að því skapi var hann heimsmaður. Háttatal sýnir, að hann hefir vel kunnað að meta dýran borðbúnað (»greipum mætir gullin skál«) og þá ekki síður hvers konar ölföng. Sjálfur var hann skartsmaður í klæðaburði og hélt miklar og glæsilegar veizlur. Og hann var eins og Jón Loftsson, fósturfaðir hans, »mjög fenginn fyrir kvennaást«, og átti börn með mörgum konum.

Og þó er sagan enn ekki nema hálsfögd. Snorri var helzta skáld Íslands á sinni tíð, og hefir varla nokkur annar maður haft slíkt vald á tungunni til bragprauta. Hann ritaði kenslubók handa ungum skáldum, Ólafs sögu helga, Heimskringlu og ef til vill fleiri sögur. Í ritum þessum haldast frásagnarlist og vísindaleg dómgreind fastar í hendur en í nokkrum öðrum islenzkum fornritum, og þau sýna auk þess, að Snorri hefir haft djúptæka þekkingu á öllum sviðum þjóðlegra, islenzkra fræða. Má því vel kalla hann andlegan brennidepil aldar sinnar.

Nútiminn metur ekki öll verk Snorra jafn mikils. Auðvitað hefir hann komið nógu mikið við sögu landsins til þess, að nafns hans yrði getið þar, líkt og t. d. Kolbeins unga, en fyrir þau afrek mundi hann litið þektur utan Íslands. Og enginn mundi halda á lofti veizlum hans og bússýslu, ef ekki væri ritfrægðinni til að dreifa. Því að það eru ritstörf Snorra, sem gert hafa hann frægasta Íslendinginn að fornu og nýju. Og þó eru þau líka misjafnt metin. Háttatal þykir nú litill skáldskapur, og er varla lesið nema af fornfræðingum og afvegaleiddum skóla-sveinum. En goðasögurnar í Eddu og Heimskringla eru þýddar á margar tungur og taldar til dýrgripa hins germanska þjóðflokks.

Ef Snorri mætti líta upp úr gróf sinni, mundi honum koma sumt af þessu heldur á óvart. Hann mundi undrast, hve langt nafn hans hefir borist, því að þótt Snorra vafalaust, eins og Harald harðráða, hafi dreymt um það

í æsku að verða »viða frægur um síðir«, þá hefir hann alls ekki hugsað út yfir Norðurlönd og Orkneyjar. Og sízt hefir hann búist við, að konungasögurnar héldu nafni hans bezt á lofti. Sumir menn trúa því, að sagnaritarar vorir hinir fornu hafi verið svo fordildarlausir, að þeir hafi ekki hirt um að láta nöfn sín geymast. En það er mesti misskilningur. Fornmönnum var ekki síður ant um að bjarga nöfnum sínum frá gleysku en oss, sem nú lifum, en þeim datt það víst varla í hug, að það yrði gert með því að setja nöfnin á sögurit sín. Enda hefir nöfnunum oft verið slept í afritum, þó þau stæðu í frumritinu. Var það bæði, að menn litu þá og lengi síðan alt öðruvísi á eignarrétt höfunda en nú, og annað hitt, að maður skoðaði sig varla rithöfund, þó að hann setti saman í heild sögusagnir, sem hann hafði heyrt úr ýmsum áttum, eða tæki eldra sögurit og yki og lagfærði. Eða ætli menn liti ekki líkt á þetta enn í dag, þegar þeir skrifa upp þjóðsögu, sem þeim hefir verið kend? Gera menn sér grein fyrir, hve hægt er að gera það á margvíslegan hátt? Skyldi sira Skúla Gíslason nokkurn tíma hafa grunað, meðan hann var að skrifa upp þjóðsögur sínar handa Jóni Árnasyni, að hann um leið var að gera nafn sitt ódauðlegt í islenzkri bókmentasögu?

Sjálfur nefnir Snorri að eins tvo af sagnariturum þeim, sem hann styðst við, — Ara fróða, af því að hann var upphafsmaður sagnaritunarinnar og »frásögn hans öll merkilegust«, og Eirík Oddsson, sem talar svo mikið í fyrstu persónu, að það var óhjákvæmilegt að geta þess, hvaða »eg« þetta var. En hann nefnir hvorki Odd Snorrason né Styrmi fróða, og vitum vér þó, að hann hefir notað rit þeirra, né heldur höfund Morkinskinnu, sem nú er gleymdur, en varla hefir verið það þá. Líklega hefir þó Snorri sett nafn sitt á rit sín, en varla er það nema tilviljun, að menn vita nú, að hann hefir skrifað Heimskringlu, enda ekki með öllu órengt. Og annar eins fræðimaður og Sturla Þórðarson var, þá getur hann að eins einu sinni um sagnaritun föðurbróður síns, og þá af því

að það var merki þess, að batna tók með Snorra og Sturlu Sighvatssyni, að Sturla var löngum í Reykjaholti »og lagði mikinn hug á, að láta rita sögubækur eftir bókum þeim, er Snorri setti saman« (Sturl. II, 183).

Meiri frægðar hefir Snorri vænst af kvæðum sínum, og einkum Háttatali. Sturla getur þess líka sérstaklega, að Snorri »gerðist skáld gott« (Sturl. II, 73), og Snorri var of mjög barn síns tíma til þess að skilja, að konunga-
drápurinn voru deyjandi list og hann sjálfur meiri brag-
snillingur en skáld. Þegar hann segir:

Falli fyrr
fold í ægi,
steini studd,
en stillis lof,

hefir sú hugsun ekki verið honum fjarri, að lof konungs ætti einmitt að standa svo lengi í hans eigin kvæði. Og í 100 v. segir hann blátt áfram, að sá maður eigi þó nokk-
urt hrós skilið, er svo fáir ort alla hætti. Nöfn hirðskálda-
anna voru líka miklu fastar bundin við verk þeirra en
sagnaritaranna. Það eru ekki mörg konungakvæði, sem
geymd eru nafnlaus, og í Skáldatali er margra skálda
getið, þó að hver vísa þeirra sé nú týnd. Líklega hefir
enginn maður nokkurn tíma þekt fleiri íslensk skálda-
kvæði en Snorri. Honum var manna kunnugast, hvernig
kvæðin gengu mann frá manni og héldu nafni höfund-
anna á lofti.

En meira en að lofa var að vera lofaður, meira en
að yrkja var að verða að yrkisefni. Konungurinn og
höfðinginn voru meiri en skáldið. Snorri á nútímafrægð
sína ritum sínum að þakka, og þess vegna hættir mönn-
um við að gleyma því, að hann var ekki fyrst og fremst
fræðipulur, heldur höfðingi. Hversu mikið yndi sem hann
hefir haft af ritstörfum sínum og hvað mikils sem hann
hefir metið þau, er það áreiðanlegt, að hann alt af hefir
látið baráttu sína fyrir auð og völdum sitja í fyrirrúmi.
Nafnið »fróði« festist aldrei við hann. Fyrir Styrmí Kára-
son var það nafnbót. Snorri var annað og meira, hann

var goðinn og höfðinginn, lendur maður og skutilsveinn, — átti ef til vill eftir að verða Snorri jarl.

Hefði Snorri framar öðru kosið sér næði til ritstarfa sinna, hefði æfi hans orðið öll önnur. Hann fékk með kvonfangi sínu óðal og auð fjár rúmlega tvitugur, og þrátt fyrir róstur Sturlungaaldarinnar er sennilegt, að hann hefði getað setið nokkurn veginn óáreittur á Borg, ef hann hefði viljað. Arfur Herðisar konu hans var ótvíræð eign hans, og hefði hann ekki gert neitt til þess að brjóta af sér hylli Oddaverja og frænda sinna, átti hann þar athvarf gegn ágengni manna.

En því fer fjarri, að Snorri gerði sig ánægðan með þau mannaforráð og átta hundruð hundraða, sem kvonfangið lagði upp í hendurnar á honum. Viðleitni hans að auka auð sinn og völd gengur eins og rauður þráður gegnum æfisögu hans. Hann nær smátt og smátt undir sig öllum mannaforráðum í Borgarfirði og á Suðurnesjum, Snorrungagöðorði fyrir vestan, hálfu Eyvellingagöðorði í Húnaþingi og að nafninu til hálfum öllum göðorðum Ásbirninga fyrir norðan land. Hann auðgar sig á samningum sínum við Pál prest í Reykjaholti og þó mest á helmingarfélaginu við Hallveigu Ormsdóttur. Hafði Snorri þá miklu meira fé en nokkur annar maður á Íslandi. Og þó að Snorri hefði margt af þessu fram með samningum, þá hikaði hann heldur ekki við að hefja langar og harðar deilur, eins og síðar mun nánar getið. Enda voru sumir samningar hans ekki hættulausir, og svo sagði Þórður bróðir hans um félagið við Hallveigu, »að hann lézt ugga, að hér af mundi honum leiða aldurtíla, hvort er honum yrði að skaða vötn eða menn« (Sturl. II, 127).

Þegar dæma á um sumt í fari Snorra, eins og t. d. fégirnir hans, verður sifelt að hafa það í huga, að hún er ekki annað en einn þáttur í baráttu hans fyrir aðaltakmarki sínu. Það var ekki rithöfundurinn Snorri, sem var fégjarn, heldur höfðinginn Snorri. Og þetta er sittíhvað. Ágirndin er blettur á manni, sem stendur í þjónustu ríkisins eða almennra hugsjóna, því að þá sundrar hún per-

sónunni og skekkir viðleitni hennar. En enginn sakar bóndann eða kaupmanninn, þó að þeir vilji græða fé, því að féð er skilyrði fyrir viðgangi búans og verzlunarinnar. Og á sama hátt var féð í hendi íslenzks höfðingja á 13. öld meðal til þess að ná meiri völdum. Snorri fær fé sitt, að svo miklu leyti sem séð verður, á löglegan hátt, en hinu verður ekki neitað, að sinka hans við syni sína, þegar þeir vilja festa ráð sitt, er nærri óskiljanleg og verður ekki afsökuð.

En einu má ekki gleyma. Snorri þurfti fjárins meir en flestir aðrir. Hann varð að ríða með fjölmenni til alþingis, til þess að láta til sín taka. Auðurinn og mannfjöldinn urðu að vera honum að bakhjalli til þess að bæta upp skort hans á einbeitni og harðfylgi. Því að þó að Snorri framar öllu öðru vildi vera mikill höfðingi, þá skorti hann ýmsa mikilvæga eiginleika til þess að vera það.

II.

Fáein dæmi úr æfisögu Snorra munu sýna betur, við hvað eg á, en nokkur almenn lýsing.

Eftir að Snorri kom aftur frá Noregi árið 1220, ýfðust Sunnlendingar mjög við hann og mest Björn Þorvaldsson, tengdasonur Orms Jónssonar, er Austmenn höfðu vegið. Þótti þeim sem hann mundi standa á móti því, að þeir kæmu fram eftirmáli um víg Orms. Gekk Björn í berhögg við Snorra, og »spurði, hvort hann ætlaði að sitja fyrir sæmdum þeirra um eftirmál Orms. En Snorri duldi þess. Björn lét sér það ekki skiljast, og hélt þar við heitan« (Sturl. II, 88). Og »Sunnlendingar drógu spott mikið að kvæðum þeim, er Snorri hafði ort um jarlinu«.

Það er engin furða, þó að Snorra hafi verið þungt í skapi við Björn. Hann var hér hafður fyrir rangri sök og hafði búist við öðrum viðtökum. Snorra hafa því þótt það góð tíðindi, er fjandskapur hólst með Birni og Lofti, syni Páls biskups, enda »sendi Loftr menn til Snorra og kærði mál sín fyrir honum, og var það sumra manna

mál, að Snorri letti litt Loft uppreistar á mót Birni« (Sturl. II, 90). Snorri sendi líka Valgarð fylgdarmann sinn suður til Lofts og litlu síðar fór Loftur að Birni og feldi hann. Varð eftir Björn hið mesta eftirmál og leitaði Loftur liðs hjá Snorra, en Snorri hét honum sinni liðveizlu á þingi. En þegar til kom, treystist Loftur ekki að riða til þings, og varð þar ekki af vörn fyrir hann. Loftur flýði út í Vestmannaeyjar, en Þorvaldur, faðir Björns, safnaði liði á hendur honum. Komu þeir til liðs við hann Sighvatssynir, Tumi með Eyfirðinga og Sturla með Dalamenn. Sighvatur reið til Borgarfjarðar og sendi orð Þorvaldi vini sínum og lét segja honum, að hann mundi finna Snorra og letja hann að fara til liðs við Loft, sem áður var orð á. »Snorri var allmjög snúinn á liðveizlu við Loft, því að illa hafði verið með þeim Birni; líkaði honum og illa spott það, er Sunnlendingar höfðu gert að kvæðum hans«.

»Snorri var heldur ófrýnn, er Sighvatur kom í Stafaholt. En þó samdist vel með þeim bræðrum, og skildu við það, að lokið var liðveizlu Snorra við Loft. En er Sighvatur kom vestur í Dali, spurðu vinir hans, hversu farið hefði með þeim bræðrum. En Sighvatur segir, að Snorri hefði öxi reidda um öxl, svo hvassa, að hann ætlaði að hvatvetna mundi bíta, þá er þeir fundust; — »síðan tók eg hein úr þússi mínum og reið eg í eggina, svo að öxin var svo slæ, að hló á móti mér, áður við skildum« (Sturl. II, 96—97).

Framkoma Snorra í máli þessu er hvorki stórmannleg né drengileg (þó að Sæmundur í Odda dygði Lofti enn þá ver). Hann hafði svo miklu um valdið og svo mjög bundist í liðveizlu við Loft, að það var skylda hans að yfirgefa hann ekki, þegar svo krepti að honum. Enda átti Snorri Oddaverjum það að þakka, að honum sómdi vel að veita þeim gegn Haukdælum. Máli Lofts lauk bardagalaust, enda var Þorvaldur Gissurarson maður friðsamur, en vægari sætt mundi Loftur hafa fengið, ef Snorri hefði verið þar með flokk sinn. Er ólíkt, hvernig þeir

Sighvatur bræður duga vinum sínum í þessu máli, og var Sighvatur þó ekki áður við það riðinn. Snorri sýnir líkasiðar, eftir útkomu Lofts, að honum þótti sér vandi á höndum við hann. Og margt bendir á, að Snorri hafi upphaflega ætlað að láta til sín taka í þessu máli, m. a. að hann flutti að Stafaholti, »því að hann vildi eigi sitja í Reykjaholti, ef hann ætti ófrið við Sunnlendinga« (Sturl. II, 95). En hvað veldur þá sinnaskiftum hans? Varla viturlegar fortölur Sighvats, því að Snorri hefir verið einfær um að skilja þetta mál. En fremur hitt, að Sighvatur var einbeittari, viljafastari og sterkari persóna. Hann »snýr« Snorra blátt áfram á sína sveif. Og eins og gengur litur hann smáum augum á hann á eftir. Litilsvirðingin gægist fram, bak við glettnina, í lýsingu hans á þessu höggi, sem reitt var til, en aldrei höggvið.

Um Jón murt, son Snorra, er það sagt, að hann bað föður sinn, — »að hann skyldi leggja fé til kvánarmundar honum, og vildi hann biðja Helgu Sæmundardóttur; vildi hann hafa stað í Stafaholti og þar með fé. En Snorri vildi, að hann hefði Borgarland og þar með annað fé móður sinnar [Herdísar, sem Snorri var þá skilinn við], en dró undan sitt fé. Jón tekur þá það ráð, að hann bregður til utanferðar og heitir á vini sína til vöru. — En er Snorri vissi það, gaf hann upp staðinn og hét fénu, en Jón vill þá ekki upp gefa ferðina, og fór utan um sumarið« (Sturl. II, 172). Hér sést gjörla, að Snorri er reikull í ráði. Hann vill komast hjá að skerða eigur sínar, en lætur þó undan, þegar hann sér, að Jóni er alvara. Og á syni sínum hefir hann ekkert taumhald, hvorki til þess að láta hann taka arf móður sinnar, né láta af utanförinni. Enn þá minna réð þó Snorri við Órækju son sinn, sem jafnvel gerðist svo djarfur að fara að honum með flokk manna (Sturl. II, 253). Og þó að Órækja væri óeirðarseggur, þá eru slíks svo fá dæmi, að ástæða er til að halda, að eitthvað af þessu virðingarleysi hafi stafað frá bilgirni Snorra.

Það gerðist á fyrri árum Snorra í Reykjaholti, að

fjandskapur mikill gerðist milli Miðfirðinga og Viðdæla. Snorri átti flesta þingmenn í báðum sveitum, og þótti mönnum til hans koma að sætta þá. Fór hann norður við fáa menn og stefndi mönnum að sér á Mel í Miðfirði. Miðfirðingar komu fyrst og — »leitaði Snorri um sættir við þá, en þeir tóku því seinlega. En þá er Viðdælir komu og stigu af hestum sínum, gengu þeir heim á völlinn. Miðfirðingar hlaupa þá á móti þeim, og slær þar þegar í bardaga, og voru hvorirtveggja allákafir. Snorri hét á þá, að þeir skyldu eigi berjast; engi hirði hvað er hann sagði. Þá gekk Þorljótur frá Bretalæk til Snorra og bað hann milli ganga. Snorri kveðst eigi hafa lið til þess við heimsku þeirra og ákafa. Þorljótur veitti Snorra hörð orð. Síðan hljóp Þorljótur millum hrossanna og leysti, og rak millum þeirra. Þá héldu Viðdælir undan ofan eftir vellinum, og fyrir melinn ofan. Þeir náðu þá hestum sínum, og riðu yfir ána« (Sturl. II, 64).

Þó að frásögnin sé hér fremur á Snorra bandi¹⁾, fer ekki hjá því, að mynd hennar af honum verði fremur óglæsileg. Þingmenn hans virða orð hans gersamlega að vettugi, og Snorri stendur aðgerðarlaus hjá og horfir á þá berjast. Og það sem hann ekki vill reyna með flokki sínum, þó litill væri, gerir Þorljótur aleinn. Síðar fékk Snorri sætta þá Miðfirðinga og Viðdæli, en framkoma hans á Mel verður eigi að síður vottur um skort hans á skörungsskap, áræði og snarræði.

Það kemur aldrei fram, að Snorri hafi verið neinn hermaður, og ýmislegt bendir jafnvel á, að hann hafi »brostið það persónulega hugrekki, sem flestir aðrir höfðingjar á þeim tímum höfðu til að bera« (Kalund). Í máli sínu við orkneysku kaupmennina (Sturl. II, 28—30) beitir hann fyrst rangindum, en þegar kaupmennirnir hefna sín með því að drepa einn heimamann hans, sendir Snorri eftir bræðrum sínum og eggjar þá að leggja að kaup-

¹⁾ Smbr. orðin: Miðfirðingar eggjuðu þá Snorra til eftirreiðar, og veitti Teitur honum mikið ámæli, er hann vildi eigi auka vandræði þeirra.

mönnum. Ekkert bendir á, að Snorri hafi tekið þátt í atlögunni. Hann ríður líka með fjölda manns til alþingis, en ekki virðist hann að því skapi hafa kunnað að beita því liði. Í deilunni við Magnús allsherjargoða og Sæmund í Odda á alþingi (Sturl. II, 70—71) sendir Snorri eftir bræðrum sínum Þórði og Sighvati, — »og þótti Sighvati Snorri eigi vel hafa haldið stöðunni, áður hann kom til«. Og síðar sjáum vér, að Snorri fylkir ekki sjálfur liði sínu, og það þó að hann eigi ekki völ á neinum hæfum manni til þess (»Árni óreiða var þá að fylkja liði Snorra á norrænu, og tókst það heldur ófímlega, því að hann var eigi vanur því starfi«. Sturl. II, 233.). Þegar þeir Kolbeinn Arnórsson og Kolbeinn Sighvatsson ríða suður á land og setjast í bú Snorra með á öðru hundraði manna, ræna og gera óspektir, bíður Snorri langan tíma án þess að hafast að. Og þegar hann loks hefst handa og sendir Órækju orð, eru þeir norðanmenn allir á burt og »höfðu gert svo mikinn skaða á búum Snorra, að það var virt meir en sex tígir hundraða« (Sturl. II, 234—37). Árið 1235, þegar þeir Sturla og Sighvatur voru teknir að safna liði fyrir norðan, kallaði Snorri Órækju son sinn að vestan á sinn fund, og kallaði óráð, að sérhver þeirra væri kvíadur. Órækja brá við skjótt og safnaði sex hundruðum manna, og vildi hann, »að snúið væri á norður, með allan afla þann, er þeir fengi. Voru þess margir fýsendur, þeir er framgjarnir voru. En Snorri var eigi búinn til þess að fara að bróður sínum á þeim hátíðum, er þá fóru í hönd« (Sturl. II, 257). Því ber ekki að neita, að Snorra geti hafa gengið trú og ættrækni til að nokkru leyti, eins og síðar mun dregið á, en ekki virðast þær hvatir þó annars hafa ráðið nándar nærri eins miklu í lífi hans og hugur hans á auð og völdum. Og hvorttveggja átti hann að verja í þetta sinn. Enda flýr Snorri úr Borgarfirðinum og suður á Nes, þegar þeirra Sturlu var von norðan, en ekki gat það verið neinn glæpur fyrir hann að verja hendur sínar. Með þeim flótta er ríki Snorra í raun og veru lokið, og hann hafði gert svo mikið til þess að ná

því ríki, að auðsætt er, að ekkert gat knúið hann til þess að láta það af hendi, nema skortur á þorku og áræði til þess að verja það.

Og jafnvel á banadægri sínu gerir Snorri ekkert til þess að verja fjör sitt. Í stað þess að snúast til varnar með þeim föngum, sem til voru, eða reyna sjálfur að ná tali af Gissuri og bjóða sættir, flýr hann stað úr stað. Og þegar böðlarnir eru yfir honum í kjallaranum, gerir hann síðustu tilraunina til þess að fá frest, er hann tvítekur orðin: »Eigi skal höggva« (Sturl. II, 351). En það er eins og orðin séu töluð út í myrkrið og ekki beint framman í böðlana. Enda voru þau að engu höfð¹⁾.

Sagan um Snorra og Solveigu í Odda lýsir Snorra enn vel og frá nokkuð öðru sjónarmiði. Eftir lát Sæmundar í Odda kusu synir hans Snorra til þess að skifta arfi milli þeirra systkina. Fór Snorri suður og gisti að Keldum hjá Solveigu Sæmundardóttur og Valgerði móður hennar. »Var hann þar í kærleikum miklum við þær mæðgur, og fór Solveig í Odda með honum. En er þau riðu frá Keldum, reið kona á mót þeim og hafði flakulpu bláa og saumuð flökin að höfði henni; hafði hún það fyrir hattinn; einn maður var með henni. En það var Hallveig Ormsdóttir, er þá var færikust á Íslandi. Snorra þótti hennar ferð heldur hæðileg og brosti að. Snorri fór í Odda og stilti svo til, að Solveig hafði koseyri af arfi, þeim er hún rétti hendur til« (Sturl. II, 118—119). En um vorið bað Sturla Sighvatsson Solveigar og fekk hennar. »Fár var Snorri um, er hann frétti kvonfang Sturlu, og þótti mönnum sem hann hefði til annars ætlað« (Sturl. II, 120). En um þetta leyti andaðist Kolskeggur auðgi, og tók Hallveig Ormsdóttir fé hans alt. Þá fékk Snorri Þorvald Gissurarson, fyrverandi tengdafaður Hallveigar, til þess að hlutast til um, að hún gerði félag við hann og færi til bús með honum. Voru þau Snorri síðan ásamt

¹⁾ Storm segir um þessi orð: (Snorri) „forsögte endnu, vant som han var til at befale, at imponere drabsmanden“. En hann þýðir: „ikke skal du hugge“ — og það er ekki alveg sama.

meðan þau lifðu bæði og áttu börn saman, en ekkert þeirra lifði.

Í þessum málum sést greinilega, hvernig andstæðar hvatir berjast í Snorra. Solveig hrifur hug hans, og við skiftin heldur hann fram hag hennar, sem hann hefir ætlast til, að yrði með tímanum sinn eiginn hagur. En hvers vegna biður hann hennar ekki þegar í stað? Ástæðan getur varla verið önnur en sú, að þá hefði hlutdrægnin við skiftin orðið berari. Snorri vill sneiða hjá dómum manna. Svo kemur Sturla og verður fyrri til. Snorri situr eftir með sárt ennið. Hann hafði verið of eigingjarn til þess að vera réttlátur, en á hinn bóginn of hörundsár til þess að færa sér gerðir sínar að fullu í nyt. En hann finnur sárabætur. Þó að búningur Hallveigar særði fegurðarsmekk hans, þá varð auður hennar yfirsterkari, svo að hann gat sætt sig við það kvonfang í stað Solveigar.

Þegar Snorri bjóst til að flytja búferlum frá Borg að Reykjaholti, dreymdi heimamann hans, er Egill hét Halldórsson og var af ætt Mýramanna — »að Egill Skallagrímsson kæmi að honum og var mjög ófrýnlegur. Hann mælti: »Ætlar Snorri frændi vor í brott héðan?« »Það er mælt«, segir Egill. »Brott ætlar hann«, segir draummaðurinn, »og það gerir hann illa, því að lítt hafa menn setið yfir hlut vorum Mýramanna, þá er oss tímgaðist, og þurfti hann eigi ofsjónum yfir þessu landi að sjá (þ. lita smáum augum á). En þó er svo sem eg segi þér, að

Seggr sparir sverði at höggva
 snjóhvítt er blóð líta;
 skæruöld gátum¹⁾ skýra,
 skarpr brandr fekk mér landa,
 skarpr brandr fekk mér landa“.

Og sneri þá brott. En Egill vaknar (Sturl. II, 30—31).

Eg skal ekki leiða neinum getum að því, hvort Egill á Borg hefir dreymt draum þennan nákvæmlega í þessari.

¹⁾ Svo Finnur Jónsson í Skjaldedigtningen.

mynd, né hvaðan honum eru komnar þessar hugsanir. Hitt er víst, að draumurinn hefði ekki haldist í minni manna og verið ritaður, ef hann hefði þótt markleysa ein.

Draumurinn er nokkuð óljós, eins og vera ber, en samt er aðalefnið auðséð: Snorra á að hefnast fyrir, að hann flytur frá Borg, og hefndin virðist eiga að koma fram í því, að menn sitji yfir blut hans. Samtímamenn Snorra, sem héldu draumnum á lofti, hafa með því viðurkent, að þeim fundust forlög hans lakari, en við mátti búast, svo að einhver skýring var æskileg. Og þetta er skýring í alþýðustil, sem gripur til hjátrúarinnar, af því að hún skilur ekki skapferli mannsins (smbr. skýringu Kormáks sögu á því, hvers vegna Kormákur vildi ekki kvænast Steingerði). En um leið er meira í draumnum, önnur skýring, sem ristir dýpra: Snorri er óskaplíkur Agli forföður sínum. Egill vo til landa og var hermaður. Snorri hlífist við að beita sverðinu og er geðlitill¹⁾. Þetta er í raun og veru nóg til þess að gera það skiljanlegt, að Snorri lét menn sitja yfir blut sínum. Hin skýringin verður þá óþörf. Og er gaman að sjá, að samtímamenn Snorra hafa, þrátt fyrir allan þann ljóma, sem leggja hlaut af auði hans og valdi, séð þverbrestinn í skapferli hans.

Þessi þverbrestur er í því fölginn, að Snorri vill vera höfðingi, er höfðingi, og vantar þó suma af nauðsynleg-

¹⁾ Svo verð eg að skilja vísuna. Finnur Jónsson þýðir fyrra helm-inginn svo á dönsku í Skjalded.: „Manden (den) sparer at hugge med sværdet; blodet er (i nutiden) hvidt som sne at se paa (=: kraftesløst)“. Og á líkan hátt þýðir Olav Hansen í dönsku þýðingunni á Sturlungu fyrstu línuna: „Nödigt nu sværd man svinger“. En ef svo skal skilja, verður vísan alveg út í bláinn. Draumurinn er um Snorra og þar virðast orð vísunnar eiga heima. Egill Skallagrímsson hafði enga ástæðu til þess að fara að nota tækifærið til þess að gera lítið úr hug nafna síns, sem enginn veit neitt um annað, en að hann dreymdi þennan draum. Og þó að Egill væri vígamaður mikill, þá er það ofraun að leggja honum þau orð í munn, að blóð Íslendinga á fyrra blut 13. aldar væri hvítt. Þá voru þó uppi mörg afarmenni og vígamenn miklir. En Snorri Sturluson var ekki í tölu þeirra.

ustu eiginleikunum til þess að standa í þeirri stöðu, fullnægja kröfum samtímans. Takmark hans og hæfileikar liggja ekki í sömu stefnu.

Flestir þeirra manna, sem örðugast er að átta sig á, hafa einhvern slíkan brest að geyma. Og hann myndast ekki alt í einu. Með því að athuga hann vandlega, má oft lesa mikið af þroskasögu mannsins, eins og jarðfræðingar lesa sögu jarðmyndunarinnar í gjám og sprungum.

III.

Snorri var »fjöllumyndur«, segir Sturla Þórðarson. Hann á þar eingöngu við kvennamál hans. En orðið lýsir Snorra í miklu viðtækari merkingu og betur en nokkurt eitt orð getur gert. Hann væri ekkert yrkisefni fyrir þau skáld, sem sifelt láta persónur sínar renna á sömu brautarteinunum, sifelt endurtaka sama brotið af sjálfum sér, og svo er hrósað fyrir samkvæmni í lýsingunni.

Sturlungaættin er bezt gefin og margbreyttust ættlandsins á sinni tíð. Hvamm-Sturla er þar í fararbroddi, ráðrikur og ásælinn, haldráður og heiftrækinn, slægvitur og þolgóður. Hann virðist lengi vel að eins sækjast eftir auð og völdum og hafa hugann allan við það, sem ápreifanlegt er, en samt er metorðagirninn rík í honum, og hann er ekki allur í framkvæmdunum, heldur hugsar mál sitt vel og rækilega. Hvorttveggja sést vel á því, sem Sturlu saga segir: »einn dag, er menn komu flestir til lögbergs, þá gekk Sturla fram á virkið fyrir búð sína, því að það var oft háttur hans að setja á langar tölur um málaferli sín, því að maðurinn var bæði vitur og tungumjúkur. Vildi hann og, að það væri jafnan frá borið, að hans virðing væri viðfræg« (Sturl. I, 153). Ráðriki Sturlu er endurborið í mönnum eins og Sighvati, Sturlu, Þórði kakala og Þorgilsi skarða. En um leið kennir annarsstraums í ættinni, eru það hófsamir menn og hneigðir fyrir ihugun og vísindaiðkanir og virðast eiginleikar þeirra eiga rót sína að rekja til hinnar íhyglu og tungumjúkur hliðar Sturlu, og sumt lengra fram í ættir. Slíkir menn

eru þeir Þórður Sturluson og synir hans Sturla og Olafur hvitaskáld. En engum þessara manna er lýst í einu orði. Þeir Þórður og Sturla feðgar eru gedríkir menn og þybbnir fyrir, þó að þeir séu ekki gjarnir að leita á aðra. Í konunghollustu Þorgils skarða og riddaralegu drenglyndi Þórðar kakala kemur fram hagsýni, sem ekki stafar frá ráðríkinu. Sighvatur berst að vísu bæði sjálfur og hjálpar Sturlu syni sínum að berjast fyrir völdum og metorðum, en um leið er eins og hann liti á alt saman eins og gamanleik, sem smásveinar sækja með ákafa, og kemur það bezt fram í samtalinu við Sturlu son hans, Sturl. II, 283—85. Eru sýnir rithöfundar-hæfileikar Sighvats þar og víðar, þó að hann beitti þeim ekki nema í samtölum. Aftur á móti getur Sturla Sighvatsson virzt vera ofsinn tómur og ráðríkið, svo geystur fer hann stundum. En því merkilegra er að sjá tvískinnung ættarinnar einmitt koma glögglega fram í honum. Þess er áður getið, að hann lagði mikla stund á að láta skrifa eftir sögubókum Snorra, og visa er til, sem honum er eignuð. Og einu sinni heftir íhygli ættarinnar ofsa hans — og það dregur hann til bana. Í frásögninni um Apavatnsför er þess beint getið, að Sturla var »ófrýnn og djúphugsaður« (Sturl. II, 293), og í orðum hans: »Ríðum enn!« kemur fram, hve tvíbentur hann er. En Sturla átti tvo tæka kosti: að láta Gissur hlutlausan eða drepa hann.

Það er nú eins og allir eiginleikar ættarinnar eigi ítök í Snorra og stuðli að fjöllyndi hans. Þar sem ættin í bili virðist klofna í lygna kvísl og friðsama í Þórði og sonum hans og straumharða og stríðlynda í Sighvati og hans sonum, er skapferli Snorra á kvíslamótum. Hann er í aðra röndina höfðingi, ásælinn, stórhuga og metorðagjarn, en þó deigur til árædis, seinráður og íhugull, í hina röndina rithöfundurinn, djúpsær og listfengur, en þó með hugann við jarðneska muni. Eins og við er að búast, veikir slíkt marglyndi, þar sem andstæð öfl berjast um völdin, geðstyrkinn og viljapróttinn. Tilfinningar Snorra rista ekki djúpt. Það verður aldrei séð, að hann leggi

neitt í sölurnar fyrir þær. Hann er síngjarn við börn sín og hefir »vinaskifti« (sbr. Sturl. II., 209), þegar honum sýnist. Óð hann leggur tilfinningar sínar stundum berlega í sölurnar fyrir hagsmuni sína. Þegar Sturla Sighvatsson hefir felt Þorvaldssonu, þvert ofan í eiða, er hann hafði svarið Snorra og þeir treyst á, »rann honum mjög í skap þessi atburður«. En síðan er hann þó hinn auðveldasti í sættinni — »því að hann vildi ekki missa liðveizlu Sturlu á þingi um sumarið í málum þeirra Kolbeins unga« (Sturl. II., 207). Marglyndið útilokar langæar tilfinningar og þunga þykkju, en það er skilyrði skjótra geðbrigða (stemninga) og nokkurs mislyndis. Lýsing Sighvats á Snorra, sem áður er tilfærð, er lýsing á manni, sem skjótt skiftir skapi. Og á mislyndi Snorra bendir það, að þegar Sighvatur vill leita um sættir með þeim Þorvaldi Vatnsfirðingi, fer hann á undan í Reykjaholt, en sendir síðan mann til Þorvalds og Sturlu, — »bað þá heim riða, og sagði Snorra í góðu skapi, lézt vænta, að vel mundi takast« (Sturl. II., 121). Þegar Snorri býður Hákonu konungi byrginn og segir »Út vil ek!« (Sturl. II., 335), eða vill ráðast að Sturlu Sighvatssyni í Reykholti við mikinn liðsmun (Sturl. II., 278) þá er slíkt ekki annað en geðbrigði, sem blossa upp og hjaðna jafnfljótt. Þegar Þorleifi í Görðum þykir vonlaust, að þeir geti yfirstigið Sturlu í einni atfö, og vill biða átekta, bilar Snorri þegar og riður þá við annan mann og suður á nes. Þrautseigjuna vantar í viljann, sem von er, þar sem tilfinningarnar eru hverfular. Snorra vantar líka samkvæmni til þess að geta haldið bein lof- orð sín (gefur ekki Órækju Melstað né Stafaholt, Sturl. II., 209, 210, 212).

En marglyndið er ágætur jarðvegur fyrir fjölbreyttar gáfur, viðsýni, skilning og dómgreind. Snorra hefir veitt auðvelt að lifa sig inn í annara manna hugsanir og forna atburði. Tvennar orsakir valda því, að hann verður ekki meira skáld: hann yrkir eftir reglum hnignandi listar og guðmóðurinn bregzt honum, þegar hann talar frá eigin brjósti. Hann vantar skap Egils Skallagrimssonar. En

hann skarar fram úr í hlutlægri frásögn, þegar hann lýsir atburðum og mönnum. Gáfur hans njóta sín þar til fulls, og geðbrigði hans leggja alstaðar réttan blæ á frásögnina, um leið og hin ótruflaða ró vísindamannsins sífellt er í baksýn.

Það er auðvitað ógerningur að greina skýrt á milli meðfæddra einkenna Snorra og áhrifa þeirra, sem hann hefir orðið fyrir á uppvaxtarárum sínum í Odda. En þó er vafalaust, að andstæðurnar í skapferli hans hafa aukist þar. Eftir því að dæma, sem síðar er sagt frá Snorra, er líklegt, að hann hafi lagt litla stund á íþróttir og vopnaburð í æsku, en því meiri á bókleg fræði. Þar hefir hann numið islensk lög, sögur og kvæði. Jón Loftsson var lærður maður og spakur og hefir vafalaust haft yndi af að kenna Snorra og segja honum frá ýmsum hlutum. Eftir frásögn hans hefir Snorri t. d. ritað um árás Vinda á Konungahellu.

Uppeldi Snorra hefir þá einkum stefnt að því að þroska hin kyrlátari einkenni hans og vitsmuni. Hefði hann alist upp vestur í Dölum, er vafasamt hvort hann hefði nokkurntíma orðið rithöfundur. En hann hefði fyrir bragðið orðið betur til höfðingja fallinn. Því að þó að ritstörfin aldrei gætu orðið aðaltakmark Snorra, hafa þau þó sífellt dregið mikið af umhugsun hans að sér og stuðlað að því að sundra honum. Hann varð m. a. þeirra vegna meiri spekingur en framkvæmdamaður. Sögurnar drógu hann með sér inn í fyrri aldir, heftu hann í að verða til fulls barn síns tíma og samtímanum vaxinn.

Jón Loftsson þekti Sturlu Þórðarson og hafði átt við hann að skifta í máli Páls prests í Reykjaholti. Hann var svo vitur maður, að honum hefir hlotið að standa stuggur af þeirri nýju stefnu, sem hann varð þar var við, og bera kvíðboga fyrir, að þeir Dalamenn kynnu að steypa Oddaverjum af stóli. Það er hægt að hugsa sér, að hann hafi einhvern tíma brosað í kampinn, þegar hann sá Snorra Sturluson alast upp við kyrlát fræði og menningu

Oddaverja, í stað þess að fæðast upp í mynd og líkingu föður síns.

En Snorri átti í eðli sínu framgirni, sem aldrei gat orðið fullnægt yfir sögum og kvæðum. Og það var engin von til, að sú framgirni kulnaði út í hinum æðsta höfuðstað í Odda (Biskupas. I, 90), þar sem gat að líta öll merki auðs og veldis gamallar höfðingjaættar. Því hlaut hugur Snorra að beinast í þá átt að verða höfðingi, um leið og uppeldið að öðru leyti stefndi í öfuga átt. Yfir sögunum vöfðust eigin frægðardraumar hans saman við fróðleiksfýsina og skemtunina.

Og Snorri hafði þarna daglega þann mann fyrir augum, sem heita mátti ókrýndur konungur Íslands. Jón Loftsson hlaut að verða fyrirmynd hans. Og Jón var enginn styrjaldarmaður. Hann fór með vald sitt eins og kveðið var um Ólaf kyrra:

Varði ógnarorðum
Ólafr ok friðmálum
jörð, svát engi þorði
allvalda til kalla.

Hefði Snorri ekki þurft meira fyrir að hafa, hefði alt fallið í ljúfa löð.

En munurinn á Jóni og Snorra var mikill. Jón var ekki einungis vitur maður og lærður, heldur líka maður með sterkan vilja og heitar tilfinningar. Hann er allur í svari sínu til Þorláks biskups, sem vildi banna honum samvistir við Ragnheiði systur sína: »Veit eg, að bann þitt er rétt og sökin nóg; mun eg þola þín ummæli með því móti að fara í Þórsmörk eða einhvern þann stað, er eigi sekist alþýða af samneyti við mig, og vera þar hjá konu þeirri, sem þér vandlætið um, þann tíma, sem mér líkar, og ekki mun bann yðvart skilja mig frá vandræðum mínum, né nokkurs manns nauðung, til þess er guð andar því í brjóst mér að skiljast viljandi við þau. En hyggið svo yðvart efni, að eg ætla svo til að haga, að þér veitið eigi fleirum mönnum þetta embætti en mér» (Biskupas. I, 291—92). Eða þegar hann segir: »Vita

menn það, að Sturla er oft óbilgjarn um manndrápin: en fleiri menn kunna að láta drepa menn en Sturla; og það segi eg þér, Böðvar, ef Sturla lætur drepa einn mann fyrir Páli, að drepa skal eg láta þrjá menn fyrir Sturlu. (Sturl. I, 152). Þetta er ekki sagt í anda Snorra Sturlusonar.

Ástæðurnar voru líka aðrar. Jón sat á ættleifð forfeðra sinna, vald hans á þingi og í héraði stóð á gömlum merg, þingmenn hans voru fæddir fylgismenn hans og allur landslýður viðurkendi ríki Oddaverja. Jón gat látið sér nægja það vald, sem hann var borinn til. Þó að vel væri í garðinn búið fyrir Snorra með kvonfangi hans, var hann þó nýr maður í Borgarfirðinum og festir þar aldrei rætur, eins og sést á því, að hann yfirgefur ríki sitt þar varnarlaust. Auk þess þóttist Snorri þurfa að auka vald sitt, en með ásælni sinni egndi hann menn á móti sér.

Tímarnir voru breyttir. Á dögum Jóns léku engin tvímæli á, hver voldugastur var. Nú tekur að koma meiri hreyfing á og margir höfðingjar berjast um völdin. Og lífsskoðun og siðferði Sturlungaaldarinnar er alt í molum, hið forna siðferði virðist vera í dauðateygjunum og hið nýja í svefnrofunum. Menn breyta ekki eftir meginsetningum og ihuguðu ráði, heldur geðþóttu og geðbrigðum. Enginn gjörvuleiki virðist fleyta mönnum ósködduðum gegnum þetta brim. Atgervi Sighvats, Sturlu og Þorgils skarða bjarga þeim ekki frá falli, og vit og ríki Gissurar getur ekki afstýrt Flugumýrabrennu. Þannig er það vopnið, sem Snorri átti bitrast, hyggindin og slægvizkan, deytt í hendi honum.

Hér verður að drepa á tvö atriði í einkalífi Snorra sem mjög koma við skapferlisproska hans, nefnilega trú hans og heimilislíf.

Það hefir lengi verið hald manna, að Snorri hafi verið litill trúmaður, og í sagnaritun sinni farið svo langt sem honum fært þótti í því að sleppa helgisögum og jarteinum eða skýra þær á eðlilegan hátt. En því hefir nýlega verið

mótmælt, af Fr. Paasche, að réttmætt væri að tala um skynsemistrú (rationalisme) í sambandi við Snorra og höfund Fagurskinnu. »Hvert áttu þeir að sækja þvílíkar hugmyndir?«, (Kristendom og kvad, 3). Paasche hefir unnið gott verk í þarfir norrænnar ritskýringar með því að benda á, hvað erlent væri af hugsun og líkingum í fornum helgikvæðum. En hann má ekki þar fyrir ætla, að öll hugsun Íslendinga um trú og kirkjumál hafi verið aðflutt. Eða skyldi Jón Loftsson hafa sótt þá skoðun til Róms, að erkibiskup mundi eigi vilja betur né vita en hans foreldrar, Sæmundur hinn fróði og synir hans (Biskupas. I, 283)? En Snorri var fóstursonur Jóns. Og í raun og veru benda bæði rit Snorra og æfisaga á það, að hann hafi verið fremur kaldur í þeim málum, hvorki gert sig beran að trúleysi, né heldur orðið fyrir djúptækum áhrifum úr þeirri átt.

Lifandi trú hefði getað haft tvenns konar áhrif á Snorra, gert hann mildari í skapi og hófsamari, eins og Þórð bróður hans, en líka djarfari og samfeldari. Gott heimilislíf hefði getað gert líkt að verkum, en það varð heldur ekki hlutskifti hans. Um hjónaband hans og Herdísar vita menn ekki annað, en að þau skildu eftir fárra ára sambúð. Félag sitt við Hallveigu Ormsdóttur gerði hann eingöngu af hagsýnum ástæðum, eins og áður er bent á, en sambúð þeirra virðist annars hafa verið góð, enda voru bæði af brekaaldri. Snorra þótti mikill skaði að fráfalli hennar, en hefur þó þegar deilu við son hennar um fjárskifti. Og að minsta kosti er ekki um þá sterku tilfinningu að ræða, sem getur safnað kröftum tvístraðs manns í einn farveg.

Og auk þess býr Snorri á beztu proskaárum sínum (28—45 ára) ókvæntur í Reykjaholti og hefir margar frillur, líklega samtímis eftir aldri barnanna að dæma. Börn hans eru hvert öðru óstýrilátara og erfiðara í skapi, og ekki ólíklegt, að þau hafi sótt eitthvað af því til mæðra sinna. Og hafi frillur Snorra verið stórlyndar og vanstiltar, þá getur heimilisbragurinn ekki hafa verið skemti-

legur, þar sem þær börðust um völdin. Það bendir og á slæmt heimilislíf, að Snorri reyndist börnum sínum svo illa, að það má kalla eitt af hinu allra lakasta í fari hans. Um Jón murt er áður talað. Órækju prettar hann tvívegis um kvánarmund þann, er hann hafði lofað honum, og vísar honum svo vestur í Vatnsfjörð, þar sem Þórdís Snorradóttir, en ekkja Þorvalds, bjó. Þótti henni ilt upp að standa. Og dvölin í Vatnsfirði varð upphaf óeirða og ógæfu Órækju.

En þegar vér hugsum um, að Snorri á fullorðinsárum sínum átti við slíkt heimilisböl að búa, og auk þess var tekinn barn að aldri og fluttur í fjarlæggt hérað, langt frá öllum skyldmönnum, þó til góðs heimilis væri, — þá er auðsætt, að í þessu atriði hefir hann farið á mis við mikið í lífinu. Þarna er ein af orsökunum til kaldlyndis hans. Og þarna er orsökinn til þess, að Snorri virðist aldrei hafa skilið, að ætt hans gat orðið honum bezta stöðin, ef rétt var með farið. Auðvitað var Snorri engan veginn ræktarlaus við frændur sína. Honum verður mikið um fall Sig-hvats og sona hans í Örlygsstaðabardaga, þrátt fyrir fornan fjandskap, og Þórði og sonum hans sýnir hann ýmis vináttumerki. En hann vill aldrei minka sjálfan sig neitt til þess að efla hag sona sinna og tengdasona, og fyrir bragðið verða þeir honum að litlu liði. Í þessu atriði virðist Snorra jafnvel breyta hyggindi. Hann er of kaldur reikningsmaður, vantar eðlishvötina, sem kann að leggja á tvær hættur, og oft sér dýpra en skynsemin.

IV.

Snorri er rúmlega tvítugur orðinn einn af höfðingjum landsins. Með því hefst nýr þáttur í þroskasögu hans.

Í fyrstu fer hann nokkuð geyst af stað, er ágengur og hefnigjarn. Þórður móðurbróðir hans gaf honum hálft Lundarmanna-góðorð og skyldi hann halda þingmenn fyrir Þórði Sturlusyni og öðrum þeim, er á leitaði. »En er Snorri hafði tekið við þingmönnum, þá þótti Þórði Böðv-arssyni hann leita meir á sina vini, en áður hafði Þórður

bróðir hans á leitað« (Sturl. II, 28). Og fyrir vetursetumanni sínum, Þorkeli rostungi frá Orkneyjum, lét Snorri taka mjöl úr útibúri, og lézt sjálfur vilja ráða lagi á. En Þorkell vildi ráða, hve dýrt hann seldi varning sinn. Varð af þessu fullur fjandskapur, eins og áður er frá sagt. Eftir að Þorkell hafði rekið árás Sturlu-sona af höndum sér, lét hann í haf, en varð afturreka og dvaldi hjá Sæmundi í Odda veturinn eftir. Snorri sendi þangað flugumenn þrjá saman, en ekki komu þeir neinu fram (Sturl. II, 28—30).

Nokkru síðar átti Snorri þingdeilu litla við Magnús allsherjargoða og Sæmund í Odda. Hlaut Sæmundur að gera um málið, og líkaði Snorra illa. Og litlu eftir hóf hann deilu við Magnús um arf Jórunnar auðgu. Var hún í þingi með Magnúsi og ætlaði hann sér fé hennar, en Snorri sendi Starkað Snorrason suður á nes, og hafði hann sunnan með sér »þann mann, er Koðran hét, strák einn, og kallaði Snorri þann erfingja Jórunnar, og tók hann það fémal af Koðrani« (Sturl. II, 72). Sótti Snorri mál þetta með kappi miklu og reið um vorið til alþingis með sex hundruð manna og voru átta tigur Austmanna í flokki hans alskjaldaðir. Hafði hann sóma af málum þessum, þó að málaefni virðist hafa verið vafasöm. »Og í þessum málum gekk virðing hans við mest hér á landi« (Sturl. II, 73).

Það má kalla, að fram að utanför Snorra (1218) hafi ríki hans og álit verið í uppgangi, þrátt fyrir einstöku áföll. Sjálf Sturlungaöldin er enn ekki byrjuð, en þeir bræður, og þá einkum Sighvatur og Snorri, virðast vera á leiðinni að þoka Oddaverjum úr öndveginu. »Bræður þessir draga sig svo fram, að nær engir menn halda sig til fulls við þá« (Sturl. II, 71), segir Sæmundur í Odda eftir þingdeiluna við Snorra. Og sjálfur hefir Snorri ætlað sér meira hlut en bræðrum sínum. Árið 1220 segir hann við Hákon konung, »að þá voru aðrir eigi meiri menn á Íslandi en bræður hans, er Sæmund leið, en kallaði þá mundu mjög eftir sínum orðum víkja, þá er hann

kaemi til« (Sturl. II, 86—87). Þetta sýnir, að Snorri hefir komið með miklar vonir úr utanförinni. Hann hafði auk þess þegið nafnbætur og stórgjafir erlendis og afstýrt yfirvofandi hættu fyrir landið. Þegar hann reið frá skipi, og þeir tólf saman, höfðu þeir meir en tylft skjalda, alla mjög vandaða, og létu allvænt yfir sér. Þá hefir Snorra fundist hann kjörinn til að verða helzti maður landsins.

En nú dynja vonbrigðin yfir hann. Honum er illa tekið á Suðurlandi og gerðir hans í Noregi lagðar út á versta veg. Liðveizla hans við Loft biskupsson fer út um þúfur, og það eru Haukdælir og Sighvatur bróðir hans, sem vaxa á þeim málum. Sturla bróðursonur hans tekur Solveigu, sem Snorri hafði ætlað sér, og heldur til fulls við hann. Á þessum árum lærist Snorra meir og meir að beita öðrum mönnum fyrir sig og koma sem minst við sjálfur. Nýir tímar eru að hefjast, sem hann er ekki vaxinn.

Hann byrjar á því að ýta undir Loft að drepa Björn Þorvaldsson. Hann otar Jónssonum á Þorvald í Vatnsfirði og hvetur þá beinlínis til þess að fella hann (Sturl. II, 111). En þegar þeir vinna ekki á, og Þorvaldur vill sættast við Snorra og mægjast við hann, þóttist Þorvaldur skilja, »að Snorri mundi unna honum inna mestu sæmda, ef hann vildi vera skyldur þess að gera hvað er Snorri legði fyrir hann, hverigir sem í mót væri« (Sturl. II, 123). Var Þorvaldur þó einn hinn versti maður, er þá var uppi á Íslandi. Skömmu síðar vingast Snorri við Þórð bróður sinn, en eggjar hann jafnframt uppreistar gegn Sturlu Sighvatssyni (Sturl. II, 125). Eftir brennu Þorvalds í Vatnsfirði virðist Snorri hafa eggjað sonu hans á hendur Sturlu (smbr. Sturl. II, 165), og a. m. k. lét hann á eftir vel yfir hinni alræmdu Sauðafellsför, en hitt er satt, að hvorki ber Snorri ábyrgð á aðförum Þorvalds-sona á Sauðafelli, né heldur mundi hann sjálfur hafa gert sig sekan í slíku. En viljað mun hann hafa Sturlu feigan, enda hefði margt öðruvísi skipast, ef Sturla hefði fallið þá. — Snorri giftir dætur sínar tvær Kolbeini unga

og Gissuri Þorvaldssyni, og var nú mikill ljómi yfir ríki hans. Sturla verður að láta undan og selja af hendi Snorrunagadoðrð. Og síðan, þegar Kolbeinn skilur við Hallberu, heimtar Snorri helming allra goðorða hans fyrir norðan, og safnar svo miklu liði gegn honum, að hann gengur að þessari hörðu kröfu að nafninu til.

Sá er sterkastur, sem staðið getur einn. Það gat Snorri ekki, enda félst mikið af veikleika bak við sigra hans. Á þessum árum breytist líka takmark hans smátt og smátt. Hann leggur meiri og meiri áherzlu á yfirskinið tóm, metorðin, í stað yfirráðanna, valdanna.

Ráðríki og metorðagirnir eru tvær hvatir, sem oft fylgjast að, enda blanda menn þeim stundum saman í daglegu tali. En samt eiga þær hvor sín upptök og lýsa sér hvor á sinn hátt. Metorðagirninn þróast bezt í einrúmi, yfir bókum og í dagdraumum, ráðríkið í skærum við leikbræðurna og í margmenni. Marglyndi maðurinn verður einatt að láta sér nægja metorðin, einlyndi maðurinn berst fyrir yfirráðunum, þar sem hann nær til. Í stjórnmála-baráttunni getur að líta metorðagjarna menn, sem halda miklar ræður í þingsalnum, en í raun og veru tala fyrir munn ráðríks flokksbróður, sem heldur vill beita sér á flokksfundum. Hjá skáldunum ber, eins og eðlilegt er, meira á metorðagirninni. En þó eru meðal þeirra til ráðríkir menn, eins og t. d. Björnstjerne Björnsson.

Þó að Snorri hafi átt í eðli sínu töluvert af ráðríki, eins og hann átti kyn til, þá hefir metorðagirninn þó líklega alt af verið ríkari í honum. Smekkur hans hueigist að því, sem mikilfenglegt er og glæsilegt. Honum hefir verið yndi að því, að ríða með fjölda manns til alþingis, og valda sinna hefir hann alt af meðfram notið með listamannseðli sínu. Fordild hans kemur vel fram í því, að hann kallar búð sína á Þingvöllum Valhöll. Og þegar hann segir við þá Kolbein og Órækju, að hann sé eigi vanur »að eiga hlut að héraðsdeildum«, þá birtist í því vilji hans að eiga í þeim málum einum, er mikil séu og víða verði fræg.

En við þetta bætist síðan nauðsynin. Snorri verður að sigla milli skers og báru, hann getur ekki fylgt fast eftir.

Þetta kemur berlega fram í máli hans við Orm Svínfelling. »Snorri kvað þá vel að reyndi, hver þeirra þingríkastur væri, og segir Orm lengi hafa öfundað sig og sína sæmd«. Ormur selur líka Snorra sjálfðæmi og Snorri dæmir sér fjóra tigi hundraða (Sturl. II, 186—7). En síðan gefur Snorri upp sektina, af því að hann vill hafa Orm sér vinveittan í máli sínu við Kolbein unga (Sturl. II, 208). Hefðu Snorra verið mislagðar hendur, svo fastur sem hann annars var á fé, ef hann hefði gert slíkt af tómu örlæti.

Hinir ríku tengdasynir hans verða honum að litlu liði. En ljóma lagði af þeim í svipinn. »Það var eitt kvöld, er Snorri sat í laugu, að talað var um höfðingja; sögðu menn, að þá var engi höfðingi slíkur sem Snorri, en þó mátti engi höfðingi keppa við hann fyrir sakir mægða þeirra, er hann átti. Snorri sannaði það, að mágar hans væri eigi smámenni. Sturla Bárðarson hafði haldið vörð yfir lauginni, og leiddi hann Snorra heim og skaut fram stöku þessi, svo að Snorri heyrði:

Eignð áþekt mægi
orðvitr sem gat forðum
— ójafnaðr gefsk jafnan
illa — Hleiðrar stillir.“ (Sturl. II, 150.)

Hefir Sturla glögt séð, hve litill styrkur Snorra var að tengdasonum sínum í raun og veru. Enda stóð Gissur seinna yfir höfuðsvörðum hans og með ráðum Kolbeins. Við það varð ætlun Sturlu að spádómi.

Til þess að fá Sturlu Sighvatsson í lið með sér gegn Kolbeini, verður Snorri að brjóta odd af oflæti sínu eftir víg Þorvaldssona og gera Sturlu sem auðveldast að ná sættum. Og þegar hann loks hefir safnað svo miklu liði gegn Kolbeini, að hann getur haft í öllum höndum við hann, þá vill hann ekki láta skriða til skara. Hann vill ekki hætta á, að gera Kolbein að fjandmanni sínum. Kol-

beinn gengur að því, að Snorri skyldi eiga helming goð-
orða þeirra, er Kolbeinn átti að réttu, en Kolbeinn skyldi
með fara og veita Snorra á þingum; Kolbeinn skyldi og
gjalda fé nökkut, ef Snorri vildi heimta. Í raun rétttri
var þetta fullkominn ósigur fyrir Snorra. Kolbeinn gerði
sig skömmu síðar beran að fjandskap við hann og varð
honum aldrei að neinu liði.

Og ekkert sýnir betur, hve rótlaust ríki Snorra var,
en þegar hann flýr úr Borgarfirðinum undan þeim Sig-
hvati og Sturlu og gefur þar upp öll yfirráð sín, án þess
að reyna að veita viðnám.

V.

Um Snorra hafa verið feldir mjög misjafnir dómur,
og er það engin furða. Hann er sjálfur marghliða, svo
að ef menn reyna að leggja aðaláherzluna á eina hliðina,
geta ýmsar orðið uppi. Og sjónarmiðin eru mörg, og dóm-
arnir misjafnir eftir því, hvert þeirra er valið.

Ef líta skal á Snorra frá siðferðislegu sjónarmiði, þá
ber þess fyrst að gæta, að hugsunin um gott og ilt, rétt
og rangt, hefir ekki verið rík í honum. Hjá sumum mik-
ilmönnum er sú hugsun þungamiðja persónunnar, og það
sjónarmiðið því eðlilegast, þegar á að dæma þá. En á
Sturlungaöldinni voru skoðanir Íslendinga á trúmálum og
siðferði yfirleitt mjög á reiki, og auk þess var Snorri að
upplagi fjöllyndur og listrænn í skapi, og lítt fallinn til
þess að binda sig við fastar meginreglur í hugsun og
breytni. Þetta hlutleysi í siðferðismálum hafði ýmsar af-
leiðingar. Það var eitt af því, sem gerði óhlutdrægni
þeztu sagnaritara vorra mögulega, en það stuðlaði líka að
hnignun þjóðarinnar. En það er samtímans sök, sem ekki
getur bitnað á Snorra einum.

Og á öllum öldum gildir það, að sami eiginleikinn
getur sprottið upp af ýmsum rótum, og orðið fyrir mis-
jöfnum dómum eftir uppruna. Og hann getur líka eftir
umhverfi og atvikum snúist upp í kost eða löst. Jafnvel
sami eiginleikinn getur verið bæði kostur og löstur á

sama manni. Marglyndi Snorra er kostur á honum sem rithöfundi, en galli á höfðingjanum. Alt þetta gerir dóminn erfiðari.

Hugrekkið er oft komið undir gáfnafarinu. Skortur á framsýni og hugmyndaafli getur verið undirrót flíðirfsku. Það er einkenni skáldsins, að geta lifað hugsaðan atburð með meira afli og skýrleik en aðrir menn. Þetta hefir Snorri getað, eins og rit hans sýna, enda ægir honum meira en öðrum sú hugsun, að koma á vald óvina sinna (Sturl. II, 278). Þá er og hitt alkunnugt, að margbreyttir hæfileikar og hvatir geta tvístrað viðleituninni og klofið persónuna. Það er auðveldara að vera heill og sjálfum sér samkvæmur með fábreytta hæfileika og einhæfa lífsstefnu.

Og um metorðagirni Snorra er það að segja, að hjá henni gat hann ekki komist. Ætt hans og uppeldi lögðust þar á eitt og hlutu að ráða. Hún varð að forlögum hans, leiddi hann gegnum meðlæti og mótlæti og að síðustu til bana.

Snorri hefir sjálfur séð það manna bezt, að tveir menn með sama skapferli geta átt misjafna dóma skilið. Í hinum fræga samanburði hans á Ólafi helga og Haraldi harðráða er meginhugsunin sú, að dómurinn sé ekki mest undir skaplyndi mannsins kominn, heldur undir því takmarki, sem kröftunum er beitt fyrir. Ólafur bardist fyrir réttlæti og nýjum siðum og var feldur á eign sinni sjálfs; því varð hann heilagur. En Haraldur bardist sér til frægðar og ríkis og féll á annara konunga eign.

Það gæti virzt sanngjarnt að leggja þennan mælikvarða Snorra sjálfs á gerðir hans sem höfðingja. Og þá verður dómurinn ekki vægur. Þegar það er frá skilið, að hann vinnur að því að afstýra herförinni til Íslands, verður ekki annað séð en að öll barátta hans sé fyrir eigin hagsmunum og metorðum. En hann á þar sammerkt við aðra höfðingja landsins á þeim tímum. Öldin var fátæk af hugsjónum, en auðug af eigingirni. Ríkið var í molum og óeirðirnar allar inn á við. Að eins í einu til-

liti stendur Snorri í þessu efni að baki flestum samtímamönnum sínum: singirni hans bitnar á börnum hans. Aftur á móti sparar t. d. Sighvatur bróðir hans hvorki fé né fjör til þess að efla og styðja Sturlu son sinn. En orsakirnar til breytni Snorra í þessu efni hefi eg reynt að greina að framan.

Þá má bera saman eigið takmark Snorra — völd og metorð — og æfiferil hans, og dæma hann eftir þeim samanburði, líkt og listaverk má dæma eftir því, hvort höfundurinn hefir náð tilgangi sínum með því eða ekki, án þess að fara nánar út í að meta þennan tilgang. Að mörgum stórmönnum sögunnar er dáðst á þennan hátt. Þau eru lifandi listaverk, höfði hærri en allur lýðurinn og margra makar. Menn dást að eldhug þeirra, viljastyrk og afrekum — og gleyma að spyrja um, hvað gott þeir hafi viljað eða látið af sér leiða. Frá þessu sjónarmiði hefir Snorri skoðað sumar af söguhetjum sínum. En litum vér á hann sjálfan frá því, verður ósamræmið milli ætlana hans öðrum megin og krafta og atgerða hinum megin alt of bert til þess að hann geti hrifið hug vorn.

En um leið og áherzla er lögð á, að Snorri stóð ýms-um samtímamönnum sínum að baki að röggsemi og skörungsskap, er skylt að geta hins, að ein orsakanna var sú, að hann var ekki búinn sumum lókustu göllum þeirra. Hann sást meira fyrir, beitti hvorki ofbeldi né grimd, er ekki beint riðinn við neitt af þeim hryðjuverkum, sem kasta skugga á öldina. Hann verður ekki dæmdur með sanngirni, nema menn sjái aðra höfðingja landsins í baksýn. Arngrímur ábóti segir um þá Sturlusyni, að Þórður var þeirra beztur, Snorri í mið, en Sighvatur verstur (Biskupas. II, 71). Frá siðferðissjónarmiði er varla hægt að segja neitt betra um Snorra en þetta «í mið». Hann er hvorki í flokki mestu mannkostamanna né varmenna Sturlungaaldarinnar. Og hafi hann stundum gert öðrum rangt til, þá fór hann sjálfur ekki varhluta af yfirgangi annara. Kolbeinn ungi rýfur sætt sína við hann og reynist honum hið versta. Sturla Sighvatsson viðurkennir

sjálfur (Sturl. II, 290), að þeir feðgar hafi beitt Snorra rangindum. Og Gissur notar sér bréf Hákonar konungs, sem varla hefir viljað Snorra feigan, að yfirvarpi til þess að fara að honum, og hann lætur böðla sína drepa hann, án þess að reyna að grenslast eftir, hverjum sáttum hann vildi taka.

Þá verður að minnast nánar á eitt atriði, sem misjafnt hefir verið dæmt um, afstöðu Snorra til konungsvaldsins. Sumum finst Snorri hafa gert sig sekan í landráðum, er hann hét Hákonu að »leita við Íslendinga, að þeir snerist til hlýðni við Noregshöfðingja« (Sturl. II, 85) og síðan tók leynilega við jarlsnafni af Skúla hertoga¹). En öðrum þykir sem Hákon hafi skoðað hann sem hlífiskjöld fyrir sjálfstæði landsins og hafi það verið orsökina að vígi hans. En hér er skamt öfganna á milli. Snorri hefir verið hikandi í þessu máli. Í Noregi varð hann fyrir áhrifum af veldi þeirra Hákonar og Skúla, glæsimenska hirðarinnar heillaði hug hans, skoðanir manna á

¹) Sturla segir svo um þetta mál: „Voru þá fáir menn við tal þeirra hertogans og Snorra. Arnfinnur Þjófsson og Ólafur hvítaskáld voru með hertoganum, en Órækja og Þorleifur með Snorra. Og var það sögn Arnfinns, að hertoginn gæfi Snorra jarlsnafn, og svo hefir Styrmir hinn fróði ritað „ártíð Snorra fólgsnarjarls“. En engi þeirra Íslendinganna lét það á sannast fyrir oss“ (Sturl. II, 335—36). Hér er margs að gæta. Styrmir var manna handgengnastur Snorra, og þó að hann væri lítt gagnrýnnur á fornar sögur og helgisagnir, þá var hann enginn skynskiftingur og gat ekkert gengið til að halla hér réttu máli. Er sennilegt, að Snorri hafi sjálfur trúað honum fyrir þessu, og Styrmir talið sig leystan frá þagnarskyldu sinni eftir víg Snorra. Hitt er þó ekki ómögulegt, að Styrmir hafi farið eftir sögn Arnfinns, en lítil ástæða hefdi þá verið fyrir Sturlu að nefna hann sérstaklega. Og ekki virðist Arnfinni hafa getað gengið neitt til að skrökva þessu upp. Á hinn bóginn hlaut Sturlu að vera meinilla við þessa sögu, því að væri hún sönn, voru drottinssvik Snorra andsæ og fé hans með því fallið í konungagard. Og hugur Íslendinganna þriggja hlaut að fara í sömu átt. Þeir höfðu gilda ástæðu til þess að halda fast við þagnarheit sitt, þó að Snorri væri látinn. Eg efast því ekki um, að vitnisburður þeirra (um bein mótmæli talar Sturla heldur ekki) er minna virði en Arnfinns og Styrmia.

sjálfstæði voru þá aðrar en nú, og þegar Snorri bar saman ástandið á Íslandi og í Noregi, gat sú hugsun orðið ofan á, að landinu væri fyrir beztu að komast undir konung. Og þegar við þetta bættist, að það var vegurinn upp í jarlssætið fyrir hann sjálfan, er ekki undarlegt, þó að hann léti bugast af fortölum þeirra Skúla. En á Íslandi hefir Snorri líklega litið öðruvísi á þetta mál, enda skildi hann það flestum betur, er hann íhugaði það í tómi, og ber ræða Einars Þveræings þess ljósastan vott.

En hverjar sem hugsanir Snorra hafa verið í þessu efni, þá gerði hann aldrei neitt til þess að efna heit sín. Enda átti hann allajafna nóg með að verja sitt eigið ríki. Þeir Hákon og Skúli hafa líka varla búist við miklu. Jón murtur kemur fljótt aftur úr gíslingunni. Í raun og veru mátti boð Snorra vera þeim kærkomið yfirvarp til þess að hætta við herferðina til Íslands, sem var hættulegt fyrirtæki og vafasamt, hvað úr yrði.

Snorri hefir haft flest af því til að bera, sem gat gert hann skemtilegan í framgöngu og þægilegan í viðmóti. Mislyndi hans hefir að vísu getað verið óþægilegt í sambúð, en við gesti sína hefir hann verið glaður, og skap hans var ekki örðugra en svo, að hann hefir átt gott með að laga sig eftir öðrum. Þegar menn hittu hann sjálfan að máli, var hann oftast sveigjanlegur. Hann hefir líka verið gestrisinn og haft yndi af margmenni og ölteiti. Og um tal hans er óparfi að leiða getum, því að rit hans bera þar órækt vitni. Þar hafa haldist í hendur fróðleikur og vit, gaman og alvara. Gylfaginning gefur líklega ljósasta hugmynd um þá hlið hans.

Það er því engin furða, þó að Snorri væri vinsæll af mönnum sínum og þeim, sem verið höfðu gestir hans. Skál þess eins hér getið, að Ormur stjúpsonur hans vill ekki vera í fjörráðum við hann, þó að hann þættist rangindum beittur (Sturl. II, 350), og Sturla Þórðarson lætur son sinn heita Snorra, þykist skyldur að hefna hans og vill í hvívetna bera honum vel söguna.

En þyngst af öllu verða rit Snorra á metunum, er dæma skal um feril hans í heild sinni. Þar fann hann það takmark, sem var meira en eigin metorð, þar vann hann að af háleitri innri hvöt og hugði sér lítt til lofs fyrir. Þar var óðalið, sem hann var til borinn, og hefði hann fallið á allri þeirri eign sinni, hefði hann verið heilagur, eins og Ólafur Haraldsson. Margir mestu rithöfundar heimsins hafa lifað lífi sínu með líkt upplag og Snorri, og ekki orðið að fundið. Þeir hafa ekki lifað í sama umhverfi og íslenzkur höfðingi á 13. öld.

En settum vér þá að óska, að Snorri hefði tekið þann kost að verða krúnurakaður klerkur eða friðsamur búandmaður með hugann allan við bókleg störf? Eg held ekki. Að visu hefðu verk hans þá orðið fleiri og stærri, því að starfsprekið hefir verið frábært. En bækur verða ekki metnar í pundum, og þeir rithöfundarnir eru ekki síztir, sem leggja alla reynslu fjölbreyttrar æfi í eina eða tvær bækur. Á margan hátt hafa rit Snorra notið góðs af æfiferli hans, eins og hann var. Stíll hans ber vott um smekkvísi höfðingjans og er laus við lærdómstildur og munkamærð. Hann er viðsýnn og frjáls í hugsun og ekki bundinn við kreddur neinnar stéttar. Reynsla hans er fjölbreytt og mannþekkingin djúptæk, þess vegna bera ræðurnar í Heimskringlu og frásögnin um samninga og ráðstafanir af flestu öðru í þeirri grein. Og metorðagirni Snorra, sú sama sem veldur svo mörgu öðru í fari hans, leggur líka ljómann um höfðingjalýsingar Heimskringlu. Snorri varð aldrei jarl yfir Íslandi, en hann var konungur í ríki sögunnar. Og mikið af því dýrmætasta í bókmentum heimsins er á öllum öldum orðið til við ljómann af þeim neista, sem kviknar, þegar hugur snillingsins ræður til stökks frá hversdagskjörum þeim, sem eru hlutskifti hans, til draumaheimsins, sem er takmark hans.

Sigurður Nordal.

Hvað eru Röntgens-geislar?

Í ritgerð um Röntgens-geisla í síðasta hefti Skirnis, bls. 49—50, segir Gunnlaugur Claessen, að menn áliti, að Röntgens-geislarnir séu annaðhvort sveiflur í ljósvakanum með mjög stuttri sveiflulengd eða straumur af örsmáum efnis-ögnum. Á mjög svipaðan hátt lýsir próf. Ágúst H. Bjarnason í ritgerðinni: »Heimsmyndin nýja« í öðru hefti Iðunnar (október 1915), bls. 136—137, hugmyndum manna um alfa-geislana, sem sum radióaktíf (geislamögnuð) efni senda frá sér, en alfa-geislarnir eru sams konar geislar og Röntgens-geislarnir.

Lýsingar þessar á hugmyndum manna um Röntgens- og alfa-geislana eru þó eigi alveg réttar, ef átt er við nútíðarskoðanir manna. En hins vegar má þær til sanns vegar færa, ef miðað er við skoðanir manna fyrir 4 árum síðan, því að þá voru þannig tvískiftar skoðanir manna um hið innra eðli Röntgens-geislanna. Að visu voru þeir, sem héldu því fram, að Röntgens-geislarnir væru öldugangur í ljósvakanum, eigi öldungis sammála, því að sumir, einkum enskir eðlisfræðingar, álitu, að Röntgens-geislarnir væru óregluleg ölduhreyfing, sem á sinn hátt svaraði til hinna reglulegu ljósaldna eins og hvellir eða skarkali til reglulegra tóna hjá hljóðbylgjunum; en sumir þýzkir eðlisfræðingar voru þeirrar skoðunar, að geislarnir væru reglulegar öldur, að eins miklu styttri en venjulegar ljósöldur. Gagnstætt þessum skoðunum var það álit sumra, að Röntgens-geislarnir væru örlitlar agnir, rafmagnslausar og á harða flugi, í líkingu við það, að kaðódu- og beta-geislar eru mjög litlar agnir með negatífu rafmagni, en alfa- og

kanal-geislar nokkru stærri agnir með pösitífu rafmagni. Þessi efniskenning um Röntgens-geislana var fyrst flutt og síðar haldið fram með miklum dugnaði af Bragg, þá prófessor í eðlisfræði suður í Ástralíu. Var máli hans meiri gaumur gefinn fyrir því, að hann var þá nýlega orðinn heimskunnur fyrir rannsóknir á útbreiðslu alfa-geislanna.

Þó að margt mætti færa þessum skoðunum til gildis, þá vantaði þó tilraunir, er sýndu það ótvírætt, hver skoðunin væri rétt. Sú eina tilraun, er virtist geta úr þessu skorið, var gjörð af þýzkum manni, E. Marx, og var hún í því fólgin að mæla hraða Röntgens-geislanna. Honum taldist svo til eftir mælingunum, að þeir færu með sama hraða og ljósið eða 300,000 km. á sekúndu. Væri þetta rétt, var með því fengin nokkurn veginn vissu fyrir því, að Röntgens-geislarnir væru öldugangur í ljósvakanum; því að það er lítt hugsanlegt, að efnisagnir geti farið með hraða ljóssins. En margir drógu í efa, að tilraun Marx væri svo ábyggileg, að hún gæti talist óbyggjandi sönnun þess, að Röntgens-geislarnir færu með sama hraða og ljósið; svo að hver hélt sinni skoðun þrátt fyrir þessa tilraun.

Deilu þessari um eðli Röntgens-geislanna svipar í mörgu til deilunnar um eðli ljóssins, eftir að Newton hafði getið þess til, að það væri smáagnir á flugi, en Huygens hins vegar haldið því fram, að það væri nokkurs konar öldugangur. Sú deila var til lykta leidd, er menn athuguðu, að ef ljósið væri ölduhreyfing, þá ætti það sumstaðar að hverfa, en aftur vaxa annarstaðar, þegar ljósöldum slær saman, sem koma frá sama ljósgjafanum með litlu millibili. Áthuganir og tilraunir leiddu í ljós, að þannig var það, og menn urðu að fallast á skoðun Huygens. Af þessum samslætti (interferens) ljósaldnanna orsakast litbrigðin, sem sjást, þegar ljós fellur á þunn, gagnsæ lög, t. d. sápubólur, brá á vatni, loftlagið, sem kemur er gler flaskast, og lögin í skelplötum. Hið endurkastada ljós kemur þá sumt frá þeirri hliðinni, sem

ljósið fellur fyrst á, en sumt frá þeirri hlið lagsins, sem fjær er. Þetta ljós hefir orðið að fara lengri leið en hitt, sem sé fram og aftur gegnum þunna lagið. Það er því orðið á eftir og slæst nú saman við ljós, sem síðar fór frá ljósgjafanum, og endurkastast hefir frá framhlið lagsins. Við samslátt þessara tveggja ölduhreyfinga hverfur alt ljós nema einstöku litir, sem hafa bylgjulengd, er á við þykt lagsins. En enn þá reglulegri og glöggvari verða áhrifin af samslætti ljósalduanna, þegar gjörðar eru fjöldamargar mjóar rákir, og með jöfnum millibilum, á glerplötu. Falli hvítt ljós á þannig rákaða glerplötu, sjást allir litir friðarbogans í rétttri röð. Annars má fá svipuð áhrif af samslætti ljósalduanna með mörgu móti, t. d. með því að setja mörg göt á þunna málmplötu í reglulegum röðum. Þegar ljós fellur á plötuna, má sjá alls konar litbrigði hinum megin við hana. Að eins er það skilýrðið, að götin séu öll eins að lögun og sett niður með jöfnum millibilum, og mega bil þessi eigi vera að mun stærri en bylgjulengd ljóssins.

Auðvitað lék mönnum hugur á að gjöra tilraunir með Röntgens-geislana, svipaðar tilraununum með samslátt ljósbylgnanna. Lengi sáu menn þó engin ráð til þess. En 1912 varð breyting á þessu; þá datt pýzkum manni, Max v. Laue, í hug að nota til þess krystalla. En krystallar er það kallað, þegar efnin taka á sig sérstaklega reglulega lögun með hvössum brúnum og sléttum flötum. Alþektir eru silfurbergskrystallar, enn fremur er brendisykur (kandís) og sódi oft í stórum krystöllum, en hjá hvítasykri og salti eru krystallarnir miklu minni. Langt er síðan sú skoðun kom fram, að orsökina til þessarar reglulegu lögunar krystallanna væri sú, að efnisögnunum (mólikúlunum) í þeim væri niðurskipað í reglulegar raðir, en í öðrum efnum væri engin regla á þessum ögnum. Ef nú Röntgens-geislarnir væri ölduhreyfing með bylgjulengd á borð við bilið á milli mólikúlna krystallanna, þá datt Laue það í hug, að vel gæti verið, að krystallarnir kæmu til leiðar samslætti hjá Röntgens-bylgjunum á svipaðan hátt og rákaða

glerplatan eða gataða málmþynnan getur orsakað samslátt hjá ljósbylgjunum. Hann fékk þess vegna því til leiðar komið, að þeir Friedrich og Knipping gjörðu tilraun með að láta mjóan Röntgens-geisla falla á þunnan krystall. Á myndaplötu, sem sett var bak við krystallinn, hefði nú mátt búast við, að kæmi einn dökkur dill, ef mólíkúlur krystallsins hefðu eigi orsakað neinn samslátt hjá Röntgens-bylgjunum. En við tilraunina kom það í ljós, að auk miðdepilsins voru á plötunni smádeplar raðaðir eftir vissum reglum alt í kringum miðdepilinn. Deplar þessir komu af því, að samsláttur hafði orðið hjá Röntgens-bylgjunum, og voru órækir vottar þess, að Röntgens-geislarnir eru bylgjuhreyfing í ljósvakanum.

Síðan hafa verið gjörðar tilraunir, svipaðar þessari, margsinnis og með mörgu móti. Og hafa þær allar sýnt það sama, að Röntgens-geislarnir eru með eins mikilli vissu öldugangur í ljósvakanum og ljósgeislarnir eru það. Af tilraununum hefir einnig verið hægt að reikna út bylgjulengd Röntgens-geislanna, og hafa mælingarnar sýnt, að Röntgens-bylgjurnar eru miklu styttri en ljósbylgjurnar. Þær eru svo miklu styttri, að allir þeir hlutir, sem oss sýnast sléttir, eru mjög ósléttir og hrufóttir fyrir Röntgens-geislana. Þess vegna getur eigi verið að tala um neitt reglulegt endurkast eða speglun hjá Röntgens-geislunum.

Menn vissu áður, að ljósöldurnar eru rafmagnsbylgjur; nú vita menn, að Röntgens-geislarnir eru einnig rafmagnsbylgjur, munurinn að eins sá, að sveiflurnar eru tíðari og bylgjurnar styttri. En svo eru enn kunnar rafmagnsöldur, sem eru miklu lengri en þessar báðar. Það eru þær rafmagnsbylgjur, sem fyrst urðu kunnar af tilraunum Hertz; en áður hafði þó Maxwell með reikningi sýnt fram á, að þær bylgjur gætu verið til. Þessar rafmagnsbylgjur urðu mest kunnar eftir að Marconi tók að nota þær til að flytja loftkeyti. Allar þessar rafmagnsbylgjur eru að því leyti líkar, að þær fara með sama hraða í lofttömu rúmi. Þær fara allar með ljóssins hraða eða 300,000 km.

á sekúndu. En mikill er munurinn á bylgjulengd þeirra. Rafmagnsbylgjur þær, sem notaðar eru við loftskeytin, eru meira en kílómetri á lengd. Þykir gott að hafa þær langar, því að þær beygja þá betur fyrir allar mishæðir. Þó er hægt að framleiða rafmagnsöldur, sem eru eigi meira en $\frac{1}{2}$ cm. á lengd. Grænt ljós er aftur rafmagnsöldur, sem eru svo stuttar, að það þurfa 2 miljónir af þeim til að ná einum metra að lengd. Í rauðu ljósi og þó einkum í hinum ósýnilegu hitageislum eru rafmagnsöldurnar talsvert lengri, en fjólublátt ljós hefir hins vegar styttri bylgjulengd. Þó er langt stökk þaðan niður að þeim rafmagnsbylgjum, sem mynda Röntgens-geislana, því að bylgjulengd Röntgens-geislanna er hér um bil þúsund sinnum styttri en bylgjulengd venjulegs ljóss.

Tilraunirnar með að athuga áhrifin, sem krystallar hafa á Röntgens-geisla, hafa eigi að eins orðið til þess að færa mönnum heim sanninn um það, að þessir geislar eru rafmagnsbylgjur, og hægt er að mæla bylgjulengd þeirra, heldur hafa þær einnig sýnt, að rétt var það hugboð manna, að mólikúlunum í krystöllum er niður raðað mjög skipulega. En eins og við mátti búast, fer það mjög eftir krystallagjörðinni, hvernig mólikúlunum er niðurskipað. Með Röntgens-geislunum er hægt að sjá nákvæmlega hvernig niðurskipun mólikúlanna er. Að visu eru þessar tilraunir allerfíðar og taka langan tíma, en þó vita menn nú, hvernig margir krystallar eru byggðir, því að margir vísindamenn störfuðu að þessum rannsóknum, áður en stríðið hófst, en síðan hefir heldur orðið hlé á þessum rannsóknum. Af þeim vísindamönnum, sem mest hafa rannsakað byggingu krystallanna á þenna hátt, má fyrst og fremst nefna prófessor Bragg, sem áður hefir verið nefndur og fyr hélt fram efniskenningunni um Röntgens-geislana, og son hans W. L. Bragg. Prófessor Bragg er nú fluttur til Englands og er prófessor í eðlisfræði í Leeds.

Eins og kunnugt er, var frestað að úthluta Nobels-verðlaununum árið 1914, en í vetur var úthlutað verðlaunum fyrir bæði árin 1914 og 1915. Verðlaunin í eðlisfræði

fyrir árið 1914 fékk M. v. Laue, sem nú er orðinn prófessor í eðlisfræði í Frankfurt. Í sumum blöðunum, sem mintust á verðlaunin í vetur, var Laue sagður prófessor í læknisfræði, en það er ekki rétt. Verðlaunin í eðlisfræði fyrir 1915 fengu feðgarnir Bragg. Þessi tvenn verðlaun hafa því aðallega verið veitt fyrir rannsóknir, er snerta áhrif krystalla á Röntgens-geisla.

Akureyri, 24. febrúar 1916.

Þorkell Þorkelsson.

Traust.

Hann gekk rösklega upp eftir götunni. Hann var klæddur ljósum, léttum sumarbúningi. Staf hafði hann í hægri hendi, en léttu kápu á vinstra handlegg. Hann leit ýmist til hægri eða vinstri, lyfti hattinum og brosti, þegar hann sá kunnug andlit.

Loks staðnæmdist hann við hús eitt, gekk inn, lagði af sér staf og kápu, hljóp upp stiga, litaðist um og sá nafnspjald á einni hurðinni. Þar barði hann, beið ekki svars, opnaði og gekk inn. Húsráðandinn var staðinn upp. Orðið »kom« dó út á vörum hans. Þeitt skegglaust andlitið varð að einu brosi:

»Velkominn! Gleður mig að sjá þig«.

Þeir tókust alúðlega í hendur.

»Og þú ert kominn. Hvenær komstu?«

»Í gær með »Ceres«. Eg gat ekki heimsótt þig fyr, þurfti að útvega mér húsnæði, koma búslóð minni í röð og reglu o. s. frv. — Nú, hér er eg. Hvernig líður þér?«

Hinn brosti. »Mér líður sæmilega vel. Þú hefir svei mér haft á spöðunum í gær. Eg hefði að líkindum þurft heila viku til þess að koma því öllu í lag, sem þú hefir gert á hálfum degi.«

»O—o sei, sei nei, það hefðirðu ekki þurft. Ef til vill hefðirðu verið lengur að búa um þig og sjálfsagt gert miklu færri axarsköft um leið. En — meðal annars — þú hefir hring. — Eg óska þér til hamingju. Hver er hún?«

»Kristín heitir hún og er Hallsdóttir, fósturdóttir Gísla í Stóra-Hvammi.«

Gesturinn hristi höfuðið. »Þekki hana ekki. — Eg kannast við karlinn af umtali. Hann kvað vera mesti ríkispúki. Eg bjó einu sinni hjá systur hans hér í bænum. Hvar er stúlkan þín?»

»Hérna í bænum. Hún er á kvennaskólanum og býr hjá Ólöfu systur Gísla.«

Gesturinn hafði komið auga á mynd, sem stóð á borðinu. Hann greip hana. »Þetta, býst eg við?»

Hinn kinkaði kolli.

»Friðrik«, sagði gesturinn og leit upp á hinn, »eg þjóst ekki við, að þú mundir vera svona smekkvís. Stúlk-
an er ljómandi falleg, já, og góð, það er auðséð. Eg dá-
ist að þér — þú — gamli stærðfræðingur. Einu sinni
hlóst þú að öllum æfintýrum.«

»Það geri eg enn. En heyrðu, fáðu þér nú sæti og
lofaðu mér að gera þér eitthvað gott. Hvað má bjóða
þér? Vindil, öl — kaffi?

»Koniak«, bætti gesturinn við hlæjandi.

»Nei, það kemur ekki inn fyrir mínar dyr fremur
— en áður«.

»Eg þóttist vita það, svo reyki eg fyrir þig einn
vindil«.

»Hvað segir þú annars í fréttum? Því gatstu ekki
um, að þú ætlaðir að koma, þegar þú skrifaðir síðast?»

»Því gatst þú ekki um, að þú værir trúlofaður?»

»Þá var eg það ekki. Það er ekki nema rúm vika
síðan við settum upp hringana.«

»Þessi ferð var heldur ekki ákveðin, þegar eg skrif-
aði. Eg ætlaði mér alls ekki heim fyrst um sinn. Eg
hætti við smíðið í haust, eins og eg skrifaði, fór svo á
lýðháskóla í vetur. Svo lenti eg í búð hjá kalli í Höfn í
vor, en svo fór það alt út um þúfur. Þá féll ferðin hing-
að og mér datt í hug að reyna þegnskap Víkverja. . . .

»Því hættirðu við að vera í búðinni?»

Hinn stóð upp, ypti öxlum og fór að ganga um gólf.

»Það var nú lítil orsök. Karlinn var asni, geðleður
bólvaður sviðingur, sem varla á sinn líka. Það var flest

fátækt fólkið þarna í nágrannahúsunum. Eg þekti sérstaklega ein hjón, sem áttu 5 börn, ansi snotur grey. Þau voru iðulega send í búðina til þess að kaupa hitt og þetta. Oftast elsta telpu. Hún kom einu sinni snemma morguns. Búðin var nýopnuð. Það var kalt úti. Henni var svo starsýnt á nýjar barnakápur, sem við höfðum. »Langar þig til að eiga eina«, sagði eg. »Já«, sagði hún og eldroðnaði. Jæja, eg tók eina kápuna, klæddi telpuna í hana og hún var alveg mátuleg. »Eigðu hana«, sagði eg, »og vertu væn stúlka«.

Rétt í þessu kom karlinn inn og heyrði hvað eg sagði og fór að rekast í því.

»Kemur yður ekki við«, sagði eg, og það veit hammingjan að mér datt aldrei til hugar að stela kápunni, heldur ætlaði eg að borga hana sjálfur. En karlinn varð bandóður og sagði að eg hefði ekkert til þess að borga með, og ætti ekki með að taka kaupið mitt út sjálfur fyrirfram. Hann lét mig líka ótvírætt skilja það, að hann grunaði mig um að hafa ætlað að stela kápunni. Nú — endirinn getur þú sjálfur sagt þér.«

»Já, þú hefir ekki breyzt mikið á þessum tveimur árum«. Friðrik leit á úrið. »Kristján«, sagði hann svo, »það er próf hjá okkur í dag og eg verð að ganga upp í því eftir 15 mínútur, svo eg má til með að biðja þig að afsaka mig. Þetta er síðasta greinin. Á morgun vona eg að þú getir heilsað mér með kennara nafni«, sagði hann svo og brosti.

»Gerir ekkert. Eg þarf að hitta fleiri, og á morgun byrja eg að vinna«. . . .

Það hafði skygt í lofti meðan samtalið stóð yfir. Nú var farið að rigna.

Þeir bjuggust báðir til ferðar og litu út um gluggann. Friðrik gretti sig. »Það er komin demba og eg gleymdi kápunni minni í skólanum í morgun«.

»Heyrðu«, sagði Kristján, »taktu kápuna mína, eg sé herna ein 3 eða 4 helztu blöð höfuðstaðarins. Má eg sitja hér og líta í þau. Skúrinni léttir bráðlega, og þá

kemst eg leiðar minnar. Kápunni getur þú skilað heim til mín á Laugaveg 18.«

»Þakka þér fyrir. Það er verst þér leiðist hér einum. Það er lítið að græða á blöðunum«.

Kristján hló. »Þau endast meðan á skúrinni stendur«.

Kristján settist niður með Ísafold, en Friðrik fór ofan, tók kápunna og hélt leiðar sinnar.

Þegar Kristján var að leggja frá sér blaðið, heyrði hann létt fótatak á ganginum. Þrjú ofursmá högg á hurðina.

»Kom«.

Inn kom stúlka, sem stóð snögglega við, þegar hún sá, hver fyrir var. Hún roðnaði.

»Sælir«.

»Sælar ungfrú!« sagði Kristján og hneigði sig. »Það er köttur í bóli Bjarnar, sjáið þér. Eg heiti Kristján Björnsson og þér eruð auðvitað Kristín Hallsdóttir«.

»Hvernig vitið þér það?«

»Friðrik er nýfarinn í skólann, eg var að óska honum til hamingju«. Hann benti á borðið, þar sem myndin stóð. »Þessi mynd kemur líka upp um yður. Þér starið á mig«.

»Já, fyrirgefið þér. Eg hefi séð yður áður«.

»En eg man ekki . . .«

Nú brosti hún. »Nei, það voru svo margir. Voruð þér ekki á ferð með »Vestra« til Ísafjarðar fyrir tveimur árum?«

»Jú, alveg rétt. Um vorið«.

»Já«.

Nú roðnaði hún aftur, hikaði, gekk til hans og rétti honum höndina. »Eg þakka yður fyrir það, sem þér gerðuð fyrir litla drenginn«.

»Hvað? Hvernig?«

»Jú, eg sá það alt saman. Drengurinn var úr sömu sveit og eg, munadarlaus. Hann var þá að fara á sveit sína fyrir vestan«.

Nú var það hann, sem hafði skift litum.

»Hvað sáuð þér?«

»Eg var á gangi á þilfarinu með vinstúlku minni. Eg sá, þegar drengurinn skauzt með kjötið. Þegar upp-
potið varð útaf því, vissi eg, hver hafði tekið það, en
þagði. Hin stúlkan sagði eldamanninum frá því, þó eg
margbæði hana að þegja. Svo fór stýrimaðurinn og ætl-
aði að taka drenginn. Þá komuð þér, veifuðuð kjötinu
og sögðuð: »Eg hefi unnið«. Svo heyrði eg, að þér vor-
uð að segja stýrimanni einhverja sögu um veðmál. Það
varð hlátur úr öllu. Seinna vissi eg, að þér höfðuð gert
þetta til þess að bjarga drengnum frá því að verða upp-
vis að þjófnaði. Svo gáfuð þér honum peninga«.

»Hvað hét þessi vinstúlka yðar?«

»Sesselja Árnadóttir. Þekkið þér hana?«

»Já, eg kyntist henni síðar. Hún hæddist að þessu
tiltæki mínu, en sagði að það hefði verið stúlka á skip-
inu, sem hefði þótt vænt um þetta«.

»Það hefir verið eg. Eg gat næstum grátið. Svo
hét eg því að þakka yður, ef eg fengi færi á því«.

Hún leit upp á hann. »Þér eruð sjálfsagt vinur
Friðriks og það gleður mig. En nú verð eg að fara. Eg
ætlaði að láta Friðrik vita að frændi er kominn hingað
til bæjarins. Hann er svo æstur. Hann kom heim og
sagði það við frænku, að hann ætlaði beint til Friðriks.
En eg vil endilega tala við þá fyrst sinn í hvoru lagi,
sérstaklega við Friðrik. En eg kann ekki við að elta
hann í skólann«.

Hún leit út um gluggann. »Þarna kemur hann. Gott
að Friðrik er ekki heima. En eg vil ekki finna hann
hér. Getið þér ekki tafið hann um stund, ef hann kemur
hér«, sagði hún brosandi.

»Það get eg reynt«.

Kristján hafði gengið út að glugganum og sæð rosk-
inn, föngulegan mann ganga stórum skrefum upp að
húsinu. »Já. Eg skal taka á móti þeim gamla, en hvert
tlið þér?«

»Það eru tvennar dyr á húsinu. Eg flýti mér ofan og út um aðrar þegar hann fer inn um hinar«.

Þau kvöddust. Hún vatt sér út. Hann heyrði talað í dígrum róm niðri. Svarað var í mjóum. Hann heyrði ýskra í hurð nærri. Síðan þungt fótatak í stiganum, þá á ganginum. Komumaður opnaði hurðina og gekk inn. Hann var hár og þrekinn, alskeggjaður og veðurtekinn.

»Sælir«, sagði hann og leit fast á Kristján. Síðan lokaði hann hurðinni. »Eruð það þér, sem hafið flekað fósturbarn mitt?«

Kristján hafði staðið upp og horfði djarflega upp í móti komumanni. Svo sagði hann stillilega:

»Áður en eg svara þessu vil eg spyrja: Hver eruð þér og hvað viljið þér hingað?«

Hinn gekk nær. Sterka vinlykt lagði af honum.

»Nú, þér ættuð að vita það. Kannske þér hafið margar í takinu? Jæja, nafn mitt er Gísli Jónsson frá Hvammi«.

»Það gleður mig að kynnast yður«.

»Erindið er blátt áfram að láta yður vita, að þér þurfið ekki að hugsa til hjúskapar við Stínu mína. Henni er alt annað fyrirhugað en að lenda í klóm Reykjavíkur-spjátrunga. Eg hefi það eins og mér sýnist«.

»Hægan, hægan. Heyrið þér, viljið þér ekki setjast niður? Gerið svo vel, hérna er stóll. Viljið þér ekki glas af vatni?«

»Drektu vatn þitt sjálfur. Sæti þarf eg ekki, hefi ekki svo langa dvöl hér«.

»En þetta mál þarf að ræða með stillingu. Þér vaðið hér inn, berið stórsakir á mann, sem þér hafið aldrei séð fyr, og takið yður vald, sem þér eigið ekkert með. Hvað stúlkuna snertir, ja, þá giftist hún þeim, sem hún vill sjálf. Þar ráðið þér engu um. Hún er myndug. Getið þér snúið hug hennar, þá megið þér það ef þér getið. Reynið að kaupa hana. Þér um það. En meðan nokkur ærlegur blóðdropi er í mér, skuluð þér ekki neyða hana til neins«.

»Eg ætla alls ekki að neyða hana. Eg ætla aðeins að leiða hana á réttan veg, af þeim villustig, sem þér hafið leitt hana á. Hún var lofuð öðrum manni, áður en hún kom hingað. Það loforð á hún að halda«.

Kristján gekk fast að karli og tók báðum höndum í axlir hans.

»Nú eruð þér að rógbera barnið yðar. Eg veit að þér segið ósatt. Gerið annaðhvort, farið út héðan eða takið þessi orð yðar aftur«.

»Eg geri hvorugt, karl minn«. Og hann hristi hann af sér. »Sjálf skal hún játa þetta og standa við orð sín«.

»Ætli það séu ekki yðar eigin orð sem hún á að standa við. Þér hafið líklega lofað einhverjum henni, einhverjum yðar gæðingi«.

»Þó svo hefði verið, hefði hún samsint því, þá var það hennar gerð«.

»Hún gat verið óráðin, látið málið liggja milli hluta. Hún er sjálfsagt ekki margreynd í þessháttar málum. Svo þroskast hún, verður kona, sem veit hvað hún vill, og framkvæmir það. Þér viljið sjálfsagt stúlkunni vel. Haldið þér að þér gerðuð henni góðverk með því að ætla að gera hana að ósjálfstæðri ambátt?«

»Hættið þessu orðaglamri. Hugsið þér eftir þessu maður. Ef hún þverskallast og giftist yður, fær hún aldrei einn eyri eftir mig; verði hún skynsöm og fari að mínum ráðum, ætla eg ekki að sundra reitunum mínum. Eg á engin börn. Haldið þér að þér með yðar mjólkurandliti og orðaglamri vegið á móti þessu?«

»Álítið þér að eg sé fjandinn sjálfur, eða hvað?«

»Eg álit yður ekkert. Eg þekki litillega til ykkar skólagemlinganna hér í Reykjavík. Systir mín giftist einum. Guð leysti hana úr þeim vandræðum, sem betur fór . . . Stína skal ekki . . .«

»Það ætla eg ekki að dæma um. Hún verður sjálf að ákveða framtíð sína óneydd. En — getið þér unnið hana með heiðarlegum meðölum, þá takið hana! Við sjáum hvor betur má! Þetta eru mín síðustu orð í þessu máli«.

»Nú tala eg við stúlkuna«, sagði bóndi og bjóst til ferðar. »Eg efast ekki um erindislokin«.

»Hælumst minst í máli«.

»Verið þér sælir. Við sjáumst líklega ekki fyrst um sinn«.

»Jú, við sjáumst sjálfsagt bráðlega«, sagði Kristján og hló. »Í brúðkaupinu, þar sem þér leggið blessun yðrar yfir það hjónaband, sem þér þykist nú vera að fyrirbyggja«.

»Það verður aldrei«.

Kristján opnaði hurðina. »Farið heilir«.

Karl fór út og ofan.

Kristján gekk út að glugganum og horfði út á götuna. Þar kom Friðrik og hraðaði sér heim. Gísli var kominn út. Þeir mættust, en hvorugur leit við öðrum. Kristjáni heyrðist eitthvað detta í næsta herbergi. Von bráðar kom Friðrik inn.

»Nei, sæll. Þú ert hér ennþá. Hefir þér ekki leiðst?«

»Leiðst? Nei. Eg hefi sjaldan átt skemtilegri stundir. Það sáu þau um unnusta þín og tilvonandi tengdafaðir«.

»Tengdafaðir?«

»Já. Fyrst kom hún og ætlaði að hitta þig. . . Hún fór nærri samstundis. Síðan kom gamli Gísli í Hvammi. Ágætiskarl«.

»Nú«.

»Eg lék húsbóndann. Hann var annars töluvert spaugsamur. Erindið var auðvitað við þig«.

»Hvað?«

»O—o. Tilkynna þér blátt áfram að stúlkann væri lofuð öðrum. Að hann gæfi aldrei samþykki sitt til giftingar ykkar. Að hún fengi aldrei einn eyri eftir sig eða frá sér ef hún hlýddi sér ekki. Alt þetta ásamt ýmsum lagurgala um þína virðulegu persónu« . . .

»Því sagði hann þér alt þetta?«

»Ja — hann spurði mig ekki að heiti, bjóst vist við að hann ætti tal við Friðrik Halldórsson. Eg leiðrétti hann ekki í fyrstu. Svo varð það of seint«.

»Sagði hann að hún væri lofuð öðrum?»

»Já, líklega gætnum og reyndum bónda, dálítið loðnum um lófana, býst eg við«.

»Þú gerir háð að þessu öllu. Hvað sagðir þú svo?»

»Eg — eg gekk upp í þinn stað og varði málið einn og eg mundi hafa gert fyrir sjálfan mig«.

»En svo hefir alt orðið ljóst á eftir?»

»Nei. Hann fór með þeirri sannfæringu, að hann hefði átt tal við þig«.

»En hvað sagðir þú þá?»

»Eg sagði að hann mætti taka stúlkuna ef hann gæti. Peningana mætti hann sjálfur eiga. Þó hún hefði átt tíu kærasta uppi í sveit, þá varðaði mig ekkert um það«.

»Þú hefir sagt mikið«.

»Sé því þannig varið í raun og veru, verð eg ekki maður þar á milli«.

»Að því er eigurnar snertir. Ja — eg játa það, að eg taldi það víst, að hún mundi erfa karlinn. Nú, haldi hún sín orð, þá held eg mín. Kjósi hún mig fremur en auðinn, þá kasta eg henni ekki út á klakann«.

»En eg sagði meira. Eg fullyrti að þessi trúlofunarsaga væri ósönn. Að hún mundi aldrei láta peningana freista sín eitt augnablik. Eg ögraði honum að gera það sem hann gæti«.

Um þetta veizt þú ekkert. Þú sem ekki þektir hana neitt. Eg sjálfur«

Áður en hann endaði setninguna, var hurðinni hrundið upp og Kristín snaraðist inn á gólfid. Hún var fól, augun hærðleg og titringur um munninn. Hún henti gullhring á borðið, sneri sér að Friðrik, sem stóð hissa með hálfopinn munn.

»Eg hefi heyrt alt og skal losa þig við allan vafa. Ást þín er líklega jafn haldgóð og traust þitt. Haf þú hring þinn og frændi auð sinn. Eg kemst af án ykkar beggja. En yður«, sagði hún og sneri sér að Kristjáni með ljómandi augum. »Yður þakka eg traust yðar á ókunnri stúlku. Því skal eg ekki gleyma«.

Hún var komin til dyranna. Kristján hljóp í veg fyrir hana.

»Nei, bíðið þér. Þannig megið þið ekki skilja. Hann meinti ekki það sem hann sagði. Það gerið þér ekki heldur, þegar þér hafið áttað yður«.

Hún tók um hendur hans.

»Nú talið þér þvert um hug yðar. Þér vitið að okkur er báðum alvara. Eg vil aldrei sjá hann framar«. Röddin titraði. »Nei, aldrei!«

Áður en þeir höfðu áttað sig, var hún farin. Létt fótatakið fjarlægðist. Hurðum var skelt. Þeir litu báðir út um gluggann. Hún hraðaði sér niður á götuna og leit ekki við. Þeir litu hvor á annan. Báðir þögðu. Friðrik var óskugrár.

»Þetta er þín skuld«, breytti hann fram úr sér og ógnaði Kristjáni með hendinni. »Þú hefir eyðilagt alt. Hvern sjálfan djöfulinn varst þú að blanda þér inn í þetta mál?«

Kristján kiptist við.

»Ef það er svo, þá hefi eg aldrei unnið betra verk og þá ert þú ærulaus ódrengur«.

Röddin var nístandi köld. Andlitið eins og steinn.

»Út með þig! Vogarðu þér í mínum húsum!«

»Ekki eitt orð meira. Héðan af þekkjumst við ekki framar!«

Hurðin féll að stöfum. Kristján tók hatt sinn, kápu og staf og gekk leiðar sinnar með föstum skrefum.

Friðrik gekk um gólf.

Kristján gekk niður götuna. Einhver kastaði kveðju á hann, en hann virtist ekki taka eftir því fyr en eftir á. Hann fór ekki heim, heldur gekk hann lengra. Sneri við aftur og inn á hliðargötu. Innan skams tíma var hann kominn móts við hús Ólafar frá Hvammi. Hvaða erindi átti hann hingað? Ekkert. Hann gekk fram hjá, götuna til enda. Þar sneri hann við. — Ef til vill var Gisli þarna og átti nú tal við Kristínu. Var það ekki skylda hans að hitta þau og leita sátta? Láta þá að minsta

kosti talast við, Friðrik og hann, þegar þeim væri runnin reiðin. Hann fann, að það mundi verða árangurslaust. Þó hélt hann áfram. Gekk heim að húsinu. Barði og fór inn. Húsfreyja mætti honum í ganginum. Þau heilsuðust kunnuglega.

»Þú kemur eins og þú værir kallaður. Gísli var að gera ráð fyrir að leita þig uppi, en vissi ekki hvar þig væri að hitta. Þetta er annars ljóta hneykslið, hvað ætli fólk segi?«

»Hvað segir þú?«

»Eg — mér gæzt aldrei að honum, skildi ekkert fyrir hverju hún gat gengist.«

»Hafa þau talast við?«

»Já — eg var þar ekki við, en það kom heldur en ekki á þann gamla þegar hann heyrði, að hann hefði farið manna vilt. Fyrst bannsöng hann þér niður undir allar hellur, en sú litla varð þá ekki orðlaus. Svo kom eg líka til sögunnar þegar hann var búinn að þruma æði stund. En það er bezt þið talist við sjálfir. Gerðu svo vel.«

Hún opnaði stofuna.

Gísli hafði staðið og horft út um gluggann. Nú leit hann við og sá gestinn. Opnaði munninn en sagði ekkert.

»Eg kem hingað til þess að segja til nafns míns«, sagði Kristján. Það vottaði fyrir brosi á andliti hans.

»Það hefðuð þér átt að gera fyr, maður minn.«

»Getur verið. Eg álit að þér hefðuð ekki síður átt að spyrja.«

»Þér eruð auðvitað hreykinn af því að hafa leikið þannig á gamlan mann?«

»En það hefi eg ekki gert. Alt sem eg sagði við yður mundi eg hafa sagt, þó eg hefði verið hinn rétti málsaðili.«

»En hinn rétti málsaðili kunni yður víst ekki miklar þakkir.«

»Um það vil eg ekki segja. Þetta kom alt nokkuð flatt upp á hann. Auðvitað talið þér við hann sjálfan.«

»Þess þarf eg ekki. Eg fer að ráðum yðar og læt

stúlkuna ráða. Hún vill fara heim með mér á morgun«.

»Þér neitið Friðrik þó ekki um viðtal, ef hann óskar þess«.

»En hann óskar þess ekki. Það er líka þýðingarlaust«.

»Þá hefi eg ekki annað hér að gera en kveðja yður«.

»Biðið þér dálítið. Mér er sagt, að þér séuð góður trésmiður. Eg kom hingað meðfram til þess að fá mér smíð. Eg hefi reist íbúðarhús, sem er nærri óbyggt inni. Viljið þér fara til mín í sumar?«

»Það get eg ekki sagt um nú«.

»Eg skal borga yður eins og aðrir borga«.

»Það er ekki það. En eg hefi beðið um vinnu hér hjá manni og býst við, að hann vilji ekki sleppa mér«.

»Það er leitt. Eg vildi gjarnan fá yður. Eg skal segja yður, mér gezt heldur vel að yður. Það er mannsblóð í yður.

»Það er nú í fleirum«.

»Það er misjafnt«.

«Jæja, eg læt yður vita þetta á morgun«.

»Gott«.

»Má eg svo kveðja fósturdóttur yðar«.

Karl brosti: »Ef hún vill sjá yður«.

»Olla!« Húsfreyja kom inn.

»Þessi maður óskar að kveðja Stínu, viltu kalla á hana. Eg ætla að ganga út«.

Kristján var einn. Hann gengur að stórum spegli, lagar hár sitt og skegg í snatri. Nú kemur hún! Dyrnar opnast. Kristín kemur inn. Hún er dálítið rauðeygð.

»Eruð þið sáttir?«

Sáttir. Já, auðvitað. Segið þér mér eitt, hvert fóruð þér síðast?« Hún roðnaði.

»Eg ætlaði ofan, en áður en eg kom í stigann var frændi minn kominn. Þá varð eg ráðalaus. Svo tók eg í handfangið á næstu hurð. Hún var ólæst. Eg fór inn. Þar var enginn. Eg ætlaði ofan, þegar hann væri kom-

inn inn til yðar. En — svo höfðuð þið svo hátt« — hún brosti — »og mér fanst málið snerta mig töluvert. Svo kom Friðrik . . .«.

»Já, mig grunaði þetta þegar þér komuð þarna inn aftur«.

»Eg sé heldur ekki eftir því að eg beið«.

Þögn.

»Eg kom eiginlega til þess að kveðja yður«, sagði hann svo. »Þér eruð víst að fara heim«.

»Já. Vér erum að fara heim«.

Hann leit snögglega upp. Hermdi hún eftir honum? Nú brostu þau bæði.

»Fóstri þinn bað mig að koma til sín og smíða hjá sér í sumar.

»Nú. — Já, húsið er ekki meira en hálfsmíðað . . .«.

Þögn.

Hann gekk nær. Augun mættust.

»Á eg að koma«, sagði hann lágt.

»Já, þú átt að koma«.

Aftur þögn.

Hún rétti sig upp og augun ljómuðu.

»Og þú spyr mig ekki um neitt annað?«

»Nei. Nú varðar mig ekki um neitt annað í heiminum«.

Einar S. Frimann.

Benrögn.¹⁾

Um vopn og vígaferli og sár í bardögum

eftir *Steingrím Matthíasson*.

Sá atburður varð, er þeir Gunnarr riðu neðan at Rangá, at blóð féll á at-geirinn. Kolskeggur spurði hví þat myndi sæta. Gunnarr svaraði, ef slíkir atburðir yrði, at þat væri kallat í öðrum löndum benrögn — ok væri jafnan fyrir stórfundum. — Njála bls. 164.²⁾

•Skeggöld, skálmöld•.

Svo virðist sem mennirnir hafi frá upphafi vega sinna borist á banaspjótum; því allra elztu fornmenjarnar, er fundist hafa, eru vopn — luraleg steinsverð og tinnu-hnifar. En innan um vopnin finnast álika gamlar haus-kúpur og önnur maunabein, sem bera ótvíræð merki und-an þessum sömu vopnum og sýna ljóslega, að ákomu þeirra fylgdi ýmist •beinbrot eða bani•. Frá þessum grimmu og hundheiðnu tímum og fram á vora upplýstu

¹⁾ Málfræðingar skilja svo orðið benrögn að það sé sama og benregn = regn úr sári = blóð; öið hefir breyt í e eða máskémisskrifast. Það er einfalt mál! — En svo er annað að athuga. Van-trúarmenn nútímans telja sennilegast að blóðið hafi stafað af því, að Gunnar hafi gleymt að þurka af geira sínum, er hann síðast beitti hon-um til víga. Hins vegar munu trúmenn og hjátrúarmenn hiklaust geta tekið í strenginn með Gunnari og fullyrt, að hér hafi verið að gjörast þýðingarmikið fyrirbrigði. Um þetta getur hver dæmt um eins og hon-um sýnist, en fyrirsögnina „benrögn“ hefi eg valið og hún skal standa.

²⁾ Þar sem vitnað er í fornsögurnar er átt við alþýðuútgáfu Sig. Kristjánssonar Rvk.

daga, hefir verið kepst við að finna ný og betri vopn, hvert öðru ægilegra og óhappadrýgra fyrir mótstöðumanninn.

Takmarkið er og hefir verið, að finna vopn, er geti ekki að eins steindrepið einn mann á svipstundu, heldur sem allra fyrirhafnarminst eytt lífi fjölmargra manna í einu. Þessi djöfullega hugsun vakir enn í brjóstum margra manna og ekki sízt þeirra, sem mestu ráða meðal helztu menningarþjóðanna. Fyrir þeim vakir enn þá sviplík grimdarhugsjón og gjört hefir Caligula keisara illræmdan og óþokkaðan í veraldarsögunni. Hann óskaði sér, að höfuð allra Rómverja sætu á einum hálsi til þess að hann gæti hálshöggvið þá alla einu höggi. —

»Ekki er gaman að guðspjöllunum, því enginn er í þeim bardaginn«, sagði kerlingin; og sú kerling var eins og fólk er flest. Flestum — karlmönnum að minsta kosti — þykir bragðlitið eintómt friðsamlegt guðsorð og sækjast eftir að lesa um styrjaldir og bardaga. Unglingar eru yfirleitt sólgnir í að lesa svakalegar bardagasögur. Margir munu kannast við það frá æskuárunum, er þeir lásu fornaldarsögur þær, sem mest útmáluðu vígaferlin. Þá var sem eitthvert óhræsis ránfygli hlakkaði innan í oss við lesturinn,

„sem átfrekir Óðins haukar
es vals vitu
varmar bráðir“.

Svona er rándýrið ofarlega í okkur á 20. öld, þrátt fyrir kristindómsfræðslu og margra alda menningarframþróun. Sennilega kemur þetta af því, að menningartíminn er svo örstuttur, borinn saman við þann óratíma, í »örófi vetra«, sem forfeður vorir hafa átt í eilífum ófriði og blóðugum bardögum, er gagntóku þannig huga þeirra að útsýnið náði sjaldan út fyrir vígvöllinn.

Vopn og verjur.

Þó vafasamt þyki, að fornmennt hafi nokkurn tíma kunnað að sjóða eins gott stál og nú þekkist, þá má þó

gjöra ráð fyrir, að bit sverðanna sumra hafi verið sérlega gott, svo að ef vel var brýnt, hafi þau getað bitið líkt og rakhnífar nú á tímum. En hvað dugði það, þegar járnhlifarnar komu til sögunnar. Það var von, að Egill yrði gramur, þegar vopnin bitu ekki á Atla hinum skamma; hann átti þá einskis annars úrkost en að bita hann á barkann.

Þegar púðrið var fundið, dugðu ekki neinar járnhlifar heldur; svo að hernaðaraðferðin varð að gjörbreytast. Og á síðasta mannsaldri hafa fundist enn þá öflugri sprengiefni, svo að púðrið er eins og barnaleikfang í samanburði við þau. Prometheus stal eldinum frá Seifi og gaf mönnum, segir sagan. En niðjar hans hafa náð í enn meira, því *dýnamit*, *melínit* og *turpinat* og hvað þau nú heita, þessi voðaefni, sem öllu geta sundrað, standa í rauninni ekki þrumufleygi Seifs að baki.

Frá fornu fari hafa hugvitsmenn kepst um að hugsa upp og smíða sem allra bitrust og stórvirkust vopn, en jafnframt hafa þeir kepst um að gjöra sem allra beztar hlifar, er gætu staðizt ákomu vopnanna. Í þessum kapp-leik vopna og hlifa hafa vopnin venjulega orðið skæðari.

Það var einhver æðsta hugsjón forfeðra vorra að eignast vopn, er gæti bitið á alt; og í æfintýrum fornaldarinnar eru þessar hugsjónir látnar rætast meira og minna.

„Svá beit þá sverð
ór siklings hendi
váðir Váfaðar,
sem í vatn of brygði“ —

segir í Hákonarmálum. Gramur, sverð Sigurðar Fáfnisbana, sneið í sundur ullaflagð, er rann með straumnum eftir ánni Rín. Sverð Hreggviðar konungs »beit með atkvæðum stál og steina svá sem blauta mannabúka«. Sverðið Kvernbitur reist í sundur kvarnarstein sem ostur væri. Sköfnungur var sagður svipaður að gæðum og ætið varð hann mannsbani í hvert sinn, er honum var brugðið. Og Gusisnautar Örvarodds flugu í gegnum þykt og þunt eins og loftið tóm.

Hvergi rætist þó hugsjónin um biturleik sverðanna betur en í frásögninni um sverðið Mimung, er Völundur smiðaði:

Völundur skyldi gjöra það sverð, sem væri afbragð annara, en Amíllas járnsmiður konungs skyldi smíða herklæði, er sverð Völundar fengi ekki unnið á. Þegar báðir höfðu leyst verk sitt af hendi, skyldi reyna smíðisgripina. Settist þá Amíllas á stól í herklæðum sínum og það Völund höggva sig. Völundur lagði þá eggjar Mímungs ofargætilega á hjálm Amíllasar, þar sem hann sat. En óðara leið sverðið niður og klauf Amíllas í herðar niður. Og svo mjúkar voru eggjarnar, að Amíllas fann eigi meir til þessa enn sem vatn rynni niður milli herða honum; en sverðið rann niður viðstöðulaust og nam eigi staðar fyr enn það sökk upp að hjöltum í jörð niður. Þá valt sinn helmingurinn af Amíllasi hvoru megin út af stólnum steindaður. Og er Amíllas úr sögunni.

Það er eftirtektavert, að háar hugsjónir og hugmynda-smíði mannkynsins á þess bernskuskeiði rætast smám saman og ná fullum veruleik mörgum öldum seinna við framþróun mannsandans.

Loftkastalar, sem gnæfa við himin líkt og höll Utgarða-Loka, standa nú föstum fótum eins og risahallirnar (skyscrapers) í Vesturheimi

Nú fljúga menn í loftinu líkt og Loki í fjaðurham Freyju. Nú þjóta eimskipin landa á milli og þurfa eigi að bíða byrjar fremur en skip Hrafnistumanna.

Heimdallur heyrði ull spretta á sauðum og gras á jörðu, en vér getum heyrt hver til annars, þó óravegur sé á milli, og sent sjálfum okkur skeyti, sem berst í kringum allan jarðarhnöttinn.

Líkt og Möndull græddi fæturna á Göngu-Hrólf, kunna lækna nú að græða við afhöggna limi að minsta kosti á dýrum. Hin draumkenda hugsjón fornanna um bit-vopnanna er líka farin að rætast.

Menn hafa nú fengið vopn í hendur, sem standa hvorki Mímungi né Gusisnautum að baki. Ríffilskeytin þjóta gegnum hlífar og hold jafn fyrirhafnarlitið og sverð Völundar gegnum skrokk Amíllasar eða Gusisnautar gegnum brynjaða berserki. Og fallbyssuskeytin hlaðin melíníti

«Eða turpínati feykja burtu limum og líkamshlutum, líkt og þegar blásið er á bifukollu og físið fýkur víðsvegar. — Mjólnir, hamar Þórs, þótti ægilegt vopn, er hann molaði sundur hausa á jötnum í smámola. En fallbyssuferliki Þjóðverja virðast standa Mjólni lítt að baki.

Þannig rætast hugsjónir æfintýraskáldanna líkt og draumar berdreyminna manna.

Því miður virðist svo, sem hugsjónin um Fróða-friðmuni eiga enn þá langt í land til að rætast, en þeir tímar munu þó eflaust koma, áður en varir.

Sár fornmanna.

Hughreysti og hamfarir.

... »Fár verður fagr af sárum«, kvað Þormóður.

Löngum hafa sár og blóðgar undir þótt hryllileg sjón.

Mikill fjöldi manna er svo gjörður, að þeim er meðfædd einhver ógeðfeld tilfinning fyrir að sjá, þó ekki sé nema opin sár, hvort sem er á sjálfum þeim eða öðrum, svo að sumir jafnvel líða í ómegnin, er þeir sjá dreyra úr sári. En »svo má illu venjast, að gott þyki« eða að minsta kosti viðunandi. Og svo er það um lækna, að þó sumum í fyrstunni falli illa að horfa á flakandi sár við holdskurði, þá harðnar tilfinningin smám saman svo, að með tímanum verður þeim ekki meira um að skera í manna-hold en dýrshold væri.

Og líkt hefir verið fyrir forn mönnum. Sár og blóðsúthellingar urðu að daglegum fyrirbrigðum. Mörgum þeirra varð ekki meira fyrir að drepa menn heldur en slátrara að sálga skepnum. Þó er þess getið um Gunnar á Hlíðarenda, að honum hafi fallið illa manndrápin og hann finnur sjálfur til þessa veikleika síns, því hann spyr, hvort hann sé því óvaskari en aðrir menn, sem honum þyki meira fyrir en öðrum mönnum að vega menn. — Annars verður maður hjá flestum söguhetjum var við gleði og ánægju yfir því, að koma sem flestum sárum á

mótstöðumennina og vinna þeim sem allra mest tjón, sbr. vísu Egils:

„Farit hef ek blóðgum brandi“ o. s. frv. (Egils saga bls. 121).

Dagleg vígaferli gjörðu þá harða og tilfinningarsljóva fyrir sársaukanum, svo vér sjáum þá hamast og halda áfram að berjast, þó af þeim sé höggvin hönd eða fótur. Þormóður kveður vísu með spjótið í hjartanu »ok deyr standandi upp við búlkann«. Og Jökull Bárðarson situr rólegur og raular vísu, meðan konungurinn lætur höggva hann með bitlitlu vopni:

Sviða sár af mæði
setit hef'k opt við betra,
und es á oss sús sprændi
ótrauð legi rauðum o. s. frv.

Flestir kannast við, hve Jómsvikingar urðu karlmannlega við dauða sínum o. s. frv.

Þessar sögur eru auðvitað nokkuð ýktar í munnmælum mann fram af manni, en sannar þó í megindráttum. — Hins vegar eru mörg dæmi þess í sögunum, að ekki voru allir hetjur. Sumir báru sig illa undan sárunum og nægir að benda á bóndann, sem kom inn í hlöðuna á Stiklastöðum og fór að gjöra gys að hinum særðu mönnum þar, hve þeir báru sig illa. Þormóður tók því svo illa að hann

„hjó til hans sverði ok slæmdi af honum báða þjóhnappana, en bóndi kvað við hátt með miklum skræk og þreif til þjóhnappanna báðum höndum. Þormóður mælti þá: Þér er illa saman farit, er þú finnur at þreki annara. Þar þú ert þreklaus sjálfur. En hér eru margir mjök sárir ok vælar engi þeirra, en þú bræktir sem geit bläsma ok veinar sem merr, þó at þú hafir eina vöðvaskeinu litla“. (Fbr.saga bls. 145).

Ægilegar eru sumar bardagalýsingarnar í fornsögum vorum og fornaldarsögum, eins og t. d. þar sem lýst er framgöngu kappanna hans Hrólfs kraka, er þeir hlóðu valköstum kringum sig svo háum, að varla varð yfir komizt. Eða tókum t. d. framgöngu Þormóðar á Stiklastöðum:

„Þat hafa menn at ágætum gjört, hversu röklega Þormóður Kolbrúnarskáld bardist á Stiklastöðum, þá er Ólafur konungur féll, því at hann hafði hvárki skjöld né brynju; hann hjó ávalt tveim höndum með

breiðexi, ok óð í gegnum fylkingar, ok þótti engum gott, þeim er fyrir honum urðu, at eiga náttból undir exi hans“. (Fbr.saga bls. 121).

Éða aðfarir Göngu-Hrólf's gamla:

„Hrólfur gengur hart fram ok heggur til beggja handa; urðu þeir léttir fyrir honum ok féll nú hver um annan. Engum þurfti hann að gefa meira enn eitt högg, ok báðar hendur hans voru blóðugur til axlar upp. Bauð nú flestum framganga hans ótta . . . Hrólfur var þá svo reiður að hann eirði engu; hann hjó ákaflega sem hendurnar fengu tíðast reitt sverðit, en þrír éða fjórir féllu fyrir hverju hans höggi. Því var líkast til að jafna um mannfallit, sem þá er ákaflegast brýtur kurl af stofni, er menn gjöra til kol“. (Fornaldars. Nordurl. III Rvík 1889, bls. 222 og 234).

Þessar og þvilíkar bardagalýsingar í fornritum vorum eru mjög sviplíkar lýsingum Hómers í Ilionskviðu, nema hvað Hómer er skáldlegri í líkingum sínum. Það sýnist eiga vel við að setja hér til samanburðar frásögu hans af framgöngu Akkils til dæmis:

„Svo sem þá er geysilegur eldur hleypur óður um djúpa afdali, þegar þykkur skógur er að brenna, og vindurinn keyrir fram logann og þylrar honum um allt, — svo óð Akkilles um alt, með spjót í hendi, líkur einhverri óhemju, og elti menn þá, er feigir voru, en dökk jörðin flaut í blóði. — Svo sem þá er maður tengir saman krúnubreiða axa, til að láta þá þreskja hvítt bygg á vel settum þreskivelli og smækka byggkornin skjótt undir klaufum inna hábaulandi nauta: svo trúðu enir einhæfðu hestar hins hugstóra Akkils jafnt mannabúka og skjöldu, en allur hjólasinn undir kerrunni varð blóði drifinn, og blóðsletturarnar undan hófunum og hjólröndunum gengu yfir kerrustólsbogann; en Peleifsson geystist áfram til að vinna sér frægð, og voru hinir óárennilegu armleggir hans blóði stokknir“. Il.kviða. (Þýð. Sv. Eg. XX 488—505).

Svo segir í Vigslóða¹⁾ Sthb. § 268 og 269:

. . . En þat er sár, ef þar blæðir, sem á kom. —

. . . En þat eru hin meiri sár: heilund ok holund ok mergund. Þat er heilund, er rauf er á hausi til heila, hvárt sem hann er höggvinn eða rifnaðr eða brotinn. En þá er holund, ef blóð má falla á hol ór sári. En þá er mergund, ef bein er í sundur til mergjar, þat sem mergur er í, hvárt sem þat er höggvit eða brotit . . .

¹⁾ Grágás Kbh. 1879. Í Vigslóða Sthb. § 268 og 363 er enn fremur talað um þá hegningu sem liggur við, ef maður særir mann „ok varðar þat skóggang“ — og ef maður klípur, bitur eða rifar annan „ok varðar þat fjörbaugsgarð“.

«Og seinna (bls. 352) er því lýst, hvernig megi með kera eða kanna greina, hvernig sárum sé háttað.

Það má af þessu og þvílíku ráða, að fornmenn þektu allvel líkamsbygginguna eða að minsta kosti engu síður en vanir slátraras þekkja, hvernig sauðkindin er sköpuð. Og ekki hafa þeir aflað sér þeirrar þekkingar með neinu bóka-grúski, heldur af eigin sjón og reynd á sjálfum blóðvellinum.

Sárin í fornaldarbardögum voru aðallega tvenns konar — stungusár eða höggsár.

Stungusárin orsökuðust af skot- og lagvopnum o: ör-um, gaflökum, spjótum, atgeirum o. fl., en höggsárin af sverðum, söxum, öxum, atgeirum og öðrum vopnum, sem beita mátti jafnt til höggs og til að leggja með, eins og t. d. bryntröllum og brynþvörum.

Stungusárin voru venjulega langtum minni til-sýndar en önnur sár, en þau voru yfirleitt dýpri, og þess vegna hættulegri, að þau gengu jafnaðarlega á hol. Þó örvarnar væru mjóar og litlar fyrirferðar urðu þær mörg-um að bana, ekki sízt ef þær voru skotnar af boga Gunnars eða Einars Þambaskelfir. Spjótsár voru mjög hættu-leg, ef spjótinu var skotið eða því fylgt af nægu afli til lags. Það er algenzt að lesa um það í sögunum, að spjót verði mönnum að bana. Nægir að minna á þegar Ingjaldur á Keldum skýtur spjótinu yfir Rangá og í gegnum einn af mönnum Flosa. Eða t. d. þegar Kári skýtur Eyjólf Bölverksson («hvar er nú hann Eyjólfur, ef þú vilt launa honum hringinn?» segir Þorgeir skorargeir við Kára) og gekk spjótið óðara í gegnum Eyjólf.

Margir fornmenn notuðu spjótin eingöngu sem lag-vopn og skutu þeim ekki. Atgeirarnir, sem líktust breið-um spjótum, voru oftast notaðir líka til að leggja með, en stundum var þeim skotið sem spjótum eða höggvið með þeim. Gunnar vegur menn upp á atgeirnum eins og t. d. Þorgeir Otkelsson, sem hann slöngvaði síðan út á Rangá (Nj. bls. 165). Þetta þótti vasklega gjört og víðar til þess tekið en í Njálu, að lyfta þannig þungum mót-

stöðumanni hátt á loft »og sæfa hann á spjótinu« (sbr. Þórólf Kveldúlfsson, er hann drepur jarlinn. Egilss. bls. 139). Hins vegar er þess getið um Ölvi barnakarl og honum til vegsauka, að hann »lét eigi henda börn á spjótsoddum, sem þá var vikingum títt; því var hann barnakarl kallaður«.

„Flugu höggvin hræ
Hallvarðs á sæ“,

kvað Skallagrímur, er hann hafði slöngvað Hallvarði snarfara á bryntröllinu útbyrðis. Það er auðséð á sögunum, að söguritarinn leikur sér stundum að því, að útmála hve hönduglega köppunum ferst að koma fjendum sínum fyrir kattarnef, líkt og Hómer er vanur að gjöra, sbr. t. d. Ilionskviðu VIII, bls. 26.

»Meriones lagði spjóti til Adamants og kom lagið milli hræra og naflans, þar sem er sárastur höggstaður á vesölum mönnum. Þar rak hann spjótið í hann, en Adamant féll við skotið og spriklaði á spjótinu, svo sem uxi sá er nautamenn hefta með valdi nauðugan uppi á fjöllum og leiða með sér; svo spriklaði hann þá er hann fékk lagið«.

Fljótsdælasaga (bls. 123—24) segir t. d. frá kynlegu spjótsári: »Þórður skarfur sótti upp í snjóskafinn at Helga Droplaugarsyni, ok er hann kom í skafinn, skaut Helgi til hans milli fótanna ok í gegnum kyllinn, en spjótit festi í skaflinum, ok hékk hann þar á skaflinum allan daginn«.

Fornmenn hafa verið athugulir um sár, og reynt að kynna sér ýms einkenni, er sýndu, hve hættuleg þau voru.

Allir kannast við söguna af konunni á Stiklastöðum, sem rannsakaði, hvort sárin væru á hol, með því að gefa sárum mönnum laukgraut að eta »því at kenndi af laukinum í sárinu, ef á hol var«. Þormóður þáði ekki grautinn hjá henni og mælti: »eigi hef ek grassótt«.

Bæði í Fóstbræðrasögu og víðar er þess getið, að »léti hátt í holsárum manna« og talað um dyn sára. Þess konar sár þóttu ægileg og illlæknandi, enda hafa það

verið sár inn í brjóstholið, því í þeim hvín um leið og loftið sogast út og inn um þau við andardráttinn.

Það er mælt um Snorra goða, að hann hafi getað þekt feigs manns blóð með því að bragða blóðugan snjóinn, þar sem bardaginn hafði staðið. Hann þóttist á bragðinu finna, að holblóð væri, og má það til sanns vegar færast, ef hann hefir fundið, að blóðið var blandað galli eða gori. (Eyrbyggja bls. 118).

Í Sturlungu er þess getið (bls. 93), að Guðlaugur frá Þingvelli leggur Björn Þorvaldsson með spjóti og kemst Björn undan. Loftur Sæmundsson spyr hann svo: »hve mun Björn sár?« Guðlaugur sýndi honum þá spjótið »ok var feitinn ofarlega á fjöðrinni«. Þóttust þeir þá vita, að það var banasár.

H ö g g s á r voru algengust í fornöld líkt og skotsár nú.

Axir, sverð, atgeirar, brynþvarar, kesjur o. fl. voru vopnin, sem höggið var með.

A x i r n a r voru venjulega þungar og breiðmyntar. Ferleg vopn, enda svakaleg sárin, sem fylgdu undan högg-unum, ekki sízt ef vel var áhaldið (sbr. Þormóð eða Skarp-héðin).

Það mun enginn efi á því, að það sé satt, að forn-menn hafi höggvið höfuð af bol með exi (t. d. Steindór, er hann heggur Bolla, Laxd. 178) og það í einu höggi »svo af fauk höfuðit«, því það geta böðlar enn þann dag í dag. En að nokkur geti sniðið þrekinn karlmann sundur í miðju um þveran hrygginn (eins og t. d. Húnbogi sterki Þorgils í Laxd. 205 eða Gunnar austmanninn í Nj. 148), það nær engri átt. Og hvað er það þó hjá afreksverkum Þórðar hreðu, sem heggur þá sundur um þverar herðar, eins og að drekka, og sama er sagt um Kára. Eða Skalla-grím er hann hjó nautin. Því er svo vel lýst, að vert er að setja það hér:

„Hann lét leiða tvö yxn saman undir húsvegg ok leiða á víxl. Hann tók hellustein vel mikinn ok skaut niðr undir hálsana. Síðan gekk hann til með exina konungsnaut ok hjó yxnina báða í senn svá at höfuðit tók af hvárumtveggja, en exin hljóp niður í steininn, svá at muðr-

inn brast í sundr allr og rifnaði upp í gegnum herðuna. Skallagrímur sá í eggina ok ræddi ekki um“.

Sverðin voru langalgengustu vopnin í fornöld. Þess vegna sárin undan sverðunum algengust eins og riffilsárin nú á tímum.

Venjulegu sárin munu hafa verið hrufur einar og svöðusár. Bitlitil sverð og axir hafa oftar marið hold og bein en skorið djúpt inn, því klæðnaður og stundum hlifur voru yzt. Þess konar áverkar gátu verið óþægilegir, þó ekki væru þeir lífskæðir, nema ef höfuðið varð fyrir þeim.

En þegar höggvopnin bitu vel, þá ollu þau djúpum og flakandi sárum, sem blæddi úr. Og þar sem fæstir kunnu í þá tíð að binda um sárin og stöðva blóðrásina, þá var venjulega dauðinn vís, ef einhver lífæð var skorin og spýtti. Og þó ekki væri um stærri slagæð að ræða en æðina ofan við úlnliðinn (púlsæðina), þá varð það mönnum að bana, ef hún var í sundur (Sturl. II 157), hvað þá heldur ef um stærri æðar var að ræða.

Þegar höggvið er með bitlitlu vopni, fer oft svo, að æðarnar höggvast ekki beinlínis í sundur, heldur tagna og slitna, en við það snýst upp á æðarstúfinn, svo að rásin stíflast. Þetta hefir sennilega átt sér stað eigi ósjaldan í fornöld, og fyrir það hafa sumir karlarnir bjargast af, eins og t. d. Þórir víðleggur, Önundur tréfótur, Þorleifur kimbi o. fl., sem létu fót sinn, en urðu græddir. Spýti jafndigur æð og læræðin óhindrað, liða að eins nokkrar mínútur unz manni blæðir til ólífis. En til voru menn og konur, sem kunnað hafa að binda um sár svo, að blóðrásin stöðvaðist að mestu.

Daglegur vopnaburður og æfingar frá barnsaldri hlutu að gjöra fornmennt vopnfima mjög. Ekki vantar dæmin í sögunum um hve knálega margir kunnu að beita sverðum, sínum. En mörgu er logið milli búrs og eldhúss, hvað þá heldur við munnmælasögur mann fram af manni í mörg hundruð ár.

Eg trúði því lengi — eins og flestir unglingar —, að sögurnar okkar væru að mestu leyti sannar og sízt þyrfti að efa það, sem sagt væri um sverðshögg kappanna. En með árunum fór eg að efast um sannleikann í sögunum eins og fleira. Allir strákar, sem »slegið hafa köttinn úr tunnunni«, munu hafa rekið sig á erfidleikana við að höggva sundur kaðalinn, sem kettan hékk í. Og ekki vantaði þó bitið í sverðunum — við brýndum þau svo þau stóðu á nögl — og sverðin voru góð, dönsk uppgjafa-hermannasverð úr góðu stáli. En þarna hjuggum við hver á eftir öðrum og tvihentum meðalkaflann, og sumir voru fullorðnir og knáir vel, en aldrei ætlaði kaðallinn að geta kubbast sundur. Kattarkóngurinn var vel að sinum metorðum kominn.

Eg spurði einu sinni danskan höfuðsmann úr riddaraliðinu, hvort hann teldi sennilegt, að hægt væri að höggva sundur digurt mannsläri með sverði í einu höggi. Hann kvað nei við, og jafnvel ekki þó tvihent væri sverðið. Aftur taldi hann sennilegt, að margir hefðu verið svo vopnfimrir, að þeir hefðu getað höggvið höfuð af manni í einu höggi, jafnvel með annari hendi, en þó af og frá að það hefði tekizt jafnoft og sögurnar herma. Allir, sem höggvið hafa niður kjöt, þekkja, hve mikla orku maður þarf að leggja í að höggva sundur hrygg af vænum sauð, jafnvel þó öxin biti, og þó er þar höggstokkur undir, en í bardaga mann við mann er alt á iði og í lausu lofti!

Mér þótti fyrir því, er trúverðugur maður sagði mér, að það væri haugalýgi, að Holgeir danski hefði nokkurn tíma klofið mann í herðar niður, sem sat á hestbaki, og kubbað sundur hestinn líka í sama högginu. Og ennþá þykir mér leiðinlegt að þurfa að efast um, að satt sé greint frá afreksverkum vorra uppáhaldskappa.

„Flosi hjó á háls Helga svá at tók af höfuðit“. (Nj. 308).

„Gunnar sveiflaði sverðinu ok kom á hálsinn Porkatli ok fauk af höfuðit“. (Nj. 147).

„Kári heggur höfuð af Gunnari Lambasyni svá snart at höfuðit fauk upp á borðit fyrir konunginn ok jarlana. Urðu borðin öll í blóði einu ok svá jarlarnir“.

Þessu skulum við reyna að trúa, en um Auðgísl ekki:

„Auðgísl heggur höfuð af Þorgils Höllusyni, er hann var að telja silfur í því er hann nefndi tin, „ok allir þóttust heyra, at höfuðit nefndi ellefu, er þat fann af bolnum“. (Laxd. 211).

Sama saga og þessi er sögð um Kol Þorsteinsson, er Kári heggur (Nj. 432), og á samskonar sögu rekumst vér í Illfönskviðu Hómers (X, 246):

„Diomedes reiddi sverðit og hjó á þveran hálsinn, féll þá höfuðið til moldar í því hann tók að mæla“.

Þarna ber þremur fornritum saman um samskonar fyrirbrigði og þó er það ósönn saga, bygd á rangri at-hugun. Munnurinn kemur ekki upp orði, þegar hann er slitinn úr sambandi við barka og lungu.

Hver sem vill reyna sig á því að höggva með beittu sverði kjöt, kaðal eða annað, mun sannfærast, um að það er hægra sagt enn gjört að jafnast á við kappana. Og skulum vér þó alveg sleppa því sem fjarstæðu, að þeir hafi sniðið menn sundur í miðju eða höggvið um þverar herðar, heldur taka algeng dæmi eins og:

„Skarphéðinn heggur á lærit Hallgrími, svá at þegar tók undan fótinn“. (Nj. 239).

„Kjartan Ólafsson hjó fót af Guðlaugi fyrir ofan kné“. (Laxd. 161).

Þetta hvorttveggja er því aðeins trúanlegt, að höggið hafi lent rétt ofan við kné, en ekki ofar.

„Kári hjó til Glúms ok kom sverðit í lærit ok tók undan fótinn upp í lærinu“.

„Þórarinn hjó fót af Þóri, þar sem kálfinn er digrastr“.

Í öllum sögunum úir og grúir af svipuðum dæmum og þessum, sem hér eru tilgreind. Óviða er annars getið en að höfuðið eða limurinn, sem um er að ræða, hafi fokið af eða höggvist allur af. En þetta er ósennilegt. Venjan mun hafa verið sú, að ekki tókst að höggva þvert í sundur, heldur aðeins að miklu leyti. Þegar höfuð er höggvið, fýkur það ekki af, venjulega, heldur lafir á holdi, sem ekki heggst sundur eftir að hálsliðirnir hafa dregið úr kastinu á sverðinu; og sama gildir þegar vöðvamiklir limir eru höggðir. Beinið brotnar við höggið en kraftur-

inn linast, sem ýtir vopninu áleiðis. — En því skal þó alls ekki neitað, að Gunnar, Kjartan og aðrir afburðamenn hafi ef til vill getað höggvið slysalaust höfuð og limi í einu snöggu höggi. En að það hafi verið eins algengt og sögurnar gefa í skyn, nær engri átt. Ekkert sannar þetta betur enn Sturlunga, sem er eitt af hinum allra áreiðanlegustu fornritum.

Allar frásagnir í Sturlungu um vopnaviðskifti eru miklu látlausari enn venja er til í fornsögunum. Þar gengur ekki bardaginn »eins og í sögu«, heldur fremur seint og silalega. Það »fýkur« hvorki höfuð né limur af neinum, heldur virðast söguhetjurnar þar murka lífið hvor úr öðrum og þurfa mörg högg; og svo er að heyra sem vopnin hafi verið bitlítill. — Reyndar koma þar ekki fram á sjónarsviðið aðrir eins garpar og Gunnar eða Gísli Súrsson, Egill, Grettir eða Kári, en eigi að síður kemur það undarlega fyrir, að landanum skuli vera svo hrakað á 200 árum, að enginn skuli lengur vera fær um að höggva haus skammlaust í einu höggi, hvað þá heldur manns-læri eða manninn sundur í miðju.

Nedánrituð dæmi sýna ljóslega muninn á frásögn Sturlungu og fornsagnanna:

„Brandr hjó á háls Þórði, svá at nær tók af höfuðit“. (St. II 14).

„Eiríkr ungi hafði exi í hendi ok setr á háls Haraldi Sæmundarsyni, svá at hann féll fyrir fætr konungi. Haraldr varð allmjök sárr ok varð þó græddr“. (St. II 100).

„Maðr hjó eftir Eyjólf, kom á fótinn við ökla ok tók af svá at lafði við“. (St. II 108).

„Guðmundr Erlingsson fekk brugðit sverði ok hjó á fót Dufgusi tvö högg ok voru þat mikil sár“. (St. II 140). (Dufgus varð þó græddur).

„Þorvaldr rennari hjó á háls Ólafi svá at sá mænuna“. (St. II 145).

„Rögnvaldr hjó Brand á handlegginn við hreifann, svá at engu hélt nema sinunum þeim er gengu at þumalfingri“ — (. . . „illa var bundin höndin Brands. Lauk svá at hann lézt“. (St. II 157).

„Hermundr sveiflaði til Snorra með exi ok kom á knéit, svá at nær tók af fótinn“. (St. II 204).

„Hermundr hjó á hálsinn með exi svá at nær tók af höfuðit ok eigi hélt meir enn reipshaldi“. (St. II 205).

„Bjarni höggv til Guðmundar ok kemr á lærit fyrir ofan knét; var þat mikil sár“. (St. II 269).

„Hjó Sveinn á báða fótleggi Þórarins ok af annan fótinn en skoraði þó mjök á annan“. (St. II 232).

Þessi dæmi nægja til að sýna, hvernig Sturlu Þórðarsyni segist venjulega frá vopnaviðskiftum á Sturlungaöldinni, en Sturla er einhver áreiðanlegasti sagnaritari vor. Það er svo að sjá, sem engum takist að höggva sundur meir enn í hæsta lagi úlnlið eða fót ofan við ökla í einu höggi. En ekki vantaði viljann, því grimdin er afskapleg. Hvað eftir annað er sagt frá, hvernig margir níðast á einum og hvernig menn eru kvaldir og limlestir. Hryllileg er t. d. lýsingin á því, þegar Sturla Sighvatsson var drepinn (St. II. 321). Þar leggja margir saman, og eru að skaka við að murka úr honum lífið, með því að höggva til hans hér og þar og reka vopnin hvað eftir annað í sömu sárin, þangað til Gizuri Þorvaldssyni tekst að vinna á honum til fulls. »En þat segja menn þeir, er hjá voru, at Gizur hljóp báðum fótum upp við er hann hjó Sturlu, svá at lopt sá milli fótanna og jarðarinnar«.

Utan úr heimi.

Herkostnaður.

I.

Oft hefir verið sagt um Norðurláfustyrjöldina, að þær þjóðir, sem mest hafi fjármagnið, muni sigra að lokum. Liggur því nærri að athuga fjármál ófriðarþjóðanna, hve miklu fé hefir verið varið til herkostnaðar, hvernig fjárins sé aflað, hvaðan þjóðunum komi það og hve langær ófriðurinn geti orðið fjármálanna vegna. Ýmislegt í fjármálum ófriðarþjóðanna er mjög á huldu og verður ekki fullrannsakað fyr en að ófriði loknum. En samt má afla sér nokkurs yfirlits. Mun eg fyrst skýra stuttlega frá fjármálaástandi ríkja-anna og peningamarkaðnum laust fyrir ófriðinn.

Síðasta áratugiun fyrir ófriðinn hervæddust ríkin í ákafa sí og æ og söfnuðu skuldum til aukningar her og flota. Stafar meirihluti ríkisskulda einmitt af hernaði og vígbúnaði. Var samt ekki alllitill munur á, hve vel þjóðirnar voru búnar undir ófriðinn.

A. Þýzka land, mesta uppgangslandið, var vel undirbúið, þrátt fyrir mikil útgjöld til hers og flota. Þjóðverjar höfðu gert miklar umbætur í skattamálum sínum á árunum 1906—1913. Árið 1906 hófst aukning á skattaálögum til ríkisins og voru árstekjurnar þá auknar um 180 milj. marka. Árið 1909 komu nýjar álögur, sem juku árstekjurnar um 500 milj. marka. Auk smáumbóta 1910 og 1912 komu svo skattar 1913, sem juku árstekjurnar um 185 milj. marka og þar að auki um 1055 milj. marka eitt skifti fyrir öll. Jafnframt þessum umbótum í fjármálum ríkisins var frá 1906 í kyrþey komið skipulagi á seðla- og lánsstofnanir til þess að gera þær færar um að standast ófrið. Mest af því sem gerapurfti var í lagi, þegar ófriðurinn brautz út.

B. Öðru máli var að gegna um Frakkland, lánveitanda heimsins. Skattakerfi Frakka stafar frá stjórnbyltingar- og Napó-

leonstímunum og þykir úreft. Hafa frjálslyndu flokkarnir lengi áraugurslaust reynt að koma því í betra horf. Síðustu árin var næstum stöðugt 1 miljarðs fr. tekjuhalli árlega. Loks var komið á tekjuskatti í júlí 1914, en þá kom ófriðurinn. Frakklandsbanki hafði aftur á móti verið búinn undir ófrið frá 1911. En annars var ástandið ilt. Síðustu 4—5 áratugina hefir veraldarsagan stöðugt orðið meira og meira að sögu fjármála og atvinnusambanda þjóðanna. Um fram aðrar þjóðir hafa Frakkar notað auð sinn sem verkfæri í höndum heims pólitíkurinnar. Auk fótgönguliðs, riddaraliðs, stórskotaliðs og flugliðs átti auðurinn að vera fimta vopnið. Stjórnin og bankarnir hafa séð um, að sparifé Frakklands yrði veitt yfir þjóðir, sem á þann hátt yrðu háðar Frakklandi og bandamenn þeirra í ófriði. Nýlenduþólitik Frakka stafar af sömu ástæðu. Áttu þeir því ógrynni fjár hjá Rússlandi, Balkanríkjunum og Suður-Ameríku. Frá 1907 höfðu lönd þessi verið í mesta uppgangi, en um áramót 1914 var að koma viðskiftakreppa um heim allan. Var hún einmitt mjög sterk í þessum löndum, en breiddist þaðan út til annara þjóða. Nú komu gallarnir í ljós við, að Frakkar áttu svo mikið fé hjá löndum þessum, sem ekki var handbært. Peningamarkaðurinn í París komst á ringulreið í byrjun ársins 1914 og var það enn, er ófriðurinn hófst.

C. England, miðstöð greiðsluviðskiftanna, stóð betur að vigi, þó að ekki væri alt með feldu. Fjármál ríkisins voru í allgöðu lagi. En gjaldþrotin í Suður-Ameríku og brezku nýlendunum höfðu haft meiri áhrif á brezka peningamarkaðinn heldur en á Miðveldin. Auk þess leitaði bæði Frakkland og Rússland til Englands í fjárkröggunum. Leit því út fyrir, að brezki peningamarkaðurinn mundi komast í ógöngur. —

Eg set hér yfirlit yfir herkostnað ófriðarþjóðanna tvö fyrstu ófriðaráriu, frá 1. ágúst 1914 til 1. ágúst 1916.

II.

Ef meta skyldi allan kostnað þann, sem ófriðurinn hefir haft í för með sér, þá yrði að taka meira fram en í ljós kemur í ríkja-reikningunum. Meta yrði auk þess manntjónið, kostnað bæja, sveita og héraða, tekjumissi í reikningum bæja, sveita og héraða, minkun framleiðslunnar, eydd hergögn frá friðartímum, skemdir á herstöðvunum, hjálp þá, sem þjóðin veitir ókeypis til ófriðarins. Þessa liði verður þó ekki hægt að meta fyr en að ófriði loknum. Verður því hér að eins talað um bein útgjöld ríkjanna.

Taflan sýnir herkostnaðinn í miljónum króna, borinn saman við þjóðararstekjurnar og þjóðarauðinn, og loks útgjöldin af ríkisskuldunum á mann, alt reiknað til 1. ágúst 1916.

	milj. kr.	% af þjóðar- tekjum	% af þjóðar- auði	Vextir af ríkisskuld- um á mann kr.
Austurríki Ungverjaland . .	20430	180	21	37
Þýzkaland	42313	116	16	17
Frakkland	29056	110	14	36
England	46016	112	17	41
Rússland	37773			15
Ítalía	8172	111	14	18
Allar ófriðarþjóðir	188320			

Herkostnaðurinn í þessi tvö ófriðarár hefir numið um 188 miljörðum króna. Er herkostnaður bandamanna um 124 miljarðar króna eða um $\frac{2}{3}$ hlutar. Herkostnaður Englands eins er fjórðungur alls herkostnaðarins, því næst kemur Þýzkaland með nokkru minna. Ef herkostnaðurinn er borinn saman við þjóðarstekjurnar eða þjóðarauðinn, þá er hann aftur á móti mestur í Austurríki Ungverjalandi, en minstur í Frakklandi og Ítalíu. Á mann verða vextir af ríkisskuldunum mestir í Englandi, nokkru minni í Frakklandi og Austurríki Ungverjalandi, en helmingi minni í hinum ríkjum. Herkostnaðurinn hefir farið stöðugt vaxandi, eftir því sem tímar hafa liðið, bæði vegna aukins liðsafla og vígbúnaðar.

Eftirfarandi tafla sýnir herkostnað í styrjöldum á síðasta mannsaldriinum.

Styrjöldin :	Alls milj. kr.	Daglegur herkostnaður milj. kr.
1854—1856	6356	8,7
1866	1180	29,5
1870—1871	2906	13,8
1877—1878	4540	6,2
1904—1905	8172	14,9
1914—1916	188320	257,6

Herkostnaðurinn 1914—1916 hefir að jafnaði numið nálega 258 miljónum króna á dag. Hinar styrjaldirnar eru smá-

ræði í samanburði við þetta. Næst kemst ófriðurinn milli Japana og Rússa með um 4% af núverandi herkostnaði. Á dag kemst næst styrjöldin 1866, þar sem herkostnaðurinn var um $\frac{1}{8}$ — $\frac{1}{9}$ hluti.

Auk þess hefir mikill kostnaður stafað af ófriðinum fyrir hlutlausar þjóðir, sem hafa neyðst til að halda vígbúnum her undir vopnum og auka hervarnir hjá sér. Frá upphafi ófriðarins til ársloka 1915 höfðu ríkisskuldir hlutlausra þjóða aukizt um 1540 miljónir króna. —

Mun eg nú skýra nokkru nánara frá fjármálum aðalþjóðanna, Þjóðverja, Frakka og Englendinga.

III.

A. Þýzka land. Fyrsta árið má telja, að Þjóðverjar hafi eytt um 17648 miljónum marka í herkostnað, sem sé: gull og silfur í vörslum ríkisins 300 milj., ríkisfjárhirzluseðlar vaxtalausir 3500 milj., ríkissjóðsvíxlar 100 milj., innritanir í skuldabók ríkisins 30 milj., lán frá nýlendunum um 18 milj., fyrsta fasta ófriðarlánið 4351 milj., annað fasta ófriðarlánið 8769 milj. Auk þess var eytt 580 milj. af reglulegu fjárlagafé 1914—15.

Skipta má ófriðinum í þrjú tímabil eftir herkostnaði. Frá 1. ágúst 1914—1. marz 1915 var herkostnaður Þjóðverja 35—40 milj. marka á dag. En frá 1. marz—1. ágúst 1915 verður herkostnaðurinn næstum helmingi meiri, sem sé um 66 milj. á dag. Frá 1. ágúst til 1. jan. 1916 hefir herkostnaðurinn stigið jafut og þétt upp í 73 milj. á dag.

Samkvæmt þessu má reikna, að herkostnaðurinn nemi 28920 milj. marka annað ófriðarárið, til 1. ágúst í ár. Samtals verður þá tveggja ára herkostnaður Þýzkalands 46568 milj. marka, eða um 42 miljarðar króna. Af þessu fé ganga þó um 800 milj. til fjölskyldna hermanna og eitthvað til bandamanna Þjóðverja.

Herkostnaður Þjóðverja á dag er 7—8 sinnum meiri en í styrjöldunum 1866 og 1870—71.

Þjóðverjar hafa aflað nálega alls fjárins. Þeir hafa tekið 4 föst lán. Í október 5% ríkissjóðsskírteini að nafnverði 1000 milj., en inn komu 969 milj. Auk þess var þá tekið 5% skuldabréfalán, að nafnverði 3492 milj., en inn komu 3382 milj. Annað lánið var tekið í apríl 1915. Voru það 5% ríkissjóðsskírteini, að nafnverði 776 milj., en inn komu 761 milj. Um leið var tekið 5% skuldabréfalán að nafnverði 8330 milj., en inn komu 8142

milj. Þriðja lánið var tekið í október 1915 og var það 5⁰/₁₀ skulda-
bréfalán að nafnverði 12160 milj., en inn komu 11785 milj. Síð-
asta 5⁰/₁₀ lánið var loks tekið í marz 1916 og skrifuðu menn sig
fyrir 10700 milj. m. Alls hafa Þjóðverjar því nú fengið 35¹/₂
miljarða marka í föstum lánunum. Ríkissjóðsskrifteinin eiga að af-
borgast innan 1921 og 1922, en hin eru óuppsagjanleg til 1924.
Sannir vextir, sem ríkið verður að gjalda af lánunum þessum, eru frá
5,18⁰/₁₀—5,54⁰/₁₀.

Mjög erfitt er að segja, hve miklu seðlaútgáfan og
bráðabirgðalánin nemi nú hvort fyrir sig, enda er það
mismunandi, eftir því hve nýlega hefir verið tekið fast lán. Ríkis-
sjóður getur selt ríkisbankanum víxla á sjálfan sig. Auk þess
getur ríkið gefið seðla út á gullforða þaun (300 milj.), sem safnað
hefir verið í Júlíusarturninum í Spandau frá 1871 til ófriðarafnota.
Ríkið getur einnig gefið út seðla gegn tryggingu í seðlum láns-
sjóða, sem veita mönnum lán gegn tryggingu í verðbréfum og
vörubirgðum. Þeir seðlar ríkisins eru því eiginlega trygðir með
verðbréfum og vörubirgðum. Innritanir í skuldabók ríkisins námu
35 milj. í sept. 1915. Nýlendulánið frá 1914 á að greiðast þegar
eftir ófriðinn.

Auk þess eru Þjóðverjar nú að koma á hjá sér ófriðar-
sköttum. Þó að þeir eigi að mestu að ganga til að árétta halla
þann, sem orðið hefir á reglulegum ríkisreikningum og fari því
ekki beint til herkostnaðar, þá er rétt að taka þá með vegna yfir-
litsins. Eiga þeir að nema ³/₄ miljarðs marka á ári eða um 675
miljónum króna, og hvíla á eignaauka í ófriðinum. Þar er
stríðsgróðaskattur, sem nemur alt að 40⁰/₁₀ og hvílir jafnt á kon-
ungbörnum mönnum og hershöfðingjum sem öðrum. Auk þess eru
í ráði viðskiftaskattar á veltu kaupmanna, hækkun á póst- og
símagjöldum, tóbaks- og vindlingaskattur og loks stimpilgjald á
farmskrifteinum. Annars álíta Þjóðverjar, að aðal skattatímabilið
elgi fyrst að koma eftir ófriðinn.

Eftir tveggja ára ófrið munu ríkisskuldir Þýskalands
hafa aukist um 44 miljarða marka og nema því 1. ágúst um 49
miljörðum.

B. Frakkland: Alls má telja, að herkostnaður Frakka
tvö fyrstu ófriðarárin nemi um 40 miljörðum fránka eða um 29
miljörðum króna. Af kostnaði þessum falla 16 miljarðar á
fyrri árið, en 24 milj. á síðara árið. Dagleg útgjöld verða um 43
milj. fr. fyrri árið, en um 68 milj. síðara árið. Í Krímsfriðinum

var daglegur herkostnaður Frakka aðeins 2 milj., og í ófriðinum 1870—71 tæpar 8 milj.

Sumarið 1914, fyrir ófriðinn, hafði Frakkland ætlað að taka lán, sem átti að nema 2 miljörðum fr., og átti að ganga til að koma á 3 ára herþjónustu, sem samþykkt hafði verið. Peningamarkaðurinn var svo dauður, að minka varð lánið niður í 805 milj. og voru ekki komnar inn af því nema 461 milj. í nóvember 1914. Varð ríkið því að gömlum sið að fá seðlalán hjá Frakklandsbanka. Árið 1911 hafði verið gerður samningur um, að hann skyldi lána ríkinu 2900 milj. fr. seðlalán, ef til herútboðs kæmi, en Algierbanki 100 milj. En í nóvember 1915 hafði Frakklandsbanki lánað ríkinu 7300 milj., en Algierbanki 75 milj. Síðar hefir verið heimilað að færa lánið upp í 9 miljarða.

Frá september 1914 var tekið bráðabirgðalán, 5% ríkissjóðsvíxlár til 3—12 mánaða. Nam þesskonar lán 8353 milj. í nóv. 1915. Vextirnir eru greiddir fyrirfram, í fyrsta skifti í ríkislánasögu Frakklands.

Auk þess var tekið 5% ríkissjóðsvíxlalán í Bandaríkjunum og Englandi, sem nam 1165 milj. í nóv. 1915. England og Frakkland tóku einnig sameiginlegt 5% lán í Bandaríkjunum og var hluti Frakka 1250 milj. Lánin voru notuð til bergagnakaupa í Bandaríkjunum. Í maí 1916 hefir verið tekið þar nýtt lán um 520 milj.

Í febrúar kemur svo sambland af bráðabirgðaláni og föstu láni. Var það 5% skuldabréfalán, sem var boðið út smámsaman, og voru 3659 milj. komnar inn á það í nóv. 1915. Vextirnir greiðast fyrirfram og leyfilegt er að skifta á skuldabréfum þeim með nafnverði, sem gefin eru út á þetta lán, og skuldabréfum hvers annars láns, sem er gefið út fyrir 1918. Lánið endurgreiðist á árunum 1920—25 og er það undanþegið sköttum.

Fast lán var eiginlega ekki tekið fyrir en í desember 1915, »sigurlánið«. Var það 5% skuldabréfalán, nafnverð 15139 milj. fr., en inn komu í Frakklandi 6368 milj., sem hægt var að nota til herkostnaðar. Auk þess komu inn á það frá öðrum löndum um 1000 milj. Lánið er óuppsegjanlegt til 1931. Sannir vextir um 5,7%.

Um nýár 1916 námu ófriðarlánin eftir þessu um 30 miljarða fr. og höfðu ríkisskuldir Frakklands þá næstum tvöfaldast, því að fyrir ófriðinu voru þær um 33 miljarða.

Frakkar komu á hjá sér ófriðarsköttum í marz 1916, til

að árétta tekjuhallann á reglulegum ríkisreikningum. Var það stríðsgróðaskattur á tekjuauka í ófriðinum og getur hann numið alt að 50%. Gildir þangað til friður kemst á. Nú í maí eru í sama skyni bornir upp nýir skattar, sem ætlast er til að gildi frá þriðja ársfjórðungi í ár. Andvirði þeirra er áætlað um 900 milj. fr. eða um 650 milj. króna. Eftir ófriðinn eiga þeir að nema 1100 milj. fr. Er það jarðarskattur, skattur af námurekstri, verðbréfum og munaði, tekjuskattur af einkaleyfum hækkaður um meira en helming, skattar á áfengi, sykri og tóbaki (ríkiseinkaframleiðsla) hækkaðir að miklum mun. Koma skattar þessir allþungðniður, en þó er eftir að leggja á skatta til að geta greitt vexti og afborgun af ófriðarlánunum.

C. England: Herkostnaður Englands hefir aukist enn meir í ófriðinum en hinna þjóðanna. Í upphafi ófriðarins nam hann um 1 milj. sterlingspunda á dag, í lok fyrsta ársins var hann orðinn 3 milj., um áramót 1916 var hann 4,3 milj. og nú er búist við að hann nemi um 5½ milj. punda eða um 100 milj. króna á dag. Þetta kemur af því, að England hefir skapað mestallan her sinn smámsaman í ófriðnum, sjálfboðaliðinu er greiddur máli og Baudamönnum, nýlendum og sumum hlutlausum löndum hefir verið hjálpað um fé.

Útgjöldin hafa verið: Fyrsta ófriðarárið 710 milj. punda, annað árið 1825 milj. punda eða alls 2535 milj. punda, þ. e. a. s. um 46 miljarðar króna. Í samanburði við fyrri styrjaldir Englendinga kemst styrjöldin 1793—1815 næst. Þá voru útgjöldin á mann 1/7 þess sem nú er, en í samanburði við þjóðartekjurnar þá helmingur þess, sem nú er.

England hefir tekið 4 föst lán. Í nóvember 1914 var tekið 3½% lán, sem var að nafnverði 400 milj. punda, en inn komu 332 milj. Í marz 1915 fimm ára 3% ríkissjóðsskírteini, sem inn komu á 48 milj. Í júní 1915 hið mikla 4½% lán, sem inn komu á 587 milj. Loks var tekið lán í Bandaríkjunum í október 1915 og fengust inn á það 50 milj. Föstu lánin eru óuppsegjanleg ýmist til 1920 eða 1925. Ef við þetta er bætt 4¾%—5% bráðabirgðalánunum, sem voru um áramót 1916 um 400 milj. punda, þá er þar komin aukningin í ríkisskuldunum til áramóta 1916 1417 milj., frá um 707 upp í 2124 milj. punda. Sannir vextir af lánunum eru 4—6%.

Englendingar hafa aður haft þann sið að taka um þriðjung af herkostnaðinum með sköttum á meðan á ófriðinum hefir

staðið. Hafa þeir einnig nú orðið fyrstir af ófriðarþjóðunum til að ganga skattavegiun. 1. Í nóvember 1914 kom Lloyd George, sem þá var fjármálaráðherra, á tvöfaldri hækkun á eignaskatti og viðbótarskattinum við hann, þrefaldri hækkun á ölskatti og mikilli hækkun á teskatti. Þessar skattahækkanir námu 75 milj. punda fyrsta árið. 2. Í október 1915 var McKenna orðinn fjármálaráðherra og kom hann á samtals 107 milj. punda hækkun árlega í beinum og óbeinum sköttum (77 milj. í beinum sköttum, 30 í óbeinum). Tekjuskatturinn var hækkaður um 40% og var þar áætlaður tekjuauki $43\frac{1}{2}$ milj. Stríðsgróðaskatti var komið á, sem áætlaðar tekjur af voru um 30 milj. Enn fremur voru sykurskattur, nýlenduvöruskattar, síma- og póstgjöld hækkuð að miklu mun. 3. McKenna hefir borið fram nýjar skattahækkanir fyrir yfirstandandi fjárhagsár, sem eiga að nema 65 milj. punda auk stríðsgróðaskattsins, sem er jafnvel búist við að geti orðið um 80 milj. punda. Borinn er upp nýr tekjuskattur, sem á að ná betur í háar og lágar tekjur en fyr, en verði þyngri á háum tekjum. Hann er áætlaður um $43\frac{1}{2}$ milj. Skattur á skemtunum 5 milj., á járnbrautarseðlum 3 milj., sykri 7 milj., nýlenduvörum 2 milj. o. fl., og loks er stríðsgróðaskatturinn hækkaður úr 50% upp í 60%. Er það hæsti skattur, sem til er í álfunni, en hann á einungis að greiðast einu sinni af sömu tekjum og á að falla niður, þegar friður kemst á.

Á þenna hátt áætla Englendingar, að árstekjur ríkisins aukist frá 198 milj. punda upp í 502, þ. e. a. s. um 304 milj. punda eða $5\frac{1}{2}$ miljarð króna. Er þetta hið mesta Grettistak í skattamálum, sem sögur fara af. Samt getur það ekki brokkið til, ef ófriðurinn heldur áfram, heldur verður þá að taka ný lán. Gjöld á yfirstandandi ári eru áætluð 1825 milj., og dragi menn þar frá tekjurnar 502 milj., þá er áætlaður tekjuhalli 1323 milj. sem taka yrði með lánum, ef ófriðurinn stendur árið út. Við áramót 1917 mætti þá búast við $3\frac{1}{2}$ miljarð punda ríkisskuld, sem sé 707 milj. á undan ófriðinum, 1417 milj. til áramóta 1916 og 1323 frá yfirstandandi fjárhagsári. Frá þessu má þó ef til vill draga um 800 milj. til Bandamanna. Til afborgana og vaxta af þeim 2640 milj., sem þá yrðu eftir, og til ýmissa annara ársútgjalda við ófriðinn — aðallega eftirlauna — má reikna um 170 milj. eða um 140 milj. um fram vexti og afborganir af lánum fyrir ófriðinn. Eftir því yrði fjárhagsáætlun Englendinga eftir ófriðinn að hafa 338 milj. gjaldamegin í stað 198 fyrir ófriðinn og ársútgjöldin því að hafa

aukizt um $2\frac{1}{2}$ miljarð króna. Skattar þeir, sem lagðir hafa verið á nú, þurfa því ekki að gilda allir um aldur og æfi, ef ófriðerinn endar innan áramóta, heldur mætti leggja niður um 3 miljarða af þeim $5\frac{1}{2}$ milj., sem nú eru. En margt getur breyzt á þeim tíma.

IV.

Hér að framan höfum vér séð, hvernig ríkin voru fjárhagslega búin undir ófriðinn, hve mikils fjár þau hafa aflað og á hvern hátt. Ekkert ríkjauna hefir komist í kröggur vegna peningaleysis. Steypiflóð lána, seðla og ríkissjóðsskírteina hefir dunið yfir Norðurálfu og ekkert virðist benda á, að hörgull verði á peningum. Til þess að gefa rétta hugmynd um, hvað gerst hefir, þarf því að skýra sambandið milli hins gífurlega herkostnaðar og vara þeirra og vinnu, sem peningarnir eru staðgengill fyrir. Ljósast verður að gera grein milli lands, sem er algerlega einangrað og verður því eingöngu að lifa af auðsuppsprettum sínum, og annars lands, sem átt getur viðskifti við umheiminn.

1. Einangrað land, líkast Miðveldunum nú. Ófriðarlán þau, sem slíkt land tekur, svara til jafnmikils fjár í landinu sjálfu, sem landsmenn hafa fengið stjórninni til umráða til herkostnaðar. Augsýnt er, að stjórnin gæti komist yfir slíkt fé án lána, t. d. með sköttum eða eignarnámi, þó að lánaleiðin sé oft hagfeldari fyrst um sinn. Með lánunum hefir því ekki fengizt neinn nýr auður til ófriðarafnota, sem ekki var til áður. Lánin eru að eins hagfeld tæki til að komast yfir auð, sem til er í landinu til ófriðarafnota. Í einangruðu landi gætu í raun og veru lánsupphæðirnar vaxið í sífellu án þess, að landið gæti með því móti haldið ófriðnum áfram degi lengur. Því að þó að peningar gefi alment kaupmagn yfir vörum, þá er ekki hægt að halda ófriðnum við með öðru en nothæfum vörum, vörum, sem eru komnar á síðasta stig framleiðslunnar og hæfar til notkunar. Hlutabréfaeigendur geta reyndar selt eða fengið lán út á verðbréf sín í bönkum og svo lánað ríkinu féð. Á venjulegum tímum mundi svara til reiðufjár þess, sem lántakandi fengi í bönkum, nothæfar eignir annara manna, þeirra sem legðu inn í banka. Ríkið fengi óbeint umráð yfir þessum vörum, og þá væri alt gott og blessað. En á ófriðartímum fá bankarnir auk þess leyfi til að gefa út seðla, sem svara til meira en reiðufjár í bönkunum. Athugum það.

a. Seðlaútgáfa. Innleysingarskyldan og takmörkun seðlaútgáfunnar falla niður í byrjun ófriðarins. Með seðlaútgáfunni fær ríkið alment kaupmagn yfir vörum, en engar nothæfar vörur svara til seðlaaukningarinnar. Seðlarúir falla þá í verði. Ef seðlalán og önnur þvílík lán til ríkisins eru t. d. aukin úr 10 miljörðum króna upp í 12 miljarða án þess að þjóðarauðurinn hafi aukizt, þá þarf nú 12 krónur til að kaupa vörur, sem áður kostuðu 10 krónur. En ríkið fær samt sem áður 2 miljarða kaupmagn í hendur og getur því keypt sjöttung allra vara í landinu. Nú ber þess að gæta, að vöruforðinn minnar í ófriði, segjum t. d. í þessu dæmi, frá 10 milj. eininga niður í $8\frac{1}{3}$ milj., svo að verðhrun peninganna og verðhækkun varanna verður enn meiri. Áður var hlutfallið milli peninga og vara 10 : 10, en nú er það 12 : $8\frac{1}{3}$. Þ. e. a. s. nú er um 44% verðhækkun á vörum. Nokkur hluti af þýzku lánunum grundvallast á seðlalánum út á verðbréf. Frönskum og rússnesku lánin eru mestmegnis hrein og bein seðlaútgáfa af hálfu ríkisins. Munurinn kemur fram eftir ófriðinn. Þegar þýzku lánveitendurnir greiða skuldir sínar í lánssjóðina, þá getur ríkið notað skuldagreiðslur þessar til að innleysa seðlana með, svo að einungis verði eftir fast skuldabréfalán. Rússar og Frakkar þurfa líka að ófriðinum loknum að leysa inn seðlana, en til þess þurfa þeir t. d. að taka nýtt skuldabréfalán.

b. Önnur lind, sem ausið er úr herkostnaði, er sparnaður þjóðarinnar, auðmyndunin. Nothæfar vörur eru sparaðar til ófriðarafnota og framtíðarframleiðslunnar er beint að hergagnasmíði. Ef menn, sem spara, geyma peningana á kistubotninum, þá verður að eins breyting á verðlagi varanna. Aðrir menn geta þá keypt því meira fyrir sitt fé, en óvíst er, að þjóðin spari neitt. Verði peningarnir lagðir inn í banka, þá lána aðrir menn féð og eftirspurnin eykst eftir vörum og vinnu. Ríkið getur þá einuig lánað hjá bönkunum og fengið umráð yfir spöruðu kaupmagn þeirra, sem leggja inn í bankana, gegn því að greiða vöxtu. Þetta kaupmagn gengur svo til herkostnaðar.

Munurinn á þessari aðferð og seðlaútgáfu er, að hér svara vörur og vinna til peninganna, sem ríkið fær umráð yfir, og peningagildið breytist því ekki. Seðlaútgáfan gefur aftur á móti að eins umráð yfir vörum og vinnu með því að svifta seðla þá, sem fyrir eru, nokkrum hluta af kaupmagn þeirra. Þegar uppspretta lánanna er sparnaður, verða það aðallega auðmennirnir, sem lána ríkinu vísvitandi herkostnaðinn, með seðlaútgáf-

unni verða það aðallega fátæklingarnir, sem spara við sig, svo að ríkið getur fengið umráð yfir spöruðu kaupmagni þeirra, og þeir vita ekki af því að þetta gengur til herkostnaðarins. En til að halda ófriðinum við þarf annað hvort að minna neyzluna, eða láta gróða þann, sem afgangs verður af neyzlunni, ganga til herkostnaðar, eða hvort tveggja. Nú hefir framleiðsla þjóðanna minkað í ófriðinum og verða menn því að spara enn meira en fyr.

En auk þess sem framleiðsluaflinu er beint að ófriðarframleiðslu, þá er þó einnig eytt ýmsum þeim nothæfum vörum, sem annars mundu notaðar til frekari framleiðslu, t. d. búpeningi. Þegar svo er, þá er ekki einungis þjóðartekjunum eytt, eins og þegar sparað er, heldur þjóðaraudnum, merg atvinnulífsins, auk vinnunnar og náttúrunnar.

c. Bráðabirgðalán, ríkissjóðsvíxlar og því líkt hafa sérstaklega átt sér stað í Frakklandi. Þeir eru einungis ólíkir föstum lánum að því leyti, að ríkið þarf að endurgreiða þau innan skamms tíma og getur það á ófriðartímum komið ekki litlum glundroða á fjármál landsins.

d. Skattar. Skoðun sú, að með lánum geymi þjóðin framtíðinni að greiða herkostnaðinn, en með sköttum beri nútíminn hann, er röng. Þjóðfélagið og ríkið er sitt hvað. Auðvitað verða einhverir að greiða kostnaðinn þegar í stað. Sá er einungis munurinn, að með sköttum er ákveðið, hverir eigi að bera kostnaðinn að lokum. Vafi getur stundum leikið á, hvort heppilegra sé að taka herkostnaðinn fyrst um sinn með lánum eða sköttum. Með lánum nær ríkið þegar í stað í peninga hjá mönnum, sem hafa þá aflögu, en skattar geta lent á öðru en reiðufé. Einnig er erfitt að ná upp eins miklu fé með sköttum eins og lánum. Þar fyrir eru samt skattarnir eina endanlega aðferðin til að ná upp herkostnaðinum. Þjóðverjar hafa haldið fram lánaleiðinni, en Englendingar skattaleiðinni. Nú er samt svo komið, að allar stærri ófriðarþjóðirnar hafa snúið sér að sköttum, þó engar eins og Englendingar.

2. Land, sem skiftir við önnur lönd. Sameiginlegt með einangruðum löndum var, að til ófriðarfjárins svöruðu nothæfu vörurnar í landinu og aðalatriðið var að ná umráðum yfir vörum þessum á sem auðveldastan hátt. Í landi, sem hefir samgöngur við önnur lönd, breytist þetta þannig, að nothæfum vörum er hægt að ná frá útlöndum.

Greiðslu á vörum þessum getur verið varið á tvennan hátt.

Éðlilegast er að kaupa vörur, sem útlönd geta framleitt ódýrara og gjalda þær með vörum, sem landið sjálft getur framleitt ódýrara. Sambandið við önnur lönd getur þá fyrst og fremst látið alþjóðavinnuskiftinguna njóta sín.

Annað er þó meira virði nú. Vegna viðskiftanna getur ófriðarþjóðin einnig eytt ónothæfum vörum sínum til herkostnaðar, með því að skifta þeim fyrir nothæfar vörur útlanda. Menn geta t. d. selt innlend verðbréf til útlanda og keypt vörur þar fyrir andvirðið. Þá fyrst er unt að særa sér í nyt svo að um muni þjóðarauðinn, sem annars væri fastbundinn. Járngarður lokunarinnar er þá brotinn.

Í þriðja lagi mætti benda á að hægt væri að fá vörur að láni í útlöndum. Þetta er þó í raun og veru sama sem hitt, því að hér kemur upp skuld, sem verður að dragast frá þjóðarauðnum.

Þá má geta um aðferðirnar til að ná í féð og vörurnar, muninn á innlendum og útlendum lánum. Útlend lán eru auðvitað mikill kostur fyrir þjóðina, á meðan á ófriðinum stendur. Með þeim getur þjóðin fært sér í nyt vörur annara þjóða gegn því að gjalda síðar. Mikill hluti herkostnaðarins er nú borinn á þann hátt af hlutlausum þjóðum. En sé land það, sem lán tekur, ekki auðugt, þá getur það komist á pólitískan klafa landsins, sem lánið veitir. Aftur á móti kemur útlent lán að litlu gagni fyrir einangrað land, sem ekki getur náð í vörur, sem svara til lásupphæðariunnar, nema þá heima fyrir, en það gæti landið gert án lánsins. —

En innlend lán í landi, sem á viðskifti við önnur lönd og á fé hjá þeim, getur einnig haft áhrif á þau. Landsmenn geta selt ríkinu í hendur kröur sínar á útlönd og ríkið getur svo fengið nothæfar vörur frá útlöndum í staðinu.¹⁾

Af því sem á undan er ritað sést, að ekki er hægt að búast við, að ófriðarþjóðirnar verði að hætta ófriðinum vegna peningaflæysis. Aftur á móti er vöruleysið hættulegra fyrir einangraða þjóð.

Ef meta ætti beinan herkostnað eins og hann verður í raun og veru fyrir þjóðirnar, þá yrði, eins og getið hefir verið um, fyrst að draga frá herkostnaðarupphæðinni fyrir verðhruni peninganna í samanburði við gull og vörur. Auk þess yrði að taka tillit til mis-

¹⁾ Hvort heppilegri séu innlend eða útlend lán yfirleitt er undir atvikum komið, en kemur þessu máli ekki við.

munar þess, sem er á flestum lánunum milli nafnverðs skuldabréfanna og verðs þess, sem lánveitendurnir gefa fyrir þau. Þessir liðir eiga sammerkt í því að auka kostnaðinn fyrir ríkið án þess að til þess svari aukinn kostnaður fyrir þjóðfélagið í heild sinni. Alls munu þessir liðir nema um þriðjungi herkostnaðarins.

Af afganginum kemur mikið frá sparnaðinum. Talið er, að auður Þjóðverja aukist venjulega um $7-7\frac{1}{2}$ miljarð króna á ári, Frakka um $3\frac{1}{2}-4$ miljarða og Englendinga um $6\frac{1}{2}-7$ miljarða. Séu þessar upphæðir tvöfaldaðar — álitid að aukinn sparnaður vegi á móti minkaðri framleiðslu — þá sést, að þetta mundi nema næstum því öðrum þriðjungi herkostnaðar tveggja ára í löndum þessum.

Það sem þá er eftir af herkostnaðinum er mikið til tekið af þjóðarauðnum og fer sá hlutinn vaxandi. Vélar og önnur framleiðslutæki eru ekki endurnýjuð, vörubirgðum er eytt, án þess að nýjar komi í staðinn, og búpeningur er skorinn niður. Verðbréf eru seld til útlanda, sérstaklega í löndum Bandamanna, sem geta átt óhindruð viðskifti við umheiminn. Móti þessu kemur reyndar, að nokkur hluti herkostnaðarins fer ekki alveg að forgörðum, heldur í vegi, járnbrautir, hús og þvflíkt, en það mun þó vera tiltölulega lítið. Talið er að þjóðarauður Þjóðverja hafi verið 270 miljarðar króna fyrir ófriðinn, Frakka 210 miljarðar og Englendinga 270 miljarðar. Geri menn ráð fyrir, að svo sem fimtunger herkostnaðarins sé goldinn af þjóðarauðnum, þá verður það samt ekki nema liðug 3% af þjóðarauðnum. Í fljótu bragði virðist herkostnaðurinn því ekki svo mikill, að hann ætti að geta heft framfarir þjóðanna um langan aldur.

Þannig lítur þetta út frá sjónarmiði þjóðfélagsins. Sé aftur á móti lítið á það frá sjónarmiði ríkisins, ríkissjóðs, þá þarf að gjalda hvern eyri, sem tekinn hefir verið að láni, ef ríkið vill ekki verða gjaldþrota. Eftir ófriðinn verður eitt mesta vandamálið, hvernig þessari niðurfjöfnun herkostnaðarins verði bezt komið fyrir. Englendingar hafa reyndar komið á nægum sköttum í bráð, en sérstaklega er þar ástatt. England er fríverzlunarland með lipurt tekjuskattakerfi. Verndartollalöndin standa þar ver að vígi. Þegar rætt hefir verið um nýjar álögur í ófriðinum, þá hefir þeim reyndar verið tekið með »skattagleði«. En bak við tjöldin verða mennvarir þungrar undiröldu, ágreiningsins milli auðmannanna og frjálýndu flokkanna um, hverir eigi að lokum að bera skattana, og má búast við, að sú deila skerpið að mun, þegar ófriðarhættan er

úti og ritfrelsi og málfrelsi kemst aftur á. Efnalitlir menn hafa borið þyngstu byrðar ófriðarins, en auðmennirnir grætt margir hverjir. Nú vilja frjálslyndu flokkarnir láta þá gjalda herkostnaðinn að mestu.

En ef hægt væri að meta allan þann óþeina kostnað, sem ófriðurinn hefir valdið, þá myndu menn fyrst sjá, hvíllik blóðtaka styrjöld þessi er fyrir framleiðslumagn þjóðanna. Skaði sá, sem orðið hefir á vígstöðvunum, er lítt metanlegur. Fáir lönd þessi engan herkostnað greiddan, þá er enginn vafi á, að langan tíma þarf til að koma þeim í samt lag. Bjartsýnir menn álíta samt, að samhögun sú, er komist hefir á alla framleiðslu ófriðarþjóðanna, muni geta bætt mikið upp. En svo koma mannlífín. Norðurálfan er einn stór kirkjugarður. Friðarraddirnar eru nú orðnar háværar um heim allan. Á eldri kynslóðinni hvílir skyldan, að semja sæmilegan frið. En hlutverk yngri kynslóðarinnar er ekki minna, það er endurreisnin.

Kaupmannahöfn, 1 maí 1916.

HÉÐ'NN VALDIMARSSON.

Heimildir: Schanz Finansarchiv; Deutsches Statistisches Zentralblatt; Soziale Praxis; Heckseher: Världkrigets Ekonomi; Bulletin of the War; Study Society; Journal of the Political Economy; Economist í Lundúnum; Finanstidende.

Ritfregnir.

Lexicon poeticum antiquæ lingvæ septentrionalis. Ordbog over det norsk-islandske skjaldesprog. Forfattet af Sveinbjörn Eðilsson. Forøget og påny udgivet for Det kongel. nordiske Oldskriftselskab ved Finnur Jónsson. København 1913—1916.

Þau eru ekki vön að kólna, járnin, sem Finnur Jónsson hefur í aflinum. Seint á árinu 1913 kom út 1. hefti af þessari nýju orðabók ifir skáldamálið, sem nefnist önnur útgáfa af skáldamáls-orðabók Sveinbjarnar Egilssonar, enn er svo mikið aukin og endurbætt í samanburði við frumbókina, að hún má heita ní orðabók; 2. hefti kom út árið 1914, og nú snemma á þessu ári kemur út 3. og síðasta heftið.

Í þessari bók hefur F. J. tekið tillit til allra þeirra framfara, sem orðið hafa í íslenskri málfræði á þeim rúmum 50 árum, sem liðin eru, síðan orðabók Sveinbjarnar kom til sögunnar, og gert sjer að góðu allar þær raunsóknir um fornan kveðskap, sem út hafa komið á þessum árum, sjerstaklega frá hendi Konráðs Gíslasonar. Í meira enn 30 ár hefur skáldakveðskapurinn verið hið hugðnæmasta viðfangsefni hans (frumsmíð hans í þeirri grein, »Kritiske studier«, kom út árið 1884). Á þessum tíma hefur hann safnað saman í eina heild öllum skáldakvæðum frá elstu tímum til loka 14. aldar, og gefið þau út nákvæmlega eftir handritunum með gagnorðum og góðum skíringum, og tvisvar hefur hann gefið út Eddukvæðin. Árangurinn af þessu langa starfi, allan sinn mikla lærdóm í þessari sjerstöku grein, allan þann skarpleik, sem hann er gæddur, alla þá nákvæmni, sem honum er eiginleg, hefur hann lagt í þá bók, sem hjer liggur firir, og er því engin furða, þó að hún marki stórt framstig í rjettum skilningi skáldakvæðanna fornu.

Annars get jeg um þessa bók vísað að mestu til þess, sem jeg hef áður sagt um hið firsta hefti henuar í ritfregn í Skírni

1914. Hún er bæði vel og vandlega af hendi leyst, þíðingarnar ljósar og gagnorðar og ifirleitt rjettar og trúar, þó að sumar geti verið vafasamar, enda mun útgefandinn firstur marna játa, að mart sje enn ekki skírt nje skilið til hlítar í fornum kveðskap. Prófarkir virðast vera lesnar af mikilli vandvirkni, og þó koma firir nokkrar prentvillur, sem er eugin furða í svo stórri bók, og eru þær flestar leiðrjettar aftast í bókinni. Smávegis ónákvæmni, sem sjest hefur ifir að leiðrjetta, hef jeg þó orðið var við á stöku stað. T. d. er það Magnús góði, enn ekki Haraldr harðráði, sem Þjóðólfr á við í vísu sinni Andaðr es sá es of alla brá hauk-stalda konr, Haralds bróðursonr (sjá undir hauk-staldi). Kenningin í Sonatorreki 19¹⁻⁴ er tekin upp á tvennan hátt, ýmist hrosta hilmir (höfundr?) — svo undir hilmir og höfundr — eða hrosta fens höfundr — undir hrosti — og skírd á tvennan hátt, ímist sem Ægiskenning — undir hrosti og höfundr — eða sem Óðinskenning — undir hilmir. Í vísu, sem Þjóðólfr orti um missætti Haralds harðráða og Upplendinga segir skáldið, að tröll hafi »brotið hrís í hæls hleypikjóra andskotum vísa«. Hvað þíðir hjer kenningin hleypikjóll hæls? Kjóll er 'skip'. Hvað er þá hleypiskip hæls? F. J. tekur það eftir Sv. Eg., að það sje 'fótur' (sjá undir hleypikjóll og hæll). Enn er það eðlilegt að kalla fótinn skip hælsins? Og ef það er hugsunin hjá Þjóðólfi, að tröllin hafi brotið hrísið til að berja með fætur fjandmanna Haralds, finst mjer forsetningin í ekki vera vel valin; þá hefðu menn búist við forsetningunni á. Jeg hef lengi verið sannfærður um, að hæls hleypikjólar á þessum stað eru ekki fætur heldur »kór. Það virðist vera mjög eðlilegt að kenna skó sem 'skip hælsins', og ef hjer er átt við skó, þá nítur forsetningin í sín ágætlega á þessum stað. Ef smásteinum eða spítnarusli eða hrískvistum er stráð í skó mans, verður gangan ervið og sár, og veit jeg mörg dæmi til, að menn hafa verið hrekkj-aðir með slíku. Vísa Þjóðólfs sínir, að menn hafa á hans dögum kallað þetta »at brjóta hrís í skúa einhverjum«, og að þennan talshátt mátti líka hafa í óeiginlegri merkingu = 'að gera einhverjum illan grikk eða hrekk', því að það virðist vera þíðingin hjá Þjóðólfi. Nú er það merkilegt, að undir orðinu brjóta verður F. J. ósjálfrátt sú ósamkvæmni að taka hæls hleypikjóll í þíðingunni 'skór', alveg eins og jeg geri; hann þíðir þar talsháttinn á dönsku þannig: »bryde ris i (folks) sk o«.

Þetta bendir til, að skíring mín muni vera rjett, og jeg verð að segja það, eins og það er, að þegar jeg las þessa skíring F. J., þá bað jeg guð að blessa hann fyrir ósamkvæmnina. Ef vjer flettum upp orðunum benlogi, njótr (með leiðrjettingunni aftast í bókinni) og vindr, munum vjer og finna talsverðan rugling í meðferðinni á firra helmingi 12. erindis í Selkolluvísunum Einars Gilssonar. Jeg skal ekki fjölirða um það, enn að eins taka fram, að jeg higg að vísan sje rjett upp tekiu þannig: Benloga vindar (= sverðs vindar = orustu) Njótr (Öðinsheiti; b. v. N., mannkenning) sá er nærði allmarga sægs sindrs brjóta (= sævarelds, gulls, brjóta; mk.), þá er sjúkir lágu, lá þar þá njól. — Ósamkvæmni virðist og koma fram í því, að höf. heimfærir orðmindina þulu í Gróttasöng 3. erindi (Þær þyt þulu þögnhorfinnar) undir nafnorðið þula kvk. (sjá þetta orð) enn undir þytr virðist hann taka hana sem sagnorðsmind (3. pers. fleirt. þátíðar?), enn það sagnorð finst hvergi í bókinni (þetta hefur mag. Sigurður Guðmundsson bent mjer á). Annars finst mjer líklegt, að Rask hafi getið rjett til, að hjer eigi að lesa: þær þyt þutu.

Annars munu þær orðaþækur vera fáar, sem ekki gera sig við og við seka í þess háttar ósamkvæmni, og í þessari bók er það svo fátítt, að það rírir ekki verulega kosti bókarinnar. Hún mun um langan aldur reinast ómissandi handbók fyrir hvern þann, sem fæst við íslenskan eða norrænan kveðskap. Enn hver sem notar hana verður líka að hafa við höndina hið stóra skáldakvæðasafn, sem F. J. hefur gefið út (Den norsk-islandske Skjaldedigtniug), því að í þá útgáfu vitnar bókin jafnan, þar sem ekki er um Eddukvæði að ræða. Við þetta einukanlega sparast svo mikið rúm, að þessi önnur útgáfa er rúmum fjórðungi stittri enu firsta útgáfan, og er þessi útgáfa þó talsvert efnismeiri, því að við hana hefur verið tekið tillit til allmargra kvæða, sem ekki urðu notuð við frumútgáfuna.

Í formálanum rekur F. J. stuttlega vísindaferil Sveinbjarnar Egilssonar, og fer um hann mörgum og maklegum lofsorðum, og er sú ræktarsemi og virðing, sem hann sinir fyrirrennara sínum, honum sjálfum til hins mesta sóma.

Bókin er kostuð af hinu konunglega norræna Fornfræðafjelagi (eins og 1. útg.) með stirk úr Carlsbergssjóði. Öll þrjú heftin kosta samtals 20 kr.

B. M. Ó.

Knut Liestöl: Norske trolldviser og norrøne sogor.
Kristiania 1915. Olaf Norlis forlag. 250 bls.

Danska þjóðvísna-annsóknin hefir lengi staðið á háu stigi, en öðru máli er að gegna um þessi vísindi í Svíþjóð og Noregi. Útgáfur eru flestar úreltar, ónákvæmar og ófullkomnar og komast ekki í hálfkvisti við útgáfu þeirra Sv. Grundtvigs og Ax. Olriks (Da'n marks gamle Folkeviser), þó eru sumar undantekningar eins og Gamle norske Folkeviser eftir Sophus Bugge og Norske folkeviser fraa millomalderen ved Knut Liestöl og Moltke Moe. Eins hefir fátt verið ritað um sænskar og norskar þjóðvísur, annað en það sem finst í þjóðvísna-útgáfu Grundtvigs, og þó eru einkum norsku þjóðvísurnar einkennilegar og frábrugðnar hinum dönsku. — Ein orsökina til þessa er eflaust sú, að norskir málfræðingar hafa hingað til mestmegnis hugsað um fornþókbmentirnar, sem þeir skoða eða hafa skoðað sem sína eign. Hinsvegar hefir lengi staðið Dönum ljóst, að þeir eigi ekkert í fornþókbmentunum, og hafa þeir vegna þessa snemma snúið sér að miðaldaritum sínum. Á seinni árum hafa Norðmenn orðið að jata, að fornþókbmentirnar séu mestmegnis ritaðar á Íslandi, en samt séu þær norskar eða »norrøne«, þ. e. vesturnorrænar, því Íslendingar séu einskonar Norðmenn. En þó vilja Norðmenn fegnir eigna sjálfum sér sem mest af fornþókbmentunum, og tóku þeir því fegins hendi við Eddukvæðunum, þegar próf. Finnur Jónsson lýsti þau flest norsk. Nú kemur maður, sem leitast við að sýna fram á, að flestar fornaldarsögurnar séu norskar að uppruna og að til hafi verið fjöldinn allur af fornaldarsögubókum í Noregi, þótt nú séu týndar, með því að gagnrýna nokkrar þjóðvísur frá Þelamörku.

Knut Liestöl hefir ritað bók sína á nýnorsku (norska landsmálinu), og stendur það eflaust í sambandi við áhuga hans á fornöldinni og trú hans á samhenginu og samfellunni í andlegu lífi Norðmanna. Enda hefir hann sett sem einkunnarorð á bók sína ummæli þessi eftir Moltke Moe: »Saaledes kommer folkedigtningen til at repræsentere og til at klarlægge kontinuiteten i folkets aand og i dets udviklingsgang. Efter syn og opfatning, efter bygning og indre form, ofte ogsaa efter ytre frematilling, knytter folkepoesien led til led i den lange lænke fra fædrene til vore dage«.

Í innganginum tekur höf. fram, hvað Þelamörk sé auðug félhírzla, bæði hvað fornt mál, gömul munnmæli og gamla siði

snertir. Þjóðvísurnar héðan hafi fornaldarblæ og svipi þeim oft og einatt til Íslendingasagna. »Det er i alle maater det gamle kjempelivet som stig fram«. Móðir Ívars Elisonar »dyl sin harm og tegjer, men glöymer inkje«, »hemntanken brenn i henne som ein still og heilag loge«. Og hann spyr: Er det ikkje ein litterær samanheng millom den gamle norrøne bokheimen og folkevisone? Á þetta samhengi hafi þegar þeir P. A. Munch, Jörgen Moe og M. B. Landstad bent, og sðar hafi S. Bugge og Moltke Moe fjallað um einstakar vísur, einnig Svend Grundtvig, er heldur, að þegar þjóðvísa og fornaldarsaga eru sama efnis, sé orsökinn sú, að báðar eigi ætt sína að rekja til »fornkvæðis«, C. Rosenberg í »Nordboernes aandsliv«, sem heldur að þjóðvísurnar eigi ætt sína að rekja til sagna, og Axel Olrik, er segir, að víkinga- og ævintýrasögurnar »danner grundstammen i Færøernes og Telemarkens folkeviser«. En þó hafi rannsóknirnar verið um of á stangli og af handahófi.

Höf. tekur nú til rannsóknar 6 þjóðvísur frá Pelamörku, og eru þær allar líks efnis, um tröll og risa.

Hin fyrsta er »Aasmund Frægdegjæva« (nr. I í safni Landstads: Norske folkeviser), er segir frá, hvernig Ásmundur fer í »Trollebotn« að sækja dóttur (Ólafs) konungs, er tröllinn hafa rænt. Drepur hann gýgina Torgjer Hukebrur (Þorgerði Hölgabrúði). Líkt efni finnur höf. aftur í kvæðinu »Hugaball« og í ævintýrinu »Enkjesonen«, enn fremur í sögu Saxa um Torkel Adelfar og einkum í »Inntaki úr sögupætti af Ásmundi flagðagæfu« í Íslenzk. þjóðs. og æf. I, bls. 171—79. Er þessi sögupáttur byggður á rímum, sem eru nú týndar, að fáeinum erindum undanteknum. Höf. ber allar sögur þessar saman og margar fleiri, og kemst að þeirri niðurstöðu, að norska þjóðvísan sé byggð á kristniboðssögu, er hafi tekið atriði frá ýmsum sögnum; setji hún viðburðina í samband við Ólaf helga, en mörg söguatriði séu tekin úr sögnum um Ólaf Tryggvason, einstök atriði séu tekin úr sögu Saxa um Torkel Adelfar og úr Geirröðar sögunni. — Íslenzku rímurnar um Ásm. fl. hafi verið auknar með ævintýra-inngangi og viðbót úr Völsapætti, en hvíli á sömu kristniboðssögunni og norska þjóðvísan.

Steinfinn Fefinnsson, sem er til í mörgum uppritunum, segir einnig frá ferð til tröllaheimsins. Steinfinnur hefir mist tvær systur sínar og fer upp á »Skomeheiar« að sækja þær. Drepur hann tröllinn með fágætum örvum; en þetta atriði er annars fágætt — tröllinn eru oftast drepin með sverði eða klumbu — en kemur

einnig fyrir í Ketils sögu hængs, Gríms sögu loðinkinna, Áns sögu bogsveigis og Örvarodds sögu. Heldur höf., að Örvarodds saga hin eldri sé grundvöllur þjóðvísunnar. Eigi sögnin um Örvarodd ætt sína að rekja til Jaðars, sem og þeir próf. Finnur Jónsson og Mogk halda, en vísan sé ort í Þelamörku.

Kappen Illugjen sé sama þjóðvísa og »Kappin Illhugi« frá Færeyjum og »Hr. Hylleland henter sin Jemfru« úr Danmörku. Kemst höf. að þeirri niðurstöðu, að hún standi í sambandi við fornaldarsöguna um Illuga Gríðarfóstra; sé jafnvel orðfærið í vísunni náskýlt orðfæri sögunnar, og sagan sé upphaflegri, en norska vísan hafi haldið hinu upphaflega betur en hinar færeysku og dönsku uppritanir; tvær þessara síðustu séu þó af norskum uppruna.

Ormaalen unge eigi kyn sitt að rekja til Hervararsögu. Á Hervararsögu eru einnig byggðar danska þjóðvísan Alv í Odderskær (líklega afbökun úr »Ód í Alverskær«) og hin færæyska Arngríms synir, er hefir breyzt mikið frá því upphaflega. Gerir hún Hervík (þ. e. Hervöru) að dóttur Arngríms og systur Angantýs, og röð viðourðanna hefir verið umturnað o. fl. Norska þjóðvísan Ormaalen unge, sem einnig hefir fundist í Danmörku sem Orm ungersvend og í Svíþjóð sem Orm ungersven, er líks efnis og Hervararsaga. Sama efnis er einnig Ormars rímur, sem eru fjórar alls. Sophus Bugge hefir rannsakað sambengið í milli sögunnar og þessara kvæða, og kemst að þeirri niðurstöðu, að eldri (nú týnd) mynd af Arngríms synir hafi verið búin til úr Hervarar-sögu, á þessari týndu, færæysku þjóðvísu hafi verið byggð norsk Ormar-vísa (eldri, nú týnd), og til hennar eigi bæði Ormaalen unge (Orm ungersvend, Orm ungersven) og hinar íslenzku Ormars rímur kyn sitt að rekja. En Knut Liestøl kemst að annari niðurstöðu: Arngríms synir sé búin til úr Hervararsögu og í raun og veru tvö kvæði samsteipt, en aftur á móti séu hvorki norska þjóðvísan né íslenzku rímurnar riðnar við færæysk kvæði, heldur eigi þær ætt sína að rekja til týndrar Ormars sögu, sem hafi verið búin til á grundvelli Hervararsögu með atriðum úr öðrum fornaldarsögum (Egils sögu ok Ásmundar og einkum Sturlaugs sögu starfsama), og hefir höf. sennilega hér á réttu að standa. Einnig heldur hann, að saga þessi hafi verið til skráð.

Raamund unge er bæði til í Noregi, Svíþjóð og Danmörku og eins er danaka þjóðvísan Rígen Rambolt og Al-

ler hin stærke henni náskyld. Þegar Björner hefir í »Kämpadater« haldið fram, að Ramunder (Raamund) væri hinn sami sem Hrómundur í »Hrómunds sögu Greipssonar«. Hið sama hafa Svend Grundtvig, Sophus Bugge og Kölbing séð. Enskur vísindamaður, Le Roy Andrew, hefir haldið fram, að danska uppritinin, nefnd A sé elzt, af henni sé komin önnur dönsk uppritin (B), af þessari norska uppritinin (C), og af henni aftur sænska þjóðvísan (D). Hins vegar heldur höf. — í samkvæmni við Ax. Olrik — að norsk þjóðvísa hafi verið milliliður beggja dönsku uppritanauna og sögunnar. Hina upphaflegu norsku þjóðvísu, sem sé beinlínis ort upp úr sögunni, kallar hann x. Af henni sé komin danska uppritinin A og einnig önnur týnd uppsteypa norsk, sem hann kallar y. og sem B, C og D eigi kyn sitt til að rekja.

I ven Erningsson sé dæmi samblands þess af útlandu og innlandu efni, sem er svo algengt í yngri íslenskum ævintýrasögum. Hún sé óvenjulega löng og þó vanti ýmislegt í hana, svipti henni einna mest til hinna löngu færeysku kvæða með efni úr ævintýrasögum og riddarasögum; hafi hún og önnur þjóðvísa, Kvikjesprakk Hermodsson, upphaflega átt saman, og hafi þær verið tildrög til vísnaflokks í Noregi. — Höf. ber vísuna saman við hina færeysku vísu Ivint Herintsson (einkum uppritinina A). Hafi annur þáttur, Kvikils bragð, sama innihald og Kvikjesprakk Hermodsson, og sé grundvöllur beggja þáttur Hrólfs sögu Gautrekssonar, eins á færeyska vísan, Finnur hin fríði, sama uppruna og sé ekkert annað en afbrigði af vísunni um Kvikjesprakk. Samhengið sé svo, að það hafi verið frumkvæði, beinlínis ort upp úr sögunni, úr því séu komnar »Finnur hin fríði« og önnur uppsteypa (y), sem Kvikjesprakk og Kvikilsbragð eigi kyn sitt til að rekja. — Fjórdi og fimti þáttur færeyska kvæðisins Galianstáttur séu sama efnis og Iven Erningsson. Virðist hun vera samsett af atriðum frá ýmsum áttum. Bæði P. A. Munch, S. Bugge, Gustav Storm og Kölbing setja hana í samband við sögnina um Artus konung og riddara hans. En hér eru einnig atriði úr Erex sögu, Parcevals sögu og fleiri. Ax. Olrik hefir bent á líkingu við fornfranska kvæðið um Galien, sem réttilega eig heima í sagnaflokkinum um Karolingana. Knut Liestøl kemst að þeirri niðurstöðu, eins og Storm og Kölbing, að Iven Erningsson sé bygð á týndri sögu um Artusar-sagnirnar, því engin dæmi séu þess, að norsk þjóðvísa sé bygð beinlínis á

fleiri sögum. En þessi saga sé nppsteypa á rómantiskum grundvelli og búin til í Noregi.

Næsti kapitullinn hjá Knut Liestøl fjallar um söguatriði í tröllakvæðunum. Telur höf. fyrst upp ýmsar aðrar tröllavísur, sem þar til heyra, eins ýmsar fornaldarsögur og íslenskar sagnir og ævintýri, þar sem þessi atriði koma fyrir. Eru þessi atriði önnur eins og: ferðir til trölleheimsins, ástir tröllkvenna og menskra manna, umskapaðar skessur, er giftast konungum o. s. frv. Öll þessi atriði eru alstaðar svo lík og svo sniðin, að höf. er sannfærður um, að hér sé bóklegt sambengi á milli.

Því næst telur höf. upp aðrar þjóðvísur, sem eiga kyn sitt að rekja til sagna. Eru þær tiltölulega fáar á Íslandi — og tröllavísur eru hér engar — hafi rímurnar í flestum tilfellum bolað þeim frá. Á Færeyjum er fjöldinn allur þjóðvísna, sem bygðar eru á sögum; í Noregi eru fáar, sem bygðar eru á Noregs konunga sögum eða Íslendingasögum, en allmargar sem eru komnar frá fornaldarsögum, riddarasögum og ævintýrasögum, og fer hann yfir nokkrar af þeim: Lindormen, Heming aa Harall kungjen, Roland aa Magnus kungjen, Dei tri vilkaari (bygð á Mágus sögu) og Asaliborgji (bygð á Ásvalds sögu). Sænskar og danskar þjóðvísur, sem bygðar eru á sögum, eru aftur á móti afar fáar.

Í síðasta kapitulanum kemst þá höf. að þeirri niðurstöðu, að heimili þjóðvísna þeirra, sem bygðar eru á sögum, sé Noregur og Færeyjar. Sumar þessar þjóðvísur hafa fundist á báðum stöðum, sumar að eins í Noregi, aðrar að eins í Færeyjum. Heldur höf., að þjóðvísur þær, sem Noregur og Færeyjar eiga í sameiningu, séu af norskum uppruna. Yngri færeyskar vísur hafi sem sé ekki komið til Noregs, og það sé ólíklegt, að vísur sem Færeyjar og Danmörk—Svþjóð eiga í sameiningu séu komnar úr Færeyjum, þar sem samband landa þeirra hafi verið svo lítið. Sambandið við Noreg er hins vegar miklu nánara. Líklegra sé að Noregur sé heimili þessara þjóðvísna (. . . dei allerfleste av dei eldre norsk-færoyske visone som byggjer paa sogor, maa vera af norsk upphav). Nú heldur höf. fram, að þessar sögur hafi verið norskar, enda eru aðrir vísindamenn á líkri skoðun. Ax. Olrik segir (í Sakses oldh. I s 13): »at den norrøne fornaldarsagadigtning ikke er Islændingenes særeje, men at de kun har udformet den nærmere og ført den i pennen«. Og Finnur Jónsson heldur, að til hafi verið í Noregi »mundtliche uden tvivl fornaldarsaga-agtige traditioner«, en telur

það »fuldstændig forfejlet, når enkelte . . . mene, at en saadan saga er nedskreven i Norge, fordi der deri findes norske sagn« (Lit.hist. II, s. 791 f.). Nú sýnir höf. fram á með góðum rökum, að fornaldarsögur þær, sem norskar þjóðvísur eru byggðar á, hljóti að hafa verið skráðar. Hann sýnir fram á, að það hafi verið allmörg sagna-handrit í Noregi á 14. öld, en þau hafi verið ónýtt á siðskiftis-tímanum. Þetta getur vel verið, en þar sem höf. heldur fram, að allmargar sögur þessar hafi verið skráðar í Noregi hefir hann samt ekkert annað við að styðjast en getgátur einar. Það virðist ekki líklegt að svo hafi verið, jafnvel þótt það sé ekki hægt að hrekja það. Staðhæfing þessi mun eflaust mæta mikilli mótspyrnu, ekki sízt á Íslandi.

En hvernig sem nú stendur á því, hefir höf. brugðið upp nýju ljósi um margt, sem þjóðvísurnar snertir og bonum hefir hepnast að skilja úr norsku þjóðvísurnar og að einstekja þær. Það sýnir sig — það vissu menn nú fyrir fram — að þjóðvísurnar norsku standa í nánara sambandi við fornbókmentirnar heldur en hinar dönsku og sænsku.

Bókin kvað vera doktorsritgerð, og á Knut Liestøl að fullu doktorsnafnbótina skilið. Óskandi væri þó að hann legði ekki alt of mikla áherzlu á andlega sambandið á milli vesturnorrænu þjóðanna, svo hann gleymi, að það hafi einnig verið samband milli allra þjóðanna á Norðurlöndum. Sé það órétt »Aa skilja den norske og islendske traditionen og bokheimen so sterkt ifraa einannan i alle tilfelle« er það einnig órétt að afmarka vesturnorræna mentallífið svo fortakslaust sem höf. virðist hneigður til.

Reykjavík, 15. marz 1916.

Holger Wiehe.

Gunnar Gunnarsson: Livets Strand. Roman. Gyldendalske Boghandel. Nordisk Forlag 1915.

Gunnar skáldsagnahöfundur hefir þegar blotið alleinróma viðurkenningu erlendis fyrir hinar dansk-íslenzku skáldsögur sínar. Þegar eg kalla þær dansk-íslenzkar, þá á eg ekki við það eitt, að þær eru skrifaðar á danska tungu, heldur og það, að þær eru bæði hugsaðar á dönsku og mótaðar af danskri hugarstefnu. Höfundurinn hefir líka fyrst og fremst danska lesendur fyrir augum, menn, sem vegna ókunnugleikans á íslenzku lífi og lífernisháttum hneykslast ekki vitund á því, þótt það, sem borið er á

borð fyrir þá, sé alt annað en sannarlega íslenzkt. Þess vegna er afarhætt við, að þær falli aldrei í eins góðan jarðveg hér hjá oss. Einmitt hið »íslenzka« í sögum Gunnars er það sem á verst við oss úti hér. Vér höfum yfirleitt enn þá ekki lært að mæla gildi þess, sem ritað er, á vog einnar saman stílslistarinnar, en erum svo gamaldags að spyrja líka — og enda fyrst og fremst — um efnið sjálft, myndirnar úr lífinu, sem þar eru dregnar upp og lyndiseinkunnir þeirra manna, sem þar eru látnir koma fram á sjónarsviðið. Einnig er oss gjarnt, þar sem í hlut eiga skáldsögur, sem eiga að gerast með oss, að líta á hina staðarlegu umgerð sögunnar, umhverfið, og meta gildi sögunnar meðfram eftir því, að hve miklu leyti þetta kemur heim við hið rétta. En þetta hugsá margir skáldsagnahöfundar síðari tíma næsta lítið um. Þeir láta hugsjónina, sem fyrir þeim vakir, skapa umhverfið — ef þeir þá ekki beinlínis láta sér alveg standa á sama um það.

Svo er að sumu leyti farið Gunnari Gunnarssyni. Fyrir honum er auðsjáanlega hugsjónin alt. Um virkileikann er miklu minna hirt. Enda þótt ekki sé heimtúð nein ljósmyndarnakvæmni af honum, verður því ekki neitað, að hann leyfir sér ýmislegt það í hinum dansk-íslenzku skáldsögum sínum, sem kemur afarþægilega við tilfinningar íslenzkra lesenda.

Þegar eg fyrir nokkurum árum las »Ormarr Örlygsson«, þá leið mér beint illa. Mér fanst sagan í heild sinni svo einstaklega ósönn og ósennileg, mennirnir flestir svo óeðlilegir og umhverfinu öllu ranghvert. Og þegar eg svo ári síðar las »Dönsku frúna frá Hofi«, varð eg að hafa mig allan við til að komast bókina á enda. Svo mikið fanst mér kveða að ónáttúru þeirrar skáldsögu. Mér fanst blátt áfram, að eg hefði ekki í annað sinn séð syndgað öllu grimmið á móti öllum virkileika. Og mér fanst það ófyrirgefanlegt að leggja fram fyrir útlendinga, sem ekkert þekkja til Íslands, lýsingar, sem gæfu jafn ramskakkar hugmyndir um líf og hugsunarhátt manna hér úti á Íslandi og þessar lífslýsingar höfundarins. En »Eineygði Gestur« sætti mig aftur við höfundinn í bili. Það var svo margt yndislegt í þeirri frásögu, er knúði mig til þess að fyrirgefa höfundinn það sem mér virtist hann hafa »misgert« í hinum fyrri sögum sínum. Meira að segja fanst mér þar brugðið nýju ljósi yfir bæði »Ormar« og »Frúna«. Eg beið því með talsverði eftirvæntingu næstu sögunnar. En eg get ekki að því gert: »Örninn ungi« bjó mér talsverð vonbrigði. Ekki það eitt, að mér virtist þessum síðasta þætti í sögu Borgarættarinnar gersamlega

ofaukið. Svo laglegur sem hann var, þá fanst mér hálfgerzt mysu-bragð að honum eftir annað eins góðvín og »Eineygða Gest«.

Nú er komin ný skáldsaga eftir Gunnar Gunnarsson, talsvert lengri en hinar eldri sögur hans. Því verður ekki neitað, að framleiðslan er mikil. Höfundurinn hlýtur að vera óvenju mikill afkastamaður. En álitamál er það hvort framleiðslan er ekki of ör.

»Strönd lífsins« hefir Gunnar kallað þessa stærstu frásögu sína. Erlendis hefir hún fengið hinar beztu viðtökur meðal ritrýnenda. Eg legg nú annars ekki mikið upp úr gumi sumra erlendra ritrýnenda. Margt og mikið af því, sem þeir ljúka lofsorði á, finst mér ekki eiga neitt lofsorð skilið og sumt af því naumast vera á borð berandi fyrir almenning, svo andstyggilega ljótt sem það er.

Eitthvað af því, sem eg las um skáldsögu þessa — það voru ósvikin lofsorð um söguna — vakti þó í sálu minni allmikla tilhlökkun til að kynnast heppi nánar. Eg gerði mér í hugarlund, að þar kæmi einhver »óður til lífsins«, sem yndi væri að lesa og vekti ljúfar tilfinningar í sálu lesendans.

En þar skjátlaðist mér meira en lítið.

»Strönd lífsins« er frá upphafi til enda einn hinn átakanlegasti »bólsýnnar boðskapur«, sem eg hefi lesið nú í mörg ár. Þar sér óvísða til sólar. Eða réttara, sólin fær sjaldan að skína stundinni lengur fyrir dimmviðris-bólstrum lífsins. Hið góða, sem mennirnir vilja, fær ekki að njóta sín fyrir mannvonzkunni í ömurlegustu myndum. Óvættir eða illvættir lífsins ganga hér ávalt sigrihrósandi af hólmi. Hugsjónamennirnir, þeir sem eitthvað gott og gagnlegt vakir fyrir, verða að lúta í lægra haldi fyrir hinum, þjónum varmenskunnar. Hinir síðarnefndu halda velli, hinir fyrnefndu aunaðhvort deyja fyrir tímann eða verða vitskertir eða fara til Vesturheims, því hér heima snýst alt í móti þeim. Alt þetta verður skiljanlegt, er vér athugum hverja skoðun höfundurinn virðist hafa á lífinu.

Lífið er »ekki annað en strönd, sem oss skolar upp á, — þar sem vér brjótum skip vor — hver á sinn hátt. Lífið leikur með oss eins og lymskufull aldan, það brosir við oss að eins til þess að gera vonbrigðin — örvæntinguna — enn meiri eftir á«.

Að vísu leggur höfundurinn þessa lífslýsingu sturluðum manni á varir, en öll sagan virðist bera með sér, að þetta sé líka skoðun höfundarins á lífinu — sé sá »sannleikur«, sem »Strönd lífsins« er

ætlað að flytja lesendunum. Er hugsanleg öllu ömurlegri skoðun á lífinu? Verður yfir höfuð komist lengra í bölsýni?

Prédikarinn í gamla testamentinu, sá bölsýnnar boðberi, verður hreinn bjartsýnismaður hjá þessu. Hann sá þó ávalt einn ljósan blett í tilverunni, svo fulla af hégóma og einberum hégóma, sem hann annars áleit hana vera. Þessi sólskinsblettur hjá Prédikaranum gamla var sannur guðsótti, lifandi traust á guði. Í »Strönd lífsins« virðist jafnvel þessi sólskinsblettur lífsins vera látinn reynast einber hégómi. Hin trúarstyrka höfuðpersóna sögunnar — síra Sturla Sveinsson — lendir um síðir í hreinni guðsafneiton. Traustið á guði, sem hann hefir lagt svo mikla áherzlu á í prédíkan sinni og brýnt svo fastlega fyrir sjálfum sér og öðrum, molast sundur, þegar mótlætisstormarnir skella á.

Þessi átakanlega bölsýni gerir manni blátt áfram erfitt að komast gegnum söguna. Manni, sem lítur bjartari augum á lífið en höfundurinn, verður lesturinn nærri því kvöl. Honum finst hér komið út í ópolandi öfgar og myndin öll, sem hér er dregin upp, vera ósönn og fjarri virkileikanum. Aðrar eins mannfylur og þar eru sýndar, kannast hann ekki við að hafa rekið sig á, sízt jafn margar og hér, samankomnar í nokkuru íslenzku kaптúni. Jafngerspiltur hugsunarháttur og t. a. m. skín fram af tali fiskverkunarkvennanna, er naumast til hjá íslenzku alþýðufólki, og óþokkar eins og Thordersen faktor, og enda læknirinn, eru sem betur fer ekki á hverju strái. Höfundurinn hefir bersýnilega gert sér alt far um, að gera prestinn, höfuðpersónu sögunnar, svo úr garði, að hann vinni samúð lesendanna. Og það hefir honum tekist. En ekki á sú persóna mikið skylt við virkileikann. Hann minnir að sumu leyti á prestiinn Storm hjá Hall Caine. Finnur á Vaði er aftur miklu íslenzkari í húð og hár.

Og þó er saga þessi, þrátt fyrir alla sína bölsýni og þrátt fyrir allar syndirnar á móti virkileikanum, þrýðilega sögð. Það dylst ekki eitt augnablik, að Gunnar Gunnarsson er skáld, sem mikils má vænta af. En hann virðist af langri dvöl erlendis, vera orðinn of ókunnugur lífi og hugsunarhætti manna hér á landi til þess að geta gefið sannar lýsingar á því. Útlendingum, sem ekkert þekkja til, má að vísu alt bjóða, sé að öðru leyti vel frá því gengið, en löndum höfundarins getur ekki á sama staðið um það, hvort útlendingar fá réttar eða rangar hugmyndir um lífið, sem hér er lífað. Og þeim ætti ekki að vera það láandi.

Sigurður Þórólfsson: Á öðrum huöttum. Rvík 1916, VI + 110 s., 4to.

Það mun tæplega ofmælt, að engin grein náttúruvísindanna er jafn háleit og um leið jafn erfið viðfangs til rannsókna, og stjörnufræðin, og engin heldur eins seiðandi og lokkandi út á hinar takmarkalaus og hálu brautir ímyndunaraflsins og hún. Þetta afl stjörnufræðinnar munu flestir, bæði lærðir og leikir, jafnvel þeir, sem aldrei annars veita náttúrunni í kringum sig neina athygli, verða varir við, þegar þeir á heiðskíru, tunglslausu vetrarkveldi horfa á alstirndan himininn, vitandi, að hver einn af hinum ótölulega grúa af tindrandi ljósdeplum, sem hann sér, er regluleg sól, »eins og sú sem skín næst oss« (svo að eg taki mér orð gamla Balle í munn), og að þessar sólir eru dreifðar út um geim, sem enginn maður veit nein takmörk á. Það mun varla fara hjá því, að mennirnir, jafnvel »ofurmennin«, finni þá til smæðar sjálfra sín og alls þess, sem jarðneskt er.

Af þessum ástæðum er það líklega, að í fáum vísindagreinum hefir meira verið ritað fyrir alþýðu, en einmitt í stjörnufræðinni; en því miður hefir íslensk alþýða farið mjög varhluta af því á sínu eiginmáli, eins og í flestum öðrum fræðigreinum, og þekking hennar á stjörnunum eflaust hnignað mikið á síðari árum, síðan klukkurnar komu á hvert heimili og í hvern vasa, svo að segja. Við höfum heldur ekki haft mörgum mönnum á að skipa til þeirra hluta, þar sem enginn Íslendingur hefir hingað til getað gefið sig allan við stjörnufræði.

Úr þessu hefir höfundur viljað bæta með útgáfu þessa bæklinga, sem nefndur er hér að framan. Hann er orðinn til úr fyrirlestrum, sem hann flutti fyrir nemendum Lýðháskólans á Hvítarbakka. Á rúmum hundrað síðum segir höfundur sögu stjörnufræðinnar frá elztu tímum, gefur hugmynd um hreyfingar himintunglanna, lýsir sólu og tungli, reikistjörnum og öðru því, er sveimar í kringum sól vora, bregður sér svo til fjarlægari sólkerfa (sólstjarna eða fastastjarna), og tekur svo til íhugunar líf og lífskilyrði á öðrum hnöttum (en jörðunni). Loks stígur hann »niður« á jörðina aftur og gerir grein fyrir hreyfingum hennar og tímatalinu.

Meira en þetta er varla að ætlast til, að tekið sé til meðferðar í jafnlitlu riti, og verður þó að segja, að höfundur hafi yfirleitt tekið vel meðferðin á jafn margbrotnu og erfiðu efni, og er það því virðingarverðara, sem hann má teljast leikmaður í þessari ment,

og vantar því hina nauðsynlegu undirstöðu sérfræðingsins: víðtæka þekkingu í stærðfræði, mælingafræði, eðlisfræði og efnafræði. Þetta kemur og stundum í ljós hjá honum. Stjörnufræðingur hefði t. d. varla slept þriðju setningunni í Keplers lögum, sökum þess, að hann teldi of erfitt að skýra hana fyrir alþýðumanni, úr því að hinar setningarnar voru teknar.

Sumstaðar veldur málið höfundu nokkurum erfiðleikum á ljósri framsetningu, og er það vorkunn, því að lítið hefir verið ritað á íslenzku í þessum fræðum. Þannig talar hann um (bls. 38) ó s ý n i l e g a rauða og fjólubláa liti, þar sem átt er við ú l t r a rauða og fjólubláa. Eg tel æskilegt, að hin útlendu (alm. vísindalegu) fræðiorð hefðu verið sett í sviga fyrir aftan íslenzku orðin, ekki sízt sökum þess, að sum þeirra hafa enn eigi fengið fulla festu í málinu, eða eru lítt kunn.

Heldur kysi eg að kvaðrattölur væru nefndar tvíveldistölur en fertölur (bæði orðin eru í Jónasar orðabók), ef annars er amast við orðinu kvaðrat, það er að vísu í samræmi við »ferfet« og »fermetri«, en þau orð hafa því miður verið löguð eftir hinum rétt hugsuðu samsetningum: ferfætla, ferskeytla, ferflötungur, ferhyrningur o. s. frv., en eru stytting úr lengri orðum.

Óþarfa tel eg það, að setja gæsarlappir á Kelvin lávarð; hann mun, sem vísindamaður, óefað geta staðið á eiginfótum.

Af villum vil eg benda á, að höf. segir, að innra tungl Marz gangi »öfugt« (rangsælis (retrograd) vildi eg heldur segja) við rétta hnattgöngu; það gengur harðar í kringum Marz, en hann snýst um möndul sinn og kemur því upp í vestri og rennur í austri, o: hreyfing sú, sem það ætti að virðast gera sökum dagsnúnings plánetunnar, hefir ekki við hinni.

Myndin af tunglinu (bls. 43) er á hliðinni, o: skautin eru til hliða í staðinn fyrir upp og niður.

Annars var það aðaltilgangur minn með línum þessum, að benda mönnum á hver þetta sem stuttan og handhægan leiðarvísir í því að afla sér þekkingar á stjörnunum og skoðunum vísindamanna á þeim, einkum á síðustu tímum, síðan að eðlisfræðin, efnafræðin og ljósmyndalistin gengu í þjónustu stjörnufræðinnar og vona, að hann geti orðið mörgum að góðu liði.

B. Sæm.

Tólf sögur eftir Guðmund Friðjónsson. Reykjavík, 1915.
186 bls.

Ætti eg að svara þeirri spurningu, hvað það væri í þjóðlífi Íslendinga nú á dögum, sem eg í einu álitu sérkennilegast fyrir þá og lærdómsríkast fyrir aðrar þjóðir, mundi eg í fljótu bragði ekki geta fundið annað svar en: alþýðumenningin þingeyska. Það er trúa mín, að þeir komi tímarnir, að erlendir mentafrömuðir og uppeldisfræðingar læri íslenzku og fari heim, eingöngu til þess að kynna sér þessa merkilegu menningu, þar sem hver er sinn eigin kennari. Alþýðumentunin er enn þá alstaðar á tilraunastiginu, og árangur skólalærdómsins er fjöldi manna áhyggjuefni. Það væri líka æskilegt, að útlendingar vildu hjálpa Íslendingum sjálfum til þess að sjá, um hve eftirtektaverða tilraun hér er að ræða. Mér finst undarlegt, að enginn hefir stungið upp á að stofna lýðskóla í miðri Þingeyjarsýslu, þar sem æskumenn hvaðanæfa af landinu gætu kynst heimilismenntun sýslubúa. En menn sjá oft sít það sem næst þeim er, og Íslendingum er of tamt að leita að agnúunum, í stað þess að reyna fyrst að skilja það, sem frumlegt er og sérstakt, og meta gildi þess. Þingeyingum er fundið það tilforáttu, að þeir séu allir í tómum skáldskap og vanræki aðra þætti menningarinnar — og að mentun þeirra sé að miklu leyti erlent brotasilfur, sem ekki eigi heima á Íslandi. En lítið er nú satt í þessu. Skáldin þingeysku eru sögð góðir búhöldar — og það eru þingeyskir bændur, sem stjórna Tímariti kaupfélaganna og hinu nýja félagsmálatímariti Rétti. Auðvitað mætti segja um fyrsta heftið, sem út er komið af því riti, að þar kenni meira erlends bókvits en íslenzkrar reynslu. En það á þroskann fram undan, og mér kæmi ekki á óvart, þó að félagsfræðingarnir þingeysku þroskuðust á líkan hátt og skáldin, sem hafa stutt sig við útlenda höfunda, meðan þeir voru að finna sjálfa sig. Þorgils gjallandi byrjaði á sögunni »Gamalt og nýtt«, þar sem úir og grúir af erlendum bókatitlum og dönskuslettum, en hann endaði á Dýrasögunum, sem eru skrifaðar út úr hjarta íslenzkra dalabúa og á hreinu og þróttmiklu máli. Og Guðmundur Friðjónsson tugði það á gelgjuskeiði sínu upp eftir einhverjum útlendingi (eða kannske ekki nema eftir Jóni Ólafssyni), að skáldskapurinn væri ekkert nema form — og syndgaði um hríð eftir þessu lögmáli. En hann er kominn langt frá því nú. Þessar sögur eru ekki skrifaðar til þess eins að dilla fegurðartilfinning manna og skemta með fögrum orðum. Sama lífsskoðunin er þar alls staðar í baksýn og kemur víða berlega fram.

svo að höfundurinn talar beint til lesandans. Og sú lífs skoðun er ekki sótt í erlendar bækur, heldur lærð í íslenskum reynsluskóla. Þess vegna verða algengar lífsreglur — að kunna sér hóf og sníða stakkiun eftir vexti, að muna að lífið er alvara og ekki leikur, að beita skynsamlegri hörku við sjálfan sig — nýjar í munni hans. Síðustu blaðsíðurnar af »Hetjan horfna« eru ekkert annað en veraldlegur Jónsbókarlestur, en þar er varla nokkur setning, sem missir marks. Ber er líka umbótastefnan í kaflanum um hjónaefnin tvönn (bls. 132—33), þar sem önnur draga sig saman í rökrinu, hugsa saman og vinna saman, svo að tilhugallífið verður eins og búskapur og hjónabandið eins og tilhugalíf —, en hin finnast um helgar og eru í háa lofti, þangað til hjónabandið kennir þeim, að lífið er bláköld alvara og enginn leikur. Þessi hugsun er margsögd, en hún er hér gerhugsuð á íslenzku og varla betur sögd á öðru máli. Prestarnir á Íslandi gerðu gott verk, ef þeir vildu velja þennan kafla fyrir ræðutexta einu zinni á hverjum tveimur misserum.

Varla fer hjá því, að lesandinn líti stundum öðrum augum á efnið en höfundurinn. Í sögunni »Vegamót« hlýtur nokkuð af samúðinni að fylgja »útlendingnum«, búfræðingnum unga, sem leggur út í ófæruna og hrapar ofan í Svörtuskál. Þessi maður teflir djarft, og sá er ekki tómur uppskafningur, sem leggur lífið undir; í honum er sama efnið og hetjur eru gerðar úr. Og í sögunni »Útan og innan við sálubliðið« þykir mér höfundur líta óþarflega vandlætingasömu hornauga til hjónaefnauna, sem stikla á leiðunum í kirkjugarðinum, full af ungri hamingju og án þess að hugsa um hin döpru forlög, sem hafa endað undir torfunum. Því að þessi bölgleyska mannanna er eitt af lífsskilyrðum þeirra og hefir aldrei átt meiri þakkir skilið en nú á styrjaldartímunum. En þó er þetta ekki svo að skilja, að Guðmundur hafi misskilið hlutverk sitt í þessari sögu. Bölgleyskan getur orðið að kæruleysi um sorgir annara, og gegn því kæruleysi, sem oft kemur af sljófu ímyndunarafla, eiga skáldin að vega. Og það er vel gert í sögunni af hjónunum í Hlíð, sem eru að fara með barnið sitt til greftrunar. Við þá sögu mun margur vikna, þótt hann annars sé engin beygja. Og svo fléttar höfundurinn inn í þessa sögu stuttum þáttum um annað fólk og aðrar sorgir, sem búa þar undir nýuppgerðum leiðum. — Enn þá man fólk þá, og þó ekki nema aðaldrættina, einu sinni voru þær sorgir þó jafnnýjar og sárar og harmur Hlíðarhjónanna nú. Hann á fyrir höndum að fölna og gleymast síðan — og

alt að hverfa innan um ókend leiði og týndar sorgir —. Með þessu móti víðakar höfundur efnið í hendi sér og knýr lesandann til að litast um. Hér eru þá »útúrdúrarnir« kostur, en ekki galli, nema hvað þykkjunni til hjónaefnanna er ofaukið. En annarstaðar kemur fyrir, að sögurnar ná miður tilgangi sínum, t. d. Vofan, af því að heildin er of laus og stefnan reikul.

Guðmundur hefir nú sjálfur skrifað fróðlega og skýrandi grein um sögur þessar og varið sig þar gegn ýmsum tilgátum og aðfinslum. Þar kemur umbótastefna hans berlega fram í þessum línum: »Þær (3: sögurnar) eru um mál efni, en ekki menn, eða áttu að vera«. En þar verð eg að taka málstað skáldsins í helliskútanum á Sandi gegn bóndanum við heygarðshornið. Sögur þessar eru tvíhliða, eins og mestallur góður skáldskapur, þær eru ekki einungis ritaðar í þessum tilgangi, heldur líka af ósjálfráðri þrá til að skapa, þær eru ekki einungis almennar, heldur líka sérstakar, ekki einungis um mál efni, heldur líka menn. Því fer svo fjarri, að siðastefna Guðmundur hafi spilt list hans, að mannlýsingar hans hafa aldrei verið auðugri og skýrari en hér og stíll hans aldrei smekkvísari og þróttmeiri. Margar óþarfa umbúðir, orðskrúð og málalengingar, náttúrulýsingar, sem ekkert koma efninu við, hugleiðingar út í bláinn o. s. frv., falla eins og visin blöð utan af skáldriti, þegar höfundurinn vill eitthvað og ekki skrifar til þess eins að skrifa. Lífsgildið og listgildið eiga þar algerlega samleið.

Guðmundur segir í grein sinni, sem um er getið, m. a.: »Eg hefi verið göngumaður milli útgefenda og komist stundum ekki inn úr dyrunum — eða þá eftir langa bið«. Þetta er enginn barlómur, þó að höf. sé búmaður. Mér er kunnugt um, að íslenzku bóksalarnir hafa verið fimm ár að hugsa sig um, hvort þeir ættu að gefa sögur þessar út. Frá höfundar hendi voru þær fullgerðar veturinn 1909—10. Slík eru kjör eins af allra helztu rithöfundum Íslendinga á 20. öld eftir Krists burð.

Ef þessar sögur hefðu verið 1000 krónur í peningum, sem hefðu legið óhreyfðar á kistubotni í fimm ár, eða áveituskurður, sem vatninu hefði verið veitt í jafnmörgum árum eftir að hann hefði verið fullgerður, þá hefði verið hægt að gera nákvæma grein fyrir verðfalli og vaxtatapi. Hagfræðin okkar er þetta langt á veg komin. En hver vill nú reikna út, hvað bóksalarnir hafa haft af íslenskri menningu með því að kviksetja sögurnar þær arna í fimm ár? Það mun verða bið á nákvæmu svari. Sýnir þetta eins og fleira, hve skamt mannkynið er enn á veg komið. Menn vita, að

til eru andleg verðgildi, en mat þeirra er alt á reiki og enginn vísindalegur grundvöllur undir því. Við Íslendingar erum þar á ofan eftirbátar margra annara í þessu tilliti, þó að við höfum illa efni á því. Og þarna er nú áþreifanlegt og einfalt dæmi til ihugunar.

Sigurður Nordal.

Ágúst H. Bjarnason, prófessor, dr. phil.: **Drauma-Jói**. Sannar sagnir af Jóhannesi Jónssyni frá Árseli, tilraunir o. fl. Reykjavík 1915.

Öllum Íslendingum, þeim er láta sér ant um rannsókn dularfullra fyrirbrigða, hlýtur þessi bók að vera kærkomin. Hún er um mann norður í Norður-Þingeyjarsýslu, sem virðist stundum í svefni: 1) sjá aftur í tímann, atburði, sem hann getur ekki hafa vitað neitt um; 2) sjá það, sem er, eða er að gerast í fjarvist hans, meðan hann sefur; 3) heyra álangdar og lengra en venjuleg heyrn nær; 4) sjá atvik, sem eru ekki komin fram, þegar hann sér þau. Frá þessu er skýrt með nákvæmni og vandvirkni manns, sem bæði hefir mikla vísindalega mentun, og líka lagt verulega alúð við að fá að vita, hvað satt sé í sögunum.

Rétt til dæmis skal hér sýnt ágrip höf. sjálfs af einni sögunni (bls. 55): »Jói sér skepnur, sem enginn veit um, á stöðum, sem hann sjálfur hefir aldrei komið á, og sér meira að segja markið á kindunum. Þegar hann er spurður aftur, lýsir hann staðnum, þar sem honum sýndust kindurnar vera, svo nákvæmlega, að maður gengur að þeim og finnur ræksnin af þeim«.

Árangurinn af rannsóknum sínum telur höf. þennan (bls. 177): »af þeim 37 sögum, sem hér eru skráðar, hafa mér talist 13 vera nokkurn veginn fullgildar sannanir fyrir fjarvísi Jóa, en 15 hafa veiklað sönnunargildi; 3 sýna, að Jóa hefir getað skjátlást og 6 verða að teljast óstaðfestar. Þar sem nú 28 sögur af 37 bera að meira eða minna leyti vott um fjarvísi Jóa, virðist vera óhætt að álykta, að Jói hafi haft þessa gáfu til að bera«. Eg hygg, að allir hleypidómalausir lesendur bókarinnar muni verða höf. sammála um þá ályktun.

En þó að mér þyki *Drauma-Jói* ágæt bók, er eitt atriði þar, sem eg er höf. alveg ósammála um. Og um það efni, geri eg mér í hugarlund, að eg geti talað af eins mikilli þekkingu eins og aðrir menn hér á landi. Á einum stað, þar sem höf. er

að tala um örðugleikana við að skýra fjarvísigáfuna, kemst hann svo að orði: »Andatrúarmenn eru nú raunar ekki lengi að skýra þetta frekar en annað með þeirri allsherjar-skýringu sinni, að slík vitneskja stafi þá af »hugsanaflutningi« frá sálum framliðinna«.

Eg veit reyndar ekki, við hvaða menn höf. á með orðinu »andatrúarmenn«. En eg held, að hverja merkingu sem hann leggur í það, séu ummælin röng. Ef höf. á við þá alla, sem hafa orðið sannfærðir um það, að unt sé að ná sambandi við framliðna menn; þá lenda í þeim hópi aðrir eins menn og prófessorarnir W. F. Barrett og Sir Oliver Lodge. Engum orðum þarf að því að eyða, að þeir halda ekki fram neinni slíkri »allsherjar-skýringu«. En þó að höf. eigi við, til dæmis að taka, þá menn, sem standa að aðal-málgagni spíritista á Englandi, vikublaðinu *Light*, þá eru um-mælin jafnfráleit.

Sannleikurinn er að öðru leytinu sá, að enginn spíritisti, sem nokkurt mark er tekið á — og eg hygg helst alls enginn spíritisti — mundi setja fjarvísigáfu Drauma-Jóa í neitt samband við hugsanaflutning frá sálum framliðinna manna — og að hinu leytinu sá, að spíritistar eru í flokki þeirra manna, sem gera mest úr þeim dularhæfileikum, sem með mönnunum búa. Mörgum þeirra eru þessir hæfileikar, sem svo lítið fá notið sín í þessu lífi, ein af ljós-ustu bendingunum um, að menuirnir eigi annað tilverustig í vændum.

En hafi höf. hvorki átt við sálarrannsóknarmennina, eins og Barrett og Lodge, né heldur við spíritista, þá veit eg ekki, við hverja orðið »andatrúarmenn« á.

Það er mikið gleðiefni, að prófessorinn í heimspeki hér við háskólann hefir fengið áhuga á rannsókn dularfullra fyrirbrigða, ekki sízt þar sem hann er jafn-snjall rithöfundur eins og Ágúst H. Bjarnason er. Hann hefir áður (í *Andvara*) lagt góðan skerf til fræðslunnar um það, að manngerfinga-fyrirbrigðin gerist í raun og veru. Með þessari bók hefir hann sannað fjarvísigáfuna hér á landi. Óskandi væri, að hann sæi sér fært að gera fleirum svonefndum dularfullum fyrirbrigðum sömu skil. Hvað sem menn kann að greina á um, hvaðan sum þeirra stafa. Þá er ekki sjáanlegt að nokkur maður sé neinu bættari fyrir þann hugarburð vanþekkingarinnar, að þau séu ekkert annað en hindurvítni.

Einar Hjörleifsson.

Einar Hjörleifsson: Sálin vaknar. Þáttur úr sögu æskumanns. Reykjavík MCMXVI. Þorsteinn Gíslason.

Þar hefir Einar Hjörleifsson gefið bókmentum vorum góða bók.

Góða bók kalla eg ekki neinn ábæti, sem menn gæða góm sínum á eftir marga rétti matar og engin næring er í, eins og sumar smásögur, er tímarit okkar og blöð hæla hvert í kapp við annað, af því að sagt er frá efnisleysu þeirra eftir lögum góðrar frásögu-listar. Slíkt getur ekki bjargað frá eilífri útskúfun. Hjartað er meira virði en formið. Hugsjónatómar lýsingar, vilja og hitalausar, lúka ekki einar upp hliðum Paradísar fyrir skáldum og skáldritum, þótt þær beri vitni sálarglöggleiks og nákvæmrar eftirtektar. Merkisbækur verða ekki taldar aðrar en þær, sem spróttnar eru af andagift og samúð, hugsjónum eða vilja. Hér er eingöngu átt við skáldrit, eins og menn sjá. Mjög skiljandi samúð, hagar skaparahendur og skáldleg eftirhermulist, sem nær orðalagi hverrar talandi mannveru, karla og kvenna, æðri og óæðri nú orðið, einkenna seinustu skáld sögu Einars Hjörleifssonar og veita henni verðmæti.

»Sálin vaknar« er Reykjavíkursaga. Höfuðhetjan er blaðamaður, eins og í »Syndum annara«. Er það ekki óeðlilegt, að blaðamenskan verði jafngömlum blaðamanni og ritstjóra og skáldinu drjúgt yrkisefni. Og hún er nútíðarsaga svo mikil, að þar verður ekki komið fæti fram. Dularfull fyrirbrigði eru þar leidd inn í kórinn í kirkju bókmenta vorra. Dagblöðin, smábörn menningar vorrar, koma þar öllu af stað. Og vér minnumst við lesturinn lungnabólgunnar, er gekk hér fyrir tveimur árum og varð mörgum manni að bana. Og ef því er bætt við, að ytra efni sögunnar er morð og afskipti ungs ritstjóra af því, þá sjá menn óðara, að ekki þarf lengi að leita viðburðarins, er orðið hefir smíðafni skáldsins. »Sálin vaknar« segir því frá fágætum atburði vor á meðal, segir frá undantekning. Hún er að ekki litlu leyti saga undantekninga. Það verður að teljast til þeirra, á hvern hátt morðið kemst upp, áhrif þess á hugarfar ritstjórans, sinnaskiptin sömuleiðis, svo skyndilega sem þau gerast. En söguhetjurnar eru að mestu almennrar tegundar, vér höfum bæði heyrt til þeirra og séð, könnuð við hugsunarhátt þeirra, tilfinningar og tal. Þær eru smíðaðar úr sama efni og vér eða förunautar vorir á lífsleiðinni.

»Sálin vaknar« minnir mig á tvo vegu á sumar beztu forn sögur vorar, bæði í skýringum eða rökuðuðningu á athöfnum og breytni sögumanna og í efnisskipun. Það hefir verið sagt um Njálu, að höfundur hennar hafi haft, að kalla, seinustu línuna í

huga, er hann reit hina fyrstu. Á líkan hátt má segja um þessa nýjustu góðbók íslenzkra bókmenta, að skáldið hafi haft seinasta kaþítulann í huga, er hann reit hana fyrsta. Öll efnisskipunin virðist gerð með mjög íhuguðu ráði. Í rauninni eru efni bókarinnar tvö, morðið og raunasaga morðingjans og endurfæðing eða hugarfarsskifti ritstjórans, og þau eru tvinnuð mjög fast og eðlilega saman. En aðalefnið, siðþroskasaga Eggerts, felst í fyrsta kaþítula, sagan er eins og undin út úr fyrsta þættinum. Meginefni bókarinnar er sem runnur, er sprettur upp af þeirri rót. Þar ber ummyndunina á góma, sem varð ritstjóranum unga næsta afdrifamikil, og þar sjást tveir höfuðstrengir skapferlis hans, sem brátt mun sýnt. Skýringin (motivering) í þessari sögu minnir og að nokkru leyti á skýringar fornsagna vorra. Fornsögur vorar rökstyðja ráðlag, athafnir og örlög á tvennan hátt: á eðlilega vísu, með skapferli persónanna og sambandi þeirra við samtíðarmenn sína, siðalög og ríkislög, og á yfirnáttúrlega vísu, með örlögunum. Það er feigðin, forlögin, sem valda því, að Njáll ræður sonum sínum að fara inn, er Flosi kom brennunóttina að Bergþórshvoli. Í þessari bók virðast mér skýringarnar líka tvenns konar, tvöfaldar, aðrar eðlilegar, hinar dularfullar. Dularfullu fyrirbrigðin eru komin í stað örlaganna.

Innra meginefni sögunnar er það, að ungur ritstjóri vaknar allt í einu af svefni hugsar- og hirduleysis um tilfinningar annarra manna, vaknar »á snöggu augabragði« með miklum andfælum til æðra lífs. Mörgum lesendum þykir víst, að minsta kosti í fyrstu, svo mikil skapskifti gerast með skjótum hætti. Mannlegt hugarfar þroskast og breytist hægt og seinan, eins og líkaminn, en ekkert í hug vorum vex þó eins draugslega seint og siðlegur þroski. »Mikilvægustu atburðir og byltingar«, segir þýzkur heimspekingur, »koma ekki inn um framdyrnar með lúðrabýt og bumbuslætti, heldur fara þær hægt og hljóðlega inn um bakdyrnar«. Er þetta bæði talað af andagift og djúpviturlega hugsað, og á hvergi betur heima en um siðferðisþroska og byltingar í þeim efnum. Það reynist víst langoftast svo, að stórvægileg ytri atvik breyta innra manninum ekki ýkjamið. Hér í skáldadraumum Einars Hjörleifssonar gerist stórkostleg siðferðisbreyting í skapi aðalmanns sögunnar, og það á örstuttri stund. Íslenzkir ritdómarar lúka oft miklu lofsorði á skáldsögur, þar sem persónurnar eru sjálfum sér samkvæmar, sem þeir kalla það, eins og vér menskir menn, veikir og breyskir, sem feykjumst oftast eins og strá fyrir vindi, séum sjálf-

um oss samkvæmir! Eggert er sjálfum sér svo ósamkvæmur sem verða má í ráðlagi og breytni. Ætla mætti því, að aðalpersóna sögunnar sé stórbrot gegn íslenskum ritdómaraboðorðum og listkreddum. Spurningin er nú, hvort þessi bylting í huga Eggerts sé eðlileg, svona hljóti hann að breytast. Er það ekki lítil skáldraun að ganga vel frá slíku, að rökstyðja svo skjót skapskifti. Og það er ekki heldur auðskorið úr, hvort skýringin nægi. Það vantar góð mælingatæki á þeim slóðum. Lífinu hugkvæmist sjálfu furðumargt. En skylda lesendanna er að skilja, að skýra sem best fyrir sér alla röketuðning skáldsins.

Höf. hefir hér gripið til dulrænna fyrirbrigða. En hann skýrir líka á annan hátt, á eðlilega vísu, og að því atriði vík eg fyrst.

Vér kynnumst Eggert lítið á uppvaxtarárum hans og námsárum. Hann er spurður, hvaðan í veröldinni honum sé komið andlit sitt, og úr því verða minnisstæð áflog og bardagi. Þetta sýnir nokkurn afbrigðileik, og hann lætur sér ekki allt fyrir brjósti brenna. Hann hættir námi að stúdentsprófi loknu, unir ekki lesta-gangi á þeim vegum, og fer að fást við blaðamennsku. Veigamestu vitneskjuna um hann fáum vér af samræðum móður hans og konsúlsins í trúlofunargildi þeirra Svanlaugar:

»Stundum finst mér hugur hans«, segir móðir hans við konsúlinn, »stefna að því fremur öllu öðru, að hafa sig eitthvað mikið áfram í veröldinni. Þér trúist því líklega ekki . . . en þá er eg venjulega dálítið hrædd.

— Hvers vegna? spurði konsúlinn.

Af því að mér finst, að þeir, sem það komast, séu oft, þó ekki sé það æfinlega, svo óbilgjarnir og meti svo lítils rétt og tilfinningar annara manna og að þess vegna komist þeir áfram«. — — —

— — »En svo er annað veifið, mælti hún enn fremur, að mér finst eins og hann muni geta fengið verulega ástriðu fyrir því sem gott er, eins og meðaumkuniu og sjálfsfórnin sé hans eina eðli. Og þá verð eg líka hrædd.

Hvers vegna verðist þér það?

Það er sjálfsagt af því, að mig vantar svo mikið á að vera góð, og mér finst veröldin heimta af okkur svo mikið jafnvægi . . . líka í því, sem gott er. Það er heimtað af okkur að hnitmiða alt svo nákvæmlega . . . líka kærleikann«.

Hér eru höfuðdrættir skapferlis hans rissaðir, og hvert þeir geti stýrt honum. Hún drepur á óbilgirni hans og ónærgætni,

sem skeytir því engu, þótt hann reki flugbeittan hníf í sár annarra manna, og líka á ástriðuna að gera gott, að hann geti, ef svo má að orði kveða, sýnt líka í því ófyrirleitni, muni ekki gæta þar hófs. Eggert er blindingur af foreldrum sínum, hefir fengið að erfðum skaplyndi þeirra beggja, greind og gæði móður sinnar og harðneskju Sölva gamla, föður síns, er lét bera tólf barna föður út af jörð, sem hann átti. Svipurinn með mæðgininum er gefinn í skyn, er sagt er, að mörgum sýnist hann lifandi eftirmynd móður sinnar. Foreldrar hans eru báðir á hugkærri hans, svo komið sé líkt að orði og Egill. Í fyrstu stendur Sölvi við stýrið, en mjög skyndilega tekur móðir hans við. Það er breytingin, sem gerist í hug honum. Það ber nokkuð á þessum ólíku straumum í sál hans þegar í byrjun sögunnar. Þá er hann uppgötvar morðið, sér hann þar óðara leik á borð. Vonir þjartrar framtíðar stíga dansinn í ímyndun hans. En þá skýtur upp efasemdum. »Til hvers var að vinna?« spyr hann. »Sál hans vaggast ofurlitla stund á öldum efasemdanna«. »Var þetta líf ekki einhver helvískur trölladans . . .?«

. . . Og var hann ekki sjálfur . . .?«

Í þessum spurningum sjást fræ góðsemi hans, er síðar verður ofan á í skapi hans. Með þeim og orðum móður hans við konsúlinn gerir skáldið sinnaskifti hans eðlilegri, stökkið milli nýs og gamals lífnis sýnist ekki eins stórt, er vér minnumst þeirra. En skapferli Sölva gamla ræður um tíma — Eggert notar sér morðið miskunnarlaust, saklaus maður er handtekinn og varpað í fangelsi eftir bendingu hans, hann segir rækilega og hlífðarlaust frá móður hans, hvernig henni varð við, er lögreglan sótti Bjarna son hennar. — Höf. hefir mjög glögt auga á ónærgætni manna hvers við annan. En nú lendir Eggert í hverjum bylnum á fætur öðrum, og það fær mjög á hann. Álfhildur, móðir Bjarna, er grunaður var um glæpinu og tekinn eftir tilvísun hans. heimasækir hann á skrifstofu blaðs hans og sýnir honum sundurflakandi sárin eftir brottaskap hans og hirðuleysi, bendir honum á, að fylla megir sig á fleira en afengi, t. d. eigingirni, og nær þá tökum á honum, þótt hann talaði við hana borginmannlega í fyrstu. Hún heillar huga hans með spaklegum at-hugasemdum um mannlífið. Hann verður hrifinn af móðurást hennar, sem ekkert getur dregið úr. Hún segir honum fallegar sögur af syni sínum, hann kemst á band hennar, áður en hann veit af, og skammast sín fyrir athæfi sitt. Og þegar hún talar um samband sitt við guð, hlustar hann hugfanginn á mál hennar. Seinna segir hann, að sér hafi fundið þetta hafa verið í sál sinni frá því að

hann var barn. En þetta, þessi eðlilega skýring, dugir skáldinu ekki. Hér bætist stórfyrirbrigði við, og það virðist skáldið telja aðalatriðið. Hann sér Álfhildi ummyndast í skrifstofuhorninu: »Skotið, sem Álfhildur gamla sat í, var orðið fult af undarlegum, himneskum ljóma«. — — Þar var nú komin »dýrleg vera, meira en ung, smynd æskunnar sjálftrar, guðdómlega fögur, brosandí eins og barn, með vitsmuni alheimsins glampandi í augunum.« . . . »Hann hafði séð eitthvað af þessari konu, eins og hún var í raun og veru. Hann hafði séð glampa af dýrð mannsálarinnar«. Augu hans lúkast upp, og hann sér nú inn í sál sína og lítur yfir allar gerðir sínar, og það fer hryllingur um hann, er hann hugsar til þeirra. Hann hefir ekki tekið Álfhildi til greina, fremur en hún væri dauður hlutur. Hann verður að jata, að hann hefir óskað þess, að sonur Álfhildar væri sekur, væri glæpamaður. Og nú dynur fleira á hann. Gamli Runki dembir yfir hann spurningunni: »Finst yður ekki hálfálæg atvinna að græða á manndrápum?« og hann kennir sáran til eftir það högg.

Síðan ryðst sanni morðinginn inn í líf hans. Hann segir honum harma sína sára, lýsir logandi brennivínsástríðu sinni — er sú lýsing áhrifamikil og rituð af mikilli list. Ritstjórinn sannfærir fyrir ábrif dularfulls fyrirbrigðis um sekt hans. Menn sjá, að það kveður ekki lítið að dulskynjunum í bókinni, og þeim beitt til skýringar á breytingum og breytni aðalmanns sögunnar, jafnframt skýringum annars og venjulegra eðlis. Hann leggur mikið kapp á að frelsa son Álfhildar gömlu, og hann nær líka játningunni upp úr morðingjanum, Þorsteini. Óhamingja hans vekur nýja samúðaröldu í sálu hans, af því að hann skilur, að hann hlaut að fara svo að sem hann gerði. Hann finnur, að þeir eru bræður. »Eg finn, að það er mjög líklegt, að eg hefði getað gert alt það sama og hann, ef eins hefði staðið á um mig,« segir hann við móður sína. Hann er nú gersamlega umbreyttur, orðinn nýr og betri maður. Fágætt furðuverk hefir hér gerzt. Og hann skýtur morðingjanum undan og lendir sjálfur í tugthúsinu fyrir. Orð móður hans hafa ræzt. Hann gætti ekki hófs í góðverkum sínum. Hann berst nú með jafnmiklum ákafa og sömu ófyrirleitni fyrir bágstöddum og ógæfumönnum, og hann vann áður fyrir hagsmuni sína og blaðs síns, og er í því sýn sálarþekking skáldsins. Það er ummyndun Álfhildar, sem þessari stórbyltingu veldur og veitt hefir aflstraum hæs í alt annan farveg, í aðra átt, að öðrum ósi. Á þá skýring virðist skáldið leggja áheizlu. Það sést vel í seinasta kaflanum, á viðtali þeirra

konsúlsins og ritstjórans í tugthúsinu. Ef menn vilja skilja vel söguna, verða þeir að lesa þann kafla rækilega.

Að baki þessari sálarlýsing felst líklega sú hugsun, að vér mennirnir séum svo hlífðarlausir hver við annan af því, að vér höfum ekki uppgötvað sálina hver í öðrum, ekki séð dýrð hennar og dásemd. Og Álfhildur sýnir, hvernig á að lúka upp augum vorum. Og ef það tekst, að minsta kosti á líkan hátt og henni tókst, þá vaxa mönnum samúð og nærgætni.

Gera má ráð fyrir, að ófreskisgáfa ritstjórans og dulræn fyrirbrigði, er fyrir hann bera, orki nokkurs tvímælis, ekki sízt þar sem þau gerbreyta honum, og mörgum þykir víst, sem þar sé skáldið komið út fyrir lönd listarinnar, telja þetta óeðlilegt, ósennilegt. Líklega fer mörgum eins og þeim, er þetta ritar, að þeir kannast ekki við slík fyrirbrigði úr lífi sínu, þeir geta ekki dáðst að því, hve trú sé lýsingin. En þess verður að gæta, að höf. skýrir hvergi þessi fyrirbrigði. Hann lýsir hér aðeins einkennilegu sálarástandi, sem kallast dularfull fyrirbrigði, og áhrifum þeirra á mannshugann. Ef lýsingin er sönn, ætti að vera eins leyfilegt að lýsa slíkum afbrigðum og ofsjónum og missýningum. Og lýsingin á þessum fyrirbrigðum er merkilega skýr, t. d. er Eggert verður var við, að eitthvað sé á sveimi í skrifstofu sinni. Það bendir á, að hér segi skáldið frá einhverju svipuðu og hann hefir lifað, eða hann hafi það frá einhverjum, er líkt hefir komið fyrir. En skáldið hefir létt sér verk sitt, er hann lét þessi dularfullu fyrirbrigði valda straumhvörfum í sál hans, í stað þess að láta góðvild og mann-gæði vaxa þar smámsaman. Skáldglöggur maður hefir sagt við mig, að höf. hefði getað slept þar öllum dularfullum fyrirbrigðum. Þau væru þar óþörf — hinar skýringar hans væri nógar. Um áhrif þeirra á uppgötvun morðmálsins er þetta vafalaust rétt. Meiri vandi er að skera úr, hvort sinnaskifti ritstjórans eru þar fullskýrð á eðlilegan hátt. Að minsta kosti eru engin tvímæli á, að betur hefir hepnast rökstuðningin á megnu hamingjuleysi Þorsteins. Lesendurnir finna undir eins, að svona og engan veginn öðruvísi hlaut að fara fyrir honum, alveg eins og Eggert fanst, að net ógæfunnar voru svo úr garði gerð, að hann gat ekki smogið gegnum möskvana.

Það er eftirtektavert, að hér bólar á efasemdum um, hve mikið mark sé takandi á dulskynjunum. »Efasemdir fylgja dulskynjunum eins og skugginn mönnunum. Og hann sagði við sjálfan sig:

— Já . . . hvað sem þetta er nú að marka. Var þetta ekki vitleysa, skynvilla hálfjúks heila?«.

Efinn er ekki enn hœrfinn skáldinu, sem spurði í kvæði einu, hvort nokkuð væri »hinum megin«.

Annars er lesendum og öllum ráð að líta hleypidómalaust á þessi fyrirbrigði, fara þar að dæmi Melans konsúls: »Sýnir yðar og heyrnir læt eg liggja á milli hluta. Eg veit ekkert, hvað þær eru, eða hvernig á þeim stendur, og efast um, að nokkur annar viti það. Samt skal eg ekkert um það fullyrða«. Og ef til vill er skáldunum ráðlegast að minnast þessa, fara að minsta kosti varlega með þau í list sinni, þangað til meira vitnast um þau. En lesendurnir mega eigi láta þau fela sér sýn á list bókarinnar, fegurð og andagift, hversu illa sem þeim kann að líka þau. — Annars virðast ýmsir hversdagsviðburðir og svokallaðar tilviljanir, sem hafa einatt örlögþrungin áhrif á líf vort, alveg eins dularfull fyrirbrigði og þau, er andatrúarmenn segja frá, svo að þeirra þarf ekki eins langt að leita og margir ætla.

En hví fór höf. með dulskynjanir inn í skáldsögu sína? Vegna skáldlegra áhrifa þeirra? Af því að t. d. ummyndunin sýnir svo vel það, sem skáldinu býr í brjósti um dýrð og dásemd mannegrar sálar? Eða vill hann sýna okkur undramátt þeirra og göfgandi áhrif? Eða felst proskasaga skáldsins að einhverju þeyti í þessari lýsingu? Jafngöð bók hlýtur að eiga rót sína að rekja til persónulegrar reynslu. Ef menn bera saman »Vonir« og þessa seinustu bók höf., þá sést þar mikil breyting. Þar bregðast aðalpersónunnar allar vonir »eins og allar vonir bregðast«, hér fer að lokum alt vonum betur fyrir höfuðþetju sögunnar. Eru það dularfull fyrirbrigði, er kveikt hafa þetta ljós, sýnt skáldinu töfradýrð mannelegs hugar? Er saga Eggerts mynd af þessari stórvægi-legu breyting á lífsskoðun og stefnu skáldsins?

Af öðrum mannlýsingum sögunnar má fyrst nefna lýsinguna á Runka gamla. Hún er snild. Karlinn er ógleymanlegur. Vér heyrum hann hrista fram úr sér bryssingsleg ónotin og kaldyrðin, sjáum fyrirlitninguna á svipaum, er einhver minnst á lögregluna. Alt er með einkennilegum blæ, er hann segir. Hann talar í stuttum höfuðsetningum, upphrópunarsetningum og spurnarsetningum. Hjartgróð hleypidómaleysi Melans konsúls fyrnist og seint. Hann er maunúð og manneskja frá hvirfli til ilja og lífur alt af á nið innra. Er gott að eiga slíkan tengdaföður. Það sést í þessari bók, hve samúð skáldsins er víðfeðm, nær til allra stétta. Hann skilur þá

alla jafnvel, sveitabóndann Sölva, sölukarlinn Runka og auðkýfinginn og höfðingjann, Melan konsúl. Hann lýsir stéttahatri, en er sjálfur öllum stéttaríg ofar. Einkennilegt er, að Melan kemur við söguna í upphafi hennar og endi, og við fréttum ofurlítið af honum um miðbikið. Hann er í senn sólarlag hennar og morgunroði, lýsir hana og vermir. Góð er og konsúlsfrúin, ekki svo fágæt hefðarfrú. Við flestar persónurnar skilur höf. þannig, að lesendunum þykir vænt um þær, nema helzt hana. Svanlaug er einna litdaufust þeirra, skáldið hefir lagt minsta rækt við hana.

Þá má ekki gleyma Álfhildi. Hún er ein þeirra ágætiskvenna, er allir batna á að kynnast, sívörð laug, hvernig sem viðrar, þar sem þvo má af flest óhreinindi. Hún er skáld og spekingur í slitnum tötum, brennheit trúkona, kjarkmikil kvenhetja sem fornkonur vorar, trúir á góðleik annarra, af því að sál hennar er full kærleiks og gæða. Er bæði siðleg og skáldleg fegurð í lýsingunni á móðurást hennar og dularfulla sambandi hennar við við guð sinn: »... Eg hefi talað mikið við drottin — — — Eg hefi talað við hann í sólskininu. Þá finn eg, að eg og aðrir smælingjar erum að lauga okkur í óendanlegri blessun frá honum. Eg hefi talað við hann í rigningunni. Eg veit þá, að sorg hans er sorg alheimsins, og að hún er þyngri og dýpri en öll veraldarinnar höf. Eg hefi talað við hann í storminum. Eg veit þá, að hann hefir mátt alheimsins til þess að vernda þá, sem biðja hann. Eg hefi talað við hann á nóttunum . . . einkum á nóttunum. Og friður hans hefir vafist utan um sál mína, eins og himinbláminn vefst utan um fjöllin fyrir augum okkar, eins og sólargeislarnir vefja sig utan um skýin á vesturloftinu með alls konar undarlegum, dularfullum ljóma«.

Það hefir verið sagt, bæði í ritdómum og í samræðum um bókina, að það væri ekki Álfhildur, sem talaði við ritstjóran í skrifstofuskoti hans, heldur héldi Einar Hjörleifsson þar á pennanum. Um hitt ber öllum víst saman, að sá kafli sé fullur andagiftar og fegurðar. Þá er eg las bókina fyrst, fanst mér líkt. En ef menn eiga með þessari athugasemd við það, að gömul kona geti ekki talað svo fagurlega, skjátlast þeim. Og ef átt er við það, að orðalagið sé ekki Álfhildar, leikur vafi á, hvort þetta sé að öllu rétt. Ef menn leggja hugarhlustir sínar vel við, er hún talar, fer vart hjá því, að þeir finni einstaklingsblæinn á orðalagi hennar, nema þá er hún flytur ræðuna um eigingirninna á bls. 82. Þar nær skáldið henni ekki, og þar þekkist rödd hans sjálfs. Og sama má,

ef til vill, segja um þau orð, er áðan voru tilfærð (bls. 86 í sögunni).

Annars sést list skáldsins víst bezt á samtölunum. Þar þolir ekkert nútíðarskáld vort neinn samanburð við hann nema Jón Thoroddsen. Merkilegt er, að persónur hans nota aldrei útlend orð, jafnvel ekki í samkvæmum mentamanna í Reykjavík, svo mjög sem þau tíðkast þó meðal Reykvíkinga, einkum yfirstéttanna. Eg efa, að það sé töluð og hafi lengi verið töluð eins hrein íslenska í nokkru Reykjavíkurgíði og töluð er, þá er þau Svanlaug og Eggert setja upp hringana. En samt er málið eðlilegt í munni allra sögumanna hans. Og lesandinn dáist hvað eftir annað að því, hve vel hann getur hermt eftir öllum. »Náttúrulegt er þetta«, hvíslar eitthvað innan í okkur við lesturinn. Ágætir eru viðræður þeirra feðganna, Sölva og Eggerts, í fangaklefanum. Mætti tína til mörg snildarleg tilsvör og samtöl úr bókinni. Eg bendi að eins á orð Sigríðar gömlu (á bls. 68), í sennunni um morðmálið í Öku-Þór heima hjá foreldrum Eggerts: »Ja . . . guð varðveiti mig . . . Hvernig þið talið«.

En mest er þó vert um samúð höfundar. Hann sér alstaðar manninn, af því að eftir hugsun hans erum við allir bræður, í okkur öllum brennur sami eldur, sama guðdómlega sálin, morðingj-
anum og mentamanninum, fátæklingnum og auðmanninum. Helsta auðkenni lífsskoðunar hans virðist vera furðuleg trú á endalaus göfgi mannglegrar sálar, er mörgum mun lítt skiljanleg. »Við erum líklegast öll eins, mamma . . . inst inni« segir Eggert. »Við erum öll guðir í álögum. Eg hefi séð dýrð guðs á lítilmótlegri gamalli konu«.

»Sálin vaknar« er ef til vill bezta bók Einars Hjörleifssonar. Hann hefir enn sýnt það, að hann er í röð mestu andans manna þessarar þjóðar. Hann er alt af að vaxa.

Sigurður Guðmundsson.

Athugasemdir

við tímataalsritgerð Guðmundar landlæknis Björnssonar.

Eg er ekki rímfróður, en með mikilli ánægju hefi eg lesið allar inar skarpviturlegu athuganir Guðmundar Björnssonar í Skírni 1915 um íslenzka tímatalið. Ritgerðin er víst einstæð í sinni röð, enda hefir vor ágæti töluvitringur Eiríkur Briem, gefið heppi fyrirtaks góðan vitnisburð. Það er að eins tvent sem mér virðist geta orkað tvímælis og skal eg nú koma að því:

Fyrst er þá það, að afar-ólíklegt er að Íslendingar einir allra germanskra þjóða, hafi verið svo afskiftir, að eiga ekki fornu vikudaganöfnin á tungu sinni. Að fornu og nýju eru þessi nöfn sameiginleg öllum þjóðum af ætt Germana og án efa tekin upp í málinu einhvern tíma, eigi mjög seint, í tíð rómverska keisaradæmisins, líklega um líkt leyti og rúnirnar. Fjögur af þeim tíðkast einnig í íslenzkum sögum og skjölum og lifa enn í dag mikið til, svo að þar ber öllu vel saman. Það eru að eins þrjú heitin, nefnilega týsdagur, óðinsdagur og þórsdagur sem norsk lög hafa en eigi íslenzk, samkvæmt orðum höfundarins, en hann viðurkennir, að þau séu notuð í Noregskonungasögunum, sem einmitt bendir fastlega í áttina, að þau líka hafi íslenzk verið, því vissulega eru þær sögur íslenzk ritverk. Og mér þykir alls eigi neitt ólíklegt, að inn áhrifamikli ágætismaður Jón biskup Ögmundsson hafi miklu um valdið, að þau lögðust niður. Það hlýtur að vera varasamt að véfengja skýlausan vitnisburð áreiðanlegra fornrita, er litlu síðar voru í letur færð; því hefði hér verið um einhverja lauslega nafnanýjung að ræða.

eins og G. Björnsson gefur í skyn, myndi þetta alt öðru vísi orðað. Annars lítur út fyrir að miðvikudagsheitið sé gamalt með Germanaþjóðum og hafi verið notað jafnhliða nafninu óðinsdagur, og hefir þá eins og oft vill verða, annað nafnið tíðkast meira í einu héraðinu, en hitt í öðru. Þá verða einungis eftir: »týsdagur og þórsdagur« og þau nöfn er ósennilegt að Íslendinga hafi vantað, úr því þeir höfðu vikutalið, því mjög kunnir voru báðir þeir guðir hér á landi, sem dagarnir eru kendir við.

Þá færir höf. sterk rök fyrir því, að reglan um að láta vetur byrja á laugardag, sé uppátæki rímfræðinga á 12. öldinni. Hann álitur og að vetur hafi áður byrjað á föstudag, svo sem líka er talið í íslenskum ritum frá aldamótunum 1500, og íslensk alþýða hefir talið fram á miðja 19. öld. En það er þessi föstudagsbyrjun vetrarins í upphaflegu tímatali Íslendinga, sem eg er mjög vantrúadur á. Það er næsta ótrúlegt, að þessi regla um vetrarkomu á föstudag, sem aldrei tókst að útrýma, hafi hún áður almenn verið, hefði hvergi gægst fram í neinu fornaldarritanna. Vel má hugsa sér, að þessi regla um föstudagskomu vetrar hafi rétt fyrir 1500 verið tekin upp, af einhverjum misskilningi við biskupsstólana, helst í Skálholti og breiðst svo þaðan með lærðum mönnum út um alt landið og unnið sigur á laugardagsreglunni. Slik áhrif frá höfuðstöðum landsins, má finna í öðrum efnum. Fyrsta staffræðin íslenzka er rituð um 1140. Sá háttur í riti sem þar er lagt til að tekinn verði upp, varð furðu fljótt í öllum höfuðatriðum ofan á í íslenskri ritmensku og breiddist út um alt landið.

Þetta hefir varla getað orðið á annan hátt, en að ritgerðin hafi verið samin og síðan verið notuð námsmönnum til fræðslu, þar sem einhver almennur skóli, fyrir alt landið eða mestan hluta þess, var haldinn, og er þá sjálf-sagt að benda á biskupssetrin, einkum Skálholt. Nokkuð líkt gæti verið með þetta, að telja vetrarkomuna á föstudegi.

Svo sem Guðmundur Björnsson tekur fram, þá er hið

elzta islenzka tímatal með skiftingu ársins í tvö misseri og svo misseranna aftur í vikur, án nokkurs þrítugnættsmánaðartals, afar einfalt og fagurt. Mér finst því sjálf-sagt, að árinu í Surtstali og jafnvel Aratali líka, hafi verið skift í tvö alveg jafnlöng misseri, sem hvort um sig var réttar 26 vikur eða 182 dagar; en ekki að sumarið hafi verið 1 degi lengra en veturinn, eins og er í tímatalinu frá 1500 með vetrarkomu á föstudag, né 2 dögum lengra, svo sem í Rimbeglu og í almanökunum núna, með vetrarkomu á laugardag, því hvorttveggja er heldur klaufaleg og óþörf aðferð.

Eg tel því hér um bil víst, að Blöndutal í Rimbeglu hafi útrýmt algerlega hinni upprunalegu vetrarkomu í Surtstali, sem hafi verið á fimtudag, alveg eins og sumarið byrjar á fimtudag. Rás breytinganna væri þá þessi: Fyrst útrýmdi Blöndutal fimtudagskomu vetrarins í Surtstali með laugardegi sínum, sem svo vel hæfði við þetta nýskapaða mánaðaverk, þar sem alt gekk á réttum 30 dögum. En svo útrýmdi Skálholtstal frá 1500 laugardagskomu vetrar í Blöndutali með sínum föstudegi og loks komu á 19. öldinni almanökin og settu vetrarkomu aftur á laugardag og breyttu þannig Skálholtstalinu, er eg leyfi mér að kalla svo.

Enginn getur neitað, að miklu betur fer á því, að vetur byrji á fimtudag, eins og sumar, heldur en á föstudag eða laugardag. Eiríkur Briem telur ástæðu til, að sleppa 12 mánaðartalinu í yzta dálki almanaksins, og má vel vera, að það sé réttast, enda er eigi unt að sjá neinn skaða við það og enginn myndi sakna mánaðarnafnanna. En eigi að síður er sjálfsagður hlutur, að halda þessu einfalda forn-islenzka tímatali fyrir því, enda er það hvorttveggja fagurt og þarflegt enn í dag eftir islenzkum landsháttum og þjóðarstörfum. Það væri líklega allra réttast, að setja ný lög um islenzka tímatalið, þar sem svo væri fyrir mælt, að bæði sumar og vetur skuli byrja á fimtudag og mánaðatal falla burt, en einungis haldið vikutali í misserum og sumarauki auðvitað hafður sem áður. Þetta

má vel gera hver sem hin vísindalega niðurstaða verður um vetrarkomudaginn að fornu fari. Því meira sem eg hefi hugsað um þetta mál, án þess þó beint að geta annað en fært líkur fyrir hugboði mínu, hefi eg orðið sannfærðari um, að Íslendingar hafi upphaflega látið veturinn byrja á fimtudag alveg eins og sumarið. Ef nú Guðmundur Björnsson finnur ekkert, sem getur verið því til beinnar fyrirstöðu, þá myndi mér þykja mjög vænt um það og telja það fara nærri fullri sönnun á máli mínu.

Kvennabrekku 30. apríl 1916.

Jóhannes L. L. Jóhannsson.

Forn daganöfn.

(Athugasemd við Skírni 1915, 274.—5. bls.).

Eftir Jón prófast Jónsson.

Enginn frýr Guðmundi landlækni glöggskyggni né viðtækrar þekkingar, enda munu fáir treysta sér til að hnekkja dómi Eiríks prófessors Briems um ritgjörð hans »Um íslenzka tímatalið«. Eg ætla ekki heldur að bera það við, en mér finst ekki sízt þörf að mæla á móti því, sem eg tel mishermt eða órökstutt hjá m e r k u m rithöfundum, því á þeim orðum er meira mark tekið en annara, og því er það, að eg bið Skírni fyrir þessa litlu athugasemd.

Það mun víst rétt hermt, að vér vitum ekki, hvort dagarnir höfðu nokkur nöfn eða engin í Noregi á landnámstíð, en úr því að þeir höfðu þá fengið nöfn fyrir vestan haf, þykir mér ólíklegt, að þau nöfn hafi komist fyr í tísku í Noregi en á Íslandi, því að hvað sem annars má segja um vestræn áhrif á íslenzkt þjóðerni, þá finn eg engin líkindi til þess, að þau hafi orðið minni hér en í Noregi, — svo margir landnámsmenn, sem hingað komu.

vestan um haf. En einkum virðist mér ástæðulaust að halda því fram, að með heiðnum Íslendingum hafi síður tíðkast daganöfnin Týsdagr, Óðinsdagr, Þórsdagr, en Sunnudagr, Mánadagr, Frjádagr, og það er alls engin sönnun fyrir þessu, þótt þau 3 daganöfn, er fyr greinir, gangi ekki (eins og hin) »ljósum logum í íslenskum fornritum«, með því að öll þessi fornrit eru yngri en bann Jóns biskups Ögmundarsonar, sem virðist einkanlega hafa hitt þessi daganöfn (Týsdag, Óðinsdag, Þórsdag), er mintu helzt á heiðnu goðin, en síður t. d. Frjádag, þar sem gyðjuheitið var dulið, þótt nafn þess dags væri líka af heiðnum toga spunnið. Fyrsta ritið, sem skrásett var á íslenska tungu (»at Hafliða Mássonar«) var ritað í biskupsdæmi Jóns Ögmundarsonar, að heita má undir handarjaðri hans, ef til vill af klerkum úr skóla hans, enda voru klerkar upphafsmenn bókmálsins, og var því engin furða, þótt þeir forðuðust daganöfn þau, sem einkum þóttu heiðingleg og biskup »fyrirbauð styrkliga«. En að notkun þeirra með alþýðu hafi aldrei verið annað en »tilgerð« og nýjabrum«, finst mér ekki annað en hugarburður hins heiðraða höfundar. Það vísar heldur í gagnstæða átt, að þótt daganöfn Jóns biskups finnist í »elztu íslenskum bókum«, þá haldast hin fornu nöfn samt sem áður í ritmáli Íslendinga og koma fyrir öðrum þræði alt fram á 15. öld. »Snorri Sturluson hefir oftast nær hin eldri daganöfn«¹⁾, og að þau hafa haldist miklu lengur, má sjá af ýmsum bréfum í Fornbréfasafninu, sem íslenzkir menn einir standa að²⁾. Enn í dag stendur »hvíti Týsdagr« í almanakinu, og ýmislegt mælir með því, að vér tökum upp aftur fornu daganöfnin, sem bæði eru þjóðleg og tíðkast með frændþjóðum vorum, enda eru þau mjög hentug að því leyti, að þar hefir hver dagur sérstakan upphafsstaf í voru máli.

¹⁾ Dr. Jón Þorkelsson eldri, í Safni I 164.

²⁾ Dpl. Isl. III 127, 293, 689, 700, 722. 738, 762.

Aldarafmæli hins íslenzka Bókmentafélags.

Eins og boðað var í 2. hefti Skirnis þ. á. var aldarafmælishátíð Bókmentafélagsins haldin 15. ágúst. Í Reykjavík hófst hátíðin með því, að stjórn Bókmentafélagsins gerði sér ferð suður að Görðum á Álftanesi kl. 9 árdegis og lagði krans á leiði Árna biskups Helgasonar þar í kirkjugarðinum. Hafði stjórnin áður látið gera við minnisvarða hans, sem var farinn að bila.

Þá var haldin hin eiginlega minningarhátíð í neðrideildarsal alþingis kl. 1 síðdegis. Var þar fluttur kvæðaflokkur eftir Þorstein skáld Gíslason. Forseti félagsins, prófessor dr. Björn M. Ólsen, flutti afmælisræðuna, lýsti síðan kosningu heiðursfélaga, og skýrði frá heillaóskum, sem félaginu höfðu borist. Að lokum las forseti upp skipulagsskrá fyrir Afmælisjóð hins íslenzka Bókmentafélags, er harn stofnaði með 1000 króna gjöf. Í Minningarriti Bókmentafélagsins, bls. 189—209, er gerð nákvæm grein fyrir því, sem fram fór á hátíðinni, og vísast til þess hér.

Um sama leyti, sem hátíðin var haldin í Reykjavík, var og haldin minningarhátíð í Kaupmannahöfn. Félagsstjórnin hafði mælt til þess, að meðlimir Bókmentafélagsins í Kaupmannahöfn vildu minnast dagsins með því að leggja krans á leiði R. K. Rasks í Assistentskirkjugarði í nafni félagsins, og beðið heiðursfélaga þess, prófessor dr. Þorvald Thoroddsen, fyrverandi forseta Hafnardeildarinnar, að gangast fyrir því. Fór athöfnin hið bezta fram og voru margir Íslendingar nærstaddir. Var legstaðurinn

allur fagurlega skreyttur blómum og blómfestum og kransinn prýðilegur, úr pálmablöðum, lárviðargreinum og stórum, hvítum liljum.

Prófessor dr. Þorvaldur Thoroddsen flutti þar ræðu þá, er hér birtist, en á eftir voru sungin þessi erindi eftir prófessor dr. Finn Jónsson, undir laginu: »Ó, fögur er vor fósturjörð«:

Ein öld er liðin, lagt var fræ,
eitt lítið fræ í jörðu,
það greri síðan ár og æ
á Ísa láði hörðu;
þar óx upp af eitt tré svo traust
með tignum frjóleiks ljóma,
það stendur vorgrænt vetr og haust
með vænan ávöxt blóma.

En sá sem fræið lagði í láð
var lands vors vinur bezt,
sem skildi vort hið veika ráð
og vissi hvað það hresti.
Hann setti tállaus trausta stoð
við tungu og mentum endur,
hans mynd skal rísa á minnisgnoð
á meðan landið stendur.

Ræða

flutt við leiði Rasmusar Kr. Rasks á hundrað ára afmæli hins íslenska
Bókmentafélags hinn 15. ágúst 1916.

Háttvirtu félagsmenn!

Eins og þið vitið heldur Bókmentafélagið í dag í Reykjavík 100 ára afmælishátíð sína. Stjórn félagsins hefir beðið okkur meðlimi hinnar fornu stjórnar Hafnardeildarinnar, að koma saman við gróf Rasmusar Rasks í dag, í þakklátri endurminningu um hið mikla gagn, sem hann hefir gert hinni íslenzku þjóð með stofnun Bókmentafélagsins.

Eg þarf ekki að segja yður mikið frá æfiferli Rasks, hann er flestum kunnur, og svo hefir forseti félagsins ágætlega og ítarlega rakið æfisögu hans í Timaritinu. Eg skal að eins með fáum orðum minnast á nokkur þau at-
riði, er snerta stofnun félagsins.

Á seinni hluta 18. aldar voru margir Íslendingar mjög lærðir í ýmsum greinum, gerðu mikið til að auka þekkinguna um Ísland, íbúa þess og atvinnuvegi, og höfðu mikinn áhuga á að fræða alþýðuna með gagnlegum hug-
vekjum og almennum mentagreinum. Það þarf ekki annað en nefna Eggert Ólafsson, Björn Halldórsson, Hannes Finnsson, Magnús Ketilsson, Skúla Magnússon, Olaf Olavius og ekki sízt Jón Eiríksson. Þá gaf Lærdómslista-
félagið út sín ágætu rit, sem í sumum greinum bera af flestu, sem síðar hefir verið ritað. En alþýðan var þá ekki vöknud og hafði ekki nærri eins mikil not af til-
raunum þessara ágætu manna, eins og við hefði mátt búast. Þá dundi líka yfir allskonar óáran, eldgos, jarð-

skjálftar og margt annað ilt, svo þjóðin var komin á heljarþrómina. Um aldamótin og fyrstu ár 19. aldar var Magnús Stephensen aðalfrömuður íslenzkra bókmenta sem kunnugt er, en hann stóð þegar fram í sótti einn sins liðs; hann reyndi með mesta dugnaði, með ópreytandi elju og stakri ósérplægni að leiða útlenda mentastrauma til Íslands, en margt var til hindrunar, einkum árferðið og deyfð almennings, en hins vegar var Magnúsi eigi vel lagið að ná taki á íslenzkum anda og þjóðlegu sniði á máli og öðru.

Fyrir 100 árum var útlitið fyrir mentun og menning Íslendinga mjög dauft og dýrðarlítið. Þá voru stríðsárin og hallærisárin reyndar nýlega afstaðin, en alt lá niðri í fátækt og framtaksleysi. Landsuppfræðingarfélagið var liðið undir lok, en Magnús Stephensen hafði þó ekki enn þá gefist upp, byrjaði að gefa út Klausturpóstinn litlu síðar, en mjög fátt skráði hann annað; yfirleitt má segja, að bókmentalíf Íslendinga væri þá að eins hjarandi; blómaöld sú, sem í bili hafði runnið upp á 18. öldinni, var um garð gengin, þjóðin var aftur að sofna; nærri ekkert var prentað og ekkert gert til að menta alþýðu eða halda við íslenzku vísindalífi.

Þá kemur Rasmus Rask til sögunnar; hann sá, hve bráðnaðsynlegt var að halda við bókmentaáhuga Íslendinga, hann sá að það þurfti að glæða þann eld, sem var falinn undir arinhellunni, og að það var eigi hægt að gera það öðruvísi en með félagsskap. Rask sá líka, hve þýðingarmikið þetta var fyrir viðhald á þjóðerni Íslendinga og fyrir heiður og framtíð Íslands. Rask segir í bréfi 1817, að það sé sannfæring sín, að ef Íslendingar hættu að halda við bókmentum sínum, þá muni þjóðin smátt og smátt skiljast frá fornöld sinni og þá muni aðrir út í frá ekki gefa um land eða þjóð fremur en Skrælingja. Að koma í veg fyrir þetta segir Rask að hafi verið höfuðtilgangur sinn með að stofna Bókmentafélagið.

Enginn útlendur málfræðingur hefir líklega nokkurn tíma kunnað eins vel íslenzku eins og Rask. Í skóla

lærði hann íslenzkuna orðabókar- og málfræðislaust á Heimskringlu, varð sjálfur að búa sér til málfræði úr orðmyndum þeim, sem hann fann. Íslenzkan varð undirstaðan undir tungumálanámi hans, af henni lærði hann visindalega rannsókn á bygging málanna. Rask fékk því svo miklar mætur á íslenzku, að hann elskaði hana um fram öll önnur mál, og þar af spratt svo ást hans á íslenzkum bókmentum og íslenzku þjóðerni. Hvar sem Rask er staddur, er Ísland jafnan í huga hans; á hinni miklu Asiufærð sinni minnir margt hann á Ísland, hann líkir vegum á Finnlandi saman við Lónsheiði, virðist Volga ekki meiri en meðalár á Íslandi, ber Kalmúkka saman við íslenzka bændur o. s. frv. Í málfræðisrannsóknum Rasks er hin gamla fóstura hans, íslenzkan, jafnan leiðarstjarnan.

Í Kaupmannahöfn komst Rask í kynni við ýmsa Íslendinga og lærði nú íslenzku til fullnustu, svo ferðaðist hann til Íslands 1813—1815 sem kunnugt er, og fór víða um land. Flestir munu hafa heyrt söguna um Rask, þegar hann kom að Reynivöllum til síra Árna Helgasonar vinar síns í dularklæðum sem vinnudrengur úr Vestmannaeyjum. Árni þekti hann ekki í fyrstu og allir héldu hann íslenzkan. Síðar sté Rask í stólinn bæði á Reynivöllum og í Reykjavík og prédikaði svo fyrir söfnuðunum, að áheyrendur, sem ekki þektu hann, efuðust ekki um að hann væri Íslendingur. Það er víst eins dæmi, að nokkur útlendingur hafi talað íslenzku svo vel.

Meðan Rask dvaldi á Íslandi vann hann af kappi að stofnun Bókmentafélagsins, var löngu búinn að sjá að brýn þörf var á því. Á ferðum sínum víðsvegar um sveitir þreyttist Rask aldrei á því, að mæla fram með hinu fyrirhugaða félagi við presta og bændur, svo fjölda margir lofuðu að styrkja það; hann fékk Geir biskup til að senda umburðarbréf til presta og prófasta, sendi út boðsbréf í Danmörku og jafnvel líka á Skotlandi; hafði Rask allar klær í frammi til þess að útvega hinu nýja félagi peninga og er mikil furða hvað honum varð ágengt.

Bókmentafélaginu gafst þegar í byrjun töluvert fé, bæði á Íslandi og í Danmörku, og sýnir það hinn eldlega áhuga forgöngumannanna, að þeim tókst að fá svo marga til að vinna að þessu, bæði að gefa félaginu og að vinna kauplaust fyrir það. Það er mjög athugavert, að framan af fengu engir rithöfundar ritlaun hjá félaginu og það sem merkilegast var, félagsmenn fengu engar bækur fyrir tillög sín, urðu að kaupa þær sama verði sem utanfélagsmenn, urðu þannig að tvíborga þær eða meira.

Það þarf ekki að orðlengja það, Rask var eigi að eins frumkvöðull að stofnun félagsins, heldur líka aðalfrömuður þess og styrktarmaður fyrstu árin, hann setti líf og fjör í allar framkvæmdir, því satt að segja voru Íslendingar heima fyrir, sumir hverjir, æði daufir í dálkinn.

Það var mikið og þarft verk, sem Rask gerði með stofnun Bókmentafélagsins, og Íslendingar mega jafnan telja Rasmus Rask með hinum mestu velgerðarmönnum þjóðarinnar; hann kom einmitt þegar landinu lá mest á. Þó Rask hefði ekkert annað gert en stofna Bókmentafélagið, hefði hann átt skilið ævarandi þökk Íslendinga, en auk þess hefir hann, sem heimsfrægur málfræðingur, viðfrægt íslenzka tungu og íslenzkar bókmentir, svo það mun seint fyfnast.

Í umboði stjórnar hins íslenzka Bókmentafélags leyfi eg mér að leggja þenna blómsveig á leiði Rasmusar Kristjáns Rasks sem lítinn vott um þakklæti og virðingu hinnar íslenzku þjóðar.

Blessuð sé minning hans.

P. Th.

Tunglskinsnótt.

Nú fjarar daginn út í vesturvidd
og værðir tekur sólin undir meið;
en austan kemur njóla, skikkjuskryðd,
hún skundar sína fornu bunguleið.

Í vestrinu er vökustjarna skær,
sem vendir fús að dagsins hvilurönd;
en eystra máni höfðinglegur hlær,
af hrannarbeiði stigin yfir lönd.

Á listasýning út í vesturveg
hann vindur sér um skíra stjörnunátt,
og honum verður heiðin mátuleg —
í hæfi við sinn reynda göngumátt.

Er sendir máni silkislæður mjöll
og sveipar þeim um blundi vígða jörð:
hann gerir fjallið sviplíkt silfurhöll
og sindurgulli merlar lygnan fjörð.

En maurelduð er mjöll af tunglsins yl;
í máli verður fegurð sú ei skýrð.
Í djúpri lotning horfi' eg himins til
og hrifinn af þér, stjörnunætur-dýrð!

Þar depla augum dulin Hávamögn,
er dagsins glóðir fela menskri sýn.
Og nú við þessa næturljóma þögn
er næm á fyrirburði vitund mín.

’Inn fræðileitni hugur fréttu spyr
um fólginna sann í hverri dularrún,
er álfabýlin opna sínar dyr
í endilangri dalsins hamrabrún.

Og jörðin virðist öll með svip og sál,
frá sjávardjúpi að hæsta jökultind.
Í fossi lit eg tungu, auga í ál,
og andardrátt í kaldavermslulind.

* * *

Í þagnargildi þróast skynjun öll
og þá má rýna gegnum yfirborð.
Á náttarþeli andinn fer á fjöll,
við fótmaal hvert er tvírætt dularorð.

Hið stjörnumikla, kalda vetrarkveld,
er kristallarnir sindra um fjall og dal,
í snjó og klaka augað sækir eld,
en eyrað hljóm í lýstan gýgjarsal.

Því vafurlogi verndar ás og dís
og vættirnar í jökli, gljúfri, ós,
og höllin þeirra, brösuð beiti-is,
er björt sem fari um rjáfrið norðurljós.

En viljir þú að vættir láti í té
’inn vafurlogum gylta töfraseim —
í einróminu krjúpa skaltu á kné
og kveðja dyra að lífsins undirheim.

Og þá er komið inn í dyngju draums,
því dagsins stöðvar liggja handan við,
og lenzkan öll og tízka gleðiglaums,
er glepur æ hinn djúpa sálarfrið.

Við eldinn mána undirheima þrá
úr áttavillu kemst á rétta leið,

og racleitt fer um víðu-velli þá,
er veita henni færi að renna skeið.

En heldur skyldi hyggja um bygða skaut
og hlusta á rödd, sem berst frá skyldum lýð, —
frá ás og dís og gýgi geng eg braut
og guða nú á öðrum stað um hrið.

*

*

*

Í lenduna, sem lægsta þakið á,
um lágnættið eg kem á vina fund,
sem hafa vorum heimi vikið frá
og hinztu náttar þegið djúpan blund.

Á ferli er verið meðan máni skín,
og mér að þeirri sýn er stundarfró —
í vígða reitnum, þar sem moldin mín
er mannhæð ein á dýpt — og betur þó.

Um sáluhliðið glóa geislabönd,
er gefur máni af sinni tignu náð;
og lægstu þekju lyftir dulin hönd
í lendunni, sem turninum er háð.

Hið litla barn að köldum bólstri knýtt,
í kjól, er hefir lit hins nýja snjós,
og öldurmenni, silfurhæru-sitt,
úr svefnstúkunni koma, að ná í ljós.

En utanvert við opið sáluhlið
ég aleinn stend — með tveggja heima þrá
og fullri vissu: að fer eg senn í lið
með fólkinu, sem lægsta þakið á.

En þó er sem ég gangi á fagnafund
er fyrirburði sé um dular-lönd. —
Nú lækkar máni og látrar sig um stund
í lagarhvilu — bak við furðuströnd.

En þér sé lof og þökk um hverja tíð,
og þér sé dýrðin hærra en gnæfa fjöll,
er seiðir hug í silfurfjalla hlíð
og sálina í lýsigullsins höll.

Febrúar 1916.

Guðmundur Friðjónsson.

Landið og þjóðin.

Alþýðufræðsla Stúdentafélagsins.

Þær eru orðnar margar, ræðurnar fyrir minni Íslands. Í flestum þeirra mun landið vera lofað meira eða minna, enda er það eðlilegt, að niðjar Þórólfs smjørs séu fúsari upp í stólinn á þjóðhátíðum en frændur Hrafna-Flóka. Eg man þó ekki til þess, að eg hafi í þessum ræðum né annarstaðar séð alvarlega viðleitni á því að sýna, hvaða þátt landið hefir átt í því að skapa þjóðareinkenni Íslendinga. Þetta kemur eflaust meðfram af því, að málefnið er flókið, og það því fremur sem enginn hefir enn, svo að við megi una, lýst þjóðareinkennum vorum. Hér á landi, eins og reyndar víðast annarstaðar, eru mennirnir svo misjafnir, að erfitt mundi verða að finna nokkurn sameiginlegan mæli fyrir þá, finna einkenni sem ættu við alla, eða þó ekki væri nema allan þorra manna.

Svo er annars að gæta. Þegar vér tölum um Íslending, þá eigum vér fyrst og fremst við fullorðinn mann. En fullorðni maðurinn er það sem hann er af tveimur aðalorsökum: Önnur er meðfædda eðlið, sem hann hefir tekið að erfðum frá foreldrinu. Hin er áhrifin, sem hann hefir orðið fyrir af lifnaðarháttum sínum og lífskjörum.

Gerum ráð fyrir, að t. d. ein 100 börn islenzkra foreldra væru frá blautu barnsbeini alin upp af Frökkum á Frakklandi. Munurinn á þeim og samsvarandi hóp franskra barna, mundi þá að öllum líkindum koma fram bæði fyr og síðar, ef vel væri að gáð, og þannig reynast munur á

islenzku og frönsku eðli. En eg býst við, að það yrði erfitt í fljótu bragði að sjá ættarmót með þessum frönsku Íslendingum og heimaalningunum okkar, nema ef vera kynni í andlitsfalli, háralit og augna. Og þó er fullerfitt að segja, hvað af því tægi er sérstaklega islenzkt. Eg var einu sinni að virða fyrir mér nemendur í skóla einum. Þeir voru víðsvegar af landi hér. En mér fanst ekki fremur sami svipur á þeim, en þótt þeir hefðu verið sinn af hverri stjörnu. Þó mundi útlendingur sjálfsagt sjá meiri sameiginlegan svip en þetta, því gestsaugað er alt af glegggra fyrir því, sem sameiginlegt er. Hitt er augljóst, að munurinn á frönsku Íslendingunum og heimaalningunum okkar kæmi af mismunandi lifnaðarháttum og lífskjörum hvorra tveggja, þegar frá er skilinn sá munur, sem alt af er á einstaklingseðli manna.

Ef vér teljum Íslendingseðlið að eins það eðli, sem börnin fæðast með, þá er mjög efasamt, hvort það er mót- að af landinu, svo að börnin fæðist með öðru eðli fyrir það, að forfeður þeirra hafa lifað hér á landi, heldur en ef þeir hefðu t. d. búið á Frakklandi. Sumir merkustu vísindamenn telja það alveg ósannað mál, að eiginleikar, sem einstaklingurinn fær á æfiskeiði sínu fyrir uppeldi og lífskjör, erfist til eftirkomandanna.

Tilraunir til að rekja lunderni þjóða til náttúru landsins, sem þær búa í, loftslags og landslags, virðast lenda í sífeldum mótsögnum. Þannig hefir verið bent á, að í hitabeltinu, þar sem loftslag og landslag er oft svipað, búa ýms þjóðkyn, og stundum gagnólikir þjóðflokkar í nágrenni hver við annan. Þar sem fjallapjóðir eru alment taldar glæðlyndar og fjörugar, þá hefir verið bent á, að sumstaðar búi sama þjóðin til fjalla og á sléttlendi og beri ekki á því, að sá hlutinn sem hærra býr sé glæðlyndari en hinn, ef þjóðin er að eðlisfari þunglynd, né heldur að sléttubúar séu þunglyndari en fjallabúar sömu þjóðar, sé hún glæðlynd að eðlisfari. Þá mundu og margir ætla, að sífeldar þokur og þykkviðri gerðu þjóðir þunglyndar, en ekki þykir það sannast á Englum, sem eru

taldir manna glaðværastir og búa þó í þokulandi og þykkviðra.

Norskur maður, Dr. Andr. M. Hansen, hefir meðal annars skrifað gáfulega bók, sem heitir »Norsk folkepsykologi«. Kria, 1899. Heldur hann því fram, að Norðmenn séu komnir af tveim gagnólikum kynstofnum, hinum dökku frumbyggjum landsins og hinum björtu sigurvegurum, er lögðu þá undir sig. Séu líkamleg og andleg einkenni þessara tveggja flokka enn greinileg og hin sömu og þegar saga hófst, enda sé hvor flokkurinn sjálfum sér líkur, hve ólík sem náttúran sé á ýmsum stöðum í Noregi, þar sem hann býr. Dr. Hansen segir meðal annars:

»Þegar vér í reyndinni finnum ýmist samskonar lund-
erni í bygðum svo ólíkum að náttúrunni til sem frekast
má verða í voru fjölbreytta landi, ýmist lundernismun
eins mikinn og milli ólíkra þjóða í bygðum með alveg
samskonar náttúru, og alt á þó sameiginlega sögulega
þróun, þá verður niðurstaðan sú, að í Noregi verður lund-
erni þjóðarinnar ekki skýrt af landslaginu. Og þá líklega
ekki annarstaðar heldur«.

En frá einu sjónarmiði finst mér varla efi á því, að
land vort hefir valdið miklu um það, »hvers þeir eru
kyns, er koma«. Það er með úrvali.

Því hefir stundum verið hreyft, að Íslendingar mundu
vera farnir að úrkynjast fyrir allar þær hörmungar, er
gengið hafa yfir þjóðina á umliðnum öldum. Eg er þar
á alt annari skoðun. Þessar plágur hafa verið dómsdagur
fyrir þjóðina. Þær hafa skilið sauðina frá höfrunum. Þær
hafa drepíð af fóðrunum alt, sem ekki var ódrepanði.
Þær hafa flestar átt sammerkt við hafisinn, sem skáldið
kveður um:

„en alt sem er krankt og himir á höm
hann hreinsar úr vegi og blæs á það dauðans anda“.

Þeir sem nú lifa í landinu eru afkomendur lifseigustu
mannanna. Þess vegna hygg eg, að kynslóð vor sé ekki
úrættuð, heldur »kynbætt af þúsund þrautum«, eins og
skáldið kveður um túngrosin hérna.

Mér dettur í hug saga, sem eg hefi heyrt um einn gildan bónda fyrrum. Hann hét Gestur á Varmalæk. Hann átti mikið stóð, og drap þriðjung þess úr hor á hverju hörðu vori. En úr því stóði brást aldrei hestur.

Hvort sem nú landið á mikinn þátt eða lítinn í eðli kynslóðanna, þegar þær fæðast þar, þá er enginn efi á því, að það veldur nokkru um hitt, hvað úr þeim verður með aldrinum. Vér skulum athuga lítið eitt, hvernig sambandi lands og þjóðar er varið. Það sem eg segi verður þó að eins áttavisun eða yfirlit til umhugsunar fremur en lausn á málinu.

Það er þá fyrst augljóst, að eðli landsins og sjávarins kringum það ræður allmiklu um það, hvaða atvinnuvegir þar verða reknir. Það er t. d. engin tilviljun, að kvikfjárrækt og fiskiveiðar hafa verið, eru, og verða sjálf-sagt áfram, aðalatvinnuvegir Íslendinga.

Nú er það kunnugt, að hver atvinna setur að nokkru leyti sinn svip á þá sem hana stunda, því atvinnunni fylgja sérstakir hættir, sem verða að venjum, en venjur verða annað eðli manns. Sveitamenn, sem sífellt ganga á ósléttu, verða t. d. öðruvísi í göngulagi en borgarbúar, sem ganga á þilsléttum götum; sjómenn ganga hins vegar öðruvísi en hvorir tveggja. Það er og meiri fjarsýni í augnaráði sveitamannsins og sjómannsins en borgarbúans, sem alt af hefir húsveggina rétt við nefið. Skraddarar, skóarar, verzlunarmenn, prestar, læknar, kennarar, lög-reglumenn, o. s. frv. munu og að jafnaði hafa hverir sinn stéttarsvipinn, ef vel er að gáð.

En stéttarmörkin eru í eðli sínu ekki þjóðleg, greina ekki eina þjóð frá annari, því að í flestum löndum eru sömu stéttir til. Stéttirnar eru eins og mismunandi still eða leturtegundir í lífsbók hvernar þjóðar, en samsvarandi leturtegundum svipar saman, þó þær séu ekki steypar í sama móti. Að visu fer þjóð að ytra útliti eftir því, hve mikið kveður að hverri stétt, eins og hver bók fær sinn svip eftir því, hve mikið er þar af hverju letrinu; en eins og útlitið á bókinni, leturbreytingarnar, sýna að eins

efnisskiftinguna í stórum dráttum, en efnið og andinn kemur fyrst í ljós, þegar farið er að þýða þessi ytri tákni, eins er því varið um stéttirnar og þjóðina.

Sama stéttin getur nú verið mismunandi á ýmsum tímum í sama landi, og allólík í ýmsum héruðum landsins á sama tíma. Eg hef jafnvel heyrt því haldið fram um eina sýslu á landi hér, að þeir sem byggju í sveitunum upp til fjallanna væru miklu myndarlegra fólk en sam-sýslungar þeirra niðri á sléttunni, og í einum hrepp hefir mér verið sagt, að þeir sem byggju uppi við fjallið væru eins og alt annað fólk en þeir af hreppsþúum sem byggju niður frá.

Hvernig stendur á þessu? Er það af því, að loftslag sé betra uppi við fjöllin, eða er það af því, að meiri atorku þurfi til að reka búskapinn þar, og menn neyðist til að draga af sér slenið og verði því röskari menn og kvikari í hugsun? Eg held það sé einkum af því, að jarðirnar upp til fjallanna séu betri en niðri á sléttunni. Þær verða því keppikefli dugnaðarmannanna og komast í hendur þeirra. Þannig veljast smám saman efnismenn í sveitina með góðu jarðirnar, festast þar og auka kyn sitt. Þeir ráða svo sveitarbrag og hugsunarhætti, því eins og »ekki þarf nema einn gikk í hverja veiðistöð«, þannig getur einn ágætismaður stundum sett sitt mót á heila sveit, heilt hérað eða jafnvel heilt land. Sumar sveitir hafa stundum staðið í blóma um skeið, meðan að einstakir dugnaðarmenn voru þar uppi, en svo hnignað smám saman eftir að þeir féllu frá, án þess að náttúran hafi breyzt. Þetta sýnir, að sambúð lands og þjóðar fer fyrst og fremst eftir því, hvernig þjóðin er, sem byggir landið. Sú sveit, sem reynist einni kynslóðinni góð og heilladrjúg, reynist annari illa, af því hún fer öðruvísi að. Svo er um land og þjóð.

Það er líkt um landið og leiksvið með tilteknum útbúnaði, leiktjöldum, húsmunum, ljósfærum o. s. frv. Leiksviðið afmarkar að nokkru leyti eðli þeirra sjónleika sem þar geta farið fram, svo að vel sé. En af þeim leikum,

sem þar má sýna, geta sumir verið góðir, en aðrir ómerklegir. Þar má leika vel og illa, eftir því hver leikarinn er.

Vér höfum hlotið að erfð eitt hið einkennilegasta leiksvið, sem nokkur þjóð hefir fengið. Saga vor sýnir og, að hér má lifa lífi svo merkilegu, að aldrei fyrnist. En vér þurfum ekki að leita lengi til að finna, að landið býður þjóðinni ótal tæki bæði til íþróttar og alvarlegra starfa, sem hún þó hefir ekki notað, og að margt hefir verið látið ógert, sem landið virðist skapað til. Leiksviðið hefir ekki skapað leikarann.

Hér eru t. d. mörg fjöll með einhverri fegurstu útsjón í víðri veröld. Þó hafa Íslendingar ekki verið neinir fjallgöngumenn, og eg hygg, að það hafi verið útlendingar, sem fyrstir gengu upp á sum hæstu fjöllin hér á landi. Á norður- og austur-landi er venjulega ágætt skíðafæri á vetrum. Ýmsir ganga þar á skíðum af nauðsyn. En skíðalist hefir aldrei verið til hér á landi, er berandi sé saman við list frænda vorra Norðmanna í þeirri grein. Líkt mætti segja um skautaferðir. Viða eru hér heitar laugar — ágætt tækifæri til að læra sund. Forfeður vorir voru og miklir sundgarpar. En vér höfum til skamms tíma verið ósýndir, allur almenningur. Land vort er eitt hið einkennilegasta og fjölbreyttasta land að náttúru og jarðsaga þess stórmerkileg. Þó eru Íslendingar ekki alment hneigðir til náttúruskoðunar.

Ef vér litum á atvinnuvegina, kemur enn hið sama fram. Er það t. d. nokkur eðlisnauðsyn, að túnin séu ekki stærri en þau eru, eða garðarnir, eða að engjarnar eru ekki betri þar og þar? Mundi ekki svarið oftast en hitt verða það, að túnstæði sé jafngott utan garðs og innan, garðstæði miklu stærra en notað er og að engjarnar mætti bæta? Það var ekki heldur fiskimiðunum að kenna, að þangað til fyrir fáum árum voru þar engir íslenzkir botnvörpungar. Það var ekki heldur af því, að oss vantaði efni í góða skipstjóra og fiskimenn. Það var af því, að enginn hófst handa. Undir eins og einn fór á

undan og vísaði veginn, komu hinir á eftir. Og nú, eftir fáein ár, eigum vér ágæta skipstjóra og fiskimenn, líklega einhverja þá beztu í heimi.

Eg nefni þessi dæmi að eins til að minna á, að það er sitthvað að hafa leiksviðið og hitt að nota það eins og má, og að eitt er að hafa hæfileika og tækifæri, annað að nota hvorttveggja. Það er í fæstum greinum landið, sem sniður oss stakkinn, það leggur oftast til nóg efni í hann, ef vel er að gáð. Það erum vér, sem sníðum oss stakkinn eftir andlegum vexti vorum, og til að sníða hann stærri og fegri þurfum vér, en ekki landið, að vaxa. Þegar alt kemur til alls, þá er það fremur þjóðin, sem setur mark sitt á landið, en landið á þjóðina.

Það sem oss ríður mest á að vita er það, hvernig vér eigum að lifa svo í þessu landi, að í samræmi sé við eðli þess og varanlegar þarfir þjóðarinnar. Eftir þúsund ára lif í landinu, lifir þjóðin enn að miklu leyti í ósamræmi við náttúru þess. Vér eigum enn eftir að finna, hvernig vér eigum að lifa þannig, að þjóðin eflist sem best af landinu og landið af þjóðinni, en menningin af hvorum tveggja. Eg skal skýra með nokkrum dæmum hvað eg á við.

Ein hin fyrsta af þörfum vorum er skýli yfir höfuðið. Erum vér þá, eftir þúsund ár, búnir að finna þá húsa-gerð, er sé í fullu samræmi við eðli landsins og þarfir þjóðarinnar? Vér vitum að því fer fjarri. Torfbæirnir gömlu höfðu sína kosti. Þeir voru að miklu leyti úr efni sem fekst í landinu sjálfu. Baðstofurnar gömlu höfðu þann kost, að þar var alt heimilisfólkið saman komið. Þar varð meira samlif, en þar sem öllu er stíð sundur. Burstabæirnir með grasigrónum þökum voru og eru í betra samræmi við græn túnin og fjallaburstirnar í sjóndeildarhringnum en timburkassarnir, sem nú hefir verið tylt á hólana. Og ósamræmið sem í því felst, að reisa timburhús í landi þar sem »viður vex engi utan björk og þó litils vaxtar«, er augljóst. Nú eru steinsteypuhúsin að koma, en vér eigum eftir að finna stíl, er sameini henti-

semi, fegurð og samræmi við loftslag og svip náttúrunnar umhverfis. Og hver veit nema vér eigum eftir að finna byggingarefni í landinu sjálfu.

Ef vér litum á landbúnaðinn, verðum vér enn hins sama varir. Það er enn að miklu leyti efamál, hvaða búskaparlag borgar sig best. Menn eru ekki enn á eitt mál sáttir, hvort betur eigi við kúarækt eða sauðfjarrækt í sumum sveitum. Menn eru að fálma um það, hvaða aðferðir séu bestar til að vinna jörðina og bæta, og ekki þarf að nefna það, að aldrei hafa verið gerðar nákvæmar athuganir og tilraunir til að finna bestu aðferð við hvert verkið.

Í fiskiveiðunum hefir hvað rekið annað síðustu árin: róðrarbátaútgerð, þilskipaútgerð, vélbátaútgerð, botnvörpuútgerð. Alt hafa þetta verið tilraunir, sem sýna að vér erum nú fyrst að átta oss á því til fulls hvernig vér eigum að fiska.

Eg tala ekki um það, hvort Ísland eigi að verða iðnaðarland, hvernig fossarnir verði notaðir, hvaða iðnaður sé heppilegastur fyrir heimilisiðnað o. s. frv. Það eru alt óráðnar gátur enn þá. Eins er um samgöngufærin. Það er rifist um það, hvort járnbrautir eigi við hér á landi, og flestir eru ekki búnir að átta sig á því enn þá. Svona er það um öll þau efni sem snúa að landinu sjálfu. Vér vitum ekki á neinu sviði hvort vér höfum fundið þá lifnaðar- og atvinnuhætti sem eru í beztu samræmi við landið, sem vér byggjum. Og um margt vitum vér að svo er ekki.

En hvernig horfir svo landið við andlegum þörfum barna sinna? Byr það vel í haginn fyrir æðri menningu, vísindi og listir? Því hefir reynslan svarað að nokkru leyti. Hér hefir dafnað menning er ber öll einkenni mannvits og snildar, svo langt sem hún náði. Forfeður vorir sköruðu á sínum tíma langt fram úr öllum samtíðarþjóðum í bókmentum, í list orðsins, og hún lifir enn hjá oss í blóma. Þeir fylgdust og vel með í þeim vísindum er þá voru tíð og lögðu í sumu sjálfstæðar rannsóknir til.

Og vér höfum oftast átt einhverja vísindamenn. En hér hefir jafnan lítið verið um myndalist, tónlist og byggingingarlist. Það er þó varla fyrir þá sök, að gáfurnar sem til þeirra þarf, geti ekki kviknað í landi voru, enda hafa þær komið í ljós á síðustu árum. Hvar mundi vera efni í einkennilegri og fegurri landlagsmyndir en hér? Hvar eru þýðari litir eða fegri sólsetur? Sá fegurðarauður verður aldrei tæmdur. Og nú eru íslenzkir málara farnir að ná honum á léreftið. Íslendingar eru söngelskir, eins og fjallapjóðir oftast, og gæddir góðri söngrödd. Tónlist er hér í byrjun og margt ósmíðað úr gömlum íslenskum lögum. Um hæfileika í húsaagerðarlist er óséð enn. Landið hefir þar búið illa í hendur barna sinna. Blágrýtið er óþjált og marmari enginn, er til greina komi. Í líkneskju-list eigum vér einn frægan mann og er auðfundið íslenzkt fjallaform í mörgum líkneskjum hans.

Það er þá auðsætt að það er ekki landinu að kenna, þó lítið hafi kveðið að gáfum þjóðarinnar í sumum listum og vísindum. Þegar hér safnast nægur auður í landinu til að bera æðri menningu, og þegar landsmönnum skilst það til fulls, að þjóðin í heild sinni verður að leggja fé til að rækta þau menningarblóm sem einstakir menn geta ekki helgað krafta sína nema með styrk af almannafé, þá mun sjást að allar þessar gáfur eru til með þjóð vorri.

Ef vér athugum hve fjölbreytt náttúra lands vors er, þá mundi það ekki þykja undarlegt, að hún reyndist vel fallin til að vekja margs konar gáfur og glæða ímyndunaraflíð, sköpunarmagn sálarinnar. Reynslan virðist benda á, að fjölbreytni náttúrunnar valdi miklu um ímyndunarafl þjóðanna. Fjallapjóðir hafa að jafnaði auðugri ímyndun en sléttþjóðir, og kemur það fram í því, að þjóðsiðir, þjóðtrú og þjóðlegar listir eru fjölbreyttari hjá þeim. Þetta er auðskilið, því að vér fáum allan efnivið hugmynda vorra frá umheimi, og því oftar sem andstæður mæta auganu, því léttari verður gangur hugmyndanna, eins og íslenskku hestarnir eiga ósléttum vegum fótfinna að þakka. Þetta kemur ekki í bága við það sem eg

sagði áður, að náttúran virtist ekki hafa áhrif á lunderni þjóðanna. Það liggur dýpra en hugmyndirnar, og ímynd-unaraflíð getur verið auðugt hvort sem lundin er þung eða létt. Munurinn kemur þá fram í vali hugmyndanna og í blænum sem geðið breiðir yfir þær.

Strjálbygðin hér á landi hefir að því leyti verið góður skóli fyrir gáfur manna, að hvert heimili hefir að mestu orðið að bjarga sér sjálft og leggja á flest gjörva hönd. Þess vegna hafa Íslendingar orð á sér fyrir að vera fjölhæfir.

Lega landsins, hin mikla fjarlægð þess frá öðrum löndum, hefir að sínu leyti verkað eins. Þjóðin hefir að mestu búið að sínu. Áhrifin frá öðrum löndum hafa aldrei verið svo sterk eða tíð, að þau gætu hrundið vorri innlendu menningu af stóli. Þjóð vor hefir alt af verið sjálf-gjörvingur.

Margt mætti segja um það, hver áhrif óbliða veðurlagsins, sem oft hrjáir land vort, hefir haft á hugsunarhátt þjóðarinnar. Það er um hana eins og annað: alt veltur á því, hvernig við henni er snúist. Hún beygir dáðleysingjann, en kveikir upp karlsmenskuna og glæðir þróttinn í hinum hrausta og hugprúða, og það mundi vera í anda Bjarna: »frostið oss herði«, kveður hann. Og Stephan G. Stephansson kveður um Ingjald í Hergilsey:

„Því sál hans var stælt af því eðli sem er
í ættlandi hörðu, sem dekrar við fátt,
sem fóstur við hættur — því það kennir þér
að þrjóskast við dauðann með trausti á þinn mátt,
í voðanum skyldunni víkja ei úr,
og vera í lífinu sjálfum þér trú.“ —

Eg hefi nú talað á við og dreif og niðurstaðan er þessi:

Hvort landið mótar þjóðina fremur en þjóðin landið, það fer eftir því hver þjóðin er, hvernig hún hagnýtir sér landið. Landið er ekki fullskapað. Það er að eins efni sem þjóðin er að smíða úr til að fullnægja þörfum sínum. Efnið veldur jafnan miklu um það, hver smiðisgripurinn

verður að lokum. Enginn smiðar »silfurskeiðar úr beini«, þó svo standi í gamalli gortaravísi. En úr beini má smíða skeið er sé jafn nothæf og eins mikið listaverk og hver silfurskeið. Í verkinu koma eiginleikar smíðsins fram. Og eins og smíðnum fer fram á því að smíða vel, eins er það í öllum efnum. Mennirnir skapa sjálfa sig á því að skapa eitthvað annað. Sá sem leysir snildarverk af hendi hefir um leið gert sjálfan sig af snillingi.

Og nú ætti hlutverk vort að vera ljóst. Það er að gera úr þessu landi listaverk mannvits og atorku og þar með þjóðina sjálfa að öndvegisþjóð. Til þess þurfum vér fyrst og fremst ljósan skilning á eðli lands og þjóðar í öllum greinum. Land og þjóð eru samherjar. Hver góður bóndi finnur það ósjálfrátt í hugskoti sínu, að það er metnaður hvers móa að verða gróin grund, og grösín sem gróa á nýrri sléttu kinka kolli í blænum og þakka fyrir hjálpina:

„Hvað gjörir þú mér, það gjöri ég þér“, —
svo greinir hin kalda mold;
„ef gleður þú mig, þá gleð ég þig,
þín gæfa er ég“, segir Fold.

„Hvert vallarstrá mína vottar þrá,
ef varirnar opna kann,
og augun öll, þau vakna um völl
til að vita, hver best mér ann“.

Landið mun barga oss alt sem vér gerum því til góða. Náttúra þess ber í skauti sér óteljandi yrkisefni fyrir önd og hönd. Því betur sem vér skiljum það og breytum eftir því, því betur mun oss farnast. Og því betur munum vér verðskulda að heita samverkamenn guðs.

Guðm. Finnbogason.

Edda

í kveðskap fyr og nú.

Edda er góð og orðafróð,
undirstóll til kvæða;
sækir þánn, með snild hana kann,
sjaldan orða fæða.

Þessi vísa er rituð innanmáls í handrit eitt af Snorra-Eddu (Fragmentum Arnamagnæanum 748), að því er segir í útgáfu Árnaneðndar af Snorra-Eddu III. LXIX, og sýnir vísan, hverja skoðun ritarinn hafði um þetta efni; fæða á að vera fæð, skortur, svo sem bent er á í útgáfunni, og verður varla visuhöfundinum til meðmæla. En hugsunin í vísunni er rétt og samkvæm því, er Snorri leit á sjálfur og lítið var á um margar aldir eftir hans daga, og alt fram að vorum dögum. Eftirmálinn í Snorra-Eddu (I. 224) byrjar á þessa leið: »En þat er nú at segja ungum skáldum, þeim er gírnast at nema mál skáldskapar, ok heyja sér orðafjölda með fornum heitum, eða gírnast þeir at kunna skilja þat, er hulit er kveðit, þá skili hann þessa bók til fróðleiks ok skemtunar«. Hér kemur fram, hver sé tilgangur bókarinnar og hver not megi að henni verða, þeim er hana kunna og skilja. Menn hefir greint á um það, hvað bókarnafnið Edda þýði, en flestir ætla eg muni hallast að þeirri skoðun Konr. Gíslasonar, að Edda sé dregið af óðr, skáldskapur, og þýði þá skáldskaparfræði (Aarb. f. nord. Oldk. og Hist. 1884). Aðrir (Eiríkur Magnússon) hafa viljað draga nafnið af bæjarnafninu Oddi (á Rangárvöllum) og ætti þá að þýða »bókin frá Odda«, en því virðist enginn gaumur gefandi. En hvað

sem um þetta er, hvað bókarnafnið Edda þýðir, eða af hverju það er dregið, þá er það ljóst og óhaggað, að Edda Snorra Sturlusonar er skáldskaparfræði, og notin þau tvenn, 1., að yngri skáldin nemi mál skáldskapar og hreyi sér orðafjölda; 2., að menn skilji það, sem hulið er kveðið, skilji hinn forna kveðskap, og eru þau hin almennu not, er að bókinni mega verða. Það er eigi vitað, nær bókin fekk fyrst nafnið Edda, eða hvort Snorri nefndi svo bókina sjálfur. En svo segir í handriti því, er Uppsala-bók heitir (Sn. E. A. M. II. 250)¹⁾: »Bók þessi heitir Edda. Hana hefir saman setta Snorri Sturlusonr eftir þeim hætti, sem hér er skipat«. Þarna kemur nafnið fyrir og þarna segir, hver sé höfundur bókarinnar, og hefir aldrei þótt neinn efi á því leika, hvert væri nafn bókarinnar og hver væri höfundur hennar.

En »edda« er ekki að eins nafn bókarinnar, er Snorri samdi um hinn forna kveðskap, heldur er orðið einnig haft um það efni, er um ræðir í bókinni, hinar fornu kenningar, ókend heiti og forn orð, sem skáldin notuðu í kveðskap sínum öld eftir öld fram á vora daga. Um þann kveðskap, er svo var háttað, var sagt, að hann væri edduborinn og eddukendur, og sér ekki á orðunum, hvort í þeim er fólgið lof eða last eða hvorugt. En sú er merking orðanna, að notuð séu forn orð, ókend heiti og kenningar, sérstaklega kenningar, svo sem þetta kom fram í kveðskap fornanna fyrir 1400 eða um það bil. Annað verður ljóst, þegar talað var um edduhnoð, sagt, að einhver vísa eða eitthvert kvæði væri tómmt edduhnoð, þá var það lastandi orð, og þótti þá ofmikið að því gert, að nota edduna. Mér kemur til hugar vísa eftir dr. Sveinbjörn Egilsson, sem margir munu kannast við enn og er prentuð í ljóðmælum hans; eg held, að hún hafi verið um eitt skeið hér um bil það, sem kallað er »hús-gangur«, og verið alkunn, en vísan er þessi:

¹⁾ Stafsetning breytt.

Edda prýðir, allir lýðir segja,
 en hana að brúka of mjög er
 eins og tómmt að éta smér.

Sveinbjörn Egilsson vissi vel, hvað hann söng, þar sem hann bæði var allra manna eddufróðastur, skáld sjálfur og bar svo gott skyn á það, er fagurt er og vel á við, að ávalt hefir því verið viðbrugðið, þá er á það er minst, hversu fallegt mál hann ritaði. Hann segir í vísunni, að sú sé skoðunin almenn, að edda prýði, og má þá jafnframt minnst á það, er Sigurður Breiðfjörð segir í formálanum fyrir Númerimum, að eddu eigi að nota til prýði í kveðskapnum, en skáldið eigi ekki að nota hana til að gera sér kveðskapinn auðveldari, og verði sá ekki kalladur skáld með réttu, er til þeirra ráða verði að grípa. En að öllu má of mikið gera, og svo er um það, að nota edduna, og líkir Sv. Eg. því við það, að éta tómmt smjör. Að edda prýði var þá almenn skoðun á hans dögum og hafði verið öldum saman fyrir hans daga, og á eg hér við tímann eftir 1400. Rímnskáldin notuðu eddu óspart og kunnu eddu og léku sér að þessari prýði í rímunum, fóru þar »á kostum hreinum«, og sá þótti jafnan snjallastur, er dýrast kvað og smellnastur var og tilþrifamestur í því, að nota edduna, fornyrðin og sérstaklega kenningarnar. Fólkið tók þessum kveðskap opnum örmum. Rímurnar voru lesnar og lærðar og kveðnar við raust á kveldvökunum á vetrum á bæjunum fyrir heimilisfólkinu, er það var alt komið saman og sat við vinnu sína. Sá heimilismaðurinn, sem kvað rímur (eða las sögur), varð svo sem »hrókur alls fagnaðar« fyrir heimilið, og þótti ekki einskis nýtur eða óþarfur maður á kveldvökunum, þótt hvorki sæti hann með kamba né þrjóna eða við vefnað. Kveldvökuvinna hans var engu síður metin góð og gagnleg, en vinna annars heimafélksins, því að þá er hann kvað (eða las sögur), einkum þá er hann kvað, færðist líf og fjör í fólkið og vinnan gekk miklu betur. Fólkið syfjaði síður á hinum löngu kveldvökum eða alls ekki. Kambarnir tættu kappsamlega ullina hvor úr öðr-

um og rokkhjólin snerust á fleygiferð, því að kveðskapurinn hleypti fjöri í spunakonurnar. En er hlé varð á og kvæðamaðurinn þurfti að hvíla sig, þá var rætt um það, er kveðið var, því að fólkið skildi kveðskapinn, þótt gnægð væri af fornum orðum og kenningum, og kveðskapurinn því ærið edduborinn, og það kunni að meta smellnar og fjörugar vísur. Auðvitað hafa undantekningar átt sér stað, enda er það algengt og fornt mál, að engin regla sé án undantekningar, og svo segir á latínu-máli: *nulla est regula sine exceptione*. Rímnaskáldin eru fyrir löngu komin undir græna torfu og rimunum þeirra sinnir nú enginn, rímnakveðskapurinn fallinn úr sögunni og heimaíðnaðurinn á kveldvökunum nálega dottinn niður eða mjög svo á fallanda fæti víðast. Tímarnir breytast og vér breytumst jafnframt. Það vissu hinir fornu Rómverjar og því sögðu þeir: *Tempora mutantur et nos mutamur in illis*. Nú nefna fáir eddu; nú heyrir ekki talað um, að vísa sé eddukend eða kvæði edduborið, enda eru varla önnur kvæði, er það yrði sagt um, en sum kvæði síra Matthíasar. Edduhnoð er ekki nefnt á nafn. Nú eru þeir, að því er eg hygg, fremur fáir, er þekkja eddu, skilja kenningar, skáldaorð og ókend heiti, er svo mjög kveður að í kvæðum fornskálda og hélst síðan víðöld eftir öld í kveðskap langt fram á 19. öld. Nálega hvert barnið veit það, að Snorri Sturluson samdi bók þá, er Edda heitir, og að sú bók er mjög fræg, og að efnið er goðasögur og skáldskaparfræði. Þetta vita bæði börn og fullorðnir menn, en það hygg eg óhætt að segja, að allur þorri manna þekkir ekki efni bókarinnar. Þeir þekkja »Eddu« (bókarnafnið), en ekki »eddu« (bókarefnið). Nú er þó hægt að afla sér bókarinnar; fyrrum var það enginn hægðarleikur, er útgáfur voru fágætar og dýrar, en margir kunnu þó allvel »eddu«, þótt aldrei hefðu þeir »Eddu« séð. Margur hagrýðingurinn orti með réttum og smellnum og íburðarmiklum kenningum og notaði óspart fornskáldaorð, þótt aldrei hefði hann lesið goðasögurnar og skáldskaparmálin í Snorra-Eddu. Þeir höfðu lært af

kveðskap annara, skilið hann og lifað sig inn í hann. Yngri skáldin lærðu af kveðskap eldri skáldanna og þjóðin sinti þessum kveðskap, hann varð svo sem samvaxinn lifi þjóðarinnar, festist í minninu og bjó í huganum. Annars hefðu eigi verið jafnmargir hagyrðingar með þjóðvorri, sem raun varð á. Og að öðrum kosti hefði þessi kveðskapur eigi orðið fróðleikslind, hressingarlind, skemtunarlind fyrir þjóðina.

Kenningar eru mjög fátíðar í nútíðar-skáldskap og er það eðlilegt. Margar þeirra, t. d. margar mannkenningar, hafa mist gildi sitt, og það hefði verið eðlilegt, að þær hefðu fallið niður endur fyrir löngu, því að þar sem þær voru svo mjög bundnar við hin heiðnu trúarbrögð, þá hlutu margar þeirra að missa hið eiginlega gildi sitt með kristnitökunni eða þegar kristin trú fór að festa rætur, en meir og meir fyrntist yfir hin heiðnu trúarbrögð. Sú samliking, sem fólgin var í mannkenningum með ásaheitum, hlaut að verða dauð og máttlaus, þegar ásatrúin féll niður, og hinir fornu guðir stóðu eigi framar lifandi, öflugir og glæsilegir fyrir hugum manna, og trúin á goðasögurnar var fallin niður. En það varð eigi, að kenningarnar féllu niður. Kveðskapurinn stóð áfram með sama sniði og yngri skáldin ortu að dæmum eldri skálda og tóku þau sér til fyrirmyndar. En þótt kenningarnar væru framvegis réttar, glæsilegar og tilkomumiklar, þá varð sú afturför í notkun þeirra, er stundir liðu, að þær áttu nú einatt alls eigi við um þann mann, er nefndur var kenningu, eða þá atburði, er verið var að segja frá. Kenningarnar urðu föst orðtök, og jafnvel hin stórkostlegasta hermannskenning þýddi blátt áfram ekkert annað en »maður« eða »hann«. Dæmin eru mýmörg, og tek eg að eins fáein dæmi, til að skýra þetta betur.

Þá er Skarphéðinn hitti smalamanninn frá Hlíðar-enda, fékk hann honum höfuðið af Sigmundi, er hann hafði þá drepíð, og bað hann færa Hallgerði. Sagan leggur honum þá í munn visu, og er fyrri hluti hennar þessi:

Höfuð þetta skaltu, hrotta
hljómstærandi, færa
(kom þú, eldskerðir, orðum
álsferðar) Hallgerði.

Hér er smalamaðurinn kallaður hrotta hljómstærandi; hrotti, sverð; hrotta hljómr, sverðagnýr, orusta; hrotta hljómstærandi, sá, sem eykur, eflir orustu, hermannskenning, og á því í mesta máta illa við um smalamanninn, sem sjálfsagt hafði aldrei í orustu verið, og var svo hræddur, að hann kastaði niður höfðinu Sigmundar, er þeir Skarphéðinn höfðu skilið við hann. Smalamaðurinn er líka kallaður áls ferðar eldskerðir; áll (einskonar) fiskur; áls ferð (= braut, vegur), sjór; áls ferðar eldr, sævar eldr, gull; áls ferðar eldskerðir, audugur og örlátur maður, og á ekki vel við um smalamannstetrið, bláfátækan garminn, sem að likindum átti ekki grænan eyri, og ekkert annað en garmana utan á sig. Kenningarnar er líklega réttara að taka svo upp: hrotta ferðar hljómstærandi og áls eldskerðir (Nj. II. 638—639; Lex. poët.). hrotta ferð, sverða gangur; hrotta ferðar hljómr, sá gnýr, er kemur fram af hreyfingu sverðanna. Þá verður áll dýpi í sjónum, hér s. s. sjór; sævar eldr, gull; og kemur hið sama fram, að því er til smalamannsins tekur. Þessar kenningar þýða þá hér ekkert annað, en blátt áfram »maður«.

Þorkell Elfarskáld kvað afbragðs-fallega visu um vörn Gunnars á Hlíðarenda, er þeir Gissur hvíti fóru að honum og drápu hann, og er fyrri helmingur visunnar á þessa leið:

Spurðum vér, hvé varðisk
vígmóðr kjalar slóða
glæðstýrendum geiri
Gunnarr fyri kjöl sunnan.

Hér kennir skáldið þá Gissur svo, að hann kallar þá kjalar slóða glæðstýrendr; kjölr, skipskjölur; kjalar slóð, sjór; glæðr (= Glæðr), hestsheiti; sæv-

ar hestur, skip; skips stýrandi er þá eiginlega kenning sæfara, siglingamanns. En Gissur og þeir félagar voru bændur í sveit, en engir sjómenn eða sæfarar, og á því kenningin ekki við um þá, og þýðir hér blátt áfram »menn«.

Hallgerður neitaði Gunnari um hárlökk í bogastreng. Sagan segir, að Gunnar hafi þá kveðið visu, og er fyrri helmingur hennar á þessa leið:

Hverr hefir dreyrgra darra
dómreynir til sóma
niðr drepr sveigar Sága
sins ágætis mínum.

P. e.: Hefir hverr dreyrgra darra dómreynir til síns ágætis. Sveigar Sága drepr niðr sóma mínum. Þessi ægilega hermannskening: dreyrgra (blóðugra) darra (spjóta) dóm (orustu) -reynir þýðir blátt áfram »maður« og felur í sér bæði karla og konur. — Þessar visur, sem Gunnari eru eignaðar, eru löngu síðar ortar inn í söguna. — Í Njálu og ýmsum öðrum Íslendingasögum eru þess konar dæmi mýmörg í lausavísum.

Vér skulum líta á kvæði Einars Gilssonar um Guðmund biskup Arason. Einar er ágætt skáld, leikinn og þaulvanur og fastur á svellinu og hefir kenningar á hverjum fingri. En það er gaman að sjá, hverjar kenningar hann notar um þá menn, sem hann segir frá. Margar kenningarnar þýða að eins »menn«, án þess að átt sé við einstaka, nafngreinda menn. Meybarn fæddist á Eyjum á Ströndum, og voru fengnir til tveir menn, karlmaður og kona, að fara með barnið til skirnar að Stað í Steingrímsfirði. Á þessu byrja Selkolluvisur Einars Gilssonar. Manninn kallar hann dalar éls ask; dalr, bogi; dalar él, orusta; askr, víður, og er þá þetta hermannskening. Maðurinn er líka nefndur fleina Týr og brynju meiðr og Bölverks þinga Baldr, og eru þetta alt hermannskeningar, en lítil eru líkindi þess, að hann hafi verið herskár, maðurinn sá, og hefir

líklega aldrei farið með boga eða spjót eða borið brynju, og líklega verið allólíkur þeim ásunum, Tý og Baldri. Hver þessara kenninga þýðir að eins »maður«, en er þó hér um ákveðinn mann, þótt eigi sé hann nafni nefndur.

Dálkur bóndi á Hafnarhólmi var smiður góður, og kallar Einar hann hamra hlyn, og er ágæt kenning um smið, sem fer með hamra, hlyn er viðartegund. En annað verður ofan á, þegar hann kallar Dálk bónda laufa bríðir, undfleins ýtir, randa veitir; laufi er sverð; undfleinn er spjót; rönd er skjöldur. Dálkur varð vitskertur eftir viðureignina við Selkollu, og Þórgils félagi hans sat yfir honum sjúkum. Selkolla sprengdi úr Þórgils bæði augun, en Einar nefnir hann hyrflæðar hreytir = flæðar hyrhreytir; flæðr, sjór; hyrr, eldur; sævar eldur, gull; gulls hreytir, auðugur og örlátur maður, en lítið hefir hann átt gullið, hann Þórgils. Þarna lágu þeir báðir í bólunum, þegar Guðmundur Arason kom til þeirra, annar blindur og hinn vitlaus, segir Einar, »ok trautt munu tveir veslingar meiri«, segir hann. En þegar hann segir frá þessu, kallar hann Þórgils geirþings gæðir, sem er hermannskenning. Dálkur bóndi fær sömu »complimentin«, þar sem hann er kallaður valdr fjöldrífins skjaldar vinns (= vinds), en skjaldar vindur er orusta og orustu valdr er Dálkur bóndi, friðsamt bóndatetur norður á Ströndum, sem nú var svo komið fyrir, að hann lá vitlaus í bólinu sínu. Verið getur, að hann hafi átt eitthvert skjaldarskrifli úti í skemmukofa, en að sá skjöldur hafi verið fjöldrífinn, skreyttur dýrum málmum, það tel eg ótrúlegt. Guðmundur Arason sökti Selkollu, svo að ekki varð mein að henni framar, en ekki gat hann læknað þá veslingana. Dálkur lét eftir ráði Guðmundar biskups flytja sig til Staðarkirkju og dó fáum nóttum síðar, en Þórgils var steinblindur alla sína daga, og greini eg ekki meira úr Selkolluvísum.

Þá skulum vér rétt snöggvast líta á kvæði eða drápu Einars um Guðmund biskup. Einhverju sinni, er biskup

sat í stofu og einn klerkur hjá honum, komu þar inn þrír fátæklingar og báðu ölmusu ákaflega, en biskup hafði þá ekkert handbært og tók þá vænan silfurbolla, er Þórir erkibiskup hafði gefið honum. Hann kastaði bollanum í gólfíð, og stökk hann sundur í þrjá jafna hluta, og fekk sinn hlutann hver fátæklinganna. Einar segir frá því, er þeir komu inn með þessum orðum:

Komu árar aumir
inn benstara minnis,
þar er Guðmundur greindi
góð verk, þrimu sterkrar.

Hann kallar þá fátæklingana aumir árar sterkrar þrimu benstara minnis; benstari (ben, sár; stari, fuglsheiti), hræfugl, hrafn eða örn; benstara minni (= drykkur), blóð; blóðs þrima, orusta; orustu árr, hermannskenning, en aumir voru þeir, þessir menn, sem hann kennir á þennan hátt. Þegar þeir fóru að biðja ölmusunnar, kallar Einar þá byrhrafns meiðar; byrr, (hagstæður) vindur; hrafn (= Hrafn), hestheiti; byrhrafn, skipskenning; meiðr, viður, og verður þetta þá sæfarakenning, en litlir sægarpar munu þessir náungar hafa verið. Þegar þeir fara út aftur, auðmjúklega þakkandi fyrir sig, þá eru þeir aumir Fundins hyrjar flaums Gautar:

Fóru Fundins hyrjar
flaums þakkandi aumir
Gautar vænum veiti
vins ástgjafir sínar.

Fundinn er dvergsheiti, virðist hér haft sem Óðinsheiti; hyrr, eldur; Fundins hyrr, sverð; sverðs flaumr, orusta; orustu Gautr (= Óðinn), hermannskenning. Þeir voru aumir, kapparnir þessir, segir Einar.

Kálfur bóndi, sem tók kverkameinið, er kallaður hjörva hristir og Áta stéttar eldboði. Áti, sækonungur; Áta stétt, sjór; Áta stéttar eldr, gull; gulls boði, örlátur maður. — Ófeigur bóndi, sem

augnaverkurinn ætlaði að gera út af við, er kallaður hjörteins hriðar (= hjörhriðar teins) hreytir, og er hermannskening. Hann er og kallaður hellis Gauta hlátrar deilir; hellis Gautr, jótunn; jötuns hlátr, gull; gulls deilir, örlátur (og auðugur) maður. Sjúkan mann nefnir Einar böðvar Týr, hermannskening, og ambáttin, er kló fót Guðmundar Arasonar, er hann var í sæng kominn, er kölluð Áta jarðar ells þella, og er þó ólíklegt, að hún hafi verið skreytt gulli eða átt gull til í eigu sinni.

Einar Gilsson var uppi á 14. öld, lögmaður norðan og vestan 1367—1369.

Höfundur kvæðis þess, er Leiðarvísan heitir og er frá miðri 12. öld, kveðst vilja yrkja fyrir línns láðs lyftimeiða og hrælinns hirðimeiða og varrar viggskrýðendr og biður þá að hlýða kvæðinu, rétt eins og hann hafi ekki ætlað kvæðið öðrum en auðugum mönnum (linnr, ormur; línns láð, gull; gulls lyftimeidr, auðugur maður), hermönnum (hrælinnr, sverð eða spjót; hrælinns hirðimeidr, hermannskening) og sæfarendum (vörr, sjór; vigg, hestur; varrar vigg, skip; skips skrýðandi, sæfarakenning), en þetta er svo að skilja, að þessar kenningar þýða blátt áfram menn, hvernig svo sem högum þeirra er háttað, og sjálfan sig kallar skáldið brands árr, sem er hermannskening, en hefir þó sjálfsagt verið prestur eða munkur.

Í hinu ágæta kvæði Líknarbraut frá síðari hluta 12. aldar kallar skáldið sig vígrunnr, og er hermannskening, en hefir þó verið munkur eða prestur, sem aldrei hefir verið við víg riðinn, og koma þar fyrir margar tilkomumiklar kenningar, sem ekki þýða annað en »maður«, »menn«, og nefni eg að eins fáeinar sem sýnishorn: randa röðuls rýrir; eggmóts ljóss árr; hlifrunnr; hjörva hljóms hnigstafr; stafna stóðriðandi; bauga láðs blikmeiðandi, o. s. frv, og eru þetta alt fallegar og réttar kenningar, en

þýða ekki annað en »menn« alment, og er hvorki átt sérstaklega við hermenn né sjómenn né auðmenn.

Hið mikla og merka kvæði Einars prests Skúlasonar um Ólaf konung Haraldsson, það er Geisli heitir og hann flutti í Kristskirkjunni í Þrándheimi (1153) í viðurvist þriggja konunga, þeirra bræðranna Eysteins, Sigurðar og Inga, erkibiskups og fjölda fólks, er með sama markinu brent, að því er tekur til kenninganna, t. d.: auðfinnandi = maður; (blindr) auðar njótr = (blindur) maður; orms landa árr = maður; auðar beiðir, hoddar brjótr og málma stríðir um ungan mann, er úr var skorin tungan.

Í Jónsvisum Kolbeins Tumasonar († 1208) er Jón postuli kallaður særir sundhyrs; díks dagrennir; sunds sólar snardeilandi, og hefir þó aldrei verið orð gert á því, að Jóhannes postuli hafi verið auðugur af gæðum þessa heims og hafi haft af miklu að taka, til að miðla af öðrum, þótt viljann hafi ekki vantað. Gull og silfur áttu postularnir ekki.

Árið 1208 var kveðin vísa sú, er þessi er fyrri helmingur hennar:

Víst eru farnir flestir
fálu hests et mesta,
þótt lýðir böll bíði,
bræðendr at harðræðum.

Þ. e.: Víst eru flestir bræðendr fálu hests farnir et mesta at harðræðum, þótt lýðir bíði böll; fála, tröllkona; fálu hestr, úlfur; fálu hests bræðendr, þeir, sem veita úlfi bráð, hermannskenning, og á ekki illa við, þegar litið er á til efni vísunnar (Bisk. I. 660), og skáldið er að kvarta yfir því, að hugur og dugur sé þrotinn, er til harðræða komi eða stórræða eða herfara, og hér varð að beita hernaði, ef duga skyldi. Hermannskenningin á því ekki illa við í raun rétttri, en hún er ekki vel valin, þar sem átt er við Íslendinga, því að úlfar hafa aldrei verið á Íslandi,

og Íslendingar hafa því aldrei veitt úlfum bráð, þótt þeir hafi víg unnið.

Þetta efni væri ótæmandi, ef rekja skyldi til hlitar, og er sú eigi ætlun mín, heldur að eins að sýna fáein dæmi til skýringar, tekin rétt af handahófi. Eg ætla þó að minnst á eina vísu forna, eldri en það, er eg hefi nefnt. Hana kvað Egill Skallagrímsson og er talin ort um 965, og er svo litið á, að hún sé rétt feðruð, en eigi ort síðar inn í söguna (F. J.: Skjalded. B. I. 52). Tilefnið var það, er Þorsteinn sonur hans tók silkislæðurnar Arinbjarnarnauta og hafði á þingi, svo að Egill vissi ekki. Slæðurnar voru Þorsteini heldur síðar og urðu saurgar neðan, er hann var í Lögbergsgöngu. Að þessu komst Egill síðar og mislíkaði stórum, og kvað þessa vísu:

Áttkak erfínytja
arfa mér til þarfan,
mik hefr sonr of svíkvinn
(svík telk í því) kvíkván;
vel mátti þess vatna
víggríðandi biða,
es hafskiða hlæði
hljótendr of mik grjóti.

Hann segir í vísunni, að hann eigi óþarfan erfíngja að fjármunum sínum, þar sem sonur sinn hafi svikið sig, meðan hann sé enn á lífi, því að þetta tiltæki Þorsteins segist hann kalla svík; hefði Þorsteinn vel mátt biða þess, er hann væri dauður og í haug lagður. Hann kennir Þorstein svo, að hann kallar hann vatna víggriðandi; vígg, hestur; vatna vígg, skip; vatna víggriðandi er þá sæfarakenning, en Þorsteinn lagði alls ekki fyrir sig sjómensku og siglingar, og kenningin á því ekki við um hann. Egill segir, að Þorsteinn hefði vel mátt biða þess, er hafskiða hljótendr hlæði grjóti yfir sig; hafskið er skip og hafskiða hljótendr er þá sæfarakenning, og litur þá svo út, sem Egill hafi ætlað sjómönnum einum eða skipseigendum að heygja sig. En þetta er ekki svo að skilja, heldur eru báðar þessar kenningar blátt áfram mannkenningar, önn-

ur þó um ákveðinn mann, en hin um menn alment, ótiltekna menn. Af þessu má sjá, að snemma hefir það komið upp í kveðskapnum, að kenningarnar verða föst kveðskaparorðtök, sé vísan annars rétt feðruð, og síðan tekur þetta einn eftir öðrum, en því er ekki sint, hvort kenningarnar eiga í raun og veru við um þá menn, sem þær eru hafðar um, eða þá atburði, sem verið er að tala um.

Hins vegar eru þau dæmi mörg á öllum tíma hins forna kveðskapar, þar sem kenningarnar eiga vel við um menn og atburði, og bregður því einatt fyrir á hinu síðara tímabili hins forna kveðskapar alt fram að 1400. Má vel vera, að stundum sé það tilviljan ein, er svo vill til, en ekki af því, að skáldið hafi haft tilfinningu fyrir því eða séð það glögt, að kenningarnar áttu að vera lifandi myndir og í þeim felast sönn og rétt lýsing, en ekki dauðorðtök í kveðskapnum.

Á 14. öldinni fara skáldin að sjá það og skilja, að hinar fornu kenningar áttu illa við í helgikvæðum og í dýrðlingakvæðum, svo og það, að nota að mun fornyrði, þar sem það yrði til þess, að kvæðin yrðu torskilin. Þessi skoðun var rétt. Hinar fornu kenningar, sem stöfðu frá heiðni og lutu svo mjög að hermensku, gátu ekki átt við í helgikvæðum eða dýrðlingakvæðum. Arngrímur Brandsson, ábóti á Þingeyrum 1350—1361, orti 1345 drápu um Guðmund biskup Arason, og segir þar svo:

Rædda ek lítt við reglur Eddu
ráðin mín, ok kvað ek sem bráðast
vísur þær, er ek vil ei hrósa,
verkinn erat sjá mjúkr í kverkum. (Bisk. II. 187).

Arni Jónsson, ábóti á Munkaþverá 1371—1379, orti og drápu um Guðmund biskup, og segir hann svo:

Yfirmeisterum mun Edda listar
allstírdur sjá bróður virðast,
þeim er vilja svá grafa og geyma
grein klókastra fræðibóka;
lofi heilagra lízt mér hæfa

ljós ritninga sætra vitni,
 en kenningar auka mönnum
 engan styrk né fagnað myrkvar. (Bisk. II. 220).

Eysteinn Ásgrímsson (dáinn 1361), sem orti Lilju, hið frægasta allra helgikvæða, segir svo:

varðar mest til allra orða,
 undirstaðan sé réttlígg fundin,
 eigi glögg þótt Eddu regla
 undan hljóti að víkja stundum (97. vísa);

og enn segir hann:

Sá, er ódinn skal vandan velja,
 velr svó mörg í kvæði at selja
 hulin fornýrði, að trautt má telja,
 tel eg, að það má skilning dvelja (98. vísa);

og í Lilju eru engar torskildar kenningar né hulin fornýrði. Skáldið vildi eigi og þurfti eigi að bregða slíku fyrir sig, og er drápan því enn ágætari og auðskilin hverjum manni á vorum dögum.

Nú er varla minnst á »eddu«, og í skáldskap eru kenningar fátíðar, sérstaklega mannkenningar, og er það eðlilegt. Hinar fornu mannkenningar eiga ekki framar við, og yrðu að eins dauð orðtök, ef þær væru notaðar, og hreinar og beinar smekkleysur, sem spiltu kveðskapnum og gerðu hann ef til vill beint hlægilegan, ef eigi væri verið að yrkja um formenn og þá atburði, er þá gerðust. Hugsum oss, að einhver færi að yrkja drápu um einhvern visindamann, sem alla æfi hefði verið sokkinn ofan í rit og bóklestur, og varla haft nein afskifti af öðru og verið hinn mesti friðsemdarmaður, eða um einhvern merkisbónda, eða einhvern annan ágætismann með þjóðvorri, þá mundu þær eiga illa við, hinar fornu kenningar, svo sem t. d. dreyrgra darra dómreynir; vápna snerru vekjandi; nausta blakks hlémána gífrs drífu gímslóngvir; úlfs tannlituðr; arnar hungrs eyðandi; dólgsvölu barma fæðir o. s. frv.; eða um þá menn væri að ræða, er nær aldrei hefðu á sjó komið og hefðu ekki

hugmynd um skipstjórn eða siglingar, og væru kallaðir ferju bakka blakkriðandi; Áta marsfannar fákrennandi; unnar viggs örbeitir o. s. frv., eða kallaðir ásaheitum í kenningum sama efnis. Auðvitað þarf ekki að gera ráð fyrir, að þetta kynni að koma fyrir. Það tel eg fullvíst. En þó að hinar fornu kenningar yfirleitt eigi ekki við í nútíðarskáldskap, þá eru þær sumar kenningar, er aldrei þurfa að falla niður, t. d. ýmsar skipakenningar, og »edda« þarf ekki og á ekki að deyja út í skáldskap, og hún er ekki dauð enn; síra Matthías að minsta kosti kann hana og kann hana vel, og hún kemur fram lifandi og spriklandi af fjöri í sumum kvæðum hans. Hann er sem skáld manna bezt að sér í fornum kveðskap, lifir í honum og leikur sér í honum, og virðist kunna afar vel við sig á þeim leikvelli, þar sem hann lipur og liðugur, fimur og fjörugur hoppar og skoppar og byltir sér á alla vegu, ólmur og ærslafenginn, engu síður nú á gamalsaldri en fyrrum, er hann var á léttasta skeiði. Þarna finnur hann gnægð fallegra blóma, að tína og festa saman í fagra sveiga og ljómandi festar. Ætla það sé ekki einkum tvent, sem hefir gert síra Matthías slíkt skáld sem hann er: 1^o. guðs náð; 2^o. þekking á hinum forna kveðskap? Það er hið þriðja, þekking hans á skáldskap hinna ágætustu skálda erlendra. Í mörgum beztu og tilkomumestu kvæðum sínum líkir hann beint eftir kveðskap fornskáldanna, og tekst það svo vel, að hann kemur fram sem endurborinn Arnór jarlaskáld eða Sturla Þórðarson. Hér verða þessi kvæði hans hvorki tínd né talin. Eg vil að eins benda á tvö kvæði hans, sem bæði eru í Skírnir og því kunn lesendum Skírnis. Annað er kvæðið »Noregshvöt« (Skírnir 79. 193), fornyrt kvæði og með forni stafsetning, með fornum brag og fornum blæ, og sá hefir verið tilgangur skáldsins, að yrkja sem líkast því, er fornskáldin mundu ort hafa. En eins atriðis hefir skáldið eigi gætt, og það er hins forna lögmáls um stutt og löng atkvæði, og var þess ekki að vænta, og óþarfleg hótfyndni

væri, að fetta fingur út í það. En skemtilegt hefði verið, ef skáldið hefði gætt þess, svo að alt hefði verið í réttum skorðum eftir fornum bragreglum. Hitt kvæðið er »Björnstjerne Björnson« (Skirnir 84. 97), ágætt kvæði, en fornyrt og torskilið þeim, er eigi bera skyn á fornan kveðskap og eigi þekkja »Hákonarmál« Eyvindar skálda-spillis, er Matthías tekur upp nokkuð úr. Ef benda skyldi á forn skáldaorð í nútíðarkveðskap, tjáir eigi að taka upp orð úr þessum kvæðum eða öðrum þeim kvæðum, þar sem skáldið hefir beint ætlað sér að yrkja að fornum hætti, á fornu máli, eða líkja eftir fornum kveðskap. Slik kvæði eru ekki takandi sem dæmi nútíðarkveðskapar.

»Edda« kemur og fyrir í kvæðum annara hinna beztu nútíðarskálda vorra, meir eða minna, t. d. í kvæðum Steingríms Thorsteinssonar, svo og annara skálda. En þegar eg nefni »eddu« í kvæðum nútíðarskálda, þá á eg við forn skáldaorð eða orð, sem ekki eru höfð í venjulegu máli, sundurlausu máli, hvorki í ræðu né riti, þótt sum kunni að koma fyrir í einstökum orðtökum. Kenningar, sjaldnast mannkenningar, koma og einstökum sinnum fyrir í nútíðarskáldskap, en kenningarnar eru einmitt það, sem mest ber á í hinum forna kveðskap og sérstaklega einkenna hann, og valda því, að hann verður torskilinn öllum þorra manna. Í hinum forna kveðskap eru kenningarnar, svo sem próf. Finnur Jónsson segir (Lit. Hist.), skáldskapurinn í kveðskapnum. Eg ætla ekki að fara að rekja þetta í nútíðarkveðskap eða leita uppi kenningar; eg ætla að eins að minnast á það, er nýjast er. Þá er skipinu »Goðafoss« var fagnað, er það í fyrsta sinn kom til Reykjavíkur, orti Hannes skáld Blöndal kvæði. Þar segir svo:

Ógnuðu kaldir heljarbrámmar
hart aðþrengdum landsins börnum.
Útlendingar, öldugammar
allir flúðu', og hættu vörnum.

Svo er vísan prentuð í 52. tbl. »Ísafoldar« þ. á., en eg held, að síðari hlutinn sé eigi réttur og get til, að lesa eigi:

Útlendinga öldugammar
allir fláðu' og hættu vörnum.

Hér er öldugammur skipskenning, en hitt er annað mál, hvort kenningin er rétt eftir fornum kveðskap. Hún er ekki rétt. Sé gammur = Gammur, skipsheiti, því að svo hét skip Þráins Sigfússonar, þá er öldu Gammur ekki skipskenning. Sé gammur hér fuglsheiti, þá er um það að segja, að landfuglanöfn eru aldrei höfð í skipakenningum í fornum kveðskap, og öldugammur yrði þá að eins einhver sérstök gammategund, sem lifði á sjó, en sú tegund er ekki til. En hvað sem er um þetta, þá ætlast skáldið til, að öldugammur sé skipskenning. — Í kvæðinu segir og:

Sást þá hafsbrún út við yztu
öldufákur veg sér brjóta.

Hér er öldufákur rétt skipskenning, og eru sams konar kenningar alltiðar í fornum kveðskap, og mundi vera svo kunnugt, að óþarfi sé frá að segja.

Á leiðinni út í skipið orti Jón Ólafsson ferskeytta visu:

Elfar-blossi' og auðnu hnoss
yfir þig fossi daga og nætur;
gæfan hossi Goðafoss,
gefi koss þér Ránar dætur.

Elfar-blossi er gullskening: elfur, á, fljót; blossi, logi, eldur; áreldur, gull. Ránar-dætur eru bylgjurnar. Rán, sævargyðjan. Í blöðunum var prentað Elfar-blossa, en eg fæ eigi betur séð, en að það sé rangt, og eigi að vera Elfar-blossi, því að eigi segjum vér vatninu fossar, heldur vatnið fossar. En eigi dettur mér í hug að efast um skilning ritstjórnanna, en hitt efa eg ekki, að einhverjir kunni þá að hafa þakkað vísuna með lófataki, er eigi skildu orðið elfar-blossi, að minsta kosti er eg þess fullvís, að fjöldi hinnar yngri kynslóðar skilur ekki þessa kenningu né aðrar, og er það eigi óeðlilegt, enda fer stórum aftur skilningi á skáldamáli bæði fornu og nýju. Þeir, sem

vilja, geta gert tilraun og notað til þess orðið elfar-blossi.

Eg hefi lauslega farið yfir nokkur kvæði í Skirni og fundið í þeim nokkur forn orð og skáldaorð, sem ekki eru höfð í sundurlausu máli. Ætla eg eigi að rekja þetta mál lengra, eða rita neitt þess konar orðasafn, heldur að eins sýna þessi orð, sem eg hefi tekið upp úr kvæðum í Skirni, sem dæmi þess, að forn skáldaorð og önnur forn-yrði komi fyrir í nútíðarkveðskap.

rekkur = maður.

knör(r) = skip.

ver(r) = maður.

vé = helgistaður.

halur = maður.

hörgur (í hörgaspilling)
= hof.

fljóð = kona.

vé = hermerki, gunnfáni.

víf = kona.

elfur og elfa = á, fljót.

sæta = kona.

móða = á, fljót.

sjafni = elskhugi.

jór = hestur.

jóð = barn.

blakkur = hestur.

ái = langafi (forfaðir).

haddur = konuhár; haft

drótt, menn, fólk.

um hár á karlkendri veru

sjóli = konungur.

í: biddu þá Hann,

þengill = konungur.

er silfurhvítan hadd

hlynur = viður (tré).

á sér á höfði og of-

baðmur = viður (tré).

an um vanga greiðir.

vangur = jörð, land.

þviti = steinn.

vengi = jörð, land.

njóla = nótt.

storð = jörð, land.

gríma = nótt.

hauður = jörð, land.

læðingur = fjötur.

ver = sjór.

sía = eldneisti.

mar(r) = sjór.

styr(r) = hernaður, ófriður.

unn (= unnur) = alda.

hjör(r) = sverð.

ægir = sjór.

brandur = sverðsblað.

hrönn = alda.

geir(r) = spjót.

ögur = vík.

rann = hús.

ránar-slóð, sjór.

arinn = eldstó.

gnóð, = skip.

sunna = sól.

skeið = skip.

óður = skáldskapur.

fley = skip.

bragur = skáldskapur.

fránn = hvass (fránar
sjónir).

hróður = frægð.

aldinn = gamall.

reið (í leifturreiðir),

aldinn = gamall.

kerra, vagn.

þrúðugur, styrkur, mátt-

viðbláinn = himinn.

ugur; stórkostlegur; geig-

þel = hugur.

vænlegur: þrúðugar

sefi = hugur.

ísjakagjár.

þeyr = þiður (vindur).

geislamerlaður = ljóm-

mær(r) = ágætur, frægur.

andi af geislum (um sól-

fjá = (að) hata.

ina; um fjöll í Sn. E.).

klífa = (að) klifra (klífa hjalla af hjöllum).

svella, bólgna, þrútna; (unn svellur; svell-

andi við segl; harpa svellur af óð; brim-

svellur).

Eg tel eigi fleiri orð af því, að þetta átti að eins að vera lítið sýnishorn. Nokkur þessara orða koma og fyrir í algengu máli, t. d. sunna í sunnudagur, arinn í orð-takinu: eldur brann á arni, og vé í vargur í véum, sem oft er eða var sagt í daglegu tali.

Eg vildi óska þess, að skáldin kyntu sér sem bezt hið forna skáldamál. Það er sannarlega þess vert, svo göfugt sem það er og auðugt að fögrum orðum. Kenningar á ýmsum hugtökum geta enn átt við, og hin fornu skálðaoð eiga ekki að falla niður. Þau geta prýtt ljóðin og hafið þau upp yfir hversdagismál og sett á þau göfugan blæ. Úr hinu forna skáldamáli eiga nútíðarskáldin að heyja sér orðafjölda og nema þar mál skáldskapar, og beita þessu eftir því sem við á, en auðvitað forðast allar öfgar. Nútíðarmál skáldskapar á að eiga rót í hinu forna skáldamáli, vera þaðan runnið og hafa þar fótfestu. Skáldin eiga enn að vera höfundar allrar rýnni eða málsgreinar (Sn. E. II. 26), og mega ekki vanrækja þá skyldu sína, að vinna að því, að haldá við tungu vorri, bæta hana og fegra og lyfta henni upp til vegsemdar. Í hinu forna skáldamáli er lindin, sem ausa má úr lífskraft tungu vorri til handa, að því leyti sem hún kemur fram í skáldskap. Af þessu mundi það og

leiða, að þjóðin yfirleitt týndi eigi skilning á forntungu vorri, fornum orðum, góðum og göfugum, eða lærði þau aftur, ef þau eru farin að falla í gleymsku og týnast. Það er hins vegar sjálfsagt, að skáldin hafa fullan rétt þess, að mynda ný orð og taka þau upp í skáldskap, og að öðru leyti taka þeim breytingum, sem orðið hafa á tungu vorri. En þess ber skáldum að gæta vandlega, að hin nýju orð séu rétt mynduð samkvæmt eðli tungu vorrar, og að í þeim felist skýr og rétt hugsun.

Janus Jónsson.

Dúna Kvaran.

Dúna Kvaran, Dúna Kvaran!

Alt var Dúna Kvaran. Loftið var hrannað af Dúnu Kvaran. Fuglarnir sungu nafn hennar.

Það sem einkum gaf nafni hennar þess töfrahljóm og varpaði yfir hana dularfullum bjarma af aðdáun, var ekki marmarahrjúfur hörundsblærinna, ekki flauelsdjúp augun, ekki óviðjafnanlega mjúklátt fasið, — heldur það, að hylli hennar virtist óvinnandi.

Faðir hennar var rikur og mikils metinn. Faðir hennar var gamli sýslumaðurinn á Bólstað, herra Jóhannes Kvaran.

Fimm ár hafði hún ekki dvalist nema einn vetur á Íslandi, síðasta vetur. Hún var ekki nema tuttugu og eins, en alt um það hafði hún heimsótt nær hverja höfuðborg í Evrópu og dvalist um lengri tíma í London, Vín og París. Síðasta vetri hafði hún eytt að mestu í Reykjavík, fæðingarborg sinni, hafði fylgt þangað móður sinni, sem varð að gangast undir hættulega skyrðingu, og horfið heim með henni, þegar hún fór aftur upp í sveitina úr því fór að liða á afturbatann, fyrstu dagana í júní. Í Reykjavík, vissu allir, voru þeir óteljandi, sem hún hafði tekið herfangi. Hún hataði þetta orðtak — án þess að hata hlutinn í raun rétt. En taka herfangi! Hún hafði aldrei svo mikið sem rétt sinn minsta fingur neinum af sínum dándum, þó öllum bænum væri tíðræddara um ungfrú Dúnu Kvaran og herra Einar Laxdal, malarann nafnkunna, heldur en um nokkrar aðrar tvær mannverur á landinu.

Einn morgun síðast í júní sat Dúna Kvaran í garði sínum að Bólstað og var að lesa nýjasta rit Romain Rolland's, *Jean-Christophe*, sem hún hafði fengið fám dögum áður í sumargjöf frá einni vinkonu sinni í París, franskri stúlku, sem hafði heyrt hana minnst á íslenska siðinn, að fagna vori með gjöfum. Hún sat og var að lesa í fjórða bindinu, um Antoinette, þegar hún heyrði skyndilega hófadyrn, sem bar að gerðinu. Hún hélt áfram að lesa og leit ekki upp, fyr en riddarinn kom fyrir hliðið, með hestinn í taumi. Þegar Dúna sá, hver hann var, lagði hún frá sér bókina og gekk á móti honum.

»Hvað það er vænt af yður að koma og heilsa upp á okkur, herra Laxdal«, ávarpaði hún hann. »Eruð þér kominn til að taka hédan landslags myndir?«

»Nei, ég er kominn til að veiða lax«, svaraði málarinn — og nú tók hún eftir stönginni, sem hann hafði á bakinu. »Hafið þér gleymt, ungfrú Kvaran, að þér lofuðu að sýna mér helztu flugu-hyljina í ánni?«

»Mér þykir leitt, ef ég hefi gert það«, anzaði Dúna Kvaran, með örlitinn snert af hæðni í brosinu. »Af öllum mínum unaðsemdum held ég, að laxveiði sé rikust, — einkanlega í nýrri á. En hálf ánægjan felst í því, að afhjúpa leyndardóma vatnsins. Einn nýr og aðlaðandi hylur fær mér meiri unaðar, er ég viss, heldur en iðrun eins syndara fær englunum á himnum«, hló stúlkan í hálfgerðum galsa, sem hún hafði teygð að sér með vorsins megnu morgunangan.

»Auðvitað eruð þér ekki bundin við loforð yðar«, sagði málarinn, hálf-móðgaður, hálf-kurteis.

»Auðvitað er ég það«, sagði Dúna Kvaran, »*je suis prête*«.

Málarinn rétti henni höndina.

»Ég ætla að fara að heilsa upp á skyldfólk mitt í næsta dal. Ég kem aftur á morgun«.

Hann steig á bak.

»Sælar, ungfrú Kvaran«.

»Sælir«, sagði hún og veifaði hendinni.

Gesturinn var ekki úr augsýn, þegar nýjan riddara bar að. Það var héraðslæknirinn, dr. Ingvar Eðpólin. Hann var ungur maður, einkasonur ekkju, sem hafði búið um mörg ár á litlu bóndabýli, sem lá undir Bólstað. Hún var fátæk nú, allar hennar eigur höfðu farið í að styrkja hann.

»Komið þér sælar, Dúna Kvaran«, hrópaði hann af hestbaki yfir gerðið. »Ég stytti mér leið hér um, því ég er að fara til sjúklings yfir fjallið. En má ég vera svo djarfur að spyrja, hver var herrann, sem þér veifuduð hendinni til núna áðan?«

»Herra Einar Laxdal«.

Skugga af mispóknun virtist bregða yfir augu hins unga manns. Svo kvaddi hann, sveiflaði keyrinu og reið á burt, syngjandi.

Undir kvöld þennan sama dag varð Dúnu Kvaran litið upp til dalsins, þar sem hár foss féll niður af brúnni, gegnum sí lithverfan regnbogaúða. Það var indæll staður, sem hún hafði ekki vitjað í fimm ár. Og hvað hann var töfrandi í dag!

Dúna Kvaran lét söðla Hvít sinn. Það kólnaði með kvöldinu svo hún varð að klæða sig vel. Þó Dúna væri elsk að hestum, kærði hún sig ekki um að láta andstyggileg búkhár setjast í rauðjörpu reiðklæðin sín, svo hún fór að fornri venju og breiddi yfir klárinn áklæðið sitt þykka sem nálar ömmu hennar höfðu fagurlega búið skrautlegum ísaumum.

Dúna Kvaran studdi tάνni í lófa hestasveinsins og vatt sér á bak. Hún var ekki nein algeng reiðkona. Ánægjan af að riða var fyrir henni ekki eingöngu að njóta unaðsins af hrynjandanum í prýðis-vel riðnu spori skepnunnar, heldur að innblása henni ástriðum til að geta knúið hana inn í finustu tilbrigði vekurðarinnar og inn í svífandi vikivaka töltsins. Hún hleypti hestinum yfir fen, yfir urðir, en hvert lækjarfall sem hún fór yfir þvöði fætur hans hreinar af syndum vegarins og skilaði þeim ljós-bleikum í hófskegginu.

Hún reið fram í dalbotn og sté af baki hjá fossinum. Þar stóð hún um stund og blindi inn í þyrlandi dans af glæfralegum stælingum á silfri og perlum. En brátt dró annað að sér athygli hennar: dalurinn fyrir neðan með mjóa ána líkt og sláandi kristallsæð, smá og friðsamleg bóndabýlin á við og dreif, dvergsmátt bændafólkið á enginu, hjarðir á beit, blómskrúðið um alt. Hún opnaði faðminn móti dalnum, allur heimurinn fanst henni eins og stóreflis höggmynd, þar sem hún sjálf væri líkneskið, en allir aðrir hlutir væri grópmyndir á hennar volduga fótstalli. Hún vildi njóta þessarar pentilegu sjónar alla leið heim. Hún vissi af fjárgötu sem lá fram með fjallinu, hátt uppi í hlið. Þessa leið kaus hún. Hún steig á bak og reið af stað. Öngvegið gekk hærra og hærra upp á við unz það að lokum bar að kleif sem varð að djúpu gjögri neðan til.

Dúna Kvaran hljóp af baki og lét klárinn kasta mæðinni áður en hún riði niður eftir. Augnaráð hennar staðnæmdist við tvær stóreflis hvannir í miðju þverhnipinu, sem hún starði á langa hríð. Hún gat ekki haft augun af þessum feikna jurtum sem uxu út úr gróðurlausu berginu, með afar-digrum stönglum, smaragðsgrænum. Það var kynlegt að sjá þessar jurtir hér. Það var kynlegra að hugsa sér þær fluttar. Þær gerðu umhverfið lifandi. Bergið dró andann gegnum þessar hvannir.

Þegar Dúna loksins leit upp, kom hún auga á mann sem hafði komið ofan fjallið og reið niður kleifina. Hún þekti þar dr. Ingvar Espólin.

Doktorinn sté af baki um leið og Dúna stóð upp.

»Þér hér, Dúna Kvaran, á þessum eyðilegu stöðvum!«

»Eg hefi fundið dásamlegustu hvannir sem eg hefi séð á æfnni. Lítið þér á, þarna niðri!«

»Er það ekki undarlegt!« sagði hinn ungi maður og settist niður.

Dúna stóð sem áður.

»Ég þarf að lofa klárnum að blása«, sagði lækurinn.

Dúna sagði ekki neitt.

»Lítið þér á«, byrjaði doktorinn af nýju, »hve fallega sólin lýsir upp bergsnösina. Ég vildi feginn doka hér við þangað til geislarnir ná hvönnunum og ljósið leikur í krónum þeirra«.

»Það yrði of seint fyrir mig, því miður«, sagði stúlkan, og settist niður aftur.

»Dúna Kvaran!«

Læknirinn ávarpaði hana í svo lágum hljóðum að hún starði á hann undrandi.

»Dúna Kvaran«, endurtók hann án þess að horfa á hana. »Er það ekki kynlegt, að dýpstu tilfinningar okkar leitast alt af við að sneiða hjá tjáningu?«

»Ég er yður ekki samdóma«, svaraði ungfrú Kvaran. »Fyrir mér er tjáning menning. Fyrir menn með nútíðar fjölbreytni anda og tilfinninga, er tjáning eins nauðsynleg fyrir lífið eins og hún er fyrir listina. Guðir þagnarinnar eru dauðir«.

»Þeir munu aldrei deyja«, svaraði hinn ungi maður, »ekki svo lengi sem hóflæti sálarinnar verður talið með fegurstu mannlegum dygðum«.

»Þögnin«, svaraði Dúna óðara, »er í eðli sínu afskiftalaus. Tjáning getur verið það líka. En veitið mér hjálp yðar án orða og eg mun hafna henni«.

»Þér eruð að leika yður að tómum öfgum«, mælti hinn ungi maður og leit upp, enn stórlátari orðinn við að sjá hana ekki þýðari í fasi«.

En í einum svip tók sál hans hamskiftum. Hann horfði hugfanginn á Dúnu Kvaran, þar sem hún sat og lék sér með keyrið sitt við hlið hans í grasinu, í nærskornum reiðjakkanum, með gullið hárið í einni stórri fléttu, sem féll niður bakið. Sjálf sat hún hljóð, en hennar mælska fegurð hitaði upp hverja taug í hjarta hans, kveikti í hverjum gneista af ástriðu hans. Varir hans lukust upp og lokuðust í munaðlegum titringi og hann heyrði sjálfan sig segja með vínheitum blæ yfir röddinni:

»Gefið mér koss!«

Dúna Kvaran bjóst til að standa upp, þegar hann greip um úlfliðinn á henni.

»Sleppið þér hendinni á mér«, sagði hún, alveg róleg, án minstu viðleitni til að draga hana að sér, með einmitt svo nistandi skeytingarleysi, að fingur mannsins, utan um úlflið konunnar, stirðnuðu undir kuldanum af rödd hennar.

Hún stóð ekki upp nú. Hún vildi gjarnan sýna yfirburði sína, og sagði brosandi:

»Ef eg væri karlmaður, mundi eg aldrei biðja stúlku um koss«.

»Þér meinið, þér munduð taka hann án þess að spyrja«, sagði hinn ungi maður og dró sig undan líkt og pardusdýrið áður það ræðst á bráðina.

»Já, það er einmitt það sem ég meina, eða, til að tjá mig enn nákvæmara, alveg gagnstætt. Ég mundi beygja kné mín fyrir ást hennar og meðtaka koss hennar eins og sakramenti«.

»Dúna Kvaran stóð upp skjótlega og gekk rakteiti niður í kleifina, þar sem hesturinn hennar stóð enn.

Læknirinn sat eftir, mjúklættur niður í botn sálar sinnar. Hann rendi augunum eftir Dúnu, þar sem hún hvarf honum með siðlátum yndisleik í hverju fót máli. Hann fann að blygðun hans mundi ávalt héðan af aftra honum frá að nálgast hana jafnvel eins og vinur. Hún mundi lita á hann eins og kjánalegan flagara. Það var þó sneypulegast af öllu. Flagari —! hann krepti hnefann utan um orðið. Nei, Dúna Kvaran, þú skalt fá að finna, að ást mín er nægilega einlæg!

Hann spratt upp og náði henni áður hún sté á bak.

»Má ég hjálpa yður á bak?«

»Nei, þakka yður fyrir«, sagði hún í ákveðnum tón, sem opinberaði honum dálitinn leyndardóm: Dúna Kvaran hafði aldrei hitt fyrir einbeittari vilja en sinn. Þetta efldi hans eigin vilja. Það var ekki nema eitt að gera fyrir hann. Hann fann að hann gat ekki mætt framtíð sinni nema hann framkvæmdi það. Svo hann gerði það.

Hann tók hana í faðm sinn og þrýsti löngum og eldheitum kossi á varir hennar. . . .

Dr. Espólin losaði tökin og strauk hendinni yfir ennið, í brosandí sundlun. Hann fann kossinn streyma eftir æðum sínum eins og há-skamt af undursamlegu eitri. Hann lokaði augunum, utan við sig, í fullkomnum dvala af unaði, sem hann vaknaði af með hryllingi eftir fáein augnablik, í því að honum var hrundið ópyrmilega niður brekkuna af höndum konunnar sem hann hafði kyst. Í því hann rann niður eftir, án þess að mega ná fótfestu í aurskriðunni sem hrundi niður brattan hamarinn, sá hann fyrir sér bráðan bana. Hann rendi augunum í síðasta sinn til Dúnu Kvaran, þar sem hún stóð ókvalráð á brúninni, og honum var á svipstundu ljóst, að reiðin hafði fengið jafn ósjálfráð tök á henni eins og ástriður hans höfðu fengið yfir honum skömmu áður. Fáeinar þverhandir fyrir neðan hann tók þverhnípi við af kleifinni og undir niðri beið hans gínandi gjögrið. Hann rann og rann, gróf og hjó öllum tíu fingrunum niður í aurinn, bar nær og nær brúninni, og nú — hrapaði hann!

Dúna heyrði ekki andvarp frá honum. Hljóðlaust var hann dáinn! Hún fann ekki til neinnar iðrunar. Hann var fyrsti maður sem hafði dirfst að ráðast á hreinleik hennar. Hann varð að bæta fyrir það, jafnvel þótt það kostaði líf hans.

Undarleg tilfinning greip hana, ómótstæðileg löngun til að sjá hann. Henni óaði við að líta niður í djúpið, þar sem höfuð hans kynni að liggja sundurmolað við steinana. En hún varð að sjá hann, hún fann að hún gat ekki skilið við þennan stað án þess. Hvernig mundi hann líta út nú? Mundi andlit hans verða ósnortið? Eða ætli það flyti alt í blóði? Ef hún liti niður, kynni hún að mæta sjón sem mundi ásækja hana alla æfi. Það var betra að gera það ekki. Og með þeim ásetningi að gera það ekki, kom hún nær og nær barminum. Hvað var þetta? Hvannirnar bærðust! Hún þaut fram. Hann var lifandi! Í hrapinu hafði hann náð taki í annan stöngulinn.

Augu þeirra mættust, en hvorugt sagði orð. Þau vissu bæði að björgun hans var að eins skammgóður vermir. Þegar leggir hvannanna brotnuðu, var líf hans týnt. Hún vissi þetta eins vel og hann sjálfur, en það eitt að sjá hann lifandi, geta talað við hann, kældi hjarta hennar aftur.

»Hafið þér nú séð«, ávarpaði hún hann, »hvað nauðugur koss af vörum Dúnu Kvaran kostar?«

»Ég þykist hafa séð það«, svaraði hann.

»Eruð þér ánægður með kaupin?«

»Ég hugsa«, svaraði hann aftur, »að dauðinn hafi aldrei gefið neinum sætari koss«.

Hann brauzt um og tókst að snúa bakinu að hamrinum og dró undir sig fæturna, svo hann gæti stutt þeim við bergið, til þess að spara stönglana lítið eitt lengur.

»Þvi sleppið þér yður ekki?« kallaði Dúna niður til hans. »Þér vitið að þér hafið enga von um að bjargast«.

»Munduð þér gera það í mínum sporum?«

Löng þögn fylgdi á eftir, þangað til Dúna spurði aftur.

»Hafið þér nokkra von?«

»Nei«.

»Hvað haldið þér að stönglarnir endist lengi?«

»Sex eða átta mínútur, gizka ég á«.

Það fór hryllingur um Dúnu við að hugsa sér hann hrapa fyrir augunum á henni, svo hún sagði mjög lágt:

»Þá er ekki neitt að gera«.

» . . . Ekki neitt að gera«, bergmálaði úr hamrinum.

Dúna Kvaran gat ekki þolað að dveljast þarna lengur, en fætur hennar voru þungir sem blý. Þá ávarpaði dr. Espólin hana:

»Ég bið yður ekki fyrirgefningar. Ég fæ fyrirgefning þarna niðri. En þegar ég er dáinn, bið ég yður að láta móður mína ekki gjalda þess, sem ég hefi gert yður í dag. Sjáið þér um, að henni verði leyft að halda áfram að lifa í litla tigla-húsinu ykkar, þar sem hún hefir alið mestan sinn aldur«.

Dúna Kvaran virtist ekki heyra bæn hans. Hún starði niður í gjögríð, og mældi fjarlægðina með augunum. Alt í einu spratt hún upp og kallaði:

»Reynið að halda yður uppi eins lengi og unt er!«

Hún þaut af stað, spretti af hestinum sínum, tók áklæðið sitt, flaug niður með gilinu og komst inn í það að neðanverðu. Hún reiknaði út blettinn, þar sem maðurinn mundi falla og tók í óðaönn að reyta upp mosa og gras, sem hún bar í áklæðinu í eina hrúgu. Hún hafði á fárn augnablikum tint allan mosa, sem var að fá þar í kring. Nú stóð hún og jafnaði hann. Hún tók sér ekki tíma til að líta upp, hún kallaði bara:

»Getið þér haldið dálítið enn?«

»Ég hugsa það fari nú að siga á seinni hlutann«, var svarað að ofan.

Dúna Kvaran tók áklæðið sitt og reiðfötin og lagði þau efst á mosabinginn. Í sömu svipan kom önnur hvönnin niður. Hún leit upp, og köldum svita sló um hana, hún sá að jurtin, sem eftir var, lét meira og meira undan þunga mannsins. Hún horfði yfir beðinn, sem hún hafði búið honum og fann hann mundi naumlega bjarga lífi hans.

Hún hikaði eitt augnablik, svo kallaði hún upp til hans:

»Þegar þér verðið að sleppa, þá horfið niður, og gætið þess þér fallið á bynginn, sem ég hefi búið til, og nú, verið svo vænn — lokið augunum litla stund«.

Hún tók til að afklæðast, og lagði hvert fatið á fætur öðru ofan á binginn. Innan fárra augnablika stóð hún alveg nakin. Hún sparaði ekkert. Hún gekk til fáein köld skref, rakti hárið úr fléttunni og tók sér sæti bak við það á litlum mosavöxnum steini.

Hvönnin í berginu var að slitna upp, og maðurinn leit við. Sýn brá fyrir augu hans, feigðarsýn brá fyrir augu hans. Hann sá lækkanði sólina lýsa upp kvenlíkan úr marmara og gulli. Þá — á einu mjög löngu augnabliki rann upp fyrir honum veruleikinn. Hann hló og grét í sama svip, eins og sá, sem hefir verið snortinn af

hendi guðs. Hann þrýsti vörum sínum að klettinum, sem hann var að skilja við og, með spyrjandi umli, sem steig eins og flögrandi reykur upp af brennandi hjarta hans, hvíslaði og hvíslaði hann af nýju: »Hvernig gat hún gert það, hvernig gat hún gert það?«

Hann lét fallast niður á beðinn, sem hún hafði búið honum.

Hann lá ósjálfrátt kyr allra fyrsta og sárasta augnaklikið, og naut kvala sinna. Þá reyndi hann að standa upp og rétta henni klæðin, en gat ekki fyrir sársauka. Hann kastaði til hennar fötunum og lagðist svo niður aftur.

Báðir fótleggir hans voru brotnir — en lífi hans var bjargað.

Dúna Kvaran stóð full-klædd fyrir framan hann og spurði hvernig honum liði.

Hann gerði ekki nema brosa.

»Þér getið ekki staðið upp?« spurði hún.

»Ekki enn«.

»Ég ætla að ríða af stað og sjá um, að þér verðið fluttur heim«.

»Ég þakka yður«.

Dúna Kvaran breiddi yfir hann reiðfötin sín og söðulklæðið, og reið heim.

Næsta kvöld lá dr. Ingvar Espólin í rúmi sínu í litla tigla-húsinu og kinkaði brosandi kolli til starfsbróður síns, læknis úr næsta héraði, sem móðir hans fylgdi til dyra.

Þegar hún kom inn aftur, settist hún niður við gluggann og tók af nýju upp sauma sína.

»Þú fær að halda á þolinmæðinni, drengurinn minn. Þú verður að liggja lengi í rúminu«.

»Mestalt sumarið, hugsa ég, mamma«, svaraði hinn ungi maður með rósemi.

»Þú ættir ekki að halda þennan hest, Ingvar, hann getur hnotið með þig öðru sinni«.

»Já, ég er að hugsa um að farga honum«.

Frú Espólin varð litið út um gluggann og saumar hennar hnigu niður í kjöltu hennar.

»Éld hann ætli bara ekki að ná henni«, kallaði hún upp.

»Um hvað ertu að tala, mamma?«

»Það er ungfrú Kvaran og herrann, sem er að fiska í ánni — hann var að sýna henni eitthvað, ég ætla það hafi verið ljósmyndir eða eitthvað þess konar, og hún hljóp burt með það«.

Lítil stund leið.

»Er hann búinn að ná henni núna?« spurði sjúkl-ingurinn.

»Já, en hún fleygði því í ána, áður en hann náði í það — hann er afar misfeginn«.

»Og hún — hvað er hún nú að gera?«

»Hún er að kitla hann bak við eyrað með stöng-inni«

Dagar og vikur liðu, og mestalt hið skamma ís-lenzka sumar.

Herrann, sem var að fiska í ánni, hafði fyrir löngu kvatt sveitina. Og Dúna Kvaran — Dúna Kvaran hafði verið, fyrstu dagana í júlí, flutt í bíl suður til höfuðstað-arins, þungt haldin af lungnabólgu.

Undir eins og dr. Espólin komst á fætur, fór hann til Reykjavíkur, sem lét í té fleiri þægindi og minni einveru meðan hann væri að ná sér, heldur en sveitin gerði. Hans fyrstu litlu gönguför var heitið til spítalans — þar sem Dúna Kvaran lá. Hann skildi eftir við dyrnar blóm-vönd úr gulum rósum með nafnmíðanum sínum, utaná-skrifuðum til hennar, og að eins heimilisfang hans í bæn-um ritað á.

Hann fékk ekki heldur neitt svar á móti.

Fjórum dögum seinna færði hann á spítalann vendil úr dala-liljum og reit með bréf. Hann útskýrði henni, hve erfitt væri fyrir sig að finna nokkra leið til að nálg-ast hana aftur, jafnvel í auðmýkt, eftir alt sem hafði í . skorist. Hann vissi, að hún nú hefði verið bundin við

langan og sáran sjúkrabeð fyrir hans sök og engin stund dagsins liði svo, að hann óskaði ekki að hann hefði látið líf sitt, heldur en að hafa bakað henni þau mein. Fyrir það sem hún hefði gert, yrði engar þakkir færðar. Hann geymdi athöfn hennar í fjársjóði sálar sinnar, líkt og helga jurt, sem hlyti skúr sína og skin frá tárur hans og brosum.

Hann fékk frá henni tveim dögum síðar nokkrar línur, þar sem hún þakkaði honum fyrir blómin og sagði það mundi hafa glatt sig að sjá hann líka.

Fám mínútum síðar, þegar hann kom inn í sjúkrahverbergið, sat Dúna Kvaran klædd og dúðuð í ábreiðum í lágum hægindastól við gluggann. Hún bað hann setjast á litinn stól á móti sér; hún átti von á móður sinni bráðlega.

»Yður er batnað nú?« spurði hún, þegar hann var seztur.

»Já, ég er albata, en þér ekki«.

»Þér sjáið það er framför«, svaraði hún með dauðu brosi, og bætti við eftir litla stund:

»Ég hugsa það hafi verið heldur kalt fyrir mig uppi í gílinu um kvöldið; en mamma hefir ávítað veslings herra Laxdal fyrir að leyfa mér að vera að valsa með sér úti svona snöggbúin«.

»Ég dirfðist«, anzaði dr. Espólin, »að skrifa yður þetta bréf, eingöngu af því, að þér endursenduð ekki rósirnar. Svo komu línurnar frá yður. Og sá sem hafði unnið til brennandi haturs yðar, hlaut nú miskun yðar«.

Fleira gat hann ekki sagt og hann sneri ásjónu sinni undan.

»Þér áttuð það skilið einu sinni«, sagði Dúna Kvaran, »en það er langt síðan. Þér gerðuð árás á hreinleik minn og ég hratt yður í staðinn fram á dauðans brún. Var það ekki nægileg refsing?«

»Mér virðist«, hélt hún áfram, »að mannlegar tilfinningar eigi ekkert siðgæði. Þér getið reynt að gera allt að óskum einhvers og það getur látið hjarta hans ósnortið;

en ef þér látið hann leggja eitthvað stórt í sólurnar fyrir yður, það markar hans sál. Ástin vex heitara í hjarta þess sem færir fórnina en í hjarta þess sem fær hana. Ég hefi legið hér veik í tvo mánuði; en þessir tveir mánuðir töldu ekki sextíu daga. Allur sá tími umfaðmaði bara einn dag, einn langan og fagran dag, daginn sem ég stóð nakin til að bjarga lífi yðar. Ég sé enn fyrir mér mann, líf hans hangir á þræði, hann horfist í augu við dauðann með bros á vörunum, sem kystu mig

Hún rétti út báðar hendur á móti honum. Hann hneig niður með höfuðið í kjöltu hennar.

Það var eins og öll náttúran streymdi í kvaki og angan inn um gluggann, og mitt í því sat hún og hélt áfram að tala.

Hann hlustaði á rödd hennar. Hann hlustaði á eilífðarinnar dropatal:

Dúna Kvaran, Dúna Kvaran. Alt var Dúna Kvaran. Og fuglarnir sungu nafn hennar.

New York, 1916.

Goðmundur Kamban.

Nýjar uppgötvanir um mannsröddina.

Orðin eru tákn hugsananna; en orðin eru samtengd hljóð og hafa hljóðfræðingar reynt að gera sér grein fyrir, hvernig hvert einstakt hljóð verður til og hermir hljóðfræðin frá því. Vant er að greina á milli raddhljóða og samhljóða; fer það eftir afstöðu raddbanda, tungu, nefs, tanna, góms og vara, hversu þessi hljóð eru og er þeim flokkað í tannhljóð, gómhljóð, nefhljóð o. s. frv. Við skulum t. d. lita á, hvernig r myndast. Miðbik munnsins er þá stundum þröngt, svo að loftinu veitir erfitt að streyma út um munninu; þetta r heyrir i ensku í byrjun orða á eftir tannhljóðum, t. d. dream, try og er algengt í islenzku (t. d. Grimur, traudla). Stundum er miðbik munnsins lokað, svo að loftið verður að brjótast út og verður þá brestur (explosion), annaðhvort einu sinni, eins og venjulega í enska orðinu red, eða hvað eftir annað, og myndast þá titrings- eða sveiflu-r. Við höfum að eins litið á, hvernig r-ið myndast; eftir er að athuga, hvar r-ið myndast, hvar þessi þrengd eða loftbrestur verður, og er þá hægt að greina á milli þessara r-hljóða:

- 1) v a r a - r : þrengdin eða bresturinn verður á milli varanna og myndast þá venjulega titrings-r, eins og t. d. í þýzku pferd, islenzku brenna.
- 2) t u n g u b r o d d s - r : þrengdin verður milli tungubrodds og einhvers depils milli (efri) tanngarðs og lingómsins, t. d. í islenzka orðinu verk.
- 3) t u n g u b a k s - r : þrengdin verður milli tungubaks aftarlega og lingómsins, titrar r-ið oft og er þetta venjulegt danskt r-hljóð.

- 4) r a d d b a n d a - r: þrengdin verður milli raddbandanna, og titri r-ið um leið, líkist það froskakvaki; þetta r er ekki til í indógermönskum málum, en algengt í arabísku og semítiskum málum.

Málfræðingar hafa búið til kerfi yfir öll hljóð tungumála, er þeir þektu, af því að þeir héldu, að nefnd at-riði eingöngu yllu þeim breytingum á hljóðum og tungumálum, sem kunnar eru. Raunar er þetta rétt að mestu leyti, því að ekkert tillit hefir verið tekið til hreyfinga líkamans og þó einkum sumra vöðva, er valda ýmsum breytingum, og skal dregið á það nánar. Einkum er hljóð m b l æ r i n n mjög mismunandi hjá ýmsum þjóðum og þarf ekki annað en benda á t. d., hve Frakkar tala dimmra og mýkra en við Íslendingar. Rödd Íslendinga er aftur á móti björt og hörð. Og ef við virðum fyrir okkur flestar Evrópuþjóðir verðum við varir við, að rómönsku þjóðirnar hafa yfirleitt dimma og mjúka rödd, Þjóðverjar t. d. bjarta og mjúka rödd, Norðurlandabúar bjarta og harða rödd og enn aðrir dimma og harða rödd. Gætum við því greint á milli 4 aðalflokka:

- I. aðalflokkur hefir dimma og mjúka rödd (rómönsku þjóðirnar).
- II. aðalflokkur hefir bjarta og mjúka rödd (Þjóðverjar t.d.).
- III. aðalflokkur hefir bjarta og harða rödd (Norðurlandabúar).
- IV. aðalflokkur hefir dimma og harða rödd (ýmsir einstakir menn, en ekkert þjóðareinkenni).

Ekki er hægt að svara því, hvernig á þessum mismun standi, öðruvísi en að ólíkt landslag, loftslag og ætt-erni valdi. Suðurlandabúar lifa yfirleitt þægilegra lífi en Norðurlandabúar og er því eðlilegt, að rödd þeirra sé mýkri. Suðurlandaletin, »dolce far niente«, kemur einnig fram í málrómnnum, eins og hún kemur fram í málinu sjálfu (sbr. allar hljóðlíkingarnar). En Íslendingar hafa rödd, sem sköpuð er af óbliðri náttúru og allskyns örðugleikum og virðist útlendingum sumum sem grjót eða stál væri, er Íslendingar hrópa húrra. Íslensk tunga er hörð.

og mætti t. d. benda á kvæðið Valagilsá eftir H. Hafstein, er hann líkir eftir náttúruhljóðunum: — orgar í boðum, en urgar í grjóti.

Má yfirleitt svo að orði kveða, að hver maður fái svip af sinni sveit og kemur þetta í ljós einnig í málrómnunum. Má jafnvel greina á milli ýmsra sveita á Íslandi, auk þeirra orða, er sérkennileg eru fyrir sumar sveitir landsins, á málrómnunum sjálfum, hljómbælum. Máske er bliðleiki danskrar náttúru, fossa- og fjallaleysið, orsök í því, að Danir nota t. d. tungubaks-r-íð, en ekki tungubrodds-r-íð, eins og Íslendingar. Þó að hljómbæl raddarinnar sé venjulega svipaður hjá einni þjóð eða þjóðflokk, gætir þó töluverðs mismunar hjá einstaklingunum. Hver einstaklingur hefir sína eðliródd. En ef hann kemst í geðshræringu, breytist hljómbælinn. Hvernig stendur á þessu? Mætti hér minna á það, sem suðræn Saffó-söng (þýð. B. Th.):

Goða það líkast unun er —
 en orð frá vörum ekkert fer,
 því eitthvað málið hindrar.
 Mjúksár um limu logi mér
 læsir sig fast og dreifir sér;
 þungt fyrir brjósti æ mér er,
 en öndin blaktir á skari.

Eða H. Hafstein í kvæðinu: Nú hef ég fundið það sem suðræn Saffó —:

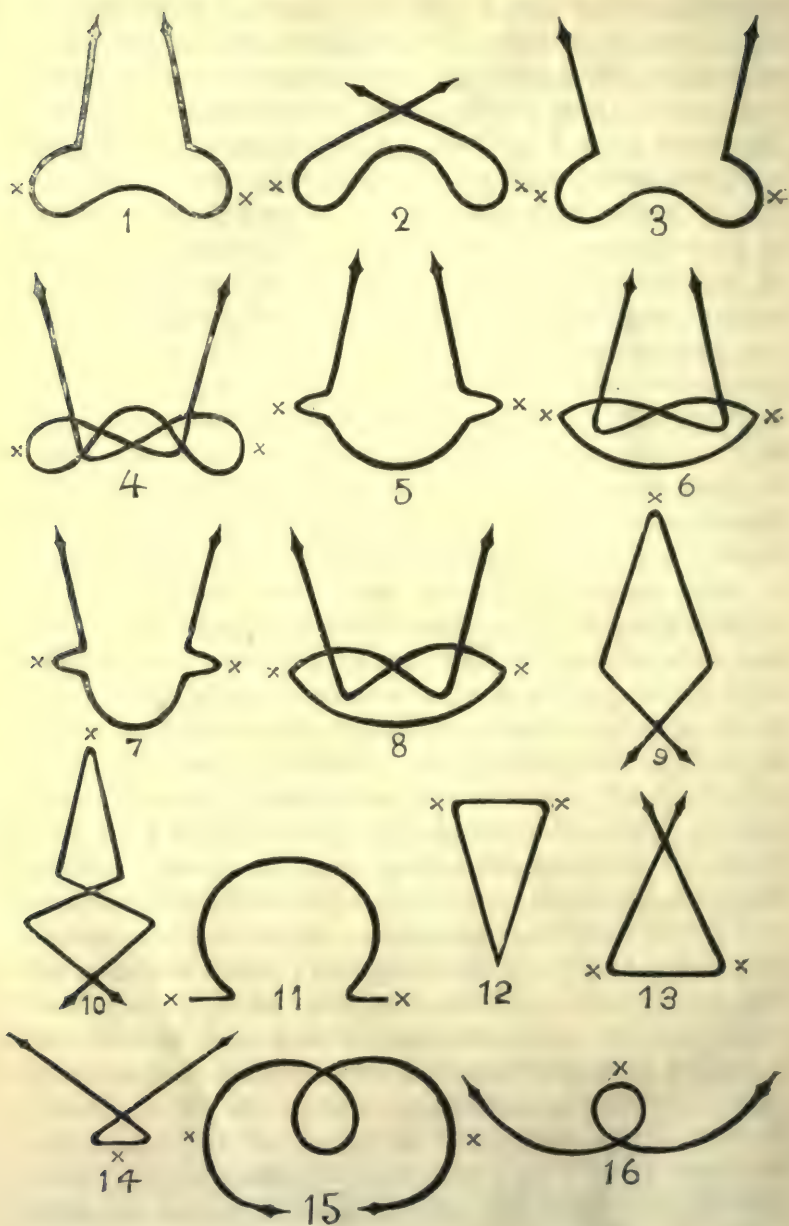
— Nú hef ég fundið yndissára eldinn
 æðarnar fylla, streyma niður brjóstið,
 þrengjast sem eldregn út um kné og sköfnung,
 afl fara úr kálfum.
 — Þornaði munnur, mæði brjóstið hristi —

Í síðustu sögu Einars Hjörleifssonar, »Sálin vaknar«, er gömul kona, Álfhildur, sem fer að hitta Svanlaugu Melan að máli í þakklætisskyni fyrir, að Eggert Sölvason hafði sýnt fram á sakleysi Bjarna sonar hennar; fann þá Svanlaug, að einhver mild gleði kom gegnum reynslublæ raddarinnar (bls. 244). Nægir þetta

til að sýna, að geðshræringar, reiði, gleði, sorg o. s. frv. koma í ljós í röddinni. Er því eðlilegast að ætla, að einhverjar breytingar verði á likamanum, er röddin fær annan blæ. Eftir þessu tók *Josef Rutz*, söngkennari í Dresden, dáiinn fyrir nokkrum árum. Lærisveinum hans veitti miklu hægara að syngja lög eftir ýms tónskáld, ef þeir settu sig í einhverjar óvanalegar stellingar. Gaf nú Rutz nánar gætur að þessu og rannsakaði málið í nokkur ár ásamt konu sinni og syni. Síðan hefir sonur hans dr. Ottmar Rutz búið til fræðikerfi um þessar breytingar á hljómbælum. Málfræðingar fóru að gefa gaum að þessum uppgötvunum; einkum hefir E. Sievers prófessor í Leipzig fengist mjög við rannsóknir á þessum efnum hin síðari árin og gert ýmsar merkar uppgötvanir þar að lútandi. Skal hér nú skýrt stuttlega frá þeim rannsóknum. Kjarninn í þessum athugunum er sá: Ef geð manns örvast og það á sér stað um leið og hann finnur til, hugsar eða vill, þá kvikar vöðvakerfi likamans um leið og er það kvik glegst í vöðvum bolsins og ætíð samfara geðbreytingunni. En þessi geðbreyting og vöðvahræring kemur glögglega í ljós í öllum athöfnum mannsins. Röddin breytist, er hann talar, rithöndin breytist, er hann skrifar, teikningin, sem höndin gerir, fær á sig einkenni geðbreytingarinnar, sömuleiðis hljóðfærasláttur handarinnar, söngurinn, göngulagið, augnaráðið o. fl. Málverk og höggmyndir fá á sig sérstök einkenni, af því að skapferli (og vöðvahræringar) listamannanna er með ýmsu móti og er því hægt, þó fleiri aldir líði undir lok, að sanna um ókunn listaverk, að þau séu gerð af einhverjum ákveðnum listamanni, ef á þeim eru þau einkenni, sem eru sérkennileg fyrir hann. Leiðir nú af sjálfu sér, að beztan skilning fá menn á afreksverkum mannsandans, hvort heldur er skáldsaga, ljóð, tónsmíð, málverk, höggmyndir eða annað, ef skoðandinn getur orðið nákvæmlega eins á sig kominn, eins og höfundur verksins, komist í sama skap (og þar af leiðandi sömu stellingar) eins og hann. Menn ætla máské, að þetta sé mjög erfitt, en

Þessu er ekki ætíð þannig varið. Oft ber það við, er menn líta á málverk, myndir, lesa ljóð, sögu eða annað, að menn verða svo hugfangnir, fá svo miklar mætur á því, er menn virða fyrir sér, að menn komast í hugarástand höfundarins; vöðvar skoðandans hrærast þá um leið, og verða eins og höfundarins, er hann bjó til verk sitt og gerist þetta alt ósjálfrátt. Þá fyrst hafa menn öðlast fullan skilning á verkum þess höfundar, sem um er að ræða; en þetta skeður sjaldnast. Fyrsta skilyrðið er, að skoðandinn hafi fullan og einlægan vilja á að gera sér efnið tamt, ná fullum skilningi á því í heild sinni án þess að taka tillit til einstakra hluta fram yfir heildina og láta yfirleitt ekki sínar eigin skoðanir á því efni, sem um er að ræða, koma til greina, gleyma sjálfum sér á því augnabliki. En til þess verður skoðandinn að vera í jöfnu geði, hann má sjálfur ekki vera í neinni geðshræringu til þess að sálar- og líkamsmáttur höfundarins geti verkað á hann. Er menn fást við þesskonar tilraunir ber að athuga það, að þó litils árangurs gæti oft og tíðum í byrjun, er engu haggð um, að áðurnefndar breytingar eigi sér stað. Það er töluverð list fyrir sig að geta athugað kvikið á vöðvum og rödd með nákvæmni. Mikill er og munur á því, hvað menn eru viðkvæmir. Fer það eftir því, hversu næmir þeir eru á hræringar (motoriker), hljóð (akustiker) eða sýnir (optiker). Erfiðleikarnir eru miklir, einkum af því að kerfið, er Rutz, Sievers og aðrir hafa búið til, er mjög margbrotið. Var drepíð á aðalflokkana 4, en hver þeirra getur tekið ótal smábreytingum, hljómbregðum. Fer það eftir, hversu ýmsum vöðvum er háttað.

Einkenni 1. aðalflokks er það, að kviðurinn er nokkuð framsettur; má sannfærast um það, ef menn setja kviðinn nokkuð fram og brjostið inn og taka síðan til máls, verður þá röddin dimm og mjúk. Einkenni 2. aðalflokks er, að brjostið er nokkuð þanið, en herping hleypt lendarnar þversum, verður þá röddin björt og mjúk. Einkenni 3. aðalflokks er, að herping kemur í lendarnar



miðlínunni til hliðanna. Annar herpingur á sér stað fyrir ofan nafla, er tengir kviðbein beggja megin saman og þrýstir honum inn á við; er herpingur þessi táknaður með q.

Hver aðalflokkur getur því fengið fjölda hljómbriðja:

Hljómmagníð getur verið stórt — lítið.

Hljómblerinn — — kaldur — heitur.

— — — greinilegur — ógreinilegur.

— — — lyriskur — dramatiskur.

— — — dúr — moll.

— — — q.

Tengja má þessi hljómbriði saman á ýmsa lund og geta hljómbriðin þá skift fleiri tugum og þó eru mörg önnur hljómbriði til, er orsakast af öðrum vöðvahreyfingum en þeim, er hér hefir verið minnst á. Málið er ekki nærri fullrannsakað enn, einkum að því er snertir ýmsar vöðvahreyfingar á brjósti og baki, er ýmsum hljómbriðum valda. Enginn vafi er á því heldur, að andlitsvöðvar geta haft áhrif á röddina og hálsvöðvar. Íslensk-

Skýringar á myndunum:

I., II., III. = 1., 2., 3. aðalflokkur.

1. mynd: I kaldur (hljómbler).
2. — : I kaldur og q.
3. — : I heitur.
4. — : I heitur og q.
5. — : II kaldur.
6. — : II kaldur og q.
7. — : II heitur.
8. — : II heitur og q.
9. — : III kaldur eða heitur.
10. — : III kaldur eða heitur og q.
11. — : Stórt hljómmagn (lítið, ef myndinni er snúið við).
12. — : Greinilegur hljómbler fyrir I og II, ógreinilegur fyrir III.
13. — : »Dúr«.
14. — : »Moll«.
15. — : Dramatiskur hljómbler fyrir I og II með heitum hljómbler og fyrir III (lyriskur hljómbler, ef myndinni er snúið við).
16. — : Dramatiskur hljómbler fyrir I og II með köldum hljómbler (lyriskur hljómbler, ef myndinni er snúið við).

ur rithöfundur einn átti erfitt með mál og má líkja eftir rödd hans með því að herða á vissum hálsvöðvum.

Er nú bersýnilegt af þessu, að mjög erfitt mun veitast að kvika ýmsum vöðvum sínum og koma þeim í rétt horf, svo að hljómbriði raddarinnar verði rétt. Eitt kvæði á t. d. að lesa: 1. aðalflokkur, stórt hljómmagn, heitur hljómbær. Verður þá að setja kviðinn fram, spenna hjartagrófina, ennfremur kviðbein til hliða. Fæstir munu þekkja vöðva sína og geta stjórnað þeim svo, að breyting þessi geti orðið. Ýmsar hreyfingar líkamans hafa breytingar á vöðvahreyfingum í för með sér. Standi menn t. d. uppréttir, lyfti framhandleggjunum upp í lárétta stefnu og setji lófana upp, fær röddin á sig blæ 1. aðalflokks; haldi menn nú höndunum í lóðrétta stefnu, fær röddin á sig blæ 2. aðalflokks; haldi menn höndunum lárétt aftur og láti lófana snúa niður, fær röddin á sig blæ 3. aðalflokks; og flytji menn loks lófana og haldi þeim upp undir höku, fær röddin á sig blæ 4. aðalflokks. Áður nefndar vöðvahræringar þessara flokka verða nefnilega samferða þessum útlimahreyfingum.

Kaldan hljómbær má fá, ef menn t. d. rétta visifingur og löngutöng fram, gæta þess, að þeir falli saman og hafi síðan yfir visu. Heitan hljómbær má fá, ef menn nú láta þessa tvo fingur ganga hvorn frá öðrum, svo að þeir myndi þríhyrning og hafi síðan yfir visu. Vitanlega verða menn að gefa nákvæman gaum að þessu og dugir, ef menn hugsa nógu fast og setja sér fyrir sjónir ljósa mynd af tveim álmum, er liggja saman eða hvor frá annari: kviðbeinn fær ósjálfrátt um leið tilhneigingu til að herpast eða slakna. Þessar athuganir á líkamshreyfingum, er höfðu greinileg áhrif á vöðvahreyfingar, ásamt öðru varð til þess, að próf. Sievers hugkvæmdist að búa til allskonar málmyndir, er vera skyldu nokkurskonar smámyndir af vöðvahreyfingum líkamans, þeim, er áhrif hafa eða geta haft á hljómbær raddarinnar. Myndir þessar eiga að vera nokkurskonar sjónarmerki; fáir menn, er þeir lita á þessi sjónarmerki greinilega hugmynd um sund-

urdrátt eða þrýsting, hefir það áhrif á vöðvana, þeir kvika á sama hátt og myndin sýnir og heyrir þessi breyting í röddinni. Myndir þessar eru ýmist beinar eða bognar linur; örvaroddur á endum beinu linanna sýnir stefnu hreyfinganna; yfirhvelfd bugða ~ sagnar, undirhvelfd bugða ~ hrindir frá; þessar bugður stefna því frá tilraunamanninum ↑ eða að honum ↓.

Skal nú lítið snöggvast á þessar myndir (sjá myndirnar á bls. 398). Hér eru sýndar myndir af 11 aðalmyndum og 5 aukamyndum, er eiga um leið að hafa áhrif á áðurnefndan herping fyrir ofan nafnann, er nefndur var q. 1. og 3. myndin hafa þau áhrif, að kviðurinn hvelfst fram og kviðbeinn annaðhvort herpir eða slaknar (1. aðalflokkur með köldum eða heitum hljómbæl). 5. og 7. mynd hafa þau áhrif, að kviðurinn herpir nokkuð inn í lárétta stefnu og kviðbeinn herpir annaðhvort eða slaknar (2. aðalflokkur með köldum eða heitum hljómbæl). 9. mynd hefir þau áhrif, að þrýstingur verður til beggja hliða niður á við og verður að halda þessari mynd jafnhliða lendunum, annaðhvort með oddann heldur fram (3. aðalflokkur, kaldur hljómbæl) eða heldur aftur (3. aðalf., heitur hljómbæl), þar eð þessir vöðvar þrýstast niður á við annaðhvort fram fyrir mjaðmir eða aftur fyrir. (Annars skal öllum hinum myndunum haldið í lárétta stefnu).

11. mynd hefir eingöngu áhrif á hjartagróf og ef bugðunni er snúið frá, verður hljómmagnið mikið (lítið, ef myndinni er snúið við).

12. mynd hefir þau áhrif, að viss depill fyrir ofan nafna dregst inn á við, ef oddinum er snúið að tilraunamanni, en út á við, ef honum er snúið frá.

13. mynd hefir eingöngu áhrif á neðri herpinginn fyrir neðan nafna, dúr, (og ekki þann efri, q).

14. mynd hefir eingöngu áhrif á neðri þverspennuna fyrir neðan nafna, moll (sundurdráttur vöðva).

15. mynd á að tákna þvermál bolsins að neðan og hefir þau áhrif, að vöðvar þrýstast til hliða frá miðlinu fyrir neðan nafna og aftur á bak (dramatiskur hljómbæl

hjá 1. og 2. aðalflokki með heitum hljómbæl, ennfremur hjá 3. aðalflokki). Ef myndinni er snúið við, verður þrýstingur frá baki til beggja hliða að miðlinunni fyrir neðan nafla (lyriskur hljómbæl hjá 1. og 2. aðalflokki með heitum hljómbæl, ennfremur hjá 3. aðalflokki).

16. mynd loks, er einnig á að sýna þvermál bolsins að neðan, hefir þau áhrif, að vöðvadráttur verður frá bakinu til beggja hliða (dramatískur hljómbæl hjá 1. og 2. aðalflokki með köldum hljómbæl, en lyriskur, ef myndinni er snúið við).

Þegar fengist er við þessar tilraunir, er áriðandi mjög, að áhrif myndanna á tilraunamanninn verði sem mest; Sievers hefir því látið gera myndir þessar úr málmalpráðum, er gljáir á, og notar undirlag úr dökku eða svörtu efni, svo að ljósáhrifin verði sem mest. Yrðu ljósáhrifin sterkari, ef tilraunirnar færu fram í myrkri og myndirnar yrðu sýndar af ljósvél, eins og G. Björnson landlæknir hefir stungið upp á við mig; óviðkomandi áhrifum yrði þá byggt út um leið, en ekki hefi eg enn haft tækifæri til að reyna þetta.

Gæta ber þess mjög, er fengist er við tilraunir með þessum myndum (þær, er Sievers notar, eru hér um bil þrefalt stærri en hér eru sýndar, úr messingþræði hér um bil 2 mm á þykkt) að varast allan reiging og sperring. Bezt er að standa uppréttur, leggja mynd þá eða myndir, er menn vilja reyna, á lesmálið og láta handleggina lafa eða þá halda myndinni (myndunum) með fingrunum á þeim stað, er merktur er x á myndunum hér. Eins ber að gæta að, hvernig fótunum er snúið; ef menn standa gleitt, slaknar kviðbeinn hjá mörgum (og röddin fær þá heitan hljómbæl), en ef menn setja fæturna saman, herpist kviðbeinn hjá mörgum (og röddin fær þá kaldan hljómbæl).

Enn er miklum vandkvæðum bundið að geta ákveðið, hverjar myndir hæfa í hvert skifti, hvaða hljómbæl á við eitthvert kvæði; t. d. þeir, sem óvanir eru, verða oft að reyna flestar myndirnar og komast þó oft ekki að.

neinni niðurstöðu. Bezt er þá oft að byrja með síðustu myndunum (dúr, moll, lyr., dram.), prófa sig áfram og leggja þær til hliðar, er ekki koma að notum. Hér ber vel að gæta þess, að það ræður ekki úrslitum, hvaða hljómblae tilraunamaðurinn telur fegurstan í það og það skifti; sá dómur verður oft einhliða og einskis virði. Tilraunamaðurinn verður var við einskonar hughvöt, ef svo mætti að orði komast; hann finnur fjötra koma á sig, þegar hann notar mynd (eða myndir), sem ekki á við, honum verður þá mjög stirt um mál, hann finnur til einhverrar tregðu, ef hann er að fara með einhver hugsmíði á rangan hátt. En hafi hann fundið rétta mynd (eða myndir), finnur hann til hughægðar, honum veitir þá miklu hægara að fara með efnið, það rennur þá eins og sjálfkrafa upp úr honum. Þetta kemur einnig í ljós í raddfærunum sjálfum. Það ber oft við um tilraunamenn, sem verða fyrir miklum áhrifum af myndunum (hér kennir mikils mismunar), að þeir missa andann, þó þeir hafi nóg loft niðri fyrir, ef þeir verða fyrir seiðmagni rangra mynda. Í söng er einkum hægt að taka eftir þessu og hvín þá oft í þeim tónum, sem liggja hátt.

Hér hefir verið reynt að skýra stuttlega frá þessum uppgötvunum Sievers og annara. Hefir Sievers síðastliðin 6—7 ár starfað mestmegnis að þessu og gerir enn. Kerfi hans er í sífellu að þroskast og hefir hann skeytt þessum uppgötvunum inn í hljóðfræði sína. Bersýnilegt er, að þessar uppgötvanir geta komið að miklu gagni. Auk listagildisins, í meðferð kvæða, söng, hljóðfæraslætti o. s. frv., má vænta mikils vísindalegs árangurs af þeim. Rithöfundur hefir t. d. sérstök einkenni í skáldskap sínum. Hann yrkir t. d. flest sín kvæði í ásigkomulagi 2. aðalflokks með köldum hljómblae (t. d. Matth. Joch.). En í örfáum kvæðum bregður út af þessu, hljómblaerinn verður t. d. heitur (Matth. Joch.: Sorg), eða hann yrkir í ásigkomulagi 3. aðalflokks. Er þá oft hægara að skýra, hvernig á þessum breytingum stendur. Eða tónskáld, eins og Schumann, sem yrkir í ásigkomulagi 2. aðalflokks, en

fær á sig einkenni 3. aðalflokks með heitum hljómbæl í »Die beiden Grenadiere«, af því að þetta lag hefir orðið fyrir áhrifum frá franska hergöngusöngnum (Marseillaise), er gerður er í ásigkomulagi 3. aðalflokks. Eða gömul kvæði, er enginn veit um höfund að. Er þá máské auðvelt að sanna, að ýms erindi geti ekki verið eftir sama höfund, eða að einni eða tveim ljóðlinum sé skeytt inn í kvæði af öðrum (afritara). Málið er enn á rannsóknarstigi, en dyrnar eru þegar opnar í gátt og sér inn í nýjan heim ónumdra landa í sálarfræði, málfræði og öðrum vísindagreinum.

Alexander Jóhannesson.

Helstu rit um þetta efni eru:

- O. Rutz: Neue Entdeckungen von der menschlichen Stimme. München 1908.
- : Sprache, Gesang und Körperhaltung. München 1911.
- : Musik, Wort und Körper als Gemütsausdruck. Leipzig 1911.
- : Neues über den Zusammenhang zwischen Dichtung und Stimmqualität, Indog. Forsch. 28 (1911), bls. 301 nn.
- E. Sievers: Neues zu den Rutzschen Reaktionen, Archiv für experimentelle und klinische Phonetik, I, 3 (1914, sérprentun).

Pjóðareignin.

Það er oft því nær nauðsyn að vita, hve mikil er aleiga einhverrar þjóðar. Einkum er það vegna ýmissa opinberra mála. Þannig hafa áætlanir um þjóðareign ríkja, sem nú eiga í heimsstyrjöldinni, að jafnaði verið teknar fram, og gagnskoðaðar á ný, til þess að sýna, hvað þjóðirnar gætu lagt fram af fé í styrjöldina, hvað þeim væri óhætt að taka að láni til hennar, og hverja skuldaþyrði þær yrðu færar um að bera eftir að styrjöldinni væri lokið. Þótt ekkert slíkt sé á ferðinni, er þekking á þjóðareigninni samt nauðsynleg til þess að gera sér skiljanlegar ýmsar breytingar í þjóðlífinu, sem koma fram í skýrslum um ýmsa hagi landsmanna, og sjá hver áhrif þær hafa á heildina. Þjóðareignina er erfitt að kveða á um í mörgum greinum. Fullkomin nákvæmni er óhugsandi, en þó er unt að komast svo nálægt hinu rétta, að áætlunin sé nýtileg, og verði höfð til samanburðar við ýmsa aðra útreikninga.

Til þjóðareignarinnar eru talðar hér allar jarðir, húseignir, skip, hafnarvirki, skepnur, verkfæri, vélar, vörubirgðir, húsgögn, fatnaður, peningar í umferð manna á milli og kröfur á önnur lönd, en kröfur annara landa á Ísland dregnar frá. Yfir höfuð er það áþreifanlegt verðmæti, sem talið er í þjóðareigninni. Krafa er ef til vill ekki álitin áþreifanleg, en skuldabréfið, sem hún byggist á, er það. Sumir vilja telja til þjóðareignarinnar andleg auðæfi þjóðarinnar, starfsþrek landsmanna, skynsemi og þekkingu, en það verður ekki talið hér, af því að það er ekki áþreifanlegt, og verður heldur ekki metið. Hvernig

á að meta til fjár þekkingu vísindamannsins? Þekkingu og handlægni ágæts skurðlæknis? Framsýni og hugrekki mikils fésýslumanns? Verkin þeirra má oft meta til peninga, mennina sjálfa og hæfilegleika þeirra þar á móti ekki, nema hvað uppeldi þeirra hefir að einhverju leyti kostað.

Áþreifanlega eign má einnig meta ýmislega og eftir ýmsum reglum. Það er tvent ólíkt: hvað eigandi jarðar eða húss metur eign sína mikils virði, eða hvað fæst fyrir hana á nauðungaruppbóði, — nauðungarverðið. Bankar og lánsstofnanir lita oftast á nauðungarverðið, eigandinn á velvildarverðið. Hvorugt verðið er nýtilegt, þegar þjóðareignin er reiknuð út. Þá verður yfirleitt að fara eftir vanalegu verði á eigninni, eins og það er í meðalári, ef seljandinn þarf ekki að hraða sölunni, en getur beðið tækifæris sér að skaðlausu. Þetta á við þær eignir yfirleitt, sem ganga kaupum og sölum eða í erfðir mann frá manni. Eignir, sem ekki ganga kaupum og sölum, eins og hafnarvirki, ljósáhöld í kaupstöðum og vatnsleiðslur, símalínur og járnbrautir, verður annaðhvort að virða eftir byggingarkostnaðinum, eða með því að hugsa sér árstekjurnar af þessum eignum sem vexti af þeim, og hugsa sér svo hvers virði þær eru. Hafnarvirki, sem gefa af sér 4000 kr. árlega í hreinan ágóða verða þá 100,000 kr. virði. Með þessháttar almannaeign er það vissara hér á landi að leggja stofnkostnaðinn til grundvallar — það er hann, sem hefir farið til að koma þeim upp, en þau eru flest svo ung að óséð er enn, hvað þau muni gefa árlega af sér. Sum þeirra eru jafnvel ekki fullger enn, og hvað þau gefa af sér er alveg í óvissu.

Öll þjóðareignin skiftist í fasteignir og lausafé, og við eftirfarandi áætlanir verður þeirri aðgreiningu haldið til þess að yfirlitið verði ljósara. Fyrst verða þá teknar

A. Fasteignir.

1. Jarðirnar á landinu voru með konungsúrskurði 1861 metnar til hundraða eftir að mat á jörðunum hafði

farið fram hér innan lands. Jarðarhundrað var metið eins til peninga um alt land, en varð þó töluvert dýrara í Múlasýslum en annarstaðar. Jarðarhundraðið þar hefir því ávalt verið selt dýrara síðan, þangað til fyrir fám árum, þá urðu jarðirnar nálægt Reykjavík dýrari en annarstaðar á landinu. Lengi mátti sjá af fasteignasölu-gjöldum, og af erfðafjárskatti, að jarðarverðið var upp og niður 100 kr. hundraðið. Við það að gjaldmiðill hefir aukist við tvo banka með útibúum, hefir jarðarhundraðið stigið ákaflega í verði, svo að sum jarðarhundruð hafa verið seld á 1000 kr. (30 hundraða jörð á 30,000 kr.). Í Múlasýslum hafa jarðarhundruð fyrir löngu komist upp í 4—500 kr. og þar yfir. Jarðarhundraðið verður því ekki sett mjög lágt nú orðið. 1907 settum við það — menn úr skattamálanefndinni og eg — á 150 kr. yfirleitt á öllu landinu, sem vitanlega er alt of lágt nú orðið. Bæði fæst miklu minna land fyrir sömu peningaupphæð en áður, og jarðirnar hafa verið bættar á ýmsan veg. Meðal bótanna má telja jarðabætur, girðingar, og húsa-byggingar til sveita. Nú sýnist svo, sem 250 kr. séu hæfilegt verð á jarðarhundraðinu upp og niður, en jarðar-hundruðin á landinu 86,189, en þar frá verður að draga hér um bil 1550 hundruð, sem eru óbygð. Verð allra jarða á landinu verður þá 21 milj. króna.

2. Annar helzti liðurinn í fasteignum landsins verða húseignirnar í kaupstöðum og kaптúnum. Þar eru fyrst og fremst virðingar til skatts á húsunum að fara eftir. Allar þær virðingar eru nú orðnar alt of lágar vegna verðfallsins á peningum. Hús sem hafa verið virt á 5000 kr. fyrir síðustu aldamót, mundu oftast seljast nú á 10,000 kr., ef þeim hefir verið vel haldið við. Samt sem áður hafa gömlu virðingarnar til skatts verið látnar halda sér hér, þótt þær séu of lágar orðnar. Eftir skatta-skýrslunum voru húsin sjálf metin þannig 31. desbr. 1914:

Í Reykjavík kr. 12,467,000

Í Hafnarfirði — 862,000

Flyt kr. 13,329,000

	Fluttar	kr. 13,329,000	
Á Ísafirði	—	1,214,000	
Á Akureyri	—	1,586,000	
A Seyðisfirði	—	653,000	
Húsin í öllum öðrum kaup-			
túnunum og verzlunarstöð-			
um voru sama dag . . .	—	8,062,000	kr. 24,844,000

En svo er meira verðmæti til í kaupstöðum, kaup-
túnunum og verzlunarstöðum en þetta, og eru það lóðir og
ýms mannvirki. Í áætlun þeirri um þjóðareignirnar á
landinu, sem er að finna á bls. 126 í nefndarálitinu um
skattamál Íslands 1908 er rækilega lýst stærð lóðanna í
kaupstöðunum nema í Hafnarfirði, en þar hefir kaupstað-
urinn nýlega keypt alla lóðina, sem hann stendur á, og
það er kunnugt fyrir hve mikið. Lóðirnar í Reykjavík
hafa verið virtar upp og niður á 1 kr. 50 a. feralin. Hafnar-
fjarðarlóðin hefir kostað 97,000 og hefir með endurbótum
verið virt hér á 100,000 kr. Hafnarvirkin út um land
eru metin eins og í áætluninni 1908 og bætt við Reykja-
víkur hafnarvirkjunum, sem eru sett á 1600,000 kr. og
bryggjunni í Hafnarfirði, sem kostaði 120,000 kr. Til að
finna út lóðarverðið í kauptúnunum og verzlunarstöðum út
um land, hefir verið tekin húseignatalan og áætlað að
hver húseign hækki verð lóðarinnar í kauptúninu um
200 kr. En sú upphæð hefir verið valin fyrir þá sök, að
það má álíta að meðal lóðargjald af þessum lóðum séu nú
8 kr. á ári, sem svarar 4% vöxtum og 200 kr.

Verð lóða og mannvirkja (hafnir, skipabryggjur, vatns-
veitur og ljósfæri) verður með þessari aðferð þetta:

Í Reykjavík	kr. 6,500,000	
Í Hafnarfirði	— 290,000	
Á Ísafirði	— 670,000	
Á Akureyri	— 805,000	
Á Seyðisfirði	— 180,000	
Í öðrum kauptúnunum og		
verzlunarstöðum . . .	— 1,786,000	kr. 10,231,000

3. Samgöngufæri. Hingað heyrja jafnframt vitar þeir, sem bygðir hafa verið á landinu, og hefir kostnaðurinn við það orðið til ársloka 1914 . . . kr.	375,000
og símar, sem hafa verið bygðir eða keyptir til sama tíma —	2,000,000
Samtals	kr. 2,375,000

Öll þjóðareignin í kaupstaðarhúsum og mannvirkjum í kaupstöðum, sínum og vitum verður þá í árslokin 1914 37,450,000 kr.

Vitar og símalínur eru samgöngufæri, og þar sem vegirnir og brýrnar yfir árnar eru það sömuleiðis, verður að gæta þess, hvort þeir ekki eiga að teljast í þjóðareigninni. Til vega og brúa yfir ár hefir verið varið af landssjóði og frá sveitar- og sýslufélögum frá 1880 og til ársloka 1915, eftir því sem næst verður komist, hér um bil 6 milj. króna. Vegirnir hafa gengið af sér og þurft endurbóta hvað eftir annað, en járnbrýr og steypar brýr halda sér yfir höfuð að tala vel. Vegir og brýr verða samt ekki taldir með þjóðareigninni, því allir geta farið eftir þeim endurgjaldslaust, og þeir gefa engar beinar tekjur í aðra hönd, eins og segja má að vitarnir gjöri. Vegirnir hækka jarðarverðið, og væru þeir taldir í þjóðareigninni sérstaklega yrði að draga þá frá jarðarverðinu. Vegir og brýr eru ekki tekjur fyrir þá, sem um þá fara, en þeir spara þeim útgjöld. Þeir stytta tímann, sem maðurinn er á ferðinni, og gjöra að verkum, að ferðamennirnir komast af með færri hesta.

Fasteignir landsmanna verða eftir hinu framan-sagða 58½ miljón króna.

B. Lausafé.

1. Verzlunar- og fiskiflotinn hefir tekið miklum framförum á síðustu árum. Þótt stóru skipin séu talin til fasteigna af lögfræðingum, þá eru þau talin með lausafé hér. Hér er sú aðgreining þýðingarlaus, og eðlilegast að telja alla skipaeignina undir einum lið. Verzlunarskipin eða flutningaskipin eru talin með því verði, sem þau kostuðu.

ný, og eru öll keypt nýlega. Togarar eða botnvörpuskípin eru sett hér með áætluðu verði, sem ekki er helmingur þess, er þau skip mundu kosta nú nýsmíðuð. Seglskip, sem ganga á fiskiveiðar og eru 40 smálestir að meðaltali, eru sett með áætlunarverði, og það er lægra en þau mundu ganga kaupum og solum. Mótorskipin hafa verið verðsett sem næst því, er þau fást nú nýsmíðuð. Mótorbátar eru áætlaðir eftir kaupverði að sliti frádregnu. Róðrabátar eru áætlaðir eftir meðalverði, sem mun vera næst því rétta. Tala mótorskipa, mótorbáta, seglskipa og róðrabáta og smálestatal þeirra eru tekin eftir fiskiskýrslum Hagstofunnar 1914. Skýrslurnar telja eingöngu skipin, sem gengið hafa til fiskiveiða. Flutningaskípin og togararnir er nú:

1. Skipaflotinn er allur virtur til peninga:

3 flutninga- og farþegaskip alls á . . .	kr.	1,440,000
21 togari eða botnvörpungar á 120,000 kr. —		2,520,000
93 seglskip 3672 smálestir alls á 15,000		
kr. skipið upp og niður	—	1,395,000
23 mótorskip 519 smálestir á 1000 kr. .	—	519,000
400 mótorbátar á 5000 kr. upp og niður .	—	2,000,000
986 róðrabátar af ýmsum stærðum, báturinn með öllum reiða á 500 kr. upp		
og niður	—	493,000
Samtals		kr. 8,367,000

2. Annar liðurinn í lausafjáreigninni er fénaður, naut og hestar. Tala þeirra er tekin eftir búnaðarskýrslunum 1913. Hún var ekki of há, en það má efast um verðið, sem hér er sett á skepnurnar. Kýrin er hér sett á 200 kr., hesturinn eins, ungviði er sett lægra. Ærin er sett á 35 kr., og annað sauðfé töluvert lægra. Verðið verður þá þetta:

Nautpeningurinn	kr.	4,500,000
Sauðfénaður og geitur	—	17,500,000
Hross	—	7,500,000
Samtals		29 ¹ / ₂ milj. kr.

3. Þá kemur ýmislegt til greina, svo sem vinnuvélar, tóvinnuvélar, smíðavélar, verkfæri, plógar, herfi, sláttuvélar, orf og ljáir. Þetta er hér tekið eftir áætluninni í álitni skattaneftndarinnar 1908, bls. 126 og 127, og áætlað 1 milj. kr.

4. Eftir sömu áætlun voru innanstokksmunir og fatnaður, sængurföt, stólar, eldhúsgögn o. s. frv. áætlaðir 100 kr. á mann. Sú áætlun mun vera alt of lág nú og 200 kr. munu ekki vera of hátt á mann. Það er langt síðan að uppbúið rúm kostaði minst 100 kr. Þessir hlutir verða því fyrir liðug 87,000 manns $17\frac{1}{2}$ milj. kr. Það mætti sjálfsgt hafa móti því, að telja þessa hluti til þjóðareignar, t. d. af þeirri ástæðu, að föt eða sængurföt framleiði ekki neitt. En þau eru áþreifanleg eign; án þeirra framleiðir enginn maður neitt; án þeirra hættir lífið að vera lif. Sá sem lána þessa muni af öðrum verður að svara af þeim vöxtum.

5. Eign eða fjárstofn íslenzkra kaupmanna, sem stendur í verzlunum þeirra hér, og líklegt er að verði að samsvara þeim vörubirgðum, sem þeir hafa í nóvembermánuði hvert ár, var eftir lausri ágizkun kaupmanns sem var í skattaneftndinni 1907—08 talin 3 milj. kr.

6. Þá er aðallega eftir af því lausafé, sem talið verður þjóðareign, gull- og silfur-peningar í bönkum og manna á meðal. Meðalgullforði í Ísandsbanka er nú síðustu árin nálægt einni miljón króna. Þessi styrjaldartími er undantekning, sem fellur burtu áður en langt um liður. Af gullforðanum má búast við að sé í kröfum erlendis og í flutningi hingað hér um bil 200,000 kr., svo eftir verða 800,000 kr., sem meðalgullforðinn nemur. En svo er getgáta, hvað er í umferð manna á milli. Eftir að lögin um greiðslu á vinnulaunum í peningum komu í gildi í raun og veru, má segja, að hver unglingur beri peninga á sér. Frá því í september 1914, að landsstjórninni var falið að sjá fyrir gjaldmiðli, hefir hún flutt hingað 126,000 kr. í silfri, og það má ætla að bankar og einstakir menn hafi komist yfir jafnmikið. Á tveimur árum ættu því að

hafa verið fluttar inn í landið 250,000 kr. í silfri. Eitt-hvað hefir verið fyrir hendi áður, og svo vitanlegt sé er hvorki silfur né kopar flutt af landi burt. Silfur og kopar í umferð mun mega áætla 700 þús. kr., og verður þá öll upphæðin $1\frac{1}{2}$ miljón króna.

Þá eru ótalin bókasöfnin, þjóðmenjasafnið og ýms málverk, sem eru almanna eign. Þessi söfn gefa ekki af sér neinar tekjur. Það er erfitt að ákveða verð þeirra. Þjóðmenjasafnið, forngripasafnið, eins og það hét áður, er að líkindum ómetanlegt fyrir þjóðerni landsmanna. Mál-verkin auka kjörvísí, og bókasöfnin fróðleik. En eigin-lega mun vera réttast að skoða þau eins og vegina hér að framan. Þau eru andlegar samgöngubætur, sem stytta leiðina, eða spara þeim, sem þau nota, útgjöld, sem þeir gætu ekki komist yfir að greiða, en nú geta fengið með því að ganga á söfnin og leita þar uppi það, sem þeir vilja sjá eða lesa. Þau eru því ekki tekin upp í þjóðar-eignina.

Lausafé þjóðareignarinnar sett saman af þessum upphæðum.

Skipaflotinn	8,3 milj. kr.
Nautpeningur, sauðfé, hestar	29,5 — —
Vinnuvélar	1,0 — —
Innanstokksmunir og fatnaður	17,5 — —
Vörubýrgðir	3,0 — —
Peningar	1,5 — —
Samtals	60,8 milj. kr.
Allar fasteignir voru	58,5 — —
Þjóðareignin öll áður en lausar skuldir eru dregnar frá	119,3 milj. kr.

C. Skuldir.

Innlendar skuldir eru hvorki frádráttur né viðbót við þjóðareignina. Ef bankarnir hafa úti í umferðinni 3 miljónir króna í seðlum, þá eru þeir í skuld við handhafa seðlanna um þá upphæð, en handhafar seðlana eiga 3 miljónir króna hjá bönkunum. Ef þessum 3 miljónum er

bætt við eignir handhafanna og þær hækkaðar um þrjár miljónir, verður að lækka eign bankanna um sömu upphæð. Í þjóðareigninni verða þær $+$ 3 milj. og \div 3 miljónir. svo útkoman er 0 fyrir hana. Ef kaupmaður á 500 kr. hjá viðskiftamanni sínum, þá eru það $+$ 500 kr. fyrir kaupmanninn en \div 500 kr. fyrir viðskiftamanninn. Fyrir þjóðareignina er það 0. Þjóðin er hvorki rikari né fátækari á eftir. Landsmenn áttu 18 milj. króna inni í sparisjóðunum 1. jan. 1916. Það af fénu sem hefir verið lánað landsmönnum aftur, verður $+$ og \div í þjóðareigninni og $=$ 0. Hafi eitthvað af því staðið inni í bönkum erlendis, þá er það $+$ í þjóðareigninni. Skuld til annara landa verður að dragast frá þjóðareigninni, og innieign í öðrum löndum verður að bætast við hana.

Eins og nú er komið þá hafa flestir fésýslumenn og kaupmenn lánstraust sitt í bönkunum, og standa ekki í neinni skuld erlendis. Til eru samt erlend verzlunarhús, sem taka lán erlendis, en skuldir þeirra get eg ekki talið íslenzkar skuldir. Eftir því sem eg get komist næst, voru allar skuldir landsjóðs og landsmanna (veðdeildanna) 1. janúar 1916 9,9 milj. kr. og á móti þeim verður að færa inn eignir bankanna erlendis s. d. 7,3 — —

Mismunur 2,6 milj. kr.

og þann mismun verður að draga frá aðalupphæð þjóðareignarinnar, sem þá verður 116.7 milj. króna.

Eg hefi fyrir nokkru gert lauslegt yfirlit yfir hvað fáar einstakar greinir af þjóðareigninni hefðu vaxið frá 1907—1915, en tók allar hinar óbreyttar eftir áætlun skattamálanefndarinnar 1908. Við það varð aleiga landsmanna miklu lægri en hér (90 milj. kr.). Eg hef gert tilraun til að gera hana upp fyllilega tvisvar áður. Fyrsta skiftið var 1880, eg þurfti að sanna að litill banki gæti staðið hér — eg var að telja menn á að setja hér upp seðilbanka — og þess vegna var hálf gert talin með þjóð-

areigninni verzlunarvaran, sem kemur til útflutnings á einu ári, því hún er undirstaða undir bankalánunum. Án verzlunarvörunnar var þjóðareignin 1880 . . . 30 milj. kr. 1907 þegar erlendar skuldir voru frá

dregnar var hún 53 — —
og 1915 eins og sýnt er að framan . . . 116,7 — —
Velmegun landsmanna hefir samt ekki vaxið svona mikið í sannleika. Krónan er mælikvarðinn öll árin, en hún er alinmál sem alt af styttest. Hver hlutur sem á það er mældur lengist ávalt og ávalt. Eg skrifaði ritgerð í Skírni 1908 um verðfallið á peningum, og sýndi og sannaði að 2 kr. árið 1900 höfðu sama kaupmagn sem 1 kr. 1850. Þar var líka sýnt fram á, að til þess að geta fengið sama af nauðsynjum 1907 og fékst fyrir 1 krónu 1850 þurfti 2 kr. 50 aura síðara árið. Um sama leytið stóð í Economist að verðfall peninga á Bretlandi væri litlu meira en hér. Þessar hækka og lækka þar ávalt litlu áður en þeir hækka eða lækka hér. Það mun láta nærri sanni, að til þess að kaupa það, sem fékst fyrir 1 krónu 1850 þurfti 4 kr. 1915. Eftir að Skírnis ritgerðin var skrifuð hefi ég komist að þeirri niðurstöðu, að peningar hafi haft líkt gildi árið 1875 og 1880 eins og 1900, nema hvað húsaleiga í bæjum og vefnaðarvara höfðu hækkað eitthvað í verði. Sé nú gildi krónunnar 1880 lagt til grundvallar, þá verður þjóðareignin töluvert minni tvö síðari árin, þó verður að láta húseignirnar og lóðirnar, verð skipa, vélar, innanstokksmuni og fatnaðar- og vörubirgðir halda sér hér um bil, því allar þær virðingar eru gamlar eða lágar, en draga má úr öðrum liðum. Þá dragast c. 5 miljónir króna frá þjóðareigninni 1907, en hér um bil 25 milj. kr. frá þjóðareigninni 1915. Mælt með verði krónunnar frá 1880 verður þjóðareignin 1880 — 30 milj. kr., 1907 48 milj. kr. og 1915 92 miljónir króna. Framförin í efnahag landsmannna á síðustu 35 árum verður ákaflega mikil fyrir því, og eignin hefir þrefaldast í raun og veru á 35 árum.

Indr. Einarsson.

Grátur.

Smásaga eftir *Martu Jóhannsdóttur*.

Oft grét eg, þegar eg var lítil. Stundum allra snöggvast, stundum þungt og lengi, eftir því, hve sorgarefnin voru mikilvæg. Ösjaldan voru það hestarnir, er komu út á mér tárunum. Ekki svo að skilja, að mér þætti eg hafa ofmikið saman við þá að sælda, eins og t. d. kýrnar. Langt frá því. Eg fékk aldrei nógu mikið að hrossast á hestbakinu.

Einkum minnst eg eins vorkvölds, er varð mér þunglifað vegna hestanna. Þeir höfðu verið heima um daginn, en um kvöldið sagði faðir minn, að það yrði að flytja þá í haga, svo þeir bitu ekki túnið um nóttina.

Strákarnir, Gvendur smali og Nonni bróðir, af stað, og eg á eftir. Þeir voru eldri en eg, og fljótari að hlaupa. Þeir gripu tvö bandbeizli, sem voru í bæjarsundinu, og þutu út hlaðið. Þá var ekkert beizli eftir handa mér; samt elti eg þá út á bæjarhólinn. Þeir stukku niður tröðina.

— Lof mér að vera með ykkur, — grenjaði eg á eftir þeim.

— Þér, stelpunni, sem dettur af baki jafnskjótt og hestarnir spretta úr spori! — sögðu þeir báðir í einu, og var ógurleg fyrirlitning í málrómnnum. Annað svar fékk eg ekki. Þeir beizluðu beztu gæðingana, hentu sér á bak og þeystu af stað, í háloftinu, niður rennisléttar eyrnar, með alla trossuna á undan sér.

Eg stóð kyr og starði á eftir þeim, þar til þeir voru komnir langt niður á mela. Þá huldu tárin þá sjón minni.

fuglarnir stórfallegir, fanst mér. Og í tígulstokknum var mannsmynd, vafin í silkipappír, og hárlokkur hjá.

Móðir mín sagði mér, að myndin væri af manni sem henni hefði þótt vænt um, þegar hún var ung. Og hann hefði smíðað handa þeim tígulstokkinn og alla ísubeinsfuglana.

— Svo hvarf hann mér sjónum — sagði móðir mín. — Og þá grét eg — eins og þú út af hestunum, — bætti hún við brosandi. Það fanst mér naumast saman berandi. Maður var lítilsvirði í samanburði við hest í mínum augum — á þeim dögum. Enda vissi eg, að móðir mín átti mann, hann fðður minn; þá hélt eg að henni væri bættur skaðinn. Eg gat ekki séð annað en að á sama stæði, hver maðurinn væri.

Eg lét eins og eg væri sofnuð þegar drengirnir komu inn um kvöldið. Grúfði mig niður í rúmið og gaf þeim hornauga undan yfirsænginni. Þeir voru báðir blautir og forugir og sneipulegir — eins og þeir forðuðust að líta þangað sem eg var. Þeir hafa líklega verið sneiptir fyrir að vera vondir við mig — hugsaði eg, og eg gat ekki varist því, að sár-kenna í brjósti um þá.

Og Nonni var blóðugur fyrir neðan nefið og Gvendur á annari hendinni. Nú fór að fara um mig. Auðvitað höfðu þeir dottið og meitt sig. Og eg átti sök á því. Eg hafði óskað að þeir dyttu. Eg fann sárt til sektar minnar og fór að langa til að bæta fyrir illu óskina. Reiði mín var horfin út í veður og vind og ásetningur minn, að gefa drengjunum ekkert að bragða á sælgætinu mínu, fanst mér nú hin mesta fjarstæða. Mér þótti meira að segja vænt um að eiga eitthvað, til að gleðja þá með.

Og eg seildist í sætindakassann í mestri snatri og kallaði í drengina. Áður en langt um leið, sátum við öll saman, eg í rúminu, Nonni á rúmstokknum og Gvendur á kistli fyrir framan rúmið, og moðuðum sælgætið í mesta bróðerni.

Þeir báðu mig að fyrirgefa sér, hve slæmir þeir hefðu verið við mig, og lofuðu bót og betrun.

Og eg fyrirgaf þeim með ánægju.

Einhver kunningi minn, sem las hjá mér þessar línur, er eg hefi verið að pára seinustu kvöldin, sagði við mig, að nú skyldi eg halda áfram og segja frá fleiru. Hann bað mig að skrifa æfisögu mína. Segja frá æsku minni og fullorðinsárunum og ellikvöldinu, sem er nú að færast yfir mig. Hann sagði, að eg ætti að lýsa vonbrigðum mínum í ástamálum, — ef þau hefðu einhver verið, bætti hann við ofur-hæversklega, — hjónabandi mínu og móðurgleði, hörmum mínum, hamingju og lífsbaráttu, fram á þenna dag. Eg gat ekki annað en brosað. Eg veit, að þó eg entist til að skrifa eitthvert hrafl af æfisögu minni, mundu fáir endast til að lesa hana, því tónninn má heita sífelt hinn sami. Vonbrigði og tilhlökkun, gremja og gleði, hafa skifst á í lífi mínu. Sorgarefnin smábreyttust með aldrinum, en sorgin sjálf var söm og jöfn. Þegar eg var rúmlega tvítug, hefði eg ekki getað grátið, þó allir heimsins hestar hefðu rokið út úr höndum mér. En þá grét eg vegna annars. Þá grét eg vegna þess að maðurinn, sem eg unni, hvarf frá mér.

Þá stóð eg einmanna, — eins og á bæjarhólnum forðum daga, — og horfði eftir hamingju minni, unz tárin huldu hana sjón minni.

Sú sorg gleymdist á yfirborðinu, djúp sársaukans varð ísi lagt, en þá tók annað við, og skifti mér milli sín. Hjónabandsstríð og hjónabands-sæla, móðurgleði og móðursorg, efnavöxtur og eignatjón, hefir haldið sitt í hvora hönd mína.

Og löngum hætti mér til þess, að hatast við þá, er mér virtust vera orsök til hamingjumissi míns. Eg óskaði þeim illis í hjarta mínu, — eins og drengjunum forðum. Oft og tíðum lét eg jafnvel reiði mína koma niður á saklausum, — eins og grasinu. En þá varð æfinlega myrkur í sál minni, og hugur minn eins og skipsflak í

hafróti. En þá kom einnig liknin bráðlega. Eg var aldreí lengi í einu í hatursmyrkrinu, því drottinn beygði sig niður að mér, og tók mig í fang sér, — eins og hún móðir mín forðum. Hvað eftir annað, hefir hann borið mig inn í hátíðasal ríkis síns; aftur og aftur hefir hann látið mig skynja dásemdir, réttlæti og leyndardóma tilverunnar, hjálpað mér til að skilja, að margur átti um sárara að binda en eg, og gefið mér að bergja á bikar samúðar og kærleika. Eg hefi margsinnis fundið anda hans lauga sál mína eins og hún móðir mín laugaði likama minn, þegar eg var lítið barn.

Aftur og aftur hefi eg fundið, að eg hlaut, að mér var lífsnaðsyn, að bera bróðurhug til alls og allra — líka til þeirra, er eitthvað höfðu gert á hluta minn. Og þá hefir orðið bjart í sál minni, og hugur minn eins og skrúðmikið skógartré. — — — — Eg sagði áðan, að vonbrigði og gleði, gremja og tilhlökkun, hefðu skift öllu lífi minu milli sín. Það er satt — að undanskildum seinustu árunum. Þau hafa borið mér einskæra hugarrósemi og frið, og ekkert annað. Og eg held, að orsökkin sé sú, að þessi seinustu ár hefi eg ekki borið kala til nokkurs manns, eg hefi betur og betur getað vanið mig af því, að sjá ofsjónum yfir annara manna velgengni. Enda hefi eg komist að raun um, að erfiðleikar eru mér engu síður nauðsynlegir, heldur en velgengni, rétt eins og regnið er jurtinni jafn nauðsynlegt og sólargeislinn. Þessvegna er eg ánægð með hluta þann er mér hlotnast af borði tilverunnar og óska ekki annars en þess, er eg hefi, eða get veitt mér, — án þess að stjaka við öðrum. — — — — Máltækið segir, að »hvað elski sér líkt«. Það er líklega vegna þess, hve mér var grátgjarnt fram eftir allri æfi, að tiltölulega margir koma til mín, þegar eitthvað amar að þeim.

Þegar dóttur-börnunum mínum er eitthvað þungt niðri fyrir koma þau til mín, og bera upp fyrir mér kveinstafi sína. Þá verð eg að segja þeim sögur, sömu sögurnar aftur og aftur. Þeim er sama um það, aðeins ef eg segi eitthvað og strýk þeim um vangann.

Ungu stúlkurnar koma líka til mín, þegar þær verða fyrir einhverjum vonbrigðum. Þær segja, að gráturinn verði léttari, ef eg held í hendur þeirra. Og þegar konurnar í nágrenninu missa mennina sína og börnin sín, og standa uppi einmana og eignalausar, þá gera þær sér ferð til mín, og sitja hjá mér, löngum og löngum. Þær segja, að þeim virðist eg skilja öðrum fremur, hvernig þeim muni innan brjósts. Og eg get ekki neitað, að mér finst eg skilja vel ýmiskonar mannlegar raunir, vegna þess að þær eru gamlir kunningjar mínir, vegna þess að eg hefi reynt þær, en ekkert get eg þó hjálpað. Þess vegna er eg oft forviða á ástúðinni og traustinu, sem mér er sýnt. Mér, farlama gamalmenninu og smælingjanum, er hefi ekkert annað að bjóða en velvildina.

Dómaskipun í fornöld.

Eitt af þeim atriðum, er hafa verið vafamál í fornri stjórnarskipan, er tala dómenda í fjórðungsdómum á alþingi. Sumir hafa álitð, að dómendur hafi verið 36, aðrir, og þeir munu flestir, að þeir hafi ekki verið nema 9. Meðal þeirra var Vilhjálmur Finsen; hann hefur ritað svo ræki-lega um málið í »Fristatens Institutioner« (1888) 10. bls. — 30, að ætla mætti, að það hefði verið tekið gilt. En nú hefur hr. próf. Einar Arnórsson aftur tekið málið fyrir í hinni fróðlegu ritgjörð sinni í Alþb. Ísl. III, 1, og hallast hann að hinni fyrri skoðun, að dómendatalan hafi verið 36. V. Finsen hefur víst talið alt sem unt er að telja sinni skoðun til stuðnings, og væri því eiginlega rjettast að snúa þeim kafla, er um málið er. Jeg læt mér þó lynda að taka upp kafla úr þessum þætti orðrjett. Jeg er sjálfur á þeirri skoðun, að það sje óyggjandi, að talan hafi verið 9.

Auðvitað er það rjett, að tala þessi, svo lág sem hún er, gæti vakið efa. En ef litið er á fyrirkomulag alþingis og stjórnar frá öndverðu, verður hún í sjálfu sjer skiljanleg og jafnvel eðlileg.

Þegar frá upphafi var gerð breyting á því sem var og verið hafði frá aldaöldi í Norvegi — og þar var fyrirmyndin tekin, sem allir vita —; þar var löggjafarvaldið og dómsvaldið sameinað í einni stofnun, lögrjettunni. Að greina þetta tvent í tvær sjálfstæðar stofnanir var í rauninni svo mikil bylting, að maður fyllist undrunar — og aðdáunar. Það var skynsemin og

fyrirhyggjan, hugvitssemi þeirra Úlfjóts og Þorleifs hins spaka, er ollu byltingunni. Þeim hefur þótt það fyrir-sjáanlegt, að lögrjettan ein mundi alls ekki geta annað öllu því lagastarfi og dómstarfi, er á henni hlaut að hvíla, á þeim fáu dögum, sem henni var ætlað að starfa.

Landið var svo stórt og íbúatalan þá þegar orðin svo mikil, að búast mátti við miklu fleiri málum en t. d. í þeim 3 fylkjum vestanfjalls í Norvegi, er áttu þing saman (sbr. Egilss.). Því var þetta snjallræði tekið, að greina dómsvaldið frá löggjöfinni þegar í upphafi. En eftir því verður að taka, að þessi breyting var ekki smáræði á þeim tímum; hún var hrein og bein bylting, eins og jeg kallaði það.

Dómstóll var því frá upphafi sjerstakur á alþingi, og eflaust í honum 36 menn, — sama talan og í lögrjettunni. Þessi dómur var víst nefndur eða gat verið nefndur Alþingisdómur (svo V. Finsen).

Svo sem öllum er kunnugt, var ærið róstusamt á 10. öld á Íslandi og langt fram á 11. Vígaferli og barsmiðir og margar aðrar móðganir í orði og verki áttu sjer stað svo að segja daglega. Ótal mál risu af þessu og komu fyrir alþingisdóm. Því má nærri geta, að þeir 14 dagar, er þingið stóð, hrukku ekki til allra þessara mála, enda voru það heldur ekki fullir 14 dagar, sem um var að tefla, því að tveir dagar gengu frá að minsta kosti. Hvað skyldi nú taka til bragðs, er timinn hrökk ekki til?, hvað nema leita ráðs um umbætur? Lá þá ekki beint við að segja sem svo: vjer skulum skifta dóminum eftir landsfjórðungum og láta hvern fjórða part dæma mál úr hverjum fjórðungi? Það var líkt og þegar nú eru settar nefndir. Þetta hefði verið snjallræði, hafi það verið gert. Þar með mátti og segja sem svo: hjer koma svo mörg mál úr fjórðungi hverjum, það er auðvitað, að þeir sem eiga heima í fjórðunginum eru færastir til að dæma vegna kunnugleiks, hinir síður, er úr öðrum bygðum eru. Íslandi öllu mátti ekki líkja við Gulapingsfylkin 3 saman.

Fyrst framan af hafa menn líklega skoðað hvern

fjórðungsdóm sem part af hinum almenna alþingisdómi, en þegar frá leið gleymdist þessi uppruni, en vaninn olli því, að enginn hneyxlaðist á því, að hjer varð og var um 4 alveg sjálfstæða fjórðungsdóma að tala með 9 dómendum hvern. Dómarnir fengu eðlilega nafn eftir þeim fjórðungi, sem þeir voru fyrir.

Hefðu nú dómarar verið 36 í hverjum dómi, þá hefðu þar verið 27 menn úr öðrum hlutum landsins en þeim hluta, sem dómurinn var fyrir. Hyvernig var þá eðlilegt, að hver dómur væri nefndur eftir þeim 9 manna minnihluta, sem úr var þeim fjórðungi? Um þetta hefur Vilhj. Finsen komist svo að orði, að ekki verður það betur gert: »Samkvæmt skoðun P. Melsteðs og K. Maurers hafa í hverjum fjórðungsdómi verið 9 dómarar, er nefndir voru af goðunum í Austfirðingafjórðungi meðal þingmanna hans, 9 nefndir á sama hátt af goðunum í Sunnlendingafjórðungi, 9 nefndir af goðunum í Vestfirðingafjórðungi og 9 af goðunum í Norðlendingafjórðungi. Í hverjum fjórðungsdómi voru þá jafnmargir dómarar úr hverjum fjórðungi. Allir fjórðungsdómar hefðu þá líkst hver öðrum sem einn vatnsdropi öðrum. Það er nú auðsjeð, að það hefði verið alveg óeiginlegt og ekki annað en valdboð (vilkárligt) að tákna nokkurn einstakan af þessum dómum, er svo voru til orðnir, sem dóm fyrir þann og þann ákveðna fjórðung og nefna hann eftir fjórðunginum. Eftir t. d. nafninu »Austfirðingadómur« skyldu menn ætla, að í honum sætu Austfirðingar [að minsta kosti meiri hlutinn, F. J.], en í honum var í raun og veru ekki nema fjórði hluti frá þessum landshluta, en hinir $\frac{3}{4}$ voru utanfjórðungsmenn; það var ekkert sem einkendi þennan dóm fyrir þenna fjórðung framar en fyrir hvern hinna fram«.

Það má nú segja sem svo, að það sem hjer hefur verið sagt sjeu tómar hugleiðingar; það er það líka, að því viðbættu þó, að enginn getur neitað, að þær sjeu næsta sennilegar og eðlilegar.

Vjer viljum nú líta á, hvað lögin fornu (Grágás) segja. Hr. E. A. hefur tilfært flesta þá staði sem hjer er um að ræða. Þeir skulu hjer taldir:

1, a, skal goði hverr¹⁾ nefna mann í dóm.

b, skal goði hverr nefna sinn þriðjungsmann í dóm.
Grágás I a 38.

2, goði skal ganga í hamraskarð ok setja niðr þar dóm-
anda sinn. I a 39.

3, þá skal goði setja niðr dómanda sinn. I a 45.

Sbr. 4, þá eigu goðar ut ganga með dómendr sína. Sst.

Alla þessa staði tilfærir E. A. nema 3. Öll þessi orða-
tíltæki hefur V. F. skoðað sem ótvíræð vitni þess, að h v e r
g o ð i hafi ekki haft nema einn dómanda fyrir að sjá.
Enda liggur það beinast við. Alstaðar er eintalan
höfð; mætti það þykja fyrirmunun, ef goðinn hefði nefnt
fleiri (en einn), að aldrei skuli vera höfð fleirtala. Ef
goðinn hefði nefnt fleiri en einn, væri hjer ófyrirgefanleg
ónákvæmni í orðanna hljóðan og ólík því sem annars á
sjer stað. Rjett á undan la stendur: »vér skulum .iiij.
eiga fjórðungsdóma« — hjer á eftir hefði mátt búast við
að staðið hefði (í 1 a) ekki »dóm« heldur »dóm hvern«.
Hr. E. A. jatar sjálfur (bls. LXVIII), að sú skýring liggi
nær, »að hver goði skyldi aðeins nefna einn mann í
einn dóm«. Þetta er mikilsverð játning, en brýtur þó
undarlega bág við ályktun hans. Hann bendir til að
annarstaðar sje slept »hverr«, þar sem líkt sje ástatt, »t.
d. I a 51²«, en þessi staður er ekki gildur, því að þar
merkir »dómr« (í »áðr dómr fari út«) e k k i »hverr dómr«,
heldur »sá dómur, sem í hvert skifti á í hlut«, en það er
ekki sama. Um hinn staðinn (39, að neðan) er líkt að-
segja: þar stendur »(sakar . .) er til fjórðungsdóms skal«
(lýsa eða stefna), hjer er »fjds« sama sem »þessa eða hins«.
Það verður því að visa til annara staða en þessara, ef
duga skal.

Um 2. staðinn (sem er reyndar = 3. staðurinn) segir
hr. E. A. sjálfur (s. LXIX): »Þessi staður bendir ó t v í -
r æ t t (gleiðletrað hér) á það, að hver goði hafi alls nefnt

¹⁾ Svo, ekki „hverr goði“ (E. A.), sem þó er auðvitað sama. Eins
skiftir E. A. orðunum „niðr þar“ (í 2) um.

«einn dómanda, því að annars hefði átt að standa »dómendr sína«. Þessu er jeg alveg samdóma, aukin heldur sem sama stendur tvisvar. En ef nú þetta er »ótvirætt« — þá skil jeg ekki betur en alt sé »klappað og klárt«. Mjer er ekki unt að skilja áframhaldið hjá hr. E. A. »En þó er hann eigi úrslitastaður« — segir hann. Hjer rekst hvað á annað. Ef staðurinn er »ótviræður« — og það hygg jeg, hann sje — þá er hann einmitt »úrslitastaður«.

Grágás ákveður, að »(goði skal) kveða á í hvern dóm hann nefnir«. Hjerum segir hr. E. A., að þetta ákvæði hafi verið óþarfi, því hafi um einn ákveðinn dóm verið að ræða, var það vitanlegt, hver hann var. En hjer gleymir hr. E. A., að þetta og þessu lík ákvæði koma þráfaldlega fyrir og þess krafist að dómur eða menn skyldu nefndir, þótt enginn vafi gæti verið um það, hver væri meintur. Sú viðbára er því með öllu marklaus. Það þarf ekki annað en t. d. benda á, að við gríðamál og trygða skyldu málsaðilar nefndir á nafn, og þó vissu allir, hverjir þeir voru. Þessi nákvæma nafngreining og ákvæði heyra beinlínis til formi (formalismus) hinna fornu laga.

Hr. E. A. getur svo um »orðtök. [svo í fleirt.] í Grágás«, er bendi á að goði hafi nefnt í fleiri dóma en einn, og vísar til eins staðar (eru til fleiri?, og hverjir eru þeir þá?); »at því vætti . . at ek spyr þik (þ: goðann, er kvaddur er tylftarkviðar) at því . . .¹⁾ ef þú hefir goðorð fult, at þú nefnir dóma fulla með«. Hjer þarf alls ekki að vera átt við fleiri fjórðungs-dóma en einn; fleirt. hjer getur eins vel þýtt mörg mál í sama dómi eða dóma ár eftir ár (því sami goðinn var vitanlega goði mörg ár í senn, svo að segja ævilangt eða við því mátti búast að minsta kosti). Þetta er ekki annað en alment orðatiltæki. Það er vist, að þessi eini staður er ofveill grundvöllur.

¹⁾ Hjer stendur: »ok nefna goðann« — en var eiginlega nokkur »þörf« á því?

Svo er annað höfuðatriði, sem hr. E. A. svo að segja hleypir alveg úr. Hann getur að sönnu um (á bls. LXXI) að ákvæðið um, hve fáir skyldu ganga til vefangs (nfl. 6), sanni ekkert, »því að nákvæmlega sama regla var um vefang á Vorþingum, og er þó beint ákveðið, að þar skyldu 36 menn sitja í dómi«. Þetta er satt, og jeg skal ekki gera mikið úr því, að V. Finsen hefur álitid, að talan »6« væri hjer röng (bls. 22, 5. athgr.) og þó er athugasemd hans engan veginn að vettugi virðandi. Ákvæðið gæti verið hugsanlegt sem bein stæling á því sem átti sjer stað í alþingisdómi, enda er og beinlínis vitnað til hans á þessum stað í Grágás, sem hjer er átt við. Þessi staður er því harðla ómerkilegur.

En önnur ákvæði um aðferð í alþingis- : fjórðungs- dómi tel jeg miklu merkilegri. Það eru þessi:

1, upphafið á 29. grein um hlutföll: »Ef vi. dómendr eru út komnir eða fleiri, at þat er rétt« o. s. frv. (Grág. Ia 53),

2, »ok sækja þat sumar i enn sama dóm þegar er vi; dómendr eru út komnir i setur sínar eða fleiri, enda verðr jafnfullr þá dómr þeira sem þeir dæmi allir«, (Ia 75) sbr. (sst.): »verðr dómr þeira fullr þóat þeir dæmi eigi fleiri um þar en .vi.« o. s. frv. og (s. 75): »þá á jafnt dómr þeira at standask, er um vilja dæmt hafa, ef þeir eru .vi. menn eða fleiri, sem dómrinn sé fullr«.

Hjer er alstaðar ákveðið, að »minst 6« (það merkja orðin »vi. menn eða fleiri«) dómendur skuli geta felt löglegan dóm. Eru nú nokkur líkindi til, að menn, sem annars bjuggu svo trúlega um alt, hafi farið svo illa og ósæmilega að ráði sínu, að ekki nema 6 af 36 — einn sjötti hluti af fjórðungsdómurum — hafi verið nógu margir til að leiða mál til lykta með dómi? Jeg get i öllu falli ekki ekki hugsað mjer slikt. Hins vegar verður talan 6 að öllu leyti skiljanleg og skynsamleg, ef talan var 9; það þurfti þá $\frac{2}{3}$ til þess að dómur yrði dæmdur; þetta atriði er i mínum augum lángmerkast og áriðamest — og V. Finsen kallar það (bls. 21) »et slaende argument«.

Asamt orðatiltækjunum sem áður voru nefnd finst mjer þetta atriði væri »ótvírætt« og fullkomið »úrslita«-atriði.

Einn er enn staður, sem hr. E. A. ræðir nokkuð rækilega um (s. LXVIII—IX) það eru orðin: »eða nefnir í annan dóm en hann hafi hlotit« (I a 39). Í snöggu álitu má þessi staður virðast lítt skiljanlegur og svo hefur sumum þótt hann, eins og hr. E. A. tekur og fram. Mjer hafa þessi orð aldrei sýnst svo óskiljanleg. Það er satt að maður skyldi ekki halda, að það hefði verið gert ráð fyrir því, að goði gæti ruglast um dómnefnuna. En hjer er með þetta, sem það er áður var um getið, að nákvæmni í öllu formi var svo að segja takmarkalaus og stränglega heimtuð. Hvað var ekki hugsanlegt að gæti komið fyrir? Þessi setning er eitt dæmi þess, sem nefnt hefir verið »casuistik« í Grágás. Oss finst þar oft freklega [lángt farið og margt óþarflegt, en það má ekki fara eftir því, hvað oss finst nú. Frá þessu sjónarmiði verður setningin mjer fullskiljanleg. Orðin »hann hafi hlotit« má ekki skilja svo, sem »hann hafi fengið með hlutkesti«; hjer er alls ekki um neitt hlutkesti að ræða. Orðin merkja blátt áfram: »honum hafi hlotnast«, annaðhvort af því að hann er fæddur goðorðsmaður eða hefur fengið goðorðið að gjöf eða á annan hátt. Setningin merkir blátt áfram og ekkert annað en »eða nefnir mann í dóm, sem hann hefur engan rjett til að nefna í«. Ef nokkuð mætti leiða út af setningunni, yrði það helst það, að goðarnir hefði aðeins nefnt menn í einn dóm hver. Og jeg er hr. E. A. alveg samþykkur er hann segir: »Ef hver goði nefndi aðeins einn mann í einn fjórðungsdóm þá er ákvæðið mjög eðlilegt« (gleiðletrað hjer).

Þetta er jeg hef tekið hjer fram má að mestu leyti skoða sem útdrátt af orðum V. Finsens, og jeg vil skjóta því að öllum þeim, er hugsa vilja um málið, að lesa það, sem hann hefur ritað, í heild sinni og með athuga.

Finnur Jónsson.

Jöklar á Íslandi í fornöld.

Athugasemd.

Í Andvara 1916 er löng og fróðleg ritgerð eftir prófessor Þorv. Thoroddsen um veðráttu og landkosti á Íslandi í fornöld o. fl.

Prófessor Þorvaldur gerir, að því er eg hygg, of lítið úr breytingum þeim, sem orðið hafa hér á loftslagi síðan landið bygðist. Jöklarnir í fornöld — segir höf., bls. 76 — hafa að öllu verulegu haft sömu takmörk eins og nú. En þetta er óefað ekki rétt; jöklar virðast vera til muna stærri nú, en þeir voru á landnámstíð og fram á 13. öld.

Saga Markarfljóts virðist sýna þetta glögglega. Í fornöld virðist Þverá ekki hafa verið til, og nafnið á Affallinu bendir til þess, að sú kvísl hafi ekki fallið úr fljótinu, þegar menn sáu það fyrst. Af Egils sögu, 23. kap., má sjá, að Rangá (ytri) hefir á landnámstíð runnið alla leið til sjávar, og svo var enn þegar Egils saga var rituð, sennilega á fyrri hluta þrettándu aldar. Örnefnið Rangársandur, sem á ekki við nú, er sjálfsagt frá þeim tíma, er Rangá féll alt í sjó fram.

Það virðist augljóst, að Markarfljót hefir þurft að vaxa mjög mikið til þess að leggja Rangárnar undir sig. En hinn mikli vöxtur Markarfljóts stafar óefað af því, að jöklarnir, sem fljótið kemur úr, hafa vaxið til muna. Vatnanöfn austar benda í sömu átt; engum kæmi til hugar nú á dögum, að kalla Jökulsá á Sólheimasandi eða Hverfisfljót læki, eins og áður var gert. Að Skeiðará ræður nú nafninu á sandinum en ekki Lómagnúpur, eins og til forna, kemur sjálfsagt af því, að áin óx svo mjög

að sandsins varð ekki minst svo, að áin kæmi ekki í hugann miklu fremur en gnúpurinn, svo svipmikill sem hann er. Þegar farartálmi fór að verða að ánni, hafa menn farið að kenna sandinn við hana.

Þá má enn minna, ef til vill, á Þórsmörk, sem nú eru að eins litlar leifar eftir af, og á skóginn breiða, sem Breiðamerkurjökull tekur nafn af; er þar nú skóglaut með öllu. Prófessor Þorvaldur virðist ætla, að jökulsárnar séu vatnsmeiri þegar jöklarnir eru minni; kennir þar misskilnings nokkurs hjá hinum mikla lærdómsmanni; efnið er flóknara en í fyrstu sýnist.

Jökulsárnar voru minni í fornöld, samtímis því sem menn fengust við kornyrkju sumstaðar þar sem nú er fullerfitt að rækta kartöflur, en bygð var talsverð sumstaðar þar sem nú er afréttur. Loftslag var óefað þá ekki verra en það er nú, heldur að öllum líkindum betra. Fleira um þetta efni má lesa í greinum mínum um loftslag á Íslandi í fornöld, Morgunblaðið 15. júlí og 23. sept. Rvík 1915.

Helgi Pjeturss.

Fáfnir og forn þýzka.

I.

Frá því segir í fornri sögu, er Fáfnir fór upp á Gnitaheiði og varð þar að ormi yfir gulli því hinu mikla og hinu illa fengna. Kann vera, að í þeirri sögu sé fleira en varir til íhugunar fyrir þá, sem meta málm hinn glófagra meira en vert er.

En um það ræðir ekki hér, heldur nafnið Fáfnir, hvað þýða muni. Virðist það augljóst. Fáfnir er fyrir Váfnir, sá sem vefur (sig utan um eitthvað). Er það slönguheiti gott. Fáfnir er þá sama sem ófnir; kemur það höggormsheit fyrir í Eddu, og væri gott nafn á því, sem menn nefna kyrkislöngu. Annað heiti á höggormi, sem nefnt er í Eddu, er Sváfnir; þýðir það sá sem dáleiðir, svefur eða svæfir; er nafn þetta auðsjáanlega sprottið af þeirri trú, að höggormar geti svafið eða dáleitt bráð sína. Sváfnir er líka eitt af nöfnum Óðins, og má hér minna á, hvernig Óðinn svefur Brynhildi á Hindarfjalli. Mjög eftirtektarvert er það, að þegar Sigurður hefir vakið valkyrjuna af þessum svefni, sem Óðinn veldur, biður hann hana að kenna sér speki (goðspeki, nokkurs konar þeósófi) og gerir ráð fyrir að hún viti tíðindi »ór öllum heimum«. Verður vísindamanninum, sem leitar skilnings með samanburði, hér að minnst sögu einnar, sem »goðmálugur« maður, Emanuel Swedenborg, segir gerst hafa í andaheiminum (mundus spirituum). »Andar« nokkrir tóku á sig stuttrar stundar svefn, og er þeir vöknud, kváðust þeir verið hafa í himnaríki og séð óumræðilega hluti. Líkt er sagt af hinna nafnfrægu völvu guðspekimanna (þeósófa) Helenu Blavatsky;

kvaðst hún stundum, er hún hafði sofið svefn mikinn, hafa verið í Tibet og séð meistara sinn.

Hafi menn séð til sanns eðli drauma, þá eiga þeir hægt með að skilja, að slíkar sögur eru ekki á engu byggðar, jafnvel þó að þeir trúu hvorki á andaheim Swedenborgs né á meistarana í Tibet.

II.

Víkur nú aftur að nafninu Fáfnir. Dæmi slíkrar herðingar stafsins v í f, sem orðið Fáfnir sýnir, mætti telja úr islenzku máli; vil eg minna á orðið fálki, sem mun vera af stofninum va, eins og valur og þýðir sama, nefnilega sá sem flýgur eða fer hart; af sama stofni hygg eg sé orðið foli og leitt af flýti hestsins. Stofninn va eða gva er mjög merkilegur og býsna mörg orð af honum sprottin; hygg eg að hljóð þetta hafi í fyrstu verið undrunaróp mannsins er hann sá eldinguna, og er þá skiljanlegt, að orð þau, sem af þessum stofni eru leidd, tákna bæði ljós eða skin, og hraða hreyfingu. Er g-ið mjög oft fallið framan af orðum af þeim stofni og eigi sjaldan v-ið líka, en stundum hefir það orðið að f-i. Sú herðing er mjög algeng í þýzku; mun þar mega nefna orðið Fichte, sem þýðir grenitré. Til forna hygg eg tréð hafi nefnt verið viti, sem þýðir fyrst ljós eða eldur, en síðan eitt-hvað sem gnæfir hátt upp; viddi, sem þýðir jötunn, er víst ekki annað en afbökun úr viti. Að tréð hafi fengið jötunsheiti, verður ennþá líklegra þegar vér gætum að því, hvað fura er á þýzku, nefnilega Kiefer; það mun vera islenzka orðið gifur, sem þýðir tröll, einkum tröllkona. Að grenið fekk jötuns nafn en furan skessu, má ef til vill, setja í samband við það, að barrið, »hárið« á furunni er miklu lengra en á greninu. Kiefer vilja menn skýra svo sem það sé dregið saman úr Kienföhre; en mér þykir það ólíklegra. Kien, fura eða eik, hygg eg sé orðið eikin, ei-ið fallið framan af; eins mun kein, enginn vera orðið til úr ekki einn: ki einn kein; eldri mynd þýzk er dechein.

Nafnið grantré eða greni kynni að vera leitt af því, að barrið eða »nálarnar« á því tré minna á grön ekki mikið sprotna. Grantré er á þýzku líka Tanne; það er íslenzka orðið Tanni; grenibarrið minnir á tennur í kambi. Tanni var mannsnafn til forna hér á landi. Sumir hafa haldið, að trjáheitið Tanne sé keltneskt að uppruna, en það nær engri átt.

Í þessu sambandi má minna á ensku sögnina to tan, sem þýðir að súta; en þetta er íslenzka orðið að tanna; minnir þetta á hvernig grænlenzka kvenfólkið »sútar« skinnin með því að tanna þau (eg hefi minst á þetta í Grænlandsför minni) og bendir til þess, að einhverntíma hafi forfeður Engilsaxa beitt líkri aðferð við skinnin.

Orðið fura er til á þýzku, en dálítið aflagað, Föhre. Á þessari aflöguðu mynd orðsins er ekki auðvelt að sjá hvað það þýðir í raun rétttri; en orðið fúra er auðskilið, leitt af fúrr, eldur; það logar svo vel á furuviðnum að hann varð eldivíðurinn fremur öðrum, þar sem til hans náðist.

Geta má þess til gamans, að norræna orðið fúrr er til í frönsku, mjög lítið breytt, skrifað foudre; láta Frakkar það þýða elding. Er það orð ekki komið úr latínu eins og málfræðingar ætla, heldur frá Normandí, eins og svo margt í frönsku máli, þó að mjög sé afbakað. Orðaröðin í hinu svonefnda rómanska máli, frönskunni, er miklu nær íslenzku heldur en latínu, og er ekki vandfundið hvernig á því muni standa. Hinn norræni andi skipaði eftir sínu eðli rústum þeirra tungumála, sem urðu fyrir honum á Frakklandi, lappnesku(?), keltnesku, grísku og latínu, og ekki fá norræn orð höfðu sig jafnvel fram í franskt ritmál, en skæld og bjöguð oftast nær, svo að erfitt er að þekkja þau.

III.

Þegar eg taldi málin á Frakklandi, sem Norðmenn hittu þar fyrir, nefndi eg ekki þýzku og þó hafa Norðmenn fundið þar fyrir talsvert af þýzku máli. Karl mikli, sem var svo illur Söxum, var af þýzkum ættum eins og

menn vita, og talaði þýzku. Mun geta orðið erfitt, þegar rekja skal uppruna franskra orða, að greina altaf vel á milli þess, hver orð séu þýzk að uppruna og hver norræn. Verður þessi erfiðleiki ennþá meiri, þegar þess er gætt, að þýzka og norræna hafa verið í fyrndinni miklu líkari en menn virðast ætla. Skal hér fært fram sitthvað af því, sem styður það mál mitt.

Tacitus, sögurarinn rómverski, getur þess að Þjóðverjar hafi nefnst Tungri. Það hygg eg sé sama sem Tungrar, í eintölu Tungarr, dregið af tunga, tungumál. Hygg eg að hinum fornu Geirmönnum (Germani) hafi fundist svo mikið um tungumál sitt, að þjóðin hafi þaðan nafn tekið. Svipuð tilfinning kom Grikkjum til að nefna aðrar þjóðir eftir því hvað þeim þótti tungumál þeirra ljótt og ófullkomið (barbari, sbr. babla).

Tacitus segir að aðalvopn Geirmanna hafi verið spjót og heitið á þeirra máli framea. Hygg eg að þar sé skrifvilla forn eða lesvilla útgefanda fyrir framca; en framka er islenzkt orð og þýðir spjót; varð í framburði frakka. Af spjótshéitinu framka eða frakka nefndist svo þjóðkvíslin Frankar, sem Frakklandi hefir nafn gefið, líkt og Saxar eftir öðru vopni. Þykir mér af þessum sökum líklegra, að Germani þýði einmitt Geirmenn eða spjótmennt, einsog orðið Frakkar, en ekki Germenn (gervimenn). Að orðið Germani sé úr keltnesku, þykir mér afar ólíklegt, þó að merkir fræðimenn þýzki hafi hallast að þeirri skoðun.

Barditus segir Tacitus (Germ. c. 3) hafi nefnst hersöngur Þjóðverja; skyldi þetta ekki vera miskilningur hjá hinum ágæta sögurarara? skyldi barðit ekki vera skjöldurinn, röndin sem galað var undir (»objectis ad os scutis«, sbr. »undir randir ek gel«), en ekki nafnið á söngnum sjálfum? Þó að þetta væri nú ekki rétt þá mætti margt nefna, sem sýnir að mál hinna fornu Geirmanna var miklu líkara norrænu en nútíðar þýzka og það hygg eg að Sigmarr þessi hinn mikli (ingens visu segir Tacitus) tengdafaðir Armnis Herskúahöfðingja, og Íslendingur, sem ekkert kynni í nútíðar þýzku, mundu geta skilið hvor

annan. En ekki mundi Sigmarr (Segimerus) geta gert sig skiljanlegan Þjóðverjum nú á tímum, öðrum en þeim sem islenzku kunna. Ræðir hér um merkilegt efni, sem margt fleira verður um sagt í heimsfræði minni siðar.

IV.

Höfðingja þann sem Tacitus nefnir Arminius, kalla þýzkir rithöfundar Hermann. En mér virðist afar ólíklegt að hann hafi svo heitið. Rómverjar áttu hægt með að bera fram orðið Hermann (í latínu er til bæði herus og mannus), og það var engin ástæða til þess fyrir þá, að aflaga svo mjög nafn Cherúska (Herskúa?) höfðingjans að gera Arminius úr Hermann. Hygg eg að Arminius hafi á Túngaramáli verið nefndur Armnir eða Armvini, þó að ekki séu þau nöfn kunn.

Margar erfidrápur voru ortar eftir Arminius segir Tacitus; en allar eru þær týndar; er þar ekki stafur eftir, fremur en af öllum hinum fornu fræðikviðum, sem Tacitus getur um. Klerkarnir voru það sem eyddu svona fornu máli og fornum fræðum. Svo rikur var hjá Þjóðverjum sá andi, sem einnig hafði það af að eyðileggja islenzka söguritun, eins og vel má skilja af Árna biskups sögu, þar sem »fornorður« er látið vera lastmæli. Væri það fallegt verkefni að sýna fram á hvernig dauðamörk islenzkrar sagnaritunar koma fram í Árna sögu og Lárentius sögu, þar sem áhuginn er allur á kirkjunni og hennar mönnum, en lítill á fegurð norræns máls, eða þeirri mann-tegund sem á Íslandi náði mestum þroska á þrettánda öld, í Sturlungaættinni, en úti í Evrópu í Hróðgeiri Bákna (Roger Bacon) og Friðriki keisara öðrum. Þesskonar menn einkenna framfaraaldir mannkynsins, slíkar sem þrettánda öldin var, framan af, og sextánda öldin, og ósigur þeirra er byrjun og orsök að afturfaraöldum, slíku sem voru 14. öldin og 17. öldin, þó að sitthvað gott og framtíðarvænlegt greri þar í rústunum, einkum þegar á leið.

Helgi Pjeturss.

Þú — !

Þú hefir sagt það svanni
og svarið við drengskap og trú,
að einum skyldirðu unna mér,
en annað sýnist mér nú.

Þú hézt því svipfriði svanni,
og sólin hlýddi' á þann eið,
að engum skyldirðu' unna sem mér,
en alt fer á sömu leið.

Þú hefir nú svikið mig svanni
og sólin döknaði' um leið,
og ég er að hugsa um harminn þann
er hjarta mér biturst sveið.

Þú hefir svikið mig svanni,
ég sé það og veit fyrst nú,
að ég þáði aðeins Júdasarkoss,
við jöfnum það síðar — frú!

Arni Ola.

Ritfregnir.

Arne Magnusson: Embedsskrivelser og andre offentlige aktstykker. På Carlsbergfondets bekostning udgivet af Kr. Kälund. Gyldendalske Boghandel, Nordisk Forlag. Köbenhavn — 1916 — Kristiania.

Arne Magnusson: Brevveksling med Torfæus (Þormóður Torfason). På Carlsbergfondets bekostning udgivet af Kr. Kälund. Gyldendalske Boghandel, Nordisk Forlag. Köbenhavn — 1916 — Kristiania.

Með óþreitandi elju og ræktarfullri alúð heldur Kr. Kälund áfram að draga saman og gefa út alt það, sem á einhvern hátt snertir Árna Magnússon og miðar til að varpa ljósi á æfi hans og persónu, enda er Kälund málið skilt, þar sem honum sem bóka-verði Árnasafns er trúað fyrir að gæta hinna díræmtu gersema, sem Árni hefur eftir sig látið. Hið stærsta og merkasta af ritum Kälunda, þeim sem hjer að lúta, er hin ágæta skrá hans ífir Árnasafn, sem kom út á árunum 1889—1894 í 2 stórum bindum, og filgir síðara bindinu mjög fróðlegur formáli, sem meðal annars rekur allgreinilega æfi Árna. Þá gaf hann út árið 1909 handritaskrár þær, sem Árni hafði eftir sig látið og geimdar eru í Arnasafni nr. 435 A-B, 4^o. Og nú koma frá honum 2 stór bindi um Arna; hefur annað að geima embættisbrjef frá Arna og til hans, enu hitt brjef sem fóru á milli hans og Þormóðar Torfasonar.

Bæði þessi bindi eru stórmerkileg, ekki síst hið firnefnda, því að út úr því má lesa eigi aðeins æfisögu og lindiseinkunnir Arna sjálfs, heldur og meginíð af sögu lands vors á firstu árum 18. aldar. Árni var um það leiti manna mest riðinn við helstu málefni landsins, því að árið 1702 var hann ásamt Páli þá varalögmanni Vídalín skipaður af konungi í nefnd til að rannsaka ástandið hjer á landi, og var þeim nefndarmönnum gefið mjög viðtækt erindisbrjef,

dags. 22. maí 1902. Eitt hið helsta starf þeirra skildi vera að semja nýja jarðbók, sem átti að ná ifir allt landið. Enn jafnframt áttu þeir að gefa gætur að öllu því, sem aflaga fór í stjórn landsins eða í versluninni, og voru þannig að nokkru leiti settir til höfuðs bæði veraldlegum og andlegum valdsmönnum og kaupmönnum, og sjerstaklega var þeim boðið að taka á móti kærnum frá alþíðumönnum, sem höfðu verið beittir ójöfnuði, og skíra konungi frá, ef þeim virtust kærurnar vera á rökum bigðar. Svo áttu þeir og að gera tillögur um, hvernig ráða mætti bót á því sem aflaga færi, og hvað gera skildi landinu til viðreisnar. Upphaflega var Páli Vídalín ekki ætlað sæti í nefndinni, heldur stóð til, að amtmaður, biskupar og lögmennt skipuðu hana með Arna, enn Páll Beyer skildi vera skrifari nefndarinnar. Enn Arni rjeð því, að Páll Vídalín var settur í nefndina. Mun hann hafa sjeð fram á það, að lítið gagn mundi verða að eftirlitsstarfi nefndarinnar með embættismönnum, ef æðstu embættismenn landsins sæti í nefndinni, enda vissi hann að þar var hver höndin uppi á móti annari og lítil von um, að nefndin mundi verða samtaka, ef hún irði svo skipuð. Enn það, að Arni fjekk því framgengt, að Páll var valinn, sínir, að konungur og hin æðsta stjórn landsins í Kaupmannahöfn hafði um þessar mundir ótakmarkað traust á Arna Magnússini. Má af því ráða, að Arni hafi sjálfur átt mestan þáttinn í að semja erindisbrjef það, er nefndarmönnum var gefið. Páll Vídalín átti enga hlutdeild í þessum undirbúningi, vissi ekki einu sinni, að hann var ski, aður í nefndina fir enu á alþingi 1702, þegar hann hitti Arna þar (sjá A. M.. Embeds-skrivelser Nr. 16, bls. 22). Í nefnd þessari sátu þeir fjelagar í 10 ár. Flest af þeim brjefum, sem birt eru í embættisbrjefabindinu, snerta þessi nefndarstörf og varpa ifir þau björtu ljósi.

Tilfnið til þess, að nefndin var skipuð, voru þær umkvartanir og bænaskrár, sem Gottrup lögmaður hafði flutt af landsmanna hálfu við konung í utanför sinni 1701. Má ætla, að það hafi verið mikil vonbrigði firir Gottrup, er hann sjálfur hlaut ekki sæti í nefndinni, heldur tveir menn, sem hann hlaut að telja í andstæðingaflokki sínum, því að Páll Vídalín hafði ásamt amtmanni Kristjáni Müller og Jóni biskupi Vídalín, frænda sínum, verið forsprakki þess flokks á alþingi 1701, sem lagðist á móti sendiferð Gottrups, og höfðu þeir frændur ásamt 3 prestum og 3 síslumönnum látið ágreiningsatkvæði eitt verða samferða Gottup til dönsku stjórnarinnar og gefið Árna Magnússini umboð til að halda því fram firir

sína hönd (AM., Embedsskr. Nr. 7, bls. 8). Jafnframt mun amtmaður hafa aflutt Gottrup fyrir stjórninni. Mun hún ekki hafa treist Gottrup til að vera nógu óhlutdrægur til að veita nefndinni forstöðu eða eiga sæti í henni. Af öllum þeim mönnum, sem stjórnin átti kost á til þessa starfa var Árni sá, sem best var treistandi til óhlutdrægni, því að hann hafði alt til þessa tíma verið lítt riðinn við deilur manna heima á Íslandi, og síndi stjórnin með því að velja hann, að henni var alvara að reyna að bæta sem best úr því, sem aflaga fór í stjóru landsins. Páll Vídalín var líka fyrir margra hluta sakir vel fallinn til nefndarstarfanna, ekki síst til jarðabókarstarfsins, því að hann var eflaust hinn lögfróðasti þeirra manna, sem þá voru uppi á Íslandi, nákunnugur öllum búnaðarhátum, ötull starfsmaður og ósjerhblífinn, enn ekki mátti hann óhlutdrægan kalla fremur en Gottrup, því að hann hafði ekki sneitt hjá flokkadráttum þeim, sem þá voru svo almennir hjer á landi, og var kappgjarn maður; orðtak hans var: »Það skal fram sem horfir, meðan rjett horfir«, segir Grunnavíkur-Jón. Má geta nærri, að þeir höfðingjar, sem voru óvinir Páls, t. d. Gottrup, hugðu ekki gott til afskifta hans af nefndarstörfunum, og stafar þaðan að nokkru leiti mótspirna sú, sem nefndinni var sínd.

Þegar vjer lesum brjef þau, sem fóru á milli nefndarinnar og stjórnarinnar í Danmörku, sjáum vjer, að það er eitt atriði í erindisbrjefi þeirra, sem nefndarmenn láta sjer sjerstaklega ant um, og það er að halda uppi rjettindum lítilmagnanna gegn ifirgangi höfðingjanna, hvort sem höfðingjarnir voru embættismenn eða kaupmenn. Svo berjast þeir t. d. móti hinum mörgu, sumpart ólög-mætu, kvöðum, sem lagðar höfðu verið á konungs-landseta í Gullbringusíslu, svo sem mannlánum á báta, sem haldið var úti af þeim, sem höfðu tekið konungstekjur á leigu, hríshestum handa Bessastaðabóndanum, uppskrúfuðum gjaftollum o. fl.; þeir taka málstað landseta Þingeiraklausturs gegn ifirgangi Gottrups, sem var klausturhaldari; þeir tala máli Hólmfasta Guðmundssonar, sem hafði verið kaghíddur fyrir að selja fæina fiska í Keflavík í staðinn fyrir í Hafnarfirði o. s. frv. Það gefur að skilja, að þessi afskiftasemi nefndarmanna jók ekki vinsældir þeirra hjá þeim, sem sakaðir voru, og smátt og smátt kom svo, að flestir höfðingjar urðu þeim andvígir, og ekki batnaði, þegar konungur skipaði þeim illu heilli að dæma sum af þeim málum, sem þeir höfðu kært. Við þetta flæktust nefndarmenn í eilíft málavafstur, sem hindraði störf þeirra og varð þeim til hins mesta ógreiða. Eðsti embættismaður innanlands,

amtmaður Kristján Müller, sem um þessar mundir líka var umboðsmaður Gyldenløve's stiftamtmanns, var algjörlega á bandi kaupmanna og dró taum þeirra í öllu; var sagt, að hann ætti sjálfur hlut í versluninni. Hagaði hann vináttu sinni eða óvináttu mest eftir því, sem hann sá kaupmönnum best henta. Árið 1701 hafði hann lagt fæð á Gottrup, af því að honum þótti hann of nærgöngull við kaupmenn í sendiför sinni, að því er Árni Magnússon segir í brjefi til rentukammersins (AM., Embedsskr. nr. 70, bls. 214). Framan af, meðan nefndarmenn gengu ekki í berhögg við kaupmenn, virðist hann ekki hafa verið þeim óvinveittur. Enn árið 1705 komust nefndarmenn að því, að kaupmenn reru að því öllum árum við stjórnina með tilstírk amtmans, að öll verslun landsins irði seld í hendur einu alsherjar verslunarfjelagi í stað þess að áður voru einstakar hafnir boðnar upp til einstakra kaupmanna. Töldu nefndarmenn þessa fjelagsverslun miklu óhagfeldari fyrir landsmenn enn það firirkomulag sem þá var, og ekki bætti það úr skák, að kaupmenn og Müller vildu láta banna öll verslunarviðskifti með mönnum innanlands. Rjeð Árni þá af að fara utan þegar í stað til að reina að sporna við þessu ráðabruggi amtmans og kaupmanna. Lagði Árni sig allan fram í þessu máli. Í bráðabirgðarálitsskjali til konungs, dags. 8. des. 1705, veitist hann beint að Müller amtmanni og ber honum á brín, að hann hafi lagt meiri stund á að hlinna að hagsmunum kaupmanna enn að velferð alþíðu. Og 5. janúar 1706 sendir hann konungi mjög ítarlegt og vel rökstutt álitsskjal gegn fjelagsversluninni (AM., Embedsskr. nr. 51 og 53, 132. og 133.—153. bls.). Tókst Árna að kveða niður þennan draug, svo að hann kom ekki upp aftur meðan hann lifði, og er þetta ljós vottur þess, að stjórnin hafði þá enn fult traust á Árna, einkum þegar þess er gætt, að verslunar-stjórnardeildin (commerce-collegium) var fjelagsversluninni filgjandi (AM., Embedsskr. nr. 51, bls. 131). Enn upp frá þessu var Müller amtmaður svarinn óvinur Árna, og rægir hann hvar sem hann fær því við komið; er það t. d. ófagur vitnisburður, sem Müller gefur Árna í brjefi til Gyldenløve's 14. febr. 1708 (AM., Embedsskr. 237. bls.)¹⁾ út af Bræðratungumálinu svonefnda, sem reis af málaferlum Árna við Magnús Sigurðsson í Bræðratungu um það, að Magnús hafði brigslað Árna um að hann ætti vingott við konu Magnúsar Þórdísi. Ovinir

¹⁾ Þar er þetta brjef dags. 14. febr. 1707, enn það hlítur að vera rangt, því að það er umsögn um beiðni Árna, sem er dagsett 29. ág. 1707.

Árna notuðn sjer sem best þeir gátu þetta hneixlismál til að tortriggja Árna í augum stjórnarinnar. Hafði Árni unnið málið í bjeraði og firir lögbingisrjettinum og Magnús verið dæmdur í háar skaðabætur. Enn með tilstírk kaupmanna kom Magnús málinu firir hæstarjett, enu dó í þeim klíðum, áður enn málið var tekið firir; samt var málinu haldið áfram og dæmt í hæstarjetti 1709; varð niðurstaðan sú, að sakir vóru látnar falla niður og dómar þeir, er dæmdir höfðu verið, feldir úr gildi, enn illmælið til Árna dæmt dautt og ómerkt. Aftan við embættisbrjefabindið er prentaður útdráttur úr hæstarjettarskjölum þessa máls, þar á meðal atkvæði hæstarjettardórnandaanna, og sjest á þeim, að ágreiningur hefur verið mikill um málið, vilja sumir dæma Árna í vil, aðrir fella málið á hann, enn meiri hluti dómanda vill láta sakir falla niður á báða bóga. Úrslit þessi vóru að vísu ekki algjör ósigur firir Árna, þar sem hann hjelt óskertum heiðri sínnum, enn eflaust hafa þau hnekt mjög áliti hans í Danmörku og spilt trausti hans hjá stjórninni. Um sömu mundir bárust og stjórninni ímsar kærur ifir aðförum nefndarmanna, t. d. frá Sigurði lögmanni Björussini, sem þeir höfðu dæmt frá embætti og eigur hans fallnar í konungs garð; fjekk Sigurður einmitt um þetta leiti (1709) nokkra uppreisn mála sinna hjá konungi. Müller amtmaður hafði flutt sig til Kaupmannahafnar 1707, og má geta nærri, að hann hefur ekki bætt firir nefndarmönnum við stjórnina. Í stað hans gegndi Páll Beyer amtmannsstörfum sem »fullmektugur«, enn Oddur Sigurðsson tók við umboði því, sem Müller hafði haft firir Gyldenløve stiftamtman, og fóru þessir tveir menn, sem kallaðir vóru »þeir fullmektugu«, með æðstu stjórn innanlands. Af þeim var Oddur hinn mesti óvinur Páls Vídalíns; sparði hann ekki að sverta nefndarmenn í augum Gyldenløve's og gerðist Gyldenløve þeim þungur í skautl upf frá þessu. Danska stjórnin fer nú að verða óþolinmóð og rekur eftir nefndarmönnum að lúka við jarðabókarstarfið (AM. Embedsskr. nr. 87, 100, 119 og 129). Og loksins skipar rentukammerið nefndinni í brjefi dags. 22. júlí 1712 að hætta starfinu og kveður Árna á sinn fund til að gera grein firir gjörðum nefndarinnar; er í því brjefi vitnað í skírslu frá Gyldenløve, sem ber nefndinni á brún, að hún æsi menn til ófriðar og málaferla. Var nefndarstörfunum þar með lokið, nema hvað Páll Vídalín tók að sjer síðar firir sjerstaka borgun að lúka við það sem ógert var að jarðabókinni.

Hinn helsti sínilegi árangur af nefndarstörfunum var jarða

bókin, sem vanalega er kend við Arna. Þó að Páll Vídalín eigi sinn fulla þátt í henni, og einn fremur manntalið og búpeningstalið, sem nefndarmenn ljētu taka. Með þessu þrennu, þó ekki væri öðru, hafa þeir reist sjer fagran minnisvarða, því að með því hafa þeir lagt hinn första áreiðanlega grundvöll undir hagskiðslur landsins. Þeir eru þar langt á undan sínum tíma. Manntalið, sem þeir ljētu fram fara páskanóttina 1703, er 62 árum eldra enn första manntal á Norðurlöndum. Indriði Einarsson segir um jarðabókina (Manntal á Íslandi 1. des. 1910, Rvík 1913): »Hún er gullnáma firir hagfræði Íslands, sem hver meuningarþjóð mundi öfunda okkur af, sem þekti hana til hlítar«.

Litlar þakkir fengu þeir eftir á firir þetta ágæta starf sitt hjá stjórnninni. Krafðist hún, að Arni ljėti gera útdrátt úr jarðabókinni á dönsku og tregðaðist við að greiða honum talsvert fje sem eftir stóð af launum hans firir nefndarstörfm. Enn Arni þibbaðist við, og stóð í þessu þjarki, þangað til Arni dó. Því miður vantar í jarðabókina jarðamatið í Múlasíslu og Skaftafellssíslu. Hefur það að líkindum brunnið í hinum mikla bruna 1728.

Minni sínilegur árangur varð af viðleitni nefndarmanna að bæta hag smælingjanna og rjetta hluta þeirra gegn ifirgangi kaupmanna og valdsmanna, og má þó benda á ímslegt, sem þeir komu til leiðar í þessu efni, first og fremst tilskipun 15. maí 1705, sem miðar að því að vernda leiguliða firir ifirgangi landsdrottna; þá var það og nefndarmönnum að þakka, að fjelagsverslun komst ekki á fir enn árið 1732, þegar þeir vóru báðir komnir undir græna torfu. Arni dó árið 1730, Páll 1727. Góðan vilja þeirra á að bæta hag bændalðsins getur enginn efað, sem les það bindi, sem hjer liggur firir. Það er rjett, sem þeir segja á einum stað í skírslu til rentukammersins (A. M., Embedsskr. nr. 85, bls. 289), þar sem þeir kvarta undan ójöfnuði ifirvaldanna við fátæklinga: »Við gætum víst aflað okkur meiri vinsælda hjá ímsum mönnum hjer á landi, enn við nú höfum, og, ef alt skal segja, að líkindum grætt fje, ef við vildum þegja ifir þessu og láta þá (höfðingjana) ráða meðferð sinni á bændum, enn það þorum við hvorki nje viljum«.

Mörg af brjefunum bera glæsilegan vott um fróðleik nefndarmanna í sögu landsins og um alt, sem snertir hag þess. T. d. má benda á varnarskjal þeirra firir dómi sínum í máli Ara Pálssonar, sem hafði verið brendur firir galdra eftir dómi lögrjettuunar árið 1681. Sína þeir þar með ljósum rökum, hve fávísleg galdratruín sje og hve miklu illu hún hafi til leiðar komið á »brennuöldinni«,

sem þá var nýlega um garð gengin, og rekja greinilega sögu galdramálanna frá 1656 Í sama brjefi er og mjög fróðleg greinagerð fyrir starfi og verksemi lögmanna frá elstu tímum. Kr. Kálund vill eigna þetta skjal Arna Magnússini einum, enn mjer finst sumt í því bera greinilegt mark Páls Vídalíns; líklega er það samið af þeim báðum í sameigu.

Arni mun hafa haft meiri skapraun enn áunegju af þessum nefndarstörfum. Málaprasið, sem þau leiddu hann út í, varð honum bæði kostnaðarsamt og hvumleitt. Og að lokum hafði hann lítið aunað upp úr 10 ára starfi enn óþökk dönsku stjórnarinnar og óvild margra hinna helstu manna hjer á landi. Merkilegt er það, að stjórnin leitar þó síðar ráða hjá Arna um íslensk vandamál (A. M., Embedsskr. nr. 166, 168, 175, 177, 181) og sýnir það, að hún enn sem fir taldi hann allra mann fróðastan í þeim efnum. Og árið 1723, þegar aftur kom til tals að innleiða fjelagsverslun á Íslandi, er Árni enn á verði, skrifar konungi beina leið, leggur fastlega á móti fjelagsversluninni og óskar að mega bera fram ástæður sínar gegn henni fyrir leindarráð konungs (A. M. Embedsskr. nr. 184). Á ímsum brjefum má sjá, að Arni hafði traust og hilli Friðriks konungs hins fjórða.

Kr. Kálund bendir rjettilega á það, að nefndarstörfín hafi dregið Arna frá vísindaiðkunum á þeim tíu árum æfínnar, sem einna best eru fallin til vísindastarfa. Má vera, að fleiri vísindarit hefði legið eftir hann, ef hann hefði ekki setið í nefndinni. Enn hins vegar gáfu nefndarstörfín og dvöl hans á Íslandi honum gott tækifæri til að safna íslenskum handritum og fornbrjefum og hann notaði það óspart. Samkvæmt 3. grein í erindisbrjefi nefndarinnar hafði nefndin rjett til að krefjast þessa af jarðeigendum, að þeir ljetu nefndinni í tje máldaga sína og heimildir fyrir jörðunum eða afskriftir af þeim. Þetta var Arna mikill stuðningur til að ná í fornbrjef eða afskriftir af þeim og má ætla að hann hafi á þann hátt komist ifir meginíð af hínu mikla fornbrjefasafni, sem nú er í safni hans — þar eru nú geimð 2065 íslensk fornbrjef á skinni, auk afskrifta, en af afskriftunum glataðist mjög mikið í bruanum 1728, eftir því sem Arni sjálfur segir.

Það var og vel gert af Kr. Kálund að gefa út brjefaskifti þeirra Arna Magnússouar og Þormóðar Torfasonar, því að þau lisa ágætlega báðum þessum merku mönnum. Skal jeg ekki fjölirða um það bindi, enn vísa aðeins til hins fróðlega formála útgefandans fyrir því. Eru þar rakin merkustu æfíatriði beggja þessara

manna og bent á það í brjefaskiftunum, sem helst einkennir þá báða. Þar er og stutt ifirlit ífir æfi Asgeirs Jónssonar, sem lengi var skrifari Þormóðar.

Ifir höfuð að tala er útgáfa beggja binda ágætlega af hendi leist, eins og við var að búast af útgefandanum. Prentvillur eru fátiðar, og þær sem eru er oftast hægt að lesa í málið. Meinlegust af þeim, sem jeg hef tekið eftir, er prentvillan í A.M., Embedsskr. bls. 1¹⁰ »morfaderens« firir: morbroderens.

B. M. Ó.

Íslenzk mannanöfn. Lög, nefndarálit og nafnaskrár. Gefin út að tilhlutun Stjórnarráðs Íslands samkv. lögum nr. 41, 10. nóv. 1913. Rvík 1915.

Mér er ljúft að dæma um þetta litla rit. Kjarni þess er spjottinn upp af grein sem ég ritaði í Skírnir fyrir 8 árum, þar sem fyrst komu fram rækilegar tillögur um íslenzk ættarnöfn. En annars hefir nefndin farið langt út yfir það svið; hún hefir fjölgað reglunum, svo að úrvalið yrði auðugra.

Stjórnarráð Íslands hefir verið heppið í valinu á þessari nefnd. Því að nefndin hefir afrekað tvent sem þurfti með: hún hefir valið smekklega og valið djarflega. Hún hefir tekið mjúkum og viðkvæmum höndum á málinu. Þennan litla hluta þess hefir hún farið með eins og siðaðan ungling, hún hefir ekki sært líkama hans, hún hefir skorið hár hans.

Það sem gerir þó þetta litla rit verðmætast, er rökfærsla nefndarinnar að nafnavalinu. Öll framför var í upphafi synd, og rökfærsla nefndarinnar er það sem gerir synd hennar að framför. Við hverja nýja reglu er hér svo berlega sýnt, að það nafna-lögmál sem nefndin vill skapa á alskýlt við íslenzka tungu, á ekki skyldara við neitt annað mál, og lætur málinu í engu misboðið. Þetta prent er nóg. En þetta prent er ekki alt. Það sem fullkomnar kerfið er, að eftir hverri reglu þess má skapa smekkvís og fögur nöfn. Þess vegna er það kerfið, eins og það er rökstutt, og ekki nafnavalið sjálft, sem hefir orðið verðmætasti þáttur af starfi nefndarinnar. Hér tek ég tíu dæmi, hvert úr sinni reglu kerfisins:

Agnars	Melnes
Báron	Mývaz
Borgum	Nafdal
Eyfer	Snæstar
Hvarfan	Vermann.

Það er vandi að skapa fjölskrúðugt íslenzkt ættarnafnakerfi. Það er vandi að sveigja hinn stinna boga vors beygingarfka máls svo líðlega eins og hér hefir verið gert. Og því hægara er fyrir ötulan málfræðing, og hægast fyrir lélegan eða engan að ráðast á þetta kerfi. Hitt er vert að athuga, að sérhver árás mun koma frá mönnum sem eru algerlega mótfallnir ættarnöfnum yfirleitt. Þeir sem unna þeim, munu unna þessu kerfi.

Ég sé enn í íslenskum blöðum haldið fram þeirri fásinnu, að föðurnöfnin séu dýrmætur íslenzkur þjóðsiður. Ég tek fram í dag það sem ég tók fram fyrir átta árum, að þetta er ekki íslenzkara í dag heldur en það var danskt fyrir hundrað árum eða þýzkt eða enskt fyrir þúsund. Annars víðurkenni ég ekki þessa þjóðernis-ástæðu. Eins og nokkur hlutur sé betri í sjálfu sér fyrir það að hann er íslenzkur eða amerískur eða spænskur. Hugsum oss að eftir þúsund ár séu allar þjóðir nema Íslendingar horfnar frá járnbrautum. Svo kemur upp barátta á Íslandi um það að afnema járnbrautir og láta þær þoka fyrir einhverju t/zkusniðnara samgöngufæri. Þá vildu Íslendingar ekki sleppa þeim, af því að nú ætti engin þjóð járnbrautir nema þeir.

Það er leitt að sjá þessa þjóðernis-ástæðu á Íslandi lagða við hvern hégóma. Væri henni brugðið upp í því einu sem vér gætum verið hróðugir af, þá væri hún réttmæt. Eu hún er t. d. ekki helgari mönnum en það, að þeir bregða henni upp til varuar fyrir öðru eins smekkleysi og ímyndunar-fátækt í búnaði eins og kemur fram í því sem nefnt er íslenzk peysuföt. Föðurnöfnum og peysufötum er haldið enn á Íslandi, ekki af því að það sé víðurkent fallegt eða hagkvæmt, heldur bókstaflega af því að sú hugsun, sem einu sinni hefir skapað það tvent, er úrelt meðöllum öðrum þjóðum.

Ekki gegnum vér heldur þeirri ástæðu, að ættarnöfn geri ættartölur ruglingslegri. Vér verðum fyrst að sannfæra um, að ættgreiningin rugli jurtafræðina eða gatnaskipun geri vandrataðra í borginni.

Hlægilegast er þó að gera þetta mál að kvenréttindaatriði. Hingað til hefir faðirinn einn, karlmaðurinn, ánaftað dætrum sínum þetta hnoss á Íslandi. Nú mundi dóttirin ekki vera kend við föðurinn einan, heldur við kynkvísl hans, eða ef hún kysí heldur, við kynkvísl móður sinnar, eða ef hún kysí helzt, við kynkvísl þeirra beggja, eins og hvorttveggja er ekki ótítt þar sem ættarnöfn ráða. En annars fáum vér ekki séð að eiginmaðurinn höggvi meira

skarð í »réttindi« konunnar, en faðirinn hefir gert. Með ættarnöfnum er konunni auk heldur gerður kostur á vali.

Þetta þrent eru hinar veigalitlu ástæður þeirra sem eru mótfallnir ættarnöfnum. Vér sem erum hlyntir þeim tókum þau aftur á móti upp af því tvennu aðallega, að þau eru fallegri og hagkvæmari. Orðhalinn »-dóttir« minnir mig á aldaða fornaldardýr. Og vér óskum að heita sama nafni á Íslandi eins og vér heitum þó vér förum út fyrir pollinn. Ættkenning er á svæði nafngreininganna það sem mynt er á svæði viðskiftanna. Það er alt og sumt.

Ég hefi engan ótta af þeirri mótspyrnu sem ættarnafnalögin hafa mætt á Íslandi. Það er auðsætt, að ekki tjáir lengur að spyrna á móti broddunum. Og undir eins og farið verður að kannast við áhrif þessara laga, þá mun líka þörf þeirra verða viðurkend. Málið var komið í það horf, að ef stjórnin hefði ekki tekið það að sér, þá hefði ekkert taumbald orðið haft á þeim nafnaskrípum sem var líklegt að rigndi niður. Nú hefir verið búið til vandað og fjölskrúðugt kerfi, sem ganga má að eins og skírnarfonti. Og það hlægir mig, að þegar frá liður munu ekki annarstaðar þykja fegri ættarnöfn en í Svíþjóð og á Íslandi.

New York 1916.

Goðmundur Kamban.

Ennfremur hafa Skírni verið send þessi rit, og verður sumra þeirra getið síðar:

Réttur. Fræðslurit um félagsmál og mannréttindi. Fyrsta ár.

I. hefti. Aðalútg. og ábyrgðarm.: Þórólfur Sigurðsson. Ak. 1915.

Jónína Sigurðardóttir: Ný matreiðslubók fyrir fátæka og ríka. Með heilsufræðislegum inngangi eftir Steingrím Matthíasson. Ak. 1915.

Gunnar Gunnarsson: Ormarr Örlygsson. Úr ættarsögu Borgarfólksins. Bókav. Sigurðar Kristjánssonar. Rv. 1915.

Sami: Danska frúin á Hofi. Úr ættarsögu Borgarfólksins. Bókav. Sig. Kristjánssonar. Rv. 1915.

Sami: Smaahistorier. Gyldendal. Kbh. & Kria 1916.

Daniel Bruun: Erik den Røde og Nordbokolonierne i Grønland. Gyldendal. Kbh. 1915.

Islandica. Vol. VIII. An Icelandic satire written at the beginning of the eighteenth century. Edited by Halldór Hermannsson. Ithaca 1915.

Frímann B. Arngrímsson: Asters and violets. Some stray poems and verses. Ak. 1915.

Sami: Dugnaður Akureyrar og snilli. Prentsm. Odds Björnssonar.

Leiftur. Tímarit um dulskynjanir og þjóðsagnir. Ritstjóri Hermann Jónasson. 1. bindi. 1. hefti. Fjallkonuútg. Rv. 1915.

Tímarit íslenzkra samvinnufélaga. Ritstjóri: Sigurður Jónsson. X. ár. Ak. 1916.

Annie Besant: Lífstiginn. Þýtt hefir Sig. Kristófer Pétursson. Rv. 1916. Bókautgáfa Guðspekisfélagsins.

Magnús Jónsson: Vestan um haf. Smávegis um Ameríku og landa vestra. Rv. 1916.

Hagskýrslur Íslands. (7. Verzlunarskýrslur fyrir árið 1913. 8. Fiskiskýrslur og hlunninda árið 1913. 9. Búnaðarskýrslur árið 1914. 10. Fiskiskýrslur og hlunninda árið 1914). Rv. 1916.

Hagtfíðindi gefin út af Hagstofu Íslands. 1. árg. nr. 1.—5. Rv. 1916.

Þorleifur H. Bjarnason: Fornaldarsaga handa æðri skólum. Rv. Bókav. Sigf. Eymundssonar 1916.

Valur: Dagrúnir. Rv. kostnaðarm. Arinbj. Sveinbjarnarson 1915.

— Brot. Sögur úr íslenzku þjóðlífi. Rv. Kostnaðarm. Arinbj. Sveinbjarnarson 1916.

Hulda: Syngi syngi svanir mínir. Æfintýri í ljóðum. Rv. Bókav. Arinbj. Sveinbj. 1916.

Jón Laxdal: Sönglög I. (I. Helga in fagra. II. Gunnar á Hlíðar-enda. Kvæðaflokkar eftir Guðm. Guðmundsson fyrir einsöng, tvísöng og kór). Rv. Aðalútsala: Bókav. Arinbj. Sveinbj. 1916.

Arsrit hins íslenzka Fræðafélags í Kaupmannahöfn. Með myndum. Fyrsta ár. Khöfn 1916.

Bogi Th. Melsteð: Handbók í Íslendingasögu. Gefin út af hinu íslenzka Fræðafélagi í Kaupmannahöfn. Fyrsta bindi. Khöfn 1916.

Arferði á Íslandi í þúsund ár. Þorvaldur Thoroddsen safnaði og samdi. I. hefti. Gefið út af hinu íslenzka Fræðafélagi í Kaupmannahöfn. Khöfn 1916.

Finnur Jónsson: Topografiske Beskrivelser i Sagaerne og deres Betydning. (Særtryk af Oversigt over det kgl. danske Vidensk. Selsk. Forh. 1915. No 6).

Finnur Jónsson: Opdagelsen af og Reiserne til Vinland. (Særtryk af Aarb. f. nord. Oldk. og Hist. 1915). Kbh. 1916.

Leiðrétting.

Þegar eg hripaði upp »Athugasemdir« við tímatalaritgerð Guðmundar landlæknis, hefi eg í ógáti sett þessa villu (bls. 334 í 6. l.): »en ekki að sumarið hafi verið 1 degi lengra en veturinn, eins og í tímatalinu frá 1500 með vetrarkomu á föstudag, né 2 dögum lengra svo sem í Rímbeglu o. s. frv.« En hér atti að standa: en ekki að sumarið hafi verið 3 dögum lengra, en veturinn eins og í tímatalinu frá 1500 með vetrarkomu á föstudag, né 4 dögum lengra, svo sem í Rímbeglu o. s. frv.« Þessa leiðréttingu bið eg lesendur Skírnis að athuga.

Það er annars auðséð á öllu, að »Aukanæturnar« um miðsumarið ásamt vetrarkomunni á laugardegi eru búnar til, einungis til þess að missiramótin félli saman við mánaðamót í þessu þritugnætta mánaðatali.

Jóh. L. L. Jóhannsson.

Prentvillur.

Því miður gat eg ekki sökum fjarlægðar lesið sjálfur prófarkir af grein minni um Snorra Sturluson í síðasta hefti Skírnis. Er þar nú hver prentvillan annari verri, og bið eg lesendur að leiðrétta þær helztu, sem eg hefi rekist á:

- Bls. 237, 12. l. a. n. (den) les: (du).
- —, 4. l. a. n. ofraun les: ofrausn.
- 238, 18. l. a. o. haldráður les: kaldráður.
- 239, 6. l. a. o. hagsýni les: hugsýni.
- 244, 11. l. a. n. son les: sonu.
- 255, 6. l. a. o. allri falli burt.
- — 10. l. a. n. ráðstafanir les: ráðstefnur.

Kaupmannahöfn, 25. ág. 1916.

Sigurður Nordal.

Bls. 335, 11 l. a. n. þeim les: þeirra.

Skýrslur og reikningar

Bókmentafélagsins 1915.

Bókaútgáfa.

Félagið hefir árið 1915 gefið út þessar bækur og félagsmenn fengið þær fyrir árstíllagið, 6 krónur:

Skírnir, 89. ár	kr. 4.00
Fornbréfasafn XI. b. 1. h.	— 4.00
Sýslumannaæfir IV. b. 7. h.	— 1.40
Safn til sögu Íslands IV. b. 9. h.	— 1.55
Safn til sögu Íslands V. b. 1. h.	— 1.00
Víkingasaga 2. h.	— 2.55
Samtals	kr. 14.50

Reykjavík 17. júní 1916.

Matthías Þórðarson,
bókav. félagsins.

Aðalfundur.

Ár 1916, laugardaginn 17. júní, kl. 9 að kveldi, var aðalfundur Bókmentafélagsins haldinn í Iðnaðarmannahúsinu. Fundarstjóri var kosinn Lárus H. Bjarnason prófessor.

I. Forseti skýrði frá hag félagsins og gat fyrst látiðna félaga: Jóns Jenssonar yfirdómara, Kristjáns Þorgrímssonar konsúla, Skúla Thoroddsens alþingismanns, Benedikts Kristjánssonar præg. hon., Árna Jónssonar præg. hon. og próf. Ang. Gebhardts; mintust félagsmenn þeirra með því að standa upp. — Félaginu höfðu bæzt á árinu 100 félagar og var nú félagatalan orðin 1200.

Því næst skýrði forseti frá fyrirhugaðri aldarafmælishátíð félagsins 15. ágúst í sumar og gat um nokkrar ráðstafanir félagsstjórnarinnar þar að lútandi.

Af bókum var gert ráð fyrir, að kæmi út í ár, auk Skírnis: 1 hefti af Fornbréfasafni, 1 af Safni til sögu Íslands, 1 af Íslendingasögu Boga Th. Melsteðs og auk þess afmælisrit (c. 20 arkir).

Þá las forseti upp og skýrði fyrir fundarmönnum ársreikning og efnahagsreikning félagsins og bar þá saman við reikninga fyrra árs, og sömuleiðis var lesinn upp reikningur fyrir sjóð Margr. Lehmann-Filhés. Endurskoðendur höfðu ekkert haft við þá að athuga, en annar af endurskoðendum félagsins, Kl. Jónsson landritari, hreyfði nokkrum munnlegum athugasemdum á fundinum. Reikningarnir voru síðan samþykktir í einu hljóði.

II. Forseti skýrði frá úrslitum stjórnarkosninga samkvæmt kjörbók félagsins: Forseti var kosinn dr. phil. Björn M. Ólsen prófessor, varaforseti dr. phil. Jón Þorkelsson þjóðskjalavörður. Í fulltrúaráð voru kosnir: Sigurður Kristjánsson bóksali og dr. phil. Björn Bjarnason kennari.

III. Endurskoðendur endurskoðunir í einu hljóði: Kl. Jónsson landritari og Hannes Þorsteinsson skjalavörður.

IV. Forseti lagði til, eftir einróma tillögu fulltrúaráðsins, að kjörnir yrðu 12 nýir heiðursfélagar í tilefni af aldarafmæli félagsins, og var það samþykkt í einu hljóði, og jafnframt tillaga um, að nöfn þeirra skyldi eigi birta opinberlega fyr en á aldarafmælisdag félagsins, 15. ágúst.

V. Benedikt Sveinsson alþingismaður hreyfði nokkrum fyrirspurnum og tillögum viðvíkjandi bókútgáfu af félagsins hálfu framvegis, og svaraði forseti því nokkrum orðum.

Að lokum þökkðu félagsmenn stjórninni með því að standa upp.

Fundarbók lesin upp og samþykkt.

Fundi slitið.

Lárus H. Bjarnason.

J. Jónsson.

Reikningur

yfir tekjur og gjöld Hins íslenska Bókmentafélags fyrir árið 1915.

Tekjur:

1. Eftirstöðvar frá 1914:

a. Veðdeildarbréf Landsbankans . . . kr. 20000 00

b. Dönsk verðbréf . . . — 8000 00

c. Peningar í sparisjóði . . . — 7319 76

kr. 35319 76

2. Styrkur úr landssjóði . . . — 2000 00

3. Fimmtánda greiðsla fyrir handritasafnið . . . — 1000 00

4. Greidd tillög meðlima . . . — 5437 00

Flyt kr. 43756 76

	Fluttar	kr.	43756 76
5. Fyrir Skírni og seldar bækur í lausasölu	—		1147 82
6. Fyrir anglýsingar á kápu Skírnis 1915	—		70 00
7. Áunnið við útdregin veðdeildarbréf Landsbankans	—		90 00
8. Nafnverðslökkun keyptra veðdeildarbréfa	—		60 00
9. Til jafnaðar móti gjaldlið 4	—		1000 00
10. Ársvextir af:			
a. 20000 kr. í veðdeildarbréfum			
Landsbankans	kr.	900 00	
b. 4000 kr. í kreditkassaskuldabréfum landeigna	—	140 00	
c. 2200 kr. í húskreditkassaskuldabréfum	—	88 00	
d. 1600 kr. í þjóðbankahlutabréfum	—	128 00	
e. 200 kr. í kreditbankaskuldabréfum jóskra landeigna	—	7 00	
f. Peningum í sparisjóði	—	149 79	
			<hr/>
			1412 79
			<hr/>
		kr.	47537 37

Gjöld:

1. Bókagerðarkostnaður:			
a. Skírnir:			
1. Laun ritstjóra	kr.	500 00	
2. Ritlaun og prófarkalestur	—	1160 00	
3. Prentun, pappír og hefting	—	1952 53	
			<hr/>
		kr.	3612 53
b. Aðrar bækur:			
1. Ritlaun og prófarkalestur	kr.	1262 12	
2. Prentun, pappír og hefting	—	3919 16	
			<hr/>
		—	5181 28
2. Afgreiðslukostnaður:			
a. Laun bókavardar	kr.	600 00	
b. Innheimtupóknun til sama fyrir árið 1914	—	95 99	
c. Burðargjald o. fl.	—	712 97	
			<hr/>
		—	1408 96
3. Brunabótagjald og ýms gjöld	—		218 82
4. Keypt veðdeildarbréf Landsbankans	—		1000 00
5. Eftirstöðvar 31. desbr. 1915:			
a. Veðdeildarbréf Landsbankans	kr.	21000 00	
b. Kreditkassaskuldabréf landeigna	—	4000 00	
c. Húskreditkassaskuldabréf	—	2200 00	
			<hr/>
	Flyt	kr.	27200 00
		kr.	11421 59

	Fluttar	kr. 27200 00	kr. 11421 59
d. Þjóðbankahlutabréf	—	1600 00	
e. Kredítbankaskuldabréf jóskra land- eigna	—	200 00	
f. Peningar í sparisjóði	—	7115 78	
			— 36115 78
			kr. 47537 37

Reykjavík, 28. apríl 1916.

Sigurður Kristjánsson

p.t. gjaldkeri.

Reikning þennan ásamt fylgiskjölum höfum við nákvæmlega yfir-
farið, og ekki fundið neitt við hann að athuga.

Reykjavík, 10. júní 1916.

Kl. Jónsson. Hannes Þorsteinsson.

Efnahagsreikningur

Hins íslenska Bókmentafélags 1. janúar 1916.

Eignir:

1. Samkvæmt ársreikningi 1915:		
a. Í verðbréfum	kr. 29000 00	
b. Í peningum í sparisjóði	— 7115 78	
		kr. 36115 78
2. Forlagsbækur virtar	— 20000 00	
3. Ymsir munir virtir	— 716 00	
4. Útistandandi skuldir	— 2720 40	
		kr. 59552 18

Skuldir:

Skuldlaus eign	kr. 59552 18
	kr. 59552 18

Reykjavík, 6. maí 1916.

Sigurður Kristjánsson

p.t. gjaldkeri.

Reikning þennan höfum við yfirfarið, og ekki fundið neitt við
hann að athuga.

Reykjavík, 10. júní 1916.

Kl. Jónsson. Hannes Þorsteinsson.

Reikningur

sjóðs Margrétar Lehmanns-Filhés fyrir árið 1915.

Tekjur:

1. Eftirstöðvar við árslok 1914:

a. Stofufé:

1. Í Söfnunarsjóði kr. 5141 38

2. Í innlánsbók Íslandsbanka — 14 79

kr. 5156 17

b. Starfsfé:

Í innlánsbók Íslandsbanka — 175 58

2. Vextir 1915:

a. Í Söfnunarsjóði kr. 238 04

b. Í innlánsbók Íslandsbanka — 5 64

243 68

kr. 5575 43

Gjöld:

Eftirstöðvar við árslok 1915:

a. Stofufé:

1. Í Söfnunarsjóði kr. 5200 89

2. Í innlánsbók Íslandsbanka — 16 20

kr. 5217 09

b. Starfsfé:

Í innlánsbók Íslandsbanka — 358 34

kr. 5575 43

Reykjavík, 4. maí 1916.

Sigurður Kristjánsson

p.t. gjaldkeri.

Reikningur þennan höfum við endurskoðað, og ekki fundið neitt við hann að athuga.

Reykjavík, 10. júní 1916.

Kl. Jónsson. Hannes Þorsteinsson.

Hið íslenska Bókmentafélag.

VERNDARI:

Kristján konungur hinn tfundi.

STJÓRN:

Forseti: Björn M. Ólsen, dr. phil, r. af dbr. og dbrm.

Varaforseti: Jón Þorkelsson, þjóðskjalavörður, dr. phil.

Fulltrúaráð:

Guðmundur Finnbogason, bókav., dr. phil.

Matthías Þórðarson, fornmenjavörður, bókavörður félagsins.

Einar Arnórsson, ráðherra, kjörstjóri félagsins.

Jón Jónsson, docent, skrifari félagsins.

Björn Bjarnason, kennari, dr. phil.

Sigurður Kristjánsson, bóksali, r. af dbr., gjaldkeri félagsins.

HEIÐURSFÉLAGAR:

Anderson, R. B., prófessor, Madison, U. S. A.

Briem, Eiríkur, prófessor, comm. af dbr. m. m., Reykjavík.

*Briem, Valdimar, vígslubiskup, r. af dbr., Stóra-Núpi.

Bryce, James, Right Hon., sendiherra Breta í Washington.

Brögger, W. C., prófessor við háskólann í Kristjáníu.

Cederschiöld, Gustaf, prófessor, dr. phil., Lundi.

*Finnur Jónsson, prófessor, dr. phil., r. af dbr., r. af St. Ól, Khöfn.

Gering, Hugo, dr. phil., leyndarráð, prófessor í Kiel.

Heusler, Andreas, prófessor, dr. phil., Berlín.

Kålund, Kr., bókavörður, dr. phil., r. af dbr., Khöfn.

Ker, W. P., prófessor við háskólann í Lundúnum.

Kristján Jónsson, háyfirdómari, comm. af dbr. m. m., Reykjavík.

Matthías Jochumsson, uppgjafaprestur, r. af dbr. og dbrm., Akureyri.

Mogk, E., dr. phil., prófessor í Leipzig.

Noreen, Adolf, prófessor, dr. phil., Uppsölum.

Ólafur Halldórsson, konferenzráð, r. af dbr. og dbrm., Khöfn.

*Ólsen, Björn M., prófessor, dr. phil, r. af dbr. og dbrm., Reykjavík.

Olsen, Magnus, prófessor við háskólann í Kristjáníu.

Poestion, J. C., hirðráð í Vínarborg, comm. af dbr.

*Stephensen, M., fv. landsh. yfir Íslandi, stórkross af dbr. m. m.

Thoroddsen, Þorvaldur, prófessor, dr. phil., r. af dbr., Khöfn.

Wimmer, L. F. A., prófessor, dr. phil., stókr. af dbr., Khöfn.

* = neytti kosningarréttar síns 1916 (svo einnig í Félagatalinu).

FÉLAGAR.

A. Á Íslandi.

Reykjavík.

Alexander Jóhannesson '15¹⁾.
 Andersen, Ludvig, klæðsk. '15.
 Arinbjörn Sveinbjarnarson, bók-
 bindari '15.
 *Árni Jóhannsson, bankaritari '15.
 Árni Jónsson, kaupm. '15.
 Ásgeir Sigurðsson, konsull '15.
 Ásgeir Torfason, efnafræð. '15.
 Bartels, Martin, bankaritari '15.
 Beck, Simon, trésmiður '15.
 Benedikt Sveinsson, alpm. '15.
 Benedikt Þórarinnsson, kaupm. '15.
 *Bjarnason, Ágúst, próf., dr. '15.
 *Bjarnason, Brynj. H., kaupm. '15.
 Bjarnason, Ingibjörg H., forstöðu-
 kona kvennaskólans '15.
 *Bjarnason, Lárus H., prof. juris '15.
 *Bjarnason, Þorleifur H., adjunkt
 '15.
 Bjarni Bjarnason, klæðskeri '16.
 Bjarni Jensson, læknir '15.
 Bjarni Jónsson, dómkirkjupr. '16.
 Björn Bjarnason, dr. phil. '12.
 Björn Björnsson, verzlunarm. '15.
 Björn Kristjánsson, bankastj. '15.
 Björnson, Guðm., landlæknir '15.
 Björn Sigurðsson, bankastj. '15.
 *Björn Þórðarson, aðstm. í stjrn. '15.
 *Blöndahl, Magnús, kaupm. '15.
 *Blöndal, Ragnh., ungfrú '15.
 Bogi Ólafsson, kennari '15.
 *Bókasafn K. F. U. M. '15.
 Borgþór Jósefsson, bæjargjaldk. '15.
 Breiðfjörð, Guðm. '15.
 Briem, Eggert, yfirdómari '15.
 Briem, Sigurður, póstmestari '15.
 Brynjólfur Björnsson, tannl. '15.
 *Brynleifur Tóbiasson, kennari '15

Böðvar Kristjánsson, adjunkt '15.
 Claessen, Eggert, yfirréttarmála-
 flatningsmaður '15.
 Copland, G., stórkaupm. '15.
 *Einar Arnórsson, ráðherra '15.
 Einar Gunnarsson, ritstjóri '15.
 Einar Helgason, garðyrkjufur. '15.
 Einar Magnússon, bókh. '15.
 Einar Magnússon '15.
 Erlendur H. Guðmundsson, bréf-
 beri '15.
 Eyjólfur Jónsson, rakari '15.
 Eyþór Guðjónsson, bókbindari '15.
 Fjeldsted, Andrés, augnlæknir '15.
 Fjeldsted, Lárus, cand. jur. '15.
 Friðrik Benónýsson '15.
 Friðrik Klemensson '15.
 Geir Sigurðsson, skipstjóri '15.
 *Georg Ólafsson, cand. polit. '15.
 Gísli Guðmundsson, verkam.stj. '15.
 *Gísli Ísleifsson, fv. sýslum. '15.
 Gísli Sveinsson, cand. jur. '15.
 Grímúlfur Ólafsson, ritari '15.
 Gröndal, Ben. P., cand. phil. '15.
 Guðjón Rögnvaldsson, kennari '15.
 Guðjón Sigurðsson Hvg. 71 '16.
 *Guðm. Ásbjarnarson, kaupm. '15.
 Guðm. Bjarnason, klæðskeri '16.
 Guðm. Böðvarsson, kaupm. '15.
 Guðm. Finnbogason, dr. phil. '15.
 Guðm. Gamallielsson, bóksali '15.
 *Guðm. Guðmundsson, skáld
 Guðm. Hannesson prófessor '15.
 *Guðm. Helgason præg. hon. '15.
 Guðm. Kr. Guðmundsson, kaupm. '15
 Guðm. Loftsson, bankaritari '15.
 Guðm. Magnússon, prófessor '15.
 *Guðm. Magnússon, rithöf. '15.
 Gunnar Sigurðsson, stud. jur. '15.

¹⁾ Ártölin aftan við nöfnin merkja að tillag sé afhent bókaverði fyrir það ár síðast.

*Hafstein, Hannes, fv. ráðh. '15.
 Halldór Danielsson, yfirdómari '15.
 Halldór Kr. Þorsteinsson, skipstj. '15.
 Halldór Þórðarsson '15.
 Hallgrímur Benediktsson, umboðsali '15.
 Hallgrímur Jónsson, járnsm. '13.
 Hallgrímur Jónsson, kennari '15.
 Hannes Þorsteinsson, skjalav. '15.
 *Hansen, Jörgen, verzl. m.
 Hansen, Morten, skólastjóri '15.
 Haraldur Gunnarsson, prentari '15.
 Haraldur Nielsson, prófessor '15.
 Haraldur Sigurðsson, verzl. m. '15.
 Helgi Helgason, verzlunarstj. '15.
 *Helgi Jónasson, verzlunarm. '14.
 Helgi Jónsson, dr. phil. '15.
 Helgi Jónsson verzl. m. '15.
 Hliðdal, Guðm., verkfræð. '15.
 *Hólmfríður Árnadóttir, kensluk. '15.
 Ísleifur Jónsson, kennari '16.
 Jakobson, Jón, landsbókav. '15.
 Jakob Jónsson verzlunarstj. '15.
 Jensen, Thor, kaupm. '15.
 Jensson, Sigríður H., frú '15.
 Jóhannes Sigfússon, adjunkt '15.
 *Jóhann Kristjánsson, ættfræð. '15.
 Jóhann Þorsteinsson, præg. hon. '15.
 Johnson, Ólafur, konsúll '15.
 Johnson, Ág. J., bankaritari '16.
 Jónas Jónsson, kennari '15.
 Jón Guðnason, cand. theol. '14.
 Jón Helgason, prófessor '15.
 Jón Hermannsson, skrifstofustj. '15.
 Jón Hj. Sigurðsson, héraðsl. '14.
 Jón Ívarsson, kennari '15.
 *Jón Jónsson, dócent '15.
 Jón Kristjánsson, prófessor '15.
 *Jón Magnússon, bæjarfógeti '15.
 Jón Ólafsson, rithöf. '15.
 Jón Ólafsson, skipstjóri '15.
 Jón Sigurðsson, ritari '15.
 Jón Þorbergsson fjárræktarm.
 Jón Þórarinnsson, fræðslum. stj. '15.

Jón Þorkelsson, dr., þjóðskjalav. '15.
 *Jón Þorláksson, landsverkfr. '15.
 *Jörundur Brynjólfsson, kennari '15.
 Kaaber, Ludvig, konsúll '15.
 Kennarafélag Barnaskólans '15.
 *Klemens Jónsson, landritari '15.
 Kolbeinn Þorsteinsson, skipstj. '15.
 *Krabbe, Th., landsverkfr. '15.
 Kristján Kristjánsson, skipstj. '15.
 Kvaran, Einar, rithöf. '15.
 Laxdal, Jón, kaupm. '15.
 Laugarnesspítali '14.
 *Lestrarfélagið „Íþaka“ '15.
 Lestrarfélag kvenna '15.
 Leví, R. P., kaupm. '15.
 Magnús Arnbjarnarson, cand. jur. '15.
 Magnús Benjaminsson, úrsm. '15.
 Magnús Einarsson, dýralæknir '15.
 *Magnús Helgason, skólastj. '15.
 *Magnús, M., læknir '15.
 Magnús Magnússon, kennari '15.
 Magnús Sigurðsson, cand. jur. '15.
 Matthías Einarsson, læknir '15.
 Matth. Matthíasson, kaupm. '15.
 Matth. Þórðarson, forn. m. v. '16.
 *Nordal, Jóhannes, íshússtjóri '15.
 Oddur Gíslason, yfirréttarmálafl. maður '15.
 *Oddur Hermannsson, cand. jur. '15.
 Ólafson, Gísli J., slmastjóri '15.
 Ólafur Björnsson, ritstjóri '15.
 Ólafur G. Eyjólfsson, kaupm. '15.
 Ólafur Lárusson, s. próf. '15.
 Ólafur Ólafsson, umsýðunarm. '15.
 Ólafur Runólfsson, bókhaldari '15.
 Ólafur Þorsteinsson, læknir '15.
 *Olgeir Friðgeirsson, samgöngumalastjóri '15.
 Óskar Halldórsson, búfræð. '14.
 Páll E. Ólason, ritari '16.
 Páll Halldórsson, skólastj. '15.
 Páll H. Gíslason, kaupm. '15.
 *Páll Jónsson, verzlunarm. '15.
 Páll Stefánsson, kaupm. '15.

Pálmi Pálsson, yfirkennari '15.
 Pétur Halldórsson, bóksali '15.
 Pétur Láruss, prentari '15.
 Péturas, Helgi, dr. phil. '15.
 Pétur Zóphóníasson gagnfr. '13.
 *Proppé, Carl, verzlunarstj. '15.
 Richard Torfason, bankabókari '15.
 Rósenkranz, Ólafur, kennari '15.
 *Rögnvaldur Ólafsson, húsameist. '15
 *Samúel Eggertsson, skrautrit. '15.
 Sighv. Bjarnason, bankastj. '15.
 Sigríður Björnsdóttir '15.
 S. Á. Gíslason, cand. theol. '15.
 Sigurður Guðmundsson frá Hofdöl-
 um '14.
 *Sigurður Jónsson, bókbindari '15.
 *Sigurður Kristjánsson, bóksali '15.
 Sigurður Sigurðsson, alþingism. '15.
 Sigurður Þórðarson, fv. sýslum. '15.
 *Sivertsen, Sigurður, dócent '15.
 Smith, Paul, símaverkfr. '15.
 Snorri Jóhannsson, bókhaldari '15.
 Steingrímur Arason, kennari '15.
 Steinunn Bjartmarsd., kensluk. '15.
 Sveinn Björnsson, alpm. '15.
 *Sveinn Jónsson, trésm. '15.
 Sæmundsen, Karl, kaupm. '15.
 Sæm. Bjarnhéðinsson, prófessor '15.
 Thomsen, Ditlev, ræðism. '15.
 Thoroddsen, Sigurður, adj. '15.
 Thorsteinsson, Hannes, cand. jur. '15.
 Thorsteinsson, Th., kaupm. '15.
 Tr. Gunnarsson, fv. bankastj. '15.
 Tulinus, Axel, málafl.m. '15.
 *Ungmennafél. Reykjavíkur '15.
 Vigfús Einarsson, cand. jur. '15.
 Vigfús Guðmundsson '16.
 *Wiehe, Holger, háskólakennari '15.
 Zimsen, Knud, borgarstjóri '15.
 Zoëga, Geir, cand. polyt. '15.
 Zoëga, Geir, rektor '15.
 Zoëga, Geir, verzlunarm. '15.
 Þórður Erlendss., Raðararst. '15.
 Þórður Sveinsson, lækur, Kleppi '15.

*Þórhallur Bjarnarson, biskup '15.
 Þorkell Þorláksson, ritari '15.
 Þorlákur Vilbjarnason, búfr. '15.
 Þorleifur Jónsson, póstafr.m. '15.
 *Þorsteinn Finnbogason, kaupm. '15.
 Þorsteinn Gíslason, ritstj. '15.
 Þorsteinn Jónsson, bankarit. '15.
 Þorsteinn Sigurðsson, skósm. '13.
 *Þorsteinn Þorsteinsson, cand. jur.
 '15.
 *Þorst. Þorsteinsson, hagstofustj. '15.
 *Þorv. Guðmundsson, afgr.m '15.
 Þorvarður Þorvarðarson, prentsm.-
 stjóri '15.

Gullbringu- og Kjósarsýsla.

Árni Þorsteinsson, prestur á Kálfa-
 tjörn '15.
 Bræðrafélag Kjósarhrepps '15.
 Einar Magnússon, kennari, Gerðum
 í Garði '15.
 *Guðm. Ragnar Ólafsson, Móakoti
 í Grindavík '15.
 Heilsuhælið á Vífilstöðum '15.
 Jóhann Eyólfsson, alpm., Brautar-
 holti '14.
 Johnsen, Sig. P., kennari Seltjarn-
 arnesi '14.
 *Jónas Björnsson, búfr. Kálfatjörn
 '16.
 Jóna Sigurjónsdóttir, Keflavík '14.
 Jón Jónsson, kennari, Hvammi '14.
 Klemens Egilsson, óðalsb., Minni-
 Vogum '15.
 Kolbeinn Högnason, kennari, Kolla-
 firði '15.
 Kristinn Daníelsson, prestur, Út-
 skálum '14.
 *Léstrarfélag Keflavíkur '15.
 Léstrarfélag Kjalnesinga '15.
 Léstrarfélag Lágafellssóknar '15.

Lestrarfélag Seltirninga '15.

*Magnús Bergmann Jónsson, Fugla-
vík, Miðnesi '15.

Sigurður Magnússon, lækur, Vífil-
stöðum '15.

Stefán Sigurfinnsson, Bakkakoti,
Leiru '15.

Sveinn Guðmundsson, járnsm., Víf-
ilsstöðum '15.

Tómas Snorrason, kennari, Kefla-
vík '14.

Þorgrímur Þórðarson, lækur Kefla-
vík '14.

Hafnarfjarðar-umboð.

(Umboðsm. Salómon Runólfsson,
verzlunarmaður í Hafnarfirði).¹⁾

Andrés Runólfsson, verzlunarm.

Árni Sighvatsson, kaupm.

Audunn Nielsson, kaupm.

Bjarni Bjarnason, kennari.

Bjarni Erlendsson, verkstj.

Einar Þorgilsson, kaupm.

Flygenring, Aug., kaupm.

Guðm. Eyjólfsson, verzlunarm.

Guðm. Magnússon, skipstj.

Gunnlaugur Kristmundsson, kennari.

Ingvar Jóelsson, verkstjóri.

Janus Jónsson, præp. hon.

Kristínus Finnbogason, verzl.

Lárus Bjarnason, kennari.

Lestrarfél. „Framför“.

Magnús Jóhannesson, verkstj.

Magnús Jónsson, sýslum.

Magnús Þorsteinsson, verzl.

Oddur Ívarsson, póstafr.m.

Ólafur Böðvarsson, kaupm.

Ólafur V. Davíðsson, framkv.stj.

*Salómon Runólfsson, bókhaldari.

Sigfús Bergmann, kaupm.

*Sig. Kristjánsson, sýsluskrifari.

Sig. Sigurðsson, verzlunarm.

Simon Jónsson, kaupm.

Skinfaxi, bókas. skólapilta í Flensb.

Steingr. Torfason, bryggjuv.

Sveinn Jónasson, sjóm.

Þórður Edlónason, lækur.

Þórður Einarsson, verzlunarm.

Þórður Guðnason, skólastj.

*Ögmundur Sigurðsson, skólastj.

Borgarfjarðar- og Mýrasýsla.

Hjörtur Snorrason, bóndi, Arnar-
holti '15.

Jón Sveinsson, prófastur, Akranesi
'16.

Lestrarfélag Akraness '14.

*Magnús Andrésson, prófastur, Gile-
bakka '16.

Oddur Sveinsson, kennari, Akranesi
'14.

Ottesen, Oddgeir P., hreppstj., Ytra-
hólmi '14.

Stefán Guðmundsson, bóndi, Fitjum
'15.

Sumarliði Halldórsson, skógræð-
ingur, Akranesi '15.

Thorlacius, Einar, prestur, Saurbæ
'15.

Tryggvi Þórhallsson, prestur Hesti
'15.

Ungmennafélagið „Haukur“, Leirár-
sveit '15.

Borgarness-umboð.

(Umboðsm. Jón Björnsson, kaupm.
Borgarnesi).¹⁾

Árni Þorsteinsson, bóndi, Brenni-
stöðum.

¹⁾ Skilagrein komin fyrir 1915.

Bjarni Bjarnason, bóndi, Skáney.
 Björn Lárusson, bóndi, Heggstöðum.
 Björn Ólafsson, steinsmiður, Kaðal-
 stöðum.

Brynjólfur Bjarnason, búfræðingur,
 Deildartungu.

Bændaskólinn á Hvanneyri.

Davíð Þorsteinsson, Arnbjargarlæk.
 Eggerz, Sigurður, sýslum., Borgar-
 nesi.

*Einar Sigurðsson, Stóra-Fjalli.
 Fjeldsted, Sigurður, bóndi, Ferjukoti.
 Geir Pétursson, Geirshlíð.
 Grönfeldt, H. skólastj. Hvítárvölum.
 Guðm. Árnason, bóndi, Áltártungu.
 Guðm. Danielsson, bóndi, Svigna-
 skarði.

Jóhannes Jónsson, gagnfræð., Efra-
 nesi.

*Jóhann Magnússon, bóndi, Hamri.

*Jón Björnsson, kaupm., Borgarnesi.

Jósef Björnason, Svarfhóli.

Kristján Fr. Björnsson, bóndi, Stein-
 um.

*Kristján Sigurðsson, Bakkakoti.

Lestrarfélag Álfthaneshrepps.

Lestrarfélag Borgarness.

Lestrarfélag Hraunhrepps.

Magnús Einarsson, Munadarnesi.

Magnús Jónsson, kennari, Borgar-
 nesi.

Ólafur B. Jónsson, Hvanneyri.

Ólafur Guðnason, Signýjarstöðum.

*Páll Jónsson, búfræð., Hvanneyri.

*Páll Zóphóníasson, kenni, Hvan-
 neyri.

Runólfur Runólfsson, bóndi, Norð-
 tungu.

*Sigurður Þórólfsson, skólastj., Hvít-
 árbakka.

Stefán Jónsson, prestur, Staðarhrauni

Tómas Jónasson, Sólheimatungu.

Ungmennafél. „Dagrenning“, Lunda-
 reykjadal.

Þorgeir Bjarnason, búfræð., Hvan-
 neyri.

Snæfellsness- og Dalasýslur.

*Benedikt Magnússon, kaupfélags-
 stj., Tjaldanesi '15.

Benedikt. S. Benediktsson, verzlrm.,
 Grundarf. '14.

*Bergmann, Daniel, verzlunarstjóri,
 Sandi '16.

Finnbogi Lárusson, kaupm., Búð-
 um '14.

*Kristján Kristjánsson, kennari,
 Raðkollsstöðum '15.

Lestrarfélag Sandara '16.

Magnús Guðlaugsson, lækni, Bjarna-
 stöðum '14.

Svanhildur Jóhannsdóttir, kenslu-
 kona, Stykkish.

Stykkishólms-umboð.

(Umboðsm. Hjálmar Sigurðsson
 kaupmaður¹⁾).

Ágúst Þórarinnsson, bókh., Stykkia-
 hólmi.

Ásmundur Sigurðsson, bóndi á Grund
 í Fyrarsveit.

*Blöndal, Magnús, kennari, Stykkia-
 hólmi.

Bókasafn Vesturamtsins, Stykkia-
 hólmi.

Einar Vigfússon, Stykkiskólmi.

Elías Kristjánsson, Arnartungu.

Gestur Þórðarson, Höfða.

Gísli Sigurðsson, Langadal.

¹⁾ Skilagreitt komin fyrir 1915.

Helgi Guðmundsson, Ketilsstöðum.
 Helgi Guðmundsson, Skógarnesi.
 *Hjálmar Sigurðsson, kaupmaður,
 Stykkishólmi.
 Ingólfur Jónsson, verzlunarstjóri,
 Stykkishólmi.
 Jón Sigurðsson, Hofgörðum.
 Lestrarfélag Hvammsveitar.
 Richter, Reinh., verzl. m., Stykkis-
 hólmi.
 Sigurður Gunnarsson, prófastur,
 Stykkishólmi.
 Sæm. Halldórsson, kaupm., Stykkis-
 hólmi.

Búðardals-umboð.

(Umboðsm. Bogi Sigurðsson,
 kaupmaður¹⁾).

Björn Bjarnason, sýslum., Sandafelli.
 Bogi Sigurðsson, kaupm., Búðar-
 dal.
 *Jóhannes L. L. Jóhannsson, prest-
 ur, Kvennabrekku.
 Johnson, Bjarni P., sýslum., Búð-
 ardal.
 Lestrarfélag Miðdæla.
 Magnús Vigfússon, verzlunarmaður,
 Búðardal.
 Páll Ólafsson, kaupm., Búðardal.
 *Sigurður Sigurðsson, læknir, Búð-
 ardal.

Barðastrandarsýsla.

Bókasafn Flateyjar á Breiðafirði '14.
 *Jón Einarsson, trésmiður, Kletti í
 Geiradal '13.
 Jón Jóhannsson, Mýrartungu í
 Reykhólasveit '14.

*Jón Ólafsson, Króksfjarðarnesi '14.
 Lestrarfélag Geiradalshrepps '14.
 Magnús Sæbjörnsson, læknir, Flat-
 ey '13.
 Steinþór Oddsson, Miðhúsum '14.
 Þorvaldur Jakobsson, prestur, Sauð-
 lauksdal '13.

Patreksfjarðar-umboð.

(Umboðsm. Jón Kristófersson,
 kennari).

*Bjarni Símonarson, prófastur,
 Brjánslæk '14.
 Bókasafn Vestur-Barðastrandarsýslu
 '12.
 *Eiríkur Kristófersson, Brekkuvelli.
 Hallgrímur Jónsson, Bakka.
 Jón B. Ólafsson, Hvanneyri.
 Jón Hallgrímsson, Bakka.
 Jón Kristófersson, kennari, Brekku-
 velli á Barðaströnd '14.
 Kristján Kristófersson, Haga '14.
 Lestrarfélag Bílddælinga '14.
 Lestrarfélag Breiðuvíkursóknar '12.
 Lestrarfélag Rauðsendinga '13.
 Lestrarfélag Tálknafjarðar '14.
 Magnús Þorsteinsson, prestur, Pat-
 reksfirði.
 Ólafur Magnússon, Kaldabakka '13.
 Svafa Þorleifsdóttir, Bíldudal '14.
 *Þorbjörn Þórðarson, læknir, Bíldu-
 dal '14.

Ísafjarðarsýsla.

Bókasafn Hólshrepps, Bolunga-
 vík '15.
 Halldór Stefánsson, læknir, Flat-
 eyri '15.

¹⁾ Skilagrein komin fyrir 1915.

Hjálmar Jónsson, bóndi, Höfða í Grunnavíkurhreppi '15.

Lestrarfélag Dalmanna, Önnarfirði '15.

Lestrarfélag Flateyrar '15.

*Sighvatur Grímsson Borgfirðingur, Höfða. Gjaldfrí.

*Sveinn Halldórsson, kennari, Bolungarvík '14.

Dýrafjarðar-umboð.

(Umboðsm. Jóh. Proppé, kaupmaður á Pingeyri¹⁾).

Andrés Kristjánsson, Meðaldal.

Björn Guðmundsson, kennari, Næfranesi.

Bláðafélagið „Dagvarður“, Keldudal.

Böðvar Bjarnason, prestur, Rafns-eyri.

Friðrik Bjarnason, hreppstjóri, Mýrum.

Guðbrandur Guðmundsson, Pingeyri.

Guðm. Á. Guðmundsson, skipstjóri, Alvíðru.

Guðmundur Jónsson, Granda.

Guðni Bjarnason, verzlunarmaður, Pingeyri.

Guðrún Benjamínsdóttir, kenslu-kona, Pingeyri.

Gunnlaugur Þorsteinsson, lækni, Pingeyri.

*Jóhannes Davíðsson, Neðra-Hjarðardal.

Kristinn Guðlaugsson, búfræðingur, Núpi.

Lestrarfélag Pingeyrarhrepps, Pingeyri.

Ólafur Hjartarson, járnsmiður, Pingeyri.

*Ólafur Ólafsson, kennari, Pingeyri.

*Proppé, Ólafur, kaupm., Pingeyri. Sigríður Guðmundsdóttir, kenslu-kona, Haukadal.

*Sigtryggur Guðlaugsson, prestur, Núpi.

*Sóphónías Jónsson, gagnfræðingur, Læk.

*Torfi Hermannsson, trésmiður, Pingeyri.

Ísafjarðar-umboð.

(Umboðsm. Guðmundur Bergsson, bóksali, Ísafirði¹⁾).

Adalbjörg Jónsdóttir, húsrú, Arngerðareyri.

Arngrímur Fr. Bjarnason, prentari, Ísafirði.

Árni E. Árnason, verzlunarmaður, Bolungavík.

Ásgeir Guðmundsson, hreppstjóri, Arngerðareyri.

*Ásgeir Guðmundsson, Æðey.

Bárður Guðmundsson, bókbíndari, Ísafirði.

*Benedikt Bjarnason, húsmiður, Góustöðum.

Bergur Rósinkransson, kaupmaður, Flateyri.

Björn Guðmundsson, kaupmaður, Ísafirði.

*Einarsson, Þóra E., sjúkrah.st.

Engilbert Kolbeinsson, bóndi, Lóns-eyri.

Finnbjörn Hermannsson, verzlunarmaður, Ísafirði.

Friðbert Friðbertsson, kennari, Suðureyri í Súgandafirði.

Friðbert Guðmundsson, Suðureyri.

¹⁾ Skilagrein komin fyrir 1915.

Friðrik Hjartarson, kennari, Suðureyri.
 Grímur Jónsson, cand. theol., Ísafirði.
 Guðmundur Bergsson, bóksali, Ísafirði.
 *Guðmundur Hannesson, konsúll, málaflutningsm., Ísafirði.
 Guðmundur H. Finnbjörnsson, bóndi, Sæbóli í Aðalvík.
 Guðmundur Sveinsson, kaupmaður, Hnífsdal.
 Guðrún Tómasdóttir, ljósmóðir, Ísafirði.
 Hálfðan Örnólfsson, hreppstjóri, Hóli í Bolungavík.
 Halldór Bjarnason, verzlunarmaður, Ísafirði.
 Halldór Jónsson, búfræðingur, Laugabóli.
 Halldór Jónsson, búfræðingur, Rauðamýri.
 Halldór Ólafsson, lögreglumaður, Ísafirði.
 Halldór Pálsson, útvegsbóndi, Hnífsdal.
 Hannes Halldórsson, verzlunarm., Ísafirði.
 Helgi Ketilsson, sjómaður, Ísafirði.
 *Helgi Sveinsson, bankastjóri, Ísafirði.
 Hjaltlína Guðjónsdóttir, Álfadal.
 Ingólfur Árnason, verzlunarmaður, Bolungavík.
 *Jens Nielsson, kennari, Bolungavík.
 *Jóhann Þorsteinsson, kaupmaður, Ísafirði.
 Jóhanna Eiríksdóttir, Kleifum í Seyðisfirði.
 Jónas Halldórsson, Búð, Hnífsdal.
 Jónas Þorvarðsson, óðalsbóndi og oddviti, Hnífsdal.
 Jón Grímsson, bókhaldari, Ísafirði.

Jón Mariásson, verzlunarm., Ísafirði.
 Jón Sn. Árnason, kaupmaður, Ísafirði.
 Júlíus Hjaltason, Bolungavík.
 Karl Olgeirsson, verzlunarstjóri, Ísafirði.
 *Kolbeinn Jakobsson, hreppstjóri, Unaðsdal.
 Kristján A. Kristjánsson, verzlunarstjóri, Suðureyri í Ségandafirði.
 Lestrarfélag Bjarnðæla og Fjarðarmanna, Öundurafirði.
 Lestrarfélag Hnífsdælinga, Hnífsdal.
 Lestrarsalur Ísafjarðar.
 Lestrarfélag Seyðisfirðinga.
 Lestrarfélag Sléttuhrepps.
 *Lestrarfélag Súðavíkurhrepps, Áltafirði.
 Magnús Bárðarson, útvegsbóndi Bolungavík.
 *Magnús Jónsson, prestur, Ísafirði.
 Magnús Kristjánsson, búfræðingur, Múla í Laugardalshr.
 Magnús Torfason, sýslumaður og bæjarfógeti, Ísafirði.
 *Oddur Guðmundsson, póstafr.m., Bolungavík.
 Ólafur Árnason, verzlunarmaður, Bolungavík.
 Ólafur Jónsson, Ísafirði.
 Ólafur Pálsson, verzl., Arngerðareyri.
 Páll Pálsson, útvegsbóndi, Heimaþæ, Hnífsdal.
 Páll Þórarinnsson, sjómaður, Hnífsdal.
 Pétur Oddsson, kaupm., Tröð í Bolungavík.
 Sigfús Danielsson, verzlunarstjóri, Ísafirði.
 Sigurbjörn Ármannsson.
 Sigurður Kristjánsson, kennari, Ísafirði.

Sigurður Pálsson, verzlunarstjóri,
Hesteyri.

Sig. Sigurðsson, kennari.

*Sig. Sigurðsson, málaflutningsm.,
Ísafirði.

Sigurður Þorvaldsson, kennari, Ísa-
firði.

Stefán Sigurðsson, verzlun.

Stephensen, Páll, prestur, Holti í
Önundarfirði.

Thordarson, Finnur, konsúll, Ísa-
firði.

*Thorsteinsson, Davíð Scheving,
læknir, Ísafirði.

Valdemar Valdemarsson, verzlunar-
maður, Hnífsdal.

Þorvaldur Jónsson, læknir og
bankastj., Ísafirði.

*Þorvaldur Jónsson, prófastur, Ísa-
firði.

Þorvarður Brynjólfsson, prestur,
Stað í Súgandafirði.

Vigur-umboð.

(Umboðsm. Sigurður Stefánsson,
prestur, Vigur)¹⁾.

*Finnbogi Pétursson, Hvítanesi.

Jón Guðmundsson, kaupm., Eyrar-
dal.

*Sigurður Stefánsson, prestur, Vigur.

Strandasýsla.

Bárdarson, Guðm. G., Kjörseyri '14.

Björn Magnússon, Borðeyri '15.

Guðjón Guðlaugsson, kaupfélagastj.,
Hólmavík '15.

Halldór Kr. Júlíusson, sýslumaður,
Borðeyri '18.

Lestrarfélag Árneshrepps '15.

Lestrarfélag Kirkjubólshrepps '14.

Lestrarfélag Kollafjarðar '15.

Lestrarfélag Selstrandar '15.

Þórarinn G. Árnason, Þiðriksvöll-
um '16.

Húnavatnssýsla.

Guðm. Árason, búfræð., Illugastöð-
um '14.

Jón Jónsson, bóndi, Stóradal '14

*Kristján H. Sigurðsson, kennari,
Brúastöðum '14.

Þorvaldur Kristmundsson, búfræð.,
Bálkastöðum '15.

Hvammstanga-umboð.

(Umboðsm. Axel V. Wilhelmsson,
verzlunarstj. á Hvammstanga)¹⁾.

Andrés Guðjónsson, kaupm., Hara-
stöðum.

Ásgeir Magnússon, skólustjóri,
Hvammstanga.

Axel V. Wilhelmsson, verzlunarstj.,
Hvammstanga.

Blöndal, Björn P., verzlunarmaður
Hvammstanga.

Bókasafn Vestur-Húnavetninga,
Hvammstanga.

Briem, Jóh. Kr., prestur á Melstað.

Guðm. B. Jóhannesson, Þorgríms-
stöðum.

Guðm. Sigfússon, Króksstöðum.

*Gunnar Kristófersson, hreppstj.,
Valdarási.

Gunnl. Gunnlaugsson, búfræðingur,
Syðri-Völlum.

Halldór Magnússon, bóndi, Vatnshól.

¹⁾ Skilagrein komin fyrir 1915.

Ingvar Jakobsson, Harastöðum.

*Jón D. Guðmundsson, Barði.

*Jón Eiríksson, bóndi, Svertingsstöðum.

Magnús Þorleifsson, Krossanesi.

Sigurður Jónsson, Stöpum.

Sigurður Pálmason, Hvammetanga.

Stefán Björnsson, bóndi, Spörði.

Stefán Díomedesson, Anastöðum.

Valdemar Baldvinsson, búfræð., Helguhvammi.

Þorbjörn Teitsson, Víðidalstungu.

Blönduóss-umböð.

(Umboðsm. Friðfinnur Jónsson, trésmiður, Blönduósi)¹⁾.

Arnalds, Ari Jónsson, sýslumaður.

Bjarni Jónasson, barnak., Litladal.

Bjarni Pálsson, prestur, Steinnesi.

Daði Davíðsson, Gilá.

Friðfinnur Jónsson, trésm., Blönduósi.

-Guðni Jónsson, bókbindari, Gunnfriðarstöðum.

Hafsteinn Pétursson, bóndi, Gunnsteinsstöðum.

*Jakob Bjarnason, vinnumaður, Strjúgsstöðum.

*Jónas Illugason, bóndi, Bröttuhlíð.

*Jón Jónsson, héraðsl., Blönduósi.

Jón Pálsson, prestur, Höskuldsstöðum.

Lárus Ólafsson, trésm., Blönduósi.

Lestrarfélag Áshrepps.

Lestrarfélag Auðkúlusóknar.

Lestrarfélag Langdælinga.

Lestrarfélag Torfalækjarhrepps.

Lestrarfélag Þverárhrepps.

Magnús Björnsson, Syðra-Hóli.

Magnús Jónsson, bóndi, Sveinsstöðum.

Páll Sigurðsson, búfr., Brásastöðum.
Pétur Theodorsson, sölustj., Blönduósi.

Sigurgeir Björnsson, búfr., Orrastöðum.

Skúli Jónsson, sölustj., Blönduósi.

Sveinn Bjarnason, Blönduósi.

Sýslubókasafn Austur-Húnavatussýslu.

Sæmundsen, Edwald, verzlunarstj., Blönduósi.

Þórarinn Jónsson, alpm., Hjalta-
bakka.

Þorsteinn Bjarnason, kaupmaður, Blönduósi.

Skagafjarðarsýsla.

*Guðm. Davíðsson, Hraunum '15.

Hartmann Ásgrímsson, kaupmaður, Kolbeinsárósi '14.

Jóhannes Sigurbjarnarson, Slèttu '15.

Jóhann Sigurðsson, Borgargerði '15.

Jón Árnason, gagnfræð., Stóra-
Vatnsskarði '15.

Jón Rögnvaldsson, Réttarholti '15.

Sauðárkróks-umböð.

(Umboðsm. Margeir Jónsson, kennari, Ögmundarstöðum)¹⁾.

Anna Kr. Jósefsdóttir, Hofi.

Axel Kristjánsson, verzlunarmaður, Sauðárkróki.

Björn L. Jónsson, bóndi, Stóru-Seilu.

Blöndal, Kr., póstafr.m.

Bókasafn Skagafjarðar.

Briem, Kristinn P., kaupmaður, Sauðárkróki.

Briem, Ólafur, alpm., Álfgeirsvöllum.

¹⁾ Skilagrein komin fyrir 1915.

Eiríkur Kristjánsson, Sauðárkróki.
Hafstað, Árni J., Vík.
Hálfdan Guðjónsson, prestur á
Sauðárkróki.

Hálfdan Jónasson, Þorljótsstöðum.

*Jóhannes Örn Jónsson, Árnesi.

Jón Kr. Ólafsson, Dúki.

Jón Sigurðsson, Reynistað.

Jónas Kristjánsson, læknir, Sauðár-
króki.

Lestrarfélag Miklabæjarsóknar.

Magnús Sigmundsson, Vindheimum.

Margeir Jónsson, kennari, Ögmund-
arstöðum.

Ólafur Sigurðsson, Hellulandi.

Pétur Jónsson, búfr., Eyhildarholti.

Sigurður Jósafatsson, Krossanesi.

Tobías Magnússon, Geldingaholti.

Þormóður Sveinsson, Uppsölum.

Hóla-umboð.

(Umboðsm. Sigurður Sigurðsson,
skólastjóri, Hólum)¹⁾.

Árni Guðmundsson, Efra-Ási, Hjalta-
dal.

Bændaskólinn á Hólum.

Einar Jósefsson, Vatnsleysu.

Jón Sigtryggsson, Framnesi.

Lestrarfélag Hofshrepps.

Lestrarfélag Hólahrepps.

Ólafur Jónsson, Litlahóli.

*Sigurður Sigurðsson, kenn., Hólum.

Theodor Arnbjarnarson, Hólum.

Eyjafjarðarsýsla.

Siglufjarðar-umboð.

(Umboðsmaður Helgi Hafliðason,
Sígulfirði)²⁾.

Ásgeir Blöndal Bjarnason.

*Bjarni Þorsteinsson, prestur.

Blöndal, Sophus, verzl. stj.

Guðmundur Bjarnason, Bakka.

Hafliði Guðmundsson, hreppstj.

Hallgrímsson, Guðm. T., læknir.

Helgi Guðmundsson, læknir.

*Matthías Hallgrímsson, kaupm.

Þórður Þórðarson, Siglunesi.

Eyjafjarðar-umboð.

(Umboðsm. Kristján Guðmundsson,
bóksali, Oddeyri)²⁾.

Árni Jóhannsson, prestur, Grenivík.

Ásmundur Gíslason, próf., Hálsi.

*Benjamín Kristjánsson, Tjörnum.

Benjamín Sigvaldason, Gilsbakka í
Axarfirði.

Bjarni Arason, Grýtubakka.

*Bjarni Jónsson, útbússtj., Akureyri.

Björn Árnason, bóndi, Pálsgerði.

Björn Jóhannes., Syðra-Laugalandi.

Bókasafn Gagnfræðaskól., Akureyri.

Bókasafn Norðuramtsins, Akureyri.

Briem, Þorsteinn, prestur, Hrafnagili.

Einar Guttormsson, prentari, Ósi
við Eyjafjörð.

Eyðal, Ingimar, kennari, Akureyri.

Finnur Sigmundsson, Ytra-Hóli.

Framfarafélag Grýtubakkahrepps.

Friðbjörn Steinsson, dbrm., Akur-
eyri. Gjaldfrí.

Friðjón Jensson, læknir, Akureyri.

Garðar Arngrímsson, Geirbjarnar-
stöðum.

Gestur Jóhannesson, Akureyri.

Gísli Bjarnason, gagnfr., Skógum.

*Gísli Jónsson, hreppstj., Hofi.

Gísli R. Magnússon, Akureyri.

Grimur Grímsson, kenn., Ólafsfirði.

¹⁾ Skilagrein ókomin fyrir 1915.

²⁾ Skilagrein komin fyrir 1915.

Guðmundur Benediktsson, Ásláks-
stöðum.
Guðm. Guðmundsson, hreppstjóri,
Þáfnavöllum.
Hallgrímur Davíðsson, verzlunar-
stjóri, Akureyri.
*Hallgrímur Kristinsson, kaupfé-
lagsstjóri, Akureyri.
Hallgrímur Pétursson, bókbindari,
Akureyri.
Hannes Davíðsson, Hofi.
Hannes Kristjánsson, gagnfræðing-
ur, Víðigerði.
Haraldur Leósson, kennari, Holtsemi.
*Havsteen, Jakob, konsúll, etazráð,
Oddeyri.
Helgi Árnason, prestur, Ólafsfirði.
Hólmgeir Þorsteinsson, verzlunar-
maður, Grund.
Hólm, Magnús Á., Saurbæ.
Ingibjörg Jóhannesdóttir, Árnesi.
Ingimar Hallgrímsson, bóndi, Litla-
Hóli.
Ingólfur Bjarnason, bóndi, Fjósa-
tungu.
Jón Jóhannsson, Skarði, Dalsmynni.
Jón Jónsson, Skjaldastöðum.
Jón Rögnvaldsson, Fífilgerði.
*Jón Stefánsson, ritstj., Akureyri.
Jónas Jónasson, præphon., Akureyri.
*Karl Nikulásson, verzlstj., Akur-
eyri.
Kristján Benediktsson, Möðruvöllum.
Kristján Guðmundsson, bóksali.
Oddeyri.
Laxdal, Eggert, kaupm., Akureyri.
Lestrarfélag Árskógastrandar.
Lestrarfélag Hriseynga.
Lestrarfélag Kaupangssóknar.
Lestrarfélag Munkaþverár.
Lestrarfélag Svalbarðsstrandar,
Svalbarði.
Lestrarfélag Öxundæla.

Lindal, Björn, cand. jur., Akureyri.
Lindal, Jakob, búfr., Akureyri.
Loftur Baldvinsson, Bökkvisstöðum.
Ólafur Tryggvason, bóndi, Dag-
verðartungu.
Páll Einarsson, bæjartógeti.
Pétur Einarsson, Grenivík.
Ragnar Ólafsson, kaupm., Oddeyri.
Rist, L. J., kennari, Akureyri.
*Sigtryggur Jónatansson, bóndi,
Tungu.
Sigurður Einarsson, dýralæknir,
Akureyri.
Sigurður Sigurðsson, bókbindari,
Akureyri.
Skúli Kristjánsson, búfræðingur,
Sigríðarstöðum.
Stefán Jónsson, bóndi, Munkaþverá,
*Stefán Kristjánsson, skógræktar-
stjóri, Vöglum.
Stefán Stefánsson, skólastj., Akur-
eyri.
Steffensen, Valdemar, læknir, Ak-
ureyri.
*Steingrímur Matthíasson, læknir,
Akureyri.
Sveinbjörn Jónsson, Þóroddsstöð-
um, Ólafsfirði.
*Sveinn Þórðarson, verzlunarmaður,
Höfða.
Vilhjálmur Jóhannesson, kennari,
Espihóli.
Þórarinn Vilhjálmsson, búfr., Bakka
í Svarfaðardal.
Þórður Jónatansson, Öngulsstöð-
um.
Þórður Kolbeinsson, Akureyri.
Þorkell Þorkelsson, kennari, Akur-
eyri.
Þorsteinn Grímsson, gagnfræðing-
ur, Krossanesi.
Þorsteinn Stefánsson, Hlöðum í
Hörgárdal.

Þingeyjarsýsla.

Guðmundur Vilhjálmsson, bóksali,
Syðra-Lóni '15.

Sigfús Hallgrímsson, Vogum við
Mývatn.

*Snæbjörnu Arnljótsson, kaupmaður,
Þórshöfn '16.

Steinn Emilsson, verzlunarmaður,
Þórshöfn '15.

Þorsteinn Arnljótsson, kaupmaður,
Þórshöfn '15.

Húsavíkur-umboð.

(Umboðsm. Stefán Guðjohnsen,
verzlunarstjóri)¹⁾.

Aðalgeir Davíðsson, bóndi, Stóru-
Laugum.

Aðalsteinn Kristjánsson, kaupm.,
Húsavík.

*Ari Jónsson, Húsavík.

*Árni Jakobsson, bóndi, Hólum.

Árni Jónsson, bóndi, Þverá.

Benedikt Bjarnason, kenn., Húsavík.

*Benedikt Guðnason, Grænavatni.

*Benedikt Jónsson, sýsluskrifari,
Húsavík.

Björn Guðmundsson, bóndi, Grjótnesi.

Bókasafn Grímseyinga.

Egill Sigurðsson, Máná.

*Egill Sigurjónsson, bóndi, Laxa-
mýri.

Friðrika Jónsdóttir frá Hriflu.

Guðjohnsen, Stefán, verzlunarstj.,
Húsavík.

Guðm. Stefánsson, gagnfr., Hriflu.

Guðm. Stefánsson, Hafralæk í Að-
aldal.

Halldóra Björnsdóttir, Presthólum.

*Hallgrímur Þorbergsson, Halldórs-
stöðum.

Haukur Ingjaldsson, Garðshorni.

*Hólmgeir Þorsteinsson, bóndi,
Vallakoti.

Indriði Þorkelsson, bóndi, Ytra-
Fjalli.

Jakob Hálfðanarson, dbrm., Húsavík.

*Jóhannes Þorkelsson, hreppstjóri,
Syðra-Fjalli.

Jón Benediktsson, Garði.

Jón Björnsson, Skógum, Axarfirði.

Jón Jónasson, Húsavík.

Jón Jónsson Gauti, bóndi, Héðins-
höfða.

Jón Sigurðsson frá Hjartarstöðum,
Yzta-Felli.

Jón Sigurðsson, gagnfr., Yzta-Felli.

*Jónas Helgason, Grænavatni.

Jónas Jónasson, verzlunarstj., Flatey.

Karl Arngrímsson, Landamóti.

Kristján Sigtryggsson, bókbíndari,
Húsavík.

Konráð Vilhjálmsson, bóndi, Hafra-
læk.

Lestrarfélag Kinnunga, Köldukinn.

Lestrarfélag Mývetninga.

Lestrarfélag Sléttunga.

Lestrarfélag Svalbardshr., Pistilf.

Matth. Eggertsson, prestur, Grímsey.

Páll Kristjánsson, kaupm., Húsavík.

*Pétur Jónsson, alpm., Gautlöndum.

Sigtryggur Helgason, bóndi, Hall-
bjarnarstöðum.

Sig. Sigfússon, sölustj., Húsavík.

Sigurður Sigurðsson, hreppstjóri,
Halldórsstöðum.

Sigurgeir Friðrikason, bóksali, Skóg-
arseli.

Sigmundur Sigurðsson, læknir,
Breiðumýri.

Snorri Jónsson, hreppstj., Þverá.

Stefán Pétursson, Húsavík.

*Steingrímur Jónsson, sýslumaður,
Húsavík.

¹⁾ Skilagrein ókomin fyrir 1914.

Sýslubókasafn Suður-Þingeyinga.
 Thoroddsen, Guðm., læknir, Húsavík.
 Þorbergur Þórarinnsson, hreppstj.,
 Sandhólum.
 Þórarinn, Jónsson, bóndi, Halldórs-
 stöðum.
 Þórólfur Sigurðsson, gagnfræðing-
 ur, Baldursheimi.
 Örn Sigtryggsson, búfræðingur,
 Hallbjarnarstöðum.

Norður-Múlasýsla.

Gunnlaugur A. Jónsson, verzlun-
 arm., Höfn, Bakkafirði '15.
 *Halldór Stefánsson, Hamborg í
 Fljótadal '15.
 Haraldur Þórarinnsson, prestur, Hof-
 teigi '14.
 Jón Sigfússon, búfræðingur, Svina-
 felli, Hjaltastaðapinghá '15.
 Kristján Jónsson, Hríót '15.
 Lestrarfélag Fljótadalshrepps '15.
 Lestrarfélag Hjaltastaðahrepps.
 Ólafur Gíslason, verzlunarstjóri,
 Borgarfirði '14.
 Ólafur Ó. Lárusson, læknir, Brekku.
 *Sigurður Þorsteinsson, Sturluflöt
 í Fljótadal '14.
 Stefán Benediktsson, Merki á Jök-
 uldal '15.
 Þorsteinn M. Jónsson, kennari,
 Borgarfirði '14.

Vopnafjarðar-umboð.

(Umboðsm. Þór. B. Stefánsson
 verzlunarstjóri¹⁾).

*Árni Jónatansson, Búastöðum.

Björn Jónasson, bóndi, Hámundar-
 stöðum.

Einar Jónsson, prófastur, Hofi.

*Einar Runólfsson, kaupm., Vopna-
 firði.

Guðm. Guðmundsson, Krossavík.

Hallgrímur Gíslason, Egilsstöðum.

Ingólfur Eyjólfsson, Þorbrands-
 stöðum.

*Ingólfur Gíslason, læknir, Vopna-
 firði.

Ingólfur Hrólfsson, Vakurstöðum.

Ingvar Nikulásson, prestur,
 Skeggjastöðum.

Jón Halldórsson, præg. hon., Sauða-
 nesi.

Jón Sigurjónsson, bóndi, Hólmum.

Ólafur Metúsalemsson, Bustarfelli.

*Páll Einarsson, bókarí, Vopnafirði.
 Sigurður Benediktsson, Hofteigi.

*Stefán Friðriksson, Eyvindar-
 stöðum.

Víglundur Helgason, bóndi, Hauks-
 stöðum.

Þór. B. Stefánsson, verzlunarstjóri,
 Vopnafirði.

Þorsteinn Sigurðsson, Vopnafirði.

Rangá-r-umboð.

(Umboðsm. Björn Hallsson, alpm.)¹⁾.

*Björn Hallsson, alpm., Rangá.

Gísli Helgason, bóndi, Skógargarði.

Guðmundur Ólason, búfr., Höfða á
 Völlum.

Gunnar Sigurðsson, Hleinagarði.

Sigfús Eiríksson, Rangá.

Sigurður Antóniússon, búfræðingur,
 Sleðbrjót.

Sveinn Bjarnason, bóndi, Heykolls-
 stöðum.

¹⁾ Skilagrein komin fyrir 1915.

Seyðisfjarðar-umboð.

(Umboðsm. Lárus Tómasson, bóksali, Seyðisfirði¹⁾).

*Benedikt Jónasson, verzlunarstj., Seyðisfirði.

Björn Þorláksson, prestur, Dvergasteini.

*Guðmundur Guðmundsson, bókhaldari, Seyðisfirði.

Guðmundur V. Kristjánsson, úrsmiður, Seyðisfirði.

Hermann Þorsteinsson, skósmiður, Seyðisfirði.

*Jón Jónsson, bóndi, Firði.

*Karl Finnbogason, skólastjóri og alpm., Seyðisfirði.

Kristján Kristjánsson, læknir, Seyðisfirði.

Lestrarfélag Borgarfjarðarhrepps.

Lestrarfélagið „Dagsbrún“, Seyðisfirði.

Lestrarfélag Seyðisfjarðarhrepps.

Sigurður Jónsson, kaupm., Seyðisfirði.

Sigurjón Jóhannesson, kaupm., Seyðisfirði.

Stefán Th. Jónsson, konsúll, Seyðisfirði.

Þórarinn Guðmundsson, kaupm., Seyðisfirði.

Suður-Múlasýsla.

Benedikt Sveinsson, bóksali, Borgareyri við Mjóafjörð '14.

*Blöndal, Benedikt, búfr., Eiðum '15.

*Búnaðarskólinn á Eiðum '14.

Eiríkur Sigurðsson, kennari, Hjartarstöðum '15.

*Guttormur Pálsson, skógræðingur, Hallormsstað '15.

*Guttormur Vigfússon, præp. hon., Stöð í Stöðvarfirði '15.

Hákon Finnsson, bóndi, Arnaldsstöðum '15.

Klemensína Klemensdóttir, Norðfirði '14.

*Lestrarfélag Stöðfirðinga '15.

Magnús Blöndal Jónsson, prestur, Vallanesi '16.

*Magnús Stefánsson, búfræðingur, Eiðum '15.

Norðfjarðar-umboð.

(Umboðsm. Þorbergur Guðmundsson, búfræðingur²⁾).

Bergur Eiríksson, trésmiður.

Hjálmar Ólafsson, verzlunarmaður.

Ingvar Pálmason, útvegsbóndi.

Jónas Andrésson, kaupfélagsstjóri.

Lúðvík Sigurðsson, kaupmaður.

Sigurjón Magnússon.

Sveinn Árnason, trésmiður.

Valdemar Valvesson, kennari.

Vigfús Sigurðsson, trésmiður.

Zoëga, Tómas J., verzlunarmaður.

Þorbergur Guðmundsson, búfræðingur.

Eskifjarðar-umboð.

(Umboðsmaður Stefán Stefánsson, bóksali á Eskifirði³⁾).

Arnesen, J. C. F., konsúll, Eskifirði.

Árni Jónsson, prestur, Hólmum.

Björn R. Stefánsson, verzlunarstj. á Reyðarfirði.

¹⁾ Skilagrein ókomin fyrir 1915.

²⁾ Skilagrein komin fyrir 1915.

Eiður Albertsson, kenn., Eskifirði.
 Einar Hálfðanarson, Hafranesi.
 Eiríkur Bjarnason, Eskifirði.
 Ferd. Magnússon, Reyðarfirði.
 Friðrik Steinsson, Eskifirði.
 Guðm. Ásbjarnarson, Eskifirði.
 Gunnar Bóasson, Reyðarfirði.
 Hallgrímur Bóasson, Reyðarfirði.¹⁾
 Jón Björnsson, Seljateigi, Reyðarfirði.
 Jón Valdemarsson, gagnfræðingur, Seljateigi.
 Sigurður Hjörleifsson, lækni, Eskifirði.
 Sigurður Vigfússon, kenn., Eskifirði.
 Sveinbjörn P. Guðmundsson, Hölmum í Reyðarfirði.
 Þorgeir Jónasson, Eskifirði.

Fáskrúðsfjarðar-umboð.
 (Umboðsm. Marteinn Þorsteinsson, bókhaldari¹⁾).

Björgvin Þorsteinsson, verzlunarm., Fáskrúðsfirði.
 Einar Indriðason, bóndi, Vattarnesi.
 *Georg Georgsson, lækni, Fáskrúðsfirði.
 Guðm. Jónsson, útvegsb., Búðum.
 Halldór Pálsson, búfr., Tungu.
 Höskuldur Stefánsson, bóndi, Dölum.
 *Jón Davíðsson, verzlunarstj., Fáskrúðsfirði.
 Jón Stefánsson, verzlunarm., Fáskrúðsfirði.
 Lestrarfélag Búðarþorps.
 Magnús Gíslason, cand. jur., Fáskrúðsfirði.
 Marteinn Þorsteinsson, bókhaldari, Fáskrúðsfirði.
 Páll Benjamínsson, verzlunarm., Fáskrúðsfirði.

Páll Pálsson, kenn., Fáskrúðsfirði.
 Stefán Björnsson, prestur, Búðum.
 Stefán Gíslason, Kolfreyjustað.
 Stefán Guðmundsson, verzlunarfulltrúi, Fáskrúðsfirði.

Djúpavogs-umboð.
 (Umboðsm. Bjarni Eiríksson, kenn.)¹⁾
 Bjarni Eiríksson, kenn., Djúpavogi.
 Björn Jónsson, verzl., Djúpavogi.
 Ellis Jónsson, verzlstj., Djúpavogi.
 Helgi Einarsson, bóndi, Melrakknesi.
 Ingim. Steingrímsson, verzlunarm., Djúpavogi.
 Jón Arnason, óðalsbóndi, Múla í Álftafirði.
 Jón Finnsson, prestur, Hrauni við Djúpavog.
 Jón Jónsson, lausam., Geithellum.
 Pétur Þorsteinsson, prestur, Eyðölum.
 *Sveinn Sveinsson, bóndi, Hofi í Álftafirði.
 Thorlacius, Ólafur, lækni, Búlandanesi.

Skaftafellssýsla.

*Ari Hálfðanarson, hreppstj., Fagurhólsmýri, Örfum '15.

Lóns-umboð.

(Umboðsm. Jón Jónsson, próf.)¹⁾
 Bjarni Guðmundsson, bókhaldari, Höfn í Hornafirði.
 Jón Guðmundsson, kennari, Höfn í Hornafirði.

¹⁾ Skilagrein komin fyrir 1915.

- *Jón Jónsson, prófastur, Stafafelli.
 Lestrarfélag Lónsmanna.
 *Sigurður Sigurðss., kenn., Hoffelli.
 Þorleifur Jónsson, alpm., Hólum.

Hornafjarðar-umboð.

- (Umboðsm. Þórhallur Danielsson,
 kaupm., Höfn í Hornafirði).
 Gísli Sigurjónss., Fornustekkjum '15.
 Guðm. Sigurðsson, söðlasm., Höfn
 í Hornafirði '14.
 *Lestrarfélag Mýrahrepps '14.
 Lestrarfélag Suðursveitar '14.
 *Þórhallur Danielsson, kaupmaður,
 Hornafirði '16.

Víkur-umboð.

- (Umboðsm. Jón Ólafsson, kennari,
 Vík í Mýrdal)¹⁾.
 Bjarni Ásgr. Eyjólfsson, Syðri-
 Steinsmýri.
 Bjarni Einarsson, præg. hon., Vík.
 Björn Runólfsson, Holti.
 Brynjólfur Einarsson, Reyni.
 *Einar Erlendsson, verzlunarmaður,
 Vík.
 Eiríkur Ormsson, trésmiður, Vík.
 Eyjólfur Guðmundsson, hreppstj.,
 Hvoli í Mýrdal.
 *Guðgeir Jóhannsson, kennari, Vík.
 Guðlaugur Jónsson, verzm., Vík.
 *Jóel Sigurðsson, Bakkakoti.
 *Jóhann Sigurðsson, búfræðingur,
 Breiðabólstað.
 *Jón Ólafsson, kennari, Vík.
 *Lestrarfélag Dyrhólahrepps.
 Páll Sigurðsson, Skammadal.
 *Sigurjón Kjartansson, kennari, Vík.
 Ungmennafél. „Bláfjall“ í Skaftár-
 tungu.

- Þorsteinn Einarsson, verzm., Vík.
 Þorsteinn Þorsteinessen, verzlstj., Vík.

Rangárvallasýsla.

- Árni Ingvarsson, Núpi '15.
 Björgvin Vigfússon, sýslumaður,
 Efra-Hvoli '13.
 Einar Jónsson, hreppstjóri, Kálfs-
 stöðum '16.
 *Einar Jónsson, Tjörnum undir
 Eyjafjöllum '15.
 Guðbrandur Magnússon, Holti '15.
 Guðmundur Guðfinnsson, lækni,
 Stórólfsbhvoli '15.
 Ingimundur Benediktsson, Kaldár-
 holti '13.
 Ingimundur Jónsson, búfr., Hala '14.
 Jakob Lárusson, prestur, Holti '15.
 Jón Guðmundsson, bóndi, Ægis-
 síðu '15.
 Jón Jónsson, bóndi, Syðri-Hömr-
 um '13.
 Lestrarfélag Ásahrepps '15.
 Lestrarfélag Landmanna '15.
 Magnús Kristjánss., Drangshlíð '15.
 Ólafur Finnsson, prestur, Kálfholti
 '15.
 Sigrún Pálsdóttir, Efra-Hvoli '14.
 *Skúli Skúlason, prófastur, Odda '16.
 Thorarensen, Grímur, hreppstjóri,
 Kirkjubæ '16.
 *Tómas Sigurðsson, hreppstj., Bark-
 arstöðum '15.
 *Ungmennafélagið „Hekla“ '15.
 *Vigfús Bergsteinsson, Brúnum '15.
 Þorsteinn Benediktsson, prestur,
 Lundi '14.
 Þorsteinn Jónsson, oddviti, Mold-
 artungu '15.

¹⁾ Skilagrein komin fyrir 1915.

Árnessýsla.

- *Ágúst Helgason, bóndi, Birtingaholti '15.
 Eggert Benediktsson, hreppstjóri, Laugardælum '15.
 Einar Jónsson, lausam., Hæli '14.
 Eiríkur Einarsson, s. sýslumaður, Eyrarbakka '14.
 Gestur Einarsson, bóndi, Hæli' 15.
 *Gísli Jónsson, Stóru-Reykjum '15.
 Gísli Pétursson, læknir, Eyrarbakka '15.
 *Guðm. Guðmundsson, bóksali, Eyrarbakka '15.
 Guðm. Guðmundsson, Efri-Brú '16.
 Guðm. Lýðsson, bóndi, Fjalli á Skeiðum '15.
 Halldór Jónsson, bókb., Norðurkoti, Grímsnesi '15.
 *Jónas Halldórsson, hreppstj., Hraun-túni '15.
 *Jón Sigurðsson, cand. phil., Kalladarnesi '14.
 Kjartan Helgason, prestur, Hruna, '15.
 Konráð Konráðsson, læknir, Eyrarbakka '16.
 *Lestrarfélag Baldur, Hraung.hr. '15.
 Lestrarfélag Gnúpverja '15.
 Lestrarfélagið „Mimir“, Ölfusi '14.
 Lestrarfélag Stokkseyrar '15.
 Páll Lýðsson, hreppstjóri, Hlíð í Gnúpverjahr. '15.
 Páll Stefánsson, Ásólfstöðum '14.
 Sigurður Ólafsson, fv. sýslum., Kalladarnesi '14.

- Sæm. Einarsson, kennari, Úlfjótavatni '14.
 Thorsteinsson, Jón, prestur, Þingvelli '14.
 Ungmennafélagið „Hvöt“, Grímsnesi '15.
 Þorf. Kristjánsson, ritstj., Eyrarbakka '15.
 *Þorsteinn Þórarinnsson, Drumboddsstöðum '15.
 *Þorvaldur Þorvaldsson, Skaftaholti, Gnúpverjahr. '15.
 Þórður Ólafsson, Ásgarði '16.

Vestmanneyjasýsla.

- Vestmanneyja-umboð.
 (Umboðsm. Jón Sighvatsson, bóksali)¹⁾.
 Árni Sigfússon, kaupm.
 Björn Jónsson, kennari.
 Dal, Sita, verzlunarmær.
 *Gunnar Ólafsson, kaupm.
 Jóhann P. Jósefsson, kaupm.
 Johnsen, Árni J., verzlun.
 Johnsen, Gísli J., konsúll.
 Johnsen, Lárus J., verzlun.
 *Jón Einarsson, kaupfélagastj.
 Jón Jónsson, útvegsbóndi.
 Magnús Stefánsson, sýsluskrifari.
 Sigurður Sigurðsson, lyfsali.
 Sigurjón Högnason, gagnfr.
 Sýslubókasafn Vestmanneyja.
 Þorbjörn Guðjónsson.

¹⁾ Skilgrein komin fyrir 1915.

B. Í Vesturheimi.

Kanada og Bandaríkin.

Andrews, A. le Roy, Ithaca N. Y.
'15.

Cornell University Library, Ithaca
N. Y. '15.

*Halldór Hermannsson, bókavörður,
Ithaca N. Y. '15.

Hollander, Dr. Lee M., Madison,
Wis. '15.

Newberry Library, Chicago '15.

Porbergur Porvaldsson, prof. dr.,
Saskatoon, Saskatchewan.

Vesturheims-umboð.

(Umboðsm. H. S. Bardal, bóksali í
Winnipeg¹⁾).

Albert Jónsson, Winnipeg.

Arason, W. B., Husavich.

Arni Eggertsson, Winnipeg.

Árni Jónsson, Sleipnir, Sask. Can.

Árni Sveinsson, Glenboro.

Ásgrímur Sigurðsson, Winnipeg.

Askdal, K. S., Minneota, Minn.

Bandalag Pembínasafnaðar N. Dak.

Bergmann, Friðrik, prófessor,
Winnipeg.

Bergmann, Jonas S., Gardar, Pem-
bina.

Bjarnason, J. M., Bismarhave, Van.

Björnsson, G. B., Minneota, Minn.

Blöndahl, A. J., Wynyard.

Bókasafn Tjaldbúðarsafn., Winni-
peg.

Breiðfjörð, A. G., Seamo.

Christophersson, Hernit, Brú, Man.

Clemens, J., prestur, Glenboro.

Davidsson, Charles G., St. Paul,
Minn.

Eggert Jóhannesson, Winnipeg.

Eggertsson, J., Winnipeg.

Egill Erlendsson, Winnipeg.

Einar Gíslason, Gimli.

Einar Sigvaldason, Baldur.

Evendsen, G. J., Edinburgh, N.
Dak.

Eyjólfur S. Guðmundsson, Jacoma,
Wash.

Friðrik Hallgrímsson, prestur, Bald-
ur, Man.

Geirmundur B. Olgeirsson, Edin-
burgh, N. D.

Gestur Jóhannesson, Poplar Park.
Gíslason, Anna, Winnipeg.

Gísli Egilsson, Lögberg, Sask.,
Can.

Goodman, G. G., Wynyard, Sask.

Goodman, Gísli, Winnipeg.

Goodmansson, Barney, Ivanhoe,
Minn.

Guðmundur Árnason, prestur,
Winnipeg.

Guðni Þorsteinsson, Gimli, Man.

Gunnar Jóhannsson, Dongola.

Gunnlögur Tr. Jónsson, ritstjóri,
Winnipeg.

Guttormsson, Thorst., Winnipeg.

Halldórsson, M. B., dr., Souris, N.
Dak.

Henderson, Joh., Winnipeg.

Hjálmar F. Danielsson, Otto, Man.

Högni Einarsson, Winnipeg.

Icelandic Library „Mímir“, Pem-
bina, N. Dak.

Isdal, J. P., Winnipeg.

Jakob Guðmundsson, South Hill,
Van.

Jóhannes S. Björnsson, Inkster,
Grand Fork.

Johann O. Björnsson, Wynyard,
Sask.

¹⁾ Skilagrein ókomin fyrir 1914 og 1915.

- Jóhann Pálsson, Clarkleigh, Man.
 Johnson, Arthur A., Mozart, Sask.
 Johnson, Baldur, B. A., Langenburg.
 Johnson, Hallgrímur, B. A., Winnipeg.
 Johnson, Kristján, Duluth.
 Johnson, Magnús, Lundar, Man., Can.
 Johnson, Paul, Winnipeg.
 Johnson, St. E., Otto P. O., Man.
 Jón Abrahamsson, Anthler, Sask.
 Jón Árnason, B. A., Wynyard.
 Jón Einarsson, Winnipeg.
 Jón J. Hallson, Hólar, Sask.
 Jónas Danielsson, Winnipeg.
 Klemens Jónasson, Selkirk.
 Kristinsson, Kr. Fr., Framnes, Man.
 Kristján Sigurðsson, ritstjóri, Winnipeg.
 Kristján Stefánsson, Winnipeg.
 Lestrarfélagið Árgalinn, Wild Oak, Man.
 Lestrarfélagið Dagsbrún, Lundar, Man.
 Lestrarfélagið Dagsbrún, Vidir, Man.
 Lestrarfélagið Fjólan, Nes, Can.
 Lestrarfélagið Fram, Arnes, Man.
 Lestrarfélagið Fróði, Brown, Man.
 Lestrarfélagið Fróðleikshvöt, Árborg.
 Lestrarfélagið Gangleri, Gardar.
 Lestrarfélagið Gimlé.
 Lestrarfélagið Hafstjarnan, Pt. Roberts, Wash.
 Lestrarfélagið Harpa, Blaine, Wash.
 Lestrarfélagið Hekla, Yarbo, Sask.
 Lestrarfélagið Herðubreið, Narr-ows, Man.
 Lestrarfélagið Idunn, Markerville, Alberta.
 Lestrarfélagið Ingólfur, Vancouver.
 Lestrarfélagið Ísland, Baldur, Man.
 Lestrarfélag Íslendinga í Cypres-
 sveit, Glenboro.
 Lestrarfélag Íslendinga í Reykja-
 vík, Reykjavík P. O.
 Lestrarfélagið Leifar, Candahar S.
 Lestrarfélagið Mentahvöt, Otto, Man.
 Lestrarfélagið Mentun, Anthler S.
 Lestrarfél. Mikleyinga, Hekla, Can.
 Lestrarfélagið Mimir Wynyard.
 Lestrarfél. Morgunstjarnan, Hólar.
 Lestrarfélagið Skjaldbreið.
 Lestrarfél. Stjarnan, Selkirk, Man.
 Lestrarfél. Tilraunin, Keewatin, Ont.
 Lestrarfél. Verðandi, Mozart, Sask.
 Lestrarfél. Vestri, Seattle, Wash.
 Lestrarfélagið Þjóðernið, Winnipeg
 Beach.
 Lestrarfél. Þörfin, Kristnes, Sask.
 Lestrarfélagið Æskan, Dakota.
 Long, S. M., Winnipeg.
 Magnús Bjarnason, Mountain, N. Dak.
 Magnús Hinriksson, Churchbridge.
 Magnús, S., Duluth.
 Norman, J. O., Lögberg, Sask.
 Oddsson, Th., Winnipeg.
 Olson, A. B., Gimli, Man.
 Ólafsson, K. K., prestur, N. Dak.
 Ólafur Kjartansson, Winnipeg.
 Pétur Hjálmaeson, prestur, Marker-
 ville, Alberta.
 Pétursson, P. V., Ivanhoe.
 Runólfur Marteinson, Winnipeg.
 Scheving, S. P., Victoria B. C.
 Sigfús Magnússon, Duluth, Minn.
 Sigtryggur Jónasson, Árborg.
 Sigurðsson, Job, Mrs., Upham, N.
 Dak.
 Símon Simonarson, Winnipeg.
 Snædal, Guðm. S., Hallsson, N. Dak.
 Steingrímur Þorláksson, prestur,
 Selkirk.
 Stephens, Goodie, Miss, San Francisco.
 Stephensen, Ólafur, læknir, Winnipeg
 Straumfjörð, Jóh., Icel. River, Seamo.

Styrkár Vesteinn Helgason, Leslie,
Sask.
Sveinn Árnason, Seattle, Wash.
Swanson, Fred., Winnipeg.
Thorarensen, Ch., Icel. River.
Thordarson, Ch., verksmiðjueigandi,
Chicago.
Thordarson, Thordur, dr., Minneota,
Minn.
Thorgeirsson, Mart., Akra, N. Dak.
Thorlaksson, Inga, Mountain, N. Dak.
Thorsteinsson, Oddur, Icel. River,
Man.

Toronto University Library, Tor-
onto.

Tómas Jónasson, Icel. River, Man.
Vidal, Sig. J., Hnansar, Man.
Victor Eyjólfsson, Icel. River, Man.
Wilhelm Kristjanson, Otto P. O.,
Man., Can.

Þorgerður Þórðardóttir, Winnipeg.
Þorgils Þorgeirsson, Winnipeg.
Þórður Árnason, Mozart, Sask.
Þórir Björnsson, Duluth, Minn.

C. Í öðrum löndum.

(Bókasölu-umboð hefir Gyldendalske Boghandel Nordisk Forlag,
Klareboderne 3, Kaupmannahöfn¹).

Færeyjar.

Dahl, Jakob, kennari, Thorshavn '15.
Paterson, Joannes, kongsb., Kirkjubæ '15.
Petersen, Fr., prófastur, Österö '15.
Simun av Skarði, lýðháskólastjóri,
Fagralíðar-háskóli '15.

Danmörk.

*Blöndal, Sigfús, bókavörður, Am-
agerbrog. 153, Kh. '15.
Blöndahl, Sighv., stud. jur., H. C.
Ørstedsv. 57, Kh. '15.
Gad, G.E.C., bóksali, Vimmelsk. 32 '15
Gísli Brynjólfsson, læknir, Danne-
brogsg. 1 '16.
Guðjón Eiríksson, búfr., Vilhelms-
dal, Mörköv St. '15.
Hafsteinn Pétursson, prestur, Fiol-
str. 28 '15.

Halldór Kristjánsson, stud. med.,
Blaagaardsg. 29 '15.
Hammerich, M., málaflm., Schlegels
Allé 3 '15.
Haraldur Sigurðsson, tannlæknir,
Österbrog. 60 '15.
Héðinn Valdemarsson, stud. polit.,
Khöfn '16.
Jakob Gunnlögsson, stórkaupmaður,
Niels Juelsg. '15.
Johansen, J., Landbrugsskolelærer,
Ladelund pr. Vejen '15.
Johnsen, Ólafur H., fyrv. yfirkenn-
ari, Odense '15.
Jón Sveinbjörnsson, kmjr., Paludan
Müllersvej 3 '16.
Kristján Björnsson, stud. med., Re-
gensen '15.
Magnús Magnússon, prestur, Breg-
ninge pr. Ringk. '15.
*Melsted, Bogi Th., mag. art., Ole
Suhrsg. 18 '15.

Möller, J. V., prentari, Hestemöllestr. 5 '15.

Nordal, Sigurður, dr. phil., Vesterbrog. 20 '15.

Olrik, Axel, dr. phil., prófessor, Gammelbo, Øverrød, pr. Holte '15.

Pétur Bogason, læknir, Faxinge Sanat. pr. Præstö '15.

Sigurður Sigtryggsson, cand. mag., Mölholm pr. Vejle '15.

Sóreyjarskóla bókasafn, Sorö '15.

Stefán Stefánsson, cand. jur., Villa Christineberg, Sölleröd pr. Holte '15

Sveinbjörn Sveinbjörnsson, yfirkennari, Aarhus '15.

Tulinus, Thor E., stórkaupmaður, Gefionsplads 5 '15.

Valtýr Guðmundsson, dócent, dr. phil., Amagerbrogade 151 '15.

Noregur.

Háskólabókasafnið, Kristiania '15.

Katedralskolens Bibliotek, Kristiania '15.

Kolsrud, Oluf, Universitetsstipendiat, Kristiania '15.

Sars, J. E., prófessor, Kristiania '15.

Skásheim, Anders, bókhaldari, Bergen '15.

Stórþingisbókasafnið í Kristjaníu '15.

Vísindafélagið í Þrándheimi '15.

Svíþjóð.

Göteborgs stadsbibliotek '15.

Koch, Axel, prófessor, dr. phil., Lund '15.

Lunds Universitets Nord. Seminari-um '15.

Söderwall, K. F., prófessor, Lund '15.

Zadig, Viggo, cand. phil., Malmö '15.

Þýskaland.

Anderson, Ernst, godsegare, Allenstein, Preussen '13.

Blankenstein, M. v., litt.dr., Berlin '13.

Erkes, Heinrich, kaupm., Köln '16.

Gotzen, Jos., dr. phil., Köln '13.

Gruner, Max, dr. phil., Berlin '13.

Herdersche Verlagshandlung, Freiburg in Breisgau, Baden '17.

Hermann, Paul, prof., dr. phil., Torgan '13.

Heydenreich, W., dr. phil., Eisenach '13.

Mayer, E., prof., dr. phil., Würtzburg '15.

Meissner, R., prófessor, dr. phil., Bonn '15.

Staatsbibliothek, München '13.

Stadtbibliothek, Hamburg '13.

Universitätsbibliothek, Kiel '15.

England.

(Umboðsm. The Viking Society, Chelsea, London).

Banks, Mrs. M. M., London '16.

Craigie, W. A., prófessor, Oxford '16.

*Gray, John, prestur, St. Peters, Falcon ave., Edinburgh '15.

Hight, Geo. Ainslie, Oxford.

Johnston, A. W., Chelsea, London '16.

Olsen, O. T., dr., Grimsby.

Phillpotts, Miss Bertha S., Tunbridge Wells '16.

Holland, Belgia, Frakkland,
Austurríki og Rússland.

Austin, C. K., læknir, París '16.

Boer, R. C., próf., dr. phil., Amster-
dam '15.

Cahen, Maurice, agrégé de l' Uni-
versité, París '14.

Courmont, André, agrégé de l' Uni-
versité, La Varenne, St. Hilaire,
Seine '13.

Hoogt, J. M. van der, litt. cand.
Wageningen, Nederl. '15.

*Jon Svensson, prestur, Feldkirch,
Stellam.Vorarlberg, Österreich '16

Krijn, Sophie A., Amsterdam '15.

Lascaronsky, Bas.Greg., próf., Kiew
'14.

de Vries, J. P. M. L., litt. n. doct.,
Waatergraafsmeer bei Amster-
dam '15.

Reykjavík, 17. júní 1916.

Matthías Þórðarson,
bókavörður félagsins.

Áskorun.

Stjórn Bókmentafélagsins hefir ákveðið að gefa út helztu rit Jónasar skálds Hallgrímssonar í bundnu og óbundnu máli og kosið til að sjá um útgáfuna, í samráði við forseta félagsins, þá Helga Jónsson, dr. phil. í Reykjavík, Matthías Þórðarson, fornmenjavörð í Reykjavík og Jón Sigurðsson í Kaldaðarnesi.

Til þess að rit þetta geti orðið sem fullkomnast eru það tilfæli útgáfufélagarinnar til allra þeirra, er hafa í höndum eða vita um handrit frá Jónasi Hallgrímssyni, kvæði, sendibréf eða annað, og sömuleiðis bréf til Jónasar, að ljá eða útvega nefndinni alt slíkt til afnota, helzt í frumriti, en ella í stafréttu eftirriti, og enn fremur önnur gögn, er lúta að æfi Jónasar, svo sem frásagnir eða ummæli um hann í bréfum samtíðarmanna. Nefndin beiðist þess og, að henni séu látnar í té sagnir eða munnmæli, er menn kynnu að hafa heyrt um Jónas, t. d. um tildrög sumra kvæða hans o. fl., alt að tilgreindum heimildum.

Allir þeir, sem kynnu að geta rétt nefndinni hjálparhönd í þessu efni, eru beðnir að senda gögn sín einhverjum nefndarmanna sem allra fyrst.

Reykjavík, 13. júlí 1916.

Helgi Jónsson. Matthías Þórðarson.

Jón Sigurðsson.





SKÍRNIR

TÍMARIT HINS ÍSLENZKA BÓKMEN-
TAFÉLAGS

XCI. ÁR

RÍTSTJÓRI
GUÐM. FINNBOGASON
DR. PHIL.



Handwritten notes:
Hr. J. - 17
Hr. J. - 432
Hr. J. - 228 (Björnsson)
4 Bókmenntafélagið
Björnsson 1882 nr 2 462

REYKJAVÍK — 1917
ÍSAFOLD — ÓLAFUR BJÖRNSSON

ANNALS

OF THE

ROYAL SOCIETY OF LONDON

FOR THE YEAR 1881

AND

THE PROCEEDINGS OF THE SOCIETY

IN THE YEAR 1882

AND

THE PROCEEDINGS OF THE SOCIETY

Efnisskrá.

	Bl.
Um launa- og eftirlaunatillögur launanefnadarinnar, eftir <i>Lárus H. Bjarnason</i>	1
Skugginn. Sjóngleikur í einum þætti, eftir <i>Guttorm J. Guttormsson</i>	29
Nýttizkuborgir, eftir <i>Guðm. Hannesson</i>	38
Frú Teresa Fenn. Saga frá Vancouver, B. C., eftir <i>J. Magnús Bjarnason</i>	50
Vestur-Íslendingar, eftir <i>Guðm. Finnbogason</i>	68
Ritfregnir, eftir <i>Guðm. Finnbogason, Rögvald Ólafsson og Jón Helgason</i>	78
Um jarðskjálftasprungu, eftir <i>Helga Pjeturss</i>	94
Um heiti hljóðfæra og önnur hljómfærðisorð í íslenzku, eftir <i>Holger Wiehe</i>	96
Ísland 1916, eftir <i>Þorstein Gíslason</i>	105
† Þórhallur biskup Bjarnarson (kvæði), eftir <i>Guðm. Friðjónsson</i>	113
Svipir í skuggsjá haustsins (kvæði), eftir <i>Stephan G. Stephansson</i>	116
Nýttizkuborgir, frh., eftir <i>Guðm. Hannesson</i>	121
Ísland og Norðurlönd, eftir <i>Sigfús Blöndal</i>	141
Jón Stefánsson — Þorgils gjallandi, eftir <i>Þórólf Sigurðsson</i>	160
Milli svefns og vöku, eftir <i>Þorgils gjallanda</i>	178
Dómurinn (saga), eftir <i>Sig. Heiðdal</i>	186
Ein á báti (kvæði), eftir <i>Herdísi Andrésdóttur</i>	193
Ritfregnir, eftir <i>Pál Eggert Ólason, Sigurð Guðmundsson, Bjarna Jónsson frá Vogu, Benedikt Sveinsson, Pétur Zóphóníasson og Guðm. Finnbogason</i>	195
Athugasemd við „Benrögn“, eftir <i>Jón prófast Jónsson</i>	224
Þrjú smáljóð, eftir <i>Maurice Maeterlinck. Guðm. Guðmundsson þýddi</i>	225
Um drengskap, eftir <i>Guðm. Finnbogason</i>	227
Einsamall á Kaldadal. Ferðalýsing, eftir <i>Guðm. Magnússon</i>	241
Tvær þulur, eftir <i>Huldu</i>	259
Páll postuli og söfnuðurinn í Korintuborg, eftir <i>Magnús Jónsson</i>	263
Sannleikur (kvæði), eftir <i>Martu Jóhannsdóttur</i>	285

	Bls.
Enn um ættarnöfn á Íslandi, eftir <i>Holger Wiehe</i>	286
Guðm. Magnússon sagnaskáld, eftir <i>Þorstein Gíslason</i>	296
Utan úr heimi, eftir <i>Björgu Blöndal</i>	307
Þingstaðurinn undir Valfelli, eftir <i>Einar Friðgeirsson</i>	319
Samar, eftir <i>Jakob Jóh. Smára</i>	322
Ritfregnir, eftir <i>Þorleif H. Bjarnason, Bjarna Jónsson frá Vog,</i> <i>Pál Eggert Ólason, Sigurð Guðmundsson og Guðm. Finn-</i> <i>bogason</i>	324
Trúarhugtakið, eftir <i>Sigurð P. Sivertsen</i>	337
Bruni (kvæði), eftir <i>Jakob Thorarensen</i>	360
Í rökrinu (saga), eftir <i>Einar S. Frimann</i>	363
Þjóðfélag og þegn, eftir <i>J. Gauta Pétursson</i>	373
Stúlkan brjóstveika (kvæði), eftir <i>Guðm. Friðjónsson</i>	399
„Þingstaðurinn undir Valfelli“, eftir <i>Matthías Þórðarson</i>	416
Ritfregnir, eftir <i>Jakob Jóh. Smára, Einar H. Kvaran, Jóhann</i> <i>Kristjánsson, Pálma Pálsson og Héðin Valdimarsson</i>	420
Skýrslur og reikningar Bókmentafélagsins 1916	I—XXXII

Salisbury



1. Úthverfisgata í enskri íbnaðarborg.

Um launa- og eftirlaunatillögur launanefndarinnar.

Fyrirlestur haldinn í Stúdentafélaginu 30. Nóvember 1916.

Þær voru nýkomnar út, stóru bækurnar, sem biskupinn sá eftir pappirnum í. Eg hafði blaðað nokkuð í stærri bókinni og runnið eitthvað í skap. Þá, í einum af þeim svifunum, heimsótti formaður Stúdentafélagsins mig og bað mig að hefja umræður í félaginu um álit launanefndarinnar, og hann mun hafa farið frá mér með von um einhverja úrlausn. Nýi formaðurinn hermdi ádráttinn upp á mig. Því stend eg hér og beiðist áheyrnar um stund.

Aukapingið 1914 samþykkti til fullnaðar stjórnarskrár-breytingu, sem hefir það meðal annars í för með sér að ákveða má með venjulegum lögum, að embættismenn fái ekki eftirlaun framvegis. Þingið hefir sennilega búist við því, að ekki liði á löngu, áður en afnámi eftirlauna yrði hreyft á þingi, úr því að eftirlaunaréttur embættismanna var feldur úr stjórnarskránni, en talið viðsjárvert að hrapað yrði að úrslitunum rannsóknarlaust, enda ákvað þingið að setja skyldi millipinganefnd og ætlaði henni:

- að íhuga rækilega óskir þjóðarinnar um afnám lög-
ákveðinna eftirlauna,
- að rannsaka launakjör embættismanna landssjóðs
og sérstaklega koma fram með tillögur til þeirrar
skipunar á þeim, er nauðsynleg og sanngjörn
virðist í sambandi við afnám eftirlauna.

Jafnframt ætlaði þingið nefndinni að rannsaka það, hvort

tiltækilegt og hagkvæmt væri að greina í sundur dómsvald og umboðsvald.

Þetta var verkefni nefndarinnar og alþingi ætlaði henni, eins og vita mátti og framsögumaður efri deildar nefndarinnar um þingsályktunartillöguna tók fram, að rannsaka verkefnið »til hlítar og hlutdrægnislaust«.

Nefndin var skipuð með konungsúrskurði, dags. 9. Des. 1914 og sat til 28. Júlí 1916.

Að ytri ásýndum liggur ekki litið verk eftir nefndina. Það er 380 bls. bók í stóru fjögra blaða broti, auk uppdráttar til nýrrar héraðaskipunar í landinu. Mestur hlutinn af þessum mörgu, stóru síðum, um 250 talsins, fer þó í misjafnlega þarfar skýrslur, þar af rúmar 100 bls. undir samtíning úr þingmálafundagjörðum og þingtíðindum. Um 63 bls. fara undir 7 frumvörp nefndarinnar, um 50 bls. undir ýmsar greinagjörðir, þó ekki nema um 11 síður í það, sem kalla mætti röksemdir, en um 12 blaðsíður eru auðar.

Nefndarálitinu er skift í 2 kafla. Fyrri kaflinn er um eftirlaunamálið og launamálið og er 327 bls. að lengd. Síðari kaflinn er um sundurgreining dómsvalds og umboðsvalds og er um 50 blaðsíður, auk áður getins uppdráttar.

Eg tala hér að eins um fyrri kaflann, hann mun eiga að heita mergurinn málsins, enda gerið nóg umræðuefni eina kveldstund.

Nefndartillögurnar taka eigi að eins til allra »embættismanna« landssjóðs, heldur til allra manna, sem hafa á hendi fast einkastarf eða aðalstarf í þágu landsins, nema ráðherra, sem er slept af sérstökum ástæðum. Þó er prestum slept, að því er nefndin segir, af því að þeir búi að nýjum launalögum og aðskilnaður ríkis og kirkju liggi við borð, og mun fleirum en prestum þykja það vafasamar ástæður. En ef til vill hefir nefndin meðfram slept prestum af því, að þeir geta ekki talist laun-

aðir af landssjóði, og væri það þá nokkur ástæða í orði kveðnu, en þó naumast nægileg til að sleppa þeim mönnum, sem flestir hverjir búa við einna lægst laun og fá launin auk þess borguð eftir á. Hins vegar hefir nefndin gert tillögur um laun hreppstjóra, enda þótt hreppstjórn sé hvorki einka- né aðalstarf hreppstjóra, en þeir sennilega teknir með vegna þess, hve laun þeirra eru lítilfjörleg.

Eg get þess fyrirfram, að eg rek að eins aðaldrættina í tillögum nefndarinnar um launakjör embættismanna, afnám eftirlauna þeirra og lögleiðing lífeyris og legg þá einnig aðeins dóm á þá drætti, en sleppi öllum auka-dráttum, með því að þeir myndu rugla bæði mig og áheyr-endur mína, enda þeir margir óbeinlinis dæmdir með hinum og ráð fyrir því gert, að aðrir verði til að hreyfa þeim.

Eg las nýlega í blaði, að það skifti útgerðarmenn miklu máli, að jafnvel kolamokararnir á skipum þeirra væru valdir menn og leiknir í starfi sínu. Og það er gömul reynsla hvers landbónda, að það skifti hann einna mestu, hversu skepnur hans eru hirtar. Söm mun vera reynsla hvers vinnuþiggjanda um hvaða verk sem er. En mundi það þá ekki skifta þjóðfélagið allmiklu máli, að embættismenn þess stundi störf sín með alúð og árvekni? Mundi ekki riða nokkuð mikið á því, að dómara og lög-reglustjórar sé svo vel að sér og svo sjálfstæðir, að þeir þurfi ekki að hafa augun á öðru en lögunum, eða því, að læknirinn, presturinn og kennarinn, kunni hver í sínu lagi sína ment og megi gefa sig allan við starfi sínu. Sennilega neitar því enginn.

En eitt frumskilyrði fyrir því að vænta megi þess, að embættismaðurinn reki og geti rekið embætti sitt með alúð og röggsemi er það, að kjör hans sé eftirsóknarverð og að minsta kosti sæmilega viðunanleg. Skynsamir foreldrar leggja ekki börn sín í 10—12 ára nám, til þess að sjá þau ganga í götöttum skóm, með olbogana út úr báðum ermum og með »króniskan« sultardropa nið-

ur úr nefinu. Og þó að eitthvert foreldri kynni að leggja út í slíkt af fyrndri fordild eða annari jafn fánýtri orsök, þá dytti engum framsæknum unglingi í hug að hugsa í alvöru til slíkrar framtíðar. Eftir illum kjörum sækjast ekki aðrir en ónytjungar eða úrþvætti. En því betri sem kjörin eru, því betri vonir má gera sér um valda menn.

Þjóðfélagið getur boðið embættismönnum sínum sæmileg kjör með tvennu móti, **annaðhvort** með því, að launa starfið svo vel, meðan það er unnið, að embættismaðurinn, sem ætti ekki að hafa tíma til að sinna aukastörfum, — svo á embættum að vera skipað og er í rauninni flestum svo skipað, ef vel eru rekin — gæti lagt nægilega mikið upp til þess að geta lifað viðunanlegu lífi, eftir að hann hefði slitið starfskröftum sínum í þarfir lands síns, **eða** þá með því móti, að launa honum lægra meðan hann starfar en greiða honum aftur í notum þess nokkra árlega uppbót, eftir að hann, þrotinn að starfskröftum, hefir látið af embætti.

Það er ihugunarefni, hvort fyrirkomulagið er hagkvæmara þegar á alt er litið, ekki síður frá sjónarhól þjóðfélagsins en frá sjónarmiði embættismannsins. Mér er nær að halda, að viðunanleg starfslaun og hæfileg eftirlaun sé hagkvæmari landssjóði og almenningi en nægilega há laun án eftirlauna. Margir, líklega flestir, embættismenn deyja í embætti og ekki fáir þeirra láta hvorki eftir sig ekkjur, né óuppkomin börn. Þar er auðsýnn hagur að lágum launum með eftirlaunarétti. Og væri vandað vel til manna í embætti og embættismönnum haldið í embættum, meðan þeir eru starfgengir, þá mundu eftirlaunaár þeirra og jafnvel ekkna þeirra — mikill aldursmunur á hjónum er undantekning — ekki verða svo mörg yfirleitt, að lands-sjóður hefði eigi hag af því fyrirkomulagi, fremur en af hinu, að greiða þeim nægilega há laun allan embættisaldur þeirra.

Og að því sleptu tel eg víst, að embættismenn sé miklum mun sjálfstæðari, sérstaklega gagnvart siskiftandi, pólitískri stjórn, með eftirlaunafyrirkomulaginu en með

hinu. Það er ekki ósennilegt, að óbilgjörn stjórn, sérstaklega í landi þar sem almenningssálits gætir lítið, og blóð eru í bernsku, mundi stundum beita afsetningarvaldi sínu öðruvísi en jafnvel almenningi líkaði vel, ef hún gæti sett mótstöðumenn sína af, án þess að íþyngja landssjóði með óvinsælum eftirlaunum. Og sennilega þarf ekki að eyða mörgum orðum til þess að útlista, hversu það gæti komið almenningi, að vera sviftur dugandi elmbættismanni og fá í hans stað ónýtan og eftir atvikum gerspiltan stjórnar-taglhnýting.

Embættismanninum væri það aftur á móti að öllum líkindum yfirleitt ávinningur, að fá nægilega há starfslaun til að geta eftirlaunað sig sjálfur. Hann losnaði þá að minsta kosti undan ómaklegum eftirtölum margra misvit-urra manna.

Eins og eg þegar hefi tekið fram, má gera sæmilega til embættismanna með hvoru fyrirkomulaginu um sig. En hvorugt fyrirkomulagið er eitt út af fyrir sig einhlitt til þess.

Það viðgekst sumstaðar áður og hefir viðgengist hér að sumu leyti fram á síðustu tíma, að embættismönnum hafa verið borguð laun þeirra að nokkru leyti *in natura* eða í öðru verðmæti en peningum. Þannig hefir prestum lengst af goldist afgjöld eftir kirkjujarðir í ásauð og smjöri, svokölluð dagsverk með vinnu o. s. frv. Þar sem slíkur launamáti átti sér stað, gætti ekki þess ójafnaðar, sem nú er mest kvartað undan, hlutfallsskekkjunnar milli verðmætis nauðsynja manna og verðmælisins eða peninganna. En þessi launamáti er nú algenginn úr gildi. Og í hans stað eru nú nálega allstaðar komin svokölluð föst laun, eða borgun með tiltekinni peningaupphæð. En þar með er hurðin opnuð, eftir atvikum í háa gátt, til ójafnaðar og ranglætis.

Óathugulir menn gæta þess ekki, að krónan, eins og hver önnur mynt, er valdbodinn verðmæli, miðaður við tiltekið ástand á tilteknum tíma.

Þeim nægir að vita 100 aura í krónunni. En þeir gæta þess ekki, að sannvirði krónunnar fer eftir því, hvað fæst fyrir hana. Og á því verði veltur alt, svo sannarlega sem menn hvorki eta gull, silfur eða kopar, klæða sig í það, né brenna því í ofnum sínum. Indriða Einarssyni skrifstofustjóra telst svo til, að krónan hafi, miðað við Júlilok 1914, lækkað í verði um 59% frá 1875, þá er upphaflegu launalögin komu út, en um 43% frá 1889, þá er breytingin var gerð á þeim lögum, en frá 1875 til Októberloka 1916 segir hann krónuna hafa lækkað um 134% og um 112% frá 1889.

En til hvers er að vera að telja fram útreikninga hagfræðinganna. Eins og hver bóndi viti ekki, að hann fær fram undir þrem sinnum hærra verð fyrir hvert pund af kindakjöti nú en fyrir 10—15 árum og um helmingi meira fyrir mjólk og smjör. Eins og fiskimaðurinn viti ekki, að hann fær meira en helmingi meira fyrir hvert fiskpund nú en þá. Og eins og iðnaðarmaðurinn og verkamaðurinn viti ekki, að hann fær um þriðjungi meira fyrir vinnu sína. En þá veit bóndinn, fiskimaðurinn, iðnaðarmaðurinn og verkamaðurinn jafnframt, að embættismaðurinn, sem býr við algerlega óbætt kjör, fær að sama skapi minna fyrir krónuna og þeir fá meira fyrir vöru sína og vinnu, vita með öðrum orðum, að það harðnar í búí fyrir embættismönnum að sama skapi og batnað hefir í búí fyrir þeim, hverjum um sig. Alt hefir hækkað í verði að stórmiklum mun, kaup daglaunamanna þó hlutfallslega minna en vera bæri, alt, jafnvel áburðurinn undan mönnum og skepnum, alt undantekningarlaust nema — höfuð- og handavinna embættismannsins.

Það hefði mátt draga úr þessu augljósa, ápreifanlega ranglæti með því að hækka laun embættismanna við og við, eftir því sem meira kvað að verðfalli peninga. En fullkominn jöfnuður eða trygging fyrir því, að embættismaðurinn beri hvorki minna úr bótum né meira heldur en honum ber, fæst að eins með einu móti, fæst einvörðungu með því móti, að launahæð hans fari eftir

því, hve dýrt eða ódýrt er að lifa, fari með öðrum orðum eftir **verðlageskrá**. Þá hækka launin að sama skapi og nauðsynjar hækka í verði, en lækka hins vegar að sama skapi og verð nauðsynja lækkar. Með þeim hætti ætti ekki að eins að skamta embættismönnum laun og þeim og ekkjum þeirra eftirlaun, heldur ætti að **launa alla vinnu eins**. Það ætti að borga skrifstofumanninum, búðarmanninum, hásetanum og daglaunamanninum eftir sama mæli, því að núverandi launamælir er í rauninni jafnranglátur öllum, þó að hann komi harðast við embættismenn, sem sitja, að sleptri dýrtíðarsleikjunni, sem slett var í þá aumustu 1915, einir við alóbætt kjör.

Nú þótt halda megi embættismenn sæmilega bæði með eftirlaunum og á n þeirra, þá er fyrri launamátinn þó langsamlega algengastur, að minsta kosti hér í álfi, og hann hefir viðgengist hér á landi alt fram á þennan dag.

Kjör þau, er embættismenn landssjóðs bjuggu hér við samkvæmt upprunalegu launalögunum, lögunum frá 1875 og 1877, voru yfirleitt sæmileg, meðan peningar féllu ekki að marki í verði. Sýslumenn höfðu (þá sem nú) frá 2000 til 3500 kr. árslaun, flestir 3000 kr., lækna 1500—1900 kr., báðir auk aukatekna, og kennarar 2000—2800 kr. Aðrir embættismenn voru hér þá yfirleitt ekki til, að sleptum prestum, og þeir tóku þá laun sín sjálfir hjá sóknarbörnum sínum og landsetum. Laun æðstu embættismanna voru þá jafnvel óþarflega há. Biskupinn hafði þá t. d. 7000 kr. árslaun, en borgaði næstu árin eftir 1875 ekki nema 2—3 aura fyrir fiskpundið, um 16 aura fyrir mjólkurpottinn, um 16 aura fyrir pundið af kindakjöti og 25 aura fyrir nautakjöt, um 60 aura fyrir smjörpundið, um 15 kr. fyrir mjölsekkinn, og sæmilega 5 herbergjaibúð mátti þá fá hér fyrir 300 kr. ársléigu.

Almenningur rak að vonum fljótt augun í launatindana, enda var launum Reykjavíkurembættismanna breytt mikið verulega 1889. Hærri launin öll lækkuð að miklum mun, biskupslaunin jafnvel um 2000 kr., en

lægri launin, sérstaklega ýmsra skólakennara, aftur á móti hækkuð nokkuð. Við þessi lög sitja nú flestir embættismenn hér í Reykjavík. Sýslumenn og bæjarfógetar sitja aftur á móti við upprunalegu lögin (frá 1877) óbreytt. En læknaLögunum hefir verið breytt, síðast 1907, þannig að héraðslæknar sitja nú allir við jöfn, föst laun, 1500 kr. Og launum presta var breytt gagnert 1907, þannig að þeir taka nú allir úr einum sjóði, prestlaunasjóði ákveðin, jöfn byrjunarlaun (1300 kr.), sem hækka þó tvisvar, ná þeir lögmæltum aldri. Auk þess fá þeir sömu borgun fyrir aukaverk og áður. Þannig löguð voru launakjör þeirra embættismanna, er til voru við útkomu launaganna upphaflegu, þegar launanefndin settist á rökstóla, en krónan þá sennilega um 60 aura virði. Kjörum yngri embættismanna og annara starfsmanna landssjóðs verður ekki lýst yfirleitt, sízt hér og það þegar af þeirri ástæðu, að þar hefir ekki kent neins heildarlögmáls, enda hafa þau verið sett sín á hverjum tíma.

Þetta, lýsingin á starfs launum embættismanna, er þó ekki fullnaðarlýsing á kjörum þeirra. Því að eftirlaunin verða að teljast blátt áfram **partur** af launum þeirra og ekkert annað, enda finst mér líka liggja beinast við, að skilja orðið »eftirlaun« sem laun, er borgast eftir á, en almenningur mun því miður skilja það sem laun fyrir ekki neitt eða gjöf og er nokkur vorkunn, því að hugtakið hefir mér vitanlega ekki verið útlistað hingað til. Aukapíngið 1914 og launanefndin viðurkenna það líka ótvíræðlega, þótt óbeinlínis sé, að eftirlaun sé í raun réttir partur launanna. Að því er aukapíngið snertir, sést þetta á niðurlagi þingsályktunarinnar, orðunum að nefndin skuli gera tillögur um þá skipun á launum embættismanna, sem »nauðsynleg og sanngjörn virðist í sambandi við afnám eftirlauna.« Sömu skoðun finst mér nefndin lýsa yfir fyrir sitt leyti með niðurlagsorðum sínum um lífeyristrygginguna, sem koma á í stað eftirlauna. Hún segir á bls. 280: »Eru því launatillögur nefndarinnar og tillögur hennar um lífeyri og ekkjutryggingar ein sam-

ræmileg heild«. Hún þykist ekki mega afnema eftirlaun án þess að hækka starfslaunin svo, að embættismenn geti keypt sér hæfilegan lífeyri í stað eftirlaunanna beint af landsfé. Því verð eg að lýsa aðaldráttunum úr gildandi eftirlaunalögum.

Þau eru, auk presteftirlaunalaganna frá 1907, sem eg sleppi af því að nefndin sleppir þeim, tvenn, önnur tilskipun frá 1855*) og hitt lög frá 1904*). Þeir, sem hafa sezt í embætti á undan gildistöku laganna frá 1904, taka eftirlaun eftir tilskipuninni, en yngri embættismenn eftir lögnum.

Eftirlaunanjótendurnir eru hinir sömu bæði eftir tilskipuninni og lögnum, sem sé fyrst og fremst embættismaðurinn sjálfur, hafi hann farið frá embætti af ósjálfráðum atvikum, og þar næst ekja hans eftir hans dag. Bæði eiga heimtingu á eftirlaunum endurgjalds-laust af almannafé. En auk þess má eftir báðum heimildum veita ekkjum með óuppkomnum börnum frá 20-100 kr. ársstyrk með hverju barni. Og loks má veita fáttækum, föður- og móðurlausum börnum embættismanna 40-200 kr. ársstyrk hverju, samkvæmt tilskipuninni til 18 ára aldurs en samkvæmt lögnum til 16 ára aldurs. Eftirlaun embættismannsins sjálfs og ekkju hans eru hærri og að nokkru leyti öðruvísi fyrirkomið eftir tilskipuninni en eftir lögnum.

Eftir tilskipuninni fara eftirlaun embættismanna annars vegar eftir »hreinni«**) launahæð og hins vegar eftir embættisaldri, þannig að maður, sem hefir t. d. setið 24 ár í 3000 kr. embætti, fær $\frac{1}{6}$ launa eða 600 kr. eftirlaun, eftir 10-20 ár $\frac{1}{3}$ eða 1500 kr. og eftir 29 ár $\frac{2}{3}$ eða 2000 kr. Þó mega eftirlaun einskis embættismanns, hversu há sem laun hans hafa verið, fara fram úr 6000 kr.

*) Sbr. opið bréf frá 1855 um ekkju framfærslu, sem á bæði við tilskipunina og lögín.

**) Með »hreinni« launahæð á eg við þann hluta launanna, sem eftir verður þegar embættisrekstrarkostnaðurinn hefir verið dreginn frá brúttólaunum. Af afganginum reiknast eftirlaunin.

Slasist embættismaður svo í embættisrekstri, að hann verði að fara frá, fær hann $\frac{2}{3}$ launa, og sé embætti manns lagt niður, fær hann einnig $\frac{2}{3}$ launa sem biðlaun í 5 ár en síðan lögmælt eftirlaun, hafi hann ekki fengið annað embætti. Ek k j a embættismanns fær $\frac{1}{3}$ hluta hreinna launa embættismannsins, þó aldrei meira en 1200 kr. á ári.

Almenningur rak fljótt augun í hæstu eftirlaunin, enda voru þau óþarflega há. Lækkun og jafnvel afnámi eftirlauna hefir því oft verið hreyft á þingi, enda voru eftirlaun lækkuð mjög á alþingi 1903, eins og lögin frá 1904 bera skýrastan vottinn um. Þau lög gera að visu þeim embættismönnum, sem missa heilsu sína út af embættisverki eða verða að fara úr embætti af því að embætti þeirra er lagt niður, sömu skil og tilskipunin, en annars lækka þau að stórum mun eftirlaun embættismanna sjálfra og lækka auk þess tilfinnanlega eftirlaun ekkanna. Eftir lögunum frá 1904 fær hver embættismaður að visu $\frac{1}{5}$ hreinna launa sinna, hvort sem hann situr lengi eða skamt í embætti, en svo fær hann ekki nema 20 kr. fyrir hvert embættisár úr því. 3000 kr. embættismaður fær samkvæmt þeim lögum 640 kr. eftirlaun eftir 2 ár, 900 kr. eftir 15 ár og 1180 kr. eftir 29 ár. En auk þessara eftirlauna úr landssjóði, verður hann að leggja fram árlega 2% af launahæð sinni frá sjálfum sér til ellistyrks eða $1\frac{1}{3}\%$ til lifeyriskaupa og fyrir það árgjald fengi hann 155 kr. 5 aura ellistyrk eftir 29 ár, reiknað með $4\frac{1}{2}\%$ vöxtum, eða 253 kr. 52 aura lifeyri. Ek k j a slíks embættismanns fær eftir lögunum $\frac{1}{10}$ hluta hreinna launa mannsins, ekkja eftir embættismann með 3000 kr. launum þannig 300 kr. á ári, þó aldrei meira en 600 kr., hversu há sem laun mannsins voru.

Eins og menn sjá, er þetta ekki lítil lækkun frá því sem áður var.

Þannig var ástatt um laun og eftirlaun embættismanna um það leyti, sem nefndin settist á rökstóla. Hún átti, eins og þegar er getið, að rannsaka afnám eftirlauna og launakjör embættis-

manna og sérstaklega gera tillögur um nauðsynlega og sanngjarna breytingu á laununum

Nú er spurningin, **hvernig** hefir nefndin farið með þetta verkefni?

Hún leggur fyrst og fremst til að eftirlaununum sé kastað, bæði eftirlaunum til embættismanna sjálfra og ekkna þeirra og öllum styrk til munaðarlausra barna þeirra. Hún játar það á bls. 143, að »krafan um afnám (eftirlauna) er ekki byggð á undanfarandi rækilegri rannsókn málsins«, en kastar þeim þó rannsóknarlaust. Hún telur raunar fram 6 ástæður fyrir afnámi eftirlauna og finst svo mikið til um þær, að hún gleiðletrar þær allar, enda þó að þær sé allar margtuggnar upp á öllum þingmálafundum, sem fjallað hafa um eftirlaunamálið. Hún vill afnema eftirlaunin:

1. af því, að hún segir þjóðina vilja það,
2. af því, að ekki verði séð, að það sé réttlætiskrafa embættismanna eða þjóðarnauðsyn að öðru leyti að halda þeim,
3. af því, að margir embættismenn séu eftirlaunalausir,
4. af því, að eftirlaunarétturinn valdi kala til embættismanna,
5. af því, að það sé sparnaður fyrir landið og
6. af því, að afnám þeirra eyði eða minki óvissu um útgjöldin

Þjóðarviljinn er helzta ástæðan í augum nefndarinnar, enda setur hún hann efstan á blaðið. Hún telur þjóðarviljann sannaðan með meira en 100 bls. samtíninginum úr þingmálafundagjörðum og þingtiðindum, en henni dettur ekki í hug að rannsaka, hvort hann sé á rökum byggður eða ekki. Það er engu líkara en að nefndin hafi talið það eitt hlutverk sitt um eftirlaunamálið, sem hver óvalinn hlaupaskrifari hefði getað gjört jafn vel, sem sé að tína saman það sem sagt hefir verið um það á þingi eða á undirbúningsfundum undir þing, enda segir hún á bls. 142, að hún hafi talið sér »skytt . . . að tína saman það, sem stutt gæti að því, að

óskir þjóðarinnar sæjust í sem skýrustu ljósi«. Hún hefir eftir því sennilega talið það liggja utan verkahringis síns að rannsaka, hvort þjóðarviljinn væri á rökum byggður, því að ekki vil eg gjöra henni þær getsakir, að hún telji það skifta litlu máli, hvort hann er réttur eða rangur. En itilþæg finst mér þá nefndin vera, að leggja ekki meira upp úr sjálfri sér.

Önnur ástæðan er að því leyti rétt, að embættismenn eiga vitanlega ekki fortakslausa heimtingu á svokölluðum »eftirlaunum«, hvorki handa sér né sinum. En þeir eiga þá heimtingu á svo riflegum launum, að þeir og skyldulið þeirra geti komist viðunanlega af, þegar þeir hafa slitið starfskröftum sínum í þarfir lands og lýðs. Það verður vel að gæta þess mikla munar á embættismanninum og frjálsum starfsmanni, að starfskraftar embættismannsins eru bundnir við verk fyrir aðra, almenning, en einstaklingurinn ver öllum starfskröftum sínum einungis í sína þágu. Því verða laun embættismannsins að vera svo rifleg, að hann geti klofið fyrstu skyldu hvers sæmilegs borgara, að sjá sómasamlega fyrir sér og sinum.

Þriðja ástæðan, að margir embættismenn sé eftirlaunalausir, er að visu að því leyti rétt hermd, að nokkrir af nýrri starfsmönnum þjóðarinnar — þó ekki embættismenn í lagalegum skilningi — hafa eigi rétt til eftirlauna. En sé eftirlaun réttmæt og hagkvæm ekki að eins starfsmanninum heldur og þjóðfélaginu, þá átti nefndin að leggja til, að nýju starfsmönnum yrði gjörð sömu skil og eldri starfsbræðrum þeirra. Að taka rétt af mörgum af því maður treystist eigi til þess að gera nokkrum sömu skil, væri ekki alveg ósvipað því, að gistingasali ræki háttada næturgesti upp úr rúmunum af því að hann gæti ekki bætt við sig nokkrum nýkomnum gestum.

Fjórdá ástæðan, að eftirlaunarétturinn valdi kala til embættismanna, er yfirleitt röng. Eg hygg að almenningur beri ekki kala til embættismanna yfirleitt og sízt vegna eftirlaunaréttarins. Hitt er annað mál og ofboð skiljanlegt, að almenningur horfi ekki hýru auga til óþarflega hárra eftirlauna.

æða þeirrar misbrúðunar á eftirlaunum, sem landsstjórnirnar því miður hafa stundum gerst sekar um. Það hefir þannig komið fyrir bæði fyr og síðar, að mönnum, sem jafnvel var ekki trúandi fyrir einföldu, venjulegu starfi, hefir verið stungið í embætti og sýslanir og þeir síðan leystir frá embætti með eftirlaunum eftir lengri eða skemri tíma. Öðrum, sem látið hafa af embættum af sérstökum ástæðum eða af stundarbilun, hefir liðist að lifa við eftirlaun árum saman, enda þó að þeir væri fullstarfsfærir og skyldir að lögum til að taka embætti aftur. Og loks þykir það hafa komið fyrir, að mönnum hefir verið veitt lausn frá embætti með eftirlaunum, enda þó að þeir bæri þess engin merki að vera bilaðir menn. Ráðið við slíkum misbrúðkunum er ekki, að afnema eftirlaun og þar með ef til vill brjóta rétt á fjölda mörgum nýtum mönnum og þjóðfélaginu í heild þess bæði í nútíð og framtíð, heldur hitt að láta ekki landsstjórninni haldast uppi slík ótrúmenska við landssjóð og hlutdrægni við breyska kunningja eða sífjallið. Neðndarráðið er ekki ólíkt dómsúrskurðinum gamla, að lóga bakara í stað smíðs.

Fimta ástæðan, sparnaðurinn, er vitanlega laukrétt í sjálfu sér, sé að eins litið á a u g n a b l i k s f j á r h a g landsjóðs, en dregur rétt rakin dilk á eftir sér. Neðndin hefði samkvæmt henni rökrétt átt að leggja það til, að embættislaunin væri líka afnumin, láta embættismenn vinna kauplaust fyrir landið, eftir atvikum skiftast á um það, líkt og mönnum er nú skylt að sitja kauplaust í hreppsnefndum, bæjarstjórnnum, niðurjöfnunarnefndum og vinna ýms önnur störf kauplaust, sérstaklega í þarfir sveitar sinnar.

Sjötta ástæðan, að afnám eftirlauna mundi eyða eða minnka óvissu um gjöld landssjóðs, er sára-ómerkileg og á ekki fremur við eftirlaun en fjöldamörg önnur útgjöld landssjóðs, sem aldrei verða séð fyrir til fulls og engum skynsömum manni kemur þó til hugar að fella niður, svo sem ýms verk og kaup landssjóði til handa, sem breytilegt verð ræður miklu um.

Mér hefir orðið þetta skrafdrjúgt um eftirlaunatillög-

ur nefndarinnar af því, að í meðferð hennar á þeim kennirjafnvel ekki viðleitni til sjálfstæðrar íhugunar um réttmæti eftirlauna eða haganleik, heldur eltir nefndin þar almenningsálitið, eins og hún hyggur það vera, íhugunarlaust.

Eg er sammála nefndinni um, að afnema megi eftirlaunin. En úr því að nefndin lagði til, að fella það af þeim niður, er eftir var skilið 1904, þá bar henni skylda til að finna jafn gott ráð eftirlaununum, til að tryggja framtíð þrotins embættismanns og skylduliðs hans. En til þess að ráðið verði talið jafn gott eftirlaununum, má það ekki vera þungbærara embættismanninum, meðan hann situr í embætti, en gamla ráðið, eftirlaunin, og verður auk þess að tryggja hann og fólk hans jafnvel og eftirlaunin, eftir að hann er farinn úr embætti.

Slíkt ráð mun nefndin þykjast leggja til, og er þá komið að tillögum hennar um **sjálfkeyptan lífeyri** handa embættismanninum og sjálfkeypta tryggingu handa ekkjunni. Um tryggingu óuppkominna barna embættismanna gerir nefndin aftur á móti enga tillögu. Eg ræði að svo stöddu að eins um þá tryggingu, sem embættismanninum og ekkju hans stendur af þessum kaupum, eftir að embættismaðurinn hefir látið af embætti. Hitt atriðið, hvort embættismaðurinn er líklegur til að geta aflað tryggingarinnar og viðhaldið henni, eftir launatillögum nefndarinnar, meðan hann er í embætti, veltur á því, hvort nefndin ætlar embættismanninum nægileg laun og biður því svars, þangað til eg kem að tillögum hennar um starfslaunin.

Nefndin leggur til, að hver embættismaður verji tilteknu árgjaldi, sem miðað er við launahæð hans, til lífeyriskaupa sjálfum honum til handa. Árgjaldið af hæstu launum, 5000 kr. og hærri launum, er sett 186 kr. eða 3.72%, af 3000 kr. launum 111 kr. 60 aur. eða 3.72% og af lægstu launum, 690 kr., 18 kr. 60 aur. eða 2.70%. Fyrir þetta árgjald fær 5000 kr. launamaðurinn 100 kr. lífeyri fyrir hvert ár, sem hann hefir setið í embætti,

3000 kr. embættismaður 60 kr. á ári og 690 kr. maðurinn 10 kr. ári. 3000 kr. embættismaður fengi þannig eftir 2 ár 120 kr. eða 480 kr. minna en eftir tilskipuninni frá 1855 og eftirlaunalögunum frá 1904, að sleptum sjálfkeypta lífeyrinum eftir öðrum lögum frá sama ári, sem nemur litlu fyr en eftir langan tíma. Hann fengi eftir 15 ár 900 kr. og þannig 600 kr. minna en eftir tilskipuninni frá 1855, og 52 kr. 24 aur. minna en eftir lögum frá 1904, sé sjálfkeypta lífeyrinum 52 kr. 24 aur. bætt við eftirlaunin. Loks fengi hann eftir 29 ár 1740 kr. eða 260 kr. minna en eftir tilskipuninni, en hins vegar 306 kr. 48 aur. meira en eftir lögunum frá 1904, þótt lífeyririnn, 253 kr. 52 aur., væri talinn með. En reikni maður meðalaldur embættismanna 20.5 ár, eins og nefndin gjörir, fengi 3000 kr. launamaður eftir þann tíma, samkvæmt nefndartillögum, 1230 kr. á ári, eftir tilskipuninni fengi hann 1550 kr. eða 320 kr. meira. Eftir lögunum frá 1904 fengi hann að visu ekki nema 1000 kr. í hrein eftirlaun og 89 kr. 08 aur. sem lífeyri, eða 140 kr. 92 aur. minna heldur en eftir nefndartillögum. En fyrir þær 140 kr. 92 aur. hefði hann líka borgað 111 kr. 60 aur. á ári í 20½ ár. Á þessum útreikningum sést, að fatlist embættismaður á fyrstu embættisárum sínum, þá liggur í rauninni lítið annað fyrir honum en guð eða gaddurinn. Hann gæti ekki lifað á lífeyrinum einum saman á Herkastalanum, þó að hann hefði verið svo sparsamur, hvorki að kvænast, né eiga börn. Og ætti hann konu og börn eða annaðhvort, yrði hann annaðhvort að segja alt hyskið til sveitar eða senda konuna eða börnin í sildarvinnu norður á Siglufjörð.

Eg verð þannig að álíta, að nefndartillögurnar bjóði uppgjafaembættismanni yfirleitt ekki náðarnærri eins mikla tryggingu, enda þótt hann sé látinn kosta hana sjálfur að öllu leyti, eins og tilskipunin og jafnvel eftirlaunalögin bjóða þeim nú, þeim að útgjalda lausu.

Og víkur þá máli að ekkju tryggingunni.

Nefndin ætlar hverjum embættismanni að kaupa ekkju sinni af eigin fé annað hvort lífeyri, er samsvari að minsta kosti $\frac{1}{5}$ af byrjunarlaunum hans eða þá lífsábyrgð, er sé þrefalt hærri en laun hans. Fyrir slíkan lífeyri yrði 3000 kr. embættismaður, er kvæntist 30 ára gamall 25 ára konu, að gjalda 128 kr. 28 aur. á ári, en fyrir lögmæltu lífsábyrgð 180 kr. 90 aur. Eftir nefndartillögum fengi ekkja 3000 kr. embættismans þannig 600 kr. lífeyri á ári, en eftir tilskipuninni hefði hún fengið úr landssjóði $\frac{1}{8}$ launa manns síns eða 375 kr. og $\frac{1}{10}$ eða 300 kr. eftir lögnum frá 1904. En auk þessara eftirlauna úr landssjóði, sem embættismaðurinn kostaði engu til, hvorki samkvæmt tilskipuninni né lögnum, verður hver embættismaður, hvort heldur hann er eftirlaunaður samkvæmt tilskipuninni eða lögnum, samkv. opnu bréfi frá 1855 að sjá ekkju sinni fyrir $\frac{1}{5}$ launa sinna af eigin fé. Ekkja eftir embættismann með 3000 kr. launum, fengi þannig samkvæmt tilskipuninni og opna bréfinu 375 + 600 kr. eða 975 kr. eftirlaun alls, en eftir lögnum og opna bréfinu 300 + 600 kr. eða 900 kr., auk vonar um 20—100 kr. ársstyrk með hverju óuppkomnu barni. Ekkja eftir meðallaunadan (3000 kr.) embættismann gæti dregið fram einfaldasta líf á lífeyri sínum, samkvæmt nefndartillögnum, ef hún hefði verið svo gætin að eignast ekki börn, eða svo ráðdeildar-söm að lóga börnunum. Ekkja eftir lægst launuðu embættismennina eða með börnum í eftirdragi yrði aftur á móti annaðhvort að leita sveitarhjálpur eða leggja sig í síldarvinnu.

Fyrir föður- og móðurlausum börnum embættismanna, óuppkomnum, liggur eftir tillögum nefndarinnar ekkert annað en hordauði eða sveitin.

Lífeyrisfyrirkomulagið og ekkjuframfærsla nefndarinnar er því stórum verra en núgildandi fyrirkomulag. Og ofan á gallana, sem eg hefi bent á, bætist sá stóri annmarki, eða réttara sagt, það mikla ranglæti, sem þegar er vikið að, að binda þær greiðslur við fasta óskek-

ula krónuupphæð. Þær ættu, eins og starfslaunin, að fara eftir verðlagsskrá.

Landssjóður verður sjálfur að kosta lífeyri embættismanna og ekkna þeirra, ef hann borgar embættismanninum ekki full laun meðan hann situr í embætti, þ. e. nægilega upphæð til að lifa sjálfur viðunanlegu lífi og til að framfleyta skylduliði sínu, þar á meðal börnum sínum, meðan þau eru á ómagaaldri. Og að minsta kosti hefði jafnvel þingmannaefnum átt að vera óhætt að ráða til, að fara ekki lakar með embættismenn, sem eiga að leggja alla starfskrafta sína fram í þarfir lands síns og lýðs, en nú er farið með ellihrumt fólk, jafnt það, sem aldrei hefir unnið handarvik í þarfir almennings, sem hitt, er eitthvað liggur eftir. Þeim mönnum, eða öllum almenningi, hjálpar landssjóður með því að leggja fram frá sér $\frac{1}{3}$ til tæpra $\frac{5}{7}$ til móts við árgjald þeirra sjálfra. Mér dettur ekki í hug að telja þessa hjálp eftir. Þvert á móti. Eg vildi hafa hjálpina meiri og barðist fyrir því á þingi, að hún tæki líka til sjúkra.

Vikur þá máli að tillögum nefndarinnar um laun embættismanna. Eg gat þess í upphafi ræðu minnar, að mikið riði á að kostur væri á völdum mönnum í embætti og að eitt frumskilyrði þess væri sæmileg launakjör. Nefndin er þessu sammála. Hún segir á bls. 180: »Þjóðfélagið verður að geta fengið dugandi menn í þjónustu sína, og verður því að sjálfsögðu að launa starfsmönnum sínum svo, að þeir geti lifað sómasamlega og rækt starf sitt með alúð og árvekni«.

Nefndin útlistar þetta nánar á bls. 184 þannig: »Nefndin hefir í tillögum sínum sett sér það mark, að upphæð launanna fyrir fult starf, væri ákveðin svo há, að ætla megi að embættismaðurinn eða starfsmaðurinn geti lifað sómasamlega¹⁾ af laununum, fengið endurgoldinn þann kostnað, sem hann hefir haft af því að búa sig undir starfið,¹⁾ (telur þar með á bls. 181 vinnutap

¹⁾ Aðkennt af höf.

á námsárunum) og geti trygt sér (og ekkju sinni) nokkurn lifeyri«. Og enn vill nefndin »að tekið sé í laununum hæfilegt tillit til þeirrar ábyrgðar og þess vanda, sem embættinu fylgir« (bls. 189). Þetta eru óbreytt orð nefndarinnar og vissulega laukrétt.

Nefndin játar því meira að segja, skilst mér, þótt óbeinlinis sé, að jafnvel hærri launin frá 1875, en eftir þeim hafði biskup 7000 kr. árslaun, amtmenn 6000, háyfirdómari 5800, forstöðumaður prestaskólans 4600 og rektor latinuskólans 4600 kr. o. s. frv., hafi eigi verið of há, jafnvel þá er þau voru sett, enda þó að þá fengist upp og niður fyrir 1 kr. það, sem nú er talið kosta 2 kr. 32. aura.

Henni farast svo orð um lögin á bls. 152: »Í launalögunum frá 1875 voru launin, sérstaklega hin hærri laun, sett tiltölulega há. Virðist það þá samt hafa verið alment álit þingmanna, að þau væri hæfileg og að það væri mikið undir því komið, að embættismenn hefði nægileg laun, svo að í embættin veldist dugandi menn«.

Nefndin tekur eftir prestalaunalögunum frá 1907 og háskólalaunalögunum frá 1909, að láta launin hækka með hækkingu embættisaldri. Kirkjumálanefndin 1904—06 tók þetta fyrst upp og forstöðumenn embættaskólanna fylgdu henni 1908 í háskólalaunafrumvarpinu.

Loks játar nefndin því, að ekki sé réttlátt að ein-skorða launin við tiltekinn krónufjölda. Hún segir á bls. 185: »Það væri vafalaust réttast, ef unt væri, að skipa launakjörunum þannig, að þau héldust í hendur við lifnaðarhættina og dýrleika lifsnauðsynjanna á hverjum tíma.« Auðvitað, ekki að eins réttast, heldur eina rétta leiðin eins og sýnt var fram á í upphafi.

En hvernig fer nú nefndin með alla þessa fallegu ásetninga sína?

Hún lætur sér nægja að segja, að hver embættismaður verði fyrst og fremst að hafa nægilega mikil laun til að framfleyta sómasamlega lífi sínu og sinna, og kallar það, sem til þess þarf, »purftarlaun«, en dettúrekki

í hug að rannsaka, hvað til þess þurfi, lætur sér nægja að segja, að það sé líkt og á Norðurlöndum (bls. 188).

Hún taldi verðlagsskrá eina réttláta launamælinn, en varpar þó öllu umstangi út af því að rannsaka, hverjar og hve miklar nauðsynjar meðalembættismannsheimili þarf til sæmilegs lífsframsæris, og hve miklu verði þær nemi, frá sér með þeirri athugasemd, að nauðsynlegar skýrslur þar að lútandi vanti, og fyrir því sjái hún sér ekki fært að koma fram með neinar tillögur í því efni (bls. 186). Það er satt, að lítið er til af slíkum skýrslum, en mundi millipinganefnd, sem sat hátt á annað ár og hefði getað setið lengur og skipuð var 5 mönnum, ekki hafa getað gert eitthvað til þess að komast að viðunanlegri bráðabirgðarniðurstöðu.

Aðalvandinn er þó ekki annar en sá, að komast fyrir, hve mikið af útlendum og innlendum nauðsynjum, kjöti, fiski, feitmeti, korni, klæðum, eldivið o. s. frv. meðal embættismannsheimili mundi þurfa, verðleggja svo hverja tegund og leggja loks allar sérverðstölur saman. Nauðsynjamagnið má fara nærri um af eigin búreikningum og hafa stuðning af þar að lútandi útlendum skýrslum. Og um verðið bæði nú og fyrir ófriðinn má fá vitneskju úr viðskiftabókum og reikningum sínum. Og þætti skifta máli, að komast að verðlaginu frá 1875 og 1889 til samanburðar, þá mætti sennilega afla upplýsinga um það úr reikningum eða verzlunarbókum kaupmanna. Hagstofan hefði vafalaust getað orðið nefndinni að ekki litlu liði bæði um útvegum og tilbúning slíkra skýrslna. Og hvað sem því liður, þá mundu flestir telja, að þeim tíma, sem nefndin varði í samtíninginn upp úr þingmálafundagerðunum og þingtíðindum og í prófarkalestur, hefði verið betur varið til slíks en hins. Hefði nefndin snúist að þessu, býst eg við, að mátt hefði fá nægilega ábyggilegar skýrslur til að byggja á til bráðabirgðar, segjum t. d. til 3-5 ára. Þann frest hefði svo mátt nota til ábyggilegri undirbúnings.

Hækkun launa með hækkandi embættisaldri fer nefndin þannig með, að hún setur hjá heila stétt, læknastéttina, þykist gera það henni í vil og fellir

Auk þess laun nokkurra læknisembætta úr 1500 kr. niður í 1200 kr. Að öðru leyti fellir nefndin byrjunarlaun embættismanna yfirleitt svo langt niður úr því, sem föstu launin eru nú, að vanséð er, að sumir embættismenn komist fyrir hor á hærri stigin, og víst er um það, að þeir yrði margir að þræla mörg ár á lægri launum til þess að ná sálkölluðum meðallaunum nefndarinnar, sem yfirleitt eru rétt í kringum föstu launin nú og jafnvel undir þeim. Eg læt mér nægja að geta sem sýnishorna meðferðar nefndarinnar á þessu í raun og veru holla hækkunarlög máli gagnvart dósentum, adjunktum og símastöðvarstjóranum í Reykjavík. Dósentar hafa nú 2800 kr. og eru eftirlaunalausir. Adjunktarnir hafa nú tveir 3200 kr., tveir 2800 kr. og einn 2400 kr. og landssjóður eftirlaunar þá og ekkjur þeirra. Reykjavíkurstöðvarstjórinn hefir nú 2600 kr. og er eftirlaunalaus. Nefndin leggur öllum þessum mönnum þá skyldu á herðar að eftirlauna sig og ekkjur sínar af eigin fé, og gerir ekkert fyrir verðfalli peninga, en setur þó byrjunarlaun dósentanna 2600 kr. eða 200 kr. neðar en nú, og ætlar þeim að dúsa við þessi kjör óbreytt í 5 ár; hún setur byrjunarlaun adjunktanna 2200 kr. og lækkar launin þannig yfirleitt um 1000 kr. eða 600 kr. og ætlar þeim, öðrum en núverandi adjunktum, að lifa við þau í 3 ár. Byrjunarlaun stöðvarstjórans setur hún 2000 kr. eða 600 kr. neðar en nú og ætlar honum að sitja við þau í 3 ár, og hæstu launinum, 3000 kr., eða 400 kr. brúttólaunabót frá því sem nú er, nær stöðvarstjórinn eftir 15 ár, ef að »batterið« í honum verður þá ekki þornað áður.

Nefndin lofaði, að taka til greina undirbúningskostnað embættismannsins á námsárunum. En gleymir því.

Hún lofaði að bæta embættismanninum það upp í launum hans, sem nemur árgjaldi hans fyrir eigin lífeeyri og fyrir eftirlaun ekkju hans til handa. En gleymir því.

Hún lofaði að bæta mönnum upp í launinum þá á byrgð og vanda, sem hún telur fylgja sumum embættum, en gleymir bæði að gera grein fyrir, hver þau embætti eru og hve miklu slík uppbót á að nema.

Hún kannast við að nauðsynjar, sérstaklega innlendar, og húsaleiga í Reykjavík, hafi stigið mjög í verði síðan 1889 og lofar að launa embættismenn svo, að þeir geti þó, þrátt fyrir það, lifað sómasamlegu lífi. En gleymir því

Hún segist miða launin við ástandið fyrir ófriðinn og jatar, að úr ófriðarvandræðunum verði að bæta (bls. 184), en gleymir að koma fram með bótatillögur um þetta eða telur það liggja utan skyldu sinnar, líkt og hún taldi það ekki koma mál við sig, að rannsaka, hvort afnám eftirlauna væri ranglátt eða réttlátt. Nefndin er þannig að því leyti óhugulli gagnvart embættismönnum en jafnvel óvalinn bóndi er gagnvart skepnum sínum. Hann klifur þó þritugan hamarinn til að bæta nautunum, hrossunum og sauðunum sínum litil eða skemd hey með fódurbæti.

Það getur eðlilega ekki komið til nokkurra mála, að nokkur einn maður vinni á hlaupum og í hjáverkum sínum á stuttum tíma verk heillar millipinganefndar, enda ætla eg mér engan veginn þá dul.

Spurningin um það, hvort rétt og hagkvæmt sé að afnema eftirlaun, er jafn órannsökuð og hún var áður en nefndin var skipuð, og verður því að taka það mál upp til rannsóknar af nýju og frá rótum.

Sama máli gegnir um skipun launa eftir réttu hlutfalli milli nauðsynja og peninga á hverjum tíma sem er. Hvorugt er áhlaupaverk, síður en svo, og skal því út í hvorugt farið nánar hér, en þegar er gert, enda hefi eg þegar talað lengi.

Hins vegar ætla eg nú að síðustu, úr því að eg hef fundið að gerðum nefndarinnar, að leitast við að sýna fram á, hvernig greinagerð hennar um launaskipunina hefði sennilega orðið, ef hún hefði fylgt þeim niðurskipunarreglum, sem hún setti sér í upphafi, og sést þá jafnframt, að útkoman hefði orðið nokkuð mikið á annan veg, en orðið hefir hjá henni.

Eg ætla þá fyrst að sýna fram á, hvað lítil embættismannsfjölskylda, sem vill láta telja sig ráðdeildarsama, brúkaði á ári hér í Reykjavík skömmu fyrir ófriðinn, fyrir sig og sína, 5 menn alls, þar á meðal tvö stálpuð börn. Maðurinn hafði keypt sér lífsábyrgð um það leyti sem hann kvæntist, til þess að tryggja konu sína og börn, ef hann félli frá. Dæmið hæfir sennilega ekki allskostar utan Reykjavíkur, af því að húsaleiga og nokkrar innlendar afurðir munu vera hér mun dýrari en að minsta kosti sumstaðar annarstaðar. En að öðru leyti mun ekki láta fjarri um lifnaðarhætti embættismanna í öðrum kaupstöðum og kauptúnum yfirleitt. Eg býst við, að áheyrendum mínum leiðist að heyra meira af tölum en komið er, og sleppi því hér að »vigta heimilismönnunum út,« enda þó eg hafi safnað drögum til slíkrar skýrslu og eigi þau heima hjá mér. Læt mér því nægja að nefna hér krónuhæð hvers gjaldaliðs.

Ársreikningurinn var á þessa leið:

1. Húsaleiga með vatnsskatti	700 kr.
2. Fæði*.	1500 —
3. Fatnaður.	250 —
4. Skófatnaður.	50 —
5. Vinnukonukaup.	120 —
6. Eldiviður og sudugas.	150 —
7. Ljósmeti.	50 —
8. Bækur, bókband og blöð.	150 —
9. Munaðarvara (tóbak o. fl).	100 —
10. Sumarferðalag (upp í Mosfellssveit).	50 —
11. Ýmislegt.	200 —
12. Lífsábyrgð og önnur váttrygging.	250 —
13. Útsvar.	150 —
14. Landskattar.	30 —
15. Læknir og lyf.	40 —
16. Prests og kirkjugjöld.	10 —

Árseyðsla þannig alls 3800 kr.

*) 82 aura á mann eða 11 aur. meira en hegningarfangar 1915.

Það verða 760 kr. á mann á ári eða rúmar 2 kr. á mann á dag.

Þetta vil eg kalla þurftarlaun embættismanns með 5 manns í heimili í Reykjavík. Lægri en þetta hefði að minsta kosti meðal-þurftarlaun Reykjavíkur-embættismanns fyrir stríðið ekki mátt vera. Og lægri mega þau því síður verða eftir ófriðinn, því það mun því miður sannast, að verðlagið verður lengi að komast í samt lag aftur, verði það á annað borð nokkurn tíma. Byrjunarþurftarlaunin hefðu ef til vill mátt vera eitt-hvað lægri, meðan annaðhvort engin börn eru eða ung, en þó ber þess að gæta, að dæmið gerir ekki ráð fyrir barnaómegð, enda heimilismenn færri en alment mun gerast.

En við þessa upphæð, 3800 kr., verður að bæta fyrst og fremst endurgjaldi á undirbúningskostnaði embættismannsins og honum fylgjandi atvinnutjóni, og þar næst ígildi þeirra nýju eftirlaunakvaða, sem nefndin leggur á embættismenn. Eg geri ráð fyrir háskólamentuðum manni og geri námsárin alls 12, 6 í mentaskólanum og 5—6 í háskóla; geri námsmanninum 500 kr. á ári mentaskólaárin eða 3000 kr. í 6 ár, og 700 kr. háskólaárin eða 4200 kr. Undirbúningskostnaði undir skóla sleppi eg í notum þess, að meðalháskólatími heimalærðra manna mundi nú sem stendur sennilega ekki fara fram úr 5 árum. Námskostnaður alls yrði þá 7200 kr. Og í atvinnutap, í 7 ár eftir 18 ára aldur, geri eg námsmanninum að meðaltali 400 kr. á ári eða alls 2800 kr.⁹ Námskostnaður og atvinnutjón á námsárunum nemur þannig alls 10000 kr. Þessa upphæð geri eg landssjóði að endarborga embættismanninum með 6% í afborgun og vexti á 30 árum, eða árlega kr. 578.30.

En þá er eftir að endurgjalda embættismanninum árgjald það, er nefndin ætlar honum að leggja fram árlega til eftirlauna handa sér og ekkju sinni. Eg gjöri ráð fyrir þritugum embættismanni í 3000 kr. embætti og læt hann hafa kvænst 25 ára gam-

alli konu. Eftir því yrði hann að verja 111 kr. 60 aur. til eigin eftirlauna. — Vildi hann tryggja sér jafnháan lifeyri við 65 ára aldur og eftirlaun hans eru samkvæmt tilskipuninni eftir 29 ára embættisþjónustu, yrði hann að greiða árlega úr eigin vasa 348 kr. 61 eyri, en því sleppi eg. — Þá yrði hann ennfremur annaðhvort að leggja fram 128 kr. 28 aur. til lifeyris handa konunni eða 180 kr. 90 aur., ef hann keypti handa henni þrefalt hærri lífsábyrgð en laun hans eru. Eg tek lægri upphæðina, 128 kr. 28 aur., og ætti landssjóður þá að endurgjalda embættismanninum fyrir árgjald hans til eftirlauna handa honum sjálfum og konu hans 111 kr. 60 aur. + 128 kr. 28 aur. eða samtals kr. 239.88.

Laun háskólagengins Reykjavíkurembættismanns, rétt fyrir ófriðinn, hefði því eftir grundvallarreglum nefndarinnar eigi mátt vera minni en $3800 + 578.30 + 239.88$ eða alls kr. 4618.18 eða um 4600 kr.

Og hafi peningar fallið í verði frá Júlilokum 1914 til Októberloka 1916 alls yfir um 50%, þá ætti að bæta 50% af 3510 kr. — eg dreg líftryggingarkostnað 250 kr., landskatta, 30 kr. og prests og kirkjugjöld 10 kr. frá þurftarlaunaupphæðinni 3800 kr. — við 4600 kr., og ættu laun háskólagengins Reykjavíkurembættismanns árin 1915 og 1916 þá að vera um 6355 kr. hvort árið.

En eftir tillögum nefndarinnar, sem taka ekki til ráðherra, ná ekki hæstu laun nokkurs embættismanns í landinu þessari upphæð; háyfirdómari og landritari eiga einir að hafa 6000 kr. og biskup 5800. Hæstu laun annara eru miklu lægri. Því síður ná meðallaun embættismanna neitt í námunda við þá upphæð, sem laun Reykjavíkurembættismanns með réttu ættu að nema. Meðallaun nefndarinnar eru, eins og eg þegar hefi getið, yfirleitt í kringum föstu launin nú og sumra jafnvel fyrir neðan þau, lands-símastjóra, stöðvarstjórans í Reykjavík, háskóladósentanna og adjunktanna. Og allra sízt ná náttúrlega byrjunarlaun nefndarinnar nokkurri átt. Launin eru þannig flest, og sérstaklega lægri launin, öldungis óviðunanleg, borin saman

við ástandið fyrir ófriðinn, hvað þá heldur borin saman við ófriðarástandið.

Launakjör embættismanna yfirleitt, eða að fáum undanteknum, eru því allsendis óforsvaranleg, hvort heldur þau eru borin saman við þarfir embættismanna eða getu landssjóðs og hag almennings fyrir og nú.

Samkvæmt fjárlögnum 1876—77 voru allar tekjur landssjóðs á því tveggja ára tímabili taldar um 580 þúsundir en gjöldin um 452 þúsund, og embættiskostnaður þar af um 373 þúsund. Það var vitanlega fráleitt hlutfall til nokkurrar frambúðar, hvort heldur launin voru borin saman við tekjur landsins eða gjöld þess, um $\frac{37}{58}$ af tekjunum og um $\frac{87}{45}$ af gjöldunum. En hlutfallið er líka, sem betur fer, alveg gjörbreytt. Eftir fjárlögnum fyrir 1916—17 eru tekjur landssjóðs taldar alls rúm 4200 þúsund og gjöldin tæp 4500 þúsund, en til embætta, eftirlauna og skálda og listamanna munu ekki ganga meira en tæp 1200 þúsund bæði árin, og þó hefir mýmörgum embættum verið bætt við, vegna mjög vaxinnar framþróunar og fjölbreytni þjóðlífsins.

Tekjur landssjóðs hafa meira en sjöfaldast síðan 1875. Þær urðu 1915 alls kr. 2,831,394,33, en gjöldin kr. 2,428,389,68 og tekjuafgangur varð þannig 403,004 kr. 65 aur. Af gjaldahæðinni gengu 478,690 kr. til embættalauna, 73,583 kr. 99 aur. til eftirlauna og styrktarfjár og 30,445 kr. til hreppstjóra, prestlaunauppbóta og prestaftirlauna eða alls til starfsmanna landsins 582,719 kr. Eftir því nemur allur embættakostnaður nú ekki nema rúmum $\frac{1}{5}$ af tekjunum og tæpum $\frac{1}{4}$ af gjöldunum, í stað um $\frac{3}{5}$ af tekjunum áður og $\frac{3}{4}$ af gjöldunum. Og í gær átti landssjóður 665 þús. í reiðufé nettó eða að póstávisunum frádregnum. Svo glæsilegur hefir hagur landssjóðs aldrei verið.

Og það er sennilegt, að hagur almennings hafi breytt til batnaðar að líku skapi. Um 1876—77 og lengi fram eftir sáust, væri lítið upp til fjalla og dala, víðast hvar ekki annað en ógirt tún og aumleg moldarhreysi, og,

væri litið fram til sjávar, annaðhvort ekki nema auður sjórinn eða þá smá bátskeljar hér og hvar nokkra faðma undan landi. Nú eru í öllum héruðum landsins víða komin reisuleg stein- eða timburhús innan traustra girðinga, og bæði fyrir landi og langt út á hafi moka nú gufu- og önnur vélskip upp auðæðum hafsins. Og þó eiga landsmenn tugi miljóna í sparisjóðum og öðrum arðberandi eignum. Getuleysi landssjóðs eða almennings verður því ekki borið við nú.

Framþróun lífsins hefir valdið því, að það var ekki lifandi sæmilegu lífi fyrir ófriðinn við þau laun, sem embættismönnum yfirleitt voru skömtuð 1875 og 1877, og því siður við launin frá 1889 og seinni árum. Og stríðið hefir valdið því, að það er ekki hægt að draga fram jafnvel óbrotnasta þurftarlíf á þeim launum eins og nærri má geta, hafi krónan fallið í verði um 70% á ófriðarárunum einum.

Embættismaðurinn verður því annaðhvort að sökkva sér í stórskuldir eða draga jafnvel aðallífsnauðsynjar við börn sín, konu sína og sjálfan sig. En það er honum hvorki skylt né heimilt. Hann á heimtingu á því, að fá nægileg laun fyrir fult og gott starf, og landsstjórnin annast væntanlega um það, að halda embættismönnum til að vinna vel.

Honum er hvorki skylt né heimilt að liða það að þarflausu, að hann, sem vinnur einvörðungu fyrir almennung, sé einn hafður út undan allra starfandi manna í landinu.

Hann, og mentamaðurinn yfirleitt, má virðingar sinnar vegna ekki þola það átölulaust, að gjört sé minna úr því aflinu, mentun og menningu, sem talið er og er sterkasta lyftistöng hvers konar framfara, heldur en úr óbreyttum svokölluðum skitverkum.

Það verður fyrst og fremst að veita öllum embættismönnum og starfsmönnum landsins og jafnvel eftirlaunamönnum þegar á aukapínginu, sem kemur saman

í næsta mánuði, uppbót fyrir það verðfall peninga, sem heimsstyrjöldin hefir valdið frá upphafi, og heimila landsstjórninni um leið, að veita hlutfallslega uppbót framvegis meðan ófriðurinn helst. Eg skal ekki fullyrða, hve há uppbótin fyrir liðna tímann ætti að vera. Hagstofan telur í síðustu Hagtiðindum allmargar innlendar og útlendar nauðsynjar og reiknar verðhækkun á þeim hér í Reykjavík frá ófriðarbyrjun um 70 %. Það má vera, að ekki sé byggjandi á þeim útreikningi óskorað. Þar eru taldar ýmsar vörur, sem hafa hækkað gifurlega, t. d. rúsinur, sem hafa hækkað um 158 % og sóða, sem hækkað hefir um 167 %, en þessara vara og nokkurra annara gætir samt sem áður lítið í heimilishaldi. Hins vegar hafa ýmsar nauðsynjar, sem mikils er neytt af, hækkað stórkostlega, rúgbrauð t. d. um 100 %, kindakjöt 79—100 % og kol um 172 %. Því er einsýnt, að hækkunin verður að vera mikil, ef til vill ekki minni en um 50 % til uppjafnaðar hvort árið 1915 og 1916.

En þar næst verður að vinda bráðan bug að því, að setja ný launalög, er sé bygd á réttu hlutfalli nauðsynja og peninga, og endurgjaldi embættismanninum undirbúningskostnað hans og gjöri honum auk þess fært — ef það verður ofan á að afnema eftirlaun — að sjá sér viðunanlega farborða, eftir að hann er þrotinn að starfskröftum, og ekkju og óuppkomnum börnum, eftir sinn dag. Þess verður þó naumast kostur fyrir eftir ófriðinu.

Það ætlast enginn til, að löggjafarvaldið geri embættismenn að yfirstétt. Skynsamir menn líta fremur á það, hvernig maðurinn vinnur skylduverk sitt, en hvert verkið er. En til hins ætlast víst heldur enginn, að embættismenn og mentamenn verði gerðir að nokkurs konar Helótum, er vinni almenningi alt það gagn, sem þeir geta, en fá ekki að halda nema sultarlífi í staðinn, líkt og ríkisþrælarnir í gömlu Spöрту, en Helótar yrði allur þorri íslenzkra embættismanna, ef tillögur launaneðndarinnar yrði lögfestar og landið innan skamms menningarlítið fiskiver.

En hvernig á að fara að koma bótum í framkvæmd?

Á nefndargerðunum verður lítið eða ekkert bygt. Nefndaráliðið — tillögurnar um laun og eftirlaun — er ónýtt, sé það satt, að ekki megi, læknanna vegna, selja prentað mál til umbúða. Og úr því að þeim mönnum, er þing og stjórn kaus til að undirbúa málið, hefir ekki tekist betur en þetta, þá sé eg ekki annað ráð, en að embættismenn, og islenzkir mentamenn yfirleitt, taki málið í sínar hendur og bindist samtökum um að búa það svo vel í hendur þings og stjórnar sem kostur er á. Að óreyndu er ekki ástæða til að væna þing og stjórn um ósanngjarnar undirtektir undir sanngjarnar kröfur, verði þær sæmilega reifðar. Þing og almenningur er ekki eins ósanngjarn og sumir sennilega hafa óttast.

Hafi svo dauða nefndin sinn dóm með sér, nefndin, sem sá lítið og gleymdi því litla, sem hún sá, þegar til framkvæmdanna kom. En þökk sé yður, sem hlýdduð þessum langa lestri svo vel.

Lárus H. Bjarnason.

Skugginn.

Sjónleikur í einum þætti

eftir

Guttorm J. Guttormsson.

Persónur: Sá blindi. Öldungurinn. Unglingurinn. Ekkjan. Sjómenn. Blaðadrengir. Bæjarmenn.

Breitt stræti — talsímastaur við gangstéttina — þverstræti upp til hægri handar — stórt leikhús á horninu — hliðin gluggalaus og dyralaus snýr fram — hornið á leikhúsinu lokar að miklu leyti sýn upp strætið sem er til hægri handar. Múgur og margmenni er á gangi frá vinstri til hægri. Húmt sumarkvöld. Unglingurinn, Öldungurinn og Sá blindi koma frá hægri.

Unglingurinn

(við bæjarmann sem hann mætir):

Hvert ætlarðu?

Bæjarmaðurinn:

Í leikhúsið.

Unglingurinn:

Og allur þessi fólksstraumur?

Bæjarmaðurinn:

Já. Það 'er víst. Það á að leika heimsfrægan gamanleik í kvöld. Eg þarf að flýta mér að ná góðu sæti.
(Fer.)

Unglingurinn

(horfir á eftir mannfjöldanum):

Allir þessir menn eru að flýta sér til að ná því. Kannske þeir nái því allir. Hver veit.

(Unglingurinn gengur hægt, staðnæmist við og við og horfir á eftir mannfjöldanum. Öldungurinn haltrar hægt. Sá blindi fálmar sig áfram.)

Einn bæjarmaður:

Þessi leikur hefir aldrei verið leikinn hér áður.

Annar:

Og verður ef til vill aldrei leikinn framar.

Þriðji:

Við megum ekki missa af því að sjá hann.

Fjórdi:

Skyldi þetta annars vera eintómur gamanleikur. Það er undarlegt hve sumir gamanleikir eru sorglegir.

Sjómaður

(kemur frá vinstri. Kallar):

Dauðinn fer hér um í nótt.

(Unglingurinn, Öldungurinn og Sá blindi nema staðar hjá talsma-staurnum. Sjómaðurinn fer fram hjá þeim.)

Einn bæjarmaður:

Ha! ha! hann er brjálður.

Annar:

Hann er kannske fullur. Sjómenn drekka.

Þriðji:

Þá þyrstir þegar þeir koma af sjónum.

Fjórdi:

Sjómenn eru hjátrúarfullir.

Sjómaðurinn

(kallar):

Dauðinn fer hér um í nótt.

Nokkrir bæjarmenn:

Maðurinn er vitlaus. Hann ætti ekki að ganga laus.

Aðrir:

Hlustum ekki á hann. — Hann verður bráðum tekinn höndum.

Einn bæjarmaður:

Við megum ekki tefja, ef við ætlum að ná góðu sæti.

(Mannfjöldinn heldur áfram. Sjómaðurinn berst með straumnum og hverfur fyrir hornið á leikhúsinu.)

Öldungurinn:

(Við unglinginn og þann blinda.)

Þessi sjómaður er hvorki vitstola né ölvaður.

Unglingurinn:

Eg sá þennan mann niðri á bryggju. Hann var að koma af stóra svarta skipinu, sem lenti um sólarlagið.

Öldungurinn:

Stóra svarta skipinu? Það er fólksflutningsskip.

Unglingurinn: .

Við ættum ekki að tefja hér, ef það er satt að dauðinn fari hér um í nótt. Við skulum allir verða samferða.

Öldungurinn:

Dauðinn gerir engum mein. Lífið veldur meinum en ekki dauðinn. Eg ætla að bíða og sjá.

Sá blindi:

Eg ætla að bíða.

Unglingurinn:

Eg hefði gaman af að sjá dauðann, ef eg væri ekki hræddur.

Öldungurinn:

Dauðinn er ekki hræðilegur. Þú hræðist hann af því þú ert ungur og veizt ekki hvað hann er.

Unglingurinn:

Ef eg sé hann í nótt, þá veit eg á morgun hvað hann er. (Nokkrir ungir bæjarmenn koma frá vinstri.) Viljið þið ekki bíða með okkur? Við ætlum að sjá dauðann. Hann fer hér um í nótt. Hann gerir engum mein.

(Bæjarmennirnir líta hver til annars og hlæja.)

Einn bæjarmaðurinn:

Við erum nú ekki að hugsa um dauðann.

Annar:

Okkur varðar ekkert um dauðann. Við ætlum ekki að fara að deyja. Við erum á leiðinni í leikhúsið. (Þeir fara. Lúðrabytur heyrir úr leikhúsinu — hann varir nokkra stund — á eftir heyrir löfaklapp.)

Unglingurinn:

Nú er leikurinn að byrja. Ó mig langar inn í leikhúsið. Eg ætla að fara.

Öldungurinn:

Nei, farðu ekki þangað í þetta sinn. Hér er þér óhætt einmitt vegna þess að dauðinn fer hér um.

Unglingurinn :

Mér leiðist að bíða í myrkrinu. Dauðinn kemur kannske aldrei.

Sá blindi :

Ertu blindur?

Unglingurinn :

Nei.

Sá blindi :

Þá biður þú ekki í myrkrinu lengur en til morguns, og ekki svo lengi, ef dauðinn fer hér um í nótt.

(Tveir blaðadrengir koma.)

Blaðadrengirnir

(kalla):

Sólarljósið. Sólarljósið, kveldblaðið. Alt um stór-slysið á hafinu. Fjögur hundruð menn farast. Skipstjórinn fremur sjálfsmorð, slysið honum að kenna. Nákvæmlega sagt frá öllu í Sólarljósinu.

(Ekkjan kemur frá vinstri.)

Ekkjan

(við blaðadrengina):

Þið hafið valið ykkur það verk að selja sorgarfréttirnar. Þær eru dýrar þó þær séu gefnar. Skipstjórinn var maðurinn minn. Þið breiðið úr blöðunum til að varpa skugga á hann látinn. Þið hlífið ekki ekkjum og munaðarlausum.

Fyrsti blaðadrengur :

Við græðum fé á þessum fréttum og á öllum slysum. Þetta er eitt okkar allra bezta kvöld.

Annar blaðadrengur :

Við þurfum að fá fleiri sorgarfréttir til að selja, svo okkur geti vegnað vel.

Fyrsti blaðadrengur :

Þær verða litlar tekjurnar okkar á morgun, ef ekkert slys vill til í nótt. (Réttir pening að þeim blindi.) Njóttu góðs af gróðanum mínum í kvöld, blindi maður.

Sá blindi :

Nei, gefðu mér heldur fyrsta peninginn, sem þér áskotnast fyrir gleðifréttir.

Fyrsti blaðadrengur :

Enginn vill kaupa gleðifréttir hér í borg. — Það verður dauft á morgun ef ekkert slys vill til í nótt. (Þeir fara talandi.)

Ekkjan :

Vitið þið góðu menn, hve langt er liðið af nótt?

Öldungurinn :

Ekki veit eg það.

Sá blindi :

Ekki heldur eg. Það er eins dimt nú og var í dag.

Ekkjan :

Eg ætla að reyna að mæta börnunum mínum hér þegar þau koma úr leikhúsinu.

Öldungurinn :

Eru þau í leikhúsinu?

Sá blindi :

?

(Ekkjan byrgir andlitið.)

Unglingurinn :

Það er meira gaman að vera í leikhúsinu í kvöld en bíða hér eftir dauðanum.

Ekkjan :

Guð minn góður! Bíða eftir dauðanum?

Unglingurinn :

Já. Við erum að bíða eftir dauðanum. Ókunnur sjómaður, sem kom af svarta fólksflutningsskipinu, fór áðan hér um strætið og kallaði: Dauðinn fer hér um í nótt.

Ekkjan :

Guð minn! Hvað boðar þetta? Verðum við hér á vegi dauðans, eða þá börnin mín inni í leikhúsinu?

Öldungurinn :

Það vitum við ekki fyr en hann kemur. Hann kemur ekki nema hann hafi erindi. Hann kemur ef til vill til að bjarga einum eða mörgum úr lífsháska.

(Hvelliandi lófaklapp heyrir úr leikhúsinu.)

Ekkjan :

Þið trúið því sem sjómaðurinn sagði.

Öldungurinn :

Já, eg trúi því. Eg horfði í augu hans um leið og hann fór framhjá. Eg sá inn í sálu hans.

Sá blindi :

Eg heyrði að hann sagði satt. Orðin komu frá djúpi sálar hans — sálin talaði sjálf.

Ekkjan :

Hvernig veit sjómaðurinn þetta?

Sá blindi :

Sálir okkar allra fá vitneskju um óorðna hluti. Hverjir þeir hlutir eru, kunnum við ekki öll jafnvel að greina. Þeir einir kunna það, sem skilja sál sína. En enginn skilur sál sína til fulls, því hún er ótakmörkuð eins og algeimsrúmið. Maður lærir að eins að þekkja það af sálinni, sem næst manni er.

Ekkjan :

Svo mannssálin verður þá altaf til?

Sá blindi :

Og hefir altaf verið til.

Öldungurinn :

Sálin lifnar jafnt líkamanum og þroskast jafnt honum, annars væri maðurinn með fullu viti þegar hann fæðist. Og sálin deyr jafnt líkamanum, því það sem á upphaf tilveru sinnar, á endir tilveru sinnar. Vegna þess getur ekki dauðinn sakað. Hann er alger friður fyrir líkama og sál, annars gæti hann verið hættulegur.

Ekkjan :

Eg trúi því að eg megi lifa eftir dauðann og mæta manninum mínum á einhverjum góðum stað. Eg vildi geta trúað því, jafnvel þó mér yrði sannað hið gagnstæða.

Sá blindi :

Sálin hefir verið til frá alda öðli og verður söm við sig frá eilífið til eilífiðar. Eftir því sem maðurinn þroskast, lærir hann meira og meira að þekkja af sál sinni, en hann þekkir aldrei hana alla fremur en algeimsrúmið.

Unglingurinn :

Hvert ykkar hefir rétt fyrir sér?

Sá blindi :

Dauðinn sker úr því.

Unglingurinn :

Hvað er þetta sem kallað er sál? Hver getur sagt að hún sé til? Hefir nokkur séð hana? (Statt þögn.)

Öldungurinn :

Dauðinn leiðir mann í allan sannleika. — Í dauðanum renna allar kenningar saman og verða að einni kenningu.

Sá blindi :

Dauðinn opnar á manni augun.

Ekkjan :

Þið óttist ekki dauðann?

Sá blindi :

Hví skyldi eg óttast augnlækninn?

Öldungurinn :

Hví skyldi eg óttast endir stríðsins og upphaf friðartímans.

Unglingurinn :

Eg óttast ekkert nema dauðann. Eg hræðist dauðann. (Skellihlátur heyrist úr leikhúsinu.)

Sá blindi :

Mér er að verða undarlega heitt. Hvaðan stafar þessi hiti? Finnið þið hitann?

Öldungurinn :

Ekki eg. Mér er undarlega kalt. Það er í mér hrollur. Dauðinn er að nálgast.

Ekkjan :

Ó, börnin mín! börnin mín!

Unglingurinn

(horfir í kring):

Eg er hræddur! Eg þori ekki að vera hér og eg þori ekki heldur að fara.

(Hlátur heyrist úr leikhúsinu. Öldungurinn gengur hægt til hægri handar — staðnæmist, horfir framundan sér og hlustar — snýr við — hlustar, og horfir í allar áttir. Sá blindi þurkar af sér svita — snýr andlitinu til beggja hliða eins og hann sé að reyna að sjá. Ekkjan lítur í kringum sig óttaslegin og föl. Unglingurinn rekur upp hljóð, hleyp-

ur til hægri handar — snýr við og hverfur til vinstri. Þýður og fjörugur lúðrabytur heyrist úr leikhúsinu).

Sá blindi:

Það er einhver að veina. Það er einhver að gráta.

Öldungurinn:

Eg heyri ekkert nema lúðrabytinn.

Sá blindi:

Hvaðan leggur þennan hita?

Öldungurinn:

Eg finn ekkert nema kulda — kuldann af dauðanum. Hann færir nær — nær — nær. (Horfir til beggja handa.)

Sá blindi:

Eg finn brunalykt eins og hrátt kjöt sé að brenna. (Réttir hendurnar út í áttina til leikhússins.) Pennan hita leggur af leikhúsinu.

Ekkjan:

Almáttugi guð!

(Lúðrabyturinn hefir haldið áfram með vaxandi krafti. Hann verður viltari og viltari og endar með orgum og ósamræmi. Leikhúsið sýnist skjálfa af lófaklappi. Hlátur heyrist sem hlæi þúsundir manna. Þetta varir stutta stund, snýst síðan upp í ógurlegt skelfingaróp. Ys og þys æðandi fólksfjölda blandast angistarópum og stunnum.)

Ekkjan:

Guð minn góður, börnin mín! (Hleypur til hægri, hverfur fyrir leikhússhornið.)

Margar raddir inni í leikhúsinu:

Út, út, út.

Aðrar raddir:

Það er of seint nú. Guð miskunni okkur.

Rödd ekkjunnar inni í leikhúsinu:

Börnin mín! börnin mín! Gefðu mér börnin mín, guð minn, guð minn!

(Hávaðinn inni í leikhúsinu hljóðnar smám saman.)

Öldungurinn:

Nú er dauðinn fá fótín frá okkur.

(Öldungurinn og Sá blindi stíga út fyrir gangstéttina, snúa sér að leikhúsinu. Það verður skyndilega albjart á leiksviðinu. Sjómaður með björgunarhring í hendinni kemur hratt en hljóðlega frá vinstri, staðnæmist bak við Öldunginn og þann blinda og hlustar. Skuggi hans

geysistór og biksvartur kastast á leikhússvegginn. Síðan fer sjómaðurinn hratt og hljóðlega til hægri og hverfur fyrir leikhúshornið. Um leið og hann hverfur úr sýn steinþagnar alt. Djúp dauðapögn).

Öldungurinn:

Eg sá skugga dauðans á veggnum.

Sá blindi:

Eg fann skugga dauðans hvíla á mér.

Öldungurinn:

Dauðinn fer einatt á bak við okkur. Við sjáum bara skuggann.

Sá blindi:

Það er ljós hinum megin við dauðann, annars sæist ekki skugginn.

Tjaldið.

Nýtizkuborgir.

Fyrsta Fyrsta ferðin til útlanda hlýtur að verða *utanförin*. minnisstæð öllum Íslendingum, ekki sízt ef hún er farin að haustinu eða vorinu og komið úr vetrarveðri og snjóum í grænan gróður og sumarhlýindin ytra. Auk hins átakanlega munar á veðráttunni, þá má heita að alt sé nýtt og nýstárlegt, sem augum og eyrum mætir. Í góðu veðri er t. d. Skotlandsströndin fögur, með bleikum ökrum og slegnum túnum, með stærri og smærri borgum á við og dreif, með öllum verksmiðjureykhafunum, sem mæna upp í loftið eins og risavaxin siglutré á fjölda skipa. Í fjarska sjást járnbrautarlestir bruna yfir landið. Sjálf lestin sést óglögt svo langt í burtu, en gráhvít vatnsgufan upp úr strompinum sézt líða yfir landið eins og skýhnoðri eða ullarflóki. Fögur er hún og vingjarnleg ströndin með fjallasýn uppi í landi, en breiðum blómlegum byggðum hið neðra, og mikill er munur að sjá hana, er komið er af hafi, eða t. d. svarta, gróðursnauda og brimbarða Reykjanesströndina, og er þó Skotlandsströndin ólíkt minna blómleg, en Sjálandsströndin meðfram Eyrarsundi. Sira Matthías Jochumsson segist hafa grátið af undrun og aðdáun er hann sigldi í fyrsta sinn inn Eyrarsund og sá »borgir og skrúðfagra skóga« á landi uppi. Fæstir eru svo uppnæmir, en öllum Íslendingum hlýtur að finnast mikið til um slíka sjón, svo fagra og svo ólíka öllu sem þeir hafa vanist.

Það er þó fæst sem sést af sjónum, en þegar að landi er komið, kemst maður fyrst í nýjan heim. Útlenda málið hljómar torskilið og óviðkunnanlegt í eyrum manns, —

nú er maður ekki lengur heima — hestarnir eru orðnir tröllslega stórir og filúm líkir, húsin risavaxin, alt hefir stækkað nema mennirnir. Nú sér maður í fyrsta sinn veruleg tré með gildum stofnum og völdugum krónum. Það er augljóst, að íslenzku trén eru ekki annað í samanburði við þau en kræklótt kjarr, sem varla má tré kalla.

Borgir. Sjálfsagt yrði mörgum torvelt að segja, hvað þeim hefði þótt mest koma til, er þeir sáu útlönd í fyrsta sinn. Það er um svo margt að velja. Þó má fullyrða, að ekkert er jafn nýstárlegt, ekkert sem hefir meiri áhrif á íslenzka heimalninga en erlendu borgirnar. Endalausar raðir af marglyftum húsum, mörgum afar skrautlegum, stóru búðargluggarnir með öllu þeirra skrauti og varningi, breiðar steinlagðar götur, og straumurinn eftir þeim af allskonar vögnum og allskonar lýð, ekki sízt skrautklæddum konum, og götudynurinn af allri umferðinni, — alt þetta festist ógleymanlega í endurminningunni. Og það eru ekki að eins einstök hús, einstakar götur, sem manni verður starsýnt á. Þegar um fagran bæ er að ræða, sem vel má sjá yfir, eins og t. d. Edinaborg, þá getur engum dulist, að borgin í heild er fögur, gullfögur eins og skinandi dýrgripur, fögur á sinn hátt eins og fegurstu sveitir. Upp úr dalverpinu í miðhluta bæjarins klifrar húsabreiðan upp brattar brekkurnar, hver húsahliðin gægist upp fyrir hina, sumar með nýttizku sniði, aðrar með miðaldasvip, en ætíð í einhverju þægilegu samræmi. Eins eru göturnar, sem krækja í margskonar bugðum innan um húsapyrpingarnar. Nýjustu göturnar eru breiðar, tiltölulega beinar, en gömlu göturnar skritilegir þröngir og krókóttir ranghalar; en þrátt fyrir allan mismuninn á gömlu og nýju, rennur þó alt saman í viðkunnalega, einkennilega heild. Yfir húsabreiðurnar og blóm-skrydda skemtigarðana, sem liggja innanum þær, legst svo bláleit borgarmóða eins og hálf gagnsæ andlitsblæja yfir andlit á friðri konu.

Að vísu er það með borgir eins og konur, að þær eru

misjafnlega friðar, en sjaldnast fer hjá því, að Íslendingum finnist mikið til um auðlegð þeirra og menningu. Ógrynni fjár hefir það hlotið að kosta, að byggja öll þessi skrautlegu rambygðu hús, að veita vatni, rafmagni, gasi, skólpi eftir öllum þessum endalausum götum, að klæða síðan alt yfirborð þeirra með jarðbikasteypu eða höggnum steinum, að gróðursetja öll götutrén og rækta alla skraut- og skemtigardana. Ósjálfrátt dettur manni í hug fábreytnin og fátæktin heima. Bersýnilegt er það, að efni manna þar eru ekkert á móts við öll þau auðæfi, sem hér eru saman komin, og menningin litilfjörleg að ytra áliti í sam-
anburði við menningu stórborganna. Það er ekki laust við, að einhver leiðindatilfinning leggist yfir mann, tilfinning fyrir því að maður sé einmana, fátækur og menningarsnauður útlendingur innan um alla borgarörsina og borgardýrðina, og sé þar ofaukið.

Húsagarð-urinn. Vér höfum nú farið alfaravegin og komist inn í einhverja af glæsilegustu verzlunargötum bæjarins, höfum séð glæsilegu hliðina á borginni. En það er svo með borgir, sem flest annað, að þær hafa ranghverfu, og sú hliðin er ekki eins glæsileg. Vér þurfum ekki langt að leita til þess að fá nokkra hugmynd um hana. Ekki er annað en að ganga gegnum hliðið, sem liggur gegnum eitthvert af húsunum og komast að húsbaki. Vér komum þá inn í þröngan húsagarð, dálítið ferkantað svæði, steinsteypt eða jarðbikað, sem ekki er stærra að flatarmáli en lítið hús. Það er innilukt á allar hliðar af marglyftum húsum, svo vér erum þarna eins og í djúpum brunni. Það er auðséð, að hér er búið í hverju herbergi, alt fult af fólki. Ósjálfrátt dettur manni í hug, að birtan hljóti að vera lítil, sem leggur inn í þessi herbergi úr svo þröngum og djúpum húsagarði. Það er auðsætt, að enginn sólargeisli muni komast þar inn mestan hluta árs og meira að segja aldrei í þau herbergin, sem eru á neðstu gólfunum. Skuggalegt hlýtur lífið að vera

hjá fólkinu í þessum brunni, sem ekki sér sólina í herbergjum sínum. — Og hvar eiga börnin að hafast við og leika sér? Þau hafa auðvitað um ekkert annað að gera en þennan litla húsagarð, sem enginn gróður er í og aldrei sést sól í, því ekki er það börnum hent, að hætta sér út í götumúginn og alla umferðina.

Verðhækkun En hvernig gat mönnum komið til hugar, *landsins.* að byggja húsinn svona hvert hjá öðru svo hvert byrgði fyrir annað, og því voru þau bygd svo geysihá, hvert gólfíð ofan á öðru? Mörg óþægindi hljóta þó að fylgja því, að hruga slíkum mannfjölda saman á svo litið svæði. — Það væri langt mál ef rækilega skyldi leysa úr þeirri spurningu, en skiljanlegt er það þó, er þess er gætt, að hér erum vér staddir í verzlunargötu í miðjum bæ og að hver ferstíka af hússtæðinu kostar svo hundruðum króna skiftir. Bletturinn sem húsið er bygt á hefir sennilega kostað stórfé. — Það gæti ekki borið sig, að byggja litið hús á honum, en með þessu geysilega þéttbýli og háu leigunni fyrir hvern kyma, getur byggingin orðið mjög arðsamt fyrirtæki, þó dýrt sé hússtæðið. Eflaust á einhver auðmaður húsið og hefir séð um það, að haga svo byggingunni, að hann fengi ríflega vexti af fé sínu.

En hvernig kemst þá landið í þetta geysiverð? Það sýnist þó engri átt ná, að borga svo hundruðum króna skiftir fyrir eina ferstíku. Ekki gæti það verið umtalsmál, að rækta neitt á landinu, sem gæfi svo mikið í aðra hönd, að svaraði til þessa verðs. Til þessa liggja einkum tvær orsakir: Hin fyrri er sú, að húsið er á almannafæri og fyrir kaupmennina, sem verza í búðunum, borgar það sig, að gjalda svo þúsundum króna skiftir í húsaleigu á ári fyrir dálitla búð, því verzlunin er þeim mun meiri hér en annarstaðar, þar sem fáferðugra er. Hinsíðari er sú, að byggingarsamþykkt bæjarins hefir leyft að byggja marglyft hús og með örlitlum millibilum. Ef þetta hefði ekki verið leyft, þá hefði landið aldrei getað hækk-

að svo gegndarlaust í verði og þá hefðu ekki hífýli bæjalýðsins orðið svo skuggaleg og sólarlaus.

Marglyftu húsin. Það er auðvelt að skilja þá verðhækkun, sem verzlunin veldur og þau þægindi, að vera sem næst miðjum bæ. Hitt er torskildara, því leyft er að byggja svo, að hver búi ofan á öðrum, og svo þétt, að sól ekki sjáist. Ekki bygðu fornmenn svo. Fornaldarborgirnar voru byggðar úr einlyftum, skaplega stórum húsum. Að sjálfsögðu hefir hagar auðmanna og landeigenda ráðið hér nokkru, óforsjálni manna og skeytingarleysi enn meiru, en aðallega var þessi siður tekinn upp á miðöldunum. Þá voru borgir víggirtar og öflugir borgarmúrar umhverfis þær. Utan múranna var ekki óhætt að búa á þeim tímum, en innan þeirra var landið mjög takmarkað. Þegar borgarlýðurinn fjölgaði, voru engin önnur ráð en að byggja húsin marglyft og gera götur þröngar.¹⁾ Frá þeim tímum stafar þetta alræmda þröngbýli í bæjum og marglyftu húsin, flest af því sem gerir borgir óheilnæmar og hvimleidar. En þegar þetta lag er komið á og húsastæðin eru komin í geipi-verð, er ekki auðvelt að koma því af. Við það myndu eignir manna rýrast og kröfur vera óðara gerðar til skaðabóta. Allir þeir, sem land eiga og hús, mennirnir, sem mest mega sín í borgunum, berjast að sjálfsögðu móti því að réttur þeirra, til þess að byggja sem mest á hússtæðunum, sé takmarkaður. Þeir láta sig það flestir mestu skifta að húsið og landið gefi góðan arð, en hitt minnu hvort það sé hentugt og holt fyrir leigjendur þeirra. Og íbúðirnar ganga venjulega út fyrir því!

Leiguliðar. Ekki þarf annað en að líta á svo mikla byggingu og dýra til þess að ganga úr skugga um, að hún getur ekki verið eign neinna fátæklinga, því hún

¹⁾ Þó var húsahæðin á miðöldunum mjög skapleg í samanburði við gróðabyggingar síðustu áratuga.

kostar svo hundruðum þúsunda króna skiftir. Það er þá auðséð, að allir sem í henni búa eru leiguliðar, nema svo standi á að eigandinn búi þar sjálfur. Allir leigja herbergi sín, og enginn getur hugsað til að eignast þau nema stóreignamenn. Borgarlýðurinn hefir vanist þessu og orðið að sætta sig við það, að eiga ekki einu sinni þak yfir höfði sér. Furðanlegt er það, að fæstir finna til nokkurrar óánægju yfir þessu, og bendir það til þess, að allir myndu sætta sig við að alt borgaland væri rikiseign, ef sá siður kæmist á. En ekki hefir þó þetta allskostar góð áhrif á borgarlýðinn. Hann eirir sjaldnast lengi í sömu íbúðinni og er á sífeldu flókti fram og aftur, býr venjulega ekki lengur en 2—5 ár í sama stað. Það er því ólíku meira los á heimilislífinu en viðast gerist í sveitum og sennilega hefir þessi flækingur miður góð áhrif á börnin, sem alast þannig upp alstaðar og hvergi. Húsin í borginni og landið eiga nálega aðeins stóreignarmenn, og þeir fara venjulega svo langt sem þeir komast er þeir selja sína vöru: húsnæðið, sem altaf vex í verði eftir því sem bærinn stækkar.

Í úthverfi. Ef vér nú viljum kynnast bænum betur, er hyggilegt að sjá eitthvað fleira en glæsilegustu göturnar, þar sem borgarauðurinn lætur mest á sér bera. Vér bregðum oss með strætisvaginum út í eitthvert úthverfið, þar sem fjöldi verkafólks býr og fátækari alþýðumenn. Nú eru göturnar ekki eins skrautlegar. Endalausar radir af óbreyttum skrautlausum húsum af svo einfaldri gerð sem framast má, hvert húsið öðru líkt, sviplaust og smekklaust. Hér er umferðin lítil, hvergi sér stingandi strá, tré eða blóm, ekkert annað en grjótið í götunni og grjótið í húsunum til beggja hliða. Vér erum hér komnir út á einhverskonar dauðans eyðimörk. Ef vér förum hér að skoða húsagarðana, þá má búast við því að þeir séu stórum lakari, þrengri og óprífalegri en vér höfum áður séð, og þó þeir kunni sumir að vera allstórir að ummáli, sérstaklega í nýju borgarhverfunum, þá bregzt

það ekki, að svo mikið er bygt á hverju hússtæði, sem lög frekast leyfa, og svo mörgu fólki troðið í hvert hús, að undrum sætir. Hér er borga þétt- og þröngbýlið í almætti sínu. Inni í húsunum eru híbýlaprengslin svo mikil, að flestar fjölskyldur hafa aðeins eitt herbergi og eldhús til allra þarfa. Ekki allfáar verða að komast af með eitt herbergi eldhúslaust, og sumar jafnvel með einhverja herbergisnefnu, sem engin eldfæri fylgja.¹⁾ Það má geta nærri hve erfitt er að hafa slík húsakynni þrífaleg og heimilisleg, þegar ekki er öðru til að tjalda til allra þarfa en einu herbergi og eldhúsi, ef þá ekki er eldað og þveginnt þvottur í sama herberginu og sofið er í. Og það er ekki nóg með þetta. Algengt er það, sérstaklega í þýzku borgunum, að einn eða fleiri menn koma að kvöldinu, og fá að vera um nóttina gegn litilfjörlegri þóknun. Annað húsnaði hafa þeir ekki. Og skemtilegt er það ekki lífið í þessum sólarlausu, þröngu híbýlum. Konan vinnur sjálf öll verkin að deginum og annast börnin, maðurinn vinnur í einhverri verksmíðju, og þegar hann kemur heim að kvöldinu, er þar allajafna kalt og óvistlegt. Hann kemst þá fljótlega upp á það, að leita út á veitingahúsin í nágrenninu og situr þar með félögum sínum þangað til háttatími er kominn. Hann fer þá heim meira eða minna ölvaður og hefir eytt riflegum hluta af dagkaupinu, en heima sitja kona og börn, oft og einatt köld, klæðlital og svöng.

Afleiðingarnar. Þannig var þá skrautlega, mikilfenglega borgin er betur var gáð að, — lakari að mörgu leyti en lélegur sveitabær. Ef þetta ætti við litinn hluta borgarbúa, fátækasta rilinn, væri ekki um eins mikið að tala, en nú er það helmingur bæjarbúa, sem lifir þessu lífi eða litlu betra og þá er fljótséð, að hér er um alvarlegan hlut að ræða. Það fer að líkum, að það hafi

¹⁾ Árið 1900 hafði nálega helmingur allra fjölskyldna í öllum þrússnesku bæjunum ekki önnur húsakynni en 1 herbergi og eldhús eða minna. Conrad Handw. v. Staatsw. „Wohnungsfrage“.

ekki allskostar góð áhrif á þá kynslóð, sem elst upp í bæjunum, að lifa við svo lítinn kost. Sjúkdómar eru hér miklu tíðari en í þeim borgarhlutum, sem efnaðir menn búa í, og manndauðinn ferfaldur.¹⁾ Fólkið sem elst hér upp nær miklu minni líkamlegum þroska en þeir sem betur eru settir;²⁾ andlega er það ekki betur sett, siðleysi og hverskonar spilling algeng.

Þegar þess er gætt, að fólkið streymir stöðugt til bæjanna og það svo að liggur við landauðn í sveitum, að meira en helmingur alls landslýðs býr víða í borgum, þá er augljóst, að hér er mikil hætta á ferðum fyrir alt þjóðfélagið. Þetta hefir lengi verið góðum mönnum áhyggjuefni, en til skamms tíma sáu þeir engin ráð til þess að bæta úr þessu. Það var ekki annað sýnilegt en að mannfélagið væri komið á þann glötunarveg, sem hlyti fyr eða síðar að leiða til tortímingar. Borgirnar voru orðnar einskonar Sfinx sem lagði þá gátu fyrir mannkynið, sem líf þess lá við að leysa. Allir stóðu ráðalausir og horfðu á borgirnar vaxa hraðfara með ári hverju, streyma einsog hraunflóð yfir blómleg héruð, hylja akra og engi með ófrjórri steinstorku, hreysum bláfátækra kotunga, höllum auðmannanna og rjúkandi verksmiðjureykháfum.

Umbóta-tilraunir. Því fór fjarri, að starfsömu menningarþjóðirnar horfðu á þetta aðgjörðalausar. Alt ástandið var vandlega rannsakað og mörg járn voru sett í eldinn til þess að ráða bót á þessu. Borgirnar gerðu byggingasamþykktir sínar strangari, kröfðust þess að götur væru framvegis gerðar breiðar og húsagarðar miklu riflegri, stór auð svæði voru skilin eftir og fagrir lystigarðar gerðir þar, jafnvel heilir lökustu borgarhlutarnir rifnir

¹⁾ Í þéttbýlustu götunum í Birmingham dóu 1901—1906 42,0 af hverju þúsundi íbúa, en í Bournville, fyrirmyndarborg rétt hjá, 7,4. Conrad: Handw. Wohnungsfr.

²⁾ Af 11.000 mönnum á herþjónustualdri reyndust t. d. í Birmingham 8000 ófærir. Í iðnaðarhéruðunum (bæjum) þýzku koma 104 herfærir menn á móts við 187 í sveitahéruðunum (Ballod).

niður og byggðir upp á ný. Verksmiðjunum með öllum þeirra reyk og óprifnaði var vísað í sérstaka hluta borganna og ströng aðgæzla höfð á, að bæði væri þeim svohaganlega komið fyrir sem kostur var á og alls þrifnaðar gætt. Lögboðið var hve húsakynni manna skyldu vera stór að rúmmáli, til þess að þau mætti leigja, og sérstakir umsjónarmenn settir með íbúðum, er skyldu gæta þess, að fleiri hrúguðust ekki saman í hverja íbúð en hóflegt væri. Er nú svo komið, að nálega helmingur alls bæjarstæðisins í nýjum borgarhlutum er óbyggður, annaðhvort götur, torg eða lystigarðar, auk sjálfra húsagarðanna. Með þessu hefir það unnist á, að manndauði hefir víðast minkað til mikilla muna, og það svo, að í góðum borgahlutum er hann litlu meiri en í sveitum¹⁾, og að sjálfsögðu hefir alt útlit borganna batnað á margan hátt. Sumir bæir tóku til að byggja hús hundruðum saman fyrir fátækt fólk og leigðu þau með sanngjörnu verði, keyptu heilar landspildur til þess að þær lentu ekki í höndum fasteignabraskara og hækkuðu gegndarlaust í verði. Félag risu upp til þess að koma upp góðum húsum fyrir verkamenn, og auðmenn styrktu þau öfluglega²⁾. Jafnframt þessu prédikuðu ótal blöð og bækur það látlaust, hve varhugavert það væri að yfirgefa sveitirnar og flytjast til borganna. Sveitamönnum var jafnvel í sumum löndum gerður sá mikli greiði, að leggja allhátt innflutn-

¹⁾ Abel: Handb. d. prakt. Hyg. I. bls. 25 telur (eftir Ballo d) meðalaldur nýfædds sveinbarns í prússnesku borgunum 38,7 en í prússn. sveitunum 42,8.

²⁾ Í Philadelphíu (U. S.) einni störfuðu t. d. 600 byggingafélög 1890. Manndauði í nýju húsunum var fjórðungi minni en í New York. Í Englandi og Þýskalandi er aragrúi af slíkum félögum, í Danmörku og víðar. Víða hefir það þó skrykkjótt gengið að þessi fyrirtæki kæmu að tilætluðum notum. Ef fátæklingar héldust á annað borð við í húsunum, leigðu þeir og bjuggu sjálfir eftir sem áður í einu herbergi eða tveimur, til þess að húsaleigan yrði sem ódýrust, en oft vildu húsin ganga úr greipum þeim og lentu hjá bjargálmönnum, sem þau voru ekki upphaflega ætluð.

ingsgjald á sveitaafurðir, til þess að þær héldust í hærra verði.

Þýðingarlausar voru þær ekki þessar ráðstafanir. Þær bættu úr ástandinu á ýmsan hátt og hindruðu að það færi hriðversnandi. Þó höfðu þær engin róttæk áhrif, gátu ekki breytt aðalatriðunum. Eftir sem áður streymdi fólkið til borganna. Háa kaupið, vonin um að geta orðið sjálfstæður maður, atvinna borganna og skemt-anir þeirra höfðu sama valdið yfir hugum manna og áður. Vöxt borganna gat enginn hindrað og borgafátæktina ekki heldur, jafnvel ekki borgapröngbýlið. Þrátt fyrir öll lög og fyrirmæli voru hібýlaprengslin víða svipuð hjá öllum fjölda fátæklinganna eftir sem áður. Efnin leyfðu ekki að leigja sæmileg húsakynni og umsjónarmennirnir kynukuðu sér við að reka fólkið út á götuna. Þó götur og auð svæði stæckuðu um allan helming, þá var marglyftu húsunum hrúgað á húsareitina og hібýlaprengslin hóflaus hjá öllum fjölda manna. Í þéttbýlu hverfunum var krankfelt mjög og manndauði mikill, líkamlegur þroski stórborgarbúa var hálfu lakari en í sveitum (árið 1900 voru 40 % herfærir af Berlínarбúum móti 82 % í prússnesku sveitunum) og tala fæddra barna fór minkandi ár frá ári í fjölda borga. Borgasfinxinn lagði eftir sem áður sína spurningu fyrir allar síðaðar þjóðir: Hvernig verður undan því flúið, að mannkynið úrættist í þessum risavöxnu, sólarlausu, sívaxandi borgum?

Saltaire. Maður er nefndur Titus Salt (Solt). Hann var auðmaður enskur og verksmiðjueigandi. Hafði hann komist upp á að gera verðmæta dúka úr Alpacaull af Lamadýrum og reisti dúkaverksmiðjur miklar nálægt Shipley við Aireána nálægt Leeds, til þess að vinna þar Alpacadúka. Hann keypti þar um 1850 miklar lendur utanborgar og bygði með ráði góðra byggingafræðinga verksmiðjur sínar og heilt þorp fyrir vinnulýðinn skamt frá verksmiðjunum. Var þess þó gætt, að reykurinn frá þeim yrði ekki þorpsбúum til бага. Sjálf verk-

smiðjuhúsin lét hann gera bæði fegurri og heilnæmari en þá þektist, en sérstaklega lét hann sér ant um, að hús vinnumanna sinna væru vel úr garði gerð, nægilega rúmgóð, hentug til íbúðar, nytu vel sólar og litu auk þess smekklega út. Húsin bygði hann samföst í löngum röðum, tvílyft, en ætlaði hverri fjölskyldu hús fyrir sig og dálitinn matjurta- eða blómagarð að húsabaki. Milli bakhlíða húsanna lá svo stigur sem flytja mátti eftir kol o. fl. að húsunum en ösku og sorp burtu án þess að óþægindi yrðu að. Á neðra gólfi í hverju húsi var rúmgott íbúðar eldhús, sem borða mátti í og búa í að mestu leyti, þvottaklefi með baðáhöldum, búr, vatnssalerni o. fl., en á efra gólfi 3 svefnherbergi, eitt fyrir hjónin, annað fyrir dætur og þriðja fyrir synina. Kjallari fylgdi hverju húsi. Húslengdin sem að götunni sneri, var 5,20 m., breiddin 7,60 (um 9 al.×12 al.). Smávaxin voru hús þessi, en vel vönduð og nægileg fyrir eina fátæka fjölskyldu. Herbergin voru björt, nutu vel sólar og hver fjölskylda hafði alt sitt fyrir sig. Húsaleigan var tæpar 2 kr. á viku eða rúmar 100 kr. á ári. Þá voru og nokkur húsin stærri. Þau voru ætluð umsjónarmönnum⁹ verksmiðjanna og öðrum, sem ekki létu sér litlu húsin nægja.

Þorpið Saltaire, sem Titus Salt bygði banda verkamönnum sínum, slagaði nokkuð upp í Reykjavík, því í verksmiðjunum unnu 3000 manns. Þurfti því að sjá öllu þessu fólki fyrir fleirum nauðsynjum en íbúðarhúsum. Fram undan miðju þorpinu lét hann reisa vandaða skóla, annan fyrir pílta og hinn fyrir stúlkur. Þar reisti hann og mikið bókasafn með ágætum lestrarsölum og hverskonar þægindum. Gaf hann til þess fjölda bóka, einkum heimspekilegs efnis og þær sem lutu að ýmsum þjóðfélagsmálum og endurbótastarfi. Hann nefndi það heimspekisstofnunina. Kirkjur lét hann gera veglegar, gamalmennahæli fyrir uppgjafavinnufólk, matsölu og veitingastaði fyrir ógifta, en áfengi var þar hvergi veitt. Þá voru og leikvöllir gerðir fyrir unga og gamla og smábletti gátu þeir fengið til ræktunar gegn vægu gjaldi, sem þess óskuðu.

Og öllu þessu kom Titus Salt svo smekklega og skipulega fyrir, að fyrirmynd var það á þeim tímum. Sjálfur átti hann landið og öll húsin. Bæði þurfti hann á þeim að halda fyrir vinnumenn sína og svo hefir hann ef til vill óttast, að óðara en þau yrðu einstakra manna eign og færðu að ganga kaupum og sölum, myndu þau hækka stórum í verði, húsaleigan hækka um allan helming og þungur skattur leggjast á fátæka verkalýðinn. Undir þennan leka mátti setja með því að selja hvorki hús né land. Hann gat þá jafnframt hindrað, að óhæfilega mörg hús yrðu byggð á landareigninni. En leiguna setti hann svo lága sem kostur var á. Leigjendum sínum bannaði hann að leigja öðrum út herbergi, svo ekki yrði of þröngt í húsunum.

Þetta var um miðja síðastliðna öld og var þá eins dæmi. Þó önnur þorp hafi risið upp síðar sem taka Saltaire langt fram, þá eru það að miklu leyti sömu hugsjónirnar sem hafa ráðið mestu. Saltaire hefir þrífist vel, en þó hefir Titusi Salt skjátlast í einu meginatriði. Hann byggði þorp sitt fyrir utan Shipley bæinn, bæði til þess að vera laus við reyk og ókosti stóru bæjanna og fá ódýrara land. Nú hefir Shipley vaxið svo, að Saltaire er orðið innilukt, orðið innilyksa í stórbænum, sem spýr reykjarmökknum yfir vinnumannabýlin, heimspekisstofnunina og önnur verk Titusar Salt!

(Frh.).

Guðm. Hannesson.

Frú Teresa Fenn.

Saga frá Vancouver, B. C.

Eftir

J. Magnús Bjarnason.

Einhver sú einkennilegasta, undarlegasta, og — fyrir margra hluta sakir — ein hin merkilegasta kona, sem eg hefi nokkurn tíma komist í kynni við, var *frú Teresa Fenn*. Við (eg og konan mín) kölluðum hana jafnan *Tárfinnu*, þegar við töluðum um hana okkar á milli. Okkur fanst það einhvernvegin vel viðeigandi, og henni sjálfri þótti það fallegt nafn, þegar við sögðum henni frá því.

Það var haustið 1912, að við fyrst sáum þessa konu. Við vorum þá búin að vera rúmt hálft ár í Vancouver í British Columbia, og höfðum búið í húsi á Bismarkstræti, en vorum nú nýflutt í húsið nr. 2075 á *Third Avenue East*. Það stóð hátt í hlið, eða næstum upp undir brún á hinni svokölluðu »Bröttu-brekku« í *Grandview*, sem er austurhluti Vancouver-borgar. Þaðan er útsýni fagurt, og loftið hreinna og heilnæmara en niðri í borginni við sjóinn. Þétt við hliðina á okkar húsi, að vestan, stóð hús það, er Teresa átti heima í. Það var fremur lítið, með »bungaló«-lagi, og minti á japanskt sveitabýli. Í kring um það var hreinlegt: dálítill grasbali að framan, ofurlítill kálgarður á bak við það, og nokkrir blómsturpottar á veggsvölunum og í gluggakistunum. — Gluggatjöldin voru sérlega dýr og vönduð, en húsmunir allir fornfálegir, að undanskildu litlu skrifborði, úr mahóní-viði, og bóka-skáp, sem stóð í framherberginu.

Teresa var um þritugt. Afmælið hennar var í júlímánuði, ef eg man rétt. Hún var meðalkona að hæð, en framúrskarandi grannvaxin og mögur; og fötin fóru henni aldrei vel. Hún hafði langa og mjóa og veiklulega fingur. Hárið var hrafnsvart og ákaflega mikið. Hún var nokkuð dökk á hörund, eins og sveitakonur á Suður-Ítalíu, og hafði þunt andlit, lágt enni, hátt og beint nef, fremur fallegan munn, og stór dökkgrá, gáfuleg augu, ósegjanlega djúp og fögur. En á hægri kinninni, rétt fyrir neðan augað, voru tveir litlir, hvítir deplar, eins og líkprárblettir, sem sýndust langt til að sjá eins og tárðropar, og breiddu þeir angurværðarblæ yfir þetta einkennilega andlit, hægra megin. Og þess vegna kölluðum við hana *Tárfinnu*, þegar við töluðum um hana okkar á milli. — Hún bauð af sér góðan þokka, þó hún væri svona grönn, og svona mögur, og andlitið svona þunt. Það var eitthvað við hana, sem var aðlaðandi, eitthvað saklaust, viðkvæmt, stórgáfað, en — kjarklítið. Hún var vel máli farin, röddin mjúk, hrein, snjöll og elskuleg; og hún horfði jafnan beint í augu þess, sem hún talaði við.

Maðurinn hennar hét *Ernest Fenn*, af skozk-írskum ættum. Hann var tólf árum eldri en hún. Þau voru búin að vera saman í hjónabandi í rúm níu ár, þegar hér var komið sögunni, en þau höfðu aldrei eignast barn. Herra Fenn hafði á hendi fasteignasölu í Vancouver, en gekk það stíðlega, sat á »klúbbum« lengi fram eftir á kvöldin, og hirti lítið um heimilið. Hann mátti heita hrottamenni, var stór vexti, rauðhærður, hátalaður, þrætugjarn og óvorkunnsamur. Hann hafði verið málmnemi á yngri árum, og verið lengi í Klondike, og hafði grætt þar allmikið fé, sem nú var óðum að ganga til þurðar. Oft var hann hranalegur í viðmóti við konu sína, og hún var á stundum hálfhrædd við hann, þó hún á hinn bóginn virtist unna honum hugástum. Hún var katólskrar trúar, og sótti kirkju alla helga daga, og hlýddi bókstaflega öllum reglum og siðvenjum þeirrar kirkju, bragðaði aldrei kjöt á föstunni, las daglega allar þær bænir, sem fyrir-

skipaðar voru, játaði yfirsjónir sínar fyrir prestinum, eins oft og tilhlýðilegt þótti, og greiddi kirkjunni rækilega það, sem henni bar að gjalda. — En herra Fenn var aftur á móti enginn trúmaður, og sótti aldrei kirkju, og honum var meinilla við það, að presturinn kæmi í hús hans. Hann var þá öflugur. »Farðu og festu þér konu, eins og hver ærlegur maður,« sagði hann löngum við prestinn, »og farðu að búa; en hættu þessu bannsetta betli.« — Þá gjörði Teresa jafnan krossmark fyrir sér, og daginn eftir var hún grátbólgin.

Daginn, sem við fluttum í húsið nr. 2075 á *Third Avenue East*, sáum við þessa konu iðulega úti á veggsvölunum á húsi sínu. Hún virtist veita okkur og húsmunum okkar mjög nákvæmar gætur; og okkur sýndist augnaráð hennar lýsa því, að henni stæði hálfgjörður stuggur af því, að við flyttum í nágrennið við hana. Og álitum við að það kæmi til af því, að hún heyrði og sæi að við værum útlendingar.

Næsta dag kom hún til okkar yfir á grasflötinn fyrir framan húsið, stóð þar þegjandi nokkur augnablik og horfði á konuna mína, og kastaði svo á okkur kveðju, hálfheimnislega, hálfflóttalega og lágt, en bauð þó um leið af sér einhvern unaðspökka, sem dró okkur undir eins að henni.

»Eruð þið sænsk?« sagði hún hikandi, eftir að hafa minnst á það, hvað veðrið var gott.

»Nei,« sögðum við.

»Maðurinn minn hélt það þó,« sagði hún, »en honum er í nöp við Svía.« Og það var eins og henni yrði léttara um andardrátt.

»Einmitt það?« sagði eg.

»Eruð þið þá hollenzk?« sagði hún brosandi og færði sig nær konunni míni.

»Ekki það heldur,« sagði eg; »við erum islenzk.«

»Íslenzk?« sagði hún og horfði á mig stórum augum. »Ert þú kominn af hinum fornu víkingum, sem bygðu Ísland á níundu öldinni.

»Já,« sagði eg.

En það var eins og hún ætti bágt með að trúa því. Henni þótti eg vist ekki vera nógu vígmannlegur né vöxtulegur til að vera afkomandi víkinganna norrænu. — En mig undraði það mjög, að hún skyldi vita, að Norðmenn bygðu Ísland á níundu öld.

»Þú þekkir vist eitthvað til hinna fornu norrænu bókmenta?« sagði eg.

»Ekki vitund«, sagði hún; »hefi að eins lesið um víkingana í nútíðar skáldsögum. Og líka hefir mér verið sagt að þeir hafi fyrstir allra hvítra manna fundið Ameríku. Það atriði hefir fyrir löngu vakið eftirtekt mína af ástæðum, sem eg kæri mig ekki um að nefna að sinni. En eg veit, að eg mundi, fyrir margra hluta sakir, hafa mikið yndi af að kynnast afkomendum þeirra«.

Hún horfði út í bláinn um stund, eins og hugur hennar hefði hvarflað til fjarlægra landa.

»Þið hafið valið ykkur gott hús og góðan stað«, sagði hún alt í einu, eins og hún vaknaði af draumi; »hlíðin herna veit svo vel við hafrænunni og sólarlagi, og héðan er yndis-fagurt útsýni. Maður sér yfir alla borgina, út á höfnina, yfir til Norður-Vancouver og yfir alt *Stanley Park*, skemtigarðinn fagra. Og svo sér maður, svo undur vel, alla ljósa-dýrdina á kvöldin. Maður sér líka blessuð fjöllin fyrir norðan og norðaustan með öllum sínum kynja-myndum: »Ljónunum«, »Rjúpunni«, »Fílunum«, og »Tigrisdýrunum«. — En ef til vill sér enginn »Fílinn« og »Tigrisdýrin«, nema eg og hún Pauline Johnson, skáldkonan góða — hún *Tekahionwake* — blóm og kóróna Indíánanna í Kanada. — En nú er hún veik — hin fríða, elskulega *Tekahionwake* er veik, og liggur fyrir dauðanum — hún er að deyja — deyja — **deyja!** — Heilaga guðsmóðir! — Liljan í dalnum er fölnuð og — er að deyja!«

Það komu krampadrættir í kringum munninn, það komu tár í augun hennar, og það setti að henni grát með

sárum ekka. Hún sneri sér frá okkur og hljóp yfir í húsið sitt.

»Þetta er undarleg kona og mjög taugaveikluð«, sagði konan mín.

Tveimur dögum síðar kom hún aftur til okkar, og kom þá inn, og gjörði sér eitthvað til erindis. Hún var að sjá glöð og hress, og talaði um eitt og annað.

»Hvaðan ertu?« spurði eg stuttu áður en hún kvaddi.

»Frá Michigan í Bandaríkjunum«, svaraði hún. »Eg er fædd í Detroit, gekk þar á nunnu-skóla, og giftist þar«.

»Og hvað ertu búin að vera lengi hér í Vancouver?« sagði eg.

»Hálft annað ár«, sagði hún, »en sjö ár alls á Kyrrahafs-ströndinni, á ýmsum stöðum. Við erum sjaldan lengi í sama stað, því maðurinn minn er hálfgjörður æfintýramaður: gullnemi, fasteignasali, og — alt mögulegt«.

Hún brosti raunalega.

»Hefirðu kunnað vel við þig hér á ströndinni?« sagði eg.

»Já, að mörgu leyti mæta vel. — Eg kom hingað vestur með þeim ásetningi að græða — græða heilsu, og safna kröftum, og verða sterk. Og gróðinn kom undrunarlega fljótt. Fjallaloftið og hafgolán áttu vel við mig, og gáfu mér nýjan þrótt. — Ströndin hérna sýndi mér altaf nýjar og nýjar myndir á fjallahnjúkunum, og í skördunum, og í gljúfrunum. Litirnir eru hér svo makalaust skýrir og hreinir: fjallatindar mjallhvítir, dimmbláar hliðar, og æfgrænir skógar. Það laðaði mig strax að þessari strönd. Og þar að auki á hér hvert annes, hver hólmi, hver vogur og vík sína sögu, bæði forna og nýja. Það hændi mig líka að þessu undra-landi. En Vancouver-borg náði þó á mér sterkustu tökunum. Hún hafði flest bjargráð fram að bjóða; hún var lífvænlegasti staðurinn á allri ströndinni fyrir mig og manninn minn; og svo var líka Huldus-kógur hér svo nærri, sem mig langaði mjög til að kanna; — nei, mig næstum langaði til að villast þar í þokunni og rata í æfintýri, langaði til að leysa einhvern frið-

an konungsson úr álögum, og láta einhvern ungan *Kapílanó* segja mér sögur af Indíánaköppunum frægu, og —

Hún þagnaði og horfði um stund út í bláinn. En alt í einu kiptist hún við og fórnaði höndum.

»Heilaga guðsmóðir!« hrópaði hún, og það var grátstafur í röddinni. »Nú er enginn *Kapílanó* lengur til, sem segir sögur af hinni fornu frægð hins rauga manns — nei, enginn Indíanahöfðingi, sem borið getur það nafn með réttu. — Hann er dáinn, dáinn, hann *Kapílanó* er dáinn!«

Og aftur greip hana krampadráttur í kringum munninn, og það setti að henni sáran grát með áköfum ekka og andköfum, eins og í fyrra skiftið, sem við töluðum við hana. — Hún tók báðum höndum fyrir andlitið, hljóp út úr húsinu og fór heim til sín.

»Hún er, ef til vill, skáldkona«, sagði konan mín.

Þegar leið fram á haustið, og þokur og vætur gengu í garð, og dagarnir fóru að styttest, þá kom Teresa yfir í húsið til okkar á hverjum einasta degi (nema sunnudaga), og stundum oft á dag. Og sum kvöld sat hún hjá okkur svo klukkutímum skifti. Hún var alt af að verða okkur meir og meir samrýnd, og okkur fór brátt að þykja mjög vænt um hana, eins og hún væri systir okkar eða dóttir.

»Mér leiðist að sitja altaf ein heima«, sagði hún á stundum, þegar hún kom; »maðurinn minn fer ávalt í burtu í býtið á morgnana, og kemur ekki heim aftur, fyr en um miðnætti. Og þess vegna finst mér eg altaf vera ein — ein — svo óttalega ein!« Hún varpaði mæðilega öndinni, og krampa-drættir komu í munnvikin.

Teresa var á stundum undur barnaleg í framkomu, eins og henni fyndist hún alt af vera dálítil stúlka, tíu eða tólf ára. Það lá jafnvel stundum við, að hún væri ofurlítið brekagjörn og kenjótt. — Hún vildi helst sitja nærri bókaskápnnum mínum, eða krjúpa niður fyrir framman hann og skoða bækurnar, einkum á daginn, þegar eg var ekki heima, og konan mín var önnum kafin við húsverkin. Oft sat Teresa á gólfinu með myndabók í hönd-

unum, skoðaði hverja mynd með mikilli eftirtekt, og raulaði fyrir munni sér einhverja gamla, einkennilega vögguvísi; og það var angurværð í röddinni. En stundum sat hún í hægindastól, eða hallaði sér út af á legubekkin, og las af kappi. Og það var oft eins og hún væri að leita að einhverju sérstöku — orði eða málsgrein — sem hún ætti von á að væri í einhverri bókinni í skápnum mínum.

En þegar hún sat hjá okkur seint á kvöldin, einkum um skammdegis-skeiðið, þá vildi hún hvergi vera, nema við arin. Þá var það jafnan, að hún bað mig að segja sér sögur um Ísland og íslenzku þjóðina, um víkingana og sjóferðir þeirra, um fund Vínlands, og um alla þá Norðmenn og Íslendinga, sem fornsögurnar íslenzku geta um að farið hafi til Vínlands; einkum þó sögur um þá menn, sem til Vínlands fóru og aldrei komu heim aftur. Hún var sérlega sölgin í þessar sögur — hana hungraði og þyrsti í þær, ef svo mætti að orði kveða — og hún fékk aldrei nóg af þeim.

Eg sagði henni þessar sögur oftast á áttunda og níunda tímanum á kvöldin, þegar við þrjú (Teresa, konan mín og eg) sátum við arin, og aðeins hálf-bjart var í stofunni af glæðunum fyrir framan okkur. Og stundum kraup Teresa þá niður við fætur konunnar minnar og hélt í hönd hennar; en oftast sat hún þó við hlið hennar og hallaði höfðinu að brjósti hennar, eins og barn við móðurarm. — Hún hlýddi á hugfangin og með mestu eftirtekt, og horfði í eldinn, eins og hún sæi þar alt, sem getið var um í sögunni. — Og oft varð eg að segja henni söguna af Birni Ásbrandssyni (Breiðvíkinga-kappa), og mannum, sem sendi gullhringinn og sverðið til Íslands, og kvaðst vera meiri vinur húsfreyjunnar á Fróðá, en goðans á Helgafelli.

»Og þú hlýtur að kunna enn eina sögu um Norðmann, eða Íslending, sem fór til Vínlands og kom aldrei heim aftur«, sagði hún oft og einatt, og það var þá stundum óstillingarhreimur í rödd hennar, eins og hún álit, að eg vildi ekki segja henni »beztu söguna«. Og

þegar eg reyndi að fullvissa hana um það, að eg kynni ekki fleiri sögur um það efni, þá bað hún mig að segja sér á ný söguna af Birni Ásbrandssyni, eða manningum, sem sendi gullhringinn og sverðið til Íslands.

Það var snemma í nóvember-mánuði, 1912, að við útvegudum henni »*The Prodigal Son*«, eftir Hall Caine. Hún grét yfir þeirri sögu, en kvaðst ekki geta fengið glögga hugmynd um íslenzkt sveita-líf af þeirri bók. — Við sögðum henni nú frá »Pilti og stúlku«, en áttum ekki þá sögu á ensku. Hún bað mig að reyna um fram alla muni, að útvega sér söguna í enskri þýðing. Eg leitaði í öllum bókabúðum í Vancouver, en sú saga var þar ekki til. Loksins fengum við bóksala einn til að panta hana frá Lundúnum á Englandi, og liðu um fimm til sex vikur þangað til bókin kom, og beið Teresa eftir henni með mikilli óþreyju. En á meðan las hún »*Letters from High Latitudes*«, eftir Dufferin lávarð, ferðasögu frú Leith, og ýmsar smá-ritgjörðir um Ísland, sem hún hafði fundið í dagblöðum og timaritum. — »Pilt og stúlku« las hún með mikilli athygli, og fékk þá fyrst verulega hugmynd um Ísland og Íslendinga, eftir því sem hún sagði okkur.

Í febrúar-mánuði, 1913, tók hún með alvöru að lesa þær af Íslendinga-sögunum, sem hún gat fengið á ensku. Fyrst las hún Gísla sögu Súrssonar, þar næst Grettis-sögu, þá Njálu, þá Ólafs sögu Tryggvasonar og sögu Ólafs konungs hins helga. Eftir það las hún um tíma alt, sem hún gat fengið á ensku um fund Vinlands og siglingar hinna fornu Íslendinga vestur um haf. — En reyndar sló hún slöku við lesturinn um tíma, um það leyti, sem skáldkonan góða, Pauline Johnson, dó. Hún dó í Vancouver voríð 1913. Teresa hafði meiri mætur á henni heldur en nokkrum öðrum rithöfundum í Kanada, og ef til vill að nokkru leyti vegna þess, að hún var af Indíána-kyni, því faðir skáldkonunnar var Indíána-höfðingi. Og Teresu var alt af mjög hlýtt til Indíána af ástæðu, sem lesarinn fær bráðum að vita.

»Eg er hálf-hrædd við þessar heiðnu sögur ykkar«, sagði Teresa einu sinni við mig.

»Af hverju kemur það?« sagði eg.

»Af því það er svo mikið blóð á þeim«, sagði hún; »drengskapurinn er þar að visu öðrum þræði, en samt er alt of mikið blóð á þeim«. Og það fór hrollur um hana.

»Það er líka blóð á sögu kristninnar«, sagði eg.

»En það er blóð píslarvottanna«, sagði hún.

Öðru sinni sagði hún:

»Draumarnir mínir eru að breytast. Áður dreymdi mig oft Mariu mey og postulana, en nú dreymir mig iðulega þá Gunnar, Skarphéðin og — Gretti. — Eg er hrædd um að eg sé að brjóta boðorðin með því, að lesa þessar sögur; en eg þori þó ekki að segja prestinum frá því«.

»Íslendinga-sögurnar eru að styrkja taugar þínar«, sagði eg brosandi.

»Sé sögur þessar hressingarlyf«, sagði hún, »þá held eg áfram að lesa þær — í drottins nafni«.

Þegar komið var fram í júní-mánuð þetta ár (1913), tók Teresa á ný, og það með miklum áhuga, að kynna sér forn-íslenzkar bókmentir, og var nú ekki lengur ánægð með að lesa þær í þýðingum, heldur fór hún nú að leggja stund á að nema íslenzka tungu.

»Það er um mig«, sagði hún, »eins og frúna í Shalott, að eg er orðin hálf-þreytt á eintómum skuggamyndum. Mér nægja ekki lengur þýðingar; eg þarf að lesa um þetta alt á sjálfu frum-málinu«.

Við útveguðum henni nú orðabækur G. T. Zoëga, og fyrstu tvær lesbækurnar íslenzku, og hjálpuðum henni alt, sem við gátum; og sótti hún námið af mesta kappi. — Hún var svo fljót að nema, og minnið var svo gott, að undrum sætti. Hún var svo fljót að átta sig á beygingum íslenzkra orða og edli tungunnar yfir höfuð, og svo undrunarlega fljót að læra að bera orðin rétt fram, að við urðum alveg hissa. — En vafalaust hefir það hjálpað henni nokkuð, að hún þekti undirstöðu-atriði latneskrar málfræði.

»Það er rétt eins og hún sé íslenzk«, sagði konan mín.

Og með köflum lá mér við að halda það, að hún hefði hlotið einhverja ofurlitla tilsögn í íslenzku, áður en við kyntumst henni. — En það mun ekki hafa verið.

Vorið 1914 var hún komin svo vel niður í að lesa og skilja íslenzku, að hún gat haft góð not af íslenzkum nútíðar skáldsögum, og fréttagreinum í dagblöðunum íslenzku. En við höfðum alt af gát á því, að það, sem hún las, væri aðallega eftir þá höfunda, sem alment er álitid, að bezt og réttast riti íslenzku.

Þegar hér var komið, var hún búin að taka ástfóstri við ritverk þriggja núlifandi íslenzkra höfunda, sem heima eiga á Íslandi; og sömuleiðis þótti henni strax mjög vænt um ljóðmæli einnar íslenzku skáldkonunnar. Af þessari skáldkonu áttum við mynd, sem hékk yfir bókaskápnunum mínum. Teresa horfði oft lengi á myndina, og var þá von að segja:

„Eg elska þessa konu! — Og haldið þið, að það myndi gleðja hana, ef hún vissi, að eg væri að læra móðurmálið hennar fagra?“

„Já, eg er alveg viss um að það myndi gleðja hana mikið“, sagði konan mín.

Og Teresa brosti þá eins og lítil stúlka, sem hrósað er fyrir að hafa gjört eitthvað vel. — Myndin af íslenzku skáldkonunni hékk líka á veggnum í setustofunni hennar (Teresu) í vandaðri umgjörð.

Henni fór brátt að þykja vænt um alt íslenzkt: landið, þjóðina, bókmentirnar, viss bygðarlög, vissa menn og konur, og vissar bækur. Til dæmis þótti henni einna vænst um »Eyrbyggju« af öllum Íslendinga-sögunum, og af öllum þeim mönnum og konum, sem getið er um í þeim sögum, þótti henni lang-vænst um Mulkorku og Björn Ásbrandsson, Breiðvíkinga-kappa.

Vorið 1915 var hún — þó undarlegt megi virðast — komin svo vel niður í fornmalinu, að hún gat lesið og skilið Íslendingasögurnar, ef til vill eins vel og margur alþýdumaður á Íslandi. Og hún átti orðið allar Íslendinga-sögurnar og fornsögur Norðurlanda í skrautbandi og

þar að auki fjölda annara íslenzkra bóka, ásamt mörgum myndum af íslenskum merkismönnum.

Það var eitt kvöld (í febrúarmánuði, 1915, ef eg man rétt), að Teresa sat, sem oftast, hjá okkur í litlu setustofunni. Úti var ömurlegt, þetta kvöld, dimt, blautt og kalt, og stormurinn stundi á húspakinu. Inni hjá okkur var notalegt og hlýtt, því eldur brann á arni. Við sátum þrjú saman, skamt frá eldinum, og horfðum á logana. Við kveiktum ekki á rafmagns-lömpunum, en létum okkur nægja birtu þá, sem lagði af eldinum. Stundum var því hálf-dimt inni, en stundum glóbjart, eftir því, hvernig logaði á skíðinu á arninum. — Og skuggarnir okkar voru á sífeldu flakki um herbergið, ýmist daufir, en með köflum svartir, stórir, afkáralegir og draugalegir.

Við þögðum öll nokkra stund, og eg tók eftir því, að Teresa var venju fremur utan við sig. Hún einblíndi á logana, og það var eins og hún sæi þar eitthvað alvarlegt, því hálfgjörður hræðslu-svipur breiddist með köflum yfir andlit hennar, sem sást svo vel af því, að hún sneri beint að eldinum. — Alt í einu hrökk hún við, leit til mín flóttalega og mælti:

»Eg sé hann alt af í eldinum — alt af — alt af! Er það ekki undarlegt, að eg skuli alt af sjá hann í eldinum?«

»Hver er það?« sagði eg.

»Nú, hvíti maðurinn tigulegi, vöxtulegi, með glóbjarta hárið — víkingurinn norræni, hetjan hugprúða — forfaðir minn!«

»Forfaðir þinn?« sagði eg. »Ert þú þá líka af norrænum ættum?«

»Já, forfaðir minn«, sagði hún dálítið æst og sneri baki að eldinum, svo skugga bar á andlit hennar. »Eg hefi alt af séð hann í hvert sinn, sem eg hefi horft í eld, síðan eg var á fjórtánda árinu, að hún móðir mín sagði mér söguna af honum — við eld. En mynd hans hefir tekið breytingum, síðan eg kyntist ykkur; því í fyrstu

sýndist mér hann hafa hár, sem féll í lokkum um herðar honum, og skegg, sem tók honum ofan á bringu. En nú hefir hann stutt hár, og er alveg skegglaus. — Andlitið er þó hið sama, sami vöxturinn, og allar hreyfingar hinar sömu og áður. Hann er í brynju, hefir hjálm á höfði, og stórt og fagað sverð í hendi. Það sækja að honum margir menn — það eru alt Indíánar — og þeir falla unnvörpum fyrir honum; en það fyllist í skarðið jafnóðum. Það sækja fram að honum nýir og nýir herskarar, en — hann er altaf einn síns liðs. — Ó, þetta er alt svo óttalegt! En þó er það hrifandi, því eg veit, að ung kona kemur og bjargar honum. — Hana sé eg samt aldrei í eldinum. — Æ, segðu mér nú fallega sögu, svo eg gleymi þessu í svipinn!»

Hún leit til mín og brosti barnalega og um leið raunalega.

»Nei,« sagði eg, »nú verður þú endilega að segja okkur sögu. — Þú segir að móðir þín hafi sagt þér frá þessum manni, þegar þú varst á fjórtánda ári. En hver sagði henni um hann?»

«Amma mín — móðir hennar,« sagði Teresa; »og amma mín var Indíáni í báðar ættir, en þó ekki eins dökk á hörund og alment gjörist með Indíánum.»

»Var amma þín Indíáni?« sagði eg.

»Já,« sagði Teresa; »sérðu það ekki á andlitinu á mér — einkum í augnakrókunum — að eg er af Indíána-ættum? Og hafið þið ekki tekið eftir því, hvað mér tekur jafnan sárt til Indíánanna?»

»En það virðist líka sem þér taki sárt til Íslendinga og víkinganna gömlu,« sagði konan mín.

»Já,« sagði Teresa, »og það kemur til af því, að eg tel mig líka í ætt við þá.»

Við hjónin horfðum nú stórum augum á Teresu.

»Þú telur þig í ætt við Íslendinga?« sagði eg. »Var þá faðir þinn islenzkur? Eða var það afi þinn? — Og þú hefir leynt okkur þessu, allan þenna tíma!«

»Eg skal segja ykkur söguna um hvíta mann-«

inn, söguna sem móðir mín sagði mér, og amma mín sagði henni, og langamma mín sagði ömmu minni, og — jæja, eg skal segja ykkur söguna, því hún er ekki mjög löng.

»Og við skulum hlýða á, eins og börn á huldusögu,« sagði konan mín brosandi.

Eg glæddi eldinn á arninum og bætti á hann vænum greniviðar-bút. Og það snarkaði og small í honum. — Við drógum svo stólana ofurlítið lengra fram á gólfid, og sátum þannig, að Teresa sneri baki að eldinum, en eg og konan mín horfðum í hann. — En skuggarnir flögruðu um herbergið og drógu upp ýmsar kynjamyndir á vegginn. — Stormurinn veinaði og stundi á húspakinu, og miðsvetrar-regnið lamdi rúðurnar á austur-gluggunum.

»Vel og gott!« sagði Teresa, og eg man að hún leit í kringum sig, eins og hún væri ofurlítið hrædd við skuggana í herberginu. Og hún talaði lágt og hægt, eins og amma, sem segir börnunum álfasögur í rökkrinu. »Vel og gott!« sagði hún. »Svona er þá sagan«.

Og Teresa sagði okkur langa sögu, svo langa, að þegar henni var lokið, þá var grenibúturinn á arninum brunninn.

Aldrei, fyr né síðar, hefi eg heyrt nokkurn mann, né konu, segja eins vel frá. Við hjónin hlýddum á alveg hugfangin, undrandi, og vorum eins og í leiðslu frá því fyrst að hún byrjaði og þangað til hún lauk sögunni. Okkur fanst með köflum, að það ekki vera hin yfirlætislaus, hálf-feimna, istöðulitla Teresa, sem var að segja okkur þessa kynlegu sögu, heldur einhver frið og fögur og fræg leikmær, eða töfrakona, eða álfadrotning, því það var eitthvað það í rödd hennar og hreyfingum, sem hafði meiri áhrif á okkur, heldur en sjálf frásögnin — eitthvað, sem brá unaðsfullum ljúflingsblæ yfir alla söguna.

Og stundum fanst okkur að herbergið fyllast af ilm-sætu skógarlofti, og stormurinn fyrir utan verða ýmist að öldusogi við sanda, eða brimhljóði við klettótta strönd; og regnið, sem skall á gluggarúðunum, minti okkur af og

til á lauffall á haustnótt, þegar vindur fer um hlyn-
viðarrunn.

Mér kemur ekki í hug, að reyna til að segja söguna með líkum orðum, eða á líkan hátt, og Teresa, því mér væri það allsendis ómögulegt. — En um leið og sagan er svift hinu glæsilega orðavali, og hinum skáldlegu tilprifum, og ljúfa huldusögublæ, sem hún hafði, þegar hún var sögð, þetta kvöld, af hinni mjúkröddu og andríku Teresu, í hálf-dimmunni við arininn, þá missir hún (sagan) að mestu áhrif sín og gildi, og það má þá segja hana í fáum orðum á þessa leið:

Sagan af hinum hvíta manni og Vöndu kóngsdóttur.

Einu sinni í fyrndinni var Indíána-kóngsdóttir, sem Vanda hét. Hún var svo frið, að jafnvel sjálft tunglið í allri sinni dýrð, þegar það er rauðast, gat ekki komist í samjöfnuð við hana. Þegar hún fæddist, sást halastjarna mikil í norðaustri, og sögðu stjörnuspámenn að það táknaði það, að úr þeirri átt kæmi sá, er yrði eiginmaður hennar — glæsilegur og voldugur höfðingi. En með því að Vanda var fædd á Mikmakalandi, sem nú er nefnt Nýja-Skotland, þá þótti mönnum það næsta ótrúlegt, að mannsefnið hennar kæmi úr þeirri átt, því menn vissu ekki af neinu landi til norðausturs frá Mikmakalandi, nema Norðurljósa-eyjum; en tólf þúsund tungl höfðu kviknað og dáið frá því, að nokkur hafði komið þaðan. Faðir Vöndu var Kúma konungur hinn ríki, sem alment var kallaður Eldur-i-auga. Hann sór þess dýran eið við Sólar og Mána, að enginn skyldi fá dóttur sinnar, nema kóngssonurinn á Norðurljósa-eyjum. — Og svo liðu tímar fram. Sumar kom eftir vetur, og vetur eftir sumar. Rjúpan og hérinn höfðu fataskifti haust og vor; bifurinn bygði sér bæ; og híðbjörninn gekk til hvílu í lok laufvinda-mánaðar, svaf allan veturinn og saug hramminn. Og Vanda kóngsdóttir óx og dafnaði, varð allra kvenna friðust sýnum, og svo vitur, að hún las hvers manns hugsanir í augnaráði hans, og talaði við elginn og öndina á

þeirra eigin tungu. Þegar hún var gjafvaxta orðin, komu frægir kappar og kóngssynir að sunnan og vestan með ógrynni af fögrum fjöðrum, dýrafeldum, og öðrum kostagripum, sem boðlegir þóttu friðum kóngadætrum, og lögðu þá fyrir fætur hennar, þar sem hún sat við dyrnar á hinu konunglega *wigwam* (Indíána-tjaldi), og báðu þeir allir um hjarta hennar og hönd. En með því að enginn þessara frægu kappar og kóngssona hafði svo mikið sem augum litið hinar fjarlægðu Norðurljósa-eyjar, þá urðu þeir allir að halda heim aftur, konulausir og með sárt enni. — — — En svo bar það við eitt kvöld, síðla sumars, að menn sáu sjóskrimslu eitt mikið með gínanda gini stefna að landi. Stormur stóð af hafi, og brimið sauð og vall við hina klettóttu strönd. Mönnum stóð geigur mikill af skrimslinu, því þeir hugðu að það mundi ganga á land upp og gera skaða. En svo kom náttmyrkrið, og sást ekki lengur út fyrir landsteinana. Þegar dagaði, var skrimsluð horfið, en í þess stað sáuust ellefu ókunnir menn í fjörunni. Þeir voru allir hvítir sem vofur, höfðu glóbjart hár, sem féll í lokkum um herðar þeim, og allir höfðu þeir skegg, síð og breið. Þeir voru í síðum skyrtum úr einkennilegum vefnaði, sem vopn bitu illa á, og höfðu stálhúfur á höfði, en að öðru leyti fáklæddir, og að vopni hafði hver þeirra langa, beitta sveðju. Allir voru þeir vöxtulegir og vænir sýnum, en þó bar einn langt af þeim öllum, bæði fyrir vaxtar sakir og friðleiks, og þóttust menn vita, að hann væri foringinn. — Kúma konungur bað menn sína að grenslast eftir, hvert erindi þeirra væri. »Ef þeir fara með friði«, sagði hann, »þá viljum vér bjóða þeim heim í *wigwam* vort og reykja með þeim friðarpípuna; en fari þeir með ójöfnuð, þá skulum vér ekki fyr hætta, en þeir hafa allir líf sitt látið«. — Þegar þeir fundust (hinir hvítu menn og sendimenn Kúma konungs), þá skildu hvorugir aðra. Og allan þann dag var blóðugur bardagi háður niðri við sjóinn; en hvorir það voru, sem vöktu ófriðinn, segir sagan ekki. Um sólarlag voru allir hinir hvítu menn fallnir, nema foringinn. Hann

stóð einn uppi, og varðist enn lengi, og feldi margan mann, og var vörn hans lengi í minnum höfð. En eftir því tóku menn (þegar hann var orðinn einn eftir síns liðs) að hann sótti það fast, að komast út í sjóinn. Loksins varð hann yfirkominn af mæði og sárur, og gátu Indíánar þá fest á honum hendur og fært hann í fjötur. Næsta dag skipaði Kúma konungur að skera skyldi hjartað úr bandingjanum lifandi. »Vér höfum orðið fyrir manntjóni miklu af völdum þessa manns«, sagði Kúma konungur, »og má því ekki minna vera, en að vér fáum úr honum hjartað«. Menn gerðu góðan róm að þessari skipun konungs. En þegar að því var komið, að skera skyldi til hjartans á hinum hvíta manni, þá gekk hin friða og tigulega Vanda kóngsdóttir fram fyrir föður sinn og mælti: »Einnar bónar vil eg biðja þig, faðir minn«. »Hvað viltu?« sagði Kúma konungur. »Gefðu mér hjarta hins hvíta manns«, sagði hún. »Bæn þín er veitt, og njóttu vel«, sagði hann. »Viltu þá sverja þess dýran eið, faðir minn, að hjartað verði aldrei frá mér tekið?« Og Kúma konungur sór þess dýran eið við Sól og Mána, að hjarta hins hvíta manns skyldi aldrei frá henni tekið verða. »Skerið þá ekki til hjartans!« hrópaði Vanda kóngsdóttir og lagði hönd sína á brjóst hins hvíta manns. »Hví ekki að skera til hjartans?« sagði Kúma konungur og lét brúnir síga. »Af því að nú á eg þetta hjarta, og hefi þá trú, að það geymist bezt í brjósti hins hvíta manns«, sagði hún. »En maður þessi er óvinur vor, og hann má ekki lifa«, sagði Kúma konungur, og það brann eldur úr augum hans. »Faðir minn«, sagði Vanda kóngsdóttir, »það samir ekki konungi að rjúfa dýran eið. En ef þú lætur taka mann þenna af lífi, þá hefir þú ekki einungis rofið einn eið, heldur tvo; því vita skaltu, að þessi hinn hvíti maður er kóngssonurinn frá Norðurljósa-eyjum. Hann er hingað kominn til að færa mér hjarta sitt, og — þetta eru viðtökurnar«. Kúma konungur þagði langa stund og var hugsí. »Ekki er þér vitsins varnað,

dóttir mín«, sagði hann loksins, sté fram og leysti sjálfur böndin af hinum hvíta manni, og lagði hönd dóttur sinnar í hönd hans. »Njóttu vel, dóttir góð«, bætti hann við, »en mundu það, að þú verður aldrei drotningin á Norðurljósa-eyjum, því eg sver þess minn síðasta eið, og hinn dýrasta, að þið skuluð aldrei úr ríki mínu fara, hvorki lifandi né dauð«. — — — Og svo liðu tímar fram. Vetur kom eftir sumar, og sumar eftir vetur. Íkorninn safnaði vetrarforða á haustin, elgurinn feldi hornin, og refurinn gróf sig í fönn. Og Vanda kóngsdóttir og hinn hvítimaður unnust hugástum; þau bjuggu í hinu konunglega *wigwam*, áttu eina dóttur barna, og náðu hárri elli. — Og Vanda sagði dóttur sinni þessa sögu, og hún sagði hana aftur sinni dóttur. Og þannig barst sagan frá móður til dóttur, alla leið niður til *frú Teresu Fenn*. — — — En sögunni er ekki alveg lokið. Eitt lítið atriði er ennþá eftir, og það er svona: Einhverju sinni bar það við, nokkru áður en hinn hvítimaður dó, að þrír tugir fólleitra manna komu þar á land, og báðu Indíánar hann (hvíta manninn) að komast að erindi þeirra. Sat hann á tali við þá lengi dags, og fékk hann einum þeirra að skilnaði litla Indíána-öxi (*tomahawk*). Gekk hann síðan heim til konu sinnar og var um tíma á eftir þögull og þungbúinn. En ókunnu mennirnir hurfu, og vissi enginn, hvað af þeim varð. — Flaug nú saga sú um alt Mikmaka-land, að menn þessir hefðu verið samlandar hins hvítamanns, og hefðu þeir verið að leita að honum og viljað endilega fá hann heim með sér, en hann ekki viljað fara frá konu sinni og dóttur. Og hafði hann sent Indíána-öxina heim til bróður síns á Norðurljósa-eyjum með þeim ummælum, að hún skyldi vera geymd þar af ættmönnum hans, og ganga eins og annað erfðafé mann frá manni í þeirri ætt, þangað til hennar (axarinnar) yrði vitjað af þeim afkomanda hans, sem af sjálfum sér lærði að mæla á tungu sinna hvítu forfeðra; og mundi sá hinn sami framvísa svipaðri öxi, þegar hann kæmi. — — — Og svo liðu tímar fram. Vetur kom eftir sumar, og sumar eftir vetr.

Menn fæddust og dóu, og fluttust yfir um til hinna víðáttumiklu veiðistöðva á Óðáinslandi. Og ætt hins hvíta manns og Vöndu kóngsdóttur varð bæði stór og göfug. Og þar með er sagan á enda.

»Trúir þú sögunni?« sagði eg við Teresu.

»Hví skyldi eg ekki trúa henni, fyrst þið trúðið sögunni um fund Vinlands og um manninn, sem sendi gullhringinn og sverðið til Íslands,« sagði Teresa; »enda finst mér sagan ekkert ótrúleg; og mér finst eg líka hálfpartinn finna það í blóði minu og beinum, að eg sé af norrænu bergi brotin«.

»Eg held bara að þú sért íslenzk«, sagði konan mín.

Nú er Teresa komin norður til Alaska. Hún fór þangað nýlega með manni sinum, og á heima í Juneau. Við höfum fengið bréf frá henni. Segir hún að sér líði vel að mörgu leyti, en að sér leiðist þó allmikið með köflum. Biður hún okkur að senda sér íslenzk blöð og bækur, og þar á meðal kvæðið »Lilju«, eftir Eysteín múnk Ásgrímsson. Og höfum við reynt að verða við bón hennar. — Við höfum saknað hennar mjög mikið og munum jafnan minnast hennar með innilegu þakklæti og vinarhug.

26. okt. 1915.

Vestur-Íslendingar.

Íslenzka þjóðin er ekki stór og þó minni fyrir það, að hún veit naumast sjálf hve stór hún er. Það skiftir t. d. ekki litlu máli, hvort Íslendingar eru taldir 90000 eða 120000, en það fer eftir því, hvað menn skilja við orðið Íslendingur. Hingað til munu flestir hafa haldið, að Íslendingur væri hver sá maður sem af íslenzku bergi er brotinn og talar íslenzka tungu. Þeir hafa haldið, að Íslendingur táknaði þjóðernið, eins og Dani, Norðmaður, Svíi, Englendingur o. s. frv., en ekki það, hvar maðurinn byggi eða hvers ríkis borgari hann væri. Eg hefi aldrei heyrt bornar bríður á það, að t. d. Jón Eiríksson, Jón Sigurðsson, Konráð Gíslason, Finnur Jónsson, Guðbrandur Vigfússon, Eiríkur Magnússon og fjölmargir aðrir, sem dvalið hafa mikinn hluta æfi sinnar í öðrum löndum, væru Íslendingar, og aldrei hefi eg heyrt neinn neita því um landa vora í Vesturheimi fyr en Magnús Jónsson prestur á Ísafirði gerir það í riti sínu: Vestan um haf. Smá-vegis um Ameríku og Landa vestra. Rvík 1916. Hann segir þar, bls. 28—29: »Vestur-Íslendingar er rangnefni vegna þess, að þeir eru í rauninni alls engir Íslendingar lengur. Eg á þar ekki svo mjög við það, að þorri þeirra allur hefir yfirgefið Ísland fyrir fult og alt og gjörst borgarar annara ríkja, þó að það eitt væri ærið nóg til þess að fyrirgjöra réttinum til nafnsins, því að »Íslendings«-heitið er þó dregið af nafninu »Ísland«, heldur á eg við hitt miklu fremur, að Íslendings-einkennin eru að mestu horfin hjá þeim flestum. Jafnvel þeir, sem flúzt hafa vestur uppkomnir, eru breyttir, eru orðnir að annari þjóð.

Það finnur bezt hver sá, sem að heiman kemur«. Og á bls. 57 segir hann ennfremur: »Og ætti mönnum nú að verða það ljóst, að það er ekki nema fúm og fimbulfamb, þegar talað er um »þjóðarbrotin íslenzku, vestan hafs og austan«. Því að það er ekki til nema ein íslenzk þjóð, og hún á heima á Íslandi«.

Eg hef síðastliðið sumar átt því láni að fagna að fara um flestallar bygðir Íslendinga í Vesturheimi hérna megin Klettafjalla, flytja fyrir þeim erindi um viðhald íslenzks þjóðernis í Vesturheimi,¹⁾ tala við þá og kynnast þeim, þó á ferð og flugi væri, og þegar eg hugsa um fólkið sem eg kyntist þannig og svo les þennan dóm Magnúsar prests, þá veit eg naumast hvort eg á að hlæja eða reiðast, svo mikil og ósanugjörn fjarstæða virðist mér hann vera.

Á hverju þekkjum vér þjóðernin að? Fyrst og fremst á því, að menn af sama þjóðerni geta talað móðurmál sitt hver við annan, eiga sameiginlega ætt og sögu, sameiginlegar bókmentir, sameiginlegan menningararf, og skilja því hver annan greiðlegar og betur en menn af óskyldum þjóðernum. En að þetta eigi alt við um »þjóðarbrotin íslenzku, vestan hafs og austan«, því getur enginn neitað með sanni.

Það er ekki nema eðlilegt, að flokkur manna sem flytur í aðra heimsálfu, sezt þar að meðal annarar þjóðar, stundar nýjar atvinnugreinir og lærir nýtt mál, sem beita verður undir eins og kemur út fyrir vébönd heimilisins, fái að nokkru leyti nýtt snið á sig, nýtt fas, nýjar venjur og í sumum efnum nýjan hugsunarhátt. Þetta er alt einskonar hamur, sem skapast ósjálfrátt af samlífinu við umheiminn. Og í þessum ósjálfráða ham kemur í rauninni lítið fram af frumlegu eðli mannsins:

„Því síðir og hugsanir dagsins í dag
þar drötna með óskoruð völd,

¹⁾ Guðm. Finnbogason: Um viðhald íslenzks þjóðernis í Vesturheimi. Erindi flutt viðsvegar í bygðum Íslendinga í Vesturheimi. Winnipeg-Prentsmiðja Columbia Press, Ltd. 1916.

Sem frambygðin sprettur upp fortíðarlaus
og fósturað af samtíðaröld.
Og framförin mikla og menningin hér
við minningar ei hefir töf.
Ef endistu að plægja, þú akurland fær;
er uppgefst þú: nafulausa gróf.“

Meðan landnemarnir eru að krafsa í bakkann upp á líf og dauða og reyna að koma fótunum undir sig á hinni nýju strönd, hafa þeir litinn tíma til að hugsa um ytra borð daglega lífsins og að sníða það eftir andlegum vexti sínum. Þeir fara að eins og maður sem vantar fötin utan á sig, en hefir hvorki tíma né fé til að fara til skraddara sem saumar eftir máli: Hann tekur fötin tilbúin í næstu búðinni. Og ekki er það nein furða, þó smáblettir komi á tunguna í öllu þessu volki. Það er erfitt fyrir mann sem kemur mállaus í nýja heimsálfu að læra útlenda mál-ið á skotspónum, og það er ekki nema mannlegur breyskleiki, að hann verði dálítið upp með sér, þegar hann fer að geta fleytt sér í málinu, og verði þá stundum á að sletta þeim orðum sem eru honum lykillinn að samvinnu við þarlenda menn. Og jafn-skiljanlegt er hitt, að slíkar breyskleikasyndir geti óðar en varir orðið að vana sem erfitt er að leggja niður í snatri.

Sé nú litið á Vestur-Íslendinga, þá má eflaust benda á ýmislegt smávegis í fari þeirra, sem af þessum rótum er runnið. Síra Magnús Jónsson bendir t. d. á, að þeir fari öðruvísi að því að trúlofa sig en vér hér heima, líkklæðin séu og önnur, áhuginn á kappleikum annar, samkvæmissiðir breyttir — sérstaklega fábreyttir — og kaffið vont (eg fékk þar víða ágætt kaffi). En sé þjóðernið fólgið í slíkum og þvílíkum smámunum, þá hafa Íslendingar eflaust oft skift um þjóðerni síðan þeir settust að á Íslandi.

Ekki get eg heldur séð vott um nýtt þjóðerni í því, þótt sumir Vestur-Íslendingar liti ekki eins björtum augum á sætland sitt, er þeir yfirgáfu fyrir mörgum áratugum, og vér gerum nú, sem fylgst höfum með fram-

förum síðustu ára. Og ekki vil eg dæma þá af þjóðerninu fyrir það, þótt þeir séu orðnir vinnusamir, hagsýnir og alvörugefnir, eða þá kominn í þá »vindur« sá er Magnús prestur talar um. Lund og skoðanir einstaklinga og heilla þjóða breytist oft á ýmsan veg á skömmum tíma, án þess nokkrum detti í hug að telja það þjóðernismissi.

Um íslenzkuna vestan hafs segir síra Magnús meðal annars:

»Íslenzkan vestra er að sönnu slettótt, en þó hika eg ekki við að halda því fram, að hún sé eftir atvikum furðu góð í sveitunum« (bls. 69). Og er hann hefir gert grein fyrir örðugleikunum á að viðhalda íslenzkunni, segir hann: »Það er nú engin von að íslenzkt mál geti verið hreint undir þessum kringumstæðum, og tel eg því miklu furðulegra, hve mikið er eftir af íslenzku, jafnvel hjá yngri kynslóðinni. Allir tala þar þó íslenzkuna viðstöðulaust, og flestir með nokkurnveginn íslenzkum hreim« (bls. 61).

Þetta kemur alveg heim við mína reynslu. Meðan eg var á ferð um Íslendingabygðir, talaði eg aldrei annað en íslenzku við nokkurn lands, né hann við mig, og mér fanst miklu meira til um það, hve gott mál menn töluðu, heldur en enskusletturnar, sem langoftast eru nöfn á einstökum hlutum, nöfn sem vel mætti takast að leggja niður á nokkrum árum, ef menn tækju sig til.

Hvað vantar þá þetta fólk til að teljast Íslendingar? Eg hefi ekki fundið það, og það er sannfæring mín, að væru allir Vestur-Íslendingar komnir heim til Íslands og búnir að vera þar eitt missiri, þá yrði erfitt að greina allan þorra þeirra frá þeim sem aldrei hafa héðan farið af öðru en því, að þeir hefðu aðra lífsreynslu, annan sjóndeildarhring og ef til vill nokkur merki þess að hafa lifað í öðru loftslagi. Og þegar vér svo minnumst þess, að Vestur-Íslendingar hafa frá öndverðu lagt drjúgan skerf til íslenzkra bókmenta, fylgt með áhuga öllu sem gerðist hér heima og á ýmsan hátt, bæði í orði og verki, sýnt

oss bróðurpel, þá er hart að deila um það við nokkurn mann, hvort þeir eigi að teljast Íslendingar eða ekki.

Vestur-Íslendingar eru ennþá lifandi kvistur á þjóð-armeið Íslands, og þeir eru það oss sem heima búum að þakkarlausu, því að þeir hafa starfað að viðhaldi þjóð-ernis síns upp á eigin spýtur og enga teljandi hjálp fengið til þess héðan að heiman. Jafnframt hafa þeir áunnið sér traust og virðingu þeirra þjóða sem þeir hafa átt saman við að sælda. Í erindi því er eg flutti á 32 stöðum í Íslendingabygðum í Vesturheimi hélt eg því fram, að Vestur-Íslendingar ættu að reyna að halda íslenzku þjóðerni þar við svo lengi sem unt væri og reyndi að sýna fram á, hver hagar þeim gæti verið að því og hverjar leiðir væru helztar til þess. Og það er sannfær-ing mín, að sé rétt á haldið, þá geti íslenzk tunga og þar með íslenzkt þjóðerni haldist enn all-lengi í Vesturheimi, einkum í sveitunum, þó engir teljandi fólksflutningar verði héðan vestur um haf, sem eg ekki býst við. Og eg skal nú drepa á hitt, hvaða hagar oss Íslendingum hér heima væri að því, að íslenzk tunga og þjóðerni hældist þar sem lengst.

Fyrst er þá að lita á það, að bókmentum vorum er mikill styrkur að Vestur-Íslendingum. Þeir leggja ekki að eins sinn skerf til íslenzkra bókmenta með því sem þeir rita, heldur kaupa þeir og mikið íslenzkar bækur og auka þannig bókamarkað vörn. En aðalatriðið virðist mér þó það, að Vestur-Íslendingar eru í ýmsum efnum *landnámsmenn* fyrir bókmentir vorar og menningu. Það er svo um hverja þjóð, að stærð hennar annars vegar og náttúra landsins hins vegar veldur miklu um það, hvaða gáfur koma helzt í ljós hjá börnum hennar. Því að mennirnir skapa sjálfa sig á verkunum sem þeir vinna. En verkefnin koma að mestu utan að og verða mismunandi á ýmsum stöðum. Þess vegna liggja oft þær gáfur í dái sem verkefnin kalla ekki á, og hjá fámennri þjóð eru þau fábreyttari en með stórþjóðunum. Með landnámi í nýju landi fær þjóðin ný viðfangsefni, og við að fást

við þau losna gáfur úr læðingi, sem áður gætti litt eða ekki. Af landnámi sprettur ný menning, og þarf ekki að nefna fjarskyldara dæmi en bygging Íslands. Menning Íslendinga varð önnur en Norðmanna, og væri gaman fyrir sagnfræðing að bollaleggja um það, hver áhrif það hefði haft á sögu Noregs, ef Norðmenn hefðu frá öndverðu tekið þá stefnu að færa sér sem bezt í nyt þær nýjungar sem íslenzk menning kom með. En lítum heldur á þær nýjungar sem Vestur-Íslendingar hafa auðgað oss með. Þar verða fyrst bókmentir þeirra fyrir oss. Þeir hafa frá upphafi vega svarið sig í ættina með bókmentaviðleitni sinni, og verður varla annað sagt, en að skerfur þeirra sé vonum meiri, þegar litið er á allar aðstæður. Því miður hafa bókmentir Vestur-Íslendinga ekki verið rannsakaðar svo sem skyldi og sýnt fram á kosti þeirra og lesti og þar með hið nýja sem þær hafa til brunns að bera. Það væri allmikið verk og þyrfti að gerast sem fyrst. En hvernig sem dómurinn verður að öðru leyti og þótt margt verði vegið og léttvægt fundið, þá er enginn efi á því, að í tímaritum Vestur-Íslendinga hafa birzt margar greinir sem áttu erindi hingað og vöktu til umhugsunar og að sum ljóðskáldin og söguskáldin íslenzku vestan hafs hafa lagt ný óðul undir íslenzkuna.

Guðm. Friðjónsson hefir fyrir löngu skilið þetta rétt og bent á það í grein sinni um Stephan G. Stephansson í Skírni 1907 (bls. 205). Hann segir: »Eg á við það, að þeir sem flutt hafa vestur hafa fengið nýjar hugmyndir í nýju veröldinni. Stephan G. Stephansson fer vestur um haf með mikinn fjársjóð íslenzkrar og norrænnar tungu — sögu, skáldskapar og málfræði. Þegar hann kemur vestur, leggur hann undir sig ný lönd: nýja náttúru, nýtt þjóðlíf, nýjar bókmentir. Hann er konungur yfir fjársjóðum tveggja þjóðlanda. Ef Stephan hefði setið heima í dalnum sínum mundi hann hafa orðið skáld að vísu. En hann hefði áreiðanlega náð minni þroska. Þá mundi hann aldrei kveðið hafa »Á ferð og flugi«, sem eitt sér mundi gera hann ódauðlegan í landi bókmenta vorra þótt hann

hefði ekkert kveðið annað, sem snild væri á. Kvæði hans standa reyndar á íslenskum merg, mörg þeirra. Orðgnóttin og málsnildin, sem leiftrar víðsvegar í sumum þeirra, er drukkin með móðurmjólkinni heima í dalnum, og náttúrulýsingarnar eru teknar úr heimahögunum öðru hverju. En fjöldi yrkisefna er og vestrænnar ættar og kemur þar fram í því ljósi, sem Vesturheimssólin verpur á þau. Margt þessu líkt mætti og segja með sanni um annað skáld vestan hafs, þótt minna sé: Jóhann Magnús Bjarnason«.

Þetta er ágætlega sagt og maklega. Aldrei hefi eg betur skilið hve mikið landnám Stephans er, en á ferðum minum vestra, því að mér fanst nú íslenzkan eiga þetta alt saman:

„Um sléttur og flóa bar eimlestin oss
í áttina norðinu mót.

Á vinstri hlið silalegt aurana óð
íð óslygna, skoluga Fljót,

Sem lyfti ei fæti í foss eða streng —
því fjör, jafnvel straumanna, deyr,

Að vaga um aldur með fangið sitt fult
af flatlendis svartasta leir.“

Svo kom kvöldið:

„Eg stóð úti á pallinum vagntengslin við,
mig viðraði í dragsúgnum einn.

— — — — —
Og vélin spjó eisu við andköfin djúp,
sem iðaði í loftinu og brann;

En sléttan flaut blækyr og biksvört í kring
sem barmalaust, öldulaust flóð.

Sem glóðþrunginn Naglfari lestin var löng
þann lognsæ af náttskuggum óð“.

Eg gekk um stórborgina:

„Undir neistum glóðar-lampa
Rafljósa, sem gljá og glampa
Glærum, jökul-hvítu köldum“.

Eg kom út í lundinn að húsabaki á bændagarði úti í sveit:

„Þar grásilfrað bæki frá riðaðri rót
 Sig reisti með blaða-hvolf vitt,
 Og mösur í öskugrám, upphleyptum bol
 Með útskorið laufa-djásn nýtt,
 Og dimm-leggjuð eikartré dökkgrænu typt
 Og djúprætt, með ára-tal hæst.

— — — — —
 En svo tóku kornekrur vorgrónar við
 Um valllendur strikaðar plóg.“

Alstaðar var Stephan G. Stephansson mér andlega nálægur á ferðinni. Eg sá það alt með hans augum og óskaði mér ekki annara betri. Eg fann að eg var heima, í landnámi íslenzkunnar. Og þegar eg ók um blómlegustu Íslendingabygðirnar —

En blöðurnar dumbrauðu hilti yfir jörð
 Sem hraunborgir vítt úti um sveit,

þá gladdist eg yfir því að sjá hvað íslenzkar hendur höfðu þar afrekað, en þó meira yfir hinu, að íslenzkt skáld hafði farið eldi orðspekinnar um Vesturheim og helgað oss landið.

Stephan G. Stephansson er að visu mesta skáld Vestur-Íslendinga og sá sem menn þekkja best hér heima, en þeir eiga ýms önnur skáld sem ort hafa falleg og einkennileg kvæði. Og J. Magnús Bjarnason er einkennilegt söguskáld og söguefni hans ný í bókmentum vorum. Það væri þarft verk að safna í eina heild og gefa út hið besta sem skrifað hefir verið af Íslendingum vestan hafs í bundnu máli og óbundnu.

En verksvið andans er meira en skáldskapur. Landnámið getur ekki síður orðið í visindum, stjórnmálum, fjármálum og verklegum framkvæmdum. Á öllum þeim sviðum starfa Íslendingar nú í Vesturheimi og sýna vonandi betur og betur hvað þeir hafa þar til brunns að bera. Nokkrir Íslendingar eru kennarar við háskólana. Eg veit um einn í íslenzku, annan í mælskufræði, þriðja í efnafræði og fjórða í stjórnufræði. Bæði í prestastétt, læknastétt og lögfræðingastétt eru ýmsir mikilhæfir menn meðal Íslendinga vestra. Þá hafa þeir og tekið myndarlegan þátt í stjórnmálum, og margir hafa reynst hygnir fjármálamenn.

Vesturheimur er land þar sem hugvitið er í hávegum haft og borgar sig betur en víðast hvar eða alstaðar annarstaðar, því að verkefnin eru þar stórfeld, en féð nóg til framkvæmda. Lítil tækifæri hygg eg að landi vor C. H. Thordarson í Chicago hefði fundið fyrir hugvit sitt hér heima, en í Vesturheimi hefir það fengið byr undir vængina.

En hvað sem þessir menn eða afkomendur þeirra vinna sér til frægðar, þá fellur sú frægð á kynstofn þeirra meðan þeir af sjálfum sér og öðrum eru taldir Íslendingar. Þeir eru fulltrúar vorir í heilli heimsálfu og sýna þar hvað í oss býr. Og eins og eg tók fram í erindi mínu, finst mér það horfa beint við, að Vestur-Íslendingar ættu í öllum efnum að verða milliliður milli islenzkrar og ameriskrar menningar, koma því sem vér eigum dýrmætast í islenzkri menningu í álit og gengi meðal enskumælendi þjóða, og veita aftur hollum nýjungum úr enskri menning, andlegri og verklegri, inn í þjóðlíf vort. Hverjir ættu að koma því sem bezt er í islenzkum bókmentum að fornu og nýju á enska tungu, að svo miklu leyti sem það er ógert enn, ef ekki einmitt þeir menn, sem tala og rita báðar tungurnar eins og móðurmál sitt. Það eru synir Vestur-Íslendinga, sem ættu að koma hingað heim, stunda norrænunám við háskólann okkar og leggja síðan undir sig alla norrænu- og islenzku-kenslu við háskólana í Canada og Bandaríkjunum. Þeir stæðu í því efni öllum öðrum betur að vígi.

Hvað eigum vér Íslendingar hér heima þá að gera í þessu efni?

Vér eigum fyrst og fremst að skilja það, að fjórðungur islenzku þjóðarinnar býr í Vesturheimi. Og vér eigum að sjá, að oss má ekki á sama standa, hvort sá hluti þjóðar vorrar hverfur innan skamms inn í þjóðahafið eða heldur áfram að bera ávöxt fyrir islenzka menningu og frægð. Vér eigum að taka það til rækilegrar ihugunar, hvað vér getum gert til að styðja þá menn er berjast fyrir viðhaldi þjóðernis vors vestan hafs, og eg vona að oss

skiljist þá, að vér gætum með litlum tilkostnaði greitt götu þeirra á ýmsan hátt. Fyrst og fremst með því að láta Vestur-Íslendinga jafnan njóta sannmælis, og henda ekki á lofti hvern skammsýnan hleypidóm í þeirra garð. En þar næst með því að koma á samvinnu milli Íslendinga vestan hafs og austan, um þjóðernismálið. Með beinum samgöngum milli Íslands og Vesturheims ætti það að verða margfalt auðveldara en áður. Það mætti t. d. hugsa sér félag, er hefði sína deild hvoru megin hafsins og starfaði að þessu. Gæti það gefið út tímarit sem flytti eingöngu það sem bezt væri ritað af Íslendingum vestan hafs og aflagði því útbreiðslu jafnt hér og þar. Héldi það á loft öllu því sem Íslendingar gera sér til frægðar vestra. Vér gætum greitt götu vestur-íslenzkra nemenda við háskólann hérna og sent færustu menn vora einn og einn til að flytja erindi vestra um Ísland, bókmentir þess og sögu. Ungum íslenzkum málfræðingum — ef vér þá eignumst nóg af þeim — ætti að vera það gott að kenna um skeið við Jóns Bjarnasonar skólann í Winnipeg. Íslendingar austan hafs og vestan ættu að heimsækja hvorir aðra á víxl og æskulýðurinn að vestan að dvelja hér á sumrum upp til sveita.

»Starfið er margt, en eitt er bræðrabandið,«
og eg efast ekki um, að slík samvinna gæti leitt margt gott af sér fyrir báða aðila.

Allar spár um það, að íslenzkt þjóðerni hljóti að vera bráðfeigt í Vesturheimi, eru út í bláinn, og síst sæmir oss hér heima að binda því helskó með slíkum hrakspám. En ekki komu Vestur-Íslendingar mér svo fyrir sjónir sem sem þeir mundu alment fúsir að fylgja Skafnörtungi fyrir Ætternisstapa.

Guðm. Finnbogason.

Ritfregnir.

Ljóða-bók eftir Hannes Hafstein. Reykjavík. Utgefandi
Þorsteinn Gíslason. 1916.

Í samsæti, sem haldið var hér í Reykjavík þegar Hannes Hafstein varð fimtugur, hélt eg ofurlítinn ræðustúf.

Hann var svona:

»Mér detta í hug erindi eftir Hannes Hafstein, sem heita
»Draumur«:

Úr krystal-glasi gullið drakk eg vín,
og gleðin kysti varir mér.
Í djörfum leik sér lyfti sála mín
sem lausklædd mey í dansinn fer.

Hún er ekki þjóðleg þessi vísa. Krystal-glös eru ekki þjóðleg, og skáldin hafa lítið um þau kveðið. Kúturinn var þjóðlegur. Gullið-vín er ekki þjóðlegt — hefði hann drukkið »mjöð« eða »mörk«, þá var það annað mál. Og lausklædd mey er ekki þjóðleg — því hún er ekki á peysubúningi. Eg held ekki heldur að bragarhátturninn sé þjóðlegur, að minsta kosti man eg ekki í svip eldri vísur með þessum bragarhætti. Og þó er þessi vísa einkennileg og sýnir oss Hannes Hafstein eins og hann er í lífi og ljóði. Æska, gleði og fegurð eiga hug hans og hjarta og hann þær. Æskan sem finnur blóðið streyma eldheitt um æðar sér og aflið vaka í hverri taug, gleðin sem fylgir heilbrigðri æsku, og fegurðin sem birtist »í djörfum leik«, »í hljóðfalli leikandi ljóða«, »í mjúkum línunum«. Hannes Hafstein drekkur úr krystal-glasi, af því krystallinn kætir augað, en kúturinn ekki. Hann drekkur gullið vín, af því hann veit, að gleðin býr líka »inst við drúfuhjartað«, og að hún er því hreinni sem vínið er hreinna. Sál hans er í hreyfingum sínum sem lausklædd mey, af því hún finnur ekki hvíld nema í mjúkum línunum. Hannes Hafstein er »glæsimaður«. Náttúran hefir gefið honum í ríkum mæli æsku og fegurð og þá gleði sem því fylgir,

og að hann ann þessu þrennu, hvar sem hann finnur það saman, sannar hið fornkveðna, að hvað elskar sér líkt. Það er æfinlega gott að vera með Hannesi Hafstein, og ekki sízt vegna þess, að þar er enginn tvískinnungur milli sálar og líkama. Forn-grískir spekingar, sem héldu því fram, að sálin væri einskonar »harmonía« eða samhljómur líkamans, mundu hafa bent á Hannes Hafstein til sönnunar, ef hann hefði lifað þeirra á meðal. Og ef vér lítum á ljóð hans, þá finnum vér hið sama: Formið gírnist ekki gegn efninu, né efnið gegn forminu. Þar er samhljómur. Vér finnum sálina í forminu, í hreyfingunni, í fallandi kvæðisins, sem lyftir sér í djörfum leik — sem lausklædd mey í dansinn fer. Í íslenzkri náttúru hefir hann séð og fundið æskufegurðina, mörgunblæinn, ástaratlotin og æskuborið. Það er hann sem hefir kveðið þetta um landið okkar:

Sem framgjarns unglings höfuð hátt
þín hefjast fjöll við öldaslátt.

Ætti eg að óska íslenzkri þjóð góðra gjafa, þá mundi eg óska henni þessa þrenus: æsku, gleði og fegurðar, og þegar eg drekk skál Hannesar Hafstein, þá drekk eg um leið skál þessarar þrenningar. — En eg var næstum búinn að gleyma seinni vísunni úr draumnum hans. Hún er svona:

Eg skæru glasi hélt í hendi fast,
sem hönd það væri' á kærum vín.
En, minst er varði, bikar sundur brast
og brotin skáru æð og sín.

Ef þið haldið, að þetta hafi verið hefnd fyrir það að hann var svo óþjóðlegur að drekka úr krystal-glasi í stað þess að súpa á kútnum, eða það hafi verið bending frá forsjóninni um það að hann ætti ekki framvegis að bragða vín, þá skjátlást ykkur. Að bikarinn brast, það voru — »einber svik úr kaupmanninum«.

Og nú vil eg drekka upp á það, að fyrri hluti draumsins rætist á hinna íslenzku þjóð, svo hún geti einum rómi gert orð skálda-
ins að sínum og sagt:

Úr krystal-glasi gullið drakk eg vín,
og gleðin kysti varir mér.
Í djörfum leik sér lyfti sála mín
sem lausklædd mey í dansinn fer.

Þá verður vísan þjóðleg.

Gleðin lifi!«

— En gleðin er aðeins einn strengurinn á hörpu Hannesar Hafstein. Hve margir þeir eru og ólíkir, finnur hver sem blaðar í þessari nýju Ljóða-bók hans: Ættjarðarkvæði. Eftirmæli og minningarljóð. Undir berum himni. Manvísur og ástarkvæði. Ýms tækifæriskvæði og ávörp til einstakra manna. Eggjanakvæði og ádeilur. Gamankvæði og drykkjukvæði. Ýmisleg kvæði. Svo heita flokkarnir ank þýðinganna. Og margbreytni geðbrigðanna talar undir eins til augans frá blaðsíðunum, því að hættirnir eru litlu færri en kvæðin, og sumir þeirra svo slungnir, léttstígir og kvikir, að þeir eru eins og fjölbrugðinn flokkadans á leiksviði.

Margt af kvæðunum er fyrir löngu orðið almenningæign, þulið og sungið svo víða sem íslensk tunga er töluð, og marglofað. Blöð vor og tímarit hafa og síðan bókin kom út farið um hana svo mörgum orðum, að eg ætla aðeins að drepa á örfátt, og þá fyrst og fremst á þetta, að sum fegurstu og dýpstu kvæði skáldsins birtast hér í fyrsta sinn. Vil eg þar sérstaklega nefna »Kveðju«, bls. 51, og »Í sárum« I., bls. 59. Síðan Egill kvað Sonatorrek, held eg ekki að sorgin yfir ástvinamissi hafi lagt íslenzku skáldi jafn sönn og mannleg orð á varir. Að minsta kosti hafa engin snortið mig eins. —

Hannes Hafstein hefir ort minningarljóð um tvo frumherja í frelsisbaráttu þjóðar vorrar, hvor tveggja ágæt og þó mjög sitt með hvoru móti. Annað eru ferskeytlurnar um Benedikt Sveinsson, yndislegar vísur og sannar. Þær sýna hve vel honum mundi láta að leika á langspil alþýðunnar, þó hann hafi lítið við því snert. Hitt eru minningarljóðin á 100 ára afmæli Jóns Sigurðssonar, með dýrum og vængsterkum bragarhætti, ættuðum, að mestu, frá Edgar Poe. Það er bezta lýsing á Jóni Sigurðssyni og starfi hans sem enn hefir verið skrifuð, sagan sögð blátt áfram, en svo er hátturinn, hljómurinn og orðkyngin, að lýsingin verður hið segursta kvæði.

Og þá eru »Vorvísur 17. júní 1911«. Það held eg sé bezta vorkvæði sem vér eigum, og voru þó mörg fögur til áður, ekki sízt eftir Hannes Hafstein sjálfan. En í þessu kvæði finst mér gróandi vorsins, ættjarðarastin, trúnaðartraustið og minningin um Jón Sigurðsson hafa runnið saman í vorblæ sem þitt gæti ís úr þúsundum sálna.

Hrein perla er og kvæðið »Landsýn«, og »Í hafinum« litlu síður. Fyrir trúarkvæðunum á bls. 63 og 376 mætti vel þoka einhverju burt úr sálmabókinni.

En eg ætla ekki að fara að teija upp öll nýrri kvæðin sem

mér þykir vænt um eða gaman að og sum eru á aðra strengi en þá sem eg nú hefi nefnt. Menn geta lesið kvæðin sjálfir. Þau þurfa engra skýringa við. En fagnaðarefni er það, að sjá að skáldið stendur einmitt nú á hæstu hæð sem hann hefir náð, svo að þjóðin getur enn horft til hans vonaraugum.

Skáldið hefir allvíða gert breytingar á eldri kvæðum sínum, og þótt vandfarið sé með kvæði sem menn lengi hafa kunnað utan bókar og sungið, þá hefi eg engar breytingar fundið er mér þótti ekki fremur til bóta, og sumt stórum betra en áður.

Í bókinni eru, auk brotsins úr »Brandi« Ibsens, um 90 þýdd kvæði, þar af nálega helmingurinn eftir Heine. Hannes Hafstein er ágætur þýðandi. Eg hefi að gamni mínu borið allflestar þýðingarnar saman við frumkvæðin og veit eg eigi hver mundi hafa þýtt þau betur. Bragarhætti er nálega altaf haldið og þar með blæ og fallandi kvæðanna, þýðingin virðist oftast svo nálæg sem tvær tungur leyfa og íslenzkan víðast svo frjáls sem hún dansaði eftir eigin nótum.

Bókin er óvenju-vönduð að pappír og prentun, en bandið hefði vel mátt vera skemtilegra.

G. F.

Um skipulag bæja eftir Guðmund Hannesson. Fylgir árbók háskóla Íslands fyrir árið 1916. — Rvk 1916. — VIII + 136 bls. 8vo (lesmál á bls. 108 × 188 mm), með 39 myndum og uppdráttum. — Kostar kr. 2,50 og fæst hjá ritara háskólans, cand. phil. Halldóri Jónassyni, Rvk.

Höfundur bókar þessarar er, eins og mörgum mun kunnugt, prófessor í læknisfræði við háskólann og var rektor hans síðastliðið háskólaár. Ein af kenslugreinum höf. þar er heilsufræði, en hún kemur mjög við þetta mál, sem bókin er um rituð, skipulag bæja og kaupþúna. Annars heyrir það efni einnig undir verkfræði og þó einkum byggingafræði.

Bók þessi er nýjung hér á landi. Hefir ekki áður verið ritað á voru máli neitt að marki um þetta efni og alls ekki í heild, er reki efnið frá rótum, svo sem hér er gert.

Bókin skiftist í tvo kafla. Hljóðar fyrri kaflinn um bæi vora og sjávarþorp og nær aftur á 30. bls., en síðari kaflinn um skipulag bæja það sem eftir er bókarinnar. Skal hér nú lauslega rakið í stuttu máli aðalefni bókarinnar.

Fyrri kaflinn er tveir kaþítular, 1. kap. um vöxt íslenzkra bæja,

hag þeirra og menningaráhrif, 2. kap. um heilbrigðismál bæjanna. — Frá landnámstíð og langt fram á 19. öld búa Íslendingar allir að kalla í sveitum, kaupstaðir engir teljandi, ber ekkert á þeim-fyr en um 1880. Þá fara þeir að dafna og það svo, að um og eftir síðustu aldamót lendir ekki að eins öll mannfjöldun í landinu í bæjunum, heldur dregst þangað og að auki fólk úr sveitunum, svo að þar fækkar um hríð. Um 1910 er svo komið, að fullur þriðjungur þjóðarinnar býr í kaupstöðum og sjávarþorpum, en tæpir $\frac{2}{3}$ í sveitum. Sumum stendur stuggur af þessu, en til þess er þó ekki full ástæða. Síðan bæjunum fór að fara fram hefir útflutningur fólks úr landinu nálega lagst niður. Þar hefir það lent, sem ekki hefir tollað í sveitunum og annars mundi hafa leitað af landi burt. Atvinna er oftast mikil í bæjunum og margbreyttari en í sveitunum. Meira en helmingur allra fiskiveiða er í höndum bæjabúa. Auður safnast hraðar í bæjum en nokkursstaðar annars. Hafa bæjabúar eins mikið undir höndum og sveitamenn, sem eru tvöfalt mannfleiri. Aftur eru bæjabúar skuldugri. Unga fólkið leitar úr sveitunum til bæjanna til að »mentast«. Og alt sem til landsins flyzt frá útlöndum lendir fyrst í bæjunum, erlendur varningur, erlend mál, siðir, hugsunarháttur og menningarstraumar. Þaðan dreifist þetta svo út um byggðirnar eins og það hefir mótast í bæjunum. Það er því þjóðarnauðsyn, að bæirnir taki sem heilbrigðustum þroska, til þess að þeir geti orðið gagnlegir forverðir þjóðernis vors, máls og menningar. — Heilsufar bæjabúa upp og ofan virðist enn sem komið er engu lakara en sveitamanna. Manndauði er í bæjum sízt meiri en í sveitum, fæðingar öllu örari og mannfjöldun því fult eins mikil. Giftingar einnig heldur tíðari. — Húsakynni manna í bæjum okkar eru mjög svo misjöfn og skipulagið alt til þessa næsta ófullkomið. Eftir því sem byggðin þéttist í bæjunum er því hætta á að heilsufari bæjabúa hnigni, nema rækileg bót sé þegar ráðin á skipulagi bæjanna. — Þá eru talin helztu lagaboð um bygging og skipulag bæja. Og loks er lýst helztu bæjum okkar og fylgja þar til skýringar uppdrættir og myndir. Bendir höf. á helztu gallana, sem hvorki eru fáir né smáir.

Þá kemur síðari kaflinn »um skipulag bæja«. Hann skiftist í 8 kapitula: 1. höfn og landareign, 2. greining bæjarhluta, 3. götur og gatnaskipun, 4. byggingareitir — húsaskipun, 5. stærð húsa og gerð, 6. vellir og torg, 7. sýnishorn af skipulagi bæjar og 8. endurbætur á skipulagi bæja. — Aðalefnið þetta: Bæir vorir eru allir

hafnarbæir, styðjast að mestu við sjávarútveg og verzlun. Þríf þeirra eru því að mestu komin undir kostum hafnarinnar, að hafnarbryggju sé valinn hinn hentugasti staður og hafnarspildan sé nógu rífleg og haganlega notuð, en því næst að bænum sé að öðru leyti haganlega skipað og smekkvíslega. Greinist bærinn þá aðallega í útvegassvæði, verzlunarsvæði, iðnaðarsvæði, íbúðarsvæði og opiðbærar byggingar. Árðandi er hverjum bæ að eiga sjálfur yfir nógu ríflegu landi að ráða, bæði innan bæjar til að halda í hemilinn á lóðaverðinu — hefta lóðabrall — og utanbæjar til ræktunar o. fl. Lóðabrallið og þéttbýlið sem þar af flýtur er flestra erlendra bæja mesta mein, eins og skýrslur þaðan sýna. Því hafa menn þar gert margar og miklar tilraunir til endurbóta, komið upp smáhýsahverfum og stofnsett margskonar félagaskap í því augnamiði. En af öllu þessu hafa best gefist hinar svonefndu sveitaborgir (Garden Cities — Gartenstädte — Havebyer), einnig nefndar fyrirmyndarborgir. Þar eru aðeins reist smáhýsi, ein- eða tvílofta, handa einni fjölskyldu hvert. Til þess að víðátta slíkra bæja verði hófleg, er húsunum skipað fast saman í raðir eða smáhópa, en útundan á báðar hliðar ríflegt garðsvæði til ræktunar, skrauts og rýminda. Nýtur hvert hús sólarbirtu og lofts sem í sveit. Þykja þessir bæir hafa alla kosti borga og sveita til samans, en fæsta gallana. Heilsufar tólks í þeim betra en alstaðar annarstaðar og börn dafna hvergi eins vel. Er þegar fengin all-mikil reynsla um heilnæmi þessara sveitaborga, og mun óhætt að treysta henni, þess heldur sem niðurstaðan virðist liggja í augum uppi að óreyndu. Þessa reynslu ber að sjálfsgöðu að færa sér í nyt eftir föngum. Eftir því þarf að skipa húsum í bæjum hér álíka strjált og í sveitaborgunum erlendu, og það því fremur, sem sólargangur og birta er hér á landi minni en þar, sem nær er miðjarðarbaug. Dr. Ólafur Daníelsson hefir reiknað stefnuhalla sólargeisla á breiddarstigi Reykjavíkur á ýmsum tímum árs og dags og sett upp í töflu. Eftir henni má fjarlægð milli húsa hliða á jafnsléttu eigi minni vera en hér um bil tvöföld vegg hæðin, ef sólar á að njóta að nokkru ráði holming ársins, en það virðist ekki ofhörð krafa. Húsin best sett í samfeldum röðum, þó eigi mjög löngum, eða í hópum. Götu er þó óþarfi að gera alla leið á milli húsa, bestar eru þær svo mjóar sem umferð frekast leyfir, bæði vegna sparnaðar og til varnar göturyki. Milli götu og húshliða koma ræktaðir blettir (fargarðar) sólarmegin. Að húsabaki myndast skjólgöð svæði, sem njóta sólar og eru vel fallin til ræktunar og leikvalla fyrir börn. En jafnframt birtu og

lofti verður að hafa fulla hliðsjón af landslagi og vindáttum, þegar götustefnur og skipulag er ákveðið, og þá má alls ekki heldur gleyma því, að þaugun vilja ætíð hafa nokkuð. En húsaskipun sú sem valin er, ræður aftur mestu um stærð byggingareitanna og þar með fjarlægðinni milli gatna. Sama húsaskipunin ekki hentug um allan bæinn, en yfirleitt verða samstæð smáhýsi, ein- eða tví-lofta, öllum þorranum hagfeldust, einstæð hús aðeins efnamönnum, marglofta hús sem fæst og eingöngu í verzlunargötum, en helzt engin hærri en þrílofta. Reynsla manna erlendis virðist benda í þá átt, að háreistu margbýlishúsin séu að öðru jöfnu engu ódýrari tiltölulega en smáu húsin. Auk þess komast háreistu borgirnar ekki af með neitt verulega minna landrými að tiltölu en lágreistu borgirnar. Og svo hafa smáhýsin þá ómetanlegu yfirburði að geta orðið einstaklingseign fram yfir leigukastalana, sem aldrei geta orðið trygg heimkynni. Yfirleitt eru því einbýlishúsin æskilegust og er talsvert drepíð á ýmsar leiðir, sem erlendis hafa verið farnar til þess að koma upp slíkum húsum svo, að þau gætu orðið einstaklingseign, eða þá leigukjörin svo, að nærri stappaði því sem eign væri. Fyrirkomulag ýmera einbýlishúsa er sýnt, einkum í sveitaborgunum ensku og þýzku, svo og skipulag þeirra. Er þar ein eftirtektarverðasta nýjungin sú, að sama herbergið er notað til íbúðar og eldamensku — íbúðareldhús, — til sparnaðar á húsrúmi og eldsneyti, og þykir vel gefast, auðvitað með hagfeldum útbúnaði. Um götugerð er og nokkuð rætt, ennfremur opinber svæði, svo sem íþróttavelli, kirkjugarða o. s. frv. — Þá er að lokum sýnishorn af skipulagi bæjar, eins og höf. hugsar sér það frá stofni, með hliðsjón af því sem um er rætt í bókinni að framan. En með því að um slíkan bæ er ekki og verður varla að ræða hér á landi, klykkir höf. út með ýmsum hugleiðingum um leiðir til endurbóta á bæjum okkar frá því sem þeir eru nú orðnir.

Þetta var þá aðalefni bókarinnar, eins og eg get í stuttu máli gert grein fyrir því eftir einn yfirllestur. Útdráttur þessi er vitanlega ekki nema svipur hjá sjón eða eins og lauslegt registur. En væntanlega geta menn þó ráðið af honum, að hér er um málefni að ræða, sem hér á landi hefir verið vanrækt um of og alt of lengi, mest fyrir vanþekkingar sakir.

Fyrri kafli bókarinnar sýnir, að bæir okkar og sjávarþorp eiga góð og gild rök að tilverurétti sínum enn sem komið er. Þeir eru enn svo strjálbygðir yfirleitt, að skipulagsgallarnir eru ekki orðnir verulega tilfinnanlegir. En skipulagi þeirra er svo ábótavant,

að ef bygðin í þeim eykst úr þessu að nokkru ráði, verður þröngbýlið skaðræði. Það kemur bæði niður á útvegi, verzlun og efnahag, en bitnar aðallega á heilsufari bæjabúa, einkum hinna fátækari — og þeir eru hér sem annarstaðar fjölmennari hlutinn — og af þeim eru það börnin, sem verða harðast úti. Svona gengur þetta í öðrum löndum og svona mun það einnig ganga hér, um það er engum blóðum að fletta. Þarf ekki að rekja þá sögu lengra; þegar heilsufari fjöldans í einhverjum bæ fer að hnigna, þá er ekki að spyrja um hag hans að öðru leyti.

Margur kann nú að halda, að þetta »draslist alt saman af einhvern veginn«, eins og vant er, þetta sé ekki nema grýflur, sem verið sé að bregða upp fyrir mönnum. En því er nú ver, að svo er ekki. Bókin sem hér ræðir um fer ekki með hégómamál eða loftkastala. Það er ekki annað en dýrkeypt reynsla annara þjóða, gömul og ný, sem þar er verið að skýra frá, okkur til viðvörunar og lærdóms.

Eftir því sem eg þekki til þessara fræða, virðist mér bókin að öllu leyti í samræmi við rit færustu og fróðustu manna erlendra um þessi efni, eins og heimildaskráin einnig bendir til. Bókin er sniðin við okkær hæfi og svo ljóst og skipulega samín, að hún virðist hverjum meðalgreindum manni auðveld. Hún þarf að komast í hendur allra byggingarnefnda og bæjarstjórna og hreppsnefnda í sjávarþorpum. Og helzt ættu sem flestir bæjabúar að lesa hana. Og menn þurfa að lesa hana rækilega sem lærdómsbók — katekismus — í þessari fræðigreín, sem hér má heita óþekt. Stakkaskiftum þurfa bæir okkar að taka og mundi almenn þekking á þessu máli stórum létta það starf þeim, sem mest eiga að því að vinna. Verulegar endurbætur verða lítt kleifar ella.

Að vísu er þess ekki að dyljast, að nokkurt vandhæfi mun verða á því að koma æskilegum skipulagsendurbótum í framkvæmd, eins og höf. einnig telur viðbúið. En ef það reynist erfitt enn sem komið er, meðan bæir okkar eru mest megnis bygðir úr timbri, hvað mun þá síðar verða, þegar steinhúsum fjölgar? Og þeim fjölgar nú óðum með ári hverju, svo að hér er ekki til setunnar boðið. Viða mun þó nú þegar reynast allerfitt að haggja gallaðri gatnaskipun, sem þegar er á komin, en frágangssök verður það hvergi nærri alstaðar, ef viljann vantar ekki. Einna torveldast mun reynast að fá því framgengt, að tvöföld húshæð verði milli húsa hliða, jafnvel þó að ekki sé nema þar sem eingöngu er um íbúðir að ræða; til þess er gatnaskipun og húsa svo víða of þröng.

En æskilegt væri það í alla staði. Um nýja bæjarhluta er öðru máli að gegna. Þar ætti þetta að vera í löfa lagið.

Hingað til höfum við ekki hugsað hærra en að fá götubreidd hvergi minni en húshæðina. Veldur þar um nokkru erlend venja, einnig í bæjum jafn-norðarlega og hér, að eg hyggt. Það er auðvitað lítil afsökun út af fyrir sig og engin bót, en erfitt reynist víða, þegar á herðir, að þoka mönnum lengra. Stuðlar margt að því, sem hér skal ekki rakið, einkum í elztu bæjarblutunum og helztu verzlunargötunum, en við þessa bæjarhluta er fyrgreint ákvæði aðallega miðað. Nokkru hefir og ráðið vonin um, að ekki yrðu öll hús teygð upp í hámrörk. Sú von kann nú að virðast endingarlítill til frambúðar. Ástæðulaus er hún þó ekki. Í nýjustu byggingarsamþykktunum, sem hér hafa verið gerðar og mér er kunnugt um, þar sem eg hefi verið talsvert við það riðinn, er beint gert ráð fyrir því, að bæjarstjórn (eða hreppsnefnd) og byggingarnefnd láti hið bráðasta gera skipulagsupprátt og ákvæði um leið, hvernig bygðinni skuli skipað og hagað framvegis, líkt og G. H. ætlast til. En úrslita atkvæði um þessi mál hefir Stjórnarráðið — með ráðunautum sínum. Um götur og forgarða og sitt hvað fleira hafa og verið gerð ákvæði svipuð því er G. H. heldur fram.

En því er ekki að neita, að hofurnar á að fá þessum hlutum framgengt svo að í lagi væri, voru ekki sem beztar. Þessi bók kemur því eins og hún væri kölluð, »í fyllingu tímans«, og vona eg að hún geti komið miklu góðu til leiðar, svo ítarleg sem hún er og fróðleg, þægileg aflestrar og þó stutt.

Einkum vildi eg biðja menn að íhuga sem allra bezt kapitúlana um gatnaskipun og húsa og þá sérstaklega greinina um birtu og sólskin. Þar liggur, fyrir mínum sjónum, þungamiðja þessa máls.

Mér kemur í hug smásaga ein um gríska heimspekinginn Díógenes. Hann var sérkennilegur í háttum, hafðist t. d. mikið við úti á víðavangi. Alexander mikla lék forvitni á að kynnast þessum einkennilega manni og fór á fund hans. Ræddust þeir við og spyr kóngur Díógenes að lokum, hvers hann beiðist af sér. »Skiygðu ekki á sólina«, sagði Díógenes. Um annað bað hann ekki. Var víst ekki trútt um að kóngi og föruneysi hans þætti beiðnin fáránleg. Margir hafa síðan bent á heilnæmi birtu og lofta, en því hefir ekki verið nógu mikill gaumur gefinn. Leigukastalarnir í stórborgunum sýna það. Nú er þó svo komið, að menn hlæja ekki að Díógenesi, en sjá, að birta og loft

eru lífsnauðsynjar, sem enginn má án vera og hver maður þarf að geta notið í sem ríkustum mæli. Efnamönnum verður sjaldan skotaskuld úr því, fátæklingunum — fjöldanum — þarf að hjálpa til þess. Og það vinst með góðu skipulagi, sem um leið verður öllu bæjarfélaginu til gagnsældar. Endurbótastefnan í bæjagerð miðar að því að koma þessum jöfnuði á. Og eitt hið æðsta boðorð hennar er þetta: Skygðu ekki á sólina. Eftir þeirri megin reglu eru erlendu sveitaborgirnar byggðar. — Lægi ekki nærri að við reyndum að gera slíkt hið sama, reyndum að byggja bæina okkar svo, að við skyggjum ekki á sólina hver fyrir öðrum. Bók Guðmundar Hannessonar er leiðbeining um það. Hafi hann þakkir fyrir hana.

Rögnvaldur Ólafsson.

Friðrik J. Bergmann: Trú og þekking. Gömul og ný guðfræði. Deilan um biblíuna og málaferlin, sem út af henni risu með Vestur-Íslendingum. Rvík 1916. 355 bls. Verð 3.00.

Eins og titill bókar þessarar ber með sér, þá er hún til orðin út af hinum kirkjulegu deilum, sem staðið hafa með löndum vorum vestan hafs á síðari árum. Hún er eins konar málskjal til sóknar og varnar í því máli, en að því leyti frábrugðin venjulegum málskjöllum, að hún er lögð fram eftir að dómstólarnir hafa fjallað um málið. En hún er meira en málskjal í þessu vestur-íslenska deilumáli. Hún er jafnframt og aðallega málskjal til sóknar og varnar í málinu: gamla guðfræðin gegn nýju guðfræðinni eða afturhaldsguðfræðin gegn framsóknar-guðfræðinni, — þessu mikla deilumáli, sem staðið hefir yfir í heimi mótmælenda kirknanna allan síðasta mannsaldurinn og stendur enn yfir. Að þessu leyti fyrst og fremst á bók þessi einnig erindi til vor herna megin hafsins og það brýnt erindi, svo erfitt sem mörgum veitir að átta sig á þessum miklu deilumálum og taka afstöðu til þeirra. Það meginatriði málsins, sem bók þessi fjallar um svo að segja frá upphafi til enda, er þetta: Getur framsóknar-guðfræðin nýja samrímst kristinni trú, svo að hún eigi með réttu heimilisfang innan kirkju Jesú Krísta yfirleitt og innan evangelísk-lúterskrar kirkju sérstaklega. Markmið bókarinnar er að leiða rök að því, að svo sé. Framsóknar-guðfræðin geti í alla staði samrímst kristnu trúnni og sé að réttu lagi guðfræði hinnar elztu kristnu trúar. Hún eigi því engu síður heimilisfang innan kirkjunnar en afturhalds- eða gamla guðfræðin, sem þar vilji annars ráða lögum og lofum. Og um fram alt eigi

hún heimilisfang innan þeirrar kirkjudeildar, er kennir sig við Lúter, þar sem hún sé allri guðfræði fremur í anda hins mikla siðbótarhöfundar.

Naumast muu nokkur maður geta lesið bók þessa svo, að það-
dyljist houum, hve til hennar er vandað af höfundarins hálfu og
hve góð og gild rök hann styður með mál sitt. Því er líka fram-
koma hennar fagnaðarefni ekki sízt öllum oss, sem að einhverju
leyti erum við mál það riðnir, sem hún fjallar um; en hún er það
líka eða ætti að vera öllum þeim, sem langar til að geta áttað sig
á þessum ágreiningsmálum, er standa í svo nánú sambandi við
þau hugðarefni, sem fjölda manna eru hjartfólgnust allra, trúmál-
in. Sérstaklega á bók þessi brýnt erindi til presta og kennara,
sem samkvæmt stöðu sinni eiga að leiðbeina öðrum til réttis skiln-
ings á þessum efnum, en hafa í þessu tilliti átt svo erfitt aðstöðu,
að vantað hefir handhæg hjálparmeðul á vora tungu. Þess vegna
bætir bók þessi úr verulegri þörf, og enginn, sem bókina les, er
lengi að ganga úr skugga um, að þar hefir hann fengið góðan leið-
beinanda og lærðan, sem höfundurinn er. Því að alstaðar skín
fram yfirburða þekking höfundarins á þeim efnum, sem hann er
að rita um, og rétt óvenjumikill kunnugleiki hans á öllu því merk-
asta af vísindalegum guðfræðiritum, sem út hafa komið með stór-
þjóðunum, þeim er fylgja trú mótmælenda, á síðari tímum. Það
sýna best hinar mörgu og nákvæmu tilvitnanir í merk guðfræðileg
vísindarit neðanmáls, svo að segja á hverri blaðsíðu bókarinnar.

Bókin sjálf er í tólf köflum og er hver kafli um leið ritgerð
út af fyrir sig, þótt náð samband sé á milli þeirra hins vegar.
Og í hverri ritgerð er jafnframt haft — venjulega að niðurlagi —
eitthvert tillit til þeirra skoðana, stundum allfáranlegra, sem komu
fram af hendi afturhalds-guðfræðinnar í deilumálunum meðal landa
vorra vestra.

Fyrirsagnir þessara tólf ritgerða segja til um aðalefni bókar-
innar. En þær eru þessar: I. Gömul guðfræði. II. Nútíma-guð-
fræðin. III. Bibliurannsóknir að fornu og nýju. IV. Skoðanir
Lúters um biblíuna. V. Trúarskoðanir þjóðar vorrar. VI. Sýnúdu-
guðfræðin og kirkjufélagið. VII. Deilan um biblíuna. VIII. Kenn-
ingin um innblástur biblíunnar. IX. Trúarvitundin. X. Trúarjárn-
ingar og kenningarfrelsi. XI. Trúvillukæran. XII. Ávinningurinn.

Aftan við þessar ritgerðir eru á rúmum 80 blaðsíðum þéttþrenguð-
um og með smálettri »Fylgiskjöl« snertandi vestur-íslenzku deilumálin.
Mest þeirra skjala er »Framburður prestanna fyrir rétti«.

Því miður leyfir ekki rúmið, sem mér er afskamtað hér, að farið sé ítarlega út í efni hvers einstaks kafla bókarinnar, svo feginn sem eg hefði viljað. Þó eru þar tvær ritgerðir, sem eg einkanlega vildi mega vekja athygli á fyrir þá sök, að um þau efni, sem þar ræðir, hefir mér vitanlega ekki verið skrifað neitt á íslenzku fyrri.

Annað er ritgerðin »Skoðanir Lúters um biblíuna«. Hitt »Trúarskoðanir þjóðar vorrar«.

Í fyrri ritgerðinni er gerð ítarleg grein fyrir allri afstöðu hins mikla siðbótarhöfundar til heilagrar ritningar. Sú ritgerð er ekki sízt tímabær nú, er fjögra alda minning lútersku siðbótarinnar stendur fyrir dyrum, og þess andans mikilmennis er að minnast, er valdið hefir einni af mestu og mikilsverðustu byltingum í sögunni og var í flestum greinum svo langt á undan sínum tíma. En því næst er hún einkar tímabær fyrir þá sök, hversu afturhalds-guðfræðin hefir tekið sér einmitt Lúter til inntektar í deilunni gegn framsóknar-guðfræðinni og það enda svo, að hún hefir viljað gera framsóknar-guðfræðinga útlæga úr þeirri kirkjudeild, sem kennir sig við Lúter. En hér sýnir höfundurinn með fjölda tilvitnana í rit Lúters, hve langt hann hefir verið á undan sínum tíma einnig að því er snertir skoðanirnar á ritningunni, miklu frjálsslyndari en allur þorinn þeirra afturhalds-guðfræðinga, sem nú þykjast einir bera »lúterskt« nafn með réttu. Slíkt er nú að vísu sízt nýtilkomið, að »lúterskir« menn hafi viljað vera »lúterskari« en sjálfur Lúter í ýmsum greinum, en afstaða Lúters til ritningarinnar er því eftirtektarverðari, sem hann gerir ritninguna — þrátt fyrir frjálsslyndi sitt gagnvart henni — að einu reglu- og mælisnúru trúar og líf-ernis. Átti það að geta verið mönnum bending um, að eins geti þetta tvent farið saman á vorum dögum, en því hefir afturhalds-guðfræðin einatt viljað neita, ekki sízt á meðal vor. Þeir menn, sem gengið hafa mest fram í því, að halda fram bókstaflegum innblæstri ritningarinnar og óskeikulleika í öllum greinum, gerðu rétt í að hugfesta sér það, að hvorugt þetta er »lútersk« kenning, sé »lútersk« kenning miðuð við skoðanir Lúters sjálfs. Til þess var Lúter vissulega of heilbrigður andi og of gagnkunnugur ritningunni sjálfri.

Hin ritgerðin, sem eg vildi benda á, er um »trúarskoðanir þjóðar vorrar« eða — ef svo mætti segja — stutt ágrip af trúarsögu Íslendinga frá elztu tíð til vorra tíma. Er sú ritgerð afarfróðleg það sem hún nær. Meðal annars er þar sýnt með rökum

Á hvert djúp sé staðfest milli 17. aldar og 19. aldar rétttrúnaðarins. En það dregur höf. sérstaklega fram fyrir þá sök, að 19. aldar rétttrúnaðurinn (eins og hann hafði mótast á Íslandi fyrir áhrif ýmissa góðra manna) var sú kristindómstegund, sem Íslendingar fluttu með sér vestur um haf, og lendir þar jafnskjótt í harðri deilu við 17. aldar rétttrúnaðinn. Er síra Jón Bjarnason fulltrúi hins fyrnefnda, en síra Páll Þorláksson hins síðarnefnda. En svo er grimdin mikil á báðar hliðar í þeirri sennu, að síra Páll lýsir því yfir, að samvizka sín leyfi sér ekki að skoða síra Jón »bróður sinn í drotni vorum Jesú Kristi«, slíkur villutrúarmaður sem hann sé, en síra Jón kallar það »anti-kristindóm«, sem síra Páll kenni. Svo langt komust menn í frekjunni, að síra Páll amaðist við því, að safnaðarfólk sitt hefði grafreit sameiginlegan safnaðarfólki síra Jóns! Seinna leiðir höf. rök að því, að sú guðfræði, sem kirkjufélagið vestur-íslenzka berjist fyrir nú, sé 17. aldar guðfræðin — með öðrum orðum: að 17. aldar rétttrúnaðurinn hafi þar vestra, í hóp rétttrúaða kirkjufólksins íslenzka, orðið 19. aldar rétttrúnaðinum yfirsterkari. Að þar er ekki tekið of djúpt í árinna, hvað skoðanirnar á biblíunni smertir, virðist ómót-mælanlegt af »framburði prestanna fyrir rétti«, eins frá honum er skýrt í »fylgiskjölunum«. Þar hika einn af prestunum vestur-íslenzku ekki við að játa, að hann trúi því, að sólin snúist kringum jörðina af því svo er kent í gamla-testamentinu. En hér skal ekki farið frekar út í þá sálma.

Kirkjufélag landa vorra vestan hafs var stofnað í bezta og göfugasta tilgangi og það hefir vafalaust unnið mikið starf og virðingarvert til viðhalds og eflingar kristnibaldi landa vorra þar í dreifingunni og um leið til viðhalds og styrkingar íslenzku þjóð-erni þeirra. Að guðfræðilegur skoðanamunur geri vart við sig innan þess félagsskapar er ekki nema eðlilegur hlutur. Það kirkjufélag hefir aldrei verið til, þar sem allir starfsmenn þess litu nákvæmlega sömu augum á trúmálin. En að þetta kirkjufélag skuli hafa leiðst svo langt í þröngsýni og ófrjálslyndi í trúmálum, að menn geri sér að leik að flæma burt úr þeim félagsskap annan eins mann og höfund þessarar bókar, með hans mikla lærdómi og með hans heitu lifandi kristnu trú, — það finst mér átakanlega raunalegt. Og mér er spurn: er kirkjufélagið svo mönnum skipað á nálægum tíma, að það megi við því að hrinda jafn þryðilega hæfum manni frá sér? Eg fæ ekki séð, að þeirri spurningu verði svarað öðruvísi en neitandi.

Síra Friðrik J. Bergmann hefir með þessari bók sinni reist sér sem frjálslyndum kirkjunnar manni þann bókmentalegan minnisvarða sem lengi mun óbrotinn standa í fáskrúðugum guðfræðilegum bókmentaakri vorum.

J. H.

Vestan um haf. Smávegis um Ameríku og Landa vestra.
Eftir Magnús Jónsson prest á Ísafirði. Rvk 1916.

I. Inngangur. II. Landslag — veðrátt. III. Landarnir. IV. Sveitabragur — siðir og venjur. V. Íslenzkan vestan hafs. VI. Andlegt líf. VII. Trúmál. VIII. Vindur. IX. Eiga Íslendingar að fara til Ameríku.

Kver þetta er lipurt skrifað, og höf. segir sjálfur í formálanum, að í því sé »ekkert annað haft fyrir augum en segja satt frá«. Viljinn er lofsverður. En ekki get eg að því gert, að mér virðist kverið bera það greinilega með sér, að höf. hefir litið óyndisugum á alla skapaða hluti sem hann sá vestra og því orðið blutdrægur. Eg hefi í grein minni um Vestur-Íslendinga hér að framan athugað kenningu hans um að »Landar« séu ekki Íslendingar lengur — kenningu sem annars kemur illa heim við það sem hann segir á bls. 45: »Miklu greiðara aðgöngu að hafa líkamleg fataskifti en andleg. Og þess vegna lifir gamli neistinn undir niðri hve kappsamlega sem nýi tíminn hleður ofan á hann«. Eða málsháttinn: »Sá breytir um loft en ekki lund, sem langt flyzt«, sem hann vitnar til þegar hann þarf að skýra deilurnar um trúmálin sem — arf framan af Sturlungaöld. Annars virðist mér skoðun höf. á þjóðerni »Landa« byggð á því að hengja sig í smámuni, sem ekkert sanna um þjóðernið, og leggja út á versta veg það sem finna má að einstökum mönnum. Eftir að eg hefi kynst Vestur-Íslendingum læt eg engan telja mér trú um, að Íslandsvinir séu þeir ekki nema sárfáir, eins og höf. segir á bls. 40. Það getur verið þarft verk að benda á það sem manni þykir að, og ýmislegt sem höf. segir er eflaust holl hugvekja fyrir einstöku »Landa«. En það er ranglátt, að það komi fram sem mynd af Vestur-Íslendingum alment eins og orðið hefir, hvort sem höfundur hefir ætlast til þess eða ekki, því að enginn sem les kverið getur hugsað annað en að »Landar« sé þó að minsta kosti ríflegur meiri hluti Vestur-Íslendinga. Höf. segir á bls. 28: »Enginn sérstakur má því taka til sín neitt af því, er hér kann að verða sagt um Landana vestra. Hér er að ræða um heildarmynd, eins og hún vakir fyrir höfund-

inum eftir á«. En ef ekkert af öllu þessu á við neinn sérstakan mann, hvar á himni eða jörðu á það þá heima?

Á bla. 45 segir höf. að land það er hver landnemi tekur (heimilisréttarland) sé 116 ekrur. Það er 160 ekrur.

Kverið er skrifað af kulda, hvaðan sem hann kemur.

G. F.

Jerúsalem. I. Í dölunum. II. Í Landinu helga. Skáldsaga eftir **Selmu Lagerlöf**. Þýtt hefir Björg Þ. Blöndal. Reykjavík. Bókaverzlun Sigurðar Kristjánssonar. 1915—'16.

Þetta er einhver merkilegasta skáldsagan sem nokkurn tíma hefir verið þýdd á íslenska tungu. Einn af beztu ritdómurum Svía, skáldið Oscar Levertin, hefir meðal annars skrifað þetta um hana:

»Maður er alveg í vandræðum þegar maður árum saman af fljóttærni hefir haft fallegu lýsingarorðin gálauslega um hönd. Maður vildi helst velja slíkri bók ný, öldungis ótelgd einkunnarorð. Gamlir og ungir, mentaðir og ómentaðir eiga jafnt að geta notið þessarar sögu, svo tær er lind hennar. Eg veit ekki hvað er aðdánlegast í henni, auðlegð hjartans eða ímyndunaraflsins, innilegleikinn, sem aldrei flekkast af auvirðilegri og hverflyndri klökkvi nútímans, eða hin frábæra frásagnarlist. Hér á sannlega talshátturinn »skáld af guðs náð« við, þó honum sé oft misbeitt. En ekki skyldu menn þá hafa Appollo hinn hellenska í huga. Því að það er Saga hin norræna sem haldið hefir skáldkonu vorri undir skírn.«

Málið á þýðingunni er yfirleitt víðfeldið og ytri frágangur góður. Bókin er því stórra þakka verð.

G. F.

Valur: Dagrúnir. 1915. Sami: **Brot**. Sögur úr íslenskum þjóðlífi, 1916. Rvk. Bókaverzlun Arinbj. Sveinbjarnarsonar.

Sögur þessar eru myndir úr lífi íslenzkrar alþýðu. Höf. hefir glögt auga, og er auðsýnt, að hann leggur stund á að skila sem bezt því sem ber fyrir auga og eyra. Mér virðist hann efnilegur rithöfundur. Hann segir yfirleitt vel frá, og þótt smávegis viðvaningsmörk séu á stílnum hér og þar, þá eru þau ekki meiri en það, að æðari hönd hefði getað máð þau af með nokkrum pennadráttum. Í aðalsögu fyrri bókarinnar hefir höf. ekki náð föstum tókum, sagan er slitrótt, dettur sundur í þætti, og verður ekki að

samfeldum straumi. En ýmsar lýsingar eru þar sem teknar beint út úr lífi fátæklinganna. — »Brot« hafa tekist miklu betur. Höf. tekur þar fast um efnið og myndarlega. Það eru góðar sögur. Og þó með þeim »eftirvara«, að þær eru flestar naprar og kveljandi. Því eins og sumir aðrir skáldsagnahöfundar vorir dvelur Valur við skuggabliðar þjóðlífsins, basl og bágingi og mannúðarleysi. Það er raunalegt hve mörgum söguhöfundum vorum er dimt fyrir augum. Átti að dæma þjóð vora eftir því sem henni er lýst í sumum skáldsögum, þá er hún ekki á marga fiska. Eg held hún sé betri en af er látið, og eg vona að þeim fjölgi, sem fara að skerpa sjónina fyrir því sem gott er í fari hennar. Eg vil heldur í sögu sjá árroða betri tíma, en skugga horfinna hörmunga og lasta. Sumir halda ef til vill að það sé þarft verk og heilsusamlegt að draga fram í dagsljósið alt hið vesælasta og versta í mannsálunum, menn vakni við það og sjái að sér. Eg hefi litla trú á því. Þeir sem slíkar sögur eru stílaðar til, lesa þær að öllum líkindum ekki, og ef þeir lesa þær, taka þeir þær ekki til sín. Og það er meiri lærdómur í að sjá einn mann fara rétt að en þúsund rangt.

Eg vona að Valur, sem mér lízt vel á, komi næst með bjartari og þó jafnsannar myndir úr lífi íslenzkrar alþýðu, sem hann þekkir svo vel.

G. F.

Axel Thorsteinsson: Ljóð og sögur. Rvík. Bókaverzlun «Guðm. Gamalíelssonar 1916.

Eg las fyrst kvæðin fljótlega og hugsaði með sjálfum mér: Þetta eru æskuljóð. Um svona yrkisefni kveða ungir menn, meðan þeir eru að leita að sjálfum sér og hafa ekki fundið heiminn. Erfitt á að gizka hvernig höf. kveður að tíu árum liðnum. En skáld mun hann vera.

Svo las eg sögurnar og sá að hann var þegar seztur á bekk með efnilegustu söguskáldunum okkar ungu. Eg man hve góður mér þótti »Skógareldur« þegar eg las söguna í Eimreiðinni. Og mér var unun að lesa hana aftur. Það er ljómandi smásaga. »Sólveig,« »Komdu hingað til mín,« »Forherðing« og Einn í sorginni« eru alt góðar smásögur, ekki sízt »Forherðing«. »Sigrún« finst mér daufari. Stíll höf. er óvenjugóður, léttur og blæþýður og þó með persónulegum hreim. Sögurnar bera vott um hreina og viðkvæma listamannssál, og eg hlakka til að lesa næstu sögur þessa unga manns.

G. F.

Um jarðskjálftasprungu.

Af hverju orðið hafi.

I.

Fyrir utan dalinn sem bærinn Selsund stendur í — annar bær næstur Heklu en Næfurholt — er alda nokkur eða háls. Er hálsinn eftir uppdrættinum danska, 154 stikur yfir sjó, en hér um bil 30 stikur yfir dalinn fyrir innan, þar sem mestur er munur. Í hálsi þessum er berg dökkmógrátt, líkast því sem steinsteypa væri; er hálsinn þannig til kominn að þar hefir hlaðist saman mól, sandur og leir út af bráðnandi jökulsporði, sem þar var um hríð. Hefir aur þessi svo allur harðnað og orðið eins og steinsteypa af ábrifum jarðhita líklega, fyr og gersamlegar en annars mundi orðið hafa. Varð skriðjökulsmíð þessi um líkt leyti, eða nokkru eftir að hlóðust upp jökulöldurnar miklu og eftirtektarverðu fyrir sunnan Keldur á Rangárvöllum (Kóngshóll c. s. frv.). Varð þar stöðuvatn mikið fyrir innan, er jökullinn bráðnaði burt. En stöðuvatnið fyllti síðan af hraunum, við gos þau hin afskaplegu er þar urðu norðurfrá. Er þar einn staðurinn sem sjá má þess merkilegan vott, hvernig skiftet hafa á hér gosaldir og jökulaldir. Er um þetta margt að rita þó að ekki sé það hér gert. Skal þess að eins getið, að Hróarslækur heitir nú, þar sem var áður jökulsá mikil, meðan jökulgarðarnir fyrir sunnan Keldur voru að hlaðast upp.

II.

Innan við Selsundsölduna, sem eg nefndi fyrst, er sprunga eftir jarðskjálftann vorið 1912, og er hér vakin eftirtekt á henni vegna þess, að þar má svo greinilega skilja, vegna hvers jörðin sprakk sundur einmitt þarna. Getur ritgerð þessi orðið mönnum nokkur stuðningur eða leiðbeining, til þess að taka betur eftir, og hugsa réttar. Að ástunda meir rétta hugsun en alment er gert, er hin mesta

nauðsyn, ef framfarir eiga að verða í rétta átt, og má ekki láta það villa sig, þó að þeim hafi oft ekki vegnað vel, sem forvígismenn hafa verið í þessum efnum. Hlýtur oft svo að fara, meðan mannfélagið, eða þetta sem er að reyna að verða mannfélag, hefir enn ekki nógu vel lært að verða samtaka, og þjóðlíkaminn því er haldinn af nokkurs konar »ataxia« eins og þess konar veikindi eru nefnd á læknamáli.

III.

Vér tökum þá þar til, er jarðskjálftabylgjan, hreyfingaraldan í jörðinni, rann út Selsunds dalinn. Þegar hún kom að jökulbergshálsinum, sem áður er um getið, þá var steypuberg þetta svo fast fyrir, að jarðaldan kastaðist að miklu leyti aftur, en aðeins nokkuð af henni hélt áfram í jökulberginu. Hvað nú varð, skýrist best, ef menn athuga sjávaröldur, sem skella upp að hömrum; þær kastast frá hömrnum aftur, og há og úfin alda, hærri og úfnari en hinar, rís upp skamt frá hömrnum, af samkasti frárennandi og aðrennandi öldu.

Líkt þessu hefir farið með jarðbylgjurnar þarna við Selsundshálsinn. Jörðin innan við jökulbergshálsinn hefir hafist upp í svo brattan hrygg, þegar bylgjunum að og frá hálsinum laust saman, að yfirborðið þoldi ekki þensluna og rifnaði.

Hvirfilhreyfingar eða hvirfingar hljóta að verða hér og hvar þar sem viðspyrna einhver hrindir öldum frá sér, af því að fráalda og aðalda snúast hvor á aðra. Sjáum vér þessa vott á Selsundsprungunni, því að jörðin hefir þar risið upp í hól, sem sprunginn er marga vegu út frá toppinum.

Jarðskjálfti sá, sem hér ræðir um, virðist ekki hafa átt upp-tök sín mjög djúpt í jörð; verð eg að láta þá um að rannsaka slíkt nánar, sem meira kunna í hreyfingarfræði en eg. En upp-tök jarðskjálftans er mjög líklegt að hafi verið einhver aðalbrestur sem varð þegar jarðhitinn var að leita uppeftir í undirbúningi undir gosið norðaustur af Heklu vorið 1913.

Helgi Pjeturss.

Um heiti hljóðfæra og önnur hljómfræðisorð í íslenzku.

Það er oft tekið fram — og það með réttu — hvað íslenzkan er auðug. Hún hefir getað fylgst með tímanum og hefir þó varðveitt fornan kraft og auð. Það er sama málið og það sem Egill kvað og Snorri reit, en yngt upp og nýttízkulegt. Fjöldi rithöfunda hefir auðgað það og fært út kvíar þess. Hefir það einkum á seinni tímum auðgast mörgum fræðiorðum, jafnvel í vísindagrein svo sem heimspeki.

Þó er talmálið ekki alltaf sem hreinast. Mann furðar á að heyra orð eins og »dúkka«, »kústur« o. s. frv. í stað svo góðra og gildra orða eins og »brúða«, »sópur« o. s. frv. Að nokkru leyti er þetta að kenna auglýsingunum í búðunum og í blöðunum. Mig hefir t. d. oft furðað á orðinu betræk, sem einatt kemur fyrir í auglýsingum, að minsta kosti í svigum við hlið góða orðsins »veggfóður«. Hvaða mál er betræk? Ekki danska. Á dönsku er alltaf sagt tapet eða papír; betræk er hinsvegar notað um húsgagna-fóður. Mörg önnur ljót orð gæti eg til tínt einsog sultutau, tau, rulla, krullujárn, kirseber, en eg skal ekki fara frekar út í þá sálma. Íslenzka kaupmannastéttin setti ekki að spilla málinu svona, og blöðin settu ekki að taka upp slíkar auglýsingar óbreyttar.

En það er að öðru leyti einnig að kenna því að menn hafa tekið upp í ritmálið orð sem eru óhentug og lítt lífvæn. — Það er engum blöðum um það að fletta að það er yfirleitt réttara að mynda nýyrði úr íslenzkum efnivið, heldur en að taka upp útlend orð. Oftast eru innlendu orðin hentugri. Þau eru auðskildari, stafsetning og framburður valda engum erfiðleikum, það má beygja þau á íslenzku og búa til íslenzkar afleiðslur og samsetningar úr þeim;

enda eru þau oftast hljómfegri en útlendu orðin, er oft stinga leið-
inlega í stúf við hin orðin.

En þetta er ekki altaf svo. Stundum er mjög erfitt eða ef til
vill ómögulegt að búa til innlent orð yfir hlut eða hugtak, sem
kemur utanað. Þegar svona stendur á er betra að taka upp út-
lent orð og íslenzka það, gefa því íslenzka mynd, svo hægt sé að
bera það fram samkvæmt íslenzkum framburðarreglum og rita það
samkvæmt íslenzkum ritunarreglum. Á öllum tímum hafa útlend
orð verið tekin upp í málið og hafa samlagast því algerlega. Hvað
margir Íslendinga vita, að orð eins og aðall, banki, biskup,
brúka, dans, duft, frú, gáfa, hanski, kápa, kaupa,
kirkja, lampi, pils, prestur, rós, skóli, tafla, úr
o. fl. eru útlend að uppruna? Og þó er það svo. En nú eru
þau orðin alíslenzk. Kirkja er íslenzka, eins og kirke er
danska og church enska. Købe er danska, kaufen þýzka,
en kaupa þ. e. a. s. [köypa] er íslenzka og ekkert annað.¹⁾

Sem dæmi upp á miður vel valið innlent nýyrði skal eg nefna
hljóðfæralið, sem er haft um orðið Orkester í »Ný dönsk
orðabók«. Orkester (ít orchestra, úr gr. ὀρχήστρα) merkir ekki
að eins mennina sem leika á hljóðfærin, heldur einnig öll hljóð-
færin, sem á er leikið í einu. Hvernig á að þýða orkester-
musik á íslenzku. Hljóðfæraliðssláttur? Það á ekki
vel við. Eða strygeorkester, blæseorkester eða at
orkestrere? Hér er varla annað að gera en að taka upp út-
lenda heimsorðið. Það má gefa því myndina orchestra, en or-
kestur (hvk.) er ef til vill betri mynd. Þá má segja orkest-
urssvið um svið það í leikhúsum, þar sem hljóðfæramennirnir
sitja. Orkestursliðið er þá hljóðfæramennirnir;
orkestermusik má kalla orkesturslátt og stryge-
orkester strokorkestur.

Allmörg þeirra hljóðfæraheita og hljómfraeðisorða, er »Ný dönsk
orðabók« notar eða stingur upp á eru annaðhvort illa valin eða al-
röng. Höfundarnir hafa auðsýnilega ekki verið nógu vel að sér í
hljóðfærafræðinni, annars myndu þeir t. d. varla hafa þýtt eithar
með »gígja«, fagot með »djúplúðr« eða lire með »e. k. hljóð-
kassi«. Þeir halda að lire og lirekasse séu sama hljóðfærið,

¹⁾ Sjá einnig grein eftir mig „Alþjóða-orð eða innlend?“ í Morg-
unbl. 25. júlí 1916.

en hér er mikill munur. Lire er einskonar strokhljóðfæri (fiðla), en lirekasse er skyldur organi.¹⁾

Til þess að finna heiti þau sem best eiga við á þessu sviði verður maður að þekkja hljóðfærin, einkenni þeirra og skyldleika.

Eg nota hér hljóðfæra-niðurskipun þá, sem Victor Charles Mahillon, forstjóri hljóðfæra-safnsins í Brussel hefir fundið upp og víða er notuð. Eg ætla aðeins að telja helztu hljóðfærin, sem algeng eru eða líklegt er að muni verða algeng hér á landi, og þau er getið kunni að verða í ritum hér.

I. flokkur eru sjálfhljómandi hljóðfæri.

Til þeirra telst skálabumban (»kymbala«, »slagbakken«); enn fremur klukkan, handskellan (»castagnetta«), tréspilið og glerspilið. Tréspilið (xylophon) er röð stiltra tréplatna, er slegnar eru með hömrum. Í glerspilinu eru glerplötur í stað tréplatna. Til þessa flokks verður einnig að telja gong (— gong) Kínverja, er vel má kalla »málmbumba«.

II. flokkur eru himnuhljóðfærin.

Til hans teljast bumban, bjöllubumban (tamburino) og ketilbumban (pauke, ít. timpano).

III. flokkurinn eru blásturhljóðfærin; en honum verður að skifta í ýmsa undirflokkka.

A. Með munnblæstri. 1. Með vara-munnenda eru flautur eða hljóðpípur. Hér er nafnið flauta betra til samsetninga. Algengasta flautan er þverflautan. Alþýðuhljóðfæri er ocarina. »leirflautan«. 2. Með reyr-munnenda og (a) tvöfaldri tungu, þ. e. tveim litlum reyrblöðum, er opnað fljótt og lokast, er blásið er, — eru hóbó, bassahóbó (Fagotto) og enskt horn, sem er úr tré einsog hóbóirnar og klarínettan og ekkert skylt hornunum úr málm. Alþýðuhljóðfæri er teljast hér til eru smalaflautan (skalmeje) og belgflautan (sækkepibe, e. bagpipe, ít. piva, cornamúsa). (b.) Með einfaldri tungu eru klarínettan og bassaklarínettan. Hér er það þunt oddmjótt reyrblað sem sveiflast gegn vegg munnendans, þegar blásið er. (c) Með lausri tungu, þ. e. lítilli málmtungu, er sveiflast í lausu lofti í umgjörð sinni, er blásturharmónikan.

3. Með ketilmynduðum munnenda (og úr blikki) eru gjöllin (tromba), merkislúðurinn (signal-horn) veiðimannslúð-

¹⁾ Aftur á móti eru hljómfærðis-heiti þau, er Sigfús Einarsson notar í „Hljómfærði“ sinni og í „Almenn söngfærði“ flest ágæt.

urinn, speldishornið, ventilhornið, (it. cornetta) skógariúðurinn (waldhorn), básúnan og túban. Til þeirra telst einnig fornblúðurinn (frá eiröldinni).

B. Með »mekaniskum« blæstri. Hér er fyrst að telja organ-ið. Myndin organ er hin rétta og auk þess miklu íslenzkulegri en »orgel«; öll mál, nema þýzka, danska og sænska, hafa myndina organ: latn. organum, it. organo, gr. ὄργανον, fr. orgue, e. organ, á færeysku urga (en einnig orgul og hargeir!) o. s. frv. Eg skil ekkert í að Íslendingar skuli hafa lagt þessa orðmynd niður og tekið upp hina, sem hefir svo óíslenzka endingu. Organið er eiginlega kerfi ýmsra blasturhljóðfæra, flautna, hóbóa, gjalla, horna o. fl.) en stofuorganið (harmoníum) hins vegar hefir lausar tungur eins og blásturharmónikan, og þetta hefur (drag)-harmónikan einnig. Lirekassæ er skyldur organi, er þetta hljóðfæri með pípum og flautum eins og organið, en það er knúið með sveif, og mætti því kalla það sveifarorgan. Það er helzt notað af farandleikurum úti á götum og í bakgördum, og mætti því einnig kalla það strætisorgan (e. streetorgan, þý. strassenorgel), og er það víst bezta nafnið. »Hljóðkassi« mætti eins vel nota um pianó, organ og fleiri hljóðfæri.

IV. flokkurinn eru strengjahljóðfærin. Þeim má aftur skifta í griphljóðfæri og strokhljóðfæri, sem eru strokin með boga.

Griphljóðfærin eru annaðhvort án háls eða með hálsi. Án háls voru lýra Forngríkkja og eins kithara. Náskyld þeim er harpan, sem er eitthvert hið hljómfegursta og fullkomnasta hljóðfæri; það er með mörgum löngum strengjum, er slegnir eru með fingrunum.

»Cithar« (it. cetra) svipar mjög til hörpunnar. Það er eins og lítil harpa í kassa, og er hún slegin með fingrunum á líkan hátt og harpan. Mætti ef til vill kalla hana alþýðuhörpu. Önnur (úrelt) alþýðuhljóðfæri, er teljast til sama flokks eru norska langspilið, er slegið er með fingrunum, ekki strokið eins og íslenzka langspilið, og finska kantelan. »Hakkebræt«, einn fyrirrennari pianósins, var kassi með all-löngum strengjum, er slegnir voru með hömrum eins og trjeplötur tréspilsins.

Með hálsi eru þessi hljóðfæri: Lútan (arab. al' úd, fr. luth, it. liuto, á sænsku luta) er stórt hljóðfæri, er svipar til gítarsins; en botn þess er mjög hvelfdur. Mandóla og mandólína eru einnig með hvelfdum botni, en eru smærri, hafa færri strengi

og eru slegnar með slegli. Einkennileg er hin rússneska bala-lækka með þrístrendri lögun. Sístran (cister) er sambandsliður lútunnar og gítarsins og með flötum botni, en slegin með slegli. — Með flötum botni og hliðum er einnig gítarinn, algengasta hljóðfærið af þessum flokki og alkunnur hér á Íslandi. Einkennileg er hin spormyndaða lögun hans með smábugðum inn á við í miðju. Er leikið á hann á líkan hátt og á lútuna (með fingrunum).

B. Strokhljóðfærin eru einn hinn mikilvægasti hljóðfæraflokkur, og með þeim teljast nokkur hin helztu og dýrlegustu hljóðfæri, sem til eru.

Þeim má skifta í tvo aðalflokka: gígjurnar með mjög hvelfdum botni eins og lútan og mandól(in)an og fiðlúnga með flötum eða lítt hvelfdum botni.

Gígjan var lítið fiðlulíkt hljóðfæri með hvelfdum botni, en það er nú úrelt. Á þýzku er orðið nú einnig haft um hina almennu fiðlu, og er ekkert við það að athuga. Gígjan er náskyld hinni núverandi fiðlu. Hins vegar er það vitleysa ein að nota þetta heiti um alþýðuhörpunna, lútuna og ef til vill fleiri hljóðfæri. Eins konar gígja var einnig *vasagígjan* (fr. *pochette*, da. *stokfiol*), er danskennarar notuðu mikið áður fyrir (sbr. kvæði Bellmans og Tennemann í »Aprílsflónunum« eftir J. L. Heiberg). Þetta hljóðfæri var einnig með flötum botni. Mætti kalla það *vasafiðlu*.

Fiðlungar voru áður tvenns konar: *viola da braccio*, armfiðlungur, og *viola da gamba*, hnéfiðlungur. Hvorir tveggja náðu yfir bæði stór (djúp) og smá (há) eintök. Þeir áttu oftast 5—6 strengi, stundum að eins fjóra, alloft marga. Af armfiðlungum var einkum *viola d'amore* uppáhaldshljóðfærið á 18. öld. Átti það 5—7 þarmstrengi, er boginn var dreginn yfir, og auk þess aðra 5—7 endurhljómandi strengi úr málm, er gerðu hljóðfærið einkar hljómpýtt. Er það sjaldan notað á okkar dögum. Af hnéfiðlungum var *tenórgamban* mikið notuð sem »sóló«-hljóðfæri á 18. öld og þótti hún harla hljómpýð. Er hún enn stundum notuð á Frakklandi og taka sumir hana fram yfir *violoncello*, er hefir bolað henni burt.

Þessir fiðlungar (it. *viole*) eru nú svo að segja úr sögunni, og skipa nú *violino*, *alto*, *violoncello* og *violone* sæti þeirra. Er þessi hljóðfæri einfaldari, spengilegri og hljómsterkari, en hin. Um uppruna þeirra vita menn fátt; þau virðast eins gömul

og hin; en það er þó ekki víst. Nafnið violino er bersýnilega dregið úr viola, og eins hin nöfnin: violoncello og violone.

Diskant-hljóðfærið er violino, er réttu nafni heitir á íslenzku fiðla. Sumir vilja ekki þetta nafn, af því að áður hefir verið annað strokhljóðfæri íslenzkt með þessu nafni, allfrábrugðið violino. En þetta hljóðfæri er nú úr sögunni, og nafnið fiðla ber með réttu hljóðfærinu violino. Er það dregið úr fidula, vitula, er var heiti nú úrelts hljóðfæris, er mjög svipaði til okkar núverandi fiðlu. Kemur nafn þetta fyrir í öllum germönskum málum (þý. fiedel, holl. vedel, veel, e. fiddle, da. fiddel, feddel, fejla, sæ. fela, no. fela eða fele, ísl. fiðla) og er alstaðar haft um violino. Hitt nafnið, it. violino, fr. violon, gr. βιολίον, þý. violine, da. violin (alþýðumálin líka fiolin, fiol, fjol)¹⁾ á ef til vill kyn sitt að rekja til fidula, en í germönskum málum er það óþjóðlegra en »fiðla«, er alstaðar hefir lagast eftir málreglunum. Fíólín er ekki nema þýzk afbökun úr »violino« komin inn í íslenzkuna gegnum dönsku. Í Danmörku er sú mynd nú álitin mjög dónaleg, og ekki er hún fallegri á íslenzku; enda er ekki bægt að búa til afleiðslur úr henni eins og úr myndinni »fiðla«. Þegar menn eru að tala um íslenzku fiðluna, verða menn þess vegna að hafa fyrir að nota heitið »íslenzka fiðlan« eða »Íslands fiðlan«.

Alta²⁾-hljóðfærið heitir á ítölsku viola eða alto, á þýzku bratsche, á dönsku bratsch. Það er mjög líkt fiðlunni, en stærra, botn þess oftast miður hvelfdur en botn fiðlunnar og stilling þess er dýpri: c—g—d—ā; eins og kunnugt er, er stilling fiðlunnar: g—d—ā—ē. Mætti kalla það á íslenzku »altafiðlu«.

Tenór-hljóðfærið vantar eiginlega, og violoncello, er upphaflega var aðeins bassahljóðfæri, er nú notað bæði fyrir tenór- og bassahljóðfæri. Það er hnéfiðla og mætti vel nota þetta heiti, en þar sem áður voru fleiri hnéfiðlur, og ein þeirra tenór-gamban er stundum enn notuð, fer betur á því að kalla violoncelle »bassafiðlu« (smbr. basfiolá sænsku). Stilling: C-G-d-a. Eitt strokhljóðfæri er enn eftir, það er it. violone eða contrabasso, sem er eunþá tónkýpra en bassafiðlan. Það er líkara gömbunum í lögum en fiðlunum. Það er mjög hátt og verður leikarinn að standa upp, þegar hann er að leika á það. Strengir

¹⁾ Slafnesku málin eiga alt önnur heiti (rús. skríпка, pól. skrzypce).

²⁾ Sjá síðar.

fiðlunnar, altafiðlunnar og bassafiðlunnar eru stiltir í fimmundum, en strengir violone í ferundum: E-A-D-G. Mætti kalla það »djúp bassafiðlu«.

Af ýmsum alþýðu-hljóðfærum er heyra hér til má nefna lire (it. ghironda, fr. vielle). Á þetta hljóðfæri er ekki leikið með boga, heldur er tónninn knúður fram með tréhveli sem er snúið með sveif; tónhæðin er framleidd með töstum (nótum). Nú er lire úrelt hljóðfæri. Mætti kalla það »sveifarfiðlu« eða »tastafiðlu.« Annað alþýðu-hljóðfæri er »Harðangursfiðlan«, er á 4 þarmstrengi og 4 endurhljómandi málmostrengi (sambr. viola d'amore). Er þessi fiðla oft fallega greypt perlumóður. Ennfremur má nefna Íslands-fiðluna tvístrengjuðu og íslenzka langspilið, bæði úrelt nú.

Einhver Frakki hefir búið til strengjaorgan eða strokorgan. Þegar maður þrýstir á tastana (nóturnar) koma þeir smáhjóllum af stað, snúast þau og strjúka um leið strengina sem eru eins margir og í pianó. Hljóðin eru einkar þýð og falleg, en heldur veik.

C. Piano eða pianoforte.

Piano er stórt strengjahljóðfæri í kassa, þar sem tónarnir eru framleiddir með hömrum, sem eru settir í hreyfingu af töstum (nótum). Fyrirrennarar pianósins eru m. a. clavicordio, þar sem tónarnir voru ekki framleiddir með hömrum, heldur með málmtittum, (da. tangenter) og clavicemboal, þar sem strengirnir voru smeltir með fjödurstöfum. Hljóð þeirra voru lík tónum lútunnar eða gítarsins. Konráð Gíslason kallar piano í orðabók sinni hljóðborð, »Ný dö. orðabók« notar myndina hljómborð, en ekki er það orð vel valið, einkum á það ekki við nú á tímum, þar sem flest piano eru »uppreist« og »borðmynduð«. Það er ekki hægt að fiuna gott íslenzkt heiti handa þessu hljóðfæri. Eg sting upp á »hamraharpa«.¹⁾ Þykir mér reyndar þetta heiti ekki sérlega gott, en það er þó betra en hljómborð. Ómbotni pianósins með strengjunum svipar nokkuð til hörpunnar, og þar sem hamrakerfið er helzta einkenni pianósins, þykir rétt að kenna það við það.

Flygel, stóru borðmynduðu hamrahörpuna, mætti kalla »flýgil«.

¹⁾ Í »Ljóð og sögur« eftir Axel Thorsteinsson er notað heitið slagharpa; naumast gott heiti, þar sem venjulega harpan er einmitt »slegin«.

Eg kann ekki við orðið »nóta« um »tasto« (tangent er rangnefni). Nóta merkir annars tóntúkn eins og í öðrum málum, og er þess vegna óheppilegt og óhentugt að hafa það um alt annað. Eg sting upp á »tasti,« sem getur orðið alíslenskt orð. Nóta er líka af útlendum uppruna. »Tastiera« (klaviatur) væri þá rétt að kalla »tastaborð.«

Eftir er mannsröddin, sem eiginlega er einskonar blástur-hljóðfæri. Henni er alment skift í basso (primo basso og secundo basso), baritono (basbariton og tenorbariton), tenore (primo tenore og secundotenore), alto (þegar þessi rödd er mjög djúp er hún kölluð contralto) og soprano (primo soprano og secundo soprano eða mezzo soprano).

Heiti þau sem notuð eru í »Ný dönsk orðabók« eru ekki góð. Að kalla tenore og alto milliraddir er miður hentugt, þar sem tenore er hæsta röddin í karlakór, alto dýpsta röddin í kvennakór. Aðeins í »ósamkynja kór« eru þær milliraddir. Betra að viðhafa ítölsku heitin, en að íslenska þau sem framast má verða. Á ítölsku eru þau öll karlkend, og færi best á því að karlkenna þau líka á íslensku; enda eru orðin bassi og tenór þegar karlkend. Heitin myndu þá verða þessi: Bassi (undirb. og yfirb.) — hábassi (basbariton), djúptenór (tenorbariton) — tenór — alti (djúpalti = contralto) — sóprani (djúpsóprani).

Það að einn syngur, má kalla »einsöng« og lagið »einsöngslag«. Sé hinsvegar leikið á eitt hljóðfæri má kalla það »einslátt« og »einsláttarlag«. Manninn, er syngur má kalla »einsöngvara« (solist), hljóðfærið »einsláttar-hljóðfæri«. Duetto verður þá »tvísöngur«, »tvísöngslag«, »tvísláttur« o. s. frv. Terzetto »þrísöngur«, trio »þrísláttur« o. s. frv. Quartetto »fersöngur« og »fersláttur« o. s. frv., quintetto »fimsöngur«, sextetto »sexsöngur«, septetto »sjösöngur«, octetto »áttasöngur«. Mennirnir, er syngja tvísöng, eru tvísöngvarar; menn, er syngja þrísöng, mynda þrísöngsflokk, menn, er syngja fersöng, mynda fersöngsflokk o. s. frv.¹⁾ og líkt má segja um hljóðfærin: þrísláttarflokk o. s. frv. Þegar fleiri eru söngvarar en 8, eru þeir kór, þegar fleiri eru hljóðfæri, mynda þau or-

1) E. t. v. eru heitin söngþrimenningur, söngfjórmenningur o. s. frv. enn betra.

kestur. Þá má tala um kórsöng, um kórsönglag, kór-hljómleik eða samsöng, orkesturlag, orkestur-hljómleik, ennfreður fersláttar-(hljóð)leik, strok-fer-sláttar-leik o. s. frv.

Þau eru vitaskuld miklu fleiri hljóðfærin og hljómfæðisorðin en eg skal láta staðar numið hér.

Fjarri fer því, að eg álíti öll þessi heiti fullgóð, sem eg hefi stungið upp á. En eg held eg hafi bent á réttu leiðina: að kynna sér einkenni og skyldleika hljóðfæra og að taka upp útlend heiti, þar sem erfitt er eða ómögulegt að búa til al-íslensk orð. Enda mætti fylgja þeirri reglu víðar. Mér þykir t. d. orðið ofursti miklu betra en herfylkishöfðingi eða hersir, sem »Ný dönsk orðabók« notar. Það er langt frá því, að herfylki hafi fest rætur í merkingunni »bataillon«, og hersir merkti alt annað í forn-málinu, og er því gerræði að láta það merkja einmitt oberst og ekki general eða kaptajn.

Nú vil eg að eins biðja menn að athuga þessar uppástungur, þá mun það varla bregðast, að sumir muni geta fundið ennþá betri heiti, þau heiti, sem ein eiga við.

Þeim, sem óska að kynna sér enn betur sögu og ásigkomulag hljóðfæra, get eg bent á skrá »Musikhistorisk Museum« (í Khöfn) eftir Angul Hammerich (1909). Er þetta rit með mörgum fallegum myndum.

Holger Wiehe.

Ísland 1916.

Árið 1916 hefir verið gróðaár fyrir landið í heild sinni, en vorharðindi kreptu mjög að norðan lands og austan og óþurkar að sumrinu spiltu heyja-afla manna alment sunnan lands. Veturinn var einmuna góður sunnan lands og frostalítill. Norðan lands var hann einnig góður fram í febrúar, en úr því gerði snjókomur miklar, og kvað þó einkum að þeim í marz og frameftir apríl. Lá þá óvenjulegur gaddur yfir Norðurlandi og Austurlandi, sem eigi hvarf fyr en kom fram í júní. Um miðjan júní var jafnvel sagt að fé mætti ekki vera gjaflaust sumstaðar. Er þetta talið harðasta vor, sem menn muna, á norðausturhluta landsins. Hafís kom þó ekki að landinu til neinna muna, að eins hröngl, sem ekki hamlaði skipaferðum. Fénaðinum björguðu menn með kornmatarkaupum, svo að óviða varð fellir, þótt heyin brykkju ekki. Mikið tjón varð samt víða af lambaðuða, sem stafaði af vorharðindunum. Sunnan lands var vorið allgott, en þurvidrasamt, og græri jörð því seint. Um og eftir miðjan júlí byrjaði sláttur á Suðurlandi. Í Reykjavík voru þó tún slegin nokkru fyr. En þá kom sex vikna óþurka-kafli og stórskemdust töður manna um allt Suðurland og Borgarfjarðarháað og úthey sömuleiðis. Norðan lands, austan og vestan, var sumarið betra, sumstaðar gott, og grassprettu sæmileg. Var heyfengur manna þó yfirleitt talinn í lakara meðallagi. Grasmaður gerði mikið tjón í Skaftafellsýslum. Haustið var gott um allt land; unnið að jarðabótum í Reykjavík fram í byrjun nóvember-mánaðar, og aftur síðari hluta þess mánaðar. Fyrir arslokin snjóaði töluvert sunnan lands, svo að jarðlaust varð í uppveitum Arnessýslu og Rangárvallasýslu í byrjun jólaföstu og hélzt svo fram til aramóta. Er því sagt, að útlit sé til þess að heybirgðir manna þar um sloðir endist skamt. Á Austurlandi og norðausturhluta landsins hafði og komið mikið snjór í lok ársins.

A vetrarvertíð var agætur afli í veidistöðvunum sunnan lands, þar sem vélbata-útgeið er stunduð, og eins á botnvörpuskipin og

pílskipin. En róðrarbátar, sem haldið var út frá Þorlákshöfn, öfluðu lítið. Tið var einmuna góð til sjávarins fram til 24. marz. Þá kom aftakaveður á norðan og stóð í fjóra daga. Urðu mikil slys af því veðri bæði við Faxaflóa og vestan lands. Eftir þetta var tð óstöðug um hríð og gátu vélbátar ekki sótt sjó vegna ógæfta, en botnvörpungarnir öfluðu stöðugt. Voraflinn var rýr, en síldaraflí mikill við Norðurland og Vestfirði um sumarið. Þó varð hlé á veiðinni um tíma vegna þess, að tuonnur vantaði, er kom af því að Englendingar heftu þá um stund skipaferðir til landsins. Ef það hefði ekki komið fyrir, þá mundi síldaraflinn hafa orðið þetta sumar miklu meiri en nokkru sinni áður. Síldveiði var byrjuð frá Vestfjörðum sumarið 1915 með nokkrum bátum, en þetta sumar óx hún þar mjög. Voru nú settar þar á stofn síldveiðastöðvar á ýmsum stöðum, svo sem við Ísafjarðarkaupstað, á Langeyri, á Dvergasteini og í Öfundarfirði. Menn ætla, að síldveiðarnar á Vestfjörðum eigi mikla framtíð, því reynsla þykir vera fengin fyrir því, að aðalstöðvar síldarinnar í hafinu færast vestur með landinu að norðan. Hafa síldveiðaskipin frá Siglufirði og Eyjafirði orðið að sækja síldina lengra og lengra vestur á bóginn. Botnvörpungarnir margir hættu alveg veiðum þegar síldartíminn var úti, enda varð þá leiðin til Englands með aflann hættuleg vegna þýzkra kafbáta, sem þar voru á ferð til þess að hindra flutning matvæla til Englands. Þeir af botnvörpungunum, sem héldu áfram veiðum, öfluðu ekki vel, fyr en undir aramótin. Þá fengu þeir góðan afla við Vesturland. Vélbátar hafa aflað nokkuð þar vestra í haust, en þó hafa ógæftir mjög hamlað. Um 20 pílskipum hefir verið haldið út frá suðvestur landinu þetta ár, og öfluðu þau á vetrarvertíðinni í bezta lagi, eins og áður segir, en voraflinn og sumar-aflinn var fremur lítill. Yfirleitt er þó afli þeirra meiri en í meðallagi. Á Austfjörðum hefir afli verið lítill þetta ár, en þar eru veiðar enn stundaðar með róðrarbátum jafnframt vélbátunum.

Landbúnaðarmenn kvarta meira og meira um, að þeir geti ekki fengið fólk til sumarvinnu vegna þess að síldveiðarnar, sem einmitt eru reknar um heyskapartímenn, drægi til sín allan vinnukraftinn, en kaup er svo hátt við síldarvinnuna, að landbúnaðurinn getur ekki kept um vinnukraftinn við útgerðarmennina. Kaupafólki í sveitum var í sumar borgað þetta: karlmönnum 30—35 kr. um vikuna, en kvenmönnum 15—18 kr.

Framan af árinu var verzlunarástandið hið sama og næsta ár á undan, og er frá því sagt í fréttum frá því ári. Þó var verð-

lag á nauðsynjavörum, bæði innlendum og útlendum, altaf að hækka vegna skorts á þeim hjá hernaðarþjóðunum og kepni um þær þeirra í milli. Englendingar höfðu þegar 1915 lagt ýmsar hömlur á vöruflutninga til landsins og frá því. En er fram leið á árið 1916 tóku þeir mjög að herða á þeim böndum. Var þess þá m. a. krafist af kaupmönnum, sem fengu kola- eða saltfarma frá Bretlandi, eða í skipum, sem urðu að koma þar við á leið sinni til Íslands, að þeir skuldbyndu sig til þess, að flytja ekki vörur þessar, eða aðrar vörur, sem kolin og saltið yrðu notuð til að framleiða, til þeirra þjóða, sem í ófriði eiga við Bretland, og eigi til Norðurlanda né Hollands, því þaðan mætti ætla að þær gætu síðan komist til Þýskalands. Ennfremur var það uppi látið af Bretum, að það væri ásetningur þeirra að stöðva allan flutning á íslenskum afurðum til Norðurlanda, og auk þess sóttist erfitt að fá útflutningsleyfi frá Bretlandi á ýmsum nauðsynjavörum hingað til lands, auk kola og salts, t. d. á veiðarfærum. Þessa grein gerði landsstjórnin hér fyrir því, að hún gerði samning við Breta um alla verzlun landsins, samkv. bráðabirgðalögum, sem konungur staðfesti 24. maí. Samningurinn var síðan sendur öllum lögreglustjórum landsins, en ekki birtur opinberlega, og jafnframt gaf landsstjórnin út reglugerð, dags. 24. júní, um útflutning vara frá landinu. Í samningnum var ákveðið, að skipað yrði svo fyrir, að skip, sem flyttu farma héðan til útlanda, yrðu ekki afgreidd héðan nema þau áður væru skuldbundin til að koma við í brezkri höfn. Undanskilin voru þó skip, sem héðan færu til Ameríku, ef brezki ræðismaðurinn hér væri því samþykkur. Með þessu vildu Bretar létta sér eftirlitið með því og tryggja sér það, að afurðir landsins lentu ekki til óvinapjóðanna, né til Norðurlanda eða Hollands og svo þaðan aftur til Þýskalands. Þó skyldi ekki hindrað, að fluttar yrðu til Danmerkur þær íslenskar afurðir, sem notaðar yrðu þar í landi samkv. neyðsluþörfinni. Gegn þessari skuldbindingu var svo sett það ákvæði, að ef ekki fengist markaður fyrir allar afurðir landsins utan þess svæðis, sem bannað var að flytja þær til, þá skyldi brezka stjórnin kaupa afurðirnar af framleiðendum og kaupmönnum hér fyrir verð, sem ákveðið var í samningnum fyrst og fremst til ársloka 1916. Brezka stjórnin skyldi svo sjá um að hingað fengist flutt frá Bretlandi það, sem þyrfti af kolum, salti, veiðarfærum, síldartunnum, steinolfu, kornvöru, sykri, kaffi, lyfjum og öðrum nauðsynjavörum, sem annað hvort eru ófánlegar annars staðar, eða hagfeldast þykir að fá frá Bretlandi. Þannig gerði

landsstjórnin grein fyrir þessum samningi í skýrslu, sem birt var hér í blöðunum, og maður var sendur til Lundúna, er dvelja skyldi þar og vera umboðsmaður fyrir Ísland í verzlunarmálunum.

Skömmu eftir að samningurinn var gerður, kom það í ljós, að hann var ekki skilinn á sama hátt af báðum málsaðilum, og varð það til þess, að Bretar stöðvuðu í bili vöruflutningaskip, sem voru á leið þaðan hingað til lands, þar á meðal skip með sildartunnur til Norðurlands, og olli þetta töfum við veiðarnar þar, eins og áður er getið. Bráðlega greiddist þó úr þessu. En nokkuð hefir verið deilt í blöðum um verðlagið á íslenskum vörum í samningnum, og hafa sumir talið það of lágt. Mikið af afurðum héðan hefir einnig selst fyrir herra verð en þar er ákveðið, og nokkrar undanþágur hafa fengist um vöruflutning til Norðurlanda, bæði fyrir sild og kjöt. Landsstjórnin hefir þetta ár, eins og árin á undan, keypt mikið af vörum í New York, og eins hafa einstakir kaupmenn gert. Bæri skip Eimskipafélags Íslands hafa farið ferðir vestur um haf, og svo hefir landsstjórnin haft flutningaskip á leigu, sem einnig hefir verið í förum milli New York og Reykjavíkur.

Þótt þeir samningar kæmust á við Breta um verzlunina, sem frá hefir verið sagt, og öll farmskip héðan ættu samkvæmt honum að koma við í enskri höfn, höfðu Bretar samt sam áður strangt eftirlit með öllum skipaferðum að landinu og frá því. Herskip þeirra voru á verði hringinn í kring um land, tóku skipin í hafi, rannsökuðu farm þeirra og sendu þau til enskrar hafnar, ef nokkuð þótti athugavert, hvernig sem á stóð, þótt þau væru komin upp undir land hér á leið frá útlöndum, og olli þetta oft miklum töfum og ruglingi á skipaferðunum, því eftirlitið náði einnig til þess, að ekki væru fluttar til landsins þýzkar vörur, og hefir öllum böglapósti hingað frá útlöndum verið haldið eftir í Englandi til skoðunar og hann tafist þannig um eina skipaferð. Við hefir það borið, að skipstjórar, sem farma hafa flutt héðan, hafa reynt að fara í bág við brezka samninginn og koma vörum beint til Norðurlanda; mun það hafa tekist stundum, en oftast þó farið svo, að þeir lentu í höndum Englendinga og voru þá fluttir til enskrar hafnar. Verst kom enska eftirlitið niður á Björgvinjarskipinu »Flóru«, sem er póstskip og hér í ferðum eftir föstum áætlunum. »Flóra« fór frá Reykjavík 7. júlí suður um land og með henni fjöldi farþega, mest verkafólk til Austfjarða og Siglufjarðar og margt af því kvenfólk. Spurðist ekki til skipsins frá því er það fór frá Vestmannaeyjum, 8. júlí, fyr en 14. s. m. Þá kom fregn um, að enskt herskip hefði tekið það í hafi og flutt til Lerwick, og eftir nokkurra daga dvöl þar var það flutt suður til Leith. Þaðan voru svo farþegarnir sendir með öðru skipi, »Goðafossi«, til Seyðisfjarðar og komu þangað í lok mánaðarins, en »Flóra« hélt frá Leith til Noregs. Kostaði enska stjórnin ferð og fæði farþeganna til Seyðisfjarðar, en vildi ekki aðrar bætur greiða. En verkafólkið hafði við þessa hrakninga orðið fyrir miklu atvinnutjóni og samþykki alþingi, sem saman kom í árslokin, að það tjón yrði bætt úr landsjóði, en síðan gengið eftir endurgreiðslu á þeim kostnaði hjá ensku stjórninni.

Um haustið komu aðrar bindranir í veginn fyrir skipaferðir til útlanda, en þær stöfuðu frá þýzkum kafbátum, sem um tíma voru á sveimi um hafið milli Íslands og Englands og áttu að varna matvælainnflutningi til Englands jafnframt því sem þeir herjuðu á ensk skip. Við þýzka hernaðarkafbáta varð hér fyrst vart í lok októbermánaðar. Þá sökti einn þeirra ensku fiskiskipi úti fyrir Berunesi eystra, en skipverjar björguðust til lands. Sögur hafa gengið um, að fleiri enskum skipum hafi verið sökt hér í grendinni og skipshafnirnar sendar til Englands, en óljósar eru fregnir um það. Um sama leyti voru tveir af botnvörpungunum héðan, sem voru á leið til Englands með fiskfarma, stöðvaðir suður í hafi af þýzkum kafbátum. Öðrum þeirra, »Rán«, var slept gegn loforði um, að snúið yrði aftur með farminn hingað til lands og skipið ekki framar notað til vöruflutninga til Englands meðan á ófriðnum stæði, en hinn, »Bragi«, var sendur til Santander á Spáni með skipshafnir af uokkrum enskum botnvörpungum, sem kafbátar höfðu sökt. Þetta varð til þess að draga mikið úr ferðum botnvörpuskipanna héðan með fisk til Englands um hríð, og varð lítið um þær úr þessu, þangað til kom fram um áramótin.

Alþingiskosningar fóru fram þetta ár, og voru nú í fyrsta sinn kosnir með hlutfallskosningum til efri deildar sex menn í stað hinna fyrverandi konungkjörnu þingmanna, samkvæmt hinni nýju stjórnarskrá. Landskosningarnar fóru fram 5. ágúst, en atkvæðin voru talin 11. september. Kosið var um sex lista og urðu úrslitin þessi: A., listi Heimastjórnarmanna, fékk 1950 atkv., B., listi Þversum-manna, 1337 atkv., C., listi verkamanna, 393 atkv., D., listi óháðra bænda, 1290 atkv., E., listi Langsum-manna, 419 atkv. og F., listi Þinglændaflokksins, 435 atkv. Hlaut A-listinn 3 þingmenn, B-listinn 2 og D-listinn 1. Voru kosningarnar yfir höfuð illa sóttar. Við þessar kosningar kusu konur hér í fyrsta sinn alþingismenn, en þó var atkvæðisréttur þeirra og annara kjósenda, sem fengið höfðu hann með nýju stjórnarskránni, í þetta sinn bundinn við 40 ára aldur. Auk eldri stjórnmalaflokkanna, sem voru fjórir á síðasta þingi, komu fram við þessar kosningar tveir nýir flokkar: verkmanaflokkurinn, sem nefnir sig Alþýðuflokk, og hinir svokölluðu »óháðu bændur«. Hafa verkamenn ekki komið fram sem sérstakur flokkur við alþingiskosningar fyr en nú. Hinn nýi flokkurinn nefndi sig flokk óháðra bænda til aðgreiningar frá bændaflokki þingsins. Átti hreyfingin til flokksmyndunarinnar rót sína í ágreiningi þeim, sem reis upp síðari hluta ársins 1915, eftir þing, milli sjávarmanna og kaupstaðarbúa öðru megin og sveitarmanna hinu megin, en á þetta er dregið í fréttum frá því ári. Allfjöldmennur bændafundur var haldinn við Þjórásarbrú 19. janúar og þar saminn landskjörlisti hinna »óháðu bænda«, eða uppkast að honum. Síðan voru bændafundir haldnir víða í héruðum til þess að koma á samtökum um fylgi við listann. En þegar í stað mættu þó þessi samtök nokkrum mótblæstri, einnig frá landbúnaðarmanna hálfu, er töldu það óráð, að menn færu að fylkja sér til þingkosninga eingöngu eftir stéttum og egna atvinnurekendur landsins hverja

gegn öðrum. Fór svo á Þjórsárbrúarfundinum, að sjávarútvegsmenn voru teknir á listann jafnframt landbændunum, og hét þá svo sem hér væri um að ræða lista frá framleiðendum landsins í heild, en ekki landbúnaðarmönnum eingöngu.

Allir sex flokkarnir, sem borið höfðu fram lista við landskosningarnar, höfðu og þingmannaefni í boði við kjördæmakosningarnar á eftir, verkmanaflokkurinn þó aðeins í 2 kjördæmum: Reykjavík, Akureyri. Kjördæmakosningarnar fóru fram 21. október. Flokkaskifting var í þetta sinn miklu óákveðnari en verið hefir hér við alþingiskosningar að undanförnu, vegna þess, að í fæstum kjördæmunum komu fram nema 2 eða 3 af þeim 6 flokkum, sem um var að ræða, og urðu því kosningabandalögin á ýmsa vegu. Ýms af þingmannaefnunum buðu sig líka fram utan flokka. Af þessu leiddi, að það var engan veginn ljóst að kosningunum afstöðnum, hvernig flokka-afstaðan mundi verða, þegar á þing kæni. Það eitt virtist sýnilegt, að Heimastjórnarflokkurinn mundi verða fjölmennastur, en þó ekki hafa meiri hluta í þinginu einn sér, og þar næst flokkur Þversum-manna. Stjórnarflokkurinn (Langsum) hafði lítið fylgi fengið. Það varð þá úr, eftir að kosninga-úrslitin urðu kunn, að aukþing var kvatt saman 11. desember. Færði stjórnin þær ástæður fyrir því, að í fyrsta lagi væri afstaða sín til þingsins óviss, í öðru lagi yrði að endurskoða verðlagsákvæði brezka samningsins um áramótin, og í þriðja lagi yrði að sjá landinu fyrir strandferðum næsta ár, en Eimskipafélag Íslands hafði tjáð stjórninni, að það treysti sér ekki til að hafa skip sín í strandferðum næsta ár, eins og verið hafði þetta ár, nema þá fyrir margfalt hærra gjald. Þegar þingið kom saman, fór þar svo um flokkaskipunina, að Heimastj. -menn urðu 15 og Þversum-menn 12, en nýr flokkur myndaðist, sem nefndi sig Framsóknarflokk, og urðu 11 í honum, eða í bandalagi við hann. Þangað fóru þeir, sem kosnir voru undir merkjum Þingbændaflokksins gamla og hinna óháðu bænda, einnig þeir, sem boðið höfðu sig fram utan flokka, og fulltrúi verkmanaflokksins, sem komið hafði einum manni að við kosningarnar, í Reykjavík, gekk í bandalag við þann flokk. Utan þessara flokka voru þá aðeins tveir þingmenn, ráðherrann við annan mann, og urðu þeir í kosningabandalagi við Heimastjórnarflokkinn.

Ráðherra lýsti því yfir þegar í byrjun þings, að hann ætlaði að biðjast lausnar. Varð það svo að samkomulagi milli þeirra þriggja flokka, sem nefndir hafa verið, að mynduð yrði þriggja mauna stjórn og legðu flokkarnir til í hana sinn manninn hver. Skyldi það gert til þess að forðast sem mest deilur og flokkadrætti innan lands meðan á þeim vandræðum stæði, sem styrjöldin veldur, og farið að dæmi annara þjóða, er myndað hafa hjá sér slík samsteypuráðuneyti, eða friðarstjórnir, nú á styrjaldartímunum. Lög voru samþykkt af alþingi og staðfest af konungi, sem mæla svo fyrir, að ráðherrar skuli framvegis vera þrír og ákveði konungur starfsvið þeirra, en landritaraembættið skuli niður leggjast. Eftir samkomulagi við þingið fól konungur Jóni Magnússyni bæjarfógeta að mynda hið nýja ráðuneyti. Einar Arnórsson fékk svo lausn frá ráðherraembættinu 4. jan. 1917 og jafnframt var

Klemenx Jónssyni veitt lausu frá landritaraembættinu með biðlaunum samkv. lögum. Sama dag voru skipaðir ráðherrar: Jón Magnússon bæjarfógeti, úr Heimastjórnarflokknum, Björn Kristjánsson bankastjóri, úr Sjálfstæðisflokknum (Þversum) og Sigurður Jónsson bóndi á Ystafelli, úr Framsóknarflokknum. Jóni Magnússyni var falið forsæti ráðuneytisins. Annað, sem tíðindum sætir, var ekki fullgert á þinginu við áráskiftin, og biða því nánari fregnir af gerðum þessa þings næsta árs fréttu.

Verkmannafélageskapurinn, sem getið er að nokkru hér á undan, hefir mikið magnast á þessu ári í ýmsum kaupstöðum landsins, einkum í Reykjavík. Við bæjarstjórnarkosningar þar í janúar kom listi verkmanna að 3 fulltrúum af 5, en listi Heimastjórnarmanna 2. Þeir listar aðrir, sem fram komu, fengu engan. Þessi hreyfing kom á stað verkfalli meðal háseta á botnvörpuskipum Reykvíkinga í byrjun maí og var einkum um það deilt, hvort lifur sú, sem á skip kæmi, væri eign útgerðarmanna eða háseta. Höfðu hásetar haft hana sem verðlaun að undanförnu og nú var hún í háu verði. Verkfallið stóð nálægt hálfum mánuði og endaði með því, að samtök háseta riðluðust, enda þótti verkfallið byrjað af lítilli fyrirhyggeju. Í febrúar var og gert verkfall um tíma í Hafnarfirði út af kröfum um hækkun vinnukaups, og var deilan einkum við enskt útgerðarfélag, sem þar starfar.

Jafnframt alþingiskosningunum fór fram almenn atkv.greiðsla um það, hvort lögleiða skyldi þeguskylduvinnu, eins og um hafði verið talað á alþingi 1915, og fékk það mál lítið fylgi. Unnið hefir verið að kolanámum vestan lands á árinu og hefir félag myndast í Kaupmannahöfn til þess að hrinda því verki áfram. Í Reykjavík hefir félag myndast til að taka upp að nýju kalkvinslu í Esjunni. Fyrir árslokin var byrjað að reisa loftskýtastöð rétt við Reykjavík. Bryr hafa verið gerðar á Breiðumýrará í Suður-Þingeyjarsýslu og Miðfjarðará á Langanesströndum, en unnið að brantagerðum á Húnvetningabraut, Skagfirðingabraut, Reykjadalshlí og Grímsnesbraut. Borgarfjarðarbraut hefir verið afhent hlutaðeigandi sýslufél. og Reykjadalshlíbraut er lokið. Að þjóðvegum hefir verið unnið á Stykkishólmsvegi, Laugadalshlívegi og Hróarstunguvegi. Stórir flutningabílar voru þetta ári fengnir á vegina frá Reykjavík til Suðurláglandisins og fóru eftir á ætíðunum, en urðu að hætta á miðju sumri vegna ýmislegra óhappa.

Mörg slys hafa orðið á sjónum þetta ár, eins og fyrir. Hið stærsta varð 30. nóv., er annað af skipum Eimskipafélags Íslands, »Goðafoss«, strandaði við Straumnes, norðan Aðalvíkur. Varð öllu bjargað úr skipinu, en það náðist ekki út. Eitt af botnvörpuskipum Reykvíkinga, »Marz«, strandaði 27. okt. á Gerðahólma við Reykjanes og fórst, en menn komust af. Annað, »Skallagrímur«, sökk um haustið rétt utan við Reykjavík, en náðist upp aftur að mestu óskemt. Gufuskipið »Patría«, eign Friðriksens kaupm. í Rvík, fórst á leið hiugað með timburfarm frá Noregi í nóv., en skipshöfninni var bjargað af ensku herskipi. 2 vélbátar fórust frá Vestmannaeyjum, annar í janúar með 4 mönnum, hinn í apríl með 3 mönnum. Í norðanveðrinu seint í marz urðu mannskaðar á sjó við Faxaflóa. 6. apríl strandaði færeysk fiskiskúta við Mýrdalssand. 17. sept

strandaði danskt flutningaskip, »Elín«, á Blönduósi. 19. okt. strandaði íslenskt flutningaskip, »Resolut«, í Grindavík og í október annað, »Steini«, við Héraðssand. Í nóv. fórst bátur með 3 mönnum frá Grindavík og 1. des. bátur frá Höskuldsey á Breiðafirði með 4 mönnum. Og fleiri slík slys hafa orðið.

Sæsminn slitnaði norðan við Færeyjar 7. febrúar og náðist ekki samband aftur fyr en 9. marz. Um líkt leyti urðu miklar bilanir á landsfímanum sunnan Holtavörðuheíðar af ísing.

Brunaslys eru þessi hin helztu: 27. jan. brann íbúðarhús læknisins á Eyrarbakka og í sama mánuði bærinn Melar í Víkursveit. 27. marz brann svo nefnt Waageshús í Reykjavík, 23. júlí bærinn Skógargærði í Norður-Múlasýslu, 4. ág. hús á Akureyri, 1. sept. bærinn Ketilvellir í Laugardal, 17. s. m. bærinn Krókur í Grafningi og einnig í þeim mánuði bærinn Forsæti í Landeyjum, en 16. okt. brunnu útihús og gripahús á Borg á Mýrum.

Helztu mannalát á árinu eru þessi: Magnús Stephensen umboðskaupm. druknaði á leið frá Rvík til Khafnar 13. jan.; Guðm. Bárðarson bóndi, frá Bæ í Strandas., andaðist 16. jan.; Árni Jónsson prófastur á Hólum í Reyðarfirði 27. jan.; Stefán bóndi í Möðrudal á Fjöllum 3. febr.; Jon Jónsson kaupm. frá Borgarnesi 11. febr.; Björn Pálsson ljósm. á Ísafirði 14. febr.; Guðrún Pétursdóttir, ekkja síra Guðm. Johnsens í Arnarbæli, 8. marz; Símon Dalaskáld 12. marz; Andrés Björnsson cand. phil. varð úti, fanst 19. marz; Sigríður Eiríksdóttir, ekkja Jóns Þórðarsonar prests á Auðkúlu, andaðist 23. marz; Anton Bjarnasen kaupm. í Vestmannaeyjum 27. marz; Jónas Guðlaugsson skáld andaðist á Jótlandi 18. apríl; Þorst. Thorarensen bóndi á Móeiðarhvoli í Rangárv.s. 29. apríl; Sig. Jónsson bóndi á Hofstöðum í Skagafirði í apríl; Ingibj. Guðnadóttir, kona síra Bjarna Pálssonar í Steinnesi 1. maí; Vilborg Sigurðard., ekkja síra Magn. Jónss. í Laufási, 9. maí; Jósef Einarsson bóndi á Hjallalandi í Húnav.s. 21. maí; Skúli Thoroddsen alpm. í Rvík 21. maí; Andrés Andrésson verzlunarm. í Rvík 30. maí; Magnús Vigfússon á Miðseli í Rvík 14. júní; Guðrún Sveinbjarnardóttir Egilsens, ekkja Þórðar prests í Otrardal 19. júní; Jón Hallsson hreppstj. á Smiðjuhóli á Mýrum 4. júlí, Eugenia Nielsen á Eyrarbakka 8. júlí; Jón Ólafsson rithöfundur í Rvík 11. júlí; Björn Þórhallsson frá Laufási í Rvík andaðist í Noregi 13. júlí; Þorv. Jónsson læknir á Ísafirði 24. júlí; Einar Guðjónsson veitingamaður í Rvík druknaði seint í júlí; Sigurður Sigurfinnsson hreppstj. í Vestmannaeyjum snemma í sept.; Ásgeir Torfason efnafræðingur í Rvík 16. sept.; Kristinn Stefánsson skáld í Winnipeg seint í sept.; Vigfús Sigfússon veitingam. á Akureyri 5. okt.; Rannveig Jónasson í Winnipeg, kona Sigtr. Jónassonar kapteins, 5. okt.; Sig. Þórðarson útvegsbóndi í Rvík 8. okt.; Símon Bjarnason verzlunarm. í Rvík 31. okt.; Jörgen Hansen kaupm í Hafnarfirði snemma í nóv.; Þorst. Jónsson hreppstj. í Vfk 20. nóv.; Einar Thorlacius fyrrv. sýslum. dó í Khöfn 21. nóv.; Ólafur Johnsen yfirkennari frá Odense dó í Khöfn 14. des.; Þórhallur Bjarnarson biskup 15. des.

P. G.



Pórhallur biskup Bjarnarson.

Sá böldrungni hljómur, sem berst yfir fold,
er bergmál af útfarar lögum;
það lögmál, sem gerir að heyviskum hold,
er hraðvirkt á síðustu dögum.

Hve valurinn dyngist um öræfi og ál!
hver akurstöng logandi kveikur!
Um kirkjurnar snarkar hið blóðuga bál
og brenna um skrauthýsin leikur.

Til dóma og morða hin drotnandi hönd
sig dúðar í hernesku týgjum.
Og feigðin með símanum fer yfir lönd
og farmur af tundri í skýjum.

* * *

En biskupinn okkar, hann leitaði lags
að leiðbeina ráfandi sálum,
er umsýslu helgaði eyktina dags
og aftaninn djúpvizku málum.

Hinn gullrauði þráður í orðum hans æ
var eggjun til starfa og dygða —
á farkosti sjálfs sín að fljóta um sæ
að furðuströnd ókendra bygða.

A friðstóli ríkt' 'ann í hógvæðar hjúp,
með handlægni rýmkaði klafa,
og bar því úr kirkjunni blóðfórni á djúp
og bálreiði Abrahams Jahva.

Við skinhelgi forna í látbragði laus,
og lögstirfni, er guðsriki smækkar,
í orðum og gjörðum hann kirkjunni kaus
þann kærleik, er deilunum fækkar.

Frá Mekka til Róms og um Móisesfjall
hans mannúð sá, fram og til baka —
um Laótze goðorð og Kristninnar kall
og kóngríki Búddha hins spaka.

Hann vildi á gjörvalla sök væri sæzt,
að sól skini mannúð um vanga.
Á hátypta fjallinu menn geta mæzt,
er margskonar einstígi ganga.

Þó mennirnir eigi sér margháttað kall,
og mörg virðist sinnin og týgin,
í allsherjardepli hið uppdregna fjall
að endingu sameinar stigin.

Að endaðri þrætu um hismi og hjóm
þeim hugnast nú takmarkið sama
hjá Einum, sem skiftist við orðmynda hljóm
í Alföður, Drottin og Brahma.

Og þeirra er dýrðin, sem hugsa svo hátt:
að hlýju og glóðöggum viðri —
að vegirnir mætist í eilífðarátt,
þó einstigin deilist hér niðri.

Og hugmyndin persneska honum ei hvarf
þó hann væri biskup og prestur —

að Alföður kærara er akurmanns starf,
en útþyntur trúmála lestur.

Og þar að 'ins burtfarna höfðingja hneig
hver hugsun um nætur og daga
að gera úr melunum gróanda teig,
að guðsríki íslenzkan haga.

Hve geislana hæna að gríðastað manns VL
þær gyðjur, sem kransana binda.
Og þess vegna leggur að leiðinu hans
þann ljóma, sem náttmálin kynda.

Guðmundur Friðjónsson.

Svipir í skuggsjá haustsins.

Seztu í hornið hjá mér
Haust-stund þessa, góði!
En eg ætla að ljá þér
Augun mín, í ljóði.
Og ef augun duga,
Út um þröngva skjáinn
Oft má horfa úr huga
Harma sína í bláinn.

Ekkert áttu að heyra
Úti af rakka gjammi,
Lát ei inn um eyra
Eldhúss-skvaldrið frammi.
Hugann, heima-fjærri,
— Hvað sem annað varðar —
Gerðu að skemti-skærri
Skuggsjá lofts og jarðar.

Út í breiða-blikið
Blámóðunnar fljóttu.
Sé í viðsýn vikið
Veru þinni, og njóttu.
Sjáðu í haustsins hljóði
Hvernig aftni miðar,
Sem með lita-ljóði
Laðar alt til friðar.

Er sem haustið uni
Öllu er hefir bjargast,
Þó að mót-tækt muni
Margt sem hlaut að fargast.
Rótt sem þýðar þakkir
Þreytumanns í augum.
Skruggu-byljir blakkir
Byltast hvergi á taugum.

Gleymir flissi gjöllu
Grózku ofsahlátur.
Bros er yfir öllu
Eins og þerður grátur.
Fjalla hlíðar húmar,
Hillir skörðin tinda,
Hvíta-roði um rúmar
Rekkjur þýðu-vinda.

Breiðar suður-sveitir
Silfri og gulli stafar.
Skógi í bláfell breytir.
Blika Vitaðsgjafar,
Akrar, á upsir settir
Aftanhillinganna,
Sólskins svitablettir
Sumars landnemanna.

Skín við skógarbekki
Skíni fextur glampi,
Lýsan af er ekki
Akra stýfðum kampi.
Enn er ei ekran tóma
Yrkt, né þessi heiði
Hverfð í blaðs og blóma
Breiða moldarleiði.

Sem á haugum hljóðum
 Hrókar gullsins bleika
 Trén að gulum glóðum
 Gyltra blaða leika.
 Þegar í stráum stynja
 Stopul-vinda hviður
 Haust-fölvingar hrynja
 Herðar þeirra niður.

Lægri lyngsins gróður
 Laufum utast þrengir,
 Fram um raða rjóður
 Rauðar luktir hengir.
 Eins og yzt í borgum,
 Undir birtu-hallið
 Lýð frá turn og torgum
 Týrur benda í svallið.

Inni er ömurlegra.
 Eggðið löngu búin,
 Hreiðrin þrasta og hegra
 Hanga tóm og flúin.
 Glapin ró í runnum,
 Roggar ugla á meiðum.
 Úlfar átu-munnum
 Ýlfra á héra-veiðum.

Upp úr runna rönum
 — Rúst af berum krúnum —
 Glottir bleikum grönum
 Grein í móum brúnum,
 Glæjum laufum gægist
 Gegnum kræklur visnar,
 Sem í hrauni sæist
 Svarðar-tætlur gisnar.

Stöku viði-viður

Viðrar holta-glæður.
Hrynja af höfði niður
Hvítar silkislæður,
— Brúðarlín úr bari
Borið undir vetur —
Og í vinda vari
Veizlu að hausti setur.

Grænt í vindhá vetrar

Vefa engin slegin.
Sinu-brekku betrar
Borið hádags-megin
Blóm, sem lágt við ljómar
Litla sólskins-vöku.
Sumars eftir-ómar,
Ellikvæðin stöku.

Svo hefir ársins elli

Ennþá fingur mjúka,
Sem hún friðast felli
Friðar-liti á sjúka,
Mjalla-hvítu kransins
Krónur þistla skryðir.
Eins og lýður landsins
Líkin bezt hún prýðir.

Létt á logni fljóta,

Lágt við grund og hæðir,
Spunnir um hnjósk og hnjóta
Huldu-silfurs þræðir,
Hengdir, hvern sem noti
Hæl í niður-tjóður,
Húsvilt fræ á floti
Fyrir næsta gróður.

Áin, lygn með löndum,
Læðist dalinn út um,
Fjara á flúð og söndum.
Fossarnir í mótum
Raula í hálfum hljóðum
Hikult gömlu lögin.
Hjaðnað hafa úr ljóðum
Hamra-bassa slögin.

Skyggir nótt. En nær gljá
Njósnaugu stjarna.
Bjartast blika þær frá
Bládimmustu þarna!
Ljós og ljóða-kliðinn
Lúr og blundur slökkva —
Eitt sinn út í friðinn
Allir strengir hrökkva.

8.—10.—'16.

Stephan G. Stephansson.

ARBEITERDORF BOURNVILLE BEI BIRMINGHAM.

BIRMINGHAM



- ① SCHULE
- ② GEMEINDEHAUS
- ③ RUSKIN HALL
- ④ GYMNASIUM
- ⑤ BOURNVILLE HALL
- ⑥ FABRIK
- ⑦ POST
- ⑧ RESTAURANT
- ⑨ ALMSHOUSES
- ⑩ PARK
- ⑪ SPIELPLÄTZE
a. FÜR MÄNNL. PERS.
b. FÜR WEIBL. PERS.
c. FÜR KINDER
- ⑫ TEICHE
- ⑬ BAHNHOF



100 0 100 200 300 400 500 600 700 800 900 1000 ENGL. FUSS

Nýttizkuborgir.

Frh.

Þýzk fyrir- Eins og fyr er sagt, var það enskur auð-
myndarþorp maður og verksmiðjueigandi, sem fyrstur reið
 á vaðið og stofnaði fyrirmyndarþorp. Engum
 lá þetta nær en ríkið iðnaðarforkólfum. Með þeirri
 geysiframför, sem var í iðnaði á síðari helming liðinnar
 aldar, bygðu margir þeirra stóreflis verksmiðjur og þurftu
 á verkamönnum að halda í þúsundatali. Í stórbæjunum
 var landið dýrt og oft erfitt að fá hentugt svæði fyrir
 stórbyggingar, en væri bygt í sveit eða smáþorpum skorti
 vinnulýð, nema honum væri jafnframt séð fyrir húsum og
 helztu nauðsynjum. Nú var það að sjálfsögðu mikilsvarð-
 andi mál fyrir verksmiðjueigendur, að verkamenn þeirra
 væru hraustir og heilsugóðir og lifðu við sæmilegan hag.
 Næst því að gjalda þeim viðunandi kaup var það mest
 um vert, að sjá þeim fyrir góðum húsakynnum. Það var
 því bæði eigin hagur og umhyggja fyrir velferð al-
 mennings, sem kom verksmiðjueigendum til þess að byggja
 ógryn timer húsa handa verkamönnum sínum eða lána þeim
 fé til bygginga, og jafnframt hlutu þeir eða bygginga-
 meistarar þeirra að hugsa um, hversu alt skipulag þessara
 nýju þorpa gæti orðið bezt og hentugast. Á þennan hátt

spratt upp fjöldi smáþorpa Cité ouvrière¹⁾ við Mülhausen í Elsass, bygðu 12 verksmiðjueigendur húsin nokkru eftir 1840 með ríkisstyrk og seldu verkamönnum þau. 1884 voru þau rúmt þúsund að tölu en salan hefir haft þau áhrif, að öll húsin hafa gengið úr eigu verkamanna!

Þó verksmiðjueigendur og félög einstakra manna bygðu heil þorp og borgahluta víðsvegar um lönd, þá voru Þjóðverjar hvað fyrstir til þess, eftir T. Salt, að setja fyrirmyndarsnið á þorp sín. Árið 1873 bygðist námubærinn Hannover III., 1875 námubærinn Hannover II., 1875 Zeeacker hjá Höchst og úr því fjöldi annara. Áður hafði það verið venjan, að verksmiðjueigendur reistu vinnuskála sína í stórbæjunum þar sem nóg var af verkalýð, létu hann sjá um sig og hola sér niður hvar sem hann gat í látæklingahibýlum þar. Sumir verksmiðjueigendur tóku nú að sjá verkamönnum sínum fyrir góðum húsum, byggja verkamannahverfi í borgunum eða útjöðrum þeirra, en síðan komst það lag á, að verksmiðjurnar voru reistar ut a n bæjanna og verklyðurinn bjó í litlum bæ, út af fyrir sig, fékk góð húsakynni fyrir tiltölulega lágt verð, nokkurt land til garðræktar (200—600 □ st.) sem fylgdi húsinu. Auk þess var séð fyrir ýmsum öðrum þægindum og nauðsynjum, góðum skólum, leikvöllum og þvílíku. Húsin og landið voru eign verksmiðjueigendanna, en leigan svo lág, að rétt svaraði kostnaði eða varla það, og fór ekki hækkandi. Þá var og vandað til alls skipulags margra bæjanna, séð um að allt liti smekklega út, að hvorki yrði of þéttbýlt né hibýlaprengsli inni í húsunum. Alkunugt er hollenzka þorpið Agnetapark hjá Deelft fyrir fagurt skipulag. Aftur mun það ekki hafa um þessar mundir vakað fyrir neinum, að gera aðra endurbót með bæjum þessum en að tryggja góð húsakynni fyrir sanngjarnt verð, ljós og loft í rikulegum mæli, en vinnuveitendum að sjálfsgöðu jafnframt nægilegan vinnukraft. Svo mikið

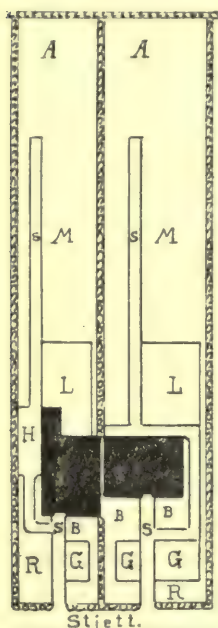
¹⁾ Conrad: Handw. Wohnungsfrage bls. 905.

var að þessu starfað í Þýzkalandi, að árið 1898 höfðu þýzkir verksmiðjueigendur bygt 140.000 íbúðir fyrir verkamenn sína.

Þó sum af þorpum þessum væru að mörgu leyti fyrirmyndarbæir geta þau tæpast jafnast við þrjú fyrirmyndar þorp ensk, sem enskir auðmenn bygðu skömmu fyrir aldamótin: Bournville, Port Sunlight og Earswick. Þorp þessi áttu mikinn þátt í því að vekja athygli fjölda manna á hverskonar endurbótum í skipulagi bæja.

Bourn- bygði verksmiðjueigandinn George Cadbury í *vill* Birmingham, sem bjó til hið alpekta Cadburys cacao (súkkulaði). Hann flutti verksmiðjur sínar 1879 3 rastir út fyrir Birmingham, og varð því að sjá verkamönnum sínum fyrir húsnæði. Hann var mannvínur mikill, hafði ætíð látið sér ant um hag verkamanna sinna, eins og sjá má á því, að hann hafði mikinn hluta æfinnar kent börnunum sjálfur í sunnudagaskólanum, þó hann væri maður vellauðugur. Nú þótti honum miklu máli skifta, að verkamenn sínir fengju sem bezt húsakynni og að svo yrði vandað til verksmiðjuþorpsins, sem frekast væri kostur á. Fékk hann Alex Harway, ágætan byggingarmeistara, til þess að gera skipulag bæjarins. Réð hann og mestu um byggingarsnið húsanna. Harway lauk þessu starfi af svo mikilli snild, að ekki hefir öðrum tekist öllu betur. Er því viðbrugðið hve Bournville sé fagur bær, hentugur og heilnæmur. Götur í Bournville eru 12,5 st. breiðar en skrautgarðar framan húsanna, svo að hvergi er skemra milli húsa hliða en 25 st. og eru þó húsin lág, fæst hærri en 8 st., svo götubreiddin er fyllilega þreföld húshæðin. Breidd byggingareita (spildnanna milli samhliða gatna) er um 200 ensk fet og verða því breiðir

garðar að húsbaki. Hús verkamanna eru einlyft eða tvilyft,



3. mynd.

Hagnýting 2. húslóða í Bournville.

R blómrunnar, G grasblettir, B skrautblóm, S stígur, H hlað fram undan útidyrum, L leikvöllur barna, M matjurtagarður. A aldingarður.

tvö og tvö bygð saman. Lengd þeirra flestra, er að götu veit, er um 5,5 st. (tæpar 9 álnir) en breiddin oftast nokkru meiri, 7-8 st. Á neðsta gólfi er venjulega 1) íbúðareldhús, 2) stofa, 3) þvotta- og baðklefi, en á lofti uppi þrjú svefnherbergi¹⁾. Kjallari er enginn. Húsin eru af einfaldri ódýrri gerð, þrjállaus en sérlega smekklegr og svo breytileg að ytra útliti, að götur eru mjög tilbreytilegar á að sjá, þó húsin séu mjög lík að stærð og herbergjaskipun. Millibilin milli húsafla (húsasundin) eru 5 st. Lóðin, sem húsi hverju fylgir, er löng ræma um 12--15 st. á breidd en fullar 30 st. á lengd, að meðaltali 500 □ st. ($\frac{1}{6}$ úr dagsl.). Nokkur hluti hennar gengur í blómgarðinn framan hússins, en mestur hlutinn liggur að húsbaki og er notaður til matjurta og ávaxtaræktunar. Garðstærðin var aðallega miðuð við það, að hver húseigandi hefði svo mikið land, sem líklegt væri að hann kæmist yfir að rækta í fristundum sínum svo að vel væri, en auk þess gera garðarnir að sjálfsögðu bygðina dreifðari og loftið betra. Þá er það og mikilsvirði að verkamenn, sem eiga að vinna allan

daginn við tilbreytingarlaus verksmiðjustarf geti haft eitt-hvert annað frábrugðið útistarf að dunda við í fristundum. Það er svo sem sjálfsagt að með svo ríflegu milli-

¹⁾ Herbergjaskipun er svipuð þeirri sem sýnd er á 6 mynd af vinnumannahúsum í Port Sunlight.

bili milli húshliða njóta húsin ágætlega sólar. Sum húsin eru þó mun stærri en hér er lýst og lóðir að sama skapi.

Fyrir öllum almenningsþörfum sá Cadbury vandlega. Í þorpinu var bygður ágætur skóli, bókasafn, samkomuhús, sem einnig er notað til guðsþjónustu, miklir leikvellir, skrautgarðar o. fl., jafnvel dálítill rannsóknarstöð fyrir athugun á stjörnum. Gamalmennahæli lét hann hann byggja og fá verkamenn hans þar ókeypis íbúð í elli sinni. Öllu þessu var skipað með tilliti til þess, að þorpið liti sem prýðilegast út.

Í fyrstu seldi Cadbury landið. Hann sá mönnum sínum fyrir $2\frac{1}{2}$ —3% byggingarlánnum með vægum afborgunum. Síðar hefir hann afhent félagi miklu þorp og land. Það hætti að selja landið, svo nú fæst það aðeins til leigu en með sanngjörnum föstum kjörum. Fjöldi annara manna hefir sezt þar að en verkamenn Cadburys, svo þeir eru nú ekki fullur helmingur þorpsbúa. Landareign þorpsins er nú 248 ha eða 7—800 dagsláttur. Íbúar voru 1911 um 4000.

Arangurinn. Hver varð svo árangurinn af allri þessari nýbreytni? Allur búskapurinn bar sig vel og Cadbury fékk fé sitt skilvíslega aftur. Verkamennirnir lifðu að sjálfsögðu við miklu betri kjör en fyr og urðu þó smámsaman húseigendur. Fjármunalega var því ekkert út á þetta að setja. Aftur höfðu þessi góðu hífýli og allur umbúnaður mikil og góð áhrif á verkalýðinn. Drykkjuskapur hvarf, efnahagur batnaði stórum, verkamenn keptust hver við annan um að þrifa hús sín og rækta garða sína. Þeir reyndust ekki lítil búbót og gefur garður hver að meðaltali fjölskyldunni kartöflur allar og grænmeti sem hún þarf með, en auk þess afurðir til sölu sem nema að meðaltali um 100 kr. virði á ári hverju. Svo vel rækta þorpsbúar bletti sína, að þrátt fyrir að mikill hluti landsins er óræktaður (hússtæðin, götur, o. fl.), gefur það nú áttfalt af sér í samanburði við fyr, meðan það lá undir sveitajarðir.

Ekki skiftir það hvað minstu máli hver áhrif alt þetta hafði á heilbrigði bæjarbúa. Á 5 ára tímabili dóu af hverjum 1000 íbúum 5.5 í Bournville en 10,2 í Birmingham, sem er þó óvenjulega litill manndauði. — Af hverjum 1000 börnum, sem fæddust lifandi, dóu á 1. ári í Bournville 68, í Birmingham 92. En það var eigi aðeins að heilbrigði batnaði að miklum mun og færri dæju. Börnunum fór miklu betur fram en í verkafólksgötunum í Birmingham (Floodgate Street):

Þyngd drengja (ensk pund).

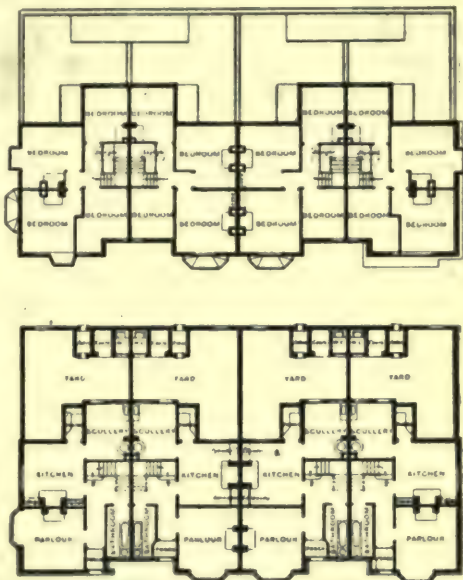
	6 ára	8 ára	10 ára	12 ára
Í Bournville	45.0	52.9	61.6	71.8
Í Birmingham	39.0	47.8	56.1	63.2

Þegar litid er yfir það sem hér hefir verið dregið á, verður ekki annað sagt, en að hin mikla tilraun Cadburys hafi tekist ótrúlega vel. Glæsilega fagur varð bærinn hans, heilnæmur og hentugur. Þó var húsaleigan tiltölulega miklu lægri en í borgunum. Fólkinu leið á allan hátt betur, ekki sízt uppvaxandi kynslóðinni. Alt bar sig vel og sveitaakrarnir gáfu áttfalt meira af sér þar sem bærinn var bygður en þeir höfðu áður gert!

Port Sunlight. Einn af mestu sápugerðarmönnum heimsins er Sir William Lever. Hann stofnaði sápugerð í Liverpool um 1886, rak hana með dæmafáumdagnaði og framsýni svo sápa hans seldist bráðlega víðsvegar um heim (»Sunlight« sápa).¹⁾ Um sama leyti og Cadbury flutti hann verksmiðjur sínar út fyrir borgina, keypti þar 142 ha. af landi og bygði verksmiðjuporpi líku sniði og Bournville fyrir 4—5000 íbúa, sem hann nefndi Port Sunlight. Um bæ þennan er flest hið sama að segja og fyr er sagt um Bournville. Húsin eru álíka stór, fyrirkomulag þeirra svipað og skipulag bæjarins áþekt, þó sumt sé frábrugðið. Húsin eru flest sambygð, 4—8 saman, forgarðar við framhlið húsanna og litlir umgirtir garðar að húsabaki en bak við leigugarðar, sem leigðir eru með vægu verði til matjurta og blómaræktar. Það

¹⁾ Síðar varð verksmiðjan hlutafél.: *Lever Bros. Ltd.*

var eins og þetta skipulag með smáhýsum og ræktuðum görðum við hvert hús lægi í loftinu um þær mundir, sem þeir bygðu Sir Lever og Cadbury. Helzti munurinn á Port Sunlight og Bournville er sá, að meira var að ýmsu leyti í flest borið hjá Sir Lever. Hann lét sér ekki nægja að útvega vinnumönnum sínum ódýrt fé með góðum kjörum til þess að byggja sjálfir fyrir, heldur lagði hann ótæpt til úr sjálfs sín vasa. Hann bygði alt sjálfur, mjög vandað og allskrautlegt, en leigði verkamönnum sínum húsin miklu ódýrar en svo að þau gætu borgað sig. Aftur gátu þeir ekki eignast þau. Það sem ávantar til þess að þorpið beri sig borgar hann árlega sjálfur. Mjög er vandað til allra opinberra bygginga. Tveir unglingaskólar eru þar ágætlega búnir að öllum kensluáhöldum og ríkmannlega úr garði gerðir (meðal annars er þar kend garðyrkja), kvennaskóli, iðnskóli, leikfímishús, bókasafn, samkomuhús (Gladstone Hall), matsöluhús mikið en vínfangalaust fyrir ógifta o. fl., og að lokum fögur kirkja og



6. mynd.

Herbergjaskipun í húsum vinnumanna í Port Sunlight.

Efri myndin er af loftherb., neðri af neðri hæð. *Porch*, forstofa. *Parlour*, stofa. *Kitchen*, eldhús. *Scullery*, þvottahús. *Bathroom*, baðklefi. *Bedroom*, svefnherbergi. *Ashes*, öskuskúr. *Coals* kolaskúr. *Wc* salerni. *Yard* umgirtur bakgarður.

ágætt sjúkrahús. Kaupfélag hafa þorpsbúar stofnað og kaupa þar allar nauðsynjavörur sínar. Sjálfur Sir Lever stýrir allajafna umræðum á fundum og tekur þátt í þeim, en ekki tekur hann neinum illa upp, þó hann segi hispurslaust meiningu sína og mæli móti húsbóndanum. Sagt er að Sir Lever sé ræðuskörungur, enda er hann þingmaður á þingi Breta. Hann hefir lagt mikið í sölurnar fyrir vinnufólk sitt og gefur því aukreitis hlutdeild í gróða verksmiðjanna. Port Sunlight er viðbrugðið fyrir fegurð og fyrirmyndar skipulag, en engir geta leikið slíka borgarbygging eftir nema vellauðugir menn. Slíkar auðmanna-stofnanir geta því ekki orðið allskostar til fyrirmyndar fyrir almenning og ýkja margir eru þeir ekki, sem hafa slíkan brennandi áhuga fyrir velgengni hjúa sinna, að þeir leggi stórfé af mörkum úr sínum eigin vasa. Af Bournville og Port Sunlight mátti læra fagurt og hentugt skipulag fyrir bæi og Cadbury hafði sýnt það í verkinu, að vel mátti láta allt bera sig, án þess að gefa nokkrum neitt.

Með heilbrigði almennings hefir reynslan verið svipuð í Port Sunlight og í Bournville. Börn taka þar og ótrúlegum þroska. Verkamannabörnin í Port Sunlight þrífast jafnvel betur en börn ensku auðmannanna. Er hér sýnd meðalþyngd skólabarnanna (ensk pund).

	Börn fátækl. í Liverpool.	Börn ríkra.	Börn í Port Sunlight.
7 ára	43,0	49,3	50,5
11 —	55,5	70,0	79,5
14 —	71,1	94,5	108,0

Hæð barnanna svaraði til þyngdarinnar. Átakanlegur er munurinn á börnum verkafólksins í Liverpool og börnunum í Port Sunlight, og má nærri geta hverja þýðingu hann hefir fyrir alla framtíð uppvoxandi kynslóðarinnar. Jafnvel heilbrigðisfræðingar, sem vita vel hver áhrif góð húsakynni og heilbrigður lifnaðarháttur hafa, myndu tæpast hafa búist við að hann yrði svo gífurlegur! Það var ómótmælanlegt eftir þessari reynslu að dæma, að bæjarlífið gat orðið gott og heilbrigt í flesta staði, ef borgirnar voru vel úr garði gerðar, jafnvel engu lakara.



4. Húsagarður við verkamannahús í enskum fyrirmyndarbæ.

en í beztu sveitum. Eftir var að sýna hversu almenn-ingur gæti notið þessara gæða, þegar engum vellauðugum mönnum var til að dreifa, og hinsvegar hversu hjá því yrði komist, að sveitir kæmust í auðn og órækt. Þetta kemst fyrst á rekspöl með sveitaborgahugmynd Ebeneser Howards (Garden City hreyfingunni).

„Á morgun“. Árið 1898 kom út bók í Englandi með þessum titli.¹⁾ Höfundurinn hét Ebenezer Howard. Hann var lítt lærður hraðritari, en hafði þó mörgu kynst um dagana við hraðritarastarf sitt, og meðal annars hinum margbrotnu vandamálum borganna. Honum hafði komið til hugar einfalt ráð, til þess að komast út úr vandræðunum, til þess að fullnægja þörfum verksmíðjueigenda, sem þurftu að hafa verkamenn svo þúsundum skifti rétt hjá vinnuskálum sínum, þrá og þörf fjölda manna til þess að búa í borgum, að geta feungið þar hús og heimili fyrir sanngjarnt verð, sem væru þó sæmileg í alla staði, og alt þetta án þess að koma í bága við ræktun landsins og hag sveitamanna. Frá þessum hugmyndum sínum og tillögum skýrði hann ítarlega í bók sinni, sem flestir töldu í fyrstu fáránlegan loftkastala og annað ekki, en varð þó heims-kunn og heimsfræg á örfáum árum.

Howard leit svo á, að ókleyft væri að endurbæta gömlu borgirnar. Þar væri landið orðið svo dýrt, að það eitt gerði allar róttækar endurbætur ókleyfar. Í stað þess að auka endalaust þessar risavöxnu gömlu borgir lagði hann til, að menn stofnuðu nýjar á hentugum stöðum uppi í sveitum, eða að minsta kosti all-langt utan stórborganna. Þessum nýju borgum vildi hann setja ákveðin takmörk, ekki láta þær vaxa fram úr ákveðinni íbúatölu (30.000). Þegar hver borg væri fullbygð, skyldi stofna nýja á öðrum stað í hæfilegri fjarlægð. Sá hagur fylgir þessu, að nákvæma og rétta áætlun má gera um alt skipulagið, gera alt frá fyrstu byrjun þannig, að það

¹⁾ Síðar var bókin nefnd: The Garden Cities of to-morrow.

verði til frambúðar, í stað þess að venjulegar borgir vaxa fljótt frá öllu sem gert er, svo sífellt þarf að rífa niður og byggja nýtt í staðinn, oft með geysilegum kostnaði. Stóru borgunum hættir og við að verða óviðráðanleg bákn, ekki sízt hvað fátæka lýðinn snertir. Annan kost taldi hann og fylgja því, að borgir væru margar og ekki mjög stórar: landið yrði betur ræktað. Hvergi er ræktun betri í sveitum erlendis eða arðsamari en umhverfis borgirnar, því bæði er bezti markaðurinn fyrir sveitavöru þá rétt við hendina og oft auðvelt að afla áburðar í borgunum. Margar, skaplega stórar borgir, dreifðar út um alt land gætu þannig orðið mikil lyftistöng fyrir ræktun landsins og sveitabúskapinn.

Þá var það annað nýmæli í bók Howards, að alt landið sem bærinn væri byggður á, skyldi vera almennings eign og eigi að eins það, heldur öll sveitin umhverfis bæinn. Tilgangurinn með þessu var fyrst og fremst sá, að verðhækkunin, sem alls ekki er einstaklingum að þakka heldur félagsheildinni, skyldi renna í hennar sjóð, en ekki landeignabraskara. Á þennan hátt getur og félagsheildin sett skýr takmörk fyrir hóflausri verðhækkun og hindrað það, að hún sprengi húsaleigu upp úr öllu valdi í bænum og verð jarðanna umhverfis hann. Í slíkum bæ getur þá enginn húseigandi eignast landið, sem hús hans er byggt á, og enginn bóndi jörð sína. Allir eru leigjendur bæjarins, með ákveðnum, sanngjörnum skilmálum, en leigan getur verið mjög trygg, t. d. erfðafesta. Ef bærinn ætti riflegar lendur hringinn í kring, var og loku skotið fyrir það, að aðrir bær lyktu hann inni eins og raun hafði orðið á í Saltaire.

Um skipulag slíkra bæja, hvernig húsum, götum o. fl. skyldi skipað, gerði Howard ákveðnar, viturlegar tillögur og skýrði þær með uppdráttum. Í miðjum bæ áttu að vera garðar miklir og fáeinar stórbyggingar (spítali, ráðhús, banki o. fl.). Umhverfis lystigarða þessa og íþróttavelli lágu íbúðargötturnar í hringjum, hver fyrir utan aðra en breiðar flutningagötur lágu frá miðjum bæ

eins og geislar í allar áttir. Í yzta hringnum, útjaðri bæjarins, var verksmiðjum ætlað pláss, en í insta hringnum helztu búðunura. Umhverfis bæinn, sem Howard hugsaði sér kringlóttan, skyldi lögð járnbraut, svo verksmiðjurnar ættu sem hægst með allan flutning. Margt var viðsýnt, hagkvæmt og fagurt í skipulagi Howards (þar er t. d. séð fyrir hentugu plássi handa öllum opinberum byggingum: kirkjum, skólum o. s. frv.), en ekki hefir það þó í heild sinni þótt allskostar framkvæmanlegt, enda gerði hann ráð fyrir, að því yrði hvervetna breytt eftir því sem landslag og aðrar ástæður krefðu.

Howard gerði ráð fyrir því, að stór félög keyptu heilar sveitir í þessu augnamiði og létu æfða byggingafræðinga ráða skipulagi, en aðalatriðunum þó haldið: að landið væri almennings eign, stærð borgarinnar takmörkuð, húsin byggð sem einföldust, en þó smekklegr, og umfram allt heilnæm. Þá gerði hann ráð fyrir, að hver fjölskylda hefði sitt hús fyrir sig og að því fylgdi vænn garðblettur, sem bæði gæti trygt það, að ekki yrði of þétt byggt, að húsin nytu lofts og sólskins og gæfi auk þess nokkuð í aðra hönd. Howard sýndi fram á það með itarlegum reikningum og áætlunum, að slíkar borgabyggingar myndu ekki aðeins bera sig vel, þó alt féð væri tekið til láns, heldur hlytu þær að verða óvenjulega vel staðar, er öll leigan af landinu og verðhækkun þess yrði félagsins eign. Þær tekjur myndu bráðlega nægja til allra útgjalda bæjanna,¹⁾ auk þess sem þær borguðu vexti og afborganir.

Leichworth. Svo þótti flestum, er rituðu um bók Howards, að hér væri um loftkastala eina að ræða, en allir könnuðust þó við, að hinar nákvæmu áætlanir hans um tekjur og gjöld slíks fyrirtækis væru vandlega gerðar og erfitt móti þeim að mæla. Howard sjálfum var ekkert

¹⁾ Áður hafði *Th. Fritsch*, þýzkur maður, ritað góða bók: „Framtíðarborgir“ um líkt efni og Howard. Þó bók þessi væri að ýmsu leyti ágæt, hafði hún lítil áhrif.

fjær skapi en að telja tillögur sínar óframkvæmanlegan loftkastala og vann kappsamlega að því, að reynt yrði að stofna slíka borg. Nú voru ekki allfáir góðir menn, sem féllust á skoðanir hans. Gerðu þessir menn félag sín á milli og unnu kappsamlega að því í riti og ræðu, að tilraun yrði gerð til þess með eina tilraunaborg. Í fyrstu var félagið fáment og nefndist »The Garden City Association» (sveitaborgafélagið) en 1902 voru meðlimir þess orðnir 1300 og höfðu dregið saman 3—400,000 kr. hlutfé, til þess að koma á fót einum bæ í líku sniði og Howard hafði stungið upp á. Félagið tók þegar til starfa og keypti land all-langt fyrir norðan Lundúni, en 1903 var félagið aukið stórum, svo fjármagnið varð 300,000 £ og nefndist það nú »The First Garden City Co. Lmt. Hlutfélag þetta gerði ráð fyrir því, að fyrirtækið bæri sig vel, en ákveðið var að gróði hluthafa mætti ekki fara fram úr 5 % á ári. Alt sem þar yrði fram yfir skyldi ganga til nauðsynja borgarinnar.

Nú var tekið að vinna kappsamlega að borgarsmiðinni, að byggja sveitaborgiha Leichworth. Byggingafræðingum var gefið tækifæri til þess að keppa um skipulagið og sköruðu uppdrættir og áætlanir Berry Parkers og Raymond Unwins fram úr öllum öðrum. Þeim var svo falið að gera fullnaðarskipulag. Landið, sem félagið átti, var 1545 ha. að stærð (eða sem svarar heimalandi vænnar jarðar í góðum ísl. sveitum) og hafði⁷ kostað rúmar 5 milljónir króna (286.474 £), en nokkuð af lélegum húsum voru með í kaupinu. Af landi þessu var þriðjungur ætlaður til bæjarstæðis, hinir $\frac{2}{3}$ til jarðræktar, og lá land það að sjálfsögðu umhverfis bæjarstæðið. Bæjarstæðinu var síðan skift í verksmiðjuhverfi og aðalbæinn. Dálitil skógi vaxin hæð lá á milli verksmiðjuhverfisins og bæjararins. Nú voru götur gerðar eftir öllum listarinnar reglum, vatnsveita, skólpveita, rafmagns og gasveita. Hentugir staðir voru ákveðnir fyrir allar opinberar byggingar og $\frac{1}{6}$ bæjarstæðisins var ætlaður fyrir leikvelli, lystigarða o. þ. u. l. — Alt skólp og áburðarefni þess (kamramykju)

skyldi nota til áburðar á landið umhverfis bæinn. Húsareitir voru gerðar með líku sniði og í Bournville og Port Sunlight, að því leyti til, að dálitill forgarður eða götugarður fylgdi hverju húsi og vænn bakgarður til matjurtaræktunar, en annars voru ýmsar breytingar gerðar er betur þóttu fara. Fengu þeir byggingafræðingarnir Parker og Unwin almannalof fyrir það, hve vel þeir hefðu leyst verk sitt af hendi. Húsin byggði félagið ekki, en réð þó mestu um útlit þeirra og fyrirkomulag. Fengu þeir er byggja vildu landið á leigu til 99 ára gegn sanngjörnu árgjaldi. Urðu bæði einstakir menn og félög fljótt til þess að byggja hús, svo að á árunum frá 1903—1913 byggðust um 1700 hús, en 7000 er ætlast til að þau verði er fullbyggður er bærinn. Árið 1913 var íbúatalan 7000, en er nú eflaust miklu hærri. Öll íbúðarhúsin eru ætluð fyrir eina fjölskyldu og að meðaltali eru lóðir 500 □ st. (hér um bil $\frac{1}{6}$ dagsl.). Mörg húsin eru sambyggð, svo að engin húsasund eru milli gasla. Þykir það bæði hlýrra og ódýrara, en getur þó farið vel. Kemur þetta sérstaklega til greina er húsin skulu gerð svo ódýr sem frekast má. Allmargar (30—40) smáverksmiðjur hafa risið þar upp. Í sumum vinna jafnvel 400 menn. Þó fjærri sé því að bærin sé fullbyggður, eru ýms hús til almennings þarfa komin upp: vandaður barnaskóli, kirkja, samkomuhús o. fl. Einkennilegan skóla hefir kona ein, Miss Lawrence, bygt þar er nefnist Útiskólinn (The Open Air School). Er þar kend heimspeki, þjóðmegunarfræði, siðfræði og garðrækt. Sofa nemendur alt árið í opnum skála, sama sem úti. Mat sinn búa þeir til sjálfir og er þó fjarri því, að það sé í sparnaðarskyni gert, því til skólans hefir verið varið um 500 þús. króna. — Á landinu umhverfis bæinn hafa risið upp nálega 50 smájarðir, ræktaðar svo sem framast má og hafa bændur samvinnufélag sín á milli.

Það voru ekki liðin 10 ár frá því fyrst var farið að gera götur í Leichworth er fulvissa var fengin fyrir því, að fyrirtækið myndi blómgast vel. Borgin er að flestu jafn prýðileg og fyrirmyndarþorp auðmannanna, og þó er

engum neitt gefið. Má það telja vist, að félagið sem borgina stofnaði fái alt fé sitt aftur með góðum skilum og að svo fari sem Howard spáði, að hagur þorpsins verði hinn glæsilegasti er fram líða tímar.

Sveitaborga-hreyfingin. Það var víðar en á Englandi sem fyrirmyndarþorpin vöktu eftirtekt, bók Howards og stofnun Leichworths. Hreyfing þessi barst eins og eldur í sinu um öll síðuð lönd það heita mætti. Árið 1902 stofnuðu þjóðverjar »Þýzka sveitaborgafélagið«, sem síðan hefir unnið að því, að koma á fót sveitaborgum. Er það skemst yfir sögu að fara, að eftir því sem F. Biel byggingafræðing telst til voru sveitaborgir og svipaðir fyrirmyndarbæir ekki færri en 148 árið 1913.¹⁾ Eru þá talin með ýms fyrirmyndarþorp, sum í útjöðrum stórborga (suburbs), sem byggð eru í líku sniði og sveitaborgir, þó ekki sé landið almenningseign. Má á þessu sjá hve öflug hreyfing þessi er. Eftir 1905 má heita að margar borgir hafi verið stofnsettar á ári hverju, en auðvitað eru flestar smáþorp ein enn sem komið er. Í þýzku þorpunum einum bjuggu árið 1913 yfir 100 000 manna. Merkast þeirra mun vera Hellerau hjá Dresden, fagurt fyrirmyndarþorp með öllu eftir nýjustu tízku. Því fer þó fjarri, að hvervetna hafi verið fylgt öllum tillögum Eb. Howards. Sértaflega hefir það víða þótt ótíltækilegt, að landið væri almenningseign og mjög er það dregið í vafa, að sveitaborgum verði sett svo þröng takmörk (30,000 íbúa) sem Howard ætlaðist til, jafnvel vafasamt að vöxtur þeirra verði takmarkaður, og er hér þó um tvö meginatriði að ræða.

Þó hér sé ekki rúm til þess að lýsa þýzku sveitaþorpunum og fyrirmyndarþorpunum, þá sýnast þau ekki standa að baki ensku bæjunum. Í ýmsum atriðum virðist jafnvel skipulag þeirra fult svo hentugt. Húsin eru

¹⁾ F. Biel: Wirtschaftliche u. technische Gesichtspunkte zur Gartenstadt-bewegung.

viðast sambygð, einföld en smekkleg. Má fá nokkra hugmynd um þetta af 7. og 8. mynd. Kjallari er venjulega undir húsum og herbergjaskipun líkari því sem hér tíðkast en í ensku bæjunum. Húsin eru ein- eða tvílyft, flest öll handa einni fjölskyldu. Ýmsir þýzkir auðmenn hafa látið sér mjög ant um að sjá verkamönnum sínum fyrir góðum húsum, og byggt mörg fyrirmyndarþorp í því skyni, t. d. Krupp, hinn mikli fallbyssusmiður í Essen.



7. mynd. Nokkur hús í sveitaborginni Hüttenau.

Ekki getur það komið hér til mála, að lýsa nánar einstökum bæjum af öllum þessum fjölda, en drepa má á örfa atriði, sem séstaklega eru eftirtektaverð fyrir oss Íslendinga. Þau lúta aðallega að skipulagi bæja, sem er mjög áfátt hjá oss, þó bæjir vorir séu sem óðast að vaxa. Vér ættum að geta margt lært af því, sem fródustu menn í nágrannalöndunum hafa fundið og framkvæmt.

Stórhýsi. — *Smáhýsi.* Erlendis hefir það víða gengið svo, að stóru marglyftu húsin hafa verið talin framför og jafnvel eru þess dæmi, að smábær hefir þann að byggja hús lægra en þrílyft. Þykir þetta bæði stórbæjarlegra og hagkvæmt að því leyti, að götur, vatnspípur o. fl. verði styttri og ódýrari, stóru húsin talin auk þess ódýrari en smáhýsi. Sömu skoðanir hafa komið fram í Reykjavík og fengið góðan byr. Er þar nú stefnt af því, að byggja all-stór hús sambygð og marglyft, jafnvel með svo þröngum húsgörðum, að sólar getur ekki

notið í húsunum. Þó nýja stefnan í byggingum borga geri ráð fyrir, að stórhýsin geti átt við á stöku stað, helzt í verzlunargötum og dýrasta miðbiki borga, þá má segja, að hún telji slíkt neyðarúrræði. Hefir það verið sýnt með ljósum rökum, að nálega allir kostir stórhýsanna séu bygðir á misskilningi einum, en gallar þeirra ómótmælanlegir. Það hefir t. d. komið í ljós, að þéttbýlið er víða engu meira að meðaltali í borgum með marglyftum húsum, en í hinum, sem eru eintóm smáhýsi, og götur verða þar engu styttri en aftur miklu dýrari. Háu húsin leiða til þess, að götur þurfa að veramjög breiðar og að halda verður miklum svæðum óbygðum fyrir skemtigarða o. fl. ef borgin á ekki að verða skaðlega óheilnæm. Kveður svo miklið að þessu, að í stórborgum verður að láta nálega helming alls borgarstaðisins ganga í götur og óbyggt land auk húsagarða. Þá hefir það einnig reynst, að stórhýsin eru engu ódýrari en smáhýsin, þó svo hafi fæstir haldið. Einnig er það ómótmælanlegt, að fegurð borga er ekki komin undir því, að húsin séu stór.

Hvað undarlegast sýnist það, að þéttbýlið skuli, er öllu er á botninn hvolft, ekki verða meira að jafnaði í stórborgunum með háu húsunum en í nýju borgunum með einlyftum eða tvilyftum húsum og vænum gördum að húsbaki. Að svo er má sannfæra sig um með því, að athuga hve margir menn koma að meðaltali á hvern hektara af landi í borgum af báðum gerðum. Sést það þá, að í nýtizkuborgunum koma 100—185 menn á hvern ha. en í öllum þorra gömlu borganna um 150, þó þéttbýlustu borgirnar séu jafnvel hálfu þéttbýlli.¹⁾ En um þéttbýli

1)	1890 komu í París	310	menn á 1 ha
—	— - Berlin	249	— - - —
—	— - London	135	— - - —
—	— - Köln	125	— - - —
—	— - Nürnberg	121	— - - —
—	— - Düsseldorf	86	— - - —
—	— - Salzburg	31	— - - —

(Conrad: Handwörterb. d. Staatswissensch. Wohnungsfrage).



5. Gata í Bournville



gömlu borganna með marglyftu húsunum, þar sem það er mest, er aftur það að segja, að allir kannast við, að það sé algerlega óhæfilegt og háski fyrir heilbrigði manna. — Aðalatriðið er þetta, að með smáhýsum og sæmilega stórum lóðum við hvert hús, má byggja svo þétt, sem yfirleitt er gerlegt í borgum án þess að stórtjón hljóti af.

Óvænt mun það koma mörgum, að litlu húsin skuli ekki vera dýrari en stóru húsin. Um þetta verður þó tæpast deilt, því hvervetna er húsaleigan lægri í einbýlishúsaborgum eða að minsta kosti ekki hærri en í stórhúsaborgunum. Að nokkru leyti stafar þetta af því, að húsastæðin verða miklu dýrari ef leyft er að byggja marglyft, að nokkru af öðrum ástæðum.

Í borgunum með marglyftu húsunum og gamla sniðinu er helmingur alls borgarstæðisins gerður að götum og öðru óbygðu landi, til þess að loft haldist sæmilegt, og heilbrigði manna sé síður hætta búin, en á hinum helmingi borgarstæðisins er marglyftum húsum hrúgað saman svo, að víða nýtur ekki sólar. Í nýttizkuborgunum er nokkur hluti óbygða landsins látinn fylgja hverju húsi og er ræktaður, miklu minna land lagt í götur og mun minna í skrautgarða víðast hvar. Hver fjölskylda fær svo sitt hús fyrir sig, og þeir sem sæmilega eru efnum búnir geta keypt sér hús ef landið er á annaðborð selt. Með þessu skipulagi má að sjálfsögðu tryggja það, að öll hús njóti sæmilega birtu og sólskins.

Götugerð. Eitt af því, sem er ærið ólíkt í nýttizku borgunum við það sem áður tíðkaðist, eru göturnar. Í gömlu borgunum, sérstaklega nýjum borgarhlutum, voru þær allajafna þráðbeinar, afarbreiðar, frá 20—40 stikur eða meira, allar þaktar höggnu grjóti eða jarðbiki, og hornréttar hver á aðra. Í nýju borgunum eru göturnar venjulega bognar og þykir það víðast bæði fegurra og hentugra, sérstaklega fyrir smábæi, eru tiltölulega örmjóar, frá 4,5—12 st., af mjög einfaldri gerð, en framan

húsanna eru forgarðar svo stórir, að nægilega langt verði milli húshliða. Verða slíkar götur miklu ódýrari bæjunum en breiðu steinlögðu göturnar. Götum er venjulega skift í íbúðargötur og flutningagötur. Um íbúðargötur er litil umferð og má því gatan vera mjög mjó. Flutningagöturnar eru auðvitað gerðar breiðari, eftir því sem umferðin krefur, en fara sjaldan fram úr 12,5 st. er forgarðar eru dregnir frá.



8. mynd. Gata í Helleran.

Sýnir vel hve fagrar bogagötur eru og að hvellda húsaröðin blasir bezt við auganu. Gangstéttir eru engar! Rimlagirðingarnar umhverfis forgarðana eru helzt til fyrirferðarmiklar og ekki laust við að þær lýti götuna.

Útlitið. Af því sem fyr er sagt má sjá, að mikill munur sé á svip og útliti nýtzikuborganna og gömlu stórborganna. Í beztu götum gömlu borganna sást breiða, völduga steinlagða stórborgargatan fram undan eins og gróðurlaus eyðimörk með óslitinni röð af marglyftum stórhýsum til beggja handa. Í nýju borgunum er sjálf gatan víðast til-

tölulega mjór vegur, oftast tjörusteyptur, stundum engar gangstéttir. Til beggja handa eru blómgarðar eða grasi-grónar spildur fram undan húsunum og húsin eru raðir af sambygðum ein- eða tvílyftum, fögrum en prjállausum smáhýsum. Ef komið er að húsabaki sér maður allstórt svæði milli húsaraðanna af kappræktuðum matjurtagörðum. Viða eru svo leikvellir fyrir börnin í miðjum húsgarðinum.

Niðurlag. Þó flestu viki hér við á annan hátt en erlendis, þó bæir vorir séu enn litil þorp, þó iðnaður sé hér litill, og ekki komi til mála að efla hér ræktun sveitanna með borgum, þá er margt sem Íslendingar geta lært af nýtzikuborgunum og skipulagi þeirra. Bæir vorir hafa vaxið óðfluga síðustu áratugina og það svo að nú býr fullur þriðjungur allrar þjóðarinnar í bæjum. Þess verður líklega skamt að biða, að svo verði um helming allra landsmanna. Reynsla annara sýnir, að því fylgir ærin hættu að láta bæi vaxa hugsunarlaust og skipulagslitið, mikil hættu fyrir heilbrigði manna, þrif og þroska unga fólksins, fyrir öll fjármál og framtíð bæjanna. Vér getum ekki komist hjá því að fara að vanda allt skipulag bæjanna, meira en verið hefir, fá sérfróða menn til þess að gera skipulags uppdrætti er fara skal eftir. Og dragast má þetta með engu móti er steinsteypuhús koma óðum í stað timburhúsanna, því þau eru ekki auðhreyfð úr stað, endast lengi og ekki auðvelt að gera breytingar á þeim, ef þau eru eittsinn vitlaust sett eða illa bygð. Nú vill svo til, að alt er að byggingu bæja lýtur og skipulagi þeirra hefir verið rætt vandlega erlendis á undanfarandi árum, miklar tilraunir verið gerðar og nýtt snið fundist á flestu, fegurra og hentugra en það sem áður var. Þessa þekkingu eigum vér að færa oss í nyt og taka það til eftirbreytni sem hér á við. Enn þá stefnir allt í þá átt, að bæir vorir verði bæði framúrskarandi ljótir og óheilnæmir, verði landi og lýð til skammar. Ef ekki er bráðlega aðgert er þetta óumflýjanlegt. En ef vér höfum augun opin og förum

hyggilega að ráði voru — þá er oss enn innan handar, að koma smámsaman svo góðu skipulagi á bæi vora, að þeir standi mörgum bæjum annara landa framar að fegurð, hentisemi og heilnæmi. Millíónir króna getum vér sparað á þennan hátt og ótal mannslíf. Í stað þess að verða eftirbátar allra annara stendur oss til boða að verða fyrirmynd, láta alla sjá er að landi koma, að vér höfum bygt bæi vora svo vel og hentuglega sem vorar ástæður leyfðu, hagnýtt oss allt það sem bezt var og hér átti við af endurbótum vorrar aldar á skipulagi bæja. Að minsta kosti væri ástæða til þess fyrir oss, sem búum í jarðskjálftalandi, að athuga hvort hyggilegt muni að hverfa frá lágu einbýlishúsunum og taka upp þann byggingahátt, sem mest tjón hefir hlotist af erlendis: háreistu margbýlishúsin með þröngum sólarlausum húsa-görðum.¹⁾

En hvað sem þessu liður: Hin geigvænlega gáta borga-sfinxarinnar er nú ráðin. Nú kunna menn að byggja fagar, heilnæmar og hentugar borgir, svo mannkyninu þarf eigi framar að stafa hætta af vexti og viðgangi borga. Þetta er, ef til vill, þýðingarmesta uppgötvunin sem gerð hefir verið á öldinni sem leið.

¹⁾ Þeim sem vilja kynna sér skipulag bæja, og ekki geta hagnýtt sér erlendar bækur, má vísa til fylgirits með Árbók Háskólans 1916: Um skipulag bæja eftir Guðm. Hannesson.

Guðm. Hannesson.

Ísland og Norðurlönd.

Fyrirlestur haldinn á 5. norræna stúdentafundinum
á Eiðsvelli 1915.

Eftir *Sigfús Blöndal*.

Norræna stúdentasambandið er félag sem starfar að því að koma á andlegri og bróðurlegri einingu Norðurlanda, án þess að skifta sér af pólitík. Mér finst því frágangssök, að við hér förum að ræða pólitíska afstöðu Norðurlanda sín á milli eða gagnvart öðrum löndum, og eg ætla mér ekki heldur að gera það að því er Ísland snertir, en eg ætla aðeins að drepa á einstöku aðalatriði, sem eru mikilsvarðandi þegar ræða skal um afstöðu okkar litlu þjóðar gagnvart hinum norrænu þjóðunum að því er snertir það sem gert er til að koma á nánara andlegu og menningarsambandi milli okkar og þeirra.

Gamli, pólitíski skandinavisminn átti aldrei miklum vinsældum að fagna á Íslandi. Ástæðan til þess var einkum sú, að flestir forvigismenn þeirrar hreyfingar virtust ekki muna eftir því að Íslendingar voru sérstök kynkvísl norræna þjóðbálksins; það var altaf verið að stagast á »þremur þjóðunum«. Pólitísk þýðing Íslands var sama sem ekki neitt. — Norðurlönd gátu ekki búist við neinum styrk þaðan, sem vert væri að nefna, í baráttunni gegn útlendum óvinum.

En nú er að rísa upp á Norðurlöndum megn tilfinning þess að norrænu þjóðirnar heyri hver annari til andlega og menningarlega, og þessi hreyfing heldur aðra leið en skandinavisminn gamli. Mönnum er orðið ljóst, að hver

þjóð á að geyma alt sem einkennir hana frá öðrum þjóðum, ef það þá er til gagns, en um leið reyna að bæla niður allar leifar gamals haturs og tortryggni, reyna að skilja lundarfar bræðrapjóðanna og koma á samvinnu og sameiginlegum stofnunum á öllum þeim sviðum, sem það er hægt að gera á, án þess að granda því sem er einkennilegt og holt þjóðinni sjálfri. Og í þessari hreyfingu á Ísland að vera með.

En Ísland er að sumu leyti öðru vísi sett en hin norrænu löndin, og því verða verkefni þau, sem við verðum að fást við fyrst um sinn, nokkuð önnur og á ýmsum sviðum verður hluttaka vor í norrænni menningarsamvinnu öðru vísi en hinna þjóðanna. Eg skal hér drepa á einstöku atriði, sem ráða sérstöðu vorri.

Þá er fyrst að nefna bókmentirnar. Tunga vor er enn svo lík gamla bókmálinu, að íslenzkir alþýðumenn geta þann dag í dag lesið fornu bókmentirnar á frummálinu, þar sem hinar norrænu þjóðirnar verða að lesa þær í þýðingum. Mismunurinn er hér um bil eins og á ensku frá dögum Shakespeare's og nútíðar-ensku. Og með tungunni hefir gengið að erfðum ýmiskonar andleg starfsemi. Það hefir af ýmsum ástæðum farið svo, að löngun til bókiðna og jafnvel visindalegrar starfsemi hefir komist dýpra niður í mannfélagið hjá okkar þjóð en nokkurri annari; við þykjumst af því að við getum bent á fátæka alþýðumenn í röð okkar beztu skálda og fræðimanna. En þar sem nú má segja að mismunurinn á tungunum í Danmörku, Noregi, Svíþjóð og Finnlandi ekki aftrar neitt menningarsambandi þessara landa, þar sem allir mentaðir menn í þeim skilja mál bræðrapjóðanna svo vel, að þeir geta fylgst með andlegu lífi þeirra, þá er þessu ekki að fagna hvað Ísland snertir. Fyrir utan Ísland eru ekki margir sem geta lesið íslenzkt nútíðarmál eða sinna nútíðarbókmentum vorum. Það eru til fáeinir menn, sem slikt gera, en allflestir fást einungis við forna málið og fornu bókmentirnar, og menn gefa engan gaum bókmentunum frá síðari öldum. Hér er því alvarlegur erfiðleiki á

nánara andlegu sambandi þjóðanna. Aftur á móti læra allir mentaðir Íslendingar dönsku, norsku og sænsku, og kynna sér allvel bókmentir bræðraþjóðanna. Afleiðingin er sú, að við vitum miklu meira um bræðraþjóðir vorar en þær vita um okkur.

Af hinni afskektu stöðu og einangrun Íslands hefir það leitt, að þjóðfélags- og menningarástand miðaldanna hefir getað haldist lengur hjá vorri þjóð en annarstaðar á Norðurlöndum. Eiginlegar borgir hafa fyrst risið upp hjá okkur á 19. öldinni og borgamenningin okkar er þess vegna svo ung og hefir lítið að erfðum fengið; þjóðmenningin íslenzka er bændamenning. Iðnaður, verzlun og skipaferðir er alt á barnæskustiginu, borgarastéttin því fá-menn og hefir ekki í þjóðlífi voru getað haft þau áhrif sem samskonar stéttir hafa hjá bræðraþjóðunum. Bændastéttin er sú stétt landsins, sem ennþá er langþýðingarmest, og með henni má í rauninni telja mikinn hluta embættismanna, einkum alla prestastéttina að kalla má, — þeir búa uppi í sveit, eiga við lík lífskjör að búa og bændurnir, og oftast nær fer heill og hagur þeirra saman. Yfirleitt má segja að stéttamunur sé mjög lítill, hjá þjóð vorri ræður alþýðan öllu, og hið mikla djúp milli fátækra og ríkra, sem viðast hvar er til, verður maður ekki svo mikið var við á Íslandi. Í rauninni má segja að á Íslandi vanti okkur mestu mótsetningarnar, okkur vantar þá menningu sem finst í æðstu stéttum annara landa, þar sem auðlegð og menning hafa gengið að arfi frá kynslóð til kynslóðar, og okkur vantar andstæðuna við það, skrilinn í stórborgunum.

En það er öllum ljóst að alt þetta er að gjörbreytast. Útlenda menningin og straumar nýja tímans renna yfir landið, frjóvga og glæða sumt en eyða öðru. Að mörgu leyti stöndum við vel að vígi gagnvart nýja tímanum. Þjóðin er gáfuð og gallhraust. Ýmsir sjúkdómar, sem eru algengir erlendis, eru óþektir að kalla má á Íslandi (þannig er t. d. skarlatssótt fremur sjaldgæf). Við erum nærri því alveg lausir við tvö mestu átumein heimsmenningarinnar,

kynferðissjúkdóma og drykkjuskap. Ef menn hagnýta sér auðæfi þau er Ísland hefir frá náttúrunnar hendi er enginn vafi á því, að það á sér glæsilega framtíð hvað efna-haginn snertir. Eg á hér einkum við búnaðinn og fiski-veiðarnar, og iðnaðargreinir þær, er standa í sambandi við þessa atvinnuvegi og fá verkefni þaðan. Margs má vona en allt er í bernsku enn.

Eg ber nú það traust til islenzku þjóðarinnar, að við getum sjálfir smíðað gæfu sjálfra vor, sjálfir leitt okkur sjálfa í þessu öllu saman, en þar sem við erum fáir og fátækir er líklegt að framfarirnar verði nokkuð hægfara, og víst er það, að hægt er að flýta fyrir þeim ef bræðra-þjóðir okkar vilja skerast í leikinn með okkur. Fyrst og fremst þarf fólksfjöldinn að aukast, og þá verður manni á að spyrja, hvort enginn vegur sé til þess að beina kvísl af útflutningastrauminum frá hinum norrænu löndunum upp til Íslands. Þetta er mál sem hefir verið rætt talsvert á Íslandi, líka á alþingi, og mönnum er fullljóst að slíkt væri í alla staði ákjósanlegt, en hingað til hefir ekkert verið gert að kalla má til að brýna þetta fyrir alþýðu manna í hinum löndunum. Auðvitað er skynsamlegast að beina útflutningi úr hvaða landi sem er fyrst og fremst til þeirra héraða í landinu sjálfu þar sem fólksekla er, eg á t. d. við Norrland í Svíþjóð, en þar næst á eftir finst mér bróðurlöndin koma. Og eg vildi leyfa mér að benda á Ísland sem framtíðarland, að því er þetta snertir. Lifskjör manna eru í rauninni ekki mjög ólík því sem gerist á stórum svæðum á vesturströnd Noregs, einkum norðan til, og reynslan sýnir að Norðmönnum getur liðið ágætlega á Íslandi. Og að minsta kosti verða þá niðjar útflutta fólksins norrænir, en í Ameríku og Ástralíu hverfa þeir eftir fáeinar kynslóðir alveg upp í útlendu þjóðirnar. Norrænu þjóðirnar hafa gagnað heiminum talsvert með því að taka sjálfum sér blóð við og við, með því að flytja að heiman hópum saman í önnur lönd. En viljið þið segja mér hvaða nýlenda Norðurlandaþjóða hefir orðið Norðurlöndum til mests gagns og gleði? Sannarlega ekki

svenska nýlendan, sem varð kjarninn í rússneska heimsríkinu, og heldur ekki hin völdugu ríki Dana og Norðmanna á Bretlandseyjum og Frakklandi, en það er norska nýlendan á Íslandi, lítilsmegandi gagnvart öðrum þjóðum er á völdin og máttinn er litið, en það er nú samt einasta norræna nýlendan þar sem sjálfstæð norræn menning hefir getað haldist, og okkar litla þjóð hefir gert hvað í hennar valdi stóð til að endurgjalda okkar gamla móðurlandi, Noregi, með því að vernda hina fornu sameiginlegu tungu vora, og minningar fornrar frægðar, og þá um leið margt og mikið um hinar bræðraþjóðirnar. Á þennan hátt er Ísland orðið eitt af þeim böndum, sem tengir norrænu þjóðirnar hvað mest saman; það er gamalt orðtæki að allar leiðir liggi til Rómaborgar — en í sögu Norðurlanda liggja allar leiðir til Íslands.

Mig langar nú samt ekki til þess að fara að útmála þér fyrir okkur ágæti forfeðra vorra. Við Íslendingar á tuttugustu öldinni stundum auðvitað vandlega fornmal okkar, bókmentir og menning, en það gerum við auðvitað fyrst og fremst sjálfra okkar vegna og ekki vegna bræðraþjóðanna, enda þótt það geti komið fyrir að þær geti haft gagn af því, og líka af andlegu lífi okkar nú á dögum. Miklu fremur vildi eg minnast á það hvað við Íslendingar eigum að þakka hinum norrænu þjóðunum.

Fyrst vil eg þá byrja á þeirri þjóð, sem við erum gestir hjá þessa daga. Hvað á Ísland Noregi að þakka! Já, hvað á barnið móður sinni að þakka? Við eigum Noregi að þakka það að við erum til, fjöldinn allur af forfeðrum vorum er þaðan kominn, enn mælum við á hina fornu tungu Norðmanna, það sem þeim er heilagt úr minningu liðins tíma er um leið heilagt fyrir okkur. Þegar við Íslendingar komum til Vestur-Noregs, í Sogn og í Harðangur, þau héruð, sem flestir forfeður vorir eru komnir frá, þá er það sem einskonar pílgrímsferð fyrir okkur, og okkur virðist fólkið vera svo líkt að útliti og líkamsburðum löndum okkar heima, og eg býst við því, að ef grenslast væri vandlega eftir því, myndi það sýna

sig, að í skapi værum við líkari Norðmönnum vestanfjallsmeir en nokkrum öðrum Norðurlandabúum. Og við mættum ekki við því búast að frændur vorir í Noregi vildu kannast við frændsemina, ef við hefðum ekki erft einmitt suma af þeim eiginleikum, sem hafa gert Norðmenn að því sem þeir eru orðnir, og þá fyrst og fremst hina ríku tilfinning fyrir rétti einstaklingsins og sjálfstæði þjóðarinnar, tilfinning sem öðrum út í frá stundum virðist öfgakend og skritin, en sem er alveg ómögulegt að greina frá insta eðli voru, og sú tilfinning getur að eins leitt til góðs eins, bæði fyrir einstaklinginn og þjóðfélagið í heild sinni, þegar henni er stýrt á rétta braut. En þó að við nú finnum til þess að við líkjumst Norðmönnum meira andlega og líkamlega en nokkurri annari þjóð, og þó við elskum hjartanlega okkar gamla móðurland, þá væri það samt bæði rangt og afar fljótfernislegt að draga af því þá ályktun að við æsktum þess að standa í nánara pólitísku sambandi við Norðmenn en við aðrar norrænar þjóðir. Þetta er misskilningur, í sjálfu sér ósköp eðlilegur, sem við rekum okkur stundum á, bæði í Noregi og Danmörku. Ást vor á Noregi á ekkert skylt við pólitík. Þegar börnin eru uppkomin hirða þau ekki um það að standa undir yfirráðum foreldra eða frænda, enda þótt þeim kunni að þykja vænt um þá. Þá vilja þau láta meta sig jafnt föður og móður og öllu frændfólkinu.

En auk ætternisins og þess sem þar af leiðir eigum við mikið að þakka Noregi nýja tímans, bæði andlega og efnalega. Hin miklu norsku skáld, einkum Ibsen, Björnson, Kjelland og Garborg hafa haft mikil áhrif á andlegt líf vorrar þjóðar. Á ýmsum verklegum sviðum hafa áhrif Norðmanna verið mjög mikil. Af Norðmönnum höfum við lært sildarveiðarnar og ýmiskonar iðnað, sem þeim er samfara; dagnaður norskra manna hefir sett mót á marga smákaupstaði vora á Austur- og Norðurlandi. Og það er svo að sjá, að alþjóðlegar hreyfingar eigi eitthvað hægra með að ná tökum á okkur þegar þær koma til okkar frá Noregi, að minsta kosti á það sér stað

með þá hreyfingu sem hefir náð tökum á íslenzku þjóðinni fremur öllum öðrum, bindindishreyfinguna. Sigur hennar á Íslandi er að þakka hinni alþjóðlegu food-Templarareglu, sem er komin til Íslands frá Noregi. Ungmennahreyfingin hefir í sínum norska búningi fundið góðan jarðveg á Íslandi. Og það eru ýmsar greinar sem hægt væri að nefna, þar sem við höfum lært af Norðmönnum, og enn þá fleiri, sem við eigum eftir að læra af þeim.

Látum okkur því næst líta á hvað við Íslendingar eigum að þakka bræðrapjóð okkar, Dönum, þeirri þjóð, sem við erum í ríkissambandi við, þar sem við höfum sameiginlegan borgararétt, sameiginlegan konung, og sameiginlegar stofnanir á mörgum sviðum. Það hefir auðvitað ekki hjá því farið að sú þjóð, sem lengra er komin á leið í menning og auðlegð, hefir haft mikil áhrif á fátækari og auk þess miklu fámennari þjóðina. Eg ætla mér nú ekki að tala um það, sem þjóðunum hefir farið á milli í pólitík. Þegar á að gera upp alt saman, bæði gott og ilt, sem leitt hefir af pólitísku sambandi landanna, og leggja dóm á það hvor þjóðin hafi haft eða hafi nú sem stendur mest gagnið af þessu sambandi, þá getur varla hjá því farið, að þjóðernistilfinningin segi til sín, og þegar maður heyrir annari þjóðinni til, að ætterni eða uppeldi, er erfitt að fá báðar til að trúa sér. Eg er sjálfur þeirrar skoðunar að sambandið milli Íslands og Danmerkur sé til mikils hags fyrir Ísland, og eg held það mundi vera okkur til óláns ef því sambandi yrði slitið, en annars ætla eg ekki að fara frekar út í þetta mál. Okkur kemur heldur ekki við á hvern hátt þessu sambandi megi koma fyrir sem haganlegast, úr því verða danskir og íslenzkir stjórnámálamenn að ráða í bróðerni, og eins og kunnugt er eru mjög skiftar skoðanir manna í þeim efnum. En það er alt öðru máli að gegna þegar litið er á menningarmálin og þjóðfélagslífið. Á þeim sviðum munu allir sannleiksúsir Íslendingar, hvað ólíkar sem pólitískar skoðanir þeirra kunna að vera, vera á eitt sáttir um það, að

Íslendingar eiga Dönum afarmikið gott að þakka, og að við höfum þegið af þeim miklu meira en við höfum getað látið þeim í té frá sjálfum okkur. Eg skal hér nefna ýmislegt af því helzta. Fyrst andlegt líf þjóðarinnar. Kaupmannahafnarháskólinn hefir dregið til sín fjölda íslenzkra mentamanna, og þeir hafa verið styrktir til náms þar af dönsku fé mjög rausnarlega. Af þessu hefir leitt að allur þorri íslenzkra stúdenta hefir farið til þessa skóla og ekki til annara landa; fyrst nú eftir að Ísland hefir sjálft eignast háskóla í Reykjavík má búast við að þetta verði öðru vísi; þó má ganga að því vísu, að margir íslenzkir stúdentar muni um langan aldur sækja til Danmerkur til að leita sér mentunar í greinum, sem ekki er enn veitt kensla í í Reykjavík, þannig munu sjálfsagt margir sækja fjöllistaskólann í Kaupmannahöfn, og hin miklu íslenzku handritasöfn í Höfn, og þau kynstur, sem þar eru af ritum er snerta sögu, tungu og bókmentir Íslands munu um allan aldur draga íslenzka mentamenn til Danmerkur. Og það er auðvitað, að margra ára dvöl í bæ eins og Kaupmannahöfn hlýtur að hafa talsverð áhrif á andlega þroskun þeirra. Flestir þessara íslenzku mentamanna hverfa þó aftur heim til Íslands; nú á tímum kemur það sjaldan fyrir að íslenzkir mentamenn setjist að í Danmörku fyrir fult og alt. Það eru þó til einstaka menn sem gera það, og íslenzka mentamannastéttin hefir á þann hátt getað endurborgað lítið eitt af velgerðum þeim, sem þeim og stéttabræðrum þeirra hafa verið í té látnar; þannig að nokkir þeirra hafa orðið danskir embættismenn og hafa þá starfað til gagns fyrir land það, sem hefir auðsýnt þeim slíka gestrisni, og má jafnvel telja þá með dönskum vísindamönnum og rithöfundum, að svo miklu leyti, sem þeir hafa ritað á danska tungu. Og þótt lítið sé um íslenzkt kyn í Danmörku, þá fögnum við Íslendingar þó yfir því og þykir mikill sómi að, að tveir af frægustu sonum Danmerkur, Bertel Thorvaldsen og Niels Finsen, eru af íslenzku bergi brotnir.

En það er ekki einungis samband Íslendinga við

Kaupmannahafnarháskóla, sem hér kemur til greina. Það hafa líka verið til þeir danskir menn, sem hafa unnið mikil þrekvirki í þarfir forn-norrænna vísinda. Eitt nafn mun aldrei gleymast á Íslandi, Daninn Rasmus Kristján Rask, sem með ritum sínum mest kom mönnum til að stunda forn málið, og lagði grundvöll undir þá fjörugu blómaöld þess konar vísinda á fyrri hluta 19. aldarinnar, og jafnframt því stofnaði hann hið íslenzka Bókmentafélag, sem varð til þess að menn fóru aftur fyrir alvöru að leggja kapp á vísindi á íslenzka tungu, og að tungan sjálf endurreistist úr niðurlægingu. Þá má líka minna á, að það var annar danskur maður, Rafn, sem það er að þakka að Landsbókasafnið í Reykjavík var stofnað.

Margir danskir vísindamenn hafa átt mikinn þátt í því að rannsaka náttúru Íslands, og danskar opinberar og vísindalegar stofnanir hafa verið mjög örar á að styrkja íslenzka vísindamenn til þess konar starfa. Eg finn sérstaklega ástæðu til að geta um landmælingar danska herforingjaráðsins og kortagerð þess á Íslandi, það er afar erfitt og dýrt verk, og eins og sanngjarnt er, borgar Ísland mikinn hluta kostnaðarins, en Danir greiða bæði stórfé til þess, og það sem meira er í varið og ekki er hægt að meta í peningum, þeir láta reynda og dugandi herforingja framkvæma verkið, menn sem hafa fengið alveg sérstaka tilsógn og reynslu í þess konar störfum.

Sá litli vísir til fagurra lista sem nú er að finna á Íslandi á líka rót sína að rekja til þjóðmenningar Dana. Íslendingar, sem hafa viljað leggja stund á sönglist, málalist, myndasmiðar og byggingarlist hafa leitað til Danmerkur og verið þar vel tekið. Framtíð þessara lista á Íslandi mun undir því komin, hvort þær fá á sig þjóðlegan blæ, og geta því komið fram með eitthvað nýtt og óþekkt til að auðga alheimsmenninguna með; einstöku listiðnar-greinar hafa alt af verið á háu stigi á Íslandi (t. d. gull- og silfursmiðar), og má búast við að þær dafni betur; þjóðlög vor vantar enn þá menn eins og Grieg, sem geti notað þau í lagsmiðar, sem geti orðið sönglífi alheimsins.

að gagni. Sá alþjóðablær, sem er á smíðum flestra íslenzkra listamanna á þessum sviðum er að kenna dönskum áhrifum. Dönsk byggingarlist hefir á Íslandi reist sér ævarandi minnisvarða. Þegar spurt er að því hverjar séu fallegustu opinberu byggingarnar í Reykjavík, verður svarið: Alþingishúsið og Landsbókasafnið, bæði byggð eftir uppdráttum danskra byggingameistara, Alþingishúsið eftir Meldal, hitt eftir Magdahl Nielsen.

Aftur á móti í skáldskap eru áhrifin frá Danmörku minni en við mætti búast. Þó má finna þau hjá einstaka rithöfundi, og einkum má benda á það með vissu, að hreyfing sú sem Georg Brandes vakti í Danmörku á sínum tíma hefir náð til íslenzkra bókmenta, eins og líka má benda á áhrif frá Drachmann og H. C. Andersen.

Þegar svo er litið á þjóðlífið og verklegu sviðin má finna margs konar áhrif frá Danmörku. Menningin í kaupstöðunum okkar er að miklu leyti dönsk. Í verzlunar- og iðnarstéttunum okkar er fjöldi fólks sem hefir mentast í Kaupmannahöfn og flutt danska síði með sér, og að auk allmargar danskar fjölskyldur, sem hafa haft talsverð áhrif á lífið í bæjunum. Heimili efnaðra borgara fá oft á sig líkt snið og sams konar heimili í dönskum bæjum. Auðvitað er þetta eins konar millibilsástand — eftir öllu að dæma verður lífið í íslenzku bæjunum með alíslenzkum blæ þegar nokkrar kyn-lóðir eru liðnar. Upp til sveita eru dönsku áhrifin miklu minni. En þó má þar líka benda á einstöku greinar, þar sem við höfum lært mikið af Dönum. Þannig eru rjómagælin og sláturfélögin dönsk að uppruna, og svo virðist sem þau ætli að verða til mestu þjóðþrifa efnalega eins á Íslandi sem í Danmörku, þó stendur járnbrautarskorturinn þeim enn mjög fyrir þrifum. Það leiðir af pólitísku sambandi landanna, að Íslendingar ávalt gefa vel gaum að fyrirkomulagi danskra stofnana, og oft taka þær sér til fyrimyndar, þegar eitthvað nýtt á að setja á stofn, og meðan Danir standa eins í fremstu röð þjóðanna og þeir nú gera í öllum framförum og hagsýni í þjóðmálum, þá verður það

að teljast til lofs íslenzkum stjórnámálamönnum, að þeir hirða ekki um að minnast á stjórn málaþref vort við Dani, þegar á hitt er að líta, en leita þekkingarinnar þar sem hana er að finna. Venjulega eru það Íslendingar sjálfir sem brjóta upp á nýjungum, en hitt á sér líka stað, að Danir verða fyrri til; þannig voru það danskir vísindamenn með Ryder höfuðsmanni í broddi fylkingar sem börðust fyrir því að vekja áhuga íslenzku þjóðarinnar á skógrækt, og það hefir loks tekist að koma mönnum í skilning um þýðingu hennar; annar danskur maður, Schierbeck landlæknir, á mikla þökk skilið sem forvigismaður endurbóta í garðrækt; þá er það öðrum dönskum lækni, próf. Ehlers, að þakka, að danskir Odd Fellowar stofnuðu holdsveikraspítala á Íslandi, þannig að nú er útlit til þess að þessum vöðasjúkdómi verði algerlega útrýmt úr landinu.

Það mætti nefna margs konar önnur áhrif frá Danmörku, góð og ill — en tíminn leyfir mér ekki að tína fleira til. En eg vil draga saman í eitt það sem hér er sagt, þannig, að Danmörk hefir verið og er að miklu leyti enn það land sem öllum öðrum löndum fremur er sam tengingarlandið milli Íslands og Norðurálfunnar, alþjóðar-menning nútímans er til vor komin frá Danmörku og oft með einkennilegum dönskum blæ. Eins og Danir hafa lært af Þjóðverjum, Englendingum og Frökkum, fengið mikilsvarðandi menningargreinir frá þeim og breytt þeim þannig, að þær hafa fengið á sig hreint danskt snið, eins höfum við fengið mikilsvarðandi menningargreinir frá Dönum, og við eigum þessari bræðraþjóð okkar að þakka ýmislegt það, sem okkur þykir vænst um og við væntum okkur mest af, og enda þótt svo hljóti að fara að margt af þessu með tímanum fái á sig sérstakt íslenzkt snið, mun þó oft vera hægt að sjá danska upprunann og það sem þannig verður sameiginlegt fyrir þjóðirnar, vegur þungt á metunum þegar um það er að ræða að þroska samúðarandann og efla sameiginlega menningu á öðrum sviðum.

I samanburði við Noreg og Danmörku verða menningaráhrifin frá Svíþjóð og Finnlandi auðvitað miklu minni. Og þó má hér telja ýmislegt merkilegt. Fyrst skal eg þá nefna að í byrjun 15. aldar kom prentlistin til Íslands frá Svíþjóð. Og að því er andlegt líf nútímans snertir, þá eru það engar ýkjur að segja að Bellman, Tegnér, Selma Lagerlöf og Runeberg líklega eru betur kunn á Íslandi en nokkurt danskt skáld, að H. C. Andersen einum undanskildum. Friðþjófssaga Tegnér's hefir verið þrisvar gefin út á íslenzku. Einkum er Runeberg í miklum metum, og ágætar þýðingar af sumum ritum hans, bæði úrvali úr Fänrik Ståls Sögner og öðrum, bæði í bundnu og óbundnu máli. Lögin við kvæði Bellmans eru þjóðkunn á Íslandi, og bæði þau, og helztu lög sænsku stúdentasöngvaranna, eins og Otto Lindblads, sænsk þjóðlög og svo ekki sízt Gunnar Wennerbergs, er oft að finna á samsöngvum íslenzkra söngfélaga. Það er undarlegt en satt, að það er eins konar andleg frændsemi milli sænskrar og íslenzkrar ljóðagerðar, í báðum er mikil áherzla lögð á fingerða hreimsnild, vandvirkni í kveðandi, hljómfagurt mál og glæsilegt orðaskrúð.

Eins og þið nú sjáið höfum við Íslendingar því á mörgum sviðum lært ýmislegt af hinum norrænu frændþjóðum, og eg hefi viljað taka þetta sérstaklega fram til að benda á það, hvað mikið það er, sem við eigum sameiginlegt. Eg veit eg þarf ekki að vera að færa neinar sönnur á það, að það sé æskilegt að norræn menning haldist við lýði á Íslandi, hér í þessu félagi, sem hefir andlega einingu Norðurlanda sem markmið sitt. Nú renna straumar nýja tímans yfir landið, Ísland hefir nú beint samband við England, Ameríku, Þýzkaland og rómönsku löndin, og því er það eðlilegt að erlenda menningin getur á mörgum sviðum komist inn til okkar. Það getur vel farið svo að breytingar á rikjunum í Norðurálfu, sem af stríðinu leida, geti haft það í för með sér, að eitt eða fleiri ríki, önnur en Norðurlönd, geti öðlast beinlinis eða óbeinlinis miklu meiri völd á Íslandi með auðvaldi eða menningu sinni en

Norðurlönd nú hafa, og jafnvel líka fengið pólitísk yfirráð yfir landinu. Eg er einn af þeim, sem glaður tek við allri góðri menningu sem frá útlöndum kemur, en eg verð að jata það, að mér stendur stuggur af öllu því sem getur fjarlæggt okkur Íslendinga frá bræðraþjóðum vorum í hugðunarhætti og venjum, og eg býst við þið séuð mér samdóma í því efni. Mér finst það vera mikilvert verkefni fyrir félag vort, að reyna að gera það sem í voru valdi stendur til þess að vekja á Íslandi samúð til norrænu þjóðanna, og koma Íslendingum til þess að líta fremur á það sem samtengir okkur og þær, heldur en hitt sem skilur okkur frá þeim. En óumflýjanlegt skilyrði fyrir því að þetta geti orðið og haft nokkur veruleg áhrif er það, að þjóð vor fái alveg ótvíræðar sannanir fyrir því, að bræðraþjóðirnar viðurkenni rétt Íslendinga til að vera jafnt settir hinum þjóðunum sem sérstök þjóð. Og eg vil nota þetta tækifæri til að þakka sambandinu og miðstjórn þess fyrir það hvernig tekið hefir verið í þetta mál af ykkar hálfu. Þegar menn koma með þá mótbáru, að Íslendingar séu svo fáir, um það bil 85000 manns, að ekki sé hægt þess vegna að fara með Ísland og skoða það sem jafn hátt sett hinum norrænu löndunum, þar sem fólksfjöldinn og auðlegðin er meiri, þá neita eg því að sú röksemdarleiðsla sé rétt. Þess konar mismunur á stærð og auðlegð er líka milli Bandaríkjanna í Ameríku. Þannig hefir ríkið Nevada hér um bil sama fólksfjölda sem Ísland, en ríkið New York rúmar 9 miljónir íbúa og Pennsylvania um 8 miljónir — og samt er Nevada skoðað sem alveg jafn réttthátt ríki, og fær nákvæmlega jafn háa fulltrúatölu — tvo menn — í öldungaráði Ameríkumanna, en aftur á móti auðvitað miklu færri fulltrúa en hin ríkin í nedri málstofunni, þar sem er kosið eftir fólksfjölda. Og það er svo sem auðvitað að á meðan Ísland er strjálbyggt og fátækt á það ekki hægt með að leggja á sig mikið af þeim byrðum, sem sameiginleg vinna norrænna þjóða í menningarinnar þarfir eða skyldur, sem leiða af sambandi við aðrar þjóðir út í frá, mundu hafa í för með sér. En þjóð

vor er fús á að gera hvað hún getur, eftir efnum og ástæðum, og sá tími mun koma, að tillög Íslendinga í þess konar þarfir geta orðið svo mikil að það muni um þau. Og það verður að reyna á allar lundir að fá Ísland með. Það er t. d. mjög áriðandi að Ísland sé með í sameiginlegri löggjöf fyrir Norðurlönd. Það má segja þingi voru og stjórn til heiðurs, að allir pólitískir flokkar á Íslandi hafa verið ásáttir um það, að láta löggjöf vora, að svo miklu leyti sem það hefir verið hægt, vera samfara löggjöf hinna þjóðanna. En það væri einkar æskilegt að koma á nánari samvinnu. Eg skal nefna eitt dæmi. Þingmenn hinna norrænu þjóðanna hafa árlegar samkomur sín á milli, sem geta haft talsverða þýðingu til að efla samúðartilfinninguna milli þjóðanna. Þegar íslenzku alþingismennirnir komu til Danmerkur árið 1906 man eg eftir því, að danskur þingmaður opinberlega lýsti yfir óánægju sinni út af því, að enginn alþingismaður hefði verið með á þess konar norrænum þingmannafundi, sem þá var nýafstaðinn. Mér vitanlega hefir ekkert verið gert síðan til þess að laga þetta, og er það þó auðsætt að það gæti verið einkar þýðingarmikið að láta íslenzka og danska stjórnmalamenn fá færi til að kynnast og það öllu nánar en nú. Því að þess ber vel að gæta, að alt sem þannig er gert til að styrkja tilfinninguna fyrir því sem sameiginlegt er, verður til þess að veikja tilraunir hverrar einstakrar þjóðar til að bauka ein sjer, og það hlýtur því að verða að talsverðu gagni þegar gera skal út um deiluatriði milli þjóðanna, hvort sem þau eru gömul eða ný. Það er ómögulegt að vera tvent í einu, góður Skandinavi og óvinur annarar norrænnar þjóðar.

Og þegar þið nú spyrjið mig hvað félag okkar geti gert til þess að efla samúðina milli Íslendinga og hinna norrænu þjóðanna, þá svara eg því, að það er einkum með því að reyna að fræða þjóðirnar hvorar um aðra. Íslendingar verða að læra að þekkja Norðurlönd betur og norrænu þjóðirnar verða að læra að þekkja Ísland betur en nú er. Við Íslendingar verðum sjálfir að vinna að því að

leysa fyrra verkefnið, og það verður oss því auðveldara sem við þekkjum talsvert betur til bræðrapjóða vorra en þær til okkar, eins og eg hefi áður tekið fram. Eg er þeirrar skoðunar að okkar litla félag af íslenskum menta-
mönnum í Norræna Sambandinu í Kaupmannahöfn og sú deild, sem von er til að verði bráðum sett á stofn í Reykjavík, muni geta afrekað talsvert að því er þetta snertir, ekki sízt þegar við sjáum að vinna vor er vel metin og við studdir af bræðrum vorum í hinum löndunum. Og auðvitað erum við, að svo miklu leyti sem það í voru valdi stendur, reiðubúnir til þess að fræða menn í Danmörku, Noregi, Svíþjóð og á Finnlandi um Ísland á vorum dögum. Á því er hin mesta þörf. Við Íslendingar sem höfum alið aldur okkar langan tíma erlendis, höfum oft orðið hissa, þegar við höfum séð þá fáfræði sem hér er um alt sem viðvíkur nútíðarlífinu á Íslandi. Það er eins og margir séu þeirrar skoðunar, að um leið og þjóðvaldið leið undir lok 1263 hafi menning þjóðarinnar í rauninni líka verið á enda. Menn ímynda sér okkur eins og hálfgerða skrælingja við séum einhverstaðar nálægt norðurheimskautinu og sé okkur þar að dreyma forna dýrð. Mörgum finst við vera eins konar steingjörvingar af sjálfsaðdáun, þeir trúa því að okkar helzta andlega fæða þann dag í dag séu fornu bókmentirnar, að sögurnar okkar sé eins konar biblíja fyrir okkur, að við trúum svo að segja öllu sem í þeim stendur, að við ekki höfum átt neinar bókmentir svo tali taki síðan á miðöldum, og að jafnvel þeir Íslendingar, sem hafa mentast erlendis, í rauninni viti sjaldan nokkurn skapaðan hlut um nokkuð annað en Ísland og íslensk efni. Fáfróðara fólkið ruglar einatt Íslandi saman við Grænland. Eg held að nafnið Ísland, sem vekur þá hugmynd hjá mönnum að þar hljóti að vera afarkalt, eigi sinn þátt í því að þetta kemur fyrir. En það sem er kaldast á Íslandi er einmitt nafnið. Eg hefi stundum gert fólk hissa með því að benda þeim á afstöðu Íslands á Norðurálfukortinu og benda þeim á að mikill hluti Noregs, Svíþjóðar og Finnlands er miklu norð-

lægari, og að heitir hafstraumar gerðu loftslagið á Íslandi tiltölulega hlýtt, svo að við þyrftum ekki að grafa okkur niður í snjókofa, éta tólgarkerti og fremja ýmislegt af þeim sóðaskap, sem stundum er sagt að við gerum okkur seka í. Því miður eru fremur fáar bækur um Ísland á norrænum málum, á þýzku og ensku eru til ágætis rit, en flestir þeir Norðurlandabúar, sem ferðast þangað, eru annaðhvort menn sem ferðast í verzlunarerindum, dvelja skamma hrið í kaupstöðunum, og komast ekki í kynni við alþýðu manna svo nokkru nemi, eða þá það eru menn sem ferðast sér til skemtunar, og flestir þeirra láta sér nægja að ferðast venjulegu leiðina um Suðurlandið til Þingvalla og Geysis, sem liggur gegnum sum ófrjóvustu og fátækustu héruð landsins, og þeir snúa svo aftur til áttþaga sinna og halda að Ísland sé að mestu leyti eyðimörk, sem ómögulegt sé að rækta upp; mörgum þykir náttúran svipmikil, en fáir eru þeir sem kynnast öðrum mönnum en veitingamönnum og leiðsögumönnum ferðamanna. Ef svo kann að koma fyrir að þeir neyðast til að gista á sveitabæ, í héruðum þar sem hvergi er til gistihús, þá sakna þeir þeirra þæginda sem þeir eru vanir við, og þeir af þeim sem eru af náttúrunni gæddir minnlanglundargeði fara þá að hrópa okkur út fyrir menningarskort, sóðaskap og margt fleira, auðvitað einkum menn sem ef til vill aldrei hafa komið inn í bóndabæ í sínu eigin landi, og að eins þekkja fátækt, stranga líkamsvinnu og venjur sveitalífsins af sögum annara. Svo eru líka til menn, sem halda að við séum hreinustu englar, glæsilegir víkingar, fullir af dug og skáldlegu fjöri — og þegar þeir svo sjá að við erum fátækir og ekki sérlega öðru vísi en aðrir menn, þá hrekkjast þeir á okkur og dæma okkur miklu harðara en við eigum skilið.

Ef hinar norrænu þjóðirnar vildu gera alvarlega tilraun til að kynna sér Ísland, eins og það er nú, þá held eg að bezta ráðið væri að senda þangað áreiðanlega og duglega menn í leiðangur, láta þá dvelja þar nokkur ár og safna ýmsu um náttúru, landshagi og menningu landsins, og gefa svo út skýrslu um rannsóknirnar. Eg heldi

að árangurinn, bæði verklegur og vísindalegur, mundi verða norrænu þjóðunum að talsvert meira gagni, en t. d. þó gerðir væru út fornfræðingar til að grafa út rústir á einhverri af Grikklandseyjum eða menn sendir til að rannsaka Indíánakynflokk í Suður-Ameríku, enda þótt þess konar vísindaleiðangrar í sjálfu sér geti verið einkarmerkelegir. Og það skal sagt til heiðurs lýðháskólum Norðurlanda, að þar hefir áhuginn á íslenzkum fræðum alt af verið mest vakandi. Á dönskum og norskum lýðháskólum eru oft haldnir fyrirlestrar um íslenzk efni. Eg býst við að flestir séu á einu máli um það, að þekking í fornorskum og íslenzkum bókmentum sé einkar mikilvæg og styðji mjög svo að samúð Norðurlandþjóða. Það má telja Dönum til heiðurs, að þeir í þessu efni eru á undan hinum þjóðunum. Við Kaupmannahafnarháskóla hefir það lengi verið siður að minsta kosti annar kennaranna í norrænum málum hefir verið Íslendingur, og nú síðasta mannsaldurinn hefir þar verið sérstakur kennari í nútíðarmáli og bókmentum Íslendinga. Þetta hefir aldrei verið gert í Noregi, Svíþjóð eða Finnlandi svo eg viti til, og enda þótt forn málið hafi verið kent við háskólana í þessum löndum, þá er mér ókunnugt um, að þar hafi verið lögð nokkur áherzla á kunnáttu í íslenzku nútíðarmáli og bókmentum, og að minsta kosti er það lítið sem hefir komið fram í bókmentunum um þau efni í Noregi, Svíþjóð eða á Finnlandi. Og ef menn nú svara þessu svo, að saga, mál og bókmentir Íslendinga nú á dögum sé of lítilfjörlegt til þess að háskólarnir þurfi að fá sérstök kennaraembætti í þeim greinum, þá hefi eg það til andsvara, að til þess að skilja tungumál og andlegt líf Norðurlanda í fornöld, til þess að skilja norræna málfræði og norræna menningu yfirleitt, þá er það afar áriðandi að þekkja til nútíðarmáls, bókmenta og menningar Íslendinga. Það má ef til vill staðhæfa það, að vísindagrein eins og Assyriufræði og rannsóknir á tungumálum og menningu fornþjóðanna í Ameríku hafi meiri þýðingu til þess að skilja heimsmenninguna yfirleitt, en hér ber að sama brunni og fyr, að fyrir Norðurlönd er það miklu meira virði

að menn afli sér kunnáttu í íslenskum fræðum. Og þó menn nú ekki vilji stofna sérstök kennaraembætti við háskólana í þessum fræðum, sem oft getur verið erfitt, ekki sízt af því, að það er ekki alt af hægt að fá vel hæfa kennara, þá finst mér það í rauninni ekki nema sanngjörn krafa, að þeir sem norræn mál stunda séu skyldaðir til að gefa upp til prófs eitthvað ákveðið í nútíma íslenzku, eins og nú er skylda að gera við meistara-próf í norrænum fræðum við Kaupmannahafnarháskóla.

Þá er enn eitt atriði sem eg vildi minnast á. Frændur vorir á Norðurlöndum verða að taka tillit til þeirrar sjálfstæðislöngunar, sem kemur fram hjá Íslendingum, til þess að verða öðrum óháðir efnalega, og þeir ættu ekki að vera að reyna að eyðileggja hvern visi til þess konar með h'ifðarlausri samkepni. Félagið okkar mun því miður ekki geta gert neitt á því sviði. Kaupmanna-hugsunarhátturinn er víst sá sami hvar í heimi sem leitað er, á Norðurlöndum — líka á Íslandi — ekki vitund betri en annarstaðar. En þegar Íslendingur kemur til hinna Norðurlandanna og vill læra eitthvað í verksmíðjum ykkar, rjómabúum eða öðrum nytsömum stofnunum, þá er það göfugmannlegra að vera ekki að líta á hann eins og mann sem sé að búa sig undir verzlunarsamkepni við ykkur, heldur skoða þá hjálp og tilsögn sem þið veitið honum eins og hjálp sem þið veittuð yngra bróður ykkar til þess að geta komist af sjálfur. Og yfirleitt fer það líka svo, og við Íslendingar getum með þakklæti ýmsra atvinnugreina hjá bræðraþjóðum vorum, einkum Dönum, þar sem Íslendingum hefir verið einkar vel tekið, en því miður hefir hitt líka komið fyrir, að Íslendingum hefir verið varnað að komast að til að læra, og það hefir eðlilega vakið gremju á Íslandi. En auðvitað verða Íslendingar sjálfir að sjá fyrir nauðsynlegum fjárstyrk handa þeim mönnum sem á þennan hátt eru sendir út til að læra hjá frændþjóðunum, og líklega mundi það vera skynsamlegt að fá upp til Íslands reynda menn á ýmsum sviðum frá frændþjóðunum og launa þeim ríflega starf sitt.

Viðburðir þeir sem nú eru að gerast í heiminum, virðast skapa ný tímamót í sögu mannkynsins, og hvetja okkur til þess að hefjast handa þegar allra heill heimtar. Ef Norðurlandapjóðirnar ætla að eiga sér framtíð sem sjálfstæðir liðir í mannfélagsheildinni, þá verða þær að reyna að nálgast hvor aðra og halda betur saman en hingað til hefir viljað verða raunin á. Okkur hérna kemur nú ekki við hvernig fer um samheldnina í stjórnmálunum; vort mark og mið er að auka bróðernistilfinningu milli norrænu þjóðanna. Og vonandi fer svo að þeir verða fleiri og fleiri, sem öðlast þá sannfæringu, sem margir okkar sjálsagt hafa auk mín, að það að styrkja það sem er sameiginlegt fyrir allar Norðurlandapjóðir verður líka til þess að styrkja þjóðerni hverrar einstakrar þjóðar, og að margt af því sem er gott og gagnlegt hjá hverri einstakri þjóð og nú ein kennilegt fyrir hana, mun er tímar líða geta orðið sameiginlegt fyrir allar þjóðirnar. Og að því er Ísland snertir vil eg spyrja ykkur — getið þið hugsað ykkur Norðurlönd án Íslands? Það er ómögulegt. Og getur Ísland verið án Norðurlanda? Eg hefi enga trú á því. Og þar sem tímunn kallar á oss að við skulum ekki vera að bíða lengur, þá leggjum höndina á plóginn. Við verðum að vinna að því marki, að Íslendingar geti fundið til þess að þeir séu í samræmi við bræðrapjóðir sínar. Og að því verðum við að starfa bæði við Íslendingar sjálfir, þeir af okkar þjóð, sem bróðernistilfinningin er orðin rótgróin í, — og svo ekki síður vinir okkar hjá frændþjóðunum, og þar verður alþýða manna að fá alt aðrar og miklu ljósari hugmyndir um sérstöðu Íslands og þýðingu þess fyrir Norðurlönd. Og eg vona að orð mín hér í dag hafi getað sanufært ykkur um, að hér er mikilsvert starf fyrir hendi, sem að nokkru leyti heyrir undir verksvið félags, sem vinnur að því marki, að koma á andlegri og bróðurlegri einingu Norðurlanda.

Jón Stefánsson

— Þorgils gjallandi. —

„Hátt, hátt uppi' í fjalli ég fjallablóm leit,
í fáskrýddum, mögrum og graslitlum reit,
en heiðsvalinn kyssandi blaðkrónu bærði,
í bikarinn sólgeislinn ljósveigar færði“.

H. H.

Einn bjartasti og áhrifamesti vormorgun í islenzku þjóðlífi má telja að renni upp í byrjun síðasta aldarfjórðungs níttjándu aldarinnar. Þá er vor í lofti. Heitir straumar leika um hugi allra Íslendinga, og veita margskonar frjómögnum yfir ósánu akrana í sálum æskumannanna.

Eldar þeir, sem hituðu þessa strauma, stöfuðu að öðrum þræði úr djúpi fornaldarinnar — minninganna, sem brutust upp á yfirborðið á þúsund ára afmæli þjóðarinnar 1874. En að hinum þættinum stöfuðu þeir frá utan að komandi nýjungum — stefnubreytingum erlendis, í vísindum, skáldskap og bókmentum.

Þjóðræknisandinn, sem hugfestist bezt á þessum merkilegu tímamótum, og ylblær andlegra hreyfinga, sem efst voru á baugi hjá öðrum þjóðum — sameinuðust hér, lifguðu frækornin og mótuðu sálir æskumannanna. — Þá urðu og straumhvörf í islenzkum skáldskap og bókmentum, í svipaða átt og erlendis. Rómantíska stefnan, sem borin var fram af Fjölnismönnum og samherjum þeirra, vék úr sæti, en hin nýja hlutsæisstefna (realismus) réðst að stóli.

Öldur frelsis og framfara liðu að ströndum eyjærinna norður við heimshjarann. — Yngri mentavinir og ís-

lenzkir námsmenn við háskólann í Kaupmannahöfn urðu fyrst snortnir af straumunum og hófu upp merki nýju stefnunnar. Enda hafa þeir oft mátt teljast útverðir íslenzkra menta og boðberar erlendra áhrifa. — Þá var kveikt á mörgum nýjum vitum á bókmentasviðinu; og þó að hinir ungu eldkveikjumenn verði eigi taldir hér með nöfnum, þá vil eg einkum benda á útgefendur »Verðandi« og samherja þeirra.

Skáldaprenning þjóðhátíðarinnar: Gröndal, Steingrímur og Matthías, lyftu huga þjóðarinnar, opnuðu sálir landsmanna, svo að þær tóku betur á móti hreyfingum og nýjungum. Í kvæðum sínum ófu þeir fagran þjóðhátíðarkrans úr fornaldarljómanum, rómantiskum þeyblæ Fjölnismanna og framsóknarhug og hvötum vaknaðra manna á þessum tímamótum. Sú hvirfing stendur þar við veginn, með vekjara ættjarðarástar og andans sjónar, mitt á milli skáldanna frá 1830 og hins nýja flokks hlutsæisstefnunnar, án þess að beygja sig nokkuð undir öldur hennar. — Hughrif þeirra og hiti hins nýja flokks vöktu og mótuðu æskumennina á þessu tímabili.

Skáldin eru eins og lýsandi eldstólpar í eyðimörkinni. Þau varpa geislum yfir framsóknarbraut þjóðarinnar. — Þau eru vitar, sem ylja og lýsa, þó að einstöku sinnum húmi og komi haust í þjóðlifinu. — Kynslóðin, sem nú er að vaxa upp, mun meta þessa vakningu frá 1874 að sínu leyti eins og forgöngumenn hennar mintust Fjölnismanna og viðreisnartímabilsins um og eftir 1830.

Suðræni þeyblærinn snertir fyrst þá hluta landsins, sem eru sólarmegin og horfa gegnt menningarþjóðunum; og sveipast síðan um allt hálendið, sem nyrzt er og fjærst. Hin nýja þjóðlifshreyfing nam, á sama hátt, fjallahéruð Íslands og útkjálka, engu síður en þétthýlustu sveitir og umhverfi helztu mentastofnana þjóðarinnar. — Sumstaðar tóku fjallablómin opnum örmum við frjómgögnunum. Þau þroskuðust í kyrð og næði, þó að jarðvegurinn væri magur og náttúruskilyrðin harðdræg viðskiftis. Þau öðluðust:

„hið þrautseiga íslenska geð
og áræðna framsóknarþrá“,

sem verður þróttmest, lifir lengst og sigrar.

— — Í Þingeyjarsýslu náði vakningin djúpum og víðfaðma tökum. Bendir margt til þess, að hún hafi orðið þar staðföstust.

Sú kynslóð, sem vaknar hér til starfa í byrjun aldarfjórðungsins, tileinkar sér fegurðina, lífsbjarmann og samræmið í bókmentunum frá ljóðum Jónasar Hallgrímssonar til smárita B. Gröndals um skáldskap og hugsýnir. Svo lítur hún umhverfis sig á veruleikann og mannlífð, gegnum gleraugu hlutsæisstefnunnar, sem skýrðu bezt mótsagnir lífsins og ranglæti, ástriður og öfgar. En fegurðarkendin vakti undir niðri í sálunum og kveikti við þessa sýn um bót a þ r á n a í brjóstum ungu mannanna; — þrána til þess að glæða samúð og samræmi í lifinu og skipulagi þess — bæta það og göfga á siðlegum og félagslegum grundvelli. — Hugsjónirnar þroskast og brjótast fram í margskonar myndum, á ýmsum sviðum. Fyrst og fremst til þess, að gerbreyta rikjandi hugsunarhætti; steypa af stóli úreltum skoðunum og háttum; svo til breytinga og endurbóta í félagsskipulaginu, hags- og atvinnumálum.

Kynslóðin lagði þannig grundvöll samúðarstefnunnar og samvinnufélagsskaparins, sem nú er yngsta og nýjasta hugsjóna- og menningarstefna þjóðarinnar. — Margir samherjar áttu þar hlut að máli og verður ekki farið lengra út í það hér.

— — — Einn af þeim mönnum í héraðinu, sem mestan þátt áttu í því, að hafa áhrif á eldri rikjandi skoðanir og venjur, og lagði sinn skerf sérstaklega fram á sviði bókmentanna, var Jón Stefánsson, sem víðast er kunnur undir rithöfundarnafni því, er hann tók sér — Þorgils gjallandi. Hann hóf eindregið merki hlutsæisstefnunnar í bókmentum. Varð gripinn af áhrifum þeim, sem náttúruvísindin, breytipróunarkenning Darwins, hafði á arfgengar skoðanir í trúarefnum og öðrum mannfélagsmál-

um. Kjarni nýju stefnunnar var fólginnt í því, að benda á fúann í lífi einstaklinga og þjóða. Segja sannleikann um það, sem miður fór, hvort sem öðrum líkaði betur eða ver. Að eins ef auðið yrði að uppræta það og bæta um. Í þessum anda hóf Jón Stefánsson ritstarf sitt. Af þessum öldum, sem að framan eru nefndar, lyftist hann til starfs og stríðs. — Hlutverkið er örðugt og eigi þakklátt í byrjun, þeim, sem það inna. Andstæðingar verða þeim auðfengnir.

Jón var fæddur á Skútustöðum 2. júní 1851. Foreldrar hans voru Stefán Helgason frá Skútustöðum og Guðrún laundóttir Jóns prests Þorsteinssonar í Reykjahlið. Stefán var elztur þeirra mörgu barna Helga Ásmundssonar á Skútustöðum og Helgu Sigmundardóttur frá Vindbelg, sem talin var fjölgáfuð og skörungur mikill. Er Skúta- staðættin víða þekt og hefir áður verið rakin í æfiminningum. Sira Jón, faðir Guðrúnar, er ættfaðir hinnar þjóðkunnu og fjölmennu Reykjahliðarættar. Þorbjörg hét móðir Guðrúnar, ættuð úr Kelduhverfi, greind kona og hagnælt, eins og til var í hennar ætt. Guðrún var og gáfuð kona og skapmikil, en fór dult með hæfileika sína. — Jón var eina barnið þeirra hjóna, er upp komst. Hann ólst upp hjá foreldrum sínum þangað til hann var 11 ára gamall; þá misti hann móðurina. Skömmu áður hafði hann mist bróður sinn, nokkru yngri, sem mjög var elskur að honum. Foreldrar hans bjuggu þá á Geirastöðum við Mývatn.

Móðurmissirinn hafði djúptæk áhrif á Jón. Henni unni hann heitt, enda var hann henni skaplikur. Þessi sorgaratburður, og örlög móðurinnar, blandaði líf hans beiskju þegar í æsku, og mun ef til vill hafa ráðið nokkru um skoðanir hans og tilfinningar, er komu síðar fram í ritum hans.

Faðir Jóns giftist í annað sinn Sigurbjörgu Jónsdóttur, og hélt við búskapnum, en naut þó eigi lengi við. — Stefán druknaði í Mývatni, þegar Jón var 16 ára gamall. Þessir atburðir fengu mjög á unglínginn.

Æsku- og uppeldisárin vörpuðu skuggum á leið hans, og einstæðingsskapurinn svarf fast að og mótaði sál hans. Hann naut eigi jafnrar aðstöðu til þroska og undirbúnings lífsstarfinu og ýmsir jafnaldrar hans. Þetta mun hafa skerpt sjón hans fyrir misjafnri aðstöðu manna í lífinu að auði og völdum.

Hann leggur út í lífið einn síns liðs og félaus; stóð eigi annað nær, en að fara í vinnumensku. En sú staða var þá miklu ófýsilegri en nú er orðið námfúsum unglingi með útþrá í brjósti. Fristundir gáfust færri en nú tíðkast og kaupíð var lágt.

Eftir lát föður síns var Jón nokkur ár á vist hjá föðurbróður sínum, Hjálmari Helgasyni í Vogum; þar mun hann miður hafa átt kost þess, að auðga andann með bókalestri og námi. Frændi hans var kappsmaður til verka, snarpur, skýr, ræðinn og kunnugur fornum fræðum. Þess naut Jón dyggilega. — Um tvítugsaldur réðist hann til vinnumensku í Gautlönd. Sjálfur skýrir hann svo frá í bréfi til frænda síns (Jóns sál. alþingism. í Múla): »Ekki tel eg mig hafa mannast sérstaklega við vistina á Gautlöndum; það var ruslaralýður vinnufólkið flest og margmálugt; við það gátu hjónin tæpast ráðið. Bækur fekk eg, bæði þá og áður, með fúsu geði hjá Jóni Sigurðssyni, enda reyndi eg að fara vel með þær og vera skilsamur, því að það mat Jón mikils«. Þjóðhátíðarárið, 1874, var hann á Gautlöndum. Má geta því nærri, að ýmsir fróðleiksmolar og kyndlar hafi þá fallið í skaut æskumanna í návist Jóns Sigurðssonar, þess viðfróða áhugamanns í þjóðmálum. — Hitt líka eðlilegt, að úr mörgu yrði að sigta á svo fjölmennu heimili.

Næst réðist Jón í Skútustaði til síra Jóns Þorsteinssonar; var þar nokkur ár, og giftist árið 1877 eftirlifandi ekkju sinni, Jakobínu Pétursdóttur frá Reykjahlíð. Þau hjón voru jafngömul. Kyntust fyrst og feldu hugi saman, þegar Jón var hjá frænda sínum í Vogum. Árin, sem liðin voru síðan, skyldu notuð til að afla staðfestu og efna til þess að geta stofnað til heimilis að íslenskum sveita-

sið. — Réðust þau svo í einyrkjabúskap; bjuggu á ýms-um jörðum í sveitinni fyrstu árin, stundum í margbýli, því að jafnan hefir þar verið þröngt setið. — En árið 1889 fluttu þau að Litluströnd og dvöldu þar stöðugt eftir það. — Jón og Jakobína eignuðust tvær dætur, sem uppkomust, Guðrúnu og Védísi. Stunda þær búið heima með móður sinni.

Það er annað en leikur fyrir frumbýling með tvær hendur tómar, að koma fljótt fyrir sig fótum, svo að trygg verði aðstaðan: til þess verður að beita sjálfsafneitun og fullu fylgi við störfin. Fáum, sem reynt hafa, mun finnast timi vinnast eða frjálsræði til aukastarfa. Þó að Jón teldi sig »eigi búsyslumann« tókst honum þetta prýðilega. Dagleg heimilisstörf og skyldur rækti hann með reglusemi og dagnaði og leysti þau svo snoturlega af hendi, að það þótti fyrirmynd. Á þenna hátt tókst þeim hjónum smám saman að koma upp laglegu búi, eigi stóru, en skuldlaust og af sjálfsdáðum. En fyrstu búskaparárin áttu þau við fátækt að búa.

Vinnuna mat Jón mikils. Hún var yndi hans. Sérlega smekkvís og glöggur á það, sem vel var gert og drengilega. Leitaði að listinni í hverju starfi og starfsháttum — vinnulagi. Var sjálfur sérstakur metnaðarmaður í þeim efnum. Dagleg uppáhaldsstörf hans voru heyvinna og búpeningshirðing. Hann var mjúkur og góður sláttumaður og viðbrugðið fyrir snyrtimannlega hirðingu og umgengni í peningshúsum. Hafði í því efni áhrif á aðra, einkum í nákvæmni við hesta. Var elskur að þeim, glöggur á kostina og þótti jafnan hin bezta skemtun og nautn um dagana að njóta þeirra, og skoðaði hestinn sinn sem félagsbróður. — Sérlegur fjárþekkingarmaður var hann ekki og gjarnan spar á fódurbirgðum. Kemst Jón sjálfur svo að orði í áðurnefndu bréfi: »... Þrifinn fjármaður, en ekki eins glöggur og Guðmundur¹⁾ segir.

¹⁾ Guðmundur Friðjónsson skrifaði um Jón St. í „Eimreiðina“ fyrir nokkrum árum. Sum atriði bréfsins ber að skoða sem athugasemdir við það.

Drjúgur heyskaparmaður. Aldrei ánægðari með sjálfan mig, en þegar eg sló Breið«. (Það var grösug spilda í Framengjum).

Af því, sem nú er sagt, má gera sér nokkra grein fyrir því, hvernig búskapurinn blessaðist, þrátt fyrir erfiðleikana og hitt, að Jón rækti annað mikilvægt starf samhliða honum.

Bókmentastarfsemi — lærdóm, lestur og ritstörf — hlaut Jón Stefánsson að hafa í hjáverkum alla æfi. Í æsku veittust honum af skornum skamti tómstundir til lesturs. En með óslökkvandi þrá og þoli og með því að nota hvildartíma sinn, auðgaði hann anda sinn við lestur þeirra bóka, er til náðist og hann hugði nothæfar. Þær voru honum eini skólinn, eins og flestum alþýðumönnum á þeim árum. Þó mun hann eitthvað hafa notið tilsagnar undir fermingu á Skútustöðum hjá síra Þorláki Jónssyni, ásamt þeim frændum sínum og jafnöldrum, síra Birni Þorlákssyni á Dvergasteini og Kristjáni Jónssyni háyfirdómara. Þráði hann mjög að komast áfram til frekara náms, þegar þeir fóru í skóla, en fjárþröng hamlaði. — Jón náði snemma ágætri rithönd, er stöðugt hélzt, föst og skýr. Um tvitugsaldur dvaldi hann nokkrar vikur hjá síra Benedikt Kristjánssyni á Skinnastað, einkum til þess að læra dönsku (framburð hennar og málfræði) og aðrar almennustu námsgreinar. Annan tíma notaði hann eigi sérstaklega til náms hjá öðrum.

Grundvöllur sjálfsmentunar hans og bóklegar þekkingar var fyrst og fremst okkar fornu bókmentir. Þær voru honum biblía. Sú gullnáma, er hann jös ótæpt úr í riti og daglegu tali. Þar sá hann fyrirmyndir hetjuskapar og mannúðar. Þó honum hins vegar dyldist eigi einstaklingsofbeldi og réttleysi fjöldans á því tímabili, sem kallað er gullöld þjóðarinnar.

Næmur skilningur og ást hans á því góða og sérkennilega í sögu okkar og þjóðerni, stældi og hitaði hugann. Mótaði ritmál hans sterkt að fornum lögum, en þó

mjúkt og hljómpýtt með nútímablæ. Sannari, kjarnmeiri íslenzku hafa fáir mælt eða ritað.

Næst koma hin nýju áhrif nútíðarskaldmenta til greina. »Lestrarbókasafn Mývetninga« er fjölskrúðugt af bókum og því ómetanlegur fjársjóður. Notaði Jón það mikið frá bernsku. Átti þar kost á erlendum bókmentum, einkum fagurfræðislegum, skáldritum grannþjóðanna og völdum ritum ýmsra höfunda um mannfélagsmálefni. Ennfremur stofnuðu nokkrir ungir menn í Þingeyjarsýslu, á aldurs-skeiði Jóns, félag til kaupa og lesturs á erlendum bókum um þessi efni¹⁾. Þær bækur höfðu afarmikil áhrif — voru einskonar hraðboði hugmyndanna manna í milli. Mun Benedikt Jónsson á Auðnum hafa ráðið mestu um val þeirra bóka, enda hefir hann jafnan verið bókavörður og dreift þeim á meðal manna. Benedikt hefir ætíð verið fjörgjafi og »hjarta« félags- og menningarhreyfinga í Þingeyjarsýslu á þessu tímabili. Þeir Jón og hann voru beztu vinir alla æfi. Í sumum atriðum munu fáir tveir hafa orðið nánar samferða, eða varðveitt áhrifin lengur óblönduð — verið trúrri æskuhugsjónum sínum til loka. En Jón var fastari við sjálfan sig og hreifst ekki eins fljótt. Hlutverk Benedikts var því jafnan að létta og birta lífs-sköðun hans, t. d. með bókunum, einkum á efri árum.

Norsku skáldjöfrarnir og þýzku hlutsæisskáldin hrifu huga Jóns í byrjun og mörkuðu honum sköðanir. Og nú varð mannlífið sjónarsvið hans: »Hann horfði á þann sjúkleik, sem dulist getur undir heillegu yfirborði einstaklings- og félagslífs. Hann skildi einstaklings-slysið, brot frá settum reglum, sem hægt væri að skilja og bæta, en ekki er skilið og bætt og leiðir til ógæfu. Heitasta þrá hans var, að bót yrði ráðin á þrönginni, myrkrinu, kuldanum — hvar sem þetta sækir að einstaklingnum eða fjöldanum. Meinið varð að finna og uppræta, þar sem

¹⁾ Félagið hét »Mentafélag Þingeyinga« og þróaðist samblíða kaupfélagsskapnum. Nú eru bækur þess í Bókasafni Þingeyinga á Húsavík, sem að mörgu leyti mun vera hið einkennilegasta bókasafn á landinu og þó víðar væri leitað.

það fólst í skjóli hugsunarleysis eða tízku — finna það, þótt það dyldist í skjóli lagaforms eða trúarforms. Hann fekk ást á því ljósi, sem finnur og færir okkur sannleikann; honum vildi hann þjóna. Undir þessu merki hóf Jón St. sína sögugerð og ritstarf. Eigi duldist honum, að vandi væri að fylgja því merki, þangað mundi skeytum verða beint. — Á öllum tímum og í hverju þjóðfélagi, stóru eða smáu, eru þau bönd meira og minna sterk, sem venjur, arfgengar skoðanir og ytra form hafa bundið svestast, að dofnað er undan. Og hafi einhver næmleik til að hugsa um þau, efast um nauðsyn þeirra, hreyfa við þeim, losa þau, þá logar sársaukinn upp. Hvað veldur sársaukanum? Sá, sem er að leysa? eða böndin, sem eru að losna?«¹⁾ —

Jón Stefánsson var kominn hátt á fertugsaldur, þegar hann fór að skrifa sögur. Er því undrunarverðara, hve mikið ber á eld- og ástríðumagni í sögunum. Sýnir það ljósast þörf höfundarins til þess að opna barminn. — — »Að eg fór að skrifa sögur«, segir hann, »kom af því, hvað í odda skarst milli min og mannfélagsins. Í huga mínum var uppreisn og ólga gegn ýmsum kreddum, og þá brauzt rithöfundarþráin fram. En hún hafði fylgt mér frá æsku án þess eg næði tökum á né fengi ákveðna stefnu. Ósjálfrátt varð söguformið hendi nær en ritgerðarsniðið«.

— — Fyrsta bókin, »Ofan úr sveitum«, fjórar smásögur, kom út árið 1894. Fekkk hún mjög misjafna dóma í blöðunum og mætti sumstaðar beinlinis andróðri meðal alþýðu. Þótti berlega tekið á hjónabandsmeinum og sveitarslúðri og anda kalt til kirkju og klerka. Frumsmíðablær var á sögunum og gætti um of erlendra áhrifa í formi og efnismeðferð. En þó augljós listatök í lýsingum og umbótahugsun í anda sagnanna.

Næsta bókin, »Upp við fossa«, kom út 1902. Fjallar hún að miklu leyti um samskonar hugsunarefni og fyrri

¹⁾ Úr ræðu fluttri við útför Jóns Stefánssonar.

sögurnar. En í þessari sögu er svo augljós framför höf. frá því að þær voru skrifaðar, að hvergi vottar fyrir byrjandablæ. Þar kemur fullþroskað skáld fram á bókmentavöllinn, sem að öllu leyti tekur af sínu eigin, efni, mál og form. Þessi saga fekk heldur betri viðtökur en hinar og lof sumra ritdómara. — Sveitarlífs- og persónulýsingar eru svo skýrar (frá því tímabili, sem sagan á við) og örlagaþættir sögupersónanna raktir með svo miklum næmleik og harmþunga, að óviða hefir lengra verið komist í íslenskum skáldritum. Snildarbragð höfundarins á náttúrulýsingum og málinu á sögunum hefir hlotið alment lof og athygli fyrir ramm-íslenzkan frumblæ. Þó hægt sé að segja með rökum, að höfundurinn lúti ekki nákvæmlega lögum listarinnar — geri ástriður persóna sinna of berar og tilfinningarnar æstar, þá er samt meira í það spunnið og hreinlegri tók hans, heldur en ástarhvalsdekur og hálfvelgjúkukl það, sem lesandinn á að venjast frá hinum og þessum, er nú hreykja sér í nafni »lærðrar« listar. Sálarlíf persónanna sýnir, að það er fósturað við íslenzka náttúru, sterkt manneðli og þróttmikinn hug og tilfinningar.

Þriðja bók J. St., »Dýrasögur«, var prentuð 1910. Hún er það síðasta, sem gefið hefir verið út eftir hann sérstaklega. Eg minnst eigi annars, en að höfundurinn hafi hlotið einróma þakkir allra, sem á þessa bók hafa minnst fjær og nær. Enda skipar hún svo sérstakt rúm á bókmentasviði þjóðarinnar, að enginn ænnar rithöfundur hefir komist inn á það svið svo teljandi sé. Þessi bók og aðrar samflokks-sögur höfundarins, sem eigi eru þar prentaðar, munu ef til vill geyma nafn hans lengst og varðveita í bókmentaheiminum.

Auk þeirra bóka, sem hér eru nefndar, er nokkuð til eftir Jón St. af óprentuðum sögum. Nokkuð af smásögum og fjórar stærri sögur, sem flestar eru fullbúnar til prentunar. Eru þær ritaðar á árunum frá 1905—1915. Að visu auðnaðist honum eigi að ganga frá þeim öllum til fulls, eins og hann hugðist að gera, því dauðann bar bráð-

ara að. En síðasta árið tókst honum með elju, þrátt fyrir heilsubilun, að binda enda á þær sögur, sem áleiðis voru komnar, nema eina — »Grasaferðina«.

Mér virðist öðruvísi blær yfir flestum síðari sögum J. St., en hinum fyrri, sem áður eru út komnar. Þar kennir meiri mýktar og sorgblíðu í meðferð höfundarins á ör-lagapáttum sögupersónanna. Ástarþrár þeirra og tilfinningar hóflegri, eða — réttara sagt — eigi jafn bráðar og áberandi. Þær brenna engu síður, en það er glóðareldur og eigi bál. Efnismeðferðin í sögunum »Seingróin sár« og »Aftanskin« bendir til þessa. Grundvallar-umbótastefna höfundarins er hin sama til enda. En það er eins og meira beri nú á þrá til þess, að finna í lífinu sjálfu þau sárasmýrsl, sem veita blæðandi und einstaklingsins meiri fróun en hlutsæisstefnan viðurkendi um skeið. Hann finnur fleiri ljós til þess að benda persónum sínum að síðustu höfn, þrátt fyrir árekstrana. Og nú kemur fram í sál hans og skoðunum einn áhrifastraumurinn frá '74, runninn úr gömlu rómantikinni, sem hlutsæisstefnan þurkaði aldrei til fulls. Fegurðar- og samúðarþráin vakti instinni — glæddist af samvinnuhreyfingum og hugsjónaöldum nútímans, til endurnýjunar í ljósmóðu hinnar nýju »hugsæisstefnu« skáldskaparins (ný-rómantik). —

J. St. varð þýðari og bjartsýnni með aldrinum, eins og raunar allir, sem mentast vel og ná andlegu viðsýni. Efniviðurinn er að kalla má hinn sami í síðari sögunum. Málið í fastari skordum og sveitamyndirnar há-íslenzkar, t. d. í »Grasaferðinni« og »Snæfríðarþætti«, sem mun vera síðasta saga hans. Í þeirri sögu eru að mínum dómi samandregin flest og ýms beztu skáldeinkenni höfundarins. Alt runnið frá hjartarótum hans og metnaðarhug. Mér finst eg sjá Jón Stefánsson sjálfan, eins og hann var á efri árum, skýrast í gegnum þessa sögu.

Það hefir verið sagt um mörg skáld, að kunnugir geti fundið eigin persónur þeirra í ýmsum útgáfum í ritum eftir þá. Þetta er mjög eðlilegt. Tilfinningar sínar og innra líf hljóta þeir að nota sem mælikvarða á sálarlíf annara

manna og sögupersóna sinna. Og ýmsar sögupersónur J. St. eru meira og minna ofnar hans eigin edlisþráðum.

Það á ekki við, að gagnrýna hér þær sögur höfundarins, sem eigi eru áður komnar fyrir almenningssjónir. En eg varð að geta allra rita hans, finna samræmi þeirra og höfuðdrætti, til þess að geta gefið heildarmynd af höfundinum, nú þegar hann er allur.

Ýmislegt liggur eftir J. St. í handritum, og prentað í blöðum og timaritum, annað en sögurnar. Skáldadraumar í ritgerðarformi, t. d. »Næturhugsanir á öræfum« o. fl., blaðagreinar, eftirmæli og samkomuræður, því að þær flutti hann jafnan af blöðum. Og síðast en ekki sízt vil eg nefna greinar hans, sem birtust í sveitarblöðum Mývetninga. Þegar hann fyrst fór að gefa sig við þeim, var andleg leysing og vorhugur ríkjandi meðal yngri manna í héraðinu. Nýjar skoðanir og frelsiskröfur þeyttu af sér fjötrunum og fjölluðu um þjóðmál — þegnfrelsi, kvenréttindi, trúar- og kirkjumál. Og til þess að fylgja þessum kröfum til framkvæmda í skipulagsformi, var Þjóðliðið stofnað.

Meðal forvígismanna þess í Mývatnssveit voru — auk J. St. — Jón í Múla og Pétur á Gautlöndum. Þeir sleptu, eins og hann, fyrstu fjörsprettum penna sinna í sveitarblöðunum. Þeir urðu fyrri en J. St. til atlögu að kenninga- og kirkjumálum. En frelsisgnyrinn hafði svipuð áhrif á hann og þegar forðum var »slegið á helluna«. Sál hans var frá því sistreymandi lind frjálsmannlegra, viðkvæmra og brennandi hugsana: — »Heitur trúmaður í æsku, en fullorðinn andvígur kirkjunni og klerkunum; það dvínar ekki«, skrifar hann frænda sínum. Í trúaræfnum fór hann því jafnan fram hjá kirkjulífi og safnaðar, og hélt þeirri afstöðu sinni til loka. En þrátt fyrir það skorti hann eigi samúð né hlýleik á gleði- eða sorgarfundum, örlaga-augnablikum vina sinna og sveitunga; þá gaf hann þeim orð sin, anda og hjarta. Gerði hann mikið að því á síðari árum, sem nú er tíðkað af leikmönnum í Þingeyjarsýslu, að flytja ræður við jarðarfarir.

Fór þá jafnan með næmustum orðum og skilningi um einkunnir einstaklingsins og snerti strengi syrgjenda eigi ómýkra en sálusorgari.

Alla æfi var J. St. staðbundinn í sveit sinni og sýslu; átti aldrei kost útfarar þaðan, nema í anda. Náttúru- og sveitabarn var hann svo mikið, að á efri árum var það honum áreynsla, að dvelja í ferðalögum fjarri æskustöðvunum. Sveitin sumarskreytta og vetrarhreina var í senn uppeldismóðir hans og ástardis. Erfiðleikarnir, sem eru beztu fægingarsteinarnir í lífi manna, skýra hæfileikana og skerpa tilfinningarnar; þeir mótuðu einkunnir hans. En þeir gerðu líka annað: þreyttu manninn og stytta æfina um skör fram.

— — — Málefni sveitarinnar lét J. St. sig ávalt miklu varða og fylgdi með áhuga því, sem fram fór í héraðinu. Hreppstjórn hafði hann á hendi í Mývatnssveit í 26 ár. Tók við því starfi 1889 og gegndi því með stakri vandvirkni og samvizkusemi. En umboðsstörf, málþjark og valdsmenska var honum fjærri skapi, enda beitti hann því ekki fremur en brýnustu skyldur kröfðu.

Stjórnmálum og öðrum opinberum málum fylgdi hann með áhuga og stundum hita. Lagði oft orð í þann belg á fundum og í blöðunum, þó hann ætti aldrei beinan þátt í að framfylgja málum. Jafnan ódulur á skoðun sinni og ákveðinn, þó hann beitti sér eigi sem flokksmaður. Í stjórnarfarsdeilunum fylgdi hann ætíð þeim, sem lengstgengu í sjálfstjórnarkröfum þjóðarinnar, og mun hafa staðið næst Landvarnarmönnum. Viðkvæmur fyrir, ef gengið var nærri athafnafrelsi einstaklingsins með þvingunarlögum eða banni. Og hörundssárastur, ef honum virtist embættisvaldið hreykja sér um skör fram og skara eld að sinni köku eða beita drotnunargirni við alþýðu. Greip þá stundum pennann til varnar og gerði gys að sérgæðishætti og yfirlæti þess.

Jón Stefánsson var fullur meðalmaður á hæð, hnellinn og vel vaxinn. Hvatur í hreyfingum. Dökkur yfir-

hlits, hár og skegg jarpt, en gránaði með aldrinum. Höfuðlagið fagurt, hnakkinn beinn niður, ennið bratt. Svipmikill og dáfríður sýnum. Augun grá og köstuðu gletnisglömpum, en hýr, brosmild og yfirbragðsheið, þegar gleði bjó í hug. Nefið stutt og gilt fram; virtist það og svipurinn allur belgjast út og neistar brenna úr augum, er honum rann í skap.

I skjótu bragði virtist framkoman eigi ósvipuð fornu Íslandsgestunum við hirð Noregs konunga, sem settust útarlega og höfðu yfir sér »hött síðan«, til þess er á þá var yrt. Var í fyrstu þungbúinn, fáorður og eigi alúðlegur, og andaði svipað og frá Grími Thomsen, og þeim mönnum, sem eru »fastir í skapi og fornir í máli«. — Mynd J. St. mun þannig hafa brent sig fastast í endurminningu margra við fyrstu kynni og á mannamótum.

En þegar áhrif hans eigin hugsana, eða málefni þau, sem fyrir lágu, hituðu og yrtu á hann, þá kastaði hann skjótlega kuflinum. Og þá duldist engum af yfirbragði og ásýnd allri, að þar talaði skáld og tilfinningamaður, hnittnum, ákveðnum orðum; stuttum, stökum setningum.

Það var skapi hans samkvæmast að taka jafnan eld-snarplega í strenginn, og fylgja málstað sínum af einbeitni. Svara drjúglega fyrir sig í viðræðum, og af engum vanefnum, fremur en hirðgestirnir forðum. Enda þergði hann heilsudrykk sinn af brunni fornsagnanna, og hafði þar hitann úr, taldi sér það jafnmikla nautn og heitt-trúudum manni bænirnar. »Að eðlisfari var eg helzt gefinn fyrir fornfræðagrúsk, en síður fyrir búnað. Skuldvar og heldur féfastur. Ódæll og fjörugur í æsku, óhagstæður og eigi hlifinn í orðum. Blóðheitur og hneigður til nautna«. — Gefinn var hann fyrir vín, einkum á efri árum, en neytti þess í hófi og eigi nema í samkvæmum og ferðalögum. Stórlyndur og fráleitur að þola að sér væri troðið um tær eða gefin olnbogaskot, sízt af þeim, sem ruddust fram í nafni valda, auðs og almennra venja. Sérlega tilfinningaríkur og næmur. Unni persónufrelsinu og um fram alt skoðanafrelsinu.

Af því sem nú er sagt má ljóst verða, að skáldskapar- og ritsmíðæfnið var eðlilegur ávöxtur sálareinkunna hans og skoðana. Engin tilviljun að honum varð helzt fyrir að gerast málsvari olnbogabarnanna, í viðustu merkingu þess orðs; þeirra, sem verða að fara á mis við svonefnd gæðilífsins — auð og metorð —; hinna, sem almenningsálitið og rótgrónar laga- og þjóðarvenjur sparka í og banna að lifa samkvæmt helgustu tilfinningum sínum og skoðunum; og síðast en ekki sízt **dýranna**, sem ekki geta borið hönd fyrir höfuð sér og verst verða úti gegn hörku og mannúðarskort. Enda mun hann hafa gert meira en flestir aðrir hér á landi til að sýna, að þau eru gædd sál og tilfinningu eins og mennirnir. Mun það oft hafa snert hann mest, skyldleiki með augnaeldi og viðkvæmni góðhestsins, og tilliti og næmleik eigandans, sem unnast hugástum.

— — Eg var nágranni Jóns Stefánssonar frá því eg man fyrst eftir mér, og naut margra skemti- og viðræðufunda hjá honum um skáldskap og bókmentir. Hann hafði líka sérstakt lag og lipurð á frásögn fornra og nýrra atburða, og kunni ógrynni af því, sem laðaði athygli unglínganna. Hitt spilti ekki, þó blandað væri gletni og gamansemi saman við. Hittumst oft við hjástöðu sauðfjár á vetrum; hafði hann þá jafnan talshætti fornanna á hraðbergi, en áhugamál og hugsjónir nútíðarrithöfunda logandi í barmi.

Þegar um fornmennt var talað, virtist mér honum taka sárast til Gísla Súrssonar og annara listum búinna göfugmenna, sem örlögin léku sárast. Dáðist að mannviti, eldi og ástargöfgi í örlagapáttum Eddukviðanna, sem nafnlausu snillingarnir ófu úr aldaranda og trúarhugmyndum þess tíma. Taldi snillinga nútímans naumast ná lengra í því efni.

Af útlendum rithöfundum tileinkaði hann sér helst Jónas Lie. Var snortinn af hinum sárbeittu tökum hans á þröngsýni og þjóðarmeinum, en þó látlausa frásagnarstil og sorgblíðuhjúp þeim, sem reifar sögur hans. Finst mér, að þaðan hafi hann notið áhrifa í ýmsu.

Þessi íslenzk skáld mat J. St. mest: Jón Thoroddsen, Benedikt Gröndal, Gest Pálsson, Stephan G. Stephansson og Þorstein Erlingsson. Er það skoðun mín, að honum hafi mest svipað til Þ. E. í tilfinningum og skoðunum; og að þeir hafi að mörgu leyti verið andlega skyldir. Báðir næmir fyrir smælingjunum, einkar íslenzkir í sniði; gæddir djúpu tilfinningaafli og þeim skarpleik í orði, sem hæfir mark. Völdu aðrar leiðir í skoðunum og trúarefnum, en fjöldanum voru geðfeldar; virtu meira trú Áskels goða og Síðu-Halls, en Lúthers og Abrahams.

Tvímælalaust hygg eg að Jón Stefánsson hafi unnið sér ódauðlegt rithöfundarnafn hjá þjóð sinni. Hitt getur auðvitað lengi verið deiluefni hversu ofarlega hann fær sæti á skáldabekknunum. Sjálfur vildi hann eigi telja sig í þeim flokki: »Mér finst eg vera sögusmiður«, segir hann, »og til meira nafns geri eg ekki kröfu«. Einstöku fyrstu smásögurnar hans eru að visu dægurflugur, eins og margt það, sem eingöngu ber blæ hlutsæisstefnunnar; en síðari sögurnar hafa fylstu þjóðareinkenni, þroska og list skáldsins til brunns að bera.

Naumast verður sagt að Jón Stefánsson ætti miklu brautargengi að fagna hjá íslenzkum bókútaútgefendum. Þess vegna saltaði hann margt. Og oft var honum það þungbært, að fá ekki tíma til að rita á blað hugmyndir og sögubeinagrindur, sem fæddust og bræddust saman, í önnum dagsins. — En það vil eg fullyrða, að hann hafi fært þjóð sinni meiri skerf mannúðar og kærleika, sem eru skærustu blys guðdómsins, heldur en sumir af þeim, sem sitja á skáldbekknunum, og ryðja orðakyngi og pappír árlega á bókasölumarkaðinn með beztu meðmælum útgefendanna.

— — Árið 1911 veitti alþingi Jóni Stefánssyni skáldstyrk, kr. 1200,00 í eitt skifti, til þakkar og virðingar fyrir ritstörf. Var það gert án hans eigin vitundar og atbeina, og gekk úrtölulaust. En frændi hans og aðrir kunningjar fluttu málið. Um sama leyti hlaut J. St. heiðurspening frá sænsku dýraverndunarfélagi fyrir Dýrasögurnar. Enn fremur hafa sumar skáldsögur hans verið þýddar og gefnar út á þýzku í fullkomnari útgáfu, en til eru af þeim á íslenzku.

Vera má að margs sé enn ógetið, sem kunnugir minnst, og mundi ef til vill helst snerta þátttöku J. St. í sveitar- og heimilislífinu, en eg vona að lesendur geti skapað sér nokkurn veginn réttar hugmyndir um það í sambandi við það, sem sagt hefir verið. En til skýringar og áherzlu vil eg þó drepa á, að hann var alt af ótrauður og áhrifaríkur starfsmaður í menta- og félagslífi sveitarinnar. Fylgdi merki æskunnar engu miður hin síðustu árin og starfaði með henni, sem heiðursfélagi í ungmennafélagi sveitarinnar. Inst inni átti heimilið hann; þar var hans vakandi forsjá, viðkvæmi hugur og umburðarlyndi, ætíð mest og traustast í mótlætinu.

— — — Í brjósti brann honum hinn sami eldur og sveitinni hans: »Skapið það, sem inst var inni, erfði hann af móður sinni«. Þar voru honum vaxnar »fjalla-blómsins« djúpu, þrautseigu rætur, sem þroskast og næríst í fornum, strjálgrónum brunajarðvegi, við andrúmsloft »heiðsvalans«, er strokist hefir sunnan um löndin og flutt með sér brosin og kossana. — En þann jarðveg skortir stundum áburðinn — skólamentunina, sem þéttir gróðurinn í kaupúnum og nágrenni skólanna og nærir þorpa-blómin, en því miður verður ýmsum þeirra oft að eins til »kviðfylli«. Jarðvegurinn er þar grynri, rætarnar styttri og »ljósveigarnar« eigi eins tærar.

— — — Jón kendi sjúkdóms síðustu árin, sem þjáði hann töluvert mikið. Í febrúarmánuði 1915 var gerður á honum holdskurður, og virtist hann fá við það nokkurn

bata. En um vorið veiktist hann snögglega, og andaðist úr lífhimnubólgu 23. júní, eftir sjö daga legu.

Útför hans fór fram að Skútustöðum 12. júlí, að viðstöddu miklu fjölmenni úr Mývatnssveit og nálægum sveitum. — Að lokinni húskveðju á heimili hans, var kistan borin í samkomuhús sveitarmanna. Þar voru fluttar ræður og sungið af söngflokk sveitarinnar. Síðan var kistan borin í kirkjuna eftir venju.

— Í samkomuhúsinu hvíldi kistan á stólum, með bogum yfir, sem alt var sívafið og skreytt íslenskum blómum og jurtum. Var það fallega hugsað, og »symboliskt« — að systkini Jóns Stefánssonar, úr heimi náttúrunnar, skyldu líka fá að kveðja hann þar, eins og hin systkinin, og fylgja honum til síðustu hvílu.

Þórólfur Sigurðsson.

Milli svefns og vöku.

(Ritað veturinn 1897 og flutt á skemtifundi í samkomuhúsi Mývetninga þegar það var nýreist).

Undarlegt sambland af því, sem fyrir vakandi mann ber í umheiminum og þess, sem andinn sér á landi drauma sinna. Loftfarir mannsandans, þegar hann líður um hauður og höf. Kynleg ráðgáta. — Manninum gefur sýn; hugurinn er laus við hið lága og þrönga, moðryk og fúaraka, loftdimmu og mýrasudda.

Milli svefns og vöku — þegar fyrir mann bera löng æfintýri á nokkrum andartökum. Íjósálfa- og andaheimurinn opnast; túnriður og nátttröll lúta veldi þess fagra og hugþekka. Endurminningarnar vakna angurbliðari og skáldlegri en vant er að vera í starfs- og vökustundunum.

Þær stundir, sem mannsandinn nýtur fegurðarinnar og hugsjónanna bezt, getur mannshöndin ekki fært í letur, orðin vanta; þau verða of köld, of takmörkuð og fátækleg. En þráin til þess vakir og knýr fram — fram til þess að lýsa svo vel, sem föng eru á, þeim stundum og og þeim sýnum. Og nú leitast eg við að koma orðum að einni slíkri stund æfinnar.

Sjón mín sá ekki »vitt og of vitt«; hún sá ekki nema um miðju sveitar minnar, hugurinn fór ekki út fyrir takmörk fæðingarhreppsins. En eg sá fleira en vant var, sá gleggra og augum mínum geðfeldari sýnir.

Eg sá fegurðina og samræmið. Hugurinn naut frelsis og hvíldar í sakleysinu og lífsgleðinni.

Máninn rann upp yfir Norðurhnjúkana; bjartur og lýsandi í fylling sinni. Í vestrinu lýsti dagsbrúnin enn þá.

Isinn á vatninu lá sléttur og glampanði. Það var hvergi fannarföl á honum.

Á hálendinu, í faðmi bláfjallanna, lá vatnið vetrarhöfugt og kylrátt. Beið þar, sem fyrirtaks starfssvið karlmannlegra íþróttar; ögrandi til hvatleiks, samkepnar og áráðis. Það laðaði heilbriggt fjör fram á gljána, vakti göfugan metnað og félagslega nautn vetrarfrelsisins. — Yndislega auðsæla vatnið með þykku frostblæjuna, sem máninn gyllir og gullfágar, stjörnurnar stafa, heiðrikjan og vetrarsvala lognið signa og helga.

Dagurinn er stuttur og nóttin löng um sólhvörfin. En slíkar nætur og slíkir staðhættir eru forkunnar vel löngu til þess að efla og styrkja mennina eftir hita og annar sumarsins, dimmu skammdegisins. — Náttúran breiðir töfraljósa armana móti börnum sínum, býður þeim að koma út til sín, að gleðjast og hressast. Milli jóla og nýárs er kveldið frelsistími og mönnunum holt að koma saman; leika sér, skemta sér með viðræðum og frjálsmannlegri viðkynningu.

— — Eg er staddur á nyrðra Kleifarhólum. Mér gefur sýn um sveitarhringinn. Sé menn fara suður isinn milli Sviðinseyjar og Bekra; norður við tangann og vestur við landið eru líka flokkar manna og bera brátt yfir.

Það dunar í isnum og naddandi hljóð berst að eyrum mínum. Skjálíandi óró fer um hverja taug; hjartað berst í brjósti mér. Eg er sæll og glaður. Nú er lífið létt og fagurt.

Skammt vestan við koma tveir menn á brúnum hesti og gráum í hvínandi stökkspretti og rétt aftan við glóföxóttur hestur á skeiði. Tveir frumvaxta menn á hægri hönd og einn á hina vinstri; þeir beita vel skautunum og eru fjörugir og kappsfullir engu síður en hestarnir — vildu helst taka allan flóann í einum spretti. Þá koma margir í þyrpingu, flestir á skautum en sumir ríðandi; og síðast þrír hestar, er ganga fyrir sleðum. Þar sat kvenfólk og nokkuð af börnum. Konurnar brosandi með roða á kinnum, þann litfagra roða, sem gengið hefir svo

í augu vor karlmannanna. Börnin voru hlæjandi og spriklandi af fjöri og lífsþrá.

Það voru þeir Norðanmenn að sækja skemtifund og njóta veðurgæðanna.

— Í kvöld er eg frár eins og fugl, og líð um loft og láð. Hraðið ykkur! Eg kem varla síðar að þinghúsinu, þótt engan hafi eg reiðskjótann og enga skautana. —

Löngum spöl síðar er einn maður ríðandi, einyrki þar norðan frá; hann hefir tafist við hýsingu fjárens. Hesturinn er dökkur, og hann tekur flóann í einum þráðbeinu um stökkspretti; er þrettán mínútur landanna milli og búinn að ná hinum við Akurdalinn.

Ofan úr Sundum koma einnig mannflokkar og fara hvatlega. — Þessir sveitungar mínir hafa þó þörf, elju og skaplyndi til þess að létta sér upp, koma saman þó vetur sé; gleðjast hver með öðrum. Ekki hugsa þeir það sambezt að einangrast og þumbaldast; ekki ætla þeir að fjörðum muni frjósa og þeir eru ekki líklegir til þess að þylja feld sinn um þrautir og farg gadds og grimdar. Veturinn er þeim engin bjarnarnótt. — Og það gleður mig. Eg hefi aldrei verið elskur að þeim mönnum, sem virðast á takmörkum þess að verða samfrosta. Eg trúir meir samhuga fylking manna til þjóðþriflegra heilla, en hinu að hver smábóndi berjist með knúum og knjám fyrir óskerði síns örlitla höldsríkis; girði garð um landeign sína.

Nú skifti eg um útsýnisstöðina. Af Hjallhólnum blasir vel við að horfa á þá Sunnanmennina. Frá suðaustri, suðri, suðvestri og að vestan, yfir ísgljá »Engjanna« koma skautamenn, reiðmenn og hestar, sem draga sleða, er fólkið situr á. Hreint fjallaloftið, hreyfingin og gleðivonin létta skap manna, varpa ánægjublæ yfir hvert andlit. Eykur hvatleik eldri og yngri; gefur »litu góða« eins og segir í sköpunarsögunni norðlægu.

Vindsúg svipar sem snöggvast fyrir; fáninn blaktir til. Fálkinn sýnist stæla vöðvana og búast til flugsins.

Reiðdynurinn, skautahljóðið og sleðaprymjandinn gengur yfir Boðatjörn.

Eg þekki vel fótaborðinn þinn gamli Svanur! — hestagullið; hann er fallegur og tígulegur enn þá. Þó man eg þig loftmeiri, léttstígari og frárrí; minnst fjörs og skeiðsins frá blómaárum þínum, og stóru móbrúnu augun þín ganga mér seint úr minni.

Og þennan roska skautamann þekki eg líka svo mætavel. Hann, sem gengur fjarst til vinstri handar; kannast glögt við löngu, jöfnu skrefin, beina, liðlega vöxtinn og mjúku hreyfingarnar. Man þig samt fimari, snarráðari og léttari til gangsins, þótt þú sómir þér vel og sæmdarlega í fararbroddi ungu skautamannanna.

Nú er heillastund. Lífið fagurt. Náttúran hrein og göfug.

Fólkið gengur heim að bænum, fram hjá kirkjunni, að þingþúsinu nýja. Það streymir inn og er ös og þröng við dyrnar. Hér er fjölmenni saman komið, og nú liggja ekki skrautklæðin heima.

Mig fýsir ekki til fjöldans strax, þröngin, renslíð aftur og fram; hrindingar og olnbogaskot hafa jafnan gramið vanstíla skapið mitt.

Eg stend hér um stund enn þá. Hjarta mitt slær við brjóst þitt fagra fjallasveit! — Öræfabýgd! eg elska þig. Þú hefir svo oft svalað einlynda barninu þínu; kyrt ólgu og æsingu mína. Vakið hjá mér traust. Reist mig af knésigi. Blessað mig með helgikyrð, göfugrar og frjálsrar náttúrufegurðar.

Á þessum hól, heima í bænum og herna um túnið, eru bernskusporin mín, fyrstu menjar skilgreiningar og hyggjuvits míns. Enginn maður með heilbrigðum tilfinningum gleymir bernskustöðvunum. Þar vakna þær minningar, sem gera roska manninn viðkvæman og dreymandi. Síðar hefi eg leikið mér hér með jafnöldrum mínum, hlegið og notið gleðinnar. Hér hefi eg fylgt foreldrum mínum, ungur að aldri, til grafar, og síðan mörgum vinum og leikbræðrum. Hér hefi eg lært að skilja boðorðið: »Maður skal eftir mann lifa«, svo að mér hefir að haldi komið. Hér hefi eg vitað glæsivonir ungs manns fá ólíf-

issár, og hér hefir læknirinn — tíminn — fægt sárið og dregið lifstein um undina; grætt manninn, til þess að vera herfæran um langa æfi.

Ög hérna, á Skútustöðum, var höfundur bólstadar þessa búin vélræði og banaráð. Sendir menn til höfuðs honum, en hann var vitur og snarráður, var um sig og fullhugi í háska og manna-raunum; sá því lengi við svikumum og launaði þau ótæpilega. Hann var nógu nærgætur ástriðum manna og nógu kaldráður til þess að hagnýta hina sterkustu þeirra allra, goðinn á Hjalla. Blind og eilífið ást Sigríðar fósturu Skútu, kom launungarmálinu í við und fjandmannanna; við því fekk hann ekki séð. Því varð Skúta að hníga, að ekki höfðu allir »haldinorðir verið«.

Ungur og roskinn hefi eg verið reiður þeim svikum. Ög þú Sigríður! varst lítil í skapi og ólík göfugum fornkonum að skörungsskap, þegar þú fyrirgafst Þorgrími, gekst á þed með þeim manni, sem hafði svikið vonir þinar; haft ástina fyrir agn á drápsöngli sinum; leitt þig óvitandi til þess að gerast ráðbani fóstura þíns. Þess manns, er þér einni trúði fyrir því launungarmáli, sem líf hans lá við.

Sá atburður með mörgum öðrum dæmum hefir vakið mig til þeirrar trúar, að ástin sé ölvan, einskonar æði, sem fæstir stjórni skynsamlegu viti fyrir. Að ástinni og ástriðum þeim, sem henni fylgja, sé til alls trúandi bæði ílls og góðs — til giftu og auðnuleysis, mannfriðenda og lítilmensku. Að hún geri ýmsa að görpum og aðra að bleyðimönnum. Að engill sæmdarinnar og djöfull lítilmenskunnar berjist hér um völdin, neyti skapferlis og atburða sem bezt til þess að sigra, vinna taflid hvor fyrir sig. Hér er oft mjórna muna vant hver vogarskálin þyngri verður. Hér getur örlitid atvik ráðid því, hvort ílt eða gott verður efra í viðureigninni.

En hvað skal eg á þessu kveldi láta hug minn sveima um völundarhús ástarinnar? Eg hefi engan töfraþráð til að beina mér veg. Öll þau »heilabrot« eru erfid manns-

andanum; og nú vil eg hvílast og gleðjast í faðmi hreinviðris og góðra minninga.

— — Eg sé engar mannaferðir. Það eru vafalaust allir komnir, sem komið geta. Glaumur og dansdunur heyrist frá þinghúsinu; mér liggur ekki mjög á að flýta förlinni þangað.

Æskuár mín eru liðin; roskinsárin komin. Milli minna hugsana og lífsdrauma ungu mannanna er nú að rísa upp steinveggur, sem hækkar ár frá ári. Þeir hafa engan tíma til þess að kalla til mín yfir múrinn, og mér hugkvæmist ekki að reyna raddböndin mikið hérestir.

Vegirnir eru að skiftast. Aldurinn markar öllum veg og starfssvið.

Á þessari stundu er eg þó barn. Barn með gráhært höfuð. Sveimhuga drengur. Vinur tunglsins jafnt og í æsku.

Aldrei hafa mér virzt fjöllin fegri, sveitin sérkennisríkari, tápmeiri að yfirsýn — né staðhættirnir jafn auðveldir til að efla viðkynningu og félagsskap þeirra manna, er hana byggja.

Fossniðurinn frá Laxá kveður mér minningaóð. Hörpustrengir fossbúans titra — angurbliðir vikivakar liða til mín gegnum fölbjart næturloftið. »Loreley«, kvæði og sönglag, svo haglega samstilt, sem aldrei áður, óma úr fjarlægðinni og renna að hjarta mínu; það skelfur af grátljúfri nautn. — — — Nú knýr hann fastar strenginn; niðurinn er dýpri, dimmri og fastari. — Það er Gunnarslag, Guðrúnarbrögð hin fornu. Harpa Áslaugar Heimisfóstru og saga hennar, sem nú duna, vekja löngu liðna tíma. Stæla vöðvana, hleypa kappi í kinnar; rumska við mókandi þreki, glæða ætternið.

Og svo hátt og hvelt »Húskarahvöt«, ný »Bjarkamál«.

Það liggur vel á þér í kveld fossbúi, gamli vinur! Ekki er þér um að kenna, þótt eg sé lingeðja og menníngarlitill, og þó að svo séu fleiri. Þú kveður og áminnir, en mennirnir daufheyrast, skilja og finna svo sára litið.

— Eg horfi eftir andahópum, sem fljúga frá vestri, neðan frá Vogatungum og stefna austur að auðu vatninu hjá Nónhólum. Loftið súgar undan vængjaburðinum. Einkennilegt, blístrandir hvínljóð segir mér skjótt til, hverir fuglarnir eru. Það eru ekki farfuglar, en fallegir samt; fastnæmir í skapi og örðugir til að sjá fyrir sér. Gæfir og ómannhræddir um varptimann, en skjarrir og varkárir endrarnær. Vatninu er prýði að þeim. Sveitinni búningsbót að »húsöndinni«.

Svo lít eg norðaustur upp til blásvarta hraunsins, »Strípanna«, sem í tungsljósinu virðast áþekkir hempuklæddum klerki, er bíður eftir sóknarfólkinu og verður þungur á svip, er það lætur hann standa einan um spjallið. Þeir eru gamlir »Stríparnir«, og þeir hirða lítið um rás viðburðanna né tákn tímans; eru fastir á fótum og sporna harðvellið.

Hér skyggir á ljúflingssýn mína. Gef mér gleðilegra tákn, bjarta, heiða náttúra! Gefðu mér róna og ánægjuna aftur. Að eg megi ganga með gleðisvip frá þér til manna, féлага minna, sem þarna skemta sér.

Kyrðin var skyndilega rofin. Svanirnir suðaustur á Grænalæk sungu og kvökuðu margir saman. Eg fann, að röddin var himnesk, fögur og frjáls. Fyrir löngu síðan hefi eg misgert stórum við þessa mjallhvítu, fögru fugla — hefi iðrast þess, og fest hlýjan hug til þeirra. Og vinggjarnlegur og blíður er söngurinn; hann er mér styrkur og tákn, sem eg gleðst yfir. Kyrð og skapspekt, blíð nautn og ánægja býr aftur í hjarta mínu.

— — — Nú er hart riðið yfir ísana. Eg heyri að það er aðeins einn maður og sé brátt að svo er. Hann er líkur Rafn vin mínum í Dal. — Það er hann og kemur á heillastund til fundar við mig. Eg hleyp niður að tjörninni og fagna honum.

Bráðum göngum við inn til mannfjöldans í Þinghúsinu. En það finn eg, að ekki muni eg njóta sjálfs mín jafnvel inni og úti; ekki verða jafn ánægður í fjölmenninu og þungu lofti. Þar verð eg vanstiltari, viðsjalli,

ósælli og minni maður. Misskil aðra og verð einnig misskilinn af þeim.

Sýn minni förlast; líkaminn þyngist, og brýnnar færast neðar. — Ljúfasta stundin er liðin. — — Hér er þröngt inni; ljósið logar dauft, og molluhitinn er tilfinnanlegur þeim, sem koma frá tunglskini og háfjallalofti.

Við Rafn setjumst niður.

Þorgils Gjallandi.

Dómurinn.

Ungi maðurinn var að leggja af stað út í lífið. Blóðið olgaði í æðum hans og taugarnar skulfu af þrá. Hann stóð á heiðarbrúninni og horfði á mannlífið. Sumir menn gengu hröðum skrefum eftir rennsléttum brautum, sem ruddar höfðu verið löngu áður en þeir fæddust. Sumir voru á vegleysum og urðum og voru að ryðja sér brautir. Sumir gengu í hægðum sínum eftir brautum, sem aðrir voru að ryðja fyrir þá.

— Hvað á eg að verða? spurði ungi maðurinn.

Þá kvað við rödd mikil ofan úr háloftinu og sagði:

— Vertu skáld.

— Vertu skáld! endurtók ungi maðurinn. — Já. — Eg verð skáld. — Og svo gekk hann hröðum skrefum ofan af heiðinni.

Ungi maðurinn tók nú að skrifa. — Eg er skáld, sagði hann við sjálfan sig og skrifaði af kappi.

Einu sinni sat hann við borðið sitt og var að lesa rit sín. Þá kom inn til hans maður. Hann var reiðilegur á svip og ávarpaði unga manninn með þjósti.

— Þú hefir raskað ró minni. Eg stefni þér fyrir hinn mikla dómstól.

— Eg þekki þig ekki, svaraði ungi maðurinn. Hví dirfist þú að bera á mig slíkar sakir?

— Hvað hefir þú skrifað?

— Eg var að ljúka við sögu, sem gerðist fyrir hundraðum ára.

— Hvaða menn talar þú um í þessari sögu?

— Þeir eru margir.

— En manstu eftir því, að þú gerir einn manninn í sögunni að illmenni?

— Já. — Eg man það.

— Hvers vegna gerðir þú það?

— Eg veit ekki betur en að hann hafi verið illmenni, og mennirnir, sem maður segir frá, verða að koma fram í sögunni eins og þeir hafa verið í lífinu, sumir góðir, sumir vondir.

— Miskunnarlausí maður! Maðurinn, sem þú segir, að hafi verið illmenni, er eg. Guð var búinn að gleyma syndum mínum, og eg var kominn í hóp með hinum góðu. Þú hefir rifjað upp misgerðir mínar og aukið við þær eftir einum geðþótta, svo að eg hefi ekki frið í gröfminni. Brendu bókina, og þá fæ eg frið.

Ungi maðurinn brendi bókina, og maðurinn hvarf.

— Er eg ekki skáld? spurði ungi maðurinn.

Þá kvað við röddin mikla:

— Þig vantar bók lífsins.

— Hvernig á eg að ná henni? spurði ungi maðurinn.

— Þú átt að biðja þangað til að ekki er nema einn blóðdropi eftir í hjarta þínu, svaraði röddin mikla.

Ungi maðurinn bað nú nótt og dag, þangað til að ekki var nema einn blóðdropi eftir í hjarta hans. Svo sofnaði hann, því að hann var orðinn dauðþreyttur. Þegar hann vaknaði, lá bók lífsins á skrifborðinu hans.

— Nú er eg skáld, sagði ungi maðurinn og blaðaði í bók lífsins.

Hann skrifaði nú hverja bókina eftir aðra. — Eg er skáld, sagði hann og var ánægður með sjálfan sig.

Einn dag kom til hans kona. Hún grét hástöfum og mælti:

— Þú gerir mér rangt til, ungi maður.

— Eg þekki þig ekki, svaraði ungi maðurinn.

— Það segir þú satt. En þó ert þú að segja frá því hvernig eg hafi verið, hvað eg hafi talað og hvað eg hafi hugsað. Eg er ein af konunum, sem þú segir frá í sögu þinni. Eg hefi ekki frið í gröfminni, af því að þú segir

mig öðru vísi en eg var og vil vera. Brendu bókina, þá fæ eg frið.

Ungi maðurinn brendi bókina, og konan hvarf.

— Er eg ekki skáld? spurði ungi maðurinn.

— Þig vantar sálarskuggsjána, svaraði röddin mikla.

— Hvernig get eg náð henni? spurði ungi maðurinn.

— Hún er undir fjallinu þarna, svaraði röddin mikla.

— Flyt það burtu, og þú munt finna sálarskuggsjána.

— Ungi maðurinn tók til að flytja burtu fjallið. var erfitt verk. Þegar því var lokið, fann hann sál skuggsjána.

— Nú er eg skáld, sagði ungi maðurinn og horfði í sálarskuggsjána. Í henni sá hann hverja þá sál, sem hann vildi sjá.

Nú gat hann skrifað. Hann þurfti ekki annað en horfa í sálarskuggsjána, þá sá hann, hvernig sálirnar voru, og í bók lífsins sá hann hvað þær höfðu gjört.

Ungi maðurinn skrifaði nú margar bækur.

Einn dag kom inn til hans konungur. Ungi maðurinn þekti þegar, að þar var kominn konungurinn, sem hann var að ljúka við að skrifa um, og gladdist hann með sjálfum sér, því þessi konungur hafði gert margt gott, og sál hans var einhver fegursta sálin, sem ungi maðurinn hafði séð í skuggsjánni.

Konungurinn mælti:

— Brendu bókina, sem þú skrifaðir um mig, svo að eg fái frið í gróf minni.

— Hágöfugi konungur! Tignasti herra! Hefi eg sagt nokkuð ilt um yður?

— Nei, ekki ilt, en margt ósatt, svaraði konungurinn.

— Hefi eg ekki sagt frá sál yðar, eins og hún kom mér fyrir augu í skuggsjánni? Hefi eg ekki sagt frá verkum yðar eins og þau eru skráð í bók lífsins.

— Þú hefir sagt frá verkum mínum eins og þau komu þeim fyrir augu, er lifðu með mér, en þú hefir sagt

ósatt um sál mína. Þú segir, að sál mín hafi verið fögur og björt og að hvergi hafi séð blett á henni. Þetta er ósatt.

— Eg hefi engan blett séð á sál yðar hátignar, hvernig sem eg hefi skoðað hana í sálarskuggsjánni.

— Blindi maður! svaraði konungur. Þú segir, að vilji minn hafi verið göfugur og skær, eins og sólargeislinn. Þú segir, að eg hafi hrygst með hryggum og glæðst með glöðum. Þú segir, að eg hafi hugsað gott um óvini mína. Þetta er lygi.

— Þetta stendur skrifað í bók lífsins, og eg sé í sálarskuggsjánni, að þannig hefir sál yðar hátignar verið.

— Fávisi maður! Hefir þú ekki séð, hve langt er milli línanna í bók lífsins. Þú les bók lífsins og þykist sjá alt, sem þar er skráð, en vita skalt þú, að á milli línanna, sem þú sér, er annað letur, sem er ósýnilegt þínum augum, og þar er sagt frá öllu eins og það var. — Kalla þú á unga manninn þarna, sem gengur við hlið unnustu sinnar og er á leið til brúðkaupsins og láttu hann sjá sál unnustunnar í skuggsjánni. Láttu hann svo sjá hana að ári liðnu, og vittu, hvort hann þekkir hana aftur. Kalla þú á annan þessara manna, sem ganga hlið við hlið og eru hjartfólgirnir vinir, og láttu hann sjá sál vinar síns í skuggsjánni. Að ári liðnu verða þeir svarnir óvinir. Láttu hann þá sjá í skuggsjána, og vittu hvað hann sér.

Vita skalt þú, heimskingi, að eg gladdist ekki alt af með þeim, sem voru glaðir, þótt eg létist gera það. Eg bar stundum nistandi sorg í hjarta, þótt eg létist vera glaður. Eg hrygðist ekki alt af með þeim hryggum, þótt eg létist vera hryggur. Eg gladdist stundum í hjarta mínu, þótt eg létist vera hryggur. Eg gladdist meira að segja yfir hrygð óvina minna. Eg hataði óvini mína, en eg lézt elska þá, til þess að geta náð valdi yfir þeim. Þegar þú nú veizt þetta, heldurðu þá að vilji minn hafi verið göfugur eins og þú segir. Nú er eg orðinn betri maður en eg var. Hið liðna er gleymt. Það veldur mér hrygðar, að það er rifjað upp. Bókin þín er lygi frá upphafi til enda. Brendu hana, þá fæ eg frið.

Ungi maðurinn brendi bókina, og konungurinn hvarf.
Ungi maðurinn kallaði á unnustann.

— Viltu sjá sál unnustu þinnar? spurði ungi maðurinn.

Unnustinn varð mjög glaður og játti því. Enga sál langaði hann eins mikið að sjá og sál unnustunnar.

Hann leit í skuggsjána, og andlit hans ljómaði af fögnuði. Sál unnustu hans var svo töfrandi fögur, að hann hefði getað horft á hana alla æfi og aldrei þreyzt.

— Komdu að ári liðnu og sjáðu sömu sálina, sagði ungi maðurinn.

Ungi maðurinn kallaði á annan vinanna.

Viltu sjá sál vinar þíns? spurði ungi maðurinn.

— Vinurinn játti því og leit í skuggsjána. Hann varð glaður, því að sál vinar hans var fegurri en honum hafði nokkru sinni komið í hug.

— Komdu að ári liðnu og sjáðu sömu sálina, sagði ungi maðurinn.

Árið leið. Unnustinn, sem nú var orðinn eiginmaður, kom til unga mannsins.

Hann leit í sálarskuggsjána.

— Þetta er ekki sama sálin og eg sá í skuggsjánni í fyrra, mælti hann. Eg sé dökka bletti á þessari sál, en eg sé einnig ljósari bletti en eg sá á sál unnustu minnar. En hvaða sál er þetta?

— Það er sál konu þinnar, sem var unnusta þín í fyrra, svaraði ungi maðurinn.

Vinurinn kom og leit í sálarskuggsjána.

— Þetta er ekki sama sálin, sagði hann. Þessi sál er svört og illúðleg, en hin sálin var björt og góðleg. Þessi sál er eins og rándýr með gapandi gin og spentar klær, hin var eins og dúfa.

— Þetta er sama sálin — sál mannsins, sem var vinur þinn í fyrra en er nú orðinn óvinur þinn, svaraði ungi maðurinn.

Vinurinn gekk þegjandi burtu.

— Hvað á eg að gera? spurði ungi maðurinn. Er eg

ekki skáld? Get eg ekki lesið í bók lífsins? Sé eg ekki hinar réttu myndir í sálarskuggsjánni?

Þá kvað við röddin mikla:

— Þig vantar einn hlut enn.

— Hvaða hlutur er það? spurði ungi maðurinn.

— Það eru sannleiksaugun.

— Hvernig get eg náð þeim?

— Þú skalt gráta úr þér þín eigin augu, því að þau sjá þessar ósönnu myndir. Þegar þú hefir gert það, þá munt þú fá sannleiksaugun.

Ungi maðurinn grét nú nótt og dag þangað til að augun voru farin úr höfði hans. Þá féll hann í óvit, en þegar hann raknaði við aftur, varð hann þess var, að hann var búinn að fá ný augu.

Það voru sannleiksaugun.

Ungi maðurinn leit nú í bók lífsins og sá smáa lettrið. Nú sá hann, að hann hafði ekki séð, af hverju breytni manna var sprottin. Hann leit í sálarskuggsjána og komst að raun um, að sálirnar voru öðruvísi en hann hafði haldið.

— Nú er eg skáld, sagði ungi maðurinn og tók að rita af kappi. Þegar hann var búinn að rita heila bók, fór hann til mannanna og las hana upp fyrir þeim. Þeir hlustuðu fyrst, en þegar fram í sótti sögðu þeir hver við annan:

— Þetta er ótrúlegt. — Þetta er lygi. — Þetta leiðist mér að heyra. — Svo fóru þeir smám saman að tinast burtu, og að síðustu var enginn eftir, til þess að hlusta á unga manninn.

Ungi maðurinn lokaði sig inni og sat í þungum hugsunum.

— Er eg ekki skáld? spurði hann.

— Þú er skáld, sagði röddin mikla.

Orðin skáru hann í eyrun. Hann langaði til að flýja undan þessari voðarödd. Hann fór að hugsa inni í sálarfylgsnunum. Hann hélt, að enginn gæti komist þangað, og enginn gæti séð þær hugsanir, sem þar bærðust.

Parna inni hugsaði hann:

— Á meðan eg hafði hvorki bók lífsins, sálarskuggsjána né sannleiksaugun, þá keptust menn við að lesa bækur mínar. Þá var eg ekki skáld. Nú er eg skáld, en enginn vill heyra til mín.

Svo hugsaði hann allra inst í hugarleynunum:

— Eg ætla að snúa við blaðinu. Það er til lítils gagns að vera að skrifa það sem menn ekki vilja lesa eða heyra lesið. Eg geri hvorki sjálfum mér né þeim gagn með því. Eg ætla að skrifa eins og eg skrifaði áður. — Eg ætla að skrifa það sem menn vilja heyra.

En þá mælti röddin mikla svo ógurlegum rómi, að ungi maðurinn nötraði af ótta:

— Vertu ekki skáld!

Ungi maðurinn féll í ómegin. Þegar hann raknaði við, voru sannleiksaugun, sálarskuggsjáin og bók lífsins horfin.

Eftir það var hann blindur og varð að láta menn leiða sig.

Sig. Heiðdal.

Eín á báti.

Eg hefi fengið af því nóg,
oft með sára lófa,
út á lífsins ólgusjó
eín á báti að róa.

Sjaldan hefir lognblið lá
létt á þreyttum mundum,
það hefir gefið oftast á
og yfir gengið stundum.

Eg hefi líka orðið mát
og undan látið skriða.
Enginn veit, hvað einn á bát
á við margt að stríða.

Þegar eg eygði engin lönd
og ekkert fann mér skýli,
þá hefir drottins hjálparhönd
haldið bát á kili.

Þú sem elskar alla menn
og allra greiðir veginn,
lofaðu mér að lenda senn
við landið hinum megin.

Fyrir handan feigðarströnd,
fjarri sorg og kviða,
segja þeir enn þá óbygð lönd
úti í geimnum víða.

Þar mun eitthvert eyðisvið
öndu fyrir mína.
Það er aldrei vandgert við
vesalinga þína.

Engan heimta eg Edenskóg
eða dýrðarheima.
Lof mér bara að lifa í ró
og liðnum tíma gleyma.

Herdís Andrésdóttir.

Ritfregnir.

Islandica. An annual relating to Iceland and the Fiske Icelandic Collection in Cornell University Library. Voll. VII—IX. Ithaca, New York, 1914—1916. 8vo.

Í 88. árgangi *Skírnis* (1914), bls. 422—430, er getið um rit þau, er áður hafa komið út í ritsafni þessu; þar er og þess getið, hvernig það er komið til og hvert sé ætlunarverk þess. Um þetta vísað þess vegna til þess, er þar segir.

Islandica VII. The Story of Griselda in Iceland. Edited with an introduction by Halldór Hermannsson. (6 +) xvij + 48 bls. Ithaca, N. Y. 1914. 8vo.

Í hinu heimsfræga sagnasafni *Decamerone* eftir ítalska skáldið *Giovanni Boccaccio* er síðasta sagan um *Griselda*. Fáar sögur munu hafa orðið þessari sögu vinsælli eða verið þýddar oftár eða notaðar framar sem yrkisefni í einhverri mynd. Þessi saga komst einnig inn í íslenzkar bókmentir, bæði í sögušníði (saga af Gríshildi hinni góðu, saga af Gríshildi hinni þolinmóðu, æfintýr af Valtara hertoga) og í kvæðum og rímum. Gott dæmi um vinsældir sögunnar hér á landi er það, að fyrir kom það, að börn voru skírð þessu nafni, Gríshildur; ekki kemur nafnið þó fyrir í síðasta manntali, líklega af því, að það er ekki fagurt í hinni íslenzku mynd þess.

Í þessu hefti *Islandica*-safnsins hefir útgefandi tekið sér fyrir hendur að rannsaka meðferð sögunnar í íslenskum bókmentum, þar með einnig, hvern veg hún hefir til vor borizt og hverjum breytingum hún hefir tekið. Eins og kunnugt er, safnaði Fiske auk íslenzkra rita einnig ritum ítölsku skáldanna *Dante* og *Petrarca*. En *Petrarca* hefir tekið sér til yrkisefnis eða öllu heldur þýtt (á latínu) sögu *Boccaccios* um *Griselda*. Af þessari ástæðu var það, að Fiske með aðstoð dr. Jóns Þorkelssonar, þjóðskjala-

varðar, tók og að safna íslenskum handritum, er lutu að þessu efni, í því skyni að gefa þau út. Úr því varð þó ekki, meðan Fiske lifði, en úr þessu efni, sem Fiske hafði safnað, er bókin sprottin upp.

Fyrir bókinni er ítarlegur inngangur, og er þar gerð grein fyrir handritum bæði kvæða og rímna og enn fremur sagna út af þessu efni. Virðist mér þar alt vendilega rakið, sem hér til heyrir. Fyrst tekur höf. rímurnar eftir Eggert Jónsson á Ferjubakka í Öxarfirði, er uppi var á 17. öld, og fylgja þar með nokkur sýnishorn; þá kvæði Þorvalds Rögnvaldssonar í Sauðanesi (d. 1680) og rímur eftir Tómas Jónsson, orktar 1801. Leiðir höf. rök að því, að kvæði þessi séu runnin frá hollenzkri meðferð Gríshildarsögu. Síðan kemur greinagerð höf. á Gríshildarsögunum, sem flokka má í þrennt. Í fyrsta lagi æfintýr af Valtara hertoga, sem líklega er tekið eftir danskri þýðingu á hinni latínsku Gríshildarsögu Petrarca. Í öðru lagi sagan af Gríshildi hinni þolinmóðu, í tveim þýðingum eftir hinni dönsku þýðingu. Í þriðja lagi Gríshildar saga hinnar góðu, sem náð hefir mestri útbreiðslu, enda er sagan þar orðin regluleg riddarasaga. Út af þessari meðferð sögunnar hafa verið orktar tvennar rímur, aðrar eftir Pál Sveinsson á Murnavelli (d. 1778), hinar eftir Magnús í Magnússkógum og Laugum. Enn er til Gríshildaræfintýrið, sem prentað er í Þjóðsögum Jóns Árnasonar og er nokkuð frábreytt hinum meðferðunum; sýnir höf., að því ber að sumu leyti heim við rímur Eggerts Jónssonar.

Höf. hefir prentað kvæði Þorvalds í Sauðanesi um »Grisillá« (á bls. 1—7), en ekki rímur Eggerts Jónssonar, líklega af því, að hann býst við, að þær verði prentaðar í rímnasafni því, er Finnur prófessor Jónsson gefur út fyrir Samfund til Udgivelse af gammel nordisk Litteratur. Því miður er þess þó líklega langt að bíða, að því safni verði komið svo nálægt oss í tíma, ef útgáfa þess gengur eins dræmt og hingað til.

Á bls. 7—12 er Æfintýr af einum hertoga, er kallaast Valtari, og loks sögur af Gríshildi í þrenns konar gerð (þýðing dönsku sögunnar, líklega eftir Jón sýslumann Þorláks-son á Skriðu, riddarasagan og þjóðsagan). Fylgir hér með orðamunur úr og samanburður á hinum helztu handritum, er útg. hefir rannsakað.

Það ber ekki oft við í riti, að rakið sé samband íslenzkra og útlendra bókmenta, og á höf. og Fiskes-ajóður og -safn þakkir

skildar fyrir það að hafa snúizt að þessu efni, þótt um stuttan þátt mikils efnis sé að ræða.

Islandica VIII. An Icelandic satire (Lof lýginnar). Written at the beginning of the eighteenth century by Þorleifur Halldórsson. Edited with an introduction and appendix by Halldór Hermannsson. Ithaca, N. Y. 1915 8vo. (6+) XIX + 54 bls. (+ 2 bls., leiðr.).

Þetta rit hnágur að því leyti á sömu sveif sem VII. bindi í *Islandica*-safninu, að hér er ekki um bókfræðilega skrá að ræða, heldur um útgáfu rits, er tekur til meðferðar viðfangsefni, sem að nokkuru leyti má teljast vera af útlendum rótum runnið.

Hinu heimskunni lærdómsmaður Erasmus, sem löngum er kendur við Rotterdam, hefir samið rit, sem nefnt er *Moriæ Encomium* (lof heimskunnar), ádeilurit, sem svo mjög var frægt á fyrri öldum, að út kom það 40 sinnum frá því árið 1511, er það var fyrst gefið út, til dauðadags Erasmusar (árið 1536). Er þar einkum veitt að klerkum, en þó yfirleitt að öllu því, er Erasmusi þótti miður fara í lífernir manna og háttsemi og þjóðfélagsskipun. Orðin eru lögð í munn fífla, og hefir Erasmus gert það með vilja, til þess að menn og stéttir manna, er hann veittist að, skyldu síður amast við ritinu. Ritið lasu allar stéttir og jafnvel páfarnir sjálfir, en þó var það loka baunað til lesturs kaþólskum mönnum, en eigi fyrr en hér um bil fimmtígi árum eftir útgáfu þess í fyrsta sinn. En þá var rit þetta komið á ýmsar tungur og margs konar stælingar af því gerðar og útgefnar.

Á norrænar tungur er þetta rit Þorleifs Halldórssonar, sem nú er hér prentað í fyrsta sinn, hin elzta stæling á þessu riti Erasmusar. Þorleifur þessi var fæddur í Dysjum á Álptanesi, líklega árið 1683, lítilla manna. Jón Þorkelsson Vídalín varð prestur í Görðum á Álptanesi árið 1696, og veitti þá athygli gáfum drengsins og sagði honum til ókeypis. En er Jón Vídalín fór frá Görðum að Skálholti, til aðstoðar Þórði biskupi Þorlákssyni árið eftir (1697), bað hann eftirmann sinn, síra Ólaf Pétursson, fyrir drenginn, og veitti síra Ólafur honum tilsögn, til þess er hann komst í Skálholtsskóla, en þaðan útskrifaðist Þorleifur eftir tveggja ára dvöl árið 1700. Eftir þetta hafði Þorleifur ofan af fyrir sér með kenslu um brið. En árið 1703 fór hann utan með tilstyrk Jóns biskups Vídalíns. Var hann lengi í bafi og samdi þá rit það, er hér birtist, raunar þá á latínu (*Mendacii Encomium*), en sneri því síðar á

Íslenzku. Hann tók land í Noregi. Þá bjó á Stangalandi við Ögvaldsnes í eyjunni Körmt í Noregi Þormóður sagnaritari Torfason. Hann tók við Þorleifi, og gerðist Þorleifur skrifari hans um tíma. Þaðan fór Þorleifur til Kaupmannahafnar til háskólanáms og hafði með sér lofsamleg meðmælabréf frá Þormóði. Þótti Þorleifur skjótt afbragð annarra manna, er þá stunduðu nám við Kaupmannahafnarháskóla, varð baccalaureus árið 1706 og meistari (sem sjaldgæft var um Íslendinga á þeim tímum) árið 1710. Jafnframt aðstoðaði hann Þormóð Torfason í útgáfu rita hans. Árið 1711 varð Þorleifur rektor á Hólum, en andaðist úr brjóstveiki 15. nóv. 1713. Þessi er í stuttu máli æviferill þessa gáfaða manns, en bæði í inngangi ritsins og eftirmála geta menn séð greinilegar um hann.

Sjálfst ritið (Lof lyginnar) er gefið út eftir eiginhandarriti höfundarins, sem geymt er í handritasafni Bókmentafélagsins í Landsbókasafni (ÍB. 371, 4to.).

Efni ritsins er í stuttu máli þetta:

Lygin kemur fram í persónugervi og flytur ræðu. Telur hún fram kosti sína. Faðir hennar er Lucifer, en móðir Öfund; borin er hún í Paradís, og þar vann hún sitt fyrsta fremdarverk, en það var að ginna Adam og Evu til óhlýðni við guð. Þó hafi hún ekki valdið brottrekstri þeirra þaðan, heldur fávízka þeirra, er þau voru svo heimsk að segja guði sannleikann. Aðalmunurinn á dýrum og mönnum sé sá, að mennirnir kunni að ljúga. Öll vísindi eigi að meira eða minna leyti rót sína að rækja til lyginnar, en þó ein-kum skáldskapur, enda eigi hún þar vinum að fagna sem skáldin eru. Meira að segja guðfræðin sé að mestu gamall uppspuni, og Abraham, Ísak, Móses, Davíð konungur og Páll postuli meistara í lygi, þegar þeim þótti henta. Skraut og listir stafi frá sér, því að ef Adam og Eva væru enn í Paradís, mundi mannkynið vera nakið og ekki hafa þak yfir höfuðið. Hún geri hversdagslíf manna ánægjulegra, því að sannleikur í smámunum valdi sífeldum deilum, eins og sjá megi af trúarbragðadeilum og -styrjöldum. Sannleikurinu sé oft skaðlegur. Löggjafar þeir, sem merkastir séu, hafi talið ógerning að stýra ríkjum án lyga og blækkinga. Og yfirleitt vilji fæstir menn heyra sannleikann. Þá eru trúardygðirnar. Og Lygin spyr fyrst um bænreknina: »Nú vil eg að eins spyrja, hvað margir þeir séu, sem geta lesið þær beztu bænir með sannsögulum munni, svo að þeir ljúgi eigi þar á meðan«. Allar bænabækur séu fullar af ósönnum setningum, sem þó eru nauðsynlegar, til þess að »uppvækja mann og láta hann komast við í sinninu«.

Næst kemur um líftillætið, sem í því sé fólgið, að menn skuli synja fyrir þá góðu eiginleika, sem þeir hafa til að bera, en játa á sig ýmsa illa, er þeir séu lausir við. Biblían segi, að sælir séu þeir, sem rógbornir eru, og það sýni til fulla, að lygin sé holl og góð þeim, sem logið er á, ef þeir að eins kunna að færa sér hana réttilega í nyt. Að endingu biður Lygin guðfræðingana, »að fara varlega með þá málsgrein, að menn fái langt[um] meira gott í öðrum heimi en þeir mistu í Paradís«, nema þeir þá samtímis greini, hverjum sé í rauninni að þakka umskiftin. Segist hún nú sjá ókyrð á guðfræðingunum meðal áheyranda sinna og því hætta með þeirri bön, að menn hætti að lasta sig, en noti sig vel og á þann hátt að verða aldrei staðnir að lygi.

Ritlingurinn er skemtilegur aflestrar, einnig nútímaönnum. Útg. hefir og gert hann alþýðu aðgengilegra með því að færa ritháttinn nokkuð til seinna tíma stafsetningar (ð fyrir d, í fyrir ij o. fl.).

Islandica IX. Icelandic books of the sixteenth century (1534—1600). By Halldór Hermannsson. Ithaca, N. Y. 1916. 8vo. (6 +) xij + 72 bls. 5 myndabl.

Hér kemur fram á sjónarsviðið bók, sem verða mun kærkomin öllum bókræðingum og þeim, sem safna íslenskum bókum. Hér er um að ræða hvorki meira né minna en lýsing á öllum bókum, sem prentaðar hafa verið á íslenzku utan lands og innan eða eru eftir íslenska menn á 16. öld, öll með bókræðilegum skýringum og greinagerðum.

Það er gott til þess að vita, að úr því að vér Íslendingar höfum ekki sjálfir efni á að hlúa að bókmentaminjum sjálfra vor, svo sem skyldi, þá skuli þó útlendir menn vekjast upp og verða til þess að stofna söfn og sjóði, til þess að leggja þá rækt við þessar minjar, sem ella hver þjóð mundi telja sér ekki vansæmdarlaust að láta sjálf ógert. Landsjóði eða almannasjóðum sparast með þessu fé til þess að kosta þar til hæfa vísindamenn til slíkra rannsóknna um þessi efni, sem vel mega kallast heilagar minjar þjóðarinnar.

Fyrir framan sjálfa skrána er fróðlegur inngangur um prentsmiðjur, prentara og annað, seth að prentun lýtur á 16. öld. Hér er um svo merkt efni að ræða, að mér þykir hlýða að athuga þenna inngang nokkuð, áður en eg sný mér að sjálfri skránni.

Höf. getur þess (á bls. 1), að hið svo nefnda *Breviarium Nidrosiense* sé hin eina bók, er menn vita um með vissu, að

prentuð hafi verið á Íslandi fyrir siðskiftin á 16. öld. Það er að vísu svo, að menn þekkja ekki nú á tímum annað prentað rit frá þessum tíma en þetta *Breviarium Nidrosiense*, og þó raunar að eins tvö blöð úr því, þau er Isak Collijn, bókavörður í Stokkhólmi, skilgreindi fyrir fám árum. En samt þykir mér sem höf. hefði hér mátt geta þess, að heimildir eru fyrir því, að fleira hefir Jón biskup Arason prenta látið en þetta svo nefnda *Breviarium Nidrosiense*, og eru sumar þeirra heimilda góðar. Skál eg þar fyrst til telja vitnisburð eigi ómerkara manns en síra Torfa Jónssonar í Gaulverjabæ. Hann segir svo í ævisögu Brynjólfs biskups Sveinssonar, sem prentuð er í viðauka við biskupasögur síra Jóns prófasts Halldórssonar í Hítardal, II. bindi, en einnig sérstök, Reykjavík 1915 (sjá þar bls. 53), að Brynjólfur biskup hafi verið »kistulagður með hans N. T. Græco, Davíðs psaltara og Fjórum guðspjallamönnum, er biskup Jón gamli að Hólum lét útleggja og þrykkja, sem hans formáli útvisar, ef þar af finst nokkurt exemplar«. Vera má, að höf. hafi ekki veitt þessum stað athygli, enda er mér eigi kunnugt um nokkurt rit annað, er nefni þessa Nýja-Testamentis-þýðing, sem Jón biskup Arason hefir staðið fyrir og byrjað að láta prenta. En orð síra Torfa um þetta eru svo afdráttarlaus, að svo er að sjá, sem hann hafi sjálfur lesið bókina, er hann segir: »sem hans [þ. e. Jóns biskups Arasonar] formáli útvisar«; jafnframt þykir honum sem vafi muni leika á því, að nokkurt annað eintak sé til af bókinni en það, sem lagt var í gróf með Brynjólfi biskupi; þessu lýsa orð hans: »ef þar af finst nokkurt exemplar«. Bendir þetta til þess, að Brynjólfur biskup hafi á samfundum við vini sína og frændur sýnt þenna dýrgrip, og þá ekki sízt lofað síra Torfa, frænda sínum og nálega fóstursyni, að handleika bókina, og talið hana mjög fágæta í orðræðum við hann, ef ekki einkaeintak. Nú vita menn af frásögnum, hvílíkar mætur Brynjólfur biskup Sveinsson hafði á Jóni biskupi Arasyni, forföður sínum; um það ber öllum mönnum saman, sem ritað hafa um Brynjólf biskup, samtímismönnum hans og öðrum. Þess vegna má telja umrædd ummæli eða frásögu síra Torfa í Gaulverjabæ enn öruggari. Fátt gat þessum hálf-kaþólska afbragðsmanni, Brynjólfi biskupi Sveinssyni, verið kærara í gróf með sér en kaþólsk biblíuþýðing á íslenzku, prentuð að forlagi Jóns biskups Arasonar, þess manns, er Brynjólfur biskup mat mest allra mauna.

En engum mun dyljast það, hvert gildi það hefir í bókmenta-

sögu og kirkjusögu vorri, að kaþólskur biskup hefir látið prenta guðspjöllin áður en siðskifta-forsprakkarnir sýndu lit á því, áður en út kom þýðing Odds lögmanns Gottskálkssonar á Nýja-Testamentinu, eða þótt prentuð hafi verið, er Jón biskup Arason fekk vitneskju um það, hvað andstæðingar hans höfðu fyrir stafni, eða jafnvel þótt Jón biskup hafi færzt þetta í fang að nokkuru leyti af ötta við Kristján konung III., til þess að hlýða að nokkuru fyrir-mælum hans í kirkjuskipaninni, sem hann þó vildi ekki gangast undir. Það hefir jafnan verið ein höfuðmótbára andstæðinga kaþólskrar trúar gegn þeirri trú, jafnt hér á landi sem annarstaðar, að kaþólskir menn hafi haldið biblíunni leyndri fyrir alþýðu manna, alt til þess er Lúther og samherjar hans komu til sögunnar. Í öðrum löndum mótmælenda víða eru til biblíuþýðingar prentaðar í kaþólskum sið fyrir siðskiftin, og hér kemur nú fram svo sterk heimild fyrir því, að svo hafi einnig verið hér á landi, að telja má því nær óyggjandi.

En nú kynni menn að undra það, að þessi bók, guðspjalla-þýðing Jóns biskups Arasonar, og aðrar bækur, sem prentaðar hafa verið að hans forlagi, hefir verið jafnfágæt svo snemma sem á dögum Brynjólfs biskups Sveinssonar, eins og síra Torfi gefur í skyn. En þegar vér athugum framferðir siðskifta-forsprakkanna á 16. öld, þá getur þetta ekki fengið oss undrunar. Öllum er kunnugt um það, hve mikið far þeir gerðu sér um að uppræta allar minjar frá kaþólskum sið hér á landi, bæði myndir og bækur, ekki sízt alt, sem runnið var frá Jóni biskupi Arasyni. Í samræmi við gerðir þeirra má telja það nálega víst, að upplag þessa rits, guðspjallaþýðingarinnar, hafi verið ónýtt og öll þau eintök, sem til varð náð, ef ritið hefir verið komið út meðal almennings. En skiljanlegt er, að erfiðlega hafi þeim veitt að ná því eintaki, sem síðar var lagt í gróf með Brynjólfi biskupi, ef svo er, sem líklegt má þykja, að það hafi verið settargripur og gengið mann fram af manni í móðurætt Brynjólfs biskups. Mér þykir sennilegt, að einmitt þetta eintak hafi verið eign sjálfs Ara lögmanns, sonar Jóns biskups, en síðan hafi fengið það Helga dóttir Ara, er gift var Páli Jónssyni (Staðarhóls-Páli), en þeirra dóttir var Ragnheiður, móðir Brynjólfs biskups. Mun siðskiftamönnum hafa verið margt auðsóttara en að fá minjar Jóns biskups úr höndum þessa fólks.

Hér er um svo merkt atriði að ræða, að ekki verður þegjandi fram hjá því gengið, sízt þegar fyrir hendi er vitnisburður jafn-skilríks manns sem síra Torfa Jónssonar í Gaulverjabæ. En ef

Þessi frásögn síra Torfa er rétt, sem óþarft er að efa að raunalausu og alt mælir með í mínum augum, þá þykir mér eigi alls kostar varlega að orði kveðið hjá höf. í innganginum fyrir þessu riti (bls. II), þar sem höf. telur það auðsætt, að kaþólska flokkinum hér á landi á siðskiftatímanum á 16. öld hafi þótt gagnslítið að snúa sér til almennings á prenti til verndar trú þeirri, er landslýðurinn hafði fylgt. Hvað var það, sem vakti fyrir Jóni biskupi Arasyni, er hann kom prentsmiðju á stofn hér á landi? Mér skilst, að það hafi varla getað annað verið en það, að honum hafi verið auðsætt, hve máttugt vopn hér var um að ræða til verndar trú þeirri, er hann barðist fyrir og lét að lyktum lífið fyrir.

Það er annars meinlegt, hvað vér vitum nú lítið um hina fyrstu prentsmiðju landsins og bækur þær, sem hér voru prentaðar fyrir siðskiftin að forlagi Jóns biskups Arasonar. Fræðimenn úr flokki lútherskra kennimanna eru býsna ófróðir um þær bækur í ritum sínum, og til annarra fræðimanna en lútherskra er tæplega að leita um fræðslu í þessum efnum. Síra Jón Egilsson í Hrepphólum nefnir engin rit með ákveðnu nafni. Síra Arngrímur Jónsson á Mel nefnir að vísu rit, prentuð í tíð Jóns biskups Arasonar, en með svo óákveðnum nöfnum, að lítið verður á ummælum hans byggt annað en það, að fleiri rit hafa verið prentuð að forlagi Jóns biskups heldur en hið svo nefnda *Breviarium Nidrosienae* eitt («*Evangeliorum et epistolarum dominicalium lectiones . . . ad hæc odas aliquot sacras et manuale, quod dicunt, sacerdotum, ac præterea fortasse libellum unum aut alterum*», *Crymogæa*). Jafnóákveðin eru ummæli Bjarnar Jónssonar á Skarðsá (annálar hans við árið 1543), er hann getur þess, að í tíð Jóns biskups Arasonar hafi verið prentuð handbók presta, sunnudaga-guðspjöll og annað fleira. Að þessum ummælum, sem nú voru nefnd, hefir utg. vikið nokkuð í lýsingu þessa svo kallaða *Breviarium Nidrosiense* (á bls. 1—2 í skránni).

Það er hætt við því, að oss verði nú á tímum örðugt um að grafa upp, hverjar þessar bækur hafa verið, sem prentaðar hafa verið í tíð Jóns biskups Arasonar og að hans forlagi. Bréfabækur höfum vér nú engar frá hans tíð, né málðagabækur, né aðrar stólsbækur; (eignaskrá Hólastóls 1525, er Jón biskup Arason tók við stólnum, er þó í Sigurðarregistri). Eftirmenn hans og andstæðingar hafa sjálfsagt tekið óvægum höndum á öllu þess konar, eins og öðru, sem frá honum var runnið. Síra Sigurður Jónsson á Grenjaðarstöðum, sonur Jóns biskups Arasonar og tvívegis

kjörið biskupsefni, hefir samið skrá yfir eignir Hólastóls, bæði árið 1550, eftir fráfall föður síns, og árið 1569, eftir andlát Ólafs biskups Hjaltasonar. Þessi skrá er hið svo nefnda *Sigurðarregistur*, sem nú er geymt í Þjóðskjalasafni í frumriti á skinni, en vísá í eftirritum. Eg hefi farið yfir þessa skrá nokkuð gaumgæflega; þar eru bækur taldar upp meðal eigna, sem Hólastól fylgja, en, eins og venjulegt er um eignaskrár og úttektir kirkna, klaustra og biskupsstóla á þessum öldum, eru bækurnar svo ógreinilega tilfærðar, að sjaldnast verður séð, hvaða bók um er að ræða í hvert skifti, hvort prentuð sé eða í handriti, hvort útland sé eða innlend. Prentaðar bækur frá tíð Jóns biskups Arasonar gætu t. d. verið »Gudz spialla bok«, »Gudz spialla bok með pappír j norænu«¹⁾, »kanabok og handbok þijddar«, (þessar 2 bækur eru taldar meðal gripa, sem Jón biskup hefir lagt til Hóladómkirkju), og fleiri bækur, sem taldar eru upp í eignaskránni árið 1550. Sama máli gegnir um »gudz spialla bok messna oc pistla oc oratia de sanetis«, »4 libri evangeliorum et duo ex illis cum dominicalibus epistolis«, og nokkurar fleiri bækur, sem taldar eru upp í eignaskrá Hólastóls árið 1569. Að eins á einum stað í eignaskrá Hólastóls 1550 í *Sigurðarregistri* er nefnd bók, prentuð hér á landi; er þar auðsýnilega átt við *Breviarium Nidrosiense* og sagt, að 17 eintök þeirrar bókar séu eignastólsins (»xvij pappirs brefere prentud hier j landit.«). Í eignaskránni árið 1569 eru nefnd tvö eintök, að eg ætla (»Item j byskups sæti ij byskups brefere«); meira hefir þá ekki verið orðið eftir, hin sjálfsagt verið farin veg allrar veraldar.

Vera má, að áþreifanlegrar vissu um bókaútgáfu Jóns biskups Arasonar sé eigi nær að leita en í Rómaborg, í höllum páfans sjálfs; að minsta kosti er ekki ólíklegt, að Jón biskup Arason hafi sent páfa bækur þær, er hann lét prenta, og að þær sé að finna í bókasafni páfans.

Alt þetta efni er þess vert, að það væri tekið upp til ræklegrri rannsóknar en kostur er hér á þessum stað, og svo merkt, að ekki má algerlega ganga fram hjá því, þegar ræða er um prentuð rit vor á 16. öld.

A bls. III—IX í innganginum tekur höf. til meðferðar og

¹⁾ Altítt er á þessum dögum að kalla íslenzku norrænu, og svo gerðu jafnvel Íslendingar sjálfir.

rannsóknar það atriði, hvort prentsmiðjur hafi verið tvær samtímis hér á landi á fyrra hluta biskupsdóms Guðbrands biskups Þorlákssonar, prentsmiðjan á Núpufelli (gamla prentsmiðjan frá síra Jóni Mattíassyni) og ný prentsmiðja á Hólum, keypt frá útlöndum af Guðbrandi biskupi, eða prentsmiðjan hafi að eins verið ein, hin gamla prentsmiðja, aukin að letri og prenttækjum af Guðbrandi biskupi. Eldri höfundar, sem ritað hafa um þetta efni, síra Gunnar Pálsson (í *Typographia Islandica*, handrit í bókhöfðu konungs í Kaupmannahöfn, sem höf. hefir notað, en einnig er til hér í Landsbókasafni, Lbs. 75, fol.), og eftir honum Jón Borgfirðingur (í *Söguágrip um prentsmiðjur og prentara á Íslandi*, Rv. 1867) eru þeirrar skoðunar, að prentsmiðjurnar hafi verið tvær, frá því að Jón prentari Jónsson fekk prentsmiðjuleyfið og umráð Núpufells hjá konungi (1578) til 1593. Byggja þeir mest á þeim ummælum síra Arngríms Jónssonar í *Crymogæa*, sem höf. tilfærir neðanmála á bla. VII. En höf. tekur það réttilega fram, að orð síra Arngríms um þetta eru svo óákveðin, að í rauninni verður harðla lítið á þeim byggt um þetta atriði. Nú mun mega telja örugt, að á árunum 1578—1588 er engin bók prentuð á Núpufelli, heldur er alt prentað á Hólum, sem prentað er hér á landi um þetta árabíl, og má því telja vafalítið, að engin prentsmiðja hefir verið á Núpufelli um þann tíma. Hitt höfum vér svart á hvítu, að sálma bók er prentuð á Hólum árið 1589 og sama ár eru prentuð á Núpufelli *Summaria yfer þad Nyia Testamentid*. Þetta verður tæplega skýrt á annan veg en þann, að annaðhvort hafi prentsmiðjan verið flutt frá Hólum til Núpufells þetta ár, eða að prentsmiðjurnar hafi verið tvær þetta ár og nokkurn tíma á eftir (til 1591 eða 1593—1594). Höf. kemst að þeirri niðurstöðu, að prentsmiðjan muni hafa verið flutt til Núpufells þetta ár (1589) og að hún hafi verið þar til 1593, en það ár er víst, að lokið er með öllu sögu Núpufells í bókmentum landsins á þessum öldum. Það er margt, sem mælir með þessari skoðun höf. Fyrst og fremst það, að enginn munur virðist vera á letri Núpufells-bóka og bóka, sem áður höfðu verið prentaðar á Hólum. Í öðru lagi er það undarlegt, að Guðbrandur biskup skuli láta prenta á Núpufelli *Summaria yfer þad Nyia* (1589) og *Gamla* (1591) *Testamentid*, ef hann hefir sjálfur haft á stólnum aðra prentsmiðju við höndina, enda Guðbrandur biskup að allra dómi svo hagsýnn, að tæplega mundi hafa lagt í þann kostnað, sem óþarfur virðist með öllu, að halda

uppi tveim prentsmiðjum í senn svo nálægum. Miklu er líklegra, líkt og höf. tekur fram, að Jón prentari Jónsson hafi haft bú á Núpufelli, sem konungur hafði veitt honum, og hafi hann kunnað því illa að vera fjarri búi sínu; hafi því Guðbrandur biskup lokað eftir langvint nauð í Jóni látið það eftir honum að flytja prentsmiðjuna til Núpufells; en er Guðbrandur biskup fann, hver óþægindi voru að því að hafa prentsmiðjuna svo langt í burtu frá sér, hafi hann keypt hluta Jóns prentara í prentsmiðjunni árið 1593 (eða 1594) og flutt hana aftur til Hóla um það leyti og tekið Jón algerlega í sína þjónustu með ákveðnu kaupi, eða Jón algerlega horfið frá búskap. Í þessu sambandi er það athyglisvert, að eftir 1594 stendur ekki nafn Jóns prentara á Hóla-bókunum, og var hann þó prentari þar til dauðadags (1616). Síra Gunnari Pálssyni og Jóni Borgfirðingi þykir sem þessi flutningur á prentsmiðjunni fram og aftur sé lítt hugsanlegur; en bæði gætu legið til flutningsins þær orsakir, sem nú voru nefndar, og í annan stað hefir prentsmiðjan sjálfsgat ekki verið margbrotin né erfið í flutningi.

En þótt skoðun höf. hafi við margt að styðjast og þótt vér þekkjum ekki nú nokkura bók, sem prentuð sé á Hólum á árunum 1590—1593, þá reukum vér oss samt á ummæli skilríkra manna um það, að bækur hafi verið prentaðar á Hólum árið 1590. Bæði Finnur biskup Jónsson (í kirkjusögu sinni, Hist. Eccl. Isl. III. bindi, bls. 234, nr. 18 og 19) og Hálfðan rektor Einarsson (Sciagraphia, bls. 234 og 238) geta um tvær bækur, sem prentaðar hafi verið á Hólum þetta ár og nefna þær, þ. e. Musculi bænaabók og Hræðeleg harmaklögun fordæmdra í helvíte. En þótt ekki hafi tekizt að rekja þessa síðar nefndu bók til útlendra rita, ef þýdd hefir verið úr útlendu máli, og þótt titillinn minni á eina fyrirsögn í Fimtan lijkpredikaner eftir Spangenberg (1594) og sé óvenjulegur eða ólíklegur sem aðalfyrirsögn rits (sbr. þó E. Winter: Eirn liitell Sermon vm Helvijti, og Kualer þeirra Fordæmdu), þá er hér samt um svo merka vitnisburði að ræða, að óvarlegt er að virða þá að vettugi. Hér við bætist það, að dr. Jón Þorkelsson, þjóðskjalavörður, sem allir vita, að er manna glöggvastur á þessi efni, segir í bréfi til sjálfs Fiskea, sem höf. og vitnar í (sjá bls. 40—41 í skránni), að hann hafi í ungðæmi sínu (á árunum 1876—1878) séð Hræðelega harmaklögun fordæmdra í helvíte, 1590, austur í Skaftafellssýslu; en er hann vildi fá bókina síðar, hafi hún eigi verið til lengur, hafði

verið brend. Dr. Jón Þorkelsson nefnir hér eigi prentastaðinn, en hins vegar er hann svo á legg kominn um þetta leyti (17 ára árið 1876), að víst má telja, að hann hafi munað rétt titilinn, sem einnig er býsna einkennilegur og má vera minnistæður öllum, sem sjá. Ef því vitnisburðir þessara mætu manna eru réttir og ef prentstaður fyrr nefndra bóka hefir verið á Hólum, þá er tæplega um annan kost að ræða en að prentsmiðjurnar hafi verið tvær samtímis um hríð og sameinast aftur árið 1593 (1594). Að öðrum kosti er ekki um annan meðalveg að ræða en þann, að sum tæki prentsmiðjunnar hafi verið á Hólum, en sum á Núpufelli um tíma, og kylfa hafi ráðið kasti um það, hvor staðurinn hafi verið settur á bækurnar sem prentstaður. Þessi tilgáta er að vísu ekki mjög líkleg, og ekki hefi eg séð henni haldið fram, en ekki er það samt með öllu óhugsanlegt, að Guðbrandur biskup hafi leyft Jóni prentara að hafa t. d. pressuna (eða lettrið) á Núpufelli þetta umrædda árabil. Ef það er rétt, að Jón prentari hafi með sjö sveinum unnið að prentun biblíunnar, eins og síra Arngrímur Jónsson segir í *Crymogæa*, þá er ólíklegt, að Jón hafi þurft að sinna öðrum prentstörfum hin síðari árin en þeim, sem vandasömust voru, og þá einkum hafa á hendi »þrykkinguna«, ef til vill. Og ekki verður séð, að mikil óþægindi hafi verið samfara því að flytja t. d. leturarkirnar leiðréttar frá Hólum að Núpufelli (eða vice versa), eigi meira óhagræði, nema minna sé, en ef alt hefði verið í senn á Núpufelli, prentsmiðjan og lettrið; með þeim hætti hefði þurft að ganga því nær daglega póstur frá Hólum til Núpufells með handrit og prófarkir frá Guðbrandi biskupi. Þó vil eg ekki neitt fullyrða um þetta, heldur að eins benda á þessa leið, að hún væri ekki alveg óhugsanlegur millivegur, svo framarlega sem til fulla færðust sönnur á það, að vitnisburðir fyrr greindra manna væru réttir og að bækur hefðu verið prentaðar á Hólum þetta ár (1590) eða þau ár, sem bækur voru og prentaðar á Núpufelli.

Nú þótt margt mæli með skoðun höf. um prentsmiðjuna, meðan ekki er fengin full sönnun um prentun á Hólum um þetta árabil (1590—1593), þá þykir mér samt að öðru leyti sumt athugavert, sem höf. heldur fram í þessum kafla inngangsins.

Á bls. IV—VI ræðir um útvegu Guðbrands biskups, þessa mikilvirka manns, til þess að fullkomna prentsmiðjuna. Í því skyni ritar hann vini sínum, Páli Madsen Sjálandsbiskupi, bréf, og er það prentað í kirkjusögu Finns biskups Jónasonar (*Hist. Eccl. Isl.* III. bindi, bls. 373—374). Finnur biskup telur (l. c. bls. 372—373),

að bréfið sé ritað 1573. Bréfið er að finna í bréfabók Guðbrands biskups í safni Árna Magnússonar (AM. 241, a, 4to., bls. 49—52). Á því er hvorki dagsetning né ártal, og er þetta, því miður, oft svo í bréfabókum Guðbrands biskups. Þó hygg eg, að þetta bréf sé rétt árfært af Finni biskupi. Í bréfi þessu biður Guðbrandur biskup um pappír og svertu til prentunar. Síðar í sömu bréfabók (bls. 100 o. s. frv.) ritar Guðbrandur aftur Páli Sjálandsbiskupi, og stendur þar við talan 74, sem vafalaust táknar ártalið 1574. Þetta bréf er einnig prentað í kirkjusögu Finns biskups (Hist. Eccl. Isl. III. bindi, bls. 387—390), en ekkert sé eg í því, sem beint varði þetta mál. Síðast í þessu sama bindi bréfabóka Guðbrands biskups (bls. 163—165) er bréf það til Páls Sjálandsbiskups, sem Finnur biskup hefir prentað í kirkjusögu sinni (Hist. Eccl. Isl. III. bindi, bls. 374—375) og höf. hefir prentað upp kafla úr (neðanmals á bls. V). Þetta bréf er ekki dagsett. Finnur biskup ætlar, að það sé ritað árið 1575 (sbr. Hist. Eccl. Isl. III. bindi, bls. 372—373). Þar á móti hallast höf. að því, að bréfið sé ritað 1574. En þessi skoðun höf. held eg, að geti ekki verið rétt. Höf. hefir sjálfsagt skotizt yfir það, að í fyrra kafla bréfsins þakkar Guðbrandur biskup Páli Sjálandsbiskupi fyrir sendinguna á Saxo (»... Saxonem accepi et ago gratias«). Hér getur ekki verið að ræða um annað en að Páll Sjálandsbiskup hafi sent Guðbrandi biskupi prentað eintak af Saxo Grammaticus, en einmitt árið 1575 gaf Anders Sørensen Vedel Saxo út í fyrsta sinn Af þessari ástæðu getur bréfið ekki verið frá 1574. En eg efast einnig um það, að rétt sé að árfæra það til ársins 1575, eins og Finnur biskup gerir. Mér þykir eftir atvikum líklegast, að bréfið sé ritað 1576. Til þess ber það fyrst og fremst, að bréfið er seinast í bréfabókinni, einmitt með bréfum, sem flest eru frá árinu 1576, þau er næst eru, og enn hitt, að næsta bindi bréfabóka Guðbrands biskups (AM. 241, b, 4to.) byrjar árið 1577. Í annan stað tel eg einmitt það mæla með því, að bréfið sé ritað árið 1576, sem höf. telur mæla með því, að það sé ritað 1574. Guðbrandur biskup segir sem sé í bréfinu, að hann hafi látið¹⁾ (»curavi«) prenta nokkura bæklinga það ár, en að pressan (»torcular«) hafi bilað af elli, áður en prentarinn hafi getað lokið við verkið. Prentun á Lífsins vegi eftir Niels Hemmingsen hefir þá verið lokið, og þessir bæklingar (»libelli«), sem Guðbrandur biskup nefnir, hygg eg

¹⁾ ekki byrjað („begun“) á að prenta, eins og höf. segir (bls. V^o).

því, að einmitt og einungis séu kver þau, er prentuð voru á Hólum snemma árs 1576 (Pfeffinger: Um Mannsins Riettlæting fyre Gude, Spangenberg: Einn huggunar Bæklingur og Af Christiligum Riddaraskap og Palladius: Vm Domadag). Svo virðist sem pressan hafi þá ekki bilað fyrr en prentun þeirra bæklinga hefir verið að mestu lokið, í seinustu örk þeirra, enda er ekkert í bréfi Guðbrands biskups, sem geti verið því til fyrirstöðu, að orðin megi skilja svo, heldur þvert á móti mælir orðalagið með þeim skilningi (»sed anteqvam finem operi impressor fecisset«), en prentun bæklinganna er dagsett 17. febr. 1576 á Hólum. Þetta ár hygg eg, að Jón prentari Jónsson hafi farið utan, sendur af Guðbrandi biskupi, og hafi hann dvalizt utanlands 1576—1577 (en ekki 1574—1575, eins og höf. heldur) í erindum prentsmiðjunnar, meðal annars í undirbuningi biblíuprentunarinnar, sem Guðbrandur biskup tekur nú að leggja allan hug á. Einmitt næst þessu oft nefnda bréfi Guðbrands biskups til Páls Sjálandsbiskups er gerningur eða minnisgrein Guðbrands biskups um það, að Jón Jónsson (sem vafalaust er Jón prentari) veðsetji honum X^c. í Akureyjum á Breiðafirði fyrir 30 góðum Jóakimsdölum, er biskup lánar Jóni, gegn því að Jón leysi þenna jarðarpart til sín með 30 dölum, þegar »hann apturkiemur«, þ. e. úr utanlandsförinni, en til hennar hefir Jón þurft að hafa fé í reiðusilfri, sem skiljanlegt er. Guðbrandur biskup hefir einmitt um þessar mundir haft sterkan hug á því að hefja útgáfu biblíunnar og búið sig undir það eftir föngum. Í bréfi til Páls Sjálandsbiskups árið 1578, sem prentað er í kirkjusögu Finns biskups (Hist. Eccl. Isl. III. bindi, bls. 390—393), en finna má í bréfabók Guðbrands biskups í Árnasafni (AM. 241, b, 4to., bl. 24 o. s. frv.), segir Guðbrandur biskup, að allar sínar litlu tekjur fari í það að prenta biblíuna. Í þessari för hefir Jón prentari líklega útvegað sér konungsbréf fyrir Núpufelli, en þó sennilega verið farinn til Íslands, áður en það var gefið út (5. mars 1578), úr því að hann prentar Jónsbók 1. maí 1578. Eg er samþykkur höf. um það, að orðin í konungsbréfinu, »thenne breffvissere Jon Jons-son«, sýna alls ekkert um það, að Jón prentari hafi verið utanlands í þann tíma, er bréfið var gefið út.

Ef til vill mætti finna eitthvað meira um þetta efni alt saman með því að fara vandlega yfir allar bréfabækur Guðbrands biskups, bæði þær, sem eru í safni Árna Magnússonar, 3 bindi (AM. 241—242, 4to.), og þær, sem geymdar eru nú í Þjóðskjalasafninu hér,

Önnur 3 bindi (minnisbækur, reikningabækur og bréfabækur). Eg hefi að eins lauslega farið yfir þær, en þær eru svo úr garði gerðar, að hæglega getur leynzt þar ýmislegt við hraða yfirferð.

Þá skal eg snúa mér að sjálfri bókaskránni, sem tekur yfir 72 bls. Hún nær yfir allar bækur, sem prentaðar hafa verið á Íslandi, eða á íslenzku eða eftir íslenzka höfunda á 16. öld. Í henni er lýst 49 bókum eða útgáfum, sem allar hafa verið prentaðar á Íslandi, að sjö fráskildum; þar að auki er getið um eitthvað 18 aðrar bækur eða útgáfur, en af þeim er að eins vissa um fjórar, að til hafi verið, en skýrslur um hinar eru óljósar og ónógar. Öll skráin er með smálettri, nema sjálfir titlarnir, og má af því ráða, er bækurnar eru ekki fleiri, að til lýsingarinnar muni flest tínt, það er um bækurnar er unt að segja bókfræðilega. Vænta má, að síðar meir kunni eitthvað að koma upp úr kafinu um þær bækur, sem vér höfum óljósar sagnir af, eða að eintök finnist af þeim, annaðhvort heil eða brot, ekki sízt má vænta þess eftir að þessi skrá er komin út, sem gerir alla skilgreining á 16. aldar bókum miklu auðveldari en ella mundi og áður var, bæði með þeim greinilegu lýsingum bókanna, sem þar finnast, og með myndunum, en þær eru þar 5 tals sérstakar, sem sé af titilblaði Nýja-Testamentis-þýðingar Odds Gottskálkssonar, 1540, af titilblaði handbókar Marteins biskups Einarssonar, 1555, af titilblaði sálmabókar Gísla biskups Jónssonar, 1558, af titilblaði þýningarprédikana Corvíns, 1559, og af titilblaði guðspjallabókar Ólafs biskups Hjaltasonar, 1562. Þar að auki eru prentaðar í textanum myndir úr Guðbrands-biblíu (2 upphafsstafir, mynd af Páli postula og bókaknútur), úr sálmabókinni, 1589, (merki Íslands), Lúthersmynd, sem prentuð er í mörgum Hóla-bókum, titilblað af Calendarium 1597, 1 mynd úr Passionali 1598, 2 myndir úr Biblia Laicorum, 1599, og 1 bls. úr Huggunar-bæklingi Steibers, 1600. Höf. skrárinnar hefir auk Fiskes-safns rannsakað öll hin helztu bókasöfn á Norðurlöndum, sem hafa að geyma íslenzkar bækur (Landsbókasafnið í Reykjavík, bókhöfuð konungs og háskólabókasafnið í Kaupmannahöfu), auk bókasafnsins í Uppsölum, en þar fyrir utan einnig stuðzt við athuganir Fiskes sjálfs, sem eru nákvæmar, með því að hann var beinlínis sérfræðingur í þessum efnum, hafði gert þetta að ævistarfi og leit eftir þessu hvarvetna þar sem hann fór um. Frá Fiske eru komnar þær skýrslur um íslenzkar bækur, sem finnast í Bodleian Library í Oxford og í skránni eru. Það má því fyrir fram gera ráð fyrir því, að í skrána sé alt saman komið, sem um bækurnar er að segja

bókfræðilega, alt, sem að bókunum lýtur hið ytra; höf. er svo kunnur bókfræðingur, að nafn hans eitt er í rauninni næg trygging fyrir því.

Eg hefi að eins fáar athugasemdir að gera við þessa skrá, og þær eru hvorki stórvægilegar né rýra á nokkurn hátt gildi ritsins.

Á bls. 3₆ getur höf. þess, að Oddur Gottskálksson hafi gefið út Nýja-Testamentis-pýðing sína á sjálfs sín kostnað. Þetta er mjög líklegt, með því að í bréfa- og minnis-bók Gizurar biskups Einarssonar má finna skilagreinar fyrir skuldaskiftum þeirra biskups og Odds, þar sem Gizur biskup er skuldskeyttur við hann út af Testamentiseintökum, sem hann hefir af honum keypt. Að minsta kosti má af þessu ráða, að Gizur biskup hefir ekki sjálfur kostað útgáfunna, þótt hann hafi stutt hana á annan hátt.

Á bls. 4¹⁰ getur höf. þess, að eitt eintak sé af Nýja-Testamentis-pýðingu Odds Gottskálkssonar, 1540, hér í Landsbókasafninu. Þetta er ekki rétt; þar eru 3 eintök, en ekkert heilt, og upp úr þeim öllum fæst ekki alveg heilt eintak (vantar þó að eins eitt blað).

Á bls. 5²⁶ er þess getið, að Landsbókasafnið hér eigi 3 eintök af Corvíns-postillu, 1546, er öll séu óheil. Eg hefi ekki getað fundið, að til væri hér nema eitt brot af fyrra partinum og tvö slitur af síðara partinum, sem þó má fylla saman, svo langt sem þau ná.

Í 2. neðanmálsg. á 5.—6. bls. getur höf. þess, að Oddur Gottskálksson muni hafa þýtt eða hafi ætlað að þýða 3. bindi Corvíns-postillu, sem hefir að geyma útleggingar yfir sunnudagapistla og hátíðisdaga árið um í kring; dregur höf. þetta af orðum Odds sjálfs í formálanum fyrir Corvíns-postillu. Eg held, að þetta sé ekki alveg rétt. Oddur hefir ekki á þessum stað átt við þýðing eftir sjálfan sig, heldur þýðing, sem Gizur biskup Einarsson hafði gert þá fyrir nokkurum árum og Oddur hefir sjálfsagt vitað um. Það kemur skýrt fram í bréfabók Gizurar biskups í skrá um bækur, er hann hefir haft með sér í utanlandsför sinni héðan árið 1542 (sjá Dipl. Isl. XI. bindi, bls. 190—192), að hann hefir þýtt þessa bók og haft hana með sér utan í handriti. Þar stendur (Dipl. Isl. bls. 191): »Item postillam coruini de sanctis quam ego transtuli«.

Á bls. 10¹⁹⁻²¹ er getið um heimild fyrir því, að handbók og sálmaþók Marteins biskups Einarssonar sé í safni Jóns Sigurðsson-

ar hér í Landsbókasafninu. Ekki hefi eg fundið þá bók hér og mér vitanlega hefir hún aldrei verið hér til.

Á bls. 23²¹. Eintak Laudsbókasafnsins af Jónsbók, 1578, er ekki alveg heilt. Í það vantar bl. V: 6—7, sem eru skrifuð.

Á bls. 27 (Jónsbók, 1580) hefir fallið burt að geta þess, að eitt eintak þeirrar útgáfu er til í Landsbókasafninu, prentað á pappír, (titilblaðið með svörtu og rauðu).

Á bls. 32 (í lýsingu Guðbrands-biblíu) stendur, að sagt sé, að upplag biblíunnar hafi verið 1000 eintök. Þetta mun ekki vera rétt. Samkvæmt »Minnisbók Guðbrands biskups 1478—1594«, sem nú er í Þjóðskjalasafni, hefir upplagið verið 500 eintök. Þetta er ritað með eiginhendi Guðbrands biskups sjálfs (neðst á bls. 239 í minnisbókinni), og er klausan á þessa leið: »S[umma] S[umma-rum]: Numerus exemplarium biblicorum. v^o. tizræd enn tolfærd iij^o. og xx betur«. Í þessari minnisbók er ýmislegt að finna um biblíuna, einkum sölu hennar. Þar er og nokkuð um aðrar forlagsbækur biskups, en fátt merkt annað en um sálmaðókina, sem höf. hefir notað sjálfur (sjá bls. 36 neðan til). Á bls. 238 er skilagrein um biblíur, sem Guðbrandur biskup hefir gefið fátækum kirkjum. Á bls. 260 er skrá um biblíur, sem Guðbrandur biskup hefir látið binda inn (eins konar kvittanir til bókbindarans). Eftir því sem þar stendur, hefir Guðbrandur biskup látið binda inn hér samtals 250 biblíur, þar af 3 gyltar, »og ad auk ein forgyllt«. Neðst á þessari bls. stendur: »S[umma] S[ummarum]: tvo hundrut tolfærd bundit, med iij. gylltum vtan a spiolldum, auk hin eina [þ. e. hin »for-gyllta«]. Item enn ad auk bundnar x bibliur«. Þessar biblíur hafa verið bundnar inn árið 1585, að minsta kosti stendur það ártal yfir þessari bls. En auk þessa hefir Guðbrandur biskup látið binda inn biblíur utanlands, og kemur það heim við ummæli síra Arngríms Jónssonar í Crymogæa (sem tilfærð eru á 34.—35. bls. í skránni). Talan hjá Arngrími er þó sjálfsagt ekki rétt; hjá honum stendur 100, en á vafalaust að vera 1^o. (það er 120, eitt tólfrætt hundrað). Þetta má sjá af fyrr nefndri »Minnisbók Guðbrands biskups 1478—1594«, bls. 284. Þar stendur: »anno 1589. komu vt bibliur med Donskum ellefu tijger og vij«; þær 3, sem vantar á 12 tugi, hafa sjálfsagt verið óheilar eða skemzt eða orðið eftir utanlands af öðrum ástæðum. Á bls. 236 í margnefndri »minnisbók« er skrá um bókbandsstæki, sem Guðbrandur biskup hefir keypt af hinum út-lenda bókbindara, sem hann hafði við biblíuna og síra Arngrímur Jónsson getur um, (l. c.), og hafa þau kaup farið fram árið 1586.

Hefir þá líklega hinn útlendi bókbindari farið burt héðan af landi, en Jón Arngrímsson tekið við bókbandinu (sbr. bls. 36 í skránni).

Á bls. 417. Meðal heimilda, sem geta um útgáfu á Lækning sálarinnar eftir Urbanus Rhegius, hefði höf. hér átt að sagt um síra Gunnar Pálsson (Typographia Islandica), handrit, sem höf. hefir notað annarstaðar í bók sinni; þar er nokkuð greinilega sagt um bókina. Þar stendur svo: »In annali præterea hominis diligentis et curiosi ad annum 1591. scriptum reperio: Pryckt ä Nupufelli Antidotum vel Medicina animæ (Sálarinnar Lækning) Auctore Urbano Regio utlagt af Hr. Gudbrande, in octavo« (sjá Gunnar Pálsson: Typographia Islandica í handritasafni Landsbókasafnsins, Lbs. 75, fol., bls. 14.).

Á bls. 43 ofan til hefir höf. prentað kafla úr Specimen Islandiæ non barbaræ eftir Jón Þorkelsson (Thorkillius) um Sigurð rektor Stefánsson. Mundi ekki »cultiore« (í 9. línu a. o.) eiga að flytjast aftur fyrir »ingenio« (í næstu línu)?

Bls. 46³¹⁻³³. Það er víst vafalaust, að Grallarin, 1594, er bygður á Niels Jespersens Gradual, 1573. Eg fæ ekki betur séð við nokkuð hraðan samanburð en að Guðbrandur biskup hafi beint sniðið sinn grallara eftir þessum danska grallara, bæði tekið úr honum söngnótur og þýtt sálma eftir honum, þótt allmiklu sé slept, sem er í Jespersens grallara, en sumt af því er þó tekið upp í næstu útgáfum hins íslenska grallara, ásamt leiðréttingum villna, sem voru í þessari fyrstu útgáfu, í samræmi við graduale Jespersens. Hér er ekki rúm til að setja nákvæman samanburð um þetta. En víst er það, að Páll Sjálandsbiskup sendi Guðbrandi biskupi graduale Jespersens, því að Guðbrandur biskup þakkar honum þá sending í bréfi árið 1574 (sjá kirkjusögu Finns biskups, Hist. Eccl. Isl. III. bindi, bls. 389).

Á bls. 54₃ stendur, að þrjú eintök þekkist nú af Calendarium Guðbrands biskups (1597). Hér má setja fjögur eintök, því að eitt eintak er í Landsbókasafninu hér, auk þeirra, sem þarna eru talin upp.

Á bls. 56¹⁹. Landsbókasafnið á tvö heil eintök, en ekki eitt, af Fimtan Lijkpredikaner eftir Spangenberg (1598).

Á bls. 57₉. Tvö heil eintök, en ekki eitt, eru í Landsbókasafninu af Passionali (1598).

Á bls. 62. Við Lijfs Wegur eftir Niels Hemmingsen (1599) hefir höf. láðst að geta þess, að tvö eintök þeirrar bókar eru til í Landsbókasafninu.

Á bls. 63¹⁴⁻¹⁵. Tvö heil eintök, en ekki eitt, eru hér í Landa-bókasafninu af Eintali sálarinnar (1599), og að auki eitt eintak óheilt.

Í viðauka (bls. 67—68) hefir höf. lýst Catechismus þeim með myndum, sem Chr. Bruun og aðrir eftir honum hingað til hafa árfært til prentunar 1576. Kemst höf. að þeirri niðurstöðu, að Catechismus þessi muni ekki vera prentaður 1576, og ekki fyrir 1599, ef til vill ekki fyrr en á öndverðri 17. öld, og þá eftir atvikum líklega 1617. Eg sé ekki betur en að höf. muni hafa rétt fyrir sér í þessu.

Öllum bókasöfnum og bókasafnendum, er safna íslenskum bókum, er þessi bók hinn mesti fengur, vegna þess hve vel hún léttir fyrir með skilgreining á bókum frá 16. öld. Einnig þeim, sem leggja stund á bókmentasögu Íslands, er bókinn nauðsynleg, vegna þess hve þar er saman komin ítarleg greinagerð á öllu því, er bækurnar varðar hið ytra, bendingar um það, úr hverjum málum og eftir hverjum bókum og útgáfum bækurnar eru þýddar o. s. frv. Vér Íslendingar megum kunna bæði Fiske og höf. þakkir fyrir það alúðarstarf, sem þeir hafa lagt fram í þarfir bókmenta vorra bæði í þessu riti og öðrum, sem frá höndum þeirra eru runnin.

Bókin er prýðilega gefin út, eins og allar bækur í *Islandica-safninu*, og með þeirri vandvirkni og samvirkusemi, sem einkennir alt, er út hefir komið frá hendi þessa höf. (Halldórs Hermannssonar). Eg hefi að eius rekizt á þessar prentvillur:

Bls. I. (neðaumálsgr.) Gl. kgl. Saml., á að vera Ny kgl. Saml.

— V² pamphets, á að vera pamphlets.

— 1²⁴ Nidrosiensi, á að vera Nidrosiense.

— 1³⁰ some, á að vera som.

Af skiljanlegum ástæðum get eg ekki sagt um, hvort Riddaskap á bls. 21⁶ er prentvilla í skránni eða frumritinu.

Páll Eggert Ólason.

Gunnar Gunnarsson: *Varg í Véum*. Roman. Gyldendalske Boghandel. København og Kristiania MDCCCXVI.

Gunnar Gunnarsson: *Smaa Historier*. Gyldendalske Boghandel N. F. MDCCCXVI.

Gunnar Gunnarsson er mikilvirkur. Hann lætur skamt bóka á milli. Fyrir skömmu er komin hingað á markaðinn ný saga eftir hann, er hann kallar »Varg í véum«, allálitleg að lengd, 278 bls. Samtímis kemur út önnur bók eftir hann, uokkrar smásögur, 164

bls. Það verður geysimikið bókasafn, er eftir hann liggur, ef hann heldur svo áfram, unz hann kemst á áttæðisaldur.

Hamingjan forði mjer frá að flytja slíkum andans manni og skáldi sem G. G. nokkra prédikun um vinnubrögð hans. En eg fæ ekki varist að geta þess, að eg óttast slíkar hamfarir. Og það er lestur seinustu sögu hans, sem veldur þessum ótta mínum.

»Vargur í véum« jafnast hvorki á við »Gest eineygða« né »Livets Strand«. Hann hitar oss ekki eins um hjartarætur hér og hann gerði í »Gesti«. Hann nær ekki slíkum samúðartökum á oss hér og hann náði þar, enda þykir mér »Gestur eineygði« með beztu bókum, er eg hefi lesið, og fáar sögur man eg betur en hana. Og í þessari seinustu sögu hans birtist hvergi eins máttugur andi og í sumum tilþrifum hans og tökum í »Livets Strand«. Skáldið dottaði þar stundum að vísu. En alt fyrir það virðist mér hún næsta stórfengleg bók.

»Vargur í véum« er Reykjavíkursaga, eins og »Sálin vaknar«. Er það furðumikið í fang færst af höf., er hann lætur söguna gerast hér, ekki kunnugri en hann er Reykjavíkurlífinu, enda ber sagan nokkur merki þessi. Hann lýsir ekki stjórnarráðinu hér, að ætlan minni, nema að nafninu til, er hann segir frá stjórnarskrifstofunum. Og danskir ritdómarar hlaupa illilega á sig, ef þeir halda, að Reykjavík lifi alstaðar í þessum lýsingum, og að þeir kynnist gerla menning og almennu ástandi lands vors á sögum hans. Því er samt ekki að leyna né neita, að ýmsu hefir höf. veitt glöggva eftirtekt þenna stutta tíma, er hann dvaldist hér. Það er t. d. vel til fundið, er hann lætur lögregluna koma ofseint á vettvang, er hennar er leitað. Og margt segir hann satt um bæjarlífið hér.

Aðalhetja bókarinnar, Úlfur Ljótsson, er og á að vera vargur í véum þjóðfélagsins, drykkjumaður og ógæfumaður, sem fer forgörðum með andlega hæfileika sína og þrek. Gæfan er, samkvæmt hugsun hans, fólgin í stjórn á sjálfum sér. Það skortir Úlf. Hann kann sér því ekki hóf, hvorki í hörmum né gleði, og á honum sannast hið fornkveðna, að »skömm er óhófs æfi«. En lesendunum er oflítið nýnæmi að honum. Oss hefði runnið örlög hans meir til rifja, ef hann hefði verið frumlegar gefinn af hálfu skapara síns. Hann er heldur skynsamur — ekki hótinu meira, svo að örðugt er að skilja álit það, er höf. virðist hafa á honum. Kvæði hans eru veigalítil, þau er vér heyrum, og samsætisræða hans hrífur oss ekki, bregður engri nýrri birtu yfir siðspilling í stjórnmálunum hér heima. Oss þykir hann ekki girnilegur til fróðleika.

Tvær söguhetjur bókarinnar eru ágætar, presturinn, faðir Úlfs, og ráðherradóttirin. Séra Ljótur er í senn manugerð föðurst, sem hún ætti að vera, en sjaldnast er, og fyrirmyndarprestur, fullur umburðarlyndis og mannkærleika. Góðskáldin ætti að skapa fleiri slíkar fyrirmyndir, skapa þannig menn framtíðarinnar. Þessar tvær persónur fynast traúðla góðum lesendum. Þær eru andlegur gróði vor á lestri bókarinnar.

Smásögurnar eru flestar ekki efnismiklar, en vel sagðar. Gunnar Gunnarsson er frjór. Honum verður alt að yrkisefni. En það er heldur dimt yfir lífinu í þessum smásögum. Íslendingum, er dveljast langvistum ytra, finst heldur fátt til um ástandið hér heima, einkum andlega menning vora. Eg held, að lýsingar Gunnars Gunnarssonar beri menjar þess, að hann er alinn upp í firði á Austurlandi. Fyrir 10 árum dvaldi eg þrjá mánuði í einum firðinum þar og kyntist þá Austfjörðum að nokkru. Og mér blöskraði menningin og alt ástandið þar. Mig hafði ekki dreymt um, að svo léleg verzlun væri til hér á landi sem þar. Eg verð þó að skilja Seyðisfjörð undan. En einhver sagði mér þá, að hvergi væri verzlunarástaudið eins hörmulegt og í Vopnafirði, þar sem Gunnar Gunnarsson er alinn upp. Og þá er eg las »Livets Strand«, rifjaðist ýmislegt upp fyrir mér, er eg sá eystra og kannaðist við. Eg ætla t. d., að lýsingin þar á fiskverkuninni og hjali fólksins við hana fari ekki sanni fjarri. Og þá er eg sá menn slæpast fyrir framan búðarborðin, datt mér oft í hug það, sem Þorsteinn Erlingsson kveður í Eden, að manni myndi ofbjóða að

»sjá þennan skjógrandi horgrinda hóp
með hungruðum kýraugum stara«.

Eg smíðaði mér, að skáldið (P. E.) hefði haft líf og lífsskjör í austfirzku kaupúni í huga, er hann orti þessi vísuorð.

Ýmsir ámæla höf. fyrir, að hann lýsi ekki rétt menning og lífi hér á landi, og það gerir hann ekki a l m e n t. En hann segir ef til vill að mestu rétt frá ástandinu í sveit einni austan lands, eins og það var á uppvaxtarárum hans. Og þess verður að gæta, er kveða á upp dóm um veruleik þeirra.

S. G.

Fr. Schiller: Mærin frá Orleans, sorgarleikur, 193 bls. 8 blbr. — Þýtt hefir Alexander Jóhannesson, Dr. phil. Reykjavík 1917. Bókaverzlun Sigfúsar Eymundssonar.

Lítil þjóð hefir eigi minni þörf góðra bóka, en hinar stærri,

og bókmentir smáþjóða þurfa að vera jafnfjölskrúðugar sem hinna. Þessu ræður þörf einstaklingsins. Nú er það auðsætt, að svo fámennt þjóð sem vér erum, Íslendingar, þá er þess eigi von, að vér höfum þá gnótt góðra og ágætra rithöfunda á öllum sviðum, að þeir geti fullnægt lestrarþörf þjóðarinnar.

Vér verðum því að afla oss nokkurs af hinum mikla bókmenta-
arði annara þjóða. En alþýða nýtur eigi þess auðs, nema bókun-
um sé snúið á íslenska tungu.

En tvenns er að gæta um þýðingar, þess fyrst, hvað þýtt er, og hins þá, hvernig það er gert.

Vér eigum sjálfir nóg af miðlungsritum og þaðan af lakari, og er því sízt á það bætandi. Á hitt er að líta, að vér eigum fátt af snildarverkum. Þótt þau séu mörg að tiltölu við höfundatal og fólksfjölda í landinu, þá þarf þjóðin að lesa miklu fleiri snildarverk í miklu fleiri greinum. Í bókmentum heimsins er miklu meira til af þess konar ritum en vér komumst yfir að þýða. Þá ætti að vera einsætt, að úr þeim flokkinum ber að velja sér verkefni til þýðinga, en hér hefir orðið annað uppi á teningnum. Menn hafa þýtt í hrúgum bækur, sem ná ekki einu sinni svo hátt, að vera miðlungsverk, heldur verða að teljast til hins hraklegasta, er fé-
gjarnir menn hafa ritað til þess að kitla hug og buddur fáfróðustu manna í stórborgamúgnum. Það má ilt verk heita að ginna með þessu fé af lestrarfúsri alþýðu og gera hana með því ófærari til þess að eignast þær góðar bækur, er út koma þýddar og frum-
samdar. En miklu verra verk er þetta þó fyrir þá sök, að það spillir svo réttðæmi alþýðu á bókmentum, að vel má óttast, að góðar bækur eigi ekki framar erindi til hennar eða þeim verði með öllu úthýst. Þetta má vel óttast af því að mótsaða gegn því hefir orðið árangurslítil og þess hefir eigi séð staði þótt ýmsir góðir menn hafi vítt þetta athæfi að maklegleikum, eg man í svipinn bezt eftir Baldri Sveinssyni og Jónasi frá Hriflu.

Það er því ætíð mikið gleðiefni, þegar út kemur þýðing á góðrú bók. Og eigi hefir mér í annan tíma verið það meira gleðiefni, en þegar eg sá meyna frá Orleans. Slíkir höfundar sem Schiller eiga erindi til allra þjóða og eigi sízt til vor Íslendinga. Höfum vér og áður eignast þýðingar á ýmsum ágætum ljóðum hans, og tel eg þar fremst klukkuna, en þá ýms ljóð í Svannhvít og víðar. En leikritin höfum vér eigi séð.

Alexander á því þakkir skildar fyrir að velja slíkan höfund sem Schiller, og það sýnir ótrauðan vilja hans og útgefanda til þess.

að auðga bókmentir vorar, er þeir leggja út í að bjóða Íslendingum leikrit. Mér hugnar það og vel, að hann byrjar á Meynni frá Orleans, bæði fyrir þá sök, að hún sýnir hvað ljósast hreinan hug Schillers, öfluga trú á hið góða og eldlegan áhuga hans, svo sem þýð. getur um í innganginum, og fyrir þá sök aðra, að mannkynsagan greinir eigi frá annari merkilegri eða einkennilegri konu, en þessari frakknesku mey, Jeanne d' Arc, sem kvæðið er um gert.

Málum Frakka var komið í mjög óvænt efni árið 1428, þegar Englar settust um Orleans. Tildrögin að því voru mörg og langvinn. Filippus fríði Frakkakonungur gifti Ísabellu dóttur sína Játvarði öðrum Englakonungi. Þeirra son var Játvarður III konungur yfir Englandi. Karl IV., sonur Filippusar fríða, dó sonarlaus, og var þá aldaúða karleggur Capetunga. Á Frakklandi voru það lög, að konur máttu eigi taka konungdóm og hvarf því ríkið undir nánasta frændann, Filippus Valois 1328. En í Englandi voru konur arfgengar til ríkis, og þess vegna gerði Játvarður III. tilkall til konungdóms á Frakklandi. Hann fékk þó eigi komið þeirri kröfu fram og fór því með ófriði á hendur Frökkum og vann norðurluta landsins. Stóð nú fjandskapur og deilur milli landanna um heila öld, og veitti ýmsum betur. Á stjórnarárum Ríkharðar annars (Játvarðssonar svartaprinz) náðu Frakkar aftur löndum sínum. En er Hinrik V. kom til sögunnar og Karl VI. átti að verja, þá urðu Frakkar forviða fyrir og Hinrik V. krafðist hvers er hann vildi. Gekk hann þá að eiga Katrínu konungsdóttur og var þá sama sem kominn upp í hásetið. Nú horfði þó til hins betra í svip er líkur voru til að Jóhann hugprúði hertogi Burgunda sættist við konung. En þá var það slysalega ódæði unnið af konungsmönnum, að þeir myrtu Jóhann (1419); varð þá sonur hans, Borgunda hertogi, konungi fráhverfur og vinur Engla. Hinrik V. dó 1422 í París og eftirlét ríkið syni sínum 8 mánaða gömlum, sem hann hafði átt við Katrínu. Setti hann Bedford hertoga umsjónarmann sonar síns. Hafði hann þá numið öll lönd fyrir norðan Leiru (Loire). Karl VI. dó sama árið, og tók þá konungdóm sonur hans, Karl VII. Hafði hann lítið ríki og gekk þungt viðureignin, svo að þá er Englar settust um Orleans, er honum reið lífið á að missa eigi, þá megnaði hann enga hjálp að veita. En þá kom hjálpin úr öðrum stað.

Í þorpi einu, Domremy, nálægt landamærum milli Burgunda og Lothringen, var ung og fátæk bóndadóttir, Jeanne d'Arc að nafni. Hún var góð stúlka og guðhrædd og unni Frakklandi mjög, en

var kalt til Engla og Burgunda. En þessa verður að geta fyrir þá sök, að Frakkland var þá svo illa komið, að jafnvel ungir sveinar gengu blóðugir hverir undan öðrum, er þeir deildu um rétt föðurlands síns og rétt erlendra yfirdrottna. Verður þá og auðskilið, að meiri bruni hafi þar þá verið í hugum manna og vinátta og fjandskapur staðið dýpra en á friðartímum þeim, sem vér höfum haft reynslu af. Þá verður ljósara fyrir mönnum, hvernig þessi 17 ára gamla bóndadóttir mátti orka því er hún gerði. Föðurlandsástin vakti henni ósigrandi þrá til þess að bjarga ættjörð sinni. Trúartraust hennar vakti henni aftur bjargfasta trú á því, að guð mundi hjálpa þjóðinni. En enginn hjálparinn kom. Þá vaknaði hjá henni svo lifandi þrá, að verða helsærðri ættjörð sinni að liði, að hún trúði því, að guð hefði sérstaklega ætlað sér þetta hlutverk. Og nú hafði hún vitranir og sagði María mey henni og aðrir himneskir sendiboðar, hvað hún ætti að gera. Lagði hún á stað til konungs og fekk leyfi til að fara til Orleans og létta af umsatinni. Óskelfdur hugur hennar og einbeitni og barnlegt trúartraust vakti nú Frökkum nýjan hug og nýjar sigurvonir og ættjarðarást, en dró úr hug fjandmönnum þeirra með því ofurafli, sem trú og hjátrú áttu á þeim tímum.

Tilkoma þessarar ungu meyjar sneri öllu við, og hún leiddi Frakka frá sigri til sigurs, fór með konung til Reims og lét krýna hann þar sem hún hafði beitið. Stóð nú hagar Frakka vel og hún þóttist hafa lokið hlutverki sínu. En fyrir fortölur manna fylgdi hún þó enn hernum, en þá fór svo að lokum að hún var gerð hernuma og síðan seld Englendingum í hendur. Þeir gerðust nú þeir ódrengir að þeir svöluðu hatri sínu á þessari saklausu mey, sökuðu hana um galdur og brendu hana á báli. Frakkakonungur og hans menn gerðu engar verulegar tilraunir til þess að bjarga henni.

Síðan hefir menn deilt á um konu þessa. Hafa sumir gert gys að henni, sumir lastað hana, en sumir lofað. Nú hafa Englar nýlega sett henni minnisvarða og reynt með því að má blettinn af, er þeir fengu við bálför hennar. Enginn getur með sanni mót-mælt því, að hún hafi verið einhver hinn ágætasti og einkennilegasti bardagamaður í þjónustu hugsjónanna. En fegurstan minnisvarða hefir hið heimsfræga þýzka þjóðskáld Fr. Schiller sett henni, þar sem er sorgarleikur sá, er Alexander hefir nú þýtt.

Eg hefi orðið svo margorður um yrkisefnið sakir þess, að al-

þýðu manna er þessi saga lítt kunn og auk þess í því skyni að menn gæti sjálfir séð að hverju leyti höf. hefir breytt efninu.

Um þýðinguna sjálfa get jeg verið fáorðari. Hún er vandað verk, þótt hún sé vandaverk. Þess er þá fyrst að geta, að hún er rétt og nákvæm, að kveðandi er nákvæmlega hin sama sem í frumritinu, nema því framar, að þar er auðvitað gegnt þeirri þungu skyldu, er ljóðadísinn leggur oss á herðar, Íslendingum, að þar eru ljóðstafir. Ekki hirði eg að telja þá fáu staði, sem mér þætti mega vera betur stuðlaðir, enda er jafnan auðveldara að finna að en að umbæta. Þess er annars og að geta, að orðaval er svo, að jafnan er leitast við að hafa sem næst daglegu orðfæri. Mun þess því fremur von, að leikhúsin ráðist í að sýna oss þetta verk.

Um orðaval og kveðandi skal það þó játað, að mér þótti í fyrstu sem þar vantaði þá heiðríkju og sólkendir sem eru yfir þeim í beztu ljóðum vorum. En er eg bar saman við frumritið, komst eg að þeirri niðurstöðu, að slík þýðing mundi hafa farið framhá blænum, sem er yfir því hjá Schiller. En slíkt ætti enginn að gera, því höfuðvandinn við þýðingar er einmitt sá, að halda blænum, íklæðast hugarfari skáldsins (Nachempfinden nefna Þjóðverjar þetta). Þessi blær er alls ekki yfir leikritum Schillers. Honum var svo mikið niðri fyrir, að hann gaf sér eigi tíma til að faga þau svo mjög. Mér sýndist þetta í upphafi ókostur á þýðingunni, en eg hefi komist að raun um að það er einmitt kostur.

Þessi þýðing mun jafnan verða þýð. til sóma og kostnaðarmanni slíkt hið sama.

Menn ætti ekki endilega að þurfa að vera svangir til þess að geta metið skáldskap. Þó virðist mér sem lestrarfýsn manna minki ef þeir efnast. Ætti það þó að vera öfugt, því að eftir því sem efni alþýðu aukast sýnist hún geta varið og eiga að vilja verja meiru til bókakaupa.

Byrjið á því að kaupa »Syngi, syngi svanir mínir«, eftir Huldu, Þulur Theódoru og — Meyna frá Orleans.

Bjarni Jónsson frá Vogu.

Nokkur ljóðmæli eftir Þorskab t. Getin út af Borgfirðingafélaginu í Winnipeg 1914. — Prentuð í prentsm. Gutenberg. Reykjavík.

Þorskabítur er sá meðal íslenzkra skálda vestan hafs, er einna mest þykir að kveða, þegar frá er talinn Stephan G. Stephansson. Hafa kvæði hans mörg birzt í Lögbergi og ýmsir veitt þeim at-

hygli, enda bera þau af mörgu því, sem þar flýtur. Safn af ljóðmælum hans kom út árið 1914, sem að ofan greinir.

Höfundurinn heitir réttu nafni Þorbjörn og er Bjarnarson, borgfirzkur að ætt og uppruna, frá Breiðabólstað í Reykholtssdal, kynborinn, kominn af Lofti ríka í beinan karlegg. Hann ór vestur um haf fulltíða um 1890 og hefir dvalist þar síðan. Mun hann nú hátt á sextugs aldri.

Þótt Þorbjörn hafi dvalist allengi vestra og náð þar mestum þroska og ort þar flest kvæði sín, þá verða þau vart talin »vest-ræn« í eðli, svo að þau beri vitni um ábrif þarlendra skálda, heldur eru þau ramm-íslenzk að efni og orðbragði, eins og þau væri »fædd og fósturuð« í áttögum höfundarins.

Þorbjörn er alþýðumaður, hefir alla æfi sína fengist við al-genga vinnu, óskólagenginn og því óspiltur af tilgerð og tildri slíkrar menningar, en sjálfur alvörugefinn skarpleikamaður og hefir þroskast af sjálfsdáðum, eins og fjöldi íslenzkra bænda, sem lítt hafa við að styðjast nema menningar-megin tungu vorrar og erfðamannvit það, er aldrei hefir út kulnað í landi voru.

Yrkisefni höfundarins eru mörg hin sömu, sem önnur skáld vor hafa tamið sér, svo sem ættjörð og (íslenzk) náttúra, enda ann hann hugástum landi sínu. Mörg yrkir hann og tækifæriskvæði, eins og gerist, ýmist að annara bón eða ótilkvaddur, svo sem erfi-ljóð, minni á Íslendingafundum og öðrum samkomum og fleira þess háttar. Einna best þykir mér erfiljóðin, er hann yrkir eitir Árna Sveinbjörnsson frá Oddastöðum og Sigurð póst. Um Sigurð segir hann meðal annars:

Mót þá sporlaust myrkrið gín
má ei forsja bresta.
Ferða voru vopnin þín
vilji, þor og festa.

Aldrei skæðan beyg þér bjó
braut að þræða sanna
gamla hræðan: »um og ó«
ósjálfstæðismanna.

Ágætlega kveður hann og eftir Eyjólf frænda sinn Magnússon, barnakennara. Þar er þessi vísa:

Þönglabökkum þjóðlífs frá
ú hefir tekið feginn

síðsta stökk, og stigið á
ströndina hinum megin.

Mun þeim finnast, er Eyjólf muna vel, að hann komi þeim skýrt fyrir hugskotasjónir, er þeir heyra vísuna, eins og hann sé að létta sér yfir poll með alkunnum snarleik sínum, vindi sér við hinumegin og teygi út frá sér stafinn á ská til að hneigja sig fyrir áhorfenda-hópnum, — í þetta skifti hinzta sinn. Haglega er þess og minst, að Eyjólfur beindi til flugs mörgum ófleygum barnsanda, er þjóðin »virtí smátt«:

Hennar vilja hallröng met
hnitmiðunum týna.
Illa vegna löngum lét
ljóstollana sína.

Mörg eru ádeilukvæði í bókinni og kennir þar glöggrar sjónar á ýmsar misfellur mannfélagsins. Höfundurinn tekur ómjúkum höndum á ranglæti, fégirnd, hræsni og öðrum ódrengskap og smásálarskap. Stundum felur hann ádeilur sínar í smákveðlingum allmeinigum, og sver sig þá nokkuð í sett við Jón Þorláksson eða Steingrím Thorsteinsson. Hér eru nokkur dæmi:

Ekki er að furða, þótt á hlaupi snurða
vorn örlagaþráðinn,
þá hrekkv'sir slinnar og hópar af flónum
á heimsrokkinn spinna með öfugum klónum.

Kerling eitt sinn kát á rúmið sezt,
við karl sinn tér hún: Heyrðu góði minn!
Veiztu hvaða bein mér þykir best
að bíta? — Það er hryggjarliðurinn.

Heilræði til safnaðarmanns vestra:

Viljirðu fá þá von af presti
að verða sáluhólpinn,
láttu hann sjá, að sértu bezti
safnaðarmálastólpinn.

Þessi er um »prestleysi«:

Himins beitarhúsum frá
hrópað er á vörðinn.
»Jórturtuggu jeg vil fá«
jarmar gervöll hjörðin.

Um »nýja búninginn« kveður hann.

Nær sem þú hittir nýttzku mann
 á nýja búningnum þekkirðu hann:
 um brjóstið keðjubaugar gullnir hringla,
 við beran rassinn skuldakröfur dingla.

Allur er frágangur bókarinnar hinn snotrasti og útgeföndum til sóma.

B. Sv.

Jón Helgason: Þegar Reykjavík var fjórtán vetra. Brot úr sögu Reykjavíkur. Með þrem myndum og einum uppdrætti. (Safn til sögu Íslands og íslenskra bókmenta V. nr. 2). Reykjavík 1916. 8vo. 138 bls. og 3 myndir og uppdráttur.

Það voru mörgum vonbrigði eigi all-lítil, þegar Árbók Háskólans kom út 1915, að henni fylgdi þá ekkert fylgirit. Menn vissu að þáverandi rektor háskólans, núverandi herra Jón biskup Helgason, var maður einkar vel ritfær og fróður vel. Ritar hann flestum betur, og er einkar sýnt um að rita svo, að hver lesandi hans, þótt litla þekking hafi áður, hafi þess mikil not og unun af lestrinum. En svo er ekki nema um örfáa allra ritfærustu menn þjóðarinnar. En rektorinn var þá sjúkur — og það verður að vera fullgild afsökun.

Í fyrra vetur hélt höf. hér í bænum fyrirlestra um byggingu Reykjavíkur, einkum um aldamótin 1800, og voru fyrirlestrar þessir strax rómaðir mjög. Þessa fyrirlestra hefir nú Bókmentafélagið gefið út, og er það skemst að segja, að félagið á þökk fyrir útgáfuna. Fyrirlestrarnir eru einkar fróðlegir og jafnframt mjög skemtilegir aflestrar.

Það er enginn vafi á því, að enginn er höf. jafnfróður um þessi efni, enda hefir hann um lengri tíma safnað öllu því er varðar sögu bæjarins, einkum á fyrstu árum hans. Í bók þessari rekur hann sögu hverrar einstakrar lóðar og húsa, segir hverir hafi búið þar og til hvers þau hafi verið notuð, og inn í þetta fléttar hann settartölum og smásögnum, og gjörir það svo aðdánlega vel, að eg get ekki skilið annað, en hver fróðleiksús maður hafi unun, nautn og gagn af lestrinum. Maður vel mentur sagði við mig er hann hafði lesið bókina: »Eg skil ekki hvernig J. H. fer að gera settartölur svona afarskemtilegar«, — en þótt hann segði að hér sé um settartölur að ræða, þá er það ekki í orðsins fylsta skilningi. Það er saga bæjarins, ekki aðeins byrjunarár hans, heldur má heita að það sé aðalþátturinn í sögu hans alt til þessa dags, má þar t.

3. benda á bls. 81, þar er sagan sögð til 1916 og svo er á mýnörgum stöðum.

Höf. á afarmikið og fágætt myndasafn af Reykjavík frá ýms-um tímum. Eg hefði óskað þess að bókin hefði fengið meira að njóta þessa ágæta safns en raun hefir á orðið. En það, að svo er eigi, mun vera vegna kostnaðar við útgáfuna.

Á ekki allfáum stöðum hefi eg orðið þess var, að höf. hefir leiðrétt þá, er áður hafa ritað um eitthvað, er hann vikur að. Er það ekki eingöngu í þeim efnum, er beint varða sögu bæjarins, heldur og í ættfærslu manna. Kosið hefði eg, að hann hefði gert nokkra grein ýmsra Íslendinga, er settust að hér í Reykjavík á fyrstu árum bæjarins, og voru því riðnir við margt í bænum eða ættfeður margra hér. Skal eg nefna sem dæmi Teit vefara, Egil Sandbolt og Finnþoga Björnsson, og veit eg að höf. var það hægðarleikur, ef hann hefði svo viljað.

Höf. er ekki viss um, við hvern Kæmnergade (bls. 66) var kend; það er án efa við Guðmund Pétursson. Þann galla hefi eg orðið var við, að skráin yfir mannanöfnin aftan við bókina er ekki fullkomin. Það vantar t. d. Pétur Bárðarson, og Teitur vefari kemur fyrir á bls. 91. En smámunir eru þetta.

Aftan við bókina er prentað sem fylgiskjal útmæling undir hinn nýja kaupstað í Reykjavík, dagsett 12. febrúar 1787. Það má heita svo, sem skjal þetta hafi öllum verið ókunnugt, þar til í fyrra sumar. En skjalið er mjög merkilegt. Það ber með sér, að bænum hefir verið mælt út alt Arnarhólstún fyrir neðan traðir, en það mótar fyrir þeim hjá Safnahúsinu, og uppdrátturinn, er fylgir bókinni, sýnir ljóslega land bæjarins. En á bærinn þá ekki landið enn? Eg hefi ekki haft spurnir af því, að hann hafi látið það aftur af hendi. Hér er um mikið fé að ræða, og vonandi að fulltrúar bæjarins haldi rétti hans eins fast fram og þeir álíta fært.

Að endingu vil eg þakka höf. fyrir ritið. Eg er sannfærður um, að enginn fróðleiksfús maður sér eftir þeim bókakaupum, heldur telur því fé mjög vel varið. Og hvetja vil eg alla, er sagnfræði unna, að eiga ritið; það má heita að það sé ómissandi fyrir þá.

Pétur Zophoníasson.

Þulur. Eftir Theodóru Thoroddsen. Myndirnar eftir Guðm. Thorsteinsson. Prentsmiðjan Gutenberg 1916.

Þetta er ágætt verk í sinni röð og hreint nýnæmi. Tveir lista-

menn af sömu ætt hafa þarna lagt saman: frú Theodóra Thorodd-
sen Þulurnar sínar fögru, sem sumar hafa birzt í Skírni, og Guðm.
Thorsteinsson [málari myndirnar. Er það mesta augna- og eyrna-
yndi fyrir börn, og raunar alla sem ekki eru orðnir gamlir og
feysknir.

G. F.

Athugasemd við „Benrögn“.

Eftir Jón prófast Jónsson.

Jafnvel þótt mér virðist sumt ekki sem nákvæmast í þessari
grein Steingríms læknis Matthíassonar (í Skírni 1916), þá nenni eg
ekki að eltast við það, enda hefi ekki nema gömlu útgáfuna af
Sturlungu við höndina, og skal þess þó getið, að mér finst höf.
hefði ekki átt að sleppa höggi Aróns Hjörleifssonar, er hann átti
við Rögnvald Kárisson. En því minnst eg á þetta mál, að þótt
höf. riti »eins og sá, sem vald hefir«, þá tekur hann hvergi greini-
lega fram orsakirnar til stærri höggva vígamanna á 10—11. en á
13. öld, og gefur jafnvel í skyn, að allur sá mismunur rísi af ýkj-
um og öfgum eldri sagnanna, en eg tel hinsvegar víst, að Íslend-
ingar hafi eigi verið eins vígfimir á Sturlunga-öld og á víkinga-
öldinni. Það kom auðvitað ekki af því, að þeir væri kraftaminni,
svo na upp og ofan, heldur af þínu, að þeir voru yfirleitt miklu
óvanari vopnaburði en fornmennt fyrir 2—3 öldum, er vanist
höfðu vopnum og tamið sér vopnfimi frá blautu barnsbeini. Þetta
hefir að miklu leyti lagst niður á friðaröldinni, einkanlega á dögum
Gizurar biskups Ísleifssonar (1082—1118). Vorið 1120 »var svá
lítill vopnaburðr, at ein var stálhúfa þá á alþingi, ok reið drjúgum
hverr bóndi til þings, er þá var á Íslandi«.¹⁾ Nær 40 árum síðar
segir Gregorius Dagason, mesti hershöfðingi í Noregi á sinni tíð, við
Íslending einn, er gekk vel fram í orustu: »Margir menn þykkir
mér mjúkari í sóknun en þér Íslendingar, því at þér erut
óvanari en vér Noregsmenn, en engir þykkja mér vopndjarfari
en þér«.²⁾ Jafnvel hugrökkustu Íslendinga skortir þá nokkuð á
vígfimi, og hafi vopn þeirra á Sturlungaöld líka verið bitlítill, sem
höf. segir, þá er engin furða, þótt þeir væri eigi svo stórhöggir
sem fornkapparnir, sem sumt getur líka verið ýkt um, enda ræður
að líkindum, að frásögn um sárafar sé nákvæmari í Sturlungu en
fornsögunum, sem höfðu svo lengi gengið í minni manna.

¹⁾ Kristni saga 14. k.: Bisk. I. 31. bls. ²⁾ Snorri: Hák. s. herði-
breiðs 3. k., Hkr. 757—8 bls. (Ungers útg.).

Þrjú smáljóð.

Eftir *Maurice Maeterlinck.*

I.

Í hellinum mærin var múruð kvik,
á munnann í kross þeir gerðu stryk.
Hún mundi' ekki lengur ljósið þar,
og lykillinn — fjell í mar.

Hún sat þar og beið um sumar-skeið,
í sjö ár og lengur beið hún þar
Á gangi þar ár hvert einn hann var.

Hún dvaldi þar vetrarins dimmu skeið
og í dvölinni síkkaði gullið hár.
Það mundi birtuna' og leitaði' að leið —

að leið út til ljóssins, — og hamarinn hár
því hjelt ekki, skor milli steina það fann,
það óx út úr hamrinum, eldgylt brann.

Að aftni' á ferli þar enn var hann. —
Hann undrast, hvern ljóma við hamarinn ber,
og fram hjá tæplega treystir sjer.

Hann ætlar að bending þar einhver sje gerð,
hann ætlar að gullæð sjái hjer,
hann ætlar að dansi þar engla-mergð,
og undan hann snýr sjer og — fer

II.

Og komi hann aftur, hvað á jeg þá að segja?

— Að beðið jeg hafi', unz jeg hlaut að deyja!

Og ef frekar hann spyr, og man ekki' eftir mjer?

— Tala við hann eins og systir, því sorg hann máske ber . . !.

Ef hann spyr, hvar þú sjert, hvað myndi segjandi?

— Rjettu' honum hringinn minn og horfðu' á hann þegjandi!

Ef hann spyr, hvi svo tómlegt sje allt hjer og autt?

— Á opnar dyrnar bentu, segðu: Ljósið er dautt!

Og spyrji' hann, hvernig leið þjer, er lifið var á förum?

— Æ, láttu' hann ekki gráta, segðu': Hún dó með bros
á vörum

III.

Þrem smámeyjum forðum þeir unnu á:

í hjörtun litlu þá langaði' að sjá.

Í fyrsta auðnan og ánægjan bjó,
og alls-staðar, þar sem blóð þess rann,
hvæstu þjár nöðrur — þrjú ár löng.

Í öðru bjó mjúklynd, auðsveip ró,
og alls-staðar, þar sem blóð þess rann,
á beit voru þrjú lömb — þrjú ár löng.

Í þriðja angist og angur bjó,
og alls-staðar, þar sem blóð þess rann,
vörð hjeldu þrír englar — þrjú ár löng.

Guðm. Guðmundsson
þýddi.

Um drengskap.

Erindi, fyrst flutt í Winnipeg 1. júní 1916.

Því er stundum haldið fram, að menning forfeðra vorra sé svo gagnstæð anda nútíðarinnar, að þar sé naumast nokkur brú á milli. Hvergi hefi eg þó séð þetta greinilegar orðað en í bók eftir danskan mann, prófessor Vilh. Grönbech. Hann segir meðal annars um fornmenn Norðurlanda:

»Í raun og veru eru þessir menn oss svo óskyldir, að vér getum engin mök við þá átt. — — — Stírfni Norðurlandabúa, þröngleikur og einræni, það sem ómannúðlegt er í fari þeirra, á rót sína í eðli menningar þeirra. Þeir eru fastúðugir, en á þeim grundvelli, sem mannlíf verður ekki bygt á nú á tímum. Þeir lifa í menningu, en sú menning á sér alt aðra þungamiðju en vor. Samræmi þeirra er gagnólikt öllu því, er vér eigum eða sækjumst eftir. Menning þeirra á sína fegurð, og á blómatið sinni hafði hún óyggjandi rétt lífsins; en hún var bundin við þannig lagaða sjálfhefð og sjálfvirðing, að ætti hún sér stað í vorum heimi, yrði hún eitt af þeim öflunum, sem rífa niður. Frá þeim verður ekki komist til vor né frá oss til þeirra með öðrum hætti, en að afklæðast mann-eðli sínu og íklæðast öðru¹⁾«.

Slík kenning finst mér fjarstæða. Mér virðist öll reynsla vor Íslendinga mæla á móti henni. Þessi menning, sem svo hart er dæmd, hefir verið brjóstamjólkin, sem þjóð vor hefir að miklu leyti lifað á í þúsund ár, og

¹⁾ Vilh. Grönbech: Lykkemand og niding. Kbh. 1909, s. 16—19.

svo er oss sagt, að hún hafi ekkert næringargildi fyrir nútíðarsálir. Mundi ekki vera líkt um þetta og íslenska skyrið. Fyrir nokkrum árum var því haldið að oss, að skyrátið væri skaðsamlegt fyrir heilbrigði þjóðarinnar, og sumir fóru að trúa þessu. Svo kom heimsfrægur visindamaður, Metschnikoff, og sannaði tilgátu, sem búlgarskur læknir hafði haldið fram, að búlgarska skyrið (Yoghurt) ætti þátt í því, hve langlífir Búlgarar verða. Nú hafa ættir skyrgerlanna verið raktar saman, og Íslendingar eru farnir að sannfærast um það, að skyrið þeirra sé lífsins balsam.

Eg vona að líkt fari um kenningar þeirra manna, sem halda því fram, að sálarlíf forfeðra vorra og menning sé óholl fæða fyrir nútíðarsálir. Mín reynsla er sú, að eg get stundum orðið leiður á öllu sem mér berst í hendur af nútíðarbókmentum. Það kemur í mig eins konar andleg ólyst, svo að eg verð, eins og skáldið kvað:

»leiður á öllu — utan

Íslendingasögum«.

Eg hefi aldrei orðið leiður á þeim. Eg veit, að þar á eg altaf athvarf, ef annað bregzt. Þar er það andans veður, sem hressir mig, ef mér verður ómótt í nútíðarmollunni.

En eg skil vel, hvað fyrir þeim vakir, sem tala um það, hve andi fornmanna sé oss fjarskyldur. Þeir líta á yfirborðið, athafnirnar. Og fornsögur vorar og kvæði eru um vígaferli, fyrst og síðast um mannhefndir. Hefndarhugsjónin er þar svo rík, að hún gengur eins og rauður þráður um allar fornsögur vorar. Mér dettur stundum í hug dæmisagan um kettina og apann. Kettirnir báðu apann að skifta fyrir sig ostbita. Hann braut ostinn fyrst í tvo misstóra parta og lagði á metaskálar. Beit síðan stykki af stærri bitanum, svo að hann varð léttari en hinn, þá af hinum, og svona á vixl, þangað til ekki voru eftir nema litlar örður, sem hann varð að hafa í skiftalaun.

Það er engu líkara en að forfeður vorir hafi verið að leika þessa sögu í stórum stíl. Hefndin átti að jafna hallann á metaskálanum, jafna hallann milli ættanna, sem

af einhverjum atvikum lenti saman, en hún tók í hvert skiftið meira en svo, að jöfnuður kæmist á. Jöfnuður hefndanna verður ójöfnuður. Slíkt atferli er vissulega engin fyrirmynd, er vér getum tekið til eftirbreytni.

Og þó mun að minsta kosti enginn óspiltur Íslendingur lesa þessar sögur svo, að hann finni ekki streyma um sig undarlegt afl, sem í þeim býr, finni að þær herða á instu strengjunum, hressa og styrkja betur en flest listaverk nútíðarinnar.

Hvernig stendur á þessu? Er það hefnigirninn, sem fær þar byr undir vængi? Erum vér enn svo mikil rándýr, að oss sé hressing í því, að lesa um vígaferli og blóðsúthellingar? Þekkjum vér sjálfa oss í lögmáli hefndarinnar, sem virðist æðsta boðorð forfeðra vorra? Eg hygg því fari fjarri. Hugsjónir forfeðra vorra eru í því efni gagnstæðar vorum. Vér mundum ekki vilja taka þá til fyrirmyndar í þessu efni. Hvað er það þá, sem dregur oss að þeim?

Vér finnum það, er vér litum dýpra en á yfirborðið. Eðli manna kemur ekki svo mjög fram í því, hvað þeir telja skyldu sína, sem í hinu, hvernig þeir rækja þær skyldur, sem þeir viðurkenna. Hugsjónir mannanna breytast með öldunum. Margt það, sem var heilög skylda forfeðra vorra, væri nú talinn hinn versti glæpur. En skyldurækinn maður á þeim tímum var líks eðlis og skyldurækinn maður á vorum dögum. Virðingin fyrir því, sem mönnunum er heilagt, er sjálfri sér lík, hvað sem það svo er, sem menn telja heilagt í þann og þann svipinn. Markmiðin, sem stefnt er að, geta verið gagnstæð, og þó gerst sömu tíðindi á leiðinni. Það má vinna frægðarverk í þjónustu góðs máls og ills. Þetta ætti að vera oss hugstætt nú. Vér erum varla þeirrar skoðunar, að þjóðir þær, sem nú berast á banaspjótum, séu allar jafn saklausar um upptök hinna ógurlegu Hjaðningavíga, er yfir standa, eða hafi jafn réttmætt mál að sækja og verja. Vér mundum ekki halda því fram, að þjóð, sem berst af því að á hana er ráðist saklausa, sé í sömu fordæmingu

og hin, sem brýtur á henni lög. En þegar út í stríðið er komið, sést það beztt, hvern mann hver hefir að geyma, ekki á því í hverri fylkingunni hann stendur, því um það eru fæstir sjálfráðir, heldur á því, hvernig þeir reynast samherjum sínum og fjandmönnum alstaðar þar sem mann-
eðlinu gefst kostur á að njóta sín. Maðurinn getur verið drengur í hvaða fylkingu sem hann stendur. Og eg hygg, að drengskaparhugsjónin liggi dýpst eða inst allra siðgæðishugsjóna, fyrir þá sök, að drengskapur getur átt sér stað hjá mönnum með gagnólikum lífsskoðunum, mönnum á hæsta og lægsta menningarstigi, mönnum sem berjast hvor um annars líf. Öndverðari geta menn ekki staðið en svo, að hvor vilji taka annars líf, og þó má berjast sem drengur eða sem ódrengur.

Hér er þá sá grundvöllur, sem menn af öllum stéttum geta mæzt á, frá öllum öldum, af öllum trúarbrögðum og lífsskoðunum. Þarna er eitt bræðraband, einn eiginleiki sem vér skiljum, á hvaða stigi sem þeir menn hafa staðið sem áttu hann.

Og þá kem eg að brúnni milli vor og forfeðra vorra, þeirri Bifröst, er tengir þeirra líf við vort. Það er drengskapurinn. Í engum bókmentum, sem eg þekki, er andrúmsloft drengskaparins hreinna en þar. Hressingin sem þær veita oss, styrkurinn sem þær færa oss inn í merg og bein er drenglundin, drengskaparandinn sem í þeim lifir. Þetta er ekki svo að skilja, að þær segi ekki frá neinum ódrengjum eða að þeir séu þar svo fáliðaðir, að þeirra gæti ekki. Þeir eru þar allidsterkir eins og á öðrum öldum. En mörkin eru þarna svo skýr, mennirnir svo heilir og lífskjörin svo einföld, að eðli drengskaparins kemur þar fram í algildum og ógleymanlegum myndum.

Það er gaman, að mesti snillingurinn sem ritað hefir á íslenzka tungu, sá maðurinn sem flestar ódaudlegar mannlýsingar hefir skrifað, hann hefir sjálfur skilgreint hugtakið drengskapur. Snorri Sturluson segir í Skáldskaparmálum: »Drengir heita vaskir menn ok

batnandi. Hér er eðli drengskaparins sagt í tveim orðum. Vér skulum athuga hvað í þeim felst.

Fyrst er vaskleikurinn, hreystin, hugprýðin. Þar er eflaust elzta dygð mannsins, sú sem hefir hafið hann stig af stigi til æðra lífs. Án þessa eiginleika koma aðrar gáfur að litlu eða engu haldi, því lífið er barátta, barátta við náttúruna, barátta við sjálfa oss og barátta við aðra menn, ef ekki með vopnum handarinnar, þá með vopnum andans. Öllum er augljóst, hvers virði vaskleikurinn er, þar sem lífsbaráttan er háð með brugðnum sverðum, þar sem menn verða að leggja líf sitt við nálega hvert það mál, er þeir taka að sér, eins og var hjá oss á söguöldinni. Þar stendur sá bezt að vígi, sem lætur sér sízt bregða við váveiflega hluti, eins og sagt er um Halldór Snorrason. En vaskleikur er í raun og veru engu ónaúðsynlegri þar sem friður er á yfirborði þjóðlífsins, svo að hver maður er nokkurn veginn óhultur um líf sitt fyrir öðrum. Baráttan er þá ekki um það að halda lífi sínu, heldur um það að lifa samkvæmt eðli sínu og þörf, fegra líf sitt og fullkomna. Með samlífinu hættir mönnunum löngum við að verða hver öðrum háðir, háðir yfirmönnum sínum, vinum, fylgismönnum, flokksmönnum, háðir tízkunni, almenningsálitinu. Þar af sprettur sú hættan, að menn týni sjálfum sér, láti teygjast frá því sem þeir sjálfir telja rétt —

„vinni það fyrir vinskap manns,
að víkja' af götu sannleikans“.

Að menn fylgja ekki því fram, sem þeir þó sjá að er rétt, þegja við því, sem þeir vita er rangt, kemur langoftast af bleýðimensku, skorti á vaskleik. Þeir treysta sér ekki að þola sársaukann, óvildina, stundartjónið, sem fylgir því að halda fram óvinsælli nýjung, sem þeir þó sjá að væri þarft og rétt. Flest þau sannindi, sem mannkynið nú lifir á, í siðfræði, trú, vísindum og listum, hafa einhverntíma verið óvinsæl og aflað frumherjum sínum mótblásturs, óvildar, ofsókna og stundum lífláts. Öll eigum vér þau að þakka vöskum mönnum, sem létu sér ekki

bregða við váveiflega hluti, en leituðu á brattann til hærra sjónarmiðs, meira víðsýnis, hvað sem það kostaði. Flest þekking er unnin með áhættu. Margt sem vér leggjum oss til munns, þá hefir það einhverntíma verið áhætta að borða það. Sá sem fyrstur át það, gat ekki vitað fyrirfram, hvernig honum yrði af því. Það gat eins vel verið eitur. Eg veit það vel, að efnafræðin er nú komin svo langt, að hún getur oftast sagt oss, hvaða efni eru í hverjum hlut og hver eru skaðleg og hver ekki. En sú þekking er fengin fyrir óþreytandi elju og áreynslu vísindamanna, sem árum saman hafa gert tilraunir á tilraunir ofan, stritt við óteljandi vonbrigði, unz þeim loks tókst að leysa úr þeim viðfangsefnum, er þeir helguðu líf sitt. Og enn eru mörg verkefni vísindanna, sem ekki verða leyst nema með því, að menn leggi lífið í hættu. Eg þarf ekki annað en minna á heimskautarannsóknirnar og loftfarir nútímans.

Allar mannlegar framfarir kosta áreynslu, fást ekki nema menn beiti kröftunum vasklega og þoli margar raunir. Staðfastur getur sá einn verið, sem hugprúður er og hopar ekki á hólmi, hvað sem á móti er:

„Hrökkvit þegn fyrir þegni,
þat vas drengs aðal lengi“.

Málfræðingar segja, að drengur sé af sömu rót og drangur. Sá sem er drengur, er staðfastur sem bjarg, enda hefir Bjarni Thorarénsen fundið skyldleikann, er hann kvað:

„Sker hefur skrafið í firði,
skrapir heims um aldur,
en þess bringa brýtur
boða nú sem áður.
Minkun er manni að vera
minni kletti dauðum,
og brjóst sitt bilast láta
af boðum mótlætis“.

Í engu kemur drengskapur manna betur fram en því, hvernig þeir halda orð sín og fyrirætlanir, hvernig þær ávísanir greiðast, er menn gefa á sjálfa sig. Enginn get-

ur í alvöru lofað öðrum neinu án þess að lofa sjálfum sér um leið, enginn getur svikið annan nema svikja sjálfan sig um leið. Lífið er löngum snúið úr tveimur þáttum: fyrirætlun og framkvæmd. Fyrirætlunin er ávísun, framkvæmdin er greiðslan. Sá sem lofar sér því að gera eitthvað og gerir það ekki, er ekki samur maður á eftir. Hann er kominn í skuld, sem rýrir manngildi hans. Eg veit það er ekki mitt meðfæri, að skýra eðli slíks jafnaðarreiknings að fullu, en eg held að skýringin sé eitthvað í þessa átt: Sá sem lofar einhverju eða ásetur sér að vinna eitthvert verk, hann setur sér verkið fyrir hugarsjónir, eins og honum finst að það mundi verða, þegar því væri lokið. Hugsunin um að vinna verkið setur hann í sérstakt ástand, sérstakar stellingar, ef svo má að orði kveða. Hann býr sig undir að vinna verkið, eins og maður sem stælir vöðvana til ákveðins stökks. Verkið tekur ósjálfrátt huga hans og líkama í þjónustu sína, bindur hann með nokkrum hætti við sig. Orku hans er beint í nýjan farveg, hún stefnir nú að sérstökum ósi. Sá ós er framkvæmd verksins. Verði nú ekki af efndum, hverfur fyrirætlunin ekki að heldur. Hún fylgir mannum ljóst eða leynt, togar hann í þá áttina sem hann einu sinni sneri í og bindur þannig nokkuð af orku hans. Hann er þá bundinn ósýnilegu bandi við stað sem hann kemur ekki á, snúinn að marki sem hann stefnir ekki að. Því oftast sem maður vanefnir það sem hann lofar eða ætlar sér, því minni orku á hann óbundna til nýrra efnda, því ófrjálsari verður hann. Hinn, sem efnir orð sín og fyrirætlunir, er frjáls. Hann ræður á hverri stund yfir kröftum sínum óskiftum. Hann á sjálfur alt sem hann hefir gert, það er sært inn í lífsbók hans sem hæfileiki til meiri starfa, því kraftarnir æfast við notkunina. En hvers vegna halda menn þá ekki loforð sín við sjálfa sig og aðra? Langoftast af því, að þá vantar vaskleikann, er þarf til þess að þola erfiðið og sársaukann, sem efndirnar hafa í för með sér.

Eg hefi þá drepíð á fyrri atriði drengskaparins, vask-

leikann, og reynt í fáum dráttum að sýna, hvers virði hann er, að hann er frumskilyrði allra sannra framfara. En eg á eftir annað atriðið í skilgreiningu Snorra: »Drengir heita vaskir menn ok batnandi«, segir hann. Vaskleikurinn einn er ekki nógur. Illmenni geta líka verið vaskir menn, þeir geta haft nóg hugrekki og þol til að berjast hraustlega fyrir málstað, sem þeir vita að er illur. Þó mundi enginn kalla þá drengi, því að þótt þeir séu vaskir, þá eru þeir ekki batnandi. En á hverju batna menn? Á því að sýna vaskleik í þeim verkum, sem göfga þann sem þau vinnur. Menn verða eins og þeir breyta, góðir af góðum verkum, vondir af vondum verkum. Svo sagði Aristoteles fyrir löngu. En enginn er algjör, þess vegna segir Snorri ekki: Drengir heita vaskir menn ok góðir, heldur: vaskir menn ok batnandi. Hann veit, að lífið er þróun, en eðlið kemur fram í stefnu viljans og festu. Þannig greiða orð hans drengskapinn sundur í atriði sín, eins og kristallsfleygurinn klýfur geislafanninn í ljómandi litgeisla. —

Ef vér nú litum á fornsögur vorar, þá yrði seint að telja alla þá staði, þar sem drengskapurinn ljómar í orðum og athöfnum. Hvergi lýsir hann sér betur en í því, hve títt fornmönnum var að leggja líf sitt við líf þeirra manna, sem alt áttu í hættu, manna sem sekir höfðu orðið eða ofsóttir voru einhverra hluta vegna. Og þótt ættin, frændgarðurinn, yrði á þeim tímum að taka við skellunum af því sem hver meðlimur ættarinnar hafðist að, virðist hverjum manni hafa verið það ámælislaust, að vinna drengskaparverk, sem stofnaði ættmönnum í hættu. Það þótti lítilmannlegt, að veita ekki hjálp þeim sem leituðu hennar. Þegar Ásgrímur Elliðagrimsson og félagar hans koma til Guðmundar ríka og biðja hann liðs, segir hann: »Næstum fór mér til yðvar lítilmannlega, er ek var yðr erfiðr. Skal ek nú því skemr draga fyrir yðr, er þá var ek torsóttari. Ok skal ek nú ganga til dóma með yðr með alla þingmenn mína ok veita yðr alt á

þessu þingi ok berjast með yðr, þó at þess þurfi við, ok leggja mitt líf við yðvart líf.

Menn hafa jafnan fundið það, að sá er mestur maðurinn, sem þyngstar byrðar getur borið fyrir aðra og er fús á að taka þær á sitt bak, þegar þörfin kallar að. Annars mun vorkunnsemin með þeim sem bíggt áttu þá sem nú hafa verið ein aðalhvötin til hjálpar. »Skjóls þykist þessi þurfa«, segir Helgi Ásbjarnarson, þegar Gunnar Þiðrandabani klappar á dyrnar hjá honum. Það er hlý mannúð í þessum einföldu orðum. Þátturinn um Gunnar Þiðrandabana er annars eitt hið bezta dæmi þess, hvernig drengskaparmenn, jafnt konur sem karlar, reyndust sekum mönnum. Þau eru ekki fá dæmin um konurnar, sem taka við slíkum mönnum og veita þeim lið, jafnvel gegn bændum sínum, svo sem Guðrún Ósvífrsdóttir Gunnari gegn Þorkeli Eyjólfssyni, Bergljót Halldóri Snorrasyni gegn Einari Þambarskelfi, Ragnhildur, dóttir Erlings Skjálgssonar, Steini Skaftasyni gegn Þorbergi Árnasyni, manni sínum. Þá sópar heldur að Þorbjörgu digru, er hún tekur Gretti úr höndum þrjátíu bænda, sem ætla að hengja hann, og svo mætti lengi telja. Fáar sögur um þessi efni finst mér þó jafnast við Gísls þátt Illugasonar. Faðir hans hafði verið drepinn á Íslandi af Gjafvaldi hirðmanni Magnúsar konungs berbeins, þá er Gísl var sex ára, og horfði barnið á þetta. Seytján vetra gamall fer Gísl til Noregs með þeim ásetningi, að hefna föður síns. Honum tekst það. Hann vegur Gjafvald einn dag á stræti í Niðarósi, snýr svo á flóttu og lýsir um leið víginu á hendur sér. Hann er tekinn og settur í fjötra og varðhald. Framkoma hans öll er hin drengilegasta. Þá voru um 300 Íslendingar staddir í bænum, þar á meðal Teitur, son Gizurar biskups, og Jón prestur Ögmundsson, er síðar var biskup á Hólum. Magnús konungur var ákafa reiður og vill eigi annað en Gísl sé tekinn af lífi. Íslendingar halda nú fund með sér. Þá mælti Teitur: »Hér horfist eigi skörulega á um vort mál, ef samlandi várr ok fóstbróðir mikilsverður er drepinn; enn allir megu vér þat

sjá, hversu mikit vandkvæði er at bindast við mál þetta, at sá veðsetr sik ok fé sitt. Nú legg ek þat til ráðs, at vér gefim á konungs dóm; en ef þess skal engi kostr, at maðrinn hafi líf, þá sém vér allir drepnir eðr hafim vart mál ella; viljum vér þeim at fylgja, er formaðr gerist. Þeir kváðust allir hann vilja fyrir sér hafa, ok hans ráðum at fylgja. Hann segir: »Svá megu þér ætla, at allir skulu þér mér eiða sverja, at hvárki sparit þér yðr né fé yðart, til þess er ek vil fram fara um þetta mál. Þetta gerðu þeir. Þeir fara nú til stofunnar þar sem Gísl var geymdur, leysa hann úr fjöðrum og hafa hann með sér á þingið, þar sem konungur ætlar að dæma um málið. Þar fær loks Jón Ögmundsson leyfi konungs til að tala. Hann heldur þrumandi ræðu, sem er jafn fyndin og hún er einarðleg, og skorar á konung að sýna miskunn og réttlæti. Málið endar þannig, að konungur gefur Gísl líf, tekur við bótum fyrir vígið og gerir hann hirðmann sinn í stað Gjafvalds. Þá mælti konungur til Jóns prests: »Vel virðist mér þitt formæli; hefir þú af Guðs hálfu talat; vilda ek gjarna vera undir þínum bænum, því at þær munu mikit mega við Guð, því at ek trúi at saman fari Guðs vili ok þinn. Þátturinn endar á þessum orðum: »Gerðist Teitr ágætr maðr, ok varð skammærr. Enn Jón prestr varð biskup at Hólum, ok er nú sannheilagr.

Í þessum þætti rennur saman kvöldroði heiðins og morgunroði kristins drengskapar. Þetta var árið 1096 eða 1097. Þá er nálega öld liðin frá því að kristnin er lögtekin á Íslandi. Gísl fylgir hinni heiðnu drengskaparhugsjón, er hann hefnir föður sins. Biskupssonurinn gengst fyrir því, að allir Íslendingar sem þarna eru staddir leggi líf sitt í sölurnar fyrir hann. Og svo kemur presturinn og flytur erindi kristindómsins um miskunn og réttlæti í stað hefnda. Einurðin í ræðu hans er hin sama og sú, er kom fram í tiltektum landa hans, sem bjóða konunginum birginn með vopnum. Allar raddir drengskaparins verða þarna samróma, beygja vilja eins hins harðvítugasta konungs og skapa frið og sátt.

Af öllum drengskaparmönnum, er fornaðgur vorar segja frá, finst mér þó Sighvatur skáld Þórðarson glæsi-
legastur. Í einni af vísu sínum leggur hann áherzlu á það, að augun hans svörtu séu íslenskt, og þau augu hafa eflaust verið spegill mannvits og mildi og drengskapar. Sighvatur sýnir það allra manna bezt, hvernig drengskapurinn gerir mann frjálsan, og hvernig hann laðar aðra að sér og sveigir vilja þeirra á réttar brautir. Sighvatur verður einkavinur og ráðgjafi Ólafs konungs Haraldssonar. Þó þorir hann að heimsækja óvin hans, Knút Englandskonung, og þiggja af honum gjöf. Hann er jafn upplitsdjarfur, þegar hann kemur í höll Ólafs næst og spyr hvar hvar hann ætli sér sæti. Hann er frjáls maður og fer sinna ferða. Og konungur finnur það ósjálfrátt, að hans er sæmdin að hafa slíkan mann við hönd sér. Óviðjafnanleg er sagan um það, er Sighvatur tekur að sér að gefa nýfæddum syni Ólafs konungs nafn. Ólafur, sá hinn riklyndi konungur, verður eins og barn í höndum Sighvats. Sighvatur ræður einkamálum hans til lykta upp á sitt eindæmi og gerir það svo vel, að konungur dást að, þegar hann hefir áttað sig. Sighvatur er hans betri maður. Og þegar Magnús Ólafsson er orðinn konungur og beitir svo hörðu við bændur, að liggur við uppreisn í Noregi, þá er svo til stilt, að Sighvatur verður að segja konungi til syndanna og yrkja sínar ódauðlegu Bersöglisvísur: »Eftir þessa áminning skipaðist konungur vel«, segir Snorri. Sighvatur er samvizka samtíðar sinnar.

Bersöglin, sem þarna tekur í sjálfa ríkisstjórnartaumana, er enn einn þáttur drengskaparins, og það sá sem ef til vill var almennastur með forfeðrum vorum. »Þér eruð hugkvæmir ok höfðingjadjarfir margir Íslendingar«, sagði Magnús konungur góði við Hreiðar heimsku. Og um Þórarinn Nefjólfsen er sagt, að »hann var allra manna vitrastr ok orðdjarfastr við tigna menn«. Óteljandi eru tilsvörin sem vér dæmst að í fornsögum vorum. Oss furðar á mannvitinu sem í þeim ljómar, vér undrumst hve vel þessir menn koma fyrir sig orði við hvern sem

þeir eiga. En það er um orðfimina eins og um vopnfimina. Hvorttveggja verður að engu ef djörfungina, vaskleikann vantar. Sá sem engan óttast, hann er alstaðar eins og heima hjá sér. Hann nýtur sín alt af. Hugkvæmnin er ávöxtur djörfungarinnar, því að auga hins djarfa hvarflar ekki. Í ljósi djörfungarinnar heldur hver hlutur sínum svip og eðli. Þess vegna voru forfeður vorir jafnhitnir hvort sem þeir vógust með orðum eða sverðum. Þeir sáu alt af ljóst hvar höggstaður var fyrir. Og eins og þrjú sýndust sverðin á lofti í höndum vígfimra manna, þannig eru oft mörg hugsanaleiftrín í einu svari. Þegar Bórkur digri segir við Ingjald í Hergilsey, að hann væri þess maklegur að hann dræpi hann fyrir hjálpina við Gísla Súrsson, svarar Ingjaldur: »Ek hefi vánd klæði, ok hryggir mik ekki, þó at ek slíti þeim ekki gerr; ok fyrr mun ek láta lífit, enn ek gera ekki Gísla þat gott, sem ek má, ok firra hann vandræðum«. Slik ódaudleg orð mætti lengi telja.

Í orðspeki forfeðra vorra og dirfsku er hreinviðrisandi, sem hressir og göfgar. Þarna voru menn sem ekki sögðu já og amen við hverri vitleysu sem borin var fyrir þá. Þarna voru menn sem ekki töldu sér skylt að »binda« ávalt »bagga sína sömu hnútum og samferðamenn«. Þarna voru menn sem þorðu að setja sitt mark á orð sín og gjörðir og taka sjálfir afleiðingarnar. Þarna voru menn sem þorðu að segja sannleikann, þó þeir ættu á hættu að verða höfði skemri fyrir bragðið. Hver maður var fyrst og fremst sjálfgevingur, ekki vélasmíði, steypdur í neinni ríkissmiðju. Þess vegna lifa orð þeirra og hugsanir enn. Þess vegna verða þeir aldrei steypdir upp.

Og ef vér nú litum á fornþólkmentir vorar, ekki frá efnisins hlið, heldur meðferðarinnar, þá sjáum vér sama drengskaparmótið, sömu virðinguna fyrir sannleikanum. Ari fróði, faðir íslenzkrar sagnaritunar, segir í formálanum fyrir Íslendingabók sinni: »En hvatki es missagt es í fræðum þessum, þá es skylt at hafa þat heldr, es sannara reynisk«. Það er eins og þessi gullnu orð hafi verið

skrifuð í hjörtu islensku sagnarítaranna. Í þessum anda rituðu þeir. Þess vegna njóta persónurnar, sem sögurnar segja frá, sín svo vel í þeim. Þær njóta sannmælis. Er það ekki merkilegt, að þessir kristnu söguritarar skyldu aldrei halla á heiðna menn, aldrei sýna merki neinnar hlutdrægni í lýsingum af þeim? Er það ekki aðdánleg sjálfsafneitun, að láta aldrei skoðana sjálfra sín að neinu getið, láta persónurnar lýsa sér í orðum sínum og athöfn-um, vera sjálfur spegill, er skilar réttri mynd af þeim, en koma ekki með á myndina. Þessi sannleiksást helzt líka á þeirri öld þegar minst var af drengskap og mest af níðingsverkum unnið — á sjálfri Sturlungaöld. Óvilhallara sögurit en Sturlungasaga hefir víst sjaldan eða aldrei verið skrifað: »Hann vissum vér alvitrastan og hófsamastan«, var sagt um Sturlu Þórðarson.

Þessi óvilhalla athygli á því sem frumlegt var í fari hvers manns, hinn skarpi skilningur á manngildinu, er eitt hið fegursta í fari forfeðra vorra. Eg hefi heyrt að í Vesturheimi sé stundum sagt á enska tungu um menn, að þeir séu svo og svo margra dollara virði, og þá átt við, að þeir eigi svo og svo marga dollara. Forfeður vorir mundu aldrei hafa látið sér slík orð um munn fara. Þeir kunnu vel að greina milli þess hvað maðurinn var og hvað hann átti. Þeir vissu »einn, er aldrei deyr — dómur um dauðan hvern«. Þeirra metnaður var að láta eftir sig orð og verk sem ætíð yrðu í minnum höfð og verða þannig sistarfandi afl í lífi kynslóðanna. Og þeir vissu vel, að uppspretta slíkra orða og verka er drengskapurinn. Sú hugsjón ætti um allar aldir að lifa með þjóð vorri, hvar sem hún fer, og hún mun lifa þar meðan andans lindir forfeðra vorra fá að streyma hreinar frá einni kynslóð til annarar. Á engu er heiminum meiri þörf en á drenglyndum sálum, mönnum sem þora að gera það sem þeir sjálfir telja rétt og rísa gegn því sem þeir sjálfir telja rangt. Og þörfin hefir aldrei verið meiri en nú. Síðustu árin hafa fært mannkyninu blóðugar sannanir fyrir því, hvað af því leiðir, þegar einstaklingarnir verða

að eins hjól í ríkisvélinni, hjól sem verða að snúast eftir því sem stýrt er, hvort sem vitringur eða vitfirringur situr við stýrið. Í menningu nútíðarinnar miðar margt að því, að steypa sem flesta í sama móti, gera einn öðrum líkan og drepa þar með frumleik og ábyrgðartilfinningu einstaklingsins. En það er á móti lögum lífsins sjálfs. »Skoðið akursins liljugrös, hversu þau vaxa«. Þar er ekki eitt blað nákvæmlega eins og annað. Einkenni lífsins er frumleiki, fjölbreytni, og takmark alls skipulags ætti að vera það, að samrýma alla þessa fjölbreytni, þannig að hver fengi að þroskast og lifa samkvæmt instaðli sínu og þó öðrum að meinalausu. Það gengur ekki rýskingalaust, en því meiri sem drengskapurinn er, því meira verður víðsýnið, því dýpri skilningurinn og því betri hin frjálsa samvinna.

Guðm. Finnbogason.

Einsamall á Kaldadal.

Ferðalýsing eftir *Guðmund Magnússon*.

»Sex eru liðin síðan ár« — eins og þar stendur. Sex ár eru liðin síðan eg var á ferð um þessar stöðvar. Hvílik áhrif þær hafa haft á mig, verður bezt af því ráðið, hvað eg man eftir því sem þar bar fyrir mig.

Dagurinn, sem eg þá var um kyrt í Kalmanstungu, er jafnan tvílitur í endurminningu minni. Annar helmingurinn er koldimmur, hinn er skinandi bjartur. Það kemur af því, að fyrri hluta dagsins var eg niðri í Surtshelli, en síðari hlutann uppi á Strútnum.

Surtshelli ætla eg að láta eiga sig að mestu. Svo hafa margir lýst honum, að auðvelt er að fá einhverja hugmynd um hann. En ætti að lýsa honum ítarlega, — honum sjálfum og öllum afhellunum — þá veitti ekki af heilli bók. Og hún kemar einhvern tíma.

Eg læt nægja að geta þess, að Surtshellir er óvistlegasti staðurinn, sem eg hefi komið í. Mér liður ekki úr minni klungrið, sem menn verða að klöngrast yfir fyrir innan hellismunnan, og þekjan uppi yfir því, sem grillir upp í við glætuna úr hellismunnanum. Innan um slík feikna-björg verður maður að smjúga og skriða eins og ormur. Og björg af sama tægi virðast hanga laflaus í þekjunni yfir höfði manns, að eins föst á blábrúnunum. Ef eitthvert þeirra kæmi —? Nei, í hamingju bænum lítta ekki upp fyrir þig, er þú vogar þér inn í Surtshelli, slík sjón getur orðið taugum þínum um megn. Að enginn skuli hafa drepíð sig þarna! En þar hefir enginn maður svo

mikið sem limlest sig. Hellirinn hlýtur að vera vígður Skyldi nafni minn hinn góði hafa leitað sér þar hælis?

Þegar inn kemur úr klungrinu stendur maður í hvelvingu, sem yfirgengur langsamlega alt, sem gert er af mannahöndum í heiminum. Slika brikabygging byggir enginn mannlegur máttur. Hvelfing Pálskirkjunnar í London er eins og barnaleikfang hjá þessu.

Innan skams gengur maður á gömlum, hörðum hjarnfönnum í hellisbotninum, þar til maður kemur aftur undir bert loft. Það er undir fremstu gjánni og þar er ræningjabælið til beggja handa, beinahellirinn öðru megin, vígishellirinn hinum megin. Því að Surtshellirinn er gamalt ræningjabæli. Um það verður aldrei þráttað.

Eg varð guðsfeGINN að komast aftur út og upp á hraunið, án þess nokkurt af þessum heljarbjörgum dytti ofan í höfuðið á mér. Seinna klöngraðist eg ofan í instugjána og inn í »isorgelið«. Þar var þeim mun verra en í framhellinum sem myrkrið var svartara, gólfíð hálla, loftið inniklemdara og kuldinn ætlaði að drepa mann. En fátánlegt er að sjá ljósið borið innan um »orgelpípunar«, og enginn getur séð þá sjón í draumi, nema hann hafi áður séð hana í vöku.

Af öllu því, sem eg hefi heyrt um Surtshelli, er mér einnafastast í minni kvæði Gríms Thomsens, þegar hann og förunautar hans setja séra Pál Thorarensen í þá þraut að kveða bergmálið í kútinn. Grimur endar með þessu erindi:

Ef draugar kynnu að drekka vín,
oss datt í hug að minnast þín,
sem „hjartað áttir blaðið kurt“, —
og hressa líka gamla Surt.
Við skildum eftir falla flösku og fórum burt.

Fám klukkustundum síðar var eg kominn upp á Strútinn. Tveir drengir frá Kalmanstungu voru með mér. Fjórir hestar stóðu bundnir á streng í flesjunum fyrir

neðan há-hnúkinn og biðu eftir okkur. Dönsku mælinga-mennirnir höfðu látið íslenzku hestana bera sig alla leið upp á hnúkinn, og meðal þeirra var þó maður, sem vóg um 100 kg. Það vona eg að aldrei verði íslenzkur siður.

Einu sinni fyrir mörgum árum, þegar ferðapráin og fjallgöngupráin brann mér heitast í huga, spurði eg Ögmund Sigurðsson, nú skólastjóra, hvaða fjall hann gæti vísað mér á, þar sem víðsýni væri mikið og fagurt, sem eg gæti notið án þess að stofna mér í nokkurn vöða. Eftir litla umhugsun benti hann mér á Strútinn hjá Kalmanstungu. Þetta holla ráð læt eg nú berast til annara, stutt af minni eigin reynslu. Hvergi á Íslandi er auðveldara að komast að miklu og fögru víðsýni.

Strúturinn er 921 metrar á hæð (rétt að segja 3000 fet. Hengillinn, til samanburðar, 771 metrar) og liggur prýðilega við útsýni yfir allan norð-vesturhluta landsins. Hann stendur á takmörkum bygða og öræfa, norðan og vestan undir höfuðjöklnum, og liggja að honum láglendar heiðar á þrjá vegu. Eiríksjökull er »hinum megin við torgið« ef svo mætti að orði kveða, hæfilega langt burtu til að njóta sín, og öll Langjökuls-breiðan þar suður og austur af.

Þeim, sem opin hafa augu fyrir því, sem er að gerast í náttúrunni, er Strúturinn merkilegt fjall, því að hann er fjall, sem er að fjúka. Það eru nú að visu fleiri fjöll, en fá hér á landi, þar sem það kemur jafn skýrt í ljós. Eins og hann er nú hefir landnyrðingurinn sniðið hann og snikkað til. Hann er hæstur að norðan, brattastur og hvassastur, en smá-hallar suður og vestur af, því að þar skilar stormurinn sumu af því aftur, sem hann rifur úr honum að norðan. Að norðaustan er djúpt slöður eða hvíft inn í hann, því að þar skella á honum kastvindarnir ofan af Eiríksjökli.

Norður á há-hnúknum er mælingavarða. Hún er lík hverri annari mikilli vörðu og vel hlaðinni tilsýndar, en þegar nær er gengið, skilur hún sig frá þeim. Fyrst og fremst er hún óvenju-vel hlaðin og síðan öll fjötruð utan

með gildum járnvir. Undir þessi járnbönd höfðu nokkrir ferðamenn smeygt nafnsþöldum sínum.

Þegar svo hátt er komið yfir venjulega vegu manna, verður manni fyrst fyrir að svala sjóninni — teiga viðsýnið í löngum drögum, fá yfirlit yfir hina miklu heild, áður en maður fer að athuga hið einstaka. Hér var víður hringur og svipmikill. Okið og Borgarfjarðarfjöllin í suðri og héraðið sjálft með blikandi árnar og býlin hvert við annað undir fjöllum. Í vestrinu Baula, Snæfellsnessfjallgarðurinn og Snæfellsjökull, en norðan við Breiðafjörðinn Skorarhlíðar, Hornatær og Gláma. Í norðrinu Strandafjöllin alt norður að Reykjahyrnu, Vatnsdalsfjöllin, Skagafjöllin og Mælifellshnúkur, en yfir að lita allur vatnaklasinn á Arnarvatnsheiði og Tvídægru. Til hafsbrúnar sér bæði norður af Húnaflóa og vestur af Faxaflóa.

Mest þótti mér um vert að lita suður á bóginn, þar sem nú blasti við endilangur Kaldidalur, sem eg ætlaði mér að fara daginn eftir. Það verður lítið úr Skúlaskeiði, þegar maður lítur yfir það norðan af Strút, og allan veginn finst manni maður geta mælt í spönnum. Okið dregur að sér meiri athygli, þessi fallega bunga, fannhvit að ofan. Jöklaklasinn í austrinu er ægilega fagur. Snjóskjöldótt heljarfjöll, hornótt og hrikaleg, í jökulbrúnunum, en mjúkar, mjallhvítar bungur hið efra.

Það, sem einkennir þetta landslag, eru bungusteyturnar, skjaldfjöllin. Þau eru frá yngstu öld hinna miklu basaltgosa og hvergi eins fögur og regluleg eins og á Sandwicheyjunum og Íslandi, og hvergi á Íslandi eins mikið um þau eins og einmitt á þessu svæði. Þegar farið var að draga mátt úr basaltólgu þeirri, sem í fyrndinni hafði skapað stóra fláka af yfirborði hnattarins, héldu smágos áfram um einstök uppvörp, lítil sýnishorn af þeim feikna gosum sem áður höfðu verið. Vatnsgufa var lítil í gosunum, svo að ekki hefir verið mikið um stórar sprengingar. Hraunleðjan ólgaði upp úr gígunum og rann út til allra hliða, ágætlega bráðin. Hver ólgan kom eftir aðra með ofurlitlum hvíldum á milli. Á þennan hátt

steypust upp hinar breiðu bungur, sem allar eru með gíg efst í kollinum, en allar með hægum halla til allra hlíða, nokkurn veginn jöfnum, og allar með hverri hraunsteypunni ofan á annari. Vafalaust eru allar bungurnar undir Langjökli þannig myndaðar. Þessar steypur hafa líklega bygst upp rétt fyrir síðustu ísöld.

Veðramót. — Það er eitt af þessum ágætu íslenzku alþýðuorðum, sem grípur yfir mikla hugsun. Aldrei hafði eg skilið það til fulls fyr en þenna dag, sem eg stóð uppi á Strútnum. Hann stendur á veðramótum.

Sjaldan viðrar eins á Suður- og Norðurlandi, og munar oft svo miklu, að alt annað sumar er fyrir norðan en sunnan. Svo var þetta sumar: rosa- og vætutið á Norðurlandi, þurka- og blíðu-tíð á Suðurlandi.

Beltið, sem skiftir veðráttunni, liggur um höfuðjöklana og vestur af; skiftist stundum um Snæfellsnes, stundum um Glámu. Borgarfjörðurinn fær beggja blands. Strúturinn er í miðju beltinu.

Og nú fékk eg að sjá sjón, sem eg hefði fráleitt getað imyndað mér.

Fyr en varði var kominn úfinn og ljótur þokumökkur á norðurheiðarnar. Hann kom eirs og skollinn úr sauðarleggnum upp úr dölunum í Húnavatnssýslu. Þegar hann kom upp á heiðarnar, þéttist hann og bólgnadi út, en fór þó ekki lengra að sinni. Og hann kom ekki einsamall. Beljandi landnyrðingur var með honum, sem eins og kýfði honum ofan á heiðarnar. Vötnin fyrir neðan okkur hvítfyssuðu og rótudust upp frá grunni af storminum. Skinnaköstin þutu eftir þeim eins og eldingar. Þetta var nú norður undan, en þegar við litum heim að Kalmastungu, sem stendur undir suðurdrögum fjallsins, sáum við að rokið var líka komið þangað. Það tætti reykin úr reykháfinum og fólkið úti á túninu ætlaði að missa flekkinn út úr höndunum á sér. Og það sleit vatnið upp úr straumöldunum á Geitlandsánum. En — — uppi á Strútnum var blæja-logn, svo blæ-kyrt veður, að eg

kveikti í pípunni minni áveðurs við vörðuna, án þess svo mikið sem halda hendinni fyrir loganum á eldspýtnni.

Svona undarlega getur veðrið hagað sér.

Eiríksjökull er fagur ofan af Strútnum. Þar stendur maður mátulega hátt til að virða hann fyrir sér allan, hátt og lágt. Hver felling, hver minsta mishæð, blasir við manni. Jafnvel hinar hársmau sprungur uppi í sjálfum jöklinum sjást með berum augum. Í venjulegum ferðasjónauka getur maður lesið á hann eins og bók. Í skarðinu milli hans og Langjökuls sér ofan á tvö leirgul vötn, lukt háum hömrum, sem blunda þar í fjallakyrðinni. Niður undan öðru þeirra koma efstu drög Hvítár í Borgfirði undan fjallinu.

Eiríksjökull er steyppt bunga, eins og hin fjöllin, skjaldmynduð hraunsteypa, þakin jökli. En sá er munurinn, að eftir að fjallið gaus, hefir landið brotnað og sigið niður kringum Jökulinn. Við þetta hefir móbergshellan undir honum sjálfum orðið að fögrum fótstalli. Hraunbrúnirnar vernda móbergið fyrir eyðingu. Skriðurnar eru því snarbrattar, tæplega gengar, og brúnirnar yfir þeim yfirleitt heilar og jafnar, engin djúp og ljót gil eins og í öðrum móbergsfjöllum. Á einum stað stendur klettaröð eins og túða á tepotti fram úr skriðunum og nær nærri því upp á móts við brúnirnar. Það er Eiríksnípa.

Þessi lögun gerir fjallið svo ósegjanlega fagurt, að það á líklega hvergi í heimi líka sinn. Dökkur, snarbrattur fótstallurinn hið neðra, alstaðar jafn hár, en mjallhvitt hvelið hið efra, örðulaust eins og skurn á eggi. Svo mikilfenglegt musteri hefir enginn Salómon bygt.

Sumarið 1904 var það eitt kvöld, að eg var á ferð fram eftir Viðidal. Eg var þá nýkominn sunnan úr Sviss og myndir Alpajöklanna hvíldu enn í huga mínum. Eg hafði séð Tödi, Finsteraarhorn, Jómfrúna og fleiri fræga jökla, og hafði séð Alpaglódina (*Alpenglühen*) sem Schiller hefir gert heimsfræga. En nú bar fyrir mig sýn, sem mér kom óvart. Eg nam staðar til þess að njóta hennar. Það

var sem mjallhvít sól, með örlitlum roðablæ, mörg hundruð sinnum stærri en okkar sól, væri að renna upp fyrir heiðarnar í suðri. Eg hafði þá aldrei séð Eiríksjökul fyrri. —

En hvað við mennirnir og allar okkar hugsanir og tilfinningar, skáldskapur og listir, er alt samgróid náttúrunni, sem við lifum og öndum í. Í einu æfintýri í Grettissögu bregður fyrir mynd af manni, sem hvergi á sinn líka. Það er Hallmundur, sem Hallmundarhraun í kringum Eiríksjökul er kent við. Bjartari, glæsilegri og fegurri bergbúa getur hvergi. Grettir hittir hann á Kili, ætlað að stöðva hann og ræna og tekur um taumana á hesti hans. Hallmundur hefir ekki mörg orð, en strýkur taumana úr höndum hans. Grettir litur í lófana. — — Þar er ekki æðran eða vanstillingin, þótt ekki skorti aflið. Aðvörunin er blíðari en þegar vagnstjórnarnir í Reykjavík eru að slangra til strákanna sem hengja sig aftan í vagnana. Það, að skinnið fór úr lófunum, var aðeins því að kenna, að Grettir hélt of fast. Og síðar bætir Hallmundur honum það drengilega upp í hamraskarðinu á Arnarvatnsheiði, er hann berst með honum ósýnilegur og vegur 12 menn á meðan Grettir vegur 6. — — Í þessari dásamlegu mynd er Eiríksjökull orðinn lifandi.

Daginn eftir lagði eg suður á Kaldadal.

Ólafur í Kalmanstungu fylgdi mér suður yfir Geitlandsárnar, vildi vita mig komast yfir þær heilu og höldnu. Fyrsta torfæran var rétt við túnið. Það var Hvítá. Hún er þar lítið breiðari en lækur, en straumpung og vatnsmikil og illa niðurgrafin, svo að hún var hestunum á bóg-hnútu. Hinum megin árinna taka við eyðisandar, víða stórgrýttir, en með vatnsrásum á milli, sumum hálfblautum. Þetta er Geitlandið — eða Geitlöndin. — Í fornsögunum er þess getið, að þar hafi verið skógi vaxið land og talsverð bygð. Nú hafa árnar eytt þar öllum gróðri. Þó má sjá votta fyrir því, að sagnirnar eru sannar, því að sumstaðar standa stórir bálkar og sprek upp úr sandin-

um, og í tungunni fyrir norðan Hvítá hefir skógurinn haldist til þessa dags og er nú í framför. Einhvern tíma hafa árnar hlaupið, ef til vill af eldsumbrotum uppi í jöklinum, enda minnir mig, að Ólafur benti mér á skellu uppi í jöklinum, einhverstaðar í nánd við Hádegisfell, þar sem nýlega hafði orðið eitthvert rask, án þess menn yrðu þó eldsumbrota varir, en þá hafði hlaup mikið komið í árnar. Nú rennur aðal-vatnsmagnið sunnan til á sandinum, en auðséð er, að það hefir vaðið um hann allan. Vatnið er fúlt og ljótt, minnir á Jökulsá á Sólheimasandi. Háar drílur rísa á straumstrengnum, og láta ókunnugir hestar illa við að vaða þar út í, þótt ekki sé breitt. Mér þótti vænt um að hafa kunnugan mann með mér, því að mér hefðu litist þessar sprænur ófrýnilegar, hefði eg verið einsamall.

Neðst í Torfunum skildi Ólafur við mig, og eftir að hann hafði sagt mér prýðilega til vegar, bað hann mig vel fara. Síðan reið hann út á Geitlandssandana heim á leið, en eg stefndi til fjalla.

Það er löng leið og erfið upp Torfurnar. Hvergi er bratt að visu, en alt á fótinn og ætlar aldrei að þrjóta. En eftir því sem hærra dregur frikkar útsýn norður yfir, á Strútinn og Kalmanstungu og ofan eftir Hvítársíðunni. Loks kemur maður að einkennilegri og allstæðilegri vörðu, sem á vist að sýna manni, að hér þrjóti loks brekkan. Eitthvað lá af beinum kringum vörðuna, sem gaf grun um, til hvers hún hefði einhvern tíma verið notuð. Þetta er þó ekki hin landfræga beinakerling á Kaldadal. Sú er miklu sunnar. Þetta eru vist hin svonefndu Lambárdrög.

Nú tekur við hið nafnkunna Skúlaskeið.

Sjálfsgagt er ekkert mannsbarn á landinu, sem ekki hefir heyrt nefnt Skúlaskeið. Það á þó ekki frægð sína neinum undrum að þakka. Þetta er ekkert annað en grýtt og gróðurlaus heiði, svo grýtt, að óviða mun fundist hafa meiri torfæra, einkum framan af sumri, meðan

aurar voru innan um stórgrytið. Ekki mun frægðin heldur því að þakka, að Bjarni Thorarensen lét byrja á því fyrir eigin reikning að ryðja Skúlaskeið, þegar hann var að berjast fyrir vegabótum hér á landi og koma mönnum í skilning um nauðsyn þeirra. Svo ötul málafylgja er meira að segja furðu fáum kunnug. Nei, Skúlaskeið á frægð sína að þakka ofurlitlu kvæði eftir Grím Thomsen. Það er »stirt og illa ort«, eins og fleira eftir Grím, en það hefir samt læst sig inn í hug og hjarta hvers Íslending. Það er að þakka hinni einstöku velvild til íslenzku hestanna, sem kvæðið er þrungið af, einlægu samkendi með þeim og næma skilningi á skapferli þeirra og kjörum. Aldrei áður höfðu þessir þörfu, þolinmóðu þjónar eignast annan eins talsmann. Einu sinni mætti eg alkunnum hestaprangara á Krókeyrinni fyrir innan Akureyri. Hann kom úr kaupstaðnum og var blindfullur. Hann slagaði og slangraði til og gat varla hangið á hestinum, en hesturinn hallaði sér allavega til, til þess að missa hann ekki af baki. Þegar hann fór fram hjá mér, kvað hann við raust — hálf-skælandi: »Það var eins og blessuð skepnan skildi«.

Eg hafði aldrei farið Kaldadal fyrri, og vafðist því milli vonar og kvíða um það, hvernig mér mundi reiða af. Þoka var á fjöllunum og dimt upp til dalsins að líta, og eg var ekki viss um, hvort þokulaust væri þar sem vegurinn lægi. Björn heitinn Jónsson, sem þá var ráðherra, hafði farið Kaldadal suður fyrir fám dögum ásamt fjölmennu föruneysi, og þótt rignt hefði síðan, mátti víða sjá hestasparkið í götunni. Auk þess er allur vegurinn ruddur. En gryttur er hann engu síður og víða neyddist maður til að sneiða út úr brautinni. Loks var eg búinn að feta Skúlaskeið á enda, og nú þurfti eg að sneiðalangan krók fyrir krapatjörn, sem vafalaust hefði verið á sund, til þess að komast upp á Langahrygg. Eg komst það þó á endanum og um leið — upp í þokuna.

Langihryggur er gömul jökulalda (sbr. lýsingu Thoroddsens). Jökullinn á Okinu hefir eitt sinn náð þangað

og ýtt þessu á undan sér. Nú er langt þaðan upp að jöklinum, en hryggurinn liggur bogadreginn austan í Okinu, og fleiri slíkir bæði fyrir ofan hann og neðan. Minnir þetta landslag á hrikaleg hornahlaup á fjallinu. Meðfram öllum hryggnum að ofanverðu liggur skafl, sem sjaldan hverfur alt sumarið. Þókan var svo þykk, að sjaldan hjó ofan í skaflinn, þó að vegurinn lægi í brúninni, en sá var munurinn, að hægra megin við mig var þókan hvít — yfir skaflinum — en hinum megin dökk — yfir auðum melunum. Auðséð var þó, að eg var neðst í þokunni, því að við og við lyfti henni litið eitt frá jörðu. Hjó þá í jöklana hinu megin dalsins og — mynnið á Þórisdal.

Aldrei hefir mér skilist betur en þennan dag hvernig fjallapókan hefir blátt áfram skapað útilegumanna-trúna, enda byrja flestar útilegumannasögur í þokunni. Maður verður undarlega á sig kominn uppi á reginfjöllum í blind-þoku. Einhver undarlegur beygur sezt að í manni, einhver undarleg ópreyja, sem menn megna ekki að hrinda af sér. Manni finst sér ekkert miða. — Alt af finst manni hann vera að fara fram hjá sama steininum. Alt af kviðir maður fyrir að mæta einhverju. Alt af heyrlist manni eitthvað. Alt af er eins og eitthvað sé á sveimi í kringum mann. Þannig var mér farið, og þannig var hestunum mínum farið líka. Eg hafði tvo hesta, sem eg átti sjálfur, svo samvalda að vexti og fegurð, að orð var á því gert hvar sem eg kom, að sjaldan sæust tveir slíkir í eins manns eigu. En nú voru þeir latir, alt af að sperra eyrun og hlusta, alt af hjartveikir, og eins og þeir mundu fælast þegar minstum vonum varði, og varla hægt að nudda þeim úr sporunum. Það ýrði litið eitt úr þokunni, svo að bæði eg og hestarnir urðum gráir utan af nærri ósýnilega smáum dropum. Það var þreytandi ferðalag. Mér fanst líkast því, að eg væri dauður og væri nú staddur milli tveggja heima á anda beggja hestanna, — gamli heimurinn horfinn, nýi heimurinn ekki runninn upp, og eg dæmdur til þess fyrir syndir mínar að hjakka alt af ofan á sama farið, strita og strita, en komast ekkert áfram!

Það var óbærileg kvöl. Mér leiddist ósegjanlega, og hefði eg ekki stöðugt þurft að hvetja hestana, hefði eg líklega sofnað. Upp úr leiðindunum fór eg loks að yrkja. Eitthvað af því kom skömmu seinna í Lögréttnu, en eg er búinn að týna því og gleyma, sem betur fer.

Loksins var vist Langihryggur á enda. Eg kom að gili, sem lá austur úr hryggnum og var fult af snjó. Eg fór af baki og teymdi hestana, því ekki var mér grunnaust um, að holt kynni að vera undir skaflinum. Það var þó ekki. En svo hafði þiðnað síðan Björn fór þar um, að varla sá votta fyrir harðsporum á skaflinum. Hitt var þó verra, að þegar eg var kominn út á miðjan skaflinn, sá til hvorugs landsins. Svo var þokan dimm. Eg stóð sem í gráum gufumekki og sá ekkert nema hjarnblettian kringum læturna á mér, vissi engar áttir, svo nærri lá að eg viltist. Það eina, sem benti mér á rétta leið, var slóðin mín og hestanna.

Mér kom nú í hug atvik, sem kom eitt sinn fyrir, er eg var sjómaður austur í Mjóafirði. Þá komum við úr róðri í bezta veðri, en blind-þoku. Dálitill utan-andvari var með þokunni, rétt svo að segl stóðu. Við höfðum kenningu af Krossnestanga og lögðum þaðan á ská inn og yfir um fjörðinn. Formaðurinn og hinn hásetinn lögðu sig þá fyrir til svefns, því að oft var þá litill svefntíminn á landi, en mér var trúað fyrir bátnum. Eg sigldi nú þá stefnu, sem tekin hafði verið, svo beint sem eg gat, sat við stýrið og lét morra í þessum litla kalda, sem var. Ekkert hafði eg að stýra eftir annað en kjölfarið aftur undan bátnum, og vakti eg einungis yfir því, að það héldist beint. Á að gizka miðfjarða hitti eg þrjá báta, sem allir stefndu þvert úr leið. Úr einum þeirra var kallað til mín: »Þið eruð að villast!« Svo hurfu þeir út á þokuna. En nú kom augnablikið, sem svo þrásinnis kemur fyrir á mannsæfinni, og er mörgum svo hættulegt. Maður efast — hikar og jafnvel hvíkar frá sannfæringu sinni, villist svo frá því sem rétt er og villist alt af meira og meira, stundum svo, að aldrei verður á því bót

ráðin. Eg yfirvann þó efann að þessu sinni. Og þegar eg kom undir ströndina fyrir neðan bæinn á Hoffi og þekti mig, vakti eg förunauta mína, heldur en ekki glaður. Þegar við komum inn að Brekkuborpi, komu sex bátar, sem allir höfðu vilst suður yfir fjörðinn.

Innan skams komst eg upp á melinn hinum megin við skaflinn, fann aftur brautina og fór á bak. Nú hallaði bráðum mjög undan fæti, og eftir litla stund var eg kominn niður úr þokunni.

Hvílík ljómandi fegurð!

Ekki minnst eg þess, að eg hafi í annan tíma orðið glaðari yfir fegurð og mikilleik íslenzkra óbygða en eg varð yfir því útsýni, sem nú skein við mér. Sólin stóð hátt yfir Súluunum í suðvestrinu og glampaði á fannirnar. Kvigindisfell og fjöllin þar suður af voru dimmblá og fannirnar í skugga. Lengst í suðri sáust Búrfell í Grimsnesi og Ingólfssjall eins og í ljósblárri móðu. Nær í sömu átt blikaði á Þingvallavatnið alt fjöllum girt. En austast í þessum hrikafagra hring var þó það fegursta af öllu. Þar reis við himininn »ógna skjöldur bungubreiður«. — Aldrei hefi eg séð Skjaldbreið jafn-tignarlegan.

Nú liggur leiðin úr fjallaprengslunum fram á slétta sanda, og útsýnið stækkar og vikkar við hvert spor. Að austan kemur fram Hlöðufell og allur fjallaklasinn suður af því; að vestan Skarðsheiðin. — Á endanum á dálitlu hæðadragi, sem gengur suður og vestur af Hrúðurköllunum, stendur hin landfræga beinakerling. Þar mátti eg til að koma við.

Ekki ætla eg að særa næmar tilfinningar nokkurs manns með beinakerlingarvísun, þótt eg efist mjög um, að siðferði manna sé þeim mun betra nú en áður, sem tepruskapurinn er meiri. En ekkert íslenzkt skáld hefir farið svo um Kaldadal á undanförnum öldum, að ekki hafi það stungið stöku að beinakerlingunni. Fyrst á 20. öldinni hefir það lagst niður — ef síðurinn er þá aldaða. Menn gætu byrjað snemma og talið alt til núlifandi manna,

og eg held að benda mætti á stöku eftir hvern einasta hagarðing, sem nokkuð hefir að kveðið, og vist er um það, að margar eru stökurnar smellnar, og sumar svo þfinar, að enginn hneykslast á að heyra þær. Sumir eru svo góðir að leggja vesalings beinakerlingunni til mannlegar tilfinningar:

Veri þeir allir velkomnir,
sem við mig spjalla í trygðum,
eg get varla unað hér
ein á fjallabygðum.

Í þessari beinakerlingu mun einnig hafa fundist hin landfleyga staka:

Týnd er æra, töpuð er sál,
tunglið veður í skýjum.
Sunnefu hér súpi skál
sýslumaðurinn Wíum.

Páll Vidalín lögmaður var þá nýriðinn norður um, en Wíum sýslumaður kom á eftir.

Frá kerlingunni er skamt ofan að efstu grösum að sunnan. Eg varð þessum bletti sár-feginn, því að eg vissi að hestarnir voru bæði orðnir svangir og þyrstir. Eg fór þá af baki og fór að muðla flatbrauð og hangikjöt og drekka mjólk úr flösku, sem blessuð húsfreyjan í Kalmans-tungu hafði nestað mig með. Brauðið og hangiketið ætlaði að standa í mér, og mjólkinn var orðinn skekin í smjör og áfir, en alt var þetta samt blessuð hressing. Enginn skyldi leggja matarlaus á Kaldadal; til þess er hann of langur. Ekki var haginn góður og fult var þar af dökjum og fenjum og botnlausum smápyttum. Eg vissi það ekki fyr en á eftir, að þetta var hinn illræmdi Egilsáfangi. Egill var norðlenskur karl, einþykkur og sérvitur, sem árlega fór skreiðarferðir suður á land, eins og títt var á fyrri öldum. Það var mál manna, að ekki mætti snerta við þessum áfangastað, því að tröllin í Fanntóarfelli, sem er æxli suður úr Okinu, ættu hann, og væri hann engi þeirra. Egill skeytti þessu ekkert. Í átján sumur áði hann í áfanganum, og á hverju einasta sumri misti hann

hest ofan í síkin þar. En Egill lét sig ekki. Og þegar tröllin voru búin að fá átján hesta, gáfust þau upp.

Svo sem hálfrar stundar ferð sunnar eru Brunnar. Þar er hagi miklu betri, svo að eg gat ekki stilt mig um að lofa hestunum að gripa þar niður. Sjálfur varð eg hvíldinni feginn til að fá næði til að virða fyrir mér Skjaldbreið, sem nú blasti við mér, baðaður í síðdegissól-skininu. Einhver sögn er til um það, að Jónas Hallgrímsson hafi legið úti tjaldlaus í Brunnum og verið búinn að týna lestinni. Þar í döggvotu grasinu á hann að hafa ort þetta fræga og fagra kvæði. Þetta minnir mig á aðra sögn sama eðlis. Á melunum fyrir ofan Viðimýri í Skagafirði, þar sem vegurinn liggur austur af Stóra-Vatnsskarði, er á einum stað há þúfa. Þar á Hannes Hafstein að hafa staðið og litið þaðan yfir Skagafjörðinn, þegar hann orti hið gull-fallega kvæði »Af Vatnsskarði«. Eg fór eitt sinn upp á þessa þúfu, til þess að reyna að sjá Skagafjörðinn í þeim ljóma, sem Hannes lýsir. Mér tókst það ekki. En aftur sá eg þaðan annað, sem ekki varð séð frá veginum. Skamt suður frá þúfunni sáuust ofurlitlar tóftir, hálfsignar í jörð, og gamalt túnstæði í kring, sem nú var komið í órækt. Þetta eyðibýli heitir Viðimýrarsel. Þar stóðu síðast beitarhús. Í þeim beitarhúsum lá Bólu-Hjálmar banaleguna og dó þar. — Hannes hefir sagt mér sjálfur, að kvæði sitt sé ort um vetur suður í Kaupmannahöfn.

Spölkorn suður af Brunnum eru Hallbjarnarvörður, ofurlitil vörðutyppi á grýttum holtum, og þar liggur vegurinn norður á Uxahryggi. Sögnin, sem tengd er við þessar vörður, er svo stórfeld og áhrifamikil, að eg get ekki stilt mig um að setja hana hér, eins og hún er sögð í Landnámu:

»Snæbjörn son Eyvindar austmanns, bróðir Helga magra, nam land milli Mjóvafjarðar ok Langadals, ok bjó í Vatnsfirði; hans son var Hólmsteinn, faðir Snæbjarnar galta; móðir Snæbjarnar var Kjalvör, ok váru þeir Tungu-Oddr systrasynir. Snæbjörn var fóstaraðr í Þingnesi með

Þóroddi, enn stundum var hann með Tungu-Oddi eða móður sinni. Hallbjörn, son Odds frá Kiðjabergi Hallkelssonar, bróður Ketilbjarnar ens gamla, fekk Hallgerðar dóttur Tungu-Odds; þau voru með Oddi enn fyrsta vetr; þar var Snæbjörn galti. Óástúðlegt var með þeim hjónum. Hallbjörn bjó för sína um várit at fardögum; enn er hann var at búnaði, för Oddr frá húsi til laugar í Reykjaholt; þar voru sauðahús hans; vildi hann eigi vera við er Hallbjörn færi, því at hann grunaði, hvort Hallgerðr mundi fara vilja með honum. Oddr hafði jafnan bætt um með þeim. Þá er Hallbjörn hafði lagt á hesta þeira, gekk hann til dyngju, ok sat Hallgerðr á palli ok kembdi sér; hárit fell um alla hana ok niðr á gólfít; hún hefir kvenna bezt verit hærð á Íslandi með Hallgerði snúinbrók. Hallbjörn bað hana upp standa ok fara; hon sat ok þagði; þá tók hann til hennar ok lyftist hon ekki; þrisvar fór svá; Hallbjörn nam staðar fyrir henni ok kvað:

Ölkarma lætr (arma
eik firrumk þat) leika
Lofn fyr lesnis stafni
línbandin mik sínum;
biða munk of brúði,
(böl gervir mik fölván)
snertumk harmr í hjarta
hrót, aldrigi bótir.

Eftir þat snaraði hann hárit um hönd sér, og vildi kippa henni af pallinum, enn hon sat ok veikst ekki. Eftir þat brá hann sverði ok hjó af henni höfuðit; gekk þá út ok reið í brutt. Þeir voru þrír saman ok höfðu tvau klyfjahross. Fátt var manna heima, ok var þegar sent at segja Oddi. Snæbjörn var á Kjalvararstöðum, og sendi Oddr honum mann; bað hann sjá fyrir reiðinni, enn hvergi kvezt hann fara mundu. Snæbjörn reið eftir þeim með tólfta mann, ok er þeir Hallbjörn sá eftirreiðina, báðu förunautar hans hann undan ríða, enn hann vildi þat eigi. Þeir Snæbjörn kvámu á eftir þeim við hæðir þær, er nú heita Hallbjarnarvörður; þeir Hallbjörn fóru á hæðina og vörðust þaðan. Þar fellu þrír menn af Snæ-

birni ok báðir förunautar Hallbjarnar; Snæbjörn hjó þá fót af Hallbirni í ristarlið; þá hnekti hann á ena syðri hæðina ok vá þar tvá menn af Snæbirni, ok þar fell Hallbjörn; því eru þrjár vörður á þeirri hæðinni, enn fimm á hinni — —. (Landn. 30. kap.).

Svona stuttan, einfaldan og átakanlega-fagran sorgarleik hefir hvorki Sófókles né Shakespeare eftir sig látið. Slíkar perlur eru hvergi til í heimsbókmentunum nema í Íslendingasögunum.

Litlu sunnar er Sleðaás og sunnan undir honum Biskupsbrekka. Þar andaðist Jón biskup Víðalín í tjaldi 30. ágúst 1720. Nákvæm lýsing af þeim atburði er í Biskupasögum sr. Jóns Halldórssonar.

Nú fer að ganga á Kaldadalsveg og bygðin að nálgast, enda er hann nú ekki lengur rétt nefndur Kaldidalur, því að þrír heiðarvegir liggja norður til Borgarfjarðar af vegi þeim, sem maður er nú á. Vestast eru Uxahryggir — þar sem járnbrautin verður væntanlega í framtíðinni lögð milli héraðanna, — þá Okvegur eða »Fyrir Ok« og austast Kaldidalur. Þjóðsaga gengur um það í Þingvallasveitinni, að eitt sinn hafi Jón Þorláksson landsverkfræðingur vilst í þoku á Uxahryggjum. Hafi hann lent þar í fen og ógöngur og haft af því mestu mæðu. En árið eftir hafi hann látið varða Hryggina!

Yfir Tröllaháls er vegur ruddur og allgóður, en hverfur í leirflagi miklu sunnan við hálsinn, sem heitir Sandvatn og er þurt að mestu á sumrin. Þegar flagið er þurt, gjósa þar upp jóreykir svo miklir, að slíka mekki hefi eg aldrei séð. Vafalaust er það þar, sem Sörli veður fram »í þykkum moldar-mökki« fyrir hugskotssjónum Grims Thomsens. — Þaðan liggur leiðin yfir lágan fjallhrygg bak við Meyjarsæti ofan í Jórukleif, sem telja má hliðið að hinu fræga og fagra fordyri Þingvallasveitarinnar, Hofmannafloót.

Þar læt eg staðar numið, en ætla nú að taka hér upp mælingu Bergs Thorbergs á Kaldadalsvegi. Hann var amtmaður hér syðra, þegar vegurinn var gerður, og

sá um framkvæmd verksins. Lýsing hans er í Timariti Bókmentafélagsins I. árg. bls. 254 og er á þessa leið:

Frá Kalmanstungu í Lambárdrög . . .	3460	faðmar
Þaðan á Langahrygg (Skúlaskeið) . . .	4600	—
Langihryggur suður að Kerlingu . . .	6000	—
Kerling—Sæluhús	6600	—
Sæluhús—Jórukleif	6600	—
Jórukleif—Hofmannaföt	200	—

Allur vegurinn 27460 faðmar

eða 54920 metrar. Hver faðmur í þessum rudda vegi segir Bergur að kostað hafi 21 eyri.

Síðast, er eg leit til baka norður á Kaldadal, kúrði þókan enn yfir dalnum. Hún ljómaði að ofan í sólskininu, eins og jöklarnir, en undir henni var sorti. Að baki hennar var landnyrðingurinn, en sunnan við hana land-synningur, því að Kaldidalur lá á v e ð r a m ó t u m .

Og nú, er eg lít í huganum norður yfir Kaldadal, verður þar alt morandi kvikt fyrir innri augum mínum. Eg sé goðana koma að norðan með svo glæsilegri sveit, að »allir hyggja Æsi konna vera«. Eg sé Guðmund biskup Arason smá-mjakast fótgangandi suður úr fjallaþrengslunum með fullan þriðjung allra umrenninga landsins í eftirdragi. Eg sé stórflokka Sturlungaaldarinnar renna saman af öllum vegunum norðan af fjöllum og falla í einum farvegi niður á Hofmannaföt. Eg sé Jón biskup Arason, lotinn í herðum og öldurmannlegan, en syni hans, unga og glæsilega, sinn til hvorrar handar. Eg sé Guðbrand biskup og Arngrím lærða riða fót fyrir fót ofan slétta sandana suður frá Kerlingu, og tala saman um spaklega hluti. Eg sé Hallgrím Pétursson riða við hornistöð ofan yfir Tröllaháls. Eg sé lík Páls lögmanns Vidalíns flutt á kviktrjám norður á fjöllin, en alt stórmenni þingsins veita því föruneysi í heiðursskyni. Eg sé kennilyð Skálholtsstaðar standa harmandi kringum biskupstjaldið undir Sleðaási, þar sem mesti mælskumaður Íslands berst við dauðann. Eg sé skara eftir skara ólga fram, stiga

upp af jörðunni eins og fjallamóðuna, renna hvern inn í annan og greinast aftur sundur, koma og hverfa. Gissur jarl fer með fjölmenni norður á fjöllin til að veita Snorra Sturlusyni atlögu. Stefán grjótbiskup stefnir með enn þá meira fjölmenni sömu leið. Ferðinni er heitið vestur að Ögri. Ögmundur biskup ríður með her manns norður á fjöllin og fer geist, því að hann vill ráða svo litlu sem því, hver biskup verði á Hólum. Og innan um allar þessar vopnuðu legiónir sé eg iða hægfara skreiðarlestir friðsamra bænda og útvegsmanna, amboð kaupafólks og stóra rekstra, af mjallhvítu fjallafé — og loks sé eg glaða, bjartleita skólasveina, fara syngjandi, fulla af gáska og æskufjöri, svo ærslafulla, að þeir eru vísir til að óska, að

„— það yrði nú ærlegt regn
og íslenzkur stormur á Kaldadal“.

Og hvers vegna sé eg alt þetta?

Af því Kaldidalur var fram á okkar daga ein af lífæðum landsins.

Tvær þulur.

Hjásetupula.

Sólin skín á lauf og lyng
langt upp til heiða.
Hjarðsveinninn við hamralind
er hár sitt að greiða,
lokka sína ljósbrenda að greiða.
Aldan ber hans ungu mynd
eftir straumagljá.

»Hvert ætlarðu að líða
lindin mín smá?»

»Ég er að skynda ofan í dal
og út í sjá».

»Ef þú dalsins drotning sér
á döggslegnu engi,
leiktu þá lengi,
lind mín blá, á strengi,
alla þína indælustu strengi.
Segðu henni, af sárri þrá
sitji eg oft þér dapur hjá,
hugsi um snæbjart haustið þá
hana þegar eg fæ að sjá;
skautasvellin silfurgljá,
söng og dans og ljóð;
þegar hún ljúf og létt á tá
líður um sali til og frá
við minn barm og brosir
bjarteyg og rjóð,

stigur dansinn stilt og góð, —
 stundin hverfur þá
 líkt og stjarna hrapi
 á himni blá.
 Leiðist mér einum
 lífið hjá blómum og steinum,
 leiðist mér við lóusöng og lyngilm
 og blæ,
 heldur vil eg hafbláa, heiðstirnda,
 húmsæla vetrarnótt
 með drauma dans og snæ.

Kveðið við smásvein.

Ekki má láta lítinn dreng
 lengi basla og hljóða.
 Mamma kemur, ef kallar hann,
 og kyssir vangana rjóða,
 fer með hann í fanginu
 að finna þabba góða.
 Þá er alt gleymt, sem grætti,
 og gleðin komin að bjóða,
 bjóða, bjóða!
 litlum svein í leik með sér,
 sem lömbunum á bala
 þegar þau fara í fjörugan
 feluleik við smala
 djúpt inn til dala,
 djúpt inn til laufgrænna dala.
 Þar, sem krummar á klettunum
 krunka og saman tala
 og músarrindlar í runnunum
 rétta flugur að ungunum
 og steggjarnir synda státnir um
 straumana bláa og svala
 og gaukarnir gala,

en lóurnar hlaupa á holtunum
og hlusta á vellið í spóunum,
fálkinn horfir af hamrinum
um hraun og móa að rjúpunum
— veslings raungóðu rjúpunum.

Laxarnir hoppa í hyljunum,
hvítir fossar í giljunum
háværir saman hjala,
um hvíld hjá þeim er ekki
neitt augnablik að tala.

Tóan læðist í lyngdrögum
lengst inn á brúnum heiðunum,
á hún þar fjölda af yrðlingum,
auminginn, til að hugsa um;
engar kýrnar í úthögum
og ekkert korn til að mala —
við skulum ekki um útvegi greysins tala.

Aftur skulum við ofan í dal
með austanblænum strjúka,
sýnist mér á veginum
sunnan til rjúka.

Gott er að riða gæðingum
á grundum og mjúkum söndunum,
hestar hneggja í högunum
ef hleypt er fram hjá í sprettinum.

Bláa reyki frá brekkunum
ber við loftið í kveldfriðnum;
gluggarnir brosa á bæjunum,
benda heim til sín ferðlunum.

Ungar sætur í upphlutum
út koma' og fagna gestunum,
breiða úr drifhvítum dúkunum,
dúninn hrista í sængunum;
búa laugar og leggja hjá
ljómandi speglum veggjum á
handklæðin mjúk og brein sem snjá.
— holt er að væta preytta brá.

Ganga til svefns, er silfurgljá
svaladögg skín á túnunum,
ljósgulir fíflar loka brá,
lækir suða' undir veggjunum.
Gullroðin ský að skuggunum
skygnast frá efstu tindunum.
Þá er fagurt á fjöllumunum
og friðsælt í skauti dala,
frjálsara en í skrauti og prýði
skínandi sala.

Hulda.

Páll postuli og söfnuðurinn í Korintuborg.

Eftir *Magnús Jónsson*, prest á Ísafirði.

I.

Inngangur — Páll postuli.

Þá er vér litum á viðgang kristindómsins á fyrstu öldinni, postulatimabilinu svonefnda, verður strax fyrir augum vorum einn maður, sem oss virðist vera höfði hærri en allur lýðurinn. Sá maður er Páll postuli. Margt er það, sem að þessu stuðlar, að svo hátt ber á honum. Frásagnir þær, er til vor hafa komist um þennan tíma, eru næsta fáar og ógreinilegar. Dæmi þess er það, hve æfíkjör og starfsemi nálega allra postulanna er myrkri hulin. Frásögurnar eru ekki nema eins og litlir og veikir geislar, sem skína inn í þetta svarta myrkur, og mönn-

¹⁾ Eg hirði eigi að nefna heimildir fyrir hverju einu í ritgerð þessari, en skal að eins geta þess, að hún er öll byggð á ritum nýja testamentisins, einkum Korintubrэфanum og þeim köflum Post., sem um þetta fjalla. Auk þess skal eg nefna af bókum, sem eg hefi haft til hliðsjónar: W. Bousset: *Der erste Brief an die Korinther* í *Schriften des Neuen Testaments* II, bls. 72—161 (Goettingen 1908); sami: *Der zweite Brief an die Korinther* í *Schr. d. N. T.* II, bls. 161—217; Jón Helgason: *Sögul. uppruni nýja testamentisins*, Rvík 1904; sami: *Almenn kristnisaga*, Rvík 1912; Mc Giffert: *The Apostolic Age*, New York 1912; J. N. Ropes: *The Apostolic Age in the Light of Modern Criticism*, New York 1912; J. V. Bartlett: *The Apostolic Age*, New York 1911; E. Preuschen: *Das Altertum*, G. Krüger: *Handbuch der Kirchengeschichte*, Tübingen 1909—'12, o. fl. bækur, sem eg hefi fengið ýmsar góðar bend-
ingar frá í einstökum atvörðum.

unum og lífinu bregður að eins fyrir augu vor allra snöggvast, þar sem geislann ber á, og svo hverfur alt samstundis út í myrkrið. — Eitt af því, sem lætur svomikið bera á Páli postula er því það, að vér eigum langgreinilegastar frásagnir um hann. Hann hefir reist sjálfum sér óbrotgjarnan minnisvarða, þar sem eru bréf hans. Þau hafa að geyma, þótt á við og dreif sé, margvislegar bendingar um æfi hans. Og þær bendingar eru frá fyrstu hendi og því óyggjandi.

En af ýmsu má þó ráða, að ekki sé það þetta eitt, sem hefir lyft Páli postula upp yfir alla aðra á postulatimanum. Hann hefir vafalaust að ýmsu leyti verið þeim öllum fremri, haft fleiri og meiri skilyrði til þess að koma stórræðum í framkvæmd. Mætti nefna það eitt meðal annars, að hann var fæddur utan Gyðingalands. Það hefir vafalaust aukið víðsýni hans, og hvatt hann eitt meðal annars til þess að lita vinalegri augum til þjóðanna utan Palestinu. Hann var einnig uppalinn í stórborg, með iðandi lífinu úr öllum áttum. Faðir hans var rómverskur borgari, og líklega vel efnaður. Alt þetta hefir skilið eftir sitt mark á lyndiseinkunn hans, og gert hann hæfari í hverju sem var að mæta. En þó er það ónefnt eitt, sem auðvitað var aðalatriðið, og án þess hefðu öll hin skilyrðin orðið gagnslaus. En það er það, að hann var andlegt mikilmenni. Gáfurnar afbragð, festan en um leið mjúkleikinn í öllum hreyfingum frábær, vald hans yfir öðrum, glöggskygni á menn og ástæður, og síðast en ekki sízt óbilandi kjarkur, viljaprek og starfsprek að leiða hugsjónir sínar í framkvæmd. Þetta er ekkert skrum, heldur er þetta alt staðfest af reynslunni og þekkingu vorri á æfi hans. Þá segir og árangurinn af starfi hans oss, hve mjög hann skaraði fram úr öllum kristniðum öðrum. Eftir að hann kemur til sögunnar, hverfa allir aðrir en þeir, sem á einhvern hátt koma honum við. Postulasagan kann ekkert frá þeim að segja meir.

Hér er ekki rúm til að fara frekar út í lýsingu á persónu Páls postula, en það sem á eftir fer á að vera

dálitið sýnishorn af starfsaðferð hans, erfiðleikunum, sem hann varð að berjast við, og hvernig hann yfirsté þá. Og eg hefi tekið þetta stutta tímabil í æfi hans, af því að söfnuðurinn í Korintuborg var þetta tvent í einu: Hið mesta hrósunarefni postulans og um leið mesta áhyggjuefni hans.

II.

Korintuborg — Vandamál — Safnaðarstofnun — Safnaðarlimirnir — Uppbót Gyðinga — Dvöl Páls.

Það var á annari kristniboðsferð sinni, að Páll, ásamt förunautum sínum, fór í fyrsta sinn með kristniboð sitt yfir til Evrópu. Þeir héldu um Þrakíu, Makedóníu og Þessalíu og stofnuðu söfnuði í ýmsum borgum. En Gyðingar voru þeim mjög andstæðir, hvar sem þeir komu. Og loks var það af þeirra völdum, að Páll sté á skip í Beróa og hélt til Apenuborgar. Grikkland var um þær mundir rómverskt skattland og kallað Akkea. Í Apenu var blómlegasta visindalíf. Borgarbúar hugsuðu ekki um annað meir en að segja eða heyra eitthvað nýtt¹⁾. Enda var það aðaleinkenni borgarinnar. Verklegar framkvæmdir eða verzlun var þar á móti lítil í Apenu. Og það er svo að sjá sem Páll hafi þar skamma stund dvalið, og nálega engan árangur séð af starfi sínu. Hann hefir vafalaust skjótlega gengið úr skugga um það, að starf hans mundi þar nálega gagnslaust, og hann hafði annað að gera en eyða tímanum í óþarfa. Hann hefir líklega aðeins beðið þess, að Timoteus kæmi aftur norðan að²⁾ og svo haldið strax suður til Korintuborgar.³⁾

Korinta var í þann tíð höfuðborg Akkeu. Þar var bragurinn ólíkur því, sem var í Apenu. Júlíus Cæsar

¹⁾ Post. 17, 21. ²⁾ 1 Þess. 3, 1. ³⁾ Tímatalið í æfi Páls postula-
er í nokkurri óvissu. Leikur á h. u. b. 5 árum. Um það sjá Jón Helga-
son: Sögu- og uppruni nýja testam., bls. 150—156. En til Kor. hefir Páll
komið fyrst árið 47—52.

hafði látið endurreisa borgina er hún hafði verið í rústum um heila öld, og látið setjast þar að fjölda Rómverja. Þó voru Grikkir þar einnig fjölmennir er hér er komið sögunni, og grísk tunga var þar notuð, nema af því opinbera. Borginni var framúrskarandi vel í sveit komið. Hún stóð á örmjóu eiði milli tveggja hafa, og varð því eins og nokkurskonar dyr milli Austurlanda og Vesturlanda. En gegnum þær dyr var óstöðvandi verzlunarstraumur, og hann var það, sem gerði borgina að því sem hún var. Korinta bar öll merki stórrar verzlunarborgar. Þar voru ekki aðeins Grikkir og Rómverjar, heldur ægði þar saman mönnum af öllum þjóðum og kynkvíslum. Það var sannkölluð heimsborg, og heimsborgarbragurinn auðsær á öllu. Allar stéttir manna voru þar saman komnar. Og þó að Aþeningar liti með fyrirlitningu á þessa ruslborg, þá skorti þar eigi heldur mentun og heimspeki. »Í Korintu verður ekki þverfótað fyrir spekingum«, stendur þar. En, eins og oft vill vera þar sem mörgu ægir saman, ógurlegasta siðspilling gróf um sig í borginni. Muna austurlandþjóðirnar hafa átt í því drýgstan þátt. Það var jafnvel haft að máltæki um þá er ósiðlega þóttu lífa, að þeir »lifðu eins og Korintumenn«, og var þó víða pottur brotinn í rómverska ríkinu.

Það er enginn efi á því, að Páli hefir þótt sem mikið væri undir því komið hvern árangur starf hans kynni að bera í þessari stórborg. Það var í rauninni einn af erfiðustu hjöllumum, sem hér reis upp frammi fyrir kristindóminum, og ákaflega mikið var undir því komið hvernig gengi að yfirstiga hann. Aldrei hafði kristindómurinn áður hitt fyrir sér annað eins verkefni, aðra eins erfiðleika, ólífnað, sjálfræði og skeytingarleysi, en um leið tækifæri til að sýna mátt sinn. Þetta var eldraunin. Gæti kristindómurinn náð verulegri festu, verulegum tókum á þessari borg, sem í rauninni var einskonar smá-heimur út af fyrir sig, þá hlaut framtíð hans að verða bjartari. Hann hafði þá sýnt mátt sinn til að unskapa heiminn.

Aldrei sjáum við í rauninni Pál stærri heldur en þeg-

ar hann leggur út í þetta verk, og það var ekki að undra þó að hann legði út í það með ótta og mikilli angist.¹⁾ Hann var nýbúinn að prófa að tala við Grikki í Apenu, og hann fann það vel, hve lítið hann hafði til það bera af því, sem Grikkir mátu mest. Hann vissi að hann átti ekki til það glæsimeinnis-yfirbragð, fagaða orðgnótt og málskrúð, sem þeir heimtuðu. Og hann gat búist við því, að kristindómurinn mundi að ýmsu leyti verða edli þeirra gagnstæður. Þar við bættist svo það mikla vandamál, á hvaða strengi hann ætti helst að slá. Hvaða atriði kristindómsins hann ætti að leggja megináherzlu á. Hann gat ráðist á fjölgyðistrúna og sýnt fram á yfirburði trúarinnar á einn sannan guð. Hann gat ráðist á lausungina og síðleysið og prédikað kristindóminn, sem hina hæstu síðferðisreglu. Og hann gat líka slegið á þann streng, að sýna fram á það, að kristindómurinn væri sú sanna heimspeki.

Það var alveg eftir Páli að varpa öllum þessum aðferðum frá sér. Hann vildi ekki neitt umbótakák þó að hann hefði getað komið því á, með því að velja einhverja þessa stefnu. Það var hans einkenni að stælast við hvern örðugleika. Einmitt hér, frammi fyrir allra mesta örðugleikanum velur hann allra örðugustu leiðina. Einmitt hér, frammi fyrir þessum mönnum, sem hann gat búist við að mundu telja kristindóminn heimsku, velur hann þá aðferðina að prédika það, sem þeim hlaut að vera allra óskiljanlegast og heimskulegast: Jesúm Krist og hann krossfestan. Maðurinn verður að deyja með Kristi að holdinu til, til þess að hann geti lifað nýju andlegu lífi með honum²⁾. Þetta var að vísu það, sem hann prédikaði alstaðar en þó mun hann óviða hafa lagt aðra eins áherzlu á það eins og í Korintu. T. d. mætti nefna prédikun hans í Þessaloníku, þar sem hann sýnist hafa lagt mesta áherzlu á hinn eina sanna guð, og endurkomu Jesú Krists³⁾.

Bæði bréf Páls til Korintumanna sýna átakanlega

¹⁾ 1 Kor. 2, 3, sbr. Post. 18, 9. ²⁾ 1 Kor. 2, 2; sbr. 1, 18 n.n.

³⁾ Sjá 1 Þess. 1, 9 n.

hve algjörlega hann hefir farið eftir þessari fyrirætlun. Á móti hverju sem hann berst, þá getur hann komið því undir þetta sama. Hvort sem hann berst á móti skurð-göðadýrkun, ósiðsemi, bindindisleysi eða vanbrúkun kærleiksmáltíðanna, þá ber hann fyrir sig þetta sama: Það gerir hið andlega samband við Krist ómögulegt eða spillir því. Og það er stórkostlegt að sjá hvernig þetta vopn verður að tvieggjuðu sverði í höndum hans, svo að hann getur með því höggvið í sama höggi á báðar hliðar og beitt því jafnt gegn lögmálmönnunum og lögmálsleysingjunum. En einmitt þetta sýnir hve algjörlega hann hefir verið gagntekinn af þessari hugsun.

Það er auðséð á mörgum stöðum í Korintubrэфunum, að Páll hefir verið sá fyrsti, sem boðaði þar kristna trú. Hann segist hafa plantað¹⁾, lagt grundvöll²⁾, hann hafi ekki gengið inn í verk annarra og stært sig af því³⁾; hann segist vera sá, sem hafi fastnað þá Kristi⁴⁾; hann kallar þá börn sín⁵⁾; þeir eru hans verk í Drotni, og hrósunarefni⁶⁾; þeir eru bréf hans, þekt og lesið af öllum⁷⁾, og margt fleira mætti tina til sem sýnir það, ef þörf gerðist.

Höfundur Postulasögunnar skýrir oss frá því, að Páll hafi eftir venju sinni fyrst prédikað í samkunduhúsi Gyðinga í borginni. Fyrst er Gyðingarnir mótmæltu honum yfirgaf hann samkunduna⁸⁾. Og það er svo að sjá sem hann hafi sannfært marga Gyðinga. Það er nú vafalaust engin ástæða til að ætla, að Páll hafi breytt út af venju sinni í þessu efni í Korintu fremur en annarstaðar. En þó er það athugavert, að vér sjáum hvergi í bréfum hans neinn vott þessarar starfsemi hans meðal Gyðinga. Alt sýnist þar benda í þá átt, að Gyðingar í Korintu hafi mjög fáir snúist til kristni, og að jafnvel flestir safnaðarlimirnir hafi snúist til kristni án þess að hafa áður verið

¹⁾ 1 Kor. 3, 6. ²⁾ 1 Kor. 3, 10. ³⁾ 2 Kor. 10, 15. ⁴⁾ 2 Kor. 11, 2.
⁵⁾ 1 Kor. 4, 14. ⁶⁾ 1 Kor. 9, 2. 2 Kor. 1, 14. ⁷⁾ 2 Kor. 3, 2. ⁸⁾ Post. 18, 4 n. n.

í nokkru sambandi við Gyðinga. Á þetta benda t. d. ávitur hans fyrir ýmsa lesti, og viðvaranir gegn freistingum, sem vér hljótum að hugsa oss að eingöngu heiðingjar hafi þurft með¹⁾. Gyðingar stóðu þar á langtum hærra stigi, og hið sama hljótum vér að hugsa um þá, er orðið höfðu fyrir áhrifum af þeim. — Þá segir hann beinlínis í 1 Kor. 12, 2, að þeir hafi verið heiðingjar áður en þeir urðu kristnir. Gyðingarnir hafa auðsjáanlega verið svo fáir, að þeirra hefir naumast gætt. Á þetta sama bendir og það, hve frásneydd bréfin eru öllum útlistunum á sambandinu milli Gyðingdóms og kristni. Páll gerir einnig mjög lítið að því, að sanna staðhæfingar sínar í Korintubrэфunum út frá ritningunni, en notar tilvitnanirnar meira eins og dæmi til skýringar. En hann ber að jafnaði fram aðrar sannanir að minsta kosti með.

Þó voru nokkrir Gyðingar innan um. Hjónin Akuilas og Priskilla, sem urðu einhverjar beztu hollvættir postulans um langt skeið, hafa ef til vill tekið þar kristna trú, þótt ekki sé það víst nema þau hafi áður verið orðin kristin. En hjá þeim vann Páll meðan hann dvaldi í borginni²⁾. Þá er og nefndur Krispus samkundustjóri³⁾, og er auðséð að það er nefnt eins og undantekning, og eitthvað sérstakt að hann, Gyðingurinn, tók trú. En nokkrir staðir sýna, að Gyðingar voru þó meðal safnaðarmanna⁴⁾. Það er annars býsna einkennilegt, að það eru að mestu leyti aðrir menn, sem Postulasagan getur um heldur en Páll í brэфunum. Er auðsjáanlegt að Postulasagan heldur fram Gyðingkristnu mönnunum. Hún nefnir Akuilas og Priskillu, Krispus samkundustjóra, Titus Justus, sem var trúskiftingur (þ. e. hafði tekið Gyðingatrú), en hún minnst ekki á Stefanás, sem sýnist hafa verið mjög framarlega í söfnuðinum og var þess utan sá, sem fyrst

¹⁾ Sjá 1 Kor. 5, 1, 11; 6, 9; 8, 1 n n; 10, 14. ²⁾ Post. 18, 2 n.

³⁾ 1 Kor. 1, 14; Post. 18, 8. ⁴⁾ 1 Kor. 1, 22 n; 12, 13, sjá enn fremur 1 Kor. 1, 12 n n, þar sem getið er um Kefasflokkinn innan safnaðarins. Það er í hæsta máta líklegt að það hafi helzt verið Gyðingar sem þann flokk fylltu.

tók trú¹⁾, ekki heldur Gajus, Fortunatus, Klóe né Akkai-kus, sem allir eru nefndir hjá Páli. Mörg smáatvik í bréfum Páls styrkja mjög áreiðanleik Postulasögunnar, en því verður ekki heldur neitað, að sumstaðar ber nokkuð á milli.

Það er svo að sjá, sem Páli hafi orðið allmikið ágengt í Korintuborg. Á það bendir t. d. sýnin, sem okkur er skýrt frá í Post. 18, 9 n. Vafalaust hefir honum þó orðið mest ágengt meðal lægri flokka íbúanna, verkamanna, þræla og handverksmanna. »Þér eruð ekki margir vitrir að manna dómi, ekki margir máttugir, ekki margir stórættaðir«, segir hann í 1 Kor. 1, 26. En þessi orð benda um leið í þá átt, að meðal þeirra hafi þó sumir verið af betri ættum og hærra settir í mannfélaginu, enda sumir nefndir eins og t. d. Krispus, Erastus og Stefanás.

Postulasagan skýrir annars liðið frá viðburðum á þessu tímabili, sem Páll dvaldi í Korintu. Er það skaði mikill, því að vafalaust hefir margt sögulegt gerst. En svona ófullkomin er þekking vor á þessu tímabili. Það eru að eins einstakir viðburðir, sem geymst hafa. Ef vér athugum upptalningu Páls í 2 Kor. 11, 23—33, og hugleiðum, að fæst af þeim stórviðburðum er okkur að nokkru öðru kunnugt en af þeirri upptalningu, þá getum vér séð hve margir hroðaviðburðir og stórkostlegar frásögur eru huldar myrkri.

Postulasagan skýrir oss frá einum viðburði undir lok dvalar Páls í Korintu²⁾. Gyðingarnir risu upp gegn Páli og kærðu hann fyrir Gallio landsstjóra. Sá Gallio var bróðir heimspekingsins fræga, Seneka. Líklegt er að Gallio hafi verið nýkominn að völdum, og Gyðingarnir hafi því vonast til að hann mundi fremur sinna kærum þeirra, þar sem hann var ókunnugur. En það fór á annan veg. Gallio rak þá öfuga burtu, og það eina kynlega við viðburðinn er það, að Gyðingar skyldu ekki þekkja Rómverjann nógu vel til þess að vita að svo mundi fara.

¹⁾ 1 Kor. 16, 15 n. ²⁾ Post. 18, 12—17.

Fjöldi margt mætti fleira segja um Korintusöfnuðinn eftir þessa fyrstu dvöl postulans. En það skal eitt nefnt, að hann mun hafa verið einhver blómlegasti og álitlegasti söfnuður Páls. Enda hafði hann starfað þar í hálfri annað ár¹⁾. Það er því naumast rétt, þó að venjulega sé það gert, að kalla þetta »ferð«. Sama er að segja um dvöl Páls í Efesus á þriðju kristniboðsferðinni, sem stóð yfir á þriðja ár. Postulinn settist algerlega að í þessum stöðum og átti þar heima alveg eins mikið og í Antiokkíu. Og líklegt er að hann hafi t. d. frá Korintu farið smáferðir um landið, þó að ekki sé þess getið beinlínis. En kristnir söfnuðir voru þó víðar á Grikklandi en í Korintu, eins og sjá má af því, að hann stílar annað Korintubréf ekki að eins til Korintumanna, heldur einnig til »allra hinna heilögu, sem eru í gjörvallri Akkeu«²⁾. Hann kallar einnig Stefanás ekki frumgróða borgarinnar einnar, heldur allrar Akkeu³⁾. Hvort Páll hefir sjálfur stofnað þá söfnuði vitum vér þó auðvitað ekki með neinni vissu.

Um vorið (49 eða 54) hélt postulinn svo af stað austur á bóginn. Hann fór fyrst til hafnarbæjarins Kenkreu og sigldi svo þaðan austur til Litlu-Asíu. Ekkert er, sem bendir á það, að hann hafi flúið fyrir neinni ofsókn. Hann hefir vafalaust fundið að meiri þörf væri á því að hann starfaði annarstaðar. Korintusöfnuðurinn var orðinn blómlegur, og vafalaust hefir Pál ekki órað fyrir því þá, hvílíka mæðu og áhyggju þessi söfnuður mundi baka honum.

III.

Iskyggilegar fréttir — Flokkadrættir — Apollós — Tímóteus sendur — Bréf frá Korintusöfnuðinum — Fyrsta Korintubréf.

Vér hlaupum nú yfir söguna þar til vér hittum Pál staddan í Efesus í Litlu-Asíu á þriðju kristniboðsferðinni.

¹⁾ Post. 18, 11. ²⁾ 2 Kor. 1, 1. ³⁾ 1 Kor. 16, 15; sbr. einnig 2 Kor. 11, 10.

Hann dvaldi þar á þriðja ár eins og áður er sagt. Postulasagan segir oss nú héðan af ekkert um viðskifti Páls og Korintusafnaðanna, nema að eins að hann hafi komið þar aftur og dvalið þar þrjá mánuði¹⁾. Alt sem vér vitum um þau efni verðum vér að lesa út úr bréfum hans. En svo stórkostlegar eru þær byltingar og svo tæpt stóð með köflum, eins og vér munum fá að sjá, að þögn Postulasögunnar um það alt, er oss ljós vottur um hve mörgu mikilsverðu hún sleppir.

Páll hafði dvalið í Efesus h. u. b. 2 ár, þegar honum fóru að berast iskyggilegar fregnir frá söfnuðinum í Korintuborg. Einhvern tíma fyrir þennan tíma hafði hann frétt, að ósiðsemi ætti sér stað innan safnaðarins, og hann hafði þá ritað þeim bréf það, sem sveigt er að í 1 Kor. 5, 9, og í því hvatt þá til þess að hafa engin mök við slíka saurlífsmenn. Þetta fyrsta bréf Páls til Korintumanna er nú ekki lengur til. En þegar hér er komið sögunni fekk Páll fréttir af söfnuðinum, sem hlutu að gera hann órólegan. Það voru heimamenn Klóe, sem þessar fregnir báru. Og þær gengu út á það, að flokkadrættir þeir, sem Grikkir voru svo frægir fyrir, höfðu einnig smeigt sér inn í söfnuðinn. »Eg á við þetta«, segir Páll, »að sérhver yðar segir: Eg er Páls; — og eg er Apollós; — og eg er Kefasar; — og eg er Krists.«²⁾

Ástæðan til þessa flokkadráttar er augljós. Í Postulasögunni 18, 24—28 er nefndur til sögunnar maður, Apollós að nafni. Vér vitum lítið um hann. En hann var Gyðingur frá Alexandríu, vel máli farinn og fær í ritningunum. Hefir hann vafalaust verið leikinn í því að beita heimspekilegum útlistunum og glæsilegum óeiginlegum (allegórískum) skýringum ritningarinnar. Þessi maður kom til Efesus og tók að prédika í samkunduhúsum. Postulasagan gefur ótvírætt í skyn að hann hafi verið kristinn, en bætir við þeirri einkennilegu athugasemd, að hann hafi að eins þekt skírn Jóhannesar. Akvilas og Priskilla

¹⁾ Post. 20, 2. ²⁾ 1 Kor. 1, 12.

voru þá komin til Efesus. Þau tóku Apollós að sér, og útlistuðu rækilega fyrir honum guðs veg. Það hefir mikið verið rætt um hvernig skilja beri orð Postulasögunnar um Apollós, hvort hann hafi verið kristinn eða Gyðingur. Mér finst langeðlilegast að halda, að hann hafi verið lærisveinn Jóhannesar skirara, og því lagt fjarskalega mikla áherzlu á nálæga komu Messiasar. Hafi það svo skolest þannig, að frásögnin segir að hann hafi talað um Jesúm¹⁾. Það er líka óskiljanlegt, hvað Akvilas og Priskilla áttu að gera ef hann var kristinn fyrir. En lærisveinar Jóhannesar voru allviða um lönd, og líktust býsna mjög kristnum mönnum í ýmsu¹⁾.

Apollós þessi kom til Korintuborgar skömmu eftir að Páll fór þaðan, og tók að prédika²⁾. Það var ekki undur þó að hann veki eftirtekt og aðdáun hjá þeim. Hann var einmitt maður fyrir þá, lærður heimspekingur, eldheitur og snjall mælskumaður og með hugsun þaulæfða í skólunum í Alexandriu. Það er í rauninni engin furða þó að mörgum í Korintu fyndist sem hér væri kominn maður, er stæði Páli langtum framar, bæði að mælsku og andagift og að ýmsum þætti fagnaðarerindið dýpra og glæsilegra hjá Apollós. Og hér sjáum við því rót flokkadrátta. Vafalaust hafa upphaflega fyllt Apollós-flokkinn eingöngu þeir, sem hann sneri sjálfur til kristni, en þegar frá liður getur vel verið, að einnig sumir af Páls eigin lærisveinum hafi gengið í lið með þeim, og þótt meira til Appollós koma. Hinsvegar má geta nærri, að hinum, sem elskuðu Pál og virtu, hafi þótt sárt að sjá veg hans biða halla, og þeir hafa þá aftur tekið að halda honum fram og ef til vill reyna að kasta rýrð á Appollós. Og á þennan hátt var svo friðurinn í voða.

Apollós sjálfur hefir vafalaust alls enga sök átt á þessu. Ef til vill hafa flokkarnir fyrst þá myndast, er

¹⁾ Sjá greinilegar um þetta: Me Giffert: Apost. Age bls. 290—292 og biblíuskýringar yfir Post. 18, 25, t. d. R. Knopf: Apostelgeschichte i Schriften des N. T. I bls. 616 og 618 og Went í 7. útg. af Meyers Kommentar. ²⁾ Post. 18, 27.

hann var burtu farinn. En hitt má og vel vera, að hann hafi einmitt af þeirri ástæðu flýtt sér burt, að hann hafi séð þessa hættu vofa yfir. Það hefir vafalaust verið af því, að honum hefir mislíkað þessar aðfarir Korintumanna, að »hann var alls ófánlegur til að fara« þangað, fyrr en endi væri bundinn á þessar deilur, eins og Páll skrifar í 1 Kor. 16, 12. Það má og sjá það hvarvetna af orðum Páls, er hann nefnir Apollós, að þeir hafa verið í bezta samlyndi. Hann hvetur Apollós til að fara til Korintu¹⁾, og hann segir: »Eg gróðursetti, Apollós vökvaði — — sá sem gróðursetur og sá sem vökvar eru eitt«²⁾. Þannig hefði Páll ekki getað skrifað, ef hann hefði fundið nokkurn mun á fagnaðarerindi sinu og hans. Munurinn hefir legið eingöngu í búningnum og prédikunaraðferðinni.

Þegar tveir flokkar voru myndaðir, eigum vér mjög hægt með að gera oss grein fyrir myndun þriðja flokksins, Kefasflokksins. Það hafa verið ýmsir innan safnaðarins, sem hafa tekið að prédika það, að hvorki Páll né Apollós væru í rauninni postular eða verulegir leiðtogar. Það væru eingöngu frumpostularnir, sem ættu það skilið. Það væri því óþarft að vera að deila um þá Pál og Apollós, og betra að halda sér við upphaflegu leiðtogana, og þá fyrst og fremst postulaforingjann Pétur³⁾. Mætti geta þess til að Gyðingarnir innan safnaðarins hefðu gengið bezt fram í því að mynda þennan flokk, og vera í honum. Gæti það bent í þá átt, að hebreska myndin, Kefas, er notuð í nafni flokksins. Má vera að Pétur hafi um þessar mundir komið til Korintuborgar, og flokkurinn hafi við það myndast, en algjörlega er það óvist og næsta ólíklegt. Enda óþarft til að skýra myndun flokksins. Ólíklegt væri, ef ekki óhugsandi, að Páll mintist engu orði á það í bréfinu, þar sem hann talar um flokkadrættina, og starf sitt og Apollós⁴⁾.

¹⁾ 1 Kor. 16, 12. ²⁾ 1 Kor. 3, 6, 8. ³⁾ Kefas er hin hebreska mynd nafnsins, Pétur hin gríska. ⁴⁾ Það hefir verið nefnt til þess að styðja þessa skoðun, að Pétur hefði komið til Korintu, að Dionysius frá Korintu, sem ritar undir lok 2. aldar, segir að Korintasöfnuðariinn sé stofn-

Þessi Kefasflokkur hefir þó alls ekki gert neinar tilraunir til að fá söfnuðinn inn á gyðinglundaða stefnu. Það væri óhugsandi að Páll gengi þegjandi framhjá slíku. En þó hefir að líkindum, eins og við mátti búast, leitt af þessu einskonar skuggi á Pál og postuladóm hans, við hliðina á Pétri. Bendir einnig 9. kap. í 1 Kor. á átt, þar sem Páll ver postuladóm sinn.

Þá er nefndur fjórði flokkurinn, »Krists«-flokkurinn, sem hafði einkunnarorðið: »Eg er Krists«. Hefir oft verið talið svo, að í þeim flokki muni hafa verið gyðinglundaðir menn innan safnaðarins og séu það þeir, sem Páll sveigir svo sterklega að í 2 Kor. 10 og 11. kapitula. En þessi skoðun er bersýnilega röng. Þeir, sem Páll talar um í 2 Kor. 10 og 11 voru aðkomumenn, en ekki safnaðarlimir. Og þessutan er óhugsandi að Páll léti þá og skoðanir þeirra svo hlutlausar, sem hann gerir í 1 Kor. ef það voru sömu mennirnir, sem hann ræðst á með slíkum hamförum í 2 Kor. 10 og 11.

En vér hljótum að ganga enn lengra. Það bendir alt í þá átt, að þessi Krists flokkur hafi yfirleitt alls ekki verið til, sem flokkur við hlið hinna flokkanna. Páll talar á þann hátt í bréfinu um þá, »sem séu Krists«, að óhugsandi er, að hann hefði gert það, hefði hann vitað af skaðlegum flokki innan safnaðarins, sem einmitt töldu sig vera slíka. Hann hefði með því algerlega teft öllu í þeirra hendur. Þó tekur 1 Kor. 3, 22 alveg af skarið í þessu efni. Hann er þar kominn á hæsta stig með mótmæli sín gegn flokkadráttunum, og telur upp þrjá flokkana, Páls Apollós og Kefasar, en nefnir ekki Krists-flokkinn. Og meira að segja: Hann beinlínis heldur því fram, að þeir (þ. e. Korintumenn) séu Krists, en Páll, Apollós og Kefas séu þeirra þjónar.

En hvernig eigum vér þá að gera oss grein fyrir

aður af Pétri og Páli. (Evs. Hist. Eccl. II, 2, 5, 8). En hann er þar að sýna fram á, að Korintusöfn. standi rómverska söfnuðinum eigi að baki, og orðin í 1 Kor. um Kefasflokkinn voru næg átylla til að skoðunin myndaðist.

orðunum: »Eg er Krists« í 1 Kor. 1, 12? Sumir vilja gera þau að viðbót afritara, sem hafi viljað sýna réttu leiðina gagnvart flokkadráttunum í Korintu. En slíks gerist engin þörf. Lang líklegast er, að ýmsir hafi verið í söfnuðinum í Korintuborg, sem höfðu megna óbeit á flokkadráttunum, og vildu því engan flokkinn fylla. Þessir menn hafa svo verið að reyna að sýna fram á, að Kristur væri sá eini leiðtogi og konungur hinna kristnu. Þessir, sem Páll nefnir í 1 Kor. 1, 12 og höfðu orðtakið »eg er Krists«, hafa því ekki verið sérstakur flokkur, heldur þeir, sem voru utan flokkadráttanna, og vildu engan af postulunum taka fram yfir aunan. Og Páll hefir vafalaust verið þeim hjartanlega sammála, og ekkert undur að hann vísitandi teflir sem mestu í þeirra hendur.

Flokkadrættirnir ristu engan veginn svo djúpt, að söfnuðurinn klofnaði. En þeir voru samt mjög ískygglegir, og sízt fyrir að synja, að hið versta hlytist af þeim. Páll réði það því af, er hann hafði fengið fréttirnar, að senda Timóteus þegar í stað til Korintuborgar til þess að reyna að kippa þessu í lag. Sú ferð er vafalaust hin sama, sem getið er í Post. 19, 22, og Páll hefir gert ráð fyrir, að honum dveldist allmjög á leiðinni. Hann skrifar 1 Kor. nokkru síðar, en býst samt við, að það muni koma til Korintuborgar á undan honum.

Líkindi eru til að skömmu eftir burtför Timóteusar hafi Páll fengið greinilegri fréttir frá söfnuðunum í Korintu, með öðrum mönnum þaðan. Hann sýnist hafa sent Timóteus eingöngu vegna flokkadráttanna, en í 1 Kor getur hann um margt fleira, sem aflaga fari, auk þess sem hann svarar bréfi Korintumanna. Mætti þar fyrst og fremst nefna atyrði hans út af ósiðseminni innan safnadarins og því, hve linlega söfnuðurinn skerist í það mál. Það hefir yfirleitt verið mjög erfitt fyrir Korintumenn að skilja strangleika Páls í þessu efni. Það var alment litið svo á meðal þeirra, að lausung og ósiðsemi væri skaðlaus eða mjög væg yfirsjón, og það að svala fýsnum sínum væri líkt eins og að sedja hungur sitt. Ekki var því

undur, þó að töluvert af þessum hugsunarhætti smeygði sér einnig inn í kristnu söfnuðina. Enda getur Páll um það með hinum hörðustu orðum, að þeir skuli þola í sínum hóp slíkan saurlífsmann, að ógn mundi þykja jafnvel meðal heiðingja¹⁾. Og það er augljóst af öllu, að Korintusöfnuðirnir hafa að visu engan veginn viljað fyrirrita áminningar Páls í þessu efni, en þeir hafa fremur reynt að verja sína skoðun en láta af henni í hlýðni.

Þá frétti Páll einnig um að málaferli fyrir heiðnum dómstólum væru háð meðal bræðranna²⁾, og ávitar hann þá harðlega fyrir það. Ýmiskonar ólag á samkomunum, blendingur í skoðunum, jafnvel á upprisunni sjálfri og sitt hvað fleira var að athuga.

Loks barst Páli, skömmu eftir brottför Tímoteus bréf frá Korintusöfnuðinum. Bera þeir þar ýmsar vandaspurningar undir hann. Bréf þetta er ekki lengur til, en það má lesa innihald þess að miklu leyti út úr svari Páls. Það eru mest spurningar um ýms einstök atriði, t. d. hvort kristinn maður eigi að kvongast³⁾. Hvort kristinn maður eigi að skilja við heiðna konu sína⁴⁾; hvort leyflegt sé að eta kjöt af fórnardýrum⁵⁾ og hverjar af gáfum andans séu mest virði, og yfirleitt hvernig eigi að hegða sér gagnvart þeim⁶⁾. Loks sýnast þeir og hafa óskað þess að Apollós kæmi til þeirra⁷⁾. Þetta bréf sýnir oss að flokka-skiftingin hefir engan veginn rist mjög djúpt. Þeir skrifa þar allir sem einn söfnuður. Það sýnir oss einnig að Páll hefir notið mikils álits safnaðarins sem heildar, þar sem þeir bera þessi miklu ágreiningsmál undir hans úrskurð. Ekki væri óhugsandi að það væri sömu mennirnir, sem hafa komið með þetta bréf til Páls, sem sögðu honum síðari fréttirnar af ólaginu í söfnuðinum.

Þegar Páll hafði fengið þetta bréf auk fréttanna ritar hann söfnuðinum bréf það, sem vér eigum í nýja testamentinu undir nafninu 1, Korintubréfið, sem er eitt af

1) 1 Kor. 5, 1. 2) 1 Kor. 6, 1 n. n. 3) 1 Kor. 7, 1 n. n. 4) 1 Kor. 7, 10. 5) 1 Kor. 8, 1. 6) 1 Kor. 12, 1. 7) 1 Kor. 16, 12.

lengstu og merkustu bréfum Páls. Ýmislegt mætti græða á því, að gefa hér innihald þess með nokkrum skýringum, en eg geri það þó eigi, vegna þess að það yrði alllangt mál. Enda getur hver maður í þess stað lesið bréfið sjálft með aðgæzlu, og flest, sem mestu máli skiftir, hefir þegar verið nefnt.

Bréf þetta sendi Páll svo með ónefndum »bræðrum«¹⁾, og bjóst við að það mundi koma til safnaðarins á undan Timóteusi²⁾. Hann hefir vafalaust sent það sjóleiðina, en Timóteus hugðist að dvelja nokkuð á leiðinni.

IV.

*Astandið versnar — Skyndiför Páls — Miðbréfið — Átt
fellur í ljúfa löð — Annað Korintubréf — Síðasta
koma Páls.*

Í bréfinu gerir Páll ráð fyrir því, að hann muni heim-
sækja Korintusöfnuðina bráðlega³⁾. Starf hans í Efesus
var enn þá mikið og »andstæðingarnir margir«, og hann
bjóst því við að dvelja þar fram yfir hvítasunnu. Þá ætl-
aði hann að leggja leið sína um Makedóníu, og dvelja svo
ef til vildi vetrarlangt í Korintu⁴⁾. En þessi ráðagerð fór öll
á annan veg. Það er ljóst af stöðum í 2. Korintubréfinu,
að Páll hafði tvisvar komið til borgarinnar, er hann ritar
það, og talar um komu sína hina næstu sem þá þriðju⁵⁾.
Hann talar og um sorglega komu til þeirra⁶⁾, og getur
það ekki átt við fyrstu komu hans. Nú er óhugsandi að
þessi koma Páls hafi verið á undan dvöl hans, sem við
þekkjum, og hirði eg eigi að leiða rök að því hér. Páll
hefir því hlotið að koma snöggva ferð til Korintu milli
þess sem hann ritar fyrra og síðara bréfið, sem vér eig-
um. Ber mönnum ekki alveg saman um það, hvernig
rekja eigi viðburðina, en líklegt er, að þeir hafi verið
eitthvað á þessa leið: Sendiför Timóteusar og fyrra

¹⁾ 1 Kor. 16, 11, 12. ²⁾ 1 Kor. 16, 10. ³⁾ 1 Kor. 4, 19; 11, 34;
16, 3. ⁴⁾ 1 Kor. 16, 8 n. n. ⁵⁾ 2 Kor. 12, 14; 13, 1, 2. ⁶⁾ 2 Kor. 2, 2.

Korintubrésið höfðu ekki náð tilgangi sínum. Það er svo að sjá, sem ástandið í söfnuðinum hafi farið æ versnandi. Er líklegt að Páll hafi fengið mjög slæmar fréttir með Tímóteusi. Loks sá hann að ekki tjáði að biða þess að starfi hans yrði lokið í Efesus. Hann breytir því ætlun sinni og fer snöggva ferð (líklega sjóveg) til Korintu, og hygst að kippa öllu í lag. En í stað þess mæta honum þar erfiðleikar, sem honum er um megn að bæla niður. Koma hans verður eingöngu til sorgar¹⁾. Álit hans biður alvarlegan hnekki, og hann verður jafnvel fyrir persónulegri óvirðingu²⁾. Sneri hann þá aftur heim til Efesus, og hélt áfram starfi sínu þar, því að vér sjáum að hann er nýfarinn þaðan er hann ritar 2. Kor. frá Makedoniu³⁾. Ef til vill hefir ástandið í Korintu versnað enn meir, þegar Páll var kominn burtu. Og það er rétt eftir að hann er kominn til Efesus aftur úr þessari ferð, sem hann skrifar söfnuðinum í Korintu afar þungort bréf. Hann skrifaði það af mikilli þrengingu og hjartans trega með mörgum tálum⁴⁾, og hann iðraðist þess jafnvel að hann skyldi hafa sent það, ef það kynni að spilla í stað þess að bæta⁵⁾. Þetta bréf er þá þriðja brésið sem oss er kunnugt um að Páll hefir ritað Korintusöfnuðinum.

Það er venjulega litið svo á, að þetta harða bréf Páls sé glatað, eins og fyrsta bréf hans til Korintu. En það er engan veginn víst, og margt mælir með því, að 10.—13. kap. í 2. Korintubræfinu sé einmitt þetta bréf Páls (Miðbrésið) eða partur af því.

Það er, vægast talað, mjög ólíklegt að 10.—13. kap. eigi heima þar sem þeir nú eru. Það er ekki að eins að andi þeirra sé annar en í kap. 1—9, heldur sýnast þeir benda á alt annað ástand í söfnuðinum. Í kap. 1—9 er postulinn ánægður með söfnuðinn. Að visu hefir hann orðið að reyna margt mótdrægt hjá þeim, en það er alt jafnað og gott orðið. Þeir urðu hryggir til iðrunar af

¹⁾ 2 Kor. 2. 1, 5. ²⁾ 2 Kor. 2, 5; 7, 12; 10, 10. ³⁾ 2 Kor. 2, 12.

⁴⁾ 2 Kor. 2, 4. ⁵⁾ 2 Kor. 7, 8.

bréfi hans, og létu í ljósi á allan mögulegan hátt áhuga sinn og hollustu við Pál¹⁾, jafnvel meira en hann hefði óskað²⁾. Hann kallar þá hrósunarefni sitt³⁾ segir að Titus hafi verið huggaður af þeim⁴⁾; hann segir að þeir hafi í öllu sýnt að þeir séu hreinir⁵⁾ það gleðji sig að hann geti í öllu borið traust til þeirra⁶⁾; þeir séu auðugir í öllu, að trú, og að orði, og að þekkingu og í hvers konar áhuga og í elsku þeirra til sín⁷⁾. Það er auðsjáanlega hið tryggasta og innilegasta samkomulag milli Páls og safnaðarins þegar þetta er ritað. En í 10—13 kveður við annað lag. Þar er postulinn auðsjáanlega ekki að tala um það sem sé umliðið, og hann því geti litið á glaður eins og yfirstiginn örðugleika. Hann er þar auðsjáanlega enn þá mitt í stríðinu, og hann veit ekki hvernig það muni kunna að enda, hann veit ekki nema óvinir hans fái yfirhöndina, og söfnuðurinn komist út á villibraut⁸⁾. Hann er sí og æ að tala um þann strangleika, sem hann muni beita þegar hann komi, en í 8 kap. er hann að eggja Korintumenn á það, að auðsýna vægð. Yfirleitt þarf naumast annað en lesa bréfið með athygli, og bera saman andann sem rikir í 1.—9. kap. og svo aftur í 10—13, til þess að sannfærast um, hve afar erfitt er að hugsa sér að þetta sé sama bréfið, ritað í sama sinn og með sama ástand fyrir augum.

Sé því nú svona farið, að 10.—13. kap. séu sérstakt bréf, þá leikur naumast nokkur vafi á því, að þeir eru einmitt sama bréfið sem Páll getur um í 2 Kor. 2, 4 og 7, 8. Þeir koma heim við lýsingu hans á þessu bréfi, og þeir hljóta að vera skrifaðir á undan 2 Kor. 1—9, því að öðrum kosti yrðum vér að hugsa oss enn þá eitt upphot gegn Páli í Korintu, en það vitum vér ekki til að yrði.

Í þessum fjórum síðustu kapitulum í 2 Kor., eigum vér því nálega vafalaust bréfið, sem Páll skrifar söfnuðinum milli 1. og 2. Korintubrúfs, svo kallaða. Þetta er afar mikilsvirði fyrir okkur, því að þá eigum vér í þessum

¹⁾ 2 Kor. 7, 7 n n. ²⁾ 2 Kor. 2, 6 n. ³⁾ 2 Kor. 1, 14. ⁴⁾ 2 Kor. 7, 7. ⁵⁾ 2 Kor. 7, 11. ⁶⁾ 2 Kor. 7, 16. ⁷⁾ 2 Kor. 8, 7. ⁸⁾ Sjá t. d. 2 Kor. 10, 2, 6; 11, 3, 20; 12, 11; 13, 2, 3, 6.

bréfi mynd af ástandinu í söfnuðinum og ólaginu, lýsingu á sakargiftunum gegn Páli. Hefir aðallega verið ráðist á hann persónulega. Hann talinn langtum neðar frumpostulunum. Hæðst að því hve litilmótlegur hann sé í útliti og ræðu. Jafnvel gefið fyllilega í skyn að hann stingi í eigin vasa samskotunum frá Korintumönnum o. fl.

Það hefir oft verið talið svo, að þessir mótsöðumenn Páls hafi verið gyðinglundadir menn, á sama hátt og mótsöðumenn hans í Galatíu, menn sem vildu fá heiðing-kristna menn til að ganga undir lögmálsokið. En það er naumast rétt. Þeir voru auðsjáanlega Gyðingar¹⁾ og aðkomumenn, því að Páll greinir þá ávalt frá söfnuðinum, og þóttust vera postular og þjónar Krists²⁾. En hér er það að athuga, að mótsöðumenn Páls meðal Gyðinga voru tvens konar: 1) Þeir sem vildu fá alla kristna menn til þess að ganga undir lögmál Gyðinga (sbr. Galatabréfið) og 2) Þeir sem viðurkendu rétt heiðinna manna til þess að gerast kristnir án umskurnar og lögmálshalds, viðurkendu að því leyti starfsemi Páls meðal heiðingjanna, en hötuðu hann sjálfan persónulega og fyrirlitu, af því að þeir litu á hann sem frávilling frá Gyðingdómnum, og töldu hann litilsvirða trú feðranna með því að umgangast heiðingja eins og Páll gerði. Þennan mun er nauðsynlegt að hafa í huga til þess að skilja sögu Páls rétt. — Fyrnefndi flokkurinn hverfur fyr úr sögunni. Páll hefir haft svo ljóslega yfirhöndina bæði í Antiokíu og Galatíu, að þeirra gætir naumast úr því. En það er síðari flokkurinn, sem er að starfa á móti Páli í Korintuborg. Það væri líka algerlega óhugsandi að Páll mintist með engu orði á þetta mikilvæga trúaratriði, um frelsi kristins manns frá lögmálinu, að hann ekki varaði Korintumenn við því og sýndi hver tilgangur mótsöðumannanna var, ef þeir hefðu verið slíkir lögmálsmenn. En í stað þess ver hann sig eingöngu persónulega. Og þessutan er það þegjandi vottur í sömu átt, að þess verður hvergi vart að

¹⁾ 2 Kor. 11, 22. ²⁾ 2 Kor. 11, 13, 23.

Korintusöfnuðurinn hafi haft nokkra minstu tilhneigingu til þess að ganga undir lögmálsokið, heldur alveg þvert á móti. Hver sem tilgangur mótstöðumannanna hefir verið með því, að gera árás á Pál, þá hefir hann ekki verið þessi. Páll hefði fljótlega séð það og sýnt fram á það. Og það, sem Páll óttast mest, er ekki það, að þeir komi ekki neinum sérstökum hættukenningum að, heldur hitt, að hann (Páll) missi álit sitt og um leið vald sitt hjá söfnuðinum, og svo endi alt í stjórnsleysi og eyðileggingu.

Það er auðséð að það hefir sérstaklega verið einn maður, sem stóð gegn Páli¹⁾. Hann hefir verið safnaðarlimur, því annars hefði söfnuðurinn ekki getað lagt á hann aga. Hann hefir verið maður háttmetinn í söfnuðinum, því að annars hefði hann ekki getað beitt sér svo gegn Páli. Það er sú mesta fjárstæða að ætla að hann sé sami maðurinn, sem Páll talar um í 1 Kor. 5, 1, saurlífismaðurinn. Páll talar hér um skæðan persónulegan óvin sinn, en hann hefir ekkert að setja út á hegðun hans þar fyrir utan.

Páll sendi bréf þetta til Korintuborgar með Titusi félagasiðnum²⁾. Er ekki ólíklega til getið að Titus muni hafa verið einhver sá harðsnúnasti og framkvæmdasamasti af félögum hans. Páll ætlaði sér að biða eftir honum í Efesus, en af einhverjum ástæðum varð hann að fara þaðan fyrir en varði. Hélt hann til Tróas, og þaðan til Makedoníu til þess að hitta Titus sem skjótast, því að hann var óþolinmóður að fá fréttir frá Korintu³⁾. Bréfið var á þann hátt, að honum fanst geta brugðið til beggja vona hver árangur þess yrði⁴⁾. Hann varð því innilega glaður þegar hann hitti Titus í Makedoníu, og hann sagði honum fréttir frá söfnuðinum. Korintumenn snerust algerlega á Páls sveif, og létu mótstöðumanninn fá sín makleg málagjöld. Er ekki ólíklegt að Titus hafi átt nokkurn þátt í því, ásamt bréfinu frá Páli. Nú gat Páll litið glaður yfir starf sitt hjá söfnuðinum og yfir alla örðugleikana. Það var eins

¹⁾ 2 Kor 2, 5. ²⁾ 2 Kor. 2, 3; 7, 13. ³⁾ 2 Kor. 2, 13. ⁴⁾ 2 Kor. 7, 8.

og svartur skýflóki hefði sundrast, óveðrið gengið hjá og nú væri aftur sólskin og friður í kring.

Það er með þetta ástand fyrir framan sig að Páll ritar síðasta (4.) bréf sitt til Korintusafnaðarins, það bréf sem við nú eigum í 2. Kor. 1.—9. Hann hefir viljað dvelja eitthvað lengur í Makedoníu, heimsækja söfnuði og styrkja þá, og hann sendir því Titus aftur á undan sér með þetta bréf. Eg rek ekki innihald þess, heldur en hinna bréfanna. Það fæst bezt með því að lesa þau sjálf. Bréf þetta er ritað undir nafni þeirra beggja Páls og Timoteusar, af því að báðir höfðu þeir í rauninni sameiginlegt mál. Með Titusi fóru 2 bræður, annar valinn af söfnuðinum til aðstoðar Páli við samskotin, en hinn kunningi og samverkamaður postulans¹⁾. Hefir sá grunur, er smeygt hafði verið inn, um það, að Páll drægi sér af samskotafénu, valdið því, að Páll lét söfnuðina sjálfa velja fulltrúa til samskotauna²⁾.

Páll hefir ekki komið til Korintuborgar fyr en seint um haustið, því að í Korintuborg dvaldi hann þrjá mánuði³⁾ en um vorið fór hann burtu aftur⁴⁾. Hann hefir því dvalið svo mánuðum skifti í Makedoníu. Hann bjóst við að halda beina leið til Jerúsalem frá Korintu, með samskotin, svo að vel gat svo farið að þetta yrði síðasta heimsókn hans til safnaðanna í Makedoníu. Þessutan hefir hann haft ærið starf, að undirbúa og leiða í framkvæmd fjársöfnunina.

Um þessa dvöl hans í Korintuborg höfum vér engar sagnir, nema hvað Postulasagan segir með fáeinum orðum að Gyðingar hafi setið á svikráðum við hann, svo að hann hafi orðið að hætta við þá fyrirætlun sína að fara beina sjóleið til Jerúsalem⁵⁾. Hann fór því norður um Makedoníu og sigldi frá Filippí, og voru nokkrir menn honum samferða⁶⁾. Mótstaðan í Korintu hefir verið algerlega horfin, og hann hefir notið þar óskertrar virðingar

¹⁾ 2 Kor. 8, 18 n n; 22 n n o. fl. ²⁾ Sbr. 2 Kor. 8, 20. ³⁾ Post. 20, 3. ⁴⁾ Post. 20, 6, 16. ⁵⁾ Post. 20, 3. ⁶⁾ Post. 20, 4—6.

sinnar. Bréfið til Rómverja, sem hann ritar í Korintuborg í þetta skifti, ber ekki vitni um nokkrar áhyggjur né erfiðleika, sem hann eigi við að stríða með söfnuðinn.

Þetta var síðasta koma Páls til Korintuborgar og safnaða sinna annara í Makedoníu og Grikklandi. Þegar hann kom til Jerúsalem var hann gerður handtekinn og komst upp úr því, þó löngu væri seinna, til Rómaborgar. Þar hylst saga hans myrkri, og getgáturnar fara í ýmsar áttir.

Eg hefi þá reynt að lýsa nokkuð starfi Páls við Korintusöfnuðina. Og þó að viðburðirnir væru aðrir, þá var starf hans og líf jafnan þessu svipað. Sífeldar ferðir, hættur, ofsóknir og áhyggjur. En óþreytandi starfsþrekið, járnharður viljinn og yfirburðavitsmunir og fimleiki gáfu jafnaðarlega sigurinn í hendur honum. Hefi eg viljað bregða upp ofurlitilli mynd af þessum mesta afburðamanni kristinnar, en um leið gefa mönnum hvöt til að lesa bréfin hans, og nokkra hjálp til að skilja þau.

Sannleikur.

Sífelt er leitað úr öllum áttum,
um eilífðir leitað þín er.
Kerfi' eru fléttuð úr fjölda þáttum,
er færa oss hluta af þér.
Vér hrópum til þín; gef oss mönnunum meira,
meira af dýrð þinni' að sjá.
Lát þú oss orðið þitt ljúfasta heyra,
leið oss í dagveldin há.

Þú birtist oss smáum í mörgum myndum
og megin vort eykur og þor.
Þú bendir oss lágum frá löstum og syndum,
úr langnætti skapar þú vor.
Þín blessaða stoð yfir brotsjóinn nauða
er betri en alheimsins gull.
Vér bergjum með gleði bikarinn dauða
bara þú signir vort full.

Einn geisli frá þér ber oss himnunum hærra
og helgar til grunns vora sál.
Þitt hvísl er oss ljóssæknum ljúfara' og kærna
en ljúfasta ástvinamál.
Því hrópum vér enn; gef oss mönnunum meira,
meira af dýrð þinni' að sjá.
Lát þú oss orðið þitt ljúfasta heyra,
leið oss í dagveldin há.

María Jóhannsdóttir.

Enn um ættarnöfn á Íslandi.

Mikið hefir verið talað og ritað um ættarnöfn á Íslandi undanfarið, og hafa flestir, er hafa lagt orð í belg, verið þeim óvinveittir og ráðist allópyrmilega á þau. Það hefir óspart verið gert gys að nafnanefndinni, að nefndaráliti hennar og nafnaskrá. Það hefir verið talað um ættarnafna-*farganið*, um að »apa« eftir heimskulegum útlendum síðum, um að gleyma foreldri sinu o. m. fl. Málfræðingar hafa reynt að sanna, að ættarnöfn ríði yfirleitt í bága við eðli íslenzkunnar.

Samt sem áður er óðum verið að taka upp ættarnöfn, og margir góðir og skynsamir menn, sumir jafnvel orðhagastir og ritfærastir menn þessa lands og hinir mestu íslenzku-vinir, eru ættarnöfnum hlyntir.

Eg reit í vor stutta grein um ættarnöfn í Morgunbl. til þess að hrekja staðlausustu staðhæfingar þessara andstæðinga. En mig langar til að rökstyðja mál mitt ýtarlegar en þar var hægt að gera. .

Þörfin á ættarnöfnum.

Þó að megi finna eitthvað að þeim uppástungum, sem nafnanefndin hefir borið upp — eins bandvitlausar og ættarnafna-fjendur telja þær, eru þær nú ekki, sumar eru jafnvel góðar — þá er þar með alls ekki sannað, að ættarnöfn eigi alls ekki við á Íslandi eða ríði í bága við eðli málsins.

Sé þörf á ættarnöfnum og séu uppástungur nefndarinnar gagnstæðar eðli málsins, verður að leita að öðrum betri nöfnum. Enginn segi mér, að íslenzkan sé svo snauð,

að eigi megi búa til góð íslenzk ættarnöfn. Rússneskan, sem er beygingamál eins og íslenzkan, notar ættarnöfn!

»En þörfin á ættarnöfnum er engin hér á landi,« segja menn, »ættarnafnasiðurinn er óþjóðlegur; þar á móti er föðurnafnasiðurinn gamall og góður íslenzkur siður og að halda honum uppi er sama sem að sýna ræktarsemi við foreldri sitt«.

Þörfin er ef til vill enn eigi bráðnaðsynleg, en nokkur er hún þó og ekki alllítill. Væri föðurnafnasiðurinn svo þjóðlegur, eins og margir halda og halda fram, svo væri öðru máli að gegna. En það hefir verið margsannað, að svo er eigi. Hann er að eins »úrelt þing«, sem hefir orðið eftir á Íslandi eftir að hafa lagst niður viðast hvar annarstaðar. Og eigi er alt gott, þótt gamalt sé, — jafnvel þótt margt nýtt sé ónýtt. Á Rússlandi eru þó föðurnöfn enn notuð — en jafnframt ættarnöfnum. Allir þar eða flestir eiga þrjú nöfn: eiginheiti, föðurnafn og ættarnafn.

Og hvað ræktarsemina snertir, þá liggja til þess þau svör, að hér getur ekki verið að tala nema um ræktarsemi við föður sinn. Fæstir kenna sig þó við móður sína; enda mundi það vera miður hentugt, ef sumir kendu sig við föður sinn, en aðrir við móður sína. Nei, tölum sem fæst um ræktarsemi í þessu sambandi. Ætli ættarnafnasiðurinn sýni ekki meiri ræktarsemi, þ. e. a. s. ekki eingöngu við föðurinn, heldur við alla kynkvísl hans. Það er því hin mesta fásinna að tala um ræktarleysi í sambandi við ættarnöfn. Ef það að taka upp ættarnöfn í staðinn fyrir föðurnafn sitt sýnir ræktarleysi við foreldri sitt, þá eru flestar aðrar þjóðir ræktarlausar, þá eru Íslendingar eina ræktarsama þjóðin eða því sem næst. Fyr má nú vera þjóðskrumið — eða hugsunarleysið. Sú staðhæfing er mjög svo móðgandi í garð hinna þjóðanna.

Hvers vegna hafa flestar þjóðir tekið upp ættarnafnasiðinn? Vegna þess að föðurnafnasiðurinn (einn) hefir reynst mjög svo óhentugur, hann hefir valdið hinni megnustu ruglun. Áður fyr var föðurnafnasiðurinn al-

gengur í Danmörku eins og víðar, en nú er hann bannaður þar. Getur nokkur heilvita maður haldið, að þetta bann eigi rót sína að rekja til fordildar og heimskulegrar eftirhermingarlöngunar?

Því miður fóru menn í Danmörku að nota föðurnöfn fyrir ættarnöfn, og þannig komu fram þessi mörgu dönsku ættarnöfn, er enda á -sen og sem eru svo leiðinleg: Andersen, Frederiksen, Hansen, Jensen, Nielsen, Petersen, Rasmussen, Sørensen o. m. fl. Eru þau nú svo tíð, að þau valda miklum glundroða, enda er verið að fækka þeim. Til þess að ráða bót á þessum ruglingi, hefir þó engum dottið í hug að taka til föðurnafnasiðarins aftur. Mundi slíkt tiltæki álitid afturför til miðaldanna.

Þó að Íslendingar hafi hingað til ekki fundið tilfinnanlega til vöntunar ættarnafna, sannar það ekkert. Íslenzka mannfélagið er ekki stærra en íbúatal margra meðalstórra bæja í útlöndum og auk þess dreift um mjög stórt svæði. Það eru ekki margir í sömu sveit er heita eins, og þó hefir það verið og er algengt að taka sér kenningarnafn. Hvers vegna eiginlega?

En íbúatala Íslands er óðum að vaxa, og einkum íbúatala kaupstaða (Reykjavíkur). Og þar sem margir eru saman komnir er það allbagalegt að margir eru samnefndir. Í stóru bæjarfélagi er það og erfitt að muna að Guðmundur Sigurðsson er sonur Sigurðar Jónssonar og að Sigríður Bjarnadóttir er gift Jóni Brynjólfssyni.

Samkvæmt niðurjöfnunarskrá Rvíkur 1916 voru hér þá 35 Guðmundar Guðmundssynir, 27 Guðmundar Jónssynir, 41 Jónar Jónssynir, fullorðnir, en auðvitað eru þeir fleiri. Þetta eru að eins fáein dæmi, en þau eru mörg sams konar, og munu verða enn þá fleiri, ef ekki verður girt fyrir ástand þetta á einhvern hátt. Það hafa sumir reynt að gera með því að taka sér kenningarnafn, sem er einnig gamall siður, þó ekki sé hann eingöngu íslenzkur. En kenningarnöfn eru alls ekki fullnægjandi er til lengdar lætur. Þó að Pétur Jónsson taki sér nafnið frá Steintúni, kemur þetta að litlum notum,

ef hann getur ekki látið það ganga að erfðum. Hvaða kenningarnafn eiga börn hans, Sigurður Pétursson og Elín Pétursdóttir, sem eru fædd í Reykjavík, að taka upp? Sigurður og Elín frá Laugavegi? Ætli fast ættarnafn t. d. Steintún væri hér ekki miklu hentugra?

Og nú eru samgöngur miklu tíðari en áður. Landsmenn frá ýmsum sveitum kynnast nú miklu oftar, og þannig mun glundroðinn vafalaust fara vaxandi og ekki minskandi. Nokkurt tillit verður einnig að taka til sambandsins við útlöndin, þó það sé alls ekki mikilvægasta atriðið.

Loksins má gá að því, að ættarnöfnin eru þegar allmörg á Íslandi. Ætli nú Blöndals-ættin, Briems-ættin, Claessens-ættin, Hafsteins-ættin, Laxdals-ættin, Melsteðs-ættin, Thorarensens-ættin, Tulíníusar-ættin, Zimsens-ættin, Zoega-ættin og fleiri muni vilja leggja niður ættarnöfn sín? Og munu ekki alt af koma útlendingar hingað og flendast hér? Á að lögbjóða þeim öllum að leggja niður ættarnöfn sín, er þeir virða ekki minna en föðurnafnavinir föðurnöfn sín? Spyr sá, sem ekki veit.

Þannig er þá ástandið. Ómögulegt er að komast hjá ættarnöfnunum alveg, heldur myndu þau fara nokkuð í vöxt, jafnvel þó »ættarnafna-faraldurinn« svo nefndi hyrfi með öllu, sem er þó ósennilegt. Þegar svona stendur á, er það ekki nema skynsamlegt, meira að segja óhjákvæmilegt, að gefa út lög, sem »koma í veg fyrir glundroða og réttarmissi, er óreglulegar nafnabreytingar geta valdið«. Nafnalögin hafa hvorki bannað föðurnöfnin né skipað mönnum að taka upp ættarnöfn, heldur hafa þau leitast við að koma betra skipulagi á nefningar og nafnaskiftingu.

En því hafa lögin ekki tekið upp rússneska siðinn: þriggja-nafna-siðinn og grætt tvent í senn?

Það er orðið algengt í útlöndum að gefa börnum fleiri en eitt skírnarheiti. Þessi siður hefir við nokkur rök að styðjast. Það er gamall siður að láta börnin heita í höfuðið á einhverjum frændmanni, og þá getur það komið fyrir, að tveir eða fleiri heiti sama nafninu — þrátt fyrir

ættarnafnið. Er það þá all-hentugt að hafa tvö eiginheiti, t. d. Karl Otto Petersen, nefndur eftir Karl Petersen. Stundum er þessi siður við hafður, þegar foreldrar óska þess að láta barn sitt heita í höfuðið á fleirum, og fá börnin í því tilfelli oft allmörg eiginheiti, svo er t. a. m. oft um konungmenn. En í þriðja lagi eru oft gefin börnum mörg eiginheiti af eintómri fordild; það þykir »fint« og verður þessi siður þá hlægilegur. Hann er ekki með öllu ókunnur hér á Íslandi.

En miklu betri er þá þriggja-nafna-siðurinn. Sé hann notaður, er mönnum miður hætt við að villast á nokkrum manni eða ættartölu hans. Og væri það mikil stuðning fyrir ættfræðina. Því það er hugarburður einn, að föðurnafnasiðurinn einn sé ættfræðingunum að meira gagni en ættarnöfn. Reyndar eru Íslendingar yfirleitt meiri ættfræðingar en flestar aðrar þjóðir; en þeir eru auðvitað ekki svo vel að sér í ættfræðinni vegna föðurnafnanna, heldur þrátt fyrir þau. Dugnaður þeirra í þessari fræði er sennilega helzt að þakka sögu-áhuga þeirra og mannfæð. Þegar mannfjöldi Íslendinga einhvern tíma hefir ferdaldast eða fimmfaldast, mun það veita þeim erfiðar að ruglast eigi í ættartölunum, og hætt er þá við því að áhuginn sjatni. Fyrir þetta munu ættarnöfnin girða að nokkru leyti, einkum í sambandi við föðurnöfnin.

Þriggjanafnasiður var áður við hafður hjá Rómverjum — þó á nokkurn annan hátt en nú í Rússlandi. Allir kannast við Publius Cornelius Scipio. Hér er Publius eiginheiti (prænomen), Cornelius ættarnafn (nomen), Scipio kenningarnafn (cognomen). En það er hinn rússneski siður, er á bezt við á Íslandi. — Fyrst er eiginheitið, t. d. Leo, þá kemur föðurnafnið Alexandrovitsj, þ. e. Alexander í eignarfalli + vitsj, er merkir son, og loks kemur ættarnafnið Tolstoy. Önnur dæmi: Ivan Sergejevitsj Turgenjeff; Fjodor Ivanovitsj Tjutsjeff o. s. frv. Líkt á sér stað í Serbíu.

Þessi siður er ekki óþektur á Íslandi. Það eru sumir

menn með ættarnafni, sem eru vanir að skrifa föðurnafn sitt á undan ættarnafni sínu, annaðhvort fult eða skammstafað. Þau eru þrjú þau skáldin Benedikt Gröndal, nefnilega Bendikt Jónsson Gröndal, Benedikt Sveinbjarnarson Gröndal og Benedikt Þorvaldsson Gröndal. Ef hér væri ekki föðurnafnið sett á undan ættarnafninu, yrði að bæta við eldri, yngri, yngsti — og er þetta varla hentugra. Það eru fleiri, er hafa tekið upp þessa venju, t. d. Björn M(agnússon) Ólsen prófessor; þau systkin Ágúst H(ákonarson) Bjarnason prófessor, Brynjólfur H. Bjarnason kaupmaður, Ingibjörg H(ákonardóttir) Bjarnason forstöðukona, Lárus H. Bjarnason prófessor, Þorleifur H. Bjarnason kennari; Torfhildur Þ(orsteinsdóttir) Holm skáldkona, Geir G(eirsson) Zoëga landsverkfræðingur, Geir T(ómasson) Zoëga rektor o. m. fl.

Það liggur í augum uppi, að sú venja er afar hentug, og ætti að lögfesta hana sem fyrst, þ. e. a. s. það ætti að skipa mönnum er eiga eða taka upp ættarnöfn að sleppa ekki föðurnafninu, en setja það á undan ættarnafninu, annaðhvort fullum stöfum eða skammstafað. Allir föðurnafnavinir — sem eru ekki stækir ættarnafnandstæðingar og vilja fyrir hvern mun koma öllum ættarnöfnum fyrir kattarnef — hljóta að vera þessari venju hlýntir.

Hún er einnig mjög góð að því er kvenfólkið snertir. Það er hentugast, að kona sem giftist manni með ættarnafni taki upp þetta nafn. Ef eg þekki kvongaðan mann er heitir Steintún, get eg ávarpað konu hans með sama nafni, ef eg hef ekki séð hana áður eða þekki ekki eiginheiti hennar og föðurnafn eða hef gleymt þeim. En þó að konan þannig tæki upp ættarnafn bónda síns, þarf hún ekki með því að segja sig úr ætt sinni eða »afneita foreldri sínu«, ef hún sleppir eigi föðurnafni sínu, og nefnir sig »Sigriði Ólafsdóttur Steintún«.

Ef allir Íslendingar ættu þrjú nöfn samkvæmt þessari reglu, ættu þeir hinn ákjósanlegasta nafnasið.

II.

Nefndardlítið.

»En uppástungur þær, er nafnanefndin hefir borið upp, sýna það, að ættarnöfn eiga ekki við á Íslandi, það er ekki hægt að búa til nema hlægileg orðskrípi, er misbjóða málinu«, segja menn.

Eg skil ekki þetta. Er íslenzkan svo óþjál, svo fátæk, að eigi megi búa til góð íslenzk ættarnöfn? Einn andstæðingur ættarnafna, próf. Finnur Jónsson, vill láta menn taka upp kenningarnöfn. Þau fara þannig ekki í bága við málið. Það er ekkert á móti því að kalla sig Jón Borgfirðing¹⁾, Guðmund Eyfirðing¹⁾, Jón Skaftfelling, Eirík Mýrdæling, Sigurð Þinghyllting o. s. frv. En því má ekki láta nöfn þessi ganga að erfðum? Jafnvel þótt sonur Guðmundar Eyfirðings sé fæddur og uppalinn í Reykjavík eða á Eskifirði, er ekkert á móti því, að einnig hann kenni sig viðfæðingarsveit föður síns. Nafnið »Eyfirðingur« táknar nú, að ættin á uppruna sinn í Eyjafjarðarsýslu.

Ef menn vilja hafa þau ættarnöfn ein, er fylgja íslenzkum beygingarreglum út í æsir, þá hlýtur það að vera innan handar að búa slík nöfn til. Eg er búinn að nefna nokkur nöfn, er enda á -ingur og kenna menn við land eða hérað. Það er ekkert á móti því að viðhafa þess konar nöfn um kvenmenn. Er Guðrún Jónsdóttir ekki eins vel Íslendingur og Mýrdælingur eins og bróðir hennar Eiríkur Jónsson? Og höfðu fornmennt ekki alloft kvenkend kenningarnöfn (Ketill gufa, Eiríkr snara)? Málrétt myndi það einnig vera að hafa nöfn með forsetningunni frá (smbr. »von« á þýzku) fyrir ættarnöfn (eins vel og fyrir kenningarnöfn), t. d. frá Stórholti; en viðkunnanleg eru þau þó varla. Svo myndi það varla hægt að segja herra frá Stórholti í stað herra Sveinn Finnsson frá Stórholti. Hér væri það miklu viðkunnanlegra að sleppa forsetn-

¹⁾ Þessi nöfn eru tekin upp fyrir ættarnöfn.

ingunni; þá er það hægt að segja herra Stórholt eða herra Sveinn Stórholt. Og öll hvorugkynsorð geta fylgt reglum málsins og beygst. Öll orð, er enda á -berg, -bú, -gil, holt, -hús, -nes, -tún, o. m. fl. eru ágætlega nothæf. Eins mætti vera hægt að nota ýms kvenkyns orð fyrir ættarnöfn, t. a. m. staðarheiti er enda á -borg, -hlið o. s. frv.

Karlkynsorðin eru verri viðfangs. Hingað til hafa menn felt niður nefnifallsendinguna í endingunum -dal, -fjörð, -stein o. s. frv.

Nafnanefndin hefir tekið upp nöfn er enda á -dal, en ekki þau er enda á -fjörð, sem þó þegar eru allalgeng (Breiðfjörð, Dýrfjörð, Gilsfjörð, Skagfjörð o. fl.). Hún skoðar nefnilega -dal þágufall, eins -stað, sem hún notar ekki. Er þessi uppfunding nefndarinnar allsnjöll. En -- er hún þá ekki all-viðsjárverð? Er ekki hætt við því, að menn fari að beygja þessi þáguföll? Orðmynd svo sem Brúnus álíta þó víst allir orðskrípi.

En því ekki skoða -dal, -fjörð, -stað, -stein o. fl. sem nefnifall? Þau 20 ættarnöfu, er enda á -dal, þau 13, er enda á -fjörð og fleiri eru nú skoðuð sem nefniföll og taka að sér -s í eignarfalli. Má ekki segja, að þetta sé orðið málvenja, alveg eins og eignarfallsendingin s í Björnsson og Sigurðsson, þar sem þó Bjarnar og Sigurðar voru upphaflegu (»réttu») myndirnar? Og orðin sonur og vinur höfðu þegar í fornöld hliðstæðu myndirnar son og vin í nefnifalli, og enn er afturskeytta myndin í föðurnöfnum alt af son. Að láta -dal, -fjörð, -stað, -stein vera án nefnifallsendingar í ættarnöfnum eða að láta t. d. -stað taka s að sér í eignarfalli mun varla breyta beygingu þessara orða, er þau standa sér eða í staðarheitum. Eins og sagt er í nefndarálitinu fylgja nöfn nokkuð öðrum lögum en önnur orð málsins. Það er því engin ástæða til þess að kalla -fjörð í Breiðfjörð þolfall eða til herra Lyngstaðs málvillu. Sú hætta sem

málinu stafar af þess konar »reglulegum« afbrigðum er engin.

Þess vegna er heldur engin ástæða að fjargviðrast svo mikið yfir endingunum -an, -on, -fer og -star, sem nefndin hefir búið til eða tekið upp.

Eins og það er ómögulegt að komast alveg hjá útlendum orðum í íslenzku, og það jafnvel í sumum tilfellum er betra að taka upp útlent orð og samlaga það málinu í staðinn fyrir að búa til óþjált innlent nýyrði, eins mætti í stöku tilfellum taka upp útlenzka affleiðsluendingu og samlaga hana málinu, þar sem þetta myndi auðga málið án þess að spíla því.

Eg er þó ekki endingunum -fer og -star meðmæltur. Mér þykja þær ekki fallegar, og nokkuð gerræðislegar, enda eru þær óþarfar, ef það sem eg hefi sagt að ofan um -fjörð og -stað er rétt.

Um endinguna -on er að segja að hún merkir ekkert og hana vantar líkingu í málinu, þó hún sé hvorki ljót né óíslenzkuleg (smbr. Hákon)¹⁾.

Öðru máli er að gegna með endinguna -an. Keltnesku nöfnin Kamban, Kvaran o. s. frv. eiga sér hefð í málinu og geta verið alveg eins íslenzk og nöfn svo sem Jón, Hannes, Katrín, Kristín, Kristinn, Lárus, Margrét, Mattías, Niels, Pétur. Og auk þess eru samhljóða endingar til í alinnlendum orðum (aftan-n, þjóðan-n; gaman, óáran, ólyfjan; austan, vestan, héðan, handan, heiman o. s. frv.) Í atviksorðum hefir þessi ending merkinguna frá. Þessa merkingu endingarinnar hefir nefndin notað til þess að tákna upptök á einhverjum stað og hefir skeytt það við ýms staðarheiti. Svo merkir Bakkan frá Bakka, Hlíðan frá Hlíð, Melan frá Melum o. s. frv. Það er það sem ef til vill mætti kalla stælingar-myndun (analogi), og sem á sér stað í öllum málum. Miður heppilegt virðist þó að skeyta -an við mannanöfn svo sem

¹⁾ Enda gæðjast mönnum þessar endingar -fer, -star og -on lítt, og hafa engir — mér vitanlega — tekið þær upp enn.

í A r a n (af »Ari«), L o f t a n (af »Lofur«); þó er það eftir því sem hverjum finst.

Að því er stytting samsettra orða snertir, hefir nefndin einnig á réttu að standa. Að eins hefir hún sumstaðar gengið helzti langt og er stundum nokkuð geræðisleg (t. d. Jakdal af Jökuldal, Markfoss af Merkjárfossi). En yfirleitt þykja mér meginreglur þær réttar, er hún fylgir, henni hefir að eins stundum skjátlást í framkvæmdinni. En þetta er engin ástæða til þess að hafna ættarnöfnunum yfir höfuð að tala. — Nefndarálitid á inni að halda mörg góð og falleg ættarnöfn, og vilji menn engin þeirra, er það hægt að finna aðrar leiðir.

Alyktun.

Eg þykist sannfærður um, að hægt sé að búa til góð íslensk ættarnöfn, sem ekki þurfa að fara í bága við lög íslenskunnar.

Föðurnafnasiðurinn er — þegar hann er einn notaður — óhentugt fat, er aðrar þjóðir hafa fleygt, og sem málinu er ekkert gagn í að halda.

Fjölgun landsmanna og vöxtur kaupstaða og auknar samgöngur innanlands og við útlönd munu gera ættarnöfn ómissandi, ef ekki í bráð, þá að minsta kosti með tímanum.

En hið ákjósanlegasta er samt að taka upp ættarnöfn og fleygja ekki föðurnöfnunum, hafa þrjú nöfn og skrifa föðurnafnið á milli eiginheitisins og ættarnafnsins fullum stöfum eða skammstafað. Enda fær þá hver sitt.

Holger Wiehe.



Guðmundur Magnússon sagnaskáld.
(Jón Trausti).

Ritstjóri »Skirnis« hefir beðið mig að skrifa grein með mynd Guðmundar Magnússonar í »Skirni«. Eg hefi engan

tíma til þess að líta á ný yfir skáldsögur hans og rifja þær á þann hátt upp fyrir mér, og engan tíma til að rita um þær eins rækilega og vera ætti. En eg man það, að þegar eg fyrir 11 árum las fyrst yfir handritið af »Höllu«, sem við Arinbjörn Sveinbjarnarson gáfum út sumarið 1906, þótti mér sagan taka svo langt fram því, sem eg hafði gert mér vonir um, þegar eg tók við handritinu, að mig fúrðaði á því, að höf. skyldi vera í vandræðum með að koma henni á prent. En hann kom með handritið til mín í því skyni að fá það gefið út, afturreka frá helztu bóksölunum í bænum, er ekki höfðu viljað taka í mál að gefa söguna út. Við Arinbjörn höfðum þá gefið út í félagi eina bók, þýðing á «Quo vadis?», og því hugkvæmdist honum að reyna við okkur. »Halla« kom svo út um haustið 1906, og það mátti heita, að henni væri vel tekið. Áður höfðu komið út eftir Guðm. Magnússon tvö kvæðasöfn, ljóðleikurinn »Teitur« og »Ferðaminningar«, frásagnir um ferð hans suður um Evrópu árið 1904, og hafði hann fengið styrk hjá alþingi til þeirrar ferðar. »Ferðaminningar« komu út sumarið 1905. Með þeim fylgdi dálítið safn af ljóðmælum, sem hann hafði ort í utanförinni. En þessar bækur hans munu ekki hafa selst vel, og frá ritdómurum blaðanna höfðu þær ekki fengið vingjarnlega dóma. Af þeim ástæðum varð höf. afturreka með »Höllu« frá þeim bóksölum, sem áður höfðu gefið út bækur hans.

En nú skifti um þetta, þegar »Halla« kom. Hún fékk fremur góðar viðtökur í þeim blöðum, sem á hana mintust. Samt seldist hún ekki mikið í byrjun. En tveimur árum síðar, 1908, kom út framhald hennar í 1. þætti »Heiðarbylísins«, sem heitir »Barnið«, og svo enn þrjár bækur í viðbót, »Grenjaskyttan«, »Fylgsni« og »Þorradægur«, sinn þátturinn hvert árið fram til 1911. Söguurnar vöktu meiri og meiri athygli eftir því sem á leið, og það mátti heita að síðari heftin flygju út um leið og þau komu í bókabúðirnar. Nú eru allar þessar sögur að mestu upp seldar og þörf á nýrri útgáfu. Jón Trausti var

orðinn, þegar sagnaflokkur þessi var allur út kominn, einn af þektustu og mest lesnu rithöfundum landsins, og erlendis höfðu sögurnar einnig vakið eftirtekt. Jafnframt þessum sagnaflokki komu og út eftir Jón Trausta tvær aðrar sögur: »Leysing« 1907 og »Borgir« 1911 (2. útg.), og þar að auki safn af Smásögum 1909 og 1912.

Þessar sögur, sem hér eru nefndar á undan, mynda sérstakan flokk í ritstörfum Jóns Trausta. Þær eru allar lýsingar á nútíðarlífínu. Þótt »Halla« fari nokkuð aftur í tímann, þá er þar þó aðeins lýst því, sem borið hefir fyrir augu höf. sjálfs, því sagan er byggð á endurminningum frá bernsku hans. En eftir 1911 snýr hann sér að sögu landsins á fyrri öldum, og þaðan er tekið efnið í allar sögur hans, sem síðan hafa birst.

Framan við 2. útg. af »Borgum«¹⁾ skrifaði eg fyrir sex árum stutta grein um skáldsagnagerð Jóns Trausta fram til þess tíma, og um æfíatriði hans hefi eg áður skrifað, í aprílblað »Óðins« 1907 og í aprílblað hans 1911. Tek eg hér upp kafla úr því, sem eg hefi áður sagt um sögur hans í greininni framan við »Borgir«:

Í þessum sögum rekur hver lýsingin aðra úr íslenzku þjóðlífi, hver annari trúrrí og sannari — úr sveitalífínu, úr kaupstaðalífínu, úr viðskiftalífínu, úr safnaðalífínu, úr heimilislífínu. Alstaðar liggur söguefnið opið fyrir Jóni Trausta; alstaðar finnur hann fólk, sem vert er að lýsa, og dregur fram viðburði, sem í meðferð hans verða sögulegir. Innan um sögur hans koma og fyrir ljómandi fallegar og vel gerðar náttúrulýsingar. Sögulýður Jóns Trausta er þegar orðinn svo margháttaður, að erfitt er að segja, hverjar mannlýsingar láti honum bezt. Hann fer inn í kofa fátækustu vesalinganna og opnar hugskot þeirra fyrir lesendum sínum; og hann fer inn á heimili höfðingjanna og fer þar eins að. Í »Höllu« lýsir hann þremur

¹⁾ 1. útgáfan kom út á Akureyri, sérprentuð úr »Kvöldvökunum«, og var mjög gölluð að ýmsu leyti, svo að 2. útgáfa kom út rétt á eftir hér í Reykjavík, á kostnað okkar Arinbj. Sveinbjarnarsenar. P. G.

manneskjum: ungum presti, og vinnukonu og vinnumanni á prestætri á útkjálka landsins, Höllu og Ólafi — öllum listavel. »Heiðarbýlið« lýsir svo í fjórum sögubáttum lífi þeirra Höllu og Ólafa uppi í afskektu heiðarkoti. Mjög átakanlegar eru t. d. lýsingarnar á dauða barnsins í 1. þættinum, og svo þorradægrahörmungunum í síðasta þættinum. Það eru lýsingar úr basllífi fátækustu fátæklinga landsins. Með óteljandi smáatriðum, sem höf. hefir svo næmt auga fyrir, er lífinu lýst þarna uppi í heiðarkotinu, hvað þar huggar og hvað grætir, skuggunum og sólskinsblettunum í þessu fátæklega lífi. Byssuskotið, sem fellir kúna í hlaðvarpanum og sagt er frá í byrjun »Þorradægranna«, er þar stórviðburður, sem höf. lýsir út í yztu æsar. Og mjög vel lýsir hann börnunum í heiðarkotinu, leikjum þeirra og samtölum. Þær lýsingar festast í minni, og eru líka athugunar verðar. — Hreppstjóraheimilið í Hvammi er næsta heimilið, sem lýst er. Agli hreppstjóra kynnast menn í öllum »Heiðarbýlis«-sögunum, alltaf betur og betur. Honum er vel lýst, og hann vex alltaf í álitu lesandans við kynninguna. Hreppstjórakonan er líka manneskja, sem vert er að kynnast. Ef til vill hafa höf. óvíða tekist betur lýsingar en á henni í »Fylgsni«, því þar er hún ein af helztu söguhetjunum. Ferð hennar inn að Kroppi, og lýsingin á hugarástandi hennar þá, er meistaraleg lýsing. Sömuleiðis sætt hennar við Höllu. Bæði Jón Thoroddsen og Gestur Pálsson hafa áður lýst skapmiklum og ráðríkum húsfreyjum í sveit. En »húsfreyjan mikla« í Hvammi, sem Jón Trausti hefir þarna leitt fram á sjónarsviðið, mun verða minnistæðust. Benda má líka á eitt, sem skilur í milli hjá honum og þeim. Þeir hafa gert þá, sem þessar konur áttu í höggi við heima fyrir, að vesalmennum og meinleysingjum. Í sambandi við það kemur fram hjá þeim skörungsskapur húsfreyjanna og mikillæti. En hjá Jóni Trausta á »húsfreyjan mikla« mann eins og Egil í Hvammi og son, sem ekkert lætur undan síga fyrir henni. Það er hún, sem verður, þrátt fyrir allt, að lúta í lægra haldi. Þorsteinn sonur þeirra

Egils er ein af söguhetjunum í tveimur þáttum »Heiðar-býlisins«. Það er enginn hversdagsmaður, fremur en móðir hans, og saga hans er fátíð, en þó eðlileg. Sama er að segja um Pétur á Kroppi, sem er aðalmaðurinn í »Fylgsni«. Hann á ekki marga sína líka hér úti um sveitirnar. En engu að síður er honum ágætlega lýst. Setta í Bollagörðum er og afbrigði frá öðrum mönnum. Hjá Pétri á Kroppi eru gáfur og hæfileikar í stríði við lífskjörin, og það gerir hann að glæpamanni og þjófnaðarfélagu Settu í Bollagörðum, sem er ófreskjan í sögunni, reyndar greind og kjarkmikil, en annars hlaðin öllum ókostum. — Þessi sagnaflokkur, »Halla« og »Heiðarbýlið«, er svo ríkur af myndum, mannlýsingum og æfintýrum úr almúgalífinu hér á landi, að ekkert íslenskt skáldrit opnar þá heima neitt til líka við hann. Höf. styðst þar án efa við bernskuminningar sínar, lýsir héraðinu og sveitinni, sem hann er fæddur í og upp alinn í fram á tvítugsaldur. Frá þeim tíma þekkir hann líf fátækustu fátæklinganna af eigin reynslu og hugsunarhátt þeirra, sem lifa við þau æfiskjör, sem hann lýsir í þessum sögum.

Í »Leysing« tekur Jón Trausti sér fyrir hendur að lýsa öflugri þjóðfélagshreyfingu. Það er kaupfélagamyndunin á síðustu áratugum 19. aldarinnar og baráttan, sem sú nýbreytni á í við selstöðuverzlanirnar dönsku, sem fyrir eru. Í »Borgum« lýsir hann frikirkjuhreyfingunni. Á báðar þessar hreyfingar lítur höf. mjög skynsamlega og með heilbrigðum augum. Sögurnar verða ekki hjá honum málsinnlegg, til skemda skáldskapnum, heldur er skáldskapurinn höfuðatriðið. Hann lætur sögumenn sína vegast með þeim vopnum, sem málstaður hvorra um sig á til, en reynir að líta sjálfur á viðureignina sem mest frá áhorfendanna sviði, hlífir engri skoðun við ákúrum og hörðum dómum, og áfellir eigi heldur neina án þess að leiða fram varnarmenn hennar á móti. Hann reynir að fá alt fram í sókn og vörn báðumegin. — Í þessum tveimur sögum eru sumar af beztu mannlýsingum Jóns Trausta. Þorgeir Ólafsson verzlunarstjóri, í »Leysing«, og séra Torfi,

í »Borgum«, eru stærstu mennirnir í sögum hans, báðir höfðingjar og mikilmenni. En þeir eru báðir fulltrúar gamla tímans, hvor í sinni sögu. Það eru mennirnir, sem standa á móti nýju hreyfingunum, ganga á móti straumnum. Báðum er ágætlega lýst. Friðkirkjufundurinn í »Borgum« er ein af meistaralegustu lýsingum höf. Hliðstæður honum er í »Leysing« kaupfélagsfundurinn, og svo mannamótið við réttirnar, sem þar er lýst. — Kaupfélagsforkólfarnir í »Leysing« eru allir menn, sem eru blátt áfram eins og menn gerast alment, og því er vel lýst, við hvað þeir eiga að stríða. Hreppstjórinn í Vogabúðum og fleiri af þeim verða dálítið spaugilegir í sögunni. Eins er um forkólfa friðkirkjustofnunarinnar í »Borgum«, konsúlinn, ritstjórnann og aðstoðarprestinn. Þeir eru allir gallagripir, hver á sinn hátt. En öllum er þeim eðlilega lýst; menn kannast við gallana á þeim öllum. Þeir eru algengir og alpektir.

Þetta, sem nú hefir verið sagt, á við skáldsagnagerð Jóns Trausta fram til 1911, eða þann flokk skáldsagna hans, sem fæst við lýsingar á nútíðarlífinu. En hér á eftir verður í stuttu máli minnst á hinar sögulegu skáldsögur hans.

»Sögur frá Skaftáreldum« eru elztar þeirra og komu út 1912 og 1913. Í þeirri bók kemst höf. ef til vill lengst í skáldsagnalist sinni, að minsta kosti í sumum köflum sögunnar, og má því til stuðnings benda á t. d. Eldmessuna o. fl. í fyrra bindinu. Yfir höfuð er fyrra bindi þeirrar bókar betra en hið síðara, með því að í síðara bindinu virðist höf. binda sig um of við frásögn séra Jóns Steingrímssonar, sem síðar er prentuð í ritum Sögufélagsins, eða meira en þörf gerðist til þess, að sagan yrði sem bezt úr garði gerð og presturinn, séra Jón Steingrímsson sjálfur, sem er höfuðmaður og stólpi sögunnar, nyti sín þar sem bezt. Sá ljómi, sem um hann leikur í enda fyrra bindisins, hverfur mjög er fram í síðara bindið sækir, og virðist manni sem skáldsagan hefði átt að halda honum sem mest í þeirri hæð, sem hún hafði lyft honum upp í,

enda þótt sagnaheimildirnar geri það ekki og beri vitni um ýmislega veikleika hjá honum á efri árum. Í heild sinni er samt þessi bók Jóns Trausta mikið og merkilegt verk. Séra Jón heitinn Bjarnason taldi Skaftáreldasögurnar stærsta skáldverk nýislenzkra bókmenta. Annar prestur, sá sem nú býr á stöðvum þeim, sem sagan mest lýsir, séra Magnús Bjarnason á Prestsbakka, sagði um fyrra bindi Skaftáreldasagnanna, eftir að hann hafði lesið bókina í þriðja sinn, og þá upphátt fyrir fólki sínu: »... Mér þótti hún strax góð, er eg las hana fyrst, enn betri, er eg las hana í annað sinn og langbezt nú, er eg las hana í þriðja sinni, en það er einkenni góðra bóka, að þær vinna við ítrekaðan lestur . . . Hún sækir í sig veðrið eftir því sem á hana liður og nær hástigi sínu í »Eldmessunni«, sem er stórfalleg . . . en sögulokin þar á eftir, um legu Guðrúnar á Prestsbakka og veru Vigfúsar þar, varpa mildum og angurbliðum blæ á alt það stórfenglega, hrikalega og hrottalega, sem á undan er gengið í viðburðum sögunnar, bæði í náttúrunnar ríki og mannlífinu, og sefar og kemur í jafnvægi skapsmunum lesandans, svo að hann rór og ánægður leggur aftur bókina«. Hann segir og, að höf. hafi »snildarlega tekist að sýna hjátrú og hugsanalíf þátiðarinnar og flétta hinum stórfenglegu náttúruviðburðum innan um söguviðburðina, svo að hvorttveggja fær eins og blæ og lit af hinu og má ekki án þess vera«. (Lögr. 5. marz 1913). Þennan dóm séra M. B. um bókina tel eg réttan.

Annars kann eg ekki um það að dæma, hve réttum tókum Jón Trausti hefir náð á því, að lýsa menning og hugsunarhætti liðinna alda rétt og nákvæmlega. Til þess að dæma um það þarf meira en almenna þekkingu á sögu landsins. Hann hefir á síðari árum sókt sér mjög niður í lestur íslenzkra sagnarita, og hann hefir jafnan ferðast um þau svæði, sem sögur hans segja frá, áður en hann fer að skrifa um þau og viðburði þá, sem þar hafa gerst, t. d. dvaldi hann um tíma austur í Skaftafellssýslu og fór þar víða um, meðan hann var að búa sig undir að

skrifa »Sögur frá Skaftáreldum«. Eg ætla um þetta efni að færa hér til ummæli þess manns, sem færastur er um það að dæma. Þorv. Thoroddsen prófessor segir um fyrra bindi Skaftáreldasagnanna: »Eg hefi með mikilli ánægju lesið sögur Jóns Trausta frá Skaftáreldi, og finst mér höf. hafa ágætlega tekist að leiða í ljós áhrif þessa voðaviðburðar á þjóðlíf þess tíma. Það er mjög sjaldgæft, að skáldsagnahöfundar kynni sér jafn vel sögu þess tímabils, sem þeir rita um, eins og Jón Trausti hefir gert; til þess hefir þurft mikla elju og fyrirhöfn. — Smávegis galla má eðlilega finna í þessari bók, sem öðrum, en þeim er svo varið, að hægt er að leiðrétta þá í nýrri útgáfu. Erlendis hefir það verið talin skylda skálda, sem um söguleg efni rita, eða láta aðalpersónur sagnfræðinnar koma fram með réttum einkennum hinnar ítrustu söguþekkingar, en það er talið fult skáldaleyfi, að lýsa og skipa niður viðburðunum í lífi smámenna eftir því, sem bezt hentar í skáldsögunni. Með þessu fær alþýða manna gott og rétt yfirlit yfir aðaldrætti sögunnar, en skáldið hefir fult frelsi fyrir hugmyndaflugið innan við vébönd almennrar sagnfræði. Það er ekki hlutverk skáldsins, að fræða menn um æfíatriði, ætt og einkenni ómerkilegra manna, sem enga þýðingu hafa í þjóðarsögunni. — Náttúrulýsingarnar í bók þessari eru mjög góðar, sannar og áhrifamiklar, og höf. notar heimildarritin með athygli og dómgreind. Væri óskandi að Íslendingar fengju margar slíkar skáldsögur, sem jafn vel og þessi sýndu þeim viðburði liðinna alda í skuggsjá nútímans; af þeim gætu þeir margt lært um landið sitt, og um kjör og lífsskilyrði hinnar íslenzku þjóðar. Það gæti ef til vill nokkuð lægt belging heimskra manna og sýnt hugsandi fólki, hve áriðandi það er, að íslenzk alþýða lagi sig eftir þeim náttúruskilyrðum, sem fyrir hendi eru, svo að hún hlaupi ekki í gönur og sé svo óviðbúin og ráðalaus, þegar ólánsviðburðir skella yfir«. (Lögr. 5. marz 1913).

Næsti sagnaflokkur Jóns Trausta er »Góðir stofnar«, órar sögur, sem komu út í 2 bindum 1914 og 1915. Mest

er þar spunnið í lengstu söguna, »Önnu frá Stóruborg«, sem fyllir fyrra bindið. Í öllum þessum sögum eru konur af heldri ættum og stéttum fyrri alda höfuðpersónurnar. Anna frá Stóruborg er í uppreisn gegn ríkjandi skoðunum og aldarhætti sinna tíma, hafnar þeim æfíkjörum, sem hún er fædd og uppalin til að njóta, en vill lifa eftir eigin geðþóttu, þótt í trássi sé við ættmenn sína, lög landsins og yfirvöld, og sigrar að lokum eftir langt og erfitt stríð. Grundar-Helga, aðalpersóna annarar lengstu sögunnar, gripur á alvarlegum tíma inn í stjórnmalasögu landsins og lætur drepa þann mann, sem þá fer með æðsta valdið innan lands, til þess að hefta yfirgang erlends valds. Fyrri sagan er heil æfisaga, en hin síðari lýsir að eins einum viðburði. Þriðja sagan, »Hækkandi stjarna«, lýsir lífi og heimilishögum eins af ríkustu höfðingjum landsins á fyrri tíð, Bjarnar Jórsalafara, og verður Kristín dóttir hans þar söguhetjan. Lýsingin á veikindum hennar í uppvextinum dregur að sér mesta athygli í sögunni. Fjórða sagan lýsir vel sáttum dætra tveggja höfðingja, frá fyrri tímum, sem ázt hafa ilt við, Jóns Sigmundssonar lögmanns og Gottskálks Hólabiskups. En hve réttar og nákvæmar þær lýsingar höf. séu á framkomu höfðingja fyrri aldra, lifi þeirra, veizluhöldum o. s. frv., sem frá er sagt í þessum sögum — um það verða sagnfræðingarnir að dæma. En mörgum mönnum, konum og körlum, er þannig lýst í sögum þessum, að það fólk festist í minni. Í »Veizlunni á Grund« er mjög falleg lýsing á eyfirzkri sumarnótt, þar sem sagt er frá viðbúnaðinum til aðfararinnar að þeim Smíði hirðstjóra og mönnum hans.

Síðasta bókin er »Tvær gamlar sögur«, sem út komu síðastliðið ár. Fyrri sagan, »Sýður á keipum«, er mjög vel sögð, stutturð og gagnorð, með kraftmiklum mannlýsingum. Það er lýsingin á vermanna lífi undir Jökli fyr á tímum. Eitt af yngri skáldum okkar hefir sagt í ritdómi um þá sögu, að hann teldi hana »tvímælalaust beztu sögu höfundarins«. Í síðari sögunni eru einnig veigamiklar lýsingar á mönnum, staðháttum og viðburðum frá merki-

legu tímabili í sögu landsins, en það er siðaskiftatímabilið. Sagan lýsir fyrstu áhrifum lúthersku kenninganna meðal alþýðu hér á landi.

Eg hefði ekki minnst á smærri sögur höf. hér á undan, en sumar þeirra standa ekki að baki hinum lengri sögum hans, svo sem »Á fjörunni«, »Strandið á Kolli«, »Sigurbjörn Sleggja« o. fl. »Stjórnarbylting« er meistaralega dregin líking milli náttúruviðburða og mannlífs.

Á þeim 11 árum, sem nú eru liðin síðan fyrsta skáldsagan kom út eftir Jón Trausta, er það mikið verk, sem eftir hann liggur. Bókmentir okkar væru ekki litið fátækari en þær nú eru, ef sögum hans væri kipt þaðan burtu. Þó fer því fjarri, að eg haldi því fram, að ekki megí finna galla á þeim. Svo mun vera um flest manna verk. Ýmsir hafa gert sér mikið far um að halda á lofti aðfinningum gegn þeim nú síðustu árin. En þær munu standast þá dóma og velta þeim af sér, enda þótt vel megí vera að nokkuð af aðfinningunum sé á meiri eða minni rökum bygt. Það gera kostirnir. Aðalkostur Jóns Trausta er það, hve vel honum lætur að skapa söguheildirnar, með mönnum og viðburðum, og tvinna þetta saman, skapa einkennilegar og eftirtektarverðar persónur og finna þeim rúm til þess að þær geti notið sín til fullnustu. Hitt er eigi svo mjög hans sterka hlið, að faga mál og stíl á hverri einstakri lýsingu, með náinni aðgæzlu á hverju orði og hverri setningu. Hugur hans hvílir við hitt, þegar hann semur skáldsögur sínar, sem líka er aðalatriðið. Því hversu vandað sem mál og stíl væri, þá væri þó sú saga einskis nýt, sem ekki hefði annað að bjóða en þetta tvent. Hún þarf fyrst og fremst að vera skáldskapur til þess að orðbúningurinn skarti á henni. Við eigum til skáldsögur á ólastanlegu máli, sem alt um það eru leirburður, og málið bjargar þeim á engan hátt frá þeim dómi, að þær hefðu aldrei átt að sjást á prenti. Þetta mótmælir því þó á engan hátt, að vandað mál og fagur stíl sé verulegur kostur á hverju rit-

verki, eigi sízt á skáldverkum. En málfræðisvizka gerir engan mann að skáldi, og hitt er ekki heldur heimtandi af öllum skáldum, að þau séu líka málfræðingar. Ekki er málfræðispekking heldur næg til þess, að kenna mönnum að setja vel fram hugsanir sínar. Lærða málfræðinga getur skort mikið á að gera það svo, að list sé í. Eg tek þetta fram af því að mörgum hefir orðið skrafdrjúgt um, að málið væri óvandað á sögum Jóns Trausta. En eg get ekki betur fundið en að miklu meira orð sé á þessu gert en rétt er. Það er sjálfsagt, að orð og orð koma fyrir í bókum hans, sem bera þess vott, að hann sé ekki lærður málfræðingur. En bæði hér á landi og annarstaðar er því svo varið, að fáir af rithöfundunum eru það. Hann er ekki heldur neinn sérlegur listamaður í meðferð málsins, kostir hans liggja ekki á því sviði. En hann ritar daglegt mál létt, áferðarfallegt og blátt áfram, tilgerðarlaust og óþvingað. Sú málfræðispekking, sem hann hefir aflað sér, og sú framsetning, sem hann hefir valið sér og tamið sér, hefir nægt honum til þess, að skapa listaverk á íslensku tungu. Og það er höfuðatriðið, sem eftir er sózt, og um er að tala.

P. G.

Útan úr heimi.

»Fátt er svo ilt at einugi dugi«, sögðu forfeður vorir. Þetta datt mér ósjálfrátt í hug daginn sem símskeytið kom hingað til Hafnar um stjórnarbyltinguna rússnesku. Má vafalaust telja hana markverðasta og stórvægilegasta atburð síðan ófriðurinn hófst. En blöðin hafa flutt fregnir um stjórnarbyltinguna, og enn ekki séð fyrir endann á öllum afleiðingum hennar, svo eg vík ekki nánar að henni hér.

En spakmælið gamla getur átt víðar við. Við þurfum ekki annað en líta til nágranna okkar Englendinga og gefa gætur að því, hvað er að gerast heima fyrir hjá þeim núna, til þess að ganga úr skugga um, að þeir hafa allan hugann á því að láta ófriðinn verða sér að kenningu.

Það var ekki með öllu að ástæðulausu, að heimspekingurinn þýzki, dr. Ostwald, sagði í byrjun ófriðarins, að »afлтауг Þýzkalande væri í því fólgin, að þeir hefðu uppgötvað hver hagnaður væri að samræmi í öllu fyrirkomulagi«. — »Aðrar þjóðir búa enn við einstaklingsveldi, en við búum við heildarsamræmi. Og það stig er æðra menningarstig«.

Deila má um það, hvort stigið er æðra sem menningarstig; en víst er um það, að hið aðdánlega fyrirkomulag Þjóðverja á öllum sviðum er að iðnaði lúta, hefir orðið þeim stoð og stytta í ófriðnum. Lesendur Skírnis hafa getað gert sér ljósa hugmynd um það af hinum fróðlegu greinum »Útan úr heimi« í síðasta árgangi. Og eigi er það síður víst, að Englendingar hafa vaknað við vandan draum og séð að mörgu var ábótavant heima fyrir.

Bretland hið mikla er eins og kunnugt er mesta verzlunarland helmsins, svo hefir verið nú um langan aldur, og meðvitundin um það hefir ef til vill átt nokkurn þátt í því, að þeir gáfu fremur lítinn gaum að ýmsu því, er aflaga fór heima fyrir, einkum ef það stóð ekki í beinu sambandi við verzlun þeirra. Þó var Þýskaland

orðið skæður keppinautur á undan ófriðnum. Er það auðsætt á því, að árið 1904 hafði Bretland 18% af allri heimsverzluninni en Þýskaland 11,7%, en árið 1913 var Bretland komið niður í 16,6%, en Þýskaland upp í 12,9%. Þá var með öðrum orðum Þýskaland komið langt fram úr Bandaríkjunum (9,9%) og Frakklandi (9%), og á góðum vegi með að verða jafnoki Bretlands.

Auðvitað sáu Englendingar hverju fram fór. Og árið 1912 komu fram uppástungur frá einstöku mönnum um að eigi mundi úr vegi að reyna að endurbæta landbúnaðinn. Var sýnt fram á það, að landbúnaður allur á Englandi væri orðinn langt aftur úr landbúnaði allra annara mentaþjóða Evrópu, og hefði hrakað að mun síðustu áratugi. En ekkert var þó gert af stjórnarinnar hálfu.

Og svo kom ófriðurinn.

Og ófriðurinn hefir betur enn nokkuð annað fært Englendingum heim sanninn um, hve undralangt þeir eru orðnir aftur úr á ýmsum sviðum, og það á ýmsum sviðum, sem eru afarmikilvæg hverri þjóð, ef vel á að fara. Má til nefna landbúnað, fiskiveiðar, iðnnám alþýðu, skóla og borgaralega löggjöf í ýmsum greinum.

Og nú, meðan ófriðurinn geysar ákafar en nokkru sinni áður og Englendingar leggja alt sem þeir megna í sölurnar til að bera hærra hlut úr bytum gagnvart Þjóðverjum, sjáum vér þá sjaldgæfu sýn, að þeir taka fjandmenn sína til fyrirmyndar á ótal sviðum, bera saman ástandið hjá sér og ástandið hjá Þjóðverjum og eru nægilega drenglyndir til að kannast við í hverju þeim sjálfum sé áfátt og að hve miklu leyti þeir geti tekið Þjóðverja sér til fyrirmyndar.

Skal eg nú drepa hér á hið helzta, sem fyrirhugað er til umbóta af Englendinga hálfu á ýmsum sviðum innanlands.

I. Landbúnaður. Skömmu eftir aldamótin 1800 gat Tómas Sæmundsson með sanni sagt: »Hvergi er jarðyrkja betur stunduð en á Englandi, en fæstir bændur búa þar á sjálfs síns eign«. Hann var þá að mæla á móti sölu íslenzkra þjóðjarða. Nú mundi hann segja annað, ef hann mætti líta upp úr gróf sinni. Síðan þá hefir jarðyrkja fleygt fram víðast hvar í heiminum nema á Englandi, og ef til vill á Íslandi. Og af því »það er svo bágt að standa í stað — og mönnunum munar annaðhvort aftur á bak, ellegar nokkuð á leið«, þá hefir orðið sú reyndin á, að landbúnaðurinn enski hefir ekki staðið í stað, þegar honum hætti að fara fram. Honum hefir munað aftur á bak og það stórum.

Þegar Tómas Sæmundsson reit framanskrað orð, var fæddur

meðal Englendinga maður að nafni Joseph Arch. Hann var af fátækum smábændasettum og var um hríð vinnumaður. Síðar varð hann Methodistaprestur og þar á eftir tók hann að fást við pólitík, og starfaði af megni að því að endurbæta kjör smábændastéttarinnar og leiguliða á allan hátt. Hann stofnaði 1872 Landsfélag meðal smábænda og verkamanna, er að landbúnaði starfa; og voru þetta síðustu fjörbrot þeirra stétta, ef svo mætti að orði komast, því 1886 komst afturhaldsstefnan til valda á Englandi og þá var Arch hrundið úr þingmannssæti og áhrif hans þurru. Félag það, er hann hafði komið á fót (National Union of Peasants) var þó allöflugt í fyrstu, frá 1860—70 taldi það 86,000 meðlimi, en 1894 voru þeir orðnir aðeins 1100. Og hefir félaginu orðið fremur lítið ágengt í þá átt að bæta kjör meðlimanna.

Árin 1853—60 var Bretland svo vel ræktað, að 2 ekrur (ekra er $\frac{1}{4}$ stærri en dagsláttu, eða 4840 feryards) nægðu til mannsfæðis. Árið 1887 var rækt landsins hrakað svo mjög, að 3 ekrur þurfti til mannsfæðis. Á árunum 1870—80 streymdi fjöldi manna frá Englandi til Ameríku, þá féll og korn mjög í verði á alheimsmarkaðinum, meðfram vegna aukinnar kornframleiðslu í Ameríku, og varð þetta tilefni þess, að enskir bændur hættu margir að stunda kornyrkju, svo að $3\frac{1}{2}$ miljón hveitiekra urðu smámsaman annaðhvort að graslendi eða óræktuðu beitilandi. Þetta hefði nú ekki þurft að vera stór búhnekkir fyrir þjóðina, ef graslendið hefði þá verið vel ræktað og kúabúin hefðu aukist að mun. En því fór fjarri að svo væri. Til dæmis um vanræktunina má geta þess, að enskir bændur láta sér vel lynda að fá aðeins $1\frac{1}{2}$ —2 smálestir af heyi af hverri ekru af slæggjalandi (1 smálest heys samsvarar hérumbil 10 hestum af ísl. heybandi), en í Flandern fást venjulega $2\frac{1}{2}$ smálest af ekru og á Frakklandi fást oft og einatt 6 smálestir af þurkuðu heyi af flæðingjum. Hve mikið þetta er í samanburði við íslenskan heyafla má auðveldlega sjá með samanburði. Einar Ásmundsson í Nesí taldi kýrfóður yfir árið ca. 50 hesta; í Frakklandi eru 5 smálestir líka taldar kýrfóður. Íslensk tún í meðalrækt munu nú gefa 10—15 hesta af dagsláttu og er það rúmlega eins mikið og Englendingar fá af sömu vallarstærð. En þar sem best er ræktun hafa stundum fengist 30 hestar af dagsláttu eða jafnvel meira, er það helmingi meira hey en fæst af dagsláttuvelli á Englandi og talsvert meira en fæst í Flandern, en vantar ca. $\frac{1}{8}$ á að jafnaast við heyfeng Frakka.

Kornyrkjan er nú og orðin svo lítilfjörleg á Englandi, að $\frac{4}{5}$ hlutar allrar kornvöru, sem eytt er í landinu, eru aðfluttir. Ekki

er ástandið til muna glæsilegra til sjálfbjargar hvað kjötinu viðvíkur, því Englendingar verða að sækja $\frac{1}{2}$ af öllu því kjöti, sem þeir þurfa, til annara þjóða. Ástandið er því þannig, að ef aðflutningar brögðust svo sem þriggja mánaða tíma, væri óumflýjanleg hungursneyð í landinu.

Öfriðurinn — ekki hvað síst kaþátahernaðurinn — hefir tekið af öll tvímæli með það, að hér þarf skjótra og góðra umbóta við. Stjórnin enska hefir því kvatt nefndir manna til að rannsaka hvernig ástandið sé á ýmsum sviðum í ríkinu og koma fram með tillögur til umbóta.

Landbúnaðurinn borgar sig svo illa á Englandi, að bændum og verkamönnum fækkar ár frá ári. Hefir því stjórninni komið til hugar að slá tvær flugur í einu höggi á þann hátt að láta sem flesta að unt er af hermönnum þeim, er heilir koma úr ófriðnum, eiga kost á að fá atvinnu við landbúnað. Stjórnin álitur sér nefnilega skylt að sjá hermönnum fyrir vinnu, er þeir koma aftur — og hún álitur sér líka skylt að styðja landbúnaðinn. En til þess að hermennirnir gangi að þessum kosti, þarf þrent að gera: Í fyrsta lagi þarf að sjá þeim fyrir sémilegum launum. Í öðru lagi þarf að sjá þeim fyrir sémilegu húsnæði, — og í þriðja lagi þarf að búa svo um hnútana, að þeir með dagnaði og sparsemi geti orðið sjálfstæðir menn er stundir líða, geti eignast jarðarskika.

Borgun fyrir landbúnaðarstörf er mjög lág á Englandi í samanburði við borgun fyrir aðrar iðnir. Árið 1907 voru meðal karlmannsvinnulaun á viku frá 14—20 shillings (sh. = 90 aurar), sumpart greitt í peningum og sumpart í hlunnindum, en sjálfur á verkamaðurinn að sjá sér fyrir fæði, húsnæði og þjónustu. Einstöku maður fékk hærri verkalaun. En fjöldamargir urðu að vinna frá morgni til kvölds fyrir 12—13 shillings á viku. Frá 1907 til 1913 hækkuðu verkalaunin um hérumbil 7 $\frac{1}{2}$ %, en allar lífsnauðsynjar hækkuðu samtímis í verði um 7,2 $\frac{1}{2}$ %, svo að í raun rétttri voru verkalaunin lægri 1913 en 1907. Þess ber og að gæta, að af þessum launum á verkamaðurinn ekki einungis að sjá sjálfum sér farþörf, heldur og fjölskyldu sinni, ef hann ekki vill lifa ógiftur alla æfi. Og má nærri geta hvíllk afkoma það er.

Þá er að víkja að húsakynnum þeim, sem þessi verkamannalyður elur aldur sinn í. Í grend við stórbýlin »the manors« eru venjulega bygðir fleiri eða færri smákofar (cottages) handa verkafólki húsbændanna (the squires). Í mörgum af kofum þessum er

aðeins í svefnherbergi handa allri fjölskyldunni, en í sumum eru þó fleiri. En allur er frágangur hífyla þessara þannig, að merkur maður enskur, Charles Kingsley, skáld og sagnfræðingur, sem meðal annars barðist af áhuga fyrir kristilegri jafnaðarmannastefnu, kvað svo að orði við jarðeigendurna ensku, að húðarklárar þeirra og hundar væru betur hýstir en verkafýður þeirra. Þetta var fyrir nær hálfri öld síðan og litlar breytingar munu vera orðnar á enn.

Smábyli þessi eru með tvennu móti. Sum þeirra eru nokkurs konar »festu«-kofar (»tied cottages«) og eru verkamenn skyldir að búa í þeim, ef þeir vilja hafa vinnu hjá eiganda jarðarinnar. Og ekki geta þeir sagt upp leigumála sínum, nema þeir vilji eiga á hættu að missa atvinnuna. Þeir geta og eigi eða þora eigi að ganga í verkamannafélög, af því þeir eiga þá á hættu að hús-bóndinn reki þá úr kofanum ásamt konu og börnum. Verða verkamenn þannig bundnir í báða skó.

Þá er þriðja atriðið, sem ekki hvað minst þarf umbóta við. Svo er til háttað, að í flestum iðnaðargreinum á Englandi fara verkalaun ofurlítið hækkandi, og er það mikil hvöt fyrir verkamanninn. En svo er eigi í landbúnaðinum. Og það sem verra er — verkamaðurinn getur aldrei hugsað til að eignast jarðarblett, sem hann geti framfleytt sér og fjölskyldu sinni á. Enda er því viðbrugðið að engin stétt manna beri á sér meiri kúgunarmerki en smábændastéttin og þeir er að landbúnaði starfa; er auðmýkt þeirra að orðtaki höfð.

Ástand landbúnaðarins er nú svo örðugt að öllu leyti, að engar eða litlar líkur eru til að hann rétti við af sjálfsdáðum í bráða-hasti, verður því sá nauðugur einn kostur að ríkið hlaupi undir bagga. Aðalatriðið er að gera bændum unt að borga hærri verka-laun og láta þá sjá sinn hag í því að taka meira land til korn-yrkju en nú, og minna graslendi.

Nefnd sú, er stjórnin setti til að fjalla um málið, var ekki sammála viðvíkjandi því að skylda landeigendur til að borga hærri verkalaun — setja lágmark, er ekki mætti niður úr fara. En stungið var upp á að tryggja bændum lágmarksverð á kornvöru. Á þeim að vera heimilt að selja afurðir sínar hvar sem þeim sjálf-um þykir hentast, en ríkið á að taka að sér að greiða þeim vissa uppbót á verðið, ef það fer niður úr tiltekinni upphæð. Þar að auki er farið fram á, að ríkið greiði hverjum jarðeiganda verð-laun að upphæð 2 pd. sterl. fyrir hverja ekru graslendis, er hann tekur til kornvöruræktunar. Skal gjald þetta greiðast á fjórum

árum, og sé tímalengdin trygging fyrir því, að ekrunni sé haldið ræktaðri. Skyldu jarðeigendur og leiguliðar mót von ekki vilja hagnýta sér þessi boð, þá á stjórninni að vera heimilt að taka sjálfri lönd jarðeigenda til ræktunar, því velferð þjóðarinnar sé í veði. — Áður ófriðurinn hófst hafði Alfr. Stead komið fram með þarfa hugvekju um skort á framleiðslu matvæla í Englandi. Stingur hann þar upp á því, að stjórnin efli landbúnaðinn á þann hátt að koma upp búnaðarskólum, fyrirmyndarþúum og búnaðarfélögum og enn fremur með því að koma á fót bönkum, er láni fé gegn jarðarveði handa þeim sem á því þurfa að halda. Fleira bendir hann á, er til bóta mætti verða. En þetta er nóg til að sýna, að áhuginn á umbótum var vaknaður hjá einstaka mönnum á undan ófriðrum, þó ófriðurinn hafi orðið til þess að brýna nauðsynina á þeim bæði fyrir þjóð og stjórn.

II. Fiskiveiðar. Fiskiveiðar Englendinga hafa síðustu árin numið h. u. b. 15 miljónum vætta á ári, og er það miklu minna en notað er í landinu sjálfu. Síðan ófriðurinn hófst hafa fiskiveiðarnar vart numið helmingi af því sem áður veiddist, og er það meðfram að kenna kafbátunum þýzku. Þeir höfðu frá upphafi ófriðarins og til maímán. 1916 sökt og tekið höndum samtals 270 brezk fiskiskip. Á því tímabili lét þó flotastjórnin enska um það bil 2700 skip vera á verði um höfin, sumpart til að leita að tundurduflum og sumpart til að berjast gegn kafbátum.

Nú hagar svo til á Englandi, að helmingur alls þess kjöta, sem neytt er í landinu, er innflutt — og því tiltölulega dýrt. Og fyrir ófriðinn var fiskur sá, er á land kom og etinn var í landinu sjálfu, aðeins þriðjungur að vigt á móts við kjötið. Þetta sjá nú Englendingar að ekki er hygglegur þjóðarbúskapur, af því fiskinn geta þeir sjálfir sótt í soðið og hann ætti því að geta orðið þeim miklu ódýrari matur en kjötið.

En svo er um fiskiveiðar sem aðrar iðnir, þær eru allar í einstakra manna höndum og ríkið hefir sama sem engin afskipti af þeim. Þó kom til umræðu á Skotlandi skömmu áður en ófriðurinn hófst að ríkið tæki að sér að veita lán með vægum kjörum til að efla fiskiveiðar, en ekki varð því máli framgengt. Eini styrkur sem fiskiveiðar hingað til hafa notið af óviðkomandi fé á Englandi er 4000 kr. á ári, og eru þær veittar fiskimönnum í Cornwall úr sjóði, sem þar hefir verið stofnaður til að auka útbreiðslu gasólmótora.

Nú rétt nýlega hefir komið fram uppástunga um, að láta

stjórnina, eða öllu heldur enska ríkið, endurbæta og auka fiskiveiðarnar að miklum mun og gerast meðeigandi þeirra. Er þetta bæði gert í þeim tilgangi að afla landinu ódýrara fæðis en kjöt er og til þess að fiskurinn geti orðið verzlunarvara, er gefi ríkinu tekjur, sem geti stuðlað að því að grynna á skuldasúpunni eftir ófriðinn.

Uppástunga þessi fer fram á að mynduð sé ný stjórnardeild — fiskideild — er einvörðungu fjalli um fiskimál. En hingað til hafa þau mál legið undir landbúnaðarráðuneytið. Á þessi nýja stjórnardeild svo fyrst og fremst að sjá um að koma á fót fiskistöðvum í grend við strendur landsins (scientific fertilisation). Hefir talsvert verið gert af slíku í Bandaríkjunum og gefist einkar vel, áltur höf. að á þann hátt megi margfalda fiskframleiðsluna á mjög ódýran hátt. — Í öðru lagi ætti ráðuneytið að sjá um endurnýjun fiskiflotans. Mætti sumpart skila aftur skipum þeim, sem flota-ráðuneytið hefir gripið til, og sumpart gera smáskip, sem það hefir látið byggja nú síðustu árin, að fiskiskipum; auk þess mætti byggja botnvörpunga og fiskiskip eftir þörfum. Í þriðja lagi ætti þetta nýja ráðuneyti að sjá um að nægilega stór íshús væru byggð í öllum helztu hafnarbæjum og borgum um landið, og í fjórða lagi ætti ráðuneytið að hafa umsjón með flutningsgjaldi því, er járnbrautarfélögin tækju fyrir að flytja fiskinn. — Allflestar euskar járnbrautir eru sem sé eign einstakra manna eða einstakra félaga og ræður hver sínu verðlagi

Af þessu má sjá að nóg verkefni eru fyrir hendi fyrir hið fyrirhugaða nýja fiskiráðuneyti. En til þess að koma öllu þessu í framkvæmd bæði fljótt og vel og koma öllu í eina heild, er nauðsynlegt að ríkið taki málið að sér. Það leiðir af sjálfu sér, að ef ríkið tæki að sér fiskfrjófgun í hafinu, hlyti það að mega ráða nokkru um, hvar fiskað væri — annars væri ef til vill fyrirhöfninni á glæ kastað.

Á Englandi mun það venja, að skipshöfnin á hlut í sameiningu eftir vissum reglum. Því sem fæst fyrir afla hvers skips er skift í hluti — fær skipið (eða eigandi þess) vissan hlut, formaður, vélmeistari og hásetar fá hver sinn hlut eftir áður ákveðnu hlutfalli. Þetta fyrirkomulag hefir reynst vel og er fyrirhugað að halda því, enda þótt ríkið yrði meðeigandi. En þá kæmist sama hlutfallið á alstaðar eftir niðurfjöfnuði, og ætti ríkið svo að bæta einhverju ofanálagi á til hvers eins, til þess að hvetja menn til að stunda fiskiveiðarnar.

Þá ætti það og ekki að letja Englendinga, að auðvelt er fyrir

þá að hagnýta sér þau ógrynni af fiski sem eru í hafinu í grend við Canada, segir sá er stingur upp á þessu fyrirkomulagi. Og hann bendir á, að engin fæða sé í rauninni jafnauðtekin og fiskurinn. Hvorki þurfi að sá til hans, né ala hann á stalli, hann geti svo að segja stökkið beina leið úr sjónum upp í svangan skoltinn.

Fyrirkomulag það, sem hér er stungið upp á, er að mörgu leyti markvert; og ekki þætti mér ótrúlegt að Íslendingar gætu eitthvað lært af því. — Merkur skipstjóri sagði mér í fyrra, að fiskimergðin í hafinu umhverfis Ísland væri óðum að þverra. — Væri þá ekki ráð að stjórnin okkar gerði eitthvað til að taka í taumana, ef svo er, að það megi verða án mikils kostnaðar?

III. Iðnaður. Það er kunnugra en frá þurfi að segja, að í ýmsum iðnaðargreinum standa Englendingar flestum þjóðum framar. Eigi að síður er ýmsu ábótavant hjá þeim í ýmsum greinum er að iðnaði lúta, má þar helzt nefna fyrirkomulagið milli verksmiðjueigenda og verkamanna. Hefir það löngum verið undirröð megnrar óánægju, og það meira að segja nú, meðan ófriðurinn krepti að á margan hátt og þörf var á sem beztu samkomulagi. Þessi síðasta misklið varð til þess, að skipaðar voru nefndir manna í flestum iðnaðargreinum til þess að rannsaka ástandið frá rótum og gera tillögur um það, er til bóta mætti verða. Hafa rannsóknir þessar í raun og sannleika verið á breiðum grundvelli bygðar, því þær áttu ekki einungis að taka tillit til þess, er til þrifnaðar mætti verða hverri einstakri iðnaðargrein. En þær áttu líka — og fyrst og fremst — að taka tillit til þess, hvort iðnskilyrði þau, sem nú eru fyrir hendi, veita næga möguleika fyrir siðferðislegum og efnalegum þroska þjóðarinnar í heild sinni — hvort þau stuðli að því, að framleiða eins góða borgara og unt er. Ófriðurinn hefir vakið Englendinga til umbugsunar um þjóðina í heild sinni, og sýnt þeim fram á, hve skaðvænleg hin rígbundna stéttaskifting er allri velferð ríkisins.

Hætt er þó við, að verulegar umbreytingar eigi við ramman reip að draga. Stjórnin enska virðist ganga á undan, enn sem komið er, í því að borga sultarlaun. Og það á viðast við, að þ hvað höfðingjarnir hafast að, hinir ætla sér leyfist það. Til dæmis um verkalaun stjórnarinnar má nefna, að hún hefir skorað á enskar konur að gefa kost á sér til alls konar starfa, sem karlmenn hafa á hendi ella, til þess þeir geti losnað til herþjónustu. Konur hafa fúslega orðið við áskorun þessari og boðið fram vinnu sína þúsundum saman. Enda er nú varla hægt að nefna eina einustu iðnaðar-

grein á Bretlandi, sem konur starfi ekki í jöfnum höndum við karla — og stundum einar saman — að undanteknum siglingum og fiskiveiðum. Stjórnin hefir leitað sér upplýsinga um starf þessara kvenna, og er því hælt í hvívetna. Og nýlega hefir hörmála-stjórnin brezka gefið út hefti með fjölda mynda af starfsemi kvennanna og með nákvæmum skýrslum um allt þar að lútandi. En hvernig er þeim launað? Jú, þar sem stjórnin ræður laununum — á vopnaverksmiðjum og stjórnarskrifstofum — fá þær 8 shillings að meðaltali á viku fyrir 8 stunda vinnu á dag! Sjálfar verða þær að sjá sér fyrir fæði og húsnæði. Það er því engin furða, þó margar af konum þessum smámsaman gangi úr skaftinu.

Eins og eðlilegt er, verða allar verulegar umbætur að búa friðartíma. Og tillögur nefnda þeirra, sem um málið hafa fjallað, virðast svo viturlegar og sanngjarnar á báða bóga, að ástæða er til að vænta sér mikils góðs af þeim, ef þær komast í framkvæmd. Skal eg nú stuttlega drepa á helztu atriðin.

Í fyrsta lagi verða iðnir og vísindi að taka höndum saman miklu meir en áður. Og verður ríkið að koma á fót vísindastofnunum, er taki að sér almennar rannsóknir á öllum þeim sviðum, sem um er að ræða. En þar að auki verður hver iðngrein út af fyrir sig að standa í nánu sambandi og vera í samvinnu við efnafræðislegar vísindastofnanir í sínum sérgreinum. Auk þess þarf að auka sem mest notkun vinnusparandi véla og ryðja burt ýmsum höftum, sem nú eru til hindrunar skýsamlegu fyrirkomulagi í ýmsum greinum. Þá er og einsætt að hagnýta sér sem best allar uppgötvanir hinna svonefndu vinnuvísinda, »scientific management«.

Sá hefir orðið hængur á hingað til, að flestar þannig lagaðar breytingar hafa mætt meiri eða minni mótspyrnu hjá verkamönnum, enda oft orðið sú reyndin á, að verksmiðjueigandi hefir haft aðalhagnaðinn af þeim. Til þess að sigla fyrir þessi sker, er nú atungið upp á því, að verkamenn sjálfir fái að jafnaði að hafa hönd í bagga með um tilhögun og framleiðslu í iðngrein hverri. Er réttilega bent á, að auðmagn og vinnna eru hér tveir aðilar, er hvorugur geta án annars verið. Og báðir þessir aðilar verði að læra listina þá, að skoða sérhverja iðngrein sem nauðsynlegt líffæri í þjóðarlíkamanum, og hafa það hugfast, að þeir bera báðir að jöfnu ábyrgð á því, að líffæri þetta þroskist og starfi sem best. — Er auðsætt að þetta er talsverð breyting frá þeim hugsunarhætti, er aðeins lítur á eigin hagsmuni — sem flestum því miður mun stamastur um víða veröld.

Til þess nú að koma á verulegri samvinnu, er geti miðað í þessa átt, meðal beggja aðila — auðs og vinnu — o: vinnuveitenda og vinnuþiggjenda, leggur nefndin til, að skipaðar séu nefndir í hverri iðngrein, og eigi umboðsmenn beggja aðila sæti í nefndunum. Eiga svo nefndir þessar að halda jafnaðarlega fundi og ræða um allt það, er að iðninni lýtur. Skulu þá báðir aðilar gera hver öðrum fulla skilagreini fyrir ástæðum sínum, kröfum sínum og öllu því, er að rekstri iðnaðarins lýtur: framleiðslukostnaði, markaðsverði vörunnar, ágóða o. s. frv. Og ætti þá fullkomin samvinna að geta átt sér stað milli beggja aðila. Þá er og ráðið til að stofna tvær stjórnardeildir. Ætti önnur að hafa með höndum mál vinnuveitenda og hin mál vinnuþiggjenda, og ætti svo hvor deildin um sig að bera hag skjólstæðinga sinna fyrir brjósti. Þessar tvær stjórnardeildir ættu svo að eiga sér yfirstjórnardeild (Supreme Board of Control) sem kæmi samræmi á störf beggja hinna deildanna. Í sambandi við þessar stjórnardeildir ættu svo að vera héraðsdeildir og landsdeildir, sem gætu tekið höndum saman á ýmsum sviðum, er að atvinnumálum lúta, bæði viðvíkjandi löggjöf, er snerti atvinnumál, og viðvíkjandi sérfræðslu iðnaðarmanna. En henni er í mörgu stórum ábótavant.

Það yrði oflangt mál að skýra hér frá þessu fyrirhugaða skipulagi út í æsar. En aðalatriðin eru þau, sem nú hafa talin verið.

Er það auðsætt, að markmið breytinga þeirra, sem hér er stungið upp á, er það, að auka og efla samúð þjóðfélagsins í heild sinni, og brjóta á bak aftur stéttaríg þann, er nú er einvaldur í landi og að meira eða minna leyti þröskuldur í vegi fyrir hverskonar framförum.

IV. Skólafræðsla og iðnnám unglinga. Eitt af þeim mörgu sviðum, sem Englendingar eru nú að ræða um að endurbóta þurfi, er barna- og unglingafræðsla. Svo er um þá grein, að allt er þar í góðu lagi hvað æðri stéttunum viðvíkur, en þær stéttir manna, sem ekki hafa efni á að kosta börn sín til neins náms, eru fjölmennar, og ríkið hefir að svo komnu einungis séð börnum þeirra stétta fyrir fræðslu í barnaskólum til 14 ára aldurs.

Þegar börnin hafa lokið námi í barnaskólanum, er þeim svo að segja hleypt út á gaddinn. Ríkið sér þeim ekki fyrir neinni áframhaldandi kenslu, hvorki bóklegru né verklegri, og algengast er sagt að það sé, að börnin eigi þá sjálf að sjá sér fyrir atvinnu, og má nærri geta hvílskt ráðlag muni vera á slíku. Fer oftast svo, að þau læra enga vinnu og gleyma því litla, sem þau hafa lært í

barnaskólunum á fáeinum árum. Og liggur þá við að svo megi að, orði kveða, að þeim 20 miljónum sterlingspunda, sem ríkið árlega ver til barnafræðslu, sé að meira eða minna leyti fleygt í sjóinn.

Til samanburðar má geta þess, að í München fara 80% af drengjum þeim, er ljúka barnaskólanámi, þegar í læri í einhverri iðngrein, og ganga jafnframt á iðnskóla eða framhaldsskóla, þangað til þeir eru 18 ára. Verður þetta bæði til þess, að drengirnir gleyma ekki því sem þeir hafa lært í barnaskólanum er þeir fá tækifæri til að bæta við það, og þeim eykst andlegur þroski og virðing fyrir sjálfum sér. Þar á ofan eru þeir, að þessum fjórum árum liðnum, orðnir nýtir menn í þjóðfélaginu og búnir að tryggja sér von um góða framtíð.

Þetta fyrirkomulag þykir Englendingum nú að réttu lagi eftirbreytnisvert, en hér er við ramman reip að draga, bæði rótgrónar venjur og kostnað mikinn, er það mundi hafa í för með sér fyrir ríkið að koma á fót iðnskólum og framhaldsskólum fyrir fátæku stéttirnar og börn þeirra. En nokkurra umbóta mun þó mega vænta að loknum ófriði, því margir kannast nú við, að börnin séu framtíð þjóðarinnar — og það eigi síður börn fátæku stéttanna en efnuðu flokkanna.

Fræðslunefnd í Lundúnum hefir nú og komið fram með tillögur, er til bóta horfa; þær eru að vísu eigi jafnmerkar og tillögur þær til umbóta, er fram hafa komið á ýmsum öðrum sviðum, en þó spor í áttina.

Nefndin kannast við að brýn þörf sé á framhaldsskólum og iðnnámi fyrir unglinga en fer þó aðeins fram á að menn og konur — einkum konur — af efnaðri stéttunum taki að sér umsjón með fátækum börnum á aldrinum frá 14 til 18 ára, gerist nokkurskonar fósturforeldrar þeirra (superparents), og reyni að sjá um, að þau fái sæmilega staði, þar sem þeim sé ekki ofboðið með vinnu og þau fái að læra eitthvað. Þá telur og nefndin æskilegt að skólatími væri lengdur til 15 ára aldurs í stað 14, en býst við að erfitt verði að fá því framgengt. Þá hefir og verið talað um að gera unglingum að skyldu að sækja einhvern framhaldsskóla fáeina tíma á dag (og settu þeir þá að borga þá kenslu) en vinnuveitendur og foreldrar í sameiningu settu að ábyrgjast að unglingarnir ræktu skólaun.

Þetta er sem sagt aðeins lauslegar uppástungur, en vænta má, að þetta markverða atriði verði tekið til rækilegrar meðferðar að loknum ófriði, því eins og Englendingur einn nýlega komst að

orði, er það lífskilyrði fyrir þjóðina að uppala sem best anda, huga og hendur alþýðunnar.

Kaupmannahöfn í apríl 1917

Björg Blöndal.

(Heimildir: The Fortnightly Review, The Quarterly Review, 19. Century, Gertrud Bäumer: Weit hinter den Schützengräben, Þorv. Thoroddsen: Lýsing Íslands, blaðagreinir.)

Pingstaðurinn undir Valfelli.

Í Gunnlaugssögu ormsungu 2. kapitula segir svo frá:

»Um vorið einn dag ræddi Þorsteinn um við Bergfinn, ef hann vildi ríða með honum upp undir Valfell. Þar var þá þingstöð þeirra Borgfirðinga. En Þorsteini var sagt að fallnir væru búðarveggir hans. Austmaðurinn kveðst það víst vilja, og ríðu þeir heiman of daginn þrír saman og húskarlar Þorsteins, þar til er þeir koma upp undir Valfell til bæjar þess er að Grenjum heitir. Þar bjó þá einn maður félitill er Atli hét hann var landseti Þorsteins, og beiddi Þorsteinn Atla að hann færi til starfa með þeim og hefði pál og reku. Hann gjörði svo. Og er þeir koma til búðartóftanna, þá tóku þeir til starfa allir og færðu út veggina. Veðrið var heitt af sólu, og varð þeim Þorsteini og austmanni erfitt«. — — —

Menn hafa yfirleitt álitid, að þingstaður sá undir Valfelli, sem nefndur er í frásögu þessari (c. 983) sé sama sem þingstaðurinn á Þinghól við Gljúfrá, efst í Borgarhreppi. Kr. Kälund o. fl. hafa reynt að samþýða frásagnir Eglu og Gunnlaugssögu um þingstað Borgfirðinga, en ekki tekist. Frásögn Gunnlaugssögu er mjög skýr, svo ekki verður um vilt að hún á við þingstað undir »Múlunum«, vestan Langár. — Valfell þekkist enn, það eru Múlarnir fyrir vestan Langá, eru þeir nú oftast kendir við bæina Grímsstaði og Grenjar, sem standa undir þeim og eiga land í þessu felli (Grímsstaðamúli og Grenjamúli). Fellið liggur á milli Grenjadals, sem Langá rennur eftir, og Hraundals, sem Skarðsheiðarvegurinn liggur um. Sú hlið Valfells (Múlanna), sem niður að sveitinni veit, er snarbrött og klettótt. Verpa þar enn árlega valir (fálkar) svo fellið ber nafn með rentu. Urriðaa heitir smá á, sem kemur úr litlum dal í fellinu. Hann er nefndur Urriðaaárdalur, og skiftir löndum milli Grímsstaða og Grenja. Á vestri bakka Urriðaar, í hliðarrótunum, þar sem áin kemur niður úr brattanum heflir mér verið bent á mjög fornlegar rústir, er þau munnmæli

fylgdu að vera mundi þingstaðurinn forni undir Valfelli. Eg hefi komið á þennan stað, skoðað hann vendilega og alla afstöðu hans, og jafnframt borið saman þá staði í Eglu og Gunnlaugssögu, sem snerta þingstað Borgfirðinga. Mér virðist það efalaust mál að Gunnlaugssaga á við þennan stað. En hvernig stendur þá á því, að Egilssaga segir (í 83. kap.) frá þingdeilum Þorsteins Egilssonar og Steinars á Anabrekku á vörþingi 978 við Þinghól? Að vísu nefnir sagan ekki beinlínis hvar þingstaðurinn hafi verið; en hún segir að sést hafi af þinginu, að flokkur manna reið neðan með Gljúfrá, og blikuðu þar skildir við. Þar var kominn Egill Skallagrímsson með 80 manna sunnan af Nesjum. Frá Þinghól blasir við vegurinn neðan með Gljúfrá, en sést alls ekki frá neinum stað undir Valfelli, — og engin munnmæli né menjar eru til, sem heimili að hugsa sér að hér sé um einhvern þriðja stað að ræða. — Hér virðist því næst að halda, að þingstaðurinn hafi verið fluttur og sögurnar segi báðar rétt frá; en þá er það að athuga að Egla virðist beinlínis mótmæla sjálfri sér hvað þingstöðina snertir. Vorið 978 eftir fardaga (sama vorið og Steinarsdeilan átti sér stað) kom Þorsteinn Egilsson innan af Grísartungu afrétti, frá því að líta eftir verki húskarla sinna, sem unnu þar að girðingu. Er sýnilegt af frásögninni að hann ríður niður með Langá, svo kallaðan Grenjadal; enda lá það lang beinast við frá girðingunni á Grísartungu. Það veit Steinar, því gerir hann fyrirsátina í skóginum við Einkunnir. — Þorsteinn virðist hafa riðið austur yfir Langá á Koteyrum neðan til á Grenjadal eða Sveðjuvaði, og vera staddur neðan við Múlana austan ár, þegar Íri þræll hans kemur á móti honum og varar hann við fyrirsátinni í Einkunnum. —

Sagan kemst þá svo að orði: »Þegar hann (o: Þorsteinn) kom gegnt þingstöð, þá kom Íri á móti honum o. s. frv. — Þessi orð: »gegnt þingstöð« eiga mjög vel við ef um þingstöð undir Valfelli er að ræða, en alls ekki ef átt hefði verið við þingstöð hjá Þinghól. — »Síðan riðu þeir Þorsteinn suður um Mýrar fyrir ofan Stangarholt og svo suður til Gufár, og ofan með ánni reiðgötur«. — Þetta er einmitt sá vegur, sem þeir menn er komu sunnan um Mýrar á leið til þings undir Valfelli mundu ríða og einnig Egill með flokk sinn, ef Steinarsdeilan hefði verið útkljáð þar. — Þá hefði sést af þinginu er flokkurinn reið neðan með Langá (ekki Gljúfrá). Egill hefði sennilega riðið með flokk sinn yfir Hvítá við Gufárósa og svo reiðgötur upp með þeirri á, svo þvert yfir Mýrar fyrir ofan Stangarholt til Langár, yfir hana á Lækjarósvaði og svo

vestur með Múlum. Þá væri bezta samræmi orðið milli alls sem báðar sögurnar segja um þingstaðinn.

Þingdeilan sem Egla segir frá, gerðist 5 árum fyrir en búðabyggingin sem Gunnlaugssaga getur um. Og Gunnlaugssaga vill fyrirbyggja misskilning, sem leiða kunni af flutning þingstaðarins, með orðunum: »Þar (þ. e. undir Valfelli) var þá (c. 983) þingstöð þeirra Borgfirðinganna«. — En hvort var þá þingstöðin fyrir undir Valfelli eða við Þinghól? — Sé frásögn beggja sagnanna rétt eins og hún liggur nú fyrir, þá ætti Þinghólstöðin að vera eldri, og þá ættu vel við orð söguritarans um að Þorsteinn hafi ráðið þar mest þingsköpum, því að svo hafði verið meðan Egill fór með goðorð og mannaforráð. Slíkt hefði auðvitað mátt segja á hverjum staðnum sem þingið var háð, en fremur virðast mér orðin henda til þess, að um hinn upprunalega (eldra) þingstað sé að ræða. Hefði þá þingstaðurinn átt að vera færður vestur undir Valfell þegar eftir þingið 978. — En móti því mæla orð Egla: »gegnst þingstöð«, sem áður eru tilfærð; — fallnir búðarveggir eftir örfá ár, — en einkum það, að ef þingstaðurinn hefði einu sinni verið fluttur frá Þinghól og vestur undir Múla, er ósennilegt að hann hefði verið fluttur aftur að Þinghól. En rústir allar á Þinghól voru miklu unglegri en við Urriðá, og meiri alþýðusagnir fylgdu þeim stað fram á 19. öldina; en þá var þingstöðin undir Valfelli næstum gleymd. Mín hugmynd er sú, að Egill og Þorsteinn hafi háð þing undir Valfelli meðan þeir höfðu mannaforráð, og virðist sá staður mjög vel valinn, meðal annars með hliðsjón af því, að Borgarfeðgar áttu mesta og bezta liðsvon vestan og neðan af Mýrum. Að landskostum var stöðin undir Valfelli vel úr garði gerð. — Þurlend, en þó gnógt og gott vatn í uppsprettulindum og ánni. Skjól hið bezta. Góðir hagar og nógur skógur í nánd. Mjög heppileg þingbrekka í fjallsrótunum, örskamt frá búðartóftunum, ei þangað upp að ganga.

Með línunum þessum er það tilgangur minn að minna á þingstöðina undir Valfelli. Er vonandi að staðurinn verði rannsakaður af fornfræðingum. Benda vildi eg einnig á, að ef til vill er þingstaðurinn eldri, þótt Egla virðist telja Þinghól eldri, ef alt er látið velta á orðunum »neðan með Gljú frá«, — en þar hygg eg að standa eigi orðin: »neðan með Langá«, og sé hér um ritvillu að ræða, eða leiðrétting afritara gerða af misskilningi.

E. F.

Sumar.

Uppi á hálsi. Heitt, hvítgullið sumarsólskin. Lágir hálsar í nær-sýn, en lengra í burtu hvíthærð, tindótt fjöll. Dökkblár sjórinn glampar í fjarska, en tjarnirnar undir Þyrli lýsa hvítblikandi í grænum myragróðrinum. Og Þyril sjálfan, ljósrauðan eins og glóandi ofn, ber við bláhvíta himinröndina.

Eg geng yfir um þveran hálsinn, yfir lág holt og mógrænt fjalldrapakjarr, fram hjá hálfkölluðum móhraukum. Lyngilmurinn læsist inn í mig, gegnum hverja taug, eins og eg væri sjálfur orðinn blað á þessum bækludu kvistum.

Eg hugsa ekki um fegurð náttúrunnar, en hver rák í fjöllum, hvert litbrigði í grasinu, holtunum og himninum, mótaskinn í mig, eins og signetstafir í vax. Hugsun mín er bundin, en það er eins og eitthvert dulið afl starfi í mér. Afl, sem fjötrar mig inn í náttúruheildina, þá náttúru, sem eg sé nú fyrir augum mér.

Það er unun að taka eingöngu á móti, gera ekkert sjálfur, hverfa sem geisli í ljóshafinu ómælanlega.

Ein óljós löngun bærisk í mér, þráin til þess að vera hér altaf. Mega altaf vera dropinn í fossinum og sjá náttúruna um eilíft jafn-fagra sem nú. Sú þrá lifur upp úr eðli mínu, eins og eimurinn upp af tjörnunum á kvöldin, eftir heitan sumardag.

Eg nem staðar undir Þyrli, í aflangri, brattri lægð. Urð er til beggja hliða, en í botninum er hrís og reyrlímandi heiðagras, innan um staka steina, vaxna æfagömlum, ljósgráum mosa, handarþykkum eða meir. Kongulærnar móka svefnlegar á brennheitu grjótinu. Innan af hálsinum heyrisk langdregið, veikt og mjúkt lóukvak — stundum gleðititrandi dírríndi, eins og hálsinn sé að syngja út alla sína löngu þrá og allan sinn heita fögnuð. Það glampar í vatnið fyrir neðan mig, slétt eins og fægðan spegil. Hér og þar eru langar, dökkar tungur á hvítskygðum vatnsfletinum. Á móti lifast tún ofan að örmjórrí, grárri fjörunni. En undan sól bryddir áin, fagur-blá, rauðbrúnan, steinóttan móatanga með strjálum eyrarrosablettum. Í fjallsbláðinni fyrir ofan skína fannirnar í ljósglitrandi regnbogalitum. Jörð og himinn vefjast saman í geislafaðmi sumarsins.

En yfir öllu ómar vellið í spóanum, fjallanna skæri klukknahljómur.

Græna brekkan — svo mjúk og há og fagurgræn, rétt hjá mér. Eg horfi — horfi og hugsa ekkert. Finn að eins litinn, sterkan og hlýjan, renna um mig í öldum, eins og voldugt, sigurþjótandi lag. Mér finst eg lyftist upp, út yfir sjálfan mig, inn í heiðgrænt, sólglóandi land. Og alt verður svo undursamlega bjart.

Mig fer að dreyma, í einhverri skærri leiðslu. Ótal mynda lifur fyrir í huganum eins og breytileg ljósblik, er tunglið veður í skýjum á kyrru, vörmu kveldi.

— Eg er dáinn . . . og lifi þó. Er orðinn hluti af jörðunni. Fjalldrapakjarrið er hár mitt. Augu mín eru orðin að djúpum, leiftrandi vötnum, og ókomnar kynslóðir elska og deyja á ströndum þeirra. Andardráttur minn er orðinn blærin, vindurinn — og þegar stormurinn þýtur í skörðóttum klettaborgum í haustnættinu, og skuggaöldur lifa eftir lágu og visuðu mýrgresinu — þá er það sigursöngur minn og herlag, lag ins eilífa afle. Líf mitt iðar í hverju skjálfandi blómi og sloknar í hverjum visnandi kvisti . . .

Einhver værd færist yfir mig, og alt flýtur út í bleika móðu. Enn þá heyri eg tístið í steindeplunum sem í gegn um þunt þil, en það óskýrist smátt og smátt. Náttúran hverfur augum mínum. Eg hvílist eins og barnið, sem vakir með lokuðum augum við brjóst móður sinnar. Og eg finn sólskinið brotna í glitrandi stjörnumóðu gegnum augnalokin.

Þögn í huganum sem á skyðökkum, nátthljóðum heiðum, þegar seinasta hófatak lestarhestanna er horfið í fjarska, marrið í böggunum og hávært tal ferðamannanna. Alt verður kyrt — litlaus þögn eilífðarinnar.

Konguló skriður yfir höndina á mér. Eg færi mig ofurlítið til og fer aftur að hugsa. Dagurinn verður svalari og örsmáir blágráir gárar skoppa eftir vatninu. Hitamók hádagsins reunnur af jörðunni.

Minningar ber fyrir — alla leið framan úr bernsku.

Þegar eg var fjöggra ára hnokki, fór pabbi einusinni með mig upp á neðri hálsbrúnina. Dagsbirtan var dauf, og lyngbreiðurnar teygðu eig, móbrúnar, svo langt sem eg sá. Eg hafði aldrei fyr séð svo vítt um veröld. Og eg hélt, að þetta væri allur heimurinn. Ein-manalegu móaflákarnir tóku mig herfangi. Síðar komat eg að því, að þeir voru aðeins lítil partur af heiminum — undraltill og óþekktur af flestum. En sá staður er mér nú kærastur allra, og þar vil eg helst vera, ef eitthvað amar að.

Hér hefi eg teygð lyngilmandi morgunsvala háfjallanna og látið storminn feykja burt öllu visnu og veslu — beðið sólskinið að græða allar undir og drukkíð ódáinsveigar alverunnar . . .

Sólin lækkar á lofti, dagurinn fólnar og skuggarnir liggja við fætur klettanna. Það kvöldar og smalarnir hóa fénu heim úr hjásetunni. Klukkuhringlið í forustuánum deyr hægt út fyrir handan Þýril, í svefnrórri kvöldkyrðinni.

Kaldur vindgustur andar framan úr dalbotni, og þokuhnoðrar tylla sér á fjallakambana, ósköp létt, en hugsa sér auðsælega til hreyfings. Nóttin er í nánd, eyðileg og þokuhvít.

En á morgun verður aftur heitur, sólskínandi sumardagur.

Jakob Jóh. Smári.

Ritfregnir.

Bogi Th. Melsted: **Handbók í Íslendinga sögu.** Gefin út af hinu íslenska Fræðafélagi. Kaupmannahöfn 1916. Fyrsta bindi 1—223 bls.

Af handbók þessari, sem gert er ráð fyrir, að verði alls 6 bindi, nær hið fyrsta frá fundi Íslands og til viðskifta Íslendinga og Ólafs konungs Haraldssonar. Höfundurinn hefir í bindi þessu verið heppinn í efnisvali sínu og skýrt frá flestu því, er máli skiftir. Hann hefir og gert sér far um að benda á sambandið milli markverðustu viðburða sögu vorrar og andlegra strauma þeirra og hreyfinga í nágrannalöndum vorum, sem þeir eiga rót sína að rekja til. En við það verður hinn sögulegi sjóndeildarhringur manna víðari og skilningurinn að mörgu leyti gleggri og staðbetri. Frásögn höf. virðist í flestum aðalatriðunum fara sönnu nær, enda leggur hann auðsjáanlega stund á að skýra svo rétt og satt frá því, er gerst hefir, sem unt er. Í annan stað er það ekki nema lofsvert, að höfundurinn víkur að ýmsum misfellum og agnúum á þjóðfélags- skipun og þjóðlífi forfeðra vorra, er mörgum sagnariturum vorum hefir hingað til hætt við að gera lítið úr eða láta liggja í þagnar- gildi. Í ýmsum auka-atriðum munu menn ekki geta verið höf. samdóma og hafa ýmislegt að athuga við framsetning hans og orð- færi, enda er eðlilegt að manni, sem hefir alið aldur sinn erlendis svo tugum ára skiftir, verði óáýnna um að rita íslenzkt mál en þeim sem eiga hér heima. Sumstaðar bregður fyrir orðagjálfri og mæð og endurtekningum hjá höf., sem sjaldan fer vel á.

Til þess að finna þessum aðfinningum mínum stað, skulu hér tilgreind nokkur dæmi. Á 8. bls. kemst höf. svo að orði: »Vík- ingaferðirnar eru eitthvert hið skýrasta vitni og hið mikilfengasta um hugsunarhátt manna...«. Er það bæði óíslenzkulega og klaufa- lega orðað. Á 13. bls. er sagt um Færeyjar að »þær væru fullar af fjöldamörgum sauðum og ýmsum tegundum margra sjófugla...«

en væru nú »auðar einsetumanna sökum norrænna víkinga«. Áð vísu er þetta tekið eftir Dicuilus, en samt hefði mátt takast að koma því í íslenzkulegri búning. Á 27. bls. stendur: »En jafnframt þessu sameinaði Haraldur konungur allan Noreg í eitt konungsríki eða landsveldi, þótt sú sameining festi eigi djúpar rætur að sinni og staði eigi lengi«. Í málsgrein þessari mætti bæði »landsveldi« og »staði eigi lengi« vel missa sig. Og mætti tilgreina svipuð dæmi endurtekninga og málalenginga svo tugum skiftir sbr. 75. bls. efsta málsgre., 87. bls. neðsta málsgrein, 88. bls. miðgreinin, 108. bls. neðarl. o. s. frv. Í atha. á 97. bls. stendur þessi klaufalega málsgrein: »Orðið óðalsbóndi hefur að vísu stundum verið notað á síðari tímum um bændur á Íslandi í sömu merkingu sem sjálfseignarbóndi, en venjulega að eins af sömu tilfinningu sem orðið »proprietary« áður« (sic). Kaflinn um mannhefndir á 117. bls. er víða mjög óeðlilega orðaður. Þar og á 120 bls. mun eiga að lesa hermdarverk f. hefndarverk. Á 141. bls. er hætt við, að sumum komi þessi málsgrein kynlega fyrir sjónir: »Vorið eftir lentu Íslendingar í ófriði við landsmenn, en þeim tókst að verjast þeim, þótt þeir væru ofurliði bornir...« Á 177. bls. nefnir höf. vald alþingis »allandsvald«, sem virðist vera nýyrði í mesta máta óviðkunnanlegt. Sama máli gegnir um orðið þrettán-þingskipunin á 178. bls.

Skal nú hér staðar numið, þótt mörg önnur dæmi ólíðlegra orðaðra málsgreina mætti tilgreina. Það var ekki ætlun mín að fara í neinn sparðatíning, en eg vildi óska þess vegna ritsins sjálfs, að höf. gerði sér framvegis meira far um að vanda búning og orðfæri.

Þorleifur H. Bjarnason.

Vinnan, eftir Guðm. Finnbogason dr. phil., 8blbr, 170 bls. Bókaverzlun Sigfúsar Eymundssonar, Reykjavík 1917.

Eg veit það vel, að mörgum þykir ótrúlegt að rétt sé orð Jónasar Hallgrímssonar, er hann kveður svo:

»Vísindin efla alla dád,
orkuna styrkja, viljann hvessa,
vonina glæða hugann hressa,
farsældum vefja lýð og láð«.

Þó er það sannast sagt, að hér er fullkomlega rétt frá sagt, mátti þess og þaðan vænta, því að Jónas hefir verið djúpvitrari flestum mönnum. Eg þykist þess og fullviss, að alþýða manna muni fallast á það, hvað sem hinum líður, ef rakið er málið. Til

Þess er þó eigi staður í stuttum ritdómi, en svo stendur þó á þessari bók, að eg kemst eigi hjá stuttum formála.

Oss mönnum er svo háttað sem öðrum líföndum, að vér verðum að afla oss lífsviðurværis af jörðu þeirri, er vér byggjum. Vér erum sem önnur dýr þeim mun betur settir en jurtir, að þær eru vanalega staðbundnar, og fá þá næringu eina, er þær geta náð þar úr jörðu og lofti, en vér megum leita fleiri staða og hafa margháttaðri viðleitni sem dýrin, einkum þó hinar þroskaðri tegundir. Nú er hverjum manni auðsætt að maðurinn er öðrum dýrum langtum snjallari. En í hverju liggur þá það? Þetta liggur nú einmitt í þekking þeirra.

Hvert dýr hefir sín vinnutæki og maðurinn sín. Og fyrir ómunatíð var hönd hans orðin ærið vinnusnjöll. En svo voru og hendur frænda hans. Þá kom mauninum það snjallræði í hug að nota áhöld hendinni til hjálpar, spýtur og steinflísar og því um líkt. Og þá er byrjað var, lærði hann skjótt að gera sér verkfæri, haganlegri en þau, er hann fann af hendingu. Á þessu hófst þekking hans á því, hversu yfirvinna skal hlutheiminn með hans eigin lögmálum. Nú eru menn orðnir lærðir á þá hluti, enda hafa þeir verið lengi að læra, hundruð milliona af árum.

Þess mun eigi þörf að rita langt mál um það, hversu þekking á eðlislögum hlutanna eða hlutheimi sé nauðsynleg hverjum þeim manni, sem eitthvað vill framkvæma, t. d. þekking á lífnaðarháttum og þróunarskilyrðum húsdýra kvikfjárræktinni, grasafræði og gróðrarskilyrðum jarðræktinni, aflfræði vélasmiðinni o. s. frv. Menn munu alment vita að hinar ýmsu greinar náttúrufræðinnar eru öllum mönnum lífsnauðsyn til daglegs lífs. Sú þekking er og margháttuð orðin og auðug eftir allan þann langa tíma, sem fyr var getið, en hún lýtur öll að efninu, hlutheiminum og lögmálum þeim, er þar ráða.

En fleira er nú til milli himins og jarðar, sem þörf er að þekkja. Í því sambandi mun eg minna menn á frumvarp eitt, sem borið var fram á Alþingi 1915. (Flutningsmenn: Matthías Ólafsson, Jón Jónsson, Sveinn Björnsson). Það hét: Frumvarp til laga um stofnun kennaraembættis í hagnýtri sálarfræði við háskóla Íslands. Ætlast var til að Guðmundur Finnbogason feugi þetta embætti. Meðmæli komu frá heimspekisdeild háskólans, landbúnaðarfélaginu, Jóni Þorlákssyni landsverkfræðingi og búnaðarþinginu (Alþ. 1915, B III 1456). Eg get þessa hér fltm. og meðmælöndum til maklegs lofs. Í umræðunum um þetta frv. reyndi eg að skýra fyrir mönnum, hvað

væri þetta, sem eg nefndi hér að framan að eigi væri síður þörf að þekkja, en fræðina um lögmál hlutheimsins: »Hér liggur fyrir frv. um háskólakenslu í hagnýtri sálarfræði. Þá er fyrst að rifja það upp, hvað sálarfræði er. Verð eg þá fyrst að geta þess, að nú horfir alt öðruvísi við en áður, meðan Hegel og fylgifiskar hans vildu láta allar gagnstæður og mótsagnir sameinast í »hærri einingu«, meðan engin nefndi sál, nema hann setti við ódauðlegan, andlegan bluta mannsins, sem ætlaður væri til þess, að erfa sáluhjálpin, eða þá færi í þann eld, sem sloknar ekki. Nú fæst sálarfræði að eins við rannsókn á vitundarlífi manna í þessu lífi eða með öðrum orðum meðvitund þeirri, sem er samfara lífi og starfi líkamans. Hitt er ekki verk sálarfræðinnar að rannsaka, hvort sú vitund, sálin, deyi um leið og líkaminn eða ekki. Það er verk heimspekinnar, en heimspeki kallast sú fræðigrein, sem reynir að finna rökstudda lífs- og heimskoðun. Hún byggir á öllum greinum mannlegrar þekkingar, þar á meðal sálarfræðinni. Margir munu ef til vill halda að mér hafi orðið mismæli, er eg greindi svo skarpt heimspekina frá sálarfræðinni, en það er þó ekki. Því að sálarfræðin er nú ekki lengur leikvöllur ímyndunarafis og hugarburðar, draumkendar vonir og spádómar um annað líf. Nei, nú hefir hún fengið þá eðlilegu stefnu, að rannsaka eðli og uppruna vitundarinnar og samband hennar við þann lifanda líkama, sem hún býr í. Hún er því orðin ein grein náttúrufræðinnar, enda reyna menn nú að haga rannsóknnum sínum um þau efni svo, að farið sé eftir sömu rannsóknarlögum, sem tryggileg eru talin í öðrum greinum náttúrufræðinnar. — Eg gat þess þá og að rétt væri að skifta allri náttúrufræði í tvær höfuðgreinar, fræðina um alt það, sem er fyrir utan vitundina, umheiminn, og fræðina um vitundina sjálfa, en tengiliður þar á milli væri líkaminn. Taldi eg þá og fyrir þingmönnum, hverjum sálarfræði væri einkum nauðsynleg: læknum, kennurum, listamönnum og skáldum, vísindamönnum, dómurum, löggjöfum og — öllum atvinnugreinum. Eg áréttaði þá mál mitt með þessum orðum: ». . . tel eg það víst að svo ágætir fulltrúar sem Íslenzkir kjósendur senda á þing, sé svo vel að sér, að þeir viti að þekkingin er veldi. Þeir hafa líka ljóst dæmi fyrir augunum, þar sem Þjóðverjar eru. Það er öllum mönnum auðsætt að þeir væru fyrir löngu orðnir fjandmönnum sínum að bráð, ef þeir hefðu eigi haft veldi þekkingarinnar og vísindanna við að styðjast. (Alþt. 1915 B III 1470). En alt bar að sama brunni, heimskan sigraði og frumvarpið náði eigi fram að ganga. Þó var sú björg í

máli að þingið 1915 hafði þann sið að káka við bragarbætur á lökustu afrekum sínum, sbr. kenngu í líffærameinfræði. Sama gerði það í þessu máli, veitti Guðmundi Finnbogasoni styrk til sálarfræðisrannsóknna. Þeir vildu eigi trúa þeim mönnum til þess, sem vit höfðu á, að hér væri um gott mál að ræða og áreiðanlegan mann. Vildu þeir að maðurinn yrði framvegis á valdi »sláturfélags þingsins« (þ. e. fjárlaganefndar) og ætti alt á hættu.

Guðmundur Finnbogason var þá svo flíðjarfur að leggjast niður við trogið. En nú kemur bezt þáttur þessa máls og hann er sá, að árangurinn af starfi hans er þegar orðinn svo góður, að jafnvel blindir menn mega sjá hann, og meira að segja mótstöðumenn málsins á Alþingi 1915 getur farið að gruna að þeir hafi eigi valið sér vel kjósandabeituna að því sinni. Það hefir komið fram er eg sagði þá að starf hans mundi borga sig bæði beinlínis og óbeinlínis. Hann hefir þegar gert tillögur um svo miklar umbætur á vinnubrögðum við fiskverkun hér, að tímasparnaðurinn gæti margborgað kostnað landssjóðs til Guðmundar. Það fé rennur raunar eigi beint í landssjóð, og kemur því hér fyrir menn sú skilningsraun, sem hefir oft orðið þingmönnum ofraun, að það er þjóðgróði er landssjóður kostar litlu til, en almenningur fær stórgróða af. Þótt nú þessi beini gróði gæti þegar á fyrsta fjárhagstímabili orðið miklu meiri en tilkostnaður landssjóðs, þá er sá óbeini þó meiri. Því að það kemur fljótt í ljós, þá er Guðmundur sýnir fólkinu að rannsóknir hans leiða til áþreifanlegrar niðurstöðu, að það fer þá og að hugsa sjálfstætt um málið og gera áframhald á umbótunum. Og því er von um margfaldan árangur.

En Guðmundur Finnbogason hefir og reynt með öðrum hætti að vekja þennan almenna áhuga og sýnt í því mikinn dugnað. Hefir hann gert það bæði með alþýðufyrirlesturum og með fyrirlesturum í háskólanum. Þeir menn sem vit hafa á, munu skjótt sjá á fyrirlesturum þessum að þinginu 1915 varð mjög á, er það stofnaði eigi embætti það í hagnýtri sálarfræði, sem farið var fram á. Mun nú næsta þing verða að bæta úr því.

Fyrirlestrar Guðmundar í háskólanum eru nú komnir út, og kallast bókin »Vinnan«. Þeir eru 10: I. Erfiði, II. Preyta, III. Vinnuhugur, IV. Eftirlíking. Kapp, V. Vinnulaun, VI. Tímabrigði, VII. Aðstæður, VIII. Vinnugleði, IX. Vinnunám, X. Andleg vinna.

Fyrsti fyrirlesturinn er fullur af nauðsynlegum fróðleik, sem fæstir vita hér á landi, því að almenningur hefir eigi átt þess neinu kost að kynnast þeim fræðum. Framsetning höf. er einkarljós og

hverjum manni auðskilin. Eg get eigi kent höf. um orðskríði-
 »kiflogrammetri«, því að Alþingi hefir sjálft illu heilli sett þann
 blett á íslenska tungu. Prentvilla er á bls. 7, þurfa fyrir þarf.
 Annars er mál alt vandað og gott hjá þessum höf. Sérstaklega
 ber að viðurkenna það, er hann ritar rétt það, sem tókast og tók-
 ast hefir að rita rangt. Menn rita alment t. d. stefndi fyrir stefnd-
 ur, reyndi fyrir reyndur, (bls. 12¹), en höf. ritar hér rétt, og skyldi
 menn læra af því. — Annar fyrirlesturinn er og fullur af nýtsöm-
 um og sjaldfengnum fróðleik og má segja um hann hið sama sem
 hér að ofan um hinn fyrsta. Geta verður þó þess, að á bls. 20¹⁶
 er prentvilla, sem allir verða þegar að leiðrétta, t í u sekundur fyrir
 t v æ r sekundur. — Þótt eg hafi nefnt sérstaklega fróðleik í tveim
 fyrstu fyrirlesturum, þá er það þó eigi svo að skilja, að hinir sé-
 eigi fróðlegir. Heldur er almenningi sá fróðleikur torfengnari, en í
 III—IX er talað meir um hluti, sem menn þekkja af eiginni reynslu
 og gerir höf. þar einkum að leysa bundnar hugsanir manna og að
 skipa í samfast kerfi einstökum athugunum og þekkingaratrúðum
 almennings. Fer eigi hjá því, ef menn lesa bókina, að þeir fái
 miklu ljósari hugmynd um eðli daglegrar vinnu sinnar, fái virðing
 fyrir henni og læri að viðurkenna vald þekkingarinnar á þessu sviði
 sem öðrum. Er vonandi, að hóðanaf hafi almennungur gleggri hug-
 mynd um vinnu og vinnuvísindi, en ýmsir fræðingar og ráðu-
 nautar höfðu á þinginu 1915. Mun það og verða drygast málinu
 til framgangs. Er nú við þeirri hættu að sjá, að heimska og bar-
 lómur drepni niður vel byrjuðu verki. Eg gerist jafnvel svo djarfur
 að vænta þess, að menn komist að skynsamlegri niðurstöðu í málinu,
 sjái að Guðmundur er velgerðamaður landsins, en það ekki hans,
 og sjái að úr því lerdómur þarf að koma brjóstviti manna til
 hjálpar, þá er þeir eiga að stýra vél í bát eða vagni, þá muni eigi
 síður þurfa þekkingar til þess að fara skynsamlega með heimsins
 margbreyttustu vél, mannslíkamann.

Skora vil eg á alla þá menn, sem þetta lesa, að fá sér »Vinnu«
 Guðmundar Finnbogasonar og segja mér svo á eftir, ef þeir treystast
 til að vera á öðru máli en eg um þetta.

Reykjavík í júní 1917.

Bjarni Jónsson frá Vogu.

Sigfús Blöndal: Katalogisering og Opstilling af Böger.
 Anden Udgave. København, 1916. 8vo, (2+) 49 bls.

Ritlingur þessi, sem er sérprentun úr H a a n d b o g i Biblio-

tekkundskab, udgivet af Svend Dahl, hefir að geyma leiðbeining um skrásetning bóka og niðurskipun þeirra í bókasöfnum. Fyrri útgáfa ritsins var 1912 og var kverið þá 33 bls., en nú hefir höf. aukið það um eina örk. Á íslenzku hefir fátt verið um þetta efni ritað, ekki annað, að eg ætla, en grein eftir Jón Ólafsson, er út kom í Tímariti hins íslenska Bókmentafélags, 23. árg. Rv. 1902, en sú grein nær stutt, lýsir að eins einu kerfi, því er kent er við Dewey bókavörð. Þessi ritlingur lýsir aftur á móti öllum hinum helztu flokkunarkerfum í höfuðþáttunum, skýrt og ljóst, að mér virðist, enda »kló sá, er kunni«, því að höf. hefir um langt skeið verið höfuðskrásetjari við eitt hið stærsta bókasafn í Norðurálfu, bókhöðun konungs í Kaupmannahöfn. »Það skal vel vanda, sem lengi á að standa«, segir málshátturinn, og á það ekki sízt við um bókasöfn. Á engu ríður eins mikið við bókasöfn og því, að skrásetning sé í lagi, og er þá mikið undir því komið, að góður og traustur grundvöllur sé lagður frá upphafi. Fyrir því vil eg mæla fastlega með þessum ritlingi við þá, sem hafa á hendi gæzlu amtsbókasafna, sýslubókasafna og annarra safna; hann veitir ágæta leiðbeining um þessi efni, og heppilegast að leggja grundvöllinn að skrásetningunni, meðan söfnin eru smá. Ráðlegast mundi þá líklega, að landstjórnin beinlínis gæfi út reglugerð um skrásetningarreglur fyrir almanna-bókasöfn, svo að hérland söfn yrðu öll skrásett eftir sama kerfi, hvert sem það yrði. — Um verð ritlingsins veit eg ekki, en sjálfsagt geta allir bóksalar hér útvegað hann.

Páll Eggert Ólason.

Börn, foreldrar og kennarar eftir D. C. Murphy. Jón Þórarinnsson þýddi. Reykjavík. Bókaverzlun Sigfúsar Eymundssonar. 1917.

Hér birtist á íslenzku bók eftir amerískan höfund um efni, sem lítið er um ritað á voru máli. Í það má ráða af titlinum.

Efnið er boðorð, heilræði, vísbendingar til kennara um störf þeirra, hugleiðingar og athugasemdir um eigindir góðs kennara, mikilvægi kenslustarfa og samvinnu foreldra og kennara.

Eg mæli hiklaust með því, að kennarar vorir fái sér bók þessa og lesi hana vandlega. Reyndar dáist eg ekki að ritsnild hennar, eins og hinn mæti og mjögvirtí þýðandi í formálanum. Höf. prédikar óþarflega, hugsar oft hversdagslega og ritar fullalþýðlega. Sumar hugsanir hans eru gráhærðir öldungar í gömlum fötum. Hann segir kynstur sagna og dæma, kenningum sínum og ráðum

til skýringar. En sumar sögurnar eru svo langar og reka hver aðra svo þétt, að hugsanaþráðurinn slitnar. Lesendum hafa næstum því gleymst skoðanir höfundar og íhugunarefni, er þeim er lokið. Hitt er þó lakara, að stundum sést samband þeirra við umræðuefnið ekki eins ljóslega og skyldi, nokkrar þeirra virðast að eins sagðar af því, að höf. hefir haft mætur á þeim. Það sem léttu á lestur bókarinnar, sögurnar, er skýra eiga betur hugsanir hennar, snýst því í ókost, veldur ruglingi. Er þessi ameríski ritháttur alla ekki eftirbreytni verður. Það sötir furðu, hve lítt höf. trúir lesendum einum til skilnings. Það er stundum því líkara, sem hann sé að segja til krökkum en kennurum og foreldrum. Vera má og, að einhverir finni honum það til foráttu, að hann kunni ekki ráð við nógu mörgu mótlæti, er biði hvers kennara í starfi hans og stöðu. Stundum er hann þotinn frá okkur með ýmsar spurningar á vör- unum, áður en oss varir. Hann fræðir oss meir um, hvað við eig- um ekki að gera en gera. Hann játar, að hjá refsingum verði ekki komist, en hikar að leggja ráð um, hversu þeim skuli beitt. Hann á ekkert kynjalyf, sem lækna alla sjúkdóma, og er það sagt hon- um til lofs, enda mun þykja mál til komið, að eg rökstyðji með- mæli min á annan hátt, en eg hefi gert hér á undan.

Ekki efa eg, að barnakennarar vorir geti ýmislegt á henni grætt, ef þeir kynna sér hana með kostgæfni. Hún geymir ráð og leiðbeiningar, er að gagni geta komið, ef eftir er farið. Höf. er heilbrigður, kenningar hans heilsusamlegar. Hann varar skýrt og rækilega við ofmiklum hátíðleik og alvörugufni í kenslustundum. Hann kennir, að mjög ríði á góðum aga í skólum og við skólanám. En »þeim skóla er best stjórnað, sem stjórnað er með minstri fyrirhöfn til að aga«. Og hann fer óvægum orðum um þá kenn- ara, sem þykir sú skólastofa fyrirmynd, »þar sem heyra má títu- prjón detta, og þar sem börnin sitja bein eins og kerti, með and- litið að kennaraborðinu«. Og glaðlyndi í kenslustofu telur hann holt og gott. Og hann bendir á góð tök á ýmsum brekum og brellum, og segir dæmi þess, hvernig þeim hafi verið eytt. Ágæt er þessi saga: Eitt sinn var ritað á skólatöflu, er kenslukonan kom inn: »Kenslukonan okkar er asna«. Hún hafði ekki orð um þetta, heldur tók þegjandi krftina og bætti við: »hirðir«. »Eftir það var ekkert skrifað á töfluna«. Einhver beztu kaflinn í bókinni er um ýmsar tegundir kennara, þar sem hann flokkar þá eftir ein- kennum þeirra og aðferðum við starf sitt og líkir þeim við ýmsa

fuglaflokka. Sönn er lýsingin á þeim kennurum, er taldir eru til ránfugla, og kannast íslenzkir lesendur víst við þá tegund.

Þýðingin virðist hafa vel tekist, málið gott og smekklegt, liðlegt og látlaust, alþýðlegt í góðri merkingu þess orða.

Kennarasveit vor má þakka þýðanda starf hans.

Sigurður Guðmundsson.

Sig. Heiðdal: Stíklur. Sögur. Reykjavík. Bókaverzlun Ársæls Árnasonar 1917.

Ungur og efnilegur bóksali, hr. Ársæll Árnason, hefir gefið út nokkrar sögur, er »Stíklur« kallast, eftir Sigurð Heiðdal, barnakennara Seltirninga. Þar rennur upp ný stjarna á íslenskum bókmentahimni. Gera má ráð fyrir, að marga fýsi að sjá hana og skoða, og að þeir velti því fyrir sér um leið, hvort gera má sér von þessa, að hún leiftri lengi um nætur, eða hvort búast verður við hinu, að hún hrazi innan skamms niður fyrir brún sjóndeildarhringsins.

Margar spurningar ryðjast fram, er nýr höfundur sezt á þalarstól: Um hvaða bygðir og bæi mannlífsins hefir hann farið, og hvaða tíðindi hefir hann þaðan að segja? Segir hann frá héruðum, er vér höfum eigi áður heyrt sögur úr, eða lýsir hann sveitum, kunnum úr leikum og frásögnum? Og ber þá sögn hans að nokkru af eldri sögum? Talar hann með meira fjöri og andagift en þeir, er áður sögðu sömu sögu, svo að vér tökum betur eftir, eða mælir hann skýrara en þeim tókst, svo að vér sjáum betur greitt úr örloðþáttum og æfíkjörum en í gömlu ferðasögunum og öðlumst um leið nýjan skilning. Betri skilningur er í einhverju nýr skilningur. Og hvernig segir hann frá? Með hæðnihlátri eða raunarómi? Er lífið honum meira en yrkisefni? Má heyra á rödd hans aðalsblænn, er auðkennir mál þess manns, sem gagntekinn er af alvöru lífs og dauða og einum er veittur máttur til að innræta mannlegum hjörtum, ofurlítið svipað og stórri reynslu eða sorg tekst það, mun á heimshégóma og verðmætum þeim, sem vér höfum hitann úr, vöxum af og göfgumst?

Söguefnin eru hvorki ný né víðtæk. Höf. er ástaskáld — sögurnar ástasögur. Og tamast virðist honum að lýsa útjöðrum í skuggahverfi ástarinnar — inn í dimmustu göturnar þar hættir hann sér lítt. Hann lýsir villum og villigötum í samdrætti og sambúð karla og kvenna, afleiðingum stundarléttúðar (»Kossinn«) og samvizkulausrar svölunar holdlegra fýsna (»Rándýrin«), og örðugleikum hjónabandsins, sem stafa af vöntun á nærgætni og vilja til samstillingar.

skapi og þörfum. Hann hefir gaman af að lýsa aðdraganda að fyrstu kossum, faðmlögum og ástarjátningum, ímyndunarafl hans er allmjög ástum drifið. En ef sögurnar eru lesnar með örlítilli aðgætni, einkum lok þeirra, sést, að hugsun býr að baki þeim, að þær eru sagðar í alvarlegu skyni. Höf. virðist alvörumaður, og aðgur hans skortir ekki alvarlegt efni, þótt það sé ekki stórfenglegt. Hann sýnir líka, hversu lítilfjörlegustu atburðir og ólíklegustu tilviljanir hafa áhrif á örlög vor í ástamálum. Slíkt er líka um hugsunarefni, ekki sízt á þessum ógagnrýnu trúartímum, er vér lifum á.

Það leiðir af afmörkun efnisins, að vér kynnumst köppum skáldsins flestum ekki annarstaðar en á launþingum ástarinnar eða af öðru en því, er þeir eru við hana riðnir. En ef það sópar ekki meira að þeim í öðrum efnum en þar, sakar það lítið. Persónur hans eru smávaxnar. Ein söguhetjan áráðir ekki með nokkru móti að biðja sér konu, sem hann unni hugástum og hún elskaði aftur ekki minna, af því að hún færðist ofurlítið undan, er kempan kom við hana. Svo lítilfjörleg hreyfing réð örlögum þessara elskanda, líkt og skáldið segir. Og hér er engin kona, er vér fáum mætur á, en það auðkennir íslensk skáld, bæði í fornöld og nútíð, að þeim tekst betur við kvenþjóðina en karlmennina. Vér minnumst hér helst kaupmannsdótturinnar í fyrstu sögunni, sem hugkvæmist smellið úrræði til að ná samþykki föður síns, furðulega grunnhyggins, til lofunar sinnar, er honum var þvert um skap. Og hér er enginn heilabrotamaður með sjálfstæðar skoðanir, andlegan óróa eða djarfmannlega dóma. Sálargróður er hér ófjölskrúðugur.

En alt fyrir þetta er margt vel um höf. og sögur hans, er spáir góðu um framtíð hans. Tveimur persónum hans er veigur í. Önnur er »heiðarskáldið«. Í honum býr vilji og harðneskja, sem stafar meðfram af því, að hann varð að yrkja í framkvæmdum og fésýslu í stað þess að skapa mannsálir og lyndiseinkunnir, sem honum lék hugur á ungum. Þykir mér sú saga hafa einna best hepnast. Það er að vísu heldur ósennilegt, að sá, sem söguna segir, hafi ekki vitað um svo nafnkunnan fjáraflamann, sem Heiðmann hlaut að vera; að hann var »heiðarskáldið« og bernskuvinur hans, þar sem hann var Möðruvellundur, mjög riðinn við almanna-mál, þingmaður og virðist greindarmaður. En slíkt er smávægilegt. Hitt er höfuðatriðið, að persónunni er lýst með litum, bæði í máli lundu og fasil, og að alt er það eðlilega samstílt.

Hin söguhetjan, sem vér veitum eftirtekt og oss þykir vænt

um, er hundurinn Offi, sem ætlaðist ekki til neinna launa, er hann vann afreksverk sín. Sumt bendir á, að höf. hafi lesið »Val« Þorgille gjallanda (í »Dýrasögum« 1910) og lært af skáldinu þingeynska. Kaupstaðarflækingur Offa minnir dálítið á hverfiseril Vals. En að öðru leyti eru þeir hundar gerólfkir og breppa því harla ósvipuð örlög. Þessi smásaga sýnir að minnu vili ótvíræðlega skáldgáfu höf. Svo vel lýsir hann þar skynjunum og innræti góðs og duglegs hunds. En það lýtir seinni hluta hennar, að höf. hefir blandað hana fullmikið ástum og hjúskap og dreifir á þann hátt huga lesenda sína um of.

Höf. er maður hugsandi, tekur vel eftir, hefir gaman af að segja sögur, hefir gott lag á að vekja óþreyju lesenda eftir að heyrna meira. En það er rangt gagnvart bókmentum, og ungum höfundum enginn greiði, að þegja um galla á frumsmíðum þeirra. Skylda ritdómara er að skilja og skýra, sýna svip og sérkenni höfunda og rita, benda á kosti og ókosti, en gera það með góðgirni og sannleiksást. Höf. gerir oflítið úr skilningi lesenda sinna, treystir þeim ekki til að skilja hálfkveðna vísu. Einhver skrifaði um hann, að hann ritaði alþýðlega. Ef átt hefir verið við þetta, er skáldi slíkt lítil sæmd. Seinni kafla sögunnar Bjarna og Guðrúnar hefði t. d. átt að styttu. Það hefði nægt til skilnings á hugarfari Guðrúnar í garð Bjarna, að hún fór að hagræða kambi í hári sér og »var dálitla stund að því«, er hann nálgæðist hana með ástaratlotum. Svo gátu lesendur sagt sér sjálfir þær afleiðingar, er það getur haft, að stúlka verður að gefa varlega undir fótinn, samkvæmt almennum velsæmisreglum. Það var og óþarfi að láta þessa lítilfjörlegu undanfærslu Guðrúnar koma til af því, sem hún hafði heyrt um ástareðli karlmauna. Bæði lífið og vísindaleg sálarfræði sýna, að römm er einræningstaugin í menakum verum, sem veldur óbeit vorri á nánnum mökum við aðra og einkum kvenfólks, er karlmenn eiga í hlut. Velsæmisreglan er því ekki nema samþykkt þess, er kvenlegri náttúru er áskapað. Höf. hefði því lagst dýpra, ef hann hefði látið henni bregða svo við af blindri tilhneiging eðlis síns, er elskandinn nálgæðist hana, sagan um leið geymt djúptækari og áhrifameiri sannindi, ekki sízt ef Bjarni hefði verið stæltari, sóttfastara á. Annars fer uppgerðin vanalega af stúlkum, er þær eru einar með þeim, sem þær unna einlæglega, eins og þarna átti sér stað. Höf. hefir náð hér í gott söguefni, en orðið lítið úr.

Í fyrri hluta seinustu sögunnar (»Ungu hjónin«) sýnist skáldgáfan bregðast. Eg þori ekki að fullyrða, að höf. hafi lesið ágæta

sögu eftir Jónas Lie, er heitir »Et Samliv«, en líklegt þykir mér það, og að þaðan sé honum ósjálfrátt komið sæðið, er sagan er vaxin af. Lie sýnir þar snildarlega, hversu skortur á list vits og hjartna geraspillir góðri sambúð hjóna. Þau stilla ekki saman skap sitt og þarfir. Þá er bóndinn vildi faðma konu sína að sér og tala við hana um áhyggjur sínar og gleðiefni, brast hana tíma, var með hugann annarstaðar. Efnið er sama í fyrra helmingi þessarar sögu. Og það styrkir ætlun mína, að hann notar sömu mynd sem Lie: Hjónin standa að lokum sitt á hvorum árbakka. Höf. ætti að minsta kosti að lesa bók Lies og bera saman við sína sögu. Þá sér hann, hvers henni er ávant. Lie segir frá eintómum atvikum og viðburðum, athöfnum og samræðum, er vér skynjum, og skýrir oss þannig innra efni sögunnar. Hér vantar slíkt fram eftir allri sögu, svo að sá kafli verður lítið nema greindarleg hugvekja, eins og eitt-hvert blaðið komst að orði. Hann nær sér betur niðri, er »ungu hjónin« hafa komið sér saman um skilnað. Höf. vantar alls ekki vilja né stefnuskrá í hjúskaparmálum.

Dulrænu söguna »Hvar ertu?« kysi eg úr bókinni. Eg skil hana ekki, nýt hennar ekki, veit varla, hvort hún er alvara eða háð, sem sumum hefir dottið í hug, en þykir getgátan ósennileg. Má vera, að andatrúarmeun kunni »mála mjöt« um hana, og að brjálaðri eða vitrari framtíð en líðandi samtíð dáið að spádómsanda skáldsins. En jarðlífið á nóg yrkisefni og þarfleysa að sigla eftir þeim yfir í ólöndin fyrir handan haf dauðans. Þess konar skáldskap getur, að minsta kosti nú, að eins einn flokkur manna, anda-trúarmenn, haft af andlegt gagu. Og eg efa, að sagan hrífi vitrustu sinna þeirrar stefnu.

Mál á »Stiklum« er sómasamlegt, tildurlaust með öllu, en ekki mikið nýnæmi að. Höf. segir hægt og rólega frá, tekur aldrei fjörspretti.

Eg veit það eitt um þenna höfund, að hann fæst við barnakenslu. »Eg kenni til sakir þín, bróðir Jónatan«. Ekkert er banvænna sálarfjóri og andagift en kenslustagl og stílastrit. Er mér ekki grunlaust um þreytumörk á frásögu hans og orðfæri. Skaði er og, að vér eigum ekki sjóði, er veita má úr ungum höfundum og hugsandi, eins og hr. Sigurði Heiðdal, styrk til utanfarar og næðis til andlegra iðkana, svo að þeir geti vaxið á alla vegu, eftir því sem þeir eru hæfileikum gæddir og skapi farnir, og sýnt, hvað í þeim býr. Enginn veit, hvíllkir gullbringar yrðu smíðaðir, ef þeirra nyti.

Sigurður Guðmundsson.

Manfred. Sorgarleikur eftir Byron lávarð. Matthías Jochumsson þýddi. 2. útg. Rvfk. Bókaverzlun Guðm. Gamalielssonar. 1916

Þessi snildarþýðing þjóðskáldsins birtist hér í 2. útg. á 100 ára afmæli frumritsins. Aftan við er skrá yfir helztu frumrit og þýðingar Matthíasar. Útgáfan er ljómandi anotur og verður eflaust mörgum kærkomin. G. F.

Stjórnarskrá Íslands og þingsköp alþingis. Gefið út að tilhlutun alþingis. Rvfk. 1916.

Þetta er prýðilega smekkleg útgáfa, á góðum pappír, með ágætu lettri. Tilvitnanir á spássíum og neðanmálsgreinar sýna breytingarnar sem stjórnarskráin hefir tekið síðan 1874. Við þing-sköpin eru fyrirsagnir á spássíum. G. F.

Aðrar sendar bækur, er sumra mun getið síðar:

Haraldur Nielsson: Kirkjan og ódauðleikasannanirnar. Rvfk 1916.

Einar Hjörleifsson Kvaran: Líf og dauði. Rvfk 1917.

Verzlunarmannafél. »Merkúr«: Um verzlunarmál. Sex fyrir-lestrar. Rvfk 1917.

Í. S. Í.: Glímubók. Rvfk 1916.

Í. S. Í.: Knattspyrnulög. Rvfk 1916.

Í. S. Í.: Almennar reglur Íþróttasambands Íslands um knatt-spyrnumót. Rvfk 1917.

Í. S. Í.: Lög, leikreglur og önnur ákvæði um íþróttir innan Sambandsins. Rvfk 1915.

Ársrit Ræktunarfélags Norðurlands 1916. 13. árg. Ak. 1917.

Lög og reglur um bæjarmálefni Rvfkur 1.—3. hefti. Rvfk 1916.

Oversigt over islandske Love i 1915 af L. H. B. Særtryk af »Tidsskrift for Rettsvidenskab« for 1916.

Hagskýrslur Íslands 11. Búnaðarskýrslur árið 1915. Rvfk 1916.

Tímarit Verkfræðingafél. Íslands. 2. árg. 1.—2. hefti. Rvfk 1917.

Arne Möller: Island og Danmark. »Ryslingebogen« 1916.

Magnús Gíslason: Rúnir. Rvfk 1917.

Alexander L. Kielland: Jónsmessuhátíð. Saga. Þýtt hefir Guðm. Halldórsson. Eyrarb. 1917.

Viktor Rydberg: Singoalla. Skáldsaga frá 14. öld. Ísl. þýð. eftir Guðm. Guðmundsson, I.—II. Rvfk 1916—17.

Trúarhugtakið

eins og vér kynnumst því í ritum nýja testamentisins.

Synoduserindi flutt í dómkirkjunni í Reykjavík 27. júní 1917
af

Sigurði P. Sívertsen prófessor.

El spurningin: »Hvað er trú?, hvað felst í því hugtaki?«, væri lögd fyrir þá, sem hér eru viðstaddir, myndi flestum að líkindum finnast auðvelt að svara þeirri spurningu. Flestir myndu koma með skýringu sína án þess að hika mikið eða vera í miklum vafa um, að skýring þeirra væri rétt. En ef svörin ýmsu væru skrifuð upp eða borin saman, myndi margan furða á, hve margbreytileg þau væru og að mörgu ólík.

Þetta stafar eðlilega af því, hve trúarhugtakið er viðtækt og margþætt, og má því skoða frá mörgum hliðum.

Þar kemur til athugar bæði trúarþelið, trúarlundin, með hinum mismunandi og margbreytilega styrkleika og innileika trúarinnar, og svo á hinn bóginn einnig trúarandlagið, hverju trúað er, trúarkenningin, trúarsannindin, trúarhugmyndirnar margbreytilegu.

Þegar um trúarhugtakið er að ræða, getur einnig komið til athugunar bæði hvað trú sé alment, og svo hitt, hvað einkenni sérstaklega trúna í kristilegum skilningi.

Þar getur enn fremur komið til athugunar, hvernig trúin hefir birzt á hinum ýmsu tímum og hjá hinum ýmsu

þjóðum, ekki að eins utan, heldur einnig innan kristninnar.

Því trúarhugtakið hefir orðið fyrir miklum breytingum frá því fyrst vér þekkjum til og alt til vorra tíma.

Trúarhugtakið á sína sögu, og sú saga sýnir, að langt er frá því, að altaf hafi hið sama verið lagt í orðin trú og að trúa.

Sú saga er mjög fróðleg, og kennir hún oss meðal annars, hversu hugtök, sem alment eru notuð, hafa á ýmsum tímum verið höfð í mismunandi merkingu, og jafnvel á sama tíma hefir næsta ólíkur skilningur verið lagður í hugtökin eftir andlegum þroska þeirra, er þau notuðu, og eftir hinum margvislegu aðstæðum, er mótuðu andlegt umhverfi manna.

Því saga trúarhugtaksins sýnir oss einnig, hvernig lífskjörin að ýmsu leyti hafa ráðið því á hvað í trúarhugtakinu mest áherzla var lögð. Þetta má að miklu leyti rekja gegnum aldirnar og þá ekki sízt í nýja testamentinu, eftir að mönnum hefir skilist að rannsaka beri og skoða hin ýmsu rit þess einnig frá sögulegu sjónarmiði.

Af þessu ætti öllum að vera ljóst, hve trúarhugtakið er margbrotið viðfangsefni, og að ekki getur verið viðlit að taka allar hliðar þess til athugunar í einu erindi, ef út í nokkuð á að fara til hlitar.

En trúarhugtakið er eitt af meginhugtökum kristindómsins. Á það lögðu siðbótarhöfundarnir megináherzluna. Og þar eð þetta ár er 400 ára minningarár siðbótarinnar, virðist eiga vel við að taka þetta hugtak hér til yfirvegunar og leita til frumuppsprettu vor kristinna manna, þegar um réttan skilning á einhverjum atriðum kristindómsins er að ræða, til nýja testamentisins sjálfs, til þess að gera sér sem glöggasta grein fyrir því, hvað í hugtakinu trú felist samkvæmt kristilegum skilningi, og á hvað þar beri mesta áherzlu að leggja.

Það sem eg ætlaði mér að tala hér um er því trúarhugtakið eins og vér kynnumst því í ritum nýja testamentisins.

Verður þá fyrst fyrir mér að athuga prédikun Jesú.

I. *Hvað kendi Jesús um trúna, og hvað einkendi trú hans sjálfs?*

Þegar gera á sér grein fyrir því, hvað Jesús hafi lagt í hugtakið trú, verður þess tvenns að gæta, bæði að athuga ummæli hans um trúna, bein og óbein, og svo einnig að taka tillit til lýsinga guðspjallsheimilda vorra á því, er aðallegast einkendi trú Jesú sjálfs.

1. Bein ummæli Jesú um trúna eru ekki mörg í elztu heimildum vorum. Orðið trú kemur t. d. að eins fyrir í tvennum ummælum Jesú, sem tilfærð eru í Ræðuheimildinni svonefndu. En Ræðuheimildin er talin önnur elzta aðalheimild guðspjalla vorra og er sameiginleg bæði fyrir Mt. og Lúkasarguðspjall. Nokkru oftast kemur orðið fyrir í hinn aðalheimild samstofna guðspjallanna, Markúsarheimildinni. Sögnin að trúna kemur einnig sjaldan fyrir í samstofna (þ. þremur fyrstu) guðspjöllunum.

Skulu nú talin aðalummæli Jesú um trúna í samstofna guðspjöllunum.

Byrja eg þá á ummælunum í Markúsarheimildinni.

Í 4. kap. Markúsarguðspj. er sagt frá því, þegar Jesús var með lærisveinum sínum úti á Genezaretvatninu og stormhrinan reis og öldurnar féllu inn í bátinn. Jesús svaf í skutnum, en lærisveinarnir vöktu hann. Þá sagði Jesús við þá: »Hví eruð þér hræddir, hafið þér enn enga trú?« (Mk. 4, 40). Mt. orðar ummælin: »Hví eruð þér hræddir, litiltrúaðir?« (8, 26), en Lk.: »Hvar er trú yðar?« (8, 25).

Í næsta kap. Mk. er sagt frá blóðfallssjúku konunni, er snart klæði Jesú í mannþyrpingunni, féll til fóta honum og sagði honum, hvers vegna hún hefði snortið hann og hvernig hún hefði læknað. Við hana sagði Jesús: »Dóttir, trú þín hefir gert þig heila« (Mk. 5, 34). Lk. orðar ummælin alveg eins

(8, 48). En orðalagið er hjá Mt.: »Vertu hughraust dóttir, trú þín hefir gjört þig heila« (9, 22).

Meðan Jesús enn var að mæla við konuna, komu menn frá samkundustjóranum Jairusi og segja honum lát dóttur hans og biðja hann að ómaka meistarann ekki lengur. En Jesús gaf eigi gaum að orðum mannanna, en sagði við samkundustjórann: »Vertu ekki hræddur, trúðu aðeins« (5, 36). Orðin eru eins hjá Lk. (8, 50), en vantar í hliðstæða stæðinn hjá Mt. (9).

Þá höfum vér tvönn ummæli um trúna í 9. kap. Mk. guðspj. Önnur eru í viðtali við föður flogaveika piltsins, sem hafði komið með son sinn til lærisveina hans, en þeir ekki getað læknað. Jesús lét þá færa piltinn til sín og spurði föðurinn, hve lengi drengurinn hefði verið veikur af flogaveiki sinni. Faðirinn segir Jesú það og biður hann að sjá aumur á þeim og hjálpa piltinum, ef hann geti nokkuð. Þá sagði Jesús eftirtektaverðu orðin: »Ef þú getur! Sá getur alt, sem trúna hefir« (9, 23).

Hin ummælin í þessum kap. eru í viðtali Jesú við lærisveinana, þar sem hann segir: »Hver sem hneykslar einn af þessum smælingjum, sem á mig trúa, betra væri honum að honum væri varpað í hafið með stóran kvarnarstein um hálsinn« (9, 42; sbr. Mt. 18, 6).

Í næsta kap. Mk. guðspj. er sagt frá lækningu Bartimeusar, blinda beiningamannsins, er sat við veginn við Jeríkó. Maður þessi kallaði til Jesú, er hann fekk að vita, að hann færi fram hjá, og bað hann að gefa sér aftur sjón sína. Við hann sagði Jesús: »Far þú leiðar þinnar, trú þín hefir gjört þig heilan« (10, 52). Lúk. orðar ummælin: »Verð þú aftur sjáandi! trú þín hefir gjört þig heilan« (18, 42).

Í 11. kap. Mk. eru eftirtektaverðu orðin, sem Jesús sagði við lærisveina sína, þegar Pétur benti honum á visnaða fikjutréð: »Trúið á guð. Sannlega segi eg yður, hver sem segir við fjall þetta: Lyftist þú upp og

steypist þú í hafið! og efar ekki í hjarta sínu, heldur trúir, að svo fari sem hann mælir, honum mun verða að því. Fyrir því segi eg yður: Hvers sem þér biðjið og beiðist, þá trúið að þér hafið öðlast það, og þér munuð fá það« (22.—24. v.). Ummæli þessi eru líka í Mt.guðspj., en nokkuð öðruvísi orðuð þar (21, 21).

Þetta voru helztu ummælin í Mk. Skal eg nú næst nefna aðal ummæli Ræðuheimildarinnar eins og vér lesum þau í Mt. og Lúk guðspjalli.

Þar sem Jesús í Fjallræðunni er að vara við áhyggjum, kemst hann meðal annars svo að orði: »Fyrst Guð nú skryðir svo gras vallarins, sem í dag stendur, en á morgun verður í ofn kastað, skyldi hann þá ekki miklu fremur klæða yður, þér lítiltrúaðir?« (Mt. 6, 30; sbr. Lúk. 12, 28 nær orðrétt eins).

Um hundraðshöfðingjann í Kapernaum sagði Jesús við þá, sem fylgdu honum: »Sannlega segi eg yður, ekki einu sinni í Ísrael hefi eg fundið svo mikla trú« (Mt. 8, 10; sbr. Lk. 7, 9 nær alveg orðrétt). Og við hundraðshöfðingjann sagði Jesús: »Far þú burt, verði þér eins og þú trúðir« (Mt. 8, 13).

Við lækningu tunglsjúka piltsins, sem sagt er frá í 17. kap. Mt.guðspj., segir Jesús eftirtektaverðu orðin: »Sannlega segi eg yður: ef þér hafið trú eins og mustarðskorn, þá munuð þér segja við þetta fjall: Flyttu þig þaðan og hingað! og það mun flytja sig, og ekkert mun vera yður um megn« (Mt. 17, 20). Í 17. kap. Lk.guðspj. eru lík ummæli, þó öðruvísi orðuð. Þar stendur: »Og postularnir sögðu við Drottin: Auk oss trú. En Drottinn sagði: »Ef þér hafið trú eins og mustarðskorn, gætuð þér sagt við nórberjatré þetta: Rif þig upp með rótum og gróðurset þig í hafinu; og það mundi hlýða yður« (5.—6. v.).

Sérheimild Matteusar hefir ummælin við lækningu blindu mannanna tveggja, sem sagt er frá í 9. kap. Mt.guðspj. Jesús spyr þá: »Trúið þið, að eg geti gjört þetta«? (s: læknað þá). Þeir segja við

hann: »Já, herra«. Þá snart hann augu þeirra og mælti: »Verði ykkur að trú ykkar« (28.—29. v.).

Einnig orðin við Pétur, er hann gekk á vatninu, hræddist og tók að sökkva: »Þú lítiltrúaði, hví ef-
aðist þú?« (Mt. 14, 31).

Enn fremur er í Mt.guðspj. bætt inn í frásögn Mk. um heiðnu konuna kanversku orðum Jesú: »Kona, mikil er trú þín. Verði þér sem þú vilt« (Mt. 15, 28, sbr. Mk. 7, 29).

Inn í ummæli Jesú í Mk. um að varast súrdeig Fariseanna og Saddúkeanna er í Mt.guðspj. bætt orðunum: »Hví eruð þér að hugsa um það með sjálfum yður, þér trúarlitlir, að þér eruð brauðlausir?« (Mt. 16, 8; sbr. Mk. 8, 14 n. n.).

Sérheimild Lúkasar hefir orð Jesú við bersyndugu konuna, sem smurði Jesú í húsi Fariseans: »Trú þín hefir frelsað þig; far þú í friði« (Lk. 7, 50).

Í skýringunni á dæmisögunni um sáðmanninn hefir Lk. viðbótina: »En þeir við götuna eru þeir, sem hafa heyrt það (þ: orðið); síðan kemur djöfullinn og tekur orðið burt úr hjarta þeirra, til þess að þeir skuli ekki trúa og verða hólpnir. En þeir á klöppinni eru þeir, sem taka við orðinu með fögnuði, er þeir hafa heyrt það; en þessir hafa ekki rót, þeir er trúa um stund og falla frá á reynslutíma« (Lk. 8, 12—13; sbr. Mt. 13, 18 n. n.; Mk. 4, 14 n.).

Sérheimild Lk. hefir einnig orð Jesú við þakkláta Samverjann: »Statt upp og far leiðar þinnar; trú þín hefir gjört þig heilan« (Lk. 17, 19).

Enn fremur ummælin í dæmisögu Jesú um dóm-arann og ekkjuna: »Mun þá mannssonurinn finna trúna á jörðunni, er hann kemur?« (Lk. 18, 8) og í 22, 32 við Pétur: »Eg hefi beðið fyrir þér, til þess að trú þín þrjóti ekki«. Og við lærisveinana á Emmausgöngunni segir Jesús: »Ó þér heimskir og tregir í hjarta til að trú á öllu því, sem spámennirnir hafa talað« (Lk. 24, 25).

Áður en lengra er haldið er bezt þegar að athuga þessi tilgreindu ummæli og spyrja: Hvað leggur Jesús þar í orðin »trú« og að »trúa«?

Við athugun ummælanna verðum vér þegar eins varir, sem eflaust mun vekja undrun þeirra, sem ekki hafa veitt því áður eftirtekt. Það er að Jesús hrósar trú manna, sem engan veginn gátu haft fullkomnara eða réttar trúarhugmyndir.

Þetta á sér stað um hundraðshöfðingjann í Kapernaum, sem Mt. guðspj. lýsir sem heiðingja, og um heiðnu konuna kanversku, en trú beggja kallar hann mikla. Einnig má nefna þakkláta Samverjann og marga af sjúklingum þeim, er Jesús læknaði. Því ekkert bendir til þess, að trúarhugmyndir þeirra hafi verið sérstaklega proskadar.

Mesta eftirtekt vekur þó, að Jesús skuli dást svona að trú hundraðshöfðingjans, — enda þótt hundraðshöfðinginn væri farinn að hallast að Gyðingdóminum, eins og Lúkas segir frá, — og að trú heiðnu konunnar, og kalla trú þeirra mikla.

Það sýnir oss bert, að það eru ekki trúarhugmyndirnar, trúarkenningin, sem mest er um vert í trúnni að dómi Jesú. Af þeim dæmum sjáum vér greinilega, að það er trúarþelið, hugarstefnan, sem birtist í trúnni, sem fyrir Jesú er aðalatriðið.

En vér lærum meira af þessum dæmum. Vér sjáum líka af þeim, hvaða hugarstefna, hvernig það trúarþel er, sem Jesús leggur megináherzluna á. Trú hundraðshöfðingjans er traust á mætti Jesú, traust á lækniskrafti hans. Það traust undrast Jesús hjá þessum manni og dást að því. Og mannum segir hann, að það traust hans skuli rætast.

Sama traustið kemur fram hjá konunni heiðnu. Það skín jafnt út úr frásögu Mk. og Mt., þótt frásögnunum að öðru leyti beri ekki alls kostar saman.

En þetta sama traust á hjálp Jesú kemur fram í trú blóðfallssjúku konunnar, samkundustjórans Jairusar og

blinda beiningamannsins við Jerikó. En við alla þessa menn sagði Jesús, að trú þeirra, o: þetta traust til máttar hans og hjálpar, hefði gjört þá heila.

Enda er þetta í fylsta samræmi við upplýsingar þær sem guðspjöllin gefa, að vantrú manna hafi gjört Jesú erfitt eða alls ómögulegt að framkvæma kraftaverk (Mt. 13, 58; Mk. 6, 6). En um þetta geta guðspjöllin í sambandi við móttökur þær, er Jesús fékk í ættborg sinni. Þar vantaði traustið til hans eða til þess að máttur Guðs birtist í honum. —

Þá kem eg að öðru, sem vekur athygli manns, þegar farið er að yfirvega ummæli Jesú um trúna. Það er í hverju Jesús telur enga trú eða litla trú fólga.

Það eru áhyggjurnar, kvíðinn, hræðslan við hættur og bölg og efinn, sem bera að hans dómi vott um litla eða enga trú.

Á Genesaretvatninu álasar Jesús lærisveinum sínum fyrir hræðslu þeirra. Það er líkast því að þeir hafi enga trú, ekkert traust til æðri hjálpar.

Jesús hvetur Jairus samkundustjóra til að vera ekki hræddan, þegar honum er sagt lát dótturinnar. Trú hans á að birtast í því, að hann vantreysti ekki að hjálp sé fáanleg.

Áhyggjur og hugsýki nefnir Jesús í Fjallræðunni litla trú. En áhyggjurnar eru, eins og vér öll vitum, vantraust á Guði.

Í öllum þessum og öðrum svipuðum ummælum er trúin sama sem traust. En traust þetta getur ýmist beinst að Guði, verið guðstraust, eða að Jesú sem traust á mætti hans eða mætti Guðs, sem birtist í honum. Þess vegna er bæði talað um trú á Guð og trú á Krist.

Traustið á Guði á að útiloka allar áhyggjur fyrir fæðu og fatnaði, allan kvíða fyrir hættum og bölg, og alla hræðslu og efasemdir um kærleiksrik afskifti Guðs og handleiðslu.

Jesús setur þessu trausti engin tak-

mörk. Vegna fullvissu hans um takmarkalausa föðurelsku Guðs og almætti Guðs, var honum ómögulegt að setja traustinu nokkur takmörk. Þetta sést af áðurnefndu ummælunum í 9. kap. Mk. guðspj.: »Sá getur alt, sem trúna hefir«. Og líku er haldið fram í Mk. 11 í áðurnefndu ummælunum um bænina, að menn skuli trúna að þeir hafi öðlast það, sem þeir biðja um í bænnum sínum. En hvergi kemur þó ef til vill betur fram, hvað Jesús á við þegar hann talar um trúna, en í ummælum hans um »trú eins og mustarðskorn«. Jafnvel mustarðskornstrúin getur komið ótrúlega miklu til leiðar. Og það stafar af því, að trúin er traust til Guðs, og það sem trúin áorkar er komið undir krafti Guðs, sem er hinn æðsti veruleiki, orsök alls, uppspretta alls máttar og kæruleika. Sá sem er trúaður, lítur ekki á sjálfan sig, eins og það væri undir mætti hans eigin sálar komið, hvort eitthvað gæti átt sér stað eða ekki. Trú hans er í því fólgin, að hann finnur til eigin veikleika, en treystir Guði. Og Jesús heldur því fram, að ef maðurinn að eins eigi mustarðskorn af þessu trausti, þá geti hann hið ótrúlegasta Jesús á þar auðvitað ekki við, að menn eftir eigin geðþótta geti notfært sér undramátt Guðs. Hversu fjarri væri það ekki auðmýktarhugarfari hans, sem beindi huga sínum að hinu himneska, en ekki hinu jarðneska. En Jesús á með orðum sínum um mustarðskornstrúna við það, að almætti Guðs verði engin takmörk sett, og að þeir sem treysti Guði muni öðlast það, sem annars væri með öllu ógerlegt og óhugsanlegt. Eins og Jesús sjálfur frá Guði fékk aðstoð og mátt af því að hann treysti honum, eins krefst hann þess af lærisveinum sínum, að þeir treysti Guði, til þess að þeir fái líka kraft frá sömu uppsprettunni.

2. Ef vér athugum óbein ummæli Jesú um trúna, komumst vér að sömu niðurstöðu.

Vér vitum hve guðstraustið skín út úr allri prédíkun Jesú. Nægir að benda til Fjallræðunnar og mörgu ummælanna þar, sem hvetja menn til að treysta Guði afdráttarlaust.

Öll kenning Jesú um föðurkærleika Guðs fer í þessa átt. Því með þeirri kenningu sinni er Jesús að brýna fyrir mönnum, að afstaða þeirra til Guðs eigi að vera eins og barns til kærleiksriks jarðnesks föður síns. En vér vitum að í því sambandi milli föður og barns er það traustið, sem mest ber á. Barnið treystir föður sínum. Þess vegna er það örugt, óhrætt, ókviðið, efast ekki um að fyrir öllu sé vel séð.

»Yðar himneski faðir veit, að þér þarfnist alls þessa«, segir Jesús í sambandi við jarðneskar nauðpurftir. Og börnin setur hann öðrum til fyrirmyndar, eflaust vegna traustsins, sem mest einkennir barnshugarfarið, barnslundina. »Sannlega segi eg yður: hver sem ekki tekur á móti guðsríki eins og barn, mun alls eigi inn í það koma« (Mk. 10, 15). Hvernig var unt að leggja mönnum nauðsyn guðstraustsins betur á hjarta en með þessum orðum um börnin! —

3. En til þess að ganga úr skugga um, að það sé réttur skilningur á orðum Jesú, að hann í raun og veru leggi megináherzluna á traustið í trúnni, er ein leið enn. Það er athugun á lýsingu guðspjallsheimilda vorra á því, er mesteinkendi trú Jesú sjálfs.

Það má óhætt segja, að Jesús hafi með allri framkomu sinni og líferní sínu kent lærisveinum sínum meira um trúna en með orðum sínum. Og fullyrða má, að guðstraustið hafi öllu öðru fremur einkent alla framkomu Jesú og líferní.

Út úr frásögunni um freistingu Jesú má lesa lýsingu á guðstrausti hans (Mt. 4, 1 n. n.).

Fagnaðarboðskapinn um Guð prédikaði Jesús með öruggri vissu um komu guðsríkis (Mk. 1, 14). Og traustið á æðra mætti kemur fagurlega fram í líkingunni um sæðið, sem vex eins og af sjálfu sér (Mk. 4, 26 n.) og í dæmisögunum um mustarðskornið og súrdeigið (Mt. 13, 31 n.). Og þegar Jesús talar um tálmanir á hjálpræðisleið manna, sem mannlegur máttur sé ekki fær um að yfirbuga, segir

hann alkunnu orðin, sem lýsa hinu óbifanlega guðstrausti hans: »Fyrir mönnum er það ómögulegt, en ekki fyrir Guði; því alt er mögulegt fyrir Guði (Mk. 10, 27).

Jesús er sér þess meðvitandi, að hann framkvæmi kraftaverk sín »með fulltingi Guðs anda« (Mt. 12, 28). Þess vegna leitaði hann styrks frá Guði í bæninni áður en hann byrjaði daglegu störf sín (Mk. 1, 35) og leit biðjandi upp til himins (Mk. 7, 34) áður en hann gjörði máttarverk sín.

Í storminum á vatninu er Jesús öruggur, þótt lærisveinarnir hræðist. Og hann gat ávitað lærisveina sína fyrir litla trú þeirra og hvatt þá til að vera ekki hugsjúkir, en treysta Guði, þar eð hann af eigin reynslu vissi, að óhætt var að trúá á kærleiksríka umönnun Guðs og þess vegna lifði sjálfur í öruggri trúarvissu og trúnaðartrausti.

Ekki kemur guðstraust Jesú síður fram í því, hvernig hann öruggur gengur út á þjáningabrautina (sbr. Mk. 10, 32 n.) og felur sig föðurnum á hönd í þínunni og dauðanum. Engin orð geta betur endurspeglad guðstraust Jesú en orð hans í Getsemanegarði: »Þó ekki sem eg vil, heldur sem þú vilt« (Mk. 14, 36).

En einnig í ummælum Jesú um upphefð hans, upprisu og dýrð hjá Guði, birtist guðstraust hans. Því alstaðar kemur þar fram, að það sem hann verði og gjöri, verði hann og gjöri hann fyrir mátt Guðs og Guði til dýrðar. Bakvið sjálfsvitund Jesú um hina háleitu köllun felst auðmýkt guðstraustsins (sbr. Mk. 10, 40; 13, 32).

Hvort sem litið er á kenningu Jesú, eins og þrjú fyrstu guðspjöllin skýra oss frá henni, eða ályktað er út frá lýsingu þeirra á lunderni og framkomu Jesú sjálfs, verður þá niðurstaðan sú sama: Að traustið sé meginatriði trúarinnur. — — —

En hvað kennir 4. guðspjallið um þetta? Ber Jóhannesar guðspjalli saman við hin

guðspjöllin í þessu, eða er öðru haldið þar fram?

Þeir sem lesið hafa Jóhannesar guðspjall með athygli, munu hafa veitt því eftirtekt, að nafnorðið trú kemur þar alls ekki fyrir. Aftur á móti kemur sögnin að trúa þar þráfaldlega fyrir.

Stundum er talað um að trú a einhverju í merkingunni að viðurkenna það sem sannindi, vera sannfærður um að það sé rétt. Örsjaldan nota samstofna guðspjöllin sögnina í þeirri merkingu (Mk. 13, 21; Mt. 24, 23). En vanalegast notar 4. guðspjallið, eins og hin guðspj., sögnina í annari og dýpri merkingu og talar þá um að trú a á einhvern. Sú trú, sem er hlið til eilífa lífsins, er trúin í þeirri dýpri merkingu, meira en skynsemisviðurkenning og ekki byggð á stundaráhrifum einum. Það sést meðal annars af kröfu Jesú um, að sannir lærisveinar hans standi stöðugir í orði hans (8, 31). Einnig má sjá það af ummælunum í 2. kap. guðspjallsins (24. versi), þar sem sagt er, að Jesús hafi ekki gert þá að trúnaðarmönnum sínum, sem að eins trúðu á hann fyrir táknin, sem hann gjörði. Hin sanna sáluhjálplega trú hvílir, samkvæmt kenningu guðspjallsins, á andlegri og traustari grundvelli. Trúin í dýpri merkingu orðsins felur í sér lífssamfélag við Krist. Að trú a er að koma til Jesú, til þess að öðlast lífið (5, 40), að taka við Jesú (5, 43), veita honum viðtöku (13, 20). »Verið í mér«, segir Jesús, þegar hann er að lýsa afstöðu sinni til lærisveinanna og þeirra til hans með því að líkja sjálfum sér við vínvið, en þeim við vínviðargreinar. Og nánú sambandi milli eilífa lífsins og þekkingar á Guði er haldið fram í alkunnu ummælunum: »En í því er hið eilífa lífið fólgið, að þeir þekki þig, hinn eina sanna Guð, og þann sem þú sendir, Jesúm Krist« (17, 3).

Af þessum ummælum má sjá, að trúnni er í 4. guðspjallinu lýst sem trausti byggðu á elsku og þekkingu. Benda má einnig á ummælin í huggunarræðu Jesú: »Hjarta yðar skelfist ekki; trúið á Guð og trúið á mig« (41, 1). Þarna er trúin gagnstæði hræðslunnar. En vér

vitum að það er trúin sem traust, sem rekur út allan kvíða og hræðslu.

Þessi síðustu ummæli sýna oss, að samkv. kenningu Jesú í Jóh. guðspj. á trúin bæði að beinast að Guði og Jesú sjálfum. Annars er það trúin á Jesú, sem guðspjallið leggur megináherzluna á. Nægir að minna á orðin í 3. kap. guðspjallsins: »Svo elskaði Guð heiminn, að hann gaf sinn eingetinn son, til þess að hver, sem á hann trúir, glattist ekki, heldur hafi eilíft líf« (v. 16). »Sá sem trúir á hann, dæmist ekki« (v. 18), »sá sem trúir á soninn, hefir eilíft líf« (v. 36).

Trúnni er lýst sem hinni andlegu afstöðu til Krists og hins guðdómlega sannleika og kærleika, sem opinberaður er í Kristi. Trú á kenningu hans (5, 38; 8, 45 o. v.); trú á að Guð hafi sent hann (11, 42); á að hann sé í föðurnum og faðirinn í honum (14, 10), að hann sé útgenginn frá Guði (16, 27); á guðssonerni hans og Messíasartign (6, 69; 11, 27; 20, 31) o. s. frv. Þarna er, eins og vér sjáum, farið að leggja áherzluna á trúarkenninguna, sem ekki er gert í samstofna guðspjöllunum. En það er altgjört í þeim tilgangi, að menn gætu treyst Kristi sem opinberara Guðs, sem syninum eingetna, sem Messíasi, og á þann hátt komist í trúarsamfélag við hina æðstu veru.

Trúna á Krist og trúna á Guð var því ekki hægt að aðgreina. Traustið til Jesú, sem hefði orð eilífs lífs (6, 68) og sem væri vegurinn, sannleikurinn og lífið, var trú á starfandi Guð, sem opinberaði kærleika sinn í syninum.

Þótt benda megi á talsverða breytingu á trúarhugtakinu í Jóh. guðspj. í samanburði við samstofna guðspjöllin, staðfestir þó frásögn Jóh. guðspj. vitnisburð eldri guðspjallanna um, að trúin í dýpstu merkingu sé traust, og það leggur áherzlu á, að þetta traust byggist á þekkingu og elsku og leiði til hins innilegasta samfélags við föðurinn og soninn og til eilífa lífsins.

II. Næst verður að líta á, hvað mest hafi einkent trú hinna fyrstu lærisveina Jesú, þeirra, sem með honum höfðu verið.

Peir yfirgáfu alt og fylgdu Jesú. Hvernig getur traustið birzt skýrar en í þeirri lýsingu. Vér nútímamenn ættum best að geta skilið hvað í því felst að yfirgefa heimili sitt og atvinnu til þess að fylgja þeim, sem engin jarðnesk gæði hafði að bjóða lærisveinum sínum, heldur eingöngu himneska fjársjóði. Til þess þurfti takmarkalaust traust, fyrst og fremst traust á Jesú sjálfum, og svo einnig traust til himneska föðursins kærleiksrika, sem Jesús kendi þeim að þekkja og elska.

Auðvitað varð þetta traust hinna fyrstu lærisveina Jesú fyrir miklu áfalli þegar þeir sáu höfuð hins elskaða meistara hniga í dauðanum. En það breyttist algerlega aftur, er þeir sáu Jesús upprisinn. Eftir það varð sannfæringin um að Jesús væri Messías, sem lifði og ríkti við hægri hönd Guðs og sem koma myndi í dýrð frá himnum, grundvöllur trúar þeirra og þungamiðja kenningar þeirra. Lærisveinarnir reyndu að vinna alla, sem ekki höfðu séð Jesús upprisinn, til þessarar trúar.

En þótt hinir kristnu legðu þannig mikla áherzlu á kenninguna um að hinn upprisni Jesús væri hinn fyrirheitni Messías, var þó aðaleinkenni trúar þessins hjá þeim hið sama og Jesús hafði inurætt þeim.

Þetta sést á mörgu. Þeir treysta orðum Jesú og fyrirheitum og gjöra eins og hann hefir sagt þeim (sbr. Post. 1. og 2. kap.). Þeir treysta návist hans meðal þeirra og afskiftum af þeim og hafa ríka tilfinningu fyrir því, að þeir í öllu stæðu undir handleiðslu hans og öðluðust kraft frá honum. Og þeir treysta Guði og eru því öruggir í bænum sínum. —

III. Þá komum vér að þeim mannum, sem mest hefir mótað trúarhugtakið innan kristninnar. Það er *postulinn Páll*.

Páll er hinn mikli postuli trúarinnar. Á ekkert lagði hann jafnmikla áherzlu í kenningu sinni og á trúna. Að vísu hefir hann enga skilgreiningu á trúarhugtakinu, en um trúna talar hann þrífaldlega og skipar henni í önd-

vegi, þegar um hjálpræðið er að ræða, og lætur mikið felast í því hugtaki.

Það sem mest einkennir kenningu Páls um trúna er, að maðurinn er aðeins viðtakandi (Róm. 3, 23. n.). Hjálpræðið er gjöf Guðs, sem maðurinn tekur við með trúnni. »Guð réttlætir hinn óguðlega vegna trúar hans«, eins og Páll sjálfur orðar það (Róm. 4,5). Í trúnni tekur maðurinn á móti gnóttum náðarinnar og réttlætisgjafarinnar« (Róm. 5,17).

Þessa kenningu Páls verðum vér að skýra og skilja með baráttu hans við Gyðingdóm og gyðinglundaða kristindómstefnu í huga. Til þess að brjóta slíkar rangar skoðanir á bak aftur, heldur hann fast fram kenningunni um að »maðurinn réttlætist ekki af lögmálsverkum, heldur aðeins fyrir trú á Jesúm Krist« (Gal. 2, 16). Alt manlegt hrós verður að útiloka. Guði einum ber dýrðin (Róm. 3, 27 n.). Af mannum er einskis krafist nema trúar. Og eins og hjálpræðið er frá Guði, eins er það náð, sem mönnum er veitt fyrir Krists sakir, að trúa (Fil. 1, 29). Trúin er réttlætandi viðtaka náðar Guðs í Kristi. Og trúin sem viðtaka og tileinkun náðar Guðs nær til allra svæða sálarlífsins. Hún nær til skynseminnar sem skilningur á trúarboðskapnum og sannfæring um sögulegar staðreyndir hjálpræðisins. Hún er líka tilfinning, sem birtist í lotningu fyrir Guði og trausti á honum, en ekki á eigin mætti. Og trúin er einnig hlýðni viðfagnaðarerið (Róm. 10, 16). við náð þá, er birtist í Jesú Kristi. Að því leyti er trúin viljaatriði.

Trúin sem tileinkun náðar Guðs í Kristi er eina hjálpræðisskilyrðið og það jafnt fyrir alla. Páli er mikið áhugamál að sannfæra menn um það. Hann berst þar gegn þeim, sem bitið höfðu sig fast í forréttindi Gyðingabjóðarinnar, og töldu einustu hjálpræðisleiðina fyrir alla þá, er ekki voru Gyðingar, að taka fyrst þeirra trú og venjur og á þann hátt verða gæða kristnu trúarinnar aðnjótandi. Gagnvart þessum mönnum heldur Páll því fast fram, að kærleikur Guðs, sem birzt hafi í Kristi Jesú.

Drotni vorum (Róm. 8, 39), sé ætlaður öllum mönnum, án tillits til stöðu, stéttar, kynferðis, mentunar, þjóðernis eða trúarbragða. Skilyrðið sé að eins eitt, hið sama fyrir alla undantekningarlaust. Og þetta skilyrði sé trúin þ. e. að taka við náð Guðs.

En þar eð náð Guðs hefir birzt í Kristi, er kristna trúin samkvæmt kenningu Páls trú á Krist (Róm. 3, 22, 26) og leyndardómsfult samfélag við Krist og Guð fyrir hann. Þessari kærleiksafstöðu trúaðs manns til Guðs og Guðs sonar lýsir Páll víða. Hann talar um að vera í Kristi (2. Kor. 5, 17) og að Jesús Kristur sé í hinum trúðu (2. Kor. 13, 5). Og að hann tali þar út frá eigin reynslu og að meðvitundin um kærleika Guðs og náð, sem hann átti Kristi að þakka, hafi verið rík í huga postulans, sést víða í bréfum hans. En hvergi kemur það þó ef til vill fegur fram en í þessum orðum Galatabréfsins: »Sjálfur lifi eg ekki framar, heldur lifir Kristur í mér. En það sem eg þó enn lifi í holdi, það lifi eg í trúnni á Guðs son, sem elskaði mig og lagði sjálfan sig í sölurnar fyrir mig« (2, 20).

Af þessu sést hve djúpt og víðtækt trúarhugtakið er hjá Páli. Enda eru siðgæðisáhrif trúarinnar mikil eftir kenningu Páls. Trúin starfar í kærleika (Gal. 5, 6) og náði samband milli trúar, vonar og kærleika (1. Kor. 13, 13).

Traustið er einnig hjá Páli einn liður í trúnni, en það sem honum er mest kappsmál að koma mönnum í skilning um, er að allir réttlætist fyrir trúna eina. —

IV. Eftir að hafagjört oss grein fyrir í hvaða merkingu Páll talar um trúna, komum vér að bréfi, sem heimspekilegasta útlistun hefir á því hvað trú sé. Það er *Hebreabréfið*.

Í 1. v. 11. kap. bréfsins er regluleg skilgreining á trúnni. »Trúin er fullvissa um það, sem menn vona, sannfæring um þá hluti, sem eigier auðið að sjá«.

Í þessari skilgreiningu felast tvö atriði. Annað er fullvissan um það, sem menn vona: fullvissa

um að öðlast hjálpræðið, sem maðurinn hefir fest von sína á, sem aftur er sama sem traust til Guðs um uppfyllingu hjálpræðisvonanna. — Hitt atriðið er sannfæring um þá hluti, sem eigi er auðið að sjá 3: sannfæring um veruleika hins andlega og eilífa, sem menn hvorki geta séð né þreifað á.

Hér sjáum vér að vonin er komin inn í trúarhugtakið.

Þetta skilst vel, þegar athugað er ástandið, er þeir menn lifðu undir, sem bréfið var ætlað. Ofsóknir höfðu geislað og nýjar þrengingar voru í vændum (10, 32 n.; 13, 7). Sennilega átti söfnuðurinn líka við villukenningar að stríða. Allar þessar raunir höfðu truflað djörfung margra og sljóleiki (5, 11) og áhugaleysi var farið að gjöra vart við sig. Margir voru farnir að þreytast og hætta fyrir dyrum, að sumir myndu »falla frá lifanda Guði«, eins og komist er að orði í 3. kap. bréfsins (12. v.). Þegar svona stóð á, reið á að hvetja menn til djörfungar og þolinmæði. Það reið á að styrkja trúna í hjörtum lesendanna, svo þeir frá henni mættu fá kraft til að þola og þreyja. Og það er trúin sem sannfæring um uppfyllingu hjálpræðisvonanna sem á að vera aflið í lífi manna þátímans, eins og trúin hafði verið í lífi guðsmanna gamla sáttmálans.

Á þessu sést, að höfundur skoðar trú manna undir gamla og nýja sáttmálanum eins í eðli sínu. Guðsmenn n. t. eru að því einu ólíkir trúmönnum g. t., að þeir hafa þegar séð mörg af fyrirheitunum rætast. En Messiasarhjalpræðið höfðu hvorugir þó öðlast, heldur var þar jafnt fyrir alla um andlag trúarinnar að ræða (11, 39 n.). Hið sérkristilega við trúna kemur hér ekki fram. Hjá Páli er Kristur og hjálpræði hans andlag trúarinnar, í Hebr. er talað um Jesú sem höfund og fullkomnara trúarinnar (12, 2). Hann er þar talinn æðsta fyrirmynd í trúnni. Hann er bezta dæmið upp á fullkomna trú, því vegna trúar sinnar gat hann þolað og liðið alt.

Dæmin í Hebr. og ýms ummæli sýna oss, að höfund-

ur þekkir trúna í viðtækari merkingu en skilgreining hans ber með sér. Því þar er bæði talað um trúna sem hlýðni (11,8) og sem traust á almættiskrafti Guðs (11, 17 n.).

Í fyrra Pétursbréfi er talað um trúna sem jafnframt skyldi vera von til Guðs (1, 21). Viðar í því bréfi er talað um vonina (1,3; 3, 15). Stafar það eflaust eins og í Hebr. af því, að kristnin átti þá við þrengingar að stríða. —

V. Þá verður að nefna *Hirðisbréfin* í þessu sambandi.

Í stað trúar er þar talað um guðhræðslu (1. Tím. 3,16). Og oft er þar talað um kærleika samfara trúnni (1. Tím. 4, 12; 6, 11 o. v.), eins og í Efesusbréfinu (6, 23). Stendur þetta í sambandi við skilning þann á trúnni, sem kemur fram í Hirðisbréfunum. Talað er um að varðveita leyndardóm trúarinnar í hreinni samvizku (1. Tím. 3, 9); að alast upp við orð trúarinnar og góðu kenningarinnar (1. Tím. 4, 6). Kristindómurinn er hin heilnæma kenning (1. Tím. 1, 10 o. v.). Trúin er í því fólgin að halda fast við þá kenningu, halda fast við sannleikann.

Það er í baráttunni við villukennendur, sem trúarhugtakið hefir hér mótast á þessa leið. En þegar trúin er orðin að fastheldni við sannleikskenningu kristindómsins, þá mátti ekki gleymast að setja kærleikann við hlið hennar (2. Tím. 1, 13), til þess að guðhræðslan yrði ekki köld og dauð.

Af svipuðum ástæðum og í Hirðisbréfunum, þó enn greinilegar en þar, er í Júdasarbréfi og síðara Pétursbréfi talað um trúna sem trúarkenninguna. Í Júð. er áminning um að berjast fyrir þeirri trú, sem heilögum hafi eitt skifti fyrir öll verið í hendur seld (v. 3). »Uppbyggjið yður sjálfa á yðar helgustu trú», stendur þar einnig (v. 20). En í byrjun 2. Pét. (1, 1) ávarpar höfundurinn lesendurna sem þá, er hlotið hafi hina sömu dýrmætu trú.

VI. Loks kemur *Jakobsbréfið* til athugunar.

Höfundur þessa bréfs berst gegn þeirri kenningu, að trúin ein, án verka, réttlæti eða geti frelsað nokkurn mann, og heldur því fram, að trúin sé ónýt, sé dauð án verkanna (2, 17 n. n.) og að maðurinn réttlætist af verkum og ekki af trú einni saman (2, 24). Er Abraham tekinn sem dæmi þessu til sönnunar. Er það sama dæmið sem Páll notar (Róm. 4, Gal. 3), en í gagnólikri merkingu. Sést af því, að Jakobsbréfið berst gegn Pálsskoðunum á þessu. En öll röksemdafærslan er þannig, að sjálfur hefði Páll alls ekki getað fundið sig snortinn af henni. Því sjálfur heldur hann því eindregið fram, að trúin eigi að starfa í kærleika (Gal. 5, 6). Allur skoðanamismunurinn stafar af því, að trúarhugtakið hjá Páli og áhangendum hans og í Jakobsbréfinu er gjörólikt. Jak. telur trúna geta verið án verka þ. e. án siðgæðisáhrifa eða hvata. Jafnvel illu andarnir trúa, ɔ: viðurkenna með skelfingu, að Guð sé einn (2, 19). Af því sést að viðurkenning á sannleikskenningu kristindómsins er aðalatriðið í trúnni að skoðun Jakobsbréfsins. Annars kemur orðið trú sjaldan fyrir í Jak.bréfi: Á einum stað í merkingunni trúarsannfæring eða trúnaðartraust (1, 3), á einum stað er talað um trúna á Drottin vorn Jesús Krist (2, 1), og svo er enn fremur talað um að biðja í trú (1, 6), um trúarbæn (5, 15), og er þar átt við traustið.

Jak.bréfið skoðar kristindóminn nýtt lögmál, hið fullkomna lögmál frelsisins (1, 25; 2, 12). Menn verða kristnir við að undirgangast það lögmál og hverjum kristnum manni ber að halda sér við það (1, 25). Allur hugmyndaheimur bréfsins er ólíkur Páli, enda berst bréfið gegn öfgum í Pálsstefnu. En þrátt fyrir það ber bréfið þess ótvíræðan vott, hve gífurleg áhrif trúarboðskapur Páls hafi haft, þótt menn stundum hafi misskilið postulann mikla.

— — —

Af þessu yfirliti sést, að ekki er hægt að benda á neinn sérstakan einn stað í n. t. og segja,

að þar sé trúarhugtakið úttæmt. Af því sést einnig, hve ólíka merkingu hin ýmsu rit n. t. leggja í orðin trú og að trúa.

Í ritum n. t. eru þau orð stundum notuð til þess að tákna trúarþelið, trúarlundina, hugarstefnu þess, er trúna hefir.

Stundum eru þau aftur á móti notuð til þess að tákna trúarandlagið, hverju trúað er, trúarkenninguna, trúarsannindin, trúarhugmyndirnar.

Það varðar ekki litlu, hvort af þessu tvennu er metið mest, trúarlundin eða trúarsannindin, þótt hvorttveggja auðvitað heyri trúarhugtakinu til.

Að Jesús sjálfur hafi metið trúarlundina meira en trúarkenninguna, virðist mér ómótmælanlegt. Samkvæmt kenningu Jesú er traustið það sem mest er um vert í trúnni. Traustið er sú hugarstefna, sem að hans dómi leiðir hina ótrúlegustu blessunarstrauma yfir mennina og gjörir Guði, sem alt megnar, unt að veita mönnunum gjafir sínar í svo ríkjum mæli, að mannlegum skilningi er ofvaxið að gjöra sér þess grein.

Hinir fyrstu lærisveinar öðluðust trúna sem slíkt óbifanlegt guðstraust fyrir áhrif Jesú. Að Jesú laðast þeir; honum fylgja þeir; fyrir hans áhrif þroskast þeir æ betur og betur í guðstraustinu. Þess vegna er eðlilegt, að traustið til Jesú yrði fyrir þeim grundvöllur guðstraustsins. Trúin á Guð og trúin á Guðs eingetna soninn hlaut að fylgjast að hjá þeim. Gæti einhver ekki trúað á soninn, gat hann heldur ekki trúað á föðurinn, sem sonurinn hafði opinberað. Því fyrir Jesúm Krist kom náðin og sannleikurinn, eins og Jóh.guðspjall fagurlega kemst að orði.

Smátt og smátt breyttist trúarhugtakið síðan. Lífið sjálft mótaði það eftir því sem tímarnir breyttust.

Þáll stendur uppi í strangri baráttu við þá, er gagnsýrðir voru af verkaréttlætishugsunarhætti Gyðingdómsins og hugmyndunum um forréttindi Gyðingapjóðarinnar. —

Hvað var eðlilegra, en að trúarhugtak hans að ýmsu leyti mótaðist af þeirri baráttu.

Síðar eiga kristnir menn við allekonar þrengingar og þrautir að stríða. Þá reið á að þreyja með þolinmæði og missa ekki vonina um, að leið kristinna manna lægi til guðsríkis gegnum þrautirnar (Post. 14, 22) og að þeir komnir »úr þrengingunni miklu« fengju að vera »frammi fyrir háseti Guðs og þjóna honum dag og nótt í musteri hans« (Opinb. Jóh. 7, 14 n). Þegar svo var ástatt var eðlilegt, að trúarhugtakið þyrfti líka að ná yfir vonina.

En önnur hætta vofði líka yfir kristnum mönnum, sem þeir hræddust meir en alt annað. Það voru villukenningarnar, sem trufla æludu söfnuðina svo við ekkert yrði ráðið. Þá var farið að leggja megináherzluna á trúarkenninguna, á sannleikskenningu kristindómsins og trúna sem viðurkenningu þeirra sanninda.

Þegar vér skoðum ummæli hinna ýmsu rita n. t. í ljósi sögunnar, sögu samtímans, veitir oss létt að skilja breytingar þær, sem verða á trúarhugtakinu í n. t. ritunum. Þær breytingar standa í sambandi við ástand safnaðanna á hinum ýmsu stöðum og ýmsu tímum og eru knúðar fram af innri og ytri ástæðum.

Það er bæði fróðlegt og þarft að gera sér grein fyrir þessu

En jafnframt verður fyrir oss spurningin:

Á hvað í trúnni á vor tími að leggja mesta áherzluna, leggja mesta rækt við?

Það er mikilvæg spurning, sem ekki er lítilsvert að rétt sé svarað. Það er mikilvæg spurning fyrir kennimenn hvers lands og einnig fyrir söfnuðina. Því trúarlíf þjóðanna mótask eðlilega á hverjum tíma í samræmi við skilning þeirra á trúarhugtakinu.

Þess vegna er mikilsvert fyrir oss, bæði presta og leikmenn, að oss skiljist rétt, hvernig svara eigi spurningunni: Við hvað í trúnni eigum vér nú tíðar Íslendingar að leggja mesta rækt?

Eg býst við, að mönnum af því, sem eg hér á undan

hefi sagt, sé ljóst, hvernig svar mitt sé, og eg vona, að flest yðar, sem hér eru viðstödd, séuð mér fyllilega sam-mála, er eg orða svar mitt á þessa leið:

Vér eigum að leggja megináherzluna á trúarþelið og mesta rækt við trúna sem traust.

Ástæðurnar fyrir þeirri ályktun eru tvær og báðar vona eg að reynist góðar og gildar.

Önnur er sú, að þetta er í samræmi við kenningu og dæmi Jesú sjálfs, eins og eg að undanfögnu hefi verið að leitast við að sýna fram á. En eg býst við, að ekki þurfi að rökstyðja það fyrir kristinni prestastétt og kristnum söfnuði, að sjálfsagt sé að hallast að kenningu Jesú sjálfs öllu öðru fremur. Vandinn er þar að eins sá að vita og skilja rétt, hvað hann lagði í orð sín og ummæli. Um hitt ætti enginn ágreiningur að geta verið, að oss beri að leggja mesta rækt við það, sem hann lagði megináherzlu á í hverju sem er.

Þetta var aðalástæðan fyrir því, hvernig eg svara spurningunni fyrirnefndu.

En hin ástæðan er, að mér getur ekki dulist, að vorir timar þarfnast einkis frammar en trausts í trú sinni.

Flest hefir á síðustu tímum beinst að því, að fá menn til að treysta sjálfum sér, viti sínu, kröftum sínum, vélum sínum og vopnum. Þótt menn hafi ekki viljað láta þá andastefnu fá yfirráð yfir sér, hefir þó hugur margra að meira eða minna leyti heillast inn á þær brautir. En hvernig gæti hugur manna heillast í þá átt, án þess að það dragi úr trausti þeirra til æðri máttar og æðri hand-leiðslu.

Einkis þarfnast því nútíminn meir en traustsins á æðri hjálp, á ósýnilegu umhverfi, til kærleiksríkrar æðstu veru, sem alt megnar.

Guðstraustið og Kriststraustið er hin frels-andi trú. Því að af traustinu leiðir alt annað, sem felst í trúarhugtaki voru. Traustið leiðir til þess, að maðurinn

sé fús á að veita náð Guðs viðtöku og tileinka sér hana á sem fullkomnastan hátt. Traustið leiðir til samfélags við hina æðstu veru. En þar sem maðurinn með trausti lotningar og elsku hefir opnað hug sinn fyrir náð Guðs og leitað samfélags við hann, þar mun naumast hætt við að löngun vanti og áhuga á að kynnast opinberun Guðs eins og hún birtist fullkomnast í Jesú Kristi og leita sér sem fullkomnastrar þekkingar og rétts skilnings á því, sem er andlag trúarinnar.

Leggjum því stund á að traustið til Guðs í Kristi verði meginpátturinn í trúarlífi vor allra.

»Beinum sjónum vorum til Jesú, höfundar og fullkomnara trúarinnar« (Hebr. 12, 2), og leitumst við að gjöra oss svo minnisstæð að þau gleymist aldrei síðar í lífinu þessi ósegjanlega mikilvægu og huggunarriku orð hans: »Alt er mögulegt fyrir Guði« (Mk. 10, 27), »sá getur alt, sem trúna hefir« (Mk. 9, 23).

Bruni.

Húsið var afskekt, — ilt að leigja.
En á sköttum var lítil sveigja.
Bölvans árferði á alla lund.
Þetta var gisinn gargans hjallur,
gluggaskældur og dyrahallur,
rottukastali og rakadallur.

Kjallarans ætt var ilt að pola,
og efsta loftið var »spólu« hola;
stopul afgjöld, en stöðugt þrusk.
Miðlofts ágóðann árinna hirði:
Uppgjafa-sýsli, landsins byrði,
sem engum borgaði eyrisvirði.

Eflaust vefengja enginn þyrði
að eigandans neyð var jötunbyrði.
Fjármálasorti og ráðlaust rangl.
Því varð tunglskyn í tómlætinu,
er tók hann fyrst eftir snjallræðinu,
andvökunótt í náttmyrkrinu.

Honum virtist sem »vátryggingin«
vildi ólm að þau »settu upp hringinn«.
Hún var brosandí og hneigði sig:
»Komdu nú burt frá þrautum þínum,
þigðu' af mér staup af lánsins vínun:.
svalaðu þér á sjóðum mínum«.

Þá var lagt út í laumuspilið;
lýsi jóðlað um neðsta þilið. —
Nú kom svitinn og hik og hlé.
Aumkvun hjalaði' um hugarranninn
að hart væri að leika suma þanninn.
Þótt syndlaust væri með sýslumanninn.

»En það er nú svona, guð minn góður,
eg get ekki þolað klafa' og tjóður,
skuldir, refjar og rottugang.
Slepp eg ekki' inn í englaskara,
þótt altsaman hyskið láti' eg fara?
Þú ætlast fráleitt til fyrirvara«.

Stormur var úti', en stilt var inni,
og steinhljóð algert hjá forsjóninni.
Máninn skimaði' um skýja göt.
Harflandi ljós með hvími' og rjáli
hvísalaði að spónum leyndarmáli. —
Og húsið var alt í björtu báli.

I bruna hafði menn lengi langað,
svo lýðurinn allur hentist þangað. —
Einsamall slapp þar eigandinn.
En hér var mannlífsins happavegur
hálfvegis talinn grunsamlegur.
Í augu horfðist sá »hólpni« tregur.

Það er garður með örlög-ísa,
er öldur grunsemda í mágum rísa
og svella umhverfis sekan mann.
Þá eru ónýtt öll hans vígi.
Úthaldslaus verður hverskyns lýgi
og viljans tæring á versta stigi.

Að dýrindis »æra« dytti í mola
og dýflissuna var fært við að pola.
Hitt varð kveljandi kvíðapraut,
sem háði' onum allan æfiveginn:
að yrði sál hans í þrætur dregin
við sýslumannshrokann — hinu megin.

Jakob Thorarensen.

Í rökkrinu.

Það var seint á þorra. Látum okkur sjá — — —. Jú, það eru fjögur ár síðan. Eg hafði tekið að mér að fylgja henni Helgu frá Borgarhjáleigu í kaupstaðinn. Hún ætlaði að setjast þar á saumastofu. Færi var allgott á heiðinni og gekk okkur ferðin vel.

Um kvöldið skilaði eg stúlkunni í réttar hendur.

Daginn eftir hélt eg heimleiðis.

Eg hafði átt ýmsum smáerindum að gegna fyrir hina og þessa, svo eg komst ekki snemma af stað.

Veðrið var að breytast.

Það var ritjuveður uppi á heiðinni og allmikið frost. Eg fann brátt að eg var óviss um rétta leið. Að visu var hún vörðuð, en vörðurnar voru flestar á kafi í snjó. Veðrið fór versnandi. Degi var tekið að halla, og þegar náttmyrkrið gekk í lið með hriðinni, þá vissi eg alls ekki hvar eg fór.

Þá sá eg ljós álangdar. Eg stefndi á ljósið og hitti bæinn. En eg hafði vilst töluvert, því glugginn sem eg guðaði á var stofuglugginn á Bjargi.

Þar sátu piltar við spil. Presturinn var þar næturgestur.

Þeir kváðu mig heppinn, því nú væri liðið á nóttu og mundu óviða loga ljós.

Bóndi fór með mig í búrið og gaf mér að borða og vísaði mér síðan til sængur.

Eg sofnaði fljótt.

Það var mesta rugl sem mig dreymdi og man eg fæst

af því nema það að stór hundur sótti að mér og beit mig í fótinn.

Eg hrökk upp.

Eg fann það að mig sárkendi til í stóru tanni. Eg reis upp og skoðaði fótinn.

Stóra táin var kalin og hin næsta líka!

Brátt kom konan með kaffið.

Eg sagði henni hvar komið var.

Henni varð bilt við og bauð að senda eftir lækni.

Því tók eg með þökkum.

Læknirinn kom á fjórða degi. Hann dæmdi báðar tærnar til dauða. En eg slapp með að missa hálfa aðra.

Eg samdi um það að fá að vera þarna þangað til mér batnaði. Var það auðfengið.

Mér leiddist brátt að liggja og haltraði því um bæinn jafnskjótt og eg þoldi það.

Heimilið var fremur dauflegt.

Fátt var þar bóka, nema nokkrar gamlar bækur sem móðir konunnar átti. Hún var við aldur og var henni þungfært. Sat hún oftast í herbergi sínu. Þar komu fáir nema börn hjónanna. Gamla konan léði mér fúslega bækur sínar. Var hún einnig fús til þess að ræða efni þeirra. Á þennan hátt urðum við málkunnug. Sátum við oft á tali og fann eg að hún var skýr kona og kunni glögga grein á mörgu.

Um einmánaðarkomu tók tíðin að breytast. Hlákur komu. Snjóá leysti svo jörð varð auð. Þá komu einmuna bliðviðri.

Mér varð þá órótt inni.

Eg fór að smá koma út og litast um, því eg var lítt kunnugur þarna

Mér þótti fallett á Bjargi.

Íbúðarhúsið var nýbygt og stóð nokkuð fjarri rústum gamla bæjarins. Frá honum lá hallandi grund upp undir bjargið. Þá tók við brött brekka og loks Bjargið sjálft. Viða höfðu skriður fallið úr því niður brekkuna og auðsjáanlega langt niður eftir grundinni. En hún hafði sjálfsagt verið rudd.

Á miðri grundinni stóð þó steinn einn mikill, ekki allhár, en sléttur vel og nærri reglulegur teningur það sem stóð úr jörðu.

Við hann hafði mannsaflið ekki ráðið.

Því hélt hann sínu sæti.

Eg settist sólarmegin við steininn og hvíldi mig um stund. Svo stóð eg upp og ætlaði að hverfa heim aftur. Eg stóð þó við og fór að virða fyrir mér steininn í hugsunarleysi. Þá sá eg að eitthvað hafði verið krotað á eina hlið hans.

Eg aðgætti þetta betur og sá að það voru stafirnir H. og S.

Það var að koma kul.

Eg snéri heim aftur og gekk inn, lagðist útaf og sofnaði.

Eg vaknaði við hávaðann í börnunum.

Það var meira en hálförökkvað.

Eg haltraði upp til gömlu konunnar.

Hún sat með prjónana sína og raulaði lágt.

Eg hefi verið úti í dag, sagði eg, eg var að skoða mig um hérna í kring. Það er annars fallett hérna á Bjargi.

Já, hér er fallett. Eg hefi ekki komið víða, en mér þykir hvergi falletgra en hér, sagði hún.

Eg gekk hérna upp að stóra steininum á grundinni. Það er fallett steinn. Mér sýndist það vera stafir á honum.

Stafir Já, það áttu að vera stafir. Eg hélt nú að fáir mundu taka eftir þeim eða þekkja þá. Það voru lítt æfðar hendur sem gerðu þá.

Nú já, þér vitið auðvitað hver hefir grafið þá.

Já. Eg ætti að vita hverjir unnu það verk.

Segið mér það. Viljið þér það ekki? Segið mér eitt-hvað um þennan stein.

Hún þagði.

Ef til vill liggur þar saga á bak við. Eg hefi svo fjarska gaman af sögum.

Hún leit niður á þrjónana, varp öndinni, leit upp aftur og sagði:

Ef til vill gæti það verið saga.

Hún þagnaði aftur.

. . . Þér hafið svo oft stytt mér stundir. —

Eg Mér fellur vel við yður. — Já, eg ætla að segja yður sögu stafanna.

— — —

Þegar foreldrar mínir bjuggu hér, höfðu þau einu sinni húsmenskufólk. Það voru fátæk hjón.

Þau áttu einn dreng. Hann var þá átta ára. Eg var einu ári eldri.

Hér voru þá ekki önnur börn en við Halldór litli. Við lékum okkur alltaf saman. Langoftast vorum við hjá þessum steini. Hann var alt mögulegt. Stundum var hann kirkja, stundum kaupstaður, en oftast bærinn okkar. Eg ætla ekki að fara að fjölyrða um leikina okkar. Það mun hafa verið svipað með þá eins og leiki annara barna á okkar reki — eftirmynd af lífi fullorðna fólksins.

Jæja. Eg ætlaði ekki að segja langa sögu.

Sumarið leið. Og veturinn leið líka. Vorið var undur gott. Alauð jörð og blíður á hverjum degi eins og núna.

Við lékum okkur úti allan liðlangan daginn.

Einn dag sagði Dóri:

Bráðum kemur krossmessan. Þá förum við — pabbi og mamma og eg — langt, langt burtu — til síra Jóns á Felli.

Er það satt? sagði eg og fann að mér þótti miður.

Satt. Já, vist er það satt.

Þú átt ekkert að vera að fara.

Eg vil líka vera kyr. Eg vil helst ekki fara til prestsins. Eg er hræddur við presta.

Þú kemur að finna okkur, sagði eg.

Já, það skal eg gera.

En — ef þú færð nú ekki að fara?

Ja, þá kem eg þegar eg er orðinn stór.

Svo þögðum við bæði.

En þú verður að sjá um bæinn okkar þegar eg er farinn. Enginn — ekki nokkur lifandi maður má eiga hann nema við ein.

Það leið að krossmessunni.

Dagana fyrir hana krotaði hann þessa stafi á steininn. Það voru stafirnir okkar beggja. Hann hafði verið með piltunum um vorið þegar þeir voru að höggva stafi á landamerkjasteina.

— — —

Svo fóru þau til síra Jóns. Það var langur vegur eins og þér vitið.

Mér leiddist oft um sumarið. Stundum var eg að hugsa um hvort Dóri mundi ekki koma þennan eða þennan sunnudag.

En hann kom ekki.

Þá þóttist eg viss um það, að hann kæmi um haustið. En þá kom hann ekki heldur. Eg held eg hafi aldrei komið að steininum um veturinn. Og eg held eg hafi sjaldan hugsað um samveru okkar næstu árin.

Svo var það á hvítasunnunni vorið áður en eg var fermd að eg hitti Dóra og foreldra hans við kirkju í okkar sókn.

Við vorum bæði glöð. En þegar eg hugsaði um það á heimleiðinni, fanst mér það ekki hafa verið neitt gaman.

Daginn eftir sat eg um stund hjá steininum og virti fyrir mér stafina. Nú þótti mér þeir ekki nógu fallegir.

Eg skauzt inn í smiðju og tók meitil og hamar og fór að reyna að bæta um þá. En eg var ekki sem lægnust við það og tókst víst ekki vel. Svo kom pabbi utan túnið. Þá varð eg hrædd, hljóp heim og lét verkfærin á sinn stað.

Árin liðu. Dóri var altaf hjá prestinum.

Eg sat heima.

Eg heyrði það á tali manna að hann væri altaf að læra hjá prestinum og að hann þætti bráðgáfaður. Svo var sagt að séra Jón ætlaði að kosta hann í skóla.

Þá kemur hann víst aldrei hingað, hugsaði eg. Dóri fór í latínuskólann. Hann fór líka í prestaskólann. »Sira Jóni ferst vel við þennan dreng«, sögðu menn. »Svo kvað hann ætla að kóróna alt með því að gefa honum dóttur sína«.

Eg held að mér hafi verið einna minst gefið um, að hlusta á tal manna um það. Mig langaði til að sjá hann, en hálfkveið þó fyrir því.

Hann þekkir mig víst ekki, hugsaði eg, og svo er hann sjálf sagt svo finn og lærður, eg verð feimin við hann.

Eg fór að reyna að afla mér bóka. Helzt urðu það ljóðabækur. Lang vænst þótti mér um kvæði Jónasar. En eg lærði þó einnig nokkuð af kvæðum hinna skáldanna.

— — —
Svo var það einn dag, sumarið eftir harða veturinn, að eg var ein heima.

Þá var barið að dyrum.

Eg gekk til dyra. Úti stóð vel búinn ungur maður og heilsaði.

Svo brosti hann og sagði: Þetta er víst Sigga? Já — það hlýtur að vera.

Mér hitnaði. Hver eruð þér?

Þekkir þú mig ekki? Manstu ekki eftir Dóra, sagði hann og hló.

Jú. Þarna var hann kominn. Eg kannaðist við svipinn.

Gerið þér svo vel og koma inn.

Eg þakka — en Sigga — þeraðu mig ekki um fram alla muni. — Eg ætlaði annars að finna föður þinn.

Eg sagði að hann kæmi bráðlega heim með heylest. Halldór sagðist hafa orðið fyrir því slysi, að hesturinn sinn hefði helzt og vildi hann leita ráða til föður míns um meiðslið því hann vissi að hann var hestamaður.

Nú sá eg að hann hafði gullhring á hægri hendi. Eg óskaði honum til hamingju. Mér fanst feimnin í mér minka við þessa uppgötvun.

Hann nefndi unnustuna. Það var Guðrún dóttir síra Jóns.

Hann masaði um alt mögulegt. Eg man nú fæst af því. Hann var svo spilandi kátur og lét aldrei verða hlé á viðræðunni.

Svo kom pabbi og þeir tóku tal um hestinn.

Föður mínum leizt illa á meiðslið. Kvaðst hann ekkert geta gert við því að svo stöddu, og ekki geta fylgt honum, fyrri en síðdegis næsta dag. En þá skyldi hann skila honum alla leið, heim að rúmstokk unnustunnar, sagði gamli maðurinn og hló. Halldór taldi fyrst vandkvæði á þessu, en þáði þó þessi boð bráðlega.

Við vorum svo ein saman það sem eftir var dagsins. Hann komst fljótt að því hvað eg hafði helzt lesið og talið snerist oftast um ljóð.

Svo stakk hann upp á því, að við skyldum fara og skoða »bæinn okkar«.

Við gengum þangað. Það var svo undurfagurt úti það kvöld.

Hann skoðaði stafina á steininum.

Eg fann að mér var ekki um það.

Alt í einu sagði hann: Þeim hefir verið breytt. — Þeir hafa verið lagaðir. Svona fallegir voru þeir víst ekki eftir mig Hver hefir gert það?

Eg svaraði ekki samstundis.

Þú hefir gert það, sagði hann hálfhissa og leit á mig.

Eg var að horfa á sólarlagið.

Það var fallega gert af þér, sagði hann lægra.

Eg man varla eftir því. Eg hefi samt líklega gert það.

Við þögðum litla stund.

Það er ekki undarlegt þó skáldin yrki fagurt um náttúruna á Íslandi, sagði eg til þess að rjúfa þögnina.

Já, það er margt snildarlega sagt um það hjá skáldunum okkar, svaraði hann.

Eg gat þess að mér líkaði ekki náttúrukveðskapur neins skálds eins vel og Jónasar.

Því trúir eg vel. Á eg að segja þér hvað einn skóla-

bróðir minn sagði einu sinni við mig: »Snildin í náttúrukvæðum Jónasar er sjálfsagt mikið því að þakka að hann orti þau úti — undir beru lofti og blikandi sól. Það er veggjakreppa og stofuþefur af kvæðum nýrra skáldanna — þessum kvæðum sem verða til við skrifborðið — því ná þau aldrei öðrum eins tökum á okkur«.

Eg félst á þetta.

En mín skoðun er sú, sagði hann og rétti alt í einu úr sér, að allra fegurstu ljóðin séu þau sem eru óort — óskrifuð. Göfgustu tónarnir svo lágir og mjúkir, að vér höfum ekki náð þeim. — Og svo er annað — þú dáist að náttúrunni nú, í hásumarskrúðanum — það geri eg líka. En — samt þykir mér allra fegurst á vetrinn, þegar snjórin, tárhreinn og mjallahvítur hylur grund og dal.

Og veiztu hvers vegna?

Þá sé eg í huga mínum hina hátignarlegustu sumar-dýrð — og öll fegurstu blómin sem eru óspröttin. — Þau sem komandi vor veku til lífs — en fyrst og fremst þau sem — aldrei munu spretta.

Eg varð hálf-forviða. Hann sagði þetta einhvern veginn svo undarlega.

Eg held þú sért skáld, sagði eg og reyndi að brosa.

Við erum öll skáld að meira eða minna leyti sagði hann og brosti líka. Sumar hugsanir eiga að eins ekki því láni að fagna að vinna sér til fata . . . Annars orti eg stundum vísur á fyrstu skólaárum mínum. Nú veit eg ekki hvað langt er síðan eg hefi reynt það.

Það var skaði að þú hættir því, sagði eg. Reyndu nú að yrkja kvæði um »bæinn okkar« og lestu það svo upp hér á steininum fyrir mér á morgun, bætti eg við hlæjandi og bjóst til þess að ganga heim á leið.

Það yrði þá að vera þakkarljóð til þín, fyrir það hve ágætlega þú hefir gætt hans öll þessi ár.

Yrk þú að eins kvæðið. Efninu ræður þú auðvitað sjálfur, sagði eg, um leið og við fórum inn í bæinn.

— — —

Engjafólkið var að koma. Eg hafði nóg að snúast, bæði að skamta því og hirða plögg. Eg sendi vinnukonu til Halldórs með matinn.

Svo var gengið til náða.

En eg gat ekki sofnað.

Og eg heyrði alt af gengið um gólf í stofunni.

Eg lét vinnukonuna líka standa honum fyrir beina morguninn eftir.

Hirðingin gekk fljótara en pabbi bjóst við og þeir ákváðu að leggja af stað um hádegi.

Eg gekk upp að steininum þegar eg vissi að þeir ætluðu að fara að kveðja.

Halldór kom þangað.

Hann var ekki eins röskur og glaðlegur eins og daginn áður.

Hann dró lokað bréf upp úr vasa sínum.

Eg fann að eg roðnaði.

Sigríður, sagði hann, þetta bréf er til þín, en eg afhendi þér það með einu skilyrði. Þú skalt ekki opna það fyr en seinna, helzt ekki fyr en eftir mörg ár. Eða — ef þú lifir mig, þá þegar þú fréttir lát mitt.

Já, sagði eg, en eg veit ekki hvort það heyrðist.

Svo rétti hann mér hendina.

Vertu sæl, sagði hann.

Við tókumst í hendur.

Hans var köld. Min var víst nokkuð heit.

*

*

*

Gamla konan þagnaði.

Það var dagsett. Samt hafði birt í herberginu. — Tunglið var komið upp.

Er sagan lengri? sagði eg lágt.

Eg sá hann ekki eftir þetta. Hann giftist og varð prestur fyrir vestan. Eg frétti lítið þaðan.

Svo liðu fimm ár.

Eg átti tvisvar kost á að giftast, en hafnaði því.

Svo kom hann hingað, maðurinn minn sálaði.

Faðir minn vildi að eg ætti hann.

Mér geðjaðist vel að honum. Hann var valmenni og þrúðmenni.

En eg var hikandi. Eg skoðaði hann alt af eins og góðan vin.

Svo lagðist pabbi veikur í síðasta sinni.

Við trúlofuðumst við banasæng hans.

Honum var það til mikillar gleði.

Um sláttarlokin giftumst við.

Viku seiona komu fréttir að vestan.

Kona Halldórs hafði dáið úr brjóstveiki þá um sumarið.

Kvöldið sem eg frétti þetta, opnaði eg bréfið.

— — —

Gamla konan var staðin upp. Hún studdi annari hendinni á rúmstöpulinn, en lyfti hinni nokkuð upp.

Mér sýndist glampi í augunum.

Hvað haldið þér að hafi staðið í bréfinu?

Mér finst eg muni geta farið nærri um það, sagði eg.

Nei. Þér farið ekkert nærri um það.

Þér hafið ekki minnstu hugmynd um það, sagði hún með ákafa.

Eg þagði.

Það stóð ekkert í bréfinu. —

Ekki eitt einasta orð var þar. Að eins fingerð sam-
anbrotin pappírsörk. Tárhrein og hvít — eins og ný-
fallin mjöll.

Skiljið þér það?

Nei. Eg skildi það ekki.

En nú finst mér eg muni skilja það.

Einar S. Frimann.

Þjóðfélag og þegn.

Mærkelig nok trængetur Alles Ret langt mere til Værn end de Enkeltes.

Svend Høgsbro.

Sambandið milli þegns og þjóðfélags er orðið mjög margþætt hjá öllum menningarþjóðum, og það vafalaust um of til þess, að afstaða þeirra geti verið skýr í meðvitund alls almennings. Til þess að greiða fyrir umhugsun og skilningi á þeirri afstöðu, er nauðsynlegt að rekja sundur alla þá þætti, sem um er að ræða, og athuga hvern fyrir sig. Neitað verður því ekki, að um ýmsa af þessum þáttum hefir mikið verið rætt og ritað sérstaklega, t. d. hina »politisku« afstöðu, réttarfarsafstöðuna o. s. frv. en hin beina fjárhagslega afstaða hefir miklu sjaldnar verið einangruð, svo hugmyndir manna um eðli og rétt á því sviðinu eru mjög á reiki. En með fjárhagslegri afstöðu er hér átt við þær gjaldakröfur, sem þessir tveir aðilar — þjóðfélag og þegn — geta átt hvor á annan að réttu lagi.

Hér skal nú reynt að varpa ljósi yfir þessa hlið málsins með beinni hliðsjón af skattaskipulagi landsins, því það gefur bezta hugmynd um þá afstöðu, sem nú er í þessu efni. Verður ekki hjá komist að taka það fyrst til ítarlegrar yfirvegunar til að þekkja sem best einkenni þess og stefnumörk.

Það er þá strax eftirtektavert, að með hverju ári fjölga þeim mönnum, sem gera skattamál landsins að opinberu umræðuefni. Bendir það til þess, að allrík óánægja muni vera með þær skattastefnur og álöguaðferðir, sem hér gætir mest, því síður gera menn slík mál

að umtalsefni, ef geðfeld þykja, heldur en ef þeim virðist ábótavant að þeirra áliti.

Þó litt falli saman úrlausnir eða breytingatillögur þeirra, sem um þessi málefni hafa fjallað upp á síðkastið, þá eiga þær þó sammerkt í því, að þeim er ekki ætlað annað né meira en að vera smábætur hér og þar, þegar göt hafa komið á þann þrönga stakk, sem skattaheimtu landsins var sniðinn, rétt eftir að það fekk fjárforráð (sbr. álit skattanefndar frá 1877)

Síðan þá hefir hverri »bótinni« verið bætt ofan á aðra, án þess nokkur grundvallarregla hafi skapast fyrir því, með hvaða aðferðum bæri að hefja fé til almennra þarfa, né hverjir það ætti að greiða að réttu lagi¹⁾. Á bug við þessi atriði hefir verið gengið, bæði hér og annarstaðar, með því að hafa skattstofnana sem flesta og margbrotnasta, svo þannig liti út, eins og öllum væri gert sem jafnast undir höfði, en hámarki sinu hefir þó þessi skattadreifingarstefna náð þar, sem óbeinir skattar eða tollar skipa öndvegið í fjárlögunum. Sú álöguaðferð er handhæg og sæmilega örugg til að gefa góðar tekjur, en öruggust þó til að blinda öllum þorra manna sýn um það, á hvern hátt þeir eru látnir gjalda fé til almennra þarfa, án þess að vita um, og þetta hefir gert aðferðina vinsæla bæði hjá þeim, sem hafa haft þau vandamál á höndum, að kveða á um skattaálögur, og eins þeim mörgu gjaldendum, sem er sárast um þau útgjöld, sem greiðast beint úr vasanum.

Þó virðist eins og á seinni árum hafi hjá æ fleirum kviknað efi um það, hvort þetta væri farsæl skattastefna. Má meðal annars marka þetta af því, að hjá flestum þeim, sem um málið hafa rætt eða ritað opinberlega hin síðari ár, koma fram andmæli gegn tollastefnunni. Hníga því

¹⁾ Skattanefndin frá 1908 lagði að vísu nekkurn grundvöll að skattaskipulagi, en hvorttveggja var, að sá grundvöllur var margbrotinn og ósamstæður, og hinsvegar náðu ekki sumar þær tillögurnar fram að ganga, sem mest réttarbót var að.

tillögur flestra þeirra að því að hafa skattana fremur beinar álögur á eignir og tekjur. En þar eð þeir hafa ekki færst í fang að kryfja málið til mergjar, þá ná tillögurnar skamt bæði í fjárhagslegu tilliti og eins í því, að færa skattgreiðsluna á réttar hendur. Á meðan ekki er sýnt fram á, hvernig meginhluti þeirra tekna, sem tollarnir gefa í landssjóð, geta færst yfir á beina skattstofna, verða óákveðin ummæli, og tillögur um smátílfærslur á fleiri skattstofna, að skoðast sem kák eitt, sem að eins geri skattamálaflækjuna margbrotnari og erfiðari úrlausnar.

Slíkar tillögur um tílfærslur eru og eðlilega svo ósamhljóða, að reynslan sýnir, að þær geta ekki náð fram að ganga, nema með afslætti og milligjöfum, sem ef til vill eyðileggja hið helzta, sem við þær væri að virða — jafnvel mikinn hluta teknanna líka, svo niðurstaðan getur orðið, að fram komi nýr skattstofn, sem auki fyrirhöfn og umstang, en gefi lítið í aðra hönd.

Þetta gefur útskýring á því, að tollastefnan heldur gengi sínu í skattalöggjöfinni þrátt fyrir ýms andmæli og góðan vilja einstakra manna til að vinna á móti henni.

Þó nú þeirra radda kunni að gæta meira opinberlega, sem telja beina skatta betri álöguaðferð, er með því engin veginn leitt í ljós, eða sannað, að sú stefna ætti almennum vinsældum að fagna hér, ef á reynðist rað, á meðan þjóðin er ekki betur upplýst í þjóðhagsmálefnum, né um skyldur hins einstaka við þegnfélagið, en raun er á. — Sem von er til um jafn fámenna þjóð er um litlar bókmentir að ræða í þeim efnum á íslenzku, og sízt í nokkurri samsvörun við núverandi ástand og aldarhátt, enda gætir þess mjög í ritum þeirra manna, sem fundið hafa köllun hjá sér til að gerast leiðtogar í þessum efnum í dagblöðunum, að þeim hefir með öllu verið ókunnugt um nýrri tíma stefnur í skattamálum. Þarf það ekki að vera sprottið af því, að þeir sömu menn sé þröngsýnir í sköðunum yfirleitt, en þar eð þeir virðast ekki þekkja þær grundvallarreglur, sem málsmetandi þjóðmegunarfræð-

ingar útlendir telja frumskilyrði allra endurbóta í skattamálum, þá er ekki furða, þó tillögur þeirra verði á við og dreif og því litill leiðarvisir fyrir þá, sem vilja afla sér sjálfstæðrar skoðunar og þekkingar á jafn mikilsverðu málefni og skattamálið er. Er því ekki að undra, þótt litilli þekkingu sé fyrir að fara í þessum efnum hjá islenzkri alþýðu, á meðan henni gefst ekki kostur á að kynnast öðru, en meira og minna úreltum kenningum um skattálögur, og aðferðum, sem vægast sagt geta að einstalist mismunandi slæm þeyðarúrreði til að ná fé í lands-sjóðinn.

En þrátt fyrir það, eða öllu heldur af því, að svo mjög skiftast leiðir með mönnum við úrlausnir þessa vandamáls, er full nauðsyn til að leita eftir því, hvort þó sé ekki til þau undirstöðuatriði, sem náð gæti viðurkenningu allra þeirra, sem hugsa vilja fordómalaust um málefnið. Gæti þau um leið orðið einskonar mælikvarði á rikjandi skattastefnur og þær tillögur, sem fram koma til breytinga, og yfirleitt skerpt meðvitund manna um það, hvaða skilyrðum skattur þarf að fullnægja til að geta talist haganlegur, skynsamlegur og réttlátur. Ætla ég þá fyrst að telja upp nokkrytri eiginleika eða kosti, sem skattar þurfa að hafa til að geta fullnægt ofan nefndum kröfum:

1. Að skattstofninn sé augljós og ákveðinn, svo eigi komist að undandráttur frá greiðenda hálfu, né tilhliðrun af hendi skattkrefjanda.
2. Að niðurjöfnun skattsins sé einföld og óbrotin og eftirlit auðvelt.
3. Að innheimtan sé auðveld og ódýr, og að skatturinn falli svo beint, sem verða má, á þá, sem hann er ætlað að greiða, svo að sem allra minstur munur verði á tekjum landssjóðsins og útgjöldum þjóðarinnar til opinberra þarfa.
4. Að skatturinn vaxi af sjálfu sér, jafnhliða auknum framförum og gjaldþoli þjóðfélagsins.
5. Að réttur gjaldandi geti ekki velt skattinum á aðra,

sem honum eru háðir, né heldur af hinum tilætlaða gjaldstofni.

Ef núgildandi skattar eru virtir fyrir sér, með hliðsjón af þessum skilyrðum, er það næsta augljóst, að þeir fullnægja þeim ýmist alls ekki, eða þá ekki fullkomlega og að eins í stöku atriðum, og þá sízt þeir, sem þyngst liggja á, en það eru aðflutningsgjöld eða tollar. Eins og bent hefir verið á, eru tollarnir sú skattálöguaðferð, sem bezt er til þess fallin að dylja fyrir mönnum, hvar og hvernig féð er frá þeim tekið — þar eð skattstofninn er svo dreifður og margbrotinn, og féð fer svo margra í milli, en hún gefur þó undir fótinn með undandrätt og pretti, þar sem við verður komið, því fremur sem eftirlit er torvelt. Nú er enn fremur innheimta slíkra skatta margbrotin og dýr¹⁾ en þó er ótalinn sá gallinn á þeim, sem þyngst legst á þyngjur landsmanna, um alla þörf fram, en það er sú tilhögun að leggja skatt á vöru, sem handhafa — t. d. kaupmanni — er innanhandar að hækka í verði, ekki einungis um þá sjálfsögðu upphæð, sem skattinum nemur, heldur og með tilsvarendi álagning á hann og reikningsverð vörunnar. Sú mun reglan vera, og afleiðingin verður, að fyrir hverjar 2 krónur, sem landsjóður fær inn með tollheimtu sinni, þarf alþjóð að láta 3 af hendi rakna. Mestan hlut þeirrar fúlgu taka kaupmenn fyrir »ómak« sitt, enda mun sú stétt aldrei hafa verið á móti auknum tollálögum.

Þegar það kemur nú fram, að tollastefnan fullnægir engu því skilyrði — hvorki ytra né innra, eins og síðar mun sýnt —, sem krefjast verður af hverjum skynsam-

¹⁾ Að þessu hefir tollheimta verið tiltölulega ódýr hér á landi, af því lögreglustjórar hafa verið látnir hafa hana á hendi fyrir fremur lága borgun. En eftir ýmsum framkomnum ummælum að dæma, og sérstaklega tillögum millipínganefndarinnar í launamálinu, má búast við, að þau störf yrði aðskilin bráðlega, ef sama héldi fram um skattastefnur hér. Landinu yrði þá að skifta í tollhéruð með sérstökum tollgæzlu- og innheimtumönnum, eins og tíðkast með öðrum þjóðum, og kynni þá að koma fram hvað slík innheimta kostaði.

lega lögðum skatti, þá gegnir það meiri furðu, að löggjafarvaldið skuli samt sem áður halda æ lengra inn á þessa braut. Þó frekar megi til sanns vegar færa, að tollar á munaðarvöru sé maklegri en á mörgu öðru, þá eru þeir samt óheppilegir vegna framangreindra galla, því fremur sem fram er komið, að þeir hafa ekki náð þeim tilgangi sínum, sem meðfram mun hafa verið, að takmarka eyðsluna. Með miklu meira sanni mætti halda fram, að þeir hafi alið á óvirðingu manna fyrir landslögum og deyft réttlætismeðvitund þeirra í viðskiftum.

Tollar af öðrum aðfluttum vörum, t. d. af sykri, sem teljast má fullkomin nauðsynjavara, ekki sízt fyrir okkur Íslendinga, og að ógleymdum vörutollinum, virðast, fyrir allra hluta sakir, glögt tákn þess, hve þjóðin er skamt á veg komin í skattalöggjöf sinni.

Hinar helztu opinberu álögur og tekjur í landssjóð, aðrar en tollar, eru: ábúðar- og lausafjár-skattur, tekju-skattur, húsaskattur, erfðafjárskattur, útflutningsgjöld og tekjur af opinberum störfum, aukatekjur, leyfisbréfabgjöld o. fl. Tekjur af opinberum starfsrekstri (t. d. vitum, póstmálum, sínum o. s. frv.) geta ekki talist álögur, nema starfsgreinin sé rekin á þann hátt, að hún gefi landinu hreinar tekjur. Yfirlit yfir tekjur og gjöld þessara þriggja starfsgreina í 10 ár (1906—15) sýnir, að þær standa allar í skuld við landið, þó vextir sé ekki reiknaðir, en 5 seinni árin (1911—15) gefur bæði vita- og símareksturinn talsverðar tekjur fram yfir reksturskostnað og endurbætur á því tímabili, svo af því mætti álykta, að hér yrði um hreina tekjustofna að ræða síðarmeir, ef svo þætti hlýða.

Í sveit og héraði eru auk þess ýms opinber gjöld, en til þess að blanda ekki of mörgu saman, eru þau ekki tekin með í þessu yfirliti.

Af ofan nefndum landsjóðsgjöldum eru það að eins ábúðar og húsaskatturinn, sem telja má að hafi sæmilega augljósan og ápreifanlegan skattstofn, en þeim fylgir aftur sá galli, að niðurfjöfnun þeirra er margbrotin og innheimta því tiltölulega erfð og dýr móts við þær

tekjur, sem þeir gefa, og enn fremur þróast þessir skattar engan veginn í hlutfalli við blómgun atvinnuveganna né bættan efnahag. Að öðru leyti má heita, að þeir fullnægi sæmilega ytri skilyrðum fyrir skatti, en eins og síðar mun sýnt fram á, eru ýmsar in n r i orsakir þess valdandi, að þessir skattar koma ekki vel niður.

Þó útflutningsgjöld sé í rauninni alt annars eðlis en aðflutningsgjöld, og hafi alls ólíkar verkanir, þá loðir við þau samskonar annmarki, að eins og aðflutningsgjöld gefa aðstöðu til að hækka vöruverð um þörf fram, geta útflutningsgjöld notast sem ástæða til að draga af verði útfluttra vara þar sem verzlunarhættirnir leyfa það. Eins og síðar mun bent á er og varhugavert og ekki réttlátt að leggja skatta á í hlutfalli við framleiðslu manna og persónulega atorku. Gildir það líka um lausafjárskattinn og fleiri skatta.

Tekjuskatti (einkum af eign) og því fremur erfðafjárskatti, má telja það til gildis, að þeir koma réttlátast niður þeirra skatta, sem hér er um að ræða. En bæði þeim og lausafjárskattinum má finna það til foráttu, að gjaldstofninn er hvorki augljós né ábyggilegur. Ef skattaniðurrjöfnun og innheimta byggist annarsvegar á heiðarleik manna og þegnfélagslund við framtal og mat á eigin eignum, en hinsvegar á nákvæmni og ráðvendni skattkrefjanda, þá er báðum aðilum næstum gefinn laus taumur með undandrætt og tilhliðrun, þar sem við verður komið. Það er nefnilega augljóst, að framtal manna á tekjum og lausafé getur oft og tíðum engu eftirliti orðið háð, enda er ýmsum tekjuskatts- og framtalsskýrslum viðbrugðið, þó lítill rekstur sé að því gerður né slíkt vitt opinberlega. Eins má á ýmsan hátt haga arfaskiftum þannig, að skattur falli öðruvísí á en lögin ætlast til. Má geta nærri hve óheppilegt það sé að gefa lægri hvötum manna þannig svigrúm í viðskiftum við hið opinbera, og er mikilsvardandi fyrir viðskiftasiðgæði þjóðarinnar, að skattarnir gefi ekki tilefni til slíks.

Hér er samt sem áður um þá skatta að ræða (tekju-

og erfðafjárskattinn), sem að réttu lagi myndi eiga lengstan aldur fyrir höndum, þeirra skatta, sem nú gilda, og ber því nauðsyn til að líta eftir, að þær reglur, sem lögin um þá setja, sé ekki virtar að vettugi.

Á síðasta liðinn, arð af opinberum atvinnurekstri, verður minnst síðar í öðru sambandi.

*

*

*

Hér að framan hefir verið vakin athygli á þeim formsatriðum, sem hver maður við nánari athugun mundi telja meira og minna áriðandi skilyrði fyrir því, hvort þessi eða hin skattálöguaðferð gæti talist heppileg eða ekki. Það skal ítrekað, að þar er að eins talað um hin ytri skilyrði — sem að vísu eru mjög nauðsynleg, en þó hvergi nærri eins þýðingarmikil grundvallarskilyrði réttlátrar skattálögu, eins og hin, á hverja af tekjustofnum þjóðarinnar skattarnir eru lagðir og hvernig skattabyrðin skiftist niður á gjaldþegnana.

Þess er ekki að vænta, að menn geti orðið eins samála yfirleitt um þessi skilyrði eins og hin almenna atriði, því hér togast svo mjög á hagsmunir manna. Engan má það þó fæla frá að hugsa um málið, því í raun rétttri hefir álagningaraðferðin engu minni áhrif á þjóðarhaginn en skattaupphæðin sjálf. — Eins og léttar klyfjar, sem fara illa á, geta meitt þann hest, sem ber þær, enda þótt hann væri fær um að bera aðrar miklu þyngri, sem færi vel, eins getur skattur, sem óheppilega er á lagður, haft lamandi áhrif á framleiðslu og viðskifti þjóðarinnar, jafnvel þótt skattgjaldið sé ekki hærra en svo, að hún hefði getað staðið fullrétt fyrir, ef öðruvísi hefði á lagst. — Ýmsir harðstjórar hafa og lagt svo þunga skatta á viðskifti eða einstakar framleiðslugreinar, að menn hafa horfið frá þeim, að svo miklu leyti sem hægt var, og skatturinn þannig unnið á móti sjálfum sér, með því að hafa takmarkandi áhrif á skattstofninn.

Áður en lengra er haldið er nauðsynlegt að átta sig á, hvaða reglum hefir verið fylgt fram um álagning og

skiftingu skattabyrðanna hingað til. Þar sem minst var á tekjum ofna þjóðarinnar hér að framan var ekki átt við þá gjaldstofna, sem skattarnir eru kendir við, bæði í daglegu tali og opinberum skýrslum, heldur þær náttúrulegu auðsuppsprettur, sem hér og hvarvetna eru fyrir hendi, til að leggja skattana á. Til þess að átta sig á sérkennum þeirra, hverrar fyrir sig, er best að athuga hvaðan hinir ýmsu gjaldþegnar hafa tekjur sínar til eigin og opinberra þarfa. Tökum þá fyrst verklaunamann í ströngustu merkingu þess orðs — mann sem ekki einu sinni á verkfærið, sem hann vinnur með, hvort heldur það er reka, orf, skrifáhöld, veiðarfæri eða annað, og því síður er þá að gera ráð fyrir að hann eigi verkefnið. Sé nú gengið framhjá að hann kynni að eiga arðgæfar eignir, sem eigi standa í sambandi við atvinnu hans, þá er auðsætt að allar tekjur hans eru sprottnar af þeirri vinnu, sem hann hefir lagt fram, hvort heldur hún er andleg eða líkamleg, hvort heldur hún er framkvæmd af algengum vegagerðarmanni eða háttsettum embættismanni.

Hér er fyrsta auðsuppsprettan — vinnan.

Athugum því næst ýmsar aðrar stéttir með annarskonar atvinnu, t. d. iðnrekendur, kaupmenn, bændur o. s. frv. Allir hafa þeir fyrstu auðsuppsprettuna, — sinn eigin vinnukraft — en þeir nota hann til að skapa sér arð af eignum, sem þeir eru áður búnir að eignast eða afla sér í því skyni: af smíðafni, vörum, bústofni o. s. frv. Ef eignirnar eru meiri en svo, að þeir með eigin vinnu geti ávaxtað þær, eða vilji eigendurnir og geti hlíf sér við vinnu, þá nota þeir vinnukraft annara manna, sem eigi taka annan þátt í arðinum en umsömdu kaupnemur (verklaunamenn). Nú er sýnilegt að tekjur þessara atvinnurekenda þurfa ekki og geta ekki sætið staðið í beinu hlutfalli við þá vinnu, sem þeir hafa ínt af höndum, eins og á sér stað með verklaunamenn, heldur eru þær arður eða réttara sagt vextir af eignum þeirra eða umráðafé, og ávaxtast ekki eingöngu af persónulegum hæfileikum eigendanna, heldur og af al-

mennu markaðsverði og viðskiftaskilyrðum, sem ekki verður gert ráð fyrir að eigendurnir hafi sérstök áhrif á.

Þetta er hin önnur auðsuppspretta: — starfsfé eða veltufé (kapital).¹⁾

Í þriðja lagi skal aftur tekið dæmi af samskonar atvinnurekendum og næst áður, en gert ráð fyrir að þeir hafi á einhvern hátt náð sérstakri aðstöðu í viðskiftalífinu til þess að hafa meiri arð af vinnu sinni og veltufé, en talist geta venjuleg laun og fjárvextir. Ef iðnrekinn hefir t. d. getað útilokað samkeppi í sinni grein á viðskiftasvæðinu eða komið fram verndartolli til hlífðar atvinnuvegi sínum; — ef kaupmaðurinn að sínu leyti hefir náð þeim tókum á verzluninni, að hann sé einráður um vöruverð og verzlunarhag í sínu héraði; — hefði bóndinn t. átt Siglufjörð og eignast alla þá verðhækkun, sem síldarútvegurinn hefir veitt lóðunum þar — þá liggur í augum uppi, að engum dytti í hug að halda fram að hann hefði unnið fyrir því eða að það væri vextir af veltufé hans. Nei, þær tekjur og aðrar, sem einstakar persónur hafa af því að leggja »privat« skatta á allskonar viðskifti, eru skapaðar við sérréttindi, sem þjóðfélagsskipulagið hefir látið þeim í té eða liðið að mynduðust.

Þar er þá þriðja auðsuppsettan: forréttindi eða einkaréttindi (privilegium eða monopol).

Þá liggur næst fyrir að athuga hvernig hin opinbera gjaldabyrði (til landssjóðs) skiftist á þessar þrjár auðsuppsprettur. Um nákvæma sundurliðun getur auðvitað ekki verið að tala, en eftir eðli sínu gefa skattstofnanir nokkurnveginn til kynna á hvaða tekjugreinar þeir falla.

Til leiðbeiningar skal hér sett sundurliðun á opinberum álögum, gerð eftir landsreikningi 1914—15:

¹⁾ Með þessari skilgreiningu má alls ekki blanda saman allskonar vaxtafé, sem ekki snertir atvinnuveg eiganda þess, svo sem ríkisskuldabréf, sparisjóðsfé, hlutafé, o. s. frv. Það heyrir alls ekki hinu persónulega „kapitali“ til og eftir eðli sínu eru allar slíkar tekjur (peningavextir o. s. frv.) tilheyrandi þriðju auðsuppsprettunni, og verður að því vikið síðar.

1. Beinir skattar 7— 7,5 %.
2. Aðflutningsgjöld (tollar)
 - a. af almennri neyðsluvöru 53—56,5 —
 - b. - munaðarvöru (öli, tóbaki o. fl.) 20—21,5 —
3. Útflutningsgjöld 13—14,5 —
4. Aukatekjur, leyfisbréfa gjöld o. fl. 7 —

Þessar hlutfallstölur eru reiknaðar út með tvennum móti. Það þykir nefnilega orka tvímælis hvort 4. liðurinn geti talist álögur, þó þar sé um tekjustofna að ræða, sem engum sérstökum starfsrekstri eru bundnir, eins og t. d. símasambönd, póstmál o. fl. Fyrri tölurnar eru miðaðar við að sá liður sé reiknaður með, en þær seinni við það, að honum sé slept, af því hann liggir utan við hinn eiginlega skattagrundvöll.

Nú má álíta að allar þær álögur, sem hvíla eins og nefngjöld á mönnum, falli á vinnuna. Sú ályktun er dregin af því, að yfirleitt hefir allur þorri manna vinnukraft sinn að auðsuppsprettu, og því hljóta þær álögur, sem falla jafnt á alla, að hitta fyrst og fremst þann tekjustofn, sem allir hafa yfir að ráða. En nefnskattur geta talist allir tollar á nauðsynjavöru, eða vöru, sem allir kaupa tiltölulega jafnt af, en með slíkum tollum er fullur helmingur af hinum eiginlegu landssjóðsálögum tekinn¹⁾.

Um toll af munaðarvöru (tóbaki, öli o. fl.) verður síður sagt hvernig hann komi niður, því kaup á slíkum vörum eru engum reglum háð.

Hinar aðrar skattálögur falla að mestu leyti á »kapitalið«, þ. e. eru miðaðar við það. Þannig leggjast útflutningsgjöld og lausafjárskattur á í beinu hlutfalli við framleiðsluna. Þó ábúðarskatturinn sé miðaður

¹⁾ Í flokknum undir 2. a. (tollar af nauðsynjavöru) eru taldir kaffi- og sykurtollur og vörutollur, en getið skal þess, að tollur af sumum vörutegundum (s. s. kolum, salti o. fl.) legst ekki að öllu leyti á sem nefnskattur, en hann nemur líka tiltölulega litlu. Aftur má benda á ýmsa aðra nefskatta, s. s. sóknargjöld, sýslusjóðsgjöld o. fl., en þau eru ekki tekin inn á þetta yfirlit.

við jarðarafnot hlýtur hann að teljast kvöð á afurðum bústofnsins (= kapitalsins) þar eð hann greiðist af ábúendum jarðanna, en ekki eigendum. Eins er um húsa-skatt, að þó hann sé að yfirvarpinu lagður á húseign, þá er húseigendum innanhandar að velta honum yfir á húsaleigu þar sem um hana er að ræða, og vinnur því skatturinn að því að gera húsnæði dýrara yfirleitt, og verður þá að nokkru leyti nefskattur.

Um tekjuskatt af atvinnu er það að segja, að hann er látinn hvíla jafnt á öllum skattskyldum tekjum (1000 kr. eru skattfriar) ef þær eru jafnmiklar, hvort sem til þeirra er unnið með súrum sveita eða með sjálfteknum skatti á náungann eða þær eru lotterí-vinningur. Á líkum grundvelli byggist og tekjuskattur af eign.

Einkennilegasta fyrirbrigðið við rannsókn skattaskipulagsins verður því þetta, að engar álögur eru sérstaklega lagðar á þau sérréttindi, sem þjóðfélagið veitir einstökum mönnum, þó annars sé leitast við að dreifa sköttunum sem mest má verða. Er þetta því undarlegra sem talið er að sú stefna hafi verið talsvert ríkjandi hér, að leggja á eftir efnum og ástæðum, en vitanlegt hverjum þeim, sem vill og getur hugsað sig um, að frá því sögur hófust hefir enginn maður auðgast svo nokkru næmi nema hann hafi haft einhverskonar sérréttindi fram yfir allan fjöldann.

*

*

Það yfirlit, sem hér hefir verið tekið um niðurskiftingu skattanna á auðsuppsprettur þjóðarinnar staðfestir ýmsar af þeim hugmyndum, sem stöku menn höfðu áður gert sér um meinbugina á skattaskipulaginu. Það fyrst og fremst, að af tilgreindum skattgjöldum falla alt að 60% sem nefskattur á unga og gamla, ríka og fátæka, ætti að færa mönnum sanninn heim um það, að hér er engu réttlæti til að dreifa. Til þess að slík krafa gæti verið réttlát þyrftu allir að hafa jafnan aðgang að auðsuppsprettum landsins eða náttúrugæðum til

lands og sjávar. Og ekki nóg með það; þeir þyrftu líka að gera jafnmikið fyrir þjóðfélagið: ala upp jafnmörg börn, sjá fyrir jafnmörgum gamalmönnum o. s. frv. — Slík skilyrði ein réttlættu þá kröfu, að allir borguðu jafnt til opinberra þarfa. — Samskonar skilyrði þyrfti að vera fyrir hendi til að réttlæta þá skatta, sem koma fram eins og hundraðsgjald á tekjur manna, hvort sem þær eru meiri eða minni, en svo má telja að þeir skattar geri, sem miðast við atvinnuaroð og framleiðslu.

Ætla mátti að sú viðleitni, sem komið hefir fram hér á landi um það, að skattleggja flest sem nöfnum tjáir að nefna, hefði haft að markmiði að rekast með því á einhvern heppilegan skattstofn. En hún hefir þá ekki náð þeim tilgangi sínum, því það, hve mörg nöfn skattarnir bera að lögum, sannar ekkert um af hvaða tekjustofni þeir greiðast að lokum, þegar einn er búinn að velta þeim á annan. Ef því er fylgt eftir með gaumgæfni hvernig skattgreiðslan kemur niður í reyndinni, mun koma í ljós það sem sýnt hefir verið fram á, að $\frac{3}{5}$ hlutar skattgjaldanna hvíla á og miðast við neyzlu landsmanna eða þarfir, en hinn hlutinn langdrægt sem kvöð á atvinnu þeirra og framleiðslu.

Nú kynni einhver að segja, að ekki verði gjöldin greidd með öðru en tekjunum af atvinnu eða framleiðslu. Það er og mikið rétt, eins og skattarnir eru á lagðir, en það er allur skilsmunur á því, hvort skattþegninn borgar gjöldin með því sem hann framleiðir, eða vinnur sér inn, eða í beinu hlutfalli við hve það er mikið. — Hér kemur því gamla skattamálastefnan fram í einni setningu: Undir því yfirskyni að skattleggja eftir efnum og ástæðum, verður framtak manna aðalskattstofninn, og þá ekki síður með tilliti til nefnskattanna, sem hvíla eins og sektir á þeim, sem ala upp æskulýð landsins, en léttu undir með þeim, sem ekki hafa nema fyrir sjálfum sér að sjá. Því til sönnunar, að skattarnir leggist á framtak manna og atorku, mátti leiða mörg dæmi. Ef A. byggir hús — t. d. íbúðarhús í stað þess gamla, sem

orðið er heilsuspillandi vegna fúa og kulda og ósamboðið réttmætum kröfum — hvað kemur þá fram? Fyrst og fremst þarf hann að greiða skatt (vörutoll) af öllu efni til hússins; í öðru lagi þurfa þeir, sem húsið smíða, hærri kaup, af því skattar hvíla á flestum lífsnauðsynjum þeirra, og svo þegar húsið er fullgert, þarf eigandinn að greiða af því húsaskatt. Sé nú tekinn samanburður við B., sem eftir sem áður býr í álíka húsakynnum og A. áður, og var álíka efnaður, þá er fátt augljósara en að hér er beinlínis lagt á framtak og atorku, en ódugnaður og aðgerðaleysi verðlaunað. — Hið sama kemur fram um hvert annað framfarafyrirtæki sem er, eða aukna framleiðslu: Því meir sem búskapur bóndans blómgast í höndum hans, því meiri afla sem sjónaðurinn fær o. s. frv., því hærri skatta þurfa þeir að gjalda eftir gildandi skattaskipulagi. —

Nú er það auðsætt, að allir skattar, sem leggjast á framleiðslu og framkvæmdir, draga úr hvötinni til framleiðslu og starfa og verða þannig eins og hemill á framfaraviðleitni þjóðarinnar. Þurfi skattar að hvíla á vinnu, veltufé eða búskap, þá væri ólíkt affarasælla að þeir legðust beint á vinnukraftinn, hvort sem hann væri notaður til gagns eða gamans — á veltuféð (kapitalið) án tillits til hvort eigandinn hefir lag á að láta það bera arð eða ekki, og á búskapar aðstöðuna, án tillits til hvernig hún væri notuð. Slikir skattar myndu þó síður draga úr framleiðslu og starfsemishvötinni en hinir, sem leggjast á í hlutfalli við dugnað manna og framtak.

En hvar og hvernig á þá að taka fé til almennra þarfa, ef öllum þeim aðferðum, sem hingað til hafa verið notaðar, er ábótavant?

Hér stendur hið almenna gagnvart hinum einstaka — þjóðfélagið gegn þegninum — og þá er rétt að snúa þeirri kröfu við, sem hann gerir til þess: Hann krefst ekki einungis að þjóðfélagið (þ. e. ríkið) verndi líf hans, limi og eignir, heldur og veiti honum aðstoð til að hafa fullan og óskertan arð atvinnu sinnar og framleiðslu, svo hann geti uppskorið þar sem hann sáir. Sé þeirri

kröfu snúið við, er jafn augljóst, að þjóðfélagið hefir sama rétt til að fá óskertan arð af því, sem það hefir skapað eða framleitt sem slíkt, þó sá arður samkvæmt venjum og viðtektum kunni að hafa runnið til einstakra manna að meira eða minna leyti.

Til að benda á eignir sem þjóðfélagið hefir skapað og hefir tekjur af væri nægilegt að tilnefna ýms einkaréttindi, sem það, í skjóli ríkisvaldsins, hefir áskilið sér, svo sem starfrækslu ritsíma og talsíma, vita, póstsambanda o. s. frv. Af þessu öllu hefir það tekjur og með sama rétti gæti það veitt sér forréttindi um starfrækslu bankamála (peningaverzlunar), samgangna á sjó og landi (t. d. járnbrauta), vöruverzlunar o. fl., auðvitað að því tilskildu, að það fullnægði þessum hlutverkum vel og veitti hlutaðeigandi starfsmönnum góðar tekjur að lifa af. Allri þessari starfsemi er þannig háttað, að hún er ekki framleiðsla á neinu úr skauti náttúrunnar, og bætir því engu efnismagni við þjóðarauðinn. En af því að hún hefir afarmikil áhrif á viðskiftagildi hlutanna, þá hafa ýmsar af nefndum starfsgreinum orðið hvað mestu valdandi um misskipting auðsins, af því einstöku menn hafa setið á hlutdeild annara og þjóðfélagsins sjálfs í þeirri verðaukning.

Eftir eðli sínu hefir þjóðfélagið miklu meiri rétt til að hlutast um það, sem ekki er framleiðsla, eða beinlínis verðaukandi starfsemi á framleiddum hlutum (s. s. iðnaður), heldur en hitt, sem einstaklingurinn hefir aflað sér með erfiði. Það er líka viðurkent, að það standi nær hlutverki þjóðfélagsins að hafa bein afskipti af skiftingu auðsins en framleiðslu hans¹⁾, og því getur

¹⁾ Þessi skoðun stríðir á móti kenningum ýmsra „socialista“, sem eins og kunnugt er vilja, að ríkið hafi framleiðsluna líka að miklu leyti í sínum höndum og skanti hverjum einum deildan verð, svo allir geti verið lausir við bjargræðisáhyggjur. — En hvað verður þá um framtakið, ef enginn þarf að bera ábyrgð á efnahag sínum?

Á hitt verður ekki deilt, þó ríkið áskilji sér eftirlits og takmörkunarrétt á afnotum almennra náttúrugæða, ef hætta þykir á, að þan

það, án þess að ganga á persónuleg réttindi nokkurs manns, tekið yfirráð á starfrækslu nefndra atvinnugreina, að nokkru eða öllu leyti, eftir eðli hverrar fyrir sig.

En þótt það liggi nú í augum uppi, að það er hagfeldara og réttlátara, að þjóðfélagið, eða ríkið, skapi sér forréttindi, eða jafnvel einkaréttindi, í stað þess, að þau sé fépúfa einstakra manna, er engan veginn sagt með því, hve langt það eigi að ganga í því, að hafa þau að tekjustofni eða skattstofni umfram eigin reksturkostnað. Þó ekki væri beinlinis til þess ætlast, að þau gæfi tekjur til annara þarfa, gerðu þau þjóðinni engu síður gagn með því að gera ýmsar lífsþarfir ódýrari. Aðgætandi er, að mikið af þeim tekjum, sem fást á þennan hátt, verða

gangi til þarðar, eða að vinsla þeirra leiði til útbolunar frá atvinnuvegi heilla stétta á eigin hönd (sbr. sjávarútvegin).

Í þessu sambandi ber að minnast á ritgerð, sem út kom á næstl. ári, með nafninu „Nýir vegir — Tillögur um fjárhagsmál landsins“ — eftir Bððvar Jónsson yfirdómslögmann. Beinist höf. þar að sérstökum atvinnuvegi, sildarútvegnum, sem skattstofni, annaðhvort með allháu útflutningsgjaldi eða þó miklu fremur á þá leið, að landið áskilji sér einkarétt til uppkaupa, söltunar og útflutnings á allri þeirri sild, sem hér er veidd og til útflutnings ætluð.

Til þessa færir hann þau rök:

1. Að gjalda þurfi varhuga við að veiða síldina ótakmarkað eða hafa áhrif á göngu hennar, þar eð lifnaðarhættir hennar sé órannsakað mál.
2. Að nauðsyn beri til að hafa eftirlit með framboði á ísl. síld á útlendum markaði, svo meiri trygging og festa fáið í verð hennar.
3. Að landið þurfi að áskilja sér meiri hlutdeild en hingað til í þeim uppgrípagróða, sem þessi atvinnuvegur gefur og einkum hefir runnið í vasa útlendinga að þessu.

Ályktan höf. er á þá leið, að þó tillögur hans nái fram að ganga, þá skaði það á engan hátt hina eiginlegu framleiðendur, og fyrir fjármunalegum halla af þeim geti ekki orðið nema þeir kaupmenn, sem hafi „spekúlerað“ í síldarsölu. Með tilliti til þess, að sýna má fram á, að þeir eru ekki nauðsynlegir eða óhjákvæmilegir milliliðir við síldarverzlun, en hafa hingað til að óverðskulduðu borið stærstan blut frá borið í þeim gróða, þá virðist ekki ástæða til að taka tap þeirra af slíkum fyrirhuguðum hagsmunum til greina.

Að öllu athuguðu virðast því tillögur þessar vera umhugsunarverðar.

skattar á viðskifti manna — er velt yfir á vöruverð og geta því komið fram sem dulklæddir óbeinir skattar¹⁾. Þó verður það aldrei að öllu leyti, og getur því verið tiltölulega heppilegt að hafa sumar slíkar starfsgreinar lítilsháttar að skattstofni, ekki sízt ef rekstur þeirra krefst mikilla trygginga. Réttara mun þó, að bein vöruútleiðing sé á engan hátt höfð að tekjustofni nema til reksturs og tryggingar landsverzluninni sjálfri. Yfirleitt myndi heppilegra, að sá skattálöguréttur á allan almenning, sem einstakir menn hafa tekið sér með vöruverzlun og vöruumboðum, væri að engu gerður af vörukaupendum sjálfum, með því að stofna til eigin félagsverzlana, nema þá um það, sem stjórnarvaldaleiðin væri tryggari til að mæta yfirdrotnun vöruuppkauþringa (trusts). Yfirstandandi styrjaldartími ætti líka að hafa sýnt mönnum, svart á hvítu, hve mikið traust og hald er í verzlunarstéttinni, er á herðir²⁾. Þó hún hafi notað hinar breyttu viðskiftaástæður til að græða offjár (líklega svo mörgum miljónum skiftir) á viðskiftum landsmanna, hefir þjóðina samt skort ýmsar nauðsynjavörur, sem sízt verður úr bætt með framleiðslu landsins, svo að lokum hefir landsstjórnin orðið að skerast í leikinn. Bendir alt þetta til, að nauðsyn geti verið á, að stjórnarvöld hafi beinni afskifti af vöruverzlun en hingaðtil, einkum á sérstökum vörutegundum.

Nú hefir verið bent á ýms einkaréttindi (monopol), sem þjóðfélagið ýmist hefir veitt sér eða getur veitt sér og starfrækt hvort heldur er með því markmiði, að starfsgreinin rétt »beri sig«, eða þá til þess að hafa hreinar tekjur af, ef það þykir hlýða.

Þetta vísar einmitt leiðina til þess, hvar og

¹⁾ Þannig verða vitagjöldin til að skapa hærri farmgjöld (fragt) — mikill símakostnaður krefst meiri vöruálagningar o. s. frv.

²⁾ Þessum ummælum er ekki beint sérstaklega að íslensku verzlunarstéttinni. Yfirleitt hafa verzlunarstéttir allra ríkja (einkum hinna blutlausu) skapað sér ámæli fyrir framkomu sína undir ófriðnum. Hefir það leitt til ýmsra takmarkana og fyrirskipana frá löggjafanna hálfu (sbr. hámarksákvæðin og verðlagsnefndina hér).

hvernig eigi að taka fé til almennra þarfa. En það er að leggja skatt á þau forréttindi og einkaréttindi, sem nú eru á einstakra manna höndum og eru því notuð sem skattálöguréttur hvort sem er, en eru þess eðlis, að það er ekki beinlínis eftir eðli ríkisvaldsins að taka þau undir sín yfirráð.

Nú orkar það oft tvímælis, hvort eitt eða annað sé einkaréttindi — monopol — eða ekki, og er það að vonum, því það, sem að venjulegum hætti er ekkert »monopol«, getur orðið það undir vissum skilyrðum. Þannig er venjulegt starfsfé (kapital) ekkert »monopol« að jafnaði, en nái það að verða auðsafn, og sé það notað til að leggja óeðlileg höft á viðskifti, eða ástæðulausa verðhækkun á vörur, eins og dæmi eru til, þá er það orðið »monopol« (einkavald). Slikar »skattálögur« geta verið lögheimilað starf, eins og kauphallabrásk (Börsspekulationir) og hlutafélagasamsteypur (hringar¹⁾).

Ætla mátti nú, að hér væri rétti skattstofninn fundinn, og það mun mörgum hafa virzt. En við nánari athugun er þó ljóst, að þegar slíkar stofnanir hafa á annað borð náð valdi á viðskiftunum, eða vissri grein þeirra, er þeim innan handar að velta öllum sköttum af sér á »viðskiftavinina«, sem þeim eru háðir. Hugsum okkur t. d., að Rockefeller eða einhver slíkur gæti náð kaupum á öllum verzlunarstöðum Íslands og léti reka alla verzlun landsins fyrir sinn reikning. Er þá ekki auðsætt fyrst og fremst, að auðsafn hans hefði lagt honum einkavald í hendur til að skattleggja alla þjóðina eftir geðþótta, og eins skýrt er

¹⁾ Hvorugt þetta á sér beinlínis stað hér, en áhrif þess ná hingað engu að síður. Í raun réttir er öll peningarenta „monopol“ í eðli sínu, því hún er leiga af þeim verðmæli, sem ríkið hefir til almennra þarfa, og eitt getur gert gildandi. Áhrifin eru líka auðsæ í þá átt, að öll vaxtataka stefnir að því að stækka djúpið milli lánpiggjanda og lánveitanda. Og ef lánveitandi hefir yfir svo miklum höfudstól að ráða, að hann geti lifað á vöxtum hans, hefir hann þegar komið á stað þeirri „vél“, sem ekkert viðhald né aflgjafa þarf til að ganga til eilíðar og er því hið eina raunverulega „Perpetuum mobile“.

Væri þetta mál vert sérstakrar athugunar.

hitt, að þó hann væri krafinn um geysilega skatta, væri honum hægt um vik að velta þeim yfir á vöruverðið, og þannig á þjóðina aftur. Þannig mun það reynast, að þau »monopol«, sem eiga rót sína að rekja til auðsafna eða viðskiftaaðstöðu, hlaupa altaf undan sem skattstofn, svo byrðarnar færast yfir á annara herðar, sem ekki er ætlast til að bæri þær. Eigi því að vinna bug á þeim óheillaafleiðingum, sem slík »monopol« hafa á viðskiftalífið, verður að höggva á rætur þeirra, annaðhvort með réttarfarslegum skordum, eða með því að uppræta þann falsgróður í viðskiftalífinu, sem þau þrífast á.

Öðru máli er að gegna, ef einkaréttindin eru sprottin af yfirráðum á náttúrugæðum. Er þar komið að stærsta »monopolinu«, sem til er, því, sem þjóðmegunarfræðin kallar einu orði jörð. Þannig vaxin réttindi ná mestum tókum á hagsmunum fjöldans, þegar til lengdar lætur, og liggja til þess þær orsakir, annarsvegar, að allar athafnir og tilvera byggist á einhverskonar afnotum jarðarinnar, til ræktunar, bygginga, veiði, námuvinslu eða annara nytja, en hinsvegar ómögulegt að framleiða hana (auka) eins og vöru eða aðrar eignir, svo þeir, sem réttindin hafa í höndum, geta notað þau til að leggja einokun á afnot allra annara manna af náttúrugæðunum.

Tökum aftur dæmið af Rockefeller, en setjum nú svo, að hann hefði ekki keypt nema verzlunarhúsin með áhöldum o. s. frv., en einhver keppinautur hans hefði náð öllum tilheyrandi lóðum, bryggjuréttindum o. s. frv. Hver þeirra myndi ríða feitara hesti frá þeim kaupum?

Eg held, það þyrfti engan »lóðaspekúlant« til að koma auga á, að hinum síðartalda væri í lófa lagið að krefjast hvers sem vera skyldi í lóðagjöld — alls verzlunararðsins að því takmarki, sem á væri hættandi, svo verzlunin félli ekki niður. — Á sama hátt gæti sá sem ætti t. d. alt Ísland — að eins landið, eins og það er frá náttúrunnar hendi, án allra mannvirkja — lagt svo háar landsskuldir og lódaleigur á afnot þess, sem atvinnuvegirnir á hverjum

stað gæti borið, og dregið undir sig alla verðhækkun, jafnóðum og hún kæmi fram.

En ef þjóðfélagið sjálft ætti öll náttúrugæðin — hvað þá?

Þessi dæmi eru ekki tekin beinlínis úr lífinu, eins og það er, en þau eru dregin fram til að benda á það einokunarvald, sem jarðeignaréttindunum fylgir, og þjóðfélagsskipulagið leggur óskorað og kvaðalaust í hendur þeim tiltölulega fáu mönnum, sem land eiga¹⁾.

Í raun rétttri horfir málið þannig við, að land verði í þessum skilningi skapast á hverjum stað af þeirri eftirspurn, sem á því er að lifa þar, eins og sést á því, að í bæjum og borgum er geipiverð á hverjum landskika, þó melur sé eða sandur einn, en upp til afdala er landið næstum verðlaust, þótt frjósamt kunni að vera, en því valda staðhættir, að þar vill enginn setjast að. — Á meðan Ingólfur landnámsmaðar var einn hér á landi, var landið jafn verðlaust, eins og áður en hann kom, þó landkostir væri engu minni en síðar, og svo var það líka framan af landnámsöldinni, meðan eftirspurnin rak sig ekki á nein takmörk. Þá er þess líka getið, að menn gáfu lönd vinum sínum og vandamönnum, en síðar á landnámsöldinni er oft getið um landakauþ, en sjaldan gjafir, og kom þetta ekki af því, að risna höfðingjanna hefði gengið saman, heldur hinu, að landið fekk verð-

¹⁾ Með nokkrum sanni mætti segja, að þeirrar einokunar á jarðarafnotum, sem hér er talað um, gæti ekki mikið hér á landi enn. Þó getur engum dulist, sem fylgt hefir breytingum síðari ára á þessu sviði, að stefnan er fyllilega hin sama og í öðrum löndum, en þar er hún að eins orðin auglýsing, því heil stétt manna hefir þar slíkar tekjur eingöngu til lífsupheldis, og þarf því ekki annað fyrir lífinu að hafa en krefja inn tekjurnar.

Þannig er í fleiri atriðum á þjóðhagsmálasviðinu (og víðar), að áhrif og einkenni hins „nýja tíma“ eru ekki orðin fyllilega augljós og ápreifanleg hér, og verða því paraðlútandi ályktanir að hafa jöfnun höndum hliðsjón af útlendum dæmum og reynslu, og hinu hvert stefnir í því tilliti hér. Að öðrum kosti eru þær strax við fæðinguna orðnar á eftir tímanum.

gildi, þegar aðstreymið óx og sýnilegt var, að það myndi albyggjast.

Með öðrum orðum: verð á landi, án tillits til bygginga og umbóta, stendur í beinu hlutfalli við þéttbýlið, og þó réttara sagt, eftirspurnina, því sumstaðar er ekki eins þéttbýlt og eftirspurnin segir til, af því umráðamenn landsins gefa ekki kost á landinu til afnota, eða þá með óaðgengilegum kjörum. Þessi staðreynd, að mikill hluti af öllu landverði skapast við eftirspurn alþjóðar, er tákni þess, að ekki getur framar einn en annar sannað eignarrétt sinn á þeim hluta landsverðsins, né þeirri verðhækkun, sem á eftir að koma fram af sömu orsökum. — Sá hlutinn er að réttu lagi félagseign, af því hann er myndaður af þjóðfélaginu, ekki eingöngu af því það er ríki, heldur og samsafn einstaklinga með til-
tölulega sameiginlegum áhugamálum og verkefnum, sem bundin eru við þetta land, og þá eðlilega fremur við einn stað en annan, sem af þeim orsökum stígur þá í verði fremur hinum. Á hinn bóginn á sú verðaukning, er hver einstaklingur myndar sérstaklega með eigin umbótum á landinu, að vera hans óskert eign. En hvorugt þetta á sér stað með núgildandi skipulagi, því félagsmýndaða verðaukningin rennur óhindrað í vasa landeigendanna, eins og þeir hefði skapað hana einir, og framtaksmýndaða verðaukningin gefur þeim tilefni til að krefjast hækkandi landsskulda af leiguliðunum, sem hana hafa framleitt hver eftir annan með ýmsum umbótum.

En framvegis eiga kröfur þjóðfélagsins og þegnsins — þessara tveggja málsaðila hvors til annars — að vera settar hlið við hlið á þann hátt, sem náttúrulegt réttlæti segir til. Krafa einstaklingins er að fá fullan arð verka sinna og eigna, og með sama rétti getur þjóðfélagið ætlast til, að það fái arð af því verði, sem það gefur landinu á hverjum stað. — Hér hefir verið sýnt fram á, að sá arður rennur beint eða óbeint í vasa einstakra manna — landeigendanna —, svo þó þjóðfélagið kræfi þá

um samsvarandi upphæð, þá íþyngdi það á engan hátt öllum þeim, sem landsskuldir eða lóðagjöld eiga að greiða til annara, en gæti létt af mönnum talsverðu af opinberum gjöldum. — Og landeigendur gæti á engan hátt skorast undan slíkum skatti, því með honum er þjóðfélagið að eins að krefjast leigu af þeim höfuðstól, sem það á í þeirra vörzlum, og með skírskotun til þess, að þeir hafa eftir sem áður óskertan afnota og yfirráðarétt á þeim gæðum, sem að náttúrlegum rétti er jöfn vöggugjöf allra, er í heiminn fæðast, þá er sýnilegt, að þeir væri engum órétti beittir.

Nú mætti ætla, að þessum skatti yrði »velt« eins og svo mörgum öðrum, sem á hefir verið minst, en af tvennum ástæðum gæti það ekki orðið, a. m. k. ekki nema um stundarsakir. Ber það til þess, að hver hækkun sem gerð væri á landsskuld, eða lóðagjöldum, kæmi fram við næsta mat sem verðhækkun á landinu, og leiddi þá af sér þeim mun hærri skatt. Gæti því ekki verið nema um stundarhagnað að ræða með slíkri aðferð, ef mót væru nokkuð tíð, og svo kemur og annað til greina, sem vinnur á móti öllum tilraunum til að velta skattinum yfir á landnotendur með alment hækkandi álögum á þá. Við svona skatt fellur ræfnilega alt land í verði sem verzlunarvara, af því þá verður meira framboð á því, en með fallandi landverði lætur ekki vel í ári með að hækka landsskuldir o. s. frv. því það leiðir til þess, að þeir, sem fyrir álögunum verða, leita þangað sem framboð er meira á jarðarafnotum, og þau ódýrari móts við aðstöðu.

Það verður því að teljast með höfuðkostum slíks skatts, að þeir sem hann eiga að greiða geta ekki velt honum af sér svo teljandi sé, og yfirleitt fullnægir hann öllum þeim skilyrðum fyrir heppilegum skatti, sem að framan eru talin: Skattstofninn er augljós¹⁾ og ábyggilegur, og

¹⁾ Það þykir ef til vill geta orkað tvímælis hvort skattstofninn sé eins augljós og hér er haldið fram. Auðvitað dettur engum í hug að hægt sé að dylja landeign eða draga undan skatti, en hitt draga margir í efa, að óhugsuðu máli, að hægt sé að meta hið félagsmyndaða

væx jöfnum skrefum við allar framfarir í landinu; innheimta yrði einföld og því ódýr; útgjöldin bein o. s. frv., og síðast en ekki sízt byggist hann á þeirri grundvallarreglu að opinber gjöld sé lörin í beinu hlutfalli við þau hlunnindi, sem þjóðfélagsskipulagið lætur hverjum einum þegni í té. — Það sem þó í fljótu bragði kynni að mæla mest með slíkum skatti hjá almenningi er það, að hann þurfa að borga hvort sem er allir þeir, sem eigi búa á eigin landi eða lóð, og þá ætti þeim að vera hugþekkara að vita afgjaldið koma til almennra þarfa en til einstakra manna, því fremur sem það yrði til að létta öðrum skattabyrðum af þeim að meira eða minna leyti.

Nú er þegar hafið nýtt fasteignamat hér á landi, og verði það gert eftir þeim fyrirmælum, sem lögin setja, gefur það nokkra hugmynd um hið hreina, félagsmýndaða landverð hér á landi. Að svo komnu máli verða engar getur að því leiddar hve mikinn höfuðstól þjóðfélagið á þar, en lítill vafi er á því, að væri tekin af honum full leiga, drægi hún langt upp á móti þeim tekjum, sem hinar beinu álgur í landssjóð hafa gefið undanfarið og sá höfuðstóll, og leigan með, yxi dagvöxtum jafnhliða bættum bjargræðisvegum landsmanna, án þess þó að leggja óeðlileg höft á framtak og atorku.

Því mun verða kastað fram, að yrði þannig tekinn skattur aðaltekjustofna landssjóðs, væri þeim „monopolum“ hlíft, sem rót sína eiga í auðsafni og viðskiftaskrúfum. Áður hefir verið bent á hve fólks þau geta reynst sem skattstofn, en svo er þess að gæta, að hin óbeinu áhrif af landeignaskatti yrðu meðal annars þau, að peninga-

landverð (grunnverðið) sérstaklega. — En þar sem það hetir verið gert í útlöndum, hefir sú reynsla orðið samhljóða, að það sé engum þeim ördungleikum bundið, sem hver starfhæf skattanefnd geti ekki yfirstigið. Sumstaðar hefir auk heldur slík skilgreining þótt greiða fyrir heildarmatinu.

Í Danmörku stendur yfir fast eignamat á þessum grundvelli og á Englandi var það byrjað fyrir stríðið, en féll þá niður að sinni.

vextir lækkuðu af ýmsum orsökum, sem hér er ekki rúm til að gera grein fyrir. Yrði það talsverður hnekkir ýms-um slíkum »monopolum«, jafnframt því, að mörg þeirra, sem styðjast við, eða jafnvel grundvallast á jarðeignaréttindum, yrði að gjalda skatt af þeim. En eins og bent hefir verið á, verður að vinna á móti þeim með öðrum vopnum en skattálögum yfirleitt, en taka þau heldur þeim sérstöku tökum, sem við eiga í hvert skifti, og á hverjum stað, með hliðsjón af hvar rætur þeirra liggja.

*

*

*

Sú ályktun, sem dregin verður af þeim forsendum, sem hér hafa verið bornar fram, hlýtur því að verða á þá leið, að framvegis beri fyrst og fremst að stefna að því að fella niður allar álögur á neyzlu manna, lifsparfir og viðskifti, og leggja jafnframt smámsaman niður að hafa framleiðslu manna og framtak að skattstofni. Tekjujöfnuðurinn sé jafnóðum fenginn með auknum álögum á þau forréttindi og einkaréttindi til sameiginlegra þjóðfélagsgæða, sem sýnt hefir verið fram á að eru í einstakra manna höndum. Með því einu móti geldur hver og einn til opinberra þarfa (leiguliðar gegnum landeigendur) í réttu hlutfalli við þau afnotaréttindi, sem honum eru í hendur lögð, án tillits til þess hvernig hann notar þau, og það er sá eini grundvöllur, sem gefur þjóðfélaginu siðferðislegan rétt til gjaldheimtu af einstaklingnum, því það er í eðli sínu ekki skattur, heldur leiga af þeirri eign, sem sýnt hefir verið fram á, að þjóðfélagið, sem slíkt, hefir skapað, og á því fullum rétti. Á þann hátt er engum óréttur ger með handahófs-skattnámi í þá eign, sem hann hefir unnið sér inn, án þess að taka nokkuð frá öðrum, og jafnframt er stefnt að því, að réttur þjóðfélagsins — réttur heildarinnar — sé ekki fyrir borð borinn.

Að lokum skulu dregnar saman í eitt þær tillögur, sem beinlínis eða óbeinlínis hafa komið fram í ummælum þessarar greinar. En eins og annað sem á að eiga sér vaxtarvon, þurfa þær að spretta og þróast upp úr því ástandi sem fyrir er, en kippa ekki með einu átaki þeim

stöðum undan, sem skakt eru settar undir þjóðfélagsbygginguna, því þá hrynur fleira en til er ætlast. Því munu þær meira miðaðar við það, að hverju beri að stefna, en hitt, hve miklu fengist áorkað með þeim í bráð.

En tillögurnar verða á þessa leið:

1. Að skattalöggjöfin sé tekin til alvarlegrar ihugunar af þingi, stjórn og þjóð.
2. Að allar breytingar á því sviði stefni að því, að nema burtu neytluskatta (tolla) og aðra óbeina skatta, og enn fremur þær álögur, sem miðast við framleiðslu manna. Sé gengið á að afnema eða takmarka skattana sem mest eftir þessari röð:
 - a. Sykurtollur
 - b. Vörutollur
 - c. Kaffitollur
 - d. Útflutningsgjöld (almenn)
 - e. Tóbakstollur og aðrir munaðarvörutollar.
3. Að loknu fasteignamatstarfinu séu hinir sérstöku skattar af ábúð, lausafé og húsum afnumdir, en í þeirra stað sé af landeigendum krafist hundraðsgjalds af öllu félagsmynduðu verði lands, og annara náttúrugæða, og nemi gjaldið fyrst 1%, en fari hækkandi, með tilteknu millibili, um $\frac{1}{2}\%$ í einu, þar til fullri leigu nemur.
4. Atvinnugreinar þær, er hið opinbera rekur á eigin ábyrgð: (póst- síma- vita- samgöngumál o. s. frv.), hafi aðskilinn fjárhag, hver um sig, og gjaldtaxtar þeirra miðaðir við, að hver starfsgrein beri sinn kostnað, og til jafnaðar þau útgjöld, sem viðhald hennar og umbætur hafa í för með sér, en leggi ekki að öðru fram fé til almennra þarfa.
5. Á meðan skattar eða afgjöld af jarðeign og öðrum einkaréttindum, ásamt ýmsum aukatekjum, svo og eftirstöðvum hinna hverfandi skatta, vega eigi á móti útgjöldum landssjóðs, sé úr því bætt á þann hátt:
 - a. Að breyta nügildandi tekjuskatti í eignaskatt og tekjuskatt af atvinnu. Sé goldinn

skattur af skuldlausri eign, þá er hún nær tilteknum marki, en með þeim undanþágum, er sérstök laga-ákvæði setja þar um. Lágmark skattskyldra atvinnutekna sé fært upp eigi minna en svo, að komi móts við meðaltal af launum opinberra embættismanna.

Fari hundraðsgjaldið mjög hækkandi með vaxandi tekjum og eignum.

- b. Að hækka ýms stig erfðafjárskatts, einkum á stórum örfum.
- c. Að leggja allhótt útflutningsgjald á sild, eða taka einkarétt á verzlun hennar í landsins hendur (sbr. neðanmálgrein á bls. 388).
6. Sveita- bæja- og sýslufélögum sé með lögum ákvarðaðir skattstofnar, í samsvörun við skattaskipulag landsins.
7. Við Háskóla Íslands sé stofnaður kennarastóll í þjóðmegunarfræði (Nationalökonomi).

*

*

*

Eins og áður er sagt, eru þær tillögur, sem hér eru bornar fram, þannig lagaðar, að þess er ekki að vænta, að þær nái fram til sigurs í einu hendingskasti. Fyrst og fremst brjóta þær svo bág við ýmsa rikjandi hjátrú í þjóðhagsmálefnum, að hugsunarháttur manna þarf að breytast, göfgast og hækka, til þess þeim vinnist alment fylgi, og þessvegna þarf þjóðin að sjá verkanir þessarar stefnu hægt og hægt, en ekki með neinni allsherjarbyltingu. Með því er von til, að hún læri að meta kosti hennar, og þess grundvallar, sem hún byggist á, því eins og það er satt, sem spakur maður hefir sagt, að »það eitt hefir varanlegt gildi, sem er rétt«, eins eiga þær einar tillögur fram tíð fyrir höndum, sem ganga upp í samnefnara allra sannra framfara, sem er réttlætið.

En þó langt kunni að vera í land, er tími til kominn, að ákveða stefnuna og marka fyrstu sporin.

J. Gauti Pétursson.

Stúlkan brjóstveika.

I.

Að hætta sér á höf og fjöll,
er hugumstórum gott,
og þola bæði þurt og vott
og þreyta skeiðin öll.
Og við það opnast veröldin
og vitnast þetta og hitt,
að fara um lífsins langadal
og líta hvern við sitt.

Þó endi gangan út við mar,
er ekki að hörfa frá;
um minninganna svalan sjá
er sólskin hér og þar.
Ef horft er niður í hafið það
— í hugans innri svið —
á djúpmiðunum dimmir að
og drýgir straum og nið.

A hafið þetta horfi eg nú,
og hugurinn víða fer
við andvökunnar undraljós,
sem Aladín gaf mér
um ekkaprungin andartök
í einrúminu því,
er geymir alt sem manni er mætt,
svo minningin er ný.

Og æginiður orra-storms,
 sem alla daga hrín,
 er dottinn niður í dúnalogn,
 unz dagrenningin skin.
 Og dagsins önn, sem dvínuð er
 um dægurstundarskeið:
 Þau villa nú ei sólar sjón
 af sinni kæru leið.

En stirt er mér um tungutak
 og tregt um ljúfan hátt;
 af þúsund rökum þungar brýr
 um þessa hljóðu nátt.
 Æ, komdu, vina, og hrestu hug
 og hlúðu mínum þrótt,
 úr djúpi insta dularheims
 og dvel hjá mér í nótt.

Og mál er nú að minnast þín,
 sem mér er einna bezt
 af öllum þeim sem eru í mold
 í endurminning fest. —
 Í tíu ára stormi og styr
 eg starði fram á haf,
 á meðan þú í þinni sæng
 í þagnarveldi svaf.

II.

Að eiga ráð á eldi og sól
 er einstaklingum bezt;
 en margur hlýtur kuldakjör
 og klaka í æfinest.

— Í meðalskapi er meiri snjór
og meiri ís og hríð,
en Fjallkonan er orpin öll
á einni vetrartíð.

Og allur þessi ís og snjór
er ótal barna kjör;
því fæstum gefur sólarýn
í sinni æskuför.
Og það er gróðri mesta mein
ef mai sverfur að;
en ekki er betra andans kal
ef æskan biður það.

Frá vöggu þinni, unz vegi þraut,
þú varst að kalla ein,
og enginn að þér gætur gaf
né greip úr vegi stein.
Því eins og vant er innanlands:
þú áttir hvorki fé,
né ættingja með auð og völd,
sem aðstoð léti í té.

Um æsku þinnar öndverð spor
er ekki margorð sögn.
Um einyrkjann og alt hans fólk
er æ hin dýpsta þögn;
því skáldin kveða sorgarsálm
og söxin henda tvenn
við útför sérhvers efnamanns,
en ekki um snauða menn.

Og þá er ekki þar um rætt
í þjóðmenningarreit,
að gáfuð mæð er alin upp
í örbirgð, rétt við sveit.

En orða stírfinn Birkibeinn
fær borið hennar skjöld,
sem hefir átt við harðan kost
og hriðarélja völd.

Eg veit og skil að þráin þín
var þungu oki háð.
Eg veit og hitt, að vizka þín
í vængi gat sér náð,
og lyft sér hærra, en líklegt er,
um lítils bónda mey,
er vetrum þrjónar sérhvert sinn
og sumrum rakar hey.

En ekki fékstu létta lund:
að líkum þetta varð,
því afskekt sál er eindregin
að eignast vörzlugarð,
og hlaða kringum sjálfa sig
og sinnar eigu reit —
að hafa' að námi huga sinn
og hyggja þar á leit.

Og mótdrægt alt, sem mætti þér,
þú með þér geymdir ein,
og barst því fyrir brjósti þér,
frá bernsku, þungan stein.
Og þarna sótti altaf að
er árafjöldann jók
og einrúm þitt varð afhús læst,
sem opið mangi tók.

Að þjóðlegs anda þrá og sið
um þúsund strauma láð:
þú last það alt, sem íslenzk hönd
í afdal getur náð.

En þó að yrði þinni ment
að þessum hlutum bót,
þér varð það ekki að vopni í hönd
né verju, berklum mót.

Því einmitt þetta innilíf,
sem andann göfgað fær
og fóstað hæstu og dýpstu dygð
og drengskap, fjær og nær:
það hristir vopn úr hendi manns,
að heyja snarpa vörn,
er hljóður sækir hernám sitt
'inn harði sjúkdóms örn.

Um rök til þess og dulin drög
að dauðinn gat þér náð,
er örlög höfðu að þér krept,
er efa nokkrum háð;
en ef til vill þín ástarþrá,
sem ávöxt neinn ei bar,
að afdrifunum undirrót
og orsök dýpsta var.

Eg hef' þar að eins hugboð mitt,
því harm þinn barstu ein.
Það mein, sem grefur aldrei út,
er oftast banamein.
Svo djúpt er oft á duldri sorg
í dölum okkar lands,
að athyglinni yfir sést
og augum fjölda manns.

Því margur sá er háan hlær,
á harm í brjósti sér.
Og margur þögull sára sorg
í sínum huga ber.

Og harmi mörgum helzti lág
 er himinhvelfing sú,
 og grunt það dýpi ösku og elds,
 sem á var barnatrú.

III.

Þú bygðir, mærin, háa höll,
 sem hilti og fagurt skein.
 Úr skýjum var sú bjarta borg;
 þú bygðir hana ein.
 Um sólarveldi sýni gott
 af svölum hennar var;
 og nægtalífi andlegs yls
 var æfin helguð þar.

Og honum, sem að hjarta þitt
 í hljóði bundið var,
 var konung-dæmið ætlað alt
 og yfirráðin þar.
 Við logana, sem löngunin
 þar lagði að og bjó,
 — hann átti að sitja aftan hvern
 í ástarsælu ró.

En konungurinn kom ei þar
 og krýning varð ei nein.
 Í hallargöngum þinnar þrjár
 var þitt að ganga ein. —
 Í brjósti þínu eldur óx,
 sem enginn ræður við.
 Ef elnar logans undirrót,
 þá eykst hans brunasvið.

IV.

Og eldur þessi óx því meir'
sem ástundun var beitt
og kröftum til að kæfa hann,
því kraftar tjóa ei neitt
að bæla niður insta eld
og ástum vísa á bug;
það eyðileggur allan kjark
og yfirlit og dug.

En eins og gröfin þú varst þögl.
Og þegar nóttin lá
á eggí sínu: okkar jörð
með yfirrjáfrin blá,
þú áttir tal við mána mög,
sem mjöllum yfir skein,
og læddist inn um lítinn glugg,
er lástu og vaktir ein.

Og baðst hann um: að bera þig
í bláinn — eitthvað langt,
í líknarhendur lausnarans,
sem lækna hjarta krankt.
En fyrir mána flóka dró
og faldi þinni sýn,
— og lét í órækt ljóra þinn —
og lokuð sundin þín.

En þó var stundum þér að vild
hin þögla, dimma nótt,
er augu gaf þér undra skygn,
og ærinn vængja þrótt. —
Í vöku-leiðslu og drauma-dul
þú dvaldir fyrir þér,
er digurbarki drjúgum hraut
og draumlaus velti sér.

A sumarkvöldin saztu oft
við sjávarmálið ein
og augum leiddir öldusog
við ægi-barinn stein. —
Og jörð og himinn urðu eitt
há endimörkum dags,
er rökkvi kvöldsins vestur vék
að viðum sólarlags.

Á haustnóttum þú horfðir enn
á hafð kvöldin öll.
Og sjóinn baðstu að sækja þig
í sína kristalshöll. —
En enginn kom, og ein þú sast
við Ægimeyja grád.
Og fjöllin urðu fönnum rend
og foldin mjöllum strád.

V.

Það vildi til á vetrartíð,
í veðra skyndi-gjóst,
að veiki þín kom loks í ljós
og leið þér fyrir brjóst;
er setið hafði sína tíð
við sinn hinn dulda keip.
Í einni svipan á þér vann
og yfirtökin greip.

Og vetraræpjan fór um fold
að færa sanninn heim,
og bláan fólva bar til þín
og býtti höndum tveim.

En merkin þau á magri hönd
og munninn kringum sá,
og ennþá mest á enni og hlýr
og undir dökkri brá.

Og þessi merki sástu sjálf,
þú sást 'inn harða leik:
að líf þitt varð sem lítið skar
— sem lítið skar á kveik.
Og hryglan varð þér hörð og sár
og hröð þín andartök.
Og hjartað átti vörn í vök,
en vonin: gömul tár.

Þó flýgi bylur fjalla leið
og færi um dalsins lönd,
í hugskotinu lifði ljós
og lýsti þinni önd,
er andvakan var örðug þér,
sem ein í myrkri lást.
Og lítið var það ljós á vöxt,
en lifði og eigi brást.

Um þúsund ára þrautatið
við þinna mæðra barm
var blysið þetta ljósa ljós
í lýðsins gleði og harm:
Við ömmu þinnar kreptu kné
þú kendir ljóssins yl
og erfðir það úr hennar hönd
er hún fór sinna til.

Á augnablikum leiðslu-lífs
er lengst og næmast séð,
í myrkrið dýpst, í ljósið lengst
frá lægsta kramarbed.

Og geisla-merlað gerist þá
hið grímuskygða torg,
og þá er margt í koti karls,
sem kongs er ekki í borg.

Á draumavængjum dáleidd sál
í dularheiminn fer.
Og sælan hennar er þar öll,
sem augað neitt ei sér;
þar lifir von hins veika manns,
á vængjum flögrar hún
úr dauðans-myrkvu dala þröng.
— úr dimmu í morgunbrún.

VI.

Sá langi vetur liðinn er.
Eg lit þig hverja stund
í þinni frónsku sjúkdómssæng:
í svefni og dvala blund.
Og vökudægrin verða mér,
að vonum, minnisstæð,
og augna þinna eintal hvert
frá efstu sjónarhæð.

En vorið kom með vinda hreim,
og vatnastrengja fjöld,
og árnar kváðu indæl lög,
frá óttu, fram á kvöld.
Um allar nætur ymur datt
í eyrum niður sá
og hrifur hvern, sem hlusta vill,
og heyrnarskynjun á.

Og fjöllin urðu geira-græn,
og gróin hlíðin öll.
Og lóan ríðði sönginn sinn
í sólarljóssins höll.
Þá langar þann, sem liggur, út
í lífsins morgundögg,
þó dauðinn berji að dyrum hans
sín drungalegu högg.

Er sunna tók að gera gull
úr gráum jökulham,
hún sendi, beint frá sólargrunn,
úr suðri: bláa ull.
Og unnin vörn úr efni því
af allra handa þrám
hin vænstu klæði, er verða sén
með vefjartuglum blám.

Í ljósmóðunni landið hló,
í lofti tibrá kvik,
og hillingarnar hófu sig
um hafsins spegilblik.
Um alla dali elfur rann,
við elda sumardags
að ægi blám, frá óttu stund,
og alt til sólarlags.

En þú varst sjúk á þínum beð,
og þreyttir langvint strið,
er blómin gréru og svannur söng
og sólin skein í hlíð.
Og áin rann og elfur kvað,
og eyna hilti úr sæ.
En þú varst nærri hlið lík
í lágum moldarbæ.

Í þúsund greinum lífið lék
 í ljósi, er vermdi og skein.
 Í þrætu bendu þjóðin sat,
 en þú varst svo sem ein.
 Og alt varð loft í aftanglóð,
 og eyna hilti úr sæ.
 En þú varst alveg liðið lík
 í litlum moldarbæ.

Á sólmánuði sá eg þig
 í svefni, fölvá rós,
 þá glóði við þér geisli sá,
 er gefur meira ljós, —
 er gefur von um lengra ljós,
 en lífið getur veitt,
 í þokubygðum þrætuheims
 og þýðir varla neitt.

Þú varst að deyja árið allt
 — nei, ár að lifna við!
 og auka' að göfgi anda þinn
 og ianra lífsins frið.
 Eg græt það ei, né gremst af því
 að gröfin heimti sitt,
 því orðin varstu öll að sál
 við endadægur þitt.

VII.

Þú minnir á hinn særða svan,
 er syngur ekki neitt.
 En tíguleiknum er þó ei
 né íturvexti breytt.

Ef banasending hefir hitt
'inn hvíta fugl sem snjá,
'ann beygir fram sinn hvíta háls
og hnígur svo í dá.

Með breidda vængi' á báruflöt
hann biður dauða sinn
og kvakar að eins klökkri rödd
að kæra skotvarginn.
En engi veit hvort hefir heyrst
til himins ykkar neyð,
því upp til guðs er örðug för
og engin símaleið.

Þú mæltir varla æðru orð,
er um þig feigðin bjó,
og hélzt þér fram að hinztu stund
sem hrisla undir snjó,
er næfra sína á þó enn
og alt sitt greinafax,
en skortir stöðu, brum og bar
og blóma sumardags.

Í voru landi verður það,
sem vonin þeygi kýs:
að vorgróðurinn visnar oft
í veðra gjósti' og ís;
því ónærgætin er að sjá
vor allra hæsta stjórn,
og tekur því hinn mæta mann
og marga dýra fórn.

VIII.

Með þöglum vörum, heitum hug
 eg hugsa oft til þín —
 um æsku þína, örbirgð, neyð,
 og andlát, vina mín!
 En liðin er sú þunga þraut,
 er þig til grafar bjó,
 og voðalegan veg þú barst
 með veikum kröftum þó.

Í þinni fátaekt þú varst rík;
 í þyngstu sjúkdómssönn
 hver hugsun þín var heit og skír
 og há og djúp og sönn.
 Af Bragagulli og sagnaseim
 var sál þín efnuð vel;
 í æfintýra undra sæ
 þú áttir perluskel.

Þú áttir lífsins æðstu þrár
 í innilegri sál.
 Og sjón og heyrn var þannig þín,
 að þýddir huliðs mál.
 Þú áttir vin — sem aldrei fékk
 af ástum þínum blæ,
 þó veðrin kendi ýms og ill
 af úfnum tímans sæ.

En svo fór það: að sástu djúpt
 í sorga undirheim.
 Og útsýn þín var oftast nær
 um okkar kulda geim.
 Í harma þinna djúpadal
 þú dvaldir marga stund,
 og sár þitt varð, ef sé eg rétt,
 að sjávardjúpri und.

Eg fylgdi þér á fremstu nöf
í fjaðralausum hjúp,
og fótum stakk í fjörumál
við falins tíma djúp.
Og eilíf þögnin að þér laut
við aftanroða glóð,
og birgði þig í barmi sér.
Hún ber þig nú í sjóð.

IX.

Þó vöngum sínum velti jörð
og verði stundum dimt
og birti aftur, brosi sól
og blási síðan grimt,
þó ýmsu viðri út í frá
og ýmsu blási um mig:
úr mínum huga máist ei
hið minsta orð um þig.

Við sáumst, þegar sólin gekk
úr suðri út í haf,
og aftanroði eldi brá
í yzta skýjatraf.
Og þú varst eins og sólin sjálf
um sumars dýrðar kveld,
en undir gömlum héluham
eg huldi sjálfs mín eld.

Og önnur var eg orpinn þá,
með eirulausan fót,
að elta skugga alla leið
í yztu dægra mót.

A morgunbjarma mændi' eg þó;
 en mér var g a n g a n treg
 um aftanroða og óttu lönd
 og áfram sólarveg.

Á krossgötum eg kyntist þér;
 eg kom og leit á þig;
 úr þínum augum þagnarmál
 eg þýddi, fyrir mig.
 En ástin þín var eins og guð:
 sem andi dulinn sýn.
 Og eg var þögull alveg eins;
 en yrki nú til þín.

Þú horfðir á mig dul og djúp,
 og drógst þig svo í hlé,
 og birgðir hjartans þrá með þögn,
 unzt þú í valinn hné.
 Og árum saman einn var eg
 með ærið veillum móð,
 en kem nú loks með krans til þín
 og kveð þér — erfiljóð.

Og andblær mjúkur einmitt nú
 í andlit kemur mér,
 sem að mér lúti einhver sál,
 sem ástúð til mín ber.
 Á götur þær, sem liggja lengst
 í ljósið vorri sál,
 eg horfi nú, um hljóða nótt,
 og hlusta, — en brestur mál.

X.

Í dái liggur vilji vor,
en vaknar stundum skjótt;
í viðburðunum viðrar sig
og vakir dag og nótt.
Við tíu ára drauma djúp
eg dvel nú fyrir mér.
Með veikum burðum stend á strönd
og stari — eftir þér.

1906—'10.

Guðm. Friðjónsson.

„Þingstaðurinn undir Valfelli“.

Í síðasta hefti Skírnis (bls. 319—21) var grein með þessari yfirskrift eftir séra Einar Friðgeirsson á Borg. Vegna þess að hún kann að geta valdið nokkrum misskilningi í því efni, er hún fjallar um, vildi eg mega gera stutta athugasemd við hana, án þess þó að ræða þetta mál frekar á þessum vettvangi.

Höf. segir: »Valfell þekkist enn, það eru Múlarnir fyrir vestan Langá« (Grenjanúli og Grímsstaðamúli). Þetta mega menn ekki skilja svo, að mular þessir hafi verið eða séu álitnir af kunnugum mönnum vera það Valfell, sem nefnt er í sögu þeirra Hrafn og Gunnlaugs orms tungu, því síður, að mular þessir eða nokkur múli eða fell á þessum slóðum sé enn kallaður Valfell. Örnefnið er gleymt og aflagt, máske fyrir löngu og að minsta kosti fyrir heilli öld; fyrir því má færa óyggjandi sannanir. Dr. Kr. Kálund hefir bent á það í landslýsingu sinni, að frásögn Bandamannasögu, þar sem hún getur Valfells, sýni og sanni, að það hafi ekki verið vestan Langár. Hann hefir það úr skýrslum Þorkels prests Eyjólfssonar á Borg, að fróðustu menn ætli, að Valfell sé fell nokkurt fyrir ofan Tandrasel. Séra Þorkell fór eftir getgátum Guðmundar bónda Guðmundssonar í Stangarholti, sem var maður réttorður og glöggur (f. 1823, d. 1905); Guðmundur átti við Kamb, sem nú er svo kallaður, og kemur þetta betur heim við frásögn Bandamannasögu. Hún nefnir og »skörðina«, er svo eru alment kölluð enn í dag skörð þrjú í múlanum fyrir ofan Tandrasel; þau heita nú Réttarskarð (af sumum nefnt Fremsta-skarð), Fálkaskarð (minnir á Valfell; kallast nú oft Mið-skarð) og Bæjarskarð.

»Þingstöð þeirra Borgfirðinga« undir Valfelli var vitanlega vorþingstöð alls þess þings, er síðar nefndist Þverárþing, eftir að þingstöðin var höfð við Þverá. Þingstöð þessa þings var fyrst í Þingnesi austan Hvítár, en síðan (frá því um 963 líklega) á Þinghól

(sem nú heitir) vestan Gljúfrár, sem menn hafa alment álitid til þessa, að sé sami staðurinn og »undir Valfelli«. Þar var þingstaðurinn mjög óhaganlega settur fyrir flesta, og hefir því líklega í byrjun 11. aldar) verið fluttur aftur nær miðju og settur í nesið, sem var þá milli Þverár og Hvítár. Hvítá brautz í gegnum nesið, og myndaðist þá Stafholtsey; hefir það orðið fyrir ca. 1140; var þingið síðan haldið í eyinni, en þó jafnan kent við Þverá. Því verður varla neitað, að þingstaðurinn hefir verið harla út úr þá fáu áratugi, er hann var á Þinghól, en mjög miklu verra hefði verið að hafa hann fyrir vestan Langá eða enn vestar, svo sem á þeim stað fyrir vestan Urriðaa, sem síra E. F. á við. Slík ráðstöfun hefði verið alveg óskiljanleg og óþolandi fyrir flesta þingunauta.

Höf. segir enn fremur: »Á vestri bakka Urriðaa, í hlíðarrótunum, þar sem áin kemur niður úr brattanum, hefir mér verið bent á mjög fornlegar rústir, er þau munumæli fylgdu að vera mundi þingstaðurinn forni undir Valfelli.«

Sá er fyrstur tók eftir þessum »rústum«, að því er kunnugt er, var séra Haraldur Nielsson, núverandi prófessor í guðfræði; hann ólst upp á Grímsstöðum og tók í æsku eftir því, að þúfnahvirfing ein, rétt fyrir ofan götuna og skamt fyrir vestan Urriðaa, var meira áberandi en smáþýfið umhverfis, og kom til hugar, að þarna hefði einhvern tíma verið eitthvert mannvirki. Er hann síðar fór að athuga frásögnina um ferð þeirra Þorsteins Egilssonar til þingstaðarins undir Valfelli og virtist orðalag sögunnar benda til, að sá þingstaður hefði verið einhvers staðar nálægt Grenjum, kom honum til hugar, að þúfnahvirfingin einkennilega væri leifar fornrar þingbúðartóftar, og þingstaðurinn hefði verið hér, og lét þessa hugmynd í ljósi við séra E. F. Þessi voru nú munnmælin um þingstað þarna, og að Grímsstaðamúli og Grenjamúli væri Valfell var ekki annað en ágizkun, studd við þessa hugmynd. — Eg var á ferð þarna 20. ág. síðastl. og athugaði þessa þúfnahvirfing, fyrst með Jóni bónda Guðmundssyni frá Valbjarnarvöllum, er kannaðist vel við hugmynd séra Haraldar og þúfnahvirfinguna, því að hann hafði verið þarna áður með séra E. F.; síðar sama dag skoðaði eg hana með séra Haraldi og Hallgrími bróður hans, bónda á Grímsstöðum. Til að sjá líkist hún einhverjum mannvirkisleifum, en þó sést hvergi nein tóftarlögun, og þúfurnar eru allsendis óreglulegar og eins og þýfi gerist. Gróðurinn bendir á lausari eða hreyfða mold. Við grófum í þessar þúfur á tveim stöðum, þar nálægt sem helzt mátti vænta gaflhlaða, ef verið hefðu. Moldin virtist vera hreyfð, og innan um

hana voru nokkrir steinar, er virtust hæfilegir hleðslusteinar, en þó varð hvergi vart neinnar hleðslu eða neins, er sýndi, að þar hefðu veggir verið hlaðnir. Örlitlir viðarkolamolar fundust vestast í þúfnahvirfingunni, og kann hér eitthvað hafa verið átt við kolagerð eða farið með eld, en hrískjörur eru hér alt umhverfis. Það virtist ekki ná nokkurri átt, að hinn einkennilegi, grænni, gróður á þúfum þessum, sem virðist koma af því, að jörð hefir hér verið breyðð, stafi enn í dag af því, að hér hafi verið losað um jarðveg fyrir 9 öldum síðan, heldur hlýtur hann þá að stafa af miklu yngra jarðraski. Það sýnir gróður á fornum tóftum annarstaðar í líku landslagi. — Það verður heldur ekki með vissu séð, að hér hafi nokkru sinni tóft verið, og umhverfis verður hvergi vart tóftaleifa né neins slíks; það fullyrtu þeir bræður báðir, og hvergi gat eg komið auga á neitt slíkt. Í rauninni er því ekki neitt, sem bendir til að hér hafi verið þingstaður nokkru sinni.

Um það, hvort frásagnirnar í sögu þeirra Hrafns og Gunnlaugs ormstungu og í sögu Egils Skallagrímssonar gefi mönnum nokkra ástæðu til að ætla, að vörþingstöð Borgfirðinga hafi um eitt skeið verið vestar en á Þinghól eða vestur hjá Grenjum, skal hér talað í fæstum orðum. — Viðvíkjandi orðalagi hinnar fyr nefndu sögu skal það tekið fram, að ekki er óhugsandi, að Valfell hafi verið heiti á öllum hæðaklasanum fyrir vestan Gljúfrá, eða söguritarinn álitist það, og því orðað svo sem hann gerir; en próf. B. M. Ólsen hefir látið það álit sitt í ljós (í ritg. um Gunnls. 1911), að orðin »u p p undir Valfelli« í seinna skiftið hafi verið sett inn sem innskot á skakkan stað, á eftir orðunum »er þeir koma«, þar sem þau orð standa í fyrra skiftið, í stað þess, að þau áttu að koma inn á eftir sömu orðum, þar sem þau standa í seinna skiftið. Slík leiðrétting er mjög sennileg og kæmi alt vel heim, ef svo stæði; því að það var ekki óeðlilegt né óskiljanlegt, að Þorsteinn færi fyrst vestur að Grenjum; sagan greinir einmitt ástæðuna og alla málavexti, getur um og skýrir þennan krók, þótt það komi aðalfrásögninni (um drauminn) ekki beinlínis við. Annars virðist þessi leið Þorsteins koma einkennilega vel heim við þá leið, sem hann er látinn fara í frásögninni í Egils sögu um það, hversu hann fékk forðast fyrirsát Steinars við Einkunnir (83. k.), svo undarleg sem sú leið virðist nú vera. Séra E. F. segir, að það sé »sýnilegt af frásögninni, að hann (Þorsteinn) ríður niður með Langá, svo kallaðan Grenjadal«, og að það hafi legið »lang beinast við frá girðingunni á Grísartungu«. Þetta virðist ekki koma vel heim við það,

sem fyr og síðar hefir verið sagt um leifar garðlags þessa á Grísartungu, sem Þorsteinn kom frá, sbr. Árb. Fornfél. 1886, bls. 3, og sem kemur vel heim við frásögnina um, að Þorsteinn hafi verið kominn »gegnþingstöð«, er Íri hljóp í móti honum, ef þingstöðin var á Þinghól við Gljúfrá, eins og söguritarinn sýnilega gefur í skyn, að verið hafi í frásögninni um þinghaldið, er Egill lauk upp sættargerðinni milli þeirra Steinars og Þorsteins samsumars. Að Þorsteinn hafi farið fram hjá Þinghól frá garðlaginu, hafi það verið þar, sem bent hefir verið á, er eðlilegt, en hitt er undarlegra, að því er nú sýnist, að hann síðan skuli vera sagður ríða »suður um mýrar fyrir ofan Stangarholt«, og að Steinar skuli sagður sitja fyrir honum við Einkunnir; og því undarlegra virðist, að Þorsteinn skuli fara þennan krók, vestur að Stangarholti, þar sem hann ræður það af austur við Gljúfrá, að fara ekki niður hjá Einkunnum. Söгурitarinn lítur sýnilega svo á, að Þorsteinn hafi ætlað sjálfsagða og vanalega leið, en farið mjög út af henni, er hann fór til Ölvaldsstaða. Þessa leið hefir hann átt að fara, er hann fór fám árum síðar upp að Grenjum og þaðan til þingstaðarins undir Valfelli (Gunnl.s.), en nú er þessi leið ekki farin milli Þinghóls og Borgar. — En þótt menn vilji nú álíta, að garðhleðslan og þingstöðin hafi verið miklu vestar en við Gljúfrá og Þorsteinn riðið ofan Grenjadal, eins og séra E. F. áltur, þá kemur það illa heim, að hann hafi verið kominn »gegnþingstöð«, er Íri hitti hann, og þingstöð þessi hafi verið fyrir vestan Langá og Urriðaa, og Grenjamúli, bærinn að Grenjum og alt það svæði umhverfis verið í milli; það hefði verið harla undarlega að orði komist að segja þá um Þorsteinn, að hann væri kominn gegnþingstöð þeirri, hvar sem hann svo var á þeirri leið. En »engin munnmæli né menjar eru til, sem heimili að hugsa sér, að hér sé um einhvern þriðja stað að ræða«, segir séra E. F. réttilega. Og þarna við Urriðaa eru heldur hvorki menjar né munnmæli, sem heimila að hugsa sér, að þar hafi nokkru sinni verið þingstöð.

Reykjavík, 1. sept. 1917.

Matthías Þórðarson.

Ritfregnir.

Líf og dauði. Þrjú erindi eftir Einar Hjörleifsson Kvaran. Reykjavík. Útgef. Þorst. Gíslason. MCMXVII.

Á síðustu tólf árum hefir oft heyrzt talað um »rannsókn dul-arfullra fyrirbrigða« hér á landi. Menn hafa skipzt í flokka um málið og einatt lent í æsingum út úr því, bæði við sókn og vörn. Einkanlega voru aðfarir andstæðinga málsins fyrst framan af þess eðlis, að þær eru gott dæmi um það, hvernig ekki á að rita eða tala um jafn-alvarlegt og mikilsvert mál, sem þetta er. Mikil breyting hefir orðið síðan á afstöðu manna til þess, og sérstaklega er það auðsætt, að hvímpni almennings við það er að réna. Menn eru farnir að venjast því.

Nafnið »dularfull fyrirbrigði« er ekki allskostar hentugt. En flestir munu fara nærri um, hvað átt er við með því, þó að búast megi við, að sumum detti helzt í hug »hoppandi borð« eða nornin í Endor, er þeir heyra á það minzt. Og hvorttveggja má til sanns vegar færa.

En með »dularfullum fyrirbrigðum« er átt við margt, sem þó er skylt. Er það helzt þetta tvent:

1. Áður óþektir hæfileikar mannsálarinnar og starfsemi þeirra. Má þar til nefna fjarhrif (telepapría).

2. Starfsemi sú, sem fram fer hjá einstaka manni (miðli), í sérstöku ástandi meðvitundarleysis (trance), og venjulega kveðst eiga rót sína að rekja til framliðinna manna. Starfsemi þessi greinist aftur í tvent a) ósjálfrátt tal og ósjálfráða skrift, og b) hræringar efnislega hluta, »holdganir«, ljós, raddir o. fl. fyrirbrigði, sem eigi sýnist mega skýra með þektum náttúrulögum, og venjulega er haldið fram, að stafi frá »öndum«.

Hverju má nú trúu? Hvað langt er þessi rannsókn komin? Þannig spyr fólk að vonum, þ. e. a. s. þeir, sem eru ekki fyrir fram búnir að taka afstöðu til málsins.

Því má í fyrsta lagi svara svo, að nú orðið er enginn ágrein-
ingur um það meðal þeirra, er þessi mál hafa rannsakað, að fyrir-
brigðin gerist. Auðvitað er nauðsyn að athuga í hvert skifti, hvort
eigi sé um svik að ræða. Falskir peningar eru einnig til. En sú
heildarskýring, að fyrirbrigðin sé svik og misskynjanir, sem t. d.
kemur berlega fram hjá próf. Alfr. Lehmann við Hafnarháskóla (í
riti hans »Overtro og Trolldom«), er nú kveðin niður. Sömu skýr-
ing á líkanlegu fyrirbrigðunum gefur einuig Frank Podmore, ensk-
ur sálarrannsóknamaður (í riti sínu »Modern Spiritualism«, London
1902), en hann er á hinn bóginn sannfærður um veruleik fjarhrifa,
sem Lehmann einnig neitaði í áður nefndu riti; til þess að forðast
þau fann hann upp þá tilgátu, að »ósjálfrátt hvísl« gæti útskýrt
alt það, er sumir töldu benda á fjarhrif. Áður en eg fór frá
Höfn, vissi eg þó til, að Lehmann var orðinn trúaður á tilveru
fjarhrifa.

Gangurinn er yfirleitt þessi: Fyrst er fyrirbrigðunum neitað,
fjarhrifum og öðru. Svo er játað, að fjarhrif sé til, en þau, ásamt
»undirvitundinni«, notuð til þess að forðast anda-tilgátuna. En
þessi undirvitundarkenning á aðallega rót sína að rekja til eins
helzta enska sálarrannsóknamannsins, Fred. Myers, í sambandi við
nýrri rannsóknir á skiftingu eða klofningi persónuleikans.

Myers var sjálfur sannfærður um samband við framlíðna menn
og undirvitundarkenning hans einn liður í kerfi því, er hann bjó til
fyrir andlegu fyrirbrigðin. Líkamlegu fyrirbrigðin átti hann ekki
við að setja í kerfi, enda hefir Sálarrannsóknafélagið enska lítt gefið
sig að þeim, en auðsæð er, að hann hefir í því efni verið yfirleitt
sammála spiritistum. En kenning hans um undirvitundina hefir
og sætt andmælum, þótt þess sé nú sjaldnast getið, og mjög verið
efazt um, að undirvitundin hefði þá undra-eiginleika til að bera,
sem Myers hélt fram (sjá t. d. Boris Sidis dr.: The Psychology of
Suggestion) — hvað þá, að hún sé almáttug, eins og sumir virð-
ast ætla.

Rannsókn dularfullra fyrirbrigða er ákaflega flókið mál, enda
enn svo að segja á byrjunarskeiði. Er því eigi fullnaðarúrlita að
vænta, eða samfelds heildarkerfis. Þó mun óhætt að segja, að
ýmislegt hefir þegar unnizt. Í fyrsta lagi, að fyrirbrigðin gerist.
Í öðru lagi, að þau sýni og sanni ýmsa undraverða hæfileika mann-
legrar sálar. Um þetta tvent má telja þá alla samdóma, sem lagt
hafa stund á rannsóknirnar. Og í þriðja lagi telja margir, mjög
margir af þeim, er athugað hafa fyrirbrigðin árum saman, það

sannað, að persónuleiki mannsins lifi eftir dauðann, og unt sé, að komast í samband við framliðna menn, þótt á því sambandi sé mikil vandkvæði. Og mörgum finst, að þótt ekki sé lengra komið, gefi þessi árangur æðstu vonum mannanna beinan byr undir báða vængi.

Einar H. Kvaran ræðir í fyrsta erindinu um »mótþróann gegn rannsókni dularfulla fyrirbrigða«, og einkum þann mótþróa, sem er sprottinn af trúarlegum ástæðum. Allir vita, að þessi mótþrói er til, þótt furðulegt sé, þar eð enginn getur vænzt þess að kveða niður vísindalega rannsókn með því að troða upp í eyrun, eða myrkva sólina með því að loka augunum. En gott er að fá ástæðum þess mótþróa svarað á hógværan og alvarlegan hátt, svo sem hér er gert.

Annað og þriðja erindið er ágríp af bók eftir Sir Oliver Lodge, enskan eðlisfræðing frægan, sem starfað hefir um tugi ára að sálar-rannsóknum, og hallast að skýringum spiritista að lokum. Fjallar bókinn um sannanir þær, er hann kveðst hafa fengið fyrir því, að sonur sinn látinn (Raymond, féll í stríðinu haustið 1915) hafi komið í samband við Lodge-fjölskylduna, fyrir tilstilli miðla og með borðhreyfingum.

Annað erindið (Raymond I) skýrir frá nokkrum af þessum sönnunum og hefir þó orðið miklu að sleppa. Eru þær misjafnlega atekrar, en þess verður að gæta, að bók Lodge er aðallega rituð til huggunar syrgjandi mönnum, en eigi sem vísindarit. Þó gæti eg trúað því, að mörgum finnist mikið til um sumar sannanirnar og ekki auðvelt að skýra þær á svo kallaðan eðlilegan hátt.

Þriðja erindið (Raymond II) fjallar um lýsingar þær á ástandi sínu og umhverfi eftir dauðann, sem Raymond hefir látið uppi. Slíkum lýsingum hefir oft verið slept frá birtingu, þar eð menn hafa litið svo á, að fyrst þyrfti að sanna tilveru framliðinna manna, áður en gefinn væri gaumur að lýsingum þeirra á »öðrum heimi«. En mikið er til af þeim, og þótt þær sé nokkuð sundurleitar, þá er hitt ef til vill meiri furða, hve mjög þeim ber saman. En menn eru oft ósanngjarnir í þeirra garð. Gerum t. d. ráð fyrir, að tvö eða fleiri 6—7 ára gömul börn ætti að lýsa heilli heimsálfu eftir nokkurra vikna dvöl þar, sitt á hverjum stað, ef til vill. Hætt er við, að eitthvað yrði sagt of eða van, þótt börnin væri öll af vilja gerð, að segja rétt frá, — ekki sízt, ef áheyrandinn væri ger-samlega ókunnugur í þeirri álfu, og hún mjög ólík ættlandi hans.

«Og hugsa má, að líkt sé á komið um framliðna menn og samband þeirra við jarðheima. Og eru þá ótalin vandkvæði þau, sem stafa af því að þurfa að nota »milliliði«, bæði hér og þar.

Eg tel líklegt, að langt of snemt sé að semja nú þegar nokkra »landafræði annars heims«, en það vill Lodge heldur ekki gera. Raymond segir að eins látlaust frá ýmsu því, er fyrir sig hafi borið og játar vanþekkingu sína á mörgum hlutum. En þótt mér hafi löngum þótt trúlegust skoðun þýzka heimsaþekingsins Carls du Prel, að dauðinn sé að eins ástandsþreyting, þreyting á skynjunarmáta, og annar heimur þurfi ekki að vera fjarlægur þessum í rúmi, þá finst mér, að mennirnir eigi að hlýða með hleypidómalausri athugun á frásögur þeirra, er nærri frétt segjast komnir um eðli lífsins eftir dauðann, þótt einkennilegar virðist stundum. Þolinmóð rannsókn mun efalaust fræða mannkynið se meir um það, og hver einstaklingur getur sagt við sjálfan sig með nýrri merkingu: Qui vivra verri! **Jakob Jóh. Smári.**

Kirkjan og ódauðleikasannanirnar. Fyrirlestrar og prédikanir eftir **Harald Níelsson**, prófessor í guðfræði. Reykjavík 1916. Ísafold — Ólafur Björnsson.

Í bók þessari eru fjórir fyrirlestrar og þrjár prédikanir eftir einn nafnkunnasta kennimaun landsins — mann, sem orðið hefir fyrir mikilli reynslu um dularfull fyrirbrigði og fengið af henni staðfestingu á dýrmætustu sannindum trúar sinnar. Mun margan fýsa að kynnst nánara kenningum hans, suma ekki hvað sízt, ef til vill, fyrir þá sök, að þær hafa verið gerðar að blaðamáli og valdið miklum deilum manna á meðal.

Fyrsti fyrirlesturinn er um svipi lifandi manna og þar skýrt frá nokkrum dæmum þessa, að svo virðist, sem lifandi menn geti, sjálfrátt eða ósjálfrátt, »farið úr« líkama sínum um stundarsakir, gerzt sýnilegir annarsstaðar, og stundum munað eftir á, hvað fyrir sig hafi borið. Fullvíst má telja, að þetta geti átt sér stað, — hvort sem sálin beinlínis flyzt til í rúminu, hefir áhrif í fjarlægð gegnum rúmið, eða getur um stund hafið sig yfir takmarkanir þessa, og er það síðastnefnda þó óskiljanlegast — og styður það eigi lítið trúna á sjálfstæði sálarinnar. Til gamans má benda á, að þetta var algeng trú í fornöld meðal Norðurlandabúa, — og er enn meðal margra þjóðflokka —, sbr. orðið »hamfarir« og söguna um Finna þá, er Haraldur konungur sendi til Íslands, og fleiri líkar frásagnir í fornsögunum.

Annar fyrirlesturinn fjallar um kraftaverkiu fyr og nú. En aðalefni hans frásaga um dásamlega lækningu á fárveikri

og margþjádri enskri stúlku, að því er virðist að miklu leyti fyrir aðstoð ósýnilegra vitsmunaaflla. Efnid er tekið úr bók eftir sjúkl-linginn, Dorothy Kerin, sem heitir »The living Touch«. Frásögnin er afar-merkileg og hrífandi og svo vel vottfest, að erfið mun að rengja. Get eg eigi annað séð, en að prófessorinn hafi rétt fyrir sér, er hann segir: »Vilji t. d. guðfræðingarnir neita þessu kraftaverki og öðrum jafn-vel vottfestum, sem gerzt hafa á vorum dögum, þá ættu þeir að hætta að segja mönnum frá kraftaverkum biblíunnar og hætta að lesa þau á helgum frá altari og prédikunarstólum kirkjunnar«.

Þriðji fyrirlesturinn heitir áhrif sálarrannsóknanna á hinar kristilegu trúarhugmyndir. Er sérstaklega bent á þau atriði trúarhugmyndanna, sem vænta má, að breyti eitthvað blæ við árangur þann, sem nú þegar er orðinn af sálarrannsóknunum. Nefnir höf. t. d. hugmyndir manna um syndina, innblásturinn, upprisuna og lífið eftir dauðann. Sýnir hann, að »sálarrannsóknirnar eru að taka upp aftur hinar andlegu náðargáfur frumkristinnar, til rannsókna og til þess að skýra þær og kenna oss að skilja þær«, og geri yfirleitt öll kraitaverk Krists sennileg.

Fjórði fyrirlesturinn heitir Kirkjan og ódauðleika-sannanirnar og er upphaflega til orðinn út af árásum þeim, er gerðar voru á prédikunarstarfsemi prófessorsins og afstöðu hans, sem kennara í guðfræði, til sálarrannsóknanna. Gerir hann í fyrirlestrinum hreint fyrir sínum dyrum og skýrir frá því, hvers virði hann telji hina nýju þekkingu fyrir kirkju og kristindóm.

Mér og fleirum hefir lengi verið það óskiljanlegt, hve mikið hefir verið sinnuleysi og deyið kirkjunnar manna gagnvart þessu máli, eða jafnvel andróður gegn því. Ef ekkert er á því að byggja, um framhald lífsins eftir dauðann, sem er einn af hyrningarsteinum trúarbragðanna, þá fer víst mörgum að finnast, þau standi á völtum fæti. Og þótt einhverjar smávægilegar trúarsetningar færi um leið í ruslakjstu tímans, þá ætti kirkjan ekki að telja eftir slíkan útvígjamissi, ef höfuðvíginu yrði með því borgið.

Trúarbrögðin hafa lengst af verið loftkastalar fyrir öllum fjölda-manna. En nú koma þessar rannsóknir og vilja byggja grunnmúr undir loftkastalana. Á þá ekki að taka því fegins hendi, eða má ekki búast við því af þeim, sem telja loftkastalana sína dýrmætustu eign? Ætti þeir ekki að gera það sjálfra sín vegna og þess málefnis, sem þeim er hjartfólgið?

Prédikanirnar heita svo: Auðgaðir af fátækt hans, páskagleðin og vottar. Eru þær einkendar af andagift.

þeirri og ræðusnild, sem höfnndinum er lagin, og geta menn þar séð, hvers eðlis kenning hans er. Og eg vil spyrja alla þá, sem »kristnir« vilja vera, að því, hvort þeim finnist ekki þar vera að ræða um lifandi, sannan kristindóm, og hvort sá kristindómur sé ekki full-boðlegur, þótt hann vanti ef til vill eitthvað af löghelgudum kredduflikum. Spyrja þá, hvort þeim finnist hann ekki vera í nokkurn veginn samræmi við nýja-testamentið, sem »lúterskir« menn setti helzt að binda sig við — og meta jafnvel meira en játningarritin, að þeim ólóstudum.

Bókin á brynt erindi til allra presta landsins og trúhneigðra manna, flestum bókum fremur. Hún er eins og lækur af lifandi vatni yfir akur kirkjunnar, sem ekki hefir altaf verið í sem beztri rækt. Og víst má telja, að margir fagni henni.

Ef sannleiksleitin á sér ennþá nokkurn griðastað í kirkju vorri.

Jakob Jóh. Smári.

Guðm. Guðmundsson: Ljóð og kvæði. Nýtt safn. Reykjavík. Bókaverzlun Sigf. Eymundssonar. MCMXVII.

Í inngangskvæði að þessu nýja safni afneitar skáldið ýmsu því, sem hann sætlaast ekki til að komist inn í ljóð sín. Og ljóðagerð sína einkennir hann meðal annars með þessari vísu:

En lægsta lóukvakið,
laufþyt og sævarnið,
hlæjandi' og grátandi' í hljóði
hörpuna stilli eg við.

Bendingin er góð um það, hvernig líta beri á ljóð hans, og hvar skáldið finnur sjálft styrkleik sinn vera.

Sízt ber því að neita, að margt er snjalt og fallet í ádeilu- og hvatningarljóðunum í bókinni — og þau eru nokkuð mörg. Eg veit, til dæmis að taka, ekki, hver Íslendingur hefði átt að geta ort betur en G. G. um það efni, að kirkjan eigi að hleypa inn kærleikanum, nýjum hugsunum og frjálsri rannsókn, en reka kreddurnar út.

Þá streymir fólkið þar aftur inn,
sem úti var neytt að standa,
og huga langar og líkama sinn
í ljósbaði beilags anda. . . .

Sé rekin úr kirkjunni rannsókn frjáls
á röksemdum trúariunar,

er guði með ofbeldi meinað máls
í musteri dýrðar sinnar.

Eins er margt vel um þau kvæði, þar sem einkum kennir ættjarðarástarrinnar og sjálfstæðisþrárrinnar — þó að fyrir komi það þar, að flokkadeilanna — gargsins liggur mér við að segja — kenni helzti mikið.

En ekki er eg í neinum vafa um það, að þá nær hann til langframa bestum tókum á hugum lesenda sinna, er hann stillir hörpuna »hlējandi og grátandi í hljóði«. Þá fær hann oft þann blá á ljóðin, að slíkt er ekki annara meðfæri en snillinganna. Ekki sízt þegar hann fer að leika sér

að því að byggja brú
til bjarmalands minninganna.

Og það gerir hann oft. Á bifröst hugsjónaafslains verður hann konungur. Þar rænir hann enginn ríkinu. En þegar endurminningar fara að verða of nærgöngular,

þá verður mér tignin torbær þraut.
— mig tekur í gömlu meinin,
sem forðum, þegar eg bát minn braut
við brimsorfinn unnarsteininn.

Þá verður mér ljóst, hve viðsjált er
að vera hið liðna að kanna:
Að ósekju leikur enginn sér
að eldinum minninganna.

Dálftill samstæður ljóðabálkur í bókinni — 15 smákvæði — er með fyrirsögninni »Andante religioso«. Sú fyrirsögn gæti átt við mikinn hlut þessara ljóða. Það er bersýnilega svo mikið í G. G. af því, sem á öðrum tungum er nefnt »religion« og við neyðumst til að nefna »trú«, þó að það orð sé mjög villandi, að þau eru fá sálmaskáldin okkar, sem jafnast hafa við hann að því leyti. Alt, sem hann ann, vekur hjá honum hugarhræringar, sem eru náskyldar tilbeiðslunni. Kvæðið um heimilið hans er í raun og veru sálmar. Í yndislega fallegu kvæði um græfreit frönsku sjómannanna hér í kirkjugarðinum er kvæðið svo orði:

Þar er svo hljótt og heilagt,
að helgisþjöll virðist mér
á skóm þar að ganga um garðinn,
sem gestunum vígður er.

Það á fráleitt eingöngu við þann garð í huga G. G. Hann er bersýnilega oft í því skapi, að lífið alt, tilveran öll er honum heilög.

Ög innan um þunglyndið og »eld minninganna«, sem viðsjált er að leika sér að, innan um hugsanirnar um það, er hann varð fyrir töfrum, heyrði fagran söng fyrir söndum og lærði að skilja það, að »vandi er að sleppa heill úr tröllahöndum«, er bjartsýnið takmarkalaust. Eg bendi að eins til dæmis á kvæðið, sem nefnt er »Gesturinn«, og er eitt af fallegustu og tígulegustu kvæðum, sem til eru á íslenzku:

Eg sá hvar hann kom neðan Djúpaðal
úr dimmunni' að handan — á bleikum,
með síðhött, í síðólpu', á bleikum.
Hann bar þar dökkvan við dvergasal. —
Ög dísirnar gengu frá leikum.

Allir geislar og allir fuglar lögðu á flóttu. Drangarnir stóðu eins og draugar á gægjum. Lyngið og grasið var sviðið, þar sem leið hans lá um. Gesturinn var kominn til þessað finna skáldið. Horfurnar voru hinar ísbyggilegustu. En þegar sólin brautz fram,

þá var sem úr álögum alt væri laust
í eilífðar dýrðar-ljóma.

Ög alt ummyndaðist — bæði gesturinn og alt annað.

Langt mál mætti auðvitað rita um þessa bók og verður sjálf-sagt gert af einhverjum. Eg hefi ekki setlað mér að gagnrýna ljóð Guðm. Guðmundssonar — heldur að eins að vekja athygli manna á fallegri og elskulegri bók, sem vafalaust verður íslenzkum ljóðavinum til ánægju.

E. H. K.

Starfskrá Íslands. Handbók um opinberar stofnanir og starfsmenn árið 1917. Gefin út af hagstofu Íslands. Rvfk 1917. VIII + 160 bls. (Verð 2. kr.).

Þetta er í fyrsta sinn, að hagstofan gefur út rit um þetta efni, en áður hafa skrár yfir embættis- og sýslunarmenn komið út 10 sinnum. Reið Sigurður Hansen fyrstur á vaðið og ritaði embættismannatal á Íslandi 1861, 1866 og 1870 í Skýrslur um landshagi á Íslandi (III, 1—44; IV, 1—50; V, 1—50). Síðan liðu 20 ár, að engin skýrsla kom út um þetta efni, nema yfirlit yfir skipun geistlegra embætta 1. nóv. 1879 eftir Magnús Andrésson (í Kirkjutíð-

indum II, 92—107) og yfirlit yfir skipun verðslegra embætta við nýár 1881 eftir Jón Borgfirðing (Tímar. Bók.m.fél. II, 55—60), þar til að Janus Jónsson ritaði embættismannatal á Íslandi 1. jan. 1890 (Stjt. 1890, C. 1—9), síðan Halldór Kr. Friðriksson 1. jan. 1896 og 1901 (Stjt. 1896, C. 1—16; Lhsk. 1901, 1—15) og síðast Kl. Jónsson lafðritari 1. jan. 1906, 1910, 1912 og 1914 (Lhsk. 1905, 1—12; 1909, 1—35; 1911, 1—50; 1912, 304—356). Voru hinar fyrri skrár mjög ófullkomnar, og í skýrslum Janusar Jónssonar og Halldórs Kr. Friðrikssonar voru að eins taldir embættismenn og fáeinir sýslunarmenn og ekkert getið um opinberar stofnanir, en í skýrslum Sig. Hansens var þeirra að nokkru getið. Hinar síðari skýrslur Kl. Jónssonar voru miklu fullkomnari og margfalt fleiri stofnana og starfsmanna getið, en áður hafði verið.

Starfskrá Íslands er miklu fullkomnari en öll eldri ritin, og hefir afarmikil alúð og vinna verið lögð á að gera hana sem fullkomnasta og áreiðanlegasta, enda vildi hagstofan gera þetta rit »svo úr garði, að það gæfi sem fylstar upplýsingar í stuttu máli um allar opinberar stofnanir og starfsmenn og stæði ekki mjög að baki samskonar ritum erlendum«, segir hagstofustjórinn í formála bókarinnar, og verður ekki annað sagt, en að það hafi tekist ágætlega.

Í ritinu er skýrt frá, hver lagaákvæði eru um stofnanirnar, hvert starfssvið þeirra sé og hver laun fylgja starfinu. Er og getið þeirra stofnana, félaga og einstakra manna, sem njóta styrks af opinberu fé, svo og þeirra sjóða, sem stofnaðir hafa verið samkvæmt lögum. Fæðingardaga og skipunardaga alls þorra þeirra manna, sem nefndir eru, er getið, og þar sem margar slíkar upplýsingar hafa eigi fengist nema með rannsókn í Þjóðskjalasafninu, þá hefir það aukið starfið að mjög miklum mun, en gefur hins vegar bókinni margfalt meira gildi. Enn er og getið um embættispróf og heiðursmerki, og yfirhöfuð hefir engin fyrirhöfn verið spöruð til að hafa alt sem fullkomnast, og að síðustu er fullkomin mannanafnaskrá og efnisskrá, er eykur gildi hennar mjög mikið og gerir hana enn handbægari handbók.

Hinn ytri frágangur bókarinnar er og hinn prýðilegasti eins og er á öllum þeim ritum, er hagstofan hefir gefið út.

Jóhann Kristjánsson.

Daniel Brunn: Erik den Røde og Nordbokolonierne i Grønland. Kbh. 1915. IV + II + 238 bls.

Ýmsar þjóðir Norðurálfunnar hafa gert mikla gangskör að því að rannsaka höf og lönd við norðurheimskautið og varið of fjár til slíkra ferða. Á fyrri öldum voru heimskautsfarir yfirleitt mjög hættulegar, því að kunnáttu vantaði bæði til að gera skipin nokkurn veginn ísfær, og svo vantaði mikið á, að útbúnaður og viðurgerningur skipshafna væri svo ríkulegur, góður og hollur sem þörf krefði, enda varð þá eigi heimkomu auðið mörgum þeirra, er til slíkra ferða réðust, þótt hraustir væri. Þá voru það einkum Hollendingar, er tókust slíkar langferðir á hendur norður í höf til hvalveiða, og Englendingar til að finna nýjar verzlunarleiðir norðan við meginlönd Asíu og Ameríku, og fleiri þjóða menn mætti nefna. En nú á síðustu tímum hafa frændþjóðir vorar á Norðurlöndum: Danir, Norðmenn og Svíar, gert út leiðangra til að rannsaka óbyggðir umhverfis norðurheimskautið, og munu flestir kannast við norðurfara slíka sem Hovgaard (1882), Nansen (1893) og Nordenskjöld (1872, 1878—80) og marga fleiri. Hafa allar þær ferðir einkum verið gerðar til að auka þekking manna á löndum og höfum, dýrum, jurtum og jarðefnum þar norður frá, enda vita menn nú miklu meira um alla eðlisháttu þessa hluta heimsins en fyrir einum mannsaldri. Danir hafa sérstaklega lagt mikið kapp á að rannsaka landslag og náttúru Grænlands í jörðu og á, mæla lönd og firði, hafstrauma og ísrek með ströndum fram, svo að nú þekkja menn þar nálega hvern krók og kima. Skýrslur um vísindalegan árangur þessara rannsókna má finna í miklu ritsafni, er einu nafni nefnist »Meddelelser om Grønland«.

Höfundur bókar þeirrar, er getur hér að ofan, var á Grænlandi árin 1894 og 1903 og leitaði þá uppi og kannaði byggðir og býli og aðrar minjar norræna landnámsmanna á Grænlandi og afkomenda þeirra. Svo sem kunnugt er, fann Eiríkur hinn rauði Þorvaldsson fyrstur Grænland um 981 og fjórum árum síðar tóku Íslendingar að nema þar land og byggðist landið á fáum árum, en þjóðfélagsskipun landsmanna var að mestu sniðin eftir því, sem hér gerðist, enda voru samgöngur tíðar milli landanna fyrst framan af. Í fyrsta kafla bókarinnar er sagt frá æsku og uppvesti Eiríks að Dröngum, kvonfangi hans og dvöl við Breiðafjörð, unz hann var sekur ger og fór vestur um haf á leit nýs bústaðar. Í öðrum kaflanum er frásögn um landnámið sjálft og nákvæm og fögur lýsing á landkostum þar í byggðunum, alt eftir beztu heimildum, fornum og nýjum.

Þá koma í 3.—9. kaflanum langir útdrættir úr sögunum: Eiríks sögu rauða (Þorfinns s. Karlsefnis), Flóamannasögu (um Þorgils örrabeinsstjúp), Fóstbræðrasögu (um Þormóð Kolbrúnarskáld), Skáld-Helga rímum, Auðunar þætti vestfirzka, Einaris þætti Sokkasonar, Noregskonungasögum, annálum og ýmsum öðrum heimildum með vönduðum athugasemdum og fróðlegum skýringum höfundarins um endalok bygðar norrænna manna á Grænlandi, fyrst í vestri bygð (í lok 14. aldar) og löngu síðar í eystri bygð (í lok 15. aldar). Mun Björn Jórsalafari Einarsson hafa verið einna síðastur íslenzkra manna, er á þeim tímum dvaldist þar í landi, en það var á árunum 1385—87, og hlaut Íslendingum því að vera vel kunnugt um, að frændur þeirra á Grænlandi voru þá þegar orðnir lamaðir af samgönguleysi við önnur lönd og skorti á þeim efnum (járni, timbri o. s. frv.), er nauðsynleg voru til að geta lifað þar síðarra manna lífi, og af kúgum klerkdómsins; þar á ofan áttu þeir, er hér var komið, í vök að verjast fyrir Skrælingjum, er þegar á öndverðri 14. öld tóku að nálgast bygðirnar og gera þeim skráveifur á ýmsa lund, svo að þar af reis fullur fjandskapur milli þjóðflokkanna, en Skrælingjar stóðu betur að vígi að því leyti, að þeir höfðu algerlega samið sig eftir landsins háttum og kunnu því betur að bjargast af eignum ramleik. Er hörmulegt til þess að vita, að Íslendingum var þá þegar svo þorin dád og drengskapur, að þeir hirtu eigi um að veita frændum sínum þá hjálp, er þeir þörfuðust, og Noregskonungar gleymdu skyldum sínum, en suntu því að eins að ná sköttunum, er færi gafst. Þá er í 10. kaflanum lýsing á hinum fornu bygðum á Grænlandi, bæjarústum þeim, er rannsakaðar hafa verið, og minjum þeim, er þar hafa fundist, svo og atvinnuvegum landsmanna, háttum og kjörum. Í 11. kaflanum er að síðustu skýr og skilmerkileg staðlýsing Grænlands að fornu og nýju eftir fornum ritum (þar á meðal Grænlandslýsing Ívars Bárðarsonar frá síðari hluta 14. aldar) og nýjum rannsóknum.

Í bókinni er fjöldi mynda af stöðum og mannvirkjum, svo og vönduð kort, er sýna meðal annars öll forn bæjastæði, þau er til þessa hafa fundist, og að náttúrufegurð er þar mikilfengleg og afar breytileg.

Vér höfum að vísu áður átt kost góðra rita um Grænland, svo sem eru hin merkilegu ritsöfn »Antiquitates Americanae« (Kh. 1845) og »Grönl. hist. Mindesmærker« (Kh. 1838—45), enn fremur stuttarð saga og lýsing landsins eftir þá F. Jónsson og Helga Pétursson (Kh. 1899), en bók sú, er hér hefir verið getið að nokkuru, á skilið að vera lesin og hlýtur að verða vel þegin af öllum þeim, er um þetta fagurnefnda land við norðurhjarra heims vilja fræðast, sérstaklega þeim, er hyggja á landnám þar að nýju, svo sem til orða hefir komið.

Pálmi Pálsson.

Réttur. Tímarit um félagsmál og mannréttindi. Þrjú fyrstu heftin.

Vilji menn spá um framtíð einhverrar þjóðar, athuga menn fyrst ungu kynslóðina, áttavita ókomna tímans. Gildir þetta ekki síst um Íslendinga. Ungir menn hófu viðreisnarbaráttuna gegn erlenda pólitíska valdinu, ungir menn útrýmdu helvítistrúnni og leystu þjóðina úr verstu andlegu ánaðinni. Nú á tímum er oft talað um áhugaleysi ungu kynslóðarinnar, og er þar aðallega átt við mentamenn. — »Réttur« sýnir, að þetta tal á ekki við um alþýðuna, heldur er hér í aðsigi ný og öflug breyting meðal yngri manna. »Réttur« er ekkert skemtirit, hann er ætlaður til að vekja menn til umhugsunar um landshagi, benda á gallana og sýna nýjar leiðir, sem fara verði í framtíðinni í stjórnmálum innanlands. Eftirtektaverð er breytingin frá fyrsta heftinu til þriðja heftisins. Fyrst er eins og verið sé að þreifa sig áfram í rökkri, sérstaklega með hliðsjón af reynslu erlendra þjóða í stjórnmálum, en í síðasta heftinu er hreyfingin komin í fastara form, á betur við hér á landi; »samvinnumenn« eru að reisa merkið og fylkja liði.

Ritgerðirnar eru ærið misjafnar, þó að flestar séu þær vekjandi. Í fyrsta heftinu er grein eftir Jónas Jónsson frá Hriflu um markaðsverð, sem orðið hefir að ádeiluefni, og heldur Jónas því þar fram, að vinnumagnið sé grundvöllurinn undir verðlagi öllu. Hagfræðingar nútímans taka varla þá kenningu gilda, fremur en hina einföldu gömlu kenningu um að verðlag fari eftir tilboði og eftirspurn án nánari skýringa. »Sannvirðið« er misjafnt eftir því í hve stórum stíl framleiðslan er o. s. frv. Verða menn því ætíð að leggja til grundvallar fyrir verðlagi notagildi og kostnað síðustu einingarinnar. Meðal annara ritgerða í fyrsta heftinu má nefna: »stríðið« eftir Benedikt Jónsson, »jarðvegurinn« eftir Benedikt Bjarnason og »auðsajafnaðarkenningin« eftir Þórólf Sigurðsson, allar fjórlega ritaðar, en fremur ætlaðar til að hreyfa nýjum stefnum heldur en rökræða einstök mál til fullnustu.

Í öðru heftinu kemur fyrst grein um bankamál eftir Þórólf Sigurðsson, þar sem því er haldið fram, að landsbankinn eigi að verða að öflugum veðláubanka í sambandi við héraðssjóði í öllum héruðum landsins, en Íslandsbanki, sem landið eigi að kaupa, eigi aðallega að vera útvegsbanki. Ýmislegt í þessari ritgerð mun orka tvímælis, en hugmyndin um landsbankann í sambandi við héraðsbanka eða sparissjóði mun sjálfsagt festa rætur. Jónas Jónsson frá Hriflu ritar aðra grein í sama hefti um strandferðir og póstgöngur,

og er tillaga hans, að landið kaupi 4 strandferðaskip sem fari hringferðir kringum landið, en á stærstu flóum og fjörðum séu látnir ganga stórir vélbátar. Landpóstar gangi svo frá helztu höfnum upp í sveitir, en hringferðir pósta séu lagðar niður. Yfirleitt séu samgöngur á sjó efldar á allan hátt, en ekki lagt út í járnbrautarlagningu fyrst um sinn. Kemur þetta vel heim við skoðanir margra um að gera öllum héruðum landsins jafnhátt undir höfði. Enn má nefna í þessu hefti ritgerð Sigurgeirs Friðrikssonar um póstsamband, þar sem komið er með tillögur um fyrirkomulag póstferða til sveita með hafnapóstum og sveitapóstum.

Í þriðja heftinu eru ýmsar veigamiklar greinar. Benedikt Bjarnason ritar um trygging búfjár með heyfyrningasjóðum um land alt, Páll Zóphóniasson skýrir frá jarðarleigu og leiguliðakjörum fyrir og nú, Benedikt Bjarnason ritar um ábúð og leiguliðarétt og sýnir fram á hin erfiðu kjör leiguliða, Jón Gauti Pétursson ritar um þjóðjarðasölu og landleigu, óvenju vel ritaða grein, þar sem hann kemst að þeirri niðurstöðu að afhenda eigi þjóðjarðir til lögfullrar eignar og umráða, útborganalaust, en með leigntökurétti á þáverandi verði jarðarinnar og jafnframt þeirri verðhækkun, sem í ljós kæmi í framtíðinni og væri fyrir tilverknað þjóðfélagsins. Hér við mætti bæta að leggja skyldi leiguna í sjóð og nota hann — ef tilraunin tækist vel — til að kaupa upp jarðir fyrir landssjóð og koma á þær samskonar ábúð. Auk þess stingur sami höf. upp á landskatti í samræmi við Henry George. Slíkur skattur mun þó varla vera framkvæmanlegur hér á landi fyrst um sinn nema þá í kaптúnum eða þar sem landið eða héruðin leggja fram fé til atvinnubóta. Síðast en ekki sízt má geta ritgerðar eftir Jón Sigurðsson, »nýir straumar«, sem virðist vera einskonar heildaryfirlit yfir kenningar þær, sem »Réttur« hefir haldið fram.

»Réttur« er ádeilurit. Engin von er um, að kenningar þær, sem hann flytur, sigri baráttulaust. En þeir, sem að honum standa, munu vilja taka undir með Björnsson:

... fred er ej det bedste
men at man noget vil.

Héðinn Valdimarsson.

Skýrslur og reikningar

Bókmentafélagsins 1916.

Bókaútgáfa

Félagið hefir árið 1916 gefið út þessar bækur og félagsmenn fengið þær fyrir árstíllagið, 6 krónur:

Skirnir, 90. ár	kr. 4.00
Fornbréfasafn XI. b. 2. h.	— 2 25
Safn til söga Íslands V. b. 2. h.	— 2 50
Íslendinga saga III b. 1. h.	— 1.75
Minningarrit aldarafmælis félagsins	— 8.00
Samtals	kr. 18.50

Reykjavík 18. júní 1917.

Matthías Þórðarson

bókav. félagsins.

Aðalfundur.

Ár 1917, mánudaginn 18. júní, kl. 9 að kveldi var aðalfundur Bókmentafélagsins haldinn í Iðnaðarmannahúsinu. Fundarstjóri var kosinn prófessor Lárus H. Bjarnason.

I. Forseti gat láttinna félaga (Magnúsar Stephensens fv. landa- höfðingja, Axel Olriks prófessora, J. E. Sars prófessors, Þorvalds Jónssonar læknis, Ólafs Johnsens yfirkennara, Jóns Ólafssonar rithöfundar, Þórhalls Bjarnarsonar biskups, Rögnvalds Ólafssonar húsameistara, Ásgeirs Torfasonar efnafræðings og J. Sephtons prests) og mintust félagsmenn þeirra með því að standa upp. Félagsmenn voru alls orðnir 1285, en á árinu höfðu bæzt við 134 nýir félagar.

Því næst skýrði forseti frá bókaútgáfu félagsins á þessu ári, sem orðið hefði mjög dýr, og næsta ár gæti félagið ekki haldið í horfinu, nema styrkur til þess úr landssjóði yrði aukinn að mun.

Þá las forseti upp ársreikning og efnahagsreikning félagsins og bar þá saman við reikninga frá f. á. Höfðu endurskoðendur eigi haft neitt við þá að athuga, en á fundinum var hreyft nokkrum munnlegum athugasemdum um ritlaun og bókaútgáfu af endurskoðendum og öðrum. Reikningarnir samþykktir í einu hljóði. Ennfremur las forseti upp reikninga sjóðs Lehmanns-Filhés og afmælissjóðs hins íslenska Bókmentafélags.

II. Endurskoðendur endurskoðunir: Klemens Jónsson landritari og Hannes Þorsteinsson skjalavörður.

III. Eftir tillögu stjórnarinnar voru kjörnir heiðursfélagar: Hannes Hafstein og Stephan G. Stephansson.

Að lokum þökkðu félagsmenn stjórninni með því að standa upp. Fundarbók samþykkt.

Fundi slitið.

Lárus H. Bjarnason.

Jón Adils.

Reikningur

yfir tekjur og gjöld Hins íslenska Bókmentafélags fyrir árið 1916.

Tekjur:

1. Eftirstöðvar frá 1915:

a. Veðdeildarbréf Landsbankans	kr. 21000 00
b. Dönsk verðbréf	— 8000 00
c. Peningar í sparissjóði	— 7115 78

kr. 36115 78

2. Styrkur úr landssjóði	— 2000 00
3. Sextánda greiðsla fyrir handritasafnið	— 1000 00
4. Greidd tillög meðlima	— 6639 91
5. Fyrir Skírni og seldar bækur í lausasölu	— 1657 68
6. Fyrir auglýsingar á kápu Skírnis 1916	— 98 00
7. Gjóf frá ónefndum, afhent af forseta	— 17 00
8. Áunnið við útdregið veðdeildarbréf Landsb.	— 30 00

9. Ársvextir af:

a. 21000 kr. í veðdeildarbréfum Landsbankans	kr. 945 00
--	------------

Flyt kr. 945 00 kr. 47558 37.

	Fluttar	kr.	945 00	kr.	47558 87
b. 4000 kr. í kreditkassaskuldabréfum					
landeigna	—		140 00		
c. 2200 kr. í húskreditkassaskuldabréfum	—		88 00		
d. 1600 kr. í þjóðbankahlutabréfum .	—		128 00		
e. 200 kr. í kreditbankaskuldabréfum					
jóskra landeigna	—		7 00		
f. peningum í sparisjóði	—		51 20		
				—	1359 20
					kr. 48917 57

Gjöld:

1. Bókagerðarkostnaður:

a. Skírnir:

1. Laun ritstjóra	kr.	500 00		
2. Ritlaun og prófarkalestur . .	—	1160 00		
3. Prentun, pappír, hefting o. fl. .	—	2785 53		
			kr.	4445 58

b. Minningarrit aldarafmælis félagsins

1. Ritlaun og prófarkalestur . .	kr.	848 50		
2. Prentun, pappír, myndir og hefting	—	3169 42		
			—	4017 92

c. Aðrar bækur

1. Ritlaun og prófarkalestur . .	kr.	522 37		
2. Prentun, pappír, hefting o. fl. .	—	3125 05		
			—	3647 42
2. Kostnaður við aldarafmæli félagsins			—	426 15

3. Afgreiðslukostnaður

a. Laun bókavardar	kr.	680 00		
b. Innheimtuuppbót til sama fyrir árið 1915	—	58 48		
c. Burðargjald o. fl.	—	818 46		
			—	1556 94

4. Brunabótagjald og ýms gjöld	—	222 63		
--	---	--------	--	--

5. Eftirstöðvar 31. desbr 1916:

a. Veðdeildarbréf Landsbankans . .	kr.	21000 00		
b. Kreditkassaskuldabréf landeigna .	—	4000 00		
c. Húskreditkassaskuldabréf	—	2200 00		
d. Þjóðbankahlutabréf	—	1600 00		
e. Kreditbankaskuldabréf jóskra landeigna	—	200 00		

Flyt kr. 29000 00 kr. 14316 59

	Fluttar kr. 29000 00	kr. 14316 59
f. Peningar í sparisjóði	— 5600 98	— 34600 98
		Kr. 48917 57

Reykjavík 28. apríl 1917.

Sigurður Kristjánsson

p.t. gjaldkeri.

Reikning þennan ásamt fylgiskjölum höfum við nákvæmlega yfirfarið, og ekki fundið neitt við hann að athuga.

Reykjavík 31. maí 1917.

Kl. Jónsson. Hannes Þorsteinsson.

Efnahagsreikningur

Hins íslenska Bókmentafélags 1. janúar 1917.

Eignir:

1. Samkvæmt ársreikningi 1916:		
a. Í verðbréfum	kr. 29000 00	
b. Í peningum í sparisjóði	— 5600 98	
		kr. 34600 98
2. Förlagsbækur, samkvæmt skrá, virtar	— 20000 00	
3. Ýmsir munir, samkvæmt skrá, virtir	— 716 00	
4. Útistandandi skuldir	— 2581 30	
		Kr. 57898 28

Skuldir:

Skuldlaus eign	kr. 57898 28
	Kr. 57898 28

Reykjavík 12. maí 1917.

Sigurður Kristjánsson

p.t. gjaldkeri.

Reikning þennan höfum við yfirfarið, og ekki fundið neitt við hann að athuga.

Reykjavík 31. maí 1917.

Kl. Jónsson. Hannes Þorsteinsson.

Reikningur

Afmælissjóðs hins íslenska Bókmenntafélags fyrir árið 1916.

Tekjur:

1. Gjöf próf. dr. Björns M. Ólsens	kr.	1000 00
2. Vextir 1916:		
a. Í sparisjóði	kr.	0 75
b. Í Söfnunarsjóði	—	13 31
		<hr/>
		14 06
	Kr.	1014 06

Gjöld:

Innstæða í Söfnunarsjóði	kr.	1014 06
	kr.	1014 06

Reykjavík, 12. maí 1917.

Sigurður Kristjánsson
p.t. gjaldkeri.

Reikning þennan höfum við yfirfarið, og ekki fundið neitt við hann að athuga.

Reykjavík, 31. maí 1917.

Kl. Jónsson. Hannes Þorsteinsson.

Reikningur

sjóðs Margrétar Lehmanns-Filhés fyrir árið 1916.

Tekjur:

1. Eftirstöðvar við árslok 1915:

a. Stofnfé:

1. Í Söfnunarsjóði	kr.	5200 89
2. Í innlánsbók Íslandsbanka	—	16 20
		<hr/>
	kr.	5217 09

b. Starfsfé:

Í innlánsbók Íslandsbanka	kr.	358 34
-------------------------------------	-----	--------

2. Vextir 1916:

a. Í Söfnunarsjóði	kr.	243 40
b. Í innlánsbókum Íslandsbanka	—	12 63
		<hr/>
		256 03
	Kr.	5831 46

Gjöld:

Eftirstöðvar við árslok 1916:

a. Stofnfé:

1. Söfnunarsjóði	kr.	5261 74
2. Í innlánsbók Íslandsbanka	—	19 36
		<hr/>
	kr.	5281 10

b. Starfsfé:

Í innlánsbók Íslandsbanka	—	550 36
		<hr/>
	Kr.	5831 46

Reykjavík, 12. maí 1917.

Sigurður Kristjánsson
p.t. gjaldkeri.

Reikning þennan höfum við endurskoðað, og ekki fundið neitt við hann að athuga.

Reykjavík, 31. maí 1917.

Kl. Jónsson. Hannes Þorsteinsson.

Hið íslenska Bókmentafélag.

VERNDARI:

Kristján konungur hinn tfundi.

STJÓRN:

Forseti: Björn M. Ólsen, próf., dr. phil., r. af dbr. og dbrm.

Varaforseti: Jón Þorkelsson, þjóðskjalavörður, dr. phil.

Fulltrúaráð:

Guðmundur Finnbogason, bókavörður, dr. phil.

Matthías Þórðarson, fornmenjavörður, bókavörður félagsins.

Einar Arnórsson, prófessor, kjörstjóri félagsins.

Jón Adils, docent, skrifari félagsins.

Björn Bjarnason, keunari, dr. phil.

Sigurður Kristjánsson, bókaali, r. af dbr., gjaldkeri félagsins.

HEIÐURSFÉLAGAR:

- Anderson, R. B., prófessor, Madison, U. S. A.
Boer, R. C., prófessor, dr. phil., Amsterdam.
Briem, Eiríkur, prófessor, comm. af dbr. m. m., Reykjavík.
Briem, Valdimar, vígslubiskup, r. af dbr., Stóra-Núpi.
Bryce, James, Right Hon., sendiherra Breta í Washington.
Brögger, W. C., próf., dr. phil., jar. & sc., stkr. af st. Ól. o. m. m., Kristjáníu.
Cederschiöld, Gustaf, prófessor, dr. phil., Lundi.
Craigie, W. A., prófessor, dr. phil., Oxford.
Falk, Hjalmar, prófessor, dr. phil., r. af st. Ól. o. m. m., Kristjáníu.
Finnur Jónsson, prófessor, dr. phil., r. af dbr., r. af st. Ól. o., Khöfn.
Gering, Hugo, dr. phil., leyndarráð, prófessor í Kiel.
Hafstein, Hannes, fv. ráðherra, comm. af dbr. m. m., Reykjavík.
Hermann, Paul, prófessor, dr. phil., Torgau.
Heusler, Andreas, prófessor, dr. phil., Berlín.
Jón Jónsson, prófastur, Stafafelli.
Jón Þorkelsson, þjóðskjalavörður, Reykjavík.
Kálund, Kr., bókavörður, dr. phil., r. af dbr., Khöfn.
Ker, W. P., prófessor við háskólann í Lundánum.
Kock, Axel, prófessor, dr. phil., Lundi.
Kristján Jónsson, háyfirdómari, comm. af dbr. m. m., Reykjavík.
Laffler, L. Fr., fv. prófessor, dr. phil., Djursholm.
Matthías Jochumsson, fv. sóknarprestur, r. af dbr. og dbrm., Akureyri.
Mogk, E., dr. phil., prófessor í Leipzig.
Noreen, Adolf, prófessor, dr. phil., Uppsölum.
Ólafur Halldórsson, konferenzráð, r. af dbr. dbrm., Khöfn.
Ólsen, Björn M., prófessor, dr. phil., r. af dbr. og dbrm., Reykjavík.
Olsen, Magnus, prófessor við háskólann í Kristjáníu.
Pipping H., prófessor, dr. phil., Helsingfors.
Poestion, J. C., ríkisbókavörður, hirðráð, comm. af dbr. m. m., Vín.
Stephan G. Stephansson, skáld, Markerville, Alb., Canada.
Thomsen, Vilb., próf., dr. phil., r. af fo., stkr. af dbr., dbrm. m. m., Kh
Thoroddsen, Þorvaldur, prófessor, dr. phil., r. af dbr., Khöfn.
Wimmer, L. F. A., prófessor, dr. phil. & litt., stkr. af dbr. dbrm., Khöfn.
-

FÉLAGAR.

A. Á Íslandi.

Reykjavík.

Aðila, Jón, docent '16.¹⁾
 Alexander Jóhannesson, dr. phil. '16.
 Alexander Jóhannesson '16.
 Andersen, Ludvig, klæðsk. '16.
 Arinbjörn Sveinbjarnarson, bók-
 bindari '16.
 Arnar, Otto B., símritari '16.
 Árni Jóhannsson, bankaritari '16.
 Árni Jónsson kaupm. '16.
 Ársæll Árnason, bókbindari '16.
 Ásgeir Sigurðsson konsúll '16.
 Bartels, Martin, bankaritari '16.
 Beck, Símon, trésmiður '15.
 Benedikt Sveinsson, alþm. '16.
 Benedikt Þórarinnsson, kaupm. '16.
 Bergur Rósipkransson, kaupm.
 Bjarnason, Ágúst, próf, dr. '16.
 Bjarnason, Brynj. H., kaupm. '16.
 Bjarnason, Ingibjörg H., forstöðu-
 kona kvennaskólans '16.
 Bjarnason, Lárus H., próf. juris '16.
 Bjarnason, Nicolai, afgrm. '17.
 Bjarnason, Þorleifur H., adjunkt '16.
 Bjarni Bjarnason, klæðskeri '16.
 Bjarni Jensson, læknir '16.
 Bjarni Jónsson, dómkirkjupr. '16.
 Björn Bjarnason, dr. phil. '12.
 Björn Björnsson, bókbindari '16.
 Björn Kristjánsson, ráðherra '16.
 Björn Ólafsson, bókarí '17.
 Björnson, Guðm., landlæknir '16.
 Björn Sigurðsson, bankastj. '16.
 Björn Þórðarson, aðstm. í stjrn. '16.
 Blöndahl, Magnús, kaupm. '16.
 Blöndal, Ragnh., ungfrú '16.
 Bogi Ólafsson, kennari '16.
 Bókasafn K. F. U. M. '16.
 Borgþór Jósefsson, bæjargjaldk. '16.

Breiðfjörð, Guðm. '16.
 Briem, Eggert, yfirdómari '16.
 Briem, Sigurður, póstmestari '16.
 Bynjólfrur Björnsson, tannl. '16.
 Brynleifar Tóbiasson, námsm. '16.
 Böðvar Kristjánsson, adjunkt '15.
 Claessen, Eggert, yfirréttarmála-
 flutningsmaður '16.
 Copland, G., stórkaupm. '16.
 Courmont, André, ræðism. '16.
 Eggerz, Sig., s. bæjarfógeti.
 Einar Arnórsson, prófessor '16.
 Einar Finnsson, múrari '16.
 Einar Gunnarsson, útgef. '16.
 Einar Helgason, garðyrkjufr. '16.
 Einar Magnússon, bókh. '16.
 Erlendur M. Guðmundsson, bréf-
 beri '16.
 Eyjólfur Jónsson, rakari '16.
 Eyþór Guðjónsson, bókbindari '16.
 Fjeldsted, Andrés, augnlæknir '16.
 Fjeldsted, Lárus, cand. jur. '16.
 Friðrik Benónýsson '15.
 Friðrik Klemensson, póstafrgm. '16.
 Geir Sigurðsson, skipstjóri '16.
 Georg Ólafsson, cand. polit. '16.
 Gísli Guðmundsson, gerlafr. '16.
 Gísli Ísleifsson, fv. sýslum. '16.
 Gísli Sveinsson, cand. jur. alþm. '16.
 Grímúlfur Ólafsson, ritari '16.
 Gröndal, Ben. P., cand. phil. '16.
 Guðbr. Magnússon, prentari '15.
 Guðjón Jónsson, verzm. '16.
 Guðjón Sigurðsson, Hvg. 71 '17.
 Guðm. Ásbjarnarson, kaupm. '16.
 Guðm. Bjarnason, klæðskeri '16.
 Guðm. Böðvarsson, kaupm. '16.
 Guðm. Finnþogason, dr. phil. '16.
 Guðm. Gamalielsson, bóksali '16.

¹⁾ Ártölin aftan við nöfnin merkja að tillag sé afhent bókaverðir fyrir það ár síðast.

Guðm. Guðmundsson, skáld '16.
 Guðm. Hannesson, prófessor '16.
 Guðm. Helgason, præg. hon. '16.
 Guðm. Kr. Guðmundsson '16.
 Guðm. Loftsson, bankaritari '16.
 Guðm. Magnússon, prófessor '16.
 Guðm. Magnússon, rithöf. '16.
 Guðm. Ólafsson, málflm. '16.
 Gunnar Sigurðsson, cand. jur. '16.
 Halldór Danielsson, yfirdómari '16.
 Halldór Kr. Þorsteinsson, skipstj. '16.
 Halldór Þórðarson '16.
 Hallgrímur Benediktsson, heildsali '16.
 Hallgrímur Jónsson, kennari '16.
 Hannes Þorsteinsson, skjalav. '16.
 Hansen, Jörgen, verzl. '16.
 Hansen, Mort-n, skólastjóri '16.
 Haraldur Gunnarsson, prentari '16.
 Haraldur Nielsson, prófessor '16.
 Haraldur Sigurðsson, verzl. '16.
 Helgi Helgason verzlunarstj. '16.
 Helgi Jónasson verzlunarm. '16.
 Helgi Jónsson, dr. phil. '16.
 Helgi Jónsson verzlunarm. '16.
 Hlíðdal, Guðm, verkfræð. '16.
 Hólmfríður Árnadóttir, kensluk. '16.
 Ísleifur Jónsson, kennari '16.
 Jacobson, Jón, landsbókav. '16.
 Jakob Jónsson, verzlunarstj. '16.
 Jensen, Thor, stórkaupm. '16.
 Jensson, Sigríður H., frú '16.
 Jóhannes Sigfússon, adjunkt '16.
 Jóhann Kristjánsson, ættfræð. '16.
 Jóhann Þorsteinsson, præg. hon. '16.
 Johnson, Ólafur, konsúll '16.
 Johnson Ág. J., bankaritari '16.
 Jóna Sigurjónsdóttir '16.
 Jónas Jónsson kennari '16.
 Jón Helgason, biskup '16.
 Jón Hermannsson, skrifstofustj. '16.
 Jón Hj. Sigurðsson, héraðsl. '16.
 Jón Ívarsson, kennari '17.

Jón Kristjánsson, prófessor '16.
 Jón Magnússon, ráðherra '16.
 Jón Ólafsson, skipstjóri '16.
 Jón Sigurðsson, ritari '16.
 Jón Þórarinnsson, fræðslumstj. '16.
 Jón Þorláksson, verkfr. '16.
 Jörundur Brynjólfsson kennari '16.
 Kaaber, Ludvig, konsúll '16.
 Kennarafélag Barnaskólans '16.
 Klemens Jónsson, fv. landritari '16.
 Kolbeinn Þorsteinsson, skipstj. '16.
 Konráð Konráðsson, lækni '16.
 Krabbe, Th., landsverkfr. '16.
 Kristinn Danielsson, præg. hon. '16.
 Kristinn Jónsson, lyfjafr. '16.
 Kristján Kristjánsson, skipstj. '16.
 Kvaðan, Einar, rithöf. '16.
 Laxdal, Jón, stórkaupm. '16.
 Langarnessptali '16.
 Lestrarfélagið „Ípaka“ '16.
 Lestrarfélag kvenna '16.
 Leví, R. P., kaupm. '16.
 Magnús Arnbjarnarson, cand. jur. '16.
 Magnús Benjamínsson, úrsm. '16.
 Magnús Einarson, dýralækni '16.
 Magnús Helgason, skólastj. '16.
 Magnús, M., lækni '16.
 Magnús Magnússon, kennari '16.
 Magnús Sigurðsson, bankastj. '16.
 Magnús Vigfússon, verzl. '16.
 Matthías Einarsson, lækni '16.
 Matth. Matthíasson, kaupm. '16.
 Matth. Þórðarson, forn.m.v. '17.
 Nordal, Jóhannes, íshússtjóri '16.
 Oddur Gíslason, yfirréttarmálafl.-maður '16.
 Oddur Hermannsson, cand. jur. '16.
 Ólafson, Gísli J., slmastjóri '16.
 Ólafur Björnsson, ritstjóri '16.
 Ólafur G. Eyjólfsson, heilds. '16.
 Ólafur Lárusson, cand. jur. '16.
 Ólafur Ólafsson, umsjónarm. '16.
 Ólafur Runólfsson, bókhaldari '16.

Ólafur Þorsteinsson, lækni '16.
 Olgeir Friðgeirsson, samgöngumála-
 stjóri '16.
 Óskar Halldórsson, búfræð. '15.
 Páll Einarsson, bókhaldari '16.
 Páll E. Ólason, ritari '16.
 Páll Halldórsson, skólastj. '16.
 Páll H. Gíslason, kaupm. '16.
 Páll Jónsson, verzlunarm. '16.
 Páll Ólafsson, kaupm.
 Páll Stefánsson, heilðsali '16.
 Pálmi Pálsson, yfirkennari '16.
 Pétur Halldórsson, bóksali '16.
 Pétur Lárusson, prentari '16.
 Péturss, Helgi, dr. phil '16.
 Proppé, Carl, verzlunartj. '16.
 Richard Torfason, bankabókari '16.
 Rósenkranz, Ólafur, kennari '16.
 Samúel Eggertsson, skrautrit. '16.
 Sighv. Bjarnason, bankastj. '16.
 Sigríður Björnsdóttir '16.
 S. Á. Gíslason, cand. theol. '16.
 Sigurður Guðmundsson frá Hofdöl-
 um '14.
 Sig. Gunnarsson, præg. hon. '16.
 Sigurður Jónsson, bókbíndari '16.
 Sigurður Kristjánsson, bóksali '17.
 Sigurður Sigurðsson, alþingism. '16.
 Sigurður Þórðarson, fv. sýslum. '16.
 Sivertsen, Sigurður, próf. '16.
 Smith, Paul, sálmaverkfr. '16.
 Snorri Jóhannsson, bókhaldari '16.
 Steingrímur Arason, kennari '16.
 Steinnann Bjartmarsd., kensluk. '16.
 Sveinn Björnsson, málflm. '16.
 Sveinn Jónsson, kaupm. '16.
 Sæmundsen, Karl, stórkaupm. '16.
 Sæm. Bjarnhéðinsson, prófes or '16.
 Thomsen, Ditlev, ræðism. '16.
 Thoroddsen, Sigurður, adj. '16.
 Thors, Haukur, verzlum. '16.
 Thorsteinsson, Hannes, cand. jur. '16.
 Thorsteinsson, Th., kaupm. '16.
 Tómas Tómasson, ölg.m. '16.

Tr. Gunnarsson, fv. bankastj. '16.
 Tryggvi Magnússon, verzlum. '16.
 Tryggvi Þórhallsson, s. docent '16.
 Tulinius, Axel, málaflm. '16.
 Ungmennafél. Reykjavíkur '16.
 Vigfús Einarsson, cand. jur. '16.
 Vigfús Guðmundsson '16.
 Wiehe, Holger, háskólakennari '16.
 Zimsen, Knud, borgarstjóri '16.
 Zoëga, Geir, landsverkfr. '16.
 Zoëga, Geir, rektor, '16.
 Zoëga, Geir, kaupm. '16.
 Þórarinn Arnórsson '17.
 Þórður Erlendss., Rauðarárst. '16.
 Þórður Sveinsson, lækni, Kleppi '16.
 Þorfinnur Kristjánsson, prent. '15.
 Þorkell Þorláksson, ritari '16.
 Þorlákur Arnórsson '17.
 Þorlákur Vilhjálms-son, búfr. '16.
 Þorleifur Jónsson, póstafr.m. '16.
 Þorsteinn Finnbogason, kaupm. '16.
 Þorsteinn Gíslason, ritstj. '16.
 Þorsteinn Jónsson, bankarit. '16.
 Þorst. Sigurgeirsson verzlum. '16.
 Þorst. Þorsteinsson, cand. jur. '16.
 Þorst. Þorsteinsson, hagstofustj. '16.
 Þorv. Guðmundsson, afgr.m. '16.
 Þorvarður Þorvarðarson, prentsm.-
 stjóri '16.

Gullbringu- og Kjósarsýsla.

Árni Þorsteinsson, prestur á Kálfa-
 tjörn '16.
 Bræðrafélag Kjósarhrepps '16.
 Einar Magnússon, kennari, Gerðum
 í Garði '15.
 Guðm. Ragnar Ólafsson, Móakoti
 í Grindavík '15.
 Heiðdal, Sig. Þ., kennari, Seltjarn-
 arnesi '16.
 Heilsuhælið á Vífilstöðum '16.

Jóhann Eyjólfsson, Brantarholti '16.
Jónas Björnsson, búfr., Kálfatjörn
'16.

Jón Jónsson, kennari, Hvammi '15.

Jón Þorbergsson, Bessastöðum '16.

Klemens Egilsson, óðaleb., Minni-
Vogum '16.

Kolbeinn Högnason, kennari, Kolla-
firði '16.

Lestrarfélag Keflavíkur '16.

Lestrarfélag Kjalnesinga '16.

Lestrarfélag Lágafellssóknar '16.

Lestrarfélag Seltirninga '16.

Magnús Bergmann Jónsson, Fugla-
vík, Miðnesi '16.

Sigurður Magnússon, læknir, Vífils-
stöðum '16.

Stefán Sigurfinnsson, Auðnum '16.

Tómas Snorrason, kennari, Kefla-
vík '16.

Þorgrímur Þórðarson, læknir Kefla-
vík '16.

Hafnarfjarðar-umboð.

(Umboðsm. Salómon Runólfsson,
bókari í Hafnarfirði).¹⁾

Andrés Runólfsson, verzlunarm.

Árni Sighvatsson, kaupm.

Auðunn Níelsson, kaupm.

Bergmann, Daniel, kaupm.

Bjarni Bjarnason, kennari.

Bjarni Erlendsson, verkstj.

Einar Þorgilsson, kaupm.

Flygenring, Aug., kaupm.

Guðm. Eyjólfsson, verz'unarm.

Guðm. Magnússon, skipstj.

Gunnlaugur Kristmundsson, kennari.

Hannes Jóhannesson, verzl.m.

Ingvar Jónsson, verkstjóri.

Janus Jónsson, præg. hon.

Jón Gestur Vigfússon, verzl.m.

Kristínus Finnþogason, verzl.m.

Lárus Bjarnason, kennari.

Lestrarfélag „Framför“.

Magnús Jóhannesson, verkstj.

Magnús Jónsson, sýslum.

Magnús Þorsteinsson, verzl.m.

Oddur Ívarsson, póstafr.m.

Ólafur Böðvarsson, kaupm.

Ólafur Sigurðsson, trésm.

Ólafur V. Davíðsson, framkv.stj.

Salómon Runólfsson, bókari

Sigfús Bergmann, kaupm.

Sig. Kristjánsson, sýsluskrifari.

Sig. Sigurðsson, verzlunarm.

Simon Jónsson, kaupm.

Skinfaxi, bókas. skólapilta í Flensb.

Stefán Jónsson, verzl.m.

Steingr. Torfason, bryggjuv.

Sveinn Jónasson, sjóm.

Valdimar Sigmundsson.

Þórður Edlónsson, læknir.

Þórður Einarsson, verzlunarm.

Þórður Guðnason, skólastjóri.

Ögmundur Sigurðsson, skólastj.

Borgarfjarðar- og Mýrasýsla.

Eiríkur Albertsson, prestur, Hesti' 16.

Hjörtur Snorrason, bóndi, Arnar-
holtí '16.

Magnús Andrésson, prófastur, Gils-
bakka '17.

Stefán Guðmundsson, bóndi, Fitjum
'15.

Akranes-umboð.

(Umboðsm. Oddur Sveinsson,
kennari á Akranesi).¹⁾

Axel Böðvarsson, cand. phil.

¹⁾ Skilagrein komin fyrir 1916.

Björn Lárusson, bóndi á Ósi.
 Finsen, Ólafur, læknir.
 Hervaldur Björnsson, kennari.
 Jón Sigmundsson, sjóm.
 Jón Sveinsson, prófastur.
 Lestrarfélag Akraness.
 Magnús Guðmundsson, kaupm.
 Niels Kristmannsson, sjóm.
 Oddur Sveinsson, kennari.
 Ottesen, Oddgeir P, kaupm.
 Ólafur B. Björnsson, kaupm.
 Sigurður Simonarson.
 Skafti Jónsson, sjóm.
 Sumarliði Halldórsson, skógfr.
 Thorlacius, Einar, prestur í Saurbæ.
 Ungm fél. „Haukur“, Leirársveit.
 Þórður Ásmundsson, kaupm.

Borgarness-umbod.

(Umbodsm. Jón Björnsson, kaupm.
 Borgarnesi).¹⁾

Árni Þorsteinsson, bóndi, Brennistöðum.
 Bjarni Bjarnason, bóndi, Skáney.
 Björn Ólafsson, steinsmiður, Kaðalstöðum.
 Brynjólfur Bjarnason, búfræðingur, Deildartungu.
 Bændaskólinn á Hvanneyri.
 Davíð Þorsteinsson, Arnbjargarlæk.
 Einar Sigurðsson, Stóra-Fjalli.
 Einvarður Hallvarðsson, Fáskrúðarbakka.
 Enok Helgason, Heggstöðum.
 Fjeldstedt, Sigurður, bóndi, Ferjukoti.
 Geir Pétursson, Geirshlíð.
 Grönfeldt, H. skólastj. Hvítárvöllum.
 Guðm. Árnason, bóndi, Álfártungu.
 Guðm. Danielsson, bóndi, Svignaskarði.

Guðm. Jónsson, bóndi, Skeljabrekku.
 Guðm. Sigurðsson, Landbrotum.
 Jóhannes Jónsson, gagnfræð., Efranesi.
 Jóhann Magnússon, bóndi, Hamri.
 Jón Björnsson, bóndi, Ölvaldestöðum.
 Jón Björnsson, kaupm., Borgarnesi.
 Jósef Björnsson, Svarfhóli.
 Kristján Fr. Björnsson, bóndi, Steinum.
 Kristján Sigurðsson, Bakkakoti.
 Lestrarfélag Áltaneshrepps.
 Lestrarfélag Borgarness.
 Lestrarfélag Hraunhrepps.
 Magnús Einarsson, Munadarnesi.
 Magnús Jónsson, kennari, Borgarnesi.
 Ólafur Guðnason, Signýjarstöðum.
 Páll Jónsson, kennari, Einararnesi.
 Páll Zóphóníasson, kennari, Hvanneyri.
 Runólfur Runólfsson, bóndi, Norðtungu.
 Sigurður Þórólfsson, skólastj., Hvítárþakka.
 Stefán Jónsson, prestur, Staðarhrauni.
 Tómas Jónasson, Sólheimatungu.
 Ungmennafél. „Dagrenning“, Lundarreykjadal.
 Þorgeir Bjarnason, búfræð., Hvanneyri.

Hnappadals-, Snæfellsness- og Dalasýslur.

Benedikt Magnússon, kaupfélagsstjóri, Tjaldanesi '15.
 Benedikt S. Benediktsson, verzl., Grundarf. '15.

¹⁾ Skilagrein komin fyrir 1916.

Finnbogi Lárnasson, kaupm., Búðum '16.

Gestur Guðmundsson, bóndi á Raudamel '17.

Guðm. Guðjónsson, kennari, Saurum '16.

Gunnar Sigurðsson, Hausthúsum, '17.
Jóhann Hjörleifsson, búfr, Hofstöðum í Miklaholtshr. '16.

Jón Guðnason, prestur, Staðarhóli, '16.

Kristján Eggertsson, oddviti, Dalsmynni '17.

Kristján Kristjánsson, kennari, Rauðkollastöðum '16.

Lestrarfélag Sandara '16.

Lestrarfélag Saurbæjarhr. '16.

Magnús Guðlaugsson, lækni, Bjarnastöðum '15.

Stykkishólms-umboð.

(Umboðsm. Hjálmar Sigurðsson, kaupmaður í Stykkishólmi)¹⁾.

Ágúst Þórarinnsson, bókh, Stykkishólmi.

Árni P. Jónsson, Stykkishólmi.

Ásmundur Guðmundsson, prestur, Stykkishólmi.

Ásmundur Sigurðsson, bóndi, Bær í Eyrarsveit.

Blöndal, Magnús, kennari, Stykkishólmi.

Bókasafn Vesturamtens, Stykkishólmi.

Einar Vigfússon, Stykkishólmi.

Ellas Kristjánsson, Lágafelli.

Gestur Þórðarson, Dal.

Gíslí Sigurðsson, Langadal

Helgi Guðmundsson, Ketilastöðum.

Helgi Guðmundsson, Skógarnesi.

Hjálmar Sigurðsson, kaupmaður, Stykkishólmi.

Jón G. Sigurðsson, Hofgördum.

Lestrarfélag Fellsstrandar.

Lestrarfélag Hvammsveitar.

Sigurður Daðason, Setbergi.

Sæm. Halldórsson, kaupm., Stykkishólmi.

Búðardals-umboð.

(Umboðsm. Bogi Sigurðsson, kaupmaður í Búðardal)¹⁾.

Björn Bjarnason, sýslum, Sauðafelli.

Bogi Sigurðsson, kaupm., Búðardal.

Jóhannes L. L. Jóhannsson, prestur, Kvennabrekku.

Johnson, Bjarni P., sýslum., Búðardal.

Jón Guðmundsson, bóndi, Ljárskógum.

Lestrarfélag Miðdæla.

Sigurður Sigurðsson, lækni, Búðardal.

Barðastrandarsýsla.

Bókasafn Flateyjar á Breiðafirði '16.

Guðm. Bergsteinsson, kaupm., Flatey á Breiðafirði '16.

Jón Einarsson, trésmiður, Kletti í Geiradal '16

Jón Jóhannsson, Mýrartungu í Reykhólasveit '16.

Jón Ólafsson, Króksfjarðarnesi '16.

Lestrarfélag Bílddælinga '16.

Lestrarfélag Geiradalshrepps '16.

Magnús Sæbjörnsson, lækni, Flatey '15.

¹⁾ Skilagrein komin fyrir 1916.

Steinþór Oddsson, Miðhúsum '16.
 Þorbj. Þórðarson, lèknir, Bíldu-
 dal '16.
 Þorv. Gíslason, Hóli í Arnarf. '17.
 Þorvaldur Jakobsson, prestur, Sauð-
 lauksdal '17.

Patreksfjarðar-umboð.

(Umboðsm. Jón Kristófersson,
 kennari, Sveinseyri í Tálknafirði¹⁾).
 Bjarni Símonarson, prófastur, Brjáns-
 læk.
 Bókasafn V.-Barðastrandarsýslu.
 Einar Magnússon, stýrim., Patreks-
 firði.
 Eiríkur Kristófersson, Brekkuvelli.
 Hallgrímur Jónsson, Bakka.
 Jón B. Ólafsson, Hvanneyri.
 Jón Hallgrímsson, Bakka.
 Jón Kristófersson, kennari, Brekku-
 velli á Barðaströnd.
 Kristján Kristófersson, Haga.
 Lestrarfélag Breiðuvíkursóknar.
 Lestrarfélag Rauðsendinga.
 Lestrarfélag Tálknafjarðar.
 Magnús Þorsteinsson, prestur, Pat-
 reksfirði.
 Ólafur Magnússon, Kaldabakka.
 Svafa Þorleifsdóttir, Bíldudal.

Ísafjarðarsýsla.

Bókasafn Hólshrepps, Bolungavík,
 '15.
 Halldór Stefánsson, lèknir, Flat-
 eyri '16.
 Hjálmar Jónsson, bóndi, Hrafnfj-
 eyri í Grunnavíkurbhreppi '16.

Lestrarfélag Dalmanna, Önunder-
 firði '15.
 Lestrarfélag Flateyrar '16.
 Sighvatur Grímsson Borgfirðingur,
 Höfða. Gjaldfri.
 Sveinn Halldórsson, kennari, Bol-
 ungavík '15.
 Sæm. Einarsson, kenn., Hnífsdal '16.

Dýrafjarðar-umboð.

(Umboðsm. Jóh. Proppé, kaupmað-
 ur á Þingeyri¹⁾).
 Andrés Kristjánsson, Meðaldal.
 Björn Guðmundsson, kennari, Næfra-
 nesi.
 Blaðafélagið „Dagvarður“, Keldu-
 dal.
 Böðvar Bjarnason, prestur, Rafns-
 eyri.
 Friðrik Bjarnason, hreppstjóri,
 Mýrum.
 Guðbrandur Guðmundsson, Þing-
 eyri.
 Guðm. Á. Guðmundsson, skipstjóri,
 Alviðru.
 Guðmundur Jónsson, Granda.
 Guðni Bjarnason, verzlunarmaður,
 Þingeyri.
 Guðrún Benjamínsdóttir, kenslu-
 kona, Þingeyri.
 Gunnlaugur Þorsteinsson, lèknir,
 Þingeyri.
 Hjaltína Guðjónsdóttir, kenslukona,
 Þingeyri.
 Jóhannes Davíðsson, Neðra-Hjarð-
 ardal.
 Kristinn Guðlaugsson, búfræðingur,
 Núpi.
 Lestrarfélag Þingeyrarhrepps, Þing-
 eyri.

¹⁾ Skilagrein komin fyrir 1916.

Ólafur Hjartarson, járnsmiður, Þingeyri.

Ólafur Ólafsson, kennari, Þingeyri. Proppé, Ólafur, kaupm., Þingeyri.

Sigríður Guðmundsdóttir, kenslu-kona, Haukadal.

Sigtryggur Guðlaugsson, prestur, Núpi.

Sóphónías Jónsson, gagnfræðingur, Læk.

Torfi Hermannsson, trésmiður, Þingeyri.

Ísafjardar-umboð.

(Umboðsm. Guðmundur Bergsson, bóksali, Ísafirði).¹⁾

Adalbjörg Jónsdóttir, húsfú, Arn-gerðareyri.

Arngrímur Fr. Bjarnason, prentari, Ísafirði.

Árni E. Árnason, verzlunarmaður, Bolungavík.

Ásgeir Guðmundsson, Æðey.

Baldur Sveinsson, kennari, Ísafirði.

Bárður Guðmundsson, bókbíndari, Ísafirði.

Benedikt Bjarnason, húsmáður, Góustöðum.

Björn Guðmundsson, kaupmaður, Ísafirði.

Einarsson, Þóra E., sjúkrah.st.

Engilbert Kolbeinsson, bóndi, Lóns-eyri.

Finnbjörn Hermannsson, verzlunar-
maður, Ísafirði.

Friðbert Friðbertsson, kennari, Suð-
ureyri í Súgandafirði.

Friðbert Guðmundsson, Suðureyri.

Friðrik Hjartarson, kennari, Suð-
ureyri.

Gísli R. Bjarnason, kennari, Hest-
eyri.

Grimur Jónsson, cand. theol., Ísa-
firði.

Guðlaugur Kristjánsson, búfræð-
ingur, Ísafirði.

Guðmundur Bergsson, bóksali, Ísa-
firði.

Guðmundur Hannesson, konsúll,
málaflutningsm., Ísafirði.

Guðmundur H. Finnbjörnsson, kaup-
maður, Sæbóli í Aðalvík.

Guðmundur Sveinsson, kaupmaður,
Hnífsdal.

Guðrún Tómasdóttir, ljósmóðir, Ísa-
firði.

Hálfdan Örnólfsson, hreppstjóri,
Hóli í Bolungavík.

Halldór Bjarnason, verkstjóri, Ísa-
firði.

Halldór Jónsson, búfræðingur,
Laugabóli.

Halldór Jónsson, búfræðingur,
Rauðamýri.

Halldór Ólafsson, kaupm., Ísafirði.

Halldór Pálsson, útvegsbóndi, Hnífs-
dal.

Hannes Halldórsson, verzlunarm.,
Ísafirði.

Helgi Ketilsson, sjómaður, Ísafirði.

Helgi Sveinsson, bankastjóri, Ísa-
firði.

Ingólfur Árnason, verzlunarmaður,
Bolungavík.

Jens Nielsson, kennari, Bolungavík.

Jóhann Kristjánsson, verzlunarm.,
Bolungavík.

Jóhann Þorsteinsson, kaupmaður,
Ísafirði.

Jóhanna Eiríksdóttir, Kleifum í
Seyðisfirði.

Jónas Halldórsson, Búd, Hnífsdal.

¹⁾ Skilagrein komin fyrir 1916.

Jónas Þorvarðsson, kaupmaður og oddviti, Hnífsdal.
 Jón Grímsson, verzlstj., Suðureyri,
 Jón Jónsson, verzlsm., Bolungavík.
 Jón Mariasson, verzlunarm., Ísafirði.
 Jón Sn. Árnason, kaupmaður, Ísafirði.
 Júlíus Hjaltason, Bolungavík.
 Karl Olgeirsson, verzlunarstjóri, Ísafirði.
 Kolbeinn Jakobsson, hreppstjóri, Unadsdal.
 Kristján A. Kristjánsson, kaupm., Suðureyri í Súgandafirði.
 Lestrarfélag Bjarndæla og Fjarðarmanna, Öndurarfirði.
 Lestrarfélag Hnífsdælinga, Hnífsdal.
 Lestrarsalur Ísafjarðar.
 Lestrarfélag Seyðfirðinga.
 Lestrarfélag Sléttuhrepps.
 Lestrarfélag Súðavíkurhrepps, Álftafirði.
 Magnús Bárðarson, útvegsbóndi,
 Magnús Jónsson, prestur, Ísafirði.
 Magnús Torfason, sýslumaður og bæjarfógeti, Ísafirði.
 Oddur Guðmundsson, póstafr.m. Bolungavík.
 Ólafur Árnason, bóndi, Bolungavík.
 Ólafur Jónsson, Elliðaey.
 Ólafur Pálsson, verzlstj., Arngerðareyri.
 Páll Pálsson, útvegsbóndi, Heimaþæ, Hnífsdal.
 Páll Þórarinnsson, sjómaður, Hnífsdal.
 Pétur Oddsson, kaupm., Tröð í Bolungavík.
 Sigfús Danielsson, verzlunarstjóri, Ísafirði.
 Sigurbjörn Ármannsson.

Sigurður Kristjánsson, kennari, Ísafirði.
 Sigurður Pálsson, verzlunarstjóri, Hesteyri.
 Sig. Sigurðsson, kennari.
 Sig. Sigurðsson, málaflutningsm., Ísafirði.
 Sigurður Þorvaldsson, kennari, Ísafirði.
 Stefán Sigurðsson, verzlsm.
 Stephensen, Páll, prestur, Holti í Öndurarfirði.
 Thordarson, Finnur, konsúll, Ísafirði.
 Thorsteinsson, Davíð Scheving, lækur, Ísafirði.
 Valdemar Valdemarsson, formaður, Hnífsdal.
 Þorvaldur Jónsson, prófastur, Ísafirði.
 Þorvarður Brynjólfsson, prestur, Stað í Súgandafirði.

Vigur-umboð.

(Umboðsm. Sigurður Stefánsson, prestur, Vigur)¹⁾.

Bjarni Sigurðsson, ráðsm., Vigur.
 Finnbogi Pétursson, Hvítanesi.
 Jón Guðmundsson, kaupm., Eyraadal.
 Sigurður Stefánsson, prestur, Vigur

Strandasýsla.

Bárðarson, Guðm. G., Kjörseyri '16.
 Björn Magnússon, Borðeyri '15.
 Guðjón Guðlaugsson, kaupfélagsstj., Hólmavík '16.

¹⁾ Skilagrein komin fyrir 1916.

Halldór Kr. Júlíasson, sýslumaður,
Borðeyri '16.

Lestrarfélag Árneshrepps '15.

Lestrarfélag Bjarnarfj. og Bala '17.

Lestrarfélag Kirkjubólshrepps '15.

Lestrarfélag Kollafjarðar '16.

Lestrarfélag Selstrandar '16.

Þórarinn G. Árnason, Þiðriksvöll-
um '16.

Húnavatnssýsla.

Eggert Ól. Eiríksson, bóndi, Sveðju-
stöðum '17.

Guðm. Arason, búfræð., Illugastöð-
um '15.

Jón Jónsson, bóndi, Stóradal '16.

Kristján H. Sigurðsson, kennari,
Brúsastöðum '16.

Lindal, Jakob, Lækjamóti '16.

Þóroddur Lýðsson, Oddsstöðum,
Hrútaf. '16.

Þorvaldur Kristmundsson, búfræð.,
Bálkastöðum. '16.

Hvammstanga-umboð.

(Umboðam. Björn P. Blöndal
verzlunarm. á Hvammstanga)¹⁾.

Ásgeir Magnússon, skólastjóri,
Hvammstanga.

Ásta Gísladóttir, Geithól.

Blöndal, Björn P., verzlunarmaður,
Hvammstanga.

Bókasafn Vestur-Húnavetninga
Hvammstanga.

Briem, Jóh. Kr., prestur á Melstað.

Guðm. B. Jóhannesson, Þorgrims-
stöðum.

Guðm. Sigfússon, Krókastöðum.

Gunnar Kristófersson, hreppstjóri,
Valdarási.

Gunnl. Gunnlaugsson, búfræðingur,
Syðri-Völlum.

Halldór Magnússon, bóndi, Vatnshól.

Ingvar Jakobsson, Harastöðum.

Jón D. Guðmundsson, Barði.

Jón Eiríksson, bóndi, Svertings-
stöðum.

Magnús Þorleifsson, Krossanesi.

Ólafur Gunnarsson, læknir,
Hvammstanga.

Pétur Gunnarsson, Hvoli.

Sigurður Jónsson, Stöpum.

Sigurður Pálmason, Hvammstanga.

Stefán Björnsson, bóndi, Spordí.

Stefán Dlömedesson, Ánastöðum.

Valdemar Baldvinsson, búfræð.,
Helguhvammi.

Þorbjörn Teitsson, Víðidalstungu.

Blönduóss-umboð.

(Umboðsm. Friðfinnur Jónsson,
trésmiður, Blönduósi)¹⁾.

Andrés Guðjónsson, kaupmaður,
Harastöðum.

Anna R. Þorvaldsdóttir, Blönduósi.

Arnalds, Ari Jónsson, sýslumaður.

Árni Þorkelsson, hreppstj., Geita-
skarði.

Bjarni Jónasson, barnak., Blönduósi.

Bjarni Pálsson, prófastur, Steinnesi.

Björn Stefánsson, prestur, Bergs-
stöðum.

Daði Davíðsson, Gilá.

Friðfinnur Jónsson, trésm., Blöndu-
ósi.

Hafsteinn Pétursson, bóndi, Gunn-
steinsstöðum.

¹⁾ Skilagrein komin fyrir 1916.

Jakob Bjarnason, vinnum., Holta-
staðakoti.

Jónas Illugason, bóndi, Bröttuhlíð.

Klemens Guðmundsson, Bólstaðar-
hlíð.

Lárus Ólafsson, trésm., Blönduósi.

Lestrarfélag Áshrepps.

Lestrarfélag Langdælinga.

Lestrarfélag Svinavatnshrepps.

Lestrarfélag Torfalækjarhrepps.

Levy, Eggert, hreppstj., Ósum.

Magnús Björnsson, Syðra-Hóli.

Magnús Jónsson, bóndi, Sveins-
stöðum.

Málfundafélagið „Fjölnir“ í Svína-
vatnshreppi.

Páll Sigurðsson, búfr., Brásastöðum.

Pétur Theodorsson, sölustj., Blöndu-
ósi.

Runeberg Ólafsson, Þórormstungu.

Sigurgeir Björnsson, búfr., Orra-
stöðum.

Sigvaldi Sveinsson, bóndi, Höskulds-
stöðum

Sýslubókasafn Austur-Húnavatns-
sýslu.

Sæmundsen, Edwalds, verzlunarstj.,
Blönduósi.

Þórarinn Jónsson, alpm., Hjalta-
bakka.

Þorsteinn Bjarnason, kaupmaður,
Blönduósi.

Jóhannes Friðbjarnarson, Stóra-
Holti '16.

Jón Árnason, gagnfræð., Stóra-
Vatnsskarði '16.

Sauðárkróks-umboð.

(Umboðsm. Margeir Jónsson, kenn-
ari, Ögmundarstöðum)¹⁾.

Anna Kr. Jósefsdóttir, Hofi.

Axel Kristjánsson, verzlunarmaður,
Sauðárkróki.

Björn L. Jónsson, bóndi, Stóru-Seylu.

Blöndal, Kr., póstafr.m., Sauðár-
króki.

Bókasafn Skagafjarðar.

Briem, Ólafur, alpm., Álfgaersvöllum.

Guðm. St. Jósafatasson, búfr., Brands-
stöðum.

Hafstað, Árni J., Vík.

Hálfðan Guðjónsson, prestur á
Sauðárkróki.

Hálfðan Jónasson, Þorljótsstöðum.

Halldór Stefánsson, Glaumbæ.

Hjörtur Benediktsson, Stóru-Seylu.

Jóhann Örn Jónsson, Árnesi.

Jón Guðmann Gíslason, verzl.m.,
Sauðárkróki.

Jón Kr. Ólafsson, Dúki.

Jón Sigurðsson, Reynistað.

Jón P. Björnsson, kennari, Sauðár-
króki.

Jónas Kristjánsson, læknir, Sauðár-
króki.

Lestrarfélag Flugumýrarsóknar.

Lestrarfélag Miklabæjarsóknar.

Magnús Guðmundsson, sýslum.,
Sauðárkróki.

Magnús Sigmundsson, Vindheimum.

Margeir Jónsson, kennari, Ögmund-
arstöðum.

Skagafjarðarsýsla.

Björn Jónsson, prófastur, Miklabæ
'17.

Guðm. Davíðsson, Hraunum '16.

Hartmann Ásgrímsson, kaupmaður,
Kolbeinsárósi '16.

¹⁾ Skilagrein komin fyrir 1916.

Ólafur Sigurdsson, Hellulandi.
 Pétur Jónsson, búfr., Eyhildarholti.
 Sigurður Björnsson, bóndi, Veðramóti.
 Sigurður Jósafatsson, Krossanesi.
 Tobías Magnússon, Geldingaholti.
 Þorbjörn Björnsson, bóndi, Heiði.

Hóla-umboð.

(Umboðsm. Sigurður Sigurdsson, skólastjóri, Hólum)¹⁾.

Árni Guðmundsson, Efra-Ási, Hjalta-dal.

Bændaskólinn á Hólum.

Einar Jósefsson, Vatnsleysu.

Jón Sigtryggsson, Framnesi.

Lestrarfélag Hofshrepps.

Lestrarfélag Hólahrepps.

Ólafur Jónsson, Litlahóli.

Sigurður Sigurdsson, kenn., Hólum.

Theodor Arnbjarnarson, Hólum.

Eyjafjarðarsýsla.

Siglufjarðar-umboð.

(Umboðsmaður Helgi Hafliðason, Siglufirði)¹⁾.

Ásgeir Blöndal Bjarnason.

Bjarni Þorsteinsson, prestur.

Blöndal, Sophus, verzlstj.

Guðmundur Bjarnason, Bakka.

Guðm. Skarphéðinsson, kennari, Siglufirði.

Hafliði Guðmundsson, hreppstj.

Hallgrímsson, Guðm. T., læknir.

Helgi Guðmundsson, læknir.

Matthías Hallgrímsson, kaupm.

Þórður Þórðarson, Siglunesi.

Eyjafjarðar-umboð.

(Umboðsm. Kristján Guðmundsson, bóksali, Oddeyri)¹⁾.

Árni Jóhannesson, Þverá.

Árni Jóhannesson, prestur, Grenivík.

Árni Þorvaldsson, kennari, Akureyri.

Ásmundur Gíslason, próf., Hálsi.

Axel V. Wilhelmsson, verzlstj., Akureyri.

Benjamín Kristjánsson, Tjörnum.

Bjarni Arason, Grýtubakka.

Bjarni Jónsson, útbústj., Akureyri.

Björn Árnason, bóndi, Pálsgerði.

Björn Jóhanness, Syðra-Laugalandi.

Bókasafn Gagnfræðaskól., Akureyri.

Bókasafn Norðuramtsins, Akureyri.

Briem, Þorsteinn, prestur, Hrafnagili.

Einar Guttormsson, prentari, Ósi við Eyjafjörð.

Elimar Tómasson, Skógum.

Eyðal, Ingimar, kennari, Akureyri.

Finnur Sigmundsson, Ytra-Hóli.

Framfarafélag Grýtubakkahrepps.

Friðbjörn Steinsson, dbrm., Akureyri. Gjaldfrí.

Friðjón Jensson, læknir, Akureyri.

Garðar Arngrímsson, Geirbjarnarstöðum.

Garðar Halldórsson, Rífkelsstöðum.

Gestur Jóhannesson, Akureyri.

Gísli Jónsson, hreppstj., Hofi.

Gísli R. Magnússon, Akureyri.

Grímur Grímsson, kenn., Ólafsfirði.

Guðmundur Benediktsson, Ásláksstöðum.

Guðm. Guðmundsson, hreppstjóri, Þáfnavöllum.

Guðm. Ólafsson, kennari, Skógum.

Hallgrímur Davíðsson, verzlunarstjóri, Akureyri.

¹⁾ Skilagrein komin fyrir 1916.

Hallgrímur Kristinsson, kaupfélags-
stjóri, Akureyri.

Hallgrímur Pétursson, bókbindari,
Akureyri.

Hannes Ó. Magnússon, Akureyri.

Haraldur Leifsson, kennari, Holtsefi.

Havsteen, Jakob, konsúll, etazráð,
Oddeyri.

Helgi Arnason, prestur, Ólafsfirði.

Helgi Danielsson, Björk.

Hólmgeir Þorsteinsson, verzlunar-
maður, Grund.

Hólm, Magnús Á., Saurbæ.

Ingibjörg Jóhannesdóttir, Árnesi.

Ingimar Hallgrímsson, bóndi, Litla-
Hóli.

Ingólfur Bjarnason, bóndi, Fjós-
tunga.

Jón Jóhannsson, Skarði, Dalsmynni.

Jón Ól. Jónsson, Möðrufelli.

Jón Rögnvaldsson, Fífilgerði.

Jón Stefánsson, ritstj., Akureyri.

Jónas Jónasson, præp. hon., Akureyri.

Júlíus Kr. Valdemarsson, Kambi.

Karl Nikulásson, verzl.stj., Akur-
eyri.

Kristján Benediktsson, Möðruvöllum.

Kristján Guðmundsson, bóksali,
Oddeyri.

Laxdal, Eggert, kaupm., Akureyri.

Lestrarfélag Árskógsstrandar.

Lestrarfélag Glæsibæjarhrepps.

Lestrarfélag Hríseyinga.

Lestrarfélag Kaupangssóknar.

Lestrarfélag Munkaþverár.

Lestrarfélag Möðruvallasóknar.

Lestrarfélag Svalbarðsstrandar,
Svalbarði.

Lestrarfélag Öxndæla.

Líndal, Björn, cand. jur., Akureyri.

Loftur Baldvinsson, Bökkvisstöðum.

Ólafur Tryggvason, bóndi, Dag-
verðartunga.

Páll Einarsson, bæjarfógeti.

Pétur Einarsson, Grenivík.

Ragnar Ólafsson, kaupm., Oddeyri.

Rist, L. J., kennari, Akureyri.

Sigtryggur Jónatansson, bóndi,
Tungu.

Sigurður Einarsson, dýralæknir,
Akureyri.

Sigurður Jónsson, Brún.

Sigurður Sigurðsson, bókbindari,
Akureyri.

Skúli Kristjánsson, búfræðingur,
Sigríðarstöðum.

Stefán Jónsson, bóndi, Munkaþverá.

Stefán Kristjánsson, skógræktar-
stjóri, Vöglum.

Stefán Stefánsson, skólastj., Akur-
eyri.

Steffensen, Valdemar, læknir, Ak-
ureyri.

Steingrímur Matthíasson, læknir,
Akureyri.

Sveinn Þórðarson, verzlunarmaður,
Höfða.

Vigfús G. Palmason, Samkomugerði.

Vilhjálmur Jóhannesson, kennari,
Espihóli.

Þórður Jónatansson, Öngulsstöðum.

Þórður Sigurjónsson, Dagverðar-
tunga.

Þorkell Þorkelsson, kennari, Akur-
eyri.

Þormóður Sveinsson, verzl., Ak-
ureyri.

Þorsteinn Grímsson, gagnfræðing-
ur, Krossanesi.

Þingeyjarsýsla.

Guðmundur Vilhjálmsson, bóksali,
Syðra-Lóni '16.

Jónas Helgason, Grænavatni.

Sigfús Hallgrímsson, Vogum við
Mývatn '16.

Snæbjörn Arnljótsson, kaupmaður,
Þórshöfn '17.

Steinn Emílesson, verzlunarmaður,
Þórshöfn '17.

Þorsteinn Arnljótsson, kaupmaður,
Þórshöfn '17.

Húsavíkurbúð.

(Umboðsm. Stefán Guðjohnsen,
verzlunarstjóri)¹⁾.

Aðalgeir Davíðsson, bóndi, Stóru-
Laugum.

Aðalsteinn Kristjánsson, kaupm.,
Húsavík.

Ari Jónsson, Húsavík.

Árni Jakobsson, bóndi, Hólum.

Árni Jónsson, bóndi, Þverá.

Benedikt Bjarnason, kenn., Húsavík.

Benedikt Guðnason, Grænavatni.

Benedikt Jónsson, sýsluskrifari,
Húsavík.

Benjamín Sigvaldason, Gilsbakka í
Axarf.

Björn Guðmundsson, bóndi, Grjótnesi.

Björn Guðmundsson, bóndi, Lóni.

Bókasafn Grímseyinga.

Egill Sigurðsson, Máná.

Egill Sigurjónsson, bóndi, Laxa-
mýri.

Fríðrika Jónsdóttir frá Hriflu.

Guðjohnsen, Stefán, verzlunarstj.,
Húsavík.

Guðm. Stefánsson, gagnfr., Hriflu.

Guðm. Stefánsson, Haftralæk í Að-
aldal.

Halldóra Björnsdóttir, Presthólum.

Hallgrímur Þorbergsson, Halldórs-
stöðum.

Hallsteinn Karlsson, yngispiltur,
Húsavík.

Haukur Ingjaldsson, Garðshorni.

Helgi Jónsson, yngispiltur, Húsavík.

Hólmgeir Þorsteinsson, bóndi, Valla-
koti.

Indriði Þorkelsson, bóndi, Ytra-
Fjalli.

Jakob Hálfðanarson, dbrm., Húsavík.

Jóhannes Þorkelsson, hreppstjóri,
Syðra-Fjalli.

Jón Björnsson, Skógum, Axarfirði.

Jón Jónasson, Húsavík.

Jón Jónsson Gauti, bóndi, Hédins-
höfða.

Jón Sigurðsson, gagnfr., Yzta-
Felli.

Jónas Jónsson, verzlunarstj., Flatey.

Karl Arngrímsson, Landamóti.

Kristján Sigtryggsson, bókbíndari,
Húsavík.

Konráð Vilhjálmsson, bóndi, Hafra-
læk.

Lestrarfélag Keldhverfinga.

Lestrarfélag Kinnunga, Köldukinn.

Lestrarfélag Mývetninga.

Lestrarfélag Sléttunga.

Lestrarfélag Svalbardshrn., Pistilf.

Matth. Eggertsson, prestur, Grímsey.

Páll Kristjánsson, kaupm., Húsavík.

Pétur Jónsson, alpm., Gautlöndum.

Sigtrygður Helgason, bóndi, Hall-
bjarnarstöðum.

Sigurður Gunnarsson, yngispiltur,
Skógum.

Sig. Sigfússon, sölustj., Húsavík.

Sigurður Sigurðsson, hreppstjóri,
Halldórestöðum.

Sigurgeir Fríðriksson, bóksali, Skóg-
arseli.

Sigmundur Sigurðsson, lækni,
Breiðumýri.

Snorri Jónsson, hreppstj., Þverá.

Stefán Pétursson, Húsavík.

¹⁾ Skilagrein komin fyrir 1916.

Steingrímur Jónsson, sýslumaður,
Húsavík.

Sýslubókasafn Suður-Pingeyinga.

Þorbergur Þórarinnsson, hreppstj.,
Sandhólum.

Þórarinn Jónsson, bóndi, Halldórs-
stöðum.

Þórólfur Sigurðsson, gagnfræðing-
ur, Baldursheimi.

Örn Sigtryggsson, búfræðingur,
Hallbjarnarstöðum.

Norður-Múlasýsla.

Gunnlaugur A. Jónsson, verzlun-
arm., Höfn, Bakkafirði '16.

Halldór Stefánsson, Hamborg í
Fljótssdal '16.

Haraldur Þórarinnsson, prestur, Hof-
teigi '16.

Jón Sigfússon, búfræðingur, Svína-
felli, Hjaltastaðaþinghá '16.

Kristján Jónsson, Hríót '16.

Lestrarfélag Fljótssdalshrepps '16.

Lestrarfélag Hjaltastadahrepps '15.

Magnús Eiríksson, bóndi, Eyjaseli
'17.

Ólafur Ó. Lárusson, læknir, Brekku
'16.

Stefán Benediktsson, Merki á Jök-
uldal '17.

Svanhildur Jóhannsdóttir, Brekku
'16.

Vopnafjarðar-umboð.

(Umboðsm. Þór. B. Stefánsson
verzlunarstjóri)¹⁾.

Árni Jónatansson, Skálanesi.

Björn Jónasson, bóndi, Hámundar-
stöðum.

Einar Jónsson, prófastur, Hofi.

Einar Runólfsson, kaupm., Vopna-
firði.

Guðm. Guðmundsson, Krossavík.

Hallgrímur Gíslason, Egilsstöðum.

Ingólfur Eyjólfsson, Þorbrands-
stöðum.

Ingólfur Gíslason, læknir, Vopna-
firði.

Ingólfur Hrólfsson, Vakurstöðum.

Ingvar Nikulásson, prestur,
Skeggjastöðum.

Jón Halldórsson, præg. hon., Sauða-
nesi.

Jón Sigurjónsson, bóndi, Hólmum.

Ólafur Metúsalemsson, Bustarfelli.

Sigurður Benediktsson, Hofteigi.

Stefán Friðriksson, Eyvindar-
stöðum.

Víglundur Helgason, bóndi, Hauks-
stöðum.

Þór. B. Stefánsson, verzlunarstjóri,
Vopnafirði.

Þorleifur Helgason, kennari, Vopna-
firði.

Þorsteinn Sigurðsson, Vopnafirði.

Rangáar-umboð.

(Umboðsm. Björn Hallsson)¹⁾.

Björn Hallsson, Rangá.

Emil J. Árnason, Blöndugurði.

Gísli Helgason, bóndi, Skógargarði.

Guðmundur Ólason, búfr., Höfða.

Gunnar Sigurðsson, Hleinagarði.

Sigfús Eiríksson, Rangá.

Sigurður Antónlusson, búfræðingur,
Sleðbrjót.

Sveinn Bjarnason, bóndi, Heykolls-
stöðum.

¹⁾ Skilagrein komin fyrir 1916.

Borgarfjarðar-umboð.

(Umboðsm. Þorst M. Jónsson, alpm.,
Borgarfirði¹⁾).

Anna Guðný Guðmundsdóttir, Hóli.
Björn Ólafur Gíslason, verzl. stjóri,
Borgarfirði.

Halldór Ásgrímsson, Grund.

Jón Björnsson, Steinholti.

Lestrarfélag Borgfirðinga.

Sigurður Hannesson, trésm., Bjargi.

Steinn Magnússon, Odda.

Þorst. M. Jónsson, alpm., Borgarfirði.

Seyðisfjarðar-umboð.

(Umboðsm. Pétur Jóhannsson,
bóksali, Seyðisfirði²⁾).

Benedikt Jónasson, verzlunarstjóri,
Seyðisfirði.

Björn Þorláksson, prestur, Dvergasteini.

Guðmundur Guðmundsson, bókhaldari,
Seyðisfirði.

Guðmundur V. Kristjánsson, úrsmiður,
Seyðisfirði.

Hallur Hallsson, tannlæknir, Seyðisfirði.

Hermann Þorsteinsson, skósmiður,
Seyðisfirði.

Jóhannes Jóhannesson, sýslumaður,
Seyðisfirði.

Jón Jónsson, bóndi, Firði.

Karl Finnbogason, skólastjóri, Seyðisfirði.

Kristján Kristjánsson, læknir, Seyðisfirði.

Lestrarfélagið „Dagsbrún“, Seyðisfirði.

Lestrarfélag Seyðisfjarðarhrepps.

Pétur Jóhannsson, bóksali, Seyðisfirði.

Sigurður Björgúlfsson, Seyðisfirði.
Sigurður Jónsson, bóndi, Seyðisfirði.

Sigurður Jónsson, kaupm., Seyðisfirði.

Sigurjón Jóhannesson, kaupm., Seyðisfirði.

Stefán Th. Jónsson, konsúll, Seyðisfirði.

Sveinn Árnason, yfirtiskimatamaður,
Seyðisfirði.

Þórarinn Guðmundsson, kaupm.,
Seyðisfirði.

Suður-Múlasýsla.

Benedikt Sveinsson, bóksali, Borgareyri við Mjóafjörð '15.

Blöndal, Benedikt, búfr., Eiðum '17.
Búnaðarskólinn á Eiðum '15.

Eiríkur Sigurðsson, kennari, Hjartarstöðum '15.

Guttormur Pálsson, skógræðingur,
Hallormsstað '16.

Guttormur Vigfússon, præp. hon.,
Stöð í Stöðvarfirði '16.

Hákon Finnsson, bóndi, Arnaldsstöðum '15.

Jón Sigurðsson, Hjartarstöðum '16.

Klemensína Klemensdóttir, Norðfirði. 16.

Lestrarfélag Mjófirðinga '16.

Lestrarfélag Stöðfirðinga '17.

Magnús Blöndal Jónsson, prestur,
Vallanesi '17.

Magnús Stefánsson, búfræðingur,
Eiðum '15.

¹⁾ Skilagrein komin fyrir 1916.

²⁾ Skilagrein komin fyrir 1915 og ófullnægjandi fyrir 1916 (frá fyrv. umboðsm.).

Olafur B. Jónsson, Egilsstöðum '17.
Sigrún Pálsdóttir, Hallormsstað '17.
Sveinn Jónsson, Egilsstöðum '16.

Norðfjarðar-umboð.

(Umboðsm. Þorbergur Guðmundsson, búfræðingur)¹⁾.

Bergur Eiríksson, trésmiður.
Hjálmar Ólafsson, verzlunarmaður.
Ingvar Pálmason, útvegsbóndi.
Jónas Andrésson, kaupfélagsstjóri.
Lúðvíg Sigurðsson, kaupmaður.
Páll Guttormsson, kaupmaður.
Sigurjón Magnússon.
Sigurjón Stefánsson, sjómaður.
Stefán Halldórsson, verzlrm.
Sveinn Árnason, trésmiður.
Thoroddsen, Pétur, læknir.
Valdemar Valvesson, kennari.
Vigfús Sigurðsson, trésmiður.
Zoëga, Tómas J., verzlunarmaður.
Þorbergur Guðmundsson, búfræðingur.

Eskifjarðar-umboð.

(Umboðsmaður Stefán Stefánsson, bóksali á Eskifirði)¹⁾.

Arndís Kristjánsdóttir, Eskifirði.
Arnesen, J. C. F., konsúll, Eskifirði.
Arnfinnur Jónsson, Eskifirði.
Björn R. Stefánsson, verzlunarstj. á Reyðarfirði.
Einar Hálfðanarson, Hafranesi.
Eiríkur Bjarnason, Eskifirði.
Ferd. Magnússon, Reyðarfirði.
Friðrik Steinsson, Eskifirði.
Guðm. Ásbjarnarson, Eskifirði.

Gunnar Bóasson, Reyðarfirði.
Hallgrímur Bóasson, Reyðarfirði.
Hallgrímur Guðnason, Eskifirði.
Jón Björnsson, Seljateigi, Reyðarfirði.
Jón Valdemarsson, gagnfræðingur, Seljateigi.
Sigurður Hjörleifsson, læknir, Eskifirði.
Sigurður Vigfússon, kenn., Eskifirði.
Stefán Björnsson, prestur, Hólmum.
Sveinbjörn P. Guðmundsson, Hólmum í Reyðarfirði.

Fáskrúðsfjarðar-umboð.

(Umboðsm. Marteinn Þorsteinsson, bókhaldari)¹⁾.

Björgvin Þorsteinsson, verzlunarm., Fáskrúðsfirði.
Georg Georgsson, læknir, Fáskrúðsfirði.
Guðm. Jónsson, útvegsb., Búðum.
Halldór Pálsson, búfr., Tungu.
Höskuldur Stefánsson, bóndi, Dölum.
Jóhannes Þórðarson, vm., Dölum.
Jón Davíðsson, verzlunarm., Fáskrúðsfirði.
Jón Stefánsson, verzlunarm., Fáskrúðsfirði.
Lestrarfélag Búðarþorps.
Magnús Gíslason, cand. jur., Fáskrúðsfirði.
Marteinn Þorsteinsson, bókhaldari, Fáskrúðsfirði.
Páll Benjamínsson, verzlunarm., Fáskrúðsfirði.
Páll Pálsson, kenn., Fáskrúðsfirði.
Stefán Gíslason, Kolfreyjustað.
Stefán Guðmundsson, verzlunarfylltrúi, Fáskrúðsfirði.

¹⁾ Skilagrein komin fyrir 1916.

Djúpavoga-umboð.

(Umboðsm. Bjarni Eiríksson, kennari, Djúpavogi)¹⁾.

Bjarni Eiríksson, kenn., Djúpavogi.
Björn Jónsson, verzl., Djúpavogi.
Brim, Ólafur H., bóndi, Eyjum.
Eliás Jónsson, verzlstj., Djúpavogi.
Helgi Einarsson, bóndi, Melrakkane-
nesi.

Ingim. Steingrímsson, verzlunarm.,
Djúpavogi.

Jón Arnason, óðalsbóndi, Múla í
Álftafirði.

Jón Finnsson, prestur, Hrauni við
Djúpavog.

Jón Jónsson, lausam., Geithellum.
Pétur Þorsteinsson, prestur, Ey-
dölum.

Sveinn Sveinsson, bóndi, Hofi.
Thorlacius, Ólafur, læknir, Bú-
landnesi.

Skaftafellssýsla.

Ari Hálfðanarson, hreppstj., Fag-
urhólsmýri, Örnefum '16.

Lóns-umboð.

(Umboðsm. Jón Jónsson, prófastur,
Stafafelli í Lóni)¹⁾.

Bjarni Guðmundsson, bókhaldari,
Höfn í Hornafirði.

Jón Guðmundsson, kennari, Höfn.
Jón Jónsson, prófastur, Stafafelli.
Lestrarfélag Lónsmanna.

Sigurður Sigurdsson, kenn., Hoffelli.
Þorleifur Jónsson, alpm., Hólum.

Hornafjarðar-umboð.

(Umboðsm. Þórhallur Danielsson,
kaupm., Höfn í Hornafirði)¹⁾.

Gísli Sigurjónsson, Fornustekkjum.
Guðm. Sigurdsson, söðlasm., Höfn
í Hornafirði.

Lestrarfélag Mýrahrepps.

Lestrarfélag Söðursveitar.

Pétur Jónsson, prestur, Kálfafellsstað.

Þórður Oddgeirsson, prestur, Bjarna-
nesi.

Þórhallur Danielsson, kaupmaður,
Hornafirði.

Víkur-umboð.

(Umboðsm. Jón Ólafsson, kennari,
Vík í Mýrdal)¹⁾.

Bjarni Asgr. Eyjólfsson, Syðri-
Steinsmýri.

Bjarni Einarsson, præg. hon., Vík.

Bjarni Kjartansson, kaupm., Vík.

Björn Runólfsson, Holti.

Brynjólfur Einarsson, Reyni.

Einar Erlendsson, verzlunarmaður,
Vík.

Eiríkur Ormsson, trésmiður, Vík.

Eyjólfur Guðmundsson, hreppstj.,
Hvoli í Mýrdal.

Guðgeir Jóhannsson, kennari, Vík.

Guðlaugur Br. Jónsson, kaupm., Vík.

Jóel Sigurdsson, Bakkakoti.

Jóhann Sigurdsson, búfræðingur,
Breiðabólstað.

Jón Ólafsson, kennari, Vík.

Lestrarfélag Dyrhólahrepps.

Páll Sigurdsson, Skammadal.

Sigurjón Kjartansson, kennari, Vík.

Ungmennafél. „Bláfjall“ í Skaftár-
tungu.

¹⁾ Skilagrein komin fyrir 1916.

Þorsteinn Einarsson, verzl., Vík.
 Þorsteinn Þorsteinsson, kaupm.,
 Vík.

Rangárvallasýsla.

Árni Ingvarsson, Núpi '15.
 Björgvin Vigfússon, sýslumaður,
 Efra-Hvoli '16.
 Einar Jónsson, hreppstjóri, Kálfs-
 stöðum '16.
 Einar Jónsson, Tjörnum undir
 Eyjafjöllum '17.
 Erlendur Guðjónsson, Hamra-
 gördum '17.
 Guðmundur Guðfinnsson, læknir,
 Stórolfshvoli '15.
 Ingimundur Benediktsson, Kaldár-
 holti '15.
 Ingimundur Jónsson, búfr, Hala '16.
 Jakob Lárusson, prestur, Holti '15.
 Jón Guðmundsson, bóndi, Ægis-
 síðu '16.
 Jón Jónsson, bóndi, Sumarliðabæ
 '16.
 Lestrarfélag Ásahrepps '16.
 Lestrarfélag Landmanna '16.
 Magnús Kristjánss., Drangshlíð '16.
 Ólafur Finnsson, prestur, Kálfholti
 '16.
 Skúli Skúlason, prófastur, Odda '16.
 Thorarensen, Grímur, hreppstjóri,
 Kirkjubæ '17.
 Tómas Sigurðsson, hreppstj., Bark-
 arstöðum '16.
 Ungmennafélagið „Hekla“ '16.
 Vigfús Bergsteinsson, Brúnum '16.
 Þorsteinn Benediktsson, prestur,
 Lundi '14.
 Þorsteinn Jónsson, oddviti, Mold-
 artungu '16.

Árnessýsla.

Ágúst Helgason, bóndi, Birtinga-
 holti '16.
 Eggert Benediktsson, hreppstjóri,
 Laugardælum '16.
 Einar Jónsson, lausam., Hæli '14.
 Eiríkur Einarsson, s. sýslumaður,
 Eyrarbakka '15.
 Engilbert Sigurðsson, Kröggólfs-
 stöðum '16.
 Gestur Einarsson, bóndi, Hæli '15.
 Gísli Jónsson, Stóru-Reykjum '16.
 Gísli Pétursson, læknir, Eyrar-
 bakka '15.
 Guðjón Rögnvaldsson, Tjörn í Bisk-
 upstungum '16.
 Guðm. Guðmundsson, bóksali, Eyr-
 arabakka '16.
 Guðm. Guðmundsson, Efri-Brú '16.
 Guðm. Lýðsson, bóndi, Fjalli á
 Skeiðum '16.
 Halldór Jónsson, bókh., Norðurkoti,
 Grímsnesi '15.
 Jónas Halldórsson, hreppstj., Hraun-
 túni '16.
 Jón Sigurðsson, cand. phil., Kall-
 aðarnesi '16.
 Kjartan Helgason, prestur, Hruna
 '15.
 Lestrarfél. Baldur, Hraung.hr. '17.
 Lestrarfélag Gnúpverja '16.
 Lestrarfélagið „Mímir“, Ölfusi '16.
 Lestrarfélag Stokkseyrar '15.
 Páll Lýðsson, hreppstjóri, Hlíð í
 Gnúpverjah. '15.
 Páll Stefánsson, Ásólfstöðum '16.
 Sigurður Ólafsson, fv. sýslumaður,
 Kallaðarnesi '16.
 Sveinn Guðmundsson, járnsmiður,
 Eyrarbakka '17.
 Thorsteinsson, Jón, prestur, Þing-
 velli '16.

Ungmennafélagið „Hvöt“, Grimsnesi '16.

Þorsteinn Þórarinnsson, Drumboddestöðum '15.

Þorvaldur Þorvaldsson, Skaftaholti, Gnúpverjahr. '16.

Þórður Ólafsson, Ásgarði '16.

Vestmanneyjasýsla.

Vestmanneyja-umboð.

(Umboðsm. Jón Sighvatsson, bóksali)¹⁾.

Árni Sigftsson, kaupm.

Björn Jónsson, kennari.

Dal, Sita, verzlunarmær.

Einar Lárusson.

Finnur Sigmundsson.

Guðný Guðjónsdóttir.

Gunnar Ólafsson, kaupm.

Jóhann P. Jósefsson, kaupm.

Johansen, Árni J., verzlun.

Johnsen, Gísl J., konsúll.

Johnsen, Lárus J., verzlun.

Jón Einarsson, kaupfélagsstj.

Jón Jónsson, útvegsbóndi.

Magnús Stefánsson, sýsluskrifari.

Sigurður Sigurðsson, lyfsali.

Sigurjón Högnason, gagnfr.

Sýslubókasafn Vestmanneyja.

Þorbjörn Guðjónsson.

B. Í Vesturheimi.

Kanada og Bandaríkin.

Andrews, A. le Roy, Ithaca N. Y. '15.

Cornell University Library, Ithaca N. Y. '16.

Halldór Hermannsson, bókaörður, Ithaca N. Y. '15.

Hollander, Dr. Lee M., Madison, Wis. '15.

Newberry Library, Chicago '15.

Þorbergur Þorvaldsson, próf. dr., Saskatoon, Saskatchewan '16.

Vesturheims-umboð.

(Umboðsm. J. J. Bildfell, 520 Union Bank, Winnipeg)²⁾.

Albert Jónsson, Winnipeg.

Arason, W. B., Husawich.

Árni Eggertsson, Winnipeg.

Árni Sveinsson, Glenboro.

Askdal, K. S., Minneota, Minn.

Bandalag Pembinasafnaðar, N. Dak.

Bergmann, Friðrik, prófessor, Winnipeg.

Bergmann, Jonas S., Gardar, Pembina.

Bjarnason, J. M., Bi-marhave, Van.

Björnsson, A. J., Deer Horn, Man.

Björnsson, G. B., Minneota, Minn.

Björn Sveinsson, Svold, N. D.

Blöndahl, A. J., Wynyard.

Bókasafn Tjaldbúðarsafn, Winnipeg.

Borgfjörð, Th. S., Vancouver.

Cristophersson, Hernit, Brú, Man.

Davidsson, Charles G., St. Paul, Minn.

Eggert Jóhannesson, Winnipeg.

Eggertsson, J., Winnipeg.

Egill Erlendsson, Winnipeg.

¹⁾ Skilagrein komin fyrir 1916.

²⁾ Skilagreinir ókomnar fyrir 1914—1916.

Einar Gíslason, Gimli.
 Einar Sigvaldason, Baldur.
 Eyjólfur S. Guðmundsson, Jacoma, Wash.
 Friðrik Hallgrímsson, prestur, Baldur, Man.
 Geirmundur B. Olgeirsson, Edinburgh, N. D.
 Gestur Jóhannesson, Poplar Park.
 Gíslason, Anna, Winnipeg.
 Gíslí Egilsson, Lögberg, Sask., Can.
 Goodman, G. G., Wynyard, Sask.
 Goodman, Gíslí, Winnipeg.
 Gould, Chester N., prófessor, Chicago.
 Guðmundur Árnason, prestur, Winnipeg.
 Guðni Þorsteinsson, Gimli, Man.
 Gunnar Sveinsson, Seattle, Wash.
 Gunnlögur Tr. Jónsson, ritstjóri, Winnipeg.
 Guttormur Guttormsson, prestur, Churchbridge.
 Guttormsson, Thorst., Winnipeg.
 Halldórsson, M. B., dr., Souris, N. Dak.
 Henderson, Joh., Winnipeg.
 Hjálmar F. Danielsson, Otto, Man.
 Högni Einarsson, Winnipeg.
 Icelandic Library „Mimir“, Pembina, N. Dak.
 Jakob Guðmundsson, South Hill, Van.
 Jóhannes Sigurðsson, Seattle.
 Johann O. Björnsson, Wynyard, Sask.
 Jóhann Pálsson, Clarkleigh, Man.
 Johnson, Arthur A., Mozart, Sask.
 Johnson, Baldur, B. A., Langenburg.
 Johnson, Hallgrímur, B. A., Winnipeg.
 Johnson, Kristján, Duluth.
 Johnson, Magnús, Lundar, Man., Can.

Johnson, St. E., Otto P. O., Man.
 Jón Árnason, B. A., Wynyard.
 Jón Einarsson, Winnipeg.
 Jón J. Hallason, Hólar, Sask.
 Jónas Danielsson, Winnipeg.
 Jónsson, B. B., prestur, Winnipeg.
 Klemens Jónasson, Selkirk.
 Kristinn Þorfinnsson, Gardar, N. D.
 Kristinsson, Kr. Fr., Framnes, Man.
 Kristján Sigurðsson, ritstjóri, Winnipeg.
 Kristján Stefánsson, Winnipeg.
 Lestrarfélagið Árgalinn, Wild Oak, Man.
 Lestrarfélagið Dagsbrún, Lundar, Man.
 Lestrarfélagið Dagsbrún, Vidir, Man.
 Lestrarfélagið Fjólan, Nes, Can.
 Lestrarfélagið Fram, Arnes, Man.
 Lestrarfélagið Fróðleikshvöt, Árborg.
 Lestrarfélagið Gangleri, Gardar.
 Lestrarfélagið Gimlé.
 Lestrarfélagið Hafstjarnan, Pt. Roberts, Wash.
 Lestrarfélagið Harpa, Blaine, Wash.
 Lestrarfélagið Herðubreið, Narrows, Man.
 Lestrarfélagið Iðunn, Markerville, Alberta.
 Lestrarfélagið Ingólfur, Vancouver.
 Lestrarfélagið Ísland, Baldur, Man.
 Lestrarfélag Íslendinga í Cypressveit, Glenboro.
 Lestrarfélag Íslendinga í Reykjavík, Reykjavík P. O.
 Lestrarfélagið Leifar, Candahar S.
 Lestrarfélagið Mentahvöt, Otto, Man.
 Lestrarfélagið Mentun, Anthler S.
 Lestrarfélag Mikleyinga, Hekla, Can.
 Lestrarfélagið Mimir, Wynyard.
 Lestrarfélag Morgunstjarnan, Hólar.
 Lestrarfélagið Skjaldbreið.

Lestrarfél. Stjarnan, Selkirk, Man.
 Lestrarfél. Tilraunin, Keewatin, Ont.
 Lestrarfél. Verðandi, Mozart, Sask.
 Lestrarfél. Vestri, Seattle, Wash.
 Lestrarfélagið Þjóðernið, Winnipeg,

Beach.

Lestrarfél. Þörfin, Kristnes, Sask.
 Lestrarfélagið Æskan, Dakota.
 Long, S. M., Winnipeg.
 Magnús Hinriksson, Churchbridge.
 Magnús, S., Duluth.
 Markerville, Jón, Alta.
 Mæri, Jon, Svold, N. Dak.
 Norman, Jakob, Leslie, Sask.
 Oddsson, Th., Winnipeg.
 Olson, A. B., Gimli, Man.
 Ólafsson, K. K., prestur, N. Dak.
 Ólafur Kjartansson, Winnipeg.
 Pétur Hjálmsón, prestur, Marker-
 ville, Alberta.
 Pétur Ó. Hallgrímsson, Seattle.
 Pétursson, P. V., Ivanhoe.
 Runólfur Marteínsson, Winnipeg.
 Scheving, S. P., Victoria B. C.
 Sigtryggur Jónasson, Árborg.
 Sigurðsson, Job, Mrs., Upham, N.
 Dak.
 Sigurður Ólafsson, prestur, Baine,
 Wash.
 Símon Símonarson, Winnipeg.

Skaptason, M. J., prestur, Winnipeg.
 Snæbjörn Einarsson, Lundar, Man.
 Stefán Guttormsson, Winnipeg.
 Steingrímur Þorláksson, prestur,
 Selkirk.

Styrkár Vesteinn Helgason, Leslie,
 Sask.

Sveinn Árnason, Seattle, Wash.

Swanson, Fred., Winnipeg.

Thorarensen, Ch., Icel. River.

Thordarson, Ch., verksmiðjueigandi,
 Chicago.

Thordarson, Thordur, dr., Minneota,
 Minn.

Thorgeirsson, Mart., Akra, N. Dak.

Thoriaciús, B., Ninith, Man.

Thorsteinsson, Oddur, Icel. River,
 Man.

Toronto University Library, Tor-
 onto.

Tómas Jónasson, Icel. River, Man.
 University of North Dak.

Vidal, Sig. J., Hnausar, Man.

Victor Eyjólfsson, Icel. River, Man.

Wilhelm Kristjanson, Otto P. O.,
 Man., Can.

Þorgerður Þórbardóttir, Winnipeg.

Þorgils Þorgeirsson, Winnipeg.

Þórður Árnason, Mozart, Sask.

Þórir Björnsson, Duluth, Minn.

C. Í öðrum löndum.

(Bókasölu-umboð hefir Gyldendalske Boghandel Nordisk Forlag
 Klareboderne 3, Kaupmannahöfn¹⁾).

Færeyjar.

Dahl, Jakob, cand. theol., kennari,
 Thorshavn '16.

Paterson, Joannes, kongsb., Kirkju-
 bæ '16.

Símun av Skarði, lýðháskólastjóri,
 Fagrarhlíðar-háskóli '16.

S. P. úr Konoy, kennari, Gøtu '16.

Thorshavns literære Samfund, Þórs-
 höfn '16.

¹⁾ Skilagrein ókomin fyrir 1916.

Danmörk.

- Blöndal, Sigfús, bókaýrður, Amagerbrog. 15⁴, Kh. '16.
 Blöndahl, Sighv., stud. jur., H. C. Ørstedsv. 57, Kh. '16.
 Gad, G. E. C., bóksali, Vimmelsk. 32, Kh. '16.
 Gísli Brynjólfsson, læknir, Dannebrogsg. 1, Kh. '16.
 Guðjón Eiríksson, búfr., Vilhelmsdal, Mörköv St. '16.
 Gunnar Gunnarsson, rithöf., Gl. Kongev. 141³ Kh. '16.
 Hafsteinn Pétursson, prestur, Fiolstr. 28, Kh. '16.
 Halldór Kristjánsson, stud. med., Kysthosp. Juelsminde, Jylland '16.
 Hammerich, M., málaflm., Schlegels Allé 3, Kh. '16.
 Haraldur Sigurðsson, tannlæknir, Österbrog. 60, Kh. '16.
 Héðinn Valdemarsson, stud. polit., Khöfn '16.
 Jakob Gunnlögsson, stórkaupmaður, Niel Juelsg., Kh. '16.
 Johansen, J., Landbrugsskolelærer, Ladelund pr. Vejen '16.
 Jónas Lárusson, veitingamaður, Personbg. Restauration, Kh. '16.
 Jón Sveinbjörnsson, kmjr., Paludan Müllersvej 3, Kh. '16.
 Kristján Björnsson, stud. med., Odenseg. 8, Kh. '16.
 Magnús Jochumsson, stud. mag., Ravnsbg. 5 B St. Kh. '16.
 Magnús Magnússon, prestur, Bregninge pr. Ringk. '16.
 Melsted, Bogi Th., mag. art., Ole Suhrsg. 18, Kh. '16.
 Möller, J. V., prentari, Hestemöllestr. 5, Kh. 16.
 Nielsen, Chr. Hein, cand. mag., Bergthorag. 1¹ Kh. B. '17.

- Nordal, Sigurður, dr. phil., Vesterbrog. 20, Kh. 16.
 Pétur Bogason, læknir, Faxinge Sanat. pr. Præstö '16.
 Sigurður Sigtryggsson, cand. mag., Viborg '16.
 Sóreyjarskóla bókasafn, Sorö '16.
 Stefán Stefánsson, cand. jur., Villa Christineberg, Sölleröd pr. Holte '16
 Sveinbjörn Sveinbjörnsson, yfirkennari, Aarhus '16.
 Tulinius, Thor E., stórkaupmaður, Gefionsplads 5, Kh. '16.
 Valtýr Guðmundsson, dócent, dr. phil., Amagerbrogade 151, Kh. '16.

Noregur.

- Bugge, Alexander, fv. prófessor, dr. phil., Fyresdal, Telemarken '16.
 Háskólabókasafnið, Kristiania '16.
 Katedralskolens Bibliotek, Kristiania '16.
 Kolsrud, Oluf, Universitetsstipendiat, Kristiania '16.
 Skásheim, Anders, bókhaldari, Bergen '16.
 Stórþingisbókasafnið í Kristjanía '16.
 Vísindafélagið í Þrándheimi '16.

Svíþjóð.

- Göteborgs stadsbibliotek '16.
 Lunds Universitets Nord. Seminarium '16.
 Söderwall, K. F., prófessor, Lund '16.
 Zadig, Viggo, cand. phil., Malmö '16.

Pýzkaland.

Anderson, Ernst, godsegari, Allenstein, Preussen '13.

Blankenstein, M. v., litt.dr., Berlin '13.

Erkes, Heinrich, kaupm., Köln '16.

Gotzen, Jos., dr. phil., Köln '13.

Gruner, Max, dr. phil., Berlin '13.

Herdersche Verlagshandlung, Freiburg im Breisgau, Baden '18.

Heydenreich, W., dr. phil., Eisenach '13.

Mayer, E., prof., dr. phil., Würtzburg '15.

Meissner, R., prófessor, dr. phil., Bonn '15.

Staatsbibliothek, München '13.

Stadtbibliothek, Hamburg '13.

Universitätsbibliothek, Kiel '15.

England.

(Umboðsm. The Viking Society, Chelsea, London).

Banks, Mrs. M. M., London '16.

Gray, John, prestur, St. Peters, Falcon ave., Edinburgh '15.

Hight, Geo. Ainslie, Oxford '16.

Johnston, A. W., Chelsea, London '16.

Lúðvík Jónsson, búfr., London '17.

Olsen, O. T., dr., Grimsby '16.

Phillpotts, Miss Bertha S., Tunbridge Wells '16.

Holland, Belgía, Frakkland,**Austurríki og Rússland.**

Austin, C. K., lækur, París '16.

Cahen, Maurice, agrégé de l' Université, París '15.

Hoogt, J. M. van der, litt. cand. Wageningen, Nederl. '16.

Jon Svensson, prestur, Feldkirch, Stella m., Vorarlberg, Österreich '17.

Krijn, Sophie A., Amsterdam '16.

Lascaronsky, Bas. Greg., próf., Kiew '14.

de Vries, J. P. M. L., litt. n. doct., Waatergraafsmear bei Amsterdam '16.

Reykjavík, 18. júní 1917.

Matthías Þórðarson,
bókavörður félagsins.

Áskorun.

Stjórn Bókmentafélagsins hefir ákveðið að gefa út helztu rit Jónasar skálds Hallgrímssonar í bundnu og óbundnu máli og kosið til að sjá um útgáfuna, í samráði við forseta félagsins, þá Helga Jónsson, dr. phil. í Reykjavík, Matthías Þórðarson, fornmenjavörð í Reykjavík og Jón Sigurðsson í Kaldaðarnesi.

Til þess að rit þetta geti orðið sem fullkomnast eru það tilmæli útgáfunefndarinnar til allra þeirra, er hafa í höndum eða vita um handrit frá Jónasi Hallgrímssyni, kvæði, sendibréf eða annað, og sömuleiðis bréf til Jónasar, að ljá eða útvega nefndinni alt slíkt til afnota, helzt í frumriti, en ella í stafréttu eftirriti, og enn fremur önnur gögn, er lúta að æfi Jónasar, svo sem frásagnir eða ummæli um hann í bréfum samtíðarmanna. Nefndin beiðist þess og, að henni séu látnar í té sagnir eða munnmæli, er menn kynnu að hafa heyrt um Jónas, t. d. um tildrög sumra kvæða hans o. fl., alt að tilgreindum heimildum.

Allir þeir, sem kynnu að geta rétt nefndinni hjálparhönd í þessu efni, eru beðnir að senda gögn sín einhverjum nefndarmanna sem allra fyrst.

Reykjavík, 13. júlí 1916.

*Helgi Jónsson. Matthías Þórðarson.
Jón Sigurðsson.*

SKÍRNIR

TÍMARIT HINS ÍSLENZKA BÓKMENTAFÉLAGS

XCII. ÁR

RITSTJÓRI
GUÐM. FINNBOGASON



REYKJAVÍK — 1918
ÍSAFOLD — ÓLAFUR BJÖRNSSON

СЛОВАРЬ



СЛОВАРЬ РУССКАГО ЯЗЫКА

116



ДАВА — ДИВЛЯЮЩАЯСЯ
ПОСМОТРЕТЬ НА ЧЕЛОВЕКА

Efnisskrá.

	Bla.
Jörð (kvæði), eftir <i>Einar Benediktsson</i>	1
Annað líf. Ræðustúfur, eftir <i>Bjarna Jónsson frá Vogli</i>	7
Konungssonur (saga), eftir <i>Gunnar Gunnarsson</i>	14
Með ströndum fram (kvæði), eftir <i>Stephan G. Stephansson</i>	59
Gunnar á Hlíðarenda, eftir <i>Sigurð Guðmundsson</i>	63
„Bálför Sesars“, eftir <i>Shakespeare</i> . Gestur islenzkadi	89
Um „Julius Cæsar“, eftir <i>Boga Olafsson</i>	106
Gæmlir náungar frá Breiðafirði, eftir <i>Matthias Jochumsson</i>	109
Ísland-Grímur (kvæði), eftir <i>Guðmund Magnússon</i>	122
Vonin (kvæði), eftir <i>Guðmund G. Hagalín</i>	124
Stjórnarbyltingin mikla í Rússlandi, eftir <i>Þorleif H. Bjarnason</i>	125
Ritfregnir eftir, <i>G. F., J. J. Smára, B. B., J. Jac. og P. H. B.</i>	155
Ísland 1917, eftir <i>Jóhann Kristjánsson</i>	184
Síðbót Lúthers, eftir <i>Sigurð Sigurðsson</i>	193
Gunnar á Hlíðarenda, frh., eftir <i>Sigurð Guðmundsson</i>	221
Þau, sem gleðina þrá, eftir <i>Comtesse De Noailles</i> , Gestur þýddi	252
Um lífseigju dýra og manna, eftir <i>Steingrím Matthíasson</i>	254
Umhleytingar (kvæði), eftir <i>Jakob Thorarensen</i>	264
Erasmus frá Rotterdam, eftir <i>Magnús Jónsson</i>	266
Ritfregnir, eftir <i>G. F., G. H. og M. J.</i>	273
Bréf frá <i>Bjarna Thorarensen</i> til Gríms Thomsen	286
Á nesi. — Í nesi, eftir <i>Einar Friðgeirsson</i>	288
Ástríður Ólafsdóttir Sviakonungs (kvæði), eftir <i>St. G. Stephansson</i>	289
Byggingamálið. Húsagerð í sveitum, eftir <i>Guðm. Hannesson</i>	294
Erasmus frá Rotterdam, nl., eftir <i>Magnús Jónsson</i>	309
Um sendibréf, eftir <i>Jón Sigurðsson</i> frá Kaldaðarnesi	325
Frá Frakklandi, 1916—1917, eftir <i>John Galsworthy</i> . G. F. þýddi	345
Við Dýflin (kvæði), eftir <i>Stephan G. Stephansson</i>	361
Frá málstreitu Norðmanna, eftir <i>Holger Wiehe</i>	362
Ritfregnir, eftir <i>Holger Wiehe</i> og <i>Pál E. Ólason</i>	367
Ný rit	383

Skýrslur og reikningar Bókmenntafélagsins 1917	I—XXXI
Leiðréttingar	XXXII

Index

101	...
102	...
103	...
104	...
105	...
106	...
107	...
108	...
109	...
110	...
111	...
112	...
113	...
114	...
115	...
116	...
117	...
118	...
119	...
120	...
121	...
122	...
123	...
124	...
125	...
126	...
127	...
128	...
129	...
130	...
131	...
132	...
133	...
134	...
135	...
136	...
137	...
138	...
139	...
140	...
141	...
142	...
143	...
144	...
145	...
146	...
147	...
148	...
149	...
150	...
151	...
152	...
153	...
154	...
155	...
156	...
157	...
158	...
159	...
160	...
161	...
162	...
163	...
164	...
165	...
166	...
167	...
168	...
169	...
170	...
171	...
172	...
173	...
174	...
175	...
176	...
177	...
178	...
179	...
180	...
181	...
182	...
183	...
184	...
185	...
186	...
187	...
188	...
189	...
190	...
191	...
192	...
193	...
194	...
195	...
196	...
197	...
198	...
199	...
200	...

Jörð.

Vor jörð. Vor jörð. Eitt orð í himnaheim.

Eitt hugboð andans mikla, er ljósið glóði.

— Hann risti þína braut sem línu í ljóði,
sem logahending í vörn sólargeim.

Hann kvað þig fram í kraptisins myndum tveim,
hann kenndi þig við eilífð og við dauða.

En eins og styðjast stuðlar dýrra braga
hann strengdi þína geisla á djúpið auða.

Þeir eiga að bera andvörp þinna nauða
og óm, þíns fagnaðs yfir tímans daga.

Svo hlóðst þín krystallsbygging, röð af röð,
og rætur seildust djúpt að tindi og grunni.

En hugir lyptust yfir röst og runni
í röðulmorgna og heilög straumaböð.

Og himinn snart með ljósi lífgræn blöð,
svo loptið brjóstin þyrstu mættu teiga.

— Svo kveikist þrá, og þrautin á að vinnast
og þúsund leiðir hnoss og sælu eiga.

En eldhjör blikar milli vara og veiga:

Einn vegur liggur heim. Þín fórn skal innast.

Því sekkur glaumsins bylgja blökk og hljóð,
er beinist að sjer sjálfum andans kraptur
og neista viljans sendir efnið áptur,
með arð síns banastríðs í lífsins sjóð.

Vor jörð. Nú hrópar hjartna þinna blóð
er hismið endurkrefst í þögn og eyði.

Með kvíða og ógn þess hörðu fjötur hrökkva,
 svo hnígur moldin þungt að sínu leiði.
 Vjer frelsumst sem í leiptri af líkn og reiði.
 — Vort ljós, það kviknar þegar fer að rökkva.

Í einum svip vjer sjáum lífsins dag,
 er sálin lítur við í dauðans hliði —
 sem rifjist þáttur upp á sjónarsviði,
 er síðsti ómur deyr í leiksins brag.
 Hve hljómar saknaðsárt vort minnislag;
 hve sveimar liðins tíma augun skera.
 — Í kvæðalok nær hryggðin hærra en gleðin.
 Að hinnstu skilst oss fyrst vor eigin vera,
 og hjartað finnur orð, sem andann bera.
 — — Vort æfljóð, sem bót ei verður kveðin!

Þín dýpsta hvöt hún bjó þjer böll og hel.
 Í banni traðkast nú þinn helgi lundur.
 Og þó á lífið enn sitt háa undur —
 er ástin helga snertir mannleg þel.
 Þá skín þú saklaus enn, vort Edenshvel,
 með aldin frjáls, er sig til jarðar hneigja.
 Þá gjöra hjörtu hugi tvenna að einum,
 og himininn hann sjest, en orðin þegja —
 en syndug, jarðnesk brjóst í draumi deyja
 og drúpa að vængjaföðmum, engilhreinum.

— Vér helgumst þér, vor sólarsignða fold,
 í segulviðjum, undir loptins höfga,
 með eðlið skipt, til hels og himins öfga,
 og hljóða vöggu búna í unn og mold.
 Þú hófst til ljóss og lífs vort þunga hold
 og lyptir vorri brá til morgunlanda.
 Sem vona og trúnaðs börn, þín björg vjer hreifum.
 Á brúnum tinda vegamerkin standa.
 Loks dagar yfir draum vors bundna anda
 og dauðinn leysir vora sál úr reifum.

— Vjer teigum við þitt brjóst vort Bragavín;
 Þín bros og daggir titra í vorum gígjum,
 Þinn andblær ber vorn óð að himinskýjum;
 með ómi þinna hamra rödd vor dvín.
 Þú breiðir klæði blóma og fannalín
 á brautir vorar, upp til söngsins hæða.
 Þitt afl er það, sem ljóði og list vér vígjum
 — þú ljetst það streyma fram til vorra æða.
 Af jarðarætt er andi vorra kvæða.
 Þinn eldur býr í strengnum sem vjer knýjum.

Vort sandkorn himnahafs, hve ertu stór.
 Þín hljóðu straumaköst ná geiminn yfir.
 Í þínu dufti drottins myndin lifir.
 Þú dropi varðst svo fylltist ljóssins sjór.
 Sá andi, er stillir stjörnuskarans kór,
 hann stýrir hverju spori þinna loga;
 því hann er sá, sem allt sjer í því eina;
 því á eitt sjónarkast vort hvólfsins boga;
 því speglast blikur blárra, djúpra voga
 í blaðsins dög, í tárum þinna steina.

Þú deplar auga og dagur verður kveld.
 Þú dregur blæju hægt á mánagluggann —
 og breiðir þjer að brjósti næturskuggann,
 þú blundar, vaknar, kveikir morguneld.
 Þú dúðar okkur hljótt í haustsins feld,
 en heitan móðurkoss til vorsins geymir.
 Svo snýr þú við, sem víf að ástarhótum,
 og vetrarpraut í röðulfaðmi gleymir.
 En grannahvelin heilög bros þín dreymir,
 ó, himinstjarna, sem vér troðum fótum.

— Við djúpsins eld þú ólst vorn skyggna hug,
 sem uggir heima og líf þar sólir dvína,
 og hærri vill og víðar en þær skína,
 sem veit, að takmörk á þitt stolta flug. —

Í sókn og flótta sveiflast þú á bug
 uns sundrast þú í logans innsta kjarna.
 En hrapir þú í ösku á auðar slóðir,
 samt er þín líking varðveitt, fagra stjarna.
 Í sál og anda ódauðlegra barna
 þar er þín eilífð, veröld vor og móðir.

Þín sanna dýrð hún skín í hillung hæst,
 þar hvelfast skýjaborgir. Og þær standa.
 Á meðan grjót og múrar hrynja í sanda
 rís munans höll þeim trausta grunni næst.
 Þann skáldagrun, sem lýsir loptin fjærst,
 er lengst að má úr heimsins dánarsögum.
 Því verður list vors lífs hið fagra að dreyma
 í lit, í máli, í hljóms og sjónar brögum.
 — Þín fegurð öll er undir djúpum lögum,
 sem andinn veit, en hjartað þarf að gleyma.

Þar birtist voðavafans gáta öll.
 Hver vanhelg sjón hún deyr við bjarmann mikla.
 Því geyma englasverðin landsins lykla
 og ljósi jarðarandans hasla völl. —
 Ein alda af brjóstsins hafi flytur fjöll
 þar forvit heims er blindni og dróma vafið.
 Vort hærri stig ber anda og kennd í eining —
 í undirdjúpi sefans finnst það grafið.
 Sjá farfuglsungann átta sig um hafið;
 eins eygist luktri sjón vors höfunds meining.

En eins og hvolfir hylur skýi við,
 svo hverfast sjónir vorri ytri skoðun.
 Þitt blinda líf það hlýðir hærri boðun,
 en himnur augans spegla öfug mið.
 Þar starir skynjun öll, við afgrunns rið,
 í ásýnd þá, sem ljóss frá stól er hröpuð.
 Þar ristir máttug hönd á vegginn varnað:
 Án vegabrjefs vors hjarta er leiðin töpuð.

Vor hulda greind var oss til skilnings sköpuð;
því skerðir trúlaust vit vorn sálarfarnað.

Þó væri án skuggans sviplaus sjálf þín brá.
Í sálarhjúpin er hans teikning dregin
— uns sólarblettur er af auga þveginn
og upptök geislans hugir þola að sjá.
Því er allt líf þitt stormur, stríð og þrá
upp stigans þrep, svo hækki og göfgist myndin.
Því logar klaki og steinn í stjörnuhliti,
því stráir blómið ilm á fjallavindinn,
því grípur augað geislann bakvið tindinn
og gægist yfir friðarbogans liti.

Má þessi vilji í blóði, bjargi og hlyn
ei bylta aflsins stefnu á nýja vegi. —
Skilst þannig útboð vort að dómadegi
að duptið sjálft sig hefji í æðra skyn?
Hvort skalt þú bera andans kraptakyn,
sem kveðst til annars lífs, án molda og grafa?
Skal jarðarreynsla rísa af efnisdraumnum
og rúnateiknin handan ljóssins stafa,
uns mennskir hugir sökkvisjóinn kafa
og sveiflumálið lesa í ysta straumnum?

— Svo rjett oss lífsins djúpu, dýru skál,
þú dóttir myrkra undir himnaljósum.
Lát bekki þína og öndveg anga af rósum,
lát óma í risin blá þitt hæsta mál.
Stíg tímans spor við hnattahjálmsins bál,
við hörpugný af röstum vinda og sjóa.
Hvert bros þíns vanga lyptir hjartaljóðum,
við ljóma þinna hvarma vonir gróa,
við lokkailm og andþyt sterkra skóga,
við æða þinna nið í björtum flóðum.

— Vor jörð. Vor jörð. Eitt blys í heljarheim.
Einn höfundsdraumur, roðinn sonarblóði.
Eitt heilagt rim í þessu logaljóði,
sem las vor guð í skuggans veldisgeim.
Hann kvað þig fram í eldi og í eim,
af yrkisefnum þagnar, myrkra og dauða.
Hve sterkir eru stuðlar þeirra braga;
þeir strengja geislabrýr á djúpið auða,
sem bera himnum boðskap gleði og nauða
frá brjósti þínu — yfir tímans daga.

Einar Benediktsson.

Annað líf.

Ræðustúfur eftir Bjarna Jónsson frá Vogu.

Þessu lífi er óþarft að lýsa. Þar er um auðugan garð að gresja, ef leitað er lýsingar á því. Hafa bæði skáld vor og annara þjóða komist svo vel að orði um það, að mér mun nægja að nefna nokkur dæmi. Kristján Jónsson segir um það:

Lífið allt er blóðrás og logandi und,
sem læknastr ekki fyr en á aldurtila stund.

En Jón Ólafsson lýsir nær því sem daglega verður:

Aldrei hljóta af argi frið,
enga bót fá meina,
heimska þrjóta að þreyta við:
það er ljóta gamanið.

Victor von Scheffel segir að það væri fífladans, ef það væri eigi svo alvarlegt sem það er:

Das Leben wäre ein Narrentanz,
wenn's nicht so ernsthaft wäre.

Vilji menn nú eigi láta sér lynda lýsingar einstakra manna, sem vel mega vera runnar af stundar geðblæ, þá er að minna á hitt, hvern veg þjóð vor litur á það. Mætti til þess velja ýmsa málshætti og orðskviði, en eg mun láta mér nægja að minna á þenna: »Böl er búskapur, brygð er hjúskapur, ilt er einlífi og að öllu er nokkuð«.

Þótt einhverjum þyki hér kenna svartsýni, þá hygg eg sannast sagt að daglegt líf muni flestum þykja grálegt og þyki mönnum sem öllu sé snúið öfugt, þar sem mestum hluta mannanna er nauðugur einn kostur að lifa til þess að eta, en þeir koma því eigi við, að eta til þess

að lifa. Tíminn og kraftarnir endast illa til að afla viðurværis, hvað þá til annars meira. Fer því flestum sem skáldinu, er sagði:

Ungum lék mér löngun á

að lifa til að skrifa.

En sköp hafa því svo skift, eg má
skrifa til að lifa.

Þetta líf, þ. e. baráttan við sultinn, er því ekki eftir-sóknarvert.

Prestur var fenginn til þess, að telja um fyrir Jóni Arasyni, áður en hann var leiddur til líflátsins. Hóf séra Sveinn mál sitt á þessa leið: »Til er líf eftir þetta, herra«. »Veit eg það, Sveinki«, svaraði Jón. Eg mun nú eigi fara nær orðum prests en svo, að eg segi: »Til er annað líf, háttvirtir áheyrendur«. Og þótt eg fái sama svar, mun eg þó verða þrírri en Sveinki, og segja yður nokkru gjör frá því.

Mér kann nú að hafa orðið það á, að vekja með þessum orðum mínum þá eftirvænting hjá yður, að eg hefði öðlast eitthvað af speki hinna alkunnu draumspek-inga, eða að eg hefði haft fregnir af framlíðnum. En það var þó eigi ætlun mín. Má vera að eg hafi heldur átt að víkja við orðum Byrons úr »drauminum« og segja:

Tvískift er lífið, list á sína heima,

réttnefndra hluta tveggja takmörk skýr.

Þessu »öðru lífi« hefi eg lýst svo á öðrum stað: »Fyrir utan strit og strið daglegs lífs er heill heimur fagurra sólgeisla, stórra fljóta, fossa og fjalla, mannfegurðar og lífs, orðsnildar og óma. Sumir sýna oss þenna heim í söng, sumir í sögu og leik, sumir í ljóði, sumir í litum og enn aðrir greipa hann í stein eða málma. Í þessum heimi lifum vér beztu stundir æfi vorrar og njótum hrein-astar gleði og höfum hana þar helzt ómengaða. Þangað flýjum vér undan hugarharmi vorum og áhyggjum og daglegu striði voru, sem er meini blandið á marga lund. Fyrir því megum vér vera þakklátir þeim mönnum, sem

skapa oss þenna hvíldarheim og alla þá gleði, sem þar býr.

En þetta eru aðeins mín orð, og get eg hvorki búist við að menn hafi haft tíma til að taka eftir þeim, né að þeir trúi mér. En þá er að líta á meðferð mannkynsins á þessum efnum eftir því sem sagan kemst næst.

Svar mannkynssögunnar er ótvírætt þetta: Allar heimsins þjóðir hafa reynt að skapa sér annað betra líf eins og Oddur Hjaltalín, er gerði sér þá hlátraheim er heimur grætti. Vilji menn grenslast eftir því, hversu lengi mannkynið hafi haft listina í hávegum, þá verða menn að leita fram til hinna fyrri jarðalda, að minsta kosti fram til þriðju aldar (tertíæra tímans). Því að skömmu síðar en menn þeirrar aldar höfðu lært að gera sér verkfæri úr steini eða öðru, tóku þeir einnig að fegra þau og ágerðist það því meir sem lengra leið. Finna menn því í hellum listaverk frá tímum horfinna manntegunda. Nákvæmlega verður eigi sagt, hversu langt er nú liðið frá fyrsta upphafi listarinnar, en svo mikið má þó telja víst, að hér veltur á millíónum ára. (Wilh. Bölsche, *Der Mensch der Vorzeit*, bls. 19).

Sem vænta má sýnir nú sagan það einnig, að því hærra sem er menningarstig þjóðarinnar, því meiri mætur hefir hún á listum. Má auðveldlega rekja þetta frá hinum verst mönnuðu þjóðum upp til þeirrar þjóðar, sem hæst hefir staðið að menning, til hinna fornu Hellena (Grikkja).

Nú er þá mönnum óhætt að trúa orðum mínum, þeim er eg gat um áðan, því að öll saga mannkynsins sannar þau, enda mun engi á móti mæla, ef hann hugsar málið.

Hverjir skapa nú þann heim, er annað líf á heima í, eða himin þess?

Hver maður á í hug sínum friðaðan blett, þangað sem argaþras daglegs lífs kemst eigi. Þangað flýr hann sér til hugarhægðar, hvenær sem færi gefst. Þar hefir hann geymt það allt, sem fegrar líf hans. Sumt hefir hann skapað sér sjálfur, sumt er komið frá forfeðrum hans og enn annað frá samtíðarmönnum hans. Má því með sannri

segja að hver maður geri sér himin sinn að einhverju leyti, enda mun af þessari viðleitni runnin sú húsgerðarlist, sem hvelfir himna yfir oss jarðarbúa.

En annars vinna að því starfi sérstakir húsgerðar-snillingar, er kallast listamenn. Þeir hvelfa oss himna til annars lífs hér á jörð og þeir fylla þann himin með alls konar fyrirmyndum fegurðar og hreinleiks, þeir gera oss hugsjónahimin Platons

En hvern veg fer um laun þeirra? Mundu þeir fá slík laun sem aðrir verkamenn þjóðarinnar eða önnur meiri og veglegri? Hverju mundi kauphækkun þeirra nema? Eftirfarandi smásaga sýnir yður bezt, hver laun eru goldin hamingjusmiðum þjóðarinnar, birtuberum hennar og gleðigjöfum.

Land eitt liggur hvorki fyrir austan sól né vestan mána. Er það auðhitt öllum áheyrðendum mínum. Þar bar svo við eitt sinn, að vinnuveitandi sat í ljótu og stóru húsi sínu. Þar var illa bjart og auðir veggir og allt ömurlegt og kaldranalegt.

Þá kvaddi maður dyra og inn kom ókunnur verkamaður. Sá litaðist um og kendi í brjósti um húsráðanda, er hann sá, hversu þar var óvistlegt. Hann gleymdi erindi sínu og mælti til vinnuveitanda:

»Eg hygg að eg mundi mega gera vistlegra hér og vildi feginn reyna, ef eg mætti.«

»Sama er mér, þótt þú reynir,« svaraði húsráðandi, »annars er hér nógu gott.«

Ókunni maðurinn slær hörpu sína, og steinar og annað efni kemur og raðast sjálft í forkunnar fagurt og haglega gert hús með gotneskum oddbogum og grönnum og háttgnæfandi turnum. Inn var allt prýðilegt. Þar voru hörpur og töludu mannamáli og sungu sjálfkrafa. Þar voru skáldrit og gengu söguhetjurnar og fólkið út úr spjöldunum og sýndu ýmist lifnaðarhátu og hugarfar liðinna alda, eða samtíðarinnar. Þar voru á veggjum máladar myndir, og sá þar sumar og gróður, þótt um vetur væri, og var sem þar inni í húsi þessu væri saman kom-

inn kjarninn úr fegurð láðs og lagar, lífs og dauða, þar voru höggvar myndir og steypar, er drógu saman í eina örlagastund æfi og örlög einstaklinga og heilla þjóða, er sýndu á einum veggfleti hugsjónir og andarauð ótal alda og þjóða. Þar kvað margt listaverk Urðar orði, verðand-in valðist sólstöfum og fegurð og snildin sýndi þar skuld tímans, eða hvað fram skyldi fara síðar.

Alt þetta gladdi geð eigandans og huggaði hann og hresti, þegar hann kom þreyttur heim frá störfum sínum, hvatti, efldi og vakti hug hans. Hann undi nú hag sínum hið bezta.

Og tímar liðu.

*

*

*

Einhvern dag sat vinnuveitandinn glaður og reifur í höll fegurðarinnar og hvíldist eftir happasæl störf. Þá kom ókunni maðurinn til hans og mælti:

»Þykir þér eigi fagurt hér og þykir þér eigi nokkurs um vert, hversu eg hefi búið um þig?«

»Eg kann vel við margt af þessu glingri þínu,« svaraði vinnuveitandinn.

Þá mælti ókunni maðurinn enn: »Nú er mér vaxið ásmegin og alt fegurðarstarf mitt er máttkara en áður, sjónin hvassari, heyrnin næmari, höndin hagari, andinn auðugri, hyggjan dýpri og skilningin skarpari. Því að Freyja hefir nú veitt mér aflvakann mikla, ástina og konuna. En eitt smáatvik vekur mér áhyggju. Mig skortir mat til að halda við starfspoli mínu, og þykir mér sárast ef óort verk mín farast fyrir.

Nú hefi eg veitt þér harla mikil gæði, hugarauð og æfiyndi, mundir þú þá eigi vilja veita mér þetta litilræði í staðinn?«

»Skárra er það nú litilræðið!« svaraði húsráðandi. »Annars var aldrei samið um kaup fyrir þetta fitl þitt, enda mundi eg aldrei hafa keypt það. Þú vanst verkið af sjálfsdáðum og átt því enga heimting á kaupi. Þó mun eg nú gefa þér nokkur hundruð krónur, en síðan vil eg vera laus við alt betl.«

Þá var sem töfrasproti hefði snortið öll verk ókunna mannsins, því allt varð nú miklu fegra en áður, ljóðin og lögin, litir og lögun, vöxtur og vænleikur, og sólarbirtan sjálf varð hlýrri og skærari.

Og timar liðu.

*

*

*

Vinnuveitandinn situr í tvöfaldri fegurð í höll sinni og hvílist eftir mikil og happasæl afrek. Þá er drepð á dyr, og inn gengur ókunni maðurinn. Hann mælti við húsráðanda:

»Hversu gezt þér að fegurðarheimi þeim, er eg bjó þér síðast?«

»Eg hefi gaman og hvíld af mörgu af þessu glingri þínu,« svaraði hinn.

Þá mælti ókunni maðurinn: »Nú hefi eg enn fengið meira vald yfir heimi fegurðarinnar, því að nú þekki eg af eiginni reynslu sorgina og kvíðann og áhyggjurnar. Og nú hefi eg lykil að hvers manns hug og megna nú að veita hverjum þá gleði, er hann þarfnast mest. — En eitt er þó að. Þegar barnið mitt grætur og biður um brauð, en eg á ekkert til, þá verð eg svo hljóðglöggur á allar bölraddir verandinnar og svo skarpskygn á skaðræði og böll, að samræmi fegurðarinnar flýr mig. Mér er ofraun að hvelfa öðrum mönnum himna til annars betra lífs, þá er minn eigin himinn hrynur yfir mig. Vilt þú nú hjálpa mér?«

Þá svaraði vinnuveitandinn: »Eg sagði þér það síðast, að eg vildi eigi þola þér betl. Eg fyrirleit alla bitlingamenn!«

Þá dapraðist sólarbirtan, þung stuna fór um strengi harpnanna, sorta brá yfir málverkin og marmaralíkneskin grétu.

Fjórða daginn eftir sat vinnuveitandinn í höll sinni og horfði út um gluggann. Þá gekk ókunni maðurinn þar fyrir. Hafði hann hörpuna í annari hendi, en undir hinni bar hann svartan stokk og prestur í hempu gekk við hlið hans.

Ókunni maðurinn leit upp í gluggann og sló hörpunni niður við stein, svo að hún fór í smá mola. — Þá brast hver strengur á hörpum þeim, sem inni voru, af skáldritunum var ekkert eftir nema spjöldin, líkneskin sprungu og steinarnir hurfu úr húsinu og hvert efni, þangað sem það var áður.

Listin hafði læst himni sínum fyrir vinnuveitandanum. Hann var eigi framar bluttakandi annars lífs.

Allt var nú ljótt og ómurlegt umhverfis hann. Þar sat hann í náttswalanum gramur og geðvondur. Hræfuglar görguðu honum til huggunar og ýlustráin ýlfðu hann í svefn. Hann var ímynd vanþakklátrar þjóðar, er myrðir þá menn, er freista að göfga hug hennar og strá geislum á götu hennar og varða, yrkja og vökva ódauðlegan laukagarð henni til yndis, auðs og frægðar. — —

Hér tel eg því svarað, hversu búið er við listamenn.

Konungssonur.*

Eftir Gunnar Gunnarsson.

Þér gerðuð boð eftir mér, herra konungur?

Kalla þú mig Hákon, Inga.

Hákon Sverrisson, þér vilduð hafa tal af mér?

Kalla þú mig Hákon, Inga, ekkert nema Hákon.

Hákon, hvað viljið þér?

Það, Inga, alt vil eg þér. — Þegar eg kom hingað fyrir viku til Borgar og sá þig standa þarna úti á svölunum, þá — þá stöðvaðist eitthvað innan í mér, þá stöðvaðist hjartað hérna í brjósti mínu, — og það var líkast því að sjálft líf mitt léki á þræði. Og þegar eg spurði þig: hver ert þú? og þú horfðir á mig með einörðu, bláu augunum þínum og svaraðir: Inga frá Varteigi, þótti mér sem eg jafnan hafa þekt það nafn, og hafði þó aldrei heyrt það áður.

Hvenær hyggist þér að halda ferðinni áfram, herra konungur?

Aldrei, — eg fer aldrei lengra. En kalla þú mig Hákon, Inga. — Hvað ert þú að hugsa um?

* Höf. hefir samið sögu þessa á dönsku, og er hún byggð á sögu Hákonar konungs Hákonarsonar, þar sem hann er einmitt „konungssonurinn“, er sagan segir af. Í síðasta þriðjungi sögunnar hefir höf. á fáeinum stöðum þýtt orðrétt úr Hákonarsögu, ýmist hluta úr setningum eða samfeldar setningar. Þar sem svo stóð á, hefi eg ekki lagt til íslenzka þýðingu frá sjálfum mér, taldi réttara að láta orð Hákonarsögu óbrjáluð; hefi aðeins vikið við rithætti í sama horf og annarstaðar í sögunni.

Þér eruð ungur, herra konungur. . . . Hvers vegna hlæið þér að mér?

Inga! — Inga frá Varteigi! — hvað ert þú? gömul?

Nítján vetra, herra.

Nítján vetra! — Þá erum við jafnaldrar! — En þú munt vera mun betur viti borin en eg, Inga.

Svo vel viti borin er eg, Hákon, að eg veit, að konungur verður ekki heftur á för sinni — og að ekki ber að hefta hann. . . .

Þú talar jafnan svo hyggindalega og skynsamlega, Inga. . . . Inga, en hvað þú ert fögur! — Um hvað ert þú að hugsa, Inga?

Eg kem að rekkju yðar í nótt, herra.

Inga! — hvað segir þú! . . .

Sleppið mér. . . . Eg kem að rekkju yðar í nótt, herra.

Inga frá Varteigi — eg elska þig.

Það veit eg, herra — annars kostar hefði eg ekki komið að rekkju yðar í nótt.

Inga frá Varteigi — elskar þú mig?

Þarft þú að spyrja, Hákon . . . Hákon . . .

Þú ert mikillát kona, Inga, mikillát svo sem ætt þín er. Þú ert konungi samboðin.

Annars kostar hefði eg ekki komið, herra.

Inga frá Varteigi — þú skalt verða drotningin mín — drotning Noregs. Þú kemur með mér til Björgynjar. Við höldum brúðkaup okkar um jólin.

Nei, herra, drotning vil eg ekki vera. — En eg vildi gjarna ala yður son, herra.

Inga, hafnar þú því að verða drotningin mín?

Já, herra.

Þú móðgar mig, Inga.

Nei, herra, en eg elska yður, og vildi gjarna ala yður son.

Er það sakir þess að þú elskar mig, að þú vilt ekki verða drotningin mín?

Já, herra.

Mæl þú ljósar, Inga.

Eg vil ekki ráða yður bana, herra.

Hlytir þú þá að ráða mér bana, ef þú yrðir drotn-
ingin mín?

Já . . . jafnskjótt og þér svikjuð mig, herra, hlyti eg
að ráða yður bana.

En eg mun aldrei svíkja þig, Inga.

Hákon konungur, í yður og ætt yðar er heitt blóð og
rúmgóð hjörtu. — Og margar eru konurnar fagrar í Noregi.

Já. — — En engin sem þú, Inga.

Hákon, svík mig ekki, áður en eg hefi gefist þér.

Hvað áttu við, Inga?

Ekki neitt, herra.

Hvað áttir þú við, Inga?

»Jáið« áðan kom upp um yður.

Þú ein átt hjarta mitt, Inga.

Já, núna — það veit eg. En eg er ekki hin fyrsta
og verð ekki hin síðasta.

Inga, eg skil þig alls ekki . . . elskar þú mig?

Eg elska þig, Hákon.

Inga frá Varteigi — elskan mín!

Margrét drotning og frú Kristín hafa nú þegar beðið
lengi í Oslu. Ber nauðsyn til að vér förum af stað, herra.

Til heljar með þig Hákon galinn, og tak stjúpuna mína
með þér, ef þig fýsir.

Hákon konungur Sverrisson, þér gleymið yður . . .

Hákon galinn, þú ert asni. — Á brott!

Hákon konungur Sverrisson —

Er þér nú einnig þörf máls, Pétur Steypir?

Nær var það venja með Birkibeinum að grípa fram
í fyrir öðrum?

Sem stendur er það eg, sem kveð á um, hver venj-
an sé með Birkibeinum. Gleyrn því ekki, Pétur Steypir.
Tala þú!

Fúslega, herra.

Eg vildi ekki hafa sagt annað en það, að faðir yðar, Sverrir konungur, er einnig unni fögrum konum —

Þegi þú, Pétur Steypir! —

gleymdi aldrei fyrir konu sakir, að hann var konungur.

Gæt tungu þinnar, Pétur Steypir. — Vara þig!

Ljóstið þér mig, herra konungur?

Hvort kom við, gamli Birkibeinn! Eg gerði ekki annað en þrýsta konungsinnsigli mínu á munn þér, er var helzt til opinn,

Hákon konungur Sverrisson, svo er að sjá, sem yður sé kunnugt, að þér megið treysta mönnum yðar, þar sem þér býtið þeim hvorutveggja, harðyrðum og þungum höggum.

Veit eg það, Dagfinnur bóndi.

Leyfið mér að ráða yður ráð: geymið handafl yðar óvinum yðar, herra.

Baglarnir kenna handafl mitt, Dagfinnur bóndi, og munu fá að kenna á því enn betur.

Það er ósk allra Birkibeina. Til þessa hefir það ekki verið talið konungsafrek, að véla konur og ljósta vini sína.

Dagfinnur bóndi, neyð mig ekki til að þrýsta innsigli mínu á munn þér í viðbót.

Þess dirfist þér ekki, herra.

Hvað mælir þú, Dagfinnur?

Þess dirfist þér ekki, herra, alla þá stund, er eg á það ekki skilið!

Dagfinnur bóndi, hver er konungur í Noregi?

Sem stendur þér, herra En virðist yður nauðsyn að spyrja?

Og hvað ert þú, Dagfinnur bóndi?

Tryggur þegn konungs míns — en ekki þræll hans, herra.

Manni gæti stundum til hugar komið, að þú værir konungborinn, Dagfinnur.

Eg er bændaættar, og það er á sinn hátt jafngilt.

Dagfinnur, vilt þú heita mér einu?

Fúslega herra.

Dagfinnur, þú veizt, hvað hér hefir að orðið.

Eg veit það, herra.

Vilt þú heita mér því, ef Inga frá Varteigi yrði þunguð og æli son, að þjóna honum þá af jafn miklum trúnaði og þú hefir þjónað föður mínum og mér.

Gera mun eg það, herra. Það er, hvort sem er, bein skylda mín. Líf mitt og allra Birkibeina er helgað ætt Sverris.

Þökk, Dagfinnur bóndi. Þá dey eg kviðalaus.

Hvað eigið þér við, herra?

Mig hefir dreymt ærið undarlega, Dagfinnur. Mig dreymdi, að faðir minn, Sverrir konungur, gekk að mér og fór kaldri hendi um líkam minn. Og þar sem hann snart, þrútnaði holdið og varð blátt og bólgið. — Eg verð ekki langlífur, Dagfinnur.

Mælið ekki svo. Þá myndi illa komið fyrir Noregsríki. Þér eruð ungur maður, herra.

Bróðir minn, Sigurður lávarður lézt og var þó ungur að aldri.

Þér eruð hryggur, herra.

Lífið er svo indælt, Dagfinnur. Og eg hefi nýlega tekið við konungdómi. — Eg hefi ráðið altöf fáum Böglum aldurtila. — — Hvert var erindi þitt áðan, Dagfinnur?

Eg kom, herra, til þess að leiða athygli yðar að því, er þér virðist ekki sjá, að vetur er í nánd og vegir spillast. Hér megum vér ekki dveljast lengur, — vér höfum þegar dvalist hér of lengi. Oss er nauðsyn á, að hafa vetrarsetu í Björgyn. Þar erum vér öruggastir, og þaðan fáum vér betri vitneskju um framferðir Bagla. Þér eigið marga óvini, herra — gleymið því ekki. Og óvinir yðar eru vakandi og hafast að.

Þá er einsætt, að vér séum og vakandi og höfumst að Hefjum ferð vora á morgun. Eg fel yður fyrirskipanir allar og undirbúning til farar, Dagfinnur bóndi.

Svo sem þér bjóðið, herra. —

Þegar vér höldum liði voru austur um, sjáumst við aftur, Inga.

Við sjáumst aldrei framar, herra.

Er það og hugboð þitt, Inga.

Já, herra. —

Þú grætur ekki, þótt eg fari, Inga?

Jú, herra.

Eg vissi það. En þú ert of stórlát til þess, að láta nokkurn sjá tár þín.

Já, herra.

Mig sem aðra?

Já, herra.

Inga — eg elska þig Og þér mun eg aldrei gleyma. Minstu þess, þegar þú heyrir heyrir af mér næsta skifti, konungsbrúður!

Eg man alt, er þú hefir mælt, Hákon. Mesta gleði mín verður það, að heyra af þér sagt, og afrekum þínum. Sendu mér oft kveðju — og ljúf hugskeyti.

Það verð ekki eg, sem gleymi, Inga. — Myndir þú muna mig — þegar eg er allur?

Eg gleymi þér aldrei, Hákon.

Far vel og lif heil, Inga frá Varteigi.

Far vel og lif heill, Hákon konungur.

Inga frændkona, við þig hlýt eg að tala.

Hér er eg Auðunn frændi. Hvað er þér á höndum við mig?

Inga, — — það er svo glatt yfir þér

Já, Auðunn frændi.

Alla tíð síðan á jólum, — já, alla tíð síðan í haust er leið hefir verið svo glatt yfir þér miklu glaðara yfir þér, en eg sá þig nokkru sinni áður.

Já, Auðunn frændi.

Inga, gleðin er indæl En ekki er kostur þess að vera jafnan glaður.

Hví er slíkur alvörusvipur á þér, Auðunn frændi?

Eg hefi frá miklum tíðindum að segja, frændkona.

Hver flutti þau? Maður sá er kom nú að bragði?

Já, er þér kunnugt, hver hann var?

Nei, Auðunn frændi.

Sendimaður frá Birkibeinum.

Komið hefir hann þá frá Hákonu konungi?

Nei, frá Guttormi konungi. — Eður öllu fremur frá Hákonu galinn, jarli.

Hvað ert þú nú að fara, frændi?

Inga — Hákon Sverrirsson konungur er látinn
Hann sýktist jólanóttina og lézt áttunda dag jóla.

Jólanóttina varð hann sjúkur, sagðir þú það?

Birkibeinar hafa tekið sér að konungi Guttorm, son bróður hans, Sigurðar lávarðar, en þar sem hann er enn barn eitt að aldri, hafa þeir gefið Hákonu galinn jarls-nafn og skipað honum við hlið hans. Nú verða tímarnir þungir Noregi.

Já Hvað áttu við, Auðunn frændi?

Sigurður lávarður var ekki konungur, er Guttormur því ekki konungssonur, þótt hann sé sonarsonur Sverris konungs. Þjóðin — allur Noregur tekur ekki í mál, að veita öðrum fylgi en konungssyni, — og vér eigum engan konungsson í Noregi. Hákon konungur lét ekki eftir sig neitt afkvæmi. — — — Þú þegir, frændkona?

Auðunn frændi

Mæl þú, Inga. — Nú hefir þú dvalið með mér þrjú ár — og ber þó ekkert traust til mín?

Auðunn frændi, undir hjarta mínu ber eg barn Hákonar konungs Frá jólanóttu hefi eg vitað það með vissu, því að þá hreifðist hann fyrsta sinni.

Blessan guðs og mína, frændkona Mig grunaði þetta að visu. — En þú ræðir um barn þitt, svo sem þú vissir, að það mundi verða sveinn.

Það hlýtur að vera sveinn, slíkt sprik og spark sem er í honum. — Þú mátt ekki hlæja að mér, frændi.

Virð á betra veg, Inga — eg varð svo glaður

Þetta skiftir miklu máli fyrir oss Birkibeina — og fyrir alla Noregs þjóð. Málið er alvarlegt. —

Það tjáir ekki að þú dveljir hér á Borg, Inga.

Hví ekki, Auðunn frændi?

Hingað ber of marga að. Það sem enginn veit í dag, kunna allir að vita á morgun. —

Margur úlfurinn mun snúðra kringum afkvæmi Hákonar konungs.

Hvert lízt þér þá að eg fari, frændi?

Eg á trúan vin, Þránd prest á Fólksbergi í Heggin. Til hans skalt þú fara. Í námunda við hann býr annar tryggur Birkibeinn, maður af ætt Guttorms grábarða og frændi Sverris, Erlendur á Húsabæ. Í umsjá þeirra mun þér trygt. Þótt eitthvað kvisaðist um ástæður þínar, mun Böglum ekki jafn auðleikið að ná til þín þar, sem hér, er mannaumferð er meiri.

Fús er eg að hlíta ráðum þínum í öllu, Auðunn frændi.

Það gleður mig, frændkona. — — Má vera að þú berir hamingju Noregs í skauti þér — gleym því ekki, Inga frá Varteigi.

Því mun eg ekki gleyma, Auðunn frændi.

Inga frá Varteigi, þú hefir alið sveinbarn!

Eg vissi það fullvel, Þrándur prestur.

Lít á! — Lít á! Er ekki þegar fullljóst, að þetta er konungbórið barn?

Mæl hljóðlega, Þrándur prestur. — Hvað hann er líkur föður sínum

Enginn heyrir okkur — nema kona mín og synir mínir. Og þau eru þagmælsk — Hann hefir augu Sverris konungs, Inga.

Hvað hann er merkilega líkur föður sínum

Hvað skal sveinninn heitinn, Inga?

Hákon Hákon

Erlendur á Húsabæ, eg er kvíðinn. Hér austur um er landið þéttskipað Böglum. — Nú er sveinninn hálfs annars árs. Nikulás biskup er jafn þefvís og sporrakki, þegar ætt Sverris á í hlut. Tilviljanin ein fær vakið grun á

oss. Og guð sé sveininum næstur, komist hann í hendur Bagla.

Hver er þá tillaga þín, Þrándur prestur?

Í Hamri eiga setu tveir sýslumenn Birkibeina, Friðrekur slafsi og Gjafvaldur gauti. Höfum sveinninn og móður hans þangað með oss. Er þeim þá einsætt, að sjá þeim farborða áfram til Inga konungs.

Baglar eru fjölmennir um öll Upplönd.

Sízt fremur en hér, Erlendur. Og á þeim slóðum eru ýmsir til varnar. Eg tel ekki ráðlegt að leynd sveininum og móður hans hér. Síðustu daga hefi eg jafnaðarlega mætt mönnum um vegu hér með grúnsamlegu yfirbragði, með spæjaraaugum, Nikulásar-augum, biskups — og þegar kom mér til hugar: hér eru snuðrarar Bagla á kreiki. — Þorir þú að taka að þér sveinninn, Erlendur? Gæt þess, að þú tekur við einka konungssyni Noregs.

Hugsum málið Þrándur prestur. — Telur þú örugt að senda hann Inga konungi? Mætti Inga konungi ekki vera það að nokkru hagleikið, að sveinn sá næði aldrei full-orðins aldri?

Ingi konungur er af ætt Sverris kominn, jafnvel þótt kvenkné hafi í milli komið, og maður göfuglyndur. Auk þessa er beinn afspringur Sverris konungs öruggur með Birkibeinum.

Er nokkur sá, er viti, hver sé faðir sveinsins? Verða færðar sönnur á það?

Hákon jarl, Pétur Steypir og Dagfinnur bóndi voru með Hákonni konungi það haust. Þú skilur.

Vel er það, — þá er sveininum borgið. Auk þess leynir það sér ekki.

Nei, það leynir sér ekki.

Ert þú þess albuinn, Erlendur, að veita mér fylgd með nokkurum þinna manna til Hamars með Ingu og barnið.

Nú um háveturinn?

Eg á ekki undir því, að bjða daglangt. Eg legg ekki á hættu, að geyma þeirra lengur. Hygg eg vér fáum komist þangað upp fyrir jól.

Hefir þú rætt málið við Ingu?

Já, hún er mér sammála.

Óttast hún ekki vosið í slíkri ferð. Það ferðalag verður enginn barnaleikur, Þrándur prestur.

Inga frá Varteigi óttast ekkert. Þegar barnið hennar á í hlut, er hún fús til hvers er vera skal.

Virð ekki undanfærslur mínar á verri veg. Eg er búinn til farar, þegar þér líkar. Þið Inga frá Varteigi megið treysta mér.

Það vissi eg, Erlendur í Húsabæ.

Hægan! Hverju gegnir ys sá við dyrnar?

Gestir komnir, herra.

Hversu margir?

Fjórir menn vopnaðir, kona og barn, herrra.

Leyf þeim inngöngu. — — — Hvað er yður á höndum?

Er nú svo illa komið hag Birkibeina, að þeir hafi eigi hug til að veita ferðamönnum húsaskjól?

Baglar eru hér á sveimi alla vegu, þú hinn málhvati. Er einatt torvelt að greina vin frá óvin. — Hverra manna eruð þér? — Leitið þér nokkurs hér?

Vér leitum Gjafvalds gauta og Friðreks slafs — sýslumanna í Hamri.

Hvert er erindi yðar við þá?

Áður en eg svara, vil eg vita, við hvern eg á orðastað, herra.

Nafn mitt er Gjafvaldur gauti. Hverjir eruð þér?

Erlendur í Húsabæ, herra.

Velkominn, Erlendur í Húsabæ. Þú ert auðsú gestur í húsum hér. — Hverjir eru félagar þínir?

Þrándur prestur úr Heggin og tveir mínir menn.

Hver er konan og barnið?

Konan er Inga frá Varteigi. Og barnið er sveinn, hálf annars árs að aldri, og hann felum vér nú umsjá þinni og allra Birkibeina.

Hvers son er sveinninn?

Hann er sonur Hákonar konungs Svérrissonar.

Mikil og góð tíðindi. — Verða færðar sönnur á það?

Hákon jarl, Pétur Steypir og Dagfinnur bóndi vita, og munu færa sönnur á. Sveininum verður að koma í hendur Inga konungi. Baglar munu ráða honum bana, náí þeir honum á sitt vald. Þrándur prestur hefir geymt móður og barn til þessa, en vill ekki hætta á, að geyma þeirra lengur.

Velkominn, konungssonur — velkomin, Inga frá Varteigi — og velkominn, Þrándur prestur. Leiðið gesti til sætis hjá öndvegi. — — Inga frá Varteigi, eg hlýt að gera yður kunnugt, að dvölin hér fær tæplega orðið löng. Ívar skjálgi, biskup mun brátt fá vitneskju um það, er hér hefir verið haft í hámmælum í kvöld. Og Sverris ætt á fáa grimmari óvini. En vel er það, að Baglar eru ekki mjög liðmargir hér í bænum sem stendur.

Gjafvaldur gauti!

Hver mælir þar?

Sendimaður Ívars biskups.

Mæl þú. Eg heyri.

Eg flyt yður kveðju Ívars biskups og það með, að mjög myndi það gleðja hann, ef Inga frá Varteigi og konungssonurinn vildu gera honum þann sóma að sækja hann heim. Telur hann sér standa næst, sem frænda Sverris konungs, að sýna þeim gestrisni.

Flyt herra þínum, Ívari biskupi, kveðju Ingu frá Varteigi og mína, og beztu þökk. En frú Ingu og konungssoninn bar ekki hingað að fyr en í kvöld og eru þjökud eftir torsóttu ferð. Nú er þau hafa hvílst að baki jólum, munu þau með gleði þiggja vinsamlegt boð biskupsins.

Hyggið þér, Gjafvaldur gauti, að biskupi muni nægja slík kveðja?

Alls ekki, Inga frá Varteigi. En með því að vér höfum mannafla meiri, mun dveljast fyrir honum að safna nægu liði til sóknar. Í dag mun hann traudla hafa njósnir úti að mun. Og í dag hljótið þér að halda áfram.

Þegar er skyggja tekur, fel eg nokkurum minna manna að flytja yður og barnið á sleða til Litla-Hamars. Þar veit eg lítinn bæ, er eg fæ leynt ykkur. Að baki jólum, þegar vér erum búnir til farar, komum vér við mikinn liðskost og fylgjum ykkur áleiðis um Upplöndin. Ferð sú verður torsótt, frú Inga.

Eg er ung og hraust og skal ekki gagna.

Ískyggilegast er það, að Ívar biskup mun efalaust hafa gert menn á fund Nikulásar biskups og Erlings Bagla-konungs, til þess að gera þá vara við. Ferð vorri hljótum vér að flyta svo sem má. Hér í Austurbyggð fá Baglar safnað meiru liði en vér. En til þessa dags hefir hamingjan jafnan fylgt ætt Sverris.

Það er og mín huggun, Gjafvaldur gauti. Haldi enginn annar hlífiskildi yfir syni mínum, gerir guð það.

Vel mælt og konungsmóður samboðið.

Hvað veldur þessari gleði liðsmanna vorra?

Spyrjið þér þess, frú Inga? Þeir eru allir Birkibeinar. Og hafði þér ekki fært þeim sonarson Sverris konungs?

Heyr! Sveinnin hlær dátt! Hygg að honum, Gjafvaldur gauti!

Nú, nú! Hvað hafist þér að, Birkibeinar? Hafði þér konungssoninn að leiksopp?

Hirð ekki um það, herra. Þeir taka á honum móðurhöndum.

Já, Birkibeinar eru mjúkhendir, þegar afspringur Sverrisættar á í hlut.

Sveinninn er svo kátur. — Svo er að sjá, sem hann uni sér vel með Birkibeinum.

Já, hann afneitar ekki föðurætt sinni.

Aldrei hefi eg verið staddur úti í slíku fárviðri. Nú er það sjötta nóttin, er vér höfum hlotið að eiga náttstað undir beru lofti. Ef vér hreppum dauðann hér á fjöllum uppi fyrir hungurs sakir, væri lítið happ í því, að hafa komist undan Böglu n.

Því ákafar sem fennir, því torveldari verður Böglum eftirförin, herra.

Þar birtir þú eflaust hug þinn, Skervaldur skrukka. Mér væri forvitni á að vita, hvernig ætti að vera komið fyrir þér svo, að þér virtist ekki, að vel væri komið fyrir þér.

Lítið eitt af fönnum og frosti skapar oss Birkibeinum ekki aldurtila, herra. Þar skal járn til.

En mun þú eftir barninu, Skervaldur.

Hann er Birkibeinn! — öldungis sem vér hinir. — Lítist yður svo, herra, þá felið mér hann.

Seljið Skervaldi skrukku sveininn.

Kom hingað, konungssonur. — Sjáið, eg sveipa um hann feldi mínnum, og ber af honum stórviðrið með skildi mínum. Sjá, herra, hve spaklátur hann er, litli Birkibeinninn!

Veit nokkur hér deili á, hvar vér erum niður komnir.

Enginn veit það með vissu, herra.

Hvar eru bændur þeir, er vér fengum til leiðsagnar?

Hér, herra.

Treystist þér að rata rétta leið, bændur?

Nei, herra, vér höfum vilst.

Farið þér ekki nær um, hvar vér erum?

Skógur þessi mætti vera bending um, að vér værum einhverstaðar austur frá Nafardal.

Hyggið þér langt muni til bygða, bændur?

Langur vegur, herra — jafnvel þótt vér værum á réttri leið.

Og matur allur er þrotinn?

Svo er víst, herra.

Þá er oss einsætt, hverjum einum, að bjargast án hans sem bezt vér getum. Verstu gegnir um konuna og barnið.

Konungssonurinn etur sújó, herra, svo sem sannur Birkibeinn.

Hér eiga gamanyrði ekki heima, Skervaldur Skrukka.

Eg mæli ekki í gamni, herra. — Eg ábyrgist sveininn.

Vel er það, Skervaldur. Eg veit, að hjá þér er hann í góðum höndum. — Inga frá Varteigi, hvernig líður yður?

Vel herra.

Þér hljótið að vera þreytt.

Eg hefi fyr haft skiði undir fótum, herra. En eg er hrædd um sveininn.

Skervaldur skrukka hefir tekið hann í sína umsjá. Skervaldur er maður öruggur. Mér kemur ráð í hug. — Hver er einna fræknastur skíðamaður í flokki vorum, Birkibeinar?

Þorsteinn skefla!

Vel er það. Þorsteinn skefla! — Hvar ert þú?

Hér, herra.

Þorsteinn skefla og Skervaldur skrukka, hafið bændurna á brott með yður og leitist við að komast til bygða. Enginn bót er í því, að þér tefjist við að biða vor, sem óröskvari erum og seinni í förum. Þegar þér svo hafið komist alla leið til bygða, er yður einsætt að senda bændurna um hæl til vor.

Svo skal vera, herra.

Þetta er meira fárviðrið. — Hversu hefst sveinninn við, Skervaldur?

Vel, Þorsteinn — vel.

Hyggur þú að vér komumst til bygða?

Eg hefi aldrei öruggari leið farið. En neytum vel augna vorra. — — —

Bændurnir fá eigi fylgt oss, Skervaldur.

Eigi þeir það við sjálfa sig. Eg treysti sjálfum mér jafn vel og þeim. Nú er eg hefi tekið konungssoninn til flutnings virðast mér allar leiðir kunnar.

Sefur hann? Til hans heyrir ekki.

Hann hefir sofið. Nú er hann vaknaður aftur. Hyggur þú að Birkibeinn æpi hátt, þó háski sé fyrir dyrum, Þorsteinn skefla?

Veitst þú það, Skervaldur skrukka? Eg hefi aldrei verið jafn glaður.

Þú hefir reynt svo fátt, Þorsteinn — þér er ekki einu sinni vaxin grön. — En, satt að segja, hefi eg heldur aldrei verið jafn glaður. Og þó hefi eg þjónað Sverri konungi. Og það var konungur, sem hafði lag á að koma Birkibein í gott skap!

Slíkan konung hreppum vér að líkindum aldrei framar.

Þessi hérna verður betri, Þorsteinn — og munt þú sanna orð min! Augu Sverris hefir hann. Og ró Sverris. Við hann verður ekki gott að glettast, er hann er vaxinn. Spaklátir menn eru hættulegastir — þegar þeim rennur í skap. — — —

Úti í slíku veðri hefi eg aldrei verið fyr.

Skervaldur — mér virðist komið í óefni.

En sá Birkibeinn!

Eg mælti þetta sakir konungssonarins.

Konungssonurinn kveinar ekki. — — —

Sífelt versnar veðrið.

Þá megum við hugga oss við það, að brátt geti það ekki verra orðið, Þorsteinn.

Viltu ekki að eg beri konungssoninn stundarkorn?

Þú hygst þó ekki að vekja deilu, Þorsteinn skefla? Meðan eg held lífi, sleppi eg honum ekki við þig.

Eg bauð þetta af góðum hug, Skervaldur.

Eg veit það, Þorsteinn. En það fer svo vel um sveininn hérna í skjóli skjaldarins, — eg tími ekki að færa hann úr stað. En þökk sé þér, Þorsteinn. — Er ekki rjóður þarna í skóginum? Hæ! — nú hallar undan fæti!

Bændurnir fá ekki fylgt oss, Skervaldur.

Þá er þeim einsætt að rekja skíðaslóðina. Neytum nú skíðanna, svo sem hæfir Birkibeinum! Hæ! Nú skríður liðugt, konungssonur! — Hann hlær, Þorsteinn.

Engan svein þessum líkan hefi eg þekt, Skervaldur!

Aldrei eg! — Því að hann hefir aldrei verið til! — Veit honum athygli, þegar kófið lefst framan í hann. Hann hleypir brúnum! — Þór veit, hann hleypir brúnum! — svo sem væri hann orðinn sprækur, litill karlmaður! — — —

Hyggur þú sennilegt, að Baglar verði hér á vegi vorum?

Tæplega svo hátt til fjalla. En hafðu vopn þín til taks, Þorsteinn skefla.

Til hvers tökum vér, verði flokkur Bagla fyrir oss?

Verði flokkurinn ofurefli vort, leitum vér undan svo hart sem má, — ef vér hyggjumst eiga alls kosti við þá, grófum vér konungssoninn í fönn og drepum þá. Það er ofureinfalt, Þorsteinn skefla.

Hyggur þú það vera tiltök? eg á við, að grafa sveininn í fönn?

Hann er sonarsonur Sverris konungs. Gæt þess.

Mér virðist hann fremur smávaxinn eftir aldri.

En þrekvaxinn, Þorstein skefla — smár, en þrekvaxinn. Barninu eru — upp á það mega hafrar Þórs hnífla mig — teknir að vaxa vöðvar. — Að vexti var Sverrir konungur lægstur Birkibeina, fótskammur í meira lagi, en engi var sá maður í liði hans, er ekki skylfi fyrir honum, er hann var í því skapinu. Ekki er alt komið undir vextinum, Þorsteinn. Augun eru það, sem úr skera — augun. Því hefi eg veitt athygli. Augun votta, hvort maðurinn er ragur eða hugprúður. Og betra er hugprútt hjarta en hár búkur. — — —

Hver er þessi dökkvi þarna framundan?

Hlaða — skjöplist mér ekki. Haf varúð við, Þorsteinn.

Það mun vera sel. — Skulum við hvílast hér?

Eg hygg snjallast að leita skjóls og biða dags. Lát bændurnar hverfa aftur til Gíafvalds gauta. — Litumst nú um bekk, konungssonur. Þar er þá forn heybingur. — Slíka hvílu hefir Sverrir konungur afi þinn, fyrir allar tíðir, gert að konungshvílu. Ójá, svo er að sjá sem þú unir þér hér vel. Ert þú soltinn, snáði minn? Af miklu hefi eg ekki að miðla

Hvað hefst þú að Skervaldur?

Eg bræði snjó í hendi mér fyrir konungssoninn.

Svo er að sjá sem honum getist að þessu líkt og móðurmjólkinni. Konungssonurinn kvartar ekki, Þorsteinn.

Þú þarna með konungssoninn þinn! — Eg sé ekki betur en hér sé tekið að leka.

Virðist þér svo? — Konungssonurinn hlær, þegar drýpur í andlit honum. Sjá þú, nú vill hann grípa drop-ana! En að sjá litlu hnefana! Nema mættir þú af konungssyninum, Þorsteinn skefla.

Heyr, Skervaldur, vörð hljótum við að halda.

Það hefir og verið í huga mér.

Fús er eg að hefja vörðinn. — Hyggur þú að þú fáir sofð hér inni?

Mér hefir ekki til hugar komið að sofa, Þorsteinn. En nú geispar konungssonurinn. Eg mun verja hann fyrir lekanum með því að hvolfa skildinum yfir hann. Sof nú, litli konungssonur. Tæplega verður það síðasta skiftið, er þú sefur undir skildi.

Þá erum vér nú komin hingað, frú Inga. — Er barnið í hlöðunni, Þorsteinn skefla?

Já, herra. —

Nú, þar situr þú, Skervaldur skrukka, og þar hvílir konungssonurinn. Hann sefur vært.

Hann steinsefur, herra.

Litli sveinninn minn Hefir hann grátið, Skervaldur?

Nei, frú Inga, en hann hefir hlegið.

Er ekkert til, er honum verði gefið að eta?

Eg hefi gefið honum lítið eitt af bræddum snjó, frú Inga.

Eg óttast að sveinninn sýkist.

Enganveginn, frú Inga. Slikt vos, sem þetta, er ekki nema heilsubót Birkibeini.

Það fer vel um sveininn þarna undir skildinum. En oss hinum mun, að líkum, nálega betra úti en inni. Eg mun sjá um, að þú verðir leystur af hólmi, Skervaldur skrukka.

Síður kysi eg það, herra.

Nú, sem þér lízt. —

Þú ant mjög syni mínum, Skervaldur.

Mjög, frú Inga.

Því skal eg ekki gleyma þér, Skervaldur.

Næg laun eru mér það, að vera návistum við sveininn, frú Inga.

Það hlægir mig, að þér geymið hugprýði yðar, frú Inga. Á morgun náum vér efalaust bygdum.

Treystum því, Gjafvaldur gauti.

Og framvegis munum vér að jafnaði eiga við vini að skifta á ferð vorri.

En löng er leiðin til Þrándheims, herra. —

Eg hefi búið yður snjóhús, frú Inga. Steinsnar fyrir utan dyrnar.

Þökk, Þorsteinn skefla. Þökk fyrir daginn, öllum yður. Finnumst heil að morgni. —

Hún er kona hugprúð, Skervaldur skrukka.

Sönn konungsmóðir, Gjafvaldur gauti.

Það hefir snjóað í nótt, herra.

Hvað er að því? — Er alt búið til ferðar? — Hefir leiðarnestinu verið skift niður á burðarmennina? — Vel er það. — Höldum af stað!

Snjórinn er svo djúpur, herra, að hann tekur meir en meðalmanni að vexti í beltisstað, og svo laus, að hann heldur ekki skíðunum.

Sjáum til. Nokkurir manna vorra skulu fara fyrir, og brjóta braut með spjótsköftunum. Sjá þú um framkvæmd þessa, og að hverjir taki við af öðrum með góðri skipan. Vér skulum fram.

Að oss safnast æ meira lið, herra, Birkibeinar og bændasynir — alla fýsir að vera í föruneyti konungssonarins.

Vel er það. Því meiri mannafla sem vér höfum, því auðsóttara verður að brjóta brautina.

Fram, fram!

Hver tíðindi flytur þú, Gunnar tindur?

Ófriður er í landi, Ingi konungur.

Jafnan hefir þetta verið viðkvæðið í ræðu þinni síðustu vikurnar. Hversu er háttað ófriði þeim, Gunnar tindur?

Það hefi eg með sannindum spurt, herra, að mikið lið sækir nú niður Gaulardal.

Mikil eru þau tíðindi. — Hver er fyrir liði þessu?

Ókunnugt er mér það, herra. Sem stendur eru óaldarflokkar margir í Noregi. Baglar eru það tæpast.

Hefir þú frá fleiru að segja, Gunnar tindur?

Mælt er að þeir hafi konungsson með í för.

Son hvers konungs?

Það veit enginn.

Hvað hyggið þér, Hákon jarl?

Konungssynir eru hættulegir, herra.

Hver er yðar tillaga, jarl?

Áður en vér vitum, hvort þeir fara með friði eða ófriði, skulum vér vera varir um oss. Látið blása Birkibeinum út til borgar, og sendið nokkra hirðmenn upp á ásinna með svo litlu liði, sem við má bjargast, til þess að fá frekari vitneskju.

Hver tíðindi hefir þú með að fara, Gunnar tindur?

Mikil tíðindi, herra konungur.

Mæl þú!

Nú vitum vér deili á flokknum. Það eru Birkibeinar.

Fanst þú nokkurn þeirra að máli?

Vér mættum tveim sýslumönnum þeirra, Sæmingi og Þorvaldi svarta, er sendir voru fyrir til þess að fara með skilaboðum til yðar, herra. Liðið er þreytt og fer hægt yfir.

Hver er fyrir flokknum?

Gjafvaldur gauti, herra.

Hvert er erindi hans?

Færa yður, herra konungur, Hákon, son Hákonar Sverrissonar og Ingu frá Varteigi.

Ekki er mér kunnugt, að Hákon konungur hafi látið eftir sig son.

Engum var það kunnugt, herra. En mælt er, að sönnur verði á það færðar. Haft er fyrir satt, að Hákon jarl, Pétur Steypir og Dagfinnur bóndi viti.

Hver er úrskurður yðar, jarl?

Sjáum sveiniun fyrst, Ingi konungur. En satt mun þetta þó vera. —

Hvað lízt þér nú, Hákon?

Sama og yður, herra — að sveinninn er ógnan konungdómi yðar. Sé sveinninn sonur Hákonar konungs, er hann réttborinn arfi Noregsríkis. Það vita allir.

Sé sveinninn sonur Hákonar konungs er hann fyrst og framast frændi vor, Hákon bróðir. Og þá er okkur skylt, að gæta hans á allan hátt.

Eg samþykkist því, Ingi bróðir. — Að öðru leyti er það og hyggilegast. Því að annars kostar munu Birkibeinar taka að sér gæzluna

Hví eru menn svo kátir, Hákon?

Hægur vandi að skilja, Ingi. Birkibeinar hafa frétt, að afspringur Sverris konungs í beinan legg sé á lífi.

Af sveini þessum mun bera skugga, mikinn fyrirferðar, Hákon bróðir.

Við erum ekki konungssynir, Ingi bróðir.

Nú er þér þá óþarft, að bera lengur kala til mín, Hákon, þótt eg, en þú ekki, yrði fyrir konungskjöri, er Guttormur konungur andaðist. Trúir þú því, að mér þykir sem steini sé velt af brjósti mér, Hákon.

Hinu sama gegnir um mig, Ingi bróðir. Verum jafnan trúir konungssyninum. Og tökum hlut í gleði Birkibeina.

Já, verum glaðir. — Kom þú, bróðir, og förum móti konungssyni.

Inga frá Varteigi, þú ert svo döpur í bragði. Iðrar þig þess nú, að þú fórst til Þrándheims?

Hér í Niðarósi er svo ókyrt, Dagfinnur bóndi.

Eg hefi tekið eftir því, að þú hefir aldrei augun af barni þínu. Ert þú hrædd um konungssoninn, Inga?

Væru það nokkur undur, Dagfinnur bóndi?

Þess gerist þér engin þörf, Inga. Sveinninn er átrún-aðargoð Birkibeina. Auk þess seldi eg á sínum tíma föð-ur hans, Hákon konungi það heit, að þjóna syni hans af trúnaði, svo sem eg hafði þjónað honum og Sverri konungi.

Eg veit, Dagfinnur bóndi, að margir eru þeir ekki, Birkibeinarnir, er ekki láta sér heilagt vera lif sonarsonar Sverris konungs.

En þú óttast, að einhverjir séu þeir. Hverjir gætu það verið, Inga?

Spyr mig ekki, Dagfinnur.

Eg spyr ekki fyrir forvitnis sakir. Því síður í illum tilgangi.

Virð á betri veg, Dagfinnur bóndi. Bræður konungs-ins óttast eg.

Ekki konung sjálfan?

Nei, Dagfinnur, Ingi konungur mun aldrei skerða eitt hár á höfði sonar míns. Í augum Inga búa ekki svik.

Inga frá Varteigi, ekkert þarft þú að óttast, hvorki af hendi konungs, né eldri bróður hans. Og Skúli konungsbróðir er að visu ungur, en hann er hygginn — og gættinn. —

Þú mátt vera róleg, Inga.

Inga frá Varteigi, mér gezt ekki að því, að þér skul-di í rauninni hvergi eiga heima. Flyt til mín með kon-ungssoninn. Lítið á mín híbýli sem yðar híbýli. Eg mæli þetta bæði af hálfu frú Kristínar og minni.

Þökk sé yður, Hákon jarl. — Eg uni mér þar sem eg er.

Hverju kviðið þér, frú Inga? — Engum þótti vænna-um Hákon konung en mér. Ef þér vissuð, hversu sveinn-sá lék mig stundum. Og eg gat ekki reiðst honum. Það-gat enginn. — Hvi tortryggið þér mig, frú Inga?

Eg tortryggi yður ekki, Hákon jarl.

Jú, það gerið þér. Oft er eg ókátur. Og eg hef erfða.

lund. En enginn barnamorðingi er eg. — Þér megið vera róleg, frú Inga

Viljið þér vita álit mitt? Eg lít svo á, sem Hákon litli sé réttborinn konungur Noregs — við erum lögráðendur hans, og ekki annað, bróðir minn og eg. Þetta álit mitt hefi eg ekki dulið, — spyrjið Birkibeinana. Ef satt skal segja, er eg þó alls ekki óhræddur um sveininn, frú Inga. Flyt í hús mitt. Þar er honum örugt. Þegar eg fer í leiðangur, mun eg láta Dagfinn bónda eftir heima. Og í hans umsjá eruð þið jafn óhult og minni.

Hákon jarl, er yður alvara, að gæta barnsins míns?

Inga frá Varteigi, — eg er tekinn að leggja ást á sveininn. Það birtir yfir mér samstundis, er eg sé hann. Smár vexti er hann, — og þó nú þegar dálitill konungur. Hygg að augunum. Hann hefir augu Sverris, en þar eru konungsaugun komin.

Hákon jarl, nú trúi eg yður.

Þökk, Inga frá Varteigi. Þér þiggið þá boð mitt.

Já, herra jarl. Og eg færi yður þakkir.

Dagfinnur bóndi!

Mæl þú. Eg hlusta til.

Áraglamm heyrir utan úr firðinum.

Blásið! — Blásið Birkibeinum til borgar!

Svo er að heyra sem gengið sé á land. Nú heyri eg fótatak.

Hve margir erum vér hér í borg?

Engir aðrir en þínir menn, Dagfinnur bóndi. Hinir eru allir úti í bænum.

Það fer að venju! Mjóður og konur! — Bara þessir aular láti ekki koma óvörum að sér! — Nú, vér mættum, ef til vill, fá haldið borginni. Útvirkin hljótum vér að láta laus. — Blásið, góðir hálsar, — blásið.

Nú kemur hópur manna á hlaupi.

Kyrrir! — Hlustum!

Þannig hlaupa Birkibeinar ekki.

Lokið hliðunum! Hver maður snúist til varnar! Og

greiðið nú högginn þann veg, góðir hálsar, að Baglar hyggi borgina alskipaða djöflum. — En það heljarmyrkur! Ekkert verður greint! — — Hvar er konungssonurinn?

Hér er eg, Dagfinnur minn.

Ert þú þar, sveinn! Flýtt þér inn til móður þinnar! Hafist við inni, bæði tvö.

Eg hljóp frá henni, er eg heyrði blásið í lúðrana. Skulum vér nú berjast aftur, Dagfinnur?

Heyrið hann, Birkibeinar! — Hvað hefir þú í hendi þér, sveinn?

Stein, Dagfinnur minn.

Hvað ert þú gamall?

Þriggja vetra, Dagfinnur minn.

Og þú ætlar að berjast! Flýtt þér og hlaup inn til móður þinnar.

Má eg ekki standa hér og horfa á, Dagfinnur minn?

Hvað fýsir þig að sjá?

Mér þykir svo gaman að sjá yður vega Baglana.

Birkibeinar! Heyrið konungssoninn! Hann er þegar tekið að þyrsta í Baglablóð. — — —

Það tekur að roða fyrir degi, Dagfinnur bóndi — — Nú fæ eg greint Baglana. Þeir hafa slegið hring um borgina.

Sér þú hvergi til Birkibeinanna, flokksmanna vorra?

Nei.

Þá munu þeir flúnir úr bænum Séu þeir ekki vegnir. — — —

Hver er fyrir liði í borginni?

Hver spyr?

Sendimaður Filippusar konungs.

Eg kenni engan konung með því nafni.

Brátt munuð þér fá að kenna hann. Hver er fyrir liði í borginni?

Dagfinnur bóndi.

Má Dagfinnur bóndi heyra orð mín?

Tala þú! Eg heyri.

Herra minn, Filippus konungur býður þér grið, Dag-

finnur bóndi, og öllum öðrum í borginni, ef þú af frjálsum vilja gefur hana upp.

Griða hefi eg ekki beiðst og þarfnast ekki griða. — — —

Hversu er nú hag vorum komið, góðir hálsar?

Fimm fallnir vorra manna.

Eruð þér sárir mjög?

Vér erum allir meir eða minna sárir. Þér blæðir og og ákaf, Dagfinnur bóndi.

Gnótt hefi eg blóðs, þó nokkuð fari til spillis. Lakast er, að vér göngum allir upp og ofan af mæði, svo sem væru smíðjubelgir. Eg óttast, að reykurinn og hitinn frá bálköstum Bagla ríði oss að fullu. —

Hvar er konungssonurinn?

Hér er eg, Dagfinnur minn.

Hversu hefst þú við?

Vel, Dagfinnur minn. Ætla Baglar að brenna oss inni?

Nei, en þeir ætla að svæla oss út. —

Dagfinnur bóndi.

Eg heyri.

Nú flytja þeir að kirkjustiga.

Þá mun vörn lokið fyrir oss. Vér erum of fáir og of þrekaðir til þess að verja borgina lengur. Og þegar er þeir hafa inn komist, brytja þeir oss niður sem hráviði — og lái eg þeim það ekki. Þá það; að deyja vopnbitinn er léttbært, — en vér hljótum að bjarga konungsyninum. Konunum mun varla hætt — þeim hreyfa þeir ekki við. — Það er hægur vandi að fórna lífinu. En er oss ekki einnig skylt, sakir konungssonar, að fórna sæmd vorri? Vér neyðumst til að beiðast griða. — — Má Hreiðar sendimaður heyra orð mín!

Mæl þú, Dagfinnur bóndi.

Seg herra þínum, Fillippusi konungi, að eg beiðist griða mér til handa og öllum í borginni.

Höfðingjar Bagla svara því til, að þér Birkibeinar munið ekki þarfnast griða fremur nú, en í morgun.

Nefndir þú höfðingja?

Blíð þú þar til er vér höfum átt tal saman inni í borginni! — —

Hvað er nú til ráða, Dagfinnur bóndi?

Óttist ekki, frú Inga. Lit á — sverð mitt! Einn er sá þar úti, er löngum hefir verið hugleikið að eignast það. Færið mér taug. — Kom þú hingað, konungssonur.

Hvað skal eg, Dagfinnur minn?

Þú ert þó ekki smeykur?

Nei, Dagfinnur minn.

Má Gyrðir skjálgi heyra orð mín?

Mæl þú, Dagfinnur mágur.

Kom nær virkisveggnum, Gyrðir mágur.

Leyfir þú, að eg renni dýrri byrði niður til þín?

Vist skal þér það leyft.

Tekur þú við?

Eg tek við.

Ert þú ánægður?

Eg er ánægður.

Með hvorutveggja?

Með hvorutveggja, mágur.

Ábyrgist þú mér sveininn? — með lífi þínu og sæmd.

Með lífi mínu, sæmd og öllum fjármunum!

Vel er það. — Nú sér þú, Inga. Hamingja fylgir sveininum. Ekkert er að óttast. Niðingar eru Baglar ekki.

Þökk, Dagfinnur bóndi. —

Dagfinnur mágur!

Eg heyri, Gyrðir mágur.

Má eg verða þér á einhvorn hátt að líði?

Vel mættir þú fá oss grið af konungi.

Freista skal eg þess.

Filippus konungur! Herra minn! jafnan hefi eg þjónað yður af trúnaði.

Þig tel eg einn minna bestu manna, Gyrðir skjálgi.

Bónar beiðist eg af yður, herra.

Lát mig heyra, Gyrðir skjálgi.

Sel Dagfinni bónda mági mínum og mönnum hans

grið. Eignir mínar sel eg fram að veði fyrir því, að Dagfinnur fylli ekki framar óvinaflokk yðar, herra.

Fús sel eg Dagfinni bónda grið, Gyrðir skjálgi. En bera hlýt eg málið undir höfðingja Bagla. Hvað leggur þú til, Arnbjörn Jónsson?

Dagfinnur bóndi er drengur góður, — sel honum grið, herra.

Hver er tillaga yðar, annara Baglahöfðingja?

Engi grið Dagfinni bónda og mönnum hans! Engi grið Dagfinni bónda og mönnum hans!

Filippus konungur! Herra minn! Hér liggur ekki að eins við líf Dagfinns mágs míns. Sæmd yðar, herra liggur og við. Sel Dagfinni bónda grið.

Eg mun gera sem þú beiðist, Gyrðir skjálgi. Far á fund Dagfinns bónda og bið hann koma hingað einan og þiggja grið.

Má Dagfinnur bóndi nema orð mín?

Eg heyri, Gyrðir mágur.

Filippus konungur heitir þér griðum.

Svo og mönnum mínum?

Nei, þér einum, Dagfinnur. Hann gerir það aðeins fyrir mín orð og gegn vilja sinna manna. Höfðingjar Bagla taka þvert fyrir, að selja Birkibeinum grið.

Ekki vil eg grið þiggja, nema heimil séu oss öllum. Flyt þau orð Filippusi konungi.

Filippus konungur! Herra minn! Dagfinnur bóndi hafnar griðum, séu mönnum hans ekki seld grið slíkt hið sama.

Heyrt hefir þú svar höfðingja Bagla, Gyrðir skjálgi. Góðan vilja minn veizt þú. En eg hlýt að fara að vilja manna minna.

Þér eruð þó konungur, herra. Spyrjið þá af nýju.

Þér hafið heyrt vilja minn, Baglar. Seljum Dagfinni bónda og mönnum hans grið.

Nei! — Nei! — Nei!

Lítill sæmd er oss í því, að drepa þessa fáu menn, bæði þrekaða og særða. Mundu sumir telja það níðingsverk — og það ekki með öllu ranglega. Svartið mér, Baglar, erum vér níðingar?

Herra konungur!

Ef þér neyðir mig til þess, að synja Dagfinni bónda og mönnum hans griða, eigið þér sök á því, ef níðingsnafnið festist við konung yðar.

Herra konungur, gjörir sem yður lízt.

Þökk, Baglar! — Gyrðir skjálgi, fær Dagfinn bónda og menn hans hingað, allir skulu þeir grið hafa. — — —

Hér eru komnir Birkibeinarnir, herra.

Vel er það, Gyrðir skjálgi. — Dagfinnur bóndi, sigraðir menn eru vanir að ganga beru höfði fyrir sigurvegarann. Hví hefir þú ekki verið sviftur stálhúfunni? — svo sem menn þínir?

Engi var sá, er freistaði þess, herra. — Til þessa dags hefir engi maður berað höfuð mitt með valdi.

Þyki þér auðmýkingin ósárari með stálhúfuna á höfði en hinsvegar, þá hreif hana ekki!

Fljóttaldir munu þeir, er aldrei hafa hlotið að sæta þeirri auðmýkingu, að hopa fyrir ofureflinu, herra.

Hver er sveinn sá, Dagfinnur, að þú kaupir lífið svo dýru verði fyrir hans sakir?

Hver hermir, að eg gjöri það fyrir sakir sveinsins?

Það hermi eg!

Sveinninn er, svo sem þér vitið, herra, Hákon, sonur Hákonar Sverrissonar.

Konungssonur er hann þá?

Já, herra, — eini konungssonurinn í Noregi.

Fast blæðir þér, Dagfinnur bóndi, en heil er tungan. — Hvað lízt þér, að vér Baglar tökum nú konungssoninn í vora umsjá?

Sé svo, sem eg hygg, að sveinninn hafi tekið að erfðum hamingju Sverris, er honum hvarvetna vel borgið.

Þar er konungssonurinn! Kom, hingað konungssonur.
— Færið hann hér upp á svalirnar.

Hvað skal eg?

Nú höfum vér tekið þig fastan. Nú ert þú Bagli, konungssonur.

Eg er Birkibeinn. Það munuð þér víst vita. — Þegar eg er vaxinn, skal eg ráða yður Böglum öllum bana!

Heyrið strákinn! — Hvað þá? Lýstur þú oss, strákur?

Eg er ekki strákur! Eg er konungssonur!

Hægan, haf þig kyran — Sjá langskipin, konungssonur.

Sé eg.

Hver á?

Herra minn.

Herra þinn er Filippus konungur.

Ekki er hann minn herra. Hákon jarl er minn herra, og hann á skipin.

Ekki mun sveinn þessi oss vera tryggur Böglum.

Aldrei höfum vér, Baglar, átt þess kost áður, slíkan sem nú, að hafa allan styrk undan Birkibeinum um land alt. Mæl þú, Reidar sendimaður.

Vér höfum hér í voru valdi son Hákonar konungs Sverrissonar, þess höfðingja er alt fólk elskaði. Svo mikið unnu Birkibeinar föður hans, að þeir munu gjarna lif sitt við leggja fyrir soninn. Tökum hann til konungs yfir flokk vorn, en gefum þeim jarlsnafn, er áður var konungur kallaður. Erum vér svo viti bornir, sem nú erum hér á stefnunni, að vér vitum lög hins heilaga Ólafs konungs, að sá einn er réttur konungur í Noregi, er konungsson er, en ekki dótturson eður systurson konunga, sem vér þjónum til hvorirtveggju, Birkibeinar og Baglar. Þætti mér sem það væri mest sæmd vors höfðingja nú, að hann hefði sína gæzlu yfir hvorutveggju, ríkinu og konunginum, — væri hann þá bæði konungur og jarl yfir Noregi.

Vel mælt, Reidar sendimaður.

Vér höfum svarið Filippusi konungi trúnað, Reiðar sendimaður. — Eið vorn sæmir oss ekki að rjúfa.

Eiður, svarinn konungi, er ekki er réttur konungur, er marklaus eiður.

Svo fast fylgið þér þessu máli, Reiðar, að virðast mætti, sem þér hélduð ekki fullan trúnað við oss Bagla.

Engum skal fært að halda því fram, að eg sé ekki trúr Bagli. Máli Bagla hefi eg talað og engra annara. En með því að tillaga mín virðist ekki vera að skapi, er þessu máli lokið. Böglum hugði eg gott eitt.

Þorir nokkur að flytja þetta mál fyrir Filippusi konungi? Þorir sjálfur þú, Reiðar sendimaður?

Þori að vísu. En þá hlytum vér að standa saman allir. Nú bið eg yður virða orð mín sem ótöluð væru. Ógjarna vil eg gjörast til þess, að koma af stað sundurþykkju með Böglum.

Mér er flutt, að þér hafið í hyggju að takast ferð á hendur, Filippus konungur. Hafið þér konungssoninn í för með yður?

Mér fellur sveinninn vel í geð, Þorir erkibiskup. Eg hefi hann í för með mér.

Viljið þér þiggja ráð af mér, herra konungur?

Gjarna, Þorir erkibiskup.

Lát konungssoninn eftir í minni umsjá, þar til er hann yrði aftur seldur í hendur Hákonar jarli.

Allir biskupar eiga, virðist mér, sammerkt í því, að þeir mæla — og mæla þó ekki. Mér er jafn torvelt að skilja yður, Þorir erkibiskup, og frænda minn, Nikulás biskup.

Nikulás biskup er hygginn maður. En vera má að orð mín hafi ekki verið nógu ljós, herra konungur. — Hafið þér hugsað um það, að yrði konungssyni eitthvað að meini, mundi hans greipilega hefnt verða. Alt landið stendur að baki honum.

Hann er þó ekki annað en barn, Þorir erkibiskup. Enn hafa ekki verið færðar sönnur á, að hann sé sonur Hákonar konungs.

Landslýður trúir því, herra. Og trú er nálega betri en sannanir.

Sveininum skal ekkert mein gert. Verið óhræddur, Þórir erkibiskup.

Hefir yður aldrei í hug komið, herra konungur, að mönnum yðar mætti getast of vel að konungssyninum.

Baglar svikja ekki konung sinn.

Má vera, að svo verði ekki. En sveinninn tek eg engu að síður í mína umsjá.

Of fast sækid þér þetta, Þórir erkibiskup. Sveinninn er í mínu valdi — og í mínu valdi verður hann.

Að vísu fæ eg ekki tekið sveinninn af yður með valdi, herra konungur. En naumast hygg eg yður það hagleikið, herra, að rísa gegn kirkjunni. Og hver sá, er færir konungssoninn á braut héðan, sætir banni kirkjunnar.

Kirkjunni lýt eg. Sveinninn skal yður fenginn. — Blessan yðar, Þórir erkibiskup!

Blessan mína læt eg yður í té, Filippus konungur.

Velkominn aftur heim, Hákon jarl!

Þér eruð í léttu skapi, frú Inga — konungssonurinn er þá heill á hófi.

Konungssonurinn er heill að öllu, herra.

Þökk sé guði. Enga stund hefir mér verið rótt í skapi síðan er eg heyrði, að Baglar hefðu hér komið. En upp frá þessu skuluð þér jafnan vera í fylgd minni á ferðum mínum, bæði á landi og sjó. Hafið þér nokkuð við það að athuga, frú Inga?

Ekkert, herra jarl. — Sveininum verður glatt, er hann sér yður.

Þú þar, konungssonur!

Gott var það, að þú komst heim aftur, Hákon minn.

Nú, nú, Baglarnir hafa, heyri eg, haft þig fanginn!

Léku þeir þig illa?

Nei, það þorðu þeir ekki, jarl.

Hákon! — Hví tóku þeir þig ekki að konungi yfir sig?

Konungur Bagla vil eg ekki vera. — Eg er Birki-beinn. Þegar eg er vaxinn, drep eg alla Bagla.

Mæltir þú svo við þá?

Já Og eg hygg þeir hafi orðið skelkaðir.

Hæ-hæ-hæ! Guð blessi þig, konungssonur!

Hversu fellur þér sjómenskan, konungssonur?

Vel, Hákon minn, en bezt, þegar skipið tekur mestar dýfurnar og hriktir í hverju tré.

Þú óttast þá ekki, að vér sökkvum til botns?

Ólafssúðin þolir skellina, Hákon.

Móðir þín hermir mér, að þú sért á sífeldri rás hér úti í kuldinum. Skjól er þó undir feldunum, konungssonur.

Ekki er mér skjóls vant, Hákon minn.

Er þér þá ekki kalt hér úti?

Birkibeinar eru ekki kulvísir.

Ha-ha-ha! — Inn skalt þú nú og snæða.

Eg snæði úti hér með hirðmönnum.

Nei, hér er of kalt. Þú fær ekki einu sinni klínt brauðið.

Það efni er í, að smjörið er hart.

Hvað hefst þú þar að?

Vef brauðinu um smjörið! Bindum vér nú smjörið, Birkibeinar.

Heyrið konungssoninn! Bindum vér nú smjörið, Birkibeinar! — En þú vex of seint, konungssonur.

Við því má eg ekki gera.

Þú ert drjúgum of smár vexti. Kom, teygjum úr þér!

Togum, Birkibeinar. —

Hví vilt þú ekki vera með móður þinni undir feldinum?

Vér karlmenn erum úti um daga

Ekki ert þú þó neinn karlmaður.

Þrífist þú aldrei! Karlmaður er eg víst.

Eys þú mig vatni!

Þú segir, að eg sé ekki karlmaður. Þegar eg er vaxinn, skal eg lemja þig svo þú æpir. — Er eg ekki karlmaður, Birkibeinar?

Vist ert þú karlmaður, konungssonur. Auk þess sannur Birkibeinn. Hirð ekki, hvað hann mælir. Hleypum honum nú fyrir borð, og dýfum honum.

Nei, dýfið honum ekki. Það er of kalt. En haldið honum stundarkorn, svo eg fái komið lagi á hann. — Nú, er eg þá ekki karlmaður?

Jú, Jú, konungssonur

Sér þú nú. — Þetta er nóg.

Unir þú vel skólavistinni, Hákon?

Ja-á, herra. — En betra var á Ólafssúðinni.

Vel skil eg það! — Hvað nemur þú?

Söng, herra.

Ekki skalt þú söng nema. Þú skalt hvorki vera prestur né biskup.

Nei, herra.

Þú svarar, svo sem hefðir þú sjálfur hugsað á sömu leið. — Hvað ætlar þú þá að verða, Hákon?

Konungur, herra. — Hví gjörðist þú svo skyndilega ókátur, Hákon minn?

Rétt mælir þú, sveinn. Vist átt þú að verða konungur. — En margir eru þeir, er konungar kjósa að verða í Noregi.

Hví mælir þú svo? — Vilt þú og vera konungur, Hákon?

Kyss þú mig, Hákon litli, — aldrei skyldi eg því gleyma, að þú ert konungssonur.

Þú dekrar of mjög við þetta barn, Hákon.

Það gjörir þú ekki miður, Kristín — þegar þú ert í því skapinu.

Lít nú á aðfarir hans! Hann klifrar upp þessa sperruna og niður hina. Lyktirnar verða þær, að hann fellur og meiðist stórlega. Ofan þegar í stað þrjóturinn þinn!

Kristín mín — eg er enginn þrjótur.

Þú ert það, sem eg segi!

Þú mátt ekki kalla mig þrjót. Þú veizt, að eg er konungssonur.

Ókunnugt er mér það. Engi er sá, er viti, hver er faðir þinn.

Mæl ekki svo, Kristín. Öllum er kunnugt, að eg og bróðir minn, Ingi konungur, sitjum í föðurarfi hans. — Gæt þó tungu þinnar, kona.

Mælt hefir þú það, Hákon, að svo skyldir þú koma þínu máli, þótt ekki yrðir þú konungur sjálfur, að sonur okkar, Knútur hrepti.

Þú veizt ekki, hvað þú mælir, Kristín.

Og þú veizt ekki, hvað þú vilt. —

Jarlinn fór brott. Varð jarlinn reiður, Kristín mín? Þú mátt ekki reiðast mér, Kristín góð.

Hirð ekki um það, sveinn. — Eg er ekki reið.

Þessi Nikulás biskup er satan sjálfur!

Hyggur þú hann standa bak við tjöldin?

Hver ella, Dagfinnur bóndi? Hvervetna er hann á stjái, og spýtir sundurpykkju og ilsku í eyru öllum. — Nú er friður er á kominn með Birkibeinum og Böglum, virðast mér engir sannir Birkibeinar vera til lengur.

Við fornu Birkibeinarnir, Helgi hvassi, við erum þó og verðum Birkibeinar.

Blóðugt er til þess að vita. Nú hefir þeim einkamálum verið lýst á Eyrabíngi, að lífi Hákon jarl bróður sinn, skal hann taka ríkið, ef Ingi konungur lætur ekki eftir sig skilgetinn son, en sá skilgetinn arfi þeirra, er lengur lifir eftir þá báða, skal hann eiga allan Noreg og allan arf annan. Þann veg hefir jarlinn búið Knúti syni sínum í hagin! — En hver styður mál Hákonar Hákonarsonar? — eina, rjetta ríkiserfingja Noregs, og alls þess, er Ingi konungur og Hákon jarl hafa nú með höndum!

Hægan, Helgi hvassi, — hægan! Konungssonurinn er á lífi, — það skiftir mestu máli. — Hygg eg sá tími muni koma, að hann, með hjálp guðs og vor Birkibeina, sjái sér sjálfur farborða.

Nær hefði honum staðið að sækja þingið, en rækja heimsóknir!

Hann er barn eitt enn, Helgi hvassi.

Eg vil ekki sjá hann framar! — Já, þú hlær, Dagfinnur bóndi. En reiður er eg. Og full rök virðast mér liggja til þess, að Birkibeinar allir séu reiðir. Eður, skulum vér nú svíkja sonarson Sverris konungs?

Ekki svikjum vér konungssoninn, þótt ekki tölum vér í ótima, Helgi hvassi.

Tala skal eg — þótt ekki fái eg annað að gjört. Engi skal vera í efa um mitt álit!

Brottu! Þig vil eg ekki sjá!

Hví ert þú reiður, Helgi minn?

Far brottu! — Í dag var dæmdur af þér föðurarfur þinn, en þú rápar andvaralaus fram og aftur. Um þig hirði eg ekki framar. Far brottu!

Hvar var það gjört? Og hverjir gjörðu það?

Það var gjört á Eyrapingi! Og það gjörðu þeir bræður, Ingi konungur og Hákon jarl.

Ver mér ekki reiður, Helgi minn, og gef ekki gaum að þessu. Vant er að sjá, að þessi dómur haldist, því að þar var engi minn umbóðsmaður.

Hver er þinn umbóðsmaður?

Guð og hinn helgi Ólafur konungur. Þeim hefi eg fengið mitt mál í hendur. Skulu þeir sjá til hlut handa mér um landskifti í Noregi og aðra hamingju.

Heyrið nú! Birkibeinar allir í höllinni! Þar mælti konungssonurinn! — Tala heill, konungssonur! Betra er slikt mælt en ekki. Kyss þú mig, sveinn! — Birkibeinar! Hefjum konungsson á arma vora til sæmdar honum!

Eg skil þig ekki, Hákon. Þú gætir naumast annars, en gjöra gælur við sveininn og eiga leiki við hann. Hefir þú ekki heyrt, hverju hann svaraði, er Helgi hvassi flutti honum, hvað gjörst hefði á Eyrapingi?

Heyrt hefi eg það, Kristín. Var það ekki vel mælt?

Eg skil þig ekki, Hákon.

Of mikils væri þá krafist — því að eg skil mig ekki sjálfur. Þér konur eruð nokkuð svo sárbeittar. Þér eruð líkar nálum á granargreinum, þér stingið. Vér karlar erum fremur í ætt við eikina — með hnútóttum greinum. — Lít nú á sveinninn þarna. . . . Verður hjá því komist að unna honum? — Enda þótt hann sé þröskuldur í vegi.

Trúr hefi eg yður verið, herra jarl, alla þá stund, er eg hefi yður þjónað.

Mæl Hiði. Hvers beiðist þú?

Og yður, frú Kristín, hefi eg þjónað af trúnaði frá æskuárum yðar.

Sattt mælir þú, Hiði. Trúr þjónn minn hefir þú jafnan verið.

Mál hefi eg upp fyrir yður að bera, herra jarl: Hér er sveinn sá með yður, er kallaður er son Hákonar konungs, og kann það vera er hann vex upp, að margir menn elski hann, bæði sakir föður hans og föðurföður. Mun yðrum syni tæplega auðvelt að ganga til ríkis í Noregi eftir yður, ef hann stendur í móti. Nú veit eg, ef svo væri utanlands við vaxið, þá mundi það ráð fyrirgjört, að ekki þyrfti landshöfðingi að óttast um sitt afspringi. Mundi sveinn þessi vera sendur til erlendra höfðingja, er enga vináttu ættu að gjalda honum eður ætt hans, og mundi hann þá vera annaðhvort meiddur, eða inn settur, að ekki þyrfti hann að hræðast aftur. Ef þér viljið svo vera láta, herra jarl, bjóðumst eg til þessarar ferðar.

Þú þegir, jarl. Þegar á reynir, skortir þig jafnan hug.

Spyr þá er vita, Kristín, hvort mig skorti hug, er drengilega skal til vigs gengið.

Herra jarl, erindi mitt mun eg þann veg reka, að ekki falli skuggi á yður, herra.

Forði guð því, að eg kaupi með því móti ríki syni

minum, að eg fyrirkomi þess manns syni, er eg ætti bezt að launa. — Brottú þræll! — og kom aldrei framár fyrir augu mér!

Hákon jarl, eg er frjáls maður. Eg hugði

Brottú! Ella drep eg þig!

Er yður ekki léttara, herra?

Nei, barnið mitt. Eg er mjög sjúkur. Eg skil, að dauði minn er nærri.

Ekki megið þér deyja, herra.

Gott er að deyja, barnið mitt. Eg þakka þér, hve dyggilega þú hefir jafnan hjá mér dvalið í sótt minni. En kalla mig ekki lengur herra. Kalla mig, svo sem gjörðir þú fyr.

Fæ eg í engu orðið þér að liði, Hákon minn?

Grát ekki, barnið mitt. — Og þó — mér er ljúft, að sjá þig gráta. Vaskir menn eru næmir fyrir þjáningum annara. Knútur grætur aldrei. — Hvað vilt þú, Kristín?

Þú spyr, hvað eg vilji? — Aldrei spyr þú hvað sveinn þessi vilji, er hann kemur til þín. Og um Knút spyr þú aldrei.

Deilum ekki, Kristín. — Æ æ

Hákon, hvað er þarna? — Hákon! Konungssonur! — Konungssonur!

Hér er eg, Hákon minn.

Þú ert hér — já. Og þú grætur? Ljúft er að sjá þig gráta. — Æ æ Konungssonur!

Hákon minn, er þér afar óhægt?

Ekki að mun. — — Far vel konungssonur Konungssonur! — Nú, þú ert þarna. Vel er það. — Guð blessi þig, — konungssonur

Hvi skal Hákon bera jafngóð klæði minum. Eg þoli það ekki.

Hald þér í skefjum, Guttormur.

Eg þoli það ekki. Eg á að erfa ríkið eftir þig, faðir. Hann skal klæddur sem hinir sveinarnir. Eg

er konungssonur. Og þó eru þeir miklu fleiri, faðir, sem kalla hann konungsson, en mig.

Stjórna skapi þínu, Guttormur. Sér þú Hákon nokkru sinni svo æstan?

Hákoni vil eg ekki vera líkur, faðir minn. Eg hefi leyfi til að vera æstur. Þegar eg eitt sinn hefi hlotið konungdóm, skal eg láta hengja hann.

Guttormur, — ætlar þú að neyða mig til að hirta þig?

Faðir minn góður, seg, að hann leggi af sér klæði þessi, að mönnum megi að minsta kosti vera ljóst, hvor okkar er konungssonur.

Brottu, Guttormur! — Klæðin skapa ekki manninn, barn mitt.

Gregorius Jónsson, Eyvindur prestmágur, Ívar boddí, og Dagfinnur bóndi: Þér sjáið sóttarfar konungsins, bróður míns, að megin hans er minna en vilji vor væri til Ef guð kallar hann frá oss, vorn ástvin, þá þurfum vér heilla ráða, hvern vér skulum til konungs taka eftir hann.

Hve margir mættu til þessa nefndir, Skúli konungsbróðir?

Kynlega þykir mér spurt, Dagfinnur bóndi, — svo sem málinu væri þegar til lykta ráðið. Þér vitið það sjálfir, að hér er fyrstur son Inga konungs, Guttormur, er vel er tilfallinn eftir föður sinn. Þá er eg — eg er bróðir Inga konungs að faðerni, og vitið þér, hversu lög mæla þar um. Þá er Hákon, son Hákonar konungs Sverrissonar — og Knútur, í Gautlandi austur, son Hákonar jarls, og er hann löglega tilkominn eftir sinn föður. Vænti eg, að flestir þeir, er þjónað hafa Inga konungi, að helzt vilji þeir hans syni þjóna.

Eitt er einkenni allra Norðmanna — og fá þó aldrei komið sér saman!

Hvert er það einkenni, Ívar boddí?

Allir vilja þeir konungar vera, Skúli konungsbróðir.

Hver sá, er halda vill uppi ránsflokk, fær og konungur orðið — að nafnbót.

Satt að visu, Gregoríus Jónsson. En hví ekki ræða það málið, er hér er borið upp til úrskurðar?

Konungskjöri er að gegna þá fyrst, er konungur er andaður.

Vitum vér það, Ívar boddí. En ekki mundi það óhentara, að vér mættum verða fyrir fram á eitt sáttir. — Þegir þú, Eyvindur prestsmágur?

Fyrir því þegi eg, að eg var eigi fyrr að spurður. En fýsi yður að vita tillögu mína, þá lízt mér undarlegt, er þér, vitrir menn, efist svo mjög um þetta mál, svo sem ljóst liggur fyrir augum öllum mönnum, þeim er rétt vita og satt vilja sjá, að son Hákonar konungs er rétt borinn til arfs að Noregsríki, en ekki þú, Skúli, né bróðursonur þinn, eða son Hákonar jarls. — Þér þegið. — Hver er úrskurður þinn, Dagfinnur bóndi?

Eg legg til, að vér látum þögnina mæla.

Þú hefir stefnt mér hingað til leynilegrar umræðu, Andrés skjaldarband.

Já, konungssonur. Vér erum hér saman komnir, frændur þínir og höfðingjar Birkibeina. Erindi eigum vér við þig.

Mæl þú, Andrés skjaldarband.

Hvað hefir þú tekið að erfðum eftir föður þinn, konungssonur?

Af sýnilegum hlutum þessa sylgju og þetta fingurgull.

Vel svarað konungssonur. — Veizt þu, að Ingi konungur hefir neitað, að fá þér nokkurt lén í eigin landi þínu?

Veit eg, að Ingi konungur vill ekki lén fá mér.

Harðir kostir þykja oss það, konungssonur, að Ingi konungur vill ekki miðla þér, jafnvel hinu minsta léni í ríki því, er feður þínir unnu. Margir svíma þeir nú í auð og fullsælu af föðurarfi þínum, er til engis eru komnir, en frændur þínir fara varhluta af því góssi, er þeim ber, svo sem væru þeir útlagar í landinu. Nú er það vort ráð, að vér höfum þig í brottu og söfnum liði. Spyrym vér það um marga Birkibeina víðsvegar um landið,

að þeim þyki sinn blutur rýrari, en rök séu til. Hið sama spyrjum vér frá Böglum austur í landi. Eru þeir þess albúnir, að hverfa frá konungi sínum, ef til fengist fyrirliðinn. — Þú mælir ekki konungssonur. Hverju svarar þú?

Eg hlýði.

Vér frændur þínir viljum nú, konungssonur, hafa þig á brott með oss frá konunginum. Mun naumast langt líða, áður þeir, er nú vilja þér enga sæmd veita, beiðast sjálfir sæmdar af þér.

Hvað leggur þú til, Ívar boddi?

Tillaga mín fer í sömu átt, konungssonur.

En hvað lízt þér, Eyvindur prestsmágur?

Hið sama og hinum tveim.

Allir erum vér sammála Andrési skjaldarband.

Og þú, Dagfinnur bóndi?

Eg kys helst að þegja, þar til er þú hefir talað, konungssonur.

Frændur góðir og þér Birkibeinar aðrir! Enn er eg of bernskur, að ganga undir slík stórræði. Auk þess er mér óskapfelt að berjast gegn Birkibeinum. Og margir eru þeir Birkibeinarnir, er aldrei munu við Inga konung skiljast. Þykir mér ekki ráð, að etja þeim saman, er allir ættu einskjaldar að vera. Vil eg heldur biðja að guð gefi mér slíkt af mínum föðurarfi, sem hans er mildi til hvern tíma sem það kemur fram. Og það eitt er víst: Eg reisi ekki herflokk í Noregi, svo sem nú horfir málum við.

Tíu vetra aðeins og hygnari og betri en allir vér samanlagðir!

Hvað mæltir þú, Dagfinnur mín?

Eg sagði: Vel mælt, konungssonur.

Nú er oss þörf Birkibeinum að hafa varúð við, Dagfinnur bóndi. Skúli er ráðsnjall.

Ekki er alt komið undir ráðsnildinni einni, Vegarður veradalur. Enda er Skúli ekki ráðsnjall — en slægur.

Hann fer með vélar. Sannur konungur beitir aldrei vél-ræðum.

Skúli er ráðsnjall, Dagfinnur bóndi. Jafnskjótt er hann skildi, að Ingi konungur mundi deyja, lét hann setja sig í hásetið og gefa sér jarlsnafn. Hefir honum þótt sem hægara mundi fyrir að verja hásetið, er hann væri þangað kominn, en ef autt stæði.

Skúli verður aldrei konungur.

Ekki konungur vor Birkibeina, Dagfinnur bóndi.

Engan geig gjörir það oss, þó einum sé neskonunginum fleira.

Ekki átt þú þetta svo víst, Dagfinnur bóndi. Engi veit, hver upp kann að koma á Eyrapingi.

Ekki ætlar þú þó, að Þrændur muni svíkja, Vegarður veradalur?

Sjálfur ert þú viðbúinn því, Dagfinnur bóndi, að svo megi fara.

Satt að vísu, Vegarður. En Hákon skal konungur verða.

Skúli vill hafa það sem lengst á huldu, hvort Hákon sé sannlega sonur Hákonar konungs. Þá er Inga frá Varteigi hafði fastað til járn — var járninu skotið undan. Margir Birkibeinar buðust til að bera járn — var því lítt gaumur gefinn. Kirkjunnar menn eru ráðsnjallari oss, Dagfinnur — og þeir standa að baki Skúla.

Nikulás biskup hefði löngu átt að vera gjörður höfði skemri.

Hann bergur sér jafnan. Nú, þá það. En eitt er víst — að vér Birkibeinar erum Noregur. Og við einhverja verðum vér að þreyta fangbrögð.

Nokkuð mun satt í því, Vegarður.

Síðastur manna mundir þú verða til þess, að láta sverðið ryðga í skeiðum. Fer eg með satt mál, Dagfinnur?

Satt mælir þú, Vegarður veradalur.

Ver þú skjóttur í máll, Dagfinnur bóndi. Hygg eg vér munum nú allir sammála orðnir hér á þinginu.

Hafið þér, Skúli jarl, nokkurt vald til þess að setja takmörk málfrelsi hér á þingi? —

Hver er maður sá, er nú rís úr sæti?

Bóndi nokkur, Skervaldur úr Gaulardal.

Hlýðum máli hans. —

Hér á Eyraþingi erum það vér þrændir, er ráðum.
— Mæl þú, Dagfinnur bóndi.

Þér hafið nú, þrændir, heyrt marga málhvata menn mæla hér á þingi, en ekki vitum vér, hvort þér eruð nokkurs vísari orðnir um konungskjörið. Hjalað hefir verið um það á ýmsa lund, hvað lög séu, — sumir eru þeir svo lögkænar, að fá þýtt lögin þann veg, að alt verður löglegt. Þér þrændir vitið lög hins helga Ólafs konungs — að sá einn er réttur Noregskonungur, er í beinan legg er af konungi kominn, og konukné ekki í milli komið. Hér við hlið mér stendur Hákon, sonur Hákonar Sverrissonar. Nokkrir eru þeir, er leita við að vekja efa um, hvort hann sje sonur Hákonar konungs. Móðir hans og margir Birkibeinar hafa boðist til að bera járn til vitnisburðar. Máli voru Birkibeina er þá þar komið, að það sem vér náum ekki að sanna með heitu járn, erum vér búnir til að sanna með köldu járn. Verði ekki Hákon þegar til konungs tekinn hér á þinginu, fylgjum vér honum til Björgynjar suður, — með þeim erindum förum vér af hendi allra Gulapingsmanna. Verður hann þar til konungs tekinn. Ekki eruð þér, þrændir, svo viti bornir, sem eg hugði, ef þér takið hann ekki til konungs hér í dag, því að vér Birkibeinar munum ekki af létta, fyr en hann hefir verið til konungs tekinn hér á Eyraþingi. Nú megið þér, þrændir, gjöra sem yður líkar. Þér vitið nú vilja vorn og fyrirætlan.

Naumast munu þrændir vilja kúgast láta, Dagfinnur bóndi.

Mitt álit hefi eg látið uppi, herra jarl, orðskviðalaust. Sjálfir eru þrændir ekki vanir að vera myrkir í máli. Hljóta þeir því að unna öðrum sama frelsis.

Sjáum nú til, Dagfinnur bóndi. — Nú ganga bændur á ráðstefnu.

Óttist þér ekki málalokin, Skúli jarl?

Nei, Dagfinnur bóndi.

Þá eruð þér ekki jafn framsýnn og af er látið, herra.

Biðum átekta. — Nú ris Skervaldur úr Gaulardal úr sæti. Illýð nú til, Dagfinnur bóndi.

Um það erum vér þrænzkir bændur á eitt mál sáttir, að af konungsefnum þeim, er hér hafa uppborin verið á þinginu, er að eins einn maðurinn, er vér viljum að konungi hafa: Hákon Hákonarson. — Ekki eru það hvassyrði þín, Dagfinnur bóndi, er oss hafa talið hughvarf, þó vér séum ófúsir þess, að hefja erjur við yður Birkibeina. En vér vitum, hvað lög mæla um konungskjör, og vér Þrændir höfum jafnan beygt oss fyrir sönnu og réttu máli. — Vér höfum senda menn til kirkjunnar, og skulu þeir hafa hingað með sér skríu hins helga Ólafs konungs. Jafnskjótt og þeir eru aftur snúnir og konungur hefir unnið eið að skríni, svo sem venja er til, mun eg dæma honum land og þegna. og munum vér Þrændir jata honum allri rétttri hlýðni og lýðskyldum.

Heyrir þú fagnaðaróp þingheims, konungssonur?

Eg heyri víst, Dagfinnur.

En hverju gegnir þetta? Sendimennirnir koma skrinislausir.

Hví höfðuð þér ekki hingað með yður skríu hins helga Ólafs konungs svo sem yður var falið?

Skervaldur frá Gaulardal, kirkjan var læst og kórsbræður hóta hverjum þeim banni, er brýzt með valdi inn í hana. —

Ný brögð, konungssonur. — Jarlinn brosir. Hvað skulum vér nú, Hákon?

Eg hygg skrinisins þurfi ekki, Dagfinnur.

Skervaldur úr Gaulardal, hvað er nú til ráða?

Það veit eg ekki víst, Dagfinnur bóndi. — Sjáð konungssoninn — hann réttir hendur til himins?

Eg sver við guð á himnum og hinn helga Ólaf konung

Skervaldur! Skervaldur! — seg fyrir eiðinn! — —
Er nú gilt, Skervaldur?

Ekki veit eg það, Dagfinnur bóndi. Hví gjörðuð þér þetta, konungssonur?

Konungur er eg nú, Skervaldur — ekki konungssonur. — Er guð á himnum ekki jafn helgur og skrínið? — Gjör skyldu þína, Skervaldur. Og sé þér efi á, þá spyr bændur.

Er eiðurinn gildur, Þrændir?

Já! — Já! — Já! — — —

Nú þykir mér sem vér Birkibeinar höfum aftur konung hlotið, er ekki standi að baki Sverri konungi, Vegarður.

Líkur eru til þess, Dagfinnur bóndi. En hann er þrettán vetra einna.

Það er ekki aldurinn, sem skiftir máli, Vegarður veradalur.

Vér leggjum að við Hattarhamar og biðum byrjar, Dagfinnur. Illa fellur mér, að Birkibeinar sveitist mjög undir árum.

Það skal gjört, herra. — — —

Hversu vikur við með skip þau, er fyrir oss fara?

Þar eru þeir, Eilífur kapalín og Ásólfur jarlsfrændi. Er líkast því sem þeir séu teknir að deila um lægið. Eru á lofti árar og forkar. Nú grípa þeir til vopna. Þeir berjast í fullri alvöru.

Nú er og sverðum brugðið á hinum skipunum, herra. Þeir búast til að ganga í bardagann. Hvað viljið þér gjört láta, herra?

Rennum! — Rennum beint milli skipanna, þeirra Eilífs og Ásólf! Verða þeir þann vog skjótast skildir. — — Um hvað berjist þér, víghanar!

Eg var hér fyrir með Gestaskútuna, er Ásólf bar að, og vildi rýma mér úr lægi.

Nú tek eg lægið. Látið af stundu þvo skeinur yðar og binda um. Þetta skifti læt eg refsingar niður falla. En ekki tel eg yður ráðlegt, að vekja deilur yðar í milli framvegis. Og ekki er mér ávalt gaman í hug. —

Nú var vel að verið, herra.

Það lá svo beint við, Dagfinnur bóndi.

Beint við . . . fyrir konung, já.

Er eg þá ekki konungur!

Jú, konungur eruð þér, herra.

Fortölur yðar mega sín ekkert, Skúli jarl. Eg er konungur, og eg krefst þess, að við sé gengið, að eg sé konungur.

Það er skylda mín að stilla í hóf, þegar þér ætlið að hlaupa á yður, herra. Væri yður rétt, að hafa við mín ráð. Eg er eldri og reyndari en þér, herra. Gjaldið varhuga við því að minsta kosti, að ekki vekið þér yður altöf marga bera fjandmenn.

Berir fjandmenn eru nálega jafnákjósanlegir og vinir, Skúli jarl. — Þar kemur Dagfinnur bóndi úr bænum. Hver tíðindi hefir þú að flytja, Dagfinnur?

Ill tíðindi, herra. Bréf eru komin til kórsbræðra í Björgyn frá kórsbræðrum í Niðarósi, að þeir skyldu engatign veita yður, Hákon konungur. Kórsbræður þykjast vera við vant um kommir. Vilja þeir ógjarna sæta reiði erkibiskups og kórsbræðra í Niðarósi. En annari hendi vilja þeir gjarna veita yður hlýðni og alla þá sæmd, er yður ber. Málum hefir erfðlega bæði fyrir þeim og oss, herra.

Hversu lítið þér á málið, jarl?

Eg ræð til varúðar, herra. Takið vægum tókum. Þröngvið engum. Firrist vandræði. Úr öllu mun vel greiddast. Málið þykir mér litlu varða.

Ill ráðið, Skúli jarl. Hví skyldi eg biða þess, að úr greiddist því, er eg fæ greitt betur úr sjálfur? Varúðin ein er, ef til vill, kostur á jarli, — en kostur á konungi er og verður hún aldrei. — Hvað list þér, Dagfinnur bóndi?

Bragðarefir kringja um oss, herra. Ef til vill eru þeir á meðal vor. Þeir sitja á svikráðum.

Já — og brögðum má líkja við snærishnúta, Dagfinnur. Svo getur virzt, sem þeir séu ekki auðleystir. Og þó eru jafnan ráð til að leysa þá.

Satt mál, herra.

Far inn til bæjar, Dagfinnur bóndi, og seg svo kórsbræðrum, að eg vænti af þeim einna manna bezt. En verði það bert, að mér skjöplist í þessu, skal ekki langt til, að þeir skulu vita, hvort mér líkar vel eður illa.

Dagfinnur bóndi — nú um hrið hefi eg enga áhyggjulausa stund lifað.

Vel skil eg það, Inga frá Varteigi. Það er erfiðleikum bundið að vera konungsmóðir.

En þér treysti eg, Dagfinnur, — að þú standir jafnan við hlið Hákoní.

Hákon á sér marga tryggja fylgismenn. Eg er að eins einn þeirra, frú Inga. En mér mátt þú treysta.

Virðist þér hann ekki geysilega einráður, Dagfinnur?

Rétt við hóf, frú Inga. Hann er ekki ólíkur ungum úlfi, er nýtekinn er að neyta tannanna. Hann bitur! Og telnurnar eru ósviknar. Og svo er þess að gæta, að hann hefir ekki aðeins tennur. Hann hefir einnig höfuð og hjarta.

Já, hjarta hefir hann, Dagfinnur. Þú ættir að vita, hve góður hann er mér jafnan. En hann gegnir mér ekki.

Þess gjörist ekki þörf — sé hann að eins góður. Og góður er hann, en þó ekki meinlaus — snarpur, en þó ekki illvígur. Sveinninn er fæddur konungur; það er mergurinn málsins. Vist er um það, að vér Birkibeinar höfum ekki haft hann að átrúnaðargóði til einskis.

Sigurður Gunnarsson þýddi.

Með ströndum fram.

- I. Sær og glyggur sízt mun tryggur,
Svellur blika, ýfist hvika.
Akker léttast eins fyrir þetta,
Út skal fley þó halli degi.
Okkar bátur blint mun rata
Boðahringinn landið kringum,
Mælt höfum hvestrar roku rastir,
Reiknað leið um hafsins feiknir.

Smáar fleytur eru að utan
Inn að sendast, heim að lending.
Fleygar álkur eru að svalka
Upp til gjögra, á skjögur-flögri.
Fitjar spennir brimfugl betur
Báru mót, svo uppi fljóti.
Hleður garð af gráum skriðum
Gustur upp með hamra-bustum.

- II. Hylur brim og niður njólu
Nætur-lýsu, í roku-skýsins
Steypihrið. Um borðin bæði
Blakkir standa öldu-klakkar.
Vél í kili, knúð mót svölum
Kollbyl heljar, sýpur hveljur.
Fum er á stöðum. Finst ei miða,
Fley sem lafi á grunni' í kafi.

Birtist viti í voða úti

Vöku-fagur, einn á skaga,

Leiftur-hart í sjávar-sortann

Sindra og gjósa norðurljósum.

»Hlaupið er fyrir hættu-stapann»,

Hvílu í svo reifur sný eg —

Bana sinn að hafa á hafi

Hæg er þraut, sem rekkjunaut sinn.

III. Nöltir eigi nú á legi

Niðurlútu stefni skútan,

Bjargast hefir heil úr karga,

Hvergi brot og öll á floti.

Skeiðar við strönd, sem móti miðar,

Morgunlognið yfir sognið.

Skilar henni, skerja og grunna

Skögul-loppur yfir sloppin.

IV. Fyrir borði fiskiverin,

Fjallkrýnd strönd á aðra höndu.

Jaðrað saman haf og himinn

Hafa skautin, lengst á brautu.

Gufu-súlum fölskva-fölum

Feykir upp, og bólstrum reykjar,

Þar sem djúpa dalinn hlaupa

Þugga, og hvalur flæði-alinn.

Vöður bergfugls, bátar margir

Bruna af strönd á vængjum þöndum

Aust'r í bláinn nú, frá naustum.

Nóg er sléttan — að eins skvettur

Þar sem marghyrnt meitilbergið

Móti falli stingur skalla,

Straumur í logni hvæsir hamri

Hvíta-hrið á miðjar síður.

Veður súðin léttfært löður
Leiðir norður, fyrir sporða
Langra nesja. Benda og brosa
Bæir inn að hverju lagi.
Græna túnið rýmkvar Rán, og
Rífla sali fjalladalir.
Björgin gnæf sig girða morguns
Grettis-skyrtum sólarbirtu.

Firðir sýna úr lófa leynum
Landa-brotin: Eyja-flotann.
Hafa gullin, vog og velli,
Vík og tanga inni fangi.
Brjóstaviðar bröttuhliðar
Breikka rinda. Af hverjum tindi
Lækir rétta úr kleifum kletta
Hvíta stafi út í hafðið.

Voðin ljósa, er hamra-hýsin
Hengja á þil, er foss í gili.
Úða-breiðu tíbrá tildrar
Tjöldum sínum fyrir öldu.
Sæi eg straum af stalli fleygjast
Staldra yrði eg bak við tjaldið —
Er á ferð í byr, á byrðing,
Bíður hann varla að tjaldið falli!

Kvika um einstig ljósar línur,
Líða um skarðið hvítar hjarðir.
Og við lindir, uppi um rinda
Íðar dreif af hvítum reifum.
Stekkur úr haga hesta-flokkur,
Hnappast þeir á straumvatns-eyri.
Blása nös og blesar risa,
Blakkir glóa makkar jóa.

Ofanleiti og sjávar-sveitir

Sitja í skrúða allra lita.

Sumar-blámi malar múla,

Mjallahvítan siglur fjalla.

Framaní Ægi opnum bæjum,

Iðgræn tún sem draga í brúnir,

Hampar þrúðg og þúsund-glömpuð,

Þoku-beltuð hliða-kelta

Núpar og strendur Norðurlanda

Nú eru sólar höfuðbólin.

Opnar landið mikil-myndað

Myndablöð sín öll í röðum:

Uppdals-göng að endilöngum

Undraheim, þar starfa og dreyma

Jarðarmögn í megingjörðum

Móðufjalla og hveravalla.

Stephan G. Stephansson.

Gunnar á Hlíðarenda.

I.

Vér Íslendingar eigum enga þjóðhetju, er barist hefir með sverði eða byssu fyrir fósturjörð vora, frelsi hennar, sjálfstæði eða réttindi. Jón Arason verður víst fremur að telja trúarhetju en sjálfstæðishetju, ef hann er hetjunafnsins maklegur. En vér eigum, að minsta kosti, eina eftirlætishetju, Gunnar á Hlíðarenda. Með honum hefir sá hluti íslenzkrar æsku, er les fornsögur vorar, barist og varist á draumþingum, sveiflað með honum sverðinu, skotið með honum af boganum, heyrt syngja í atgeirnum, fagnað sigrum hans og harmað fall hans. Sjötug kona sagði mér fyrir skömmu, að hún hefði á unga aldri elskað hann. Og oft hefir barnið Bjarna Thórarensen, er ólst upp á Hlíðarenda og varð amtmaður og þjóðskáld, dreymt dagdrauma um hræystiverk hans.

„Æ var mér, sem eg sæi
seggið í örvahreggi
þrjátíu einan ýtum
ótraudan rísa móti“.

yrkir hann. Og »Gunnarshólmi« sýnir, að Jónas Hallgrímsson hefir haft mætur á honum. Af tilsögn í íslenzku veit eg, að enn hrifur hann hjörtu ungra Njálulesenda, eins og á dögum fedra vorra og langfedga. Gunnar á Hlíðarenda er enn vinsælasti maður í vinsælustu sögunni, er Íslendingar hafa eignast.

En — hvað vitum vér um hetjuna?

Sumum þykir spurningin líklega skritin. Þá er vér lásam Njálu börn, héldum vér, að hún væri sönn saga, trúðum henni eins og bibliunni. Og líkt mun því farið enn um þorra manna

hér á landi. En skoðanir vísindamanna og bókmenta-fræðinga á henni, trúanleik hennar og eðli, eru allmjög á annan veg, enda hafa þær yfirleitt breyzt mjög á seinustu 30—40 árum. Og enn greinir fræðimenn á um ýms atriði. En Njáluvinir þurfa ekki að óttast, að þessi ljúflingsbók þeirra missi nokkurs í af fornri frægd, þótt hún verði lesin öðruvísi en oss var ungum kent að lesa hana.

Íslendingasögur segja, sem kunnugt er, mest frá forfeðrum vorum á svonefndri söguöld, tímabilinu frá 930—1030. Á þeim tíma var ekkert ritað hér á landi. Norrænufræðingar ætla, að Íslendingasögur séu ekki ritaðar fyr en nálægt 1200, þær er fyrst eru skrifaðar, en sumar ekki fyr en all-löngu síðar, með öðrum orðum, tveimur öldum að kalla eftir það, að þeir atburðir gerðust og þeir menn voru uppi, er þær segja frá. Tvær aldir eru langur tími. Eða hvílikur óskapatími finst okkur ekki síðan 1717, ekki nema 10 árum eftir »Stórubólu«, en nærfelt 70 árum á undan Skaftáreldum og Móðuharðindum? Varlega myndum vér taka mark á sögum frá þeim tímum, ef vér fyndum þær hvergi skrásettar. Mörg merkisfrétt brenglast á skemri leið. En margt bar til þess, er hér yrði of langt að telja, að menn lögðu meiri rækt við minningar fedra sinna á 11. og 12. öld. Og sumir fræðimenn ætla, að mörgum sögum hafi verið komið í tiltölulega fastan listbúning, bæði að efnisskipun og orðfæri, löngu áður en þær voru ritaðar. Þær hafi verið samdar munnlega. Síðan hafi menn numið þær all-nákvæmlega, ekki efni þeirra eingöngu, heldur og orðalag. Hyggja þeir, að þannig hafi þær lifað í manna minnum. Því sé líkt háttað um þær og Eddukvæðin, er ort voru all-löngu áður, en þau komust á skinn, og bárust munnlega frá kynlið til kynliðs. Það sé að vísu merkilegt, að menn hafi munað þær, ekki að eins að efni, heldur og orðfæri. En það sé ekki furðulegra, heldur en að menn hafi munað langa lagabálka og efnismikla¹⁾. En óhugsandi virðist annað, en að mörgu

¹⁾ R. Meissner, Die Strengleikar bls. 10—11.

hafi verið breytt í þeim, lagað og aflagað, ósjálfrátt og óafvitandi. Það leiðir af sjálfu sér, að sagnamenn endurtóku ekki sögurnar orðrétt heilar aldir, heldur breyttu þeim óafvitandi og juku þær vísvitandi af íþrótt og gagnrýni, segir merkur þýzkur vísindamaður¹⁾. En ekki þarf miklu að muna, svo að söguleg sannindi skekkist. Við þetta bætist, eins og sami fræðimaður heldur fram, að skáldskaparmerkið sést á Íslendingasögum, óðara og litið er í þær²⁾. Vér getum því ekki kallað þær áreiðanleg sögurit, ekki talið þær sannsögulegar heimildir í mörgum einstökum atriðum. Þær heyra til annari bókmentagrein en Íslendingabók Ara. En alt fyrir það geyma þær alment mikinn fróðleik um líf, menning og háttu forfeðra vorra. Það leiðir af því, að þær eru veruleikssögur, lýsa yfirleitt að eins því, sem gat gerst, var eðlilegt.

Samkvæmt þessum kenningum eiga sögurnar sjálfar sér sögu á þessa leið: Fyrst gerðust viðburðir. Af þeim gengu sagnir, er breytt hefir — að líkindum — verið á ýmsa vegu³⁾. Síðan er ger úr þeim — sumum munnlega — samfeld saga, er lifir á vörum fólks, en tæpast varðveitt óbreytt að öllu, heldur stytt sumstaðar, augin annarstaðar o. s. frv. Og loks eru þær letraðar á bókfell, endurritaðar, ef til vill, hvað eftir annað, og hætt við, að þá hafi sitthvað aflagast, bæði viljandi og óviljandi. Og það sést á sögunum, að þær eru ekki að eins settar saman til fróðleiks, eins og annálar, eða með vísindamark-

¹⁾ Andreas Heusler, *Die Anfänge der isländischen Saga*, Berlin 1914, bls. 63.

²⁾ „Die ganze Haltung der Isländergeschichten zeigt auf den ersten Blick, dass die dichtende Kraft ihren vollgemessenen Teil an diesen Werken hat“. Heusler, *Das Strafrecht der Isländersagas*, Leipzig 1911, § 4. Þessi höfundur, sem mörgum Íslendingum er góðkunnur, hefir ritað margt vel og fróðlega um sögur vorar. Einkum er fyrnefnd bók hans (*Die Anfänge*) skýrt og álitlega rituð.

³⁾ Í bók eftir V. Vedel *Helteliv* bls. 62—66 er ger almenn grein fyrir myndun stórra sögusagna. Góð bók, en fer því miður ekki rétt með sum nöfn og einstök atriði úr Íslendingasögum.

miði. Þar skín víða — og það mest í beztu sögunum — á skjaldarmerki skáldlegrar tignar — og það er aðalsmerki þeirra. Efnið og meðferð þess er í ýmsu svo svipað því, sem tíðkast í nútíðar-skáldsögum, að ættarmótið leynir sér ekki. Þær eru ritnar með skáldlegri stefnu, eru mynd lífsskoðana höfunda sinna, túlkar hugsana þeirra. Þó eru þær ekki fullkomlega skáldsögur. Þær eru »blend-ingur af skáldskap og sögu«, eins sagt hefir verið, en skáldblær á þeim er mismikill.

Aður héldu vísindamenn, að Njála væri rituð á 12. öld. Danskur biskup og fornfræðingur P. E. Müller († 1834) hélt, að hún væri eftir Sæmund fróða (í bók um Íslendingasögur, sem kom út fyrir 100 árum, Sagabibliothek I, bls. 61—62). Hinn frægi sagnfræðingur Norðmanna, R. Keyser, taldi hana með þeim sögum vorum, er einna fyrst væru ritaðar (sennilega um miðbik 12. aldar). Þessir fornfræðingar tóku ekki eftir því, að einn höfðingi á Sturlungaöld, Kolbeinn ungi, er nefndur þar, en hann fæddist ekki fyr en á 13. öld. — Lítur hér í litlu ljóst dæmi þess, hve vísindamönnum getur skotist í sannleiksleit sinni, hve mannlegri þekkingu miðar hægt áfram. — Nú eru vísindamenn á einu máli um, að Njála, í núverandi gerð, geti ekki verið eldri en frá seinni hluta 13. aldar. Heusler hefir, mér vitanlega, seinast minst á aldur hennar í riti. Hann hyggur, að hún sé ekki rituð fyr en undir aldamót 1300¹⁾.

Því lengra sem liðið hefir frá atburðum, er saga segir frá, til þess er hún var skrásett, því óáreiðanlegri verður að telja hana. Af þessum rökum verður að treysta sannsöguleik Njálu mörgum Íslendingasögum varlegar. Finnur Jónsson ver fornsögur vorar allra norrænufræðinga kappsamlegast gegn árásum á trúanleik þeirra. Samt kveður hann skýrt að orði um, að ýmislegt í Njálu sé alger tilbúningur. »Nokkurn hluta efnis Gunnarssögu má vafalaust kalla »hreinan tilbúning« (»pure erdichtung«),

¹⁾ Í formála fyrir þýzkri þýðingu hans á Njálu, Die Geschichte vom weisen Njal 1914, bls. 17.

segir hann í formála fyrir útgáfu sinni af Njálu (í Altnordische Saga-Bibliothek bls. XXIX). Til þessa telur hann frásögnina af utanför Gunnars. Hann hyggur sögu Gunnars í Njálu yfirleitt óæreðanlegri en sögu Njáls. Hann kallar frásögnina af kærleikum Hrúts og Gunnhildar með öllu skröksögu. (»ohne zweifel eine reine fabel« s. st. bls. XXX). Hann kveður þátt Víga-Hrapps að öllum líkindum ósannsögulegan (s. st. bls. 188). Hann játar, að margt sé vafalaust rangt og ónákvæmt í kaflanum um Brjánsbardaga (Brennu-Njálssaga, bls. XXX)¹. — Annar merkur vísindamaður íslenzkur, Guðbrandur Vigfússon, hefir bent á eina söguskekkju í henni, og hana ekki smávægilega, í víðkunnri og ágætri ritgerð, »Um tímatal í Íslendingasögum«. Hann hyggur, að »alt það, sem segir um Mörð í fyrri hluta sögunnar fari svo á milli mála, að haft sé feðgavíxl, og Mörður nefndur í stað föður síns, og líka hitt, að kvonfang Marðar hafi orðið töluvert seinna« (en segir í Njálu) og »Valgarður hefir orðið að vera sá, sem ráðin lagði til, að upp skyldi komast þjófsmálið í Kirkjubæ, því Mörður var þá enn ofungur til slíkra ráða« (Safn til sögu Íslands I, bls. 418).

Við þetta má mörgu bæta, bæði almenns og einstaklegs eðlis, og verður bætt hér við innan skamms, sem hæpið er að kalla sanna sögu. Það nær ekki nokkurri átt, að allur sá sægur samtala, sem prýðir Njálu, hafi geymst öldum saman óbreyttur og sama má segja um fjölmargar lýsingar þar. Þær eru nákvæmari en svo, að menn hafi getað varðveitt þær í svipuðu líki og Njála gerir. Og loks er þar sagt frá sumu, er enginn virðist hafa verið til frásagnar um t. d. orðum Skarphéðins, er brúnásinn reið að honum og hann »hrataði inn aftur« (Nj. c. 130): »Sét er nú, hversu vera vill.« Kári var farinn, er þetta á að hafa verið sagt, og ekki sjáanlegt annað, en Grímur hafi þá

¹) Í Bókmentasögu sinni hinni miklu (Den oldnorske og oldislanske Litteraturs Historie II, bls. 535—536), telur hann fáein einstök atriði, er hann trúir ekki.

verið einn eftir inni lifandi, en hann féll dauður niður skömmu síðar. Og vart er hugsanlegt, að þeir brennumenn hafi heyrt þetta, því að Skarphédinn hefir ekki leitað þar á hliðvegginn, er hann vissi féndur sína fyrir, enda segir, að Gunnar Lambason hafi eftir þetta hlaupið upp á vegginn, er Skarphédinn hafði gengið fram með honum. Mér þykir og fremur ólíklegt, að þau feðgin, Mördur gígja og Unnur dóttir hans, hafi sagt orði til orðs frá viðræðum sínum, er hún tjáði föður sínum ósamlyndissök þeirra Hrúts, og að samræðan hafi síðan varðveizt óbreytt öldum saman. Það er sagt berum orðum, að þau hafi gengið á tal, »þar er engir menn heyrðu þeirra viðrmæli«. Síðan er sagt frá viðræðum þeirra orðrétt (Nj. c. 7). Skilnaðarsökin hefir að líkindum borist út á annan hátt, hvort sem sagan fer í aðalatriðum rétt með hana eða eigi.

Og skáldskaparblær er auðkendari á Njálu en flestum Íslendingasögum. Það er að vísu ekki auðhlaupið að því að greina skáldsögu frá sannri sögu. Slíkt getur verið fullerfitt í nútíðarbókmentum. En þó er enn örðugra að gera slíkt með óyggjandi rökum í fornmentum. Stórt vatnsfall skilur ekki lönd sögulegrar skáldsögulistar og listrænnar söguritunar. Ótvíræð landamerki vantar. Skáld og söguritari fást einatt við nauðalík efni og neyta sömu hæfileika. Báðir beita ímyndunaraflí og það í mörgu á sömu lund, stefna að sama marki. Þeir lýsa báðir einstöku, einstökum mönnum og einstökum atburðum, og leitast við að sýna sérstakan svip þeirra, þann er greinir þá frá öðrum einstaklingum og tilburðum. En vísindamenn fást við það, sem einstökum fyrirbrigðum er sameiginlegt¹⁾. Söguritun verður því meðfram að telja til listar. Alt fyrir það er munur á þessari göfgu íprótt og skáldsögulist. Söguritari verður æ að styðjast við heimildir, má ekki segja frá því, er engar heimildir finnast að, eða verður ekki af þeim leitt. Skáldi er veitt meira frjálsræði

¹⁾ Kr. Erslev, *Historieskrivning* Kbh. 1911, bls. 30-32. Smbr. Guðm. Finnogason, *Hugur og heimur* bls. 364-65.

í öllum hreyfingum. Skáldritahöfundur má bæði skapa menn með því lunderni, er hann vill, er eðlilegt, í samræmi við lög mannlegrar sálar, og athafnir og tilviljanir, er skapferli söguólks hans birtist í, eins og hann hugsar það og skilur. Því skýrara sem atburðir, orð og verk eða raðir þeirra afhjúpa innri mann þeirra, er lýst er, því meiri líkur eru til, að skapandi skáld segi frá. En því miður erum vér ekki eins miklu nær og ákjósanlegt væri með þessari skilgreining. Listfengur söguritari með glöggu auga á öllu einkennilegu í fari manna og eðli, velur það úr, er einkennir skýrast, segir frá því. Hitt hirðir hann ekki um. Í ýmsum einstökum atriðum verður það því tilfinningamál eða að eins gizkað á um, hvað sé skáldskapur eða sönn saga. En söguritari yrkir, ef hann lagar til frásagnir af atburðum eða býr þá til, af því að hann með því móti getur sýnt skilning sinn á persónum sínum, hvernig honum koma þær fyrir sjónir. Þá skáldar hann, hvort sem hann gerir það óafvitandi eða með ráðnum hug. Í söguriti verða ytri atburðir ekki eingöngu að vera eðlilegir á þeim stað og tíma, er þeir gerðust á. Þeir verða líka að eiga sér máttarstoð í sögulegum heimildum sem fyr getur. Skáldi nægir að vera í samræmi við lög mannlegrar sálar. Og hér virðist mér skásta markið, er skilja á sundur skáldsögu og sanna sögu. Mér virðist nú vilja svo til, að í Njálu er sagt frá sumu, er heimildir skortir að, og eru dæmi þess þegar talin og verður bætt við seinna. Um sumt sýnist aftur ótrúlegt, að það hafi gerst á 10. öld, en er eðlilegt á 13. öld, í öðrum sið og menning. Og sumt er með öllu ólíklegt, að gerst hafi eins og sagan segir, en mannlegt eðli sést þar sumstaðar aftur eins og í stækkunargleri. Og víða sýnist, meira eða minna, skáldlega með efni farið, þótt það geti hafa gerst eins og frá er hermt í sögunni.

Eg nefni rúmsins vegna að eins örfá dæmi skáldlegrar meðferðar. Eg bið lesendur greinar minnar að athuga vandlega cap. 44. og 45., einkum lýsing á Skarp-héðni og Höskuldi Njálssonum. Farandkonur segja í dyngju

Hallgerðar frá starfi Njálssona: Skarphéðinn hvatti öxi.
 — — »Höskuldur treysti mundriða í skildi.« Prúðkvendin herma »Bergþóru á laun ófregit« frá hjalinu á Hlíðarenda. Hún segir aftur sonum sínum. Skarphéðni bregður þannig við, að honum spratt »sviti á enni ok komu rauðir flekkar í kinnar honum.« »Höskuldr gekk fram með Bergþóru.« Þá er þeir bræður vega Sigmund og Skjöld, settist Höskuldur niður og hafðist ekki að, Skarphéðinn fékst einn við Sigmund, Grimur og Helgi vógu báðir að Skildi. Vel er þessu í hóf stilt. Skarphéðinn hvetur öxi, hið mesta vopn. Starf hans er vígalegast. »Sveiti í enni og flekkar í kinnum« sýna, að mest þeirra bræðra sýður í honum gremjan, hann er þeirra geðrikastur, enda átti hann mestan þátt í hefnd háðsins í dyngjunni, reynist þeirra bræðra mestur vígamaður. Höskuldur treystir mundriða í skildi, fæst við hlíf. Honum er líka hlíf, er á hólmiinn kemur, hann sat þar hjá. Hann gekk líka fram með Bergþóru, er þeim bræðrum svall móður og hefnigirnd. Ef fingraför skálds eru ekki á þessum kafla, veit eg ekki, hvar þau má finna.

Danskt merkisskáld, C. Hauch, hefir samið merkilega ritgerð um Njálu (í Afhandlingar og æsthetiske Betragtninger 1855), er enn má græða á. Þykist hann víða kenna þar skáldbrag á. Eg tilfæri tvö dæmi, er Hauch telur. Fyrsta dæmið er hjónabönd Hallgerðar. Hún er þriggft. Fyrsta sinn er hún gefin nauðug, öðru sinni með ráði sínu, þriðja sinni á hún sjálf í rauninni upptökin, kynti sig Gunnari. (»En er þau fundust, kvaddi hún þegar Gunnar; hann tók vel kveðju hennar« o. s. frv. c. 33). En æ fer á sömu leið. Allir bændur hennar drepa hendi til hennar. Hér þykir góðskáldinu danska efni skáldlega skipað. Frjálsræði hennar fer alt af vaðandi. Fyrst giftist hún algerlega mót skapi sínu, öðru sinni af frjálsu vilja, en frjálsust þó seinast. Það er því líkast, sem skáldið geri tilraun með skap hennar. Það kemur í sama stað, hversu til hjúskapar hennar er stofnað. Ertnislund hennar og kaldrænukraftur reita bændur hennar til reiði, svo að

þeir ljósta hana allir kinnhesti, sem æ hefi sömu geigvænlegar afleiðingar í för með sér, veldur þeim öllum aldurtila.

Þá minnst Hauch á skikkjuna Flosanaut og þátt þann, er hún á í leikslökum eftir víg Höskulds Hvítanessgoða. Flosi gaf hana Höskuldi, er hann heimsótti hann haustið, áður en hann féll. Hann tók hana yfir sig, er hann fór að sá korninu í gerðinu, þar sem hann var veginn. Hildigunnur tók hana ok þerði með blóðið alt ok vafði þar í blóðlifrarnar og geymdi (Nj. c. 112). Þá er Flosi kom til hennar eftir fall Höskulds, á þingreið, og hún æsti hann til grimmilegra hefnda, steypti hún yfir hann skikkjunni. »Dundi þá blóðið um hann allan« (c. 116). Flosa brá svo við, að hann varð ýmist »rauðr sem blóð« eða »fölr sem gras« eða »blár sem hel«. Á þingilét Flosi samt leiðast til sætta, en tregur þó. Þá varð Njáli það á, að kasta silkislæðum á silfrið, er gjalda átti eftir Höskuld. Af því spunnust skammir með Skarphéðni og Flosa, svo að sættir allar fóru út um þúfur. Hauch heldur, að slæðurnar hafi mint Flosa á kápuna, er hann hafði gefið Höskuldi, og Hildigunnur kastað eftirminnilega yfir hann, og því hafi honum orðið hverft við. Og á þá skýring felst annað skáld, Sviinn Bääth, er skrifað hefir doktorsritgerð um efnis-skipun í Íslendingasögum (»Studier öfver Kompositionen i några isländska ättsagor«, Lund 1885, bls. 149). Hauch þykir enginn vafi á, að í þessari lýsing sé út í gegn farið eftir vel lögðu skáldráði (grundet i en vel beregnet og gennemført Digterplan« bls. 433).

Því má auðvitað halda fram, að þau dæmi, er nefnd hafa verið, geti verið sannsöguleg, hafi getað gerst þannig, og það verður ekki ósannað. Sönnunum verður hér ekki komið við. Hér verður að líta á, hvað líklegast sé. Að minni hyggju eru skoðanir söguskálds hér þungar á metum. Hann hefir orðið að haga iðn sinni eftir lögum skáldsagnalistar, veit því ger en aðrir, hversu skáldsögur verða til. Hann hlýtur því að bera næmari kensl á handbragð söguskálds en t. d. visindamenn, sem aldrei hafa kent hvatir hrærast í huga sér til iðkunar þeirri íþrótt, meðal

annars af því að þá skorti skálðaugað, fundu hvergi yrkisefni á lífsleið sinni.

En — »getur Njála ekki verið samin munnlega?« kann einhver að spyrja. Ósennilegt er það um slíkan órabálk, enda veit eg ekki til, að neinn hafi haldið því fram. T. d. leitast Þjóðverjinn Meissner einna ötullegast við að sýna, að sögur vorar margar séu samdar munnlega, en hann segir berum orðum, að það komi ekki til mála um Njálu (Die Strengleikar, bls. 11). Båáth hefir og sýnt það með veigamiklum rökum og rannsóknum í fyrnefndri bók sinni, að efnisskipun Njálu sé gerð með dásamlega hugsuðu ráði, svo að fyrsta línan sé, að kalla, rituð með hina seinustu í huga, og hún hljóti því að vera eftir sama höfund. Römm forlagatrú ríkir í Njálu frá upphafi til enda. Hún er bandið, sem næstum allir viðburðir hennar, smáir og stórir, eru dregnir á. Allir eru þar, bæði vígamenn og vitríngar, sem leiksoppar í hendi styrkra norna. Sköpin senda hetjur til óheillavíga, eins og herforingjar lífsveitir sínar í skothrið. Eftir boði þeirra fer Njáll inn í bana-bál sitt. Öll sagan túlkar hér sömu frumhugsun, forlagatrúna, og eftir því er allri frásöguaðferð hagað. Næstum því allir atburðir Njálu eru sagðir fyrir, afdrif kappanna og forlög þeirra. Þetta virðist mér ein hin styrkasta sönnun þess, að Njála sé að mörgu leyti skáldleg smíð. Hitt er annað mál, að engin leið er að vita, hvað komið er frá höfundi Njálu, því að vér vitum ekki deili á sögunum þeim, er hann gerði bók sína úr. En hætt er við, að sitthvað ósannsögulegt í sögunni stafi frá honum, en eigi ekki alt rót sína að rekja til arfsagna og munnmæla.

Gizkað er á, að höf. hafi haft í höndum tvær sögur, aðra af Gunnari, hina af Njáli. Heusler heldur, að þær hafi verið skrifaðar. Síðan hafi hann búið til úr þeim eina sögu og umskapað þær svo, að kalla beri hann höfund (Die Geschichte v. weis. Njal bls. 17—18). En skoðanir fræðimanna eru hér á reiki. Finnur Jónsson var t. d. áður sömu skoðunar sem Heusler í þessu efni (Litt. Hist. II, 536—37. Þar er ekki beinlínis sagt, að sögurnar

hafi verið ritaðar, en sú sýnist hugsunin). En síðar hefir hann skift skoðun. Í formála Njáluútgáfu sinnar kveðst hann ætla, að saga Gunnars í Njálu sé »tiltölulega nýr samsetningur« (»fabrikat von verhältnissmässig jungem datum«, Einl. XXIII), þykir slíkt sennilegra en fyrri skoðan sin.

Mig brestur tíma og rúm til að kryfja getgátur þessar og sennileik þeirra. En framanritað sýnir, að ástæða er til að spyrja, hvað vér vitum um Gunnar á Hlíðarenda. Eg ætla því að gaumgæfa sögu hans í Njálu, athuga eftir föngum, hvort og hvar sé á henni mark sannrar sögu eða skáldsmíðar, hvernig skilja eigi hana og skýra.

II.

Njála byrjar frásögn sína af Gunnari á því, að hann tekur að sér fjárheimtu frændkonu sinnar, Unnar Marðardóttur, er skilið hafði við Hrút Herjólfsson. Hann leitaði ráða Njáls, sem eðlilegt var. Njáll ræður honum að veiða upp úr Hrúti, hversu stefna skuli, og stefna honum nákvæmlega eftir fyrirsögn sjálfs hans. Njáll segir Gunnari greinilega fyrir samræðu þeirra Hrúts, er hann kemur heim til hans með þeim hætti, er Njáll réð til. Er ekki gott að verjast þeirri trú, að þar sé frjálslega — og skáldlega — með efni farið. Ef eg kann skapi tveggja manna og einkennum þeirra í máli, kann eg að geta gizkað á tal þeirra, að hverju það berist, með al annars, og ofurlítið um, hvernig verði að orði komist. En miklu get eg ekki spáð um þau efni. Viðræður manna fara óskipulega og því ófyrirsjáanlega fram. Það verður því erfitt að segja fyrir, í hvaða röð samræðuefni beri á góma. En það gerir Njáll í sögunni. Hann ætlar, að viðræða þeirra Hrúts og Gunnars fari eins og gangnaseðill um sveitir. Hann kveður Hrút munu spyrja Gunnar, er kallar sig Kaupa-Héðin og Eyfirðing, hvort margir séu ágætir menn í Eyjafirði (efamál, að Hrútur spyrði svo, því að honum hefði átt að vera það kunnugt af alþingi, þar sem þangað kom margt manna úr öllum landsfjórðungum). Hann veit,

að Hrútur spyr þá um kappi í Reykjadal, menn í Aust-flrðingafjórðungi, og að tal þeirra kemur á Rangárvöllu. Og hann veit meira. Hann segir t. d.: »Þá mun Hrútr svara: Þótti þér ekki á verða fyrir honum (þ: Merði gígju), er hann náði eigi fénu, en bjó þó til málit?« Og enn fremur: »Mæltu ek þat,« mun Hrútr segja, »ok þótti þat heimskum mönnum, sem lög væri; en mátti þó málit upp taka á öðru þingi, ef hann hefði þrek til haft«. Vér nútíðarmenn getum ekki trúað svo nákvæmri framsýni. Höf. vill í þessum kafla (c. 22—23) sýna spávit og ráðkænsku Njáls. Og það hefir honum yfirleitt vel tekist.

Það hefir verið sagt, að för Gunnars og meinslungin aðferð öll við málshöfðunina hafi verið óþörf. Gunnar hefði getað lýst sökinni á alþingi, eins og Mördur gerði, faðir Unnar, er hann heimtaði fé hennar. Þá þykir það og undarlegt, að Gunnar þarf að ginna Hrút til að segja, hversu orða skuli stefnuna. Það sé óskiljanlegt, að Njáll, einhver lögkænasti maður sinnar tíðar, hafi ekki vitað slíkt¹⁾.

En hér misskilur lögfræðingur skáld. Það er að sönnu ekki ólíklegt, að höf. Njálu hafi haldið, að lýsa mætti löglega þessu máli á alþingi, þar sem Hrútur mótmælti því ekki í sögunni, er Mördur gígja hóf þetta sama mál á hendur honum með lýsingu að Lögbergi. En vér vitum ekki, hver ákvæði hafa gilt um þetta á dögum Njáls og Hrúts. En þó að lýsa hefði mátt málinu, voru ráð Njáls og stefnan ekki tilgangslaus. Gunnar átti ekki víst, að Hrútur kæmi á þing. Í öðru lagi voru stefnuferðir í aðra landsfjórðunga ekki hættulausar, eins og Finnur Jónsson hefir tekið fram (Litt. Hist. II, 542), og því öruggast að fara huldu höfði. Í þriðja lagi var það ágætt bragð að stefna afgerlega eftir fyrirsögn Hrúts sjálfs. Þá gat hann ekki vefengt, að rétt væri stefnt. Gunnari, ólögfróðum

¹⁾ Lehmann und Carolsfeld, Die Njálssage bls. 48. Þeir ætla, að upphaflega hafi þurft að stefna heima. Og verður þá því síður sagt, að stefnauför Gunnars og ráð Njáls hafi verið þarflaus.

manni var og óhættast við að fipast í stefnunni, fara í nokkru skakt með hana, með þessu lagi. Alt er því hér með ráði gert.

Hvert atriði í ráðagerð Njáls er gagnhugsað. Hann ræður Gunnari að gista á Höskuldsstöðum, halda síðan að næsta bæ við Hrútsstaði, bæ Hrúts, og stilla svo til, að hann lendi í áflogum við bóndann þar, en gæta þess þó, að hann yrði eigi kendur. Myndi þá sent til Hrúts að segja honum tíðindin. Hann myndi þá senda eftir honum, »enn þú skalt ok þegar fara«. Með þessu móti gat Hrút ekki grunað, að Kaupa-Héðinn (s: Gunnar) ætti til hans nokkurt erindi, og allra sízt varað sig á, að hann væri í stefnuför til sjálfs hans. Og vel er það hugsað, sem Njáll ræður Gunnari að svara spurningum Hrúts. »Ærinn hafa þeir klækiskap«, á hann að segja, er Hrútur spyr, hvort allmargir séu ágætir menn í Eyjafirði. »Þjófar eru þar ok illmenni«, á að svara, er Hrútur spyr um kappa í Reykjadal. »Þá mun Hrútr hlæja ok þykkja gaman at«, bætir Njáll við. Það er ekki smáræðis-mannþekking, sem birtist í þessum brögðum og hugsuðu svörum málfærslumannsins á Bergþórshvoli. »Fýsir eyru ilt að heyra«, jafnvel eyru, er vaxa á slíkum öðlingum sem Hrúti Herjólfssyni. Sigmundur í dyngju Hallgerðar er dæmi þess, að háð og spott er æ vænlegt til góðrar skemtunar. Þeir eru enn ekki leiðinlegustu gestirnir, er bezt kunna fyrir sér í þeirri íprótt. Þetta veit Njáll, eins og sagan sýnir hann, og eftir því leggur hann Gunnari ráð. Öllum á Gunnar — í gervi Kaupa-Héðins — að »fá nokkut ámæli«. Það var líklegast til að teygja úr viðræðum þeirra um nafnkenda menn um land alt og koma talinu á Rangárvöllu, svo að Hrúti dytti ekki í hug, að slíkt væri í þágu gests hans hins málreifa, að þar byggj nokkuð undir. Frásögnin af lögkrókum Njáls geymir ágætislýsing á mannlegu eðli. Hún er og einkennilegt dæmi »hagnýtrar sálarfræði«.

En undan hvers rifjum runnu þessi raunsæju ráð? Njáls eða höfundar Njálu eða einhvers annars? Hér er

erfitt um svör. 'Fyrr er drepið á, að vér vitum ekkert um heimildir höfundarins, hvað hann hefir heyrt eða lesið um þau efni, er hann segir frá, hvað þá heldur meira, t. d. sögu heimilda hans, munnlegra eða skriflegra eða hvorttveggja. Þó að þessi frásaga og fleiri sams konar í Njálu geti verið sannar — að sleptum nokkrum ýkjum og aukum — fáum vér ekkert um það vitað, sökum alls skorts á heimildum til samanburðar. En þar sem skaparahendur slíks snildarskálds sem höfundar Njálu fást við efni, má búast við, að margt sé höggvið eitthvað til og tálgað, þó að stubbur og stubbur séu notaðir að öllu, eins og þeir komu smiðnum í hendur. Ekki er ólíklegt, að einhver fótur sé fyrir þessari sögu af ráðsnilli Njáls. En hyggni eftir á er tíðari en forsjálni. Því tel eg sennilegt, að svo spakleg ráðagerð sé, að minsta kosti að nokkru, hugsuð eftir á, að höfundur Njálu hafi skorið og sniðið þetta efni, eftir því sem meginhugsun sögunnar þarfnadist. Og ekki er torfundið, hvað það var. Bááth hefir bent á það, (Studier, bls. 102—104). Ráð Njáls kom að notum. Gunnar náði fénu Unnar. En fleira leiddi af ráði lögfræðingsins. Fyrir bragðið fekk hennar Valgarður grái. Þótt það sé ekki sagt berum orðum í sögunni, verðum vér að skilja hana svo, sem goðinn að Hofi á Rangárvöllum hafi átt konu sína til fjár. Þann skilning höf. má heyra á orðum Hrúts: »Illa mun þér launast verða« (Nj. c. 24). Hrútur getur hér ekki átt við aðra en frændur Unnar, enda kvaðst Gunnar »meira heimta þykkjast eiga at henni síðan ok hennar frændum, en at öðrum mönnum«, er hann færði henni fé hennar. Og það er ekki tilviljun, að einni línu síðar en segir frá þessu, í byrjun næsta kapitula (25), er Valgarður nefndur, síðan sagt frá kvonfangi hans og getið sonar þeirra, Marðar, og að hann hafi verið verst til Gunnars allra frænda sinna. Fæðing og líf Marðar var afleiðing af ráði Njáls og ójöfnuði Gunnars. En Mördur bruggaði Gunnari böi og bana og tældi sonu Njáls ofan í gjá ógæfunnar, þar sem þeir létu lifið, og Njáll sjálfur hlaut af því aldurtjón.

Það þarf ekki að rökstyðja það, að Hrútur gat ekki svo mikið sem rent grun í sæðing Marðar né hugarþel hans óborins í garð Gunnars né heldur hjúskap hans og Hallgerðar, er hann spáði um í sömu andránni (»þó er þat líkast, at hann snúist til várar ættar um vinfengit«)¹⁾. Þessi spásögn Hrúts er skáldskapur, nema forfeður vorir sumir hafi verið gæddir hæfileika, er nú er týndur. Hér bregður imyndunarafi skáldsins upp ljósi, er lesa á við »hulin norna ráð«. Við það eiga að sjást ógnþrungnar afleiðingar af sigri Njáls og Gunnars. Ósýnilegt samband orsaka og atburða verður við það sýnilegt. Þeir vinir dattu báðir ofan í þá gróf, er Njáll gróf Hrúti. Sigur þeirra varð ósigur lífs þeirra — og er það höfudefni Njálu. Og því áhrifameiri urðu örlög þeirra, því spaklegar sem ráðin voru lögð. Góð list heimtaði, að höf. gerði sem mest úr þeim og snilli þeirra. Og nú skilst oss, hví Mörður kemur of snemma við sögu, sem fyr er á vikið. Því meira ilt sem af honum hlaut, því afdrifameira reyndist ráð Njáls, því grimmilegar hefndist Gunnari ójöfnuður hans við Hrút.

Eg verð enn að fjölyrða um þetta efni, því að hér er það tætt og kembt, er skapapræðir sögunnar eru spunnir úr. Hér er depill, er finna verður, ef skilja á Njálu. Það er einkennilegt, að atvik og viðburðir eru hér skýrð, áður en þau gerast. Hér holdgast andi sögunnar ápreifanlegast.

Höf. Njálu ann siðferðilegu líferni, er hrifinn af göfgi þess og fegurð. Hann er í senn raunsæis- og hugsæis-skáld. Og í spádómi Hrúts birtist siðferðistrú hans, að hið illa fái makleg málagjöld, og þá lífsskoðun höf. á Njála að sýna. Og þessi skilningur á sögunni er ekki

¹⁾ Það er eitt hlutskifti Hrúts í sögunni að spá Hallgerði hrakspám. Hann spáði því um hana unga, að margir myndu gjalda fegurðar hennar (c. 1). Hann sagði fyrir um samfarir hennar og Þorvalds, fyrsta manns hennar (c. 10). Og þá er hún lofast Gunnari, má heyra ógæfu-grunninn í orðum hans: — — „Ek sé, at þú mátt nú ekki við gera“. — — „Er báðum girndarráð“. „Hættið þit ok mestu til, hversu ferr“ (c. 38).

skáldlegur hugarburður aðdáunarfullra ritskýrenda, er skreyta vilja hana með djúpsóttum skýringum. Það er sagt svo skýrt, að um verður ekki deilt: »Hvárt mun Gunnari aldri hefnast þessi ójafnaðr?« spyr Höskuldur Hrút. »Eigi mun þat«, segir Hrútr, »hefnaz mun honum víst« (sbr. og fyrnefnd orð hans: »illa mun þér launat verða«, og ósk Höskulds: »njót þú nú sem þú hefir aflat« Nj. c. 24).

Og mér þykir líklegt, að sama sé hugsun höfundar, hákristins hugsjónamanns, um hörmuleg áhrif ráðs Njáls á örlög sjálfs hans og sona hans, að honum hafi hefnst fyrir brögðin, er hann beitti Hrút í málinu. En sá skilningur verður ekki ráðinn eins ótvírætt af sögunni og sú skýring, að Gunnari hafi komið í koll aðfarir sínar við Hrút. Honum virðist ekki hefnast fyrir, að hann lék á Hrút, heldur fyrir hólmgönguáskorun sína (smbr. orðið »ójafnaðr«), en á henni átti Njáll enga sök. Ósk Höskulds og spá Hrúts eiga eingöngu við Gunnar. Og segja má, að sagan hefði að líkindum gefið það í skyn á einhvern hátt, ef Njáll væri hafður þar í huga. En höf. fjölyrðir aldrei meira en þörf gerist — getur hafa þótt nægja að segja skýrt um Gunnar, að honum hefndist. Sama væri þá auðsætt um Njál. Mest list í að láta lesendur og heyrendur sögunnar ráða í þetta af rás atburðanna. Og ef menn fallast á þenna skilning, verður dásamleg eining í allri Njálu.

En skáldið vill áreiðanlega leiða oss fleira fyrir sjónir með frásögn sinni af ráðum Njáls. Ráð hans fara öll á sama veg, snúast öll honum og Gunnari til óhamingju. Hann ræður Gunnari að fara utan (c. 28). Af því hlauzt ógæfan mikla, hjónaband Gunnars og Hallgerðar. Fyrir ráð hans og meðmæli fær Þráinn Sigfússon Þorgerðar, dóttur Hallgerðar (c. 34). Af því náði Hallgerður tökum á honum. Fyrir bön hennar fór hann með Sigmundi að vígi Þórðar leysingjasonar (c. 41—c. 42). En af því hefst fjandskapur Njálssona og Þráins, er lauk þannig, að Skarphéðinn vó hann á Markarfljóti. En sonur Þráins og

Þorgerðar var Höskuldur Hvítanessgoði, er Njálssynir drápu. En af því supu þeir og Njáll banaseyðið. Af þremur fyrstu ráðum Njáls sprettur öll ógæfa í Njálu¹⁾. Enn réð hann Gunnari það heilræði að vega »aldri meir í hinn sama knérunn enn um sinn« (c. 55). Hugsunin er auðskilin: Því fleiri sár sem sami maður sló sömu ætt, því hættara var við hefndum. En þetta afbragðsrád hafði þveröfugan árangur við það, sem til var ætlað, varð einmitt til þess, að Gunnar vó tvisvar í sama knérvnn. Mörður frétti ráðið og hagnýtti sér það, réð að koma Þorgeiri Otkelssyni í fjandskap og aðför að Gunnari, og stilla svo til, að Þorgeir félli fyrir honum, og það hepnadist.

Sá les undarlega Njálu, er heldur, að höf. hafi verið annast um sögulegar staðreyndir, er hann samdi frásagnir sínar af ráðum Njáls. Þá væru þær að líkindum bæði þurrari og styttri. Höf. hefir ekki hirt samvizkusamlega um einstök sannindi né staðreyndir, heldur almenn lífs-sannindi. Öll ráð Njáls segja sömu harmsögu: Þótt mannleg vizka leggist djúpt, fær hún ekki »skygnst inn í hið hulda, sem nokkuð er fjær²⁾«, ekki séð við ráðum skapanna né stíflað straum þeirra og veitt honum í annan farveg.

Líklega hefir Njáll verið mikill vin Gunnars og ráðu-natur hans góður, bæði í málaferlum og fleiri efnum. Og ráðleitanir og ráðleggingar hafa víst tíðkast allmjög meðal vor og frændþjóða vorra í fornöld. Þá er menn voru ráðþrota — og það hefir ef til vill verið oftast en nú —, sneru þeir sér til þeirra, er gnótt áttu þar fyrir. Við

¹⁾ Nials tre första råd och hans sista — det är hans saga. Bååth, bls. 152.

²⁾ Ef höf. hefði látið Njál á gamals aldri líta yfir ráð sín og tala við sjálfan sig um þau, hefði hann getað látið hann spyrja eins og Nikulás Baglabiskup í „Kongs-Emnerne“ eftir Ibsen: Er menneskets kløgt da så usel at det ikke mægter råde over andet og tredje led af sin egen gerning?« Þeir sem skrifað hafa beztu fornsögur vorar, hafa haft glögt auga á þessu, einkum höf. Njálu, og má telja líklegt að Ibsen hafi hugsast þetta fyrir áhrif af löstri þeirra.

penna raunveruleik styðst frásögnin af ráðum Njáls. Og sama máli gegnir um ráðleitanir til Marðar og ráðagerðir hans.

— Lítum nú á lofun Gunnars og Hallgerðar. Þá er hann kom frá útlöndum, heimsótti hann Njál og kvaðst þá til þings ætla. Njáll latti hann farar — grunar, til hvers þingreið hans dregur. En hér fór Gunnar ekki að ráðum hans. Njáll getur nú ekki girt fyrir, að óhamingja renni af ráði hans (er hann réð Gunnari að fara utan).

Nú riður Gunnar til þings. Hann skemtir sér þar hið bezta, honum er veitt mikil eftirtækt, og margir eiga tal við hann. Þá kemur ógæfan til hans — í gervi glæstrar konu. Frá því segir svo (Nj. c. 33):

„Þat var einn dag, er Gunnarr gekk frá Lögbergi. — Þá sá hann konur ganga í móti sér — ok váru vel búnar. Sú var í ferðarbroddi konan, er best var búin. — Enn er þau fundust, kvaddi hon þegar Gunnar. Hann tók vel kveðju hennar ok spurði, hvat kvenna hon væri. Hon nemndist Hallgerðr ok kvaðst vera dóttir Höskulds Dala-Kollssonar. Hon mælti til hans djarflega ok bað hann segja sér frá ferðum sínum. Enn hann kvaðst ekki varna mundu henni máls. Settust þau þá niðr ok tölðu. Hon var svá búin, at hon var í rauðum kyrtli — ok var á búningr mikill. Hon hafði yfir sér skarlazzskikkju — ok var búin hlöðum í skaut niðr. Hárit tók ofan á bringu henni ok var bæði mikit ok fagrt. Gunnarr var í tignarklæðum þeim, er Haraldr konungr Gormsson gaf honum. Hann hafði ok hringinn á hendi, Hákonarnaut. Þau tölðu lengi hátt. Þar kom, er hann spurði, hvárt hon væri ógæfin. Hon sagði, at svá væri, „ök er þat ekki margra at hætta á þat“, segir hon. „Þykki þér hvergi fullkosta?“ segir hann. „Eigi er þat“, segir hon, „enn mannvönd mun ek vera“. „Hversu munt þú svara, ef ek bið þín?“ segir Gunnarr. „Þat mun þér ekki í hug“, segir hon. „Eigi er þat“, segir hann. „Ef þér er nakkvarr hugr á“, segir hon, „þá finn þú föður minn“. Síðan skildu þau talit“.

Sumir trúa því, að Hallgerður hafi sagt frá bónorðinu og frásögnin síðan geymst. Þeir hafa það til síns máls, að fornþjóðir fóru ekki eins í felur með hvatir sínar og athafnir í kynferðisefnum og menningarþjóðir vorra tíma¹⁾. Lesendur fornsagna vorra muna vist, að riðið var stundum með álitlegu föruneysi í bónorðsfarir. En sleppum

¹⁾ Vedel, Helteliv, bls. 12—14.

öllum bollaleggingunum, hvort sagt hafi verið frá þessu launtali Hallgerðar og Gunnars. Aðalatriðið er, að fullkominn skáldbragur er á kaflanum. Efnið er þann veg vaxið, að það hefir, að kalla, frá ómunatið verið bezta smíðafni skáldanna, úr engu efni svo mjög smíðað sem því. Og það verður sennilega ljúflingsefni skálda eins lengi og skáldsögur verða samdar. Öll meðferð efnisins ber og með sér auðkenni góðs söguskáldskapar. Lýsingin er alment sönn. En það er »einkenni skáldlegra sýninga, að þær sýna oss alment í einstöku, mannlífsmynd á fálm mönnum og athöfnum«, segir í þýzkum skáldskaparmálum¹⁾. Frásögnin af lofun Gunnars og Hallgerðar er ekki löng, en gerð af ekki lítilli list. Fyrst þarf að skýra, hvi ástir þeirra hafi kviknað svo leifturfljótt, gera slíkt sennilegt. Í því skyni er fyrst sagt, að bæði hafi verið skrautbúin. Gunnar er í ágætu skapi, nýkominn frá út-löndum með gull og góðan orðstír. Þingheimur horfir á hann aðdáunaraugum. Hug hans fyllir fagnaðarmóður og sigurvíma, líkt og ungir menn og metnaðargjarnir komast í nú á dögum, er þeir hafa nýlokið prófi eða hlotið verð-laun. Af þessu gengur víðræða við Hallgerði greiðara. Hann er og næmari á áhrif, er hugur hans hrossast í slíku feginsróti. Snildarlega er sagt frá bónorðinu sjálfu, og verður þar sízt vilst á skáldskaparmarkinu. »Þau töluðu lengi hátt«. Vér ráðum oss til gamans í, að úr því hafi þau lækkað róminn. Höfundur Njálu er oftast naumur á orð. En vel sé slíkri nízkú! Gunnar færir sig upp á skaftið hægt og hægt, þreifar gætilega fyrir sér, er ekki um hryggbrotið. Vér karlmennirnir finnum, að vér myndum fara líkt að, ef svipað stæði á. Og ætli kvenþjóðin kannist ekki við gætni Hallgerðar í svörum? Sagan gæti verið af lofun, er gerðist í gær.

Vér höldum áfram lestrinum og komum nú að þræla-drápinu. Þar segir fyrst frá því, að Bergþóra móðgaði Hallgerði, af því að hún bað hana þoka úr sæti fyrir

¹⁾ Rudolf Lehmann, Deutsche Poetik Muenchen 1908, bls. 145.

tengdadóttur sinni. Í hefndarskyni lét Hallgerður drepa húskarl fyrir Bergþóru, en hún hefndi aftur, og gekk svo um hrið, að þær létu menn vega hvor fyrir annari. Þessi kafi virðist ekki eins ómissandi hlekkur í þeirri festi, er söguhetjurnar eru dregnar á ofan í djúpið, og flestir þættir sögunnar aðrir. Þó er sumt þar rökstutt, er síðar gerist í sögunni. Hallgerður getur ekki hafa unað því vel, að Gunnar vill ekki hefna þeirrar svívirðu, er hún þóttist biða í boðinu á Bergþórshvoli, að hann sættist jafnan við Njál og dró allmjög taum hans og sona hans í orði. Hér lýrjar því sú beiskja að gróa, sem ruddist út í firnverki hennar á banadægri Gunnars. Og af hennar völdum bólar hér á upptökum óvináttu Þráins og Njálssona. En þessi glæsilegi þáttur er samt ekki saminn sökum þessa. Aðalatriðið er þar vinátta Njáls og Gunnars, höfuðefni þess hluta Njálu, er kalla má Gunnarssögu. Styrkleik hennar á kaflinn að sýna. Útlendingur einn hefir ritað alllanga bók um Eglu og heldur því fast fram, að hún sé skáldrit. Því til stuðnings telur hann, meðal annars, hve vinskapur skipi þar mikið rúm. En slíkt auðkenni skáldrit, er í lífi menning herskárra fornþjóða, t. d. Ilionskviðu o. fl.¹⁾ Og nú sést, hví höf. lýsir svo rækilega hefnigirni og heiftarverkum Bergþóru og Hallgerðar, smámunasemi þeirra og þráa. Það kemur ekki til eingöngu af því, hve höf. hefir haft gaman af þessum eigindum þeirra og afrekum. Fjandskap þeirra notar hann bæði til prófunar á vinfengi Njáls og Gunnars og til samanburðar við sáttfýsi þeirra. List hans þurfti á andstæðum að halda, eins og list öll yfirleitt. Því smærri sem húsfreyjurnar á Bergþórshvoli og Hlíðarenda urðu og því grálegar og lengur sem þær fjandsköpuðust, því betur naut sín vinátta bænda þeirra, því skýrara sást veglyndi þeirra og drengskapur.

Af þessum greinum verður varla efað, að höf. hafi samið þenna þátt að nokkru, eftir því sem markmið hans og góð skáldlist heimitaði. Leynir sér og ekki skáldbragur á allri.

¹⁾ A. Bley, *Eigla-Studien*. Gand 1909, bls. 73—74.

efnismeðferð, samtölum og skaplýsingum, öllu stilt þannig, að lunderni aðalmanna sögunnar komi sem bezt í ljós. Lundarfar Hallgerðar og Bergþóru sést t. d. á húskörlum þeirra, er þær sendu til víga. Vegendur Hallgerðar eru illmenni, trúa henni traudla, reka erindi hennar tregir og möglandi. Húskarlar Bergþóru eru drengir betri, þykir vænt um húsmóður sína og fara fyrir hana fúsir á vettvang. Atla þykir betra að biða dauða í húsi þeirra Njáls en »skipta um lánardrótna« (c. 38).

Öll er frásögn þessi af vinskap þeirra Njáls og Gunnars raunverulegs eðlis, mynd af fögrum þætti í lífi forfedra vorra. Vinátta hefir vafalaust tengt menn stórum fastara þá en nú, er gerólik störf, áhugaefni og gagnstæðar skoðanir naga strengi hennar í sundur. »Njála er eitt hið mikilvægasta vitni þess, hvílikur veigur var í vinfengi — því líka, sem hvíldi hvorki á mægðum né fóstbræðralagi — í fornnorrænu lífi«, segir Heusler.

Vér flettum Njálu áfram. Þá koma deilur Gunnars, bardagar og málaferli, er höfðu að lokum í för með sér sekt hans og víg. Hér drep eg á vígaferli hans.

Um Rangárbardaga Gunnars alla þrjá er það satt að segja, að þeir minna mjög á hernað hans og viking, líkur fornaldarsögublær á frásögn af hvorutveggja. Ef utanfarar-þáttur Gunnars er að mestu eða alveg »hreinn tilbúningur«, eins og Finnur Jónsson heldur og fyr getur hér, þá verður harla líklegt, að margt sé ýkt stórlega um vígaferli Gunnars hér heima, vopnfimi hans og hreysti, afrek hans ekki ótrúlegri í viðskiftum hans við víkinga en í bardögum við Rangá, enda líkt að orði komist í báðum frásögnunum, sem oftast hendir höfund Njálu. Í seinasta Rangárbardaga, þá er Þorgeir Otzelsson féll, segir t. d.: »Gunnarr snaraði svá hart skjöldinn, at spjótit brotnaði í falnum« (c. 72). Líkt er að orði komist, er sagt er frá því, er hann feldi Vandil: »Gunnarr snaraði hart skjöldinn, er sverðit festi í, og brotnaði sverðit undir hjóltunum« (c. 30). Lýsingar á Rangárbardögum minna og nokkuð hver á aðra. Í tveimur þeirra vegur Gunnar menn á loft upp

á atgeirinum og kastar báðum út á Rangá (c. 63, c. 72). Og í fyrsta bardaganum sló Gunnar öxi úr hendi Skamkels út á Rangá, líka með atgeirnum (c. 54). Rangá fékk því nokkra hressing í þeim öllum. — Einum hratt Kolskeggur og út á Rangá, Ögmundi flóka, er hann hafði höggvið fætur af honum. Eftirtektarvert er það, að Ögmundur þessi er ekki nefndur nema í þetta eina skifti, og meira vitum við ekki um hann, að sögn Finns Jónssonar. (Brennu-Njálssaga c. 72, bls. 158). En í Örvar-Odds sögu er getið manns með sama nafni, er kallaður var Eyþjófsbani, og svo er frá sagt: »Hann var svartr á háralit, og hekk flóki svartr mikill ofan fyrir andlitit, þat er topprinn skyldi heita.« (Örvar-Oddssaga í Altn. Saga-Bibliothek, Heft 2, c. 26).

Leikfimi- og bardagafróðari menn en ég verða að skera úr, hvort menskir menn fáí unnið sum þau hreystiverk, er Gunnari eru eignuð, t. d. hvort hann hafi haft svigrúm til að henda mönnum út á Rangá, er margar hendur og vopn sóttu að¹⁾. Við Knafahóla er sagt, að Gunnar hafi varpað sér »skjótt til höggs við austmanninn ok sníðr hann sundr í miðju« (c. 63). Þetta kveður Steingrímur læknir Matthíasson ekki ná nokkurri átt (»Benrögn« »Skírnir« 1916, bls. 284, smbr. bls. 286) og leiðir nokkur rök að. Hann telur dæmi þess, að rangt hljóti að vera sagt frá vígum bæði í Laxdælu og Njálu, sem stafi af rangri athugun, t. d. að höfuð Kols Þorsteinssonar hafi nefnt tíu, »er þat fauk af bolnum.« (Nj. c. 158).

Annars kveikir sumt í frásögnum af vopnaviðskiftum Gunnars tortrygni af því, að þar gengur alt »eins og í sögu«, t. d. í orustunni við Knafahóla. Þar vill Gunnari það happ til að koma auga á Sigurð svínhöfða. Hann »skýtr til hans af boganum«. Sigurður »brá upp hátt skildinum, er hann sá örina hátt fljúga«. En hvað stoðar það? Ekkert fær stöðvað fljúgandi örina, er þaut gegnum aug-

¹⁾ Fleirí sagnir eru til af sama tæi, t. d. af Þórólfi Skalla-Grimsýni, (Egla c. 58).

að, »svá at út kom í hnakkann«. Annari ör skaut Gunnar þegar að ráðsmanni Starkaðar »ok kom sú á hann miðjan ok fell hann fyrir fætur búanda einum ok bóndinn um hann. Kolskeggr kastar til steini, ok kom í höfud bóndanum, ok varð þat hans bani« (c. 63).

Í frásögnum þessum felst vafalaust sá sannleikur, að Gunnar hefir borið stórum af samtíðarmönnum sínum í vopnfimi og hreysti, ef til vill á líkan hátt og frábær frumleiksmáður ber af fjöldanum í andlegum efnum. Gunnari hlaut og að þróast mjög snarræði og vaskleikur, er hann varð við annan eða þriðja mann hvað eftir annað að berjast við miklu liðfleiri óvini.

Efa orkar og hin alkunna frásögn, að Hallgerður hafi synjað Gunnari lepps úr hári sér í bogastreng, en ekki af rökum sálfræðilegs eðlis. Njála veit löngum, hvað hún syngur þar. Hefnigirni er ein hin allra sterkasta hvöt eða hreyfið í lífi hernaðarþjóða á fyrstu menningarstigum þeirra. Og í öllum skáldskap um hetjur og hreystiverk, bæði norrænum og suðrænum, í ljóðum og lausu máli, er aðalefnið — hefndir. Í ógleymanlegri grimdbirtist þessi máttuga hvöt, hefndargirndin, í svari Hallgerðar: »Þá skal ek nú znuna þér kinnhestinn« o. s. frv. Ef eitthvað er hæft í sögunni, geta og fleiri rök hafa ráðið tiltektum hennar, en sagan lætur í veðri vaka. Konum er sárt um fegurð sína, ekki sízt ásthneigðum skrautkvendum, og hefir vafalaust kveðið meira að hégómadýrð formæðra vorra en kvenna nú á dögum. Hallgerði hefði efalaust þótt mikið fyrir að missa hárið. Enn gat það hafa ýtt undir hana, að fall Gunnars var fyrirsjáanlegt, enda segir hún ekki: »Hirði ek ekki, hvárt þú lifir lengr eða skemr,« heldur »v e r r þik lengr eða skemr.« En ytri rök fá efa um, að sönn sé sögnin. Björn leikfimiskennari Jakobsson hefir bent mér á, að hæpið væri, að nógu sterkur bogastrengur yrði snúinn úr lepp úr konuhári, að minnsta kosti á stuttri stundu¹⁾. Þó að hægt

¹⁾ Síðan þessi ritgerð var samin, hefir hr. B. J. bréðlega látið sömu skoðun í ljós við mig og ritað góðar athugasemdir um frásagnir af af-

kynni að vera með góðum tækjum á nægum tíma að búa til nógu sterkan streng úr kvenmannshári, tækist slikt fráleitt á augabragði, sem gera varð hér. Bogastrengir hafa orðið að vera nokkuð sterkir. Í þá var haft »harðtvinnað« hörband og stundum dýrasinar og dýraþarmar. (Björn Bjarnason: »Íþróttir fornmannna«, bls. 90). Og vafalaust hefir Gunnar þurft flestum fremur gildari streng. En ótrúlegt er, að kappinn á Hlíðarenda, bezti bogmaður landsins, er þá átti óvina von á hverri stundu, hafi ekki átt nema einn bogastreng eða annað efni í hann en hár konu sinnar. Vafasamt er og, að hann hefði haft svigrúm til að benda boga, ef strengur hefði bilað, þótt annar hefði verið til í staðinn, þar sem þakið var af skálanum og tugir óvina í höggfærl.

Annars er líklegt, að skotgögn Gunnars hafi bilað, að óhapp það hafi gagnað fjendum hans, en að það hafi gerst með öðrum hætti, en sagan segir. Eg ræð þetta af því, hve Njálu verður tíðrætt um brest þeirra og bilun. Gizur hvíti heldur, að hann eigi eftir fátt örva, af því að hann þreif eina ör óvina sinna — þeim til striðni, og skaut að þeim Gizuri vex við það hugur og sigurvon og hefur sókn á

rekum Gunnars. Set eg hér kafla úr bréfi hans, með bessaleyfi: „Finast mér margt að athuga við frásagnir um afrek Gunnars. — — Hann (Gunnar) er talinn frábær bogmaður og hæfði alt, er hann skaut til. Og boginn í höndum þess, er með kunni að fara, var afbragðsvopn, enda ber sagan með sér, að Gunnar hefir haft hann sem annað aðalvopnið, því að hann hafði hann með sér á ferðum sínum og varðist með honum, þegar ráðist var á hann. Þó dreg eg mikið í efa, að hann hafi verið jafnfimur bogmaður sem orð var á gert, því að lítill sýnist mér árangur af skeytunum. Þannig var það, er hann var veginn, að hann gat engum banað með boganum. Stóð þó í skjóli og óvinir hans á víðavangi. En marga sæiði hana. Lítur því út fyrir, að hann hafi hvorki verið hæfinn né harðskeytinu, því að nærri gengu þó óvinir. En auðvitað var hann nógu mikill bogmaður til þess, að þetta vopn kom honum að ágætu liði. Því er óhugsandi annað, en að Gunnar hafi átt fleiri en einn boga eða, að minsta kosti, fleiri en einn streng.“ — — Merkilegt er, að Sigurður Breiðfjörð trúir ekki sögunni: — „Eg um það í efa geng — aðsóknin þó biði, — að brúðir hefði bogastreng — báði til að liði.“

nýjan leik. Auðvitað var þetta ramskakt ályktað. Gunnar skaut lengi af boganum eftir þetta. Síðan er bogastrengur hans höggvinn í sundur, og það riður baggamuninn, að hann fær ekki streng í staðinn (sbr. orð hans við Hallgerði: »Lif mitt liggir við«). Og Eyrbyggja, er minnst litillega á fall Gunnars, styrkir þessa ætlun mína. Þá er Snorri goði hygast að taka Björn Breiðvíkingakappa af lifi, lætur sagan hann komast þannig að orði: »Hefir lítt sózt at sækja afarmenni slíkt í hús inn«, — — »sem dæmi finnast at þeim Geir goða ok Gizuri hvíta, þá er þeir sóttu Gunnar at Hlíðarenda inn í hús með 80 manna, en hann var einn fyrir, ok urðu sumir sárir, en sumir drepnir, ok léttu frá atsókninni, áðr Geirr goði fann þat af skyni sjálfs sín, at honum fækkuðust skotvápnin« (Eyrb. c. 47). Njálu og Eyrbyggju greinir hér á: Í fyrsta lagi um tölu þeirra, er sóttu að Gunnari: Njála kveður þá 40 (eitt handrit 20), Hauksbók 30. Í öðru lagi var það ekki Geir goði, heldur Gizur hvíti, sem hugði Gunnar skorta örvar. Í þriðja lagi virðist Eybyggja ætla, að Gunnar hafi í rauninni verið tæpur að skotvopnum — nefnir ekki hvaða. Af Njálu sést ekki annað, en hann eigi gnótt þeirra, nema bogastrengja, en við það á Eyrbyggja varla, er hún segir: »fækkuðust skotvopnin«. Sýnir þetta, að valt er að treysta sögunum í einstökum atriðum.

Landnáma nefnir hárskrúð Hallgerðar, en enga sögu, sem því er tengd. En ólíklegt er — þótt vist sé það ekki — að fræðimenn þeir eða fræðipulur sá, er Landnáma má þakka smásögur sínar, forneskjulegar og áhrifamiklar í senn, hefðu slept svo afareinkennilegri sögu úr safni sínu, ef þeir hefðu heyrt hana. Og ótrúlegt er aftur, að jafneftirminnileg saga hefði ekki þeim til eyrna borist.

Heildarhugsun sögunnar hefir krafist þess, að Hallgerður veitti fjendum Gunnars aðstoð í síðustu vörn hans, sem seinna verður vikið að. Ekkert gat og betur sýnt Hallgerði og Bergþóru og mun þeirra en það, hversu þær reyndust mönnum sínum í dauða þeirra. Hallgerður neit-

aði bónda sínum um lepp úr hári sér. Óbeðin gaf Bergþóra sínum manni líf sitt.

Eg hefi nú leitt líkur að því um nokkur atriði úr sögu Gunnars, að þau séu skáldskap blandin, með skáldlegu ráði sögð, að slíkt sé, að minsta kosti, eðlilegasti skilningur á þeim. Og fleira má telja. Ekki veit eg, hvað er skáldskapur, ef lýsingin á rakkanum Gunnars, Sámi, er það ekki. Fögur er sú hundslýsing: »Hann er mikill ok eigi verri til fylgðar en röskr maðr«, segir Ólafur pái um hann. »Þat fylgir ok, at hann hefir manns vit; hann mun ok geyja at hverjum manni, þeim er hann veit, at óvinr þinn er, en aldri at vinum þínum; sér hann þó á hverjum manni, hvárt til þín er vel eða illa; hann mun ok líf á leggja at vera þér trúr« (c. 70). Það er tæplega tilviljun, að þessi lýsing kemur á eftir skáldskaparlegri frásögn af því, er Njáll varaði Gunnar við aðför þeirra nafna, Þorgeirs Starkaðarsonar og Þorgeirs Otkels-sonar, er hann var einn heima á Hlíðarenda og ónýtti fyrirætlun þeirra og sneri henni í ósigur (c. 69). Myndin af Sámi lýsir vinarhug, er ímynd hans og almenn eðlis-lýsing vináttu og vinapels.

Af list notar sagan atgeirinn. Hann boðar víg bæði skiftin, er Gunnar vegur í sama knérunn, er Njáll hafði varað hann við, enda komu þau víg honum á feigðarkné. Hans er síðar hefnt með atgeirnum og sýnir það — meðal fjölmargs annars — með hvílikri íprótt höf. fer með efni sitt¹⁾. Atgeirinn syngjandi á undan örlögþrungnum vígum fellur haglega í samræmi við frásöguaðferð Njálu, þar sem lesendur hennar grunar næstum alt, áður en það gerist. Hann verður lítt gleymanlegt líkamsgervi þessarar söguvenju, hvort sem höf. hefir ætlast til þess eða ekki.

[Framh.]

¹⁾ Bååth, Studier, bls. 129.

Shakespeare: „Bálför Sesars“.

[Julius Cæsar: Act III. Scene II.]¹⁾.

Gestur íslenzkaði,
undir bragarhætti höfundarins.

»Le ton fait la chanson«.

(Franskur málsháttur).

Forspjall.

Andargift Shakespeares er heimskunn, mál-snild hans er víðkunn, en bragsnild hans er lítt kunn: Þýðingarnar bera engan vott um neina rækt við þá miklu bragsnild þessa brezka meistara, sem lýsir sér í beztu leikljóðum hans, og — óhætt að segja — fremur óljósan vott um málshild hans, um »mellifluous Shakespeare«, »the sweet swan of Avon«.

Þetta stafar af þeirri rótgrónu, völdugu venju, að meta þýðingar þeim mun betri sem þær eru »orðréttari«. Það hefir verið æðsta þýðinga-markmiðið, að ná orðrjettri afsteypu af frumritinu. Og að því leyti eru ýmsar Shakespearesþýðingar orðlögð völundarsmíði.









Hér er nýtt í efni: Þeirri fornfrægu »orðréttu nákvæmni« er afneitað, hiklaust og afdráttarlaust, og alt önnur »nákvæmni« látin sitja í fyrirrúmi: — 1) Hér er þess freistað af fremsta megni, að ná sannri, lifandi eftirmynd af mál-færi, orðbragði, talsmáta höfundarins; en þá er oft úti um »orðréttu nákvæmnina«; það gamla keppikeflið getur þá orðið manni að fótakefli: Eng-

¹⁾ Um leikinn í heild sinni sjá grein þá er þýðingunni fylgir, bla. 106. Hefir cand. Bogi Ólafsson ritað hana fyrir Skírni. Ritstj.

in tvö tungumál eru eins í vexti, eins í orðalaginu; og þó það gangi fjöllum hærra, að urmull orða í hverjum tveim tungumálum séu sammerkingar, hvað sem um er að ræða, þá er, ef satt skal segja, harla vafasamt, hvort slíks eru nokkur dæmi; ef einhver segir: »hú n« = »she«, = »elle«, þá segir hann satt og ekki satt, hálfan sannleik, ekki fullan. — 2) Hér er það annað nýtt í efni, að kveðandi höfundarins er fullur sómi sýndur. Er þetta sennilega fyrsta tilraunin í þá átt, að »þýða« braglistina í leikljóðum Shakespeares. Í þeim leikljóðahætti (»blank verse« — lauskvætt) hafa engin skáld komist neitt til jafns við Shakespeare, hvorki fyr né síðar; en hvernig sem á því stendur, þá er ekki um að villast: bragsnild hans hefir ekki verið metin að verðleikum: ágætustu og viðfrægustu þýðingarnar eru yfirleitt kveðnar á jafnagangi frumháttarins — lon og don — »the right butterwomans rank to the market«. Og þó er það enginn ókleifur vandi að temja sér og ná allri tilbreytninni í kveðandi Shakespeares. Er þessi þýðingar-tilraun ávöxtur af allnáinni rannsókn á kveðandi hans, og látin af hendi í vonleysi um tómstundir til að vinna úr þeim aðráttum. Hér var að sjálfsögðu ekki lögð stund á þá óþörfu, hugsunarlausu nákvæmni, að kveða hverja lotu á sama gangi og í frumkvæðinu; tjáir ekki að tala frekar um það mál.

Nú er alþýða manna orðin því vön að »strokka« öll lauskvæð ljóð, hefir ekki heyrt alla tilbreytnina í syngjandi Shakespeares, veit ekki af henni, veit ekki hvílíkan listarauka þar er um að ræða. Þess vegna eru hér höfð framburðarmerki við þær loturnar þar sem brugðið er út af vanaganginum, á Shakespeares vísu. En þess ber vel að gæta, að merkin eru mjög lauslegar bendingar; því má ekki gleyma¹⁾.

¹⁾ Í (— —) t. d. er (—) iðulega lengra í framburði en (—) í (— — —) eru hlutföllin harla breytileg. En kveðandinn er gangrétt engu að síður — í eyra manns, ef rétt er þulið (þ: eftir orðnum og efni).

(—) er		sviplangt og		} (c. 160—240 MM. — gang- hraðinn misjafn, »acceler.« »ritard.«, líkt og í söng).
(—) — —		—		
(—) — —		—		
(—) — —		—		

(¹) yfir dráttarmerki táknað á herslu. En því má aldrei gleyma, að áherslurnar eru mjög mis-harðar.

Um lagið sjálft, háttar lagið (»melodia«; sbr. »Fornyrðis-lag«, »Lilju-lag«), þann höfuðgaldur, tjáir ekki að tala hér; engin tók á að »tákna« lagið.

Þýðingin er gerð eftir þessum útgáfum:

1. *Julius Cæsar*. Edited by W. A. Wright. Oxford 1901.
2. *Julius Cæsar*. Edited by A. W. Verity. Cambridge 1912.

Nú hefir menn, veit eg, greint á um ýmsar setningar í þessum þætti, sem hér er íslenskaður, skilið þær á tvo vegu eða fleiri; en sá ágreiningur varðar þó hvergi miklu, nema á alls einum stað: í viðræðu bæjarmanna þegar Anton »hættir og biður«; þar skiftir miklu um skilninginn á fyrra tilsvári 2. bæjarmanns; í frumritinu stendur: »Cæsar has had great wrong«, og 3. bæjarmaður gellur við: »Has he, masters? . . .«. — Málvinir mínir, allir nema einn (*Mr. André Courmont*), eru mér ósamdóma, segja hugsunina þessa: »Sesar hefir sætt miklum rangindum (þ: honum hefir verið gert margt rangt til);« er svo að sjá, sem all-flestir hafi skilið setninguna á þá leið. En hér er á tvent að líta, það fyrst að »to have wrong« gat í Shakespeares tíð átt sammerkt við frönsku orðin »avoir tort«;¹⁾ og þá rekur að hinu sem alt á veltur: Mér hefir orðið mjög starsýnt á bæjarmennina fjóra; mér er sem eg sjái þá og heyri — eins og eg væri þeim gagnkunnugur; svo snildarlega hefir Shakespeare gert þá úr garði; og — það leynir sér ekki, ef að er gáð: 2. bæjarmaður er harla ólíkur hinum þremur að skapsmunum, og það á þann hátt, að eg get ekki ætlað honum að hvarfla alveg eins

¹⁾ Við Íslendingar segjum líka: »hafa rangt við«, »hafa rangt á frammi« o. fl.

og skal nú lýsa sökum þeim er urðu
Sesar að falli.

1. bæjarmaður:

Bezt eg hlusti á Brútus.

2. bæjarmaður:

En eg á Kassjus. Komum svo á eftir
og vitum hvort þeim segist eins frá öllu.

(Kassjus fer og sumir bæjarmanna. Brútus stigur í ræðustólinn).

3. bæjarmaður:

Hann Brútus góður er uppi. Höfum hljótt.

Brútus:

Hlustið á orð mín öll.

Rómverjar, landar mínir og vinir!

Heyrið mér, munið málefni mitt, og hafið hljótt, svo þið
heyrið; trúið mér, munið heiður minn, og látið mig njóta
heidurs míns, svo þið trúið; berið mér eftir beztu vitund,
og hyggið vel að, svo þið verðið því bærari um að dæma.

Ef sá er hér nokkur, sem var ástvinur Sesars, þá má
hann vita að sízt unni Brútus Sesari minna en hann.
Mun þá sá vinurinn spyrja hvers vegna Brútus reis í móti
Sesar, en eg mun svara: ekki af því eg ynni Sesar miður;
sökin var eg unni Róm betur.

Mynduð þið fremur kjósa Sesar á lífi, og deyja allir
í ánaud, en Sesar dauðan, og lifa frjálsir menn.

Sesar unni mér, því græt eg hann; hann var gæfu-
maður, því tek eg glöðu geði; hann var hreystimaður,
því flyt eg hrós um hann; en hann var valdagjarn, og
því vóg eg hann. Koma þá tár móti ást hans, gleði móti
gæfu, hrós móti hreysti, en víg móti valdafíkn.

Hver er hér svo þýlyndur, að þrælsnafn vilji bera?
Segi til, ef til er; hann á sök við mig.

Hver er hér sá ruddi, að ekki vilji hann Rómarekk-
ur heita? Segi til, ef til er; hann á sök við mig.

Hver er hér það afskúm, að vilja ekki elska ættjörð sína. Segi til, ef til er; hann á sök við mig.

Eg bið, eftir svári.

Allir:

Enginn, Brútus, enginn.

Brútus:

Þá á enginn sök við mig.

Það eitt hefi eg haft í frammi við Sesar, sem þið skuluð við Brútus.

Vigsmálið Sesars er reifað og skráð á Borgarhól; engu leynt um afrek hans; né ofsögum sagt af ávirðingum hans, sem urðu honum til falls.

(Anton kemur og fylgd manna með lík Sesars).

Þarna koma þeir með líkið. Markús Anton fylgir: Hann var ekkert við vígið riðinn; mun þó njóta góðs af því, eiga uppreisn vísa; mun ekki svo um hvern ykkar?

Að skilnaði kveð eg svo að orði: eg bar vopn á bezta vin minn til að bjarga Róm; það sama vopnið hefi eg handbært á sjálfan mig, nær sem ættjörð minni hugnast þörf dauða míns.

Allir:

Heill, Brútus, heill, heill!

— — — — —

1. Bæjarmaður:

Göngum í sigurhersing heim með honum.

2. Bæjarmaður:

Komum upp mynd af honum hjá feðrum hans.

— — — — —

3. Bæjarmaður:

Gerum hann Sesar.

4. Bæjarmaður:

Sesars beztu kosti

konunga skal í Brútus.

1. *Bæjarmaður:*

Leiðum hann heim og æpum siguróp.

Brútus:

Heyrið þið, landar.

— — — — —

2. *Bæjarmaður:*

Þey! Það er hann Brútus.

— ! — — — — —

1. *Bæjarmaður:*

Þei þei!

— — !

Brútus:

Heyrið mér, landar, leyfið. eg fari einn,
gerið það, verðið eftir hér hjá Anton.

Virðið nú Sesar látinn, einnig Anton
og lofsorð hans um Sesar, sem við höfum
leyft að hann mæli hér af munni fram.

Eg beiðist þess, að allir biði og hlýði
á ræðu Antons, allir nema eg.

(Hann fer).

1. *Bæjarmaður:*

Hæ kyrrir! Hinkrum við, hlustum á Anton.

— — — — —

2. *Bæjarmaður:*

Látum hann komast áfram upp í stólinn;
heyrum svo. — Anton góður, stigðu' í stólinn.

— — — — —

Anton:

Eg þakka fyrir, það á Brútus skilið.

(Stígur upp í ræðustólinn).

4. *Bæjarmaður:*

Hvað segir hann um Brútus?

— — — — —

3. Bæjarmaður:

Að Brútus eigi skilið

— — — — —

hann þakki okkur öllum fyrir eitthvað.

4. Bæjarmaður:

Hollast hann tali hægt um Brútus hér.

1. Bæjarmaður:

Sesar var þjóðarböðull.

— — — — —

3. Bæjarmaður:

Já, það er satt!

— — — — —

og sönn blessun að hann er burt úr Róm.

— — — — —

2. Bæjarmaður:

Þei! Hlustum, heyrum nú hvernig Anton tekst.

— ! — — — — —

Anton:

Höldar í Róm.

— — — — —

Bæjarmenn:

Þei, þei! Heyrum til.

— — ! — — — —

Anton:

Vinir, landar í Róm, ljáið mér hljóðs;

— — — — — ; — — — ;

ég leita Sesar legs, en ekki lofs.

Það ljóta í fari manna lifir þá;

það góða titt fer sömu leið og líkið;

látum það svo um Sesar. — Brútus góður

þar ykkur vitni um valdagræðgi Sesar:

Væri það rétt, þá var það ljótur galli;
og ljótlega hefir Sesar goldið hans.

Eg kem hér — Brútus bauð mér það, og hinir,
því Brútus, hann er mesti heiðursmaður;
eins hinir allir, allir heiðursmenn —
kem hér á torg að tala um Sesar látinn.

Vin átti' eg þar, trúan og traustan vin:

— — — — — , — — — — — :

En Brútus ber hann væri valdagjarn;
og Brútus, hann er mesti heiðursmaður.

Hann færði marga fanga heim í Róm
og friðgjöld þeirra runnu í bæjarsjóð:

Hvort bar það vott um valdagræðgi Sesars?

Kvæðu við sultarkvein, Sesar, hann grét:

— — — — — , — — — — — :

Valdafýkn skyldi skap-hardari' en svo.

— — — — — — — — — — — o

En Brútus ber hann væri valdagjarn;
og Brútus, hann er mesti heiðursmaður.

Þið munið allir, það var hér á þingi,
að þrisvar bauð eg honum konungstign,
fekk þrisvar afsvar: Var það valdagræðgi?

En Brútus ber hann væri valdagjarn;
og það er víst, að hann er heiðursmaður.

Að rengja Brútus ber eg ekki við,
eg ber það eitt, sem mér er kunnugt um.

Þið unnuð honum fyr, sem von var til,
og von eg spyrji: Hvar er harmur ykkar?

Mannvit, þú ert í manneygd skrimslí horfið,
en menn af viti gengnir. Vægið mér;
hjartað er horfið, lagst hjá líki Sesars;
eg hætti' og bið heimkomu þess til mín.

— — — — — — — — — — — o

1. Bæjarmaður:

Mér finst hann hafa rétt að mæla í mörgu.

2. *Bæjarmaður:*

Hyggir þú að, þá hlýtur þú að sjá:
Sesar var rangs-leitinn.

┌ ─ ─ ─ ┌ ─ ─ ─

3. *Bæjarmaður:*

Var hann, vinir?

┌ ─ ─ ┌ ─ ?

Mig grunar að sá næsti verði verri.

4. *Bæjarmaður:*

Tókuð þið eftir. Ekki þáði' hann kóngstign;
svo það er víst: Valdagjarn var hann ekki.

┌ ─ ─ ┌ ─ : ┌ ─ ─ ┌ ─ ─ ┌ ─ ─ ┌ ─ ─

1. *Bæjarmaður:*

Ef það sannast, mun ýmsum illa vært.

┌ ─ ─ ┌ ─ , ┌ ─ ─ ┌ ─ ─ ┌ ─ ─

2. *Bæjarmaður:*

Ósköp að sjá! Glóðrauð augun af gráti.

┌ ─ ─ ┌ ─ ! ┌ ─ ─ ┌ ─ ─ ┌ ─ ─

3. *Bæjarmaður:*

Já, Antons líki er enginn hér í Róm.

4. *Bæjarmaður:*

Heyrið, hann tekur til, tókum nú eftir.

┌ ─ , ┌ ─ ─ ┌ ─ ─ , ┌ ─ ─ ┌ ─ ─

Anton:

Hann Sesar sem með einu orði í gær
staðist hefði' allan lýð: liggur nú hér,

┌ ─ ─ ┌ ─ ─ : ┌ ─ ─ ┌ ─ ,

aumari' en hver af þeim, er virða' hann viðlits.

En færi eg að æsa ykkur upp,
reita til reiði, vekja rimmu og róstu,
þá myndi' eg móðga Brútus, móðga Kassjus,
sem, eins og kunnugt, eru heiðursmenn.

Það má eg sizt, að móðga þá; vil fremur móðga þann látna, móðga mig og ykkur, heldur en slíka heiðursmenn eg móðgi.

En hér er bréf — innsigli Sesars undir,

erfðabréf Sesars: sjálfur fann eg það.

Ef borgarmönnum bærisk þetta skjal,
 — en virðið vel, eg þirti ekki bréfið, —
 myndu þeir koma og kyssa benjar Sesars,
 og rjóða tröf sín í hans dýra dreyra,
 já, biðja um hár af höfði hans til minja,
 og minnast þess á dánardægri sínu,
 láta það ganga, eins og ættargiftu,
 mann fram af manni.

4. Bæjarmaður:

Láttu' okkur heyra, lestu bréfið, Anton.

Allir:

Við viljum heyra bréfið! bréf Sesars!

$\frac{1}{2} \quad - \quad - \quad \frac{1}{2} \quad \frac{1}{2} \quad \frac{1}{2} \quad \frac{1}{2}$

Anton:

Það má eg ekki; hægir, vænu vinir;

[illegible]

Eg hlýt að þegja' um hug Sesars til ykkar.

[illegible]

Enginn er staur, enginn er steinn, en maður;

$$\frac{1}{2} \quad \frac{1}{2} \quad \frac{1}{2} \quad \frac{1}{2}, \quad \frac{1}{2} \quad \frac{1}{2} \quad \frac{1}{2} \quad \frac{1}{2}, \quad \frac{1}{2} \quad \frac{1}{2} \quad \frac{1}{2};$$

menn eruð þið: V. Þið þið vilja Sesars,

$\frac{1}{2} \quad \frac{1}{2} \quad \frac{1}{2} : \frac{1}{2} \quad \frac{1}{2} \quad \frac{1}{2} \quad \frac{1}{2} \quad \frac{1}{2} \quad \frac{1}{2}$

mynduð þið tryllast, allir verða óðir:

Hepni' að þið vitið ekki' um arfinn ykkar;

því ef þið vissuð — þá er vant að vita.

4. Bæjarmaður:

Við viljum heyra bréfið, lestu bréfið;

við heimtum bréfið, Anton, bréf Sesars.

($\frac{1}{2}$ $\frac{1}{2}$ $\frac{1}{2}$ $\frac{1}{2}$, $\frac{1}{2}$ $\frac{1}{2}$, $\frac{1}{2}$ $\frac{1}{2}$ 0

Anton:

Viljið þið slaka til? Viljið þið biða?

— — — — — ? — — — — — ?

Eg hljóp á mig, átti' ekki' að nefna bréfið:

— — — — — , — — — — — :

Eg óttast þessa heiðursmenn eg móðgi,

sem hafa myrt Sesar; eg óttast það.

— — — — — ; — — — — — o

4. bæjarmaður:

Þessa fanta: Kalla þá heiðursmenn!

— — — — — : — — — — —

Bæjarmenn:

Já, bréfið! erfðabréfið!

2. bæjarmaður:

Þeir voru bófar, böðlar; bréfið! lestu bréfið. —

Anton:

Ætlið að þvinga mig að birta bréfið?

Sláið þá hring, þarna í kringum líkið;

— — — — — , — — — — — ;

Slátið mig svo sýna' ykkur höfund bréfsins.

— — — — — — — — — — — o

Má eg það? — Má eg þá koma niður?

— — — — — ? — — — — — ?

Allir:

Flýttu þér niður.

2. bæjarmaður:

Niður.

3. bæjarmaður:

Þú mátt.

(Anton fer niður).

4. bæjarmaður:

Í hring; sláid hring.

— 1 — ; — 1 — 1 0

1. bæjarmaður:

Fjær börunum, burt frá líkinu.

\cup $\frac{1}{2}\cup\cup$, $\frac{1}{2}$ \cap $\frac{1}{2}\cup\cup$ 0

2. bæjarmadur:

Burt, svo hann Anton komist, öðlingsmaðurinn.

$\frac{1}{2}, \quad \left(\begin{array}{c} - \\ - \end{array} \right) \quad \left(\begin{array}{c} - \\ - \end{array} \right) \quad \left(\begin{array}{c} - \\ - \end{array} \right) \quad \left(\begin{array}{c} - \\ - \end{array} \right), \quad \left(\begin{array}{c} - \\ - \end{array} \right) \quad \left(\begin{array}{c} - \\ - \end{array} \right) \quad \left(\begin{array}{c} - \\ - \end{array} \right)$

Anton:

Þið eruð en of nálægt; farið fjær.

2. bæjarmaður:

Farið frá; fljótt! Hliðrum til.

$$\frac{1}{n} \quad \frac{1}{n} : \quad \frac{1}{n} ! \quad \frac{1}{n} \quad \frac{1}{n} \quad \frac{1}{n} 0$$

Anton:

Hver sem á tár, tygi sig nú til gráts.

$\frac{1}{2} \quad - \quad - \quad \frac{1}{2}, \quad \frac{1}{2} \quad - \quad - \quad \frac{1}{2} \quad - \quad \frac{1}{2} \quad 0$

Skikkjuna þekkið þið; en það man eg,
er fyrsta sinni Sesar hana bar;
það var eitt sumarkvöld, hann sat í tjaldi,
en allur Nerva-her lá úti, í valnum.

Sjáið, þarna rak Kassjus kutann sinn,
og þessa glufu á Kaska, klækjarefur:
en hérna lagði góða barnið Brútus;
og þegar hann dró bannsett blaðið út,
— — — — —

stökk dreyri Sesars, sjáid, út á eftir,
eins og um dyr, að skygnast um í skyndi,
hvort Brútus hefði barið svona hart;
því Sesar unni Brútus eins og barni:
það vitið þið, það vita guð og menn!

Þetta var versta, lang-versta lagið;

$\frac{1}{2} \quad \frac{1}{2} \quad \frac{1}{2} \quad \frac{1}{2} \quad \frac{1}{2} \quad \frac{1}{2}$

Því þegar Sesar sá hann reiða vopnið,
það ræktarleysi, sjöfalt verra en svik,
fekk bugað hann: þá brást hans hrausta hjarta.

Huldi' hann nú skikkjufaldi höfuð sitt,
og rétt við stallann undir steinmynd Pompejs,
sem flóði' í blóði þá — þar féll hann Sesar.

Og hvílikt voðafall! Því vitið, landar,
að eg og þið, við allir féllum þar,
en blóðug svikin brutust þá til valda

Eg sé þið grátið; get, að ykkur taki
að hitna' í skapi: Hrynjið hlýju tár!

En veslir menn, því grátið þið, þó göt sjáist á skikkju Sesars? — Lítið hér

(Sviftir skikkjunni af líkinu).

hans liðið lík, lemstrað, öll verksummerkin.

$$- \frac{1}{2} \left(\frac{\partial^2}{\partial x^2} + \frac{\partial^2}{\partial y^2} \right) u = f(x, y)$$

1. bæjarmaður:

Þvilik hörmung.

2 bæjarmaður:

Þvílíkur höfðingi' og Sesar.

3. bæjarmaður:

Þvítíkur ólánsdagur.

4. bæjarmaður:

Þvílíkir erkibófar.

1. bæjarmaður:

Þvílíkur vættvangur.

2. *bæjarmaður*:

Hér þarf að hefna.

Allir:

Hefnum! Á stað! Leitum! Brennum! Brælum!
Vegum! Drepum! Vægjum engum fantinum!

Allir:

Vekjum róstu.

1. bæjarmaður:

Berum eld að Brútus.

3. bæjarmaður:

Fljótir, á stað! Förum og eltum fantana.

— — — — — ! — — — — — o

Anton:

Heyrið þó, landar, heyrið þó til mín.

Allir:

Þei þei! Hlustum á Anton. Heill! Anton.

— — — — — ! — — — — — o

Anton:

Þið vitið ekki, vinir, hvað þið gerið:

Hvers hefir Sesar unnið til af ykkur?

Þið vitið ekkert — verð að segja það:

Þið hafið gleymt, eg gat um bréf, um arf.

Allir:

Veláminst; bréfið! biðum, heyrum bréfið.

Anton:

Bréfið er hér, innsigli Sesars á,

— — — — — , — — — — — ,

og hverjum einum Rómarekk hann gefur,

hverjum um sig: sjöttíu' og fimm drökmur.

— — — — — : — — — — — o

2. bæjarmaður:

Höfðinginn Sesar! Skulum hefna hans.

3. bæjarmaður:

Hann Sesar, konungsmakinn!

Anton:

Verið kyrrir.

Allir:

Þei þei!

Anton:

Lundinn hans líka, hérna megin Tiber,
 skrúðgrænu rjóðrin, skógargöngin fögru!
 Það fáíð þið í arf, og ykkar niðjar
 um allan aldur, — megið upp frá þessu
 reika þar út og inn og yndis njóta:
 Sesar er nár! Nær kemur annar slíkur?
 — — — — — ! — — — — — ?

1. Bæjarmaður:

Aldrei, aldrei. — Fljótir, á stað, á stað!
 — — — — — !

Brennum nú lík hans hér í helgum reit,
 og eldum með þeim eldi að öllum föntunum.
 — — —

Hefjið líkið á loft.

— — — — —

2. Bæjarmaður:

Röskir að ná í eldinn.

— — — — — o

3. Bæjarmaður:

Rífum bekki.

— — — — — o

4. Bæjarmaður

Rífum palla, ljóra, laust og fast.

— — — — — o

(Bæjarmenn fara með líkið).

manna grískra og rómverskra, er samdi Plutarchus, grískur fræðimaður, er lézt um 120 árum eftir Krists burð. Þessu æfisögusafni var snúið á ensku, og gefið út fyrsta sinni árið 1579.

Í upphafi leiksins getur þess, hve Cæsar sé vinsæll af alþýðu manna. Hins vegar má og sjá, að lýðveldissinnar hafa ilt auga á honum, enda ber mjög á því í viðræðum alþýðustjóranna við iðnaðarmennina á götunni. Þeir eru og margir í Rómaborg smeykir um, að Cæsari verði boðið konungsnafn á Lúperkalshátíðinni (í febrúar 44 árum f. Kr.).

Brútus er einn af aðalmönnum leiksins, hinn mætasti maður, en gallharður lýðveldissinni. Hann er að visu kær vinur Cæsars, og dáist mjög að honum, en hyggur, að hann muni konungur vilja verða, enda kunnugt um met-ordagirnd hans; þykir honum þetta ærið ilt, og er næsta óráðinn í því, hvað gera skuli lengi vel.

Þessa óánægju Brútusar færir nú Cassius sér í nyt, hatursmáður Cæsars; elur á óánægjunni annars vegar, en skjallar Brútus öðrum þræði; og reynir að telja hann á að ráða verði Cæsar af dögum, heldur en að gerast ánaudugir þrælar hans. Cassius aflar sér margra annara fylgismanna, og neytir síðan allra bragða til þess að fá Brútus algerlega á sitt mál; tekst honum þetta von bráðar, sumpart með fortölum sínum, sumpart með rituðum áskorunum, er víða verða fyrir Brútusi, og Cassius hefir sjálfur samið; kemur þá svo, að Brútus þykist ekki lengur geta látið afskiftalausan Cæsar og mál hans, er hann hyggur, að beztu menn Rómaborgar biðji sig liða. Þá er samsærið gert, og er Brútus sjálfkjörinn höfðingi flokksins, því að hann hefir almennings orð á sér. Er þessu næst afráðið að teygja Cæsar til Capitólshæðar og myrða hann þar, en jafnframt bannar Brútus að drepa Anton, vin dyggan Cæsars, og þykir þó mörgum óviturlega ráðið. Cæsar fær pata nokkurn af samsærinu, enda ganga spár allar geigvænlega illa, en þó ræður hann af að fara til Capitóls-

hæðar, og er þá þegar myrtur, er þangað kemur. Þá fyrst fer til muna að bera á Anton þeim, er áður var nefndur, þriðja aðalmanni leiksins; fær hann leyfi Brútusar til þess að flytja ræðu yfir líki Cæsars á torginu, þótt bandamönnum Brútusar þyki þetta hið mesta óráð. En Brútus uggir ekki að sér. Þeir halda nú til torgsins og flytur Brútus ræðu, og lýsir víginu og hvað til þess bar, gengur hann þá í brott, en til kemur Anton, talar alllangt mál, og æsir lýðinn mjög gegn morðingjum Cæsars. Þessar ræður, er þótt hafa með því fegursta, er samið hefir verið af því tæi, hvor á sinn hátt, eru nú þýddar á íslenzku hér að framan. Við ræðu Antons ærist skríllinn svo mjög, að banamönnum Cæsars verður eigi vært í Rómaborg. Þessu næst er stofnað þristjóraveldi hið síðara, og eru í því Octavianus, Anton og Lepidus.

Ósamlyndi kemur upp í herbúðum lýðveldismanna. Brútus missir konu sína, og verður mikið um, innri rósemd hans hverfur, og andi Cæsars birtist og krefst hefnda fyrir vígið. — Yfirleitt er Cæsar gerður að lítilmenni og skrumara í fyrstu þáttum leiksins, en verður nú ægilegur óvinunum eftir lát sitt. — Nú liður óðum að leikslokum, orustunni við Philippi. Sálarprek Brútusar er nú gersamlega horfið; þykir honum sem þeir hafi til litils unnið á Cæsari, enda verkið hið versta, og eftir orustuna ráða þeir sér bana báðir, Brútus og Cassius. En yfir líki Brútusar votta óvinirnir göfuglyndi hans með þessum orðum:

„Þessi var bestur Rómverji af þeim öllum,
því öllum flokknum, nema honum einum,
gekk öfund til við Cæsar, mikilmennið;
hann einn, af breinni, innilegri ást
á ættjörð sinni, slóst í lið með þeim.
Hann lifði vel, og höfuðvættir héldust
svo á um hann, að heimur mætti rísa
og róma við hverja þjóð „þar var maður““.

(*Gestur íslenzkaði*).

Gamlir náungar frá Breiðafirði.

Sigmundur Drottinskarl.

Í æsku minni eimdi töluvert eftir af hinni gömlu förumannaöld. Man eg meira en tylft af þeim, körlum og kerlingum, sem árlega gistu í Skógum hjá foreldrum mínum — faranda-fólki, meir eða minna frábrugðnu, og flestu okkur krökkum fremur kærkomnu, af því að það var okkur eins og utanveltu-fólk, sérkennilegt að svip og búningi og líktist engu í tali og látæði — nema sjálfu sér. Móður okkar virtist það fremur aufúsugestir og veitti glæðlega beina, einkum flökkukonum sem Hjalta-Kristínu, er ætíð færði okkur flatkökur, eða Kristínu purku, er líka hafði stundum eitthvert fágæti meðferðis. Sagði hún þá föður okkar frá gjöfunum og dró ekki af, en hann tók því oftast fálega, eða sagði: »Gott er nú það, en allar gjafir þiggja laun hjá þess konar fólki«. Karlarnir áttu og betur við hann, ef voru fréttافرóðir og greinargóðir, og tók létt á, þótt heimildir væru efasamar, því fróðleik og fréttasögum unni hann mjög, enda veit eg fáa menn, sem fróðari eru um alla vegi, nálega hvar sem var á landinu. »Hrókur alls fagnaðar« (eins og forðum Gizur Hallsson) var okkur *Jóhann stríðsmaður*. Sá karl kunni frá mörgu að segja, sem gamall fylgdarmaður Jörundar hundadagakóns. Hann kunni Njálu og fleiri sögur utanbókar og þuldi alls konar æfintýri á vökum; sat hann þá sveittur, all-öldurmannlegur með bera bringu, en hár og skegg féll brimhvítt á kambana, því við kemberingar undi hann vel; og er blaðið var búið í minni hans, brá hann

við öðrum kambinum, eins og þar stæði næsta blaðsiðan; stundum sletti hann dönsku innan um, og þótti okkur piltum allmikil bragarbót, þótt okkur væri það grænlenzka. Bróðir Jóhanns var líka við og við á faraldsfæti þar um sveitir. Hann þótti okkur ljótur og óþýður, enda fylgdu honum tveir afarstórir útlendir hundar, sem lágu hjá honum á nóttum. Man eg, að eg þorði ekki að sofna eina nóttina og hlustaði á karlinn, er hann var að síða seppana og sagði: »Eg þoli þig ekki, eg þoli þig ekki!« Við Gunnlaug flakkara og Lúsa-Jósep féll okkur og hálfstirt, og sömdum kýmniléik um þá, sem oflangt yrði hér frá að skýra, nema hvað rúm þau, er þessir »gentlemenn« höfðu sofð í, fyrirfundust afskapleg að leikslukum.

Meira fanst okkur til Magnúsar aumingja, Guðm. Purkubróður og Gvendar godða. Hinn síðastnefndi var orðlagður skrumari og smjaðrari, en í minna lagi vandadur. Urðu hans æflok þau, að hann réðst á Björn póst á Bröttubrekku, en hafði miður, og tróð Björn, er var heljarmenni, steini í munn Godða; kom hann ekki steininum út úr sér, komst við illan leik til bygða og lét þar líf sitt.

Þessa menn alla og fleiri þeirra líka mætti sérkenna á ýmsan hátt, en til þess hefi eg hvorki tíma né minni. En það höfðu þeir allir sameiginlegt, að þeir höfðu allir svip og keim af eldri aldarhætti, og það var það, sem gekk okkur óvitandi mest í augu.

En nú er að minnast á Sigmund Drottinskarl. Hann kom aldrei að Skógum, enda átti sveit sína vestur á Barðaströnd. En þegar eg var kominn út í Flatey og var þar búðarpiltur, kyntist eg karli þessum og mintist á ýmsar skritlur, sem móðir okkar hafði sagt okkur frá Simba, þegar hún var heimasæta í Hergilsey og hann var þar vinnumaður. Hann var meðalmaður vexti og mjög meinleysislegur, klæddur hvítgráum peysutötrum með karbættan hatt á höfði, hvítur á hár og skegg og hékk hvortveggja í flygsum, en hvítur gröftur í augnakrókunum, og allur bar hann sig beygjulega. Kendi eg óðara í brjósti

um hann og gladdi hann með staupi og brauðköku. »Hvað ertu gamall?« spurði eg. »Peir eru að segja, að eg sé kominn undir brunaárið«, svaraði hann. Næsta vor kom Simbi aftur og spurði eg hann aftur um aldur hans. Þá var karl orðinn eitthvað hýrgaður og svarar hiklaust. »Sjö-tugur fyrir utan kviðslitið«. Eftir það man eg ekki til, að eg sæi hann aftur. Sigmundur þessi var ekki einungis fæddur bögubósi, heldur svo skringilegur og fyndinn, ósjálf-rátt, að bögumæli hans urðu á allra munni. Skulu hér tilfærð nokkur dæmi. Þegar Sigm. var í Hergilsey, sagði móðir mín, að hún kom út og mætti Simba, nýkomnum af sjó. Hún spurði hvernig þeir hefðu aflað, því þeir höfðu verið í hákarlalegu. Hann svarar og heldur afundinn: »Hvað áttum við að afla alveg höfuðlausir!« Meiningin var, að þeir höfðu enga selshausa haft með sér í beitu. Sigmundur átti síðar konu, sem Lovísa hét. Nafn hennar gat hann aldrei nefnt hneykslislaut; oftast setti hann K framan við fyrsta stafinn, en félagar Simba bættu um. Með henni átti hann son, sem hét Kári, og eftir lát hennar var hann á fóstri með Teiti nokkrum, sem fór vel með piltinn. Því sagði Drottinskarl: »Eg vil heldur gefa hrjár (þ: þrjár) vættir með Kár í Teit, en tíu í annan verri stað«. Simba var boðið í veizlu og hlaut þröngt sæti. Þá féll honum það orðtak af munni: »Hröngt mega ósáttir hroða sér«.

Sigmundur var góður bjargmaður, sem kallað er. Eitt sinn var hann nær hrokkin fram af brúninni á Látra-bjargi, en festist í fluginu á skinnbrók sinni. Æpti þá Sigm. á hjálp félaga sinna: »Herra guð hann hljóp á mig og haldi nú hver í sig, og hjálpið mér fram af!« Burgu þeir honum óðara og áður en þeir gerðu gaman að bögumæli hans. Eitt sinn viltist Sigm. á Þingmannaheiði og komst nauðulega til bygða, og kvaðst aldrei hafa ratað í svo »mórauða maukadellu«, og sagði langa hraknings-sögu, sem eg hefi gleymt.

Þegar Sigm. misti konu sína, fór hann á fund sókn-arprests síns, síra Runólfs á Brjánslæk, og bað hann bless-

aðan að syngja yfir henni fyrir sig. Prestur svaraði, sagði það skyldi hann fúslega gera, og spurði, hvort að hann ætti ekki að halda ræðu við greftrun hennar. Sigm. tók því feginsamlega. Spurði þá prestur, hvað helzt hann ætti að taka fram í ræðunni konu hans til maklegs heiðurs. Karl hugsar sig um og svarar svo: »Þér megið segja, að þarna var hún nóttina út og daginn inn eins og stokkur eða steinn«. Prestur lét það gott heita og hét að bæta um fyrir hann. Sigmundur hrestist þá og segir: »Þá bið eg þig að lofa mér að vera líkmann að minni kæru Klovisu«. »Nei«, segir prestur, »það máttu ekki, minn dýri Drottinskarl, því það er á móti lögmálinu«. Þá stygðist Simbi og svaraði með þungum þykkjusvip um leið og hann fór út frá presti: »Há hefði Klovisu heitinni ekki þótt of lítið fyrir mig þó eg hefði fengið að ráða hennar síðasta viðskilnaði!«

Brokeyjar-Vigfús.

Svo hét annar skringilegur náungi, sem ávalt kom einn á báti á hverju vori, og stundum tvisvar, vestur í eyjarnar. Tók eg þeim karli ætíð tveim höndum eftir að eg komst til valda, sem búðarsveinn míns milda frænda, sem gjarnan lét mig hafa friar hendur við verzlun okkar. Vigfús þessi var einkar skritinn og fornlegur karl. Hann var þá gamall, og þó enn afarmenni að burðum, með hæstu mönnum og afar-beinastór, með hvítt hár og skegg og hvorttveggja tók á bringu. Hann var á fornum bol og mussufötum, hreinlegur mjög, en oftast berhöfðaður, en svo stórskorinn í andliti og heljarlegur allur í sjón, að börn og unglingar fældust hann, þótt allra manna væri spaklyndastur. Þegar hann hafði sett bát sinn og búið um hann, var hann vanur að setjast á stein, róa bakföllum og þylja bæn eða kaffa úr bibliunni. Var hann kallaður biblíufastasti maður á Breiðafirði. Sérstaklega unni hann og þuldi Jobsbók, og þar næst Sálma Davíðs, þá beztu, eða þá Prédikarans bók, ef honum gekk eitthvað mótdrægt. Þetta raus var hans matur og drykkur, og ræddi þess á

milli við okkur gárungana eða þáði hressingu. Aldrei sá eg þó þann gamla bergrisa drukkinn, því að hann þoldi eflaust á við Egil Skallagrímsson. Um breysti hans gengu ýmsar sögur. Hann átti víkurbát, eða áttróið far sterkt og vel við haldið, reri hann á því einn út undir Jökli, en leiðin úr Brokey út á Hjallasand eru 12—14 vikur sjávar. Vigfús beið sjaldan eftir byr eða leiði, heldur fór sinna ferða, þótt öðrum þætti ekki sjóveður. Þannig lágu menn eitt sinn kyrrir úti í Rífi heila viku, en snemma þeirrar viku sáu menn bát Vigfúsar og karl á, kominn inn á sund innar frá Brokey. Skömmu síðar kom hann siglandi heim í lendingu sína. Fögnuðu menn Fúsa og spurðu, hví hann hefði róið í því veðri lengra en hann hefði þurft. »Eg vildi ekki láta undan höfuðskepnunni,« svaraði hann, og dró seiminn eins og hans var vani. Í annað sinn kom hann heim úr veri, og er hann lenti voru honum sögð þau tíðindi, að hann væri orðinn faðir. Vigfús varð heldur fár við, gengur þó stillilega á fund barnsmóður sinnar og segir: »Heil og sæl, og sýn mér barnið.« Hún sýnir honum fyrst eitt barn og síðan annað, því að hún hafði alið tvíbura. Vigfús horfir þegjandi á börnin, og segir síðan: »Eg átti von á einu barni vænu, en ekki tveimur litlum.« —

Svo sagði Ólafur Þorbjörnsson, er þá var einn af mestu sjógörpum í Breiðafirði, að fáir tveir þyrftu að reyna róður móti Vigfúsi, hefði hann og nokkrum sinnum hjálpað honum og öðrum að ná landtöku, meðan hann var á bezta skeiði og reri með öðrum. En hversdagslega stilti hann afli sínu af hlífð við sig og félaga sína. Í elli hans leit svo út, sem handleggir hans, herðar og bak væri orðið alt skekt, hnýtt og skælt eftir átök og aflraunir, en minni hans og vitsmunir var með réttu lagi, svo að hann þótti mörgum hinn skemtilegasti, enda skemdi minna en bætti sérvizka hans og forneskjubragur.

Þriðji kunningi minn frá þeim dögum var líka úr Suðureyjum á Breiðafirði og hét

Arneyjar-Sveinn.

Hann var meinlaus, bláfátækur maður, en ratvís og áreiðanlegur sjómaður, er oft reri vestur um allan flóa á tvær árar undir heldri mönnum úr Stykkishólmi, er þeir voru að skjóta fugla eða áttu skyndierindi vestur til Flat-eyjar, og ef svo langt var farið, urðu þeir næturgestir. Var mér og mínum líkum ekki síður starsýnt á Arneyjar-Svein en Brokeyjar-Vigfús, og voru þeir þó gagnólikir. Sveinn var í sjón og búningi eins og fólk er flest, og með fullri greind í tali — utan vissra tiktúra og orðatiltækja, einkum ef hann átti tal við þá, er hann áleit að væri heldri menn. Þá tók hann æfinlega ofan, heilsaði djúpt og sagði: »höfðingi, höfðingi«, í öðru hverju orði. Og að einu leyti var vit hans eitthvað geggjáð — eins og einhver þrem-illinn hefði fallið milli þils og veggjar þegar hans heila-hjallur var reistur. Eða bjuggu þeir Sveinn þessi og Vigfús að reitum píitista-tímans, sem lifði víða hjá alþýðu fram á byrjun 19. aldar? Hvað sem um það er, var sá háttur þessa Sveins, að óðara er hann hafði fest bát sinn, gekk hann afsíðis og helzt upp á þúfu eða hól, tók ofan og brá hattkúf sínum fyrir andlitið, þó ekki mjög nærri-nefi sínu, og fór að prédika, engu líkara en prestur í stól. Skorti hann og sjaldan áheyrendur, því að börn og ungl-ingar læddust að hvaðanæva. Ekki vildi hann þó leyfa söfnuðinum nær sér en góðu hófi gegndi, og ef einhver tók fram í, færði hann sig í annan stað. - Ekki varð hon-um orðaskortur, enda var líkast því sem hann læsi upp úr bók — eða hatt sinn. Hann hafði heldur lágan róm, og það sem við heyrðum og ekki lenti í hattinum fanst okkur ekki vera stórum óáheyrilegra en sumar kirkju-kenningar. Sveinn var enginn oftrúar- eða ofsamaður. En margt hjákátlegt var haft eftir honum; t. d. að hann kvaðst elska meira blessunarorð Jesú en bölvíð hans Jóns (c: Víða-línspostillu). »Það orðfæri er of-tröllaukið fyrir Arneyjar-Svein.«

Fjórði einfeldningur var *Indriði* nokkur, gamall þjónn.

og aðstoðarkarl hjá hinum góðkunna lyfsala Jakobsen í Stykkishólmi. Um samveru þessa Indriða og húsbónda hans mætti semja einkennilega smásögu. Jakobsen var, eins og margir muna enn, einhver hinn mesti mannvinnur, enda hvers manns hugljúfi. Hélt hann opið hús (privat Klúbb) fyrir alla heldri menn í kaupstaðnum, er vildu, og þó aldrei fyrir lokuðum dyrum; var og lyfsölubúðin rúm, en húsrúm að öðru leyti lítil. Sá eg þar oftlega hinn öldurmannlega Melsteð amtmann, Árna Thorlacius, er af flestum leikmönnum hér á landi bar að fróðleik og höfðingsskap; þar mættu og synir Árna, Benedikt ródumeistari, sýslumaður, prestur og kaupmenn. Voru ýmist sett fram spilaborð ellegar — og það var oft — að menn sátu og ræddu. Allir betri menn af bændastétt fengu þar líka sæti. En sjófarendum var fylgt í útiskemmu og þar veittur hinn bezti beini. Var Jakobsen engum útlendum manni, sem eg hefi kynst, líkur að gestrisni og örlæti. Spilti því ekki bústýra hans, Md. Schiöth, kaupmannsekkja, valkvendi og skörungur. Er undarlegt, hve fátt hefir sést á prenti um lyfsalann Jakobsen og hans hús. En það er af Indriða að segja, að mönnum þótti undarlegt það dálæti, sem hann naut hjá húsbónda sínum, þótt trúr væri hann eins og gull; en bæði þótti hann vera vesalmenni, stírdur og afundinn og allmikill bögubósi í orðum. Hentum við spjátrungarnir oftlega gaman að honum. Einu sinni spurðum við — það var um miðjan vetur — tíðinda utan úr sveitunum. »Eg veit ekki, hvað þið kallið tíðindi, en hann Ólafur í Bár fór um daginn í hákarlalegu út á flóann og lá úti í tuttugu og fjóra sólarhringa berhentur.« Indriði bætti 20 við 4! Eitt vorið tæmdist Indriða arfur fyrir norðan. Skyldi hann því flytja norður alfari og setjast þar að sínu. En er leið á sumarið kemur karl aftur vestur, og biður og biður Jakobsen hágrátandi að taka sig aftur. Jakobsen tók Indriða með opnum örmum og setti alt húsið nær á enda til að fagna karlinum, enda skildu þeir ekki úr því meðan Indriði lifði. Brostu sumir að þessu, en þó dáðust allir að veglyndi og valmensku

Jakobsens. Hann kom fyrst hér til lands með konu sína, er þótti ljós í húsi; lék hún fyrst kvenna á pianó við Breiðafjörð. Eftir stutta sambúð misti Jakobsen konu sína og tregaði lengi; var mælt, að varla væri það óveður, að hann gengi ekki dags daglega að leiði hennar upp að Helgafelli — meir en mílu vegar; en hve lengi hann hélt þeirri venju, þori eg ekki að segja, því að það, sem eg um það heyrði, þykir mér ótrúlegt, en aldrei var hann síðan við konu kendur.

Fræknir menn.

Af formönnum og sjógörpum voru einkum fimm menn nafnkunnir í æsku minni. Voru það þeir Svefneyjaféðgar Eyólfur og Haflíði, Jóhannes Magnússon í Bjarneyjum, hinn beztu drengur og búþegn, Ólafur Þorbergsson, formaður Brynjólfs kaupmanns, en í syðri eyjunum þótti Gísli Gunnarsson einna fræknastur, og varð þó sá eini þessara manna, sem fórst með skipverjum sínum á sjó. Marga aðra mætti nefna, svo sem Árna Thorlacius, hinn fræknasta mann, og Ólaf úr Bár, er átti dóttur Odds Hjaltaíns, og síðar var borgari í Flatey; hann var manna mestur og sterkastur og svo harðfengur, að sagt var að aldrei væri svo hart sjóveður að hann setti upp vöttu. Hann var og manna skemtilegastur og valmenni að öllu. Enn má nefna niðja Eggerts gamla í Hergilsey og fleiri Víkur-formenn úr eyjum. Svo sagði Haflíði í Svefneyjum mér, að 40 vertíðir reri hann með föður sínum eða var formaður sjálfur, í Dritvík fyrir vestan Jökul; voru það 16 mílur frá inn-eyjum; sigldu þeir í verið um miðgou skeið, og dvöldu við róðra langt fram á vor. Fórst þeim jafnan vel, brást þeim og aldrei afli fyr en hinar síðustu vertíðir. Ekki héldu eyjamenn kyrru fyrir, heldur sigldu vestur fyrir Látrabjarg til steinblitsveiða; var þá lítil veiði eftir heima fyrir, nema í Bjarneyjum. Þar hélzt heilagfiskisveiði all-góð til 1860 eða nokkuru lengur. En í tíð forföður míns Eggerts í Hergilsey voru 40 bátar til

fiskiveiða vor hvert í Oddbjarnarskeri, 2 vikum utar en Flatey. —

Ýmsir menn í Breiðafirði höfðu viðurnefnið »hin n sterki«; sóttust helztu sóknarar að hafa með einn eða fleiri með því viðurnefni, en ekki nenni ég að nafngreina þá, enda voru þá, sem endrarnær, flestar afraunasögur ýktar; og nokkra kraftamenn þekti eg og gat fæsta þeirra kallað afreksmenn; hinn nafnkunna Gunnar sterka í Suð-ureyjum sá eg aldrei, ekki heldur Jónatan frá Skarði, er sýndi all-ríflegar afraunir Skúla sýslumanni og fékk laun fyrir. Átti hann að hafa borið í einu tvær rúgtunnur heim úr Skarðstöð. Þó fór enn þá meira orð af styrkleik Gunnars. Hann fórst úr hákarlalegu með Leenbach kaupmanni úr Stykkishólmi. Var almælt að illhveli hefði grandað skipi þeirra, því að veður var kyrt. Glimur æfðu Vestfirðingar lítið, en við skot og skutul voru sumir fimir með afbrigðum. Jakob Athanasíusson, norðlenzkur maður og ekki fyrirleitinn kendi mér helztu glímubrögð þegar eg var á Kvennabrekku; kom mér það að góðu liði þegar eg tók að þroskast í Flatey, og varð all-sprækur tuskari; lét eg þá oft landmenn, er þóttust vera kræfir, bisa með mér við tunnur og kassa; fór þeim það misjafnlega úr hendi og komu stundum ekki tunnu í lag, sem eg var orðinn leikinn í. Eins og títt er um unga verzlunarsveina, varð eg snar og skjótur við afgreiðslu og afraunir í smáum stíl, sem alþýðunni óx í augum og bar það út, að sá piltur væri ekki lambið að leika við. En hið sanna var, að mig skorti bæði afl og fimleik við marga, en munurinn lá í lagi og æfing. En þegar eg gekk til sláttar-iðna-
ar, sem eg ekki hafði tamið, reyndist eg miður en að meðallagi. En í snarleika stóð eg mig í betra lagi. Þegar eg var tæplega tvítugur, heimsótti eg foreldra mína, og skyldi heimta skuldir. Eg kom að sauðarétt föður míns, og vildi velja sauð; í því hóf sig hvítur sauður þre-
vetur á loft og stökk úr réttinni. »Þarna er Kollur kominn!« sögðu bræður mínir, »og nú nær honum enginn!« Eg snaraðist út á holtin á eftir sauðnum, náði honum

og bar inn í hús. Til þess snarræðis tók Magnús bróðir minn og kvaðst ekki hafa leikið eftir, en hann var mér miklu sterkari¹⁾. Kom þar fram, að alt vill lagið hafa.

En nú vil eg nefna mann, sem með fylsta sanni mátti kallast afreksmaður sakir frækneiks. Hann hét Matthías Ásgeirsson (prófasts í Holti í Önundarfirði). Þeir bræður, hann og séra Jón, síðast prestur á Hrafnseyri, svo og hans synir, voru allir orðlagðir fimleika og íþróttamenn. Hygg eg þó að nafni minn, er eg nefndi, bæri af þeim öllum. Hann dvaldi með konu sinni (systur Þóreyjar á Reykhólum móður Jóns Thoroddsens) nokkur ár í Flatey; var hann þá nærri sextugur að aldri, en sást lítt á honum, því hann líktist miðaldra manni, enda var glaðlyndur, léttur og lipur í fasi og hinn skemtilegasti félagi. Hann var gildur meðalmaður, gildur undir hönd og allur hinn vasklegasti. Hann var æfður vöðuskutlari og talinn flestum fimari við veiðiskap og sjósóknir, hafði og lagt marga á gjörva hönd, verið skútuformaður, skrifari, hreppstjóri o. fl. En ölkær var nafni, og fór þó vel með. Gaf eg honum oft hressingu, því eg var þá einráður við verzlun okkar að mestu. Við nafnar vorum frændur og var mjög kært milli okkar, og mér, en engum öðrum. sagði hann frá æfintýrum sínum. Vissi eg ekki betur en hann segði hnífrétt frá, því bæði var hann dulur um að tala um sjálfan sig, enda frétti eg sumar sögur hans vestur á Ísafirði af manni, frænda okkar beggja, er Andrés hét og bjó í Dýrafirði. En helztu sögur nafna voru frá jaktalífi hans þar vestra, og skal eg segja frá einni, sem þeim M. og Andrési sagðist nákvæmlega eins frá, en þó læt eg nafna minn segja frá:

»Við höfðum lent saman eitthvað 24 (minnir mig) um borð hjá Hermanninum nokkrum syni spekulants G . . . á höfninni fyrir framan Tangann á Ísafirði; lágu þar alls 5 skip og skútur, en ekki voru þar aðrir Íslendingar en við

¹⁾ Um karlmensku Magnúsar er þess getið, að eitt sinn í Bolungarvík lagði hann 40 menn að velli í einni lotu í bændaglímu.

Andrés, og sá þriðji, lítilsigldur maður, sem Einar hét. Helzti maðurinn var þessi Hermann, vasklegur maður, kátur og ófyrirleitinn. Svo var stýrimaður einn, sem lét mikið til sín taka, mikill og sterklegur og hændist mjög að Andrési. En er heldur tók að hrifa áfengið, fór gamanið heldur að grána. Tók þá Hermann lítinn kút, holti brennivíni á botninn, bauð nafna og sagði: »Tigdu tað, þölvaði skrattinn!« og skvetti framan í nafna. Nafni sló hann óðara flatan, og í sama bili eru þeir stóri stýrimaðurinn og Andrés komnir í handalögmál. Verður nú harður aðgangur og ekki langur, áður en nafni slær stórhleranum af opinu á þilfarinu. Korn mikið var niðri í skipinu. »Réttu að strákana Drési«, kallaði nafni, og að vörmu spori 20 komnir niður í kornið, og hlerinn kominn yfir. En nú vantaði Einar. Honum héldu þá 4 slánar fram á skipinu og höfðu hann utanborðs og létu halda í taug. Þeir félagar afgreiddu skjótlega hina fjóra, enda var þá farið að síga í Andrés, er örsjaldan reiddist, en bæri svo við, þótti koma að honum æði eða berserksgangur. Svo sagði nafni, og nú draga þeir Einar aftur með skipinu og komst hann upp í bát þeirra. En þá eru hinir dönsku og norsku óðum að koma upp úr þrisund sinni, lestinni, og harðnaði þá bardaginn, hrukku þeir félagar niður í bátana, sem margir lágu við kaupskipið. Og þar glímdu þeir Andrés og stýrimaðurinn sterki, og hömuðust báðir. En að lokum hóf Andrés hinn á loft og slöngvaði honum á kaf. En á meðan áttust þeir nafni og Hermann við; spenti hann í fyrstu greipar um háls nafna, og kvaðst nafni aldrei hafa þolað verra »steinbítstak«. En er hann gat losað það tak, sendi nafni kappann úr bátnum og lá hann í þeirra eigin, er hann fór frá skipinu, á grúfu og hreifði hvorki legg né lið, og þá fyrst náði hann festi bátsins. Skipaði Andrési að hætta og leggja frá, en reri sjálfur á tvær árar, því Einar var óvígur. En Andrés var þá svo óður að hann gegndi ekki, heldur beit í þóftuna og stykki úr sem tennur tóku. Frá því atriði gleymdi hann að segja mér, þá er hann sagði mér söguna meir en

30 árum seinna. Skamt var til lands og æpti þá Andrés: »Upp í grjótið! Upp í grjótið! Launum kjaftshöggin!« En nafni hló, og kvað nóg aðgert. Hinir eltu á tveim bátum og reru inn fyrir Tanga; skildi þar með þeim. Varð og enginn eftirleikur. En ýmsir hinna dönsku sýndu kaun og plástra, og forðuðust þá nafna, ef þeir hittu þá faliðaðir.

Um fræknleik nafna staðfesti Andrés sögu sjálfs hans um íþróttir hans, að ganga á árum ef jafnt var róið, svo og hve hæfinn hann var við skutul og byssu, og enn það, að svo var hann fljótur á handahlaupi, að enginn hestur náði honum, því einhverju sinni sinnaðist þeim í kaupstað á Ísafirði nafna og Simoni bónda á Dynjanda, er ekki þoldi glens nafna, en var stórbokki og heldur harðlyndur, en ramur að afli. Símon reið bráðfljótum hesti og reið á eftir nafna á leið út í Hnífsdal. Nafni var gangandi og skóbroddalaus, en yfir allar skriður lágu sveillbunkar. Símon hleypti yfir sveillin sem aftók og dró skjótt saman. Tók þá nafni til íþróttar sinnar, og hentist á handahlaupi unz sveillunum lauk og beið svo Símonar, sem óðara rann á nafna og mælti: »Afi hefir þú ekki við mig, fanturinn!« »Þá er að reyna það, Simbi«, svaraði hinn. Og eftir stutta lotu gafst Símon upp, og kvaðst vilja sættast. »Sæktu þá tösku þína og drekkum sátta-bíkar«, svaraði nafni. Svo sagði hann mér, að upp frá því reyndist Símon honum hinn bezti karl. Enn var það, að útlendur »spekúlant«, er mig minnir að hétu Sonne, fekk snoppung hjá nafna úti á skipinu. Nafni hljóp í bát sinn, en hinn greip hlaðna(?) byssu, en nafni varð fyrri til bragðs og sendi skutulrá sína fyrir brjóst kaupmanni, svo hann féll í óvit og lá veikur. »Það hefi eg hepnastur verið, að verða ekki mannsbani«, sagði Matti. Í Flatey var nafni hinn gæfasti maður, en þó var það tvisvar sinnum, að við dáðumst að fræknleik hans. Eitt sinn sigldum vér óskabyr inn flóann úr legu og vorum allkátir; stórsjór var nokkur og valt skipið í undanhaldinu eins og krákuskel væri. Þá segir nafni: »Hver ykkar vill fara fram á hnífílinn.

og standa á höfði?» »Það gerir enginn okkar, og varla þú sjálfur«, svaraði einhver. En í sama bili stendur nafni á hníflinum hlējandi, og enginn okkar sá að hann héldi sér með höndunum. Gekk það bragð fram af okkur. — Einu sinni stofnuðum við hinir yngri menn til leiks, með reipi, hlaup og tusk. Eg fékk nafna til að koma og horfa á, og hvíslaði að honum, að Jón formaður væri fyrir tuskinu og væri það haft eftir honum, að í tuski þyrði hann að mæta gamla Matta. Nafni kom í leikinn og glotti að venju, en sagðist eins og Grettir vera hættur að rjá. Jón formaður, er eitthvað kunni af brögðum, tekur tökum á M., en hann hló við og lofaði Jóni að bolast um stund. En alt í einu liggur Jón langt frá á milli þúfna, án þess við sæjum hvað falli hans olli. Nafni varð nú vel kátur, og sagði: »Þið yngið upp strákar. Fáid mér prik eða rá«. Eg sótti létta stöng og fékk honum. Hann hóf upp stöngina og hæfði þúfu út í vellinum og undruðumst við hvað langt hann skaut. »Hæfðirðu nafni vissa þúfu«, spurði eg. »Það veit eg nú ekki, en hefði eg hitt selshaus, nafni, hefði það þótt líklegra«. Loks hljóp hann handahlaup dálitinn sprett fyrir bón Jóns formanns. Er það mikil íþrótt og vandlærð, og sagði nafni, að þá list kynni enginn sextugur maður. Hefi eg ekki séð þann leik, hvorki áður né síðan.

Fleiri smásögur um nafna minn, frænda og vin gæti eg enn sagt, en læt hér staðar numið.

Matthías Jochumsson.

Ísarn-Grimur.

Norður á bjartar lit eg lendur,
liður af fjöllum dökkvahjúpur;
Ísarn-Grimur úti stendur,
opinn gnæfir Lómagnúpur.

Stór á vöxt og styrkur er hann;
stakkur hans ekki mönnum hæfir;
axlir jafnhátt eggjum ber hann,
yfir Björninn höfuðið gnæfir.

Styðst hann fast á stafinn mikla,
starir hvast á fljót og voga;
undir brimsjó brúnahnykla
brenna glæður fornra loga.

Hrynur undan hjálmi köldum
hárið þykt, sem blærinn greiðir;
skeggið sítt í silfuröldum
sig um fangið mikla breiðir.

Oft er hann hljóður. — En hann kallar
upp úr þögn svo skjálfa hliðar,
Síðu-bygðir yfir allar
óma hans köll, og langt um víðar.

Einstök nöfn hann að eins nefnir,
eftir kölin löngum þegir.
Allir þeir, sem að sér stefnir
Ísarn-Grimur, þeir eru — feigir.

Kallar hann að eins Íslendinga,
og hann sína heimtir alla,
hvort þeir inn við almenninga
eða suður á Clontarf falla.

Kallar hann menn frá brimsins brotum,
breiðum, úfnum jökulmóðum,
sjúkrahúsum, höllum, kotum,
hríðarbyljum, vígaslóðum.

Klökkviblandin köll hans dundu
kröpp og þung um landið auða,
þegar afbragðs-ættir hrundu
eins og strá í Svarta-dauða.

Marga fríða og frækna nefndi 'ann
fjöll þegar sprungu' og hraunin runnu.
Einna flestum að sér stefndi 'ann
áður en Skaftár-gígar brunnu.

Miklum höllum hamrar leyna,
helgra vætta er það staður;
stendur fyrir boði og beina
Bárður karlinn landnámsmaður.

Sett er bergið sigurmerkjum, —
söx eru þar og axir reknar,
Gotum, Söxum, Grikkjum, Serkjum
gersemar slíkar frá eru teknar.

Situr þar um salakynni
Svínfellinga-bálkurinn allur.
Goðar Freys þar eru inni.
Öndvegið prýðir Síðu-Hallur.

Helgan eld í hugum kyndir
 Hávamála-spekin góða.
 Voldugar skreyta veggi myndir
 Völuspár og Sólarljóða.

Þrungen trúar, þróttar, vonar
 þýtur, sem í laufi kylja,
 harpa Eysteins Ásgrímssonar — —
 Undraslagurinn fagri: — Lilja.

Mun eitt sætið mér þar bera?
 Mun eg þar eiga nokkra vini?
 Hjá honum Jóni vildi eg vera,
 valinkunna Steingrímssyni.

Norður á bjartar lít eg lendur,
 ljómar morgun bygðir allar.
 Ísarn-Grímur úti stendur. —
 Ekki samt til mín hann kallar.

G. M.

Vonin.

Hún kemur til mín vonin og kyssir mig á vanga
 eg finn mér hrynja hlýtt um kinn
 hárið mjúka, langa,
 hún segist ætla' að gefa mér góz og garða nóg
 og gullið alt og demantana í vonalandsins skóg.

Þá vil eg henni þrýsta svo þýtt að mínu hjarta,
 en hún er óðar hlaupin burt
 með hárið síða, bjarta,
 og ekkert vill hún gefa mér þótt eigi hún gullið nóg,
 utan sáru þyrnana í vonalandsins skóg.

Guðm. G. Hagalín.

Stjórnarbyltingin mikla í Rússlandi.

I. Aðdragandi og orsakir byltingarinnar.

Stjórnarbylting sú, er átti sér stað í Rússlandi fyrri hluta marzmánaðar síðast liðinn vetur, er vafalaust enn sem komið er merkilegasta og mikilvægasta afleiðing heimsstyrjaldarinnar miklu. En rót sína á byltingin fyrst og fremst að rekja til frelsishugsjóna þeirra, er stjórnarbyltingin mikla á Frakklandi, styrjaldir Napoleons og stjórnarbyltingarnar 1848 vöktu hjá Rússum eins og hjá öðrum þjóðum Evrópu, og hér verður ekki nánar getið. Í annan stað hefir harðstjórn sú og óstjórn, sem um langan aldur hefir drotnað í Rússlandi, og hins vegar byltingarhugur og frelsisbarátta rússneskra frelsisgarpa glætt og magnað uppreisnarandann með þjóðinni. Loks hafa breytingar þær, sem á síðari árum hafa orðið á atvinnubrögðum og þjóðfélagshögum Rússa, og síðast en ekki sízt hrakfarir þeirra í heimsstyrjöldinni og dýrtið og hallæri, sem af þeim leiddi, komið byltingunni af stað. Skal því næst vikið að þeim mönnum og viðburðum, er mestu máli skiftir, þegar um aðdraganda byltingarinnar er að ræða. Að því búnu skal skýrt frá byltingunni sjálfri.

Eftir ófarir Rússa í Krím-styrjöldinni 1854—1856 tóku frelsishreyfingar og megn óánægja með stjórnarfarið að gera vart við sig á Rússlandi, er á stjórnárum Nikulásar keisara 1. hafði verið höfuðból alls afturhalds og harðstjórnar hér í álfi. Einhver „fyrsti postuli“ þessarar nýju stefnu var *Alexander Herzen*. Hann var eldheitur frelsisvinur og ákafur frihyggjumaður. Herzen hneigðist snemma

að kenningum jafnaðarmanna, en var hins vegar gagn-tekinn af ást til ættlands síns og þjóðar og af miklum metnaði fyrir hennar hönd.

Alexander Herzen var fæddur í Moskva 1812. Faðir hans var rússneskur fursti, en móðirin þýzk. Þegar Alexander hafði lokið námi sínu, var hann ásamt nokkrum félögum sínum tekinn höndum og hafður í haldi, af því að hann var grunaður um að hafa gengið í félag nokkurt, er var kent við frakkneska jafnaðarmanninn og mannvinninn *Saint-Simon*. Í haldinu gat hann sér svo góðan orðstír fyrir gáfur og dagnað í þjónustu ríkisins, að hann fékk um síðir góða stöðu í Pétursborg. Sakir bersögli sinnar varð hann nokkru síðar að fara í útlegð til Nowgorod. Eftir lát föður síns fluttist hann til útlanda og settist þar að. Hann dvaldi lengstum í London og gaf þar út ýmsa merka rússneska rithöfunda og ýmisleg rit og ritgerðir um stjórnámál. Þar gaf hann og út hið merka tímarit „*Kolokol*“ („Klukkan“), er var í mörg ár þrátt fyrir bann og ritvörzlu eitthvert áhrifamesta og fjöllesnasta tímarit í Rússlandi, og hefir átt mestan og beztan þátt í að skapa almenningssálit í helztu borgum þess. Jafnvel Alexander keisari 2. las tímarit þetta. Er svo sagt, að einu sinni hafði þar staðið grein, er fletti ofan af fjárvikum nokkurra meiri háttar rússneskra embættismanna. Þeir kunnu því illa, að greinin kæmi keisara fyrir sjónir og létu prenta tölu-blaðið upp án hennar og færa keisara. Herzen komst að því, bregður við og sendir keisara hið rétta eintak án nokkurar úrfellingar.

Herzen fann að ávirðingum stjórnarinnar og krafðist þess, að bændaánauðin og ritvarzlan væri afnumin og dómgæzlan væri bætt frá rótum. Almenningsálitið tók í sama strenginn, og nú hófust um nokkurra ára bil mikils-verðar umbætur í Rússlandi. Raunar greindust umbótamenn í tvo flokka, hina svo nefndu „*slavofila*“, sem unnu af alhug slafnesku þjóðerni og trúðu á köllun þess og siðmenningarafli; í hinum flokknnum voru þeir sem höfðu mætur á frjálsri framþróun Vesturlandþjóða og vildu semja sig eftir henni. Í fyrstu áttu flokkar þessir samleið, þótt þeir gætu ekki fylgst að til frambúðar.

Alexander keisari 2. (1855—1881), var góðviljaður maður og gáfaður. Hann sá að margt fór afлага í ríkinu og þurfti bráðra viðgerða. Hann kvaddi nýja menn sér til ráðaneytis og linaði ritvörzluna. Mest var þó um það vert, að hann fastréð að afnema bændaánauðina og birti þessa fyrirætlun sína árið eftir að

hann kom til ríkis. Margar nefndir voru skipaðar til þess að ræða og undirbúa málið sem bezt. Urðu menn skjótt á eitt sáttir um það, að ánaudugir bændur og hjúættu heimtingu á að verða frjálsir menn. Aftur á móti var það miklum erfiðleikum bundið að komast að ákveðinni niðurstöðu um, hvort bændur ætti einnig að fá eignarumráð yfir jörðum sínum, og með hverju móti. — Loks batt opið bréf keisara 1861 enda á málið. Þar var svo fyrir mælt, að áttahagafjöturinn skyldi með öllu afnuminn og kaup og sala á ánaudugum mönnum. Valdstjórn stóreignamanna yfir bændum var og úr lögum numin. Um eignarumráðin var svo fyrir mælt í bréfinu, að hús þau eða kofar, er bændur byggi í, skyldu verða eign þeirra. Aftur á móti skyldu akrar þeir, er bændur yrktu, vera að sumu leyti eign stóreignamanna, eins og þeir höfðu verið til þess tíma, en að sumu leyti skyldu þeir með sérstökum kaupmálum geta orðið bændaeign. Ríkinu var gert skylt að styrkja bændur til þessara kaupa með hagfeldum lánum. En jarðirnar skyldu þó ekki seldar einstöku bændum, heldur sveitafélaginu (*mir*), en það skifti þeim aftur milli bændanna, og gat jafnvel fengið þeim þær til eignar með sérstökum skilyrðum. Þó hér væri stigið stórmerkilegt spor til viðreisnar bændastétt Rússlands, kunnu bændur engan veginn að meta það sem skyldi, enda var það allmiklum örðugleikum bundið að koma því í framkvæmd. Bændur höfðu gert sér von um að eignast jarðir þær, er þeir yrktu, og þótti því nýmælið fara alt of skamt. Auk þess voru þeir þekkingarsnauðir og fáfróðir og höfðu ekki rænu eða vit á að taka upp nýjar yrkingaraðferðir. Loks veitti þeim örðugt að greiða stóreignamönnum og ríkinu fé það, sem þeir áttu að inna af hendi.

Alexander 2. gerði ýmsar aðrar mikilsverðar umbætur í ríki sínu. Hann gerbreytti dómgæzlunni og tók upp kviðdóma og friðdómara, málaflutning í heyranda hljóði og málskot til æðri rétta, ennfremur óafsetjanlega dómara og talsmenn handa hinum kærðu. Þótt dómarar þægi

mútur eins og fyr, voru sakborningar þó nokkru öruggari fyrir gerræði þeirra en áður. Hin æðri fræðsla var bætt og ritvarzlan línud. Loks voru sett lög um héraðsstjórn og sett á stofn umdæmaráð, »semstvo«, og önnur ráð, sem voru skör lægri. Var þetta fyrsti visirinn til dálitillar sjálfstjórnar í nokkrum sveita- og umdæmamálum. Hafa umdæmaráðin ekki átt lítinn þátt í því að bæta samgöngur, læknaskipun og lýðfræðslu í landinu.

Alexander 2. gerði sér einnig far um að bæta kjör Finna og Pólverja. Árið 1863 var þing Finna kvatt til setu í fyrsta skiftið síðan landið kom 1809 undir yfirráð Rússa, og finskan var í öllum innanlandsmálum gerð jafnstæð sænskunni. Á Póllandi þótti þjóðfrelismönnum lítið koma til umbóta keisara, og þegar þjóðernisstefnan um og eftir 1859 tók að ryðja sér til rúms í Evrópu, vildu þeir nota tækifærið til að ná fullu sjálfstæði. Þegar undirróðurinn mót Rússum fór óðum vaxandi og ýmsir málsmetandi Pólverjar þóttust eiga vísa liðveizlu hjá Napoleon 3., bjóst stjórnin til þess að nota liðsútboð sem yfirvarp til að handtaka marga unga menn, er voru framarlega í flokki andstæðinga hennar, en þá hófu Pólverjar uppreisn í ársbyrjun 1863. Rússar bældu uppreisnina niður með harðri hendi, eins og kunnugt er, og sviftu landsmenn þeim litlu réttarbótum, er þeir höfðu hlotið, og ofsóttu tungu þeirra og kirkju.

En uppreisnin varð ekki Pólverjum einum til ófarnaðar, heldur einnig Rússum sjálfum. Nú urðu »slavofilar« undir forustu *Katkov's* ritstjóra ekki að eins miklir óvinir Pólverja, heldur fráhverfir öllum frjálslegum umbótum á stjórnarfarinu. Þeir kváðu einvaldsfyrirkomulagið vera bezt fallið til þess að halda ríkinu saman og koma einnig bezt heim við sögu og reynslu þjóðarinnar.

Alexander keisari heyktist á umbótunum, er hann hafði borið lítið annað úr bytum fyrir en óþökk og erfiðleika, og leitaði nú trausts hjá »slavofílum« og gerðist afturhaldssamur í stjórn sinni. Breyttist nú margt á verra veg: umboðsstjórnin fór aftur að taka fram fyrir hend-

urnar á dómstólunum, meðal annars með því að gera menn, er stjórnin hafði illan augastað á fyrir undirróður og æsingar útlaga til Sibíriu. Stjórnin jók einnig eftirlitið með háskólunum og skerti kenslufrelsi þeirra. Þessar ráðstafanir mæltust illa fyrir hjá mörgum ungum mentamönnum og komu, ásamt annari andlegri hreyfingu, er þegar skal getið, af stað miklum viðsjám, róstum og tilræðum, þegar fram liðu stundir.

Eftir Krim-styrjöldina þótti mörgum mönnum í Rússlandi hin forna þjóðfélagsskipun vera komin á fallanda fót og af henni væri einkis góðs að vænta fyrir þjóðina. En þá hófst einmitt með nokkrum yngri mentamönnum stefna sú, er *Turgenjew* skáld gaf nafnið »*nihilismi*«, en fylgismenn hennar hafa verið kallaðir »*nihilistar*«. Þeir voru hugfangnir af raunspeki og efnishyggjukenningu Vesturlanda, eins og þær komu þeim fyrir sjónir í heimspeki, sögu og náttúruvísindum, og þóttust á hinn bóginn sannfærðir um, að rússneska þjóðin ætti eftir að vinna mikið og fagurt starf í þjónustu siðmenningarinnar. Nihilistar þráðu nýja þegnfélagsskipun, þar sem guðsafneitun hefði bygt út trú og kirkju, og siðgæðishugsjónir þær, er höfðu hingað til verið drotnandi meðal manna, væri gerbreyttar, og það væri alment viðurkent, að hver maður ætti að njóta fulls frelsis til þess að glæða alla hæfileika sína og ná sem mestri fullkomnun. Annars lék nihilistum fyrst í stað einkum hugur á að bæta kjör og auka réttindi kvenna og losa bændur og verkamenn við hégiljur og hleypidóma með því að kenna þeim ýmis nytsem fræði, en stjórnmal og breytingar á stjórnlögunum létu þeir fyrst framan af litið til sín taka. Þeir voru yfirleitt ósérplægirnir menn og hreinskilnir, en vanstiltir og hrokafullir og áttu því ekki miklum vinsældum að fagna hjá öllum þorra frjálslyndra manna, er höfðu ímugust á öfgum þeirra. Ríkinu virtist því ekki vera nein sérleg hætta búin af starfsemi þeirra, og það því síður sem sumir mestu atkvæðamenn frjálslynda flokksins, svo sem Alexander Herzen og Turgenjew, voru þeim andvíg-

ir. En afturhaldsstjórnin beitti nihilista mikilli harðýðgi í stað þess að láta þá að mestu leyti afskiftalaus, og gerði þá með því móti, er fram liðu stundir, að heipt-úðugum samsærismönnum, er svífust einkis, þegar því var að skifta. Árið 1866 veittu menn úr þeirra flokki keisara tilræði. Stjórnin lét reiði sína bitna á blöðunum, lærðu skólunum og háskólunum, er töldust höfuðból nihilistahreyfingarinnar, enda tókst henni og að ráða niðurlögum þeirra um stundarsakir.

Margir rússneskir mentamenn og konur, er sárgramdist ástæðurnar heima fyrir, tóku, þegar hér var komið, að iðka nám við háskóla í Vesturlöndum og Mið-Evrópu, einkum við háskólann í Zürich í Sviss. Þar urðu þau fyrir töluverðum áhrifum ýmissa ákafra jafnaðarmanna og stjórnleysingja, er höfðu sig mjög í frammi þessi ár og áttu meðal annars mikinn þátt í hinni svonefndu »kommunarda«-uppreisn í París vorið 1871. Nú tóku rússneskir nihilistar, sem höfðu hingað til staðið lítt í stórræðum, að hneigjast til ofbeldisverka og byltinga að dæmi útlendra og innlendra byltingapostula; gengust þeir byltingargarparnir *Michael Bakunin* og *Lavron* mest fyrir því að beina löndum sínum inn á þá braut. Bakunin var meira eða minna riðinn við margar byltingar, er áttu sér stað hér í álfu fyrir og um miðja nítjándu öld. Hann stofnaði með *Karl Marx*, hinum nafekunna þýzka höfund jafnaðarmenskunnar, félagsskap þann, er »*Internationale*« nefndist. Sakir öfga og ofsa Bakunins skildu þó brátt vegir þeirra Marx. Síðustu æfiár sín starfaði Bakunin af miklu kappi að því að gera kenningar stjórnleysingjaskunnar áættjörðu sinni. Hann er holdtekja rússnesks byltingarhugar.

Þótt nihilistar færu misjafnlega langt, voru þeir samt allflestir á eitt sáttir um það, að ungir mentamenn og konur ætti að samlaðast alþýðu, fræða hana og starfa að útbreiðslu jafnaðarstefnunnar meðal hennar. Að hugur fylgdi þar máli, má marka af því, að margt manna gekst með eldlegum áhuga undir þetta starf og í þeirra tölu.

voru menn og konur, sem voru af tignustu höfðingjaættum og töldust til æðstu stétta þjóðfélagsins. Stjórnin greiddi óviljandi fyrir þessum æsingamönnum og kenningum þeirra með því að láta það boð út ganga milli 1870 og 1880, að allir rússneskir nemendur skyldu hverfa aftur heim til Rússlands. Stjórnarráðstöfun þessi var upphaf ákafra ofsókna á hendur nihilistum. Þeir stofnuðu hinsvegar til samsæra í því skyni að kollvarpa einveldinu. Þótt þeir legðu óspart fé, sæmd og fjör í sölurnar, bar viðleitni þeirra að svo komnu lítinn árangur: allur almenningur skildi ekki, hvað menn þessir voru að fara, og gaf þeim lítinn gaum.

En þá urðu afleiðingar styrjaldarinnar milli Rússa og Tyrkja og vonbrigði þau, er Berlínarfundurinn 1878 varð æðri sem lægri á Rússlandi, til þess að ala á óánægjunni heima fyrir og glæða frelsisþrá manna og byltingarhug. Þótt Rússar bæri hærra hlut í styrjöldinni, leiddi hún samt áþreifanlega í ljós, að umboðsstjórnin hafði breytt lítið til batnaðar síðan Krím-stríðinu lauk, og embættismannastéttin varð ber að margvislegum fjáðrætti og megnri siðspilling. Óx frjálslyndum mönnum við það hugur og dugur. Ýmis undæmaráð dirfðust jafnvel að senda keisara bænarskra um stjórnarbót, en um sama leyti sýndu nihilistar honum enn banatilræði. Afturhaldsstjórnin gerðist nú enn harðráðari en áður og lét höfða mál gegn fjölmörgum mönnum og færa þá í fangelsi, en þar voru þeir sumir hverir beittir miskunarlausri harðýðgi. Þá var það, að rússneskur kvenstúdent, *Vera Sassulitch*, skaut með marghleypu á Trepow lögreglustjóra í Pjetursborg, af því að hann hafði látið hýða fanga þvert ofan í lög. Síðan var höfðað mál á móti henni fyrir tilræðið, en kviðdómurinn sýknaði hana. Fanst mörgum mentuðum mönnum mikið koma til djörfungar og varnar Veru og annara nihilista fyrir kviðdómunum. Jafnvel Turgenjew, sem var annars enginn vinur nihilista, hefir í kvæði einu í óbundnu máli, sem nefnist „Á þröskuldinum“, vegsamað hugsjónatrúfesti þeirra:

„Jeg kem auga á mikið stórhýsi, mjóar dyr á múrveggnum eru galopnar, fyrir innan þær tekur við niðamyrkur. Á þröskuldinum stendur ung stúlka . . . rússnesk stúlka. Drangaleg rödd skýrir henni frá skelfingum þeim og hættum, er bíði hennar fyrir innan þröskuldinn, en hún svarar: „Eg veit það . . . eg er viðbúin“.

„Ertu líka við því búin að drýgja — glæp?“ Hún hneigir höfðið: „Líka við því“. — „Veistu, að þú getur týnt trú þinni og komist að raun um, að þér hefir skjátlást og þú hefir til einkis lagt líf þitt í sölurnar?“ „Það veit eg líka. En samt sem áður ætla eg inn“.

„Flón!“ hvæsti einhver fyrir aftan hana.

„Helga mær!“ kvað við einhversstaðar upp í loftinu.

Nú fóru hinir svæsnustu nihilistar, er vér köllum byltingamenn, að láta miklu meira til sín taka en áður. Varð stefna þeirra því næst ofan á um langt skeið, þótt þeir væru fálíðaðir. Þeir vildu skjóta stjórnendum skelk í bringu með illræðisverkum og morðvígum og þröngva þeim til þess að verða við þeim kröfum byltingamanna, að einvaldsstjórnin yrði afnumin og tekin upp þingbundin stjórnarskipun. Framkvæmdarnefnd, er nefndist „Þjóðviljinn“ hafði á hendi forustu þessara samsærismanna og hryðjumanna. Hún annaðist um allan undirbúning tilræðanna, kvað upp dauðadóma og hélt samsærismönnum til að fullnægja þeim. Árin 1878—81 rak hvert tilræðið og morðvigið annað, er nefnd þessi lét vinna. Stundum birti hún all löngu áður dauðadóma þá, er hún kvað upp yfir mönnum, er höfðu svikið byltingamenn í trygðum, og ýmsum æðstu embættsmönnum ríkisins, er hún þóttist eiga sökótt við. Stjórnin lét hart mæta hörðu. Hún lét hermannadóma, sem voru henni miklu auðsveipnari en kviðdómarnir, dæma byltingarmenn, og þeir voru svo þúsunum skifti dæmdir í útlegð til Síberíu og annara fjarlæggra ríkishluta eða til lífláts. Loks sneru byltingamenn reiði sinni á keisara, og hryðjuverkanefndin lýsti yfir því, að hann hefði verið dæmdur til dauða. Síðan gaf hún út aðra yfirlýsingu þess efnis, að hann mundi fá að halda lífi, ef hann gæfi þjóðinni frjálsa stjórnarskipun. Á nokkurra mánaða fresti gerðu byltingamenn þar næst þrjár

árangurslausar tilraunir til þess að ráða keisarann af dögum.

Alexander keisari 2. fól árið 1880 *Loris Melikow* hershöfðingja einskonar alræðismannsvald. Hann bældi tilræði byltingarmanna niður með harðri hendi, en sá þó, að óhjákvæmilegt mundi vera að skerða einvaldsstjórnina eitt-hvað til þess að friða þjóðina og til þess að geta notið aðstoðar hennar í viðureigninni við byltingamenn. Fyrir fortölur Melikows félst keisari á að setja ráðgjafarþing í Rússlandi, er skyldi kosið sumpart af umdæmaráðum og borgarráðum (*duma*), sumpart af keisara. Sama daginn sem hann bauð að birta frumvarpið í blaði stjórnarinnar, ók hann út til þess að vera viðstaddur við herskoðun. Var þá sprengikúlu varpað að vagni hans. Hann muldist og margt manna beið bana eða særðist, en keisara sakaði ekki. Hann mælti: „Látið mig líta á hina særðu“. En í sama vetfangi var annari sprengikúlu kastað að fótum hans; hún sprakk, og reið keisara og ýmsum öðrum mönnum að fullu 13. marz 1881.

Æfi Alexanders 2. lauk, eins og nú var sagt, er hann var í þann veg að gefa Rússum vísi til stjórnskipunar-laga. Víg hans var til mikillar ógæfu fyrir land og lýð.

Alexander 3. (1881—1894) sonur hans var vitgrannur maður og fáfróður, heldur einþykkur, en laut þó tíðum áhrifum sér fastlyndari manna. Hann stakk frumvarpi föður síns undir stól og gat þess í ávarpi sínu til þjóðarinnar, að sér væri skylt „að treysta og halda uppi einveldi því, er hann hefði þegið af guði.“ *Loris Melikow* fór nú frá, en ákveðnir apturhaldsmenn og einvalds-sinnar tóku við stjórninni og náðu brátt föstum tökum á keisara. Þeir neyttu allra bragða til þess að reisa rönd við byltingamönnum, enda tókst þeim um stundarsakir að sundra félageskap þeirra og afstýra illræðisverkum. En jafnframt hófst hin ríkasta og háskalegasta einvalds- og afturhaldsstefna, er tók sér fyrir hendur að samþýða keisaraveldið og grísk- katólsku

kirkjuna og þröngva með odd og egg ráði þeirra þjóða og þjóðflokka í ríkinu er voru hvorki Rússar að þjóðerni né töldust til hinnar sannhelgu grísk-kapólsku ríkiskirkju. Bæði Pólverjar, Finnar, þjóðirnar í Eystrasaltslöndunum og þó einkum Gyðingar og nokkrir grísk-kapólskir sértrúarflokkar fengu að kenna á hinni nýju stefnu, eins og síðar skal vikið að. Einhver helzti forkólfur hennar var *Pobjedonostzew*, er í 25 ár var formaður hinnar helgu „synodu“, en svo kallast nefnd skipuð æðstu höfðingjum rússnesku kirkjunnar; hefir hún æðsta vald í öllum málum hennar undir forræði keisara. Skal hér sagt lítið eitt frá þessum einkennilega manni og skoðunum hans.

Pobjedonostzew hafði verið kennari Alexanders 3. og brædra hans. Hafði hann á þá mikil áhrif og héldust þau við, er þeir voru orðnir fullorðnir. *Pobjedonostzew* var stórvitur maður og hámentaður á flestum sviðum, þekkmikill með afburðum og kunni hvorki að hræðast menn né mótblástur. Hann hafði allnáin kynni af menning og bókmentum Vesturevrópuþjóða, en fyrirleit þær. Hann kvað heill ríkisins undir því komna, að náð samband og samvinna væri milli ríkis og kirkju. Þjóðfélaginu væri einu sinni svo farið, að þar þyrfti að vera eitthvert vald er allir lyti möglunarlaust, og styrkti hinsvegar einstaklinginn í baráttunni við sínar holdlega fýsnir; en þessi barátta ein gæti gert menn farsæla. Rússland stæði að því leyti miklu betur að vígi en Vesturlönd, að það hefði aldrei haft neitt að segja af baráttunni milli ríkis og kirkju eða af skynsemistrúar-menningu Vesturþjóðanna. Þessvegna bæri því að leiða hjá sér allar nýjungar þessarar menningar, svo sem stjórnskipunariög, þingræði, stéttabaráttu og forræði borgarastéttar. Þær væri hvort sem er skilgetin börn sjálfseleksunnar, og af þeim hlytist illt eitt. Aftur á móti ætti keisaraveldi og kirkja að taka höndum saman og láta allar stéttir ganga sér á hönd til heilla og hagsmuna öllum almenningi.

Skulu þar næst taldar nokkrar ráðstafanir stjórnarinnar, er gerðar voru í anda þessa manns og annara afturhaldssinna.

Vald umdæmaráða (semstvóa) var töluvert skert. Ritvarzlan var hert og tekið upp strangt og smásmuglegt eftirlit með háskólakennurum og stúdentum. Lögregluþjónum var fjölgað að miklum mun og valdasvið þeirra svo stórlega aukið, að eignir manna velferð og líf voru

að heita mátti ofurseld geðþótta þeirra. Á hinn bóginn lét lögreglustjórnin sig litlu skifta siðspilling og mútugirni rússneskra embættismanna, svo að lestir þessir fóru í vöxt í stað þess að þverra. Loks skerti stjórnin á ýmsan hátt réttindi einstakra þjóða og þjóðflokka í ríkinu og bygði út tungu þeirra og trú, en þröngvaði þeim aftur á móti til þess að taka upp rússneska tungu og grísk-katólskan sið. Verstri meðferð sættu þó nokkrir grísk-katólskir sér-trúarflokkar og Gyðingar.

Á síðustu stjórnarárum Alexanders 2. höfðu rússneskir bændur og borgarar komið af stað Gyðinga ofsóknum hér og hvar í ríkinu. Voru þær oftast nær spröttnar af þjóðar-hatri, af hleypidómum og fáfræði, eða þá af því að mönnum lék öfund á dugnaði Gyðinga og velgengni. En nú tók stjórnin að snúast gegn þeim og skömmu eftir 1890 voru þeir að undirlagi stjórnarinnar reknir svo þúsundum skifti miskunarlaust burt úr mörgum borgum. Auk þess nutu þeir í mörgum greinum ekki sömu réttinda sem aðrir rússneskir borgarar og ekki allsjaldan lögðust yfirvöldin á eitt með fáfróðri alþýðu að leika þá sem sárast.

Það var því engin furða þó þjóðir þær og trúarflokkar, sem voru svo grátt leiknir af stjórninni, fyltust gremju og hatri til hennar. Það jók á óánægju manna með stjórnina, að henni fór illa úr hendi að ráða bót á ýmsum vandkvæðum og vandræðum, er leiddi af uppskerubresti og hallæri. Margir Rússar sem farið höfðu af landi burt blésu eldi að kolunum með æsingaritum, er voru flutt inn á laun frá öðrum löndum eða prentuð í leyniprentsmiðjum byltingamanna í Rússlandi. Alt þetta varð til að magna mikla mótspyrnu á hendur stjórninni, og byltingamenn tóku aftur að færast í aukana og vinna stöku víg. Markmið þeirra var í öllum höfudatriðum hið sama og frjálslyndra manna, að fá stjórnskipunarlög og þjóðkjörið þing. Meðal hinna meñtuðu stétta fór að bóla á þeim hinum sömu kröfum og einstaka umdæmaráð dirfðist jafnvel að bera þær fram. Jafnvel sumir

slavofilar voru á því, að æskilegt væri að taka upp ráðgjafarþing, svipuð þeim, er áttu sér stað fyr á tímum.

Nikulás 2. (1894—1917) tók við ríkjum eftir dauða Alexanders 3. föður síns, Vonir þær sem frjálslyndir menn gerðu sér um ríkisstjórn hans brugðust skjótt, því að keisari tók það fram í svari sínu til fulltrúa umdæmanna, er í konunghollum bænarskrám höfðu látið í ljósi, að þeir vonuðust eftir umbótum á stjórnarfarinu, að slík ummæli væri heimskulegir draumórar og að hann væri fastráðinn í »að halda uppi friðhelgi alveldisins að dæmi hins ógleymanlega föður síns«. Pobjedonostzew og alvaldssinnar úr flokki slavofila réðu sem áður lögum og lofum. Annars er það enn sem komið er miklum erfiðleikum bundið, ef ekki alveg ókleift, að gera sér rétta og glöggva grein fyrir lyndiseinkunn Nikulásar og hvern þátt hann muni hafa átt í ýmsum stjórnarráðstöfunum, sem honum eru eignaðar. En óhætt mun að fullyrða, að hann hefir frá upphafi vega sinna verið taugaveiklaður maður og draumlyndur, ístöðulaus og hviklyndur og hneigður til andatrúar og allskonar hindurvitna. Fór því sem oft vill verða, að »alvaldin« varð leiksoppur í höndum óbíl-gjarnra og harðvítugra misindismanna. Stjórnin varð jafnvel gjörræðisfyllri en á stjórnarárum föður hans og á öllum sviðum drotnaði megn áþján og mikið skrifstofuríki. Þó kastaði fyrst tólfunum þegar *Plehve* varð innanríkisráðherra 1902. Hann hafði áður verið embættismaður í lögregluliðinu og í innanríkisráðuneytinu og síðar ráðherra fyrir Finnland. Hann tók sér fyrir hendur að treysta einveldið og brjóta á bak aftur með ósveigjanlegri harðýgi allt sem því gat staðið einhver ótti eða háski af. Hann taldi sér skylt að kúga á allar lundir þjóðir þær og trúarflokka, er virtust sízt geta samþýðst rússnesku þjóðerni og grísk-katólskum sið, og komu því margar stjórnarráðstafanir hans einkar hart niður á Finnum, Armeníumönnum og Gyðingum. Skál því næst drepíð litið eitt á atferli Rússastjórnar við þessar lýðskyldu smáþjóðir.

Frelsi og sjálfstæði Finnlands hafði lengi verið *Plehve*.

og öðrum afturhaldsmönnum þyrnir í augum. Árið 1899 hafði keisari að undirlagi þeirra, en þvert ofan í stjórnarlög Finna, gefið út opið bréf, sem kvað svo á, að lög sem vörðudu alt ríkið og þar á meðal Finnland skyldu sett, án þess að löggjafarþing Finna hefði þar hönd í bagga með. Kom það fyrir ekki, að þingið mótmælti þessari lögleysu og þjóðin sendi keisara 500 manna sendinefnd með ávarp, til þess að fá hann til að taka aftur opna bréfið, en meir en 520.000 Finnar höfðu skrifað undir ávarpið. Síðan færði Rússastjórn sig upp á skaftið og svifti þingið að kalla mátti löggjafarvaldi í málum, sem að einhverju leyti snertu „hagsmuni ríkisins“, þó að þau væru í raun rétttri finsk sérmál. Næstu ár þar á eftir var Finnland svift hinum þarlenda her, sem þar hafði verið til þessa, og jafnframt settar nýjar reglur um liðsútboð; fundafrelsi manna var skert og kveðið svo á, að stjórnarérindi og embættisbréf skyldu skráð á rússnesku og rússnesk tunga kend í skólunum. Loks var *Bobrikoff* landstjóra í Finnlandi falið alræðismannsvald. Hófst nú mesta harðstjórn þar í landi: fjöldi dómara og annara embættismanna voru reknir frá embættum, menn voru fyrir litlar eða engar sakir færðir í fangelsi eða gerðir landrækir, bréf manna voru hremd, blöð og tímarit gerð upptæk og skólum lokað. Allur þorri Finna andæfði stjórnlagarofinu og lögleysunum með staðfestu og stillingu, en varaðist ofríkisverk.

Kákasuslönd byggja auk Tattara og Rússa allmargir kristnir Armeníumenn. Sumir þeirra höfðu lagt lag sitt við rússneska byltingamenn, en í hefnda skyni svifti Rússastjórn kirkju þessara Armeníumanna eignum sínum og amaðist við tungu þeirra á ýmsan hátt og lét loka skólum þeirra.

Árið 1903 og næstu ár á eftir gengu miklar Gyðingaofsóknir og manndráp í ýmsum borgum Suður- og Vestur-Rússlands. Fjöldi manna misti þar líf sitt og aleigu og aðrir flýðu allslausir til Ameríku. Það varð aldrei uppvíst, hverir voru frumkvöðlar þessara illræðisverka, en

ýmislegt bendir á, að rússneskir embættismenn og leynilögreglan hafi verið við þau riðinir. Það er víst, að keisari veitti mönnum oft og einatt uppgjöf saka, er voru dæmdir fyrir Gyðinga morð og ofsóknir.

Lengi fram eftir 19. öldinni lét þorri rússnesku þjóðarinnar sig litlu skifta frelsisþrá og frelsisbaráttu umbótamanna og byltingagarpa. En nú tóku viðtækar breytingar á atvinnubrögðum þjóðarinnar og þegnfélagshögum smám saman að ryðja sér til rúms, svo að almenningur fór loks að hallast á sveifina með frjálslyndum mönnum og styðja viðleitni þeirra. Skulum vér því næst gera stuttlega grein fyrir breytingum þessum.

Allengi hafði hagur bænda víðast hvar á Rússlandi farið heldur versnandi en batnandi, þrátt fyrir ýmsar landbúnaðarumbætur, er upp voru teknar. Lágu til þess ýmsar orsakir, svo sem úreltar yrkingaraðferðir, offjölgun fólks, afarháir skattar og skyldur og misrétti það sem bændur áttu við að búa. Loks voru jarðarskikar þeir, sem þeir höfðu til framfæris sér og hyski sínu, oft og einatt svo litlir, að þeir gátu ekki framfleytt þeim og fólki þeirra. Mennt fóru því að bera saman ráð sín um, hvernig mætti takast að bæta kjör bænda. Töldu þá sumir heppilegast, að bændur eignuðust allar jarðeignir í landinu, en aðrir héldu því fram, að sameign væri æskilegust. Bændur tóku slíkum kenningum vel, eins og við var að búast, og hafa þær grafið um sig síðar. Á ýmsum stöðum, einkum í Suður-Rússlandi vöktu bændur allmiklar óspektir. En yfirleitt voru þeir enn einkar hollir keisara og höfðu fyrir satt, að þeir væri honum í alla staði fylgjandi, þótt þeir ættu í brösum við stóreignamenn og embættismenn og gerðu smá upppót. Hvað sem öðru líður, þá var hér risið upp mikið vandamál, sem var erfitt viðureignar; einkum er þess er gætt, að í Rússlandi sjálfu eru bændur fjölmennari en nokkur önnur stjett. Telst mönnum að af íbúatölu Rússlands sjálfs, sem er um 93 miljónir manna, séu 78—80 miljónir bændur.

Fram til 1861 var iðnaður Rússlands litill og skamt

á veg kominn, en eftir leysing bændaánaðarinnar fer að smálifna yfir honum. Nú gafst bændum kostur á að setjast að í borgunum og leggja fyrir sig iðnað; stóreignamenn lögðu fé það er þeir fengu fyrir jarðir sínar í verk-smiðjur og mikil iðnaðarfyrirtæki, og loks studdi stjórnin þenna iðnaðarvísi með verndartollum og bættum samgöngufærum. Eftir 1890 tók *Witte* fjármálaráðherra sjer fyrir hendur að styðja og efla rússneskan iðnað, og við það fleygði honum stórum fram. *Witte* fjekk útlenda auðmenn til þess að gangast fyrir stofnun margvíslegra iðnaðarfyrirtækja, ljét ríkið taka stór lán í útlöndum, einkum í Frakklandi, til þess að koma upp iðnaðinum, og leggja járnbrautir víðsvegar um ríkið, meðal annars um Síberíu. Þessi ár tók alls konar vefnaðar- og járníðnaður afarmiklum framförum. En eftir því sem iðnaðurinn eflidist, fjölgaði íbúum margra borga, er margir verkamenn og iðnaðarmenn fluttust til þeirra og settust þar að. Á tólf árum, frá 1885—1897, fjölgaði íbúum í Pétursborg, Moskva, Odessa, Warschau og Lodz um 1 miljón og í tíu öðrum borgum tvöfaldaðist íbúatalan á sama tíma. En viðkoma þessi jók mjög tölu þurfamanna og öreiga og nú tók fjölmennur öreigalýður að rísa upp í iðnaðarborgum og stórborgum Rússlands, eins og lengi hafði verið í hinum miklu iðnaðarborgum Vesturlanda.

Þó að stjórnin teldi sér skylt að setja að dæmi annara þjóða lög til þess að tryggja líf og heilsu verkamanna og bæta kjör þeirra, þá var eftirlitið með verk-smiðjunum heldur bágborið og lögunum slælega framfylgt, og rússneskir iðnaðarmenn og verkamenn hafa því löngum átt við slæm kjör að búa. Þrátt fyrir bann stjórnarinnar tóku verkamenn að stofna leynifélög til þess að að gæta hagsmuna sinna og áður en langt um leið hófust allmikil verkföll. Í fyrstu voru þau eingöngu hafin til þess að hækka laun verkamanna, en ekki til þess að afla þeim stjórnmalaréttinda eða greiða jafnaðarmenskunni götu, eins og verkföll í Vesturlöndum hafa oft og einatt

beinst að. En samt sem áður tók nú smám saman að risa upp í Rússlandi verkamanna flokkur með jafnaðarmensku stefnuskrá. Verkamenn af Gyðinga kyni stofnuðu fjölment verkamannasamband, er hélt fram skoðunum byltingamanna og jafnaðarmanna. Komu stjórninni þannig í koll ofsóknir þær sem að framan er getið. Loks bundust stúdentar og ungir mentamenn, er áttu líka stjórninni grátt að gjalda, samtökum við verkamenn. Þegar verkföllin tóku að ágerast og stjórnin beitti hins vegar verkfallsmenn harðýðgi, fór þeim að verða í nöp við einveldið. Mátti af ýmsu ráða, að hér var að hefjast hreyfing, er var líkleg til þess að ráða fyr eða síðar niðurlögum þess.

Plehve innanríkisráðherra og íhaldssamir landbúnaðsmenn (agrarar) voru mjög andvígir atvinnumálastefnu Witte's og lögðust fast á móti honum. Varð Witte undir í þeim viðskiftum og varð að fara frá 1903.

Viða í ríkinu voru enn sem fyr töluverðar viðsjár, sem voru sprottnar af pólitískum orsökum og bágun þegnfélagshögum og af ríð þeim sem einatt gerir vart við sig milli hinna mörgu og sundurleitu þjóðerna ríkisins. Í umdæmaráðunum fóru andstæðingar stjórnarinnar að láta aftur til sín taka, hins vegar voru frjálslyndir menn og byltingamenn enn sem fyr ekki á eitt sáttir og greindust í marga smáflokka. En þá hleyptu ófarir Rússa í styrjöldinni við Japana 1904—1905 ríkinu í uppnám og komu þjóðinni til að hefjast handa gegn hinni illu og ónýtu stjórn, svo að henni virtist vera við falli búið. Sumarið 1904 voru nokkrir meiri háttar menn ráðnir af dögum, svo sem Plehve innanríkisráðherra og Bobrikoff landsstjóri í Finnlandi, sem höfðu verið máttarstólpar einveldisins. Og eftir því sem leið á ófriðinn og menn gátu þreifað á siðspillingu herstjórnar- og umboðsstjórnarinnar og hinu gegndarlausu manntjóni og fjártjóni er ófriðurinn bakaði þjóðinni, varð hún hamstola af heift og bræði. Viða í ríkinu voru mikil brögð að hermanna uppþotum og verkamanna óspektum og helztu andstæðingaflokkar stjórnarinnar tóku höndum saman. Keisari og

ráðuneyti hans voru ráðþrota. Eftir víg Plehve's virtist keisari jafnvel ekki ótilleiðanlegur til að fara að ráðum umbótamanna og gefa þegnum sínum stjórnarbót; en gegn umbótamönnum stóð afturhaldssamur hirðgæðingaflokkur, er leiddi honum fyrir sjónir, að hann gengi á krýningar-eið sinn og bryti bág við skyldurnar við kirkjuna, ef hann afsalaði sér einveldinu. Fór hér sem oftast: hann gat ekki komið sér niður á, hvað gera sýldi og gat því ekki við meitt ráðið.

Umdæmaráðin stofnuðu í fyrsta skifti til sameiginlegs fundar í Pétursborg haustið 1904. Allir fulltrúar sem þar voru samankomnir komu sér saman um, að heimta tryggingu fyrir friðhelgi einstaklingsins, trúfrelsi, prentfrelsi og rétt til að stofna félög, halda mannfundi og gera verkföll. Þá vildu þeir og, að lögingengi jafnt yfir alla, og að einveldið og hin ríka skrifstofustjórn væri afnumin, en vald sveitastjórna og héraða aukið og sett á stofn þjóðfulltrúafing, er hefði fjárveitingarvald og hlutdeild í löggjafarvaldinu. Meiri hluti fundarmanna vildi að þing þetta hefði einnig fult ályktunarvald og að kosningar til þess væri almennar, beinar og leynilegar. Um sömu mund-ir áttu fulltrúar hinna ýmsu æsinga- og byltingaflokka fund með sér í París og urðu ásáttir um, að setja efst á stefnuskrá sína frjálsa lýðvaldsstjórn, er væri grundvölluð á almennum kosningarrétti, sem og að hin ýmsu þjóðerni ættu að ráða sér sjálf. Nokkru síðar bundust bændur einskonar félagsskap og á fundum þeirra var þess krafist, að almennur kosningarréttur væri lögleiddur og að jörð-um yrði skift upp milli ábúenda þeirra. Eru samþykktir þessar allmerkilegar, er þær eru skoðaðar í sambandi við viðburði þá og byltingar, sem nú eru að gerast í Rússlandi.

Stjórnin var sem fyr á báðum áttum. Annað veifið hét hún miklum og margvíslegum umbótum, en hitt veifið lýsti hún yfir því, að ekki væri takandi í mál að skerða

einveldi keisarans. En því reikulli sem stjórnin var í ráði sínu, að því skapi voru frelsiskröfur þær ákveðnar, er bornar voru fram á ýmsum fundum, er haldnir voru um þessar mundir viðsvegar í ríkinu. En þá bárust fregnir um nýjar ófarir í viðureiginni við Japana og við það varð almenningur enn tryltari.

Í janúar 1905 varð *Port Arthur* að gefast upp. Jafn-skjótt sem tíðindi þessi spurðust, hófu verkamenn í Pétursborg mikið verkfall. Var prestur einn, *Gapon*, sem var mikill trúnaðarmaður verkamanna, allmikið við það riðinn. En annars er mönnum engan veginn fullkunnugt um afstöðu hans til verkfallsins.

Verkfallsmenn afréðu að fara í skrudgöngu til vetrarhallar keisara og flytja honum bænarskrá um breyting á stjórnarskipun ríkisins og tjá honum vandkvæði sín. Allir voru þeir vopnlausir og höfðu ekki haft neinn uppreisnarviðbúnað.

Bréf það er *Gapon* skrifaði keisara í nafni verkfallsmanna hljóðaði svo:

„Keisari! ætlaðu ekki, að ráðherrar þínir segi þér satt frá ástandi þjóðar þinnar og ríkisins. En þjóðin ber örugt traust til þín og hefir afráðið að safnast saman fyrir framan vetrarhöllina á morgun kl. 2 e. h. og tjá þér eynd sína.

Ef þú ert hverflyndur og gefur þjóðinni ekki kost á að sjá þig, þá slítur þú í sundur hið siðferðislega band milli þín og þjóðarinnar. Traustið til þín mun fjara út, ef blóði sakleysingja verður úthelt milli þín og þjóðarinnar.

Láttu þjóð þína fá að sjá þig á morgun og taktu við bænarskrá vorri.

Eg fulltrúi verkamanna og mínir hraustu samverkamenn ábyrgjumst þér fulla friðhelgi“.

Sunnudaginn 22. janúar hófu verkamenn með góðri skipun göngu sína til vetrarhallarinnar. Í broddi fylkingar fóru leiðtogar þeirra með fána og myndir af sankti Pétri og keisara. Fremstur allra gekk *Gapon* í skrudu og með Andrésar krossmark í hendi. Þegar mannfjöldinn nálgadist höllina, voru hersveitir þar fyrir og heftu för hans. Þegar hann sótti engu að síður fram og æpti hástöfum: „Til keisara, til keisara“, skutu hermennirnir hvað

eftir annað á hann. Um kvöldið lágu um þrjár þúsundir fallinna og særðra verkamanna, þar sem fundi þeirra og hermannanna hafði borið saman. En keisari hafði nóttina áður yfirgefið höllina af ótta við tilræði og byltingar, sem hljótast kynni af förinni, og falið Wladimir stórfursta, föðurbróður sínum, að taka á móti verkamönnum. Það leysir hann samt ekki undan hinni siðferðislegu ábyrgð á óhæfuverki þessu.

Gapon var myrtur nokkru síðar, að því er sumir segja af rússneskum byltingamönnum, af því að hann þótti hafa svikið þá, en aftur á móti hafa aðrir fyrir satt, að leynilögreglan hafi stýtt honum aldur eftir boði stjórnarinnar.

En trúnaðartraust verkamanna og alþýðu til keisara var, sem vonlegt var, brotið með öllu, er bænarskrá þeirra var svarað á þessa leið.

Þegar þessi ógnartíðindi spurðust, fylltust frjálslýndir menn, hverju nafni sem þeir nefndust, heift og bræði, og róstur hófust víðsvegar í ríkinu. Í Moskva var einn af föðurbræðrum keisara veginn og í Póllandi, Eystrasaltslöndum, í Finnlandi, með Gyðingum og Armeníumönnum voru víðsjár svo miklar, að stappaði nærri uppreisn.

Nýjar hrakfarir í viðskiftunum við Japana og vaxandi skærur og byltingar, sem af þeim leiddi, komu loks keisara til að gefa út opið bréf í ágústmánuði 1905, er gaf fyrirheit um umbætur á stjórnarskipuninni og að þjóðkjörið þing skyldi sett á stofn, er ríkisdúma nefndist. En því var markaður þröngur verkahringur og kosningarrétturinn var alltakmarkaður.

Mönnum gætt lítt að hinum fyrirheitnu umbótum. Til þess að knýja fram enn ríflegri umbætur, tóku andstæðingar stjórnarinnar að stofna til mikilla pólitískra verkfalla, er verkamenn tóku ekki að eins þátt í, heldur einnig starfsmenn við járnbrautir, póstflutninga og síma, lækna, málfærslumenn og lyfsalar. Á Finnlandi fengu frjálslýndir menn og jafnaðarmenn, er lögðust á eitt, fullan sigur, eins og kunnugt er. Haustið 1905 kiptu þeir

með allsherjar verkfalli, er menn af öllum stéttum og öllum flokkum tóku þátt í, á fáum dögum fótunum undan allri stjórn Rússa þar í landi, án þess nokkur maður léti lífið. Keisara þótti þá ráðlegast að fella tilskipanir Bobrikovs úr gildi og viðurkenna stjórnarráð (senat), er Finnar höfðu sjálfir skipað meðan á byltingunni stóð.

Stjórnin varð nú enn tilhliðrunarsamari við andstæðingina sína. Skipun alríkisstjórnarráðsins var breytt og Witte var skipaður forsætisráðherra. Með auglýsing keisara 30. október 1905 var dómunni veitt löggjafarvald, en þó án réttar til þess að bera upp lagafrumvörp, heldur skyldi þau öll lögð fyrir þingið af stjórninni; mönnum var einnig heitið rýmkun á kosningarréttinum og efndi stjórnin síðar það heit.

Þessar ráðstafanir sem nú voru taldar sefuðu menn í svip. En er bið varð á því, að dómunni var stefnt samun og stjórnin hélt uppteknum hætti að brjóta lög á mönnum og beita þá ofríki, fyltust menn á ný mikilli bræði. Rak nú hvert tilræðið annað við trúnaðarmenn stjórnarinnar, bændur gerðu víða uppbót og byltingamenn urðu jafnvel vongóðir um, að herinn mundi bregða trúnaði við keisara og fylla flokk þeirra. En sú von brást í þetta sinn, eins og uppreisn sú sýndi fyllilega, er lýðvaldssinnar og verkamenn vöktu í Moskva í árslok 1905. Yfir höfuð þótti stjórnin hafa sýnt litla festu og röggsemi í afskiptum sínum af stjórnskipunarmálinu. Allir flokkar báru að heita mátti megnasta vantraust til hennar og höfðu ímugust á henni. Pobjedonostzew, er áður hefir verið getið, og lengi hafði verið sterkasta stoð einveldisins, varð svo reiður októberauglýsing keisara, að hann lagði niður embætti sitt til þess að mótmæla »syndafalli Rússlands og skrælingjahætti«. Varð nú Witte að fara frá.

Eftir vígasunnudaginn mikla hafði Nikulás 2. lifað í mikilli einveru í Zarskoje Selo, sumarbústað keisara í grænd við Pétursborg. Hann sökti sér nú niður í dulmagnatrú og andatrú og tók, að því er sagt er, dag hvern þátt í andatrúarsamkomum, er haldnar voru í höllinni.

Annars vissi hann lítið, hvað gerðist í heiminum, og ekki nema undan og ofan af um það, sem var að gerast með hans eiginni þjóð, því að hirðgæðingaráð hans hafði nákvæmar gætur á því, hvað hann las. Um þessar mundir kyntist hann hinum alræmda *Rasputin*, er varð brátt aðalmiðillinn á andatrúarfundunum og skýrði keisara fyrir milligöngu andanna frá óorðnum hlutum. Hann átti og með fyrirbænum sínum að styðja að heill og hamingju keisara og ættar hans. Af því að maður þessi kemur mjög við sögu hinnar rússnesku einvaldsstjórnar á hennar síðustu og verstu tímum og er nokkurs konar holdtekja spillingar þeirrar og myrkrafjálgleiks, er drotnaði við hirð keisara, þykir rétt að greina stuttlega frá nokkrum æfiatriðum hans:

Rasputin var ættaður frá litlu þerpi í Tobolksumdæmi í Síberíu. Faðir hans var bóndi, en móðir hans taldist til flökkupjóðar þeirrar, er kallast Samojedar. Hvorugt foreldranna var talið fyrirmynd annara manna, enda var sonur þeirra þegar frá æsku kendur við óskírlífi, ofdrykkju og ryskingar, og nafnið *Rasputin*, sem hann er oftast nefndur, þýðir saurlífismaður eða hinn ósigrandi. Á yngri árum komst hann þrásinnis undir manna hendur fyrir ýmis konar klæki og glæpi meðal annars, að því er sagt er, fyrir hestapjófnad og meinsæri. Þegar hann hafði nokkra hrið gengið fram af sér í útsláttarsemi og ólífnaði, afréð hann að hverfa frá villu síns vegar og gerast munkur. Má telja víst, að hann hafi orðið fyrir einhvers konar trúarvakning, er fékk mikið á hann, enda varð hann um stundarsakir annar og betri maður. Nú fór hann einnig að læra að lesa og skrifa, en lærði aldrei að heita mátti að draga til stafs. *Rasputin* hafði lagt fyrir sig malaraiðn, en rækti lítt það starf, því að hann var latur og værukær. Nú reisti hann sér lítið bænahús við mylnuna sína og sat þar löngum og las í biblíunni, niðursökkinn í trúarhugleiðingar og ráðgátur lífsins.

Nokkru síðar fór hann að ferðast um ríkið og prédika fyrir lýðnum. Jafnframt gerðist hann forgöngumaður ýmissar fjársöfnunar, er stofnað var til í trúar- og guðspakkaskyni. Á þessum ferðum sínum sneri hann sér einkum til kvenna, því að hann komst brátt að raun um, að hann gat hrifið þær og dáleitt með augnaráði sínu. Leið ekki á löngu þar til hann fór að „lækna“ alls konar kvenkvilla með dáleidslugáfu sinni. Brá þá einatt fyrir í augum hans merkilegu og máttugu leiftri, er varð síðar meir öflugasta vopn hans.

Rasputin var maður friður sýnum, hár vexti og tígulegur. Ennið var mikið og hvelft, hárið pykt, sítt og hrafnsvart. Kinnabeinin lágu hátt, munnurinn stór og holdlegur, en kringsettur miklu, silkimjúku Krísta-

skuggi. Angu hans voru stór og djúp, annað veifið töfrandi og seiðandi, en hitt draumhýr og fjarskygn. Hann barst lítið á í klæðaburði og var enginn snyrtimaður í framgöngu, enda hafði hann litil kynni af kamb og sápu. Engu að síður naut hann mikillar kvenhylli. Þegar honum græddist fé á kennimannsstarfinu, keypti hann sér mikið og reisulegt hús. Í því bjuggu, auk konu hans og tveggja dætra, tólf „systur“. Það voru trúhneigðar konur, er þjónuðu guði eftir fyrirsögn Rasputins; en nágreannið kunni að segja margt af bænahaldi hans og „systuranna“.

Á ferðalagi sínu kyntist Rasputin ýmsum málametandi mönnum og tignum konum. Er svo sagt að ekkja miljónamærings eins, er Boschmakow hét, hafi kynt hann ýmsum hefðarfrúm og meyjum í Pétursborg. Þær urðu frá sér numdar af viðkynningunni við Rasputin, eins og stall-systur þeirra í öðrum borgum ríkisins, og kappkostuðu að gera alt sem hann lagði fyrir þær. Hann hefir sjálfur gefið oss skýringu á þessu fyrirbrigði með svofeldum orðum, er taka fram það sem var mergurinn málsins í kenningu hans:

„Eg er runninn frá hinni æðstu veru og enginn getur orðið endurleystur nema fyrir mig. Fyrir því er nauðsyalegt að samlagast mér líkamlega og andlega. Alt sem frá mér kemur er uppspretta ljóssins og leysir menn af syndinni“.

Rasputin var frámunalega slunginn og metnaðargjarn. Hann sá að beinasti vegurinn til vegs og valda var að komast í kynni við hirðina, og lét því einskis ófreistað til þess að það mætti takast.

Í því skyni lagði hann lag sitt við greifafrú *Ignatiew*, gjálifa og lausláta hefðarkonu. Hún kom honum 1905 í kynni við *Elizabet* stórfurstastrú, er hafði þá fyrir skemstu mist mann sinn, *Sergius*, er var veginn í Moskva. Mun frú *Ignatiew* hafa bent vinkonu sinni á að leita sér huggunar og harmabótar hjá Rasputin. *Elizabet* kom honum aftur á framfæri við hirðina. Keisari og drottning hans fögnuðu Rasputin sem sendum þeim af himnum ofan, því að þau voru bæði gagntekin af kvíða og ótta við byltinguna og harmi lostin af sjúkdómi kornungs einkasonar þeirra, er læknað kunnu engin ráð við. Þegar svo fyrirbænis Rasputins virtust hrífa og byltingin var sefuð og keisarasyntinum batnaði, þá þurfti ekki að sökum að spyrja: Rasputin varð átrúnaðargóð keisara og drottningar og áður en langt um leið réð hann öllu, er hann vildi ráða.

Loks var dómunni stefnt saman í maímánuði 1906; enskömmu áður var hinu forna ráðgjafa-ríkisráði breytt í efri málstofu með stjórnarskipunarlögunum frá 6. maí s.á. Þegar á þing kom var stjórnin í miklum minni hluta. Andstæðingar hennar voru fjölmennir, en skiftust í marga smærri flokka, svo sem bændur og verkamenn, er hneigðust meira

eða minna til ákafrar framsóknar eða jafnvel til byltinga. Atkvæðamestir voru hinir svonefndu »kadettar« (af upphafsstöfunum *k. d. konstitutionellir demokratar*), er ef til vill mætti kalla þingstjórnar-lýðvaldsmenn. Á þinginu áttu enn fremur nokkrir íhaldsmenn setu, er kallaðir voru »oktobristar«, af því þeir gerðu sig nokkurn veginn ánægða með stjórnarbót þá, er var heitið í októberyfirlýsingu keisara, sem að framan var getið, og loks allmargir flokksleysingar. Þó að andstæðingar stjórnarinnar væri engan veginn á eitt sáttir, voru þeir þó allir samtaka um að úthúða stjórninni og aðgerðum hennar og krefjast almenns kosningarréttar, beinna kosninga og þingræðisstjórnar, er bæri ábyrgð á gerðum sínum. Auk þess voru margir því fylgjandi, að bændur og verkamenn til sveita fengi jarðir til eignar og umráða í miklu viðtækari mæli en áður.

Loks tók stjórnin það til bragðs að rjúfa þingið, er hún gat engu tauti við það komið, en hét jafnframt að stefna því saman á ný. Um leið kvaddi keisari *Stolypin*, dugandi mann og harðan í þorn að taka, er áður hafði verið innanríkisráðherra, til þess að veita stjórninni forstöðu. Hann barði niður með harðýðgi samblástur þann, verkföll og uppbót, er byltingamenn höfðu vakið, er þingið var rofið. Á hinn bóginn hét hann ýmsum umbótum. Byltingamenn unnu nú hvert illræðisverkið af öðru, rændu menn, réðust á banka og járnbrautarlestir og veittu mönnum banatilræði eða myrtu þá. Meðal annars reyndu þeir að sprengja hús *Stolypins* og sjálfan hann í loft upp. Hann sakaði ekki, en 2 dætur hans særðust og 28 manns biðu bana. Á hinn bóginn lét stjórnin dæma byltingamenn vægðarlaust til útlegðar eða til lífláts og þröngvaði jafnvel kostum þingmanna, er gengið höfðu í berhögg við stjórnina.

Í byrjun marz mánaðar 1907 var dúman aftur kvödd til setu. Stjórnin var enn í minni hluta, enda þótt »kadetta«-flokkurinn, er margir frjálslyndir mentamenn töldust til, hefði gengið allmikið saman. Aftur á móti hafði

áköfum afturhaldsmönnum og svæsum byltingamönnum fjölgað töluvert. Lenti brátt í miklum deilum milli dómunnar og stjórnarinnar, einkum eftir að uppvíst varð um samsæri gegn keisara og keisaraefni, er stjórnin kvæð nokkra þingmenn jafnaðarmanna hafa verið við riðna og heimtaði þá framselda. Þegar dúman vildi ekki verða við þessari kröfu, rauf stjórnin þingið í annað sinn sumarið 1907. En nú var hinum æðri stéttum farið að þykja nóg um byltingaranda þingmanna og vald og áhrif stjórnarinnar höfðu aukist; andstæðinga stjórnarinnar greindi aftur á móti á um mýmörg mál og þeir voru sjálfum sér sundurþykkir. Í trausti til þess rauf Stolypin stjórnarskipunarlögin, er keisari hafði sett af fullveldi sínu, og breytti kosningarlögum. Með breytingu þessari vildi hann bæði fjölga íhaldsmönnum í dómunni og gera hana íhaldssamari og rússneskari í anda. En jafnframt lék honum hugur á, að fækka fulltrúum þeim, sem sumar aðrar þjóðar ríkisins áttu í dómunni, því að sumir þessara fulltrúa höfðu hingað til reynst einhverir ákveðnustu andstæðingar stjórnarinnar.

Kosningarlagabreytingin hafði þann árangur, sem stjórnin hafði ætlast til, og andstæðingum hennar tókst ekki að koma í veg fyrir að kosið væri eftir hinum nýju kosningarlögum. Þegar hið nýkosna þing, ef þing skyldi kalla, kom saman haustið 1907, voru afturhaldsmenn og íhaldsmenn í miklum meiri hluta, en stjórnarandstæðingar voru til samans ekki nema um 100 að tölu. Samvinnan milli dómunnar og stjórnarinnar var nú allgód, þótt þeim bæri ýmislegt í milli. En auðvitað hneigðust flestar ráðstafanir stjórnarinnar til íhaldssemi og afturhalds.

Stolypin veitti stjórninni forstöðu til 1911, er hann var myrtur að undirlagi leynilögreglunnar. Hann var þrekmikill maður og harðgeðja, eins og áður hefir verið sagt, og hélt fram ákveðinni stefnu í stjórn sinni: hann vildi bæla niður öll upppot og byltingar með harðri hendi, og þröngva, eins og fyr, ráði þeirra þjóðflokka, er voru ekki rússneskir að þjóðerni eða annarar trúar en grísk-

katólskrar, en jafnframt vildi hann koma á ýmsum umbótum, er gæti eft og treyst ríkið. Honum tókst og að rétta ríkið stórum við þau fáu ár sem hann var forsætisráðherra. Hann bætti fjárhag ríkisins, er var í mesta ólestri eftir ófriðinn við Japaná og byltinguna 1905, hann lét sér umhugað um að gera umboðsstjórnina betri og hagnafeldari og jók eftirlitið með embættismönnum ríkisins. Varð þá bert hversu siðspilling og valdamisbeiting eiga sér djúpar rætur hjá hinna rússnesku þjóð. Hann fékk og sefað nokkurn veginn ofsa og ofbeldisverk byltingamanna, en merkilegastar voru samt búnaðarumbætur þær sem hann og *Krivoschein* landbúnaðarráðherra gengust fyrir og síðar var haldið fram af eftirmönnum Stolypins, forsætisráðherrunum *Kokowzow* og *Goremykin*. Umbætur þessar hnigu að því, að byggja út samyrkju bænda, er hafði gefist illa, sem og að því, að gera þá að sjálfseignarbændum með því að skifta ýmsum ríkiseignum og stóreignum aðalsmanna, sem stjórnin hafði látið kaupa, niður í smærri jarðeignir, er »bændabankinn» studdi svo bændur til að eignast. Sumir sem hafa kynt sér umbætur þessar láta mikið yfir þeim, en sumir telja þær að eins góða byrjun til þess að rétta við hag bænda.

Stolypin og eftirmenn hans, er fyr voru nefndir, voru aftur á móti andvígir allri viðleitni, er beindist að því að auka stjórnmálaréttindi a mennings. Dúman lagðist á eitt með þeim, enda voru íhaldsmenn og afturhaldsmenn þar lengi í allmiklum meiri hluta. Annars hefir hin svonefnda alrússneska stefna, er býst að steypa öllum slafneskum þjóðum saman í eina heild undir forræði Rússa ráðið miklu um aðgerðir stjórnar og dúmu bæði í innanlands og utanríkismálum. En hún hefir komið einkar hart niður á ýmsum þjóðum ríkisins, sem eru ekki rússneskar að þjóðerni. Þannig hafa Gyðingar eins og fyr orðið fyrir miklum ofsóknum. Pólverjar hafa fengið að kenna á margvíslegri harðýgi og 1908 skipaði stjórnin svo fyrir, að í unglingaskólum Pólverja skuli

rússneskir kennarar hafa á hendi fræðslu í sumum greinum og skuli fræðslan fara fram á rússnesku. Á Finnlandi hefir sótt aftur í sama horfið, er var þar um og eftir síðustu aldamót. Alríkisstjórnin hefir hvað eftir annað skert valdasvið finska þingsins með lögum sem dúman hefir sett. Það er og segin saga, að hin einkar frjálsglega stjórnarskipun er Finnar tóku upp 1906 kom illa heim við hina ríku rússnesku einvaldsstjórn sem hin alkunna frakkneska skilgreining komst svo að orði um, að morðvígíð eitt fái skert hana (le despotisme temperé par l'assassinat).

Að endingu skal vikið stuttlega að utanríkismálastefnu Rússa á síðari stjórnarárum Nikulásar 2., að svo miklu leyti sem hún átti þátt í að koma heimsstyrjöldinni miklu af stað, en hún varð aftur á móti til þess að steypa keisara af stóli og koma á stjórnarbylting þeirri, er síðari þáttur ritgerðar¹⁾ þessarar fjallar um.

Þegar Rússar tóku að rétta við eftir ófárinar í styrjöldinni við Japana og innanlandsbylting þá, sem af þeim leiddi, fóru þeir smámsaman að láta stjórnsmál Evrópu meir til sín taka en áður. Þegar Austurríki haustið 1908 innlimaði Bosnía og Herzegovínu þvert ofan í samþykktir þær, er gerðar voru á Berlínarfundinum 1878, vakti það sem vonlegt var mikla gremju hjá Serbum. Þeir höfðu gert sér von um, að landshlutar þessir, er Serbar byggja að mestu leyti, mundu með tímanum hverfa undir Serbíu. Létu Serbar allófriðlega og Rússar gerðu sig líklega til að fylgja þeim að málum. En Þjóðverjar lögðust þá á eitt með Austurríkismönnum og þröngvuðu Serbum og Rússum til þess að leggja samþykki á innlimunina (1909). Þóttu Þjóðverjar og Austurríkismenn hafa vaxið mjög af þessum málum, en Rússar og bandamenn þeirra sett niður.

¹⁾ Heimildarrit þau sem eg hefi notað við samning ritgerðar þessarar eru: *J. A. Fridericia*: Udsigt over den politiske Historie. Fra 1848 til Nutiden, 2. Udg. *Schlesinger*: Russland in XX. Jahrhundert 1908; *Ziliacus*: Revolution och Kontrarevolution i Russland, 1912. *Reinhold Mac*: Revolutionen i Russland 1917. *Vogel-Jørgensen*: Rasputin 1917. Auk þess hefi eg stuðst við nokkrar greinar í útlendum blöðum og tímaritum.

Rússar voru auðvitað ekki við ófriði búnir, en ófriðarflokkurinn við hirð keisara mun hafa hugsað miðveldunum þegjandi þörfina. Í bráðina varð þó friðarflokkurinn yfirsterkari og 1910 sótti Nikulás 2. ásamt utanríkisráðherra sínum *Sasonow* Vilhjálmi keisara heim í Potsdam. Þar var og Bethmann Hollweg kanzlari staddur. Urðu þeir ásaðir um, að landaskipun á Balkanskaga skyldi ekki raskað úr því sem komið væri (þ. e. Austurríkismönnum skyldi ekki haldast uppi að færa þar út lönd sín). Sumarið 1912 sótti Vilhjálmur keisari Rússakeisara heim í Baltischport í grend við Reval. Nokkrir helztu ráðherrar þeirra keisaranna voru og með í förinni. Þeir sendu síðan út orðsending þess efnis, að stjórnendur þessara tveggja stórvelda væri sammála í öllum aðalatriðum stjórnmálanna. Þjóðverjar og blöð þeirra lögðu mikið upp úr þessari orðsendingu, en Frakkar voru hinir reiðustu, af því að Rússar væri að daðra við Þjóðverja.

Í Balkanstyrjöldunum (1912 og 1913) hallaðist Rússland aftur á sveifina með Vesturríkjunum og hafði mikinn herbúnað. Lá hvað eftir annað við, að ófriður risi með Rússum og Austurríkismönnum; var þá viðbúið, að vináttan með hinum fyrnefndu og Þjóðverjum færi út um þúfur. Að minsta kosti þótti þýzku stjórninni horfurnar á Balkanskaga svo ískyggilegar og vígbúnaður Rússa svo tortryggilegur, að hún lagði til, að liðsaflí ríkisins á friðartímum væri aukinn stórum, og hafðist það fram.

Þessi ár sem nú voru talin höfðu friðarvinirnir við hirð keisara haft yfirtökin, en eftir því sem herinn efldist og ófriðarpostularnir með *Suchomlinow* hermálaráðherra, *Iswolski* fyrv. utanríkisráðherra og *Nikulds* stórfursta í broddi fylkingar fengu meiri byr í seglin, varð aðstaða hinna erfðari. Helztu friðarvinirnir voru að því er sumir segja þeir *Sasonow* utanríkisráðherra og *Rasputin*, er áður hafa verið nefndir. Keisari var að edlisfari fremur fylgjandi friði, en annars sitt á hvað, eftir því við hvern hann ráðgaðist. Bezt tók á honum mun drotningin og *Rasputin* hafa haft.

Annars kaus öll alþýða manna á Rússlandi, eða bændur og verkamenn, að fá að lifa í friði, en einvaldsstjórnin lét nú ekki einu sinni svo lítið að gefa vilja þeirra nokkurn gaum. Hins vegar voru margir mentamenn og atvinnurekendur, sem hneigðust að alrússnesku eða öllu heldur alslafnesku stefnunni, litlir vinir Þjóðverja, er þeir töldu erfiða og ónærgætna keppinauta í öllum viðskiftum. Þeir vildu að Rússland kastaði eign sinni á Konstantinopel og Hellusund og svifti af sjer samkepnisfjötrum Þjóðverja. Kváðu þeir Rússa sjálfkjörna til þess að gerast forvígismenn slafnesku þjóðanna í baráttunni við Germana. Svo árum skifti höfðu Rússar og aðrir Slafar, er voru fylgjandi alslafnesku stefnunni komið af stað miklum undirróðri og æsingum með smærri slafneskum þjóðum á landamærum Rússlands, einkum þeim er töldust til Austurrikis og Ungverjalands.

Víg Franz Ferdinands ríkiserfingja í Austurriki og konu hans, er voru myrt í Sarajevo í Bosniu 28. júní-mánaðar 1914, var eins og kunnugt er afleiðing af margra ára æsingum og viðsjám í þessum ríkishluta. Við rannsókn þá, er hafin var út af vígunum þóttist stjórn Austurrikis hafa fengið sannanir fyrir því, að undirróður og æsingar Serba í Bosniu hefðu átt mikla sök á því, að vígin voru unnin, og bjóst nú að »hirta« Serba fyrir fornan fjandskap og nýjan. Serbar leituðu ásjár Rússastjórnar. Hún réð þeim til að taka liðlega í kröfur Austurrikis, en hét þeim liðveizlu sinni, ef til kæmi. Serbar fóru að ráðum Rússa og gengu í svari sínu að því nær öllum skilyrðum þeim, er Austurrikismenn höfðu sett þeim. En stjórn Austurrikismanna vildi, þó undarlegt megí heita, ekki þekkjast boð Serba og sagði þeim stríð á hendur 28. júlímánaðar. Sama dag eða degi síðar tóku Austurrikismenn og Rússar að vígbúa heri sína. Leikur nokkur eftir á, hvorir hafi átt upptökin. Þó er svo að sjá sem Rússakeisara hafi verið allmikið ábugamál, að friður héldist, en hafi verið beittur brögðum af hermálaráðherra sínum og öðrum ófriðarsinum. Að minsta kosti hefir Suchomlin-

ow fyrir. hermálaráðherra játað það í prófum þeim, er haldin voru yfir honum síðastliðið sumar eða haust við ríkisráðsdóminn í Petrograd, að hann hafi haft að engu símaskipun keisara frá aðfaranótt þess 30. júlí¹⁾, er bauð honum að afturkalla fyrirskipunina um almennan vígbúnað, er keisari hafði skrifað undir þá um daginn.

En Suchomlinow lét ekki þar við staðar numið, heldur símaði hann oddvita herstjórnarráðsins, að hafast ekkert að, þ. e. að halda áfram vígbúnaðinum. Morguninn eftir laug hann því að keisara, að vígbúnaður hefði einungis farið fram í suð-vesturhéruðum ríkisins (þ. e. á landamærum Austurrikis). Daginn eftir bar saman fundum þeirra Suchomlinows, Sasonows og oddvita herstjórnarráðsins og á 10 mínútum fastréðu þeir að ekki skyldi hætta við vígbúnaðinn. Sama dag tókst þeim einnig að koma keisara á þá skoðun. Hafa sumir viljað fullyrða, að þeim hefði aldrei tekist það, ef Rasputin hefði þá verið á uppréttum fótum; en hann var þá allþungt haldinn af sári sem alþýðukona ein, er var sett til höfuðs honum, hafði sært hann. Fregnin um almennan vígbúnað Rússa virðist hafa komið allflatt upp á þýzku stjórnina. Hún sendi Rússum þegar í stað ályktarorð með 12 stunda fresti og krafðist þess, að þeir hættu liðsafnaðinum að vörmu spori. Slík orðsending var auðvitað sama sem friðslit, enda hófu Þjóðverjar 1. dag ágústmánaðar opinberan vígbúnað og sögðu því næst Rússum stríð á hendur. Styrjöldin við Rússa dró á eftir sér ófrið við Frakka, bandamenn þeirra, er hvorki vildu né þóttust geta setið hjá, og loks sagði Bretland Þýzkalandi stríð á hendur 4. ágúst.

Ósjálfrátt spyr maður sjálfan sig: Hefði mátt takast að komast hjá styrjöldinni miklu ef Suchomlinow hefði ekki logið að keisara sínum og fylgismenn hans lagst á

¹⁾ Að kvöldi þess 29. júlí barst Nikulási keisara skeyti frá Vilhjálmí Þýzkalandskeisara, er ábyrgðist honum að viðlögðum drengskap sínum, að vinátta skyldi haldast með Þjóðverjum og Rússum, ef almennur vígbúnaður væri ekki hafinn.

eitt með honum að hafa skipun keisara að engu? Það er ekki óhugsandi, að það hefði orðið til þess að fresta styrjöldinni, en vart til þess að taka alveg fyrir hana. Herbúnaðurinn var orðinn svo feikna mikill og verzlunarsamkepnin svo hörð og viðsjárnar milli stórveldanna svo ískyggilegar, að styrjöldin virðist hafa verið óumflýjanleg. En engu að síður getur sagan aldrei felld of þungan áfellsdóm yfir Suchomlinow og hans nútum.

Þorleifur H. Bjarnason.

Ritfregnir.

Jóhann Sigurjónsson: Lögneren. Skuespil í fem Akter med et Forspil. Gyldendalske Boghandel. Kbh. & Krla. 1917.

Þegar það fréttist, að Jóhann Sigurjónsson hefði í smíðum sjónleik með efni úr Njálu, mun margur hafa orðið forvitinn og þótt mikið undir hversu tækist. Auðsætt var, að hér var leitað á garðinn þar sem hann var hæstur. Það virtist ekki árennilegt að snerta við Njálu. Í fullar sex aldir hefir hún ein ráðið ljósi og skugga á lífi þeirra manna er hún greinir frá. Og svo skýrt hefir hún markað myndir flestra þeirra í marmara málsins, að erfitt mundi að breyta þar nokkrum drætti svo að ekki yrði úr umskiftingur. Um enga menn í Íslendingasögum hefir alþýða manna hugsað og rætt meira, en um persónurnar í Njálu. Allir þykjast þekkja Njál og Bergþóru og syni þeirra. Það sem þau hafa sagt, það hafa þau sagt í eitt skifti fyrir öll »í heyranda hljóði, svo að dómendur heyra um dóm þveran« meðan nokkurt eyra nemur íslenskt mál. Hver mundi þora að leggja Njál eða Skarphéðni önnur orð í munn í stað þeirra sem sagan hermir? Sá sem það gerði fengi ekkert hljóð, því að Njála hefir orðið.

Þarna er vandinn. Og þó mun hvern er Njálu les langa til að sjá þessa menn á leiksviði, sjá þessar sálir klæddar holdi og blóði, heyra orð þeirra fullum hljómi af vörum lifandi manna. Njála virðist framar öllum öðrum Íslendingasögum leiksaga — sjónleikur í álögum söguformsins. Að visu dýrleg eins og hún er, og þó um leið efni í stórfeldan sjónleik. — Og nú er hún komin á leiksviðið.

Þáttaskipunin er í stuttu máli þessi: Formálinn svarar til kap. 107 í Njálu. Hann er samtali þeirra feðganna, Valgarðar hins gráa og Marðar. Þar blæs Valgarður í öfundarglæður sonar síns og gefur honum bendingu um að rægja þá Höskuld og Njálssonu saman. Fórnaeldurinn, þar sem Valgarður brennir krossinn (sbr. Njála: »Valgarður braut krossa fyrir Merðis«) og biður Njáli og

ætt hans bölbæna, fyrirmyndar Njálsbrennu. Það er hatura- og hefndareldur heiðninnar, er brennir merki kærleikans og sáttfýsinnar.

1. þátturinn er glæsileg sumarveizla úti í skógi hjá Höskuldi. Þar eru Njáll og synir hans og Kári, og konur þeirra, Mördur og kona hans, Flosi, skáld og fleiri. Þar hefst rógur Marðar og þar heldur Njáll djúpúðuga ræðu um friðinn og föðurlandið, en hverfur síðan heim. Að lokum býður Skarphéðinn Höskuldi fóstbræðralag og skuli þeir blanda blóði saman. En Mördur hefir fengið þræl sinn til að kalla upp: »Hver drap Þráln?« um leið og Skarphéðinn lýkur máli sínu, og Höskuldur færist undan. Skarphéðinn reiðist og þeir bræður og Kári fara heim.

2. þáttur gerist í hlöðu á Bergþórshvoli. Mördur hefir farið fyrir Skarphéðin til Höskulds og falað goðorð hans, en fengið biturt afsvar, og heldur nú áfram rógi sínum, unz þeir bræður og Mördur ráða allir aðför að Höskuldi. Njáll og Bergþóra koma að, og verða nokkrar orðahnippingar, unz Skarphéðinn að undirlagi Marðar spyr föður sinn, hvort hann mundi harma meir dauða sinn eða Höskulds. Njáll reiðist, og segir að betra þætti sér að láta tvo sonu sína — og lifði Höskuldur. Þátturinn endar á viðræðu þeirra Njáls og Bergþóru um Skarphéðin.

3. þátturinn gerist heima hjá Höskuldi, samtali þeirra Höskulds og Hildigunnar, unz Njál ber að garði. Hann biður Höskuld að selja sér goðorð sitt og býðst til að útvega honum annað í staðinn í átthögum Hildigunnar. Höskuldur lætur loks tilleiðast og fær um stóir samþykki Hildigunnar. Njáll snýr heimleiðis og Höskuldur fylgir honum úr garði. Hildigunnur býst að fagna honum, er hann komi aftur, en í stað hans kemur Mördur til að boða henni víg hans, og Höskuldur er borinn inn á líkbörum með skikkjuna Flosanaut yfir sér. Hildigunnur lyftir skikkjunni, kyssir líkið og sver hefnd.

4. þáttur er veizlan fyrir Flosa, sem endar með því að Hildigunnur steypir skikkjunni yfir hann.

5. þáttur er Njálsbrenna.

Enginn efi virðist mér á því, að Jóhann Sigurjónsson hefir hér skapað listaverk er getur honum maklega frægð og lifir lengi á leiksviðinu. Öll meðferð hans sýnir það greinilega, að hann hefir til fulls skilið þann vanda er hann tókst á hendur, og hann hefir víðast náð þeim tókum er snillingum einum auðnast. Hann hefir haft þá aðferðina, er eg hygg að ein sé rétt, að fylgja efni og orðum sögunnar svo langt sem leiksviðið leyfði, en bæta við eða víkja

frá einungis þar sem það virtist nauðsynlegt til að rekja örlaga-þræðina á leiksviðinu. Hann hefir í hvívetna reynt að láta hvern manna koma fram í samræmi við skilning söguhöfundarins á honum, og hann hefir dýpkað þann skilning, fært út í hálfur það sem hálfkveðið er í sögunni og snúið í orð og athöfn mörgu sem þar má lesa milli lína.

Eg skal nefna nokkur dæmi.

Hann lætur Valgarð herða á Merði með því að gera hann hræddan um Þorkötnu konu sína fyrir Skarphéðni. Um það getur sagan ekki, en hún lætur Gizur hvíta segja, að Mördur unni konu sinni »sem augum í höfði sér«, og Þorkötnu, að hún »kveðst þess fyrir löngu búin, að skildi með þeim Merði«. En engin hvöt er illvígari en afbrýðisemin. Þá lætur skáldið Mörd gefa það í skyn, að Kára lítist vel á Hildigunni. Um það þegir sagan. En hún segir oss að Kári gekk að eiga Hildigunni eftir alt sem á undan var gengið, og er ólíklegt að svo hefði farið, ef honum hefði ekki frá öndverðu verið blýtt í þell til hennar.

Það atriðið í Njálu sem mest veltur á og þó er verst frá gengið er rógur Marðar, er hann rægir þá saman Höskuld og sonu Njáls. Njála fer þar svo fljótt yfir sögu, að lesandanum verður torskiðið hvernig Mördur gat leitt Njálssonu svo langt. Jafnframt er víg Höskulds blettur sem ekki verður af þeim þvegin. Og enn er það óskiljanlegt, að Njáll situr hlutlaus hjá og gerir ekkert verulegt til að skirra vandræðum, svo ant sem honum var um Höskuld og sonu sína. Skáldið hefir fundið þetta vel og reynt hér að gera þá brú til skilnings, er söguna brestur. Hann hefir tekið upp öll þau atriði úr rógi Marðar, er sagan greinir og gefur í skyn, og greitt úr þeim sem best og bætt nokkrum við, smbr. orð Njálu: »Mördur rægir Höskuld að vanda ok hefir nú enn margar nýjar sögur og eggjar einart Skarphéðin ok þá at drepa Höskuld«. Hann lætur Mörd slá á þá strengi hjá Skarphéðni, að faðir hans hafi haft hann að olnbogabarni og tekið Höskuld fram yfir hann. Hann lætur Skarphéðinn bjóða Höskuldi fóstbræðralag, sem auðvitað var ágætur prófsteyninn á hugarfar Höskulds. — Úr aðgerðaleysi Njáls bætir hann með því að láta hann fara til Höskulds, fala goðorð hans og reyna að fá hann til að setjast að í átthögum Hildigunnar, sem Njála lætur Flosa gera. Virðist mér að skáldið hafi gengið svo vel frá þessum atriðum sem unt var, eftir því sem drög voru til í sögunni. Og þyki enn ávant, þá hygg eg að það sé fremur sök efnisins en meðferðarinnar. Eg held sem sé, að rógur

sé það efnið sem verst er viðfangs allra, sökum þess að engin samúð er hugsanleg með rógberanum, og sá sem lætur leiðast af rógi er að sama skapi blindur, en ljós skilningsins dvín þar sem blindnin byrjar. — Önnur hætta sem hér er á ferðum er sú, að Skarphéðinn, sem allir lesendur Njálu unna fyrir orðspeki hans og karlmensku, kemur á leiksviðinu oftast í sambandi við Mörd og sést því frá sinni veiku hlið, en í sögunni snýr oftast sterkari hliðin að lesandanum. Sjónleikurinn gefur oss ekki eins fjölfróða mynd af Skarphéðni og Njála, en að vísu er það sem til hans sést í samræmi við tilsvaramandi hluta sögunnar.

Um aðrar persónur leiksins, þá hygg eg að þær njóti sín engu ver en í sögunni og að höfundur hafi dýpkað réttan skilning á þeim og anda sögunnar. Hildigunni hefir hann gert einhverja hina glæsilegustu konu sem á leiksvið hefir komið, og eru einkum þriðji og fjórði þáttur, þar sem hún er aðalpersónan, undrafagrir og máttugir. Í leiknum er stígandi, sem hrífur með fullum myndugleik, en yfir öllu sami ljóðblærinn sem einkent hefir önnur leikrit Jóhanna Sigurjónssonar. Og það hygg eg, að hvar sem hann verður leikinn á því leiksviði og af þeim leikendum sem honum hæfa, þá beri hann frægðarorð íslenskra bókmenta um heiminn.

G. F.

Jóhann Sigurjónsson: Bjærg-Eyvind og hans Hustru. — Skuespil i fire Optrin. Med 40 Illustrationer fra Svenska Biograf. Tredje gennemsete Udgave. Gyldendalske Boghandel. Kbh. & Kria. 1917.

Þessi skrautútgáfa, sem kemur út í 10000 eintökum, er ljós-vottur þess sigurs er höfundur Fjalla-Eyvindar hefir unnið. Hér eru leikmyndir þær er teknar hafa verið fyrir kvikmyndahúsin komnar inn í teksta leikritsins sjálfs til skýringar og prýði, og segir höf. í formála, að slíks séu engin dæmi áður um aðrar bækur. Leikmyndirnar virðast ágætast. Victor Sjöström leikur Fjalla-Eyvind, en frú Edith Erastoff Höllu. Leitt er að landið á myndunum er Lappland og ekki Ísland. Er það stríðinu að kenna. Annars er landslagið furðu sviplíkt. Útgáfan er merkileg, og mun margan fýsa að eignast hana.

G. F.

Gunnar Gunnarsson: Drengen. Gyldendalske Boghandel. Kbhvn — Kria. MDCCCXVII.

Gunnar Gunnarsson er iðinn að rita. Með skömmu millibili sendir hann út hverja bókina eftir aðra. Og alt af er eitthvað varið í það, sem hann lætur frá sér fara.

Bók sú, sem hér um ræðir, er eigi komin út á íslenzku enn þá, en vonandi verður þess eigi all-lengi að biða. Minna má menta-lyður Íslands ekki gera fyrir þessa Væringja sína, sem flytja nafn landsins út um allar álfur, en að sjá um, að ritverk þeirra komi jafnóðum út á íslenzku, og minna má þjóðin ekki gera fyrir þá, en að lesa bækurnar, þegar út eru komnar — jafnvel þótt fyrir þá sök yrði keypt og lesið einni bókinni minna af Lögbergs-sögum og öðru álíka góðgæti.

Bók þessi er eiginlega engin skáldsaga, þótt í skáldsöguformi sé, heldur miklu fremur ljóð í sundurlausum orðum. Og sem ljóð verður að dæma hana.

Hún segir frá æfi manns, sem allan aldur sinn heldur áfram að vera barn — eða skáld. Varðveitir næmleik barnsins fyrir röddum náttúrunnar, ómunum neðan úr djúpi sálar sinnar og þeim heilaga nið lífsins sjálfs, sem almenningur heyrir ekki fyrir hávaða dægurstritsins eða gellandi ópum ástríðnanna.

Og þessu er lýst ljómandi vel. Fyrst samlífi drengsins og árinna, sem rennur fyrir neðan bæinn hans — að því er virðist án upphafs eða enda, eins og straumur tímans. Þá kynnum hans af hafinu, sem reynast örlagaþrungin, er á líður. Svo kemur dauðinn sem óboðinn ægilegur gestur inn í líf hans og skilur eftir sig ískaldan hroll. En svo vaknar hjarta hans til nýs lífs og fyrsta ástin sprettur upp, feimin og brosandí, til þess eins, að biða sáran ósigur og óbætanleg vonbrigði. En þá tekur silfurstrengurinn að hljóma í hjarta drengsins, silfurstrengur skáldskaparins, og sorg og gleði renna saman í æðri samhljóm, sem huggar, svarar og opinberar.

Þá er einn þáttur um drenginn og árin — árin, sem líða og gera alla aðra fullorðna, harða og sterka, en skilja hann eftir sem barn, viðkvæmt og einmana barn. Hann einn »kemst ekkert áfram« — vill það ekki, og lætur sér nægja, þrátt fyrir óvirðing annarra manna, að vera daglaunamaður hjá vini sínum, Péttri kaupmanni, sem átt hefir stúlku þá, sem drengurinn elskar alla æfi. Kaupmaðurinn er góður maður, sem alt hepnast, en er þó sí-soltinn eftir meira — meira, og vill vekja »frama-löngun« hjá drengnum. En

það tekst ekki. Hann á nógan auð í samræmi sjálfs sín og náttúrunnar, gírnist ekkert annað. Og þannig lifa árin.

Drengurinn og máttarvöldin. Máttarvöld hafa og himins, lifa og dauða. Ísavor eitt fer hann um nótt út á hafsinn — til þess að fá að líta hafið augum, óbundið og frjálst. En jaki losnar með hann frá aðalísum og hann rekur út til hafs. Og drengurinn stendur þar einn á grænblikandi ísum, milli hafs og himins, í tindrandi sólskinu — tekur ofan og flytur máttarvöldunum lofsöng um lífið og dauðann. Hann hefir séð strauminn renna »frá eilífðarfjöllum í eilífðar-mar«. Hann hefir fullkomnað starfið og runnið skeiðið á enda. Og hann þakkar fyrir alt — hneigir sig fyrir öllum og fer, eins og Tagore segir. —

Þegar eg las bók þessa, datt mér hvað eftir annað í hug bók kínverska heimspekingsins Lao-tse um tao, »vegin«, alvaldið, instakjarna tilverunnar. Blærinn er sá saml. »Allir þessir hlutir, sem mennirnir kalla dauða«, segir Gunnar, »gefa tveim höndum og áhyggjulaust af auðæfum sínum — eins og lífið ætlast til — án þess að verða að fátækari, og gera hvern, sem vill, að trúnaðarmanni sínum. En mennirnir eru svo heimskir, að þeir loka hjarta sínu — hver fyrir öðrum og fyrir náttúrunni«.

Og Lao tse segir: »Tao er ótæmandi eins og ríkuleg uppsprettulind. Það kallast móðurskautið djúpa. Það er undirrót himins og jarðar. Það er eilíft og starfar blíðlega og án strits«. »Sá, sem gírnist lítið, mun öðlast það. En sá, sem gírnist mikið, mun fara á mis við það«.

Og orð Lao-tse um sjálfan sig: »Eg er eins og rekald og á ekkert heimili. Allir aðrir hafa gnægð auðæfa, en eg einn er tómhentur. Hvað eg er heimskur! Eg er frá mér. Allir aðrir ljóma af hyggindum, en eg einn lifi í dimmunni. Menn hafa ærna dómgreind; eg einn er heimskur.

Eg er sem hafið; eg berst áfram í bylgjum og veit ekki, hvar eg get fundið hvíld. Allir aðrir hafa eitthvað að starfa; eg einn er ólaginn og dugnaðarlaus.

Eg einn er ekki sem aðrir menn, en eg heiðra hina nærandi móður«. —

Að öðru leyti ætla eg mér ekki að dæma um bók þessa. Ef til vill má finna á henni galla — og marga kosti hefir hún, sem eg hefi ekki upp talið. En hún er það sem hún er — og mun lifa.

Jakob Jóh. Smári.

Gunnar Gunnarsson: Smaa Skuespil. G. B. Kbhvn — Kria. MCMXVII.

Þetta eru víst fyrstu leikritin, sem út koma eftir G. G. Hvortveggja eru einþættingar. Hið fyrra heitir *Bræðurnir* og segir frá bræðrum tveim, sem orðnir eru óvinir, sökum þess, að sá eldri hefir, að ytra áliti, sýnt yngra bróður sínum alla konar fjandskap — en alt hefir það verið í góðu skyni gert, til þess að ala hann upp og stæla — bjarga honum. Er leikritið mest samtál bræðranna, er sá eldri liggur á banasænginni.

Það er skemst af að segja um þetta leikrit, þótt stutt sé, að það lýsir mjög víðtækri og nákvæmri sálþekkingu hjá höfundinum, svo að það er því nær sem nýtt landnám, að fylgja honum gegnum alla króka í sálum bræðranna — einkum hins eldra, sem er miklu fjölbreyttari og merkilegri sál. Er hér yfirleitt ljómandi laglega af stað farið, þótt erfitt yrði sjálfsagt, að leika einþætting þenna; þar sem svo lítið »gerist«. Það mundi krefjast ágættra leikenda — og ágættra áhorfenda.

Síðara leikritið heitir *Sleginn* (Ramt) og fjallar um prest, sem verður þess vís, að hann er holdsveikur. Miklu virðist mér minna í það varið, þótt afleiðingar ógæfu þessarrar sé dregnar skörpum dráttum, er ást þeirra hjónanna og trú prestsins á guð brestur sem vatnsbóla. En síðasta ógnun prestsins gegn guði finst mér t. d. næsta ósmekklek. Og enn hefi eg það út á þetta að setja, að svo virðist, sem höf. hafi aldrei þekt þá »trú, sem fjöllin flytur« og stenztt alt aðkast örlaganna. Allir trúaðir menn hjá honum virðast brotna sem reyr, ef illa fer um hagi þeirra. En á hlön bóginn — þetta er algengt, og höf. hefir auðvitað leyfi til að taka þá hliðina til meðferðar, en það verður þreytandi til lengdar — sbr. síra Sturlu í »Ströndinni«. Og til eru þó þeir menn og konur, sem geta séð alt »frá sjónarhæð eilífðarinnar«.

Jakob Jóh. Smári.

Sígfús Blöndal: Drotningin í A'geirsborg og önnur kvæði. Rvík. Útgefandi Þorst. Gíslason. 1917.

Höfundur kvæða þessarra er skáld — á því er enginn vafi. Honum er sýnt um að draga upp glöggar og áhrifamiklar myndir, sem festast í huga lesandans. Má þar til nefna aðalkvæðið, sem mjög er auðugt að slíkum myndum og þrungið þeim anda og krafti, sem lætur lesandann finna til með skáldinu og sjá það sama sem hann sér. Fleiri ágætiskvæði má og nefna, svo sem *Draum*

Hannibals, sem er snild að allri efnismeðferð og kjarnort mjög, Seiðkonuna, sem minnir á Grím Thomsen, Síðustu sigling Jóns Indíafara, sem flytur mann með valdi gegnum aldirnar, að dánarbeði Jóns gamla og lyftir blæjunni frá sál hans í óráðinu, unz hann »siglir á guðs síns fund«, o. fl. o. fl. Í síðast nefndu kvæði eru ýms orðatiltæki Jóns, og er þeim vel fyrir komið.

Yfir kvæðunum hvílir frumlegur blær og hressandi. Höf. er yfirleitt ólíkur öðrum íslenskum skáldum og má ef til vill rekja það til þess, hve fróður hann er um bókmentir annarra þjóða og tíma. Hann er enginn heima-alningur.

Gallar á kvæðunum eru helzt stíðleikur á bragarhætti sumastaðar, en ekki kveður mikið að því. Einna mest ber og á því í hinum þýddu kvæðum aftan við bókina.

Þýðingarnar eru misjafnar að gæðum, sem von er til, en þó mun yfirleitt vera fengur í því, að hafa þær. Vil eg þar til nefna m. a. Skóarann eftir Tennyson og grísku kvæðin. Önnur eru aftur talsvert gölluð — sum.

Eitt kvæði þarf eg að minnast á enn — Skriftamál þingmannsefnisins. Það ætti í raun og veru að syngjast á kjörfundum, eins og höf. bendir á. En líklega eru kjósendur yfirleitt ekki þannig gerðir, að þeir geti lyft sér upp í svo guðdómlegt gaman.

Margt mætti fleira og nánara um bók þessa segja, þótt ógert verði látið hér, því að tilgangur minn er einungis sá, að minnast lauslega á bók, kvæðabók, sem hefir eitthvað nýtt og áður ósagt að færa oss Íslendingum. Og það hefir Drotningin í Algeirsborg, mörgum kvæðabókum fremur.

Jakob Jóh. Smári.

Magnús Gíslason: Rúnir. Rvfk. 1916.

Kvæðabók þessi hefir hlotið ómilda dóma sumastaðar og það ómaklega. Fyrst og fremst verður að líta á hag skáldsins og alla aðbúð, andlega og líkamlega. En þótt því sé slept, þá er margt svo gott í kvæðunum, að mjög er ranglátt, að varpa þeim öllum til hliðar með sleggjudómi.

Höf. hefir lengst af átt við bág kjör að búa, heilsuleysi og fátækt. Kennir þess víða í kvæðunum, hve kunnugur hann er þeim gestum, og er þá víða vel að orði komið, t. d. í kvæðinu **Fátækt**:

Oft í þeirri örgu nauð
ertu af blundi vakinn,
við að sáran biðja um brauð
börn þín svöng og hrakin.

Náðir lýða ef leitar á,
lengist gata að vinum;
gróðans menn ei gerast þá
græðugari hinum.

.....

Litist þú um land og haf,
leitir eftir brauði,
virðist standa öllu af:
angist, kvöl og dauði.

Lausavísurnar eru og sumar anjallar og enn fremur má nefna kvæðin um Þorgíla gjallanda og Torfa í Ólafsdal og einna helst Draumadísina, sem er mjög gott kvæði.

Gallar eru ýmsir á kvæðunum, yrkisefnin stundum léttvæg og meðferðin of alvanaleg og málvillur á stöku stað. En það er engin furða. Hitt ber að undrast, hve langt höf. hefir samt sem áður komið sumastaðar, þrátt fyrir alla örðugleika.

Jakob Jóh. Smári.

Axel Thorsteinsson: Nýir tímar. Rvfk. Bókav. Ársæls Arnasonar. 1917.

Eg hefi annarestaðar minnst á bók þessa og get því verið stutt-
orður. Höf. ritar heldur lipurt og eðlilegt mál og er sýnt um að
halda þræði sögunnar, vill vel og hugsar fagurlega. En hann skortir
fastari tök á lífinu og persónunum, hættir um of við að láta sér
nægja að rissa, í stað þess að móta með hörðum höndum. Og eink-
um þarf hann að verða þroskaðri í hugsanalífi sínu. En líklegt
þykir mér að hann eigi eftir að rita góðar bækur, ef hann heldur
áfram að afla sér æ meiri þekkingar og víðsýnis, en hann getur
haft enn þá.

Jakob Jóh. Smári.

Axel Thorsteinsson: Sex sögur. Rvfk 1917. Bókav. Guðm. Gamalielssonar.

Um sögur þessar má líkt segja og um Nýja tíma. Flestar

fjalla þær um ást, en geta eðlilega ekki sýnt hana nema frá örfáum hliðum og er það skaði. Best af sögum þessum þykir mér Ma-dama Þorgerður; þar tekst höf. að líta ofan á efnið með hressandi kýmni — innan um alvöruna. Gaska er og snotur saga. Aftur eru hinar heldur smávægilegar að efni og meðferð.

Jakob Jóh. Smári.

Jónas Þorbergsson: Frskirkja — Þjóðkirkja. Fyrirlestur haldinn á Akureyri 26. janúar 1917.

Í fyrirlestri þessum ræðst höf. á frskirkjufyrirkomulagið, eins og það t. d. tíðkast í Ameríku, og finnur á því marga galla. Er því ekki að leyna, að lýsing hans á því er ekki fögur. Höf. vill hafa þjóðkirkju, mjög »rúmígóða«, sem sjá má af loka-tillögum hans, en þær eru á þessa leið:

»Hin margbrotnu kenningakerfi verða að hverfa, og hin fáu meginatriði, sem öllum kemur saman um, að verða hyrningarsteinarnir undir framtíðarkirkjunni, sem verður svo rúm, að allir, sem kristnir vilja vera, geta staðið þar innan veggja. Þar verða hinar mörgu vistarverur.

Eg leyfi mér nú að leggja fram þessar tillögur:

1. Að ákvæðið um það, að hin ev. lút. kirkja skuli vera þjóðkirkja á Íslandi, sé numið úr lögum.

2. Að í stað hinnar lútersku kirkju sé stofnsett »Hin íslenska kristilega kirkja«, sem grundvallist á öllum þeim meginatriðum, sem geti jafnframt orðið samvinnugrundvöllur allra þeirra trúflokka, sem nú berjast um völdin í landinu.

3. Að ríkið taki að sér að vernda kirkjuna á þessum grundvelli, enda sé ekki kenningafrelsi presta á annan hátt takmörk sett, og að svo sé búið um kjör presta og hag kirkjunnar, að þau skilyrði bresti ekki, til þess að hún geti orðið blessunarrík stofnun í þjóðfélaginu.

4. Að trúbragðakenslu við háskólann verði hagað svo, að þar sé ekki einni trúarstefnu gert hærra undir höfði en öðrum.

5. Að uppfræðslu barna í kristilegum efnum sé hagað samkvæmt þessu.

Tillögur þessar virðast mér fara í mjög æskilega átt, en erfiðleikar mundu sjálfsagt verða á framkvæmd þeirra. En þær eru alt um það athugunarverðar.

Jakob Jóh. Smári.

Glmubók, gefin út af Íþróttasambandi Íslands. Með 36 myndum. Rvfk 1916.

Þetta er sú bókin, sem mér varð einna starsýnast á, er eg fór að skynja bókaforðann, sem út hafði komið í fimm ára fjarveru minni. Ekki vegna bókmentagildis vitanlega — hún er í öðru skyni skráð — heldur af því, að hún var mér, og öðrum er íþróttum unna, langþráður gestur. Það er að vísu nokkuð seint að fara að fagna henni nú, er svona langt er umliðið síðan hana bar að garði. En vonandi er sá tími hverfandi í samanburði við æfina, sem hún á fyrir höndum að lifa, til gagns og gamans íslenskum drengjum, og þjóðinni til atgervisauka.

Við reigjumst af mörgu, Íslendingar, og eigum þó fremur fátt í förum okkar að miklast af, enn sem komið er. Eitt af því fáa er glíman. Hún gæti orðið okkur til mikils manngildisauka og sæmdar, ef góð rækt væri við hana lögð og hún tekin, frammar en verið hefir, í þjónustu uppeldisins. En fyrsta skilyrði þess, að hún geti komið að tilætluðum notum, er að æskulýðurinn eigi kost á handhægri bók sér til leiðbeiningar og uppörvunar í þeim efnum. Úr þessari brýnu þörf bætir Glímubókin — og gerir það með heiðri og sóma.

Íþróttasambandið á miklar þakkir skilið fyrir vikið. Til verkeins hefir verið vandað sem bezt. Mannvalið gat naumast tekist betur. Höfundarnir — G. Kr. Guðmundsson, Hallgr. Benediktsson, H. Hjörvar, M. Kjaran og S. Pétursson — eru allir afburða-glímumenn, bragðvanir og bragðfimir, og nákunnir eðli glímunnar og öllum tilbrigðum. Og það sem mestu varðar: þeir eru engu ósnarp-ari í athugunum en í atlögum. Aðalkostur bókarinnar er gjörhygli- in í lýsingum bragða og varna. Þá spillir það heldur ekki til, að sá maðurinn, sem fært hefir bókina í letur, er allra manna orðfima-astur á íslenskt mál, jafn pennamjúkur sem hann er sótmmjúkur. Það er Helgi Hjörvar kennari. Enn eykur það gildi bókarinnar að mun, að Guðm. Björnson, landlæknir, sem er varaformaður Íþróttasambandsins, hefir verið þarna í ráðum, svo að treysta má því, að í glímureglunum sé hvergi brotið á móti boðorðum heilsufræðinnar.

Höfundarnir hafa sett sér þrenns konar verkefni: að segja sögu glímunnar, að lýsa henni í sókn og í vörn eins og hún er og hefir verið, og að marka henni sem heillavænlegasta framþró-unarstefnu, með því að byggja út öllu ófögru, óhollu og óglímu-mannlegu, sem slæðst hefir að þessari íþrótt. Síðastalda atriðið hefir ekki tekist sízt. Það er mér mesta fagnaðarefnið. Vafasöm

smáatriði í bragðalýsingum nenni eg ekki að elta ólar við, enda ekki áhættulaust fyrir gamlan mann og óglíminn að deila við dómara. Reynslan er ólýgnust í þeim efnum, en hún er þeirra megin — og hjá ókomna tímanum.

»Innganginn« hefir Helgi Hjörvar einn samið, og rakið þar sögu glímunnar alt til þessa dags. Kaflinn er einkar-sken-tilegur aflestrar, skipulega með efni farið og orðfærið fyrirtak. Hitt er annað mál, hvort þar geti allir stafir staðist. Um ýms meginatriði skortir enn óbyggjandi heimildir, og því vorkunn þótt menn reyni að skapa í skörðin. Fjarri sé það mér að álasa höf. fyrir það; gott að á sem flestar götur sé bent. En samferða get eg ekki orðið honum alstaðar.

Um heiti glímunnar og innlendan uppruna felst hann á skoðun mína í »Íþróttum fornmannna«, en telur hana þó engan veginn örugga. Traustari sönnun held eg verði þó varla fundin. Og ekki lætur landlæknir neinar vöflur á sér finna um það efni í atha. sínum á bls. 43. Hann gengur sömu götuna og eg. Óvandlátari er höf. þegar hann er að leiða rök að tilgátu sinni um stakkglímunu sína og lausatökin sem »tegund reglubundinna fangbragða«, er töðkast hafi um öll Norðurlönd, jafuhliða hryggspennunni. Heljarfangið, er menn hafi verið látnir þreyta í augsyn konunga í fyrndinni, hafi öðrum þræði verið stakkglíma; hún hafi enn verið þreytt á Íslandi, og þar eigi glíman til foreldris að telja. Tilgátan er ekki óalitleg í svip. En sannanirnar flugufætur. Eina átyllan er »fangastakkurinn«. En undir hann hillir hvergi nema í dimmum þokuslæðingi ungra ævintýrasagna. Kjalnesingasaga er elzta — og ef til vill einasta heimildin. Annarar hef eg ekki látið getið í »Nordb. legeml. Uddannelse«. Má vera að aðrar yngri séu til; um það þori eg ekki að segja að sinni, enda skiftir það minstu. En »víða« er hans ekki getið »í fornritum vorum«, eins og höf. kemst að orði; það er víst. Af Kjaln.s. ályktaði eg með hálfum hug, að heitið væri fornt og hefði fatið ef til vill verið notað á þann hátt, er gefið var í skyn í sögunni, og furðar mig nú satt að segja á þeirri dirfsku minni. En Hjörvar lætur sér ekki fyrir brjósti brenna að byggja á þessari ungu og óvöndu heimild heljarmikla kenningu um sérstaka tegund fangbragða, sem annars engiun flugufótur er fyrir í nokkurri viðlitsverðri heimild úr norrænni fornöld, hvorki á Íslandi né annarsstaðar á Norðurlöndum. Að minsta kosti þekkir hvorugur okkar Hjörvars neina slíka, og sjálfsagt ekki landlæknir heldur; hann knósetur stakkfangið án þess að spyrja um skírnarseðil. Þau fang-

Þrögð eru þannig vaxin, að hafi þau verið tízkuraun í samkvæmum og á mannamótum hér á landi á söguöldunum, gat naumast hjá því farið að þau leiddu einatt til afdrifamikilla atvika, eins og aldarandinn var þá. Og því finst mér lítt hugsanlegt, að þau gæðust þá hvergi fram í áreiðanlegum fornritum, hvorki í sögum né kveðskap. Af þessari þögn bókmentanna virðist mér ekki of djarft að álykta um þessa blessaða úlpuglímu, að hún hafi að minsta kosti ekki tíðkast hér á landi, þó að hún kunni að hafa verið til á Norðurlöndum einhvern tíma í fyrndinni. En sé sú ályktun rétt, þá getur ekki glíman heldur verið af henni runnin, svo framarlega sem hún er innlend íþrótt frá upphafi.

Um hitt þarf engum getum að leiða, að ýmiss konar lausatök hafi tíðkast hér eins og hvarvetna á bygðu bóli, einkum axlatök, en að eins ekki sem nein reglubundin tízkufangþrögð, með sérstakan einkennisbúning í eftirdragi. Og mikla þökk kann eg höf. fyrir það, hversu líðlega hann rekur skyldleik glímunnar við lausatök annars vegar og hryggspennu hins vegar, að hún sé í uppruna sínum bil beggja. Um það er eg honum alveg sammála, og mér hefir aldrei komið til hugar að bera brögður á það. Hefi alt af talið það sjálfgefið, eins og ýms orðtök mín í glímukaflanum í Íþr. Fornm. bera ótvíræðan vott um (t. d. bls. 190: »nýbrigði frá fangþrögðunum fornu«; sbr. 180 og 189). Að eg fór ekki út í þá sálma að rekja þann skyldleika í einstökum atriðum kom til af því, að eg þóttist ekki eiga þar nema getgátum til að dreifa. Mér kom það því mjög á óvart, er Hjörvar eignar mér þá ankannalegu skoðun, að glíman sé eigi runnin af eldri fangbragðategundum, heldur komin eins og fiskur ofan úr fjalli af fjarskyldri íþrótt. Sjálfur á eg að vísu nokkra sök á þeim misskilningi. Eg kemst sem sé svo að orði á einum stað (bls. 191), að líklega sé »glímuíþróttin afspringur þjóðlegustu skemtunar Íslendinga á söguöldinni, knattleikanna«. En þar á eg að eins við það, hvaða þjóðlífsatriði muni hafa gefið tilefni til framvaxtar hennar af eldri fangbragðategundum. Höf. gleymir því, þar sem hann talar um uppkomu nýrra íþróttar (bls. 2), að þær eru ekki eingöngu afspringur eldri samkynja íþróttar, heldur líka stæling á ýmsum atriðum í atvinnuháttum og annari lífsbaráttu þjóðanna, sumar að öllu leyti (frum-íþróttir), aðrar að nokkru leyti. Þessa ber einkum að gæta, þegar um forna tíma er að ræða og frumlega menningu. Þá eru íþróttirnar ekki, eins og nú, nokkurs konar uppeldislyf, fyrir utan og ofan vinnubrögð og viðskifti manna, vísindalega tilreidd af heilsufræðingum og uppeldisfræðingum og áletruð föstum afnota-

reglum. Þá eru þær á eilífu öldukviki. Það eru kröfur lífsins (í atvinnu, hernaði, samkvæmisháttum o. s. frv.), er sníða þeim stakkin að mestu, skapa þær og breyta þeim. Þær eru alt í senn: afspringur lífsbaráttunnar, undirbúningur undir hana og liður í henni. Nú vitum við um glímuna, að hún er samruni úr hryggspennu og lausatökum. Og þá liggur óneitanlega næst að leita að orsökunum til þess samruna. Hvar var sá leikvöllur, þar sem þessar fangbragðategundir héldust í hendur, þannig að úr einni sló í aðra? Hverjar voru þær fangraunir, þar sem aflinu og bragðfiminni var látið frjálst að heyja hildi um aðstöðuna og átökin? Það þarf nú víst ekki að fletta neinum blöðum um það, að flestar fangbragðaviðureignir manna, þar sem um líf og dauða var að tefla, voru sjaldnast annaðhvort hryggspenna eða lausatók, heldur hvorttveggja, hvað af öðru. Menn runnust á og leituðu sér fangstaðar sem best mátti verða. Af því stafar líklega frá upphafi vega heitið fang. Sterkari manningum kom það betur að ná hryggspennunni; en hinum, sem mýkri var og síður átti aflinu að treysta, var um að gera að forðast að láta lykja sig svo örmum, að hann gæti ekki notið bragðfimi sinnar. Viðureignin mun þannig löngum hafa byrjað sem lausatók, en snúist upp í hryggspennu, eða orðið bil beggja — glíma, eða eitthvað í þá áttina. Eftirmynd af þessum heljarglímum lífsbaráttunnar finnum við einmitt í knattleikunum. Allar knattleikafrásagnir fornþekktanna bera það ótvírátt með sér, að fangbrögð voru einhver ríkasti þátturinn í leikaðferðinni (sbr. Ípr. Fornm. 213—222). Þar er skipað til leiks öldungis á sama hátt og í bændaglímu; tveir og tveir eigast við, þeir sem jafnstærkastir eru; þeim lendir saman í fang eða sviftingar, sem eru sannnefndar »glímur« í eldri merkingu þess orðs (snöggviðbrögð, brögð). Það liggur beint við, að þær viðureignir í leikum breyttust og þróuðust einmitt í glímuáttina. Þar er sá gróðrarreiturinn, sem líklegast er að glíman hafi sprottið upp úr, smátt og smátt. Við þekkjum því miður ekki knattleikinn forna sönkvæmlega, að við vitum hvernig fangbrögðunum var fyrir komið í leikaðferðinni; vísast að þeim hafi verið markað þar reglubundnara svið en okkur virðist; hitt vitum við, að undir þeim var sigurinn einatt kominn. Er það tilviljun ein, að sérstök glímumót koma lítið við sögu á meðan úti knattleikarnir stóðu í blóma? En síðar (á 13. og 14. öld), er þeir eru sama sem hornfir úr sögunni, fara þjóðleikar Íslendinga mestmegnis fram inni í húsum, og þá sjaldan sagnaritararnir lofa okkur að gægjast inn í stofuna, þá sjáum við

að þeir leikar eru enn samtvinnungur úr eins konar knattleik og fangbrögðum (hornaskinnleikar) eða þá eingöngu glímumót. Bendir ekki þetta á, að eftir því sem glímunum vex fiskur um hrygg verða þær meginþáttur þjóðleikanna og loks alveg sjálfstætt samkomuefni? Gauksunginn bolar fóstbróður sínum út úr hreiðrinu.

Þetta var það, sem fyrir mér vakti, er eg kallaði glímuþróttina afspring knattleikanna, og vona eg að það megi til sanns vegar færa.

Eg hallast meir og meir á þá sveifina, að glíman hafi ekki verið orðin sjálfstæð íþrótt fyrir en löngu eftir kristnitöku, en að rætur hennar standi þó alla leið aftur um knattleikavelli sögualdanna. Menjar hennar finnast í stöku atriðum frá þeim öldum, en þær eru framvaxtarskeið hennar en ekki fullorðinsár.

Og nú tek eg eftir einu, sem eg hefi ekki veitt athygli áður og mjög styður minn málstað. Í Egilss. 40 — en sá staður er víst elzta heimild orðsins glíma — virðist greinilega bent til hins forna sambands glímunnar við knattleikana. Eg get ekki betur séð en að orðið (í flt.) sé þar beint notað um knattleika-ryskingarnar: »Egill var mjök at glímum; var hann kappsamr mjök ok reiðinn, en allir kunnu þat at kenna sonum sínum, at þeir vægði fyrir Agli. Knattleikr var lagiðr — —«. Knattleikssagan er sögð til dæmis um reiðigirni Egils við »glímurnar«.

Fleira held eg ekki að okkur Hjörvar beri á milli. — Haft hann heill unnið verkið, og þeir félagar allir.

Nú mænum við vonaraugum eftir næstu bók frá Í. S. Í. — fimleikabók?

Björn Bjarnason frá Viðfirði.

Þorleifur H. Bjarnason: Fornaldarsaga handa æðri skólum, Rvfk 1916. IV + 224 bla. 8vo.

Saga þessi er, eins og titillinn sýnir, ætluð æðri skólum íslenzkum og þá sérstaklega lærisveinum hins almenna mentaskóla í Reykjavík, en þar hefir höfundurinn um mörg ár haft sögukensluna á hendi og getið sér góðan orðstír fyrir.

Skifting bókarinnar er þessi: Fyrst er örstuttur inngangur (2 bla.) um forsetgu, steinaldir, bronsöld og járnöld. Þá kemur fyrsti aðalkaflinn um Austurlandapjóðir (11 bla.), þá er annar kaflinn um Hellena, eða Forn-Grikki (75 bla.). Þriðji og síðasti kaflinn er saga Rómverja og er hann, sem vænta mátti, þeirra lengstur (135 bla.). Loks er litill eftirmali (1 bla.) og gerir höfundurinn

þar grein fyrir stuðningsheimildarritum sínum og aðferð sinni við samning bókarinnar. Aftast er efnisyfirlit yfir bókina.

Þarna hafa þá Íslendingar fengið þriðju kenslubókina á 50 árum í Fornaldarsögu og — að minni hyggju — þá beztu, að ólöstuðum fornaldarsögum þeirra bræðranna Páls Melsteð (Rvík 1864) og Hallgríms Melsteð (Kmh. 1900).

Adalskilyrðin fyrir góðri kenslulubók í sögu munu einkum vera þessi: í fyrsta lagi hárrétt frásögu eða svo nærri sannleikauum sem komist verður; í öðru lagi heppilegt val úr því nær óþrotlegu efni, þannig að hvorki minnið þreytist um of né andinn sljófgist við stagl eða smámuni, heldur sé það til tínt, sem mestu varðar; í þriðja lagi hreint mál og tilgerðarlaust, lipurt og þýtt orðfæri; í fjórða lagi vandvirkni í öllum ytri frágangi.

Um fyrsta atriðið hygg eg, að allir muni geta orðið samdóma, að þessi fornaldarsaga sé hin vandaðasta og áreiðanlegasta að efni til, sem vér eigum á íslenska tungu, því að höfundur hefir tekið til greina sagnfræðilegar rannsóknir síðustu tíma og stuðat við ýms ágæt rit í þessum greinum, svo sem hin stórmerku rit eftir þýzku sagnfræðingana E. Curtius (*Griechische Geschichte* 5. útg.), og Th. Mommsen (*Römische Geschichte* 8. útg.), einnig anillinginn J. Burkhardt í kaflaum um Constantin mikla, og samtíð hans og síðast en ekki sízt hina ágætu bók eftir J. N. Madvig: *Den romerske Stats Forfatning og Forvaltning* (Kbh. 1881), þessa fögru elligjöf til vísindanna, árangur af æfilangri starfsemi stórgáfads eljumanns í fornum rómverskum fræðum.

Þá er efnisvalið. Um það má lengi þrátta, hvað taka skuli upp í kenslubækur, því sitt sýnist að jafnaði hverjum og vart mun nokkur svo heppinn í vali, að öllum líki það allskostar; sumavantar þetta, aðra hitt, inn í takmarkað rúm, og þetta er einmitt eitthvert allra örðugasta viðfangsefnið, versti hnúturinn, fyrir þá, sem skólabækur semja, ekki sízt sögubækur. En hér finst mér höf. hafa tekist ágætlega lausnin. Margt af því, sem í fyrri kenslubókum hefir þýngt minninu, þreytt heilann og jafnvel raskað þræðinum eða gert hann torraktari, ýmisleg smátvik, mannnanöfn, ártöl o. fl. hefir víða orðið að víkja úr sessi fyrir öðru þýðingarmeira, svo sem þróunarsögu mannsandans og mannfélagsins. Kaflar sem áður voru flestum hvímeiðir í eldri kenslubókum (t. d. allar flækjurnar eftir lát Alexanders mikla, þjóðflutningarnir og fjörbrot rómverska keisaradæmisins) eru nú orðnir miklu aðgengilegri en áður og lítill söknuður að flestu því

sem slept hefir verið, enda kennaranum jafnan innan handar að skýra nánar rás viðburðanna í kenslustundunum og laða æskuna með ýmsum skemtilegum frásögnum enu meir að söguseiðnum. Ætti eg að tilgreina nokkuð, sem eg hefði sérstaklega kosið öðru vísi, þá mundi eg tilnefna fyrsta kaflann um Austurlandþjóðir. Mér þykir þar helzt til fljótt yfir sögur farið — tæpar 11 bls. um Egipta, Babyloniumenn, Assyriumenn, Fönika, Gyðinga, Meda, Persa og Indverja. — Það er skiljanlegt, að Gyðingar fái einar 15 línur, því að höf. mun hafa ætlað biblíulestrinum að fylla þar upp í stóru skörðin. En Indland með öllu sínu andlega djúpsæi, hin mikla menning Egipta, Persaveldi og Assyringa og hinir viðförlu Fönikar, virðast traúðla geta komist fyrir á svo mörkuðum bás sem 11 bls., ekki sízt þar sem hin grísk-rómverska menning á rót sína að rekja til austurs í mjög þýðingarmiklum atriðum og áhrifin þaðan auðsæ.

Um þriðja atriðið — hreint mál og lipurt orðfæri — mun mega með sanni segja, að bókin sé yfirleitt rituð á vönduðu, hreinu máli, stíll og orðfæri ekki ólipurt, þótt ekki virðist mér höf. vera jafnoki Páls gamla Melsteð í þýðleik og léttleik frásagnarinnar, enda munu fáir í þeim greinum »Flosa líkir« nú lifandi Íslendinga.

Hér eru nokkur orð og orðatiltæki, er eg hefi rekist á, þegar eg fór yfir bókina, ýmist röng — að minni hyggju — eða óviðkunnanleg:

Bls. 16: »dró sig út úr bardaganum« í staðinn fyrir: hætti að berjast, eða, lét af hernaði. Á sömu bls. í síðustu málagreini um Hómers kvæði er blandað saman tveim orðum: kviður og þjóðkvæði og kynin notuð á víxl í fornöfnum (þær, þau).

Bls. 47: »óskammfeilinn« í staðinn fyrir »ósvífinn«.

Bls. 53: »4000 kilometra óravegur«. Óviðfeldið er að nota orðið óravegur í sambandi við ákveðna vegalengd.

Bls. 59: »iðnborgar og verzlunar«. Hví þá ekki: iðnaðarborgar eða iðnarborgar og verzlunar, sem er hljómfagurra, enda vanalega sagt, iðnaður og verzlun.

Bls. 60: »teknaafgangur«. Auðvitað meinlaust, en þó hljóðgap (hiatus), sem hægt var að forðast (afgangur tekna). Á sömu bls.: »Vestur-lokris« í staðinn fyrir Vestur-Lokris.

Bls. 63: »fræddu þeir unga menn með fyrirlesturum og fræðiskunum«: óljóst og óviðkunnanlegt.

Bls. 86 og 88: »bronzi« (þáguf.), en bls IV. (í inngangin-

um) bronsi (nefnif.). Mér finst viðkunnanlegast að nefna málm-inn brons (hvk. sbr. spons).

Bls. 88: »mannvirkjagerðar og húsa«. Mannvirkjagerð er ljótt og tæplega rétt orð, auk þess eru hús einnig mannvirki.

Bls. 100: »hinn mesti bjargvættur«. Í fornu máll var vættur kvk. Nú í daglegu tali karlk. En væri ekki rétt að láta orðið halda fornu kyni, eins og sumir enn gera, að minsta kosti í ritmáli? Í hugtakinu er eitthvað mjúkt og dísarkent (sbr. heilladísir).

Bls. 150: »enda átti Marius föðursystur, og sjálfur var hann kvæntur dóttur Cinnu«. Óíslenskulegt og óskiljanlegt nema þeim sem veit. Á sömu bls. orðið »framúrskarandi«, mjög oft notað, en ljótt orð, í staðinn fyrir frábær, ágætur, stakur. Sama er að segja um orðið: »framþróun«, sem einnig kemur fyrir í bókinni, þetta ástfóstur flestra blaðamanna og rithöfunda nú á dögum. Orðið er hrein og bein upptugga (ταυτολογία). Hvers vegna ekki blátt áfram þróun? Eða þróast nokkuð aftur á bak? Eitthvað þróast = því fer fram, það dafnar.

Bls. 174: »deilumál dagsins« er sakleysislegt á að líta, en tæplega íslenska.

Bls. 177: »og honum lék grunur á um trúnað þeirra við sig«. Mér finst einfaldara og óbrotnara að segja: hann grunaði þá um svik við sig, eða, grunaði að þeir sætu á svikráðum við sig. En »sitt sýnist oft hverjum«.

Bls. 204: »eitthvert aðalmei« í staðinn fyrir eitt-hvert versta mei.

Bls. 212: »hin grísk-rómverska siðmenning var búin að vera«, í staðinn fyrir: h. gr.-rómv. siðmenning var undir lok liðin (henni var lokið), á heljarþróminni, eða eitt-hvað því um líkt.

Í sambandi við orðfærið vil eg fara nokkrum orðum um meðferð Íslendinga á grískum og rómverskum eiginnöfnum, eins og hún hefir verið og er enn fram á þenna dag. Tunga vor er enn þá að miklu leyti fornt mál með auðugum málmyndum. Sagnorð vor og forsetningar stýra enn, sem fyrir þúsund árum, þrem föllum, þolfalli, þágufalli (eða staðarfalli) og eignarfalli, en ákveðni greinirinn óleyfilegur með eiginnöfnum, svo að vér getum ekki látið hann, eins og málfrændur vorir Þjóðverjar, segja til falls. Af þessu leiðir, að oss verður oft á að misþyrma með fallbeygingum eiginnöfnum hinna.

fögru suðrænu forntungná í íslenzku máli og »syngur« þar að jafnaði »hver með sínu nefi«, svo að það er ekki einu sinni nokkurt samræmi í miðþyrmingunum. Fyrir því nær hálfri öld var reyndar farið að bóla á lofsverðri viðleitni til endurbóta í þessum greinum hjá hinum góðkunnu kennurum latínuskólans, skólameistara dr. Jóni Þorkelssyni og Gísla skólakennara Magnússyni (sbr. Latnesk lesbók handa byrjendum Rvk 1871), en Gísli, sem mun verið hafa aðalhvatamaður þessarar hreyfingar, átti þá skamt eftir ólifað (+ 1878), og að honum látnum sótti alt í sama horfið sem áður: engin regla, eilíf ósamkvæmni, alt af handahófi, eftir því sem hverjum dettur í hug í þann svipinn.

Til sönnunar máli mínu skulu hér tekin nokkur dæmi — af mýmörgum — úr þessari nýju fornaldarsögu: Á bls. 41 eru nefnd skáldin Alkaios og Tyrtaios, en á næstu bls. Pindar (án fallendingar); bls. 59 Filippusi, Demosþenesi, Demosþenesar, Leonidasar, Þukyðidesar og Eurípidesar (bls. 44); bls. 138: Sulla — Sullu, Cinna — Cinnu (sbr. Sturla — Sturlu) en aftur á móti alstaðar Róm — Rómur (þó ekki í orðinu Rómaveldi); bls. 146: Pontos (þolfall), á sömu bls. Bipyñiu (þolfall); Mipradates (þágufall), Tigranokerta (þolfall), Tigranesar, Lucullusi; bls. 150: Maríusar (nefnif. flt.); bls. 151: Galliu cisalpina (þágufall) og Galliu Narbonensis (þolfall), en á næstu bls. Gallia transalpina (þágufall); bls. 156: Þessalonike (þágufall); bls. 166: Epikuros (eignarf.) og Stóumanna; bls. 174: Juliusættin og á sömu bls.: Augustusaröldin. Apenuborg er alstaðar nefnd Aþena, á grísku heitir hún Αθῆναι ekki Αθήνη, svo að gamla nafnið virðist viðfeldnara. Delphi (Δελφοί) er notað í öllum föllum (óhneigilegt). Rómversk mannanöfn, sem endá á -us í nefnifalli fá í viðbót íslenzka eignarfallsendingu og þágufalls: t. d. Camillusar, Maríusar, Constantíusar, Diocletíusar, Camillus o. s. frv. (líkt og vér segðum: Sigurðurar (eignarf.), Sigurðuri (þáguf.). Og sama er að segja um eiginnöfnin á -os, -es, -as; við þau er einnig bætt íslenzkum eignarfalls og þágufalls endingum. Á sama hátt fá latnesk lýsingarorð sumstaðar tvær afleiðsluendingar: t. d. latínskur, sem er alvanalegt orð en rangt (sbr. byzantínskur í stað byzanzkur) en sumstaðar aftur rétt farið með lýsingarorðið t. d. filíppskur (orationes philippicae) o. s. frv.

Þessi dæmi, sem eg nú hef til tínt úr nýrri bók eftir mentaðan og vandvirkkan höfund, hygg eg sjóni og sanni, að eg hefði ekki oftalað, er eg mintist á óregluna og ósamkvæmnina í meðferð íslenzkra rithöfunda á erlendum eiginnöfnum og má merkilegt.

telja, að allir þessir —asar, —esar, —osar og —usar skull enn standa óáreittir í íslenzku ritmáli tuttugustu aldar, því merkilegra, sem eg fæ eigi betur séð en að til séu ýmsir vegir til að lagfæra verstu misfellurnar og fá meira samræmi í ritvenjum í þessum efnum.

Mér hugkvæmast í svipinn þrjár leiðir:

Fyrsta leiðin, sú einfaldasta og fyrirhafnarminsta: að láta eiginnöfnin jafnan vera óhneigileg, og rita ætíð orðið í nefnifalli, með eða án úrfellismerkis fyrir aftan orðið, þegar það að réttu lagi ætti að standa í öðru falli.

Önnur leiðin: að nota jafnan stofn erlenda orðsins (orðið án fallendingar) og gefa honum íslenzkar fallendingar.

Þriðja leiðin: sambland af báðum áður nefndum aðferðum eftir ákveðnum, föstum reglum, þannig, að t. d. stofn yrði notaður með íslenzkum föllum þegar það væri ekki of óþjált í máli, eða með einhverjum öðrum hætti eða reglum, sem málfróðum smekkvísam mönnum kæmi saman um.

Æskilegt væri, að íslenzkir og grískrómverskir málfræðingar tækju nú höndum saman, og rannsökuðu þetta efni nákvæmlega og kæmu sér svo saman um einhverjar fastákveðnar reglur, sem farið yrði eftir framvegis um rithátt (helzt allra erlendra eða að minsta kosti) grískra og rómverskra eiginnafræði í íslenzku ritmáli. Nefnd í málið dirfist eg eigi að nefna, því þær þykja reynast misjafnlega hjá oss nú upp á síðkastið.

Loks skal þess getið að prentvillur eru sárfaár í bókinni og yfirleitt vel frá henni gengið.

Læt eg hér svo staðar numið og enda með þessari ósk, að höfundur Fornaldarsögunnar hætti eigi við hafið verk, og að vér innan skams fáum að sjá frá hans hendi skólabók á íslenzku yfir sögu miðaldanna. Það hefir oft réttilega verið tekið fram, hve háskalegt það er fyrir íslenzkuna að láta unglinga í skólum vorum lesa keaslubækur á erlendu máli, en það á þó sérstaklega heima um söguna og auk þess mjög óviðfeldið, að sú þjóð, sem mesta frægð hefir getið sér allra Norðurlálfþjóða fyrir sagnaritun sína, hina íslenzku, í myrkri miðaldanna, kenni nú — á tuttugustu öldunni — æskulýð sínum veraldarsöguna á erlendu máli.

R.vík 16/9 1917.

Jón Jacobson.

Stephan G. Stephansson: Heimleiðis. — Reykjavík 1917.

Um kvæði þessi, sem tileinkuð eru Ungmennafélögum Íslands og öll eru frá ferð skáldsins heim og heima á settjörðunni síðastliðið

ár, þarf ekki að rita langt mál. Þau munu þegar flogin út um allar sveitir og þykja góð uppskera eftir eitt sumar og sanna orð Mag. Sigurðar Guðmundssonar um kvæðin, að »fáir gestir hafa goldið fagurlegar beina en hann með kvæðum sínum«. Skírnir flytur eitt þeirra: »Með ströndum fram«, er skáldið gaf honum að skilnaði. Getur það verið sýnishorn ljóðanna. Það er fyrsta kvæðið sem Stephan G. Stephansson hefir kveðið undir þessum fornfræga bragarhætti og er það bending um, að enn séu ósnertir sumir dýrustu strengirnir á hörpu hans.

Tvær meiulegar prentvillur skal eg benda á: Verðgangsaður vígði hann kaldur, fyrir »vígði hann keldur«, bls. 29, 11 l. a. n. Og í 2. l. kvæðsins »Aleidis til Geysis« á ekki að vera spurningamerki.

G. F.

Adalsteinn Kristjánsson: Austur í blámóðu fjalla. Með tólf myndum. Winnipeg. Prentsmiðju Ólafs S. Thorgeirssonar 1917.

Efnisyfirlit: I Austur í blámóðu fjalla. II. Agrip af sögu New York-borgar. III. New York á vorum dögum. IV. Hví söknum vér Íslands. V. Eftirmáli.

Hér eru ólík efni komin saman í eina bók. Þau virðast í fljótu bragði jafnfjarlæg hvort öðru og bunga Altantshafains er breið. En leynipráður bindur þau saman. Sá práður er hugsunarháttur höfundarins. Hann er Vestur-Íslendingur í bezta skilningi — Íslendingur í húð og hár, gagntekin af ást til alls góðs sem íslenzkt er, en um leið hrifinn af því skapferli og þeim hugsjónum er verið hafa uppspretta vestrænna afreksverka. Þess vegna fer tveim sögunum fram, annars vegar um það sem höf. ann á Íslandi, hins vegar um það sem honum virðist merkast og eftirbreytnisverðast í fari Vestmanna. Hann segir í eftirmálanum: »Rit þetta er sérstaklega tileinkað þeim sveitaunglingum á Íslandi, sem alast þar upp við svipuð kjör og höfundurinn. Þeim unglingum, sem í æsku njóta lítillar mentunar, en unna fróðleik, og setja sér það markmið að auka sanna þekkingu, þrátt fyrir það, þótt undirstaðan hafi verið lauslega byggð. Hann vill fræða, til að glæða framfaralöngun og trúna á mátt og megin hugsjóna og viljaþreks. Hann dáist alstaðar að þeim sem unna sjálfstæðinu í hugsun og framkvæmdum og fara sinna ferða í leit þess sem satt er og rétt. »Það er sá sem ryður sannleikanum braut, er við höfum heimild til að telja gáfaðan. Uppfundingamaðurinn í heimi andaus, sem hjálpar okkur

til að losast við þær af hinum gömlu vanans flækjum, sem okkur eru skaðlegar, hvort sem þeim er framfylgt í kirkjum eða þinghúsum. Sá, sem vísar okkur þannig til vegar, að við þurfum hvorki að þjóna hlutdræguinni í dag, né lygum (málamiðlaninni) á morgun«. (bls. 335)

Rúmur þriðjungur bókarinnar er ferðasaga höf., er hann fór kynnisför til Íslands sumarið 1914, eftir 13 ára dvöl vestan hafa, þar sem hann með dugnaði og hagsýni hefir komið ár sinni vel fyrir borð. Ferðasagan segir frá því sem bar fyrir augu og eyru á leiðinni til Reykjavíkur og þaðan norður um land, með »Eggert Ólafssyni«, en síðan um Eyjafjarðar-, Þingeyjar- og Skagafjarðarsýslur. Hún sýnir oss tilfinningar og hugleiðingar höf. á leiðinni, um menn og málefni, og er sérstaklega eftirtektarvert hvað hann segir um fossana. Er hann gramur yfir fyrirhyggjuleysi Íslendinga í þeim málum. Alstaðar gægist fram ást hans á íslenskri náttúru. Undirstraumurinn er hvervetna hlýr til lands og þjóðar og víða er athugun höf. skörp og frumleg. Eg tek til dæmis það sem hann segir um samtal sitt við skipverja á leiðinni norður, um æfi þeirra á sjónum. »Eg hafði heyrt sjómenn segja frá svaðilförum sínum áður, þegar þeir voru staddir á landi; en mér tanst alt annar blær yfir frásögum þessara manna. Við höfðum oft sjó nær því í miðjum hliðum, svo að eins saust kaldir og klökugir fjallatindarnir; öldurnar rugguðu skipinu, og virtist það gera þeim frásögnina auðveldari — eins og þeir væru að lifa sig inn í atburðina; en þar við bættist, að nú gátu þeir athugað hætturnar frá fleiri hliðum, og gaf það frásögunni meiri þunglyndis og alvörubla« (bls. 48). Eða þetta: »Einn af þeim fyrstu, sem eg mætti á Akureyri af þeim, sem mér voru sérstaklega minnisstæðir, var síra Matthías; hann var þá nærri 79 ára, þó virtist mér hann ganga mikið rösklegar en margir, sem yngri eru, rétt eins og hann væri að eltast við og reyna að komast fyrir einhverja hugmynd, er hinir höfðu gefist upp við, og fann eg það síðar, að þessi tilgáta mín hafði rétt verið« (bls. 50).

Einn kafli ferðasögunnar heitir »Fréttaburður að vestan«, og er auðfundinn sársaukinn yfir því, er bornar eru bríður á ræktarþel Vestur-Íslendinga til gamla landsins og þeir misskildir. Síðasti þáttur bókarinnar er góður það sem hann nær, þó ekki komi þar öll kurl til grafar, og er það mikilsvert að það efni sem höf. hreyfir við verði athugað sem best.

Nærri tveir þriðjungar bókarinnar eru ágrip af sögu New York.

borgar og um New York á vorum dögum. Mig brestur því miður þekkingu til að dæma um efni þeirra kafla. Ef til vill hefði framsetningin grætt á því, ef höf. hefði málað með stærri dráttum og ekki nefnt eins mörg nöfn. Frásögnin verður og sumstaðar slitrótt, er í svo mörg horn er litið. Skaði er það og, að ekki fylgir uppdráttur af New York, því að hann mundi mjög hafa greitt fyrir skilning á því sem frá er sagt. Augsýnileg prentvilla er á bls. 123: »52. árið eftir að Columbus fann Ameríku«, á að vera »32. árið«, Á bls. 148, 13. l. a. o. er ártalið 1601, fyrir 1691. Á bls. 150 13.—14. l. a. o. ætti samkvæmt því sem á undan er komið að standa: »Eins og áður er getið, höfðu Hollendingar sagt Engländernum stríð á hendur«.

Þetta eru alt smámunir. Eg hefi haft gaman að lesa söguna, og er hún einkum notaleg fyrir þá sök, að maður finnur hvernig þær hugsjónir, sem gert hafa Bandaríkin að þeirri merkilegu stórþjóð, sem þau eru, hafa vermt hjartarætur höf. og knúð hann til að reyna að veita einhverju af þeim straum heim til ættjarðar sinnar. Nú eru Íslendingar komnir í fjörugt viðskiftasamband við New York og eru allar líkur til að þau viðskifti vaxi en þverri eigi framvegis. Er eg sannfærður um að bók þessi verður mörgum Íslendingi, er bregður sér þangað, góður leiðarvísir og opnar augun fyrir ýmsu, sem þeim annars mundi sjást yfir. Sem dæmi viturlegra hugleiðinga höf. þar sem hann er að lýsa því sem fyrir augun ber í New York skal eg taka þennan kafla:

»Því verður ekki með sanngirni neitað, að hugvit og fegurðarkend húsameistaranna vekur hjá manni undrun og aðdáun. Ekki get eg neitað því, að mér hafi fundist það hugljúfara, að sjá og athuga undraverðar framkvæmdir mannanna í New York, en að lesa um hallir Aladíns og töfrasprotann, sem opnaði Sesam. (Hér kennir ofurlítils misminnis á sögunni um Alý Baba. G. F.). Það er undravert. hve oft mannkynið kemst í framkvæmdum fram úr ímyndunarafli skáldanna, er samtíðinni virðist geisast áfram í skjófunum, utar og ofar heimi virkileikans. En þrátt fyrir aðdáun þá, er framkvæmdir stórborganna vekja, finst manni oft minna til um mannvirkin þar, þótt stórfeld séu, heldur en ef maður sér einhverstaðar nýgræddan akur eða túnblett, fífilbrekku eða gróna grund. Það vekur alt aðrar tilfinningar að horfa á mannvirki þau, þar sem mannvitið samstarfar náttúrunni í einingu að einhverju, sem lifir og grær og þroskast dag eftir dag og ár eftir ár. Það kennir mönnum ráðvendni og samvirkusemi, að starfa í fólaga við náttúruna,

móður vora, taka sigurlaun erfðisins frá fyrstu hendi, en hafa enga milligöngumenn. Það er svo mikill véla og steinaldarsvipur yfir mannvirkjum stórborganna, að mann ægir við. Þótt grundvöllurinn sé traustur, eftir orðsins vanalegu merkingu, og þótt hugvit mannanna flétti byggingarlistinni undraverða sigursveiga og töfra kórónur, finst manni oft, að framfarirnar séu samrunnin skjaldböku-skel efnisins, sem eiginlega eigi ekkert skylt við sannar framfarir. Er ekki einhver kínverskur svefngöngubragur yfir ákafa mannkyns-ins að reisa bæi og borgir, og troða hinn sanna lífagróður niður í moldina?« (bls. 290—91).

Þau sýnishorn sem eg hefi tekið eftir höfundlun geta gefið hug-mynd um rithátt hans. Ytri frágangur á bókinni er allur snotur og prófarkalestur yfirleitt góður. Hún kostar í bandi 7 kr.

G. F.

Almanak fyrir árið 1918. 24. ár. Winnipeg. Útgefandi og prentari Ólafur S. Thorgeirsson. 1917.

Almanak Ólafs S. Thorgeirssonar má telja með beztu og þörf-ustu ritum sem gefin hafa verið út á íslenzku vestan hafs. Hefir því jafnan verið vel og smekkvíslega stjórnað. Aðalkjarni þess er »Safn til landnámssögu Íslendinga í Vesturheimi«, sem þættir koma af árlega. Er þar skýrt frá landnámi hverrar Íslendingabygðar af annari, skráðar æfisögur landnemanna, ættir þeirra raktar meira og minna og fjöldi mynda. Hygg eg að hver sem les þessa þætti, verði að kannast við, að landnámssaga Íslendinga í Vesturheimi er ekki ómerkur þáttur af æfisögu kynflokks vors. Væri óskandi, að útgefandanum auðnaðist að gefa þættina út í bókarformi aukna og endurbætta eins og hann hefir haft í hyggju. Spá mín er sú, að Landnáma Vestur-Íslendinga verði einhverntíma gefin út skrautlega af niðjum þessara landnámsmanna, er þykjast munu þá góðir af ætterninu. Þá verður þakklátlega minst mannsins sem hafði framkvæmd til að safna þessum merkilegu heimildum áður en það var of seint.

Auk landnámsþáttanna hefir Almanakið flutt ýmislegt annað skemtandi og fræðandi, greinar um merka menn, íslenzka og erlenda, þýddar og frumsamdar, smásögur, meðal annars ýmsar góðar eftir skáldið J. Magnús Bjarnason, kvæði, yfirlit yfir helztu viðburði og mannalát meðal Íslendinga í Vesturheimi, o. fl.

Í þessu síðasta Almanaki hefir útgefandinn fyrst gert stutta grein fyrir heilmför Stephans G. Stephanssonar, en prentað síðan

það sem um hann var sagt í bundnu og óbundnu máli og blízt hefir á prenti — og sumt óprentað. Fylgja því góðar myndir af brjóstlíkani og lágmynd Ríkarðs Jónssonar af Stephani og ritföngunum eftir Stefán Elríksson. Þá koma Landnámsögubættir, æfintýri og æskuminning eftir J. Magnús Bjarnason, mannalát, fallnir íslenzkir hermenn, o. fl.

G. F.

Erlendur Gottskálksson: Vísur og kvíðlingar. Með æfiágrípi og minningarorðum. Útg. Þór. Stefánsson og Vald. Erlendsson. Khöfn 1916.

Æfiágrípið og minningarorðin, sem útgefendur — sonarsonur og sonur Erlendar — hafa ritað framan við ljóðmælin, eru ágæt mannlýsing. Skilur hún eftir í huga lesandans mynd af sérkennilegum og gáfuðum alþýðumanni, sem ánægja er að kynnast. Gott er kvæðið »Við æfilokin« og sumar ferskeytlurnar, t. d. þessi hin þjóðkunna:

Alt af bætist raun við raun,
réna gleði stundir.

Það er ei nema hraun við hraun
höllum fæti andir.

Eg hefi alt af heyrt: »höltum fæti undir«, og þykir stórum betra. En langflest ljóðmælin heði ekki átt að prenta, þar sem þau hafa ekkert bókmentalegt gildi og höf. hafði ekki ætlast til þess sjálfur, að þau væru gefin út.

G. F.

Ársrit hins íslenska Fræðafélags í Kaupmannahöfn. Með myndum. Fyrsta og annað ár. Kh. 1916 og 1917; 8vo 128 + 128 bls.

Í árgöngum þessum eru allmargar merkilegar ritgerðir og skal hér á eftir minnst á hinar helztu og gerð grein fyrir efni þeirra. Þorvaldur prófessor Thoroddsen ritar í fyrsta árganginum »Um æskukröggur og glæfraferðir Arminíusar Vamberys', hins ötula og fræga ungverska ferðamanns, er andaðist fyrir nokkrum árum. Annar árgangurinn hefst með einkar fróðlegri grein eftir hinn sama höfund, er hann nefnir: »Helmur og geimur. Þættir úr alþýðulegri stjörnufræði«. Höfundurinn skiftir ritgerðinni í fjóra kafla: 1. Breytingar og nýjar stjörnur. Heimsendir. 2. Stjörnuþyrpingar og þokustjörnur. 3. Vetrarbrautin. Takmörk alheimans. 4. Geimurinn. Nöfn hinna

einstöku kafla sýna oss, hve efnið er margbreytilegt og skemtilegt; en auk þess er þar vel farið með örðugt viðfangsefni og frásögnin lípur og létt, eins og á öllu sem kemur frá hendi hins háttvirta höfundar, og teljum vér víst, að margur íslenzkur alþýðumaður hafi bæði gagn og gaman af að lesa báðar ritgerðirnar. Í síðari ritgerðinni farast höf. þannig orð um andatrúna (bls. 35):

»Mannlegu eðli er svo varið, að vér getum eigi gripið eða skynjað það, sem er fyrir utan vorn skynheim. Andatrúin er því ekkert annað en trú, eins og svo mörg önnur trúarbrögð, og á ekkert skylt við vísindi. Fyrir hinu dularfulla sambandi andatrúarmanna við annan heim hefir enn eigi fengist hinn minsti snefill af vísindalegri sönnun. Hingað til hefir að eins tekist að sanna, að mörg dularfull fyrirbrigði í sálarlífi manna standa í sambandi við veiklað taugakerfi og benda á ýmsa fyr lítt athugaða eiginleika í sálarlífi manna. En þar með hefir ekki fengist neitt samband við annan heim, andaheim eða sálir framliðinna«.

Finnur Jónsson prófessor birtir í fyrsta árgangi árrsitsins tvær ritgerðir, aðra um »Íslenzk fornkvæði« og hina »Um skáldmál Bjarna Thorarensens«, er allir, sem unna íslenzkri tungu og íslenzkum bókmentum, muna kunna höf. þakkir fyrir. Fyrri ritgerðin ræðir um safn það af íslenzkum fornkvæðum, er þeir Svend Grundtvig og Jón Sigurðsson gáfu út á árunum 1854—1860 og Pálmi yfirkennari Pálsson lagði loks smíðshöggið á 25 árum síðar með útgáfu 4. og síðasta heftisins. Í ritgerð þessari, sem er ágrip af annari ýtarlegri ritgerð, er höf. hefir birt í Árbókum Fornfræðafélagsins 1914, hefir hann gert þá grein fyrir uppruna og búningi kvæða þessara, sem að réttu lagi hefði átt að gera í eftirmála við útgáfu safnsins. Höf. tekur með réttu fram, að kvæði þessi sé »af útlendum uppruna og toga« og »velflest að minsta kosti dönsk«. Hann ætlar, að Íslendingar hafi »heyrð og numið dönsku kvæðin og þýtt þau á sitt mál á þann hátt, sem þau bera með sér, en þó svo, að íslenzkur hugsunarháttur, íslenzkt líf og íslenzkar þjóðsögur og þjóðtrú hafa haft eigi lítil áhrif og gert eigi litlar breytingar á dönsku kvæðunum, og það ekki að eins í smáum hlutum (stöku orðum og þess konar) heldur og í allri gerð þeirra«. Höfundur telur að málið á kvæðunum sé »ótvírátt« 15. eða 16. aldar mál og gerir allnákvæmlega grein fyrir búningi þeirra (kvæðandi, hendingaskipun, hljóðstafasetning og viðkvæði). Loks beinir hann athygli vorri að því, að þessi útlendu kvæði hafi getið af sér

»innlend kvæði, þ. e. kvæði, frumort á Íslandi og með íslenzku efni«, svo sem Gunnarskvæði, um Gunnar á Hlíðarenda. Í síðari ritgerðinni »Um skáldmál Bjarna Thorarensen« deilir höf. fyrst á Einar skáld Hjörleifsson fyrir nokkur ummæli hans um búning og kveðandi Bjarna í æfisögu þeirri framan við aðra útg. af kvæðum Bjarna, er hr. Einar samdi, eins og kunnugt er, á stúdentsárum sínum í Kaupmannahöfn. Þar næst sýnir höf. oss, að eddukvæðin og önnur fornkvæði hafa haft nokkur áhrif á kveðskap Bjarna, bæði að því er lýtur að samsetning orða: silfrfjallaður, sem og að notkun fornra orðmynda: skalat, munat, vildak, sem nú teljast óhafandi. Loks gefur höf. lesendunum allfjölskrúðugt sýnishorn hinna gullfallegu samsettu nafnorða og lýsingarorða, er Bjarni hefir auðgað íslenska tungu; skulu hér nefnd nokkur dæmi: ¹⁾ nafnorð: heiðhiminn, blátindar, hájoklar, hvítfaldur, glitfat, gullinhvel; ²⁾ lýsingarorð: sólgyltur, ítrhvast (spjót), silfurblár (ægir), mjúksár (logi), geigvænir (logbrandar) o. s. frv.

Höf. lýkur máli sínu um Bjarna með þessum orðum: »Hann er frumherji máls vors á fyrstu tugum 19. aldarinnar. Hann er morgunroðinn eins að þessu leyti sem að efninu sjálfu og meðferð þess«. Munu flestir sem þekkja kveðskap Bjarna telja orð þessi sannmæli.

Í fyrsta árganginum hefir Gísli læknir Brynjólfsson ritað greinarkorn: »Um eiturmekki í ófriðnum mikla«, þ. e. ný tegund vopna, eitraðar lofttegundir, er mönnum telst, að Þjóðverjar hafi notað í fyrsta skifti í stórorustu á vesturvígstöðvunum 22. dag aprílmánaðar 1915 og síðar oft.

Bókavörður Sigfús Blöndal hefir í sama árgangi snúið úr dönsku kafla úr æfiminning síra Ólafa Gíslasonar, prests í Saurbæjarþingum, er hefir að geyma allgreinilega og, að því er virðist, rétta lýsing á Þingeyrarklaustri á fyrri hluta 18. aldar. Handrit æfiminningarinnar, sem lýsing þessi stafar frá, fanst í Konunglega bókasafninu í Kaupmannahöfn fyrir skemstu. Værl æskilegt, að hr. Sigf. Blöndal héldi uppteknum hætti og skýrði mönnum hér á landi frá því í íslenskum tímaritum eða blöðum, þegar merkileg íslensk handrit finnast í söfnunum í Kaupmannahöfn, og láti helst nokkur sýnishorn fylgja skýrslu sinni eins og hér.

Þá ritar Magnús Jónsson cand. jur. & polit. eftirtektarverða grein: »Um íþróttaskóla«. Hann ætlar að æskilegt sé, að stofna til kenslu í verknaði og íþróttum, úr því að menn séu nokkurn veginn samdóma um, að vér þurfum á eiri verklegri þekking að halda en vér höfum nú, og teljum í

annan stað, að »útbreiðsla frjálsra íþróttá sé harla æskileg«. Því næst skýrir höf. nánar frá því, hvernig hann hefir hugsað sér, að þessari kenslu verði bezt fyrir komið.

Loks ritar cand. mag. Bogi Th. Melsted auk margra smærri greina í fyrsta árganginum ritgerð um stórmerkilegt nýmæli: Verðlaunasjóður handa duglegum og dyggum vinnuhjúum í sveit«. Af því að þess þjóðþrifa og sanngirnisnýmælis, sem höf. vekur máls á í hugvekju sinni, hefir áður verið getið í sumum blöðum vorum, ef oss minnir rétt, virðist ekki vera ástæða til að fjölyrða um það hér; en ef takast mætti að koma hugsjóninni í framkvæmd, þá teljum vér, að stigið væri stórt menningarspor í rétta átt, að eins vildum vér að slíkur verðlaunasjóður starfaði ekki einuagis fyrir dugleg og dygg vinnuhjú í sveit, heldur einnig fyrir þau hjú í kaupstöðum, er það eiga skilið.

Í sumum greinum árgangsins, einkum þeim, sem að öllu eða nokkru leyti eru þýðingar úr öðrum málum, bregður fyrir óíslenzkulegum orðatiltækjum og jafnvel mállýtum, er ættu ekki að koma fyrir í slíku riti. Skal hér bent á nokkur þeirra. Á 101. bla. stendur: »hvort sá, sem einu sinni hefir verið kristinn, eigi ekki að njóta þess, að hann hefir fallið frá«, ¹⁾ f. gengið af trúnni. »Fyrst um sinn hefi eg farið að á þann hátt gegn þeim« 102. bla.: hefir sungið söng til virðingar fyrir Krist sem guð (sic). 103. bla.: Það má ekki grafa þá upp, f. grafast fyrir hverjir þeir séu.

Það væri miklu viðkunnanlegra, að auglýsingar, sem prentaðar eru aftan við ritið, væru ekki tölusettar með réttu blaðsíðutali, svo að þeir sem láta binda það inn geti svift þeim burtu og ritið þó talist heilt eftir sem áður.

Í öðrum árgangi ársritsins skal hér að eins getið tveggja greina, auk ritgerðar Þorvaldar prófessors, er þegar hefir verið minst á. Önnur þeirra er »Þjóðjarðasalan« eftir meistara Boga Th. Melsted, en hin er um æfi og starfsemi Ole Worm's, hins nafnkunna föður norrænnar fornfræði. Greinina hefir Halldór Hermannsson bókavörður ritað og ber hún vitni um mikla þekking höf. á æfi Worm's og sérstaklega á viðskiftum hans við íslenska fræðimenn. Höf. ætlar með réttu að Worm »muni vera hinn fyrsti útlendingur á síðari öldum, sem verðskuldar nafnið Íslandsvinur«.

Bogi Melsted sýnir oss í grein sinni um þjóðjarðasöluna, hvernig

1) Leturbreytingin eftir oss.

lögum frá 20. okt. 1905 um sölu þjóðjarða og lögum um sölu kirkjujarða frá 16. nóv. 1907 hafi verið framfylgt til 1911. Fær greinin manni margt að hugsa og sýnir ljóslega, hversu einstaklingar, þing og stjórn vanda stundum lítt ráð sitt, þegar landsþjóður á í hlut, og láta sér í léttu rúmi liggja, þótt eignir hans gangi til þurðar. Eru dæmi þau, er höf. tilgreinir engan veginn til sæmdar þjóð vorri og stjórn, en verst er að þau eru alla kostar sönn og rétt. Kemst höf. að þeirri niðurstöðu, að taka beri fyrir sölu þjóðjarða og kirkjujarða, »en gera ábúðarréttinn á þeim arfgengan í karlegg og kvenlegg«. Hann leggur til, að landsþjóður eignist sem flestar jarðir, eftir því sem færi gefat og vill leggja verðhækkunargjald á lóðir þær og jarðir, sem stigið hafa og stíga sökum vegagerða og annars, er þjóðfélagið, kaupstaðir eða sýslur og sveitafélög« láta gjöra í sambandi við jarðasöluna bendir höf. á agnúa einn sem henni fylgi og geti orðið hættulegur »fyrir framtíð landsins og sjálfstæði«, nema því betur sé um hnútana búið. Á hann þar við tilraunir einstakra hérleendra manna og gróðabrallsnáunga á síðari árum að »selja utanríkismönnum land og jarðir á Íslandi«. Höf. sýnir fram á að reynsla og fordæmi annara smáþjóða hér í álfu, svo sem Norðmanna og Dana, bendi á, að ekki veiti af að koma í tíma í veg fyrir það með lögum, að utanríkismenn fái ofmikil eignaumráð og yfirráð hér á landi; vill hann því láta banna með lögum að selja utanríkismönnum jarðeignir og fasteignir hér á landi, »nema með sérstöku leyfi landsstjórnarinnar, er alþingi leggi á samþykki sitt í hvert sinn«.

Auk ofantaldra greina flytur árgangurinn eina grein um afleiðingar heimsstyrjaldarinnar miklu og ófriðarástandið og margar smágreinar, þar á meðal nokkra ritdóma um útlendar bækur, er ritaðir munu hafa verið að undirlagi bókaverzlana þeirra, er gefið hafa út bækurnar.

Allur frágangur á ársritinu er vandaður og söluverð þess hér á landi svo lágt, einir 0,75 aura árgangurinn, að einsdæmi mun vera nú á þessum ófriðartímum.

P. H. B.

Leiðrétting:

Á bls. 91 snýr } öfugt. Svíagreinin á við fjórðungsnótuna.

Ísland 1917.

Veðráttta frá nýári og fram að páskum var fremur mild og snjóalög lítil. Laugardaginn fyrir páska (7. apríl) gerði aftaka stórhrið með miklu frosti, og varð mikið tjón að því veðri víða um land. Menn urðu úti, fé hraktist og fórst. Á Austurlandi urðu skemdir á húsum og undir Eyjafjöllum fuku skip. Vélbátar sukku á höfnum inni og símastaurar brotnuðu. Vorið var kalt og næðingasamt og spratt jörð seint. Sunnanlands var oftast snjólaust, en þó var fé gefið inni fram í miðjan maí og kúm til Jónsmessu, og svo var víða um Vesturland, en norðanlands og austan voraði öllu fyr. Fénaðarhöld voru sæmileg um vorið um land alt. Sunnanlands og vestan brá veðri til rigninga um miðjan júlí, og voru stöðugir ópurkar fram til 9. ágúst, en þá brá til norðanáttar, og voru þur og fremur köld veður fram að réttum. Tún voru fremur illa sprottin, er sláttur byrjaði um 20. júlí, og hröktust töður þeirra, er ekki gerðu úr þeim vothey, en sú heyverkun fer í vöxt á Suðurlandi og á Snæfellsnesi, en er þó eigi orðin enn almenn. Aftur á móti varð útheyskapur góður yfirleitt á Suður- og Vesturlandi. Norðanlands gekk heyskapur vel fram að höfuðdegi, en eftir það hröktust hey víða og sumstaðar urðu hey úti til mikilla muna, einkum í Norður-Þingeyjarsýslu. Austanlands var góð tíð til 8. ágúst, en þá gerði þar miklar rigningar og snjóaði í fjöllum. Heyfengur í Norður-Múlasýslu varð hvergi nær því í meðallagi, lenti þar og mikið hey undir snjó um miðjan september. Í Suður-Múlasýslu varð heyskapur víða í meðallagi. Um miðjan september gerði ótíð mikla norðanlands og austan, og varð þá sumstaðar á Austfjörðum jarðlaust, og í októberbyrjun gerði aftakaveður um allt land. Fé fenti og víða urðu heyskaðar. Fórust þá og 2 skip með 13 mönnum. Eftir það voru hörð veður oftast fram að jólum, frost og jarðlaust, og kom allur fénaður óvenju snemma á gjöf. Um

jólin gerði góða hláku, er náði um mestan hluta lands og var víðast komin jörð um áramót.

Fjárheimtur um haustið voru með lakara móti, hamlaði veður fjallleitum og urðu afréttir aldrei smalaðir til fulls.

Garðrækt var rekin með meira móti víða um land, en seint sett í garða. Spruttu rófur víðast betur en í meðallagi, en kartöflur tæplega svo. Margir urðu naumt fyrir að ná upp úr gördum áður en frostið kom í október og urðu mest brögð að því í Þingeyjar-sýslu og Múlasýslum. Kartöflusýki gerði allmikið tjón í Vestmannaeyjum.

Fiskiveiðar urðu ekki stundaðar á árinu með eins góðum árangri og verið hefir undanfarin ár sökum gæftaleysis og þó aðallega sökum skorts á kolum, salti og steinolíu, og hins afarháa verðs á þessum vörum. Sunnanlands urðu mörg skip að hætta fiskiveiðum í apríl, því bæði var þá skortur á kolum, salti og olíu, og útgerð skipanna mjög dýr, og þótti ekki sýnt að hún mundi bera sig. Voru og margir, er þótti ráðlegra að geyma nokkuð af þessum vörum til síldveiðarinnar, en síldveiðin brást að miklu leyti sökum ógæfta mestan hluta síldveiðatímans. Varð af því tjón mikið, bæði fyrir útgerð skipanna og hinn mikla fjölda fólks, er hafði ráðið sig til síldarvinnu. Um haustið voru fiskiveiðar nær ekkert reknar. Um haustið leyfði stjórnin sölu 10 botnvörpuveiðagufuskipa úr Reykjavík til Frakklands, og keypti franska stjórnin öll skipin. Var kaupverð þeirra um 4½ miljón króna og fékk landsstjórnin mikinn hluta þess að lán, og er ákveðið að fénu skuli varið til fiskiskipakaupa að ófriðnum loknum.

Aukapinginu, er kom saman 11. des. 1916, var slitið 13. janúar. Voru lög in um breyting á lögum nr. 17, 3. október 1903, um aðra skipun á sæðstu umboðsstjórn Íslands, er samþykkt voru af þinginu 29. des. staðfest af konungi 2. janúar og 4. s. m. voru skipaðir ráðherrar Íslands: Björn Kristjánsson bankastjóri, Jón Magnússon bæjarfógeti og Sigurður Jónsson bóndi á Yztafelli. Var Jóni Magnússyni falið forsæti ráðuneytisins og varð hann dóms- og kirkjumálaráðherra, Björn Kristjánsson fjármálaráðherra og Sigurður Jónsson atvinnu- og samgöngumálaráðherra. Aukapingið samþykkti 13 lög og 10 þingsályktanir. Helztu lög þingsins voru til tryggingar siglingum og aðflutningum til landsins. Var stjórninni veitt heimild til að kaupa eimskip eftir þörfum til vöruflutninga milli Íslands og útlanda, og að taka lán í því skyni, eftir því sem þörf krefði. Enn fremur var stjórninni heimilað að kaupa eimskip til strandferða.

kringum landið. Þingið samþykkti og lög um bann á sölu og leigu skipa úr landi, en stjórnin fékk heimild til að veita undanþágu frá banninu. Þá var og stjórninni veitt enn víðtækari heimild en áður til ýmsra ráðstafana út af Norðurálfríðnum, meðal annars ótakmörkuð lánsheimild til vörukaupa og að taka í sínar hendur alla verzlun, ef á þyrfti að halda, á einstökum vörutegundum innlendum og útlendum.

Aukapingið samþykkti þingsályktun um að heimila landestjórninni að greiða embættis- og sýslunarmönnum landssjóðs dýrtíðaruppbót fyrir árið 1916, og voru það 5—50% fyrir þá, sem höfðu haft að árslaunum 4500 kr. eða minna.

Síðan kom reglulegt alþingi saman 2. júlí og stóð yfir til 17. september. Varð sú breyting á stjórn landsins, að Björn Kristjánsson fékk 28. ágúst lausn frá fjármálaráðherraembættinu og var Sigurður Eggerz settur bæjarfógeti í Reykjavík skipaður fjármálaráðherra. Meðan þingið stóð yfir andaðist Skúli S. Thoroddsen þingmaður Norður-Ísfirðinga og var síra Sigurður Stefánsson kosið í stað hans.

Þingið samþykkti 67 lög og afgreiddi 20 ályktanir til stjórnarinnar. Af merkum lögum þingsins skulu nefnd: Um almenna hjálp vegna dýrtíðarinnar; um skiftingu bæjarfógetaembættisins í Reykjavík og um stofnun sérstakrar tollgæzlu í Reykjavík; um stofnun alþýðuskóla á Eiðum og afhendingu Eiðsæigna til landssjóðs um stofnun húsmæðraskóla á Norðurlandi; um breyting á og viðauka við lög um tekjuskatt; um dýrtíðaruppbót handa embættis- og sýslunarmönnum landssjóðs; um lögræði; um áveitu á Flóann; um einkasöluheimild landstjórnariunar á steinolíu; breyting á Landsbankalögum; um rekstur loftskýtastöðva á Íslandi og um slysaþrygging sjómanna.

Þingið samþykkti í einu hljóði (ráðherrarnir greiddu ekki atkvæði) ályktun um »að skora á stjórnina að sjá um, að Íslandi verði þegar ákveðinu fullkominu siglingafáni með konungsúrskurði og ályktar að veita heimild til þess, að svo sé farið með málið«. Flutti forsætisráðherra tillögu þessa fyrir konung 22. nóvember, en hann gat ekki fallist á hana. Lét forsætisráðherra þess getið, að þótt hann og samverkamenn hans í ráðuneyti Íslands gerðu ekki synjunina að fráfararefni, svo sem nú væri ástatt, þá mætti ekki skilja það svo, að þeir legðu eigi hina mestu áherzlu á framgang málsins, og að alþingi mundi ekki láta málið niður falla.

Samkvæmt ályktun alþingis voru 22. október skipaðir í milli-

Þinganefnd til að íhuga fossamál landsins: Guðmundur Björnson landlæknir, Bjarni Jónsson frá Vogu dócent, Jón Þorláksson verkfræðingur, Sveinn Ólafsson umboðsmaður og Guðm. Eggerz sýslumaður og var G. Björnson skipaður formaður nefndarinnar.

Frá því að Norðurláfuófriðurinn hófst og til ársloka 1916 voru siglingar hingað til landsins að mestu óhindraðar að öðru en því, að Englendingar kröfðu þess, að skipin kæmu við í brezkri höfn til rannsóknar, og urðu skip fyrir allmiklum töfum af þeirri rannsókn. Þá hafði það og verið nokkrum erfiðleikum bundið að fá útflutningsleyfi fyrir vörur í Englandi, og var Birni Sigurðssyni banka- stjóra í júní 1916 falið að dvelja í London til að gæta hagsmuna landsins í verzlun þess og siglingum. Skip þau, sem 1916 höfðu haldið uppi reglubundnum samgöngum milli Íslands og útlanda voru »Goðafoss« og »Gullfoss«, skip Eimskipafélags Íslands og fjögur skip, »Botnia«, »Ceres«, »Island« og »Vesta« er sameinaða gufuskipafélagið danska átti, og norska skipið »Flora« fór og nokkrar ferðir milli Íslands og útlanda. Landsstjórnin hafði og frá ófriðarbyrjun haft skip við og við á leigu til vöruflutninga frá Ameríku og um áramótin hafði hún norskt skip, »Bisp«, á leigu. Eimskipafélagið varð fyrir því tjóni 30. nóv. 1916, að »Goðafoss« strandaði og náðist eigi út aftur. Nokkru eftir áramót keypti félagið skip í staðinn, er »Lagarfoss« nefnist.

Um áramót var heldur eigi að ræða um skort á nauðsynjavörum og nægur skipakostur hafði fengist til að flytja þær til landsins. Á þessu varð og engin breyting fyrsta mánuð ársins 1917 en um mánaðamótin janúar og febrúar, þegar Þjóðverjar tilkyntu, að þeir legðu herkví um Bretland og að þeir mundu sökkva öllum skipum, er kæmu á hafnbannssvæðið, stöðvuðust allar samgöngur milli Íslands og Norðurlanda. Voru þá bæði skip Eimskipafélagsins og »Island« í Kaupmannahöfn, en »Botnia« og »Ceres« voru hér við land. Leit þá mjög illa út með flutning á vörum til landsins og tók landsstjórnin að gera ýmsar ráðstafanir til þess að fá nauðsynjar fluttar til landsins. Gekk það mjög treglega, en þó fékst loka í lok marz mánaðar leyfi brezkru stjórnarinnar til þess að »Gullfoss« og »Island« mættu fara frá Kaupmannahöfn hingað án viðkomu í brezkri höfn og komu þau skip hlaðin vörum um miðjan apríl. Seinna fékk »Lagarfoss« og ýms dönsk skip samskonar leyfi.

Meðan siglingateppan við Norðurlönd stóð yfir leigði stjórnin norskt skip, »Escondido«, er var í Ameríku til að flytja þaðan nauðsynjavörur hingað og voru bæði skipin »Bisp« og »Escondido«

hlaðin og ferðbúin frá New York fyrst í apríl, en áður en þau gátu lagt af stað þaðan gengu Bandaríkin í Norðurálfrúðinn, og varð það til þess að skipin fengu eigi fararleyfi, og fengu eigi að fara þaðan fyr en í maí. »Bisp« var hlaðinn steinolíu, en hér var þá svo mikill skortur á þeirri vöru, að mörg vélskip gátu eigi rekið fiskiveiðar. Varð því mikið tjón af þessari töf skipsins og auk þess lagðist feikna kostnaður á farm skipanna. Þrátt fyrir erfiðleika á að fá vörur og útflutningsleyfi fyrir þær í Bandaríkjunum, var þó ekki um annað að ræða, en að reyna að fá þær þaðan, og leigði stjórnin »Island« til Ameríkuferða og Eimskipafélagið lét bæði skip sín fara vestur um haf. Síðar tók stjórnin einnig á leigu »Francis Hyde«, eign O. Johnsons & Kaaber's stórkaupmanna, til Ameríkuferða og síðar fór »Willemoes«, skip stjórnarinnar, einnig vestur. Í maí var Jóni Sivertsen skólastjóra við verzlunarskólann í Reykjavík falið að fara til Ameríku til að greiða fyrir afgreiðslu skipanna og útvega útflutningsleyfi fyrir vörum, og í júlí var Árna Eggertson bæjarfulltrúi í Winnipeg einnig falið að vera fulltrúi landsins fyrir vestan haf. Eftir það gekk öllu greiðara með að fá vörur og útflutningsleyfi fyrir þær í Bandaríkjunum, en miklum erfiðleikum var það þó bundið og urðu skipin oft að bíða langan tíma í New York eftir afgreiðslu. Fór skipanna tafði og nokkuð viðkoma í Halifax til rannsóknar í báðum leiðum.

Mestum erfiðleikum var þó bundið að fá kol og salt flutt frá Bretlandi sökum kaþbátahættunnar, en tilfinnanlegur skortur fór að verða þegar um vorið á þeim vörum til að reka síld- og fiskiveiðar og halda uppi skipaferðum til flutninga. Stjórnin fékk »Ceres« á leigu til Englandsferða, og eftir að norsku leiguskipin voru komin frá Ameríku voru þau einnig send til Englands og síðar tók stjórnin »Vestu« á leigu þangað. En í júlí voru öll þessi skip, nema »Bisp«, kafskotin af þýzkum kaþbátum og einnig »Flora« á leið hédan til Noregs. Fórust 5 menn af »Vestu« og 2 af »Ceres«. Nokkur skip, aðallega seglskip, fluttu kol og salt hingað frá Englánda og um haustið kom enskt gufuskip með 6000 tonn af kolum til stjórnarinnar og nokkru síðar franskt skip með kol og salt. En mörgum skipum var sökt á leið hingað af þýzkum kaþbátum.

Landsstjórnin keypti samkvæmt heimild alþingis tvö skip til millllandaferða, »Borg« og »Willemoes«. Var »Borg« látin fara til Englands en »Willemoes« til Ameríku. Stjórnin keypti og þriðja skipið til strandferða. Var það »Sterling« gamla skip Thorefélagsins og tók það við strandferðum í ágúst, en áður hafði stjórnin leigt

»Botnia« til strandferða. Mátti segja að betur rættist úr en á horfðist með samgöngur og aðflutninga til landsins. Til Reykjavíkur komu á árinu með vörur frá útlöndum 101 skip, er voru 46393 rúml.

Í árslokin var »Bisp« í Englandi, »Borg« í Noregi til viðgerða, »Island« og »Francis Hyde« á leið til Ameríku, en bæði skip Elmskipafélagsins og »Willemoes« voru hér við land. »Sterling« varð 26. nóv. fyrir því áfalli að stranda við Sauðárkrók, en náðist von bráðar út aftur eigi mikið skemdur.

Varðskipið »Islands Falk« fór nokkrar ferðir milli Íslands og Danmerkur og flutti stjórnarvalda póst og farþega, en allur almennur póstflutningur mátti heita alveg stöðvaður síðari hluta ársins, nema það sem kom með skipum frá Englandi. Skip, sem fóru til Ameríku, fengu eigi leyfi til að flytja póst.

Allar útlendar vörur hækkuðu mjög mikið í verði. Frá því að ófriðurinn hófst og til ársloka 1916 hafði smásöluverð á flestum nauðsynjavörum í Reykjavík hækkað um 83%, en í árslok 1917 nam hækkunin um 180%. Tilfinnaulegast var þó hækkunin á kolum og salti og urðu þær vörur tífalt dýrari en fyrir ófriðinn. Mestan þátt átti í þessari geysilegu verðhækkun hin feikna háu flutningsgjöld og stríðsvátrygging á skipum og farmi, sérstaklega á vörum frá Englandi. Innlendar vörur hækkuðu og nokkuð í verði, sérstaklega þær, er seldar voru í landinu. Var það og miklum erfiðleikum bundið að koma þeim á erlendan markað, og varð enginn útflutningur á hrossum. Bannaður var og útflutningur úr landi á smjör, og með bráðabirgðalögum 10. des. fékk stjórnin heimild til að banna útflutning á skepnufóðri.

Í janúar fór nefnd manna til Englands til að semja við brezku stjórnina um verð á íslenzkum afurðum. Voru það kaupmennirnir Carl Proppé, Páll Sefánsson, Pétur A. Ólafason og Rich. Thors framkv.stj. og í London tók Björn Sigurðsson fulltrúi landsins sæti í nefndinni. Fékst nokkur hækkun á fiski- og síldarverði, en hvergi nærri svo mikil að næmi auknum framleiðslukostnaði. Síðar fóru þeir feðgar Thor Jensen og Rich. Thors framkvæmdastjórnar til London til þess að fá frekari verðhækkun, en lítill árangur mun hafa orðið af þeirri málaleitan. Bretar leyfðu sölu 20000 tunna saltkjöts til Noregs, en eigi var það flutt frá landinu fyrir áramót.

Til að koma í veg fyrir að skortur yrði á nauðsynjavörum í einstökum sveitum, fyrirskipaði stjórnarráðið, að í hverri áýslu og kaupstað skyldu nefndir hafa eftirlit með vöruinnflutningi og úthlutun,

og að sumar vörur skyldu að eins verða seldar eftir seðlum, er nefndirnar gáfu út. Seint í maí fór fram talning á helstu útlendum nauðsynjavörum, bæði hjá kaupmönnum, kaupfélögum og einstökum mönnum. Í Reykjavík var og skrifstofa sett á stofn undir umsjón stjórnarráðsins, er skyldi hafa eftirlit með innflutningi á nauðsynjavörum til landsins og að þær kæmu sem jafnast niður um allt land, svo að hvergi yrði skortur á þeim.

Landsstjórnin rak sjálf mikinn hluta verzlunar landsins með matvörur, kol, salt og steinolíu, og annaðist stjórnarráðið í fyrstu innkaup varanna, og hafði yfirumsjón með útsölu þeirra. Síðan var Héðni Valdimarsyni cand. polt. falin forstaða landsverzlunarinnar og Elmskipafélaginu forstjórn lands sjóðsskipanna. Um áramót slepti stjórnin að mestu allri umsjón með landsverzluninni og skipaði þá August Flygenring kaupmann í Hafnarfirði, Hallgrím Kristinsson framkvæmdastjóra Samvinnufélaganna og Magnús Kristjánsson kaupmann á Akureyri forstjóra hennar frá nýári 1918.

Alþingi samþykkti ályktun, að vörur landsverzlunarinnar væru seldar sama verði í öllum kaupstöðum landsins og eftir pöntun að minsta kosti í einu eða tveimur aðalkauptúnum hverrar sýslu.

Alþingi var það ljóst, að ekki yrði komist hjá því, að gera einhverjar ráðstafanir til að létta undir almenningi að bera hina sívaxandi dýrtíð. Að vísu hafði kaupgjald verkafólks farið hækkandi, en þó hvergi nærri því sem allar lífsnauðsynjar stigu í verði. Veitti alþingi stjórninni heimild til, á meðan Norðurláfuófríðurinn stæði, að veita sýslufélögum, bæjarfélögum og hreppsfélögum lán til þess að afstýra verulegri neyð, að dómi sveitarstjórna, af dýrtíð og matvælaskorti. En leitast skyldi við að verja lánnum þessum meir til atvinnubóta en hallærisstyrks beinlínis. Landsstjórninni var og heimilað að verja fé úr landsjóði til atvinnubóta, svo sem til að undirbúa stórhýsl, er sýnilega þyrfti að reisa innan skamms, hafnargerðir, vita, brýr og vegi, og til að reka matjurtarækt í stærri stíl, námagróft eða önnur nauðsynjafyrirtæki. Stjórnin fékk enn fremur heimild til að selja nokkuð af kolum undir verði til heimilisnotkunar.

Alþingi samþykkti og lög um dýrtíðaruppbót handa embættis- og sýslunarmönnum landsjóðs, og er hámark dýrtíðaruppbótarinnar 40%, en engin uppbót veitt á árslaun yfir 4600 kr. Þeir, sem ekki hafa 4000 kr. árslaun fá auk þess 70 kr. fyrir hvern framfæring, sem er á skylduframfæri, og ekki getur unnið að fullu fyrir framfæri sínu.

Þegar kom fram á vetur fór mjög að bera á atvinnuleysi við

sjávarsðuna, því að fiskiveiðar og annar atvinnurekstur einstakra manna mátti heita að mestu stöðvaður, og tekjur þeirra manna, er unnið höfðu að fiski- og síldveiði um árið, orðið með minsta móti. Tók landestjórnin og bæjar- og sveitarstjórnir að gera ýmsar ráðstafanir, eftir því sem kostur var, til að bæta úr atvinnuskortinum. Meðal annara atvinnubóta lét stjórnin vinna að nýjum vegi milli Reykjavíkur og Hafnarfjarðar.

Allmikið var gert til að afla innlands eldsneytis. Í Reykjavík og víðar var mótekja með mesta móti, og töluvert unnið að surtarbrands- og brúnkólanámugrefti, sérstaklega í Tungunámu á Tjörnesi, er landestjórnin keypti og rak.

8. febrúar var Jón Helgason prófessor skipaður biskup landsins og 22. apríl var hann vígður biskupsvígslu í Reykjavíkurdómkirkju. 15. nóv. kjöri Kaupmannahafnarháskóli Jón biskup heiðursdoktor.

31. október var 400 ára afmælis siðaskiftanna minst með guðsþjónustu í öllum höfuðkirkjum landsins.

Um sumarið var bygð loftakeytastöð í Reykjavík, og 16. nóv. var hafnargeiðinni í Reykjavík að mestu lokið, og fór þá fram afhending á henni af hendi N. C. Monbergs, og seldi hann bæjarstjórninni öll byggingartæki, áhöld og efnisleyfar ásamt húsum og sporbrautum fyrir 550.000 kr.

Brunaslys urðu nokkur á árinu: 10. maí brann íbúðarhús á Eskifirði, 30. ágúst bær á Syðri-Brekkum í Skagafirði og í s. m. bær að Gröf í Miklaholtshreppi, 30. október brann íbúðarhúsið á Hvanneyri í Borgarfirði. — Heybrunar urðu og á nokkrum stöðum og á Glerárskógum og Vígholtsstöðum í Dölum brunnu hey og útihús.

Slysfarir á sjó urðu með minna móti: 3. febrúar fórst bátur með 4 mönnum í lendingu á Stökkseyri, snemma í október fórst vélbátur úr Reykjavík, »Trausti«, á Húnaflóa með 7 mönnum og »Beautiful Star«, þilskip með 6 mönnum. Seint í nóvember druknuðu tveir menn af báti úr Garðinum. Nokkur skip strönduðu, náðust sum þeirra út aftur, og 13. okt. sökk »Kópur«, skip úr Reykjavík, undan Herðisarvík, en menn björguðust.

Í páskaeveðrinu urðu úti kona frá Valbjarnarvöllum í Borgarfirði og bóndi á Borg í Arnarfirði. Fleiri slysfarir urðu á sjó og landi.

Helztu mannalát á árinu: Jón Jónsson fyr umboðsmaður og hreppstjóri í Ólafsvík (16. jan.), Rögnvaldur Ólafsson byggingameistari í Reykjavík (14. febr.), Vigdís Ólafsdóttir frú í Reykja-

vík (17. febr.), Solveig Guðrún Daníelsdóttir Eymundsson frú í Reykjavík (24. febr.), Friðrik Stefánsson fyr alþm. Skagfirðinga (9. marz), Þóra Pétursdóttir Thoroddsen frú í Kaupmannahöfn (22. marz), Geir Zoëga kaupmaður í Reykjavík (25. marz), Magnús Stephensen fyr landshöfðingi (3. apríl), Lárus S. Tómasson bóksali á Seyðisfirði (9. apríl). Hafliði Guðmundsson hreppstjóri á Siglufirði (12. apríl), Gísli Högnason póstafgreiðslumaður á Búðum í Fáskrúðsfirði (18. apríl), Andrés Fjeldsted óðalsbóndi frá Hvítárvöllum (22. apríl), Torfi Magnússon fyr bókhaldari á Stokkseyri (29. apríl), Helga Hjörleifsdóttir ekkja í Holti undir Eyjafjöllum (27. maí), Þorsteinn Þórarinsson uppgjafaprestur frá Eyðölum (7. júní), Valgerður Þorsteinsdóttir prestsekkja á Bægisá (18. júní), Þorlákur O. Johnson fyr kaupmaður í Reykjavík (25. júní), Jónas Jónsson þinghúsvörður (2. júlí), Jóhannes Pétursson kaupmaður á Ísafirði (7. júlí), Magnús Þórarinsson bóndi á Halldórsstöðum (19. júlí), Skúli S. Thoroddsen alþm. í Reykjavík (23. júlí), Friðjón Jónsson fyr bóndi á Sandi (29. júlí), Þorgrímur Johnsen fyr héraðslæknir (10. ágúst), Þórunn Ólafsdóttir frú í Kálfholti (17. ágúst), Einar Skúlason bóndi á Tannstaðabakka (20. ágúst), Sigríður Pétursdóttir frú á Gilsbakka (24. ágúst), Kristján Eldjárn Þórarinsson uppgjafaprestur á Tjörn (16. sept.), Pétur Gíslason fyr útvegsbóndi í Reykjavík (19. sept.) Sigríður Margrét Björnsdóttir Blöndal frú í Stafholtsey (28. sept.), Katrín Sveinsdóttir ekkja í Firði í Mjóafirði (9. okt.) Árni Gíslason læknir í Bolungarvík (10. okt.), Vilhelmina Steinsen prestsekkja í Reykjavík (13. okt.) Tryggvi Gunnarsson fyr bankastjóri í Reykjavík (21. okt.), Sigurður Guðmundsson óðalsbóndi á Selalæk (23. okt.), Ole P. Chr. Möller kaupmaður á Hjalteyri (27. okt.), Árni Eiríksson kaupmaður í Reykjavík (10. des.), Björn Ólafason gullsmiður í Reykjavík (23. des.), Guðrún Þórðardóttir ekkja á Lauga-bóli (23. des.), Ingiríður Guðmundsdóttir ekkja á Skammbeinsstöðum (29. des.).

Jóhann Kristjánsson.

Siðbót Lúthers.

Erindi flutt á Hólum í Hjaltadal á 400 ára afmæli siðbótar Lúthers
31. okt. 1917, af *Sig. Sigurðssyni* kennara.

Trúbrögðin hafa verið undirstaða hugsunarháttar og lífsstefna þjóðanna. Meðan þau hafa gildi í hug og hjarta þeirra, er breytnin og lífnaðarhættirnir að meira eða minna leyti við þau bundin. Trúbragðasagan er því verulegur þáttur í lífssögu þjóðanna.

Á öllum hliðum lífsins hafa margs konar andlegar hreyfingar átt sér stað. Hafa þær titt barist um völdin og ein stefnan rutt annari úr vegi eða haft yfirhöndina. Mennirnir hafa iðulega spurt eins og Pilatus: »Hvað er sannleikur?« og svörin hafa orðið á ýmsa vegu. Þeir hafa átt erfitt með að finna þann óygggjandi sannleika í hinum ýmsu andlegu lífshræringum, sem allir gætu játað og til-einkað sér, bygt líf sitt á og lifað eftir. Því hafa stefnurnar orðið svo margar. Tími og ástæður leyfa ekki að rekja þetta á marga vegu. Umræðuefnið á að beinast í ákveðna átt við þetta tækifæri. Það á að vera bundið við einn þáttinn í sögu kristninnar.

Líklegt virðist, að saga kristninnar væri að því leyti einföld og fábrotin, að hún skýrði að eins frá því, hvernig kristna trúin hefði rutt sér til rúms í heiminum, hvernig hún hefði sigrast á öðrum trúarbrögðum, sem ríkjandi hafa verið á þeim tímum og svæðum, sem hún hefir verið boðuð á. — Ætla mætti, að kristnir menn hafi að eins haft eitt að bjóða öðrum: einföld trúarsannindi í ákveðnu formi, bygð á kenningu Krists, sem þeir hafi einhuga lagt

sig fram til að ryðja braut, og á hverjum stað og tíma hafi annaðhvort sigrað eða orðið að lúta í lægra haldi.

En svo hefir eigi verið. — Saga kristninnar ber vott um það, að hún hefir eigi að eins verið baráttusaga vegna mótspyrnu þeirra manna, sem eigi játuðu kristna trú, heldur er hún jafnframt saga um innbyrðis baráttu — stríð á milli margra stefna og flokka, sem risið hafa upp á ýmsum tímum innan sjálfrar kristninnar. Meðal játenda Krists hefir frá því á fyrstu öldum kristninnar átt sér stað hið sama og sagt er frá í sögunni af Hringi kóngsyni, sem nýkomin er í Eimreiðinni. — Hringur reið í skóg með mönnum sínum. Þeir sáu hind eina með gullhring um hornin. Kóngsson vildi ná hindinni. Þeir eltu hana og sprengdu alla hestana. Svört þoka skall yfir. Þeir mistu sjónar á hindinni. Þeir ætluðu síðan heimleiðis. »Gengu þeir nú allir samt, það sem horfði, þangað til hverjum fór að þykja sinn vegur réttur. Skildu þeir þá og fóru sinn í hverja áttina«. Líkt hefir kristnum mönnum oft farið. Það væri ef til vill ofsagt, að þeir hafi sífellt mist sjónar á aðalmarkinu sökum andlegrar þoku; en þeir hafa iðulega mist sjónar á aðalbrautinni, sem samleiðin gat legið eftir, hver komið auga á sína hliðargötu, þótt sinn vegur réttur og farið hann. Forkólfur hvernar stefnu hefir svo unnið sér fleiri eða færri fylgismenn, og flokkarnir síðan átt í baráttu hver við annan.

Framan af öldum voru svo við og við haldin kirkjuþing, sem oftast komust að einhverri niðurstöðu um það, hvort þessi stefnan eða hin var sú eina sanna kristilega trú. Sú stefnan, sem eigi hlaut þá viðurkenningu, var dæmd villutrú, og þeir, sem henni fylgdu, ofsóktir — oft »með báli og brandi«. — Að færa dæmi til þessa yrði of langt mál. En mörg eru þau til. — Eg má heldur eigi dvelja við skýringar á því, hvernig kristin kirkja varð ríkiskirkja — eftir margar og miklar ofsóknir, sem kristnir menn urðu fyrir, einkum af keisurum Rómaveldis. — Hins

verð eg að geta lauslega, að kaþólska kirkjan varð sigurvegarinn, þ. e. kristnin í því formi rikistrú í heimsstórveldinu, sem kent var við Róm.

Á fyrstu öldum kristninnar mynduðust smám saman sérstök kirkjuleg embætti. Hér skal það einkum tekið fram, að virðulegasta embættið var biskupsembættið. Biskuparnir voru yfirmenn kirkjunnar hver á sínu svæði. Biskuparnir í helztu borgunum voru snemma mest metnir og urðu mestu ráðandi, einkum þeir biskupar, sem áttu heima á þeim stöðum, sem postular Krists höfðu starfað á. Af þeim fekk biskupinn í Rómaborg mesta virðingu og mest að segja sem leiðtogi kristninnar. Þar störfuðu þeir Pétur og Páll og liðu píslarvættisdauða. — Var hann venjulega nefndur páfi (af »papa«, þ. e. faðir). Og þegar atkvæðamenn skipuðu þetta sæti, reyndu þeir að efla veldi sitt á ýmsar lundir. Þannig gerði Leó mikli ákveðna kröfu til að vera yfirmaður allrar kristninnar. Bygði hann þá kröfu á orðum Krists við Pétur: »Þú ert Pétur, og á þessari hellu vil eg byggja mína kirkju«. (Matth. 16, 18). En sæti Péturs postula kvaðst Leó skipa. Atkvæðamestu páfarnir reyndu ekki að eins að koma kirkju og kristnihaldi í ákveðið form, heldur einnig að ná undir sig veraldlegu valdi og draga fjármuni undir sig og kirkjuna. [Gregor mikli (á 6. öld), Nikulás I. (á 9. öld), Gregor VII. (á 11. öld) og Innocens III. (fyrst á 13. öld) komu páfaveldinu á hæst stig]. — Sökum hinna veraldlegu valda, sem páfarnir kröfðust, áttu þeir í ýmsum deilum við kónga og keisara um völd og yfirráð. Urðu þjóðhöfðingjarnir stundum að beygja kné sín fyrir páfavaldinu og meðtaka tign sína af því. Annað veifið studdu páfar og þjóðhöfðingjar hverir aðra.

Eftir daga Innocens III. sátu misjafnir menn páfastólinn. Þeir rökuðu saman fé á allar lundir, undir ýmis konar yfirskini. Kirkjuleg embætti voru seld, einstakír menn rúnir að skyrtunni, ef hægt var að finna átyllu til að áfella þá fyrir eitthvert brot gegn kirkjunni. Al-

gengt varð að páfarnir létu syndalausnarsölu fara fram, þá er þeir töldu sig sérstaklega þurfa á fé að halda, svo sem til kirkjubygginga eða krossferða. Öll frjáls hugsun var dæmd villutrú og hegnt harðlega.

Páfarnir og hirð þeirra lifðu í óhófi, munaðarlífi og saurlífnaði. Trú og guðræknisiðkanir urðu mest ytra form, dýrkun dýrlinga og bókstafs. Varð kæringarleysið í þeim efnum oft svo bert, að það varð hverjum hugsandi manni hneykslunarefni. Margt í kenningum kirkjunnar voru mannasetningar, sem enga þýðingu höfðu fyrir trúarlífið, en gengið var ríkt eftir að fylgt væri sem háleitum trúarsannindum. Biblían var almenningi lítt kunn. Prestarnir notuðu mest latnesku útgáfuna af henni. Þýðingar voru að eins til af henni á þýzku, en þær höfðu litla útbreiðslu fengið.

Nokkrir hugsandi menn risu upp hér og hvar á ýmsum tímum og vöktu athygli á þessu ástandi. Urðu þær raddir háværarar og atkvæðameiri eftir því sem spilling kirkjuleiðtoganna fór vaxandi, og okið, sem kirkjan lagði á almenning, varð tilfínnanlegra. Er það því eðlilegt, að raddir þessar fengju meiri eða minni byr hjá leikmönnum. John Wycliffe prófessor í Oxford vakti hreyfingu á Englandi. Sýndi hann fram á ósamræmi í kenningum biblíunnar og kirkjunnar. Biblíuþýðingu á enska tungu kom hann í framkvæmd. — Jóhann Húss prófessor og prestur í Prag prédikaði í likum anda og gaf út ýms smárit. — Fleiri dæmi væri hægt að nefna. En kirkjuleiðtogarnir kæfðu þessar raddir niður. Þeir hindruðu útbreiðslu biblíuþýðingar Wycliffes og skipuðu að brenna rit hans. — Jóhann Húss var svikinn um vernd gegn ofbeldi. Var hann brendur á báli fyrir villutrú. Var það gert í Konstanz árið 1415. — Kenningar þessara manna liðu þó ekki undir lok. Ýmsir fleiri fóru sínar götur í kenningum sínum, þó áhrif þeirra yrðu ekki svo augljós, að kirkjuleiðtogarnir skærust í leikinn. Þeir áttu þó sinn þátt í að ryðja siðbótinni braut. (Tómas frá Kempis, Wessel frá Groeningen o. fl.).

Alvarlegar árásir á kirkjulegu meinin gerði Erasmus frá Rotterdam. Hann var lærður maður og snjall rithöfundur. Skrifaði hann nöpur háðrit um kirkju, presta og munku.

Sama gerði og þýzkur maður skarpgáfaður, Úlrik frá Húttén. Hann ræðst ekki á vald páfans, en hann sýnir spillingu páfadómsins með svörtum litum í ritum sínum. Hann kemst meðal annars að orði á þessa leið í riti sínu »Rómverska þrenningin«: »Prent er það, sem gerir Róm dýrðlega: tign páfans, bein dýrtinganna og aflátssalan. Af þrennu er mergð í Róm: prestum, skrifurum og skækjum. Prent er það, sem ekki á friðland í Róm: heilög einfeldni, hófsemi og ráðvendni. Með þrent er verzláð í Róm: Krist, kirkjuleg embætti og kvenfólk. Prent er einskis metið í Róm: góð samvizka, guðræknin og eiðurinn. Með þrent koma pílagrímarinnir venjulega frá Róm: saurugar samvizkur, magaveiki og tómar pyngjur. Prent hefir til þessa komið í veg fyrir að Þjóðverjar opni augun: sljóleiki þjóðhöfðingjanna, hnignun vísindanna og hjátrú fólksins«. — Sennilegt er, að í setningum þessum kenni nokkurra öfga. Engu að síður munu þær hafa allmikið sannleiksgildi, svo að þær gefi nokkra hugmynd um ástandið í byrjun 16. aldar.

Eg hefi í nokkrum dráttum sýnt fram á það, :ð brautin var að nokkru leyti rudd fyrir siðbótinni á Þýzku-landi, áður en sú aldan reis gegn katólsku kirkjunni, sem mest hefir hnekt valdi hennar. — Því vil eg einnig bæta við, að mér skilst sem hindranir þær, sem Úlrik frá Húttén segir fyrir því, að samlandar hans skilji köllun sína, hafi um þetta leyti verið í rénun. Þjóðhöfðingjarnir og almúginn voru ófáð farnir að skilja það, að rómverska kúgunin var ekki eðlileg. — Fornmentastefnan í vísindunum hafði rutt sér til rúms. Hún leiddi til þess, að þeir sem henni fylgdu skoðuðu kristnina og kirkjuna frá sögulegum sjónarhæðum, í ljósi kenninga bibliunnar og annara fornra heimildarrita, en eigi með rómverskum gleraugum samtíðar sinnar. — Fræðimenn þessir voru tals-

menn frelsis í trú og lífi. Þeir létu það ekki liggja í láginni, að kirkjan væri afvegaleidd og þyrfti að snúa frá villu síns vegar og endurnýjast í anda Krists.

En þrátt fyrir þetta var hjátrú í ýmsum myndum ríkjandi á Þýzkalandi. Fólkið var gagntekið ótta og skelfingu: ótta við galdra og drauga, við helvíti, og við djöfulinn, sem var í fyrirsát í hverju skoti; ótta við guð og Krist. — Guð var samkvæmt skoðun þess sífellt með refsivöndinn á lofti og Kristur strangur dómari.

Þá var óttinn ekki minstur við hreinsunareldnn, sem kirkjan ógnaði fólki með. Í honum hlutu allir að kveljast um tíma eftir dauðann, meðan þeir voru að hreinsast af óbættum syndum þessa lífs. — Prestarnir lýstu líka þessu ástandi þannig, að fólkið hlaut að skelfast.

Hræðsluefnin áttu þannig mest rót sína að rekja til kenninga kirkjunnar og kristindómsboðunar þessa tíma. En kirkjan átti líka bót við bölinu. María mey og fjöldi helgra manna voru bjargvættir hinna hreldu sálna. Ýms góðverk manna bættu fyrir syndir þeirra: Einlifi í klaustrum með bænum, föstum og margs konar meínlætingum, gjafir til kirkna, klaustra, krossferða o. fl., tilbeiðsla ýmsra helgra hluta, pílagrímsferðir til helgra staða o. fl. voru guði þóknarlegar og verðskulduðu uppgjöf synda. Syndarinn átti að skrifta iðrandi syndir sínar; lagði presturinn þá hendur yfir hann og hét honum fyrirgefningu syndanna, þ. e. a. s. syndarinn fékk uppgjöf á syndaskuldinni og hegningu þeirri, sem hún var valdandi: eilífri fyrirdæmingu. En hann átti engu að síður að bæta fyrir brot sín eftir megni í þessu lífi. En fyrir það, sem góðverk hans hrukku ekki til, varð hann að kveljast í hreinsunareldinum um lengri eða skemri tíma.

Aðalvaldið til að gefa upp syndaskuldina var vitanlega hjá páfanum í Róm, þó hann léti ýmsa þjóna kirkjunnar gera það í sinn stað. — Páfarnir voru arftakar Péturs postula að því valdi, sem Kristur hafði gefið honum til að binda og leysa. (Matth. 16, 19). — Kirkjan átti forða af góðverkum ýmsra þeirra, sem gert höfðu

meira en þeir þurftu til að afplána syndasektina. Svo var um dýrlinga. Þennan forða mátti hún úthluta öðrum, sem þurfandi voru — en hann kostaði peninga. Var þá eigi ætíð spurt um það, hvort syndarinn iðraðist eða eigi. Peningana notaði páfinn til gagnlegra hluta í þarfir kirkjunnar. Orð lék þó á því, að svo væri eigi ætíð gert. En það var ekkert aðalatriði. Hitt var meira um vert fyrir þá, sem peningana létu, að þeir höfðu fengið syndalausn.

Árið 1514 varð stórættaður Þjóverji, Albrecht að nafni, erkibiskup í Mainz. Embættið varð hann að kaupa af páfa fyrir stórfé, sem hann fekk að láni. Góð ráð voru dýr til að afla fjár til endurgreiðslu lánsins. Og ráðin þrast ekki: Leó X. páfi var um þessar mundir að undirbúa aflátssölu á Þýzkalandi. Átti að verja fénu til byggingar Péturskirkjunnar í Róm. Erkibiskup bauðst til að sjá um aflátssöluna á stóru svæði. Af ágóðanum skyldi páfinn fá 10,000 gyllini (15,000 kr.) af óskiftu. Hitt átti að skiftast jafnt milli erkibiskups og Péturskirkjunnar. — Gjaldið fyrir syndalausnina var ákveðið og miðað við »efni og ástæður«. Tignir menn áttu að greiða meira en ótignir og auðugir meira en efnalitlir. Fátæklingar gátu þó öðlast »náðina« ókeypis, ef þeir báðu og föstuðu, því »himnaríki á að standa opið fyrir fátækum sem ríku«. — Auk þess, sem syndakvittun fekst þannig fyrir eigin syndir (jafnvel ódrýgðar), var gefið tækifæri til að kaupa dána ættingja og vini úr hreinsunareldinum. Spöruðu aflátssalarnir ekki að minna menn á það og lýsa því átak-anlega, hvílíkar kvalir binir dónu liðu.

Erkibiskup fekk sér umboðsmenn til að annast aflátssöluna fyrir ákveðið kaup. Einn af umboðsmönnum hans var Jóhann Tetzel. Talið er, að hann hafi verið einn hinn ósvífnasti í að tæla menn til að kaupa »náðina«. Hann kom í nágrenni Wittenbergs haustið 1517 og rak erindi sín þar umhverfis. Koma hans á þær stöðvar leiddi til þess atburðar, sem minnst er í dag. — Munkur nokkur, sem fjöldi fólks skriftaði syndir sínar fyrir, varð þess var, að skriftabörninn höfðu huggað samvizkur sínar með því

að kaupa »rómversku náðina« og töldu sig því hólpin. Munkur þessi hafði gert sér far um að fá skriftabörn sín til að treysta á náð guðs fyrir Jesúm Krist. Hér sá hann, að annað var uppi á teningnum. Hann hneykslaðist á þessu athæfi, einkum á því, hvernig það varð í framkvæmdinni. Hann vildi því ekki láta það óátalið. Hann athugaði málið og komst að þeirri niðurstöðu, að best væri að fá það rökrætt við hátíðahald það, sem fram átti að fara á allra heilagra messu í hallarkirkjunni í Wittenberg. Hann ritaði því athugasemdir um aflátssöluna í 95 greinum og festi þær á kirkjuhurðina daginn fyrir hátíðina. Bauðst hann til að verja þessar greinir sínar í rök-ræðum við Jóhann Tetzel.

Munkur þessi var *Marteinn Lúther*. Til skýringar á þessu tiltæki hans er nauðsynlegt að segja drætti úr æfissögu hans til þessa tíma.

Lúther fæddist í Eisleben á Saxlandi 10. nóv. 1483. Var hann skírður daginn eftir. Sá dagur (11. nóv.) er í almanakinu kendur við dýrlinginn Martein biskup frá Tours. Var drengurinn skírður nafni hans. Faðir Lúthers var ráðvandur og ötull námugraftrarmaður og móðir hans einörð og guðrækin kona. Ólu þau börn sín upp »í aga og umvöndun drottins«. — Lúther gekk í skóla í Mansfeld og átti þar við strangan aga að búa. Síðar var hann sendur í skóla í Eisenach. Þar varð hann að syngja á götum úti, til að fá mat fyrir. En sökum þess að hann söng svo vel, tók kaupmannskona nokkur drenginn að sér. Átti hann góða daga á heimili hennar. — Árið 1501 fór hann í háskóla í Erfurt. Las hann fyrst heimspeki og latnesk fornrit. — Á stúdentsárunum var hann talinn ötull og glaðlyndur unglingur. Engu að síður var mikil trúaralvara rikjandi hjá honum. Sagt er, að hann hafi iðulega spurt sjálfan sig, hvenær sér mundi auðnast að verða verulega góður og öðlast náð guðs fyrir verk sín. Átti hann oft í megnu sálarstríði. Að loknu undirbúningsnámi við háskólann ætlaði hann að lesa lögfræði eftir ósk föður síns. — En hugarástand hans leiddi hann út á aðra

braut. Í afskaplegu illviðri, sumarið 1505, ákallaði hann örvæntingarfullur Önnu hina helgu og bað hana hjálpar. Hét hann því um leið að verða munkur. Stuttu síðar beiddist hann inntöku í klaustur í Erfurt. — Var það þvert á móti vilja föður hans. Í klaustrinu rækti Lúther skyldur sínar með kostgæfni. Lagði hann á sig alls konar meinlætingar til að þóknast guði. Hugðist hann með því geta öðlast sálarfrið. — Sagði hann síðar, að ef nokkur hefði verðskuldað himnaríki fyrir lífarni sitt sem munkur, þá hefði hann hlotið að gera það. Lærdómsiðkanir stundaði hann jafnframt að kappi. En samt vildi sálarangist hans eigi réna.

Umsjónarmaður klaustursins í Erfurt — og fleiri klaustra — hét Jóhann Staupitz. Hann var lærður guðfræðingur og jafnframt góður og kærleiksríkur maður. — Á einni skoðunarferð sinni í klaustrinu kyntist hann Lúther og sálarstriði hans. Staupitz huggaði hann vingjarnlega og sagði, að yfirbót hans væri öfug við það, sem hún ætti að vera. Hún hefði byrjað með hræðslu við guð, en sönn iðrun byrjaði í elsku til guðs. — »Orð þín smugu sem ör í sálu mína. Eg bar þau saman við kenningu bibliunnar um iðrun og yfirbót. Eru þau síðan hljómfegurstu orðin, sem eg heyri«, skrifaði Lúther síðar til Staupitz. Frá samfundum þeirra Staupitz fáu guðræknisiðkanir og biblíulestur Lúthers annan blæ en áður. Hann skoðaði trúna í öðru ljósi. Sá skilningur þroskaðist smám saman hjá honum, að það væru ekki verk mannanna, sem gerði þá aðnjótandi náðar guðs, heldur trúin á guð og endurlausn Jesú Krists. En »trúin«, segir hann, að sé nýtt hjarta og hugarfar, sem umskapi manninn.

Lúther tók prestvígslu árið 1507.

Árið eftir fluttist hann til Wittenberg. Þar hafði Friðrik kjörfursti á Saxlandi stofnað háskóla nokkrum árum áður. Þar var sams konar klaustur og í Erfurt. Áttu hæfustu munkarnir í klaustrinu að vera prófessorar við háskólann. Staupitz kom því til leiðar, að Lúther fluttist í klaustrið í Wittenberg, svo hann gæti verið

kennari í háskólanum. Byrjaði hann starf sitt þar með því að halda fyrirlestra í hugsunarfræði og heimspeki.

Árið 1511 fór Lúther til Rómaborgar, til að reka ýms erindi fyrir klaustrið. Hann hugði gott til þeirrar farar. Þrátt fyrir stefnubreytingu hans í trúarefnum var hann enn kaþólskur í hug og hjarta. Skoðaði hann ferð þessa sem pílagrímsför til hinnar helgu borgar. Þar ætlaði hann að skriftona syndir sínar og öðlast þá traustu von um fyrirgefningu, sem veita mundi honum fullkominn sálarfrið. — En hann fann það ekki, sem hann leitaði að.

Árið 1512 ávann Lúther sér doktorsnafnbót í guðfræði. Er sagt, að Staupitz hafi neytt hann til þess. Frá þeim tíma varð hann kennari í guðfræði. Til þess hafði Staupitz ætlast. — Í guðfræðiskenslu sinni tók Lúther þegar nýja stefnu. Hlutverk guðfræðisdoktora var að kenna trúfræði. En Lúther lét hana eiga sig. Í hennar stað tók hann að skýra biblíuna fyrir háskólanemendum. Sýndi hann þeim fram á, að aðalstefna hennar væri kenningin um synd mannanna og hjálpræði þeirra fyrir trúna á Jesúm Krist og gleðiboðskap hans. Með því einu móti kæmist maðurinn í samfélag við guð.

Brátt fór mikið orð af fyrirlestrum hans. Streymdu menn að úr öllum áttum, til að hlýða á þá. — Þótti Friðriki kjörfursta mjög vænt um það. Lét hann Lúther það í ljósi á ýmsa vegu. — Um þessar mundir var skorað á Lúther að prédika í aðalkirkjunni í Wittenberg. Hann þótti þar þegar skörulegur prédikari, sem dró fjölda áheyrenda að sér. — Í stólræðunum kom það sama fram og í guðfræðiskenslunni. Stefna hans var önnur, en algengt var áður. Hann ræðir t. d. um það, að dýrlingadýrkunin sé komin út á glapstigu. Samt telur hann vert að heiðra dýrlingana og reyna að líkjast þeim í kristilegu lífni. Hann minnst á pílagrímsferðirnar á líkan hátt. Hann mótmælir þeim ekki með öllu, en hann telur þær ekki hafa þá þýðingu, sem kirkjan gerði á þeim tíma. Hann reis ekki upp gegn kenningum kirkjunnar. Hann skýrði þær aðeins á nýjan hátt. Vildi hann með því leiða

athygli tilheyrendanna að aðalatriðum kristindómsins, að Kristi sjálfum og kenningu hans. Samt sem áður fundu tilheyrendurnir það, að það var ekki hin venjulega kenning kirkjunnar, sem Lúther boðaði. Barst orðrómur um það út; sögðu sögurnar, að Lúther mundi hallast mjög að bæheimsku villutrúnni, sem Jóhann Húss hafði boðað. — Kirkjan lét Lúther þó óáreittan í bráð.

En samtímis því, að Lúther boðaði Krist sem hinn eina sáluhjálparveg, var aflátssala í stórum stíl í undirbúningi í Rómaborg. Var það sami leiðangurinn, sem áður er getið, og kom Lúther til að athuga aflátssöluna.

Af því sem sagt hefir verið um trúarstefnu og kenningu Lúthers er það ljóst, að framferði Tetzels mundi hneyksla hann. — Lúther var sjálfur heitur trúmaður; trúin var honum hjartans mál og var laus við verkhelgi þá, sem kirkjan boðaði. Hann var einnig of skaprikur maður, til þess að sitja þegjandi hjá, þegar aðrar eins fjarstæður voru bornar á borð fyrir almenning og þær, sem Tetzal flutti. Samt sem áður datt honum ekki í hug að mótmæla aflátssölnunni sjálfri. Það var vanbrúkun hennar, sem hann reis á móti. Þetta sýnir bréf það, sem hann ritaði Albrecht erkibiskupi samtímis því, að hann festi upp greinir sínar. Í bréfinu kvedst hann ekki geta trúað því, að erkibiskupinn láti boða þær kenningar um gildi aflátssölnunnar, sem gert sé. Býst hann við, að erkibiskup viti ekki, hvernig þær séu, þótt þær séu fluttar í nafni hans. Biður hann erkibiskup að gefa umboðsmönnum nýjar reglur um gildi aflátssölu.

Enginn gaf sig fram til að mótmæla greinum Lúthers. En á stuttum tíma urðu þær kunnar um allt Þýzkaland og vöktu mikla undrun og efirtekt. — En þó Tetzal sinti ekki áskorun Lúthers um að rökraða syndalausnarsölnuna, þá leið ekki á löngu, að opinber mótmæli kæmu fram. Einn hirðprestur páfakirkjunnar reis upp sem talsmaður »hinnar heilögu kirkju» og ritaði bók á móti greinum Lúthers. Lúther þóttu röksemdir hans lélegar og gat ekki stílt sig um að hlæja að ruglinu.

Stuttu síðar skyldi Lúther koma til móts við róm-

verskan kardinála. Samræða þeirra endaði með því, að kardinálinn skipaði Lúther að afturkalla orð sín. En Lúther sat við sinn keip. Kardinálinn skrifaði þá Friðriki kjörfursta og skoraði á hann, annaðtveggja að senda Lúther til Rómaborgar eða gera hann landrækan. Kjörfurstinn gerði hvorugt. Hann ritaði kardinálanum og vitnaði til þess, að Lúther tjáði sig stöðugt fúsan til að láta sannfærast, ef einhver gæti það. — Stríðið milli Lúthers og páfavaldsins var þannig byrjað, og líkur voru litlar til, að því lyki í bráð. Ástæður leyfa ekki, að skýrt sé frá öllum einstökum atridum þess. Verður því að nægja að minnast að eins fárra.

Næstu missirin átti Lúther í skörpum kappræðum og ritdeilum við talsmenn kirkjunnar. Heimtuðu þeir, að hann beygði sig fyrir valdi hennar og páfans. En í þessum deilum fjarlægðist Lúther kirkjuna og viðurkenningu páfavaldsins meir og meir. Hann vildi lengi vel, að málið væri dæmt af almennu kirkjupingi. En þegar einn mótstöðumaður hans benti honum á, að kenningar hans væru þær sömu sem kirkjupingið í Konstanz hefði dæmt villutrú, þá komst hann í vanda. Varð hann að játa, að kirkjupingunum gæti skjátlast. Kvað hann þá skýrt upp úr með það, að sumar kenningar Húss, sem dæmdar hefðu verið villutrú, væru í raun og veru sannkristilegar.

Hreyfing sú, sem Lúther vakti gegn vanbrúkun afláts-sölnunnar, var nú orðin að opinberri baráttu við rómverska kirkjuvaldið. Það hlaut því að draga til stórtíðinda, ef Lúther gagnaði ekki.

Sagt er, að Lúther hafi verið á ferð ásamt einum af vinum sínum sumarið 1520. Á leiðinni lá hann eitt sinn lengi á bæn. Og þegar hann reis upp, mælti hann alvarlegur: „Nú er eg búinn að hlaða byssuna mína; nú er um að gera, að skotið gangi vel úr henni.“ — Stuttu síðar kom út rit hans til þýzku þjóðarinnar um endurbót kristninnar. — Í því riti mótmælir hann valdi páfans og mörgu öðru, sem kaþólska kirkjan kendi. Heldur hann því fram, að allir kristnir menn eigi að „teljast til Jesú prestlega konungdæmis“. Ritningin á að verða almenn-

ingseign. Pilgrímsferðirnar til Rómaborgar eiga að leggjast niður. — Hann hafði sjálfur komið til Rómaborgar og kynst spillingunni þar syðra. Taldi hann ferð þá mikils virði fyrir sig, því hennar vegna gæti hann dæmt réttlátari dóm en ella um kaþólska kirkjulífið. — Betlimunka klaustur skal hætta að stofna. Prestarnir mega gjarnan vera kvongaðir. Kirkjubann er óhæfa. — Hann skorar á þýzku þjóðina að láta páfavalðið ekki hafa sig fyrir féðúfu. — Lúther er jafnvel svo frekur, að hann segir, að páfinn sé ekki helgastur allra, heldur syndugastur allra; biður hann guð að velta veldisstóli hans og steypa til helvítis. — Hann minnst á margt, sem leiðrétt þarf, og heitir á »hinn kristna aðal þýzku þjóðarinnar« að beitast fyrir endurbótunum. — Af riti þessu seldust 4000 eintök fyrsta hálfu mánuðinn eftir útkomu þess. Þannig tók þýzka þjóðin móti þessari nýstárlegu sendingu. Fleiri markverð rit gaf Lúther út þetta ár. Báru þau sama markið. Voru þau kröftugar árásir á páfakirkjuna, og boðskapur um kristilegt frelsi, fluttur af brennheitri sannfæringu í kjarnmiklum orðum. Það er kristindómur postulatímanna, sem hér var boðaður á ný.

Samhliða ritstörfunum starfaði Lúther sem prestur og háskólakennari í Wittenberg — og áheyrendum hans fjölgaði stöðugt.

En í loftinu voru veðrabrigði.

Úr suðurátt mátti vænta stórvíðris — frá páfahirðinni í Rómaborg. — Hitt var óvíst, hvers konar veðri mátti búast við úr vesturátt — frá nýkjörna keisaranum Karli V.

Páfahirðin greip til síns vanalega úrræðis, til að tryggja sér fullkominn sigur í þessu lútherska máli: Hún lét birta á Þýzkalandi kröftugt bannfæringaskjal gegn Lúther og kenningum hans. Hann átti að hafa svarað því innan 60 daga, hvort hann vildi afturkalla kenningar sínar eða ekki. Og ef hann afturkallaði ekki, mátti hann búast við að verða höggvinn af tré kristninnar sem visin grein, með því að hann væri harðsvíraður villutrúar-

maður. — Jafnframt var þýzkum valdhöfum hótad strangri hegningu, ef þeir gæfu ekki Lúther á vald páfans og sæju um, að rit hans væru brend — þ. e. a. s. ef hann léti ekki undan.

Lúther skrifaði harðorðan bækling gegn bannfæringarbréfinu, en valdhafarnir hreyfðu sig ekki til aðgerða. — Úlrik frá Húttan fann upp á því að gefa bannfæringarbréfið út með skýringum eftir sínu höfði. Voru þær skýringar alt annað en vingjarnlegar í garð páfans. T. d. segir Húttan um þá skipun páfans að brenna rit Lúthers: «Þess þarf ekki að biðja. Þau brenna nú þegar í hjörtum allra góðra manna. Sá bruni mun þér óþægilegur. Slöktu hann, ef þú getur».

Nú var mest um að gera, hvernig keisarinn snerist við málinu. Fjöldi af vinum Lúthers vænti hins bezta af keisaranum. Þeirra á meðal var Friðrik kjörfursti.

En keisarinn vildi sjá um sig. Hann þurfti að hafa páfann sér hliðhollan. Var því varasamt fyrir hann að veita Lútherssinnnum lið. Hann var líka kapólskur í húð og hár. Sendiboði páfa fylgdi honum stöðugt og hafði hönd í bagga með. Kom hann því til leiðar, að fyrstu afskifti keisarans af máli Lúthers voru þau, að rit hans voru brend í Löven á Niðurlöndum. — En bráðlega var keisarinn væntanlegur, til að halda ríkisþing í Worms á Þýzkalandi. En á leiðinni þangað voru rit Lúthers brend í bæjunum Köln og Mainz. Keisarinn kom þannig til Þýzkalands með villutrúareldinn rómverska. Horfurnar voru ekki góðar. Rit Lúthers loguðu. Mun eldurinn bráðlega ná höfundinum? — En Lúther var hvergi hræddur. Hann brá sér til og safnaði saman lögum páfakirkjunnar, lagði eld í og kastaði bannfæringarskjalinu á bálið. — Þetta gerðist utan við Wittenberg 10. des. 1520 í viðurvist fjölda háskólanemenda. — Svona djarfur leikur var fágætur. Hann vakti athygli.

Í ársbyrjun 1521 stefndi keisarinn höfðingjum Þýzkalands til ríkisþings í Worms. — Þegar mál Lúthers kom til meðferðar á þinginu, voru skiftar skoðanir um það.

Keisarinn krafðist, að Lúther væri framseldur, en þjóðhöfðingjarnir þýzku heimtuðu, að hann væri yfirheyrður og kalladur til Worms í þeim tilgangi. En keisarinn vildi ekki heyra það nefnt, að farið væri að rökræða málið við bannfærðan mann. — Að síðustu leyfði keisari þó, að Lúther væri kallaður. Átti að gera eina tilraun enn, til að fá hann til að afturkalla þær kenningar, sem gengu mest í berhögg við lærdóma kirkjunnar. — Keisari skrifaði Lúther því bréf og skoraði á hann að koma til Worms og hét honum vernd sinni á ferðinni að heiman og heim aftur.

Lúther varð ótrauður við áskoruninni. Þjóst hann þó við öllu. Það sýna þessi orð hans: »Beiti þeir ofbeldi, eins og búast má við, því þeir ætla sér ekki að læra af mér, þá verður að fela drotni málefnið« o. s. frv. Í Erfurt varð hann að nema staðar. Fólkið þyrptist saman, til að sjá hetjuna. Hann prédikaði þar í klausturkirkjunni. Lagði hann út af orðum Krists: »Friður sé með yður« (Jóh. 20). Útlistaði hann það, hvernig maðurinn ætti að verða sannkristinn og öðlast sáluhjálpinu. — Á baráttu sína fyrir kristindóminn mintist hann ekki.

Keisarinn vildi helst ekki, að Lúther kæmi til Worms. Gerði hann tvær óbeinar tilraunir, til að hindra komu hans þangað. En Lúther lét ekki blekkjast af þeim. Til Worms vildi hann fara. Var hann kominn í nánd við bæinn, þegar Spalatin vinur hans, hirðprestur Friðriks kjörfursta, sendi á móti honum og lét minna hann á örlög Jóhanns Húss. Þá mælti Lúther þessi alkunnu orð: »Þó djöflarnir væru eins margir í Worms og þakplöturnar á húsunum, þá færi eg þangað«. — Og til Worms fór hann. Fyrir hans þangað var að því leyti eins konar sigurhróssför, að hann hafði virðulegt fylgdarlið (sjálfbodalið) og hvervetna þyrptist fólk saman, til að heilsa honum og fagna. Sendiboda páfans gramdist þetta mjög, en fékk ekki við því gert. Fagnaðarlátum fólkeins lenti ekki, fyrir en Lúther stóð frammi fyrir höfðingjunum á ríkisþinginu. Þar var hann einn síns liðs gagnvart höfðingjunum, sem

höfðu ráð hans í hendi sér. Allir störfðu á hann, sumir að visu vingjarnlega, en meiri hlutinn þvert á móti.

Fyrsti boðskapurinn, sem hann fær, er sá, að hann megi að eins tala, þegar hann sé spurður. Hann finnur þegar, að hér á að knésetja hann. Þetta kom honum á óvart og varð hann fár við. Því næst voru þessar spurningar lagðar fyrir hann: 1. Vill Lúther kannast við þessi rit? 2. Vill hann afturkalla efni þeirra eða standa fast við það?

Hann játaði þegar fyrri spurningunni, en bað um eins dags frest til að svara hinni. Fresturinn fekst með naumindum. — Daginn eftir kom hann á þingið aftur. Svaraði hann þá skýrt og skorinort með stuttri ræðu. Sagði hann meðal annars, að rit sín væru þrens konar: Í fyrsta lagi rit um guðrækni og góða siði. Þau teldu jafnvel mótstöðumenn sínir læsileg, svo enginn krefðist, að hann tæki þau aftur. Í öðru lagi væri sum ritin árásir á páfadæmið. — Að afturkalla þau væri það sama og að styðja rómversku harðstjórnina; það væri að opna ekki að eins gluggann heldur einnig dyrnar fyrir rómversku spillingunni, sem þá mundi verða magnaðri en áður. — Í þriðja lagi væru rit, sem stíluð væru til einstakra manna. Væru sum þeirra harðorðari en vera bæri. — Hann væri ekki helgur maður. — En afturkalla þau vildi hann ekki. Harðstjórnarnir skyldu ekki þurfa að hrósa sigri yfir því. Hann skoraði síðan á hvern sem væri að sanna sér það með orðum ritningarinnar, að hann færi villur vegar. Þá kvaðst hann mundi afturkalla villurnar og verða fyrstur manna til að brenna rit sín. — En rökræður fengust ekki. Hann var ámintur um að svara síðari spurningunni umsvifalaust í fáum orðum. — Svaraði hann á þá leið, að hann afturkallaði ekkert, nema hann yrði sannfærður með orðum ritningarinnar eða skýrum rökum; og móti samvizku sinni vildi hann eigi breyta. — Þingið fekk í svörum Lúthers átyllu til að spyrja hann sérstaklega að því, hvort hann áleti, að kirkjupingunum gæti yfirsést. Lúther svaraði því játandi og vitnaði til þess, að kirkjupingið í

Konstanz hefði gert ályktanir, sem væru ósamkvæmar orðum heilagrar ritningar. Þegar því var neitað, bauðst Lúther til að sanna það. En sönnunina vildi keisari ekki heyra. Hann sagði umræðum slitið. — Við þessi skyndilegu málalok varð Lúther að orði: »Hér stand jeg. Ann-að get jeg ekki. Guð hjálpi mér. Amen«.

Lúther hafði ekki látið bugast. Fagnaði hann sjálfur yfir því. Nú var eftir að vita, hver málalok yrðu hjá keisara og ríkisþingi. Keisarinn kvaðst staðráðinn í því að styðja kapólsku trúna, eins og fyrirrennarar sínir hefðu gert. Heimferð Lúthers skyldi verða hættulaus fyrir hann, eins og keisarinn hafði heitið. En að því búnu væri sjálfsagt, að farið væri með hann eins og opinberan villu-trúarmann.

Ríkisþingið vildi, að enn væri reynt að fá Lúther til að gefa eftir. Þingmenn óttuðust, að strangt framferði gegn honum leiddi til uppreistar. Hann hafði áunnið sér svo mikla lýðhylli. — Keisarinn gerði lítið úr þeim ástæðum. Leyfði hann þó, að samningaleiðin væri reynd á ný. Sendiboði páfans fekk ekki afstýrt því. Níu manna nefnd var sett á lagginar. Var hún valin þannig, að líklegt þótti, að starf hennar leiddi til friðsamlegra mála-lykta. Málamiðlunin við Lúther varð samt árangurslaus. Hann var ósveigjanlegur.

Nokkru síðar var Lúther dæmdur rétttræpur hvar sem væri í þýzka ríkinu. Öllum var bannað að styðja hann á nokkurn hátt, en boðið að handtaka hann og senda hann til keisara. — Alla Lútherssinna átti og að handtaka og gera eignir þeirra upptækar. Lúthersk rit var boðið að brenna. — Ályktun ríkisþingsins var þannig dauðadómur — ekki að eins Lúthers heldur og siðbótar-hreyfingarinnar.

Áður en þessi ályktun var samþykkt, var Lúther farinn heimleiðis. — En heim komst hann ekki. Í skógunum í Thüringen réðst riddaraflokkur á vagninn. Öku-manninum var velt úr sæti og Lúther handtekinn. Vinur

Lúthers, sem sat við hlið hans, mótmælti ákaft þessum aðförum. En mótmælin voru að eins gerð til að blekkja öikumanninn. Þeir Lúther höfðu verið aðvaraðir. Þeir vissu, að riddararnir voru vinir, en ekki óvinir.

Lúther var úr sögunni. — En frá þessum tíma sat Georg riddari í Wartborgarhöll. Las hann þar og ritaði. Meðal annars þýddi hann Nýja testamentið á þýzka tungu eftir gríska frumtextanum. — Þegar árásin á Lúther fréttist, héldu margir, að óvinir hans hefðu ráðið hann af dögum. Hörmuðu vinir hans örlög hans. En þeir helztu af þeim fengu brátt að vita, hvar hann var niður kominn. Fögnuðu þeir því einlæglega. Einn af þeim var Melanchton. Hann var prófessor í grísku við háskólann í Wittenberg. Hann var einn fornmentamannanna. Hafði tekist einlæg vinátta með þeim Lúther. Hneigðist Melanchton þegar að trúarstefnu Lúthers og varð einn ótrauðasti fylgismaður og samverkamaður hans í siðbótarstarfinu.

Melanchton var mikill vísindamaður og mannvinnur, hógvær í skapi, veikbygður og veiklyndur. Hann var maður hagsýnn, en ekki duglegur til framkvæmda út á við.

Samtímis því, að Lúther var kallaður til Worms, hafði Melanchton varnarrit á prjónunum gegn kaþólskum árásum á kenningu Lúthers. Segist hann verja Lúther sökum þess, að hann hafi dregið gleðiboðskapinn fram í dagsbirtuna. Hann vill ekki raska friði kirkjunnar, ekki vekja sundrung í ríkinu; hann vill að eins leysa ættjörðina undan ánauðarokinu rómverska. — En mótstöðumennirnir hafa hafið ófriðinn. Þeir vilja brjóta sannleikann á bak aftur með ofbeldi. Lúther ræðst á það eitt, sem ekki átti heima í kirkjunni á blómadögum hennar. Hann berst ekki með ofbeldi; hann berst með orðinu fyrir lífstrúnni. Melanchton skorar því á þýzka þjóðhöfðingja að vernda gleðiboðskapinn, kenningu Krists, dýrmætustu eign þeirra og það æðsta, sem til er á jörðu. Þannig skilur Melanchton Lúther og kenningu hans. — Lúther kunni líka að meta Melanchton, þó þeir væru að mörgu ólíkir. Þegar

Lúther lagði af stað til Worms og kvaddi Melanchton, sagði hann við hann: »Vel getur verið, að óvinir mínir myrði mig. Fari svo, þá sárþæni eg þig, kæri bróðir, að halda áfram að kenna og bera sannleikanum vitni. Þú verður nú að starfa í minn stað, því eg get ekki verið hér lengur. Þú getur leyst verkið betur af hendi. Það missist ekki mikið, þó eg fari, fyrst þú ert eftir. Guð & lærðari hermann þar sem þú ert«.

Melanchton varð líka að koma að miklu leyti í stað Lúthers. Þó háskólanum í Wittenberg bættust um þetta leyti góðir kenslukraftar, þá söfnuðust stúdentarnir einkum að »litla Grikkjanum«, en þannig var Melanchton oft nefndur. — Fregnin um, að Lúther lægi veikur í Wartborg, tók mjög á Melanchton. Hann skrifar þá Spalatin hirðpresti. Lýsir bréfið áhyggjum þeim, sem hann bar fyrir lífi Lúthers. »Hann hefir tendrað ljósið í Ísrael. Slokni það, hvers getum við þá vænst. Gæti eg að eins keypt líf hans með mínu! Við eigum engan guðdómlegri mann á jarðriki«. Þannig farast Melanchton orð í bréfinu.

Guðfræðingadeildin við háskólann í París var á þessum tímum í mestum metum. — Friðrik kjörfursti hafði leitað álits hennar um kenningu Lúthers. Svvarsins var beðið með óþreyju. Það kom loks í apríl 1521. Var Lúther hart dæmdur og honum ekki spöruð óvægin orð í ritinu. Melanchton svaraði ritinu þegar í stað. Mótmælti hann djarflega helztu guðfræðingum álfunnar. Er hann sumstaðar þungorður, eins og þar sem hann aumkar Frakkland fyrir, að þvílíkir dómamarar og ofbeldismenn séu settir þar til helgra starfa. Telur hann þá hæfari til að hreinsa sorpræsi en að fara með helgar bækur. — Stóryrði og ókurteisi móttöðumannanna gerðu hógværdarmanninn Melanchton svona frekan í orðum. — En hvað sem því liður, þá er það víst, að kenning Lúthers var Melanchton hjartans mál, sem hann þoldi eigi að væri misboðið. — Hann varð líka að vissu leyti foringi siðbótarhreyfingarinnar frá þessum tíma.

Melanchton var ánægður yfir því, hvernig gekk við

háskólann í Wittenberg. Það eitt þótti honum að, að Lúther vantaði. En þegar fram í sótti, gerðust þau tíðindi í Wittenberg, sem gerðu fjarveru Lúthers tilfinnanlegri. Þar hófst ný breyting. Hún var í því fólgin að koma ýmsum kenningum Lúthers verklega í framkvæmd. Prestarnir fóru að gifta sig. Einn samverkamaður Lúthers, prófessor Carlstadt, hvatti munku og nunnur til að yfirgefa klaustrin og gifta sig. Hann prédikaði móti dyrkun helgra manna og mynda og vildi í ýmsum efnum taka upp nýja siði. — Fólkið vildi uppvægt fá breytingarnar þegar í stað. Yfirvöldin létu sér hægt og voru treg til að breyta. Varð þá uppreist í bænum: Myndir voru rifnar úr kirkjunum, ölturu brotin niður, árásir gerðar á presta og munku, kirkjusíðum breytt o. fl. Kjörfurstinn gerði tilraunir til að sefa þetta upppot. En þær tilraunir hefnuðust ekki. Hann lét sér líka hægt, því Carlstadt hugðist koma á nýju skipulagi, sem kjörfursta leizt ekki illa á. En þær skipulagstilraunir fóru í handaskolum.

Lúther frjetti alt til Wartborgar. Þó margt af þessu væri samkvæmt kenningum hans og honum ekki í raun og veru móti skapi, þá þótti honum of geist á stað farið í þessum efnum og breytingarnar ganga of langt að svo stöddu. — Hann varð að fara heim, til að taka í taumana. Kjörfurstinn var á móti því. Í Wartborg var Lúther óhætt. En að koma opinberlega fram í Wittenberg var mikil áhætta. Því varð hann að vera kyr. En Lúther vildi það ekki. Hann skrifaði kjörfursta bréf; kvaðst hann afbiðja með öllu vernd hans, svo að hann ætti ekkert á hættu sín vegna. Hann sagðist fara upp á eigin ábyrgð og treysta vernd guðs eins. — Það er trúarhetjan Lúther, sem nú vill láta til sín taka — ekki til að berjast móti óvinunum, heldur til að stjórna vinunum, sem honum virðast vera að stofna málefni þeirra í hættu.

Sunnudaginn 9. marz 1522 var hann kominn aftur í prédikunarstólinn í Wittenberg, klæddur sem munkur. Hann prédikaði fyrst átta daga í röð. Hann prédikaði trú og kærleika. Taldi hann gott, að tilheyrendurnir

héldu fast við hina sönnu trú, en þeir yrðu líka að muna það, að kærleikurinn væri umburðarlyndur, og það umburðarlyndi ætti að koma fram í verkinu. — Vitnaði hann í því sambandi til ýmsra þeirra athafna, sem framdar höfðu verið, og sært hefðu marga að ófyrirsynju. — Og Lúther vann sigur. Söfnuðurinn fylgdi honum einhuga innan skamms tíma. Carlstadt laut í lægra haldi og lét lítið á sér bera í brád.

Lúther var kominn fram í dagsljósið. Þrátt fyrir þingsályktuna í Worms létu valdhafarnir hann óáreittan. Páfavaldinu sveið þetta sárt. Nýr páfi (Hadrian VI) var seztur í stólinn. Hann skoraði á Friðrik kjörfursta að hindra starfsemi Lúthers. Gerði hann það ekki, mátti hann eiga von á, að keisari og páfi jöfnuðu um hann. Á sama tíma sendi páfinn boðskap sinn til ríkisþingsins þýzka (Nürnberg 1522). Kvartaði hann yfir, að Lúther skyldi ekki vera hegnt, og hét á þýzka ríkið, að láta það ekki dragast. En jafnframt játaði páfi það satt vera, að spilling hefði átt sér stað meðal prestanna, ekki sízt við páfahirdina. Kvaðst hann ætla að ráða bót á því. — Hann ætlaði í sannleika að gera það. En hann dó stuttu síðar. — Ríkisþingið sinti ekkert kröfum páfa gegn Lúther. Það sýndi sig, að mótsþyrnan gegn páfavaldinu var orðin talsvert almenn.

Eins atburðar verður að minnast lauslega. Þýzkir bændur höfðu lengi verið óánægðir undir því ánaðaroki, sem aðall og kirkja hafði á þá lagt. Höfðu þeir oft kvartað og hafð uppreistir, þó lítið yrði úr. — Kristilegi frelsisboðskapurinn, sem Lúther flutti, vakti óánægjuna á ný. Stafaði það sumpart af misskilningi á kenningu Lúthers um frelsi kristins manns. Margir munkar fóru úr klaustrunum, til þess að prédika almúganum frelsi og jafnrétti. — Árið 1525 gerðu bændur á Suður-Þýzkalandi uppreist. Kröfðust þeir ýmsra réttarbóta. Kvaðust þeir þó fúsir að slá af kröfunum, ef Lúther og fleiri ákveðnir prestar gætu sannað það með orðum ritningarinnar, að þær væru ókristilegar. — Lúther varð að koma til sög-

unnar. Hann reyndi að miðla málum milli bænda og höfðingja. Bændum féll ekki málamiðlunin. Þótti þeim sér bregðast beztu vonir, þegar Lúther, sjálfur boðberi frelsis-hugsjónanna, fylgdi ekki fram sanngjörnum kröfum þeirra. — Uppreistin hélt áfram og kom til blóðugra bardaga. Lúther hvatti jafnvel höfðingjana til að ganga hart að bændum, fyrst þeir höfðu ekki viljað miðla málum. — Það var heldur ekki sparað. Höfðingjarnir bældu uppreistina niður með grimd. Varð mannfall ógurlegt af liði bænda. Afskipti Lúthers af bændauppreistinni og fleiri hreyfingum, sem urðu um þessar mundir, báru annan árangur, en almenningur bjóst við. Þótti Lúther þá gera tillögur, sem komu í bága við kenningar hans sjálfs. Hann fekk orð fyrir að vera á bandi höfðingjana. Alþýðunni gramdist við hann og sneri baki við honum. Hann misti að miklu leyti vald sitt sem leiðtogi hennar.

En siðbótarhreyfingin leið ekki undir lok. Smám saman var farið að koma nýju skipulagi á kirkjumálin í samræmi við stefnu Lúthers. En kirkjuvaldið, sem samkvæmt henni dróst úr höndum páfans, lenti ekki í höndum safnaðanna, eins og líklegast virtist. Þjóðhöfðingjarnir þýzku gengust fyrir breytingunum og yfirráð kirkjumálanna lentu í höndum þeirra. Lúther hafði að visu hönd í bagga með breytingunum, en ráða Melanchtons mun þó engu síður hafa verið leitað í þeim efnum. Stefnan varð þessi: Þjóðhöfðingjarnir komu skipulagi á kirkjumálin, hver á sínu valdsviði. Þeir voru óefað fúsir til þess, því þeir náðu um leið valdi yfir eignum kirkjunnar. Breytingarnar komust allvíða á næstu missirin.

En svo kom ríkisþingið í Speier 1529. Voru horfur á, að það mundi eyðileggja þetta nýja skipulag. Páfasinnar voru þar í meiri hluta. Samþykta þeir, að biskuparnir á Þýzkalandi skyldu fá aftur vald sitt og tekjur. Með því átti að eyða allri framkvæmd siðbótarinnar. En minni hlutinn í þinginu mælti í móti og neitaði að beygja sig fyrir meiri hlutanum. — Frá þeim tíma hafa þeir, sem sagt hafa skilið við kaþólsku kirkjuna, verið kallaðir mót-

mælendur (»Protestantar«). Mótmælendur bundust nú samtökum um að fá máli sínu framgengt. En sá galli var á, að þeir skiftust í tvo flokka. Annar flokkurinn voru Lútherssinnar, en hinn fylgdi svissneska siðbótarhöfundinum Zwingli, sem lifði og starfaði samtímis Lúther. Þótti þá ráðlegt að fá flokkana sameinaða. Fundur var haldinn í Marburg. Komu báðir foringjarnir þangað, Lúther og Zwingli. Féll vel á með þeim að mörgu leyti, og náðist samkomulag um flest atriðin í trúarkröfum þessara tveggja mótmælendaflokka. En samkomulagið strandaði á mismunandi skilningi þeirra á altarisakramentinu. Batt Lúther sig þar fastar en Zwingli við bókstafinn í innsetningarorðunum. — Á þinginu í Augsburg árið eftir (1530) lögðu mótmælendur fram tvær trúarjátningar. Hafði Melanchton samið þá lúthersku í samráði við Lúther. Fylgismenn hennar voru fleiri en hinnar.

Keisarinn hafði ætlað sér að kúga báðar stefnurnar með hervaldi. En nú var ófriðarblika í suðaustri. Tyrkir voru á leiðinni til Vínarborgar. Þangað varð keisarinn að beina athygli sinni. Aðstoð þjóðhöfðingjanna þýzku var honum ómissandi. Kirkjumálin urðu því að eiga sig. Hver þjóðhöfðingi gat hagað þeim eftir sínu höfði, eins og við hafði gengist að undanförunu.

Siðbótarstefna Lúthers hafði náð mikilli útbreiðslu á Þýzkalandi og höggvið tilfinnanlegt skarð í kirkjuvaldið kaþólska. Árið sem Lúther dó (1546) kom þó til ófriðar milli mótmælenda og kaþólskra. En þó mótmælendur biðu ósigur í þeirri viðureign, varð það að samkomulagi í friðargerðunum 1552 og 1555, að þeir fengju trúfrelsi. Það trúfrelsi var þó ekki rýmra en það, að einstaklingarnir voru bundnir við trú þjóðhöfðingjanna. Hver sá, sem eigi vildi játa trú þjóðhöfðingja síns, varð að fara úr landi hans.

Eg hefi sagt hér aðalatriðin úr sögu hreyfingar þeirrar, sem Lúther vakti á þessum degi fyrir 400 árum. Frásögnin nær til þess tíma, þegar fylgismenn stefnunnar

fengu trúfrelsi — þó takmarkað væri — nokkrum árum eftir dauða Lúthers. Lengra get eg eigi farið. Eg segi hér ekki frá deilum þeim og styrjöldum, sem síðar urðu milli kapólskra og Lútherstrúarmanna. Eg verð einnig að sleppa skýringum á því, hvernig Lútherstrú breiddist út og hver áhrif það hafði, að kirkjuvaldið lenti í höndum þjóðhöfðingjanna í lútherskum löndum. Er það efni þó athugunarvert.

En áður en eg lýk máli mínu, vil eg fara nokkrum orðum um siðbótarhöfundinn Lúther og starf hans, án þess þó að segja söguna upp aftur. Hún er orðin nógu löng.

Eg gat þess áður, að Lúther hefði verið látinn heita eftir Marteini biskupi frá Tours. Biskup þessi dó árið 400 og var grafinn 11. nóv. Sagt er, að 2000 munkar hafi fylgt honum til grafar. Marteinn biskup var nafnkendur fyrir siðavant líferni, ákafa í að verja hreina trú og örlæti við fátæka. — Er það einkennilegt, að drengurinn, sem hlaut nafn hans nær 11 öldum síðar, sýndi sömu eiginleikana í lífi sínu.

Lúther ólst upp við strangan aga í heimahúsum og í skólanum. Að því búnu tók við strangur klausturagi. Lagði Lúther kapp á að fylgja siðareglum klaustursins. Því gat hann sagt, að hann hefði óefað verðskuldað himnaríki fyrir klausturlífnað sinn, ef nokkur munkur hefði getað það. En verkhelgin fullnægði ekki trúarþörf hans. Sál hans fann að lokum frið í trúnni á miskunn guðs. Hann sá, að kirkjan lagði mesta áherzluna á verkhelgina og ytri siðina. Fylgdi því syndsamlegt líferni á ýmsa vegu. Gegn þessu reis hann. Hann boðaði trú: traust á guði og hinu góða í lífinu. Hann boðaði frelsi: frelsi frá valdi syndarinnar, lögmálsins og kirkjunnar. Og hann boðaði kærleika: kærleika til guðs og manna. Í trúnni nálgast maðurinn guð og breytir samkvæmt hans vilja — verður góður maður og andlega frjáls — og af kærleikanum til guðs kemur að sjálfsgöðu elskan til meðbræðranna.

Fyrir þessum hugsjónum bardist hann. Og hann bardist eins og hetja. Hann fann sinn eigin lífskraft fólginna í sínu andlega lífi, sem hann hafði öðlast í sálarstríði sínu. Þetta andlega líf vildi hann varðveita og gera aðra menn bluttakandi í því. Hann var samvizku sinni trúr og þeim sannleika, sem ríkti í sálu hans. Líkamlega lífið hikaði hann eigi við að leggja í hættu. Þetta sýndi hann glöggvast í förinni til Worms og heimferðinni frá Wartborg til Wittenberg. Hann neitaði því hvað eftir annað, að hann eða málsstaður hans væri varinn með vopnahaldi. Orðið var það vopn, sem hann treysti á. Og því vopni beitti hann betur en nokkur annar. Í varnarritum sínum beitti hann því vopni eins og hetja. Hann var sjálfur andlega frjáls og beitti því frelsi ótæpt í ritum sínum. Hann bardist fyrir bjargfastri sannfæringu sinni. Og hann hlífði eigi neinu, sem hann réðst á. Orð hans voru bitur og hittu markið. Hann játaði það sjálfur í Worms, að hann hefði stundum verið alt of frekyrtur í garð einstakra manna; en hann afsakar ekki frekyrði sín um spillingu páfadómsins. Hann var skapmaður, sem bardist í vígahug. Og vígið, sem henn réðst á, var svo öflugt, að hann varð að beita því afli, sem guð hafði gefið honum. Og hann skoðaði sig sem hermann guðs, sem ekki mætti draga af sér.

Í kennarastólnum og prédikunarstólnum dró hann heldur eigi af sér. En þar var bardagaaðferð hans önnur. Þar leitaðist hann við að sannfæra áheyrendurna með snjöllum en hógværum orðum. Hann prédikaði þannig, að allir skildu. Og hann hreif þá, sem á hann hlýddu. »Hver sá, sem einu sinni hefir hlýtt á hann, hlyti að vera úr steini, ef hann vildi ekki hlýða á hann aftur og aftur«, sagði einn áheyrandinn um hann.

Hann var leiðtogi fólksins í andlegum efnum. Það leitaði ráða hjá honum og fekk þau. Hann miðlaði fátækum af litlum efnum. Fékk líka oft stuðning til þess hjá þeim, sem meira gátu, eins og t. d. Friðrik kjörfursti.

Grundvöllur trúar hans og lífarnis var guðs orð í

ritningunni. Það skýrði hann þannig, að öllum fanst mikið um. Á því einu átti kirkjan að byggja, eins og á fyrstu tímum kristninnar. En nú bygði hún á mörgu öðru, sem mennirnir höfðu búið til. Móti því barðist hann í ræðum og ritum. Hann var á móti dýrkun helgra manna og mynda, einlifi klerka, klaustralífi, messufórnun o. fl. kaþólskum venjum. — En ytra formið var ekki aðalatriðið. Það gat verið meinlaust, ef það var skoðað á réttan hátt. Þess vegna er hann á móti skyndilegum breytingum í þeim efnum. Hið innra kristilega líf leggur hann mestu áherzluna á. Það verður að koma fyrst.

Af þessum sökum prédikar hann móti breytingum kirkjusiðanna í Wittenberg. — Þær voru enn ekki geðfeldar öllum. — Af sömu ástæðum dregur hann sjálfur lengi að afklæðast munkakúflinum og að gifta sig. Hvortveggja gerði hann þó. Hann giftist 1525 Katrínu frá Bóra. Hún hafði áður verið nunna — ein af níu nunnunum, sem Lúther hafði aðstoðað með ráðum sínum til að flýja úr klaustri gegn vilja aðstandenda þeirra.

Þegar Lúther hafði loks ráðið það við sig að giftast, bað hann Katrínar, og giftist henni síðar sama daginn. Fregnin um giftingu Lúthers kom flatt upp á alla. Menn áttu erfitt með að trúa henni. — Hjúskapur og heimilislíf Lúthers var hið ánægjulegasta. Ríkti þar bæði guðrækni og glaðværð í senn. Vinir hans voru daglegir gestir hjá honum. Bar þá margt á góma. Var Lúther oft gamansamur í orðum. — »Eg er ánægður«, sagði hann eitt sinn, »eg á þrjú hjónabandsbörn, en það á engin kaþólskur guðfræðingur, og þessi þrjú börn eru þrjú konungsríki; er erfðaréttur minn til þeirra vissari en réttur Ferdinands til Ungverjalands, Bæheims og rómverska konungsríkisins«. »Kata«, sagði hann við konu sína, »þú átt mann, sem elskar þig; þú ert keisarafrú«. Hann sagðist heldur ekki vilja láta hana, þó hann fengi Frakkland eða Feneyjar í staðinn.

Lúther var söngmaður og skáld. Hann lék á hljóðfæri. Fáein sálmalög, sem notuð eru í íslenskum kirkju-

söng, er haldið að séu eftir hann. Eru þau öll falleg. — Af kveðskap hans könnnumst vér bezt við sálminn „Vor guð er borg á hjargi traust“. Lýsir sá sálmur trúaralvöru hans. Fyrstu ljóðin, sem kunn eru eftir hann, voru um tvo unga munkka, sem brendir voru í Brüssel 1523. Kenning Lúthers hafði náð fótfestu í klaustrinu, sem þeir voru í. Kapólskir fengu munkana til að sverja fyrir lúthersk áhrif. En þessir tveir fengust eigi til þess. Þeir voru því brendir á báli, gengu glaðir í dauðann og sungu sálma, meðan logarnir léku um þá. — Þetta átti við Lúther.

Eg sagði áður, að Lúther hefði verið leiðtogi fólksins í andlegum efnum. Það var hann með kenslu sinni, prédikun sinni, biblíupýðingu sinni, ritum sínum og skáldskap.

Með öllu þessu vakti Lúther andlegt líf hjá þjóð sinni. Bárust straumarnir þaðan til Norðurlanda og Íslands og víðar um álfuna. — Talið er líka að rit hans, einkum biblíupýðingin, hafi hafið ritmál þjóðverja til vegs og virðingar. Lúther studdi auk þess almenna skólamentun. Hann hvatti yfirvöldin til að stofna kristlega mentaskóla fyrir æskulýðinn. Ritaði hann sjálfur kenslubækur í kristnum fræðum.

Samt sneri alþýðan þýzka baki við honum. Lúther var ekki alt gefið. Hann vantaði hyggindin, sem í hag koma, þegar kom til þess að framkvæma hugsjónir hans í lífinu. Þá voru honum stundum mislagðar hendur. Erfiðleikarnir í þeim efnum urðu honum ofurefli, svo hann neyddist jafnvel til að verða ósamkvæmur sjálfum sér í sumum atriðum. Hann missir leiðtogatignina að miklu leyti, þegar til hins ytra skipulags kemur. Ef til vill lenti lútherska kirkjan þess vegna í höndum þjóðhöfðingjanna. Skilst mér það hafi orðið ytra gangi hennar til gagns, en innra lífinu, sem Lúther mat mest, til tjóns.

En þó Lúther væri ekki gallalaus, var hann samt mikilmenni, sannkallaður spámaður síns tíma. Kirkjan og kristna menningin eiga honum mikið að þakka. —

Hann gerði sitt til að reka »kreddurnar út, en kærleikann inn« og losa »kirkjuna úr dauðans blekkjum«. Hann sýndi það í Wittenberg, að

»þá streymir fólkið þar aftur inn,
sem úti var neytt að standa,
og huga laugar og likam sinn
í ljósbaði heilags anda«. (G. G.).

Og hvenær sem kirkjan starfar í sannleika í anda Lúthers — hvað sem bókstafnum líður, — þá er hún það, sem hún á að vera: »leiðtogi þjóðarinnar og siðgæðis aflgjafi hennar«.

Gunnar á Hlíðarenda.

III.

Frh.

Það sést af því, er sagt er að framan, að vér vitum átt með vísunum sannindum um Gunnar á Hlíðarenda.

En vitum vér þá nokkuð áreiðanlegt um hann?

Ekki þarf að efa, að hann hafi verið kappi mikill, átt í vígaferlum og fallið eftir mjög hreystilega vörn á Hlíðarenda. Þetta má sjá af Landnámu og ekki ástæða til að rengja.¹⁾

En munnmæli og sögulist hafa gert úr honum annan mann, en hann var.

En hvernig umsköpuðu sögusagnir og Njála hann? Í Hvaða átt stefndi starfsemi þeirra?

Mér virðist svarið auðfundið: Þau hafa stækkað hann og siðfágað (»idealiseret«).

Eg ætla nú að rökstyðja þetta að nokkru.

Eg tel fyrst almenn rök. Það má víst næstum því lög kalla, að afrek og hreystiverk vaxi í frásögnum og lýsingum af þeim, ekki sízt er frá liður. Um það færir dagleg reynsla heim sanninn. Fornkappasögur sýna þetta lögmál. En aðdæun á söguhetjum og stórvirkjum þeirra veldur því, að vér tökum ekki eftir þverbrestum á skaplyndi þeirra, og að mönnum sést yfir ódrengskap og ójöfnuð, er þeir gerðust sekir um með þrekvirkjum sínum. Þetta hefir Grímur Thomsen í huga, þá er hann yrkir:

¹⁾ Gunnar er nefndur í Hænsa-Þóris- og Gunnlaugssögu Ormstungu, og getið þar sem bogmanns mikils og vel vígs manns.

„Hetjunum láta' af hendi rakna
hrós fyrir það, sem öðrum banna.
Undir liðið afrek hillir.
Oft það mönnum sjónir villir.“

Svipað sést nú á dögum, er góðviljaðir öðlingar njóta vel ritaðra skammagreina og fyndinna meinyrða, en gæta þess ekki, að þmeð þeim eru unnin illvirki, er myndu hneyksla þá frá hvirfli til ilja, ef þeir kæmu auga á þau. —

Það er og talið auðkenni sannra skálda, að þau dragi taum þeirra, er ósigur biða, auðsýni þeim samúð í sögum og óði.¹⁾ Norski rithöfundurinn, Chr. Collin, sýnir fram á það í ritgerð, sem hann kallar »*Gloria victis*» (þ: dýrð sé sigruðum²⁾), að það auðkenni skáldlist Norðurlálfu frá elztu tímum, að þar sé tekið málstað sigraðra og fallinna, skáldin vegsami þá, er biði lægra hlut. Stórskáld allra tíma hafi sungið sigruðum dýrðaróð. Orkuforði frumleiksmanna sjáist alfagurlegast á hæfileika þeirra til skilnings á kjörum annarra manna og hluttekningar í hörmum þeirra og þjáningum. Þetta einkenni skálda og frumhugsandi manna kemur í ljós í útlagasögum vorum þremur, Harðarsögu, Grettissögu og Gísla sögu Súrssonar. Í Gíslasögu getur t. d. fáum dulist samúðin með höfuðhetju sögunnar sekri, en aftur andar þar kaldan í garð óvina hans, Barkar digra og Eyjólfs gráa. Höf. kennir til sakir Gísla, útlegðar hans og rauna, skilur kjör hans og lýsir með list óró hans, einstæðingsskap, þrá eftir samvistum við konu sína, gremju, er hann snýr bónleiður úr bróðurgarði, lífhræðslu hans, myrkfælni og svefnleysi, er slík æfi hlaut að hafa í för með sér, og hann leitast við að sýna sem skýrast atgervi og mannkosti skógarmannsins. Eg mun í annnærri ritgerð minnst á, hve höf. Njálu ann Skarphéðni, þá er hann hefir lent í óhamingju og ódæmaverkum. Eg held, að Gunnar á Hlíðarenda megi

¹⁾ R. Lehmann, Deutsche Peetik, bls. 147—148.

²⁾ Í bókinni Det geniale Menneske. Kristiania 1914.

meðfram þakka vinsæld sína og vegsemd margra alda þessum eiginleika skáldanna, samúð þeirra með þeim, er halloka fara og falla.

Það þarf naumast að tilgreina dæmi þess, hve mjög höf. er brifinn af Gunnari. Það er ekki ofsagt um aðdáun hans á honum, að hún sé »hetjudýrkun« í bókstaflegri merkingu. Honum dugir ekki minna en yfirstigtungunnar, þá er hann kynnir hann fyrst lesendum sínum: »Hann var mikill maðr vexti og sterkr, manna bezt vígr« — — — »Hann skaut manna bezt af boga ok hæfði alt þat, er hann skaut til« — — — »Ok eigi var sá leikr at nokkurr þyrfti við hann að keppa, ok hefir svá verit sagt, at engi væri hans jafningi«. — — »Manna kurteisastur var hann« (Nj. c. 19). Fylgja hans er »bjarn-dýri mikit« og »eigi fanst þessa dýrs maki« (Nj. c. 23). Og mikil dássemi felst í orðum Höskulds, er hann svarar Hrúti, þá er hann segir frá komu Kaupa-Héðins til sín: »Breiðari mun um bakit« (c. 23). Og ant er höfundur um sæmd hans eins og veg sjálfs sín og virðing. Hann þreystist aldrei á að geta góðs álits á honum, bæði utan lands og innan. Sjálfur Hákon Hlaðajarl býður honum kvonfang og mikið ríki. Og það skilst á honum, að hann vill gefa honum frændkonu sína, er Bergljót er nefnd og Gunnar »lagði hug á«. Þessarar frænku jarls er ekki getið annars staðar. En hann átti dóttur, er hét Bergljót, sem gefin var Einari Þambarskelfi og var hin mesta merkiskona og kvenskörungur. Og jarl segir við Gunnar, að óviða muni fást hans jafningi (c. 31). Og næstum alt snýst honum til sæmdar, að því er sagan segir berum orðum, meira að segja mál, er lauk svo, að hann varð að bæta víg sín fé, svo að frændur og vinir urðu að hlaupa undir bagga með honum. En hetjudýrkunin kemur þó skýrast í ljós í orðum Gizurar hvíta eftir fall Gunnars: »Mikinn öldung höfum vér nú at velli lagit, ok hefir oss erfitt veitt, ok mun hans vörn uppi, meðan landit er bygt«. (Nj. c. 77).

Margir hafa vist veitt því eftirtekt, að vér reynum.

að draga fjöður yfir það, er verða má til ósæmdar þeim, er oss þykir einlæglega vænt um og vér tignum, en hættir til að auka og ýkja sögur goði voru til dýrðar, eins og vér höfum hins vegar tilhneiging til að þegja um kosti þeirra, er oss er í nöp við, og veitir erfitt að sjá þá, en er gjarnt til að halda á loft því, er horfir til hnekkis veg þeirra og mannorði. Og hver ástæða er til að ætla, að höfundur Njálu hafi ekki breytt eftir þessu eðli vor breyskra manna, er ást hans og eftirlæti, Gunnar á Hlíðarenda, átti í hlut? Vegur hans hefir hlotið að vaxa undir tungurótum slíks vinar. Hreystiverk hans í viking og vígaferlum heima hafa t. d. vafalaust vaxið í meðferð Njálu, sem síðar verður á drepíð. En söguhöf. og munnmæli hafa vísast gert meira fyrir orðstír Gunnars en stækka stórvirki hans. Það er viðbúið, að ýmislegt hafi verið felt úr, er honum var til vansæmdar, og sitthvað smíðað, er fegraði víg hans, er varð ekki yfir hylmt. En það er lítt kleift að tína úr einstök atriði og sýna fram á, að þau séu þannig til orðin. Þó gerist eg svo djarfur að benda á eitt atriði, er eg held, að sé hugsmið seinni tíma, hvort sem það er komið frá söguhöf., eða það hefir verið búið til á leið munnmælanna ofan eftir tímunum. En það skal skýrt tekið fram, að hugboð mitt um þetta efni get ég ekki rökstutt á annan hátt en með nokkurum líkum. En eg tel þó ekki tilgangslaust að minnast á slíkt, því að slíkt getur vakið menn til umhugsunar. Eg á hér við orð Gunnars eftir víg Skammkels og Otkels: »Hvat eg veit, hvárt ek mun því óvaskari maðr en aðrir menn, sem mér þykkir meira fyrir en öðrum mönnum at vega menn« (c. 54).

Hugsunin er, að Gunnari sé ekki meira fyrir en öðrum að vega menn af því, að hann sé öðrum óvaskari. Eg ræð það og af öllum blæ og anda Njálu, að siðferðis-tilfinningar Gunnars — en ekki aðrar kendir — geri honum erfitt að vega menn.

Spyrja má nú: Hvort er líkleggra, að þessi ummæli komi frá skáldi og hugsjónamanni í lok 13. aldar, er

kristin trú hafði verið lögtekin hér fyrir nærfelt þremur öldum, eða frá viking og vígamanni á 10. öld? Um líkleika veltur ekki vafi á svari. Og þau stinga mjög í stúf við anda skálda-kvæða frá 10. öld. Fornskáldin eru gunnreif, víghróðug að marki og virðist öðru nær en þeim þyki fyrir að vega menn. Egill Skallagrímsson hafði víða farið um lönd, dvalið meðal kristinna mentaþjóða og var, að sögn Eglu, primsigndur. Ætla má um höfund Sonatorreks, að hann hafi haft útsýni af hæsta menningar- og skilningstindi sinnar aldar. En engi hælíst meiræ um víg og viking en hann. »Farit hefk blóðgum brandi«, yrkir hann ungur — — »Gerðum reiðir róstur, — rann eldr af sjöt manna, létum blóðga búka — í borghliði sæfask«¹⁾. Og það liggur vel á honum í vísu, þar sem hann hælíst um að hafa roðið sverð í blóði sonar Eiríks blóðöxar. Og á efri árum (c. 965 að ætlun Finns Jónssonar) kveður hann við sömu raust: »Börðumk einn við átta, — en við ellifu tysvar, — svá fingum val vargi, — varðk einn bani þeirra — skiptumk hart af heiptum — hlífar skelfiknífum« (3: sverðum). Víga-Glúmi þykir á gamals aldri orðið ilt á jörðu, er hann má eigi, fyrir aldurs sakir, hefna í orrustu: »Ilt's á jörð of orðit — — — es óvægens eigi — eyrarleggs á seggjum — Gríms í göndlar flaumi — Gefnar mák of hefna«. — Fer honum gagnstætt Gunnari, er þykja ill hefndarvíg fyrir svívirðing, er honum var ger. Kristilegrar iðrunar verður fyrst vart í forníslenskum skáldskap í erindi eftir Hallfreð vand-ræðaskáld (»Ek munda nú andask — ungr vask harðr í tungu — senn, ef sálu minni, — sorglaust, vissak borgit«). Hallfreður var vígamaður, en hann iðrast ekki víga sinna á deyjanda degi, heldur orða (Saga hans segir, að hann hafi verið niðskár á unga aldri). »Það auðkennir þessa þróttmiklu tíð, er smánar- og heiftaryrði særðu sárara en vopn, að það er orða-, en ekki gerðasynd,

¹⁾ Hér er vitnað í skáldakvæðin eins og þau eru höfð í þinni merkilegu útgáfu Finns Jónssonar, Den norsk-islandske Skjaldedigtning I. B.

sem veldur fyrstu iðrun með kristilegum blæ, er finst í skáldskapnum¹⁾ (þ: skáldakvæðunum gömlu), segir norskur rithöfundur í góðri bók um kristna trú og fornnorrænan kveðskap. Líklegt getur það því ekki talist, að Gunnari á Hlíðarenda, víking og kappi í heiðnum sið, er hvað eftir annað ógnar andstæðingum sínum með áskorun um hólmgöngu, hafi þótt mikið fyrir að vega menn, ekki sízt fyrir fátýrði og skapraunarorð um sjálfan hann. Því má og ekki gleyma, að öldin var ekki hneigð til nýbreytni, allra sízt í hugsun, og að Gunnar var maður ekki frumlegur og því ekki líklegur til slíks. Persónu-skapnaði heiðinna forfeðra vorra var og öðruvísí háttað en tíðkast nú. Íhygli klauf þá ekki í herðar niður, sem ýmsa vel gefna nútíðarmenn.

Einhver kann að minna á vísu, er Gísli Súrssyni á að hafa þótt önnur draumkona sín kveða við sig, þar sem hún varar hann við vígum: »Vald eigi þú vígi — vespú ótyrrinn fyrri — morðs við mæti-Njörðu — (mér heitið því) sleitinn«. En á þessu er kristilegur blær,²⁾ enda segir saga Gísla, að hann hafi látið af blótum, síðan hann dvaldi í Vébjörgum, og honum virtist draumkonan líka biðja sig að »láta leiðast fornan sið« (Gíslas. í Altn. Sag. — Bibl. c. 21).

Mér þykir því langlíklegast, að þessi orð Gunnars séu skáldsmíð. Övenju-mikil tilfinning logar í þeim, eftir því sem tíðkast í fornsögum vorum. Og það er auðséð, hvað þau eiga að sýna. Gunnar á æ í vígaferlum. Það

¹⁾ Fredrik Paasche, Kristendom og Kvad, bls. 22. Í heiðni ríkti yfirleitt meira samræmi milli vilja og verka en í kristnum sið. Menn gerðu þá ekki eins mjög og nú annað en það, sem þeir vildu, eða vildu annað en þeir gerðu. Þetta sést á sambandi þeirra við guði sína. „Sambandið milli goða og manna var, sem áður er sagt, ekki það auðmýktar- og syndatilfinningar-samband frá manna hálfu sem í kristinni trú; syndarhugmyndin var yfir höfuð ekki til. Hún gat því ekki gert menn að andlegum vesalingum eða dregið úr mönnum dád og kjark“. Finnur Jónsson, Goðafræði Rv. 1913, bls. 141.

²⁾ „Han (þ: Gísli) synes at gendigte kristelig Sedelære“. Paasche, Kristendom og Kvad, bls. 16.

er lífsmæða hans, að hann er neyddur til þeirra, sökum öfundar manna, er löngum hefir fylgt hetjunum sem skuggi þeirra. Þessi óhamingja afreksmannsins var og ágætlega fallin til að afla honum samúðar. Því tekur sagan það fram oftár en einu sinni, að hann sé »mjök at þreyttr«, »mjök til neyddr« o. s. frv. Og því er slík hetja, sem hann á að vera, stundum undarlega seinn til aðgerða. En það sómdi illa kappa, að slíkt kæmi til af skorti á hugprýði, og það er ekki heldur líklegt, að Gunnar hafi brostið hreysti eða karlmensku.

Aftur er hitt sennilegt, að vopnfimur hreystimanni á öld ófriðar og víga verði lausar hendur til vopnaviðskifta. Mönnum er innrætt þörf á að neyta hæfileika sinna og íþróttar. Raddmaður vill syngja, rithöfundur semja, hæfur hershöfðingi vafalaust reyna herkænsku sína og hetjudug í stríði. Hetjur eru afreksgjarnar. »Afrek — afrek er það, sem hetja lifir fyrir«, segir V. Vedel (Helteliv, bls. 176). Vopn kappanna freista þeirra hættulega. Þau eru í senn meinvættir þeirra og verndarandar. Mikill vísdómur felst í frásögninni af Tyrfini, er verða skyldi mannsbani í hvert skifti, sem honum var brugðið og unnin skyldu með niðingsverk. Auðvitað má með réttu minna á undantekningar alls. Eg leiði líka af fleirum rökum en almennum þá skoðun mína eða trú, að sagan hafi lagt huliðsslæðu yfir sitthvað, er miður var í fari. Gunnars, að hún hafi lagað dýrling sinn, heiðinn vígamann, eftir kristilegum siðferðishugsjónum. Hann verður nauðugur sökum sæmdar sinnar að breyta eftir heiðnum siðlögum, eins og Flosi við Njálsbrennu, er í siðlegum efnum blendingur heiðingja og kristins manns. Og það stafar, ef til vill, með fram af þessari stefnu sögunnar, að þeirri hetju vorri, er mest lýðhylli hefir hlotnast, er að mestu vant tveggja eiginleika, er dýrstir einkenna kappa allra þjóða og alda, afreksfýsnar og æfintýralöngunar.

Fróðlegt er að athuga kyn Gunnars. Vigamenn voru í ætt hans. Systurson hans var Hámundur halti, hinn

»mesti vígamaðr«, segir Landnáma¹⁾. Snjall-Steinn afa-bróðir hans í föðurætt hjó Sigmund móðurföður hans bana-högg við Sandhólaferju. Um það víg urðu hann og Gunnar Baugsson, föðurfaðir Gunnars á Hlíðarenda, og bróðir þeirra sekir úr Fljótshlíð. Hófst vígið Sigmundar af því, að hann og Snjall-Steinn vildu báðir fara fyrr yfir Þjórsá (Ldn. bls. 107—108, 219). Bendir þetta á, að þeir frændur hafi ekki þurft mikla átyllu til víga. Gunnar Baugsson hefndi síðar Snjall-Steins bróður síns og lézt af sárum á leið frá því vígi. Þá feðga, Hámund, föður Gunnars á Hlíðarenda, og Gunnar Baugsson, föður Hámundar, kallar Sturlubók »afreksmenn at afli ok vænleik« (Ldn. 219). Þessar sagnir Landnámu sanna vitaskuld ekkert, því að Gunnar gat verið ólíkur forfeðrum sínum og frændum. En þær styrkja bæði lýsingar Njálu á líkamsatgervi Gunnars og þá skoðun, að hann hafi verið sekari en sagan vill telja oss trú um.

En saga Gunnars styður mál mitt, ef hún er lesin með gerhygli. Þá er hún kynnir hann fyrst (c. 19), lýsir hún honum alment, sem sögum vorum er titt. En hún segir ekki á honum kosti og löstu, heldur eingöngu kosti, hleður hann lofsyrðum einum. En þar er sagan honum vilhöll. Þá er vér kynnumst honum gerla, sjást brátt brestir á skapi hans, bæði á atferli hans og ummælum sögumanna um hann. Þá er hann á í deilum, hættir honum til þess, er hinum sterkari er til gjarnt, bæði í fornöld og nútíð, að beita máttarminni ofbeldi, leita ekki réttar, heldur neyta afismunar. Hann skýtur málum til sverðs síns og arma, þó að hann geti, meira að segja, borgið sök sinni á löglegan hátt, t. d. er hann skorar Hrút á hólmi (c. 24) og áður er á minst. Þetta bragð Gunnars lætur sagan Höskuld kalla ójöfnuð og gerir afleiðingar þess ósmáar, sem fyr er sýnt. En eftir því sem Njála segir frá, skýtur því undarlega við, er höf. telur þetta slíkan ójöfnuð sem hann gerir. Víst hefir Gunnar

¹⁾ Landnámabók I.—III., Kbh. 1900, bls. 91, 206.

beitt ofríki að dómi samtíðar sinnar, er hann skaut máli sínu til hnefaréttar.¹⁾ En það virðist honum til afsökunar, að Hrútur hafði beitt sama bragði við Mörð gígju, enda er hann látinn segja: »Ek skal gera Hrúti slíkan, sem hann gerði Merði, frænda mínum« (c. 24). Áskorun Gunnars virðist því ekki koma öldungis ómaklega niður. En vera má, að vér þekkjum ekki nógu vel gögn málsins eða hugsunarhátt forfedra vorra til skilnings á þessu atriði. En til skýringar á því kemur mér í hug, að höf. hafi látið Höskuld dæma atferli Gunnars eftir öðrum sögunum en hann hirti eða gáði að skrásetja, að Gunnar hafi, með öðrum orðum, unnið meira ofbeldisverk en sést af sögu Njála af aðförum hans við Hrút. Dómur sögunnar virðist eiga við enn stærra afbrot en ráðið verður í af forsendum hans. En Gunnar er oftár búinn til að skora á hólmi. Þann kost ætlar hann Gizuri hvíta í þjófnaðarmálinu, að ráðum Njáls og Hrúts, og þess ekki getið, að honum hafi verið slíkt ógeðfellt. »Munt þú þá skora mér á hólmi, sem þú ert vanr, ok þola eigi lög?« segir Geir goði við hann (c. 56). Í sögum, er segja frá á líka lund sem Njála, verðum vér að nokkru að leita skoðana höfundanna á skapgöllum sögukappa þeirra í ummælum óvina þeirra um þá. Hér virðist því sagan undir niðri finna til ljóðs á ráði goðsins góða. Hildigunnur Starkaðardóttir læknir hælir Gunnari á hvert reipi, er ástfangin í hetjunni Hún kveður hann seinþreyttan til vandræða, »enn harðdrægr, ef hann má eigi undan komast«, bætir hún við, treystist ekki að öllu að neita ofbeldislund hans. Enn slettir Gunnar sér fram í mál, er Ásgrímur Elliðagrímsson sótti á hendur Úlfi Uggasyni, og skorar Úlfi á hólmi, og er þar alls ekki »seinþreyttir til vandræða né tilneyddir«, og virðist þar ekki þykja mikið fyrir að lenda í vígum.

¹⁾ »Udfordringen var her en hensynsløs og vilkaarlig Handling«, segir jafngættinn maður og sannfróður um fornislenskt réttarástand og Vilhj. Finsen (Om den opr. Ordning af nogle af den islandske Fristats Institutioner. Kbh. 1888, bla. 122).

Var þessi áskorun skýlaus ójöfnuður, þótt hann gerði það sökum vina sinna, þeirra Bergþórshvolsfeðga, Njáls og Helga. Verður síðar dregið nánar á þetta atriði.

Ofbeldislund hans kemur þó, ef til vill, skýrast í ljós, er hann rýfur sætt við merka menn og fer ekki utan. Þá verður Gunnari það á, er hetjur má eigi henda og gagnstætt er eðli þeirra. Orðheldni er eitt auðkenni kappa, bæði í austur- og vesturlöndum.¹⁾ Ein sögupersónan er líka látin hafa sterk orð um þessi svik hans, og sú ekki óvinveitt honum, Kolskeggur, bróðir hans, er ann honum sem bróðir fær bróður unt. »Hvártki skal ek á þessu níðaz ok á engu öðru, því er mér er til trúat«, segir hann (c. 75). Annars er meðferð höf. á þessu efni næsta fróðleg. Þess má sýna óræk rök, að höf. hefir þekt sögu af Gunnari, sem felst í önnur skýring á sköpum og gerðum hetjunnar en hann lætur mest á bera, en riður ekki beint í bága við höfuðskýring hans. Þar sést greinilega, að hann er Gunnari hliðhollur, sem ákafa-flokksmaður foringja sínum, og reynir því að fegra ófegrandi sáttrof.

Flestir Íslendingar kunna víst söguna af því, er Gunnar sneri aftur. Hestur hans drap fæti. Hann stökk af baki, varð litið upp til hliðarinnar og mælti þessi alkunnu orð: »Fögr er hliðin, svá at mér hefir hún aldri jafnfögr sýnzt, bleikir akrar, en slegin tún, ok mun ek riða heim aptr ok fara hvergi« (c. 75).

Satt er það, að akra hefir mátt lita í Fljótshlíð umhverfis Hlíðarenda í fornöld. Örnefni bera þar merki akuryrkju.²⁾ Að þessu leyti verður ekkert athugað við söguna. Slíkt skiftir og ekki máli hér, heldur hitt, hvort ást Gunnars á fegurð Fljótshlíðar hafi verið aðalástæða þess, að hann sneri aftur, sem skilja verður af sögunni.

Því veitir mér erfitt að trúa. Mestu elskendur íslenzkrar náttúru, Bjarni Thórarensen og Þorsteinn Erlings-

¹⁾ Vedel, Helteliv, bls. 187—189.

²⁾ Björn M. Ólsen, Búnaðarrit 1910, bls. 104, Árb. Fornleifafélagsins 1888—92, bls. 41.

son, hafa fæðst upp í Fljótshlíð, annar á Hlíðarenda og hinn í Hlíðarendakoti, næsta bæ við Hlíðarenda. Og kvæði þeirra sýna, að þeir hafa aldrei gleymt Hlíðinni. En þeir gátu þó báðir slitið sig úr faðmi hennar og alið aldur sinn fjarri æskuslóðum. Og undarlegt er það, ef Gunnar hefir unnað Fljótshlíð þeim mun meira en þeir, mentuð skáld á 19. og 20. öld, að hann af ást á áttögum sínum og hrifning af fegurð þeirra hafi ekki getað yfirgefið þá um hrið, ekki sízt ef sagan fer rétt með, að við honum hafi blasað sæmd af utanförinni, sem forn-mönnum þótti næsta ljúf á bragð. Þótt það sé satt — sem óvist er —, að hestur hafi hnotið með Gunnar, og hann snúið aftur eftir það, hlýtur aðalástæða þess að hafa verið önnur en ætla má af sögunni. Og það vill svo vel til, að þetta sést — eins og óvart, mun sumum sýnast — á henni í haugvísu Gunnars:

„Mælti dögla deilir,
dádum rakkr, sás háði
bjartr með beztu hjarta
benrögn, faðir Högna —,
heldr kvaðsk hjálmi faldinn
hjörpilju sjá vilja
vættidraugr en vægja
valfreyju stafr, deyja
valfreyju stafr, deyja.“

Tildrög þessarar vísu gerir sagan þau, að Gunnar hafi kveðið hana í haugi sínum til að eggja Skarphéðin og Högna hefnda á banamönnum sínum. Enginn mentaður nútíðarmaður trúir því, að Gunnar hafi kveðið hana dauður. Öll frásögnin er umvafin þjóðtrú og skáldskap. Af öllu þessu taka menn síður eftir — og hafa ekki heldur veitt eftirtekt — efninu eða því, sem hún segir um ástæðurnar til falls Gunnars. En það sést ómótmælanlega, að höf. vísunnar hefir heyrt það haft eftir Gunnari (»mælti dögla deilir — — faðir Högna« — — »heldr kvaðsk sjá (þ: þessi) hjörpilju vættidraugr«), að hann vildi heldur biða bana en láta undan, heldur »deyja« en »vægja«. Og sú sögn er sennileg. Slikt kapp kemur

ágætlega heim við það, sem vér vitum um fornnorræna víkingslund og hetjuskap yfirleitt. Ekkert var og eðlilegra, en að Gunnar ofmetnaðist af sigrum sínum, fylltist ofurhuga, sem hetjum er títt og einatt hefir orðið þeim að falli. Það eykur trúanleik vísunnar, að hún er í öllum handritum Njálu, þar sem aðrar vísur í fyrri hluta sögunnar eru að eins í sumum þeirra. Hún segir oss aðalástæðu þess, að Gunnar hélt ekki sætt sína. Og höf. virðist hafa skilið efni hennar, sem vænta mátti um slíkan mannþekkjara, því að hann lætur Skarphéðin segja: »Mikit er um fyrirburði slíka, er hann sjálfr vítraði okkr, at hann vildi heldr deyja en vægja fyrir óvinum sínum«. En hér sést viðleitni sögunnar að fegra og siðlága hetju sína. Það var ólíku veglegra, sorglegra og skáldlegra að baka sér sekt og líflát af lást á sveit sinni og fegurð hennar heldur en af ofurkappi og vísvitandi mótpróa við landslög. Því lætur höf. bera mest á þeirri ástæðu, ef hann hefir ekki algerlega búið hana til. En hann þegir þó ekki um aðalástæðuna, ef til vill af raunsæi skáldauga síns. Hugsanlegt er og, að höf. hafi skreytt Gunnar hér og víða enn meira af því, að hann hefir fundið, að sagan yrði vinsælli fyrir vikið. Gunnar hefir vafalaust verið eftirlætisgoð samtíðar höfundar Njálu, enda virðist mega marka þetta af því, hvernig Eyrbyggja getur varnar hans hinztu, er tilgreint er í öðrum kafla ritsmiðar þessarar. Og í Hænsa-Póris sögu (c. 17) og Gunnlaugssögu orms tungu (c. 1) má sjá, að bjartur minningaljómi hefir leikið um nafn hans á 13. öld.

Fleiri en eg ætla þetta atriði Njálu skáldskap. Sira Friðrik Bergmann trúir ekki sögunni, kveður hana skáldskap.¹⁾ Einn hinn merkasti rithöfundur Norðmanna, Hans E. Kinck, sem er í senn stórgáfað skáld og maður lærður vel, hefir nýverið ritað grein um Íslendingasögur, þar sem hann minnist á þessi orð Gunnars.²⁾ Hann kveður svo að

¹⁾ Vafurlogar bls. 61.

²⁾ »Et par ting om ættesagaen. Skikkelser, den ikke forstod«, i ritinu Til Gerhard Gran 9. des. 1916, bls. 51.

orði, að sagan gæði hann náttúruþilfinningu (»skjænker ham naturfölelse«) Hann virðist því ekki eigna þau Gunnari. Kinck finst fremur fátt um þau, þykir hér samsetning líta, tvennskonar bleikja, ekki tilvalinnar tegundar. En íslenzkum bónda, sem hvert ár átti í höggi við launskæðar frostnætur, hafi þótt slíkt hrifandi sjón. Það sé búandi, sem sjái. Það sýni smáorðið »en«, er merki »til og með, ja endog«. Þessi auðfengna geðbrigða-upphrópun merki aðeins: Nú má fara að slá akur og taðan er hirt. Því verður naumast neitað, að búskýslubragð sé að orðunum. Er það í samræmi við þá kenning, að fornmennt hafi aðallega litið búmannsaugum á íslenzka náttúru, þó að æðri náttúruskoðunar verði vart¹⁾ En samt þykir mér upphrópunin list. Úr fimm orðum, tildurlausum og óbrotnum, er hér ger skýr og ekki litil náttúrumynd. Hvert skifti sem eg minnst þessara orða, sé eg í huga langa hlið með ljósgulum ekrum hér og þar og röð sleginna túna, með bæjum á, eftir henni endilangri. Og umgerðin er áhrifamikil og skáldleg.

Fyrsta eða dýpsta orsök falls Gunnars og heimsnúnings, hulin orsök eðlilegra orsaka þess, er forlög hans. Örlagaráð birtist í því, er hestur hans drepur fæti. Svo hljóðar skýring og skilningur Njálu.²⁾

Í viðureign við þá Þríhyrningsfedga fer Gunnar tvívegis heldur óhetjulega, óverulega. Í orrustunni við Knafahóla virðist hann eiga við þá alls kosti. Þá er þeir leggja á flóttu, segir hann hæðnislega: »Þat mun ykkur þykja ilt til frásagnar, ef ekki skal mega sjá á ykkur, at þit hafit í bardaga verit.« Síðan hleypur hann að þeim og veitir þeim áverka (c. 63). Og í seinasta Rangárbar-

¹⁾ Th. Hjelmquist, *Naturskildringarna i den norröna diktningen*. Stockholm 1891, bls. 7.

²⁾ Bååth, *Studier* bls. 127. Þrisvar verða hestar verkfæri forlaganna í lífi Gunnars: Otkell réð ekki við hest sinn, er hann reið ofan á hann. Af því vá Gunnar hann. Af hestaati hófst fjandskapur hans við Þríhyrningsfedga. Og loks er það af hests völdum, að hann hættir við utanför.

daga eggjar Kolskeggur hann að skjóta á Þorgeir Starkaðarson. En það vill Gunnar ekki, og er hvöt hans þar smábúandleg: »Eyðast munu fésjóðirnir um þat er þessir eru bættir, er hér liggja nú dauðir«. (c. 72). Kolskeggur kveður honum ekki munu féfátt verða, og hefði honum átt að vera kunnugt um efnahag bróður síns. Gunnar tímir, með öðrum orðum, ekki að drepa hann. Hetjur eru örlátar. Það er Gunnar líka, þá er hann hjálpar um hey og mat, svo að hann skortir sjálfan að lokum. Það er því undarlegt, er sagan gerir hann hér svo aurasáran. En ekkert dregur þetta úr dálæti hennar á hetju sinni, hefir ef til vill ekki tekið eftir, að hún óprýddi goðið með slíkri frásögu. Vildi sagan skýra, hvi kappinn vann ekki á þeim feðgum? Eða var Gunnar svona féglöggur í málinu?

Líklegt þykir mér, að sagan geri mál Otkels bónda í Kirkjubæ verra en gerðir stóðu til. Í fyrsta lagi er hætt við, að höf. hafi verið hlutdrægur, er andstæðingur Gunnars átti í hlut. Og í öðru lagi fer naumast hjá því, að sú hlutdrægni hafi úr lagi fært söguleg sanrindi, hetjunni í vil, andstæðing hans í óhag. Hlutdrægnin sést og af tvennu: Höf. eys Gunnar allan hátt og lágt lofi, en ekkert hrós drýpur á Otkel. Og þó gægist sitthvað geðfelt í fari hans upp úr frásögunni, eins og vænta má, því að hann var skyldur einhverri beztu ætt, er blómgast hefir hér á landi, náfrændi Gizurar hvíta, forföður Haukdæla. Hann er óskaðasár; »varð vel við skaðann«, er brann húsið. Hann er gjöfull, gefur Runólfi úr Dal uxa alsvartan. Og góður virðist hann hjúum og þrælum. Melkólfur þræll þykist sæll, ef hann ætti sig. En af þessu gerir höf. Otkeli enga sæmd, menn taka varla eftir því. Í öðru lagi er sýn hlutdrægni á því, að hvergi er litið á sakir með Otkels augum, hann hvergi látinn tala máli sínu né verja framkomu sína, og er það galli á sögunni. Fyrir bragðið er heysynjun hans ekki rökstudd nægilega, því að eg get ekki skilið svo, sem hún

sé illum tillögum Skammkels að öllu að kenna, eins og neitun allra sátta eftir þjófnadinn í Kirkjubæ. Eg man tvo staði í íslenskum bókmentum, þar sem sagt er frá sama efni, heyneitun í harðindum, sem sýnir, að slíkt er vel fallið til skáldlegrar frásagnar. Annar staðurinn er í Hænsa-Þórissögu, er Blund-Ketill falar hey af Hænsa-Þóri. Þar er rækilega skýrt frá heybirgðum hans. — »Þó at algjafsta væri til alþingis, at þó mundi afganga fimm stakkar«. Og synjunin er studd með lýsingu á skapi Hænsa-Þóris, nurlara og kaupbraskara í fornum sið, og svörum hans. Hann er t. d. látinn spyrja: »Hvat skal ek þá hafa annan vetr, ef þá er slíkr vetr eðr verri?« (Hænsa-Þórissaga c. 5). Hinn staðurinn er í nýíslenskum bókmentum, í »Gamla heyinu«, eftir Guðmund Friðjónsson, ágætri smásögu. Brandur gamli er sýndur blindur á rölti kringum heystabba, stóran og fornan. Hann ann honum hugástum, af því að hann hafði mörg ár látið sér ant um hann — stabbinn var mjög sýnilegur og áþreifanlegur lofköstur hygginda hans, hlaðinn úr heyi og torfi —, og af því að hann á fátt að unna sökum andlegrar eymdar og austraits langrar æfi. Af slíku skilst, að honum hlýtur að verða sárt um heyið. Og hann svarar og hugsar með sömu hygni sem Hænsa-Þórir, mörgum öldum áður: »Það getur gert grasleysisár, og það geta komið eldgos, og alt gras orðið eitrad eins og það varð í móðuharðindunum«. Alt slíkt vantar í heysynjunarsögu Njálu. Kinck fullyrðir, að Otkell eigi stórar birgðir (»hele lagre på stabburet« s. st. bls. 52), en slíks getur hvergi. Það sést að eins, að til hefir verið matur á tvo hesta um þingtimann, er Melkólfur þræll sótti mat að Kirkjubæ. Vera má, að ráða eigi í mikinn heyforða af orðum Otkels, að hvorttveggja sé til og af því er Njáll kallar illa gert að »varna Gunnari kaups«. Ef svo er, þá hafa fáyrði höf. skemt frásögunna. Meinsemi Otkels hefði orðið áhrifameiri, ef sést hefðu fullar tóttir eða verið frá þeim sagt. Svo mjög stakk hjálparsynjun hans í stúf við búngæði Gunnars, er heylaus var sökum heyhjálpar sinnar. Eg held, að höf.

hafi því ekki heyrt né séð mikið látið af heyforða Otkels. Slíkur listamaður sem hann og auk þess stórum vilhallur Gunnari hefði ekki pagað um slíkt.

Otkell er ekki látinn greina neinar ástæður fyrir bjargarsynjun sinni, líkt og þeir gera, Brandur og Hænsa-Þórir. En ekki er hægt að ámæla honum að þeim óheyrðum, því að þær gátu verið réttmætar, t. d. að hann kysi fremur að hjálpa landsetum og félitlum grönnum, eða að hann þættist ekki eiga nóg hey sjálfur. Og það sést af dæmi Blundketils, að góðir menn í fornöld hafa verið heysárir. Það var því meiri þörf á, að Otkell gerði nokkra grein fyrir ástæðum sínum, er búast mátti við góðum undirtektum undir heyfölnun Gunnars, eftir því sem sést skap hans og örlæti. Og hann fagnaði Gunnari vel, þá er hann kom að biðja hjálpar. Og þjófnadarmálið er smásaga í sjálfri sögunni, afdrifamikill þáttur hennar, þar sem öll höfuðatriði þurfti því að rökstyðja sem í sérstakri smásögu væri. Hér virðist mér því skella í söguna, líklega sprottin af því, að höf. þarf að flytja mál Gunnars, en samtíðarmenn hans þektu arfsagnir þær, er hann studdist við, svo að hann hefir ekki þózt geta farið með efnið eftir vild sinni né kröfum góðrar listar. Hugsanlegt væri og, að hér hefði eitthvað týnst úr sögunni.

— — Af því, sem sagt er fyrr um frásögn sögunnar af framkomu Hallgerðar við vig Gunnars, sjást líkur þess, að Njála halli mjög á hina hárprúðu friðleikskonu. Kuldinn í garð hennar birtist í orðalagi sögunnar á einum stað (c. 14), — er þess er getið, að hún hafi sezt að búi á Varmalæk, gefin í annað sinn: »Hallgerðr sat mjök á sér um vetrinn, ok líkaði við hana ekki illa«. Svona komast menn ekki að orði um aðra en þá, sem þeim er ekki um gefið. Áður er sagt, að allir heimamenn hennar hafi harmað hana, er hún fluttist aftur í föðurgarð eftir dráp Þorvalds, fyrsta manns síns. Úr því að hún reyndist hjúum sínum svo vel á mæðutíma sínum, hefði mátt vænta, að líkað hefði við hana betur »en ekki illa«, er

hún stóð á hátindi hamingju sinnar og æfi, fyrsta hjúskaparárið með manni, er hún unni.

Ýmsir hafa veitt eftirtekt hlutdrægni Njálu í garð Hallgerðar, t. d. Hermann Jónasson (Draumar, bls. 43)¹. Kinck lætur þá skoðun í ljós í fyrnefndri ritgerð. Hann bendir á, hve gjafir hennar til heimamanna sinna eftir víg Þorvalds komi henni að litlu liði í sögunni, er sé einkum hlutdræg í garð hennar, síðan Gunnar átti hana. Eg get þess til fróðleiks, að Kinck dettur í hug, að klerklærður kvenhatari hafi bætt sögunni af henni og bogastrongnum í bókina²). En ef einhver fótur sé fyrir þessu, heldur hann, að ástæðan hafi verið, að þún hafi ekki þolað Rannveigu, tengdamóður sína, og ekki getað hugsað til þess að flétta með henni streng úr hári sér. Eg trúi ekki á, að þetta hafi verið meira en í hæsta lagi aukaástæða, sem sjá má hér á undan. Kinck hyggur, að Gunnari hafi farist lítilmannlega í förinni að Kirkjubæ. Ef slíkt má ráða í af frásögn Njálu, held eg, að það sé ávöxtur af kristilegri siðfágun sögunnar á dýrlingi sínum. Og enn verð eg að andmæla hinu viðfræga skáldi Austmanna, er hann segir, að Gunnar hafi snúið heim með smánaryrði á baki. Þau finn eg hvergi í sögninni af þessari för. Hitt er annað mál, að neitun Otkels lætur að minsta kosti óþýðlega í nútíðareyrum: »Hvárttveggja er til, en hvártki mun ek þér selja«. Og Hallgerður gat hafa reiðst fyrir hönd sína, matarlausrar, og bónda síns, þótt Gunnar hefði ekki verið smánaður, og Otkell hefði

¹) Sigurður Breiðfjörð hefir ort stökur um Hallgerði, og bera þær dómvísi hans vel söguna. Ef menn lesa þær, skilst þeim, með hve lítilli samúð sagan lítur á þessa illræmdu glæsikonu. Og þar sem samúð vantar, er hætt við, að skorti á skilninginn. ■

²) Nærri öld áður komst rímnaskáldið Breiðfjörð að þeirri niðurstöðu, að sögnin væri innkot:

„Af þessu' og öðru þykir hætt,
því í saga-kverið
einhver hafi inn í bætt,
sem illgjarn hefir verið“.

haft gild rök til synjunar sinnar. Skapstórar konur og metnaðargjarnar fara ekki að lögum. Og það er sennilegt, sem Kinck bendir á, að húsmóðurinni á Hlíðarenda hafi gramist, er Gunnar kom með þrælinn Melkólf í viðbót á fæði. Mér hefir annars lengi þótt hvorttveggja jafnóskiljanlegt, að Otkell bað Gunnar að kaupa hann, eftir það sem á undan var gengið, og að Gunnar varð við tilmælum hans (»ufattelig godfjottethed«, kallar Kinck það s. st. bls. 52). Kinck ætlar því, að matvælatakan í Kirkjubæ hafi verið hefnd, en alls ekki þjófnður, og að frásagan af orðum Hrúts um þjófsaugun Hallgerðar séu búin til sökum frásöguaðferðar (»sagaen har selv laget dem av tekniske grunde« s. st. bls. 49)¹). Ef nokkuð er og ólíklegt, þá er það það, að höfðingjadóttir og hefðarkona gerist þjófur í sið hernaðar og víga, er taldi þjófnáð svívirðilegastan allra glæpa. Og Hallgerði rak ekki skortur til slíks örþrifaráðs, því að hægt var að gefa gestum Gunnars annan mat en þýfið úr Kirkjubæ, að sögn Njálu. Aðrar sögur fara og ekki af þjófnáði Hallgerðar, og söguhöf. hefði víst ekki legið á þeim, ef heyrt hefði. En ef þjófsnáttúra hefði verið eins rik í henni og ætla má af þjófsaugunum, hefði hún að líkindum stolið oftar.

Þjófnáðarsagan er og tortryggileg af ytri rökum. Það líkist skáldhnykk, er Otkell gefur Melkólfi þræl kníf og belti, sem hann týnir í þjófnáðarför sinni, við Rangá, sem svo margt gerist við í Njálu. Og enn vill það til, að gripina finnur versti öfundarmaður Gunnars, Skammkell, manngerð illvildin, er ilt vill ills vegna, og að því leyti örlítið brot af *Jago* Shakspeare's og eldri í bókmentum heims en hann.

Það sýnist og glæfralegt að senda um hábjarta vornótt jafnlanga leið og frá Hlíðarenda vestur að Kirkjubæ á Rangárvöllum til að stela mat á tvo hesta, búa upp á

¹) Um matvælatökuna í Kirkjubæ og spádóm Hrúts hefir Einar Hjörleifsson látið svipaða skoðun í ljós. Hann hyggur, að „hefndarhugur“ hafi ráðið mestu, er Hallgerður sendi þrælinn til Kirkjubæjar („Skapstórar konur“, *Skírnir* 1909, bls. 8).

pá, kveikja síðan í húsi og skilja ekki við það, fyr en fullséð væri, að útihúsið brynni til ösku.¹⁾ Og heimafólk á Hlíðarenda hefði naumast mátt fá nokkra vitneskju um þjófnadinn. Melkólfur hefir því orðið að fara og koma aftur, meðan heimamenn sváfu.

Sigurður fornfræðingur Vigfússon kveðst »áreiðanlega« hafa fundið ösku úr búi Otkels (Árb. Fornleifafél. 1888—92, bls. 54). Trúum því, er mun þó óörugt, að askan sé úr mannvirki frá fornöld. En eg veit ekki, hvernig í ósköpunum hann hefir séð það á henni, að hún var úr búi því, er Njála á við. Oftar gat brunnið í Kirkjubæ en þá, þótt engar sagnir fari af. Nafnið á upphækkun þeirri (ostabúr), er hann gróf í, sannar ekkert. Munum, að lítið fór fyrir dómvísí (kritik) manna á fyrri öldum. Sögn af þessum bruna hefir lifað á vörum fólks. Eins kunnu héraðsbúar og Kirkjubæjarbúendur sögu Njálu af stuldi Hallgerðar. Þeir geta því hafa skirt upphækkun þessa ostabúr, eins og forfeður vorir tengdu heljarbjörg við sagnir af Gretti og kölluðu þau Grettistölk. Með þessu neita eg ekki, að askan sé úr búi, sem Otkell hefir átt, heldur hinu, að um slíkt verði fullyrt. Rannsóknir Sigurðar Vigfússonar sanna ekkert um frásögn Njálu, allra sízt með hvaða tíðindum kveikt hefir verið í útibúrinu, né í hvaða skyni slíkt hefir verið gert.

Valda mun ágreiningi, hví sagan gerir þjóf úr Hallgerði. Kinck skýrir, að hylma hafi átt yfir, að matartakan hafi verið hefnd svívirðingar, er bóndi hennar þoldi í Kirkjubæ, mátulegt að nota til þess þrælinn, er troðið var upp á nátthúfuna bónda hennar (»som de prakket ind på hendes nathue av en mand«).

Eg hygg annað. Matvælatakan olli kinnhesti Gunn-

¹⁾ Þó finnast dæmi furdalegrar dirfsku til þjófnadar Mér segir skólastjóri Magnús Helgason, er eg hefi grætt á að tala við um sumt í ritgerð þessari, að eitt sinn hafi verið stolið að næturþeli, milli loka og jónsmessu, mat á tvo hesta frá foreldrum hans í Birtingaholti. Aldrei varð uppvíst um, hver að væri valdur, en hann hefir tæpast verið eins langt aðkominn og Melkólfur að Kirkjubæ.

ars, er hann laust konu sína í viðurvist margra gesta. Harðneskja hans varð afsakanlegri af stuldinum, hinum herfilegasta glæp, heldur en ef til gerræðis hennar hefði verið stofnað í hefndarskyni fyrir bjargarsynjun og þrælsölu, er hún gat reiðst, þótt bóndi hennar væri ekki óvirtur. Þessi skýring fellur í ljúfa löð við auðsæja viðleitni höf., að kenna ógæfu Gunnars öðru en siðbrestum hans og gerðum — nema fyrsta ójafnaðarverki hans. Alt er honum illa launað. Skæðasti fjandmaður hans og ráðbani varð Mördur, sonur Unnar, frændkonu hans, er hann reyndist drengur, sem dugði í raun. Það er ranglætið í örlögum Gunnars, að honum er, hjálparpurfa sakir hjálpsemi, þverneitað hjálpar. Hann þýdist ekki ráð þráins að taka hey í Kirkjubæ og gera verð fyrir (Nj. c. 47). Sá þegnskapur — og þrælskaupið — var honum goldinn með þjófnadi konu hans, er dró eftir sér sekt hans og dauða. Ólánið sprettur — samkvæmt skilningi Njálu — af manngæðum hans og drengskap, ráðsnilli Njáls, ósjálfstæði Otkels, illgirni Skamkels, slægð og fégirnd Marðar, þjófseðli konu hans, glæstrar og hárprúðrar með »flagð undir fögru skinni«, og refsidómi þungra örlaga. Og alt er þetta hefnd ójafnaðar, er hann beitti Hrút og fyrr er gerð grein fyrir. Og merkilegast er, að hefndin kemur úr ættum þeirra, er hann vann ójöfnuð fyrir og hafði hann í frammi við, frá syni Unnar og bróðurdóttur Hrúts. Og nú skilst, hví Hrútur og ekki annar kennir þjófsaugun og spáir fyrir henni. Sömu augu hefndu ósigurs hans í deilum við Gunnar um fé Unnar, — algerlega gegn vilja hans og óskum, (samanber: »mun oss verða í því engi hefnd né frami«). Það hefir í upphafi verið skilningur höf. á harmsögu Gunnars og listráð hans, að Hallgerður og Mördur steyptu honum í óhamingju. Áhrif hennar á líf hans urðu að gerast með hinum óskaplegustu endemum, svo að engum gætu dulist þau. Það er víst höfudástæða þess, að sagan lætur hana stela í Kirkjubæ og — ef til vill — synja honum hárlokksins, hjálpa Merði og frændum hans sem áður við

síðustu sókn á hendur honum, þá er hún átti að fyrstu upptök. Hvorki drengskapur né hreysti í bróðurlegu bandalagi við vizku hins mesta spekinga fá afstýrt hefnd fyrir ilt verk¹⁾, meira að segja ekki vinátta og trygðir með tengdum við þá ætt og þann mann, er það bitnaði á. Hún dynur á þér alt fyrir það, að skapadómi, vis þér sem dauðinn, óviðráðanleg og óstöðvandi. Sú virðist meginhugsun sögu Gunnars á Hlíðarenda.

IV.

Eg bregð mér snöggvast frá Njálu og athuga Landnámu.

Merkilegt er, að hún telur bræður Gunnars, en nefnir ekki Kolskegg²⁾, er ætla mætti, eftir Njálu, að mestar sagnir hefðu gengið af. Hauksbók er sett saman eftir landnámsbókum þeirra Sturlu Þórðarsonar og Styrmis fróða, og tekið það »úr hvárri«, sem önnur hafði »framara« (o: meira) en hin. Hauksbók og Melabók nefna bræður Gunnars, en ekki Sturlubók, það sem nú er til af henni. Þeir Styrmir fróði og Sturla Þórðarson voru báðir handgengnir Snorra Sturlusyni, hafa að líkindum báðir dvalist hjá honum. Og geta má nærri, hvort þeir hafa ekki oft spjallað við hann um fornar sagnir og fræði. Hauksbók hlýtur því að hafa heimildir sínar frá mönnum nákunnugum Snorra. En hann ólst, sem kunnugt er, upp skamt frá Hlíðarenda, á einu mesta fræðisetri Íslands í þá daga, Odda á Rangárvöllum. Fráleitt hafa aðrir vitað betur deili á Gunnari og ætt hans en Oddaverjar. Ef Kolskeggur hefir verið til, sætir því furðu, ef nafn hans hefir farið fram hjá hvort heldur Styrmir eða Sturlu eða báðum³⁾,

¹⁾ „The lesson it (o: Njála) teaches is of a Divine retribution, and that evil brings its own reward in spite of all that human wisdom, and courage, even innocence, can do to oppose it“, segir Guðbrandur Vigfússon (Prolegomena, bls. xlii í Sturl. I. Oxf. 1878).

²⁾ Landn. 1900, bls. 109, 236 (Melabók).

³⁾ Að ætlun Finns Jónssonar er Melabók gerð eftir Sturlubók og hefir haft nafn bræðra Gunnars þaðan (Landn. Kh. 1900, bls. XXXV—XXXVI).

ekki sízt er þeir, eða sá þeirra, sem er hér heimildar-
maður Hauksbókar, vita nöfn tveggja bræðra hans, Helga
og Hafurs, er við engin tíðindi er dreift, en Kolskeggur
hins vegar þeirra bræðra sagnkunnastur, að því er ætla
má af Njálu. Annaðhvort hefir höf. Njálu því skapað
Kolskegg af mætti anda síns, eða gert úr honum miklu
meiri garp en hann var. Mér hugsast ekki önnur skýr-
ing á þögn Landnámu um hann. Gunnar á að hafa
trúað Kolskeggi — sem alt er vafasamt um — fyrir því,
er þeir voru einir á heimleið eftir víg Otkels, að hann
vægi nauðugur. Styrkir samanburður við Landnámu þá
ætlun, að þessi orð hans séu skáldskapur, siðfágun sög-
unnar á kappu hennar og ljúfling, er afla eigi honum
vegs og vinsældar.

Ekki ber Landnámu og Njálu saman um sonu Gunn-
ars. Hauksbók getur þeirra, telur þá tvo eins og Njála,
en kallar þá Grana og Hámund. Allar sagnir Njálu af
Högna eru því efa orpnar af sömu greinum og það, er
hún segir frá Kolskeggi, en stórmiklu munar, hve minna
kveður að Högna en Kolskeggi. Hann gat því fremur
leynst fyrir Styrmí fróða en föðurbróðir hans.

Landnáma minnst á þrjú atriði úr sögu Gunnars:
víg Otkels, orustuna við Knafahóla og fall hans. Hún
styrkir sögu Njálu frá vígi Otkels, það sem hún nær.
Segir að eins, að Gunnar hafi barist við hann »við garð
at Hofi«, og að Otkell og Skammkell hafi fallið þar
(Ldn. bls. 110). Fleiri gátu hafa fallið, en höfundur þessa
kafla Landnámu ekki hirt að nefna aðra en tvo hina
merkustu. Aftur greinir Landnámu og Njálu allmjög á
um bardagann hjá Knafahólum. Landnáma segir, að
Egill úr Sandgili hafi setið þar fyrir Gunnari, fallið og
með honum tveir Austmenn og Ari húskarl hans, en Hjörtur,
bróðir Gunnars, »úr hans liði« (Ldn. bls. 109—110, 220).

En próf. B. M. Ólsen hyggur, að Melabók sýni oss eldri gerð Landnámu
en önnur handrit hennar. Ef skoðun próf. Ólsens er rétt, styrkir það
skoðun mína um Kolskegg. Þá verður einum fræðimanni fleira, er hefir
ekki heyrt hans getið.

Njála kveður fjórtán hafa fallið, Hjört hinn fimtánda. Fræðiritið Landnáma kappkostar sýnilega að telja þá nákvæmlega, er á fundinum féllu, þar sem getið er falls eins húskarls, og hann nefndur nafni, ekki meira virðir en húskarlar voru í fornöld. Það er því ekki ólíklegt, að Njála hafi stækkað Gunnar á að bæta einum tug við tölu fallinna manna.

Á Landnámu er helzt svo að sjá, sem Egill hafi verið aðalmaður í fyrirsát fyrir Gunnari hjá Knafahólum. Í Njálu er Starkaður undir Prihyrningi frumkvöðull hennar og foringi. En Landnáma nefnir ekki, að hann hafi tekið þátt í þeirri aðför að Gunnari. Enn kemur Njálu og Landnámu ekki saman um austmennina. Landnáma kveður tvo hafa fallið, Njála einn.¹⁾

Landnáma (bls. 110) segir öðruvísi frá falli Gunnars en Njála. Saman ber þeim um tölu særðra og fallinna. En það ber á milli, að Landnáma kveður Gunnar hafa verið heima með einn karlmann fulltiða, en Njála segir hann einan, eins og Eyrbyggja. Öll frásögn af falli Gunnars fær og enn meira á oss, er enginn er til liðsinnis. Njála gerir með þessu hetju sína enn stærri en hin þurra frásögn Landnámu. Mest hljóta menn þó að taka eftir því, að Landnáma kveður Ásgrím Elliðagrimsson með þeim, er fóru til vígs Gunnars. Njála telur fyrirmenn þeirrar farar nákvæmlega (c. 75), en getur hans ekki, og veit þó margt af honum að segja. Er því ólíklegt, að höf. hafi ekki heyrt um hlutdeild Ásgríms í aðför að Gunnari. Aftur aflar Gunnar sér vináttu hans að sögn Njálu, — er hann skorar á hólm Úlf Uggason, skáld, er við lá, að ónýttist málssókn Ásgríms á hendur honum, og fyr er nefnt (Njála cap. 60). Með slíkum ójöfnuði barg Gunnar máli Ásgríms, er hét honum að vera aldrei í mót honum, en jafnan með í málaferlum. Njála og Land-

¹⁾ Tveir austmenn sátu fyrir Gunnari, samkvæmt Njálu, og voru þeir á vist í Sandgili. Njála segir nokkra sögu af þeim austmanni, er komst heill úr bardaganum hjá Knafahólum. Hann féll fyrir Gunnari heima á Hlíðarenda, er þeir Gizur hvíti og Geir goði vógu hann.

náma verða hér ekki samþýddar á annan veg, en að Njála nefni ekki Ásgrím í aðför að Gunnari — af vangá eða öðrum sökum — og að hann hafi fylgt vini sínum og frænda, Gizuri hvíta, til vígs Gunnars, þrátt fyrir heit sitt og þegna hjálp í raun, sem hann getur hafa gert. En frásögn Njálu af viðskiftum Gunnars og Ásgríms fær varla staðist af því, að Helgi Njálsson hefir tæpast verið kvæntur dóttur Ásgríms, er þetta á að hafa gerst.¹⁾ Er þessi sögn ort til að sýna, hvað sá hinn mikli ágætisvinur, Gunnar á Hlíðarenda, er nauðugt var að vega menn, gat gert fyrir vini vana sinna (sbr.: »vin sínum — skal maðr vinr vesa — þeim ok þess vin«. Háv. 43. er.)? Því trúi eg trauðla, svo tvísýnn sómi sem honum, dýrlingi sögunnar, var að slíku. Einhver fótur mun vera fyrir þessu ójafnaðarbragði Gunnars. Eitthvað getur hafa farið milli mála um það. En líklegt er, að sagan hafi siðfegrað eitthvert glap hetjunnar, er hún af raunsæi eða einhverri ástæðu þóttist ekki geta pagað um, í því skyni látið Gunnar drýgja það í þarfir vana sinna og lyft ójöfnuði hans á þá leið upp í æðra veldi.

Samanburður á Njálu og Landnámu styrkir því þá skoðun, að Njála hafi stækkað og siðfágað Gunnar²⁾.

V.

Það er eitt auðkenna Njálu, að engin Íslendingasaga er, spjaldanna á milli, svo full af lögkrókum og lagaflækjum. Höfundur Njálu er sólginn í lögmannabrögð. Þessi merkilegi huldumaður er í senn stórskáld og málari mannglegra ástriðna og tilfinninga, ættfræðigrúskari og lögsögupulur. Hann hefir verið einn þeirra manna, er hafa góða andlega matarlyst.

¹⁾ Þessa hjálp verður Gunnar að hafa veitt Ásgrími fyrir orrustuna við Knafahóla. Hana telur Finnur Jónsson 988, en Njálssönu kvænast 990—1000 (Brennu-Njálssaga, Einleitung, bls. XXXIV—XXXV).

²⁾ Eg nenni ekki að ræða hér né rannsaka, hvort Landnáma hafi tekið frásögn sína af bardögum Gunnars úr sérstakri sögu af honum, er höf. Njálu hefir, ef til vill, ekki þekt. Sé ekki ástæða til að ætla slíkt.

Mikið hefir verið ritað með lærdómi og aðdánlegri gerhygli um lögfræði Njálu og hún sætt hörðum árásum. Þó er það nær minni ætlun, að margt megi enn finna og rita um þetta efni, er af má vaxa skilningur á þeirri hinni miklu bók. Er þess óskandi, að einhver lögfræðinga vorra rannsakaði lagastafi hennar og riti um þá. Einkum væri fróðlegt, að kannað væri eftir megni, hver lög og lagaákvæði sagan hefir í huga. Þótt það kunni að vera glaunaskapur af alólögfróðum manni, get eg ekki stilt mig um að drepa á eitt atriði í málaferlum Gunnars.

Hetjan á Hlíðarenda lenti í þremur vígamálum, er höfðuð voru á hendur honum eftir Rangárbardagana þrjá. Þar sjást tvö sameiginleg einkenni: Annað er, að sæzt er á þau öll, og hitt, að sættir komast á þau á sama stigi, þá fyrst er Gunnar hefir flutt vörn sína, eða sama sem, og horfur hans hafa stórum batnað. Í tveimur málunum, eftir vigin við Knafahóla og víg Þorgeirs Otkelssonar, virðist honum — eftir því sem sögunni segist frá — sigur vis. Í málinu eftir Knafahólabardaga er sæzt, þá er Mördur, lögmaður mótstöðumanna Gunnars, hefir játað, að þeir Njáll hafi lög að mæla í vörn sinni, »þó at hart sé undir at búa«. (Nj. c. 66). Þriðja málið, eftir víg Þorgeirs Otkelssonar, fæst af að leggja í gerð, er bjargkviður hefir borið, að þeir nafnar, Þorgeir Otkelsson og Þorgeir Starkaðarson, hafi »farit með þann hug til fundar at vinna á Gunnari, ef þeir mætti« (Nj. c. 74). Þetta kallar Njáll »lögvern« (þ: vörn samkvæmt lögum) og hótar að bera hana fram, »nema þeir legði til sætta«. Hér virðist Njáll hafa rétt að mæla, og ákvæði Grágásar um þessi efni höfð í huga og þau rétt skilin.¹⁾ Hér stóð Gunnar eins vel að vígi og unt var, samkvæmt Njálu Þeir nafnar áttu nú engra áverka að hefna, eins og átti sér stað, þá er setið var fyrir Gunnari við Knafahóla, og sæzt hafði verið á fyrri deilumál þeirra og fjörrað við hann. Eðlilegast virðist nú, að málið hefði farið til dóms, Gunn-

¹⁾ Grágás, Konungsbók, bls. 183—184, § 108.

ar sýknaður og óvinir hans fengið makleg málagjöld fyrir frumhlaupið, og á því máli er Finnur prófessor Jónsson¹⁾, er ver lögfræði Njálu. En í stað þess er sæzt á málið. En undarlegust eru þó úrslitin, því að þeir Gunnar og Kolskeggur skyldu, samkvæmt gerðadómi, fara utan »ok vera í braut þrjá vetr«. ²⁾ Gunnar fékk þessa sekt, auk féggjalds, fyrir sáttgirni sína, að því er skilja verður söguna, er góðsemin illa launuð sem æ áður á æfi hans.

Þess ber að gæta, að oft virðist hafa verið sæzt hér á mál í fornöld (Heusler, *Das Strafr.* § 25, § 43), sem eðlilegt var og viturlegt. Og hugsun Njáls hlýtur, samkvæmt sögunni að vera, að Gunnari sé öruggara að sættast. Hins vegar kostar Njála kapps um að sýna sáttfýsi Gunnars. »Sáttgjarn hefi ek verið jafnan«, lætur hún hann segja, þá er farið er fram á, að hann sættist á málið af vígi Otkels og Skamkels. Og ekkert er líklegra, en að þessi stefna hafi litkað alla frásögn af málum Gunnars. Vafalaust hefir Gunnar orðið sekur. Það hefir höf. ekki búið til, svo mjög sem hann er honum hlíðhollur. En um tildrög sektar hans vitum vér ekkert vist. En sáttgirni Gunnars í seinustu sök hans er ótrúleg, eftir því sem Njála lýsir málavöxtum. Þorgeir Starkaðarson hafði þá þrívegis veitt honum aðför. Og þessi sáttfýsi Gunnars kemur einkum illa heim við sáttrof hans eftir á og það lundarfar, um að vilja heldur deyja en vægja, sem haugvisan segir. Hann gat vel farið utan án dóms til utanfarar, svo að óvinir hans »ætti við annan at deila fyrst«, eins og móðir hans kemst að orði. (Nj. c. 74).

Líkur lúta því þar að, að Gunnar hafi verið sekur gerr með öðrum hætti en sagan segir, og að hún hafi fegrað málstað hans og sektar-tilefni. Hér ber því að sama

¹⁾ Om Njála i Aarbøger for nord. Oldkyndighed og Historie 1904, bls. 135.

²⁾ »Det kan nu ikke nægtes, at denne afgørelse er meget paafaldende, og man kunde fristes til at tro, at sagen ikke havde været ganske som i sagaen fremstillet«, segir F. Jónsson s. st. bls. 135.

brunni sem áður: Flestu er snúið Gunnari til vegs og virðingar.

VI.

Pótt erfitt sé og villugjarnt þar um dimman stíg, hefi eg farið yfir sögu Gunnars og reynt, að nokkru að vinsa skálskap frá sannri eða sennilegri sögu af honum. Og eg þykist hafa leitt likur að því, að greina verði milli hins raunsanna Gunnars og þess, er Njála sýnir með samúð og aðdáun, og margt sé þar skáldskapur um hann, er eg hefi ofurlítið leitað skýringa á. Sá Gunnar, er lifði, særði, vó og féll á 10. öld, hefir eflaust verið hin mesta hetja, vel búinn að ípróttum og líkamsatgervi, líklega glæsímenni mikið og átt einhverja hina glæsilegustu konu, er komið hefir á kvenfagra Ísland. Líklegt er, að margt hafi og verið siðlega vel um hann, og því hafi hann átt raungóðan vin, þar er Njáll var. Sagnir af þeirri vináttu eru, ef til vill, það gneistæflug, er kveikti í áskapaðri samúð stórskálds með dæmdum og vegnum atgervismanni. En hann hefir verið vígamaður og ekki laus við að beita ójöfnuði, að því er mér virðist ráða mega af ýmsum rökum, hefir neytt aflsmunar og ekki »farið að lögum«, er því var að skifta, sem sterkari mönnum hættir æ við. Máttarmeiri láta enn kné fylgja kviði í andlegum efnum, en hirða ekki um sannleik og réttan málstað.

Sá Gunnar, sem ris upp frá dauðum í Njálu og öðlast þar eilíft líf, hefir verið í hreinsunareldi. Sitthvað loðir þó við hann af breyskleika menskra manna. En söguhöf. hefir farið svo hljóðlega með brestina, að lesendur Njálu hafa fæstir orðið þeirra varir. Og það er efasamt, að söguritarinn hafi séð þá alla fyrir ofdýrkun á hetjunni. Dálæti hans á kempunni hefir spilt sögunni. Gunnar Njálu er enn meiri kappi en hann var í lífi sínu. Hann er að vísu vígamaður, en dansar nauðugur, því að hann er friðsemdin sjálf og sáttfýsin, sæmdarmaður, sem vill ekki vamm sitt vita. En eitt ójafnaðarverk vann hann, og það kom honum á kaldan klaka. Sú er yfir-

náttúrleg skýring falls hans og harma. Sveitungum hans leikur sumum öfund á ágætum hans og orðstir. Honum hefnist því fyrir yfirburði sína. Sú er eðlileg skýring vígs hans og ógæfu.

Það er hyggja mín, að einn hinn merkasti og göfgasti rithöfundur og snillingur Íslands hafi á þenna hátt að nokkru eytt og breytt brestum Gunnars og lagað hann til eftir hugsjónum annarrar menningar, trúar og tíðar.

Hvers virði er sá Gunnar, er Njála lýsir, oss nútíðarmönnum?

Í ritgerð »Um drengskap« í »Skirni« mótmælir Guðm. Finnbogason þeirri skoðun, að naumast sé nokkur brú milli menningar vorrar í fornöld og anda nútíðarinnar. Hann bendir á, að eðli manna birtist ekki svo mjög í því, hvað þeir telja skyldu sína og hverjar séu hugsjónir þeirra, er breytist »með öldunum«, heldur í hlýðni þeirra við skyldur og hugsjónir. Hér sé bandið milli vor og forfeðra vorra. Eg held, að þetta sé laukrétt. Því skiljum vér mannlýsingar í fornum skáldskap, að margt er líkt með oss og mönnum þeim, er þar eru leiddir oss fyrir hugskotssjónir. Sömu tegundir manna, með sama svip og lit sem nú, lifa þar og berjast. Sömu skaplestir, ástriður og mannkostir heyja enn orustu á viðum velli frammi fyrir þingbeimi og í brjósti hvers manns og konu. Góður drengur, aðlaðandi snyrtimeuni og ómannþýður einræningur voru líks eðlis þá og nú. Lesendur Njála kannast við Gunnar af lífsreynslu sinni. Þeir unna honum, af því að í honum birtist holdgervi sumra mannkosta, er þeim æ þykir gott að finna á lífsleiðinni.

Kinck er fremur óhrifinn af Gunnari, kveður hann hetju fyrir börn og litinn vitsmunamann (»hans intelligens var liten«). Hann verði altaf að leita ráða Njáls. En gjalda verður varhuga við að líta á slíkt með nútíðaraugum. Áður er vikið að því, að ráðleitanir og ráðlagningar hafi vafalaust tíðkast meira í fornöld en nú Gunnar hefir ofurlitla tilhneiging til íhygli, — samkvæmt Njálu. — Hann hugleiðir nokkuð vígaferli sín, sem er

honum þvert um skap. Vér nútíðarmenn skiljum það ből hans raunalega vel, þó að andstæður lífs vors hafi brugðið á sig öðru líki. En hitt er þó satt, að Gunnar er ekki einn þeirra manna, sem andleg hressing er að hitta. Hann er hvorki sjálfstæður né einkennilegur, ekki fremur en slík gljá- og glæsímenni einatt eru. Annað veldur vinsældum hans og hylli. Þokkagyðjurnar hafa blásið á hann blæ sínum. Hann er gæddur þeim fegurðarpokka, er laðar oss æ að sér, er skrautmenni og ljúfur í viðmóti. »Þeir voru blíðir við heimamenn sína, ok hafði ekki vaxit dramb þeirra«, segir um þá Kolskegg og Gunnar, er þeir komu úr utanför. »Hann var við alla menn léttr ok kátr ok sagði öllum slíkt er vildu«, þá er hann kom á alþingi. Með slíkum hugljúfum liður flestum vel, eins og þeim liður vel í fögru og blíðu veðri. Gunnar á Hlíðarenda fer líka enn sigurskildi glæsímensku og prúðmensku um konungsgarð og þingvöll. Hann hefir kvenhylli mikla, sem líkar hans á öllum öldum. Því lýsir Njála vel, er hún segir frá samtali Hildigunnar Starkaðardóttur um Gunnar við-bræður sína. Og vér skiljum, að þeim, er kynnast honum ekki, vaxi öfund á gengi hans og ástsæld.

En Gunnar er meira en ljúfmenni og skartmenni. Hann er vinur, einlægur og fólksválaus, góðviljaður alvörumaður. »Þú ferr með spott ok háð, en þat er ekki við mitt skap«, segir hann við Sigmund frænda sinn. Og hann er hinn mesti kappi og fullhugi, er á hólmi er komið, sem Kinck játar. Eg held því, að fullorðnu börnunum þyki lengi mikið til sumra kosta hans koma. Hann er oss ímynd og dæmi góðs drengs á öllum öldum. Af mynd hans í Njálu má að nokkru kenna góðs manns eðli. Og enn er þörf atgeirs hans og arma. Í dyngju Hallgerðar er Njáll enn smánaður, þótt hann leysi hvers manns vandræði, er hans leitar. Enn finst oss til um Gunnar og geðstyrk hans, er hann kemur inn og breytir spotti spjátrunganna í ótta og blygðun. Og Skammkell býr enn á Hofi, í miðri breiðri bygð. Aldrei megum vér fagna

meira en þá, er Gunnar leggur gegnum hann atgeirnum góða, vegur hann upp á honum og kastar honum á höfuðið í leirgötu við Rangá.

Sigurður Guðmundsson.

Eftirmáli.

Kafla úr ritgerð þessari um Gunnar á Hlíðarenda flutti eg á Stúdentafélagsfundi og öðru sinni fyrir alþýðufræðslu Stúdentafélagsins. Líkaði ýmsum illa, sumum stórilla. Það kom mér ekki á óvart. Ritsmíðar þessarar bíða því að líkindum óblíðar viðtökur, og skiftir það litlu. Hitt þykir mér lakara, að eg særi, ef til vill, með henni sumu, er eg vildi sízt særa. En þeir eru fæstir meðal þeirra, er mest hafa stóryrðin um goðgá mína. En í ritsmíð þessari gat eg ekki farið eftir öðru en því, er mér virtist mála sannast eða líklegast. Það hefi eg gert eins samvirkusamlega og mér var unt. Og það vona eg, að menn sjái, ef þeir lesa pistil minn samvirkusamlega — en á slíku vill einatt verða misbrestur. Ritgerð mín hefði og átt lítið erindi í »Skírnir«, ef hún hefði ekki gert annað en endurtaka almannadóma. Þessi orð mín má ekki skilja svo, sem eg þykist sjálfur hafa gert miklar uppgötvanir. Eg hefi — eins og lesendur sjá — langsamlega víðast stuðst við rannsóknir erlendra vísinda- og mentamanna, að svo niklu leyti sem eg hefi skilið skoðanir þeirra og skýringar og mér hafa virzt þær fara sanni eða líkindum næst.

Tvent var það einkum, er hneykslum olli: að eg talaði ekki virðulega um Gunnar á Hlíðarenda og leyfði mér að rengja fornsögur vorar.

Það er satt, að ég dáist ekki eins að Gunnari og þorri manna. Hann er ekki gallalaus, og því á ekki að kannast við slíkt: Vér getum urt honum fyrir því. Vér ættum að geta sameinað það að sjá bresti bræðra vorra og þykja vænt um þá. »Til er að eins ein tegund hugprýði í heimi,« segir frakkneskur afbragðshöfundur (Romain Rolland), »að sjá veröldina sem hún er og unna henni«.

Hjá því verður alls ekki komist að rengja fornsögur vorar. Ættartölum þeirra ber t. d. ósjaldan ekki saman. Voru þó ættartölur í röð þess, er einna fyrst var skrásett á landi hér. Við þær

lögðu forseður vorir og hina mestu rækt. Hvað mun þá um önnur efni? Það er og móðgun við hina ágætustu höfunda sumra fornsagna vorra, t. d. Njálu, Laxdælu, Hrafnkelsögu, Bandamanna sögu að skipa þeim á bekk með annála- og munnmælariturum. Það er þeim ódauðleg sæmd, að þeir, að kalla í svartuætti miðaldanna, sömdu sögur vorar að nokkuru með skáldlegri snild og skapararakrafti. Og þá [fyrst dæmst vér að list þeirra, er vér gerum oss grein fyrir frumhugsunum þeirra (ideer) og hvaða tegund bókmenta þær verða að teljast til. Aunars bið eg lesendurna að minnast þess, að eg held því ekki fram, að Njála sé skáldsaga í nútíðarmerkingu, heldur blendingur (sjá bla. 66 í síðasta hefti Skírnis), og að ég styðst þar mest við allað blæ hennar og frásöguaðferð.

Mikilsmetinn rithöfundur vor einn hefir sagt við mig á þessa leið: »Óáreiðanlega vissu söguritarar vorir, ef til vill, eftir þrjár aldir um sumt, er þeir skrifuðu um, en minna vitum vér, sex öklum síðar en þeir voru uppi«. En það er einmitt ráðgátan mikla, góður, hvað þeir vissu, og hvernig þeir fóru með það, sem þeir vissu.

Réttmætari þykir mér sú aðfinsla, er annar mætur maður hefir látið í ljós við mig, að eg hafi sumstaður eytt ofmiklu rúmi til sannana auðsæju máli. En eg þóttist ekki geta sneitt hjá því sökum þess, hve ófróðir Íslendingar eru um Íslendingasögur.

Það er satt, að sumar skýringar í ritgerð þessari geta orkað tvímælis, hvort réttarséu, enda segi eg oft »líklega«, »eg held«, að sé »hugboð mitt« o. s. frv. Mér getur hafa — og hefir eflaust — skotist í einstökum atriðum. Eg vona samt, að grein mín veki menn til umhugsunar um sögur vorar. En hitt þykist eg vita eins vel og eg rita nú þessi orð við skrifborð mitt, að framtíðin samsinni þeim tveimur höfuðskoðunum, er eg hefi haldið fram í grein minni: að Njála hafi stækkað og síðfagað Gunnar, og að hún sé með skáldlegri list og skáldlegu ráði ritin.

Fel eg svo þessa litlu ritsmið forlögum sínum og sanngjarnra manna dómi.

S. G.

Leiðrétting. Á bla. 71, l. 1, í seinasta hefti Skírnis, er prentað »ljósta hana allir kinnhesti«, les kinnhest.

Bla. 81, l. 1: bollaleggingunum, les bolla-
leggingum um.

Pau sem gleðina þrá ...

(Comtesse *De Noailles*).

Þýðing undir franska Alexanderlaginu, tileinkuð *André Courmont*.

„Fuyez des mauvais sons le concours odieux:
Le vers le mieux rempli, la plus noble pensée
Ne peut plaire à l'esprit quand l'oreille est blessée“.

Boileau.

Pau sem gleðina þrá umfram alt eru pau,
sem þá sorgin um leið verstar búsifjar býður:
Frægt eða falið sár er tætir hverja taug
þau bera hjartahreld, hvað sem láninu líður.
Hún ást, það unaðslyf, eina mannheimum
hún letur þetta fólk, áfjáða menn og meyjar
að bæla Sjafnarbál, leita burtu frá því
út um Sólheimasund og yztu Biðlandseyjar,
sem vegleg dúfan veil, hún Von er komin í

Við sem þekkjum þau vel þessi hamslausu hjörtu,
þar sem heimurinn snýst, hvergi rekur sig á,
vitum það, ástin er umbergis fjarska smá:
Alt í kring, angan, söng, löndin frið, loftin björtu
hillir upp, hverfur sýn, hulið svefnhúmi svörtu:
Munúðin óttasjúk magnar það töfradá.

Hver og ein skemtan sú er menn skeyt' ekki' að muna,
og fríð framandi lönd — í léttúð öll þau fló,
og vegleg borgin þar — virðist í tíðbrá funa,
og tær ilman í skóg — teiguð í skuggaró,
og vikivakasveim — á vötnum Suðurbygðar,
og rán, anganin sú, frjóvæn — það svikahró:
Alt eins, öll þessi boð — þar kennir kaupalygðar,
halda fram sí og æ fríðindum hennar Fró,
og af því hnígum við að fótum hennar Frygðar

En sjá jarðarbörn tvö þau sem verð' eins og eitt!
Hvað varðar þau um neitt, hvort ljúft er eða leitt?
Þau tvö vesalingshjú, er ástin saman sveigir,
anda með einum munn, hvort sig í hinu sér,
hugs' ekk' um blómabeð — höfgur sefinn þau hneigir,
né þá um Austurheim, hvar hún Paradís er,
né vært vatnið og hjart, er háan himin eygir,
né ljúf kvöldin og löng, er hún Von þögul þreyir,
heldur það lán, það eitt sem er alt: gleyma sér....

Geta gleymt! Graf' í þér ljóðheima lyndismeyra,
fær' í hjartað þitt inn öll himinljósin fríð,
fela til fulls í þér, þurf' ekki framar heyra
þann leyndarsöng, er ber að eyrum ár og síð,
breyt' okkar ástum í gríðar óminnisgeima,
svo að hljóð, angan, glit, þar hníg' í gleymskudá,
hrinda burt öllu hér, helga sér munarheima,
gef' upp önd, and' í þér, dett' útaf, deyja, frjá!

Gestur.

Um lífseigju dýra og manna.

Er lífið ódrepanði?

Oft hefi eg síðan eg varð læknir furðað mig á, hve sumir eru lífseigir.

Sumum gengur erfiðlega að fæðast í þennan heim. En langtum fleiri eru þeir, sem eiga erfitt með að deyja. Karlæg gamalmenni eru stundum árunum saman að seiglast á móti sigð dauðans, svo að síðustu verða jafnvel þeirra nánustu leiðir á drættinum. Eg minnst í því sambandi gamansögu eftir Maupassant, sem gerist í Normandí. Þar er síður að gefa sætt kaffi og lummur ættingjum og vinum, þegar einhver er nýskilinn við. Gömul, efnuðkerling var komin að andláti og virtist að eins eiga eftir nokkur andartök. Erfingjarnir buðu strax nágrönnunum, því lummurnar voru bakaðar og heitar af pönnunni. En gamla konan lifnaði við aftur, og skaut það öllum svo skelk í bringu, að lummurnar gleymdust, og kaffið kólnaði á könnunni.

Hér á landi þekkjum við sögu af mörgum gamlmennum, sem hafa átt í mesta stríði með að komast yfirum og það svo, að stungið hefir verið upp á þeim örþrifaráðum að hvolfra potti yfir vinnu á þeim. Ekki skal eg samt fullyrða, hvort þeirra ráða hafi nokkurn tíma verið neytt í alvöru.

Og sé gamla fólkið lífseigt, þá er síður að furða sig á, þó menn í broddi lífsins eigi stundum bágð með að deyja. Við þekkjum það úr fornsögunum, hve sumir kapparnir voru þéttir fyrir og hve marga og mikla áverka

þurfti til að bana þeim. Er oft sorglegt að lesa um, hvornig margir níddust þar á einum og bættu sári við sár, unz kappinn féll — af mæði. Og svipaðar sögur kunna herlæknarnir að segja úr nútímastyrjöldinni. Kúlur þjóta gegnum líkamann þveran og nærri endilangan án þess að verða mönnum að fjörlesti. Menn eru skotnir gegnum maga og garnir, gegnum lifur og lungu, gegnum hjartað sjálft, já jafnvel gegnum höfuðið og heilann og komast þó lífs af. Er þetta ekki undrunarvert? Hér kemur reyndar mikið til greina, hve læknislistinni hefir fleygt fram í að græða og binda um sár manna; þó er það eins mikið að þakka því, hvað mannslíkaminn er traustlega gerður, og hve náttúran er nösök að koma í veg fyrir, að lífið slokni, þó á það blási.

Þá eru sjúklingarnir, sem þjást af langvinnnum sjúkdómum. Það er ekki smáræðis tíma, sem það tekur fyrir suma þeirra að deyja. Og þegar vér kryfjum menn, sem dáið hafa úr einhverjum þessara illræmdu sjúkdóma eins og krabbameini, holdsveiki, tæringu o. fl., þá stórfurðar oss oftlega á því, að sjúklingarnir skuli ekki fyrir löngu vera dánir, því svo víðtækar eru skemdir ýmsra líffæra þeirra og það hinna þýðingarmestu, eins og lungnanna, hjartans, meltingarfæranna o. s. frv. Þarna hafa sjúklingarnir getað teyggt fram lífið í langan tíma með bæklað og brisjað hjarta, eða maga og garnir alla vega étnar af sárum, samgrónar og tærðar, eða annað lungað burtgrafið og upphóstað, en að eins slitur af hinu — og þannig má halda lengi áfram.

Á hallæristímum kemur það oft fyrir, að börn og þó einkum fullorðnir þola sveltu alveg furðanlega lengi, eða draga fram lífið við sultarfæðu svo lengi, að allir hljóta að undrast. Um þess konar dæmi munum við eflaust fá nóg að heyra, þegar styrjöldinni miklu slotar. Og til eru menn, sem til að sýna sig og græða fé hafa æft sig í að þola sult í langan tíma. Merkustu dæmi þess var ítalskur trúður, Cetti að nafni. Hann svalt í 70 daga og neytti einskis matar nema drakk vatn. Vatnsfasta polist sem

sé langtum betur en þurrafasta. Reynsla er fyrir því, að fullkominn sultur og þorsti í sameiningu þolist ekki lengur en í 10—12 daga, en oftast skemur.

Um það, hve vel menn þola kulda og vosbúð, eru margar misjafnar sögur. Dæmi eru til þess, að maður hefir þolað að liggja næringarlaus í fönn í 12 daga, en þá var hann líka orðinn aðframkominn og blóðhitinn kominn niður í 27° C. Hins vegar þolist hiti miklu síður. Jafnskjótt og hitinn fer dálítið upp úr 40°, er mesta hætta á ferðum og sjaldan, að menn lifi það af, ef blóðhitinn fer fram úr 42°.

Furðulegt er það, hve skurðlæknum nú á tímum tekst að skera burt marga og mikilvæga hluta líkamans án þess að til dauða dragi fyrir sjúklinginn.

Maður getur mörgu vanist og fundið það seinast með feldu og eðlilegt, og svo er um okkur lækna. En eg man það fyrir mitt leyti, hve eg varð forvið, er eg fyrst var að kynast ýmsum skurðlækningum, sem því nær daglega fara fram á hinum stóru sjúkrahúsum erlendis. Eg varð hissa á að sjá, hve mikið mátti bjóða dauðlegum mönnum með hnífnum, og það sjúklingum, án þess að svifta þá lífi. T. d. mátti taka af manni fleiri limi í einu, báða fætur eða báða handleggi, eða handlegg og herðablað í einu. Og alt gréri á nokkrum vikum. Það mátti taka burt annað nýrað og jafnvel þvagblöðruna með, það mátti taka miltið, eða t. d. langan bút úr görnunum, já taka úr mönnum magann í heilu lagi. Og sjúklingarnir hrestust furðu fljótt og lifðu lengi eftir, stundum við góða heilsu, rétt eins og líkami þeirra saknaði svo sem ekkert þessara burtteknu líffæra, sem allir vita þó, að eru ekki í okkur sköpuð tilgangslaust, heldur til að gegna margbrotnum og mikilvægum lífstörfum. En þetta kennir okkur, að líf vort og líkami er dásamlegt furðuverk, og að náttúran er ráðagóð í að laga sig eftir ýmsum óhöppum og óreglu.

Þó mundi okkur sjálfsagt furða enn meira, hve maðurinn er lifseigur, ef við ættum enn kost á að horfa upp á, hvernig sakamenn voru stundum kvaldir til dauða

fyr á öldum. Sagan af því, hvernig¹⁾ morðingi Hinriks 4 Frakkakonungs var tekinn af lífi, gefur glögga en andstyggilega hugmynd jafnt um lífseigju mannsins og grimd manna.

Morðinginn Ravallac var 32 ára gamall. Fyrst var hann þíndur til sagna á þíningarbekk, líkaminn teygður og stunginn með rýtingum hingað og þangað. Játaði hann þá brot sitt og íbraðist. Síðan voru bönd lögð á alla fjóra útlími hans og fjórum hestum beitt fyrir, einum hesti fyrir hvern lim. Einn af klerkunum byrjaði þá á sálminum „Salve Regina“, en múgurinn sem horfði á æpti og kallaði: „Engar bænir fyrir fordæmdum — niður með Júdas!“ Því næst kleip böðullinn Ravallac með rauðglóandi tóngum aletaðar þar sem til var tekið í dómnunum. Þá þrýsti hann inn í hægri hönd hans morðkutanum, sem hann hafði myrt kónginn með, hélt síðan hendinni yfir brennisteinsloga, þar til hún var brunnin af upp að úlnlið. Þessu næst helti hann sjóðandi olíu og biki, blönduðu vaxi og brennisteini, í sárið. Þar næst voru hestarnir keyrðir svipum og leið nú svo klukkustund, að þeir toguðu, en fengu þó ekki slitið manninn í sundur. Á meðan virtist Ravallac vera með fullu ráði og hvað eftir annað fól hann önd sína guði og emjaði hástöfum. Einn af aðalsmönnum, sem hafði eftirlit með aftökunni, tók eftir því, að einn hesturinn var að uppgefast. Hann fór því af baki, leysti hestinn frá og beitti sínum hesti fyrir í staðinn. Þetta dugði þó ekki heldur. Böðullinn varð síðast að gripa til hnifs til að skilja að líkamspartana og um leið putu hestarnir sinn í hverja áttina með blóðuga bútana, en hinn æðistrylti múgur tætti þá síðan og murkaði enn meir í sundur.

Þess var áður getið, að það kemur fyrir að menn lifi það af, þó þeir séu skotnir í heilann, en það er þó því að eins, að kúlan komi af mjög löngu færi eða vopnið sé kraftlítið. En það, að venjulega hlýzt bráður bani af heilaskoti, er meira að kenna hinum snögga, ákafa þrýstingi, sem gagntekur heilann og mænuna, en af því að heilinn þoli ekki skemdina. Þetta mun nú ýmsum þykja kynlegt, því að flestum hefir verið kent, að heilinn sé bústaður sálarinnar, og skemmist hann, fari sálin og þá lífið um leið, en þetta er ekki alls kostar rétt; því lífið getur haldið áfram, þó hið æðra sálarlíf eða persónan fari, og enn fremur sést það við meinsemdir og sjúkdóma í

¹⁾ Sjá O. Bloch, Om Döden, Khb. 1903. II. bls. 237—238.

heilanum, að sálarlífð getur baldist nokkurn veginn í lagi, þó sumir heilapartar detti úr sögunni. Mikilsverð líffæri, eins og lungun og hjartað, geta starfað algjörlega óháð heilanum og viðhaldið lífi í líkamanum um langa stund. Þetta sést greinilega af tilraunum, sem gerðar hafa verið á dýrum. Stórheilinn hefir verið skorinn úr fuglum og ýmsum spendýrum, og þau halda lífi þrátt fyrir það, en skynjunin, vitið og viljinn tapast. Það verður að hafa vit fyrir þeim; þau hafa ekki hemil á hreyfingum sínum. Það verður að ýta þeim úr stað. Þá ganga þau eða fljúga þangað til eitthvað stöðvar þau. Og þau mundu svelta, ef matnum væri ekki otað að þeim, en þau geta melt og þau geta andað, af því að innýflataugakerfi þeirra er óskert og getur haldið áfram störfum. Andardrátturinn er okkur venjulega alveg ósjálfráður og heilinn þarf ekkert um hann að hugsa. Í mænukylfunni (medulla oblongata) er ofurlitill blettur, sem Flourens (ítalskur læknir) fann fyrstur manna. Ef þessi blettur er stunginn eða skaddaður, hættir óðara andardrátturinn. Í blettinum er með öðrum orðum stjórnmíðstöð andardráttarhreyfinganna. Hins vegar eru í hjartanu sjálfu taugahnoðu, sem stjórna hreyfingum þess. Og niður eftir allri mænu eru stjórnmíðstöðvar ýmsra vöðvahreyfinga. Af þessu skilst, að ýmsar lífshreyfingar geta átt sér stað, eftir að höfuðið er höggvið af bolnum. Þetta sjáum við þegar skorin er kind. Æðarnar halda áfram að spýta og dýrið getur spriklað um stund. Og greinilegar kemur þetta í ljós, þegar t. d. kálfur er skorinn snögglega; þá getur hann sprottið á fætur og gengið spölkorn. Og þegar haus er höggvinn af hana, getur haninn flogið talsverðan spöl til mikillar undrunar fyrir áhorfendur. Margar sögur eru sagðar, sem fara í svipaða átt, af mönnum, sem hafa verið hálshögnir, en flestar eru þær byggðar á rangri athugun. Sú saga nær t. d. engri átt, sem sögð er af píslarvotti einum í Bologna á miðöldunum, að hann hafi tekið upp höfuð sitt og borið það spölkorn burtu, en síðar var honum reist kirkja til minningar, þar sem hann lét höf-

uðið niður. Bolurinn getur ekki hugsað eftir að höfuðið er farið. Það var fyrirgefanlegt, þó Jónsvíkingar¹⁾ ímynduðu sér að svo kynni að vera, því hugmyndin um bústað sálarinnar var þá á reiki. En alt fram á 19. öld hefir sú trú haldist, að meðvitund gæti haldist með höfðinu nokkra stund eftir afhöfðun.²⁾ Aristóteles segir frá presti, sem hafði verið myrtur, að höfuð hans hafi sagt: »Carcidas hefir drepit mig«. Maður með því nafni var fundinn, og sannaðist að hann væri morðinginn. Aristóteles trúir þó þessu ekki fremur en frásögu Hómers um höfuð³⁾ Dólons, sem á að hafa haldið áfram að mæla um leið og það fauk af bolnum. Sams konar sögur má finna bæði í Njálu og Laxdælu af Þorkeli Höllusyni og Auðgísl, sem töldu sílfrið, »ok nefndi ellifu höfuðit, er af fauk bolnum«. Þetta eru alt tilhæfulitlar þjóðsögur, tilhæfan aðeins sú, að ef til vill hefir heyrst ymja í bóknum út um barkann, líkt og kemur fyrir að hæns halda áfram garginu, eftir að höfuðið er höggvið, en hjá þeim verður það greinilegra, af því að raddfæri fuglanna liggja neðarlega í barkanum.

Um Mariu Stuart var sagt, að hún hefði hreyft varirnar eftir aftökuna, eins og til að halda áfram bæninni, sem hún var að biðja á undan. Og Charlotte Corday átti að hafa roðnað fyrir það, að böðullinn sýndi henni þá óvirðingu að slá á kinn hennar, eftir að höfuðið var höggvið af. Út af slíkum sögum og út af því að böðull-

¹⁾ Sjá Fornmannasögur 11. bindi, Khöfn 1828, bls. 149—150, þar sem sagt er frá því, þegar Þorkell leira er að höggva Jónsvíkinga:

Þá er þangat leiddur enn 7di ok spyr Þorkell eftir vanda: „Hvern veg er þér um at deyja“? — „Ek hygg allgott til at deyja. en þú högg mik skjótt; ek held á týgilknifi, því at vér höfum átt oft um at ræða Jónsvíkingar, hvárt maðr vissi nokkvat ef hann væri allskjótt höggvinn þá er höfuðit væri af; en þat mun til merkis, at ek mun vísa fram knífinum, ef ek veit nokkut, ella mun hann niður falla“. Þorkell högg þann, ok fauk af höfuðit, en knífrinn féll niður.

²⁾ O. Bloch, Om Døden, Khöfn 1903, bls. 400—413.

³⁾ Illionskviða X. 457 v.

inn Sanson, sem stjórnaði fallöxinni við aftökurnar mörgu á stjórnarbyltingartímanum, þóttist oft hafa séð afhöggvin höfuð láta í ljósi sársaukamerki, fóru ýmsir lækna að rannsaka málið.

Óbótamaðurinn Lacenaire, sem var dæmdur til að hálshöggvast, hét lækni sínum, að hann skyldi gefa honum merki með því að depla augunum, ef hann vissi nokkuð af sér eftir að höfuðið fyki af bolnum. En hann gat ekkert merki gefið, fremur en Jómsvíkingurinn í sögunni.

Eigi að síður er það þó áreiðanlegt, að menn sem eru hálshöggmenn geta líkt og dýrin hreyft bæði andlit og limu. Áreiðanlegar rannsóknir merkra lækna (Holmgren og Loye) hafa sýnt, að þetta kemur fyrir, en þó sjaldnar og minna áberandi enn hjá sumum dýrum. Varir-kunna að hreyfast og augu að ranghvolfast, en þær hreyfingar eru að eins ósjálfráðir vöðvakippir (reflexhreyfingar). Þess konar kippir geta eins komið fyrir í andliti eins og hvervetna í líkamanum, þar sem vöðvar eru. En um meðvitund getur alls ekki verið að tala, því blóðrenslíð frá heilanum verður svo snögt og mikið eftir höggið, að alt æðra sálarlíf hverfur.

En er nú maðurinn dauður, þó af sé höfuðið?

Persónan er horfin (jacet sine nomine truncus), en líf er þó enn í líkamanum. Það sýna hreyfingarnar. Það svífur ekki yfir mann alger dauði alt í einu, nema allur líkaminn eyðileggist á svipstundu. Sum líffæri deyja fyr enn önnur. Það er langt síðan menn tóku eftir því, að hjartað getur slegið og lifir lengur en önnur líffæri (cor ultimum moriens). Franski læknirinn Loye hefir séð það halda áfram hreyfingum heila klukkustund eftir andlátíð. Og þannig er það venjulegt, að líkaminn deyr ekki allur í einu lagi, hver sem dauðaorsökin er, þó mjög sé misjafnt hve líffærin eru lífseig, og fer það eftir ýmsum atvikum.

Nýjustu rannsóknir hafa sýnt, að bæði menn og dýr eru langtum lífseigari en nokkurn hafði áður grunað. Má stundum halda líffærum nýdáiinna manna sem dýra lifandi þó nokkurn tíma. Frumur úr hjartanu og taugafrumur

má geyma svo vikum skiftir. Um þetta hefi eg skrifað í Skírni 1914 (um lífsins elixír og hið lifandi hold), og leyfi mér að vísa til þess.

Þó fer fjarri því að æðri dýrin séu eins lífseig og sum lægri dýr, og mætti nefna mörg dæmi.

Allir þekkja ánamaðkinn. Það má skera hann í nokkra parta og hver bútur getur lifað að minsta kosti nokkurn tíma sem sjálfstæður maður. Sumir segja, að hann skriði saman, en það er bábilja. Hins vegar er mjög auðvelt að græða búтана saman með nokkrum saumspor-um. Sjálfur hefi eg sannfært mig um, að það getur hepnast. Sárin gróa á 2—3 dögum.

Sum lægstu dýrin, eins og skólpdýrin (infusoria), má klippa sundur í marga parta og deyja þau ekki að heldur. Hver partur verður að nýju dýri.

Einkennilegast af öllu er þó, að sum dýr geta, líkt og sumar plöntur, þolað að gaddfrjósa í margra gráða frosti. Þau geta legið þannig mánuðum saman (ef til vill ótakmarkaðan tíma) og þó lifnað við þegar þíða kemur; að eins má þiðnunin ekki vera mjög snögg. Frostið heltekur svo öll líffæri, að engin lífsmörk eru sjáanleg, og í rauninni getur enginn sagt, að hér sé um annað að ræða en algerðan dauða. Sumar sniglategundir, froskar og sumir¹⁾ fiskar, hvað þá heldur ýms lægri dýr, þola að liggja gaddfrosin allan veturinn, en lifna við á vorin með fullum kröftum. Sum lægri dýr, eins og t. d. hjöldýrin, þola þornun á líkan hátt. Í sólskinu og þurki þorna þau inn og verða að skrælpurru hismi, og finnast þá engin lífsmörk með þeim framar. En jafnskjótt og væta kemur, lifna þau við á ný eins og ekkert hefði í skorist.

Hvað er þá orðið af lífinu í þessu dvalaástandi dýranna? Er það ekki alveg horfið í bili? Svo sýnist vera. En er þá ekki hér að ræða um holdsins upprisú?

¹⁾ Einhverstaðar hefi eg lesið, að menn séu farnir að hagnýta sér þetta þannig að frysta t. d. lifandi ála og senda þá frá Danmörku til markaðar á Englandi.

Það er svo að sjá sem frostið og þurkurinn valdi þeim breytingum í efnasamböndum þessara dýralíkama, að lífið sloknar. En hvernig kviknar aftur á skarinu?

Hefir máske þurkurinn og frostið rekið úr sambandi einhver efni eða efnasambönd, sem við ekki þekkjum?

Æðri dýrin með heitu blóði þola ekki að lífshreyfingarnar stöðvist eins algjörlega og nú var sagt um lægri dýrin. En sum þeirra þola þó að missa lífið að nokkru leyti, og geta öðlast það aftur eftir vissan tíma. Allir hafa heyrt um vetrardvala bjarndýrsins og annara dýra. Lífshreyfingarnar verða um tíma svo hægfara, að í fljótu bragði virðast dýrin liggja dauð. En við nánari rannsókn sést, að hér er að eins að ræða um hvarf hins æðra sálarlífs. Meðvitundin er farin, með því að heilafrumurnar eins og liggja í dvala, og hafast ekki að. En dauðamörk eru engin á frumunum; þær eru lifandi, en lífið er mjög hægfara, eins og hefði verið skrúfað niður á lampa lífsins.

Svipaður dvali er ekki óþektur í mannheimum heldur. Til eru menn, bæði á Austurlöndum (fakírar) og hér og hvar annarstaðar, sem geta fallið í dá svo djúpt, að engin lífsmörk finnast nema eftir vandlega athugun. Sálarlífið er horfið, en hið meðvitundarlausar næringarlíf eða frumulíf líkamans heldur áfram, þó hægfara sé, og eftir vissan tíma getur sálarlífið tekið aftur til starfa — vitundarljósið blossað upp á ný.

Frá því í fornöld hafa ýmsir vitrir menn í öllum löndum, hjá öllum þjóðum, gert sér þá hugmynd, að líkaminn sé gæddur lifandi sál andlegs eðlis, sem tæki sér bústað í honum. Og andlegs eðlis mér klerkar kendu að sálin væri.

En þessi andlega sál hefir til skamms tíma yfirgengið vörn skilning. Nú erum við hins vegar farnir að kynnast ýmis konar orku og efnum svo dásamlegs eðlis, að þau nálgast hugtakið andlegt. Greinarmunurinn á efni og anda, efni og orku, er að verða reikandi. Sennilega eru

til mörg efni sem enn eru óþekt, og ef til vill eru sum þeirra enn þá dásamlegri en þau sem okkur nú finnast aðdáunarverðust. Það má vel vera, að til sé sál og sé úr slíkum efnum gjörð.

„Das sieht schon besser aus!
man sieht doch, wo und wie“ —

segir lærisveinninn í »Faust«. —

Áður, fyr töldu menn lífið farið um leið og hið æðra sálarlíf sloknar og maðurinn andast. Nú vitum við að lífið dvelur enn um hrið í líkamanum eftir andlátið. Sálin er viðfaðmari og margbrotnari en menn héldu áður; því áður kölluðu menn að eins æðri hluta lífsheildarinnar sál. En réttast mun að kalla alla lífsheildina sál og segja líf og sál eru eitt. En sálin í þeirri merkingu er ekki eins fljót að fara úr líkamanum og áður var haldið. Það er eins og hún haldi dauðahaldi í líkamann — eða líkaminn í hana. Og stundum er líkast því sem hún fari sárnauðug burtu — »harmandi forlög sín, er hún þarf að skilja við þroskann og æskuna«, eins og Hómer kemst að orði um sál Hektors.

Í öllum löndum, hjá öllum þjóðum, á öllum tímum hafa ýmsir — líka óljúgróðir menn — sagst sjá svipi manna, bæði dáiinna og sofandi. Mannleg augu geta ekki greint annað en það sem er efniskent. Ef svipir sjást, hljóta þeir að vera úr efnum gerðir.

Njáll lét segja sér þrisvar, áður en hann trúði því er honum þótti furðulegt.

Við höfum flestallir heyrt þetta oftar — miklu oftar en þrisvar og margt annað gott því til stuðnings. Og þó — erum við vantrúadir, því Tómasareðlið er ríkt í okkur. En eg segi fyrir mitt leyti eins og Festus forðum við Pál: »Lítið vantar á —?«, og eg er óðfús til frekari fræðslu í þessum efnum. Því það væri sannarlega mikilsvert að vita það með vissu, að við lifum þótt við deyjum.

Steingrímur Matthíasson.

Umhleypingar.

Í ástaleitir langar
eg lagði' í dögum ungur.
Hef þolað þorsta' og hungur
og þrammað veglaus fjöll.
Hef kannað sjafnarklungur
og kvennaveðrin öll.

Þá fyrstu hugði' eg fremsta.
Af fegurð vóðu hylji
mín ást og von og vilji.
Hún veitti alt með rausn.
En brá í él og bylji. —
Eg bað um hlé og lausn.

Eg sat með öðrum svanna
við sjafnarglód og yndi.
Það eðli — ást og lyndi
var eins og hvikult haf,
með ölduelg og vindi,
sem enga hvíld mér gaf.

Mér féll ei hafsins faðmur;
því fór eg enn á stúfa:
Eg kaus mér lognið ljúfa
og lágan, væran hug. —
Fanst molla' og glötun grúfa
yfir geði mínu' og dug.

Eg hrepti svæsna hita
í hrundar blíðulundi.
Við sátum sveitt á fundi
og sint var lítt um hóf. —
Þeim eldum skamt eg undi,
og ástin stóðst ei próf.

Eg bjó við harðar brúnir,
mér bauðst sá stríði haddur;
til eiðs og ásta kvaddur
af ís í strengdum kjól.
Mér ægir enn sá gaddur;
þar átti' eg hvergi skjól.

Í mörgu kærleikskoti
eg kunni gisting illa.
Og hálfleiks vafs er villa,
sem verður engum happ,
né gjöf til friðarfylla.
Og furða' er hvað eg slapp.

Eg bý við þrúðar bjarkir
á blómafrjóum völlum,
við sól í áttum öllum
og ástarhvelin heið. —
Á slysa' og fenjafjöllum
hef fundið rétta leið.

Jakob Thorarensen.

Erasmus frá Rotterdam.

Eftir *Magnús Jónsson*, dócent.

I.

Nú um 400 ára afmæli siðbótarinnar, mætti líta á ýmislegt, sem er henni nátengt, þótt eigi sé það beinlínis talið til hennar. Á hverri stórri sýningu eru margar »hliðarsýningar«, sem gaman er að sjá um leið, og svo er það og um stórbyltingar mannkynssögunnar. Hér skal brugðið upp einni slíkri hliðarsýningu, enda þótt einnig megi skoða hana sem sjálfstæðan viðburð. En það er sá þáttur mannkynssögunnar, sem leikinn var af Erasmoni frá Rotterdam.

Erasmus frá Rotterdam er eins og kóróna eða hátindur þeirrar völdugu andans hreyfingar, sem kölluð er ýmist Renaissance (endurlífgunarstefna) eða Humanismus (mannúðarstefna). Mannkynssagan greinir eigi frá annari stórfenglegri eða glæsilegri hræringu. Náði hún um flest lönd álfunnar og var mjög margvísleg. Upprunnin var hún á Ítalíu á 14. öld. Þegar fram í sótti gerðust ýmsir forkólfar hennar skeytingarlitlir um trúmálin og þóttu eigi hvítir sauðir innan kirkjunnar. En undir lok 15. aldarinnar tekur hún að færast nær kirkjunni. Er höfuðból hennar þá flutt orðið norður yfir Alpafjöll, til germönsku þjóðanna. En þótt húmanistarnir yrðu vinsamlegri í garð kirkjunnar og trúarinnar, þá voru þeir þó alla stund værugjarnir og hæglatir um trúmálið. Hjá þeim var vöknud löngun eftir siðbót, en hún átti að vera í alt öðrum anda en siðbót Lúthers varð. Húmanistarnir, með

Erasmus í broddi fylkingar vildu siðbæta kaþólsku kirkjuna. Meðan þeir héldu að Lúther stefndi og að því marki fylgdu þeir honum nálega sem einn maður. En þegar Lúther gerðist óhlýðinn kirkjunni og klýfur lönd og þjóðir frá henni og stofnar nýja kirkju, þá er flestum húmanistunum nóg boðið.

Andlega lífið síðast á miðöldunum var ákaflega sundurleitt og skamt andstæðanna milli. Þá voru lægri klerkar fávísir og fullir hleypidóma, og betlimunkarnir svæsnir. En þá voru líka hámentaðir menn, sem töluðu latínu og grísku eins og móðurmál sitt. Þá voru umbótaprédikarar svo svæsnir, eins og þeir vildu hrópa eld og brennistein af himnum yfir gerspilta jörðina. Og þá voru páfar og kardinálar svo léttúðugir og skeytingarlausir um alt heilagt, að firn mega þykja. Einhver allra bezti leiðarsteinninn um allar þessar vandrötuðu leiðir er Erasmus frá Rotterdam. Til er ógrynni af bréfum hans um alla hluti og hugmyndir, sem uppi voru. Eru bréf hans alveg óvenju skemtileg, bæði sökum þess hve vel þau lýsa tíðarandanum, og þó eigi síður sökum hins, hve meistaralega þau eru rituð. Á yfirborðinu er oftast sárbeittur kuti háðsins, en undir ræður þungur alvöru- og áhuga-straumurinn. Og þau eru rituð af manni, er stóð á hátindi lærdóms og listfengi þess tíma, og er þá mikið sagt. Tilgangurinn er sá, að gefa hér lítið sýnishorn þessa.

Erasmus er fæddur í Rotterdam árið 1466 eða 1467. Ættarnafn hans var Gerrard, dregið af sögninni gieren = þrá. Seinna meir var svo nafn hans eftir útzkunni sett á latínu, og varð þá Desiderius, og á grísku Erasmus, og það festist við hann. Upphaflega átti hann að verða söngvari, því að hann hafði óvenju skæra barnsrödd. En þegar á átti að herða var hann frábitinn söngnum, og var hann þá setur í skóla. Þar fékk hann í fyrsta sinn blód latinunnar á tunguna, og færði sér það óspart í nyt. Lærði hann Terentius utanbókar og töluvert í Horatiusi. Þá var hann 13 ára, er hann lauk þessu fyrsta skólanámi. En

skömmu síðar dóu foreldrar hans bæði. Þeir voru tveir bræðurnir, Pétur var eldri og Erasmus yngri.

Þeim voru nú settir þrír forráðamenn. Einn þeirra dó skömmu síðar. Annar skeytti þeim ekkert, svo að sá þriðji fékk öll ráðin. Sá var skólameistari og var litið trúðmenni. Hann eyddi fyrst reitum þeirra, og vildi svo losna við allar frekari áhyggjur af þeim, með því að keyra þá í klaustur.

Vér eigum skýra frásögu um þetta alt, í bréfi, sem Erasmus skrifaði löngu seinna á páfagarð. Þá var hann orðinn fulltiða og heimsfrægur maður. Er bréf þetta þrungðið af heift til munkanna fyrir ofbeldi þeirra við unglinga þá, er þeir vilja ná í klaustur. Bræðrunum var þvert um geð að fara í klaustrið, og hófst nú þrautatími fyrir Erasmus, 14 ára gamlan pilt, með alla á móti sér. Voru þeir ýmist undir ógnunum um helvíti og kvalirnar ef þeir þverskölluðust, eða þá fagurgala um himnaríkissælu klaustralífsins. Honum var lofað nógu bókum í klausturinu, og það dró hann fastast. Öll byrðin lenti á Erasmusi, því að Pétur var ístöðulaus og brást þegar verst gegndi. Erasmus segir að hann hafi verið engu betri maður en Júdas frá Kariot, og það hafi verið verst skaðinn, að hann hafi ekki fetað í fótspor Júdasar út í æsar, og hengt sig.

Þannig þraukaði hann í 2 ár, og er það undraverð seigla. Kemur hér þegar fram það, sem ávalt var skýrasta og fegursta einkenni Erasmusar: frelsisást hans. Hún hélt 14 ára gömlum piltinum uppi einum í baráttunni gegn þessu fádæma ofurefli. Og hún hélt honum alla æfi frá því að verða undirlægja og verkfæri annara. Hann neitaði hvað eftir annað hylli og peningum þjóðhöfðingja, til þess að ganga þeim ekki um of á hönd. Hann neitaði embættum kirkjunnar, jafnvel kardinálatign af sömu ástæðum. Og þó kvartaði hann manna mest um fjárþröng og var sölginns í frægð. En frelsið var dýrmætast.

Lútherskir sagnaritarar hafa yfirleitt ekki látið Erasmus njóta sannmælis, af því að hann gat ekki fylgt Lúther.

Hann hefir verið sakaður um tvíveðrunghátt og fals. Satt er það, að hann var lengi á báðum áttum. En hver getur á svipstundu áttað sig á slíkum stórbyltingum? Og hann fór ávalt eftir beztu sannfæringu, en var ófús að taka stökk út í myrkrið. Skifti þeirra Lúthers og Erasmusar hlutu að fara eins og raun varð á, eftir öllu eðli beggja. Erasmus vildi umbætur á kirkjunni, en enga uppreisn. Hann lýsti sjálfur muninum meistaralega, þegar menn báru honum á brýn, að hann hefði orpið því eggi, sem Lúther ungaði út. »Nei«, sagði hann, »í mínu eggi var hæna, en Lúther ungaði út bardaga-hana«. Og í einu af bréfum sínum segir hann: »Hvenær sem eg fæ að sjá Lúther aftur standa á kletti (kapólsku) kirkjunnar, þá skal eg berjast við hans hlið«. Á því valt.

Eftir tveggja ára þauf hopaði Erasmus loks stig af stigi inn í klaustrið. Þyngslin voru of mikil fyrir barnsherðarnar. Hann var í klaustrinu í 6 ár. Alt brást honum. Hann fékk engar bækur. Hann þoldi ekki fösturnar. Hann kvaldist af því að horfa á ruddaskap og ólifnað munkanna.

Hjálpin kom frá biskupinum í Cambray. Hann fékk páfaleyfi til þess að taka Erasmus til sín fyrir ritara. Þó var hann munkur eftir sem áður. Og lausnin úr klaustrinu átti að vera um stundarsakir að eins. En hún varð þó æfilöng.

II.

En nú verðum vér að láta niður falla þráðinn í sögu Erasmusar. Annars yrði þetta heil bók, en ekki stutt grein og sýnishorn. Saga hans er full af umskiftum. Hann var næstum því á sífeldu flakki, bæ úr bæ og land úr landi. Næstum eini leiðarsteinninn eru bréf hans. En framan af æfi hans eru þau ódagsett og flest einnig óárfærð.

Hann komst að mentabrunninum mikla, Parísar-háskóla, og bæði lærði og kendi. Meðal lærisveina hans var Mountjoy lávarður, enskur, sem varð ein mesta hjálpar-

hella Erasmusar í peningasökum. En peningasakirnar voru jafnan mesta áhyggjuefni hans, eins og margra lista- og vísindamanna fyr og síðar. Hann þurfti mikla peninga, en hafði þá oftast litla.

Það var að undirlagi Mountjoys lávarðs, að Erasmus fór fyrstu ferð sína til Englands. Það var árið 1497, og var hann þá þrítugur að aldri. Varð það eitt hið afdrifamesta spor fyrir hann, því að þar komst hann í hóp stórgáfaðra manna, sem voru mjög andlega skyldir honum, svo sem voru þeir Colet, Warham, Thomas More o. fl. Höfðu þeir, og einkum Colet, djúptæk áhrif á Erasmus, og drógu hann nær kirkjunni og guðfræðinni. Þeir voru á hans reki, ungir að aldri, en urðu síðar, svo sem kunnugt er, mestir áhrifamenn og valdabæstir á Englandi. Sagan segir, að þeir More og Erasmus hafi híztað og talast við um stund, án þess að hvor vissi um hinn, hver hann var. Hefir talið vísast komið víða við, og hvorugur komið að tómun kofum hjá hinum, því að eftir nokkra stund segir Erasmus alt í einu: »Þú ert annaðhvort More eða enginn«! Og More svaraði undir eins: »Og þú ert annaðhvort Erasmus eða fjandinn sjálfur«!

Eftir nokkurra ára dvöl á Englandi hélt Erasmus aftur til Parísar, og skömmu síðar gefur hann út bók þá, er fyrst bar nafn hans út um alla álfuna á svipstundu og kom nafni hans á hvers manns varir. »Adagia« hét hún — spakmæli, forn og ný. Og nú hefst starfsemi hans fyrir alvöru, barátta fyrir endurbótum á kirkjunni, eins konar ný-guðfræði þeirra tíma. Beitir hann vopnum sínum sérstaklega í tvær áttir, móti munkafarganinu og háspekingunum og guðfræði þeirra, og er hann alveg þindarlaus í háði sínu um þá. Hann skrifar t. d. um munkana:

»Þegar munkarnir tala um hlýðni, gera þeir það með þeim hætti, að vandlega sé dregin fjöður yfir hlýðnina við guð. Kóngar eiga að hlýða páfanum. Prestar eiga að hlýða biskupunum. Munkarnir ábótunum. Oft ber það nú við, að ábóti er fylliraftur. Hann gefur svo undirtyllum sínum skipun í hlýðnianar nafni. Og um hvað er svo sú skipun? Um siðferði? Nei. Um drykkjuskap-

Nei. Um ósannsögli? Nei, og aftur nei. Hún er um það, að munkar megji ekki læra grísku. Þeim er stranglega bannað að auðga anda sinn. Þeir mega drækka. Þeir mega elta skækjur. Þeir mega ljúga og bölvja eins og hjarta þeirra girnist. Þeir þurfa aldrei að líta í heilaga ritningu. Það gerir ekkert til. Ekkert af þessu kemur í bága við munkaleitið. En ef þeir óhlyðnast boði asnans, sem yfir þá er settur, þá skal gengið næst lífi þeirra.

Í bréfi til eins af lærisveinum sínum, er Grey hét, ræðst hann á háspekingana (scótistana)¹⁾ með sárbeittu háði:

»Svo djúpt er eg sokkinn niður í að lesa Scótus, að sjálfur Stentór gæti ekki vakið mig. »Vakið þig!« segir þú, »fyrst þú ert að skrifa, hlýtur þú að vera vakandi«. Góði vinur! Þá þekkir þú ekki guðfræðis-svefninn. Þú getur skrifað bréf upp úr þeim svefni. Þú getur heimsótt skækjur og drukkið þig fullan upp úr honum. Lengi vel hélt eg, að sagan um Epimenides væri lygasaga. Nú veit eg betur. Epimenides varð hundgamall. Og þegar hann loksins dó, var húðin á honum alþakin leyndardómsfullum rúnum. Sagt er, að hún sé geymd í Parísarborg, í háskólanum, þessari féhírzlu scótista guðfræðinnar, og þar er hún í engu minni hávegum höfð en sibyllubækurnar voru í Rómaborg. Epimenides var scótisti, eða máske var hann Scótus sjálfur. Hann ruddi úr sér svo mikilli dulspeki, að af því að hann var ekki spámaður, þá skildi hann sjálfur ekkert orð í henni. En þegar prófessorarnir stranda í rökleiðslum sínum, þá sækja þeir allan vísdom til húðarinnar. En enginn má líta á húðina fyrri en hann hefir í 15 ár grafist niður í guðfræðina. Ef yngri menn dirfast að gera það, verða þeir slegnir steinblindu.

Einu slani fór Epimenides út að ganga. Því að jafnvel scótistar ganga einstakasinnnum úti. Hann viltist og lenti í helli einum. Þar virtist honum gott næði til heilabrota. Hann settist niður, nagaði á sér neglurnar og velti í huga sér hvílíkleikum, hvaðlegleikum og hringsonnum. Loks fór hann að dotta, og á því gekk í 47 ár. En hepnismaður var Epimenides, að hann skyldi þó vakna á endanum. Flestir guðfræðingar vakna aldrei. En nú var heimurinn orðinn annar, þegar hann vaknaði. Hellismunninn

¹⁾ Svo nefndust þeir háspekingar, er fylgdu kenningum Dáns Scótusar, en hann var einn af nafntogudustu lærifeðrum háspekinnar (d. 1304).

var mosavaxinn. Landslagið, bærinn, göturnar, húsin, fólkið, fötin, tungumálið — allt var breytt. Svo óðfluga breytist þessi heiminur. En allan tímann var hann að dreyma — dreyma scótista guðfræði og ekkert annað. Scótus var Epimenides endurvakinn — og hugsaðu þér nú hann Erasmus, kunningja þinn, sitja yfir ólukkans skræðunum hans, gelspandi, með hnyklaðar brýr og starandi út í bláinn. — Þeir segja, að skáld og listamenn séu útilokaðir frá scótista vísdóminum. Menn verða fyrst að gleyma öllu öðru. Ódásindrykk fegurðarinnar verða þeir að kasta upp. Eg er nú að reyna það. Eg tala ljóta latínu. Eg forðast smellnar setningar. Aldrei geri eg að gamni mínu. Og eg held líka, að mér sé að miða í áttina. Smátt og smátt kemst Erasmus í þeirra hóp. Og þegar þú sér mig næst, verður hann gamli kunningi þinn ekki lengur til. Þú mátt ekki misskilja mig. Eg ber virðingu fyrir guðfræðinni sjálfri. Eg á að eins við þennan óskapnað, sem menn kalla guðfræði á vorum dögum, og guðfræðinganna, sem hafa þá mygluðustu hausa, sljóustu skynsemi, óskaplegustu kenningar, ruddalegustu framkomu, saurugasta lífernir, skammarlegasta munn-söfnuð og mórauðustu samvizkur allra þeirra manna, sem eg hefi hitt á þessari jörð. «

Svona lét Erasmus svipuna dynja. Og það var ekki furða þótt einhver emjaði. En þó var þetta byrjunin að eins.

Frh.

Ritfregnir.

Island. Strejflys over land og Folk. Udgivet af Dansk Islandsk Samfund. Med 27 Illustrationer. Kbh. 1917.

Bókin ber nafn með rentu. Hún er leiftur yfir land og þjóð. Byrjar með fallegu kveðjukvæði eftir Gunnar Gunnarsson — leifturmyndir af landinu vetur, vor og sumar. Þá koma greinar eftir Áge Meyer Benedictsén: Inngangur. Íslenzkir lífs-hættir: 1. Samgöngur. 2. Bændur og sveitir. 3. Framfarir í at-vinnuvegum. 4. Fiskivelðar. 5. Verzlun og bæjalíf. Viðauki. — Áge Meyer Benedictsén er snjall rithöfundur. Það er furðumikill fróðleikur um land og þjóð, sem hér er saman kominn á einum 70 blaðsíðum — um náttúru landsins, fegurð þess á lofti, láði og legi, en einnig um ógnir þess og erfiðleika, um kjör þau, er mótað hafa þjóðina að fornu og nýju, um ástæðurnar til misbrestanna á sam-búð Íslendinga og Dana, um lifnaðarhætti þjóðarinnar og atvinnu á landi og sjó, um framfarir síðustu áratuga á ýmsum sviðum. — Höf. er sannfróður. Hann talar ekki út í bláinn. Hann hefir hag-skýrslurnar á takteinum til að sanna mál sitt, og hann kann að gera tölurnar talandi og skemtilegar. Alt er séð með glöggu gests-auga hins víðförla manns, þess er þá borgir og þekti skaplyndi margra manna. Hann kann að leiða lesandann þangað, sem útsýni er, og bregða þar leiftri yfir það, sem hann ætlar að sýna. Hann kann að rekja í stuttu máli þræði fortíðarinnar inn í nútíðina, án þess að þreyta lesandann með nöfnum, sem hann þekkir ekki. Al-staðar andar bróðurhug að landi og þjóð. Og frásögnin er svo létt-stílg og skemtileg, að hún dregur lesandann ósjálfrátt með sér. Tilgangur höf. er sá að fræða lands sína um land vort og þjóð og eyða þannig þeim misskilningi, sem verstur er þrándur í Götu góðrar samvinnu Dana og Íslendinga. Er það ekki hans sök, ef sá tilgangur næst ekki. Hygg eg, að hver Íslendingur hefði ánægju

og gagn af að lesa þessar greinar, svo margt er þar skarplega athugað og vel sagt.

Þá eru tvær greinar eftir Arne Möller prest. Hann hefir áður skrifað margt vel um nýjustu bókmentir vorar í dönsk tímarit, einkum um það sem birzt hefir á dönsku. — Fyrri greinin heitir »Sang og Sind« — ljóð og lund. Reynir höf. þar í fám dráttum að sýna, hvernig skaplyndi þjóðar vorrar speglist í ljóðum hennar — hvernig þjóðernistilfinningin dafnaði af minningunni um forna frægð og andófi við aðra þjóð, unz hún hafði náð fullu vöfðmi í þjóðhátíðarljóðum Matthíasar; hvernig skáld vor hafa litið á land sitt, með dæmum úr ljóðum Bjarna, Jónasar, Gröndals, Matthíasar og Jónasar Guðlaugssonar; hvernig Sigrúnarljóð eru einstök meðal ástarkvæða og hvernig djúpsæ mannþekking, skarpur skilningur á séreðli annara manna komi fram í beztu erfiljóðum vorum, fegurst í kvæði Bjarna um Odd Hjaltalín. Alt eru þetta að eins leiftur yfir mikið efni, en góð það sem þau ná.

Hin greinin heitir »Kristenliv og Folkelighed« — alþýðlegur kristindómur. Er þar fyrst allangt mál um tvo höfuðskörunga kirkju vorrar á seinni öldum, Jón biskup Vídalín og Hallgrím Pétursson. Hefir naumast verið jafnvel ritað um þá af Íslendingum sjálfum, og er oss það ekki vansalaust. Höf. telur Vídalínspostillu ekki að eins fremsta í þeirri röð í íslenskum bókmentum, heldur og einhverja hina einkennilegustu bók þeirrar tegundar á Norðurlöndum. Þykir honum meistara Jóni bregða í sett spámanna Ísraels, ber hann saman við Jesper Brochmand með Dönum og segir, að munurinn á þeim sé þjóðernismunur Dana og Íslendinga. Aftur þykir honum meistari Jón skyldari Kíngó, hvort sem keltneskt blóð veldur eða ekki. Dálst hann mjög að mannþekkingu hans, er hann telur íslenskt einkenni.

Þó er aðdáun hans enn meiri fyrir Hallgrími: »Hann er röksamur sem sögurnar, djúpúðugur sem Edda, raunvís sem Hávamál og þýður sem þjóðvísa. Og það er þessi fjórhljómur, er ómar svo blítt í sálum hans til hjartna landa hans«. Vel er það og til fundið, er höf. minnir á dauða Þormóðar Kolbrúnarskálds, er hann talar um það, hvernig Hallgrímur býður dauðann velkominn í sálminum »Alt eins og blomstrið eina«. — Í síðari hluta greinar siunar talar höf. svo um trúarlíf Íslendinga nú á dögum, um guðfræðiskensluna við háskólann, kjör íslenskra presta, nýjustu trúarhreyfingarnar og sálmakveðskapinn.

Próf. Finnur Jónsson skrifar um andleg sambönd Íslendinga.

við önnur lönd og þó aðallega við Danmörku á síðari öldum. Gefur hann nokkurt yfirlit yfir vísinda- og skáldskaparstörf þeirra Íslendinga, er á síðustu öldum stunduðu nám og vísindi í Danmörku eða veittu menningarstraumum þaðan heim til Íslands, svo og þýðingar erlendra rita og ljóða. Að endingu drepur hann á áhrif fornbókmenta vorra á danskar bókmentir. Við eina setningu hins heiðraða höf. langar mig til að gera litla athugasemd. Hann segir um þýðingar Jóns Þorlákssonar á Kopstocks Messías og Miltons Paradísarmissi, að þær séu nú alveg ólesandi (»og er nu ganske ulæselige«). Má vera, að það sé satt um Klopstock. Hann hefi eg ekki reynt að lesa síðan eg var barn, og þótti þá þurmeti. En um Paradísarmissi er þetta áreiðanlega ofmælt.

Eg held, að þeir sem tala um endurreisn íslenzkrar tungu, ættu að byrja á Paradísarmissi. Málið á þeirri þýðingu er víðast svo yndislega frjótt, máttugt og þýtt, að eg kemst við í hvert skifti, er eg tek þá bók. Hér er eitt erindi af handahófi um Adam forföður vorn:

Honum hér fyrri	lækjar buldr,
var harðla nóg	árhýru blæblak
efni blundbrygða,	ok á blómkvisti
ef í blaði þaut,	fagrhljóða fugl,
ok lágt látandi	er fyrstr gól.

Mikið má vera, ef Sveinbjörn Egilsson og snillingarnir sem af honum lærðu hafa ekki fundið, að þjóðskáldið Jón Þorláksson — »hafði engils tungu« — eins og Pétur prófastur kvað — og lært af honum. Það væri vel rannsóknarvert, hvaða áhrif málið á Paradísarmissi hafði á þá, sem á eftir komu.

Bókin endar á litilli og ljúfri draumsögu eftir Jóhann Sigurjónsson. Hún heitir »Tvær systur«. Það eru Ísland og Danmörk, er birtast honum í líki tveggja systra.

Eftir er að geta þess, að bókina prýða 27 ágætlega vand-
aðar og vel valdar myndir af íslenzkri náttúru, mönnum og mann-
virkjum.

Það er öll ástæða fyrir oss Íslendinga að fagna starfsemi þess félags, er byrjar með því að gefa út þessa bók, sem er stórpakka-
verð, og heldur síðan áfram eins og getið verður hér á eftir, en
gerir auk þess margt annað; er miðar að góðu samlyndi bræðra-
þjóðanna, Dana og Íslendinga.

G. F.

Alfred J. Rávad: Íslenzk húsgerðarlist, Islandsk Arkitektúr. Kbh. 1918. Dansk-islandsk Samfunds Smaskrifter Nr. 1.

Höfundur bæklinga þessa er danskur húsgerðarfræðingur, sem lengi hefir dvalið í Ameríku og verið hér hálf t eða heilt ár hjá Thor Jensen útgerðarmanni, bróður sínum. Hann er einkennilegur maður, vel að sér í sinni list, margfróður og mikill hugsjónamaður, mjer liggur við að segja, hugmyndaauðugt skáld. Hann hefir ritað margt um Ísland, Færeyjar, Grænland og Vesturheimseyjarnar dönsku, sem eitt sinn voru, hélt því að vísu fastlega fram, að Danmörk ætti að halda sem fastast í þessi lönd, en jafnframt sýna þeim allan sóma, því þau væru þýðingarmikil framtíðarlönd, sem mættu verða Danmörku til mikils sóma og stuðnings. Eru skoðanir hans ólíkar flestra annara, einkennilega frjálslyndar og víðsýnar í mörgum greinum, þó sumstaðar sýnist mér fremur tala skáld en stjórnmálamaður. Má nefna sem dæmi, að hann hefir gert uppdrátt að höfuðstað á Grænlandi, sem vel mætti sæma myndarlegu kóngsríki. Í Reykjavík telur hann að götubreiddin megi ekki vera minni í aðalgötum en 20—30 m. og að Öskjuhlíð væri hæfileg þungamiðja fyrir bæinn, sem vaxi smámsaman suður yfir allan Fossvog og alt land er nær liggur. Uppi á Öskjuhlíðarhæðinni vill hann að risi upp stórar og sterklegar skrautbyggingar, sem gnæfi eins og nokkurskonar Akropolis yfir framtíðarinnar stóra auðuga bæ, höfuðstað Íslands, sem verði í tölu fegurstu borganna í álfunni. Það er enginn kótungabragur á slíkum hugsjónum, enginn snefill af gömlu dönsku lítilsvirðingunni á landi voru og þjóð. Er það undarlegt tímanna tákn, að stórtækasti fjármálamaður vor og sá maðurinn, sem hugsar framtíð landsins stærsta og glæsilegasta, skuli báðir vera Danir að ætt og uppruna og bræður í tilbót.

Eg hefi sjaldan hlakkað meira til að sjá bók en þetta litla kver. Jeg hafði heyrt þess getið. Það var um vandasamt viðfangsefni, sem eg og aðrir hafa oft rætt um, nefnilega að hve miklu leyti væri auðið og hyggilegt, að halda gamla þjóðlega bæjastílnum á nýju húsunum, sem vér byggjum. Allir finna sárt til þess, að nýju steinhúsin standa flest langt að baki gömlu bæjanna frá listarinnar sjónarmiði, ern aðfluttur varningur, sem ekki á hér alls-kostar við, hafa ekki samskonar rætur í landi voru og þjóðlífi og gömlu bæirnir, sem sprotnir voru upp úr íslenzka jarðveginum og margra alda reynslu. Jeg gat trúað höfundinum til þess flestum öðrum framar, að ryðja hér nýja braut.

Kverið var mér hálfgerð vonbrigði að því leyti, að það var svo

lítið, — einar 8 bls. íslenzki textinn, — og uppdrættina hafði eg séð áður. Og þó er öllu málinu hreyft og glöggur tillögur gerðar, sýndur uppdráttur af stóru íbúðarhúsi með bæjarstíl og lítilli sveitakirkju. Vissulega er hér mikið sagt í fám orðum þrátt fyrir allt.

Höfundurinn heldur því hiklaust fram, að »til sé á Íslandi for-
tíðarfræ, er þjóðleg byggingarlist geti gróið upp af. Bæði í grunn-
mynd og hinu ytra sniði torfkirkjunnar og hins gamla íslenzka
bæjar eru fyrirmyndir, gotnesks uppruna og eðlis, er sem best má
nota við ætlunarverk og byggingar í framtíðinni. Hinir þykku
traustu hliðveggir og sundurgreindu gaflar með hvössum þökum
eru ágætur grundvöllur til að reisa á fyrirmyndir til bygginga með
þjóðlegu sniði og í samræmi við landslagið«. . . . »En það lítur
út sem trúin á, að þetta sé mögulegt, sé ekki vakin«.

Vissulega er þetta hverju orði sannara. Fræin eru til, sem
þjóðleg byggingarlist gæti spróttið af, og engu lakari en gömlu
byggingarnar norsku, sem slyngir húsagerðarfræðingar hafa yngt svo
glæsilega upp á Holmenkollen. Vér höfum séð þetta — en fulla
trú á, að mögulegt væri, eða öllu heldur hyggilegt, að endurreisa
gamla bæjastílinn, hafa fáir haft.

Uppdrættir höfundarins sýna best hvað fyrir honum vakir. Eg
geri ráð fyrir, að flestir lesendur Skírnis hafi séð þá. Bærinn
(Ráðsmannsbúð) er stóreflishús til þess að gera, á að glzka 30 × 10
m. (mælikvarði ekki prentaður). Állir veggir eru úr steini nema
mestur hluti framhliðar. Þar eru þrjú falleg háreist bæjarþil úr
timbri, en greind sundur með breiðum múræmum, sem svara til
þykku bæjarhúsaveggjanna. Er miðhluta hússins með miðpilinu
skotið lítið eitt fram.¹⁾ Frá þiljunum ganga svo þök aftur að að-
alpakinu, sem liggur eftir endilöngu húsi, og lítur út eins og stórt
baðstofupak að baki framþýsanna, eða þilþapakanna, sem ekki eru
annað en »kvistir« á einu stóru húsi. Byggingin ber algerlega
sama svlp og fallegur bær, og minnir þó á enskar nútízkubygging-
ar í sveitum. Mér þykir hún fögur og viðkunnanleg á að sjá og
bera það með sér, að hún er gerð af smekkvísum manni, sem vel er
að sér í sinni list. Mér skilst þó, að aðalpakið sé mun lægra en
þilþökin og efast um að það færi jafnvel og ef það væri jafnhátt.
Uppdrátturinn er áreiðanlega umhugsunarefni fyrir hvern mann,
sem vill endurreisa gamla þjóðlega bæjastílinn.

En þó ekkert væri nema gott að segja um útlit hússins og
svip þess, þá er það engan veginn víst, að oss henti alls kostar að

¹⁾ Þetta virðist mér koma hálfgerð í bága við bæjasniðið.

byggja á svipaðan hátt í sveitum. Hér er um ýms grundvallaratíði að ræða, sem eg skal stuttlega drepa á.

Eg vil fyrst nefna stærðina. Á meðal-sveitahelmili hér eru 6—7 (6,47) heimilismenn. Hve stórt þarf íbúðarhús að vera fyrir þetta fólk. Minstu sveitahúsin eru $7,5 \times 7,5$ m að meðaltali, ekki stærri en $7\frac{1}{2} \times$ tæpl. 9 m og má telja þetta sæmil. húsrúm fyrir ekki fleiri menn (húsin venjul. með kjallara og portbygð). Þiljaröðin kemst ekki fyrir á svo litlum húsum, og efnin banna að byggja stærra en þörfin krefur, enda óhyggilegt frá hagfræðissjónarmiði.

Þá er annað meginatriði: Grundvöllur allrar húsa-gerðar fyrir alþýðu manna er ekki listin, svipur hússins og útlit, heldur verkfræðiskunnátta (teknik). Vér þurfum fyrst og fremst að geta valið hentugustu byggingaefni á hverjum stað, byggt úr þeim hlýja, trausta, vatnshelda veggi, góð gólf og góð þök, helzt alt eldtraust. Alt þarf þetta að vera endingargott og — last not least — svo ódýrt sem auðið er, því fæstir hafa efni aflögum. Undantekningar eru að eins efna-mennirnir.

Gömlu bæirnir eru augljóst dæmi þessa. Þeir spruttu upp á eymdaröldum meðan ekki var kostur á öðru byggingarefni en torfi, timbri af mjög skornum skammti, sem þó varð alt að vera bagga-tækt, litlu sem engu járn. Af þessum vanefnum bygðu menn bæina, gerðu mörg hús og smá (skilrúmsveggir úr torfi), sem svör-uðu til baggataeku spýtnanna, og þökin brött, til þess að verjast lekanum, því ekki var næfrunum til að dreifa, sem Norðmenn lögðu undir torfið. Rísið og gaflarnir fengu þannig sjálfkrafa einskonar gotneskt snið. Á þykku torfveggina var oft erfitt að setja glugga. Þeir báru illa birtu og djúpa gluggatóftin fyltist af snjó á vetrum. Þeir voru þá settir á þekjuna og gaflar gerðir úr timbri fyrir þá. Þannig urðu þilin að líkindum til. Það var byggingarefnið, sem mótaði bæina og gaf þeim alt snið auk veðráttu landsins. Reynslan kendi mönnum að fara hyggilega með það eftir öllum ástæðum, og hér fór sem oftast, að hyggileg og náttúrleg hagnýting byggingaefnisins skapaði eðlilegt og snoturt útlit. Kuldinn og eldsneytisleysið réði innra skipulaginu, myndaði húsprengrin og setti að lokum 2 menn í hverja sæng í einu íveru- og svefnherbergi, baðstofunni.

Hálfgerð skrálingjamenning var þetta alt, en þó góð og gild menning eftir því sem allar ástæður voru.

Svo breytast allar ástæður á skömmum tíma. Verzlunin flytur nægan við, járn, sement o. fl. Vér lærum að kljúfa grjót og höggva það til, steypa steinsteypu og nota járn í hana, elgum nú kost á alt öðrum byggingarefnum, gersamlega ólíkum torfinu.

Afleiðing þessa er í mínum augum sú, að hvað sem öllu öðru líður þurfum vér nú að læra að hagnýta þessi nýju efni og nýju þekkingu sem best, finna hversu vér getum best og ódýrast bygt úr þeim traust, hlý, hellaðem, endingargóð og eldtraust hús. Ef bæjastíllinn getur samrýmt öllu þessu, þá er að endurreisa hann í nýrri og betri mynd, ef ekki, þá á að skoða hann sem úreldan forngrip eða nota hann að eins þar sem bygt er úr torfi, svo framarlega sem efnamenn nota hann ekki til skrauts.

En hvernig samrýmist þá gamli bæjastíllinn og nýju byggingaefnin? Vér sjáum það á uppdrætti Ráðs.

Engum getur dulist það, að margbrotni stóri þakflöturinn með bustunum og sundunum er stærri, dýrari og varasamari (leki) en óbrottnara þak, heldur ekki, að húsfúmið verður miklu minna á þennan hátt en með óbrottnara lagi.

Bæjalagið er þá dýrara, rúmminna, kaldara og lekahættara en óbrottnari húsgerð.

Ókostir eru þetta alt, þó minna vegi þeir fyrir efnamenn. Það er líka mikið gefandi fyrir útletið.

Annað atriði er framhlið hússins og þilin. Hliðin er að mestu úr tré, að nokkru úr steini.

Ef það er óhyggilegt af oss að byggja úr timbri, og svo mun víðast vera á þessu skóglausu landi, þá eru þessi stóru þil athugasverð. Þau verða bæði eldfim og endingarlítill.

Þá er ekki laust við, að erfitt sé að búa vel um gættirnar, þar sem timbur og stein mætist. Vér höfum langa reynslu í því efni. Ef til vill gæti það komið til tals, að gera þilin úr sléttaðri steinsteypu og er þó hætt við, að þau mistu þá mikið af sínum eðlilega, fallega svip, yrðu óeðlileg stæling.

Þá eru múrræmurnar milli þiljanna og til þeggja enda, sem svara til torfveggjanna.

Mér virðist það athugasvert, að þær líkja eftir gömlu veggjunum án þess að vera milliveggir. Útletið eitt skapar þær en engin innri nauðsyn. Þessir þykku milliveggir, sem engir milli-vegir eru, verða því hálfgerð, óeðlileg stæling á gömlu bæjunum.

Að öllu athuguðu get eg því ekki sannfærst um, að hyggilegt

væri, að taka upp í gamla bæjastílinn á nýju steinhúsunum. Það skyldi þá vera á stærstu jörðunum, sem efnamenn eiga, er ekki þurfa að horfa í skilðinginn. Öðru máli gegnir um torfbyggingar. Þar á hann betur við, þó margt hafi breyzt, einnig þar.

Því miður verðum vér líklega að fara þá torsóttu, erfiðu leið, að finna nýtt eðlilegt húsasnið, sem svari að öllu vel til byggingaefnanna nýju.

Og listinni verður hvorki ofaukið fyrir því né heunl gert lægra undir höfði. Henni er að eins fengið erfiðara verkefni. En sú töfrakona er hún, að allt getur hún gert fagurt, hvort sem það er fátæklegt eða ríkmannlegt, hvort sem það er marmari eða »járnbeton«. Og hún getur gert fleira þjóðlegt en bæjastílinn!

Líklega eru sum fegurðarfræin, sem húsagerðarlist vor sprettur upp af, falin í smekklegustu járnbetonhúsum nútímans.

Enn eru þau að vísu í algerðri bernsku, og byggingarlistin hefir enn ekki fengið fösttök á þessu kynlega, nýja byggingaefni. Þó gægist út sérlega einkennileg og sviphrein fegurð á sumum söllum og loftum í járnbetonbyggingunum. Það eru ekki lengur sundurgreindir stöðugir steinar, sem tala sínu gamla, fagra máli. Samfeld og samskeytalaus steinstorkan eltir á takalínur, vefur sig utan um óslitandi járníð, lipur, léttfær og stælt eins og glettið nútíðarbarn, sem vildi stríða öllum góðum og gömlum byggingafræðingum og raska grafarró Ruskins sáluga.

Eg veit, að hinn háttv. höf. muni svara því, að húsin hér verði of smávaxin.

Annar uppdráttur er af lítilli sveitakirkju. Mér sýnist hann bæði fagur og viðkunnanlegur, alt skipulag auk þess hentugt. Kirkjan er turnlaus, en í turnsins stað kemur fallegur klukkustöpuull yfir sáluhliði, beint fram undan kyrkjudyrum. Er það álit höf., að turn með spíru, á svo lítilli kirkju, geti ekki samrýmst við kröfur listarinnar. Þetta mun rétt vera. Kirkjan er í torfkirkjusniði, með þykkjum veggjum úr grjóti og timburpiljum á göflum. Eg held, að hér sé að ræða um góða fyrirmynd, sem geti komið mönnum að bezta gagni. Og ódýr er slík kirkja. Væri eg biskup landsins, fengi eg fullkominn uppdrátt hjá höfundinum og greiddi fyrir því, að slíkar kirkjur yrði bygðar í smáum sveitasóknum.

Eg vil að eins leyfa mér, að gera tvær athugasemdir. Kirkjugangurinn er einkonar skúti¹⁾, meðfram hliðinni, en rennur saman við aðalhúsið, sem er háreistara. Fer þetta vel að innan?

¹⁾ Skute er fornt nafn í Noregi á „skúr“, auðsjáanlega sama orðið og skúti.

Ofn er við annan vegg kirkjunnar og reykháfurinn inni í veggnum. Verður ekki erfitt að fá góðan súg í þennan reykháf, og fer hann vel að utan?

Höf. endar rit sitt á þessum orðum: »Þær teikningar, sem hér eru sýndar, eru svo að segja ekki annað en fyrsta tilraun, og eru sprotnar af þeirri virðingu og ást, sem hið fagra, skrudgræna fjallaland þar norðurfrá vekur hjá hverjum dönskum manni, sem nokkuð þekkir til hins andlega lífs þess, svo sem það reyndist að fornu og sýnir sig enn í dag. Vonandi er, að aðrir og yngri sálar-kraftar í landinu sjálfu haldi áfram þessari stefnu, bjargi því sem gott er og gamalt frá glötun, og auki nýrri menning í andlega þróun Íslands«.

Eg efast ekki um, að þessi fögru, vingjarnlegu orð verði að áhrínsorðum. Það fara þar fleiri á eftir, sem höf. hefir svo drengilega riðið á vaðið. Hann hefir gefið ágæta fyrirmynd af sveitakirkju. Hann á miklar þakkir skilið fyrir bókina og félagið fyrir að hafa gefið hana út.

G. H.

Jón Helgason: Fra Íslands Dæmringstid. — Dansk Isl. Samfunds Smaaskifter, nr. 2; 120 bls. 8vo.

Það hefir atvikast svo, og til þess liggja áu efa fullgildar ástæður, að áhugi Íslenzkra fræðimanna og sagnameistara hefir beinzt nálega einvörðungu að einu tímabili í sögu landsins, söguöldinni eða gullöld landsins. Þar hafa fjöldamargir sigrar verið unnir hin síðari árin, og jarðvegurinn er tekinn að plægjast þar sæmilega, þó að margt sé vissulega óunnið enn. En afleiðing þess hefir verið sú, að síðari aldir Íslandssögunnar hafa orðið mjög útundan. Má næstum því segja, að yfir þeim hafi hvílt rökkurmóða hálfdimmunnar, og fyrst hafi verið sköpuð skilyrði til frekari rannsóknar jafnótt og dr. Jón Þorkelsson ekur fram hinu þunga hlasi fornbréfasafnsins fet fyrir fet.

Um sögu 16. og 17. aldar mætti með nokkrum sanni segja, að ótililegt sé, að Íslendinga fysi lítt að grafast niður í þá hörmunga tölu, þegar útlend áþján og innlent dádleysi og óáran sýnast taka höndum saman og þjóðin sökkur dýpt í volæði og eymd. Og þó þarf að lesa þetta sem annað. En þegar 18. öldin kemur, má með sanni segja, að upprenni eitt segursta tímabil sögu landsins. Ekki er það svo að skilja, að þá sé alt í blóma og skarti vafið, heldur er það af því, að þá er tekið að berjast gegn bölinu. Því hefir verið líkt við aftureldingu til nýs dags. »Dagrenning«.

heittir ein bók um það tímabil. Og nú kemur hér önnur, sem heitir »Fra Íslands Dæmringstíð«, og merkir það nálega hið sama. En eg vil líkja því við vortíma. Það er eitthvað svo mikið af rosalegum vorblæ yfir öllu. Veturinn ríkir enn. En það er hafin óttaleg uppreisn gegn veldi hans, drepanði uppreisn. Klakinn verður að froðu og snjórinna að mauki. Það er þetta, sem gamla fólkið kallaði »vermistelninn« í jörðinni, sem eyðileggur veldi vetrarins, þegar vorið kemur, þó að alt sýnist vera vetrarríki á yfirborðinu. Og svo sendir forsjónin vorboðana. Guð einn veit hvaðan þeir koma. En þeir koma eitthvað sunnan úr uppsprettu sumarsins hver eftir annan, og enginn ræður við. Þeir koma af því, að »fylling tímans« er komin.

Um þessa vortíma og þessa vorboða er bókin, sem hér er um að ræða.

Bók þessi er 4 fyrirlestrar, sem höfundur hennar, dr. Jón Helgason, biskup Íslands, hélt sumarið 1916. Hann var þá prófessor hér við háskólann, og þá boð frá sambandi danskra lýðháskóla og landbúnaðarskóla um að koma til Danmerkur og halda þar fyrirlestra um íslenzkt efni á námskeiði einu miklu í Dalum. Valdi hann sér þá þetta hugðnæma efni. Og nú hefir Dansk-Íslensk Samfund gefið fyrirlestrana út í bókarformi.

Höfundur grípur fyrst niður á miðri 18. öldinni og lýsir með fáum orðum, en mjög skarplega eymdarhag þjóðarinnar þá og rekur tildrög þessa hörmungarástands. Og svo snýr hann sér að fyrsta vorboðanum. Eggert Ólafssyni, hrópandi röddinni á eyðimörkinni. Nálega engin mynd finst mér standa í öllu meiri geisla»gloríu« en mynd Eggerts Ólafssonar, og höf. hefir meistaralega tekist að draga þessa mynd upp. Ef til vill er það fegursti og snjallasti kafli bókarrinnar. Það er einhver æfintýra móða yfir allri sögu Eggerts, sem höfundinum hefir tekist að ná, og það er ekki nema eins og fult samræmi í því, að hann skyldi hverfa af sjónarsviðinu, ekki eiginlega deyja, heldur bara hverfa, svo að menn ætluðu lengi vel ekki að trúa því, að hann væri farinn og kæmi ekki aftur. Þar með endar 1. kafli.

Svo er næsti kafli um Skúla landfógeta. Hann er Jökulsáin, sem boðar vorið með því að spyrna fram heljarfjöllum af fönnum og klaka og þeyta öllu til sjávar. Þessi kafli er nálega allur um viðskifti hans við einokunarverzlunina. En það er eins og efnið verði ofmikið í einn fyrirlestur, svo að þungi persónunnar finnist ekki fyllilega. Naumast verður það gefið höfundinum að sök. En

Þó finst mér, að hann hefði átt að minnast eitthvað á Jón Eiríksson í sambandi við það, hve konungur og stjórnarráð voru hlynt Íslandsmálum á dögum Skúla, því að það mundi óhætt og hefði ekki eytt miklu plássi.

Þá kemur 3. kafllinn um »upplýsingar«stefnuna hér á landi, sérstaklega um Magnús Stephensen. Þennan kaflann hlýtur að vera erfiðast að rita af þessu tímabili sögunnar. Stefna þessi er svo undarlega andsælis eða andstreymis við alla viðreisnarhreyfinguna hér um þessar mundir. Því verður naumast neitað, að undirstraumurinn í allri viðreisnarbaráttunni er þjóðernislegs eðlis, eins og höf. tekur réttlæga fram. Þjóðernistilfinningin er vorið í loftinu á þessum tíma. En svo kemur þessi stefna, köld og andlaus og án snefils af skilningi á þjóðerniskendinni eða virðingu fyrir fornum bautasteinum þjóðarinnar. En hér hefir höfundinum þó tekist aðdánlega vel. Hann segir stefnunni til syndanna, en með allri þeirri samúð og skilningi á góðum tilgangi hennar og viðurkenningu á starfspreki hennar og áhuga, sem rétt er.

Svo kemur loks 4. kafllinn: Baldvin Einarsson, Bjarni Thorar-ensen og Fjölnismenn. Þar er vorið komið óviðráðanlegt: hver lækur beljar fram og úr hverri þúfu angar. Þessi kafli er skrifaður af leikandi fjöri og lífi. Og hér kemur fram það, sem rétt er: Tómas Sæmundsson er þungamiðjan í sögu þessa tíma. Hamingjan má vita, hvaða gagn hefði orðið að hinum samverkamönnunum, þó að þeir væru listfengir, ef hann hefði ekki verið. Þetta hefir höfundur eðlilega átt þægilegra með að finna en aðrir, þegar hann ritar um afa sinn. En hann gætir sín þó undravel fyrir því, að láta elgi samúð sína með honum hleypa sér í neinar gönur eða gífurlyði.

Eg hlýt að endingu að lúka hinu mesta lofsyrði á þessa litlu bók. Þó að betur þurfi vitanlega að gera sögu þessa tímabils skil, þá kemur það ekki þessu máli við; því að nærri má geta, að ekki er unt, að bregða smásjá nákvæmrar rannsóknar á hvert atriði í svo stuttu máli. Hér verður tilgangurinn sá einn, að svífa með lesandann yfir láð og lög og sýna honum höfuðdrættina og það, hve mikil fegurð getur í þeim einum legið. Þetta finst mér höf. hafa tekist ágætlega. Stílsmáttinn er fjörugur og viðfeldinn. Að svo miklu leyti, sem eg hefi vlt á dönsku máli, fæ eg ekki annað séð en að málið sé óvenju auðugt og mjúkt.

Bókin er prentuð í Danmörku, og hefir síra Arne Möller séð um prentunina. Frágangur allur er þrýðilegur, eins og á öðrum

ritum, sem Dansk Isl. Samf. hefir gefið út. Nokkrar prentvillur hafa slæðst inn, en meinlausar eru þær. Þó hefir höf. sjálfur bent mér á nokkrar missagnir, sem læðst hafa inn við prentunina, og er best að nota tækifærið að leiðrétta þær. Á bls. 15 stendur: »Regeringens Ulykker« en á að vera »Befolkningens Ulykker«. Á bls. 77 er tilvítun »at rette Smed for Bager« en á að vera »for Smed at rette Bager«, og á bls. 79 er »Ændringen«, en á að vera »Ordningen«, og litlu neðar er »fjorten Dage« í staðinn fyrir »fjorten Aar«.

Bókin endar þar, sem Jón Sigurðsson gengur fram á völinn. Og svo er um fleiri bækur. Hvenær áréðir einhver að byrja söguna þar?

Hafi höfundur og útgefendur þakkir fyrir bókina.

Magnús Jónsson.

Freyjukettir og Freyjufár eftir Steingrím Matthíasson héraðslækni á Akureyri. Rvík 1917. Guðm. Gamalielsson.

Bæklingur þessi þarf hvorki minna meðmæla né annara til þess að renna út. Flesta fýsir að lesa um ástir karla og kvenna og auk þess má heita, að alt það, sem Stgr. læknir ritar, sé skemtilegt aflestrar. Þó er þetta eigi eingöngu skemtibók. Hún er rituð til þess að vekja athygli almennings á alvarlegri landplágu, sem nú vofir yfir öllum landslýð, samræðissjúkdómunum, sem vér höfum til skamms tíma verið lausir við, en nú eru orðnir innlendir kvillar. Þeir gera nú að staðaldri vart við sig í kaптúnunum, hafa flúzt þangað frá útlöndum eins og rotturnar og eru nú á leiðinni upp í sveitir vorar. 300—400 sjúkl. leita nú árlega til ísl. lækna með þessa kvilla. Að vísu er fjöldi þeirra útlendingar, en það stafar einnig hættu af þeim. Víst er um það, að hér er alvarleg hættu á ferðum fyrir alt heilbrigðisástand landsmanna og sé alt látið hugunarlaust eiga sig, fer veikin smámsaman um mestan hluta landsins og þá er helzt til seint að vakna.

En má þá ekki stemma stigu fyrir þessum ófagnaði? Má ekki taka sjúklingana og einangra þá, eða útrýma veikni á annan hátt með atorku og harðneskju? Þetta er torveldara en flestir halda. Það er eigi unt að lækna alla sjúkl. svo eigi stafi hættu af þeim framar og þó svo væri, þá koma sífellt nýir á ári hverju með samgöngunum við útlönd og breiða veikina út á ný áður lækni getur haft hendur í hári þeirra. Læknar draga mikið úr hættunni með því að lækna fjölda sjúkl. og gefa þeim góðar leiðbeiningar og senni-

lega kæmi þetta að betri notum ef lækning væri ókeypis eins og tóbakast erlendis. Elgi að síður sýnir reynslan, að slíkar ráðstafanir eru fjarri því að vera einhlítar, þó þær séu annars góðra gjalda verðar.

Önnur leið er til, og sennilega engu áhrifaminni, — sú, sem Stgr. Matthíasson fer. Hún er sú, að fræða alla alþýðu svo vel sem auðið er, um alt eðli og háttalag þessara kvilla. Sannleikurinn er sá, að auðvelt er að varast þá, hvort heldur sem er með algerðu skírlífi eða — skynsamlegri varúð. Að miklu leyti stafa þeir af fáfræði. Rit þetta fræðir um helztu einkenni og annað háttalag þeirra, gefur líka nokkrar bendingar um hversu megi varast þá og fá við þeim gert. Þeim sem kunna að þykja varúðarreglur Steingríms læknis ófullkomnar (og það eru þær að vísu) verður ekki gefið betra ráð en það, sem hann bendir á sjálfur að spyrja lækni sinn. Það þarf enginn að skammast sín fyrir það og flestir lækna munu fúslega fræða menn um alt er að þessu lýtur. Tekur þetta ekki sízt til sjómanna vorra, sem fara milli landa, því það eru þeir, sem oftast hafa flutt kvilla þessa hingað. Þegar Stgr. gefur út næstu útgáfu af riti þessu, sem væntanlega verður bráðlega, þá gæti komið til tals, bæði að auka það að mun og breyta fyrirlestrarandi því sem á því er, er það yrði stærri bók. G. H.

Aðrar sendar bækur, er sumra verður getið síðar:

Arferðil á Íslandi í þúsund ár. Eftir Þorv. Thoroddsen. I—II. Gefið út af Hinu ísl. Fræðafélagi. Khöfn 1916—'17.

Ljóð eftir Schiller. Alex. Jóhannesson sá um útgáfuna. Bókav. Guðm. Gamalaflassonar. Rvík. 1917.

Sjöfn. Þýðingar úr erlendum málum. Eftir A. H. B. Rv. 1917.

Míningarrit um síra Jón Bjarnason, dr. theol. 1845—1914.

Gefið út af hinu evangelíska lútherska kirkjufél. í Vesturh., 1917.

Axel Thorsteinsson: Börn dalanna. I—II. Rvík. Bókaverzlun Ársæls Arnasonar 1918.

Gunnar Gunnarsson: Smaa Historier. Ny Samling. Kbh. 1918.

Frederick W. H. Myers: Páll postuli. Kvæði. Jakob Jóh. Smári sneri á íslenzku. Rvík. Bókav. Ársæls Arnasonar 1918.

Mjólkurfræði. Eftir Gísli Guðmundsson. 1. hefti. Rv. 1918.

Heragabákur skáta. Eftir A. V. Tulinius. Rv. 1918.

Bréf frá Bjarna amtm. Thorarensen
til
Gríms cand. philos. Thomsen.

Friðriksgáfu þann 15^{da} Febr. 1841.

Elskulegi hr. Thomsen.

Eg varð feiginn bréfi yðar til mín frá 29. Septbr. næstl. af því mér bæði finnst það lýsa ástarverðasta hugarfari og líka góðvilja til mín, en af því eg hefi aldrei — í tiltölu til krapta minna sem eru teknir að réna — verið eins önnum kafinn eins og síðan 12^{ta} Dec. að póstur kom og eg fékk bréf yðar þangað til núna að póstur á frá mér að fara, fæ eg ekki svarað því í þetta sinn sem eg vildi og skyldi, en brúka strax kunningjaréttinn við föður yðar og móðurbróður — til að segja yður um skáldskapinn hið fornkveðna:

. . . . studium quid inutile tenter *)

Nullas Mæonides ipse reliquit opes!

og mér þykir einmitt ver st, að eg get ekki hrætt yður frá honum með því að segja yður að þér yrkið illa, því það get eg ekki sagt með sanni, heldur má eg til að hrósa yður fyrir kveðskapinn á því, sem eg hefi eptir yður séð, — þar á ofan ætti eg að tala um slíkt einmitt í ljóðum, sem eg ekki hefi tíma til — samt vil eg segja yður í prósa sögu af sjálfum mér, hún er ekki laung, því hún heitir svo: Þeg fór ekki að yrkja fyrri en eg var búinn að taka Attestats, og annað: það hittist svo á: eg þekkti valla mót-læti á mínum prosaisku árum — þetta seinna er samt ekki að marka, því mörg skáld hafa verið hamingjumenn. — Hitt er víst, að það er aldrei affaragott að blómstrið komi áður en staungullinn er fullvaxinn, og því ætti maður að bera sig að ná fyrst embættis-prófi í einhverju og svo láta eptir lyst sinni — ekki tala [eg um það, þó maður] í hjáverkum skémti sér við musae, en þær eru

*) mun vera ritvilla hjá höf. fyrir tentas sbr. Ovidii Trist. IV 10, 21. u: Saepe pater dixit, „studium quid inutile tentas? Maeonides nullas ipse reliquit opes“.

yndislegar og ofurhætt við, að maður kunni að hugsa til þeirra undir sjálfum skylduverkunum og með því tefjast við þau — eg vona þér fyrirgefið mér, að eg tala svo bert við yður — því eg gjöri það líka föðurlands míns vegna — mér fannst nefnilega á þessari öld vera nokkurskonar faraldur að því, að einmitt þeir gáfaðri — og það sem allra verst er — þeir betri af yngri löndum okkar sumum ekki taki »Attestats« — því í staðinn fyrir að egoistarnir gleyma aldrei gagni sínu, er einmitt hinum hætt við að vanrækja það um of. — Nú óskaði eg helzt, að þeir, sem elska föðurland sitt, kæmust fram, svo fantarnir ekki komist á undan þeim, en því er ver, að við höfum föðurlandselskulausa nokkra í embættum bæði yngri og eldri — Þegar þér nú þar hjá hugsid til foreldra yðar, vona eg, að þér ekki reiðist gömlum kunningja föður yðar fyrir bermælgina, því sé hún um of hjá mér í þetta sinn, þá er hún betri upp í eyrun enn á bak — en um áform yðar skal eg þeigja.

Já, því er ver að eg get ekki lastað kveðskap yðar. Alpakyttan ágæt og útlekkingin af Gunnarshólma-kvæðinu líka. — Eg sendi yður nú afskrípt af Sigrúnarbrag mínum og Íslandi, en ef þér leggið það fyrri út eða nokkuð af erotiska kveðskapnum mínum, vil eg ekki að nafn mitt sé nefnt við það, nema ef þér leggið út Freyjukéttina, því að þeim vil eg allstaðar vera þekktur, — en eg hefi valla neitt kveðið sem ekki er prentað nema Sigrúnarbraginn. — »Kysstu mig aptur« líkar sjálfum mér best af erotiska kveðskapnum mínum. —

Ef þér viljið gagna föðurlandi yðar, settuð þér fyrir alla muni að ná embættisprófinu. — Þegar það væri úti, hyggt eg faðir yðar vildi hjálpa yður til að vera ein tvö ár til í Höfn, og eg skyldi ekki spilla fyrir yður í því.

Fyrirgefið nú flýtlirinn og illa orðfærið. .

Yðar

einlægl. elskandi.

Frú Jakobína Thomsen, ekkja góðskáldsins, hefir leyft mér að birta bréf þetta. Bréfið er með hendi Bjarna amtmanns, en undirritað nafn hans hefir verið klipt burt og með því 3 eða 4 orð, sem eg hefi leitast við að fylla út innan hornklofa eftir sambandi og stafaleifum. Enginn vafi leikur á því, að bréfið er frá Bjarna amtmanni og hans eiginhandar rit, þótt undirskrift hans vanti (sbr. Kvæði eftir Bjarna Thórarénsen. Kh. 1884 bls. XXIX).

Forleifur H. Bjarnason.

Á Nesi. — Í Nesi.

Eg hefi heyrt á mál manna um það, hvort réttara væra að skrifa *á Nesi* eða *í Nesi*. Hafa ýmsir haldið því fram, að föst lög mundu vera fyrir því í málinu, hvort heldur skyldi vera í hverju einstöku tilfelli, en ekki hefi eg heyrt neinn segja upp þau lög svo greinilega að fullnægjandi hafi verið. Eg hefi yfirfarið öll þau nesjanöfn, sem mér eru kunn milli Reykjaness og Snæfellsness, að þeim meðtöldum, og nokkur fleiri.

Eg hefi ekki orðið þess var, að nokkurstaðar sé ýmist sagt í eða *á nesi*; og skilst mér að forsetningin hafi yfirleitt eða ætíð haldist óbreytt frá fyrstu tíð. — Eg hefi þózt finna þá reglu: *Á nesi* er sagt og ritað þegar nesið er heilt bygðarlag, eða að minsta kosti fleiri en einn bær á því; en sé aðeins einn bær í nesinu eða sé það eyði-nes, þá er sagt *í nesi*. T. d. *Á nesi*: Reykjanesi, Miðnesi, Álftanesi, Seltjarnarnesi, Kjalarnesi, Akranesi, Öndverðunesi, Snæfellsnesi, Siglunesi, Langanesi, Vatnsnesi. *Í nesi* (bygðum böllum): Í Arnarnesi, Hlíðsnesi, Skildinganesi, Digranesi, Luxnesi, Laxárnesi, Gufunesi, Álsnesi, Viðinesi, Hjarðarnesi, Skipanesi, Súlunesi, Einarsnesi, Þingnesi, Munadarnesi, Rauðanesi, Knararnesi, Kolviðarnesi, Skógarnesi, Efra-Nesi, Neðra-Nesi. Sagt er þannig: *Í Nesi* við Seltjörn *á Seltjarnarnesi*. *Í Hlíðsnesi á Álftanesi*. *Í Hjarðarnesi á Kjalarnesi*. Hinsvegar er sagt: *á Öndverðunesi, á Snæfellsnesi*. Þar er um tvær bygðir að ræða, meiri og minni. — Undantekning frá reglunni virðist Borgarnes vera, en svo er því varið, að það var fyr eyðines, hefir forsetningin í haldist þar enn, þótt mikil bygð sé komin á seinustu árum. Fyr hét það Digranes og var sagt *í Digranesi* sbr. Egilssögu. — Álftanes á Mýrum (kirkjustaðurinn) virðist vera undantekning, því sagt er: *á Álftanesi*, en því er svo varið að fleiri bær stóðu áður á því nesi (Nauthólar, Sauðhús, Einarsneskot, Tangi o. fl.), þó nú virðist höfuðbólið eitt eftir. Líklegt tel eg raunar að Kvíslhöfði, bær þar rétt hjá, hafi verið talið *á Álftanesi* áður. — Enn virðist það undantekning að sagt er *á Hvítanesi*, og einkennilegt er, að sama gildir um Hvítanes í Kjós og Hvítanes í Skilmannahreppi. En mig brestur kunnleika til að segja um, hvort þetta stafar af því, að meiri bygð hafi áður verið á þessum nesjum eða hér sé um hreinar undantekningar að ræða. — Um flest öll eyðines er sagt *í*, svo sem í Bessastaðanesi, Geldinganesi, Þyrilnesi, Akranesi (á Mýrum), Tanganesi, Koranesi, Króknesi (þó var nokkur ár bygð í báðum þessum nesjum), Hítarnes-nesi, Melrakkanesi.

Fróðlegt væri að vita hvort framanrituð regla gildir um land alt. Ef til vill láta kunnugir menn úr öðrum landsfjórðungum til sín heyra; og sanna eða ósanna regluna.

E. F.

Ástriður Ólafsdóttir Sviakonungs.

I.

Undir gálga Ólafs digra
 Óttar svarti í höll var leiddur.
 Ekki fór hann feimulega,
 Fangaklæddur vel og greiddur.
 Undan dökkri skör á skáldi
 Skinu augun langt á vegi,
 Sem þau fyrst í mynd hans mættu
 Manni, svip þó greindi eigi.

Kongur bar til Óttars illan
 Afbrýðinnar haturspunga,
 Banasök var kvæðið kunna,
 Kveðið fyr um drotning unga.
 Fyrir söngsins hug til hennar
 Höfuð sitt 'ann átti að láta.
 Hirðin skildi hlýða á, að
 Hegning þessi stæði máta.

II.

Óttar gekk að hástól hilmis,
 Hneigði fyrir drotnum lýða — :
 »Eg er skáld og kann að kveða,
 Kongur þú og sæmd að hlýða
 Lofi þínu, ljóði mínu.
 Leyfið það eg flytji, herra!«

Hvesti að honum ýgum augum
Ólafur, og hugði verra.

»Þú skalt ljúka öðru áður!
Ort þú hefir langtum fleira —
Mansöng, kveðinn um sig unga
Ástriður er gjörn að heyra!
Lát oss sjá hve, syrpur þínar
Sæma henni, Noregsdrotning!
Óttar kvað: »Eg kann þær ennþá —
Konungsboði tek með lotning«.

III.

Kvæðið hóf 'ann. Hirðin þagði,
Hlustarnæm að flímið skildi —
Eins og seytla um silfurskálir
Seiddi Óttars raddar-mildi.
Var þó sem við skreyti-skrumið
Skáldamálsins hann sig efi,
En sem lægju langir kossar
Leyndir undir hverju stafi.

Allir sátu hirðmenn hljóðir,
Hönd var knélögð undir borði.
Sýndist skína úr svipnum þeirra
Samvizkan í hverju orði.
Það var að eins er hann nefndi
Ástriði, í þulu sinni,
Þá var eins og allir hefðu
Önnur kvennanöfn í minni.

Konur litu allar undan
Óttars kveðskap fyrst, í ranni.
Eftir fyltar fáar vísur
Festu auga á kvæðamanni,

Störðu á hann, og léttum lófum
 Léku mjúkt við forna bauga.
 Var sem blámi bjartra drauma
 Brosti varma úr hverju auga.

IV.

Óttar greip að augabragði
 Ólafs-drápu háttastriðu.
 Hún skall o'ni endir ljóðsins
 Eins og bylur fylgdi þíðu.
 Hátt yfir allra kolla kvað hann
 Konungsminnið yfir borðum.
 Ólafs frægð og frækn' um salinn
 Flaug í gný af hvellum orðum.

Stigu fram í styrku rími
 Stoltar-leikir víga-æðis —
 Samt var eins og allir sætu
 Enn í leiðslu fyrra kvæðis.
 Þó 'ann léti hlymja á hjálmum
 Hvassa stuðla, í efldu vessi,
 Gleggra létu eftir-ómar
 Eldri vísu — hún var þessi:

•Man eg æ — við eitt sinn dvöldum
 Inn hjá Væni, sumarkveldis,
 Tvö og ein, og áttum saman
 Aftanvegurð Svíaveldis.
 Þá var okkur ekki í huga
 Óttahik við dóm í sögum,
 Hvort við hlutum ríkis-ráðin
 Rétt, og samkvæmt Gautalögum«.

V.

Ólafi varð sveimul sjálfum .
 Sveitastúlka í löngu minni.
 Eftir henni fyrstri forðum
 Frétti hann í útlegð sinni.
 Hafði síðar ljóð og langskip
 Lagt fyrir sjóarhamra enni
 Út til drifs, frá höfnum hennar,
 Hrösul-giftrar lítilmenni.

Mælti ljúft og leit til Óttars,
 Loknum hans að bragaraunum:
 »Skáld, þú mátt nú heilu halda
 Höfði þínu að kvæðalaunum« —
 Drotning hafði unaðs-örugg
 Undir flutning ljóða snjallra
 Setið, djörf og sveipinfölduð,
 Sigur-rjóð og príðust allra.

Rauðagull-hring rakti af hendi,
 Rendi að Óttar' baugnum sínum:
 »Þigðu, skáld, sem glampa á götu,
 Gneista þann af fingri mínum«.
 Dögling laut með dælsku-brosi:
 »Drotning Noregs sæmir, herra!
 Minna yðar launum launa
 Ljóðið um sig, þínu verra«.

VI.

Löngu þeirra hrundu hauga
 Huldu margar grænar aldir —
 Til eru enn hjá örfum þeirra
 Eldar sömu í brjóstum faldir.

Eg hef' séð úr sænskum augum
 Sömu stafa hjartaslögin,
 Sem að fyrir Ólafs exi
 Óttari svarta guldu bauginn.

Stephan G. Stephansson.

Kvæðið er kveðið upp úr þætti Sighvats skálds, sbr. „Fjörutíu Íslendingaþættir“, Rvík 1904, bls. 233—236. Byrjunin á V. kafla kvæðisins lýtur að þessum vísum Ólafs digra:

Böl's þats lind í landi
 landrifs fyrir ver bandan,
 golli merkið, við Galla
 grjótlögn skal fölna;
 þann myndak við vilja
 (valklifi) meðan lifðak,
 (alin erum björk at bölv
 bands) algrænan standa.

Vandfærra es várrar
 varbliks fyrir Stað miklu
 (þreyk of aldr) til eyjar
 aurborðs an vas forðum;
 nú's fyrir höfn, þás hafna
 hlyn sævar mák æfa,
 gný-hvítinga, grjóti,
 geirþorps boði, orpit.

Sjá Finnur Jónsson, Den norsk-islandske skjaldedigtning. B. I. Bind. — Kbh. 1912, bls. 210—211; sbr. Flateyjarbók III, Chria 1868, bls. 237 og 239, 1. og 4.

Byggingamálið.

Húsagerð í sveitum.

Þó margt kalli að oss á þessum dögum, er mér næst að halda, að byggingamálið sé mesta málið og mikilfenglegasta, jafnvel þó slept sé allri þeirri miklu hús-næðiseklu, sem nú er í kaupstöðunum.

Fjármálahlið þess er tiltölulega einföld. Sem stendur eru yfir 5000 torfbæir á landinu. Vér erum neyddir til þess að byggja þá alla upp áður langir tímar liða. Undan því verður ekki flúið. Og svo bætist við fjöldi timburhúsanna, sem tæpast standa í langan aldur.

Og hvað kostar svo þetta?

Meðalverð á 7 nýlega bygðum steinsteypuhúsum í sveit, sem flest voru bygð fyrir ófriðinn, er talið um 6500 kr. Það mun sízt of ríflega í lagt eftir horfum nú. Það kostar þá um 32 mill. króna að byggja torfbæina upp á þennan hátt. Og þá er eftir að koma upp góðum húsum fyrir allan búpening og heyforða. Það kostar að líkindum annað eins.

Um 60 mill. króna kostar það að byggja landið upp, þó ekkert sé talað um kaupstaðina, og það þó verð sé svipað og var í ófriðarbyrjun.

Hvað er Reykjavíkurbærinn — stærsta mannvirkið hér á landi — í samanburði við þetta. Hún kostar um 2 mill.

Flóaáveitan kostar um $\frac{1}{2}$ —1 mill.

Hvað kostaði það að slétta öll tún landsins. Ef gert

er ráð fyrir, að hver dagsláttu kostaði 200 kr., yrði það um 10 mill.

Hvað eru jafnvel allar þessar miklu skuldir lands-sjóðs, sem stafa af ófriðnum? Ekki þriðjungur þess sem húsin kosta.

Húsabyggingarnar eru þá langdýrasta og stórfeldasta fræðið, sem þjóðin hefir með höndum.

En málið hefir aðrar hliðar og þær engu vandaminni.

Húsakynnin hafa rík áhrif á allt líf þjóðarinnar, alla hennar menningu. Eg veit þess dæmi, að nú í frostunum síðastliðinn vetur var hitinn í baðstofunni á einum sveitabæ 17^o frost eða meira. Og þar voru ung börn. Getur nokkur talið slíkt samboðið síðaðri þjóð?

Aumlegu húsakynnin setja á oss, framar öllu öðru, skrælingjamerkið.

Vér eyðum árlega stórfé til lækna og lækninga, rekum dýrt heilsubæli og nokkra spítala til þess að lækna sjúklingana, sem mist hafa heilsuna í vondum húsakynnum. Hjá þessu verður tæpast komist, en hitt er víst, að heilbrigðisástand landsins verður aldrei gott meðan húsakynnin eru léleg.

Menning vor, heilbrigði og þjóðarsómi er bundinn við, að þau batni, verði hentug, heilnæm og fögur.

Og hvað er svo fyrir þetta mikla mál gert af hálfu þeirra, sem með landsmálin fara?

Þeir hafa aflað oss yfir 60 lækna til þess að lækna fólkið, 20—30 lögreglustjóra til þess að halda í hemilinn á mönnum, sem tæpast þora að gefa óvini sínum kjaftshögg, hvað þá meira, og 125 presta til þess að sjá um, að vér förum ekki í þann eilífa eld, eftir að vér höfum setið í 17^o frosti á vetrum með kornung börn. Þeir hafa útvegað oss þrjá verkfræðinga til þess að leggja vegi fyrir þá, sem lifa af baðstofuprengslin og vetrarkuldann, Markonistöð, sem enginn notar o. s. frv. Eg skal ekki telja fleira.

En til þess að leiðbeina fáfróðum mönnum í bygg-

ingamálinu hafa þeir útvegað oss einn mann, sem þó hefir ekki átt kost á rækilegri mentun í þeirri grein, ólíku vandasamari fræðigrein en vegalagning er.

Og svo hafa þeir lagt farmgjald á hverja spýtu og hverja sementstunnu, sem vesalingsmennirnir þurfa til húsagerðarinnar. Þó hefir þingið haft góðan vilja til þess að láta eitthvað gott af sér leiða, en lítið orðið úr framkvæmdunum.

Eg hef undanfarna daga haft tækifæri til þess að hugsa um, hversu langt vér værum komnir áleiðis í húsagerð. Hef verið að athuga ýmsar upplýsingar bænda um byggingu á nýjustu steinhúsum í sveitum. Þrátt fyrir það, þó oss hafi talsvert farið fram í húsagerð undanfarin ár, þá fæ eg ekki betur séð, en að oss skorti enn tilfinnanlega þekkingu á nálega öllum atriðum, sem að húsagerð lúta. — Eg skal reyna að skýra þetta nokkru nánar og sný mér þá fyrst að verkfræðishliðinni.

1. Útveggi húsa gerum vér venjulega úr steypublöndu, sem er að vísu nægilega sterk til þess að bera húsið (1:4:8, stundum 1:5:10 eða þar um bil), en sem drekkur þó stórlega vatn í sig. Altítt, að vatn gengur alla leið gegnum veggina á fleirum stöðum, þar sem einhverjir gallar hafa orðið á steypunni. Svo eru veggirnir sléttaðir að utan, en af því að húðin er fjærri því að vera vatnsheld, verður að mála yfirborðið með oliulit, sem bæði er dýr og endist illa. Þá er og títt að jarðbika veggina að innan til frekari tryggingar. Sé sléttunarhúðin ekki bráðlega máluð, springur hún öll sundur í smástykki og dettur að lokum af, ekki sízt ef sterk blanda er í húðinni, sandur finn og sementsvatn borið síðast á hana.

Bersýnilega er þetta mesta basl. Í Ameríku sýnist sú skoðun ryðja sér til rúms, að gera veggina úr svovandaðri, sterkri steypu, að vatnsheld megi teljast (1:2:4 upp í 1:3:6) og húða þá ekki, en aftur tiltölulega þunna.

Eg tel líklegt, að þessi stefna sé rétt¹⁾. Sléttunin er hvort heldur sem er bæði svikul og dýr. Kaldari verða slíkir veggir að visu, en þar er minnst á mununum. Steypuveggur verður ætíð, hvort heldur sem er, til lítilla hlýinda. Styrktarstöðir má hafa í þessum þunnu veggjum til þess að gera þá traustari og stöðugri. Að utan ætti ódýr kalklitur að nægja.

Vér steypum alla veggina í einu lagi. Þeir verða að mestu ónýtir ef breyta þarf eða rífa. Margt bendir til þess, að oss væri betra að steypa steina og hlaða veggina úr þeim, þó ekki fullyrði eg það. Báðar aðferðir hafa sína kosti.

En hvernig eigum vér svo að gera veggina hlýja? Steinveggurinn er járnkaldur. Eina ráðið, sem vér þekkjum, er að gera veggina tvöfalda og fylla holið milli þeirra með tróði (mómylsnu, þurru torfi, vikri). Þetta hefir gefist svo vel, að nýjustu húsin hjá oss eru eflaust miklu hlýrri en flest hús alþýðu í útlöndum, en bæði er það dýrt og tróðinu fylgja ýmsir ókostir. Það getur fúnað, það sigur og er erfitt að bæta á það, sérstaklega undir gluggum²⁾. Og ekki er fengin full reynsla fyrir því, hve þykt tróðalagið þarf að vera. 2 1/2" er það minsta, sem reynt hefir verið, og það var allskostar ónóg, en þykkast 6 1/2". Húsin með 4—6 1/2" tróði hafa reynst hlý, hvergi frosið í íbúðarherbergjum, þar sem fólk hafðist við eða eitthvað var lagt í, og verið nálega laus við raka — en þó ekki algerlega.

Vér verðum líklega að gera tróðið enn þykkara, 10—12", til þess að vel gegni, ef ekki má gera ráð fyrir meiri hitun.

¹⁾ Á sumum húsum, sem Jóh. Fr. Kristjánsson hefir byggt fyrir bændur, er húðun slept, veggþyktin (ytri útveggir) að eins 5 þuml., en að eins í einu húsi hefir steypan verið svo sterk, að 1 hluti sements sé móti 3 hl. af sandi.

²⁾ Sumstaðar hefir það ráð verið tekið upp, sem eg benti eitt sinn á, að hafa áfelluna neðan við gluggana lausa. Má þá taka hana úr, er bæta skal á tróðið eða þétta gættina.

En bersýnilegt er það, að æskilegast er að sleppa við innri veggina og tróðholið. Það gerði alt einfaldara og ódýrara.

Vér þurfum einhvern veginn að komast upp á það, að geta steipt eða hlaðið allþykkann en ódýran skjólvegg innan þunna steinveggsins, sem að eins er ætlaður til þess að bera húsið og taka móti veðri og vindi. Og efnið í slíkum skjólvegg þarf að vera jafnhlýtt og tróðið. Svo á að mega slétta hann að innan, mála eða líma á hann veggjapappír.

Þessa list kunnum vér ekki. Hún er eflaust torveld, en ómögulegt ætti þetta ekki að vera.

Víst er um það, að þar sem léttur vikur er í jörð, er auðvelt að gera úr honum ágæta steypu með kalki eða sementi. Slíkir steinar eru algengir ytra og eru furðu hlýir. Vatn draga þeir í sig (fljóta fyrst í vatni), en það á ekki að saka, ef útveggur er þéttur og vandlega buið um glugga og dyr.

Þá er og annað víst, að gera má veggi úr óbrendum smíðjum ó (leir). Til þess að gera hann hlýrri og léttari er allajafnan elt saman við hann talsverðu af hálm. Þá hættir og leirnum síður við að springa, er hann þornar. Vér höfum tæpast öðru til að dreifa en heyi, sem er ólíku endingarminna, myndi fljótt fúna.

Nokkuð mætti bæta heyið til þessara nota, ef það væri síðslegið. Næringarefni eru þá miklu minni í því og meira af steinefnum. Helzt væri að tala um stórgert vall-lendishey.

Þá þykir mér ekki ólíklegt, að tryggja mætti að nokkru endingu heysins, ef það væri látið liggja í kalkblöndu, áður en það væri elt saman við leirinn. Kalkið drepur flestar rotnunarbakteriur og ver mjög fúa og rotnun. Þó er þetta órannsakað mál. En helzt þurfum vér að finna eitthvað til að blanda saman við leirinn.

Leirveggi má slétta að innan með leirblöndu og líma svo á þá veggjapappír. Það kvað vera alsíða í Rússlandi.

Þó fylgir leirveggjunum sá galli, að vel harðir verða þeir ekki í samanburði við steinsteypu.

Önnur efni gætu og komið til tals.

Fyrst má nefna móinn. Mómylsnan hefir gefist vel. Eins og allir vita má móta sundurhræðan, blautan mó eftir vild og það á mjög ódýran og einfaldan hátt. Þegar stykkinn þorna, verða þau furðu hörð, svo jafnvel er erfitt að höggva þau sundur með exi. Mér hefir komið til hugar, hvort ekki væri reynandi, að hlaða skjólvegg úr slíkum mótuðum, þurum mósteinum. Það mætti leggja leir eða mógraut milli þeirra, og vegur myndi til þess að geta sléttað slíkan vegg að innan svo vel færi. En — skyldi móveggurinn síga eða ef til vill bólgnar, er hann kynni að drekka raka í sig? Þessu verður tæpast svarað, nema með beinni tilraun. En ódýr ætti slíkur veggur að geta orðið og hlýr, þar sem gott mótak er nærri.

Margir hafa séð kokolithplötur. Þær eru gerðar úr gipsgraut og fylltar af kokostrefjum. Byggingagips getum vér fengið frá útlöndum, og mjög dýrt er það ekki. En getum vér notað hey í stað kokostrefjanna? Það er það eina, sem vér höfum úr að spila. Ef til vill gætum vér varið það fúanum með því að blanda saman kalki og gipsi eða leggja heyið fyrst í kalkgraut? Mér hefir tekist að búa til slíka heysteina. Þeir eru mestmegnis hey, en kalkið og gipsið heldur heyinu saman. Komið gæti og til tals að nota koltjörü til þess að verja heyið fúa og halda því saman. Það hefir verið reynt erlendis. Veggur úr slíku efni yrði án efa afskaplega hlýr og auðvelt að slétta hann að innan, en að öðru leyti skal eg ekki full-yrða neitt um endingu hans. Úr því verður ekki skorið, nema með tilraun. Mér er þó næst að halda, að þetta mætti að notum koma, ef vel væri á haldið. En það er svo með þetta sem margt annað, að slíkar tilraunir ætti að kosta af landsfé.

Áska fellur til á öllum bæjum og meiri en litil, þar sem mó er brent. Það kvað mega fá sémilegt steypu-efni út úr móösku með kalki og dálitlu af vatnsgleri.

Ekki hefir mér tekist að fá neitt nýtilegt út úr óskunni, hvorki taðösku né móösku, en það sannar lítið. Ómögulegt er það ekki, að það stafi að eins af vanþekkingu minni.

2. Loft og gólf eru hvervetna gerð úr timbri, sumstaðar þó úr steinsteypu yfir eldhúsi. Yfir kjallara er loftið venjulega einfalt, tvöfalt með tróði yfir íbúðarherbergjum, og er margvíslegt tróðið: mór, torf, mosi, hey, moð. Þarf ekki að orðlengja það, að mosi, hey og moð er ófært til þeirra hluta. Af ýmsum ástæðum (ending, jarðskjálftahættu, músum og rottum, brunahættu, sótt næmishættu) tel eg mjög líklegt, að hyggilegra væri að gera þau úr steinsteypu, eins og nú er farið að tíðkast í Reykjavík, en aftur sýnist mér það líklegt, að gerð þeirra mætti að ýmsu leyti endurbæta og gera þau nokkru ódýrari. Eg skal þó ekki fara út í það hér. Þá er það ekki ráðin gáta, hversu hentugast væri að ganga frá yfirborði steypugólfa, svo þau yrðu hæfilega hlý og lítt hljóðbær.

3. Þök húsa nna eru víðast venjuleg timburþök með bárujárni. Þó eru torfþök á 3 húsum af 12, að líkindum gerð eftir forsögn Jóns Þorlákssonar verkfræðings í 18. árg. Búnaðarritsins. Reynslan er stutt með þessi þök, en þau virðast hafa gefist vel, svo ef til vill ættu hin þökin að leggjast niður¹⁾. Undir torfinu mun hafa verið notaður venjulegur þakpappi og bikaður áður en tyrft var. Mikið er undir því komið, að pappinn endist vel, því erfitt er að gera að slíku þaki. Þjóðverjar nota sérstakt þéttunarefni (Holzement) á þökin og sérstakar pappategundir (ef ekki er notaður einskonar pappir). Sennilega eigum vér eftir að læra ýmislegt í þessu efni.

En hversu sem þessu er farið, þá stafar ætíð nokkur brunahætta af öllum timburþökum. Í Ameríku eru steinsteypuþök algeng, venjulega flöt, en stundum með venjulegu risi. Hér eru þau óreynd, en vert væri að rannsaka, hvort þau svöruðu kostnaði. Væri mikið unnið, ef

¹⁾ Þó láta Þjóðverjar, sem mikið hafa notað torfþök með pappundir, misjafnlega af þeim.

eldtraust og endingargott þak fengist í stað timburþakanna.

4. Eldfim eru að sjálfsögðu öll þau steinhús, sem vér höfum bygt, úr því loft og gólf, margir skilrúmsveggir og alt þakið er úr timbri, og hvert hús, sem brennur, er þjóðinni tapað fé. Þó landið eða váttryggingarfélag greiði skaðabætur, eru þær teknar aftur með rentum af öðrum váttryggjendum. Ef vér færum byggilega að ráði voru, ætti að mega komast algerlega hjá þessum skatti og flestum vandræðum, sem stafa af húsbruna. Það er hæðarleikur nú orðið að byggja húsin fyllilega eldtraust, úr því leikið er að gera loft og gólf úr steinsteypu. Um öll almenn hús hefir ameriskur rithöfundur rétt fyrir sér, sem segir, að í raun og veru sé ekki um neitt váttryggingamál að ræða, heldur að eins kunnáttu að byggja eldtraust. Mestur er erfðleiklinn með þakið, og þó líklegt, að fram úr honum mætti einnig ráða.

5. Hitun húsaanna er víðast af mjög skornum skamti og áhöldin til hennar ekki góð. Vér höfum ekki öðru að brenna viðasthvar en mó eða sauðataði og notum til þess kolaofna, sem hafa oflitið eldhólf og öskurúm. Danir hafa smíðað ýmsar tegundir af móofnum, og þykir mér líklegt, að einhverjir þeirra séu vel við vort hæfi. Vér þurfum að fá að vita, hverjar tegundir það væru og verð á þeim, geta síðan gefið alþýðu leiðbeiningu um það, því ekki er von, að bændur viti vel deili á slíku. Á einum bæ (Fremsta Gili í Langadal) hefir verið keypt eldavél frá Svíþjóð með útbúnaði fyrir miðstöðvarvatnshitun. Liggur vænn koparkassi að eldhólfinu og pípur úr honum í vatnsofna í íbúðarherbergjunum. Svo virðist, sem þetta hafi gefist vel, og er þarna eitt atriði af mörgum, sem taka þyrfti til athugunar¹⁾.

¹⁾ Mér er sagt, að þessi hitun hafi einnig gefist vel í miklu frostunum í vetur. Ef til vill á það nokkurn þátt í því, að eldhúsið er í kjallara, undir baðstofuhúsinu, og loftið yfir því úr járnkotinni

Komið gæti það til tala á minstu býlunum, að hafa eldstóna inni í baðstofunni. Er það algengt erlendis og jafnvel í nýttízkúhúsum. Til þessa eru notaðar sérstakar eldstór og eru einskonar skápar yfir þeim, sem taka við matargufu og veita henni út í sérstaka gufupípu. Voru Kaiserslauternverksmiðjunni þýzku veitt verðlaun fyrir slíkan ofn fyrir all-löngu. Eg veit til þess, að Danir hafa smíðað fleiri tegundir og sá eina á sýningunni í Árósum (Dansk Husmandsovn minnir mig að ofninn væri kallaður). Um ofna þessa þyrftum vér að fá betri þekkingu og reyna þá, því víða gætu þeir komið að notum, ef þeir reyndust vel.

6. Hús úr torfi, eða torfi og grjóti, hafa flestir orðið að sætta sig við hér á landi og ekki ólíklegt, að þau hverfi aldrei til fulls. Efnið er að mestu heimaefengið og vinnuna getur iðjúsamur maður lagt að miklu leyti til. Á þessum algengu torfbyggingum eru bersýnilegir gallar, sem eflaust mætti bæta á ýmsan hátt. Sjálf sagt væri það hyggilegt, að fylla grjóti undir torfveggi niður fyrir frost, svo þeir snarist ekki, enda ráðlagt í Atla, að taka svo djúpt fyrir undirstöðum veggja. Sig á veggjum má minka með því að berja þá vel saman. Að ofan má verja vatni að ganga í vegginn með því, að láta vatnshelt þak taka vel út fyrir hann. Að utan má ef til vill bika veggina með soðinni koltjörü, kasta í hana heita þurrum sandi og kalklita síðan vegginn, er tjaran væri hörðnuð. Guðmundur Bárðarson hefir sýnt, að slétta má torfveggi að innan með sandi og sementi. Loðir húðin föst eins og á múr, hvort sem það endist lengi eða ekki. Þessi fáu dæmi nægja til þess að sýna það, að nauðsyn ber til þess að rannsaka vandlega, hversu hentast myndi að byggja úr torfi. Erfitt mun það verða, að fá torfveggina allskostar góða

steinsteypu. Það hlýtur að hitna mikið, ef vel heitt er í eldhúsinu, og hlýja baðstofuna til muna.

en hitt er vafalaust, að þá má stórlega bæta og byggja allgóð hús á þann hátt.

Eg læt þessi atriði nægja til þess að sýna fram á það, að flest, sem að verkfræði lýtur í byggingum vorum, er enn á bernskustigi, og brýn nauðsyn að auka þekkingu vora á fjölda atriða.

Þá er sú hliðin, sem að listinni veit, alt ytra og innra útlit hússins. Að þessu leyti er um beina afturför að ræða, þó undarlegt sé. Vér höfum slept gamalli, þjóðlegri og þroskaðri menning og ratað í myrkviðri og menn-ingarleysi, enda ekki átt kost á leiðbeining eða góðum fyrirmyndum. Gömlu sveitabæirnir með þykku veggjunum, þiljunum fram á hlaðið og grænu bröttu þökunum, fóru vel í sveit, runnu saman við landslagið eins og náttúrleg börn þess, eins og þeir væru sprotnir upp úr íslenzka jarðveginum. Stærð torfhúsanna og alt þeirra snið var hyggilega og eðlilega lagað eftir byggingarefninu. Ef komið var inn í baðstofuna var fast snið á öllu, sjálf-sagður staður fyrir hvern hlut og hver hlutur á sínum stað. Öll gerð hússins blasti við auganu í sínum einfald-leik og húsið sýndi augljóslega allan lifnaðarhátt íbúanna. Alt þetta bar vott um gamla, þjóðlega og þroskaða menning, en að visu menningu sem aldrei hafði komist á hátt stig vegna ókleifra erfiðleika, skorts á byggingarefni, fátæktar manna og harðréttis landsins. Þegar kostur varð á nýjum byggingaefnum, nýrri þekkingu og allar ástæður breyttust, þá hlaut einnig byggingalagið að breytast. En breytingin kom því miður beint frá kaupstöðunum. Bændur höfðu ekki aðra fyrirmynd en kaupstaðahúsin og stældu þau, en þau voru aftur ekki annað en miður heppi-leg eftiröpun eftir dönskum og norskum kaupstaðahúsum. Í stað hlýlegu stóru húsapýrpingarinnar á gömlu bænda-býlunum komu einstæðingsleg (meðan önnur útihús eru óbygð) og oft smekklitil kaupstaðahús, sem áttu sér engar rætur í landinu eða lífi þjóðarinnar, sum tvílyftir stólp-ar með rislitlu þaki, en annars sitt með hverju laginu.

Hver gat bygt eftir sínu höfði, því hvorki hafði venjan helgað neitt né innlend reynsla, og listamenn höfðu engar góðar fyrirmyndir gefið. Húsin bera flest nýbreytnina og þroskaleysið utan á sér. Og við þessu varð ekki gert. Öll atvik og ástæður báru að þessum brunni.

Og sama kom víðast í ljós er inn í húsin var komið. 12×14 álna húsi var krossskift; ef til vill var það hólfað nokkru meira sundur. Svo er ein af stofunum tekin fyrir baðstofu og önnur fyrir hjónaherbergi, gestastofu o. s. frv. án þess að víðast sé föstu augnamiði fylgt. Sama handahófið vill oftast verða á öllum húsmunum og búnaði herbergjanna. Fátt eitt er heima unnið, því forn hagleikur, vefnaður, tréskurður og listfengi er nú fremur fátítt hjá alþýðu. Sænskir birkistólar, ýmislegur ódýr kaupstaðarvarningur, gljámyndir af kapólskum dýrðlingum og annað smekklítið kaupstaðaprjál er oft það helzta, sem bóndinn býr herbergi sín með. Það er ekki ástæða til að lasta bændur fyrir þetta. Öllum myndi farast eins í þeirra sporum. Á öllum búnaði baðstofanna var fast fornt skipulag, en hér ræður enn geðþótti og smekklítið handahóf.

Það er áreiðanlega erfiðara en flestir ætla, að ráða bót á þessu og miklu meira vandaverk. Góður listamaður getur lagt grundvöllinn, hvenær sem vér verðum svo hepnir að eignast mann, sem sé því vaxinn, en reynslan, lifnaðarhættir og skapferli fólksins hlýtur smámsaman að móta margt, og til þess þarf langan tíma. En fyr erum vér ekki vel á vegi staddir að þessu leyti en alt fellur bæði listfengt og haganlega saman: húsin, byggingarefnin, landslagið og lifnaðarhættir fólksins.

Ekki geri eg ráð fyrir því, að það geti orðið nokkurs eins manns verk að koma þessu í fyllilega fast horf, en grundvöllurinn verður tæpast lagður á annan hátt en þann, að landið taki full-lærðan húsagerðafræðing til þess að gera uppdrætti að byggingum bænda og leiðbeina þeim í allri húsagerð¹⁾. Og það er ekki nóg, að sá maður hafi

¹⁾ Sem stendur hefir Jóh. Fr. Kristjánsson avipað starf á hendi. Eg

tekið fullgilt próf. Hann þarf að vera sérlega hæfur maður, ef vel á að fara, hafa áhuga á sínu starfi og vera sýnt um það. Og hann má ekki þykjast upp úr því vaxinn að læra af bændunum og bændakonunum! Aldrei getur hann byggt góð bændabýli, nema hann hafi næman skilning á lifnaðarháttum, kjörum og hugsunarhætti alþýðunnar og fulla samúð með henni.

Þó fátt verði enn fullyrt um framtíðarskipulag húsa vorra, eru þó einstöku atriði, sem mér virðast liggja í augum uppi, og skal því minnst á þau fám orðum.

I flestum eða öllum nýju sveitahúsunum hefir það skipulag komist á (að meira eða minna leyti), að greina sundur baðstofu (vinnustofu) og svefnherbergi fyrir karla, konur og hjónin. Án efa er þetta rétt stefna. Baðstofan á að vera íveru- og vinnustofa heimilisins að deginum til, og annað ekki. Þar á að vera lagt í á degi hverjum, ef ekki er hlýtt í veðri, en heilbrigðu fullorðnu fólki er vorkunnarlaust að sofa í köldum herbergjum, hvernig sem veður er, ef sængurföt eru hlý.

Viða mun sá gamli siður haldast í nýju húsunum, að tveir sofa saman í rúmi. Hann hlýtur að leggjast niður og ætti sem fyrst að hverfa. Það er eigi að eins, að lús, kláði og ýmsir hörundskvillar útbreiðist á þennan hátt, heldur berklaveiki og yfirleitt allir næmir kvillar. Hver maður á að hafa sitt rúm, þar sem þess er nokkur kostur.

Hvað herbergjaskipun snertir, þá ber þess að gæta, að það er eins með sveitaheimilin og kaптúnin, að þau þurfa að hafa fagra, eðlilega þungamiðju, sem öllu öðru sé skipað utan um. Slík þungamiðja er baðstofan og hjónahúsið. Þessi herbergi á að setja þar sem hlýjast er og bezt nýtur sólar, og kostur er, það,

er í engum vafa um, að það hefir komið að góðu gagni. En hann hefir því miður ekki átt kost á að læra húsgerðarlist til hlítar, og vandleg athugun hefir sannfært mig um það, að hjá því verði ekki komist. Er þetta ekki sagt Jóhanni til lasta. Hann hefir nóg að starfa, þó annar maður bættist við.

ef útsjón er góð þaðan. Þau eiga að vera sæmilega rúm-góð, smekklegr og vönduð eftir föngum, en einföld þó og þrjállaus, sem haganlegust til íbúðar og auðveld að halda hreinum. Svefnherbergi öll eiga að vera hentug og þrifa-leg, en að öllu einföld. Oftast mun hentast, að vinnufólk sofi uppi á lofti, en hjónin niðri, sérstaklega í minni hús-um. Eldhús getur verið vel sett í kjallara á stórum heimilum, þar sem gera má ráð fyrir því, að sérstök stúlka annist að mestu leyti matreiðslu, en annars er það best sett á sömu hæð og baðstofan og hjóna-húsið og ætti þá helst að gera það sem best og hentugast úr garði, gera það að þriðja herberginu, sem öll alúð er lögð við, því þar starfar konan mikinn hluta dags-ins. Aftur er það erfitt fyrir konur, sem stundum eru lasnar eða vanfærar, að eldhús sé í kjallara, en ung börn, sem lita þarf eftir, uppi í baðstofu eða hjónahúsi. Gesta-stofu (á 1. hæð) á að skipa á óæðra bekk, móti norðri, þar sem hennar gerist annars þörf, að minsta kosti ef bærinn er ekki í þjóðbraut. Engin ástæða til að gera hana stærri en brýn nauðsyn ber til.

Lítill vafi er á því, að húsin eiga að vera einlyft. Ástæðulaust að byggja tvilyft í sveit. Tvilyft hús lita-heldur ekki vel út, nema þau séu tiltölulega stór, svo lengdin verði mun meiri en hæðin. Það er að eins á allra stærstu höfuðbólum, sem tvilyft hús geta komið til greina. Hvort húsin verða portlaus og þá stærri um sig, eða minni og með porti, fer að lokum eftir því hvort ódýrara reyn-ist. Mér þykir sennilegast að portið haldist.

Hvað ytra útlit hússins snertir, þá er svo sem sjálf-sagt, að það á að bera með sér úr hverju efni húsið er gert, vera auk þess bæði traustlegt og hlýlegt í voru kalda landi. Gömlu bæirnir höfðu þessi einkenni, en sennilega hlýtur þó bæjalagið víðast hvar að hverfa með torfbygg-ingunum. Baðstofan og hjónahúsið ætti helst að vera auðþekkilegt að utan (gluggar o. fl.). Veggir verða líklega ljósleitir, kalklitaðir, meðan ekki er völ á öðrum ódýrum veggjalit. Þakið mótar flestu framar allan svip hússins.

Ef torfbökin reynast vel og bera hærri hlut, þá verða bæjapökin tiltölulega flöt líkt og í Sviss og Noregi. Annars hættir þeim við að brenna og jafnvel síga niður.¹⁾ Ef vér getum fengið gott og ódýrt þakfni, sem taki bárujárninu fram, þykir mér ekki ólíklegt, að húsin verði háreist, þar sem ekki er því veðurnæmara, bæði vegna þess, að þau þykja flestum svipmeiri og húsrúmið verður drýgra.

Í allri húsagerð eru tvö meginatriði, verkfræðispekking og list. Verkfræðispekkingin kennir að nota beztu byggingarefnin og fara sem haganlegast með þau, svo húsið verði að öllu leyti traust, hlýtt, ódýrt og endingargott. Hún er sú undirstaða, sem alt annað verður að byggjast á. Fyrst og fremst af öllu þurfum vér að reyna að hlaða í þau mörgu skörð, sem enn eru í verkfræðispekkingu vora viðvíkjandi húsagerð. Má það einkennilegt heita, að enskur húsagerðarfræðingur (Lethaby) segir: »Hið mikla meginatriði í byggingarlist á vorum dögum er það, að geta bygt óbrotinn vatnsheldan útvegg, einfalt traust gólf og umfram alt þök, sem séu betri en nú gerast«. Sýnir þetta, að jafnvel í miklu menningarlandi, þar sem byggingarlist stendur í miklum blóma, þykir þó enn stórum skorta á verkfræðispekkinguna og það í einföldustu grundvallaratriðunum. Það er ekki undarlegt, þó margt sé skamt á veg komið hjá oss, þegar þeir tala þannig, sem lengst eru komnir.

Óðara en vel og haganlega er fram úr hverju sérstöku atriði ráðið, frá verkfræðissjónarmiði, er listamannsins að taka við. Hann á að geta gert húsin fögur og hentug til íbúðar, hver svo sem niðurstaðan hefir orðið verkfræðilega, hvort sem risið er hátt eða lágt, hvort sem húsið er stórt eða lítið, ríkmannlegt eða af einföldustu gerð.

¹⁾ Héraðslæknir Magnús Snæbjörnsson segir mér, að melur vaxi á sumum þökum í Flatey. Líti þau vel út og brenni ekki. Má vel vera að hann reynist betur en grasið.

En hvað getum vér gert til þess að koma byggingarmálinu vel á veg? Eg held að þetta séu aðalatriðin:

1. Óðara en vér eigum vól á full-lærðum, álitlegum húsagerðarfræðing, eigum vér að taka hann í þjónustu landsins, til þess að gera uppdrætti að hverskonar byggingum í sveit, leiðbeina bændum í húsagerð og gera þær tilraunir, sem nauðsynlegar þættu. Meðal annars um gerð torfhúsa.¹⁾

2. Landið á að launa að nokkru leyti hæfilega marga verkstjóra, sem vel er trúandi til þess, að standa fyrir byggingu á húsi og vel kunna til steinsteypu. Bændur fengju þá menn þessa svo ódýra, að freisting væri litil til þess, að trúa miður hæfum mönnum fyrir vandasömu verki.

3. Vér eigum að ljetta öllu aðflutningsgjaldi af byggingarefnum og gera alt sem auðið er til þess, að sement og önnur helztu byggingarefni fáiast sem ódýrast.

Sjálfur lít eg svo á, að auk þessa ættum vér að koma á þegnskylduvinnu í hverri sýslu og láta mennina vinna að húsabyggingum undir góðri stjórn. Eg er í engum vafa um, að þetta gæfist vel, ef skynsamlega er farið að, og allar mótbárur gegn þegnskylduvinnu í þessari mynd, sem eg hefi heyrt, eru reykur einn og heilaspuni fáfróðra manna. Eg ætla þó ekki hér að útlista þetta nánar.

En seint mun það vinnast, að byggja 5—6000 bændabýli með því lagi sem nú er.

Það er auðveldara verk að slétta túnin og bændum ætlar ekki að nægja heil öld til þess!

Í maí 1918.

Guðm. Hannesson.

¹⁾ Ætti eg að ráða manninn, vildi eg reyna hann í 2—5 ár áður en eg veitti honum starfann til fulls.

Erasmus frá Rotterdam.

Eftir *Magnús Jónsson* dócent.

NI.

III.

Það er leitt, hve tímatalið í æfi Erasmusar er á reiki. Ómögulegt er t. d. að vita með vissu, hvenær ýms helztu rit hans komu út fyrst. Þó hefir það líklega verið nálægt 1509, að það rit flaug á vængjum vindanna út um Evrópu, sem skifti öllum í tvo flokka á svipstundu. Öðrum megin var hlegið hærra en dæmi voru til síðan Lúkían leið, en hinum megin var gníst tönnum í hamslausri bræði. Þetta rit var »Encomion Moriae« eða »Lofgjörð heimskunnar«.

Rit þetta spanst í rauninni út af samræðum við More, heima hjá honum, og fyrirsögnin er orðaleikur út af nafni hans. Heimskan er á ferð um löndin og segir frá því, sem fyrir hana ber. Guðfræðingarnir og munkarnir eiga eins og fyr bróðurpartinn af háðinu. Dæmi vil eg gefa, en erfitt verk er að þýða, vegna þess að latneskum vísindaordum er stráð um alt, orðum sem hvorki er auðvelt að þýða svo vel fari, né heldur má þýða, því að háðið dofnað við það.

Skólaspekingarnir fá meðal annars þetta:

»Viturlegast mundi vera að þegja um guðfræðingana. Þeir eru bæði hreyknir menn og bráðir í skapi. Þeir gætu marið mig sundur undir sínum 600 trúarlærdómum. Þeir gætu sakað mig um villutrú og sent þrumusleyga gegu um mig, því að þeir geyma birðir af þeim í stórum vörugeymsluhúsum. Og samt eru þeir þjónar hennar heimsku gömlu, þó að þeir vilji oft afselja henni

húsmóður sinni. Uppi í þriðja himni lifa þeir, sjálfa sig tilbiðja þeir, en kasta auri á skriðdýra greyin, sem halda sig á jörðunni. Þeir eru víggirtir með skíðgarði af skilgreiningum, ályktunum, afleiðingum, ljósum tilgátum og óljósum tilgátum. Festar Vúlkans halda þeim ekki. Þeir hitta liðina eins og þeir væru að höggva með öxi. Þeir geta sagt þér upp á hár, hvernig heimurinn var búinn til. Þeir geta sýnt þér rifuna, þar sem syndin smaug inn, og spilti mannkyninu. Þeir geta skýrt fyrir þér, hvernig Kristur myndaðist í kviði meyjarinnar. — — — Þetta alt getur hver meðal-guðfræðingur sagt þér. Hinir, sem lengra eru komnir áleiðis, geta útskýrt, hvort setning eins og »faðirinn hatar soninn« sé nokkur fjarstæða; hvort guð gæti brugðið sér í mynd konu, eða mynd asna, eða gert sig að kálhöfði, eða tekið á sig mynd djöfulsins. Og ef hann gæti það, þá hvort kálhöfuð mundi geta prédikað, gert kraftaverk eða látið krossfesta sig.

Og mörg þúsund atriði fleiri gætu þeir frætt þig um. Þeir gætu látið þig vita, hvað átt er við með »instantes«, »formalitates« og »quidditates«, þó að ekkert auga hafi litið neitt slíkt, nema þau augu, sem sjá það, sem ekkert er. Þeir eru eins og Stóumennirnir, að þeir koma með alls konar »fjarstæður«, sem þeir svo kalla, t. d. hvort meiri synd sé að drepa þúsund menn heldur en bæta skó á sunnudegi. Hvort betra væri, að heimurinn færist, eða vinnukona lygi einhverju smávegis. Svo heita nú sumir realistar, nominalistar, Thómistar, Albertistar, Occamistar og Scótistar — og allir eru þeir svo lærðir, að þeir mundu reka hvern meðal postula á gat í rökfimi. Þeir segja, að þó að Páll postuli hafi baslast við að útskýra orðið trú, þá sé þó sú skýring ekki líkt því eins góð og þeirra skýring. Postuli gat haft það til að þekkja samfylgd kvöldmáltíðarefnanna. En ef postuli hefði verið spurður um það, hvernig einn og sami líkaminn gæti verið víða í einu, eða hver væri munurinn á líkama Krists á himnum og líkama Krists á jörðu eða í sakramentinu, þá hefði hvorki Pétur né Páll getað skýrt það hálfa leið eins vel og scótistarnir. Sjálfsagt hefir Pétur og hinir postularnir þekt móður Jesú persónulega. En þeir vissu ekki eins vel og guðfræðingarnir á vorum dögum, hvernig hún komst hjá erfðasyndinni. Pétur tók á móti lyklum þekkingarinnar. En samt vissi hann ekki, hvernig unt væri að hafa lykla þekkingarinnar, og vera samt jafn þekkingarlaus eftir sem áður. Postularnir skírðu, en þeir hefðu ekki getað útskýrt nákvæmlega hin verkandi frumstæði og endanlegu ástæður skírnarinnar, og ekki mundu þeir heldur hafa getað

greint sundur hinar afmáanlegu og óafmáanlegu verkanir skírnarinnar. Postularnir báðu guð. En þeir vissu ekki, að krítarmynd á vegg getur alveg eins vel heyrt bænir. Postularnir hötuðu syndina. En enginn þeirra mundi geta útskýrt, hvað synd sé, nema með aðstoð scótistanna. — — —

Engum gat blandast hugur um tilgang Erasmusar með þessu. Hann vildi láta logandi háðið eyða öllu, sem afslaga fór.

Betlimunkarnir fá sitt, eins og við mátti búast:

»Aldrei hafa slíkir skrípaleikarar verið á guðs grænni jörð, eins og þessir prédikarabréður. Þeir breyta um rödd. Þeir rífa þökin með glymjanda. Að vera prédikarabróðir, eða með öðrum orðum betlimunkur, er fjarskalegur leyndardómur, sem einn bróðirinn kennir öðrum. Eg hlustaði einu sinni á einn þeirra. Heimskingja? — Nei, vinur, lærðan mann. Hann var að útskýra þrenningarlærdóminn. Hann tók parta ræðunnar og sýndi og sannaði, hvernig sögnin væri getin af nafnorðinu, lýsingarorðið hvíldi í sögunni og útgengi af nafnorðinu, og vafði og sneri og vatt upp haglega gerða þrenningu, rétt eins og stærðfræðingurinn dregur upp þríhyrning. — Annan mann sá eg, gamlan mann, líklega um áttrett að minsta kosti. Hann hefði vel getað verið Scótus sjálfur afturgenginn. Hann sannaði eiginleika Krists út frá stofunum í nafninu hans. Föllin þrjú, Jesús, Jesúm og Jesú, sýndu og sönnuðu órækt þrenns konar embætti hans. Eg var nærri því orðin að steingerving. Svo kemur fimti þáttur skrípaleiksins. Þá segja þeir fyrst einhverja fátánlega kerlingasögu, og sýna að hún hefir óeiginlega merkingu, siðfræðilega merkingu og dulda trúarlega merkingu og búa til úr öllu saman meiri óskapnað en nokkurt kýmniðskáld nokkru sinni fann upp á. Þeir byrja ræðuna hægt og rólega og tala svo lágt, að varla heyrist orðaskil. Svo alt í einu brýna þeir raustina og reka upp feikna óp án þess að hafa nokkuð til þess að æpa af. Þeir vilja skemta fólkinu og stagast því á marg-úreltum skrítlum. Þeir eru nauðalíkir og asninn með fiðluna. Þeir apa eftir leikurunum á leiksviðinu, en gera það klaufalega. Og samt vekja þeir aðdáun — fjarskalega aðdáun — einkum kvensnífta, sem kemur illa saman við menn sína.«

Þessi var tónninn í bókinni.

Þegar Leó páfi X. las bókina, kýmði hann og varð

að orði: »Þarna er hann lifandi kominn, hann gamli kunn-
ingi okkar«. Hann var sjálfur hámentaður maður og dáð-
ist að listfenginni hjá Erasmusi. En hann var hirðulaus-
um alt, og þótti ekkert að því, að betlimunkarnir fengju
á baukinn. Og það var snildin á »Moria«, að þó að svip-
an væri látin dynja svona miskunnarlaust á kirkjunni, þá
var hvergi eitt orð sagt, sem hægt var að hafa á. Hvergi
varð vart villutrúar, alt var vandlætingarsemi, og hún var
leyfileg — vitaskuld.

Þó var það önnur bók frá hendi Erasmusar, sem
margfalt víðtækari áhrif fékk, bæði í bráð, og þó allra-
helzt til langframa, og það var nýja testamentið. Árið
1516 gaf Erasmus út nýja testamentið alt, gríska textann
með latneskri þýðingu, frábærlega góðri, og auk þess með
inngöngum og skýringum eftir sjálfan hann. Þessi útgáfa,
sem fyrst kom nýja testamentinu í hendur alls fjölda
lærðra manna, gerði á svipstundu, eins og Froude segir,
»andlegan jarðskjálfta«. Hundrað þúsund eintök voru á
svipstundu rifin út á Frakklandi einu. Allir sáu, að hér
var opnaður fyrir þeim nýr heimur, kenning frelsarans
sjálfs, háleit og einföld, og harla ólík scótista guð-
fræðinni. Og þessi bók, sem meira en nokkuð annað bjó
í hagin fyrir siðbót Lúthers, var gefin út með árituðu
leyfi páfans.

Rúmið leyfir ekki að gefa hér sýnishorn af athuga-
semdum Erasmusar. Hann jók þær og endurbætti jafnt
og þétt, með hverri nýrri útgáfu. Þar er komið við alt
mögulegt í kenningum og siðum kirkjunnar, og flett með
hárbeittum læknisknífum ofan af meinsemdunum. En það
sem mestu orkaði þó ósjálfrátt, var það, að hér komu að-
finslurnar ekki fram í neinu flugriti, heldur sem skýring-
ar á sjálfum hinum heilaga texta — að ógleymdu leyfi
hins heilaga föður.

IV.

Erasmus var siðbótarmaður. En hann skildi það orð
á afarólíkan hátt því, sem vér höfum vanist því orði, með

Lúther og fylgismenn hans í huga. Hér á undan hefir nokkuð mátt sjá stefnu Erasmusar, einkum af nýja testamenti hans. Hann vildi friðsama siðblót. Hann hafði trú á því, að ef sýnt væri nógu skýrt fram á galla kirkjunnar og ósamræmi hennar við frumkristnina, eins og hún birtist í nýja testamentinu, þá mundu menn sansast á því, og færa alt í lag. Og því verður ekki neitað, að útlitið í þessa átt var mjög glæsilegt um þessar mundir. Sjálfur hafði hann nú náð svo miklu álit, að orð hans voru víðast skoðuð sem nokkurs konar góðsvar. Bækur hans flugu um alt og voru lesnar. Þjóðir og þjóðhöfðingjar keptust um að fá að hafa hann hjá sér, en það sýndi, að orð hans féllu í góðan jarðveg. En það, sem mest studdi þó vonir Erasmusar, var páfinn sjálfur, Leó X. Hann var persónulegur vinur Erasmusar, frá því er Erasmus var í Róm, en þá var Leó kardináli Júlíusar II. Leó dáðist mjög að Erasmusi, og vér sáum, að hann studdi að útgáfu nýja testamentisins, og var engan veginn illa við »Moria«. Hann var hámentaður, og fyrirleit í hjarta sínu munkana, með allri hjátrú þeirra og fáfræði. Vináttu sína sýndi hann Erasmusi, er guðfræðingarnir í Löwen kærðu Erasmus fyrir villutrú, og fengu rannsókn hafna á hendur honum, sem vel hefði getað kostað hann lífið. Bjargaðist hann að eins fyrir þá sök, að þegar mál hans kom fyrir páfa, þá úrskurðaði hann alt honum í vil. Vér getum því eigi undrast, þó að Erasmus segi í bréfi, sem hann ritar Fisher biskupi, vini sínum:

»Ný öld er að renna upp. Skýringarnar eru alstaðar lesnar og lofaðar, og er það ekki svo lítið sagt. Þeir mega braðum fara að hætta að reyna að grýta hann Erasmus og koma í þessa stað og kyssa hann.«

Alt sýndist undir því komið, að friður og næði fengist til þess að koma þessu í kring. Og loftið var friðsamlegt, að fáeinum rykbólstrum undanteknum, sem klerkarnir reyndu að þyrlla upp gegn Erasmusi. en hurfu jafn skjótt aftur. Erasmus hafði von um, að Leó páfi mundi

sjálfur gerast foringi að siðbót kirkjunnar, afnema mis-skilning trúarlærdóma, hjátrú, ólifnað klerka o. s. frv. og þjóðhöfðingjar, eins og Hinrik VIII. og Karl V. keisari mundu styðja hann með ráði og dáð. Vér þykjumst nú þekkja þessa menn, ekki sízt Leó, of vel til þess, að nokkurs slíks gæti verið af þeim að vænta. En það var alls eigi kyn, þótt Erasmusi litist vel á horfurnar.

En svo á einni svipstundu varpast allir þessir draumar óþyrmilega til grunna. Þegar himininn var sem friðsamlegastur, dregur skyndilega upp geigvænlegt þrumuský, og áður en nokkurn varir leiftra eldingar um himininn þveran og endilangan, og þrumurnar skaka löndin. Sá maður er stiginn fram á leikvöll sögunnar, sem dýpra mark hefir sett á minnisspjald kirkjunnar en nokkur annar á síðari öldum. Marteinn Lúther er kominn til sögunnar.

Vart er unt að hugsa sér tvo ólíkari menn, sem þó berjast fyrir sömu hugsjónum, en þeir voru Erasmus og Lúther. Það, sem fyrir Lúther skifti mestu máli, var aukaatriði fyrir Erasmus; en það sem Erasmus mat mest, var hégómi einn í augum Lúthers. Erasmus treysti því, að góð og heilnæm fræðsla mundi koma til vegar siðbót. Þá hyrði hjátrúin, þá mistu munkarnir skaðræðisvald sitt á fólkinu og þá héldist prestunum ekki lengur uppi að lifa gagnstætt því, er vel sómdi. Þá væri ekki lengur hægt að troða alls konar heimsku í fólkið, og halda því svo sofandi við trúna. Að þessu miðaði alt starf Erasmusar. Hann gaf út nýja testamentið. Hann gaf út rit kirkjuféðranna og hann ritaði sjálfur. Lúther á hinn bóginn leit á þetta alt sem mesta aukaatriði. Hann var að vísu lærður vel, en þó var hann aldrei með lífi og sál í lærdómnum, eins og margir af húmanistunum um hans daga. Hann var sjálfur býsna hjátrúarfullur, fullkomið barn síns tíma í því efni. Það sem keyrði hann af stað, voru eingöngu trúarlegar hvatir. Hann sá bæði sína eigin sál og annara sálir í voða, og það kynti bálið í brjósti hans. Syndalausnarsalan var andstygd í hans augum, eingöngu

vegna þess, að hún tældi menn burt frá sannri yfirbót. Munkdómurinn var skaðlegur vegna þess, að hann taldi mönnum trú um, að þeir gætu af eigin rammleik áunnið guðs náð. Í þessum atriðum var Erasmus aftur á móti rólegur. Kvíði um sálarheill hans kvaldi hann aldrei.

Báðir komu þeir til Rómaborgar, Lúther og Erasmus. Báðir féllu í stafi yfir spillingunni þar. En áhrifin á þá voru þó næsta ólík. Erasmus dáðist að mörgu innan um spillinguna. Hann var hrifinn af listaverkunum í bænum. Hann dáðist að lærdómi og listfengi margra við páfahirðina. Hann fann hve alt var hér hefðbra og siðbra en í ruddaskapnum norðurfrá. Lúther sýnist aftur á móti hafa verið blindur fyrir þessu öllu. Engin merki sjást um það, að hann hafi virt listaverkin í Róm viðlits. En hann skreið á hnjánum upp hinn heilaga stiga, til þess að ávinna 10000 ára syndalausn, og hljóp frá cinni kirkjunni til annarar. Og hjarta hans brann í honum, þegar hann hugsaði til þess, að á þessum háhelgu stöðum skyldu ekki mennirnir einnig vera heilagir í liferni sínu, heldur saurga staðinn með léttúð og illum lifnaði.

Sagan hefir sýnt, að það var Lúther, sem lagðist dýpra. Skynsemin sýnist eiga svo undra lítinn þátt í hegðun mannanna og gangi sögunnar á örlagastundum mannkynsins. Það eru tilfinningarnar, sem leika þar höfuðhlutverkin. Skynsemi og hugsun megna lítið móti æstum tilfinningum. Þar verður önnur æst tilfinning að koma á móti. Jarðföstum björgum verður sjaldan lyft. Þau verður að sprengja.

Erasmus vildi lyfta bjarginu. Hann hefði visast ekki getað það. En til þess kom heldur ekki. Hann var að byrja að neyta sín, þegar Lúther kveikti í tundrinu.

V.

Hvernig átti Erasmus að snúa sér í þessum nýju byltingum? Að ýmsu leyti var hann hliðhollur andmælum Lúthers. Hann vissi, að syndalausnasalan var svívörð, þó að hann bygði það á öðru en Lúther. Hann sá að

kröfur Lúthers voru réttmætar. Hann dáði kjark Lúthers. En það var líka margt, sem var andstætt hans skoðunum. Á öllum tímum eru til þeir menn, sem ekki hafa trú á, að neitt gott komi til Galileu. Erasmus var einn af þeim. Hann hafði ekki trú á siðbót, nema hún kæmi frá réttum hlutaðeigendum, en þeir voru, að hans skoðun, páfinn og þjóðhöfðingjarnir. Honum gaft ekki að stóryrðum Lúthers. Honum þótti aðferð hans öll of hrana-leg. Og hann tók því þann kostunn að sitja hjá fyrst um sinn, og sjá hverju fram yndi.

En hann vildi þó feginn taka ögn með í strenginn, og freista að beina byltingunni í þá átt, er hann taldi heppilega. Hann vildi þó ekki rita Lúther sjálfum (hann forðaðist jafnvel að lesa bækur hans fyrst í stað), til þess að honum yrði ekki með rökum brugðið um neitt makk við hann. En hann ritar háskólanum í Erfurt snemma á árinu 1518.

»Satt er það, að hún gamla frú guðfræði hefir mörg vanskapningsæxlin blotið, en betur færi þó á því, að hún væri læknuð en slegin af — — —. Lúther segir margt snildar vel. En vænt þætti mér um, að hann hafði taum á tungu sinni. Hann fengi þá meira fylgi, og verulega gott mundi af honum leiða. En ef vér nú bregðumst honum, þegar hann berst fyrir réttum málstað, er þá nokkur von um, að nokkur þori nokkurn tíma framar að tala máli sannleikans?»

Páfastóllinn hafði oft siglt hann krappan á tímunum næstu fyrir siðaskiftin, og páfarnir höfðu smávanið sig á þann hugsunarhátt, að þó að nokkuð gæfi á bátinn með köflum, þá slarkaði það æfinlega af einhvern veginn. Eitt-hvað líkt hugsaði vist Leó X., þegar hann heyrði herbrestita norðan yfir fjöllin. »Hann er fullur«, sagði Leó um Lúther. »Við skulum gefa honum tíma til að sofa úr sér vímunu«. En Lúther svaf og vaknaði, og alt af jókst guýrinn, og loks fór Leó X. að hugsa, hvort ekki mundi ráðlegast að láta prédika krossferð gegn Tyrkjum til þess

að dreifa athygli fólksins frá hinu. Um það ritar Erasmus meðal annars:

»Ekki eigum við þó vist að drepa hvern einasta Tyrkja? Nei, fáeinir eiga að halda lífi, og þá eigum við að kristna. Við sendum scótistana og occamistana til þeirra sem trúboða. Aumingja Tyrkinn! Hvað skyldu þeir hugsa, þegar þeir heyra talað um instansa, og quidditates og relativitates, og þegar þeir sjá trúboðana hárreita hvorn annan og hrækja hvorn á annan. Hvað skyldu þeir hugsa, þegar prédikarabráðurnir taka að æpa á heilagan Thómas, minoritarnir á doctor Seraphicus, en Nominalistar og Realistar fara í hár saman um 2. persónu guðdómsins, alveg eins og Kristur væri illur andi, sem mundi ráðast á þig og rífa þig á hol, ef þér eitthvað lítilsháttar skeikaði í »fræðinni« um hann? Meðan við lifum jafn spiltu lífi og við gerum, hljóta Tyrkir að líta á okkur sem ofsóknara eina. Hvernig eigum við að fara að fá Tyrki til að taka trú á Krist, meðan við ekki sýnum það í neinu, að við trúum á hann sjálfir? Trúarsetningar ættu að vera sem fæstar og einfaldastar. Sýnið þeim fram á, að Krists ok sé indælt og hans byrði létt, og að við viljum vera hirðar en ekki úlfar. — — — En hvað er um Krist hirt. Alt gengur út á syndakvittanir, undanþágur og aflausnir — alt gengur út á pyngjuna. Spyrjið háspeking einhverrar spurningar, og undir eins hrynja háfleyg orð eins og skæðadrífa. En engum dettur í hug að segja þér, hvað þú átt að gera og hvað ógert að láta.«

Þetta bréf er hér tilfært vegna þess, að það sýnir undravel andann í lífsskoðun Erasmusar og hvað fyrir honum vakti.

Ef Erasmus hefir haldið, að hann fengi að sitja hjá og horfa á siðbót Lúthers án þess að leggja þar nokkuð til málanna, þá skjátladist honum þar algerlega. Því að þangað litu nú allir. Hvað skyldi Erasmus, goðsvarið mikla, segja um alt þetta? Úr öllum áttum hljómaði þessi spurning.

Eitt bréfið kom til hans frá Lúther sjálfum. Það var svo undur eðlilegt, að hann teldi sig eiga öflugan vin, þar sem Erasmus var, þessi frumherji siðbótar innan kirkjunnar. Bréfið er blátt áfram, og jafnvel auðmjúkt. Hann biður Erasmus að afsaka það, að hann skuli dirfast að ávarpa svo frægan mann. Hann viti varla, hvernig hann eigi að ávarpa jafn lærðan mann. »En því treysti eg«, segir hann, »að eg megi líta á þig sem bróður. Eg hefi ratað í stórræði. Eg, vesalastur allra manna, eg, sem ætti heima einhverstaðar úti í skúmaskoti, þar sem loft og sól koma hvergi nærri, eg hefi hrakist út í harðar deilur móti vilja mínum«.

Sjaldan hafði Erasmus komist í jafnmikinn vanda og nú. Hann hikaði lengi við að svara. Hann var viss um, að Lúther hefði sannleikann sin megin, og Erasmus var sannleiksvinur. Hann vissi, að Lúther barðist fyrir andlegu frelsi, og frelsið var hans helgasta hugsjón. Hann segir beinlínis, að hann geti ekki barist móti Lúther, því að hann hræðist, að það væri að berjast gegn heilögum anda. En á hinn bóginn gættu honum ekki að aðferð Lúthers, og framkoma Lúthers var að stofna öllu verki hans í voða. Ef hann nú ætti að ganga beint í lið með Lúther, þá hlaut það að breyta öllu og kollvarpa, sem hann hafði hugsað sér. Það var sama sem að segja páfanum, sínum bezta vini og verndara, stríð á hendur. Og með því hefði hann eyðilagt þá ágætu aðstöðu, sem hann nú hafði. Þar að auki er hæglátu, varfærnu umbótamönnum æfinlega mein illa við það, þegar æstu og áköfu mennirnir koma og vaða inn í þeirra starf, og eru hræddir um, að öllu verði umturnað. Og loks verður að líta á það, að það var ekki Lúther sögunnar, þjóðhetjan fræga, sem hér ávarpaði Erasmus, heldur umkomulaus óþektur munkur, sem ratað hafði út í uppreisn gegn kirkju sinni. — Erasmus var enginn engill, og hann gat ekki séð fyrir gang sögunnar um ókomnar aldir. Vér getum ekki ætlast til, að hann afsalaði sér tækifærum, áhrifavaldi, vernd og hylli og jafnvel lífinu sjálfu í þágu þessa manns,

sem hann ekki þekti og féll ekki í geð að öllu leyti, og þess málefnið, sem hann var ekki nema að nokkru leyti samþykkur. Hitt má miklu fremur undrast, hve vel hann tók málaleitun Lúthers þrátt fyrir alt. Það hefðu alls eigi allir gert í hans sporum, eins og aldarandinn var, og hættan bráð, að leggja þeim liðsyrði, sem voru í mis-sætti við kirkjuna. Það skorti heldur ekki nægar ásak-anir í hans garð og getsakir, að hann væri í raun rétttri potturinn og pannan í öllu þessu, og áskoranir frá vinum hans um það, að hreinsa sig opinberlega af öllu samneyti við Lúther. Það mundu því margir hafa fórnað Lúther og þvegið hendur sínar.

En það gerði Erasmus ekki. Hann talaði djarflega máli Lúthers og siðbótarinnar við hvert tækifæri, þótt hann af eðlilegum ástæðum vildi ekki ganga beinlínis undir sama merki og Lúther. Hann ritar t. d. Friðrik kjörfursta hinum vitra:

»Lúther hefir drýgt tvær syndir, sem ekki verða fyrirgefnaðar: Hann meiddi kórónu páfans og magann í munkunum. En þrátt fyrir það á slíkt ekki að eiga sér stað, að þýzkur þegn sé framseldur án þess að sakir séu sannaðar á hann«. Eggjar hann svo kjörfurstann, að standa með Lúther og láta ekki sakfella hann án dóms og laga. Landsstjóranum hollenska ritar hann:

»Ekki get eg skilið, hvi páfinn sendir í þessum er-indum menn, sem eru jafn ósvifnir og þekkingarsnauðir. Cajetanús kardináli er ekkert nema brokinn og reiming-urinn; Miltitz er engu betri, og Aleander er fiðl.«

Það var ekki hættulaust fyrir Erasmus, með allra augu starandi á sig, að taka þannig svari þess manns, sem páfinn hafði bótað bannfæringu. Og þó er það enn djarflegra, sem hann segir um sjálfan páfastólinn og kirkjustjórnina:

»Líklega fara þeir nú að reyna að byrja Lúther eit-ur, eins og sumum af málsvörum hans í París. Ef til vill er í erindisbréfi legátanna klausa, eitthvað á þessa leið: »Ef ekki er hægt að losna við óvini hins heilaga.

stóls á annan hátt, þá má reyna að gefa þeim inn eitur, sem hans heilagleiki hefir blessað — — — « Þegar postullega svipan nær ekki lengur til, þá reyna þeir fangelsi, gapastokk, bálköst og gálga, byssur og heri, og ef þetta alt dugar ekki, þá krjúpa þeir að krossinum».

Loks svaraði Erasmus Lúther. Hann ávarpar hann »kæri bróðir í Kristi« og þakkar honum þá velvild að hafa skrifað sér. Niðurlag bréfsins er á þessa leið:

»Eg get fullvissað þig um, að þú átt góða vini á Englandi, meira að segja meðal áhrifamanna þar. Hér áttu líka vini — einn einkum. Svo að eg minnst á sjálfan mig, þá er eg bókamaður fyrst og fremst. Bókmentunum helga eg krafta mína, en forðast að öðru leyti þrætur. Mín skoðun er sú, að hæverska við mótstöðumenn orki meira en frekja. Páll losaði sig við lög-málið með því að þýða það óeiginlega. Og viturlegra mundi að atyrða þá, sem misbeita páfavaldinu, heldur en að ráðast á páfavaldið sjálft. — — — Reyndu að forðast beina uppreisn. Vertu rólegur. Stiltu skap þitt. Hataðu engan. Vertu ekki hræddur við hávaðann, sem þú hefir komið af stað. Eg hefi litið yfir skýringar þínar á Davíðs sálum og er mjög ánægður með þær. Priorinn í klaustri einu í Antverpen er mikill ástvinur þinn. Hann segist hafa verið lærisveinn þinn. Hann prédikar Krist, og ekkert nema Krist. Kristur gefi þér sinn anda, sjálfum sér til dýrðar og heiminum til blessunar».

Bréf þetta er Erasmusi til stórsóma. Hann segir hér hiklaust nákvæmlega það, sem var hans skoðun á þessu efni. Hvorki lætur hann heigulshátt draga sig út í það að andmæla framkomu Lúthers, né heldur smjæðurslöngun stíla honum neitt lof fram yfir það, sem hann gat staðið við.

Afskifti Erasmusar af siðaskiftunum og bréfaskifti hans út af þeim eru svo víðtæk, að engin leið er að rekja það hér frekar, þó að það sé mjög fróðlegt fyrir sögu siðaskiftanna. En þau fáu dæmi, sem hér hafa verið gefin, geta nokkuð sýnt afstöðu hans til siðaskiftanna

framan af. Hann var hugsjón siðaskiftanna hlyntur, en vildi stilla ærslin og var ófáanlegur til að rita gegn Lúther. En hvorugur flokkurinn skildi hann eða var ánægður með hann. Engir menn eru ver staddir á æsingatímum en köldu skynsemismennirnir, sem sjá vel gallana hjá báðum, en eru samvizkusamir¹⁾. Báðir, bæði siðbótarmenn og kapólskir, grunuðu hann um undirferli. Og sá grunur magnaðist æ meir, er á leið. Siðbótarmenn sögðu, að hann væri sér sammála, en þyrði ekki að kannast við það. En kapólskir sögðu, að hann væri upphaf og undirrót alls. Þeir, sem bezt þektu hann, voru hins vegar undrandi og sárgramir yfir því, að hann skyldi ekki vilja hreinsa sig af því öllu. En vér, sem nú getum litið rólega yfir þetta alt, vitum, að afstaða hans var allveg hrein og skiljanleg — mitt á milli flokka.

Þingið í Worms er í rauninni sá viðburður, sem snýr Erasmusi fyrst burtu frá Lúther. Það, sem þar vekur mesta aðdáun vora, trúareinurð og festa Lúthers, var í augum Erasmusar ekkert annað en heimskulegur þrái. Það var hans örugga sannfæring, að einmitt slík þing ættu að jafna deilumálin, og fyrir þeim ættu allir að beygja sig skilyrðislaust, og stuðla að því, að friður kæmist á. Hann hafði ávalt barist fyrir því, að Lúther yrði ekki dæmdur að óprófuðu máli hans. En nú vék því öðruvísi við. Nú var búið að prófa mál Lúthers, og hann dæmdur sekur. Þá átti hann að láta undan og taka aftur villu sína, að skoðun Erasmusar. En þá sýndi hann, að hann vildi fyrir engu gangast, illu né góðu. Auk þess þóttist Erasmus snemma fá þann grun, að siðbótar-kirkja Lúthers mundi lenda í nýjum trúfræðis-böndum.

Samt var Erasmus lengi ófáanlegur til þess að ganga í berhögg við Lúther. Vinir hans hinir beztu reyndu

¹⁾ Sbr. Pövl Helgesen í Danmörku.



Arkatala og blaðsíðutala tveggja síðustu árka hér að framan er röng. Skal leggja 1 við arkatölu, en 16 við blaðsíðutölu.

með öllu móti, illu og góðu, að fá hann til þess að rita móti Lúther. Sérstaklega mögnuðu þeir sókn sína á hendur honum, þegar Lúther kom út af Wartburg, og menn því alt í einu sáu, að þeir voru ekki lausir við hann. Nú var Erasmus sá eini, sem gæti fengið áheyrn. En hann þumbaðist fyrir og lofaði því einu, að hann skyldi »hugsa um það«. Og ástæðan var alt af sú sama: Þrátt fyrir alt og alt var hann hræddur um, að með því að berjast á móti siðbótinni kynni hann að vera að berjast gegn heilögum anda.

VI.

Tilgangur greinar þessarar er ekki að rekja æfisögu Erasmusar, heldur að eins gefa sýnishorn af honum og um leið sýnishorn af visindamensku og aldaranda í byrjun 16. aldar. Rúmsins vegna skal nú fátt eitt greina fleira. Hugsjón hans lá í rústum. Að visu leit stundum svo út, sem hún mundi rísa upp af nýju, en það reyndist jafnan loftkastalar. Gjáin dýpkaði jafnt og þétt, og fjandskapurinn magnaðist milli flokkanna. »Friðsamleg siðbót« fór að verða óskapnaður, sem hvergi kom nálægt veruleikanum. Samt var Erasmus furðu lengi tregur til þess að sleppa þeirri hugsjón sinni. Og það er það, sem gerir aðstöðu hans á þörtum svo neyðarlega. Hann er eins og stórhveli; sem lendir milli hafisbreiðunnar og lands. Kraftarnir og stærðin koma ekki að neinu haldi gegn slíku ofurefli. Mirabeau var ekki ósvipað staddur í upphafi stjórnarbyltingarinnar frönsku, þó að þar væri um meira sjálfskaparviti og tvíveðrunghátt að ræða.

Árið 1524 ritar Erasmus loks á móti Lúther bók sína »Um hinn frjálsa vilja«. Það var margt, sem ýtti Erasmusi af stað. Auk þess, sem áður er nefnt, bættist það nú við, að Ulrich von Hutten, kunningi Lúthers, réðist á Erasmus með sárbeittu háði, en Hinrik VIII. Englands-konungur, ástvinur Erasmusar, hafði ritað móti Lúther og fengið það óþvegið hjá honum aftur. Bók Erasmusar þykir snildarverk í sinni röð. En samt var bókin eins

og köld vatnsgusa á kæti kapólskra yfir því að hafa komið Erasmusi inn í deilurnar. Því að bókin sýndist snerta svo lítið sjálf deilumál dagsins. Hún snerti að eins há-heimspekilegt atriði, sem ilt var að fylgjast með í og alt af mátti deila um. Vel getur verið, að Erasmus hafi gert þetta með vilja. En flestum fanst vist, að fjöllin hefðu fengið jóðsött, en fæðst hlægileg mús.

Og nú tekur Erasmus fast að eldast. Heilsan var ekki sterk. Ofmikil vinna og auk þess sífeldir hrakningar land úr landi gerðu hann gamlan fyrir tímann. Saga hans hér eftir er staglsöm og ómögulegt að segja hana nema í löngu máli, enda er heimssögu-þýðingu hans lokið. Erasmus tók svari siðbótarinnar oft, eftir að hann hafði ritað gegn Lúther. Hann skrifast á við Melanchthon og ritar Georg hertoga í Saxlandi bréf, þar sem hann gerir meistaralega grein fyrir afstöðu sinni til siðbótarinnar, en oflangt er það til þess að birtast hér. Hann berst jafnan af alefli móti því, að valdi sé beitt við mótmælendur. Hann lýsir munkum og klerkum með enn naprari litum en nokkru sinni fyr og sýnir fram á, að heimska þeirra og ofstopi sé aðalhættan, sem nú ógni kirkjunni. Hann neitar harðlega að gera nýja árás á Lúther eða siðbótina. En menn skilja hann aldrei. Árásir beggja flokka dynja á honum.

Mjög sat Erasmus á hverfandi hjóli hamingjunnar hin efri ár æfi sinnar. Svo lágt komst hann, að verk hans voru fengin rannsóknardómstólunum í hendur. Svo hátt á hinn bóginn, að hæstu völd ríkis og kirkju stóðu honum til boða. Að minsta kosti tvisvar var honum boðin kardinála tign. En hann bar við heilsuleysi og svo því, að hann væri enginn maður í slíkt. »Það á ekki saman, söðullinn og uxinn«, segir hann. Sanna ástæðan var þó sú, að hann tímdi aldrei að farga sannfæringu sinni og frelsi.

Á fyrri árum sínum óttaðist Erasmus mjög dauðann. Dauðinn og rotnunin, sem honum fylgdi, meiddi svo tilfinningu hans. En nú hvarf sú hræðsla smám saman, er

árin færðust yfir hann. Og þegar dauðinn svo loks kom, gat hann fagnað honum sem vini. Það var 12. júlí 1536. Þá var Erasmus í Basel, en þar hafði hann alið aldur sinn lengst af hin síðustu æfiár sín. Hann var jarðaður í dómkirkjunni með mikilli viðhöfn.

Erasmus er í flestu einstakt barn sinna tíma, svo að lesa má aldarandann út úr persónu hans og skrifum. En þó verður því ekki neitað, að hann átti fálmarma, sem gripu óraveg fyrir sig fram, og könnuðu huldulönd framtíðarinnar. Má þar einkum nefna baráttu hans fyrir andlegu frelsi, sem í ýmsu minnir á vörn tíma. Hann vekur upp frumheimildir kristninnar og vill byggja á þeim einum. Hann vill afnema einokun og einveldi trúfræðinnar. Umburðarlyndi hans og hatur á öllu ofsóknaflagari fer og í sömu átt.

En það, sem dró úr áhrifum hans, var fyrst og fremst það, að samtíð hans fylgdi honum ekki. Til þess að ná tuttugustu riminni þurfa flestir að feta hinar níttján. Það eiga ekki nema svo fáir vængi snillingsins. Grettir fekk sitt ólán af sjálfri atgerfinni. Fyrir hana fekk hann álögurnar Gláms. Erasmus sté svo margar tröppur, að hann stóð einn uppi. Það voru álögurnar, sem hann hlaut fyrir sína atgerfi. Annað var það, að hann hitti á slíka byltingatíma, hann, andstæðingurinn allra byltinga. — En auk þess var sá hlutur á ráði hans, sem hlaut að draga úr áhrifum hans í trúarbrögðunum, en hann var sá, að þau ristu of grunt hjá honum sjálfum. Hann var visindamaður og snillingur. Það var mest fyrir áhrif frá vinum hans hinum ensku, að hann hneigðist að kirkjunni og trúmálunum yfirleitt. En trúarhitinn gat aldrei náð hjá honum suðumarkinu. Þar var altaf nýmjólkurvelgjan. Og þegar jarðhitinn eykst, svo að hver hola og hver pyttur gýs velli vatni, þá er hætt við, að sú laugin gleymist, sem aldrei getur nema volgnað.

Um sendibréf.

Alþýðufræðsla Stúdentafélagsins, Reykjavík 10. febrúar 1918.

Háttvirtir áheyrendur!

Það er fyrir tilmæli formanns alþýðufræðslunefndarinnar, að eg hefi grafið upp hjá mér gamalt erindi, sem eg flutti á árunum fyrir austan fjall. Það hefir ekki komið fyrir almenningssjónir, og þess vegna hefi eg gert kost á að flytja það nú aftur, á öðrum stað, að mestu leyti óbreytt, að eins lítið eitt aukið.

Það eru nokkrar sundurlausar hugleiðingar um sendibréf, þetta talfæri og samvinnutæki, sem notað hefir verið af mönnunum svo að segja frá alda öðli.

Bréf er komið af latneska orðinu brevis, sem þýðir stuttur. Bréf hafa líka verið einhver stytta tegund ritsmíða. Við vitum, að þau hafa farið manna á milli frá því að til er saga, en verulega almenn munu þau ekki hafa orðið fyr en pergamentið var fundið og síðar pappírinn Assyriumenn og Babyloníu skrifuðu bréf á leirtöflur, Egiptar á nokkurs konar pappir, sem gerður var úr stönglum papyrusjurtarinnar, og á pottbrot, og Grikkir og Rómverjar á vaxtöflur og papyrus. Í Austurlöndum, einkum á Indlandi, voru mjög notuð samanbundin pálma-blöð. Framan af voru hér á Íslandi rituð sendibréf á skinn. Nokkur eru enn til. Hið elzta sendibréf, þ. e. a. s. einkabréf, íslenzkt, sem varðveitt hefir verið, mun vera skrifað á miðri 15. öld.

Elzta íslenzkt sendibréf á pappír, sem til er, er frá Ögmundi biskupi, skrifað 1528, en svo eru aftur til yngri sendibréf á skinni, svo sem bréfstúfur frá Jóni biskupi Arasyni, skrifaður líklega nálægt 1540. Eftir 1550 hafa menn alment farið að nota hér pappír undir sendibréf.

Til þess að loka bréfum voru lengi notuð bönd og vaxinnsigli, en á 15. öld kom lakkið til Nordurálfa frá Kína, eins og svo margt annað, sem við höfum orðið að sækja þangað. Á síðari hluta 16. aldar var farið að nota oblátur, en límborin umslög urðu ekki almenn fyr en á 19. öld. Áður var lengi blað brotið utan um bréfið, eða þá síðasta blaðsíða þess, ef auð var, látin vera yzt, og skrifað þar utan á. Bréf, sem svo er um búíð, sjást enn stöku sinnum hér, frá gömlum mönnum, sem fastheldnir eru við fornan sið.

Í bréfum, sem til eru frá fornöld, eru ýms sérkennileg búningseinkenni, ávörp, kveðjur o. s. frv. En seinna, þegar kom fram á miðaldir, fór búningurinn, formið, að verða fyrir öllu, og þetta hélzt alt fram undir lok 18. aldar, og var þó fremur bert á hnútunum. Þá þurfti sérstaka kunnustu til þess að skrifa bréf, sem bréf gæti heitið, og þetta varð jafnvel að sérstakri fræðigrein. Menn voru þá svo ákaflega strangir í öllum titlum, og alt lenti í að fá bréfinu réttan búning. Efnið var umvafið í titlatogum háfleygum velfarnaðaróskum og annari umbúðamælgí. Þetta var orðið með föstu orðalagi, sem mikinn vísdom þurfti til að kunna að setja saman, svo að vel færi. Það getur oft verið talsverð fyrirhöfn nú eftir á fyrir viðvaninga að segja í fáum orðum efni þessara gömlu bréfa, að tína það innan úr öllum þessum reifum af ávörpum, óskum og kveðjum, formálum og eftirmálum og millimálum. — Lærðu mennirnir mynduðu sínáin saman þennan stíl, meðan virðingamunurinn milli stéttanna var ríkjandi og heiður hvers manns mátti mæla í stigatali, eins og kulda og hita. Þessi virðingamæli var þýddur á íslenzku úr dönsku, eins og margt annað gott, sem okkur hefir komið þaðan til að bæta okkur í

munni. Stigin voru mörg og mismunandi. Það má nefna nokkur: Æruverðugur, velæruverðugur og háæruverðugur, veleðla, velborni og velbyrðugi eða velburðugi, háeðla og hávelborni, signor og monsjer, alt eftir því, hver ávarpaður var. En um allan þorra manna var aftur ekki annars getið en að þeir væru með öllu ærulausir, óeðla óburðugir og jafnvel óbornir.

Eg ætla að nefna hér örfá dæmi af handahófi um ávörp og kveðjuorð í bréfum milli íslenzkra embættismanna á 18. öld, meðan þessi svonefndi kansallistill var í algleymingu.

Skólameistari í Skálholti ávarpar sýslumann:

»Göfugi, vísi og velaktaði hr. præsæs, mikils virðandi elskulegi vin!«

Kveðjuorðin eru þessi:

»Enda eg svo þetta með forlátsbón, óskum allrar velgeingni og þjenustusamlegri heilsan til hans göfugheita, samt hans dygd-elskandi kærustu, og vil svo ætíð finnast

göfuga hr. præsidis
þjenustu reiðubúinn vin
og þjenari.«

«Og á fótinn skrifar hann:

»Göfugum, vísun og velöktuðum kongl. majestis valdsmanni í Ísafjarðarsýslu Segn^r Markúsi Bergssyni, mínum æruvirðandi fautori, sendist þetta þjenustusamlega að Ögri.

Þá kemur ávarp prests til skólameistara í Skálholti:

»Velæruverðugum og hálærðum manni Sr. Jóni Thorkelssyni, mínum æru- og elskuverðum fautori, óska eg allsháttadrar lífs og sálar sannrar farsældar æfinlega.«

Loks tek eg til dæmis ávarp frá presti til amtmanns:

»Háeðla og velbyrðigi herra amtmann, háttvirðandi elskulegi herra.«

Niðurlag bréfsins hljóðar svo:

»Forlátid þetta í mesta hasti, sem eg enda með minni auðmjúkustu heilsan til yðar, minn háeðla herra, yðar velbyrðigrar

frúr og ykkar veleðla dóttur með fylgjandi óskum ævarandi guðs-
blessunar.

Eg með veneration forblív háeðla herra

amtmannsins auðmjúkúkur þjenari

Sigurður Jónsson.«

A fætinum stendur:

»Háeðla og velbyrðigum herra amtmanninum yfir Íslandi herra
Magnúsi Gíslasyni auðmjúklegast á Leirá.«

Þó að ekki sé nema málsins vegna, þá er þessi tild-
urgnótt að hverfa nú. Embættisbréf hafa raunar til
skamms tíma verið nokkuð kansellikend, sbr. þessa byrj-
un, sem var algeng ekki alls fyrir löngu: »Hér með und-
anfelli eg ekki þénustusamlega að tjá yður«, o. s. frv.
En vaxandi tilfinning fyrir sæmilega rituðu máli er að
verða aðhald í þessu efni, svo að nú er sitthvað að detta
úr sögunni smám saman, sem áður var algildar ritreglur.
Og nú er líka farið að draga úr þessari látlausu virðing-
arvottun og fyrirbænum, bæði í pennanum og á vörun-
um, sem oft hefir líklega mátt segja um: Skilur haf
hjarta og vör, eða penna. Okkur er nú farið að þykja
það brolegt, þegar við lesum t. d. ræður þjóðhöfðingja í
löndum, sem nú eiga í ófriði, þegar þeir heimsóttu hvor
annan áður, og töluðu ekki um annað en fólksvalausa ást
og eindrægni milli þjóðanna, sem þeir áttu fyrir að ráða,
þó að allir vissu, að þær bæru heiftar- eða öfundarhug
hvor til annarar og ófriðurinn væri við landamærin. Og
á mörgu má taka eftir því, að þetta almenna varadaður
er að missa rófestu, eða að minsta kosti að skifta um
búning.

Þessi embættis- eða skrifstofustill altók jafnframt kunn-
ingjabréfin eða privatbréfin, og alþýðan tók þetta eftir-
höfðingjunum.

Höfðingjanna synd

er hinum fyrirmynd

mætti hafa að málshætti bæði um þetta og ýmislegt ann-
að. En alþýðumaðurinn, sem var ekki heima í þessum
fræðum, sem lágu svo fjarri hugsunarhætti hans, vildi þá.

oft rugla saman þessum orðatiltækjum, svo að úr því varð fátíðlegasti samsetningur, líkt og þegar afbökun eru útlend orð, eða þau notuð í einhverri ímyndaðri fráleitri merkingu, t. d. »idiot« í merkingunni búmaður.

En þessi orðavafningur hvarf af efninu í bréfunum með breyttum hugsunarhætti. Embættisbréfin fóru að losna úr flækjunni og kunningjabréfin urðu einfaldari og meir blátt áfram. Bréf hafa auðvitað enn, eins og allar tegundir ritaðs máls, sín búningseinkenni. Um embættisbréfin ætla eg ekki að tala, heldur um kunningja- og privatbréfin.

Í þeim eru ávörp, byrjun, niðurlagsorð og kveðjur oft með svipuðu sniði. Menn segja »kæri vinur« og þakka fyrir síðast, og »það er efni þessa miða«, og seinast tala menn um að »brjóta blaðið«, biðja að bera kveðjur og viðtakandinn er kært kvaddur af sínum einlægum vini o. s. frv., með margvíslegum mismunandi orðum. Hins vegar byrja bréfin sjaldnast á að heilsa viðtakanda. Þó er til í byrjun bréfa: »alúðarheilsan«, næst á eftir ávarpinu. Og klausu man eg eftir, sem var algeng í byrjun á bréfum, eg held sérstaklega frá kvenmönnum, en er nú víst að verða fátíð. Hún er svona: »Elsku vina! Ætíð sæl og blessuð. Eg sezt nú niður við að pára þér nokkrar línur að gamni mínu. Ekkert hefi eg þér nú í fréttum að segja, utan mína bærilega liðan, L. S. G., og óska eg þess sama af þér að fréttu«. Og svo kemur kanske heil fréttaruna á eftir.

En yfirleitt er alt form í bréfunum að styttest, og fer það, eins og annað, eftir breyttum tíðaranda. Þó mun líklega komandi kynslóðum þykja okkar bréf jafnskringileg í framsetningu eins og okkur finst um bréf frá fyrri öldum. En allra tíma bréf lýsa að þessu leyti aldarhættinum.

Alt þetta, um formið á bréfunum, er nú ekki annað en aukaatriði, eða, réttara sagt, eitt atriði eða liður í sögu þeirri, sem sendibréfin geyma — og sú saga er meiri og merkilegri en almenningur gerir sér í hugarlund, eða svo-

er að sjá á meðferðinni á sendibréfum, að þau séu ekki metin mikils.

Sendibréfin fjalla, samkvæmt eðli sínu, um nærri allt milli himins og jarðar, um allt, sem maður má manni segja. Þar segir hver einstakur maður öðrum, hver á sinn hátt, frá atburðum og frá högum sínum, dómum um menn og málefni, frá tilfinningum sínum og leyndustu hugrenningum. Og bréfin segja frá mörgu, sem hvergi sést annarsstaðar, og hreinskilnin er þar meiri og hispursleysi en alment gerist í öðrum ritum.

Franska skáldið Guy de Maupassant segir í einni af sögum sínum, að hægast sé að þekkja mennina á sendibréfum frá þeim. Svört orðin á hvítum pappírnum séu nakin sál mannsins, en raunar geti karlmenn með mælsku-brögðum og æfingu lært að skrifa svo, að þeir geti dulið sjálfa sig í bréfunum.

Í þessu er eflaust mikill sannleikur. Sendibréfin eru ómetanleg þing til að þekkja mennina.

Við Íslendingar erum margir hneigðir fyrir ættfræði. Okkur þykir gaman að vita nöfn á forfeðrum okkar. En svo er eins og margir láti sér lynda þessa nafnapulu. Um hitt er minna fengist, hvernig maður þessi Oddur, Hjalti, Auðunn eða Steinn hafi verið, eða þessi Sigga, Vigga eða Sunneva, siður spurt um æfíkjör þessara manna, eðlisfar eða hugsunarhátt. En þetta er steingerð ættfræði. Væri ekki meira um vert að eiga einhverjar menjar þessara manna, sem hægt væri að geyma öldum og óbornum? Nú vill svo oft til, að margur maðurinn legst svo í gröfina, að hann lætur ekki eftir sig neinar varanlegar menjar um sjálfan sig, nema nokkur sendibréf, því að minning og munnmæli lifa sjaldnast nema í fáa ættliði. Síðan byrgist sýn, og eftir það segir fátt af einum. Væri það nú ekki skemtílegri og meir lifandi ættfræði að safna saman og varðveita einhverjar mikilsverðari menjar um forfeður sína en að eins nöfnin á þeim og hvernar stéttar þeir hafi verið? Og ætli okkur þætti ekki fróðlegt og mikils um vert að geta t. d. eftir 1000 ár heyrt 1000

ára gamla forfeður okkar tala saman? Þetta geta sendibréfin veitt okkur, ef rétt er með farið.

Það er ekki nein smáræðis liðsemd, sem sendibréfin veita til þess að varðveita liðna tímann, og ef þetta hefði verið mönnum hugstætt fyr, þá væri sagan okkar ólíku fjölskrúðugri, og fróðleikstréð víða með þéttu limi, þar sem nú er ber greinagrindin. Það er ekki eingöngu persónusagan, sem sendibréfin veita svo ómetanleg gögn til, heldur líka viðburðasagan, málssagan, bókmentasagan og öll menningarsagan, í einu orði sagt.

Frá viðburðum segja bréf oft nákvæmar og betur en þur fræðiskilríki. Bréfin eru þar svo oft frásögn eða framburður sjónar- eða vítundarvotta, og sú skýrsla verður oft svo lifandi og frá svo mörgu sagt, sem önnur rit sleppa. Því geta bréfin oft orðið til þess að fylla í ýmsar eyður hjá sagnaritaranum, sem önnur gögn skilja eftir. Þetta á ekki sízt við um eldri tíma bréf, meðan tímarit og dagblöð voru ekki til eða varla til. Og nú eru sendibréf yfirleitt að styttest. Rósemi lífsins er minni en áður, og menn leyfa sér minni tíma til þess að setjast niður við bréfskriftir. Símar og samgöngur létta undir allar fjarlægðir. Bréfsþjöld og sneplar í símskeytastíl «fylla nú breiða bygð». Bréfabörfin fer því smáminkandi, og ekki er ótrúlegt, að sendibréf hverfi næstum alveg þegar fram liða stundir. Það má hugsa sér, að einhver uppgötvun gæti útrýmt þeim að mestu leyti. En enn þá eru þó skrifuð mörg og merkileg bréf í veröldinni, og hér á út-skækli heims er eðlilegt, að þau geti enn veitt mikilsverð drög til viðburðasögunnar, meiri en annarstaðar, þar sem aðrar heimildir til hennar eru fullkomnari.

Þá hefir málsagan og málfræðin ekki smáræðis gagn af sendibréfunum. Þar leggja svo margir orð í belg, og bréfin eru svo margvíslegs efnis. Það er því ekki nema eðlilegt, að þar megi finna fjölda orða og orðasambanda, sem öðrum ritum hefir sést yfir, eða þau ekki getað komist að annarstaðar rituð en í bréfi. Þó að ritmálsblævin sé oft auðsær í sendibréfum, má þar jafnan finna, fremur

en annarstaðar, margar sannar myndir talaðrar tungu. Íslenzka málssögu væri hægara að semja, ef til væri þó að ekki væri nema t. d. $\frac{1}{10}$ hluti af öllum sendibréfum, sem skrifuð hafa verið hér á landi, skift niður á aldirnar að réttu hlutfalli. — Og náskylt málinu, eða einn þáttur af því, er stílfærið. Bréfin verða einatt nákvæmasta leiðbeiningin um stíleinkenni hverrar aldar í öllum myndum. Þau sýna okkur, að hugsanabúningurinn er oft, eins og hugsanirnar sjálfar, líkur hjá skyldum stéttum, og margt og margt fleira, sem er athugunarefni stílfræðingum.

Bókmentagildi hafa bréfin oft ómetanlegt. Oft getur verið meira bragð að einu stuttu bréfi en heilum bókum, sem taldar eru til bókmenta. Eg þarf ekki að nefna nema Þingvallabréf og Gamanbréf Jónasar Hallgrímssonar. Þá er ekki einkisvirði að hafa til bréf frá þeim mönnum, sem bókmentasagan á að fjalla um. Þau veita oft traustari skilning á höfundinum og nákvæmari fræðslu um hann en önnur verk hans geta látið í té, draga fram í birtuna margt, sem þar var áður í myrkrunum hulið, sýna okkur kjör hans og hugarfar og baráttu fyrir lífinu, skýra fyrir okkur, úr hvaða jarðvegi hann er sprottinn, o. s. frv., oft með sannari litum en önnur gögn geta veitt, eða að minsta kosti verða öðrum skilríkjum til uppfyllingar. Af því, sem út hefir verið gefið, get eg nefnt t. d. bréfkafla frá Jóni Borgfirðingi í grein um hann í Skírnir fyrir nokkrum árum, bréf frá síra Páli Sigurðssyni frá Gaulverjabæ, sem komu út í Óðni ekki alls fyrir löngu, og bréf Tómasar Sæmundssonar, sem líklega er Jónasi Hallgrímssyni að þakka að til eru, því að hann hefir ekki eingöngu haldið saman öllum bréfum Tómasar til sín, heldur líka í einu bréfi sínu til Konráðs Gíslasonar hvatt hann til að gera slíkt hið sama, en til þessara tveggjanna eru flest merkustu bréf Tómasar. Þegar lesin eru slík bréf, þá geta menn ekki annað en viðurkennt, að maðurinn hefði aldrei orðið jafn-vel eða rétt skilinn án þeirra. En þarna er nú aftur komið að persónusögunni, enda má segja, að hún sé undirstaða undir sögu allra málefna.

En fleiri bréf eru merk en bréf frá merkustu eða þektustu mönnunum, af þeirri sjálfsögðu ástæðu, að sagan er ekki eingöngu um merku mennina, heldur er hún frásögn um mannlífið á öllum öldum og í öllum myndum, letruð lífsreynslu þjóðanna. Við þurfum að eiga sem fylsta frásögn ekki eingöngu um alla mikilsverða viðburði og einstaka menn, sem við þá viðburði koma, heldur og um einstaklinga í hópum og heild, daglegt líf og heimilishætti manna á öllum tímum og alt, sem að því lýtur, skapferli og hugsunarhátt sem flestra einstaklinga í þeirri heild. Það er því augljóst, að sendibréfin verða mikilsverður þáttur í ýmsum fróðleik á öllum sviðum menningarsögunnar, því að þar eru svo margir til frásagnar, og hver talar þar fyrir sig, en ekki aðrir fyrir þá. Þau eru oft eina eigin frásögn, sem til er, jafnvel heilla stétta. Því verða bréfin mörgu öðru eða flestu öðru fremur til þess að leiða okkur inn í andrúmsloft þess tíma, sem þau eru skrifuð á.

Þegar minst er á, hve mikilsverð sendibréf eru frá nafnlausum almenningi, er vert að geta um danskt ritverk, sem er mjög merkilegt og alveg einstakt í bókmentunum. Danskur rithöfundur, Karl Larsen, prófessor, hefir tekið sér fyrir hendur að safna og vinna úr ýmsum sendibréfum frá almenningi. Fyrst tók hann til meðferðar einkabréf og dagbækur, sem danskir hermenn skrifuðu í stríðinu 1864. Hann hagaði þessu svo, að hann tók í einu runu af bréfum frá einum manni og sagði sögu hans í stríðinu, alt sem á daga hans hafði drifið, mestalt með eigin orðum mannsins, þ. e. a. s. lét bréfin sjálf segja frá, en styttaði þó og feldi úr ýmislegt, sem minna máli skifti, eða sagði frá í ágripi. Svo tók hann flokk bréfa frá öðrum manni á sömu leið, og svona sagði hann sögu margra hermanna af ýmsu tagi og öllum stéttum, og gaf út í bók árið 1897, en breytti þó nöfnum manna, ef þess var óskað af þeim, sem bréfin létu af hendi. Þessi bók vakti mikla athygli, og var mjög bráðlega þýdd á þýzku. Það var sagt um hana, að slík sálgæðing og jafnskýr og

falleg mynd af lyndiseinkunn dönsku þjóðarinnar væri hvergi til. Síðan tók Karl Larsen að safna og vinna úr á sama hátt bréfum og dagbókum frá dönskum útflytjendum, og hefir gefið út í bók, sem heitir »De, der tog hjemme fra« (Þeir, sem fóru að heiman). Af þessari bók voru komin út 4 bindi 1914, en ekki veit eg nema fleiri séu komin síðan. Þar segja ekki eingöngu sögu sína ýmsir eldri útflytjendur, heldur líka margir, sem farnir voru ekki alls fyrir löngu, núlifandi menn, og sum bréfin ná alt fram á síðustu tíma. Öll bréf, sem útgefandinn hefir notað, hefir hann útvegað bréfadeild ríkisbókasafnsins til eignar. Þetta eru átakanlegar og sannar lýsingar úr æfi manna af ýmsum stéttum, karla og kvenna, bæði þeirra, sem af fátæku alþýðufólki voru komnir, og eins hinna, sem voru af betri ættum, sem kallað er. Mönnum ber saman um, að þetta starf Karls Larsens sé eitthvert hið mesta þjóðnytjaverk og ritið eitt hið merkasta, sem komið hefir fram í dönskum bókmentum. Eg get ekki stilt mig um að segja hér frá orðum eins af helztu rithöfundum Dana, *Jeppe Aakjær*, um einn kafla í þessari bók, sögu, sem kona segir þar af sjálfri sér í sendibréfum. Aakjær segir um þennan kafla:

»Eg játa það og fyrirverð mig ekkert fyrir, að eg vil láta tylftir af skáldsögum — sjálfa mín og annara — fyrir þessa einu stuttu sjálfslýsingu veslings konu, sem situr í mannsaldur milli arins og vöggu, kvalin á sál og líkama, og dregur upp lífsstrand sitt með hörðum og skörpum dráttum, eins og fanginn, sem skrifar með demanti á fangelsisrúðuna. Áður en langt um liður verður það viðurkent, að þessi kafla sé eitt af því, sem merkilegast er í bókmentum okkar. En hvað þessi bók er mannleg, stórfenglega mannleg!«

Mér þykir ekki ólíklegt, að útflytjendasagan íslenzka mundi geta auðgast að sama skapi af bréfum hingað vestan um haf, og þetta væri sannarlega íhugunarefni.

Karl Larsen hefir farið með þetta efni af mikilli snild og þekkingu. Hann hefir dvalið langvistum í Vesturheimi og kynst þar staðháttum og högum manna, og því kunn-

að að velja úr það, sem sérkennilegast var og heildarlegast af öllum þeim bréfagráa, sem hann varð sér úti um til yfirlits. Hann hefir sökt sér niður í þetta starf af miklum áhuga, enda hefir honum verið það ljóst, að sendibréfin eru alveg frábær heimildarrit. Hann segir svo um einkabréfin í grein, sem hann hefir skrifað:

»Einkabréfið er kostuleg gersemi.

Þegar menn taka sér það í hönd, þá er eins og finna megi æðslátt lífsins í þessu pappirsblaði, þar sem maður hefir látið í ljós tilfinningar og hugrenningar, sem að honum steðjuðu og urðu að ryðja sér eimitt þessa braut til annars manns.

Í einkabréfinu eru altaf tvær sálir: þess, er ritaði, og hins, er við tók.

Í línunum og milli þeirra, í því, sem á er minst, og því, sem ekki er nefnt, í orðavali, frásögn og tæpitungu, koma þeir báðir í ljós með nútíð sinni og fortíð og öllum andlegum einkennum.

Einkabréfið er fundur tveggja manna án þess að vitni séu við.

Ög það fundur, þar sem fjarlægðin jók þrána, skýrði hugsunina og dró úr feimninni.

A okkar öld urðu til bókmentir, sem leituðust við, með því að skilgreina mannssálina, að fletta sundur fjölbreytuni lífsins með tilstyrk listarinnar, svo að okkur yrði í augum uppi.

Sannsógli þessara bókmenta hlýtur oft að verða að engu hjá óbrotnum bréfum nafnlausra manna, pappirsbleðlum, sem einlægt eru á glötunarbarmi.

Þau eru á bál borin þegar eitthvað amar að; þau eru látin í kistuna hjá hinum látna; þau fara forgörðum þegar tekið er til í gömlum hirzlum af nýjum mönnum, er rúm þurfa fyrir bréf úr eigin æfi

Það er mál til komið, að það verði skilið og viðurkent, hversu ómetanlega mikilsvert einkabréfið er sem mannlegar menjar.

Í öllum bókasöfnum, hvar sem er, er safnað saman prentmáli, alt niður í ómerkilegustu leikhúsauglýsingar, til vitnis um mannandann í ýnsum greinum. Bréf hafa líka verið geymd frá körlum og konum, sem breytileg virðing breytilegra tíma hefir talið mikilsverð. En blind tilviljun var látin um að halda í örfáar leifar af öllum þeim bréfum og dagbókarbrotum, þar sem sjálfar kynslóðirnar, sem koma og hverfa, hafa lýst lífi sínu, og hvergi eins afdráttarlaust, með öllum innileika þeirra og smámunasemi, göfgi og lítilmensku.

Þessi lýsing Karls Larsens á meðferð sendibréfa, þar sem hann þekkir til, á ekki síður við hér. Við höfum orðið fyrir óbætanlegu bréfatjóni. Og, það sem verst er, á bréfum verða enn skaðar á hverju ári. Raunar hefir stöku maður haldið saman og ráðstafað á réttan hátt bréfum, sem honum hafa safnast, en það er ekki nema undantekning. Aftur hafa aðrir, og þeir eru, sem betur fer, nokkru fleiri, varðveitt bréf, sem þeir hafa fengið frá merkur mönnum, eða mönnum, sem voru orðnir merkir menn áður en bréfunum var glatað. Því er t. d. bréfasafn Jóns Sigurðssonar orðið jafnstórvaxið og það er. En af þess háttar bréfum frá nafngetnum mönnum sögunnar hefir eldurinn þó tekið í sinn hlut allan obbann, sjálfsagt hér á Íslandi marga vættarbagga. Þá er ekki smáræði af bréfum glatað, sem gert hefðu höfundana að merkur mönnum, ef til hefðu verið, en nú eru ekki einu sinni til nöfn á, eða þá nöfnin ein, sem enginn tekur eftir, í línu og línu á stangli í kirkjubókunum. — Og síðast, en ekki sízt, allur sá aragrúi af öðrum sendibréfum, sem málið og menningarfræðin, sagan af íslenskku þjóðinni, hefir mist í margan snaran þátt af sjálfri sér.

Ef öll þessi glötuðu bréf væru nú komin hingað og væru hér úti fyrir, og við værum beðnir að ganga út og gera að þeim bál, mundi líklega fæst okkar vilja verða til þess. En þetta er ekki meira en menn hafa gert og gera enn alment, hver í sínu horni. Það væri ekki annar munurinn en sá, að okkur hlötnaðist að horfa á þá stórkostlegustu nýársbrennu, sem sést hefir á Íslandi.

Menn hafa farið hér afskaplega gálauslega með bréf sín, og gera enn, alt of margir. Sendandinn hefir venjulega ekki þurft að skrifa: »Brendu bréfið« eða »ónýttu þennan miða«. Viðtakandinn hefir samt hent þeim eða brent jafnóðum eða fyrir dauða sinn, eða þá skilið þau eftir sig ráðstöfunarlaust, og síðan hafa afkomendurnir týnt þeim eða glatað á annan hátt.

Þessi meðferð á bréfunum stafar ýmist af hugsunarleysi eða af ásköpuðu pukri með sendibréf sín, eða af hvorutveggja.

Hugsunarleysið er í því fólgið, að mönnum er ekki ljóst, að almenn sendibréf séu nokkurs virði, enda hefir lítið verið gert til að benda mönnum á það. Menn taka ekki eftir öðru en að bréfin varði viðtakendur eina. Og sumir hugsa sem svo: Eg fæ ekki það merkileg bréf, að heimurinn missir ekki mikils í, þó að þau glatist, ef hinum er haldið saman. En þessi hugsun: hvað munar um mig? er algerlegur þröskuldur í öllum velferðarmálum, og þá færi heimurinn ekki batnandi, ef allir tækju að hugsa svo.

Nú munu margir spyrja: Eru þá öll sendibréf þess virði, að þeim sé haldið saman? Eg svara: Eg veit það ekki, en játa þó, að svo sýnist um mörg bréf, að einu gildi, hvað um þau verði. Þó er sízt að treysta því, að viðtakendur dæmi rétt sjálfir, að bréfin varði ekki almenning eða eftirkomendurnar, og þó að aðrir samtíðarmenn dæmi það rétt vera, er aldrei að vita, hvað framtíðinni finst. Vel er hægt að hugsa sér, að eftirkomendur okkar finni einhverjar nýjar bliðar á bréfunum, sem við höfum ekki fundið eða okkur hugsast. Það er t. d. ekki óhugsandi, að rithandarfræðin taki, þegar tímar líða fram, einhverjum stórbreytingum til fullkomnunar. Að minsta kosti er vissast að geyma sem flest bréf, og gerir þá minna til, þó að með slæðist sitthvað, sem lítið gildi hefir.

Líklega hefir fæstum samtíðarmönnum verið ljóst gildi bréfsins frá íslenzkri sveitastúlku, sem prentað er í Sýnisbók Rasks af fornum og nýjum norrænum ritum í sundurlausri og samfastri ræðu, sem út kom 1819. Bréfið var þá skrifað fyrir nokkrum árum, og er gott sýnishorn af því, að bréf eru ekki einkisverð, þó að efnið sýnist ekki mikið í þeim. Af því að þessi bók er orðin fáum kunn, og hefir vist aldrei verið víða til hér á landi, enda útlendingum einkum ætluð, þá ætla eg að leyfa mér að lesa bréfið:

Góði frændi!

Stödd á Vattarnesi.

Þegar eg vissi, að flestir þínir vinir og skyldfólk fór að skrifa þér til, þótti mér svo mikið fyrir að verða ein eftir af öllum og

reyna ekki að pára þér einhverja vitleysu að gamni mínu; en hvert bréfsefnið á að vera veit eg ekki. Þú skrifaðir líka þeim flestöllum til, en þótt þú gætir ekki farið að hafa ómak fyrir að skrifa mér til, furðar mig ekki, þess vegna, að eg var enginn maður að launa það. Héðan er ekki mikið að fréttu, en ef nokkuð væri, þá færðu það að vita frá þeim, sem betur geta komið því í stílinn en eg. Þórdur er kominn aftur með sætum sigri, og mátti segja þar við: betra var seint en aldrei. Eg heyri sagt þú hafir farið að Odda og litist þar vel á með alt slag. Góður guð gefi þér gangi ætíð vel. Eg hefi verið skökk í fæti lengi í sumar, er soleiðis orsakaðist: eg fór inn að Kollaleiru að sækja ljá handa mér að slá með, en var eins og vant er, eg hafði ekki nema einfalda þófadyngu á hestinum, lét eg so ljáinn í brekánsbrotið, og sófór eg á stað, en þegar eg kom út fyrir túngarðinn, datt eg af baki, og lenti so ljárinna í utan fótur öklunum á vinstra fæti, skarst so æðin í sundur, sem ekki varð fyr en víst eftir 6 tíma stemd. Þetta skeði rétt eftir að bróðir minn var kominn heim. Hann kom þegar 16 vikur voru af sumri, hefi eg so ekkert getað gert síðan, utan eg hefi sótt hingað aflann með Guðnýju okkar. Það er sagt hún fari að Teigagerði í vor, í von um að Björn Jónsson vildi hallast að henni. Eg óska henni til lukku, ó verði það! Eg er nú ekki að þessu bulli lengur; en upp á allan okkar forna kunningskap gerðu svo vel og forláttu þetta klór; en hræðilega verð eg vonarleg þegar bréfin fara að koma frá þér í vetur. Vertu alla tíma blesaður og sæll, þess óskar þín einlæg en lítils orkandi Siggutetur.

Það er ekki verið að segja frá stórvíðburðum í bréfinu því arna. En þó segir það betur en löng lýsing frá sál þessarar sveitastúlku. — Þetta einfalda mál og þessi barnalega framsetning. Og orð eru þarna úr daglega taliinu, sem orðabókunum hættir við að sjást yfir, t. d. orðið vonarlegur. Líka sýnir það slettur, sem þá eru til í málinu. Og það segir okkur frá ýmsu fleiru, frá ljánum í brekánsbrotinu, stúlkunum, sem sendar voru eftir atlanum, og stúlkunni, sem vistaði sig á bænum þar sem maðurinn átti heima, sem hún leit til hýru auga, samúð vinstúlkunnar o. s. frv. Eg ætla nú ekki að vera að þynna þetta lengur út, en góðan rithöfund hefði þurft til að búa til svona bréf eftir öðrum, þó að það sýnist ekki

vera neitt einstætt. En þó að þetta bréf standi í sýnisbók íslenzkra bókmenta, þá hafa orðið til á þeirri tíð mörg jafnmerk bréf og þaðan af merkari. Og hver fær ekki enn bréf, sem eru efnismeiri en þetta bréf — bréf, sem geyma ýms atvik, lýsingar, setningar, hugsanir, sem hvergi sjást annarstaðar. Og þessi rit megum við ekki missa, því að við eigum ekki enn þá rithöfunda, sem segja okkur jafnsatt frá og segja frá jafnmörgu. Siggutetur hefir þarna í stuttu bréfi orðið frábær rithöfundur fyrir sína stétt, og hver stétt á marga jafngóða rithöfunda, og hér fer eins og annarstaðar, einn bætir annan upp, og það, sem einn sleppir, tekur annar.

Þá er það pukrið með sendibréfin. Það kann nú oft að vera sprottið af því, að menn eru dulir í gerðinni, en þó er það ekki altaf svo. Mér finst eg hafa orðið þess var um suma menn, sem annars eru ekki dulir, að þeir fara með bréf, sem þeir fá, eins og manns morð, sýna þau ekki einu sinni sinum nánustu, og það þótt bréfin séu laus við alla leyndardóma. Það er eins og sumum þyki alveg sérstaklega ástatt um sendibréf, ekki veit eg af hverju. Eg gæti trúað því, að erfitt sje að hafa bréf út úr þeim mönnum, eða telja þá á að halda þeim saman til varðveislu.

En nú er svo oft, að bréfin geyma það, sem kallað er leyndarmál, það, sem vinur segir vini í trúnaði og á ekki að fara lengra. Nú þykir okkur leitt, ef þessi leyndarmál eiga að svifta okkur merkilegustu bréfum, sem einmitt geta verið merkileg fyrir þessa leyndardóma, því að þar, sem einn skrifar öðrum leyndarmál, er hreinskilnin með hönd á penna. En nú er það aðgætandi, að þessi svo kölluðu leyndarmál eru venjulegast einhver atvik, sem oftast varða sendanda eða viðtakanda, og eiga að fara dult í þann og þann svipinn, en eftir 1 eða 2 ár eða lengri tíma eru þetta engin leyndarmál framar. Bréfaeigandinn, eða sá, sem lætur eftir sig bréf, getur líka alt af girt fyrir, að þessi leyndarmál verði uppvis eða heyrinkunn fyr en eftir tiltekið árábil, sem hann getur

sjálfur ákveðið. Hann getur mælt svo fyrir, að bréfin megi ekki lesa fyr en 50 ár eru liðin frá dauða hans, 100 ár eða lengri tími. Ætli það liði yfir okkur, þó að við læsum eitthvað í bréfum t. d. frá langafa okkar um ástabrall hans utan hjónabands eða fram hjá hjónabandi, svo að eg nefni nú einhverja þá óttalegustu leyndardóma, sem sendibréfin geta haft frá að segja. Við verðum að reyna að lita á okkar bréf frá sjónarmiði framtíðarinnar. Lika getur það borið við, að um leyndarmál þau, sem standa í okkar bréfum og við viljum ekki láta sjást eftir okkur, sé fjallað í annara bréfum, sem geymd verða til eilífðar, og þar sé um þessi sömu leyndarmál okkar farið ókunnum og ómildum höndum og þau rangfærð eða eitthvað fært manni til verra vegar, og þá getur verið gott að geyma sín bréf til réttlætningar. — Annars verður líkt um leyndarmálin nú og í framtíðinni, að ekki verður annað talið til þeirra en það, sem næst er þeim mönnum, sem þá verða uppi.

Þá kunna margir að skirrast við að geyma bréf af því, að þau séu höfundinum til hjóðs. Stöku sinnum kann að mega virða mönnum þetta til vorkunnar, en það, sem sumir telja sér og öðrum óvirðing að, er oft í raun og veru hégómi. Þó að viðtakanda þyki t. d. ósæmilegum orðum farið um aðra menn eða málefni, getur öðrum þótt það höfundi til hróss. Gaman og keskni skil eg ekki í að framtíðin misskilji, fremur en við, eða taki hart á því, að réttritunin á bréfum alþýðumanna sé ekki sem fullkomnust, og margt fleira mætti upp telja.

Enn munu menn segja, að bréfin séu oft engin lýsing af þeim, er skrifaði, eða að sú lýsing sé einhliða eða röng. En þetta vitum við alt. Stundum geta bréfin verið svo snubbótt og stuttaraleg, að þau segi ekkert um manninn. Þetta á ekki sízt við nú, þegar sendibréfin eru yfirleitt að styttast. Þetta skilur líka framtíðin. Og það veit hún líka, að bréfin geta aldrei verið tæmandi lýsing af bréfrítaranum. En það verður ekki heldur persóna bréfrítarans, sem alt snýst um, þegar á að fara að lesa bréfin

og nota, heldur verða bréfin visbending um ótal atrið frá liðna tímanum.

Sumir munu nú segja: Það er efnilegt að eiga það á hættu, að öll bréf, sem eg skrifa, verði geymd um aldur og æfi. Eg steinhætti þá að þora að skrifa bréf. En þeir, sem svona hugsa, hafa víst fæstir aflað sér tryggingar fyrir því, að bréf þau, sem þeir hafa þegar skrifað, verði ekki geymd. Sem betur fer eru þeir þó nokkrir, sem hafa haldið saman bréfum sínum, og því getur verið orðið ofseint fyrir þessar hræddu sálir að iðrast eftir dauðann. En þessi ótti er varla svo almennur, að hann geti haft mikil áhrif á geymslu sendibréfa. Eg hefi ekki trú á því, að menn fari að hætta að skrifa bréf þess vegna, né að margir fari að gera öryggisrádstafanir um, að bréfum sínum sé eytt, því að flestir eru nú svo gerðir, að þeim er bæði annara um og eins sárara um umtal í lifanda lífi en eftirmælin. Það hefir oftast verið samtíðarinnar vegna, að menn hafa skrifað: Brendu bréfið eða ónýttu þennan miða, því að menn hafa líka reynslu fyrir því, að hún er í svo mörgum atriðum þröngsýnni og rangsýnni í dómum en framtíðin eða aldirnar, sem á eftir koma. Því verður oft þægilegt þeim, sem bréfin lætur eftir sig, að geta ákveðið sjálfur, hve nær þau megi lesa. En fæstir munu bera kvíðboga fyrir því, að eitthvað kunni að geta komið á prenti um þá eða eftir þá eftir t. d. eina öld, enda er það aðgærandi, að ekki getur komið út á prenti nema litill hluti af þeim bréfum, sem geymd eru, og því síður af þeim, sem ætti að geyma.

En þó að fæst sendibréf, sem fara manna á milli, verði nokkurn tíma prenthæf, né kaflar úr þeim, þá eru þau mörg þræðir, stærri og smærri, í voð sögunnar. Það verður ekki eingöngu að þeim litsviftir, ef þá vantar, heldur verður voðin víða með losi og glompum, sem aldrei verður bætt úr, ef þessir þræðir eru ekki varðveittir.

Þetta er mál, sem varðar alþjóð manna, því að hér getur nærri hver einstaklingur rétt hjálparhönd. Þjóðgripir handa Þjóðmenjasafninu eru í fæstra höndum, op-

inber skjöl eða landskjöl sömuleiðis, eða önnur merkileg handrit, enda er nú sæmilega hugsað um að halda þessu til haga. Alls konar söfn varðveita liðna tímann, og margt er vel hirt. Þó fara ótal menjar forgörðum, sem hægt er að varðveita og framtíðin mun sakna, eins og við söknum ýmsra hluta frá fortíðinni. Hver þjóð, sem vill lifa, sér, að henni er nauðsynlegt að halda sem bezt við sem flestum þjóðmenjum. Eitt af því, sem almenningur getur veitt góða liðsemd til, fram yfir það að leggja fé í viðhaldskostnað þessara sögumenja, er varðveizla sendibréfanna, því að bréf sendir og meðtekur nærri hvert mannsbarn.

Á meðferðina á bréfunum var eg búinn að drepa. En þó að skaðinn sé orðinn mikill, má þó enn gera yfirbót og bjarga því, sem bjargað verður.

Enn eru til mörg og merkileg bréf um allar jarðir. Sum eru líklega orðin nokkuð gömul. Eg hefi sérstaklega trú á því, að gömlu konurnar lumi á ýmsu þess háttar í kistuhandraðanum. Nýrri bréfin eru þó miklu fleiri, því að margir geyma þó bréf sín í einn ætlið, og altaf er að bætast við.

Ef einhverjir duglegir menn tækju sig nú til og sópuðu heimilin, hver í sinni sveit, að bréfum, eða herjuðu út svo mikið, sem hægt væri að fá, mundi það verða álitlegt safn.

Annars held eg, að fengsvonin sé ekki mest með þeirri aðferð, að einstakir menn reyni að fá almenning til að láta bréfin af hendi við sig, heldur mundi það verða affarasælla til frambúðar, að þeir, sem út í þetta hugsa, kenni mönnum úti í frá, að þessi hrapallega glötuun sendibréfa sé syndsamlegt athæfi, brýni hvern og einn, sem þeir ná til, að halda utan um sín bréf, vari þá við brunahættu og fúa og bendi þeim á, að til sé hvítt hús hér í Reykjavík, Safnahúsið, Landsbókasafnið, sem taki við þessu þakksamlega og geymi þetta langtum betur en þeir sjálfir, sýna mönnum fram á, að vissast sé að koma bréfunum þangað sem fyrst, að þeir geti sjálfir ráðið því

og mælt fyrir um, hve nær böggulinn megi opna, en ef þeir vilja ekki skilja þau við sig í lifanda lífi, þá að benda þeim á, að nauðsynlegt sé að gera í tíma ráðstafanir um meðferð þeirra eftir dauða sinn, helst í arfleðsluskrá.

Þegar mörgum fer að lærast þetta, kemur allur fjöldinn á eftir smám saman. Það er hægt að láta sér detta í hug, að söfnunarnáttúran, sem er svo rík í okkur, ætti að geta ráðið einhverju um þetta. Þetta yrðu að minsta kosti þarfari söfn en frimerkin, sem nú hafa kveikt í mönnum bráðnæma farsótt um allan heim.

Þessi bréfasöfn ættu að geta myndað sérstaka stofnun, þegar fram líða stundir. Þá ætti að geta risið stórhýsi við hliðina á Landsbókasafninu, Sendibréfasafnið. Þangað mundi margur vitja, því að þar yrði margháttaður fróðleikur saman kominn. Og eg gæti hugsað mér, að gefið yrði út, og það áður en mjög langt líður, sérstakt ritverk, Sendibréfasafn, sem kæmi út bindi af á hverju ári, í líkingu við Fornbréfasafnið, með ýmsum völdum bréfum frá kunnnum mönnum og ókunnnum.

En engin lög geta, og eiga ekki að geta, skyldað menn til að láta af hendi einkabréf, sem þeir fá. Öðru máli gæti ef til vill verið að gegna um bréf, sem orðin eru gömul, frá löngu látnum mönnum, eins og t. d. sett eru lög um verndun fornmenja. Annars á þetta að vera undir mönnunum sjálfum komið. Og þetta sjálfræði er ekkert hættulegt, ef mönnum færi að skiljast, að bréfin séu menjar, sem vert sé að geyma. —

— Þegar eg var barn, var mér sagt um týnda muni, t. d. ef eitthvað af gullunum mínum týndist eða ónýttist, að þeir væru komnir í glatkistuna. Mér er þetta sérstaklega minnisstætt enn, af því að eg sá fyrir mér þetta kistugímald, og mig langaði svo skelfing mikið til að sjá ofan í hana. En enginn gat vísað mér á, hvar hún væri.

Og enn langar mig til að líta ofan í glatkistuna, því að þar eru mörg falleg gull saman komin. En hún er harðlæst um alla eilífð, þessi hirtla — ef hirtlu mætti

kalla. Allir geta þó látið í hana, en enginn tekið úr henni, og ekkert, sem þangað kemst, á nokkurn tíma útkvæmt.

Hver maður á því sín vegna og eftirkomendanna að gera sitt til, að þangað komist sem fæst af því, sem á ekki þangað að fara. Það er líka verið að varna því nú orðið á mörgum sviðum. Í útlöndum er jafnvel farið að láta hljóðritana geyma raddir manna og málróð. En bæði hér og annarsstaðar fara enn sendibréfin, þessar hljóðu tungur tímans, þessir sagnarandar um fortíðina, unnvörpum í glatkistuna.

Jón Sigurðsson
frá Kaldaðarnesi.

Frá Frakklandi, 1916—1917.

Eftir John Galsworthy.

Klukkan var yfir ellefu, og póstskipið hafði staðnæmst fyrir nokkurri stundu, þegar vér komum upp á þilfarið og urðum þess vísari, að skipið þokaðist hægt í glaða tungsljósi inn höfnina í áttina til húsanna í Havre. Það er eins og að sigla inn í annan heim, þegar mann ber sjóleiðis að borg á næturlagi. Eg minnst þess, að mér hefir tvisvar áður orðið eins við: þegar eg kom til San Francisco austan að með eimskipi, og í annað sinn er eg leið á róðrarbát inn í Abingdon við Thames. Havre lá í ró og fegurð, dálítið dularfull, upp eftir hæðunum, með ljósafljöld, er enginn virtist nota. Það var kalt, en loftið var undir eins öðru vísi. Það var þurrara, léttara en loftið sem vér komum úr, og manni var létt um hjartað og sló það ögn örara en áður. Í tungsljósinu voru húsin, er risu hvert að baki öðru með lokuðum hlerum, lík á lit og blóm að næturlagi — föl, hlælétt, skelglituð. Vér færðumst hægt inn með hafnarhlaðinu, heyrðum fyrstu frönsku raddirnar, sáum fyrstu frönsku andlitin, og fórum aftur ofan að sofa.

Mikil var alúðar kurteisín á hernaðarskrifstofu brautarstöðvarinnar, þegar vér fengum hin nauðsynlegu skírteini fyrir apítala-leiðarbréf vor; en það kostaði tíu mínútna skriftir fyrir tvo skrifstofupjóna, er þó höfðu hraðan við. Og manni varð að hugaa: Er unt að sigra með alt þetta form í eftirdragi? Svona er það alstaðar á Frakklandi — ofmörg formsatriði, ofmargir menn við að annast þau. Eins og Frakkland gæti ekki treyst sjálfu sér, án þess að nostra við að færa alt í letur, sem enginn lítur á aftur. En Frakkland gæti treyst sjálfu sér. Það eru ljótu skriftirnar!

Eini förunautur vor var ekki hermaður, en í fasi hans var hinn sami ólýsanlegi vottur um hlutdeild í stríðinu, er nálega hver maður á Frakklandi ber með sér. Vér fórum um víðáttumikið land, ósáð undir nóvemberlofti; húsin í hlé við hin stóru tré, sem

lykja rétthyrnis um bændagarðana í Normandí. Á ökrunum var fátt af fólki.

París er París, var það og mun æ verða. París er ekki Frakkland. Hefðu Þjóðverjar tekið París, þá hefðu þeir náð á sitt vald hjartanu í líkama Frakklands, miðstöð æðakerfis þess; en anda Frakklands hefðu hinar þungu hendur þeirra ekki gripið, því að hann hefir þar aldrei búið. París er hörð og annrík; Frakkland er það ekki. París ann skemtunum, Frakkland elskar lífið. París er glæsilegur útlendingur í landi sínu. Og þó búa þar margir sannir franskir menn og franskar konur og margur ramfranskur smáreitur er þar yrktur í garði lífsins.

Á Lyonar-stöðinni eru »loðinkinnar« (poilus) að fara með lestinni suður á bóginn. Þarna sjáum vér þá fyrst augliti til auglitis í frægðarljóma þreytunnar. Þeir eru þreytulegir, rykugir og sterklegir. Siun svipur er á hverju andliti, ekkert þeirra er tómmt eða þess manns, er lætur aðra hugsa fyrir sig. Þeir hlæja ekki hrottaglega né heimsklega. Í samanburði við þá eru ensku andlitin sviplaus og Englendingar harðvaxnir og — snotrir. Þeir eru hlaðnir skringilegum byrðum, vasar þeirra tútna út af brauði og pytlum; blágrái búningurinn þeirra er fallegri en hermannabúningurinn okkar, og kollóttu hjálmarnir fara þeim vel. Ös virðist jafnvel sjálfum sem »Tumarnir« okkar séu steptir í sama mótinu, en af öllum þessum hóp eru naumast tveir klæddir eins. Franskir hermenn unna öfgunum; þeir geta gengið í dauðann uppstroknir með hvíta hanzka; þeir geta þózt góðir af að ganga órakaðir og í bættum fötum. Einn þeirra stendur og starir á spjaldið, þar sem skráðir eru farartímar og viðkomustaðir járnbrautarlestanna. Þreytulegt andlitið á honum er töfrandi og augnaráðið svo, að eg get ekki lýst því. Það er eins og honum sé horfið það sem gerist í kring um hann. Wales búi eða Hálandingur gæti horft svona, en enginn Englendingur.

Í vagninum okkar eru fjórir franskir liðsforingjar. Þeir tala hvorki við okkur né hver við annan; þeir halla sér aftur í sæti sínu og sofa, hreyfa sig naumast alla nóttina. Einn þeirra hrýtur lítið eitt, en með eina konar prúðmensku. Við skiljum við þá árla morguns í Valence og komum ofan á hina stormsömu járnbrautarstöð. Áður en stríðið hófst, byrjaði ferðæfintýrið þarna. Valence er indælt orð, og þarna er hliðið að Suðurlöndum. Þegar kom frá Valence, var tíminn til að vakna, svipta horninu á gluggtjaldinu frá og horfa á landið í fyrstu skágeislum sólarinnar: einkennilegt

eléttuland með gulleitum hæðum í fjarska; leika þar þurar vindhviður í ljósrauðum blómum möndlutráanna. En nú var dimt yfir Valence, því að það var í nóvember, og rigning. Í biðsalnum voru þeir þreyttir hermenn er reyndu að sofa, og einn, er sat uppi og vakti, og var honum það feimniblandin gleði að fá sinn bluta af kökum okkar og blöðum. Svo var haldið áfram í morgunregninu inn í Dauphiné, eftir dálitilli brautarálfmu. Nú eru aftur tveir liðsforingjar í vagninum okkar og einn, sem ekki er hermaður. Þeir tala í hálfum hljóðum um stríðið eða þá hærra um gístistaðina í Valence. Einn þeirra er höfuðsmaður, fríður sýnum, aldraður og föðurlegur á svip, andlitið breiðara en á Englendingi og skín úr því meiri ást á lífinu, og ögn minni virðing fyrir því. Liturinn á augum, kinnum og hári er dýpri. Þegar þeir tala um stríðið, er rómurinn alvarlegur og dulur. »Les Anglais ne lâcheront pas«, (Englendingar bregðast ekki) eru einu orðin sem eg heyri glögt. Yngri liðsforinginn segir: »Og hvernig væri hægt að hegna?« Eg heyri ekki svar höfuðs mannsins, en af leiftrinu í augum hans má ráða, að það er mannlegt og viturlegt. Lestin vindur sér áfram í stormi og regni upp með straumhörðu fljóti, um fjallarrætur og síðan um ung fjöll. Aðaltrén eru naktar Langbarðalands aspir, Helzta smáþorpið liggur um hvaesan hnúk og gnæfa berir turnar á tindinum. Liturinn er alstaðar mógrár.

Við erum komnir. Hávaxinn og sterkur ungur hermaður, sem allur er eitt bros, svo að skín í hvítar tennurnar, þrífur farangur okkar út, vagn þýtur með okkur í hrakviðrinu upp í gegnum bæinn, og þá niður aftur og yfir fjótið, upp eftir longum furuskógargöngum, og nú erum við komnir á spítalann okkar.

Hve mennirnir eru margvíslegir kringum langa borðið við miðdegisverðinn! Og þó eru þeir líkir í einu: eins konar fjör og næmleiki er þeim öllum sameiginlegur. Sumir eru ögn tortryggir við þessa nýkomnu menn, en sú tortryggni hefir persónulegan blæ, er ekki stéttar tortryggni né heldur er það sú hin dumba vörn, er vér temjum oss í Englandi. Franskur hermaður, sé hann ekki frá París, á eitthvað af barnaeðlinu í sér, honum svipar til barns, sem ef til vill veit meira en þú, barns, sem hefir lifað mörgum æfum á undan þessu lífi, gáfaðs barns, er skynjar skap þitt, og kemur fúslega til þín með meiðslin sín, þegar það finnur að þú vilt líta á þau. Hann er laus við það að líta öfugt og önuget á mein sín, eins og oss Englendingum er kært. Ef til vill hættir honum við að dekra við þau, stunda þau með einkennilegum blendingi af

stóumanna glaðværð og dapurri tillátsemi. Það er eins og alt annað í fari hans; hann finnur alt svo miklu fljótar en vér — hann er svo miklu næmari fyrir áhrifum. Ásýndarmunur á mönnum er greinilegri en í voru landi. Þarna er hávaxinn Savoymaður úr riddaraliðinu; hann er handarvana, hefir ljóst yfirskegg, burstað upp til endanna, þrekinn og sterkur, gráeygur, gæddur eins konar spaklegu sjálfstrausti; að eins tuttugu og sex ára, en gæti verið fertugur. Þarna er sann-rómanskur maður, sem var grafinn í jörð niður við sprengingu hjá Verdun; fríður sýnum, dökkhærður, höfuðið hnöttótt og litur í kinnum. Hann finnur að öllu og gerir gys að því, er jafnaðarmaður, háðfugl, fallegur maður og þróttugur, skýr, og gengur í augun á konum. Þarna eru bændur tveir frá miðju Suður-Frakklandi. Þeir þjást báðir af slæmri lendagikt; þeir eru tillitsseinni, augnaráðið dapurt og minnir á apa; er sem þjáningar þeirra séu þeim gáta. Hér er sannfranskur maður, síðherji (Territorial) frá Roanne, yfirkominn af gikt, kvikur og kátur, og þjáður, bráðlyndur og bláðlyndur, fremur lágur vexti, sólblendur, móeygður, heldur bjarthærður, kjálkafríður og laglegur í andliti; það er sál í augunum, er horfa ögn upp á við; fjörutíu og átta ára — elztur þeirra allra. Þeir kalla hann a fa. Og hér er prentari frá Lyon. Hann hefir fengið taugalömun við sprengingu; litarast í meðallagi, stuttur, kringluleitur og snotur, mesti mannúðar- og hugsjónamaður, heimiliskær og hinn kurteisasti. Augnaráðið minnir ögn á hund. Og hér er annar taugalamaður; hann er frá »herjuðu svæðunum«. Augun mógræn, tortrygginn mjög, en ber þó hjarta í brjósti, þegar á reynir; snotur, hugsandi, snöggur í hreyfingum sem köttur, tauganæmur og vill fara sínu fram. Svona er sinn með hverju móti. Séu nokkrir eiginleikar sameiginlegir þeim öllum, þá eru þeir næmleikinn fyrir áhrifum og ástúðin. Um hóp af Englendingum finst manni þetta ekki. Áður gerði eg mér í hugarlund, að á bak við kurteisi og menningarbrag Frakka leyndist ögn af eðli tígrisdýrsins. Í einum skilningi er það ef til vill svo, en það er ekki grundvöllur skaplyndis þeirra — fjarri því! Bak við tígriseðlið er altur maður með margra alda menningu, og kemur það fram jafnt hjá öllum. Kurteisi Frakka er enginn yfirborðs eiginleiki; hún er síðfágun, er á sér eðlileg upptök í hlýju hjarta; hún er yottur um næmt skynbragð á skapi og tilfinningum annara; hún er runnin af menningu, sem er svo gömul, að hún tengir saman, undir ólíku yfirborði, alla þessa margvíslega mótuðu menn og kynþætti — Savoy-men-

og Suður-Frakka, íbúa Mið-Frakklands af latneskum uppruna, Norður-Frakka, Bretóna, Gaskóna, Baska, Augvergnebúa, jafnvel Normaðímenn að nokkru leyti, og Parísarbúa — bindur þá alla hlýjum og traustum ættarböndum. Það er eins og þeir hafi allir setið öldum saman undir vegg og látið kvöldsólinu gagnverma sig, eins og eg hefi svo oft séð gamla fólkið í þorpunum sitja á kvöldin. Sól Frakklands hefir gert þá alla líka; hún mikla og sæla sól, sem ekki er of suðræn, en einmitt mátulega suðræn.

Og frönsku konurnar! Séu karlmennirnir bundnir þessu dulrúfulla ættarbandi, hve miklu fremur eru konurnar það. Hvað er það þá í eðli frönsku konunnar, er gerir hana svo alveg einstaka? Í einni bók eftir Anatole France segir dóttir við móður sína: *Tu es pour les bijoux, je suis pour les dessous*. (Þú ert gefin fyrir gimsteinana, en eg fyrir línskrautið). Frönsk kona er í andlegum skilningi *pour les dessous*. Hún er gædd sérstökum, fastheldnum, skýrum og slyngum gáfum. Það finnst, hvar sem farið er um Frakkland, í öllum stéttum — í sveit og í borg. Hún getur ekki eytt og spent, hún gerir gott úr hverjum hlut og snýr út hans beztu hlið. Ætti eg að nefna áþreifanlegt dæmi virðingar fyrir sjálfum sér, þá mundi eg segja — franska konan. Auðvitað er það sérstök tegund þeirrar dygðar og að miklu leyti bundin við þennan heim; og ef til vill kemur hún ekki alveg eins skýrt í ljós nú og áður. Á spítalanum eru nokkrar franskar konur: þjónustustúlkurnar, sem halda öllu í góðri reglu — blessuð matreiðslukonan, sem við unnum ekki að eins fyrir steikina, sem hún býr til. Hún er stolt af syni sínum, sem er hermaður. Áður en stríðið hófst var hann prófessor, nú undirforingi! Sjálf er hún efnuð, á tvö hús í smábænum. Hún er þýð og þolinmód, og mjög ráðrík um réttina, sem hún býr til og bládnir eru þeim efnum og ilmi, sem einkennir alt það, sem ramfranskt er. Í litla, brúkkóttu, bleikföla andlitinu á henni býr mikil mildi og stilling; alt af er hún rólega hæversk og alvarleg, en tekur yndislega öllu gamni og sýnir viturleg vinahót þeim, sem það eiga skilið. Hún er gimsteinn sem vill gera eitthvað *pour la France* (fyrir Frakkland). Og hér er frú Jeanne Camille, sem á tvær dætur og einn son, of ung- an til að vera hermaður. Það var eldri dóttir hennar, sem vildi koma og þvo gólf í spítalanum, en var neitað um það, af því að hún var of falleg. Og móðir hennar kom í staðinn, kona, sem ekki þurfti að koma, um fimtugt, en þrekvaxin sem franskar konur eru, þfuni í vangans slæðu dókkrið, hárið enn svart og andlitsdrættirnir

fallægir og reglulegir. En hvað hún var dugleg! Hún er líka skrafhreyfin og gamansöm, þegar tími er til. Og Claire, sem segist vera veil og draumlynd; en hvern skyldi gruna það? Átján ára, en holdug eins og fertug kona og rétt að byrja að grennast. Hún ber sig eins og franskur stúlkur læra frá blautu barnsbeini að bera sig; augun fögur eins og í suðrænni skógardís, skær, brún og gáfuleg, og ögn skóggengin. Hún hugsar lítið um sjálfa sig — ólíkt enskum stúlkum á þeim aldri —, hefir gaman að því að vinna og leika sér; hún góða »dómgreind«, sem kallað er, og hlýtt hjarta. Sann-frónar kona.

Þá er »húsfreyjan« á búgarðinum, sem gefur spítalanum mjólkina; gráeygð gæðakona, er gerir verk bónda síns, sem er á herstöðvunum. Hún á litla stúlku og dreng, sællegri og rjóðari en alt, sem augað lítur. Og svo á hún lítinn, eineygðan mág, sem drekkur. Það veit guð, hann drekkur! Hvenær sem maður fer í spítalaerindum inn í þorpið, má sjá asna-kerru spítalans, með falllega, gráa asnanum fyrir, við Café de l'Univers, eða hvar það nú er, og þá er segin saga, að Charles er þar inni. Hann leiðir lóðin kinnana okkar í freistni, og þarf að vísu ekki mikið til þess. Frakkland er of auðugt af víni. Sólin í frönsku vínunum fjörgar og gleður blóðið í æðum Frakklands. En gjóf vinsins er ekki varið vel. Sjá má auglýst með stórum stöfum, að drykkjuskapur hafi orðið Frakklandi dýrari en fransk-þýzka stríðið 1870 — ekki veit eg hvað satt er í því! Franskur drykkjuskapur er ekki eins lúalegur og okkar bjór- og whisky-þamb, en ekki er skemtilegt að sjá hann, og hann óprýðir fagurt land.

Hvað landið er fagurt! Aldrei hafði eg áður skynjað litatöfra Frakklands. Bleikrauð leirflögubök, grábláir eða dökkrænar hlerar. Og svo hið virðulega snið og einföldu fletir á húsunum, sem eru laus við alt tildurskraut eða línur, er stíga til þess eins að fara niður aftur. Alstaðar eru hlynirnir með sínum fjölbreyttu stofnum og dansandi léttleik. Ekkert er yndislegra en hlynir að vetrarlagi, þegar granvaxnar greinarnar og smáhnapparnir riða við heiðfólan himin, og ekkert er grænna á sumrum og fegurra en sóldröfnóttur skuggi þeirra. Sín litasál er í hverju landi — og birtist best á vetrum. Það er vonlaust verk að lýsa slíkri sál í fáum orðum; en segja mætti, að sál Spánar væri brún, Írlands græn, Englands krít-blá-græn, Egiptalands sem glampanði sandsteinn. En er lýsa skal lit Frakklands, þá gefur það óljósa hugmynd, að segja að hann sé ljós-fjölublár; blærinn er léttur, fjörgandi, tær — að minsta

kosti á Mið-Frakklandi og Suður-Frakklandi. Þegar maður kemur inn í euskt þorp, hve fagurt sem er — og þau eru mörg mjög fögur —, þá fær maður aldrei hina einkennilega skörpu hugar-skynjan, sem kemur yfir mann, þegar maður fer inn í eitthvert franskt smáþorp eða franska borg — sömu skynjan eins og þegar horft er á málverk eftir Francesca. Blár víðarreykurinn, ljósrauður tígulsteinninn, gráir hlerarnir, grábrúnir hlynir, bláfölur himinn, gulleit húsin, og umfram allt hreinar línur og tært loft. Aldrei gleymi eg síðkveldi einu, er eg þeysti heim í vagni að loknum einhverjum erindum. Sólin var að ganga til víðar og brauzt nú fram úr skýjunum eftir þykkviðrisdag; fjöllin ljómuðu í purpura- og rósalit, snævi typt við bláan himin; undursamlegur ljós-fjólublár blær leið sem reykur um dalinn, og háu trén — hlynir og kýprus-viðir — gnæfðu sem turnar. Ekki er furða þó Frakkar séu and-ríkir, orð, sem er svo ólíkt orðinu »andlegir« á voru máli, því að það eru þeir ekki; þeir eru fyrst og fremst borgarar þessa heims — líka frönsku trúmennirnir. Því er það, að þeir yfirleitt bera meira frá brunni félagslífsins en vér, þoku-eyjarskeggjar, sem lifum ekki nema hálfu lífi, vegna þess að vér metum svo mikils óframkvæmdar siðkenningar vorar. Ekki einn Englendingur af tíu trúir því nú í raun og veru, að hann eigi annað líf í vændum, en vantrú hans hefir ekki enn sætt hann við það, að njóta þessa lífs sem bezt, eða kveðið niður afturgöngur þeirrar trúar, er hann hefir kastað. Helður himinn og björt sól, sem þó er ekki svo heit, að hún lami athafnaþróttinn, hafa í Frakklandi getið af sér skærari augu og skýrari heila og mengað sálirnar dálitlu af heilbrigðri holdshyggju. Frakkar fyrirlíta ekki né vanrækja meðulin til að ná markinu. Þeir gera ráð fyrir því, að til sé karl og kona. Þeir vita að til þess að lífa góðu lífi verður að eta vel, til að eta vel verður að matreiða vel, til að matreiða vel verður að rækta jörðina vel og viturlega. Frakkland! Láttu þér í tíma vor illu örlög að kenningu verða. Glataðu ekki ást þinni á landinu, láttu ekki stóriðnaðarstefnuna gleypa bændalýðinn og ginningar auðsins og glys borganna draga þig inn í sína vonarvana hringi. Vér Englendingar höfum með brauki og bramli farið langt inn í paradís véla, reykháfa, kvikmynda og fimm aura blaða. Vér höfum látið arf vorn af heilsu, virðuleik og fegurð fyrir auð, sem þó er illa skift. Þú stóðst riðandi á sama hengifluginu þegar stríðið kom, og með heljarhrammi sínum og styrjarstormi biður það búið að hrinda þér fram af. Streiztu móti af öllum mætti! Aðalhættur

þínar tvær eru drykkur og ginningar stórborganna. Engin kynslóð getur varðveitt heilsu og fagra siði, ef hún fellur djúpt fyrir þessum freistingum. Þér mun jafnvel ekki farnast eins vel og okkur, ef þú bilar. Við höfum grófari og þolnari taugar, enda höfum við minni yndisþokka að missa. Þú hefir skarað fram úr fyrir yndisþokka þinn og virðingu fyrir sjálfu þér. Ef þessar dygðir dvína, eins og þær verða að dvína í kámugum klóm stóriðnaðarins, þar sem menn drekka sér til fróunar, þá sloknar stjarna þín. Bóndinn lifir hörðu lífi; bændur verða fljótt hrukkóttir og veðurbitnir; þeir eru engir englar. En þó þeir séu þröngsýnir og aðsjálir, tortryggir og hneigðir til drykkjar, þá eiga þeir sér rætur og veru í sönnu lífi, við brjóst náttúrunnar, og varðveita eins konar einfaldan virðuleik og heilbrigði, sem fer forgörðum í stórborgunum. Annastu bændurna, og landið þitt sér um sig.

Í tali við »loðinkjunnana« okkar urðum vér þess varir, að þeim liggur ekki vel orð til þingmannanna sinna — hafa ekkert traust á þeim. Um franska stjórnámálamenn veit eg ekkert; en ekki er það ófundvert að standa í þeirra sporum og hætt er við, að skórnir kreppi að þeim eftir stríðið. En »loðinkinninn« hefir nú enga trú á neinu, hafi hann nokkurn tíma haft hana, nema trúna á landið sitt, en hun er svo rótgróin, að hann gefur út fyrir hana sinn síðasta lifspyrsta blóðdropa og bálvar sjálfum sér, og hverju sem er, fyrir þetta hetjuæði sitt.

Á spítalanum okkar var ungur Spánverji úr útlandingsveitinni. Hann hafði verið í Cambridge, og leit aðkomnum augum á alt franskt. Hann leit svo á sem »mér er fjandans sama« (je m'en foutism) væri ríkjandi í franska hernum. Það væri undarlegt, ef svo væri ekki. Skynugir menn geta ekki þolað þau örlög, að mannlífið sé svona ár eftir ár gert að strýtleik. Til allrar hamingju fyrir Frakkland, þá hefir föðurlandsást sona þess aldrei verið neytt upp á þá. Hún hefir sprottið í hjarta þeirra, eins og grasið og villiblómiu á grundinni, jafnhliða frjálsræðinu til að finna að og ávita. »Loðinkinnanum« stendur á sama um alt, það er svo sem auðvitað! En hann er sjálfur ofurlítil ómeðvita hluti af Frakklandi, og um sjálfan sig stendur engum á sama. Ríkisræktuð föðurlandsást hleypti þessu stríði af stað; hún er sóttkveikja, er veldur stormenskueði og blindu. Ríki sem kennir föðurlandsást í skólum sínum er á leið til vitfirringar! Enginn skyldi treysta slíku ríki! Þeir sem vilja að England og Frakkland að stríðinu loknu fari að dæmi hinnar ríkiriðnu þjóðar, er opnaði þessar flóðgáttir

daufans, og kenni börnum sínum trylta landsdyrkun undir gælu-nafninu föðurlandsást, þeir eru að reka naglana í líkkistur landa-sinna. »Mér er fjandans sama« er eðlileg afleiðing þriggja ára-stríðs og miklu betra en hin leiðitama örvænting, sem svo margir þýzkir hermenn hafa endað í. Vér vorum í Lyon þegar fréttist um rússnesku stjórnarbyltinguna og undanhald Þjóðverja frá Ba-paume. Borgin og járnbrautarstöðin voru fullar af hermönnum. Þar var enginn guðmóður, engin æsing, ekkert annað en hin venju-lega þreyta og kalda ró. Og maðni varð hugsað til þess, hvernig «loðinkinninn» getur verið, hugsað til miðdagsverðarborðsins um jól-in á spítalanum undir grænum blómfestum og rósrauðum Kína-ljóskerum. Þar mátti heyra kliš og mas og hlátur þessara frjálsu og óþvinguðu manna í rauðu spítala-sloppunum sínum. Frakkar eru svo glaðværir, svo miklir æringjar. Hið ömurlega heljarfarg þessa stríðs virðist voðalega grimmilegt, þegar það kemur niður á slíkri þjóð, og haleitur er sá hetjuandi, sem þeir hafa borið ósegj-anlegar hörmungar þess með. Úti í litla, afskekta þorpinu okkar, sem á sinni tíð var rómverskt þorp og enn á sér leifar af róm-verskum múrum og borgum, átti hvert heimili sína feður, bræður, syni, fallna, stríðandi, hertekna, eða særða. Mæðurnar voru aðdá-anlegar. Gömul hjón ein, í pjátrarabúð, höfðu mist eldri son sinn, en yngri sonurinn var á vígstöðvunum. Reyndu þau jafnan að stilla sig um að minnast á stríðið, en þó fór svo ætíð að lokum í þau skifti, sem vér komum til þeirra, að þar kom tal þeirra niður, og að vörmu spori fór móðirin að gráta og þögult tár féll niður um kinu hins aldurnhigna föður. Þá benti hann á landabréfið og sagði: »En lítið þér á, hvar þeir eru, Þjóðverjarnir! Getum vér staðnæmst þar? Það er ómögulegt. Vér verðum að halda áfram unz vér höfum rekið þá burt. Það er óttalegt, en hvað á að gera? Æ, hann sonur okkar — hann var svo efnilegur!« Og móðirin, sem sat grátandi við að búa sem best um tinatengurnar, tautaði gegnum tárin: »Il faut que ça finisse; mais la France — il ne faut pas que la France — Nos chers fils auraient été tués pour rien!« (Þetta verður að taka enda; en Frakkland — ekki má Frakkland — Elsku synirnir okkar hefðu þá verið drepnir til einskis). Vesalings hjón-in! Eg man eftir öðrum hjónum uppi í brekkunni. Gamla konan, tíguleg eins og hertogafrú — ef hertogafrúr eru tígulegar — bað okkur endilega að koma inn og setja okkur niður, svo að hún gæti því betur skrafað við okkur um syni sína: einn var fallinn, annar

særður, tveir enn á vígvellinum og sá yngsti ekki enn nógu gamall. Og meðan við stóðum þarna, kom faðirinn, gamall bóndi, með yngsta soninn. Hann var ekki alveg í sama hug og gamla konan og ekki eins rólegur; honum virtist að menn væru nú á dögum engu betri en des bêtes féroces (villidýr). Og sannast að segja var bændaöldungsspeki hans eins miklu æðri en keisaranna og stjórnararindrekanna eins og líf hans var æðra en þeirra. Ekki langt frá þessum litla búgarði er sá staður, sem fremur öllum öðrum í þessu fjalllendi vekur fegurðartilfinningu manns og hugleiðingar. Þar stendur gamalt klaustur, yndislegt og afskekt við fjallsrætur og lykja hæðir um. Nú er það haft fyrir búgarð. Á því er ein gluggarós, smágerð eins og kongulóarvefur væri ofinn í steinvirknið. Þangað höfðu gömlu munkarnir leitað, til þess að vera lausir við deilurnar í aðaldalnum og brotsjóa bardaganna. Mátti enn sjá menjar hins friðsæla lífs þeirra, fiskitjarnir og akur, sem enn var í rækt. Hefðu þeir lifað á þessum dögum, þá hefðu þeir verið í stríðinu, barist eða borið særða menn af vígvellinum, eins og prestar Frakklands, sem mér er sagt að ellefu þúsund séu fallair af — eg vona að það sé ekki satt. Svona fer heiminum fram. Ríki himnanna kemur!

Vér vorum í þorpinu daginn sem liðsmennirnir 1918 fengu fyrstu tilkynninguna um herþjónustu. Daprar voru mæðurnar, sem horfðu á syni sína ganga um strætin með merkjum og söng til að sýna, að þeir væru teknir gildir og væru reiðubúnir að gerast fallbyssufæða. Eg þori að segja að ekki einn einasta þessara pilta langaði í hjarta sínu til að fara. Þeir hafa séð of marga af bræðrum sínum koma aftur vígslitna, og saknað of margra sem aldrei koma aftur. En þeir voru engu ókátari en nýliðarnir, sem vér sáum vorið 1913 í Argelés í Pyreneafjöllum, er fóru með söng og hávaða daginn, sem þeir voru skráðir.

Það var fleira, sem minti oss og litla þorpið, á blóðrauðu línuna, sem dregin er á landabréf Frakklands. Á spítalanum okkar voru menn frá herjuðu löndunum, án allra fregna um konur sínar og fólk, er múrað var inni bak við járntjaldið. Einstöku sinnum barst þó einhver fregn til þeirra og áhyggjunum létti ögn frá hjartanu; þeim stókk bros einn eða tvo daga. Einn var hjá okkur með lamaða fætur, er allan daginn sat við að flétta mislitaþræði og tefla skák. Alt hans fólk — kona, faðir, móðir, systur — öll voru þau á valdi Þjóðverja. Lengi má leita til að finna svo góðan dreng, og dæmalaust var hann þakklátur og geðprúður,

en aldrei hefi eg séð sorgbjtnari augu. Í þorpinu var lítil stúlka til að miuna oss á stríðið, því að aldrei gátum vér gengið svo fram hjá búðinni fólksins, sem skotið hafði skjólshúsi yfir hana, að vér færum þar ekki inn til að líta á hana. Hún var átta ára; andlit-ið töfrafrítt, alvarlegt, fölt; augun grá. Þarna sat hún og lék sér að brúðunni sinni og athugaði þá, sem inn komu. Þessi litla flóttastúlka að minsta kosti var elskuð og hamingjusöm; en eg held að hún hafi ímyndað sér, að vér mundum nema hana í brott einhvern daginn — vér stöðum svo mikið á hana. Hún hafði það við sig, sem veldur því að sum andlit hrífa oss eins og fegurstu listaverk.

Í allri þessari sáru sorg og langvinnu þjáningum væri það sannarlega undarlegt, ef glaðværa og glöggdæma franska eðlið gerði ekki uppreisn og leitaði sér nokkurrar útrásar í kæruleysi eða beiskum ávitum. Kraftaverkið er það, að þeir halda alt af áfram, á hverju sem veltur, og sleppa aldrei takinu. Þeir eru fljótir að dofna og fljótir að lifna aftur, og verða að æmta og skræmta; en þeim liggur hærra hjarta en rómur. Ást þeirra á landinu, sem er alt eitt og ást þeirra á sjálfum sér — en það er dýpsta settjarðar-ástin — hún er takmarkalaus. Þessum tveim dygðum eða löstum (hvort sem heldur vill) —, glöggdæminu annars vegar, en hins vegar sjálfsástinni eða sjálfsþóttanum, ef menn vilja það heldur — þeim lendir alt af saman. Frakkar eru hvorttveggja í senn: lausir við að þykjast af sjálfum sér og fullir af sjálfsþótta. Í huga sínum og orðum rífa þeir niður alt franskt og sjálfa sig með, um leið og þeir í hjarta sér og með athöfnum sínum hefja þá hina sömu hluti til skýja. Í augum Englendinga, sem eru dulir og alt af snúnir til varnar, virðast þeir alt af vera að gefa höggstað á sér; en sá, sem skilur, sér, að þetta er alt þáttur í þeim ævarandi leik and-stæðanna, sem mótar skaplyndi Frakka og heldur því í einkenni-legu riðandi jafnvægi. »Bráðlifandi« er það orð, sem manni flýgur oftast í hug um Frakka. Tilfinningar þeirra og skynsemi vega salt óaflatanlega, með leiftursnöggu sviftingum. Eg held, að einmitt þessi sífelda, snögga breyting veiti þeim það hald á líðandi stund, sem er sérstakt fyrir þá. Þeir svífa aldrei inn í þokuheim kenninganna og draumanna. Höfuðið fíer ekki tíma til að fara á sprett áður en hjartað tekur í taumana, og hjartað ekki að taka til sinna ráða áður en höfuðið kallar: »Bíddu við!« Þeir skynja báða helma, en með svo skjótri skiftisvipan, að þeir gefa sig hvorugum alveg á vald. Gætið að, hve »trúin« kalda er spakleg og tiltölulega hlý í Frakklandi. Eg man svo vel þegar gamli presturinn í þorpinu

okkar kom til hádegisverðar, hvaða gaum hann gaf matnum og hversdagslegum störfum vorum, en líka þeim málefnum, sem viðtækari voru; hve vel hann naut kaffisins og vindlingsins. Og alt í einu virtist honum bregða undarlega við, eins og maður heyrði hjarta hans segja: »Ó, börnin góð, hér sit eg og eyði tímanum; eg verð að koma til ykkar«. Eg sá hann í garðinum vera að tala við einn »loðinkinnann« okkar, ekki um sál hans, heldur líkama; hann lagði höndina mjúklega á öxl honum og ávarpaði hann: Mon cher fils (kæri sonur minn). Blessaður gamli maðurinn! Jafnvel trúarbrögðin sjálf ætla sér hér ekki meira en þau orka — að færa hjálp og huggun örvingluðum og þjáðum. Þau fylgja forminu, og brosa þó við.

Leyndardómur franskrar menningar er fólgin í þessu riðandi jafnvægi. Af fjörugri einingu hugar og hjarta, vits og skyns í frönsku eðli er runnið alt hið svíphreina form franska lífsins, form, sem menn vita að er form, en skilja hvaða gildi hefir. Tamið yfirbragð sprettur af verkan og gagnverkan. Það er meginþáttur menningarinnar, vegna þess að það eitt talar nægilega skýrt í heimi, sem sjálfur á rót sína í leik óteljandi samvirkra og sundurleitra laga og krafta. Frönsk menning er nákominn eðliskjarna tilverunnar, vegna þess að hún er gædd eins konar lifandi heilbrigði, er aldrei fer vill vegarins, eða geri hún það, ratar skjótt aftur á meðalveginn. Hún hefir tvo aðalókosti kosta sinna: Hún ann forminu um of og er of tortryggin. Franska eðlið er mjög ófeilið. Og það er skiljanlegt! Frakkar eru miðja vega milli norðurs og suðurs. Blóð þeirra er of blandað fyrir guðmóðinn og menning þeirra of gömul.

Eg hafði aldrei skilið til fulls, hve gamalt Frakkland er, þangað til vér komum til Arles. Í lestinu okkar, sem var troðfull, stóðu »loðinkinnar« þétt í göngunum. Havaxinn og vingjarnlegur herfylkishöfðingi (colonel) bauð einum þeirra, er var mjög preytulegur, inn í vagninn til okkar. Hann fór að skrafa um það í preytulegum róm, hve aðdánlega vel konurnar önnuðust störfin einar á búgördunum. »Ef við fáum hálfsmánaðar leyfi«, sagði hann, »þá gengur alt vel; við gerum þá erfiðustu verkin, sem konurnar anna ekki, og jörðin kemst í lag. Hún þarf að fá slíkan hálfsmánaðartíma við og við, mon colonel; sum störf á búgördunum geta konur ekki unnið«. Og herfylkishöfðinginn kinkaði sínum magra kolli ákaft til samþykkis. Vér stigum úr vagninum í myrkrinu, og var suðrænn svipur og suðrænar raddir umhverfis. Gistihúsvagninn litli smaug undir eins með okkur inn í gamlar,

háar og mjög þröngar götur, er sýndust ítalskar. Daginn eftir var sunnudagur, sólskin og himinnur heiður og blár. Á torginu framman við gistihús vort var hópur af alþýðufólki umhverfis standmynd Mistrals og masaði saman eða hlustaði á stúlku, er söng ömurlega söngva. Var sá hópur eins forneskjulegur tilskýndar og verið hefði á Ítalíu eða Spáni. Þann forneskjusvip bafa hlutirnir að eins í Suðurlöndum. Vér gengum upp á leiksviðið (Arena). Þessi undra-verða rómverska bygging, er sumstaðar hefir verið rifin niður, annarstaðar byggð upp af Serkjum, er að sögn nýlegur þáttur í æfl Arles. Því að þúsund árum áður en Rómverjar komu, stóð Arles í blóma og átti sér menningu. Hvað áttum vér eyjafífl áður en Rómverjar komu? Hvað átti hin prússneska þursapjóð? Ekki einu sinni Rómverja í vændum! Það er mikilvert, að Frakkland nútímans stendur á gömlum merg suðrænnar menningar. Það hefir göfgað hið grófara blóð, er runnið hefir inn í landið síðustu fimtánhundruð árin. Svo sem ný vín batna, er þau blandast gömlum góðvínnum, svo hefir blóð frönsku þjóðarinnar batnað og mildast við blöndunina. Þegar maður stóð á hæstu hæð þessa stórhýsis, í borginni, sem er eldri en sjálf Rómaborg, var sem tilfinningin með undarlegum hætti næði um víða veröld, og maður fann, að straumur mannlífsins slitnar hvergi og að hugþótti mannanna er fánýtur. Hreppametnaður nútíðarríkjanna virtist aumlegur í hinu hjarta lofti yfir þessu völduga steinvitni aldanna.

Í mörgum efnum vorum vér allir komnir á heljar þröm, þegar stríðið stöðvaði oss. Eigum vér að því loknu að þeysa fram af brúninni, eða halda í við hestinn, sitja um stund í söðlinum og skygnast um eftir betri leið? Vér vorum allir á þeirri þjóðgötu, er leiðir inn í helvíti stórfyrirtækjanna og ruddaskaparins, auðvirðilegs stundarbagnaðar og augnabliks æsingar. Hvort sem vér bjuggum norðar eða sunnar, þá vorum vér allir, hver með sínum hætti, á fleygiferð inn í siðleysið. Skyldum vér finna leið inn í hreinna loft, þar sem virðingin fyrir sjálfum sér situr að völdum, en ekki gróðinn, og smíðaðir verða einu sinni enn fágætir hlutir og varanlegir?

Frá Arles fórum vér til Marseilles til að sjá hvernig sú borgin liti út á stríðstímum, sem mest alþjóðaborg er í heimi. Var það undursamleg sjón að sjá hið iðandi líf, sem þar var. Sé ástæða til þess, að Frakkland finni meira til stríðsins en nokkurt annað stórland, þá er það víst, að Marseille finnur minna til þess en allar aðrar stórborgir. Hún blómgastr í sönnu ofurmagni lífs og lita. Í

troðfullum götunum ægir hér öllum þjóðflokkum saman, nema frá Mið-Evrópu: Frökkum, Serbum, Spánverjum, Algieringum, Grikkjum, Aröbum, Kabýlum, Rússum, Indverjum, Ítölum, Englendingum, Skotum, Gyðingum og Núbsumönnum. Mílulangar skipakvíarnar fullar af skipum. Yfirfljótanlegt er af alls konar matvælum. Allir eru glaðværir og annríkir í hinu bjarta og þurra ljósi. Þar sáum vér hina fegurstu sjón, og ef til vill þá er mest mætti auðmýkja Vesturlandamann. Það voru tveir arabiskir riddaraliðsmenn, er gengu niður aðalstrætið í síðum einkennisskikkjum, hvítum og rauðum; hinir hvítu vefjarhettir þeirra voru búnir dökkum loðskinnnum og hölluðust lítið eitt aftur. Þessir menn voru fullar þrjár álnir á hæð og gengu þeir í hægðum sínnum, reyktu vindlinga og sneru höfðinu hægt til beggja hliða, eins og úlfaldar eyðimerkurinnar. Í sólbrunnum, mögrum og skeggjuðum andlitunum á þeim var hvorki fyrirlitning né áhuga að sjá, ekkert annað en dýrlega sjálfsnægju; en við hliðina á þeim virtist sem allar aðrar manntegundir væru lítilfjörlegar og skiftu engu máli. Guð má vita, um hvað þeir voru að hugsa — hugsanirnar hafa líklega verið álíka hverfular og reykurinn, sem þeir blésu út um sínar vel gerðu nasir — en fegurð þeirra og yndisþokki var óviðjafnanlegur. Og þegar maður sá í huga sér iðnaðarborgirnar okkar miklu, í vestri og norðri, og litlu, folu, hrjáðu örverpin, sem þær unga út, þá varð maður bæði hryggur og skömmustulegur.

Í Marseille úði og grúði af hermönnum. Í Lyon, Valence, Arles, jafnvel í minstu bæjunum var aragrúi af þeim, og var þetta þó um þær mundir, er bandamenn hófu sóknina. Sé mannaflí Frakklands að þrotum kominn, eins og sumir halda fram, þá dylur það það svo vel, að það er engu líkara en verið væri að fara af stað með fyrsta liðið.

Frá Marseille fórum vér til Lyon. Eg hefi heyrt menn segja um þá borg, að hún væri hörmulega tilbreytingarlaus; en í sam-anburði við Manchester eða Sheffield er hún eins og himnaríki sam-anborið við helvíti. Milli tveggja straumharðra fljóta undir háum hálsum, líkist hún helzt Florence, sem væri orðin að völdugri verzlunarborg. Vera má að hún sé dapurleg í þokuveðri, en himininn var blár og sólin skein; það var einmitt verið að byrja mikla kaupstefnu, og var mikill anuríkis- og myndarbragur á hverju stræti.

Englendingar hafa alt af haft óljósan grun um það, að Frakkland væri ekkert siðsemdarland. Í augum þess, er kemur þangað einungis sem gestur, er Frakkland siðbezta land stórveldanna fjöggra

— Frakklands, Rússlands, Englands og Þýskalands. Það er það landið, þar sem heimilislífið er sterkast, og götulífið sæmilega. Ungir menn og ungar stúlkur sjást þar aldrei ganga saman eða liggja í hálfgerðum faðmlögum, eins og á voru puritanska Englandi. Menn leika sér ekki að eldinum — opinberlega að minsta kosti. Silakepps-ást enska verkamannalýðsins er auðjäänlega ekki við hæfi franska blóðsins, sem rennur hraðara í æðunum. Frakkar eru einmitt nógu auðrænir til þess að draga ekki ástalíf sitt til sýnis fram í dagsljósið. Sérstakur skóli franskra skáldsöguhöfundna hefir skapað þetta alit á Frakklandi, með ýktum sögum úr Parísarlífinu. Hvernig sem lífi þeirra Frakka, sem í borgum búa, er farið, þá eru þeir engan veginn fulltrúar þeirra miljóna Frakka, sem ekki búa í borgum. Og séu frönsku konurnar lé g è r e s (léttúðugar), eins og eg hefi heyrt franskan mann komast að orði, þá eru þær heimsins beztu mæður, og trana ekki »léttúð« sinni klunnalega fram. Sagt er að margir heimilis-sorgarleikir muni koma fram, þegar stríðinu lýkur. Ef svo fer, þá verða þeir ekki leiknir á Frakklandi einu, og í samanburði við hina, sem sýna þá trúmensku, er gætt hefir verið öll þessi voðaar, verða þeir sárfáir. Til að skilja rétt siðgæði Frakka, hygg eg að vér verðum aftur að minnast hinnar almennu niðurstöðu, er vér komumst að um skaplyndi þeirra — að höfuð og hjarta skiftast þar skjótt á um völdin, sem gerir það að verkum, að þeir lenda hvorki í öfgum puritana né hófleysis, heldur halda eins konar jafnvægi.

Frakkland mun koma breytt út úr þessu stríði, og þó að öllum líkindum minna breytt en nokkurt annað land. Eins konar sjálfsnægja, er mjög einkendi franskt líf, mun hverfa. Eg býst við að Frakkland opni dyrnar, verði umburðarlyndara við annara smekk og hugsjónir, og það, sem er of þröngt og rígbundið í frönskum skoðunarhætti, mildist. Frakkar munu græða á því að draga úr sinni *amour propre* (sjálfsást) — sem að vísu er æskilegur eiginleiki, þegar hún er ekki um skör fram.

Jafnvel París hefir opnað hjarta sitt ögn síðan stríðið hófst; og hjarta Parísar er lokað, hart og óþolinmótt gagnvart útlendingum. Vér tókum eftir því á spítalanum, að hve nær sem Parísar-búi kom þar, þá fylgdi honum annað andrúmsloft og hann stýrði dansinum, hljótt eða hávært. Einn var þar sem Aimé hét; hörund hans var eins og á barni, hann var hraðmæltur og talaði lágt og rumdi ögn í honum, og þegar hann fór frá okkur, var hann orðinn sá, sem alt snerist um. Þar var annar hjá okkur, ungur

maður, rauðhærður; þegar hann var brott í leyfi, var sem spítalinn væri allur annar, svo mikill friður var þar. Synir Parísar eru sérstakur kynflokkur, alveg eins og Lundúnabúar eru það. Eg get ekki sagt, að eg botni í þeim; þeir eru gerðir úr fjaðurmögnuðu efni, eins og gúmmíhnettir. Og Parísarkonurnar! Guð forði mér frá að segja, að eg þekki þær. Þær eru lokuð bók. Jafnvel Parísarbúar eru nú samt umburðarlyndari við oss, hina þumbaldalegu Englendinga, en þeir voru fyrir stríðið; má vera, að þeir hafi séð, að hafa mátti nokkurt óvænt gagn af oss. Og, vel á minst: Það er sagt, að í þeim héruðum, sem brezku herirnir hafast við, þá ímyndi sumir Frakkar sér, að vér séum komnir til að setjast þar að. Það er þó geysi-hláleg hugmynd! Og hve ömurlegu ljósi hún bregður yfir söguna, yfir tortryggningu, sem komin er upp á milli þjóðanna, á ófeilnina, sem breytni manna hefir gróðursett djúpt í mannlegum hjörtum. Nei! Væri það hugsanlegt, að brezka stjórnin færi þannig að ráði sínu, þá mundu íbúar Bretlands fara úr landi, ganga í lið með Frökkum og hjálpa þeim til að reka bölv-aða ágengnisseggina úr landi!

En vér rákum oss hvergi á þessa skringilegu trú. Á öllu þessu svæði Frakklands, sem troðfult er þessum einkennilegu verum, enskum körlum og konum, fengum vér alstaðar aðdánlegar viðtökur, er gengu oss til hjarta. Ekki í eitt einasta skifti alla þessa löngu vetrarmánuði heyrðum vér óvinsamlegt orð; vér mættum hvergi neinu öðru en sannri kurteisi og alúð. »Loðinkinnar« og bændur, dyraverðir og embættismenn, hefðarfrúr, læknar, þjónar, búðarfolk var ávalt nærgætið, vingjarnlegt og lét sér hugarhaldið um, að vér værum sem heima hjá oss. Jafnvel hundarnir buðu oss velkomna! Lítil, svartur hálf-pommernskur hundur kom óboðinn og settist að hjá okkur á spítalanum. Við kölluðum hann Aristides. En þegar hann var með okkur á gönguferðum, mættum við stundum hóp af krökkum sem kölluðu: »Pom-pom! Voilà Pom-pom!« og fóru með hann. Áður en nóttin datt á, var hann æfinlega kominn til okkar aftur með sundurnagað band eða reim dinglandi um hálsinn. Honum leiddust krakkarnir hræðilega. Vér fólum hann í hendur »loðinkinnanna« okkar kvöldið dapra, sem vér urðum að kveðja, taka í síðasta sinn í allar þessar vingjarnlegu hendur, og yfirgefa hin vinalegu andlit. Vagninn flutti oss brott gegnum litla þorpið, eftir dalnum milli aspu, sem voru að byrja að fá vorlit á greinarnar, en skjórinu flaug yfir veginn ofan á fljótsbakkann.

Frakkland geymir hjartað vel í brjósti sér og ber það ekki utanklæða. En Frakkland opnaði hjarta sitt einu sinni og lét oss sjá gullið, sem þar er geymt.

Og svo fórum vér frá Frakklandi einn rigningardag, og skildum þar eftir hjartað hálft. *Guðm. Finnbogason* þýddi.

VIÐ DÝFLIN.

Ef í lið þitt brestur bráður flótti,
bittu skó þinn, far að öllu rótt!
Hvert skal flýja? Hvað má nokkur ótti?
Hælislaust, og bráðum komin nótt —
»Til Íslands
eg kemst ekki í kveld«,
sagði Þorsteinn.

Seytján fóru. Sextán féllu í stríði,
auð'ri Dýflin eltu bana sinn —
afkomst hann, sá eini, er ekki flýði
án þess fyrst að binda skóinn sinn —
»Til Íslands
eg kemst ekki í kveld«,
sagði Þorsteinn.

Þó að depri djarfeyu víga-blinda,
drenginn þann mun hugstór kannast við,
sem ei skirrist skóinn sinn að binda
skammarlaust, þó flýi annað lið —
»Til Íslands
eg kemst ekki í kveld«,
sagði Þorsteinn.

Til þess lands er drjúgan veg að vinna
von þín ung sem kjölnum stýrði frá
komið babb í bátinn allra hinna.
Bittu skóinn! Hvað mun liggja á
»Til Íslands
eg kemst ekki í kveld«,
sagði Þorsteinn.

Stephan G. Stephansson.

Frá málstreitu Norðmanna.

Það er kunnugt, að Norðmenn nú um langan tíma hafa verið illa staddir með rit- og menningarmál sitt. Það eru nefnilega tví ritmál í landinu: hið svo nefnda ríkismál, er upphaflega var danska, en nú hefir breyzt allmikið vegna áhrifa frá talmálinu, einkum talmáli borganna; í því eru eins og kunnugt er allmörg sérnorsk orð og orðatiltæki, og á seinni tímum hafa menn enn fremur tekið upp p, t, k í staðinn fyrir b, d (þ: ð), g í orðum svo sem: t a p e (f. tabe), b i t e (f. bide þ: bíta), u k e (f. uge) o. m. fl.; og í tali er það altaf borið fram á norskan hátt með »orðalögnum« (Tonelag) norsku. Hitt ritmálið er hið svo nefnda landsmál, sem Ívar Aasen bjó til á sínum tíma á grundvelli norsku mállyznanna, einkum þeirra, sem talaðar eru á suðvesturströnd Noregs. Er það alvestur-norrænt mál, eins konar beygingasnauð íslenzka.

Rimman á milli þessara tveggja ritmála hefir oft og tíðum verið afarsnörp. Ríkismálið á reyndar langflesta fylgismenn, og flest skáld Norðmanna og vísindamenn hafa ritað á það mál. En hins vegar eru landsmálmennirnir, þó færri séu, afarötulir, og hefir þeim orðið talsvert ágengt. Þessi tungnaklofning hefir eins og gefur að skilja haft hinn mesta glundroða í för með sér, einkum í skólunum, þar sem annaðhvort (í lægri skólunum) á um þessi tvö mál að velja, eða (í lærdómsdeildum mentaskólanna) á að læra bæði málin.

Nú eru — sem betur fer — nokkrar horfur á því, að Norðmenn geti komist út úr þessum kröggum. Nefnd, sem Stórþingið 1913 kaus til þess að íhuga, hvort ekki væri hægt að láta málin nálgast hvort annað með því að bæta stafsetning þeirra, hefir nú komið með álit sitt, og konungsúrskurður 21. des. 1917 hefir fyrirskipað réttitunarreglur samkvæmt uppástungum nefndarinnar. — Nefndin — þeir Hjalmar Falk (formaður), Ívar Alnæs, Marius Hægstad, Knut Liestøl og Didrik Arup Seip — hefir þó ekki

haldið sér við að bæta stafsetninguna eina, heldur hefir einnig stungið upp á ýmsum breytingum í orðmyndum og beygingum. En það hefir orðið til þessa, að hún hefir ekki séð sér fært annað en að setja upp 4 (fjögur!) mál: 1. ríkismál með bættri stafsetningu; 2. ríkismál með bættri stafsetningu og með ýmsum orðmyndum og beygingarendingum úr talmálinu, sem hingað til hafa ekki verið leyfðar í skólunum, þó þær hafi stundum sést á prenti; 3. landsmál (nýnorska) með bættri stafsetningu; 4. landsmál með bættri stafsetningu og með ýmsum orðmyndum og beygingarendingum, sem hafa meiri útbreiðslu en þær, sem hingað til hafa verið mest tíðkaðar á prenti.

Það á að vera kjörfrelsi um þessi fjögur mál, sem á að nota í skólum, kirkjum, embættisskrifstofum o. s. frv.

Helztu breytingarnar í stafsetningu ríkismálsins eru þessar: 1. rita skal á í stað aa (einnig í landsmálinu); 2. rita skal e í stað æ í flestum tilfellum, þar sem hljóðið er stutt; 3. ekki skal rita d, þar sem ekkert d var í fornmálinu: kalle (ekki kalde), fant (ekki fand t); 4. tvöföldun samhljóða í niðurlagi orða eftir stutt sérhljóð: opp, bratt, fikk; 5. Hinn afturskeytti greinir fleirtölu skal alstaðar hafa myndina -ene: gutt-ene, en gutter.

En þá er leyft að taka upp ýmsar talmálsmyndir, svo sem myndir með tvíhljóðum: grein (í stað gren), heim (í stað hjem). fløite (í stað flöte, eða flöde), graut (í stað gröt eða gröd); enn fremur margar einstakar myndir svo sem glømme (í stað glemme), etter (í stað efter), golv (í stað golv), kirne (í stað kjerne) o. s. frv. Það er leyft að taka upp afturskeytta kvenkynsgreininn á -a, sem er svo algengur um allt Austurland Noregs, einnig í talmáli borgarbúa: kjerringa (=kerlingin), kua (=kýrin), enga (=engin), gryta (=potturinn), en án greinis: kjerring, ku, eng, gryte.

Í stafsetningu landsmálsins eru einnig nokkrar breytingar, þó ekki eins margar og í ríkismálinu, svo sem að rita t í hvorugkyni afturskeytta greinisins: huset (ekki: huse); og eins og í ríkismálinu á -r að falla niður í fleirtölu með afturskeyttum greini: hestane, skriftene, klokkone, en hestar, skrifter, klokkor, án greinis.

Í landsmáli með leyfðum breytingum er greinirinn í kvenkyni eintölu og hvorugkyni fleirtölu altaf -a (einnig í hinni sterku beygingu); fleirtala kvenkynsorða endar eins og í ríkismálinu altaf á

-er: skrifter, klokker. Lýsingarorð, hluttaksorð og fornöfn fá enga sérstaka ending í kvenkyni, nema liten, eigen, ingen, nokon, annan, min, din, sin og hin, í kvenkyni: lita, eiga, inga, noka, anna, mi, di, sí og hi. — Nafnháttur skal enda á -e (ekki a). Margar austnorskar myndir eru teknar upp í stað vestnorsku myndanna, svo sem bort, sommar, okse í stað burt, sumar, ukse; je og vi í stað eg og me (=við); da, over í stað då, yver; har, får, går, står í stað hev, fær, geng, stend; fått, státt í stað fenge(n), stade(n), o. s. frv.

Sem dæmi skal hér tekinn upp lítill kafli úr sýnishornum álitsskjalsins í öllum fjórum málum; mun hann betur skýra það, sem sagt er hér að ofan, þar sem fljótt hefir orðið að fara yfir sögu. Er hann úr æfintýrinu um bóndann, sem átti að búverka. (Mannens som skulde stelle (stella) heime (hjemme).

Ríkismál I:

Tidlig om morgenen tok kjerringen låen på akslen og gikk i engen og skulde slå, og mannen skulde da til å stelle i huset. Først vilde han til å kjerne smør, men da han hadde kjernet en stund, blev han tørst og gikk ned i kjelleren for å tappe øl. Mens han holdt på å tappe i ølbollen, fikk han høre at grisen hadde kommet inn i stuen. Han la i vei med tappen i neven opp igjennem kjellertrappen som aller snarest og skulde se efter grisen, så den ikke veltet kjernen; men da hann fikk se at grisen alt hadde veltet kjernen, og stod og smattet på fløten som rant utover gulvet, blev han så flyende sint, at han rent glemte øltønnen og drog efter grisen det beste hann vant. Han tok den igjen i døren og gav den et dugelig spark, så den blev liggende på flekken. Nå kom han i hug at han gikk med tappen i handa; men da han kom ned i kjelleren, var øltønnen tom.

Ríkismál II:

Tidlig¹⁾ om morgenen tok kjerringa låen på aksla og gikk i enga og skulde slå, og mannen skulde da til å stella i huset. Først vilde han til å kinne smør; men da han hadde kinna e- (eða: ei) stund, blei han tørst og gikk ned i kjelleren for å tappe øl. Mens han holdt på å tappe i ølbollen, fikk hann høre at grisen hadde kommet inn i stua. Han la i vei med tappen i neven opp igjennom kjellertrappa som aller snarest

¹⁾ Gleidletrað hér.

og skulde se efter grisen så han ikke velta kinna; men da han fik se at grisen alt hadde velta kinna, og stod og smatta på fløyten som rann utover golvet, blei han så flygende sint, at han reint glømte øltønna, og drog etter grisen det beste han vann. Han tok'n igjen (att) i døra og gav'n et dugelig spark, så han blei liggende på flekken. Nå kom han i hug at han gikk med tappen i handa; men da han kom ned i kjellaren, var øltønna tom.

Landsmål II:

Tidleg¹⁾ om morgonen tok kjerringa låen på aksla og gjekk i enga og skulde slå, og mannen skulde da til å stelle i huset. Fyrst vilde han til å kinne smør; men da han hadde kinna ei stund, blei han tyrst og gjekk ned i kjellaren for å tappe øl. Med' han heldt på å tappe i ølbollen, fekk han høre at grisen hadde komme inn i stua. Han la i veg med tappen i neven opp igjennom kjellartrappa som aller snarast og skulde sjå etter grisen så han ikkje velta kinna; men da han fekk sjå at grisen alt hadde velta kinna, og stod og smatta på fløyten som rann utover golvet, blei han så flygende sint, at han reint glømte øltønna, og drog etter grisen det beste han vann. Han tok'n att (igjen) i døra og gav'n eit dugeleg spark, så han vart (blei) liggjande på flekken. Nå kom han i hug at han gjekk med tappen i handa; men da han kom ned i kjellaren, var øltønna tom.

Landsmål I:

Tidleg om morgonen tok kjerringi låen på aksli og gjekk i engi og skulde slå, og mannen skulde då til å stella i huset. Fyrst vilde hann til å kinna smør, men då han hadde kinna ei stund, vart han tyrst og gjekk ned i kjellaren for å tappa øl. Med' han heldt på å tappa i ølbollen, fekk hann høyra, at grisen hadde kome inn i stova. Han la i veg med tappen i neven upp igjennom kjellartrappi som aller snarast og skulde sjå etter grisen, so han ikkje velte kinna; men då han fekk sjå, at grisen alt hadde velt kinna, og stod og smatta på fløyten som rann utyver golvet, vart han so fljugande sint at han reint gløymde øltunna og drog etter grisen det beste han vann. Han tok han att i døri og gav han eit dugeleg spark, so han vart liggjande på flekken. No kom han

¹⁾ Gleðbletrað hér.

i hug at han gjekk með tappen í handi; men då han kom ned í kjellaren, var øltunna tom.

2. og 3. sýnishorn eru, eins og menn sjá, hvort öðru mjög nálægt. Vildu ríkismálssinnar og landsmálssinnar taka upp þessar vær málmyndir, væri alls ekki loku fyrir það skotið, að ríkismálið og landsmálið myndu að lokum renna saman í eitt mál.

Vitanlega myndi glundroðinn ekki hverfa fyrst um sinn, öllu heldur fara vaxandi um tíma, og myndi hann helst koma niður á aumingja skólabörnunum. En þetta er víst eina leiðin; enda er ástandið nú alls ekki svo að um tvö óskift mál sé að ræða. Bæði málin eru nú þegar skift og mjög á reiki.

En hver sem úrslitin kynni nú að verða, er málfélageskap Dana og Norðmanna slitið fyrir fult og alt með þessum konungsúrskurði. En geti hann orðið til þess að koma á föstu skipulagi í máli Norðmanna, getum við hinir Norðurlandabúar ekki annað en óskað þeim til hamingju. Og ætli það væri ekki betra fyrir dönskuna, að skýr merki séu dregin milli málanna, fyrst félagskapuriun getur ekki haldist¹⁾.

Holger Wiehe.

¹⁾ Síðan þetta var skrifað, hafa komið ýms mótmæli frá ýmsum mönnum, einkum ríkismálssinum, er finnast þessar umbætur helztu frekgengar.

Ritfregnir.

Íslenzkur sagnaskáldskapur. — Ekki fyrir alla löngu tóð grein í Kristeligt Dagblad, þar sem sagt var fullum fetum, að íslenzkar bókmentir gætu ekki þrífist, nema Íslendingar rituðu á dönsku og nytu stuðnings Dana! — Nú liggja til þess svör þessi: Íslendingar, er semja öll rit sín á dönsku og ekki jafnframt semja eða þýða þau á íslenzku, eru danskir rithöfundar, dönsk skáld, jafnvel þó þeir séu fæddir »úti á Íslandi«, og ritverk þeirra eru eign danskra bókmenta. Ef Íslendingar semdu allir eða þá flestir rit sín á dönsku, myndi ekki lengur vera hægt að tala um íslenzkar bókmentir.

En sem betur fer er ekki svo. Íslendingar í Kaupmannahöfn, er yrkja á dönsku, þýða (eða láta þýða) flest skáldrit sín á íslenzku, og langflest íslenzk skáld semja skáldrit sín á íslenzku. Íslenzkar bókmentir þrífast ágætlega, og er það meira að segja mikill gróður í þeim sem stendur. Það er nú reyndar engin furða, þótt þeir, sem þekkja ekki til, eigi ilt með að skilja hið bókmentalega ástand með eins lítilli þjóð og Íslendingar eru. Sá, sem kunnugur er ástæðunum, verður þó að dást að því, hve miklu góðu þessi þjóð getur afkastað bæði í skáldskap og vísindum — án stuðnings að utan. Vitaskuld eru íslenzkar bókmentir höfundum sínum engar gullnámur, þó bækur séu hér yfirleitt dýrari en annarstaðar. En það sýnir því meir hugsæi og andlegan þroska íslenzkra höfunda og lesenda, að það skuli samt vera hægt að koma eins mörgum bókum á markaðinn.

Mest kveður sem stendur að sagnaskáldskapnum í bókmentum Íslendinga. Þar sem áður voru eintóm ljóðmæli, kemur nú á hverju ári ein skáldsagan eftir annari, og ekki eingöngu frumsamdar sögur, heldur líka ekki allfáar þýðingar.

Nú í sumar hafa þegar komið út fjórar sögur, sem eru allar merkilegar, og von kvað vera á fleirum í haust.

Fyrst er frægan að telja **Einar H. Kvaran**. Sú var tíðin, er Einars Hjörleifssonar var getið fyrir eina sögu: **Vonir**, er var samin og kom út 1888. En 8 ár liðu, áður en ný saga eftir hann var prentuð. Var það **Brúin**, er birtist í Eimreiðinni 1896 (en því miður aldrei hefir komið út oftari). En þaðan af hefir hann gefið út hverja söguna á fætur annari og hverja annari betri. Með »Sálin vaknar« komst skáldið á herra stig en nokkurn tíma áður. Þar náði hann fullum tókum á listreglum sagnaskáldskaparins einnig í stærri sögu, en í smásögum sínum hafði hann lengi verið meistari að því, er til orðfæris og samsetningar kemur. Þegar um **Vonir** gat **Georg Brandes** farið þessum orðum: »framsetningin er sígild, engu orði of aukið og ekkert orð, sem hittir ekki«. Ummæli þessi mætti einnig hafa um flestar smásögur skáldsins og um »Sálin vaknar«. Í þessari sögu birtist okkur einnig göfugt hugarfar skáldsins, sem reyndar hafði oft vottað fyrir áður, en nú varð öllum deginum ljósara, hvaða álit sem menn svo höfðu á trú hans.

Samþýli, saga (Reykjavík 1918. Útg. Þorsteinn Gíslason) jafnast fyllilega við **Sálin vaknar**; og er hún þessari sögu að mörgu leyti skyld. Einnig hún er saga sálarpróunar. Frú **Finndal** er hin mesta græðakona, saklaus og barnsleg og henni er ant um alla þá, sem bágt eiga; en þó er hún fráhverf ágætum manni, sem elskar hana, skilur eigi, að hann er andlegur bróðir hennar og henni ætlaður, — eingöngu sökum þess að hún heldur, að hann sé valdur að dauða barns hennar. Hún á eftir að læra að fyrirgefa. Óbeit hennar á þessum manni er að miklu leyti mis-skilningur. Hann er ekki eins sekur og hún heldur. Reyndar kemur hann of seint til þess að bjarga barni hennar — hann er læknir, — en að hann kemur of seint, er mest öðrum að kenna og að nokkru leyti augnabliks hugsunarleysi. Kalinn til hans er henni og mjög óeðlilegur, og oftari en einu sinni stendur hún sjálfa sig að því að hugsa hlýlegar til hans en henni finst við eiga. Hún skilur ekki, að hun lokar sig úti frá **Samþýli**, sem henni er eðlilegast. En henni lærist það snámsaman, þangað til augu hennar opnast að fullu, og »hún fær það, sem hún hefir aldrei leitað að«.

Jósa fat **Jóakimsson** aftur á moti er ekki góður maður, hann er hinn verstí braskari og bragðarefur og jafnframt hrottli að hugarfari. Gefur hann sig allan við því að græða fé, telur það aðalmark lífsins, enda svífat hann einskis til að ná takmarki sínu í hvert skifti. Og þó hefir hann betri mann að geyma. Í æsku

hans börðust góðar og illar vættir um völdin í sál hans, en ung saklaus stúlka, sem hann unni, gat bælt niður hinar ógöfugu fýstir hans um tíma. Fráfall hennar sviftir hann alveg trúnni á hið góða í tilverunni, en samt verður hann að fylla líf sitt einhverju, og fégirndin gagntekur hann svo, að hann lokar sig úti frá sambylí við aðra menn og verður fyrirlitinn og hataður. Einn ljósdepill er þó í þessu tímabili lífs hans, og er það ást hans á frú Rannveigu, ást, sem er reyndar alleigingjörn, en þó Isönn og innileg. Hans betri maður er að skjótast upp úr syndafeninu, en hún vill hann ekki, og hann verður enn þá djöfullegri, jafnvel gegn henni. En á dánarbeiði hans skýzt loksins endurminningin um æskuvinu hans, sem hann er alveg búinn að gleyma, upp úr hug hans og bjargar honum frá sambylínu við drauginn, sem hefir elt hann gegnum alt lífið. Það er hér eins og segir í Sál in vaknar:

» . . . mennirnir eru ekki vondir . . . en heimurinn hleður utan á þá alla vega litri rangindaskel, af því að þeir gæta sín ekki fyrir eigingirninni«. Nú dettur skelin af honum. Hann sér, að hann er einstæðingur, yfirgefinn af öllum. Þá skilst honum loksins sín meginvilla, sú að hann hafi tekið sig út úr, ekki skoðað sig í sambylí, samvinnu við aðra, við allan heiminn. Og hann sér, að það er af því, að mennirnir hafa mist sjónar á þessu mikla lögmáli allsherjar-sambylísins, að veröldin stendur nú í björtu báli — sagan gerist á þessum síðustu og verstu tímum — og að hann er sjálfur »skipbrotsmaður á strönd eilífðarinnar«. Og upp úr sál hans stígur »andvarpið forna, sem altaf verður nýtt: Guð, vertu mér syndugum líknsamur«. Hefir höfundurinn komist einna lengst í sálkönnun í lýsingunni á þessum manni. Fróðlegt væri annars að bera hann saman við svipaðar sögupersónur í fyrri skáldritum Elnars Kvarans svo sem Þorbjörn í Ofurefli-Gull, og Lénharð fógeta í leikritinu með því nafni.

Þá er nú þróunarsaga Grímu gömlu þvottakerlingar engu síðri. Hún er hin mesta kjaftakerling, kvenskass og ræfill — á yfirborðinu, lítur jafnvel á sjálfa sig sem ræfil. En frú Finndal tekst að reisa hana við, gefa henni virðing þá fyrir sjálfri sér, sem hana vantar og stendur henni svo mjög fyrir þrifum í andlegu tilíti. Innri maður hennar er göfugur. Þó hún steli, er það eingöngu í þágu annara bágstaddra, og hún elskar son sinn, sjómanninn unga, er ver öllum gróða sínum til að kaupa kofann handa henni móður sinni. Hún lifir einungis til þess að fórna sjálfri sér fyrir yngri son sinn, vitakerta Láfa. Hún er ekki svo afleitur

mannkannari og hefir því miklar mætur á lækninum, og á frú Finndal fær hún svo mikið dálæti, þegar hún kynnist henni nógu vel, að menn fara að kalla hana »hundinn hennar frú Finndal«. Hún sér líka, að frú Finndal og læknirinn hæfa hvort öðru, og gerir sitt ýtrasta til þess, að þau nái saman. Jósafat hatar hún. Og er henni vorkunn. Hún þekkir fantaskap hana, enda fer hann mjög svo þrælslega með hana, tekur kofann af henni og heldur samt því fé, sem sonur hennar er búinn að borga í hann, af því að hún getur ekki goldið síðustu afborgunina á réttum gjaldddaga. En hún sigrast einnig á þessari ástriðu. Þegar vitskerti Láfi hennar hefir kveikt í húsi Jósafats í óljósu hefndarskyni, leggur Gríma líf sitt í sólurnar og bjargar Jósafat úr eldinum. Hún er orðin að göfugri kvenhetju.

Gunnsteinn læknir Gunnarsson er varla eins hugð-næm persóna og hinar. Hjá honum er engin þróun. Hann er í öllu mótsætning Jósafats, góður og ráðvandur maður, enda er hann hvers manns hugljúfi. Hann er einnig duglegur og vandlátur í læknisstörfum sínum, og hann er ungur og fríður og ókvæntur maður, svo engin furða er, þó að hann hafi einna mesta aðsókn af öllum læknum bæjarins. Hann er hamingjumaður í öllu, og það er eins og alt falli honum til fóta. Hann býr í húsi Jósafats, þar sem einnig frú Finndal sezt að. Hann kannast ekki við hana, því hún kom aldrei inn í sjúkrarherbergið, þegar hann var sóttur til barns hennar og kom of seint — og síðan hefir hún tekið sér settarnafn og dvalið nokkur ár erlendis. En hún kannast við hann, og eins og fyr var sagt, sýnir hún honum allmikinn kala. Hann skilur ekki, hvers vegna hún er honum fráhverf, en samt rennir hann grun í rétta samhengið og kemst um síðir að því. Hann fær bráðum mikla ást á frúnni, sem er bæði fríð og ung og góð, og þó undarlegt megi heita, þar sem hún er honum þetta fráhverf, þykist hann samt fullviss um, að úr þessu muni rætast. Og hamingjan bregðst honum heldur ekki í þetta skifti. Á útreið, sem frú Finndal er boðin í af Jósafat, dettur hún af baki og meiðist töluvert. Læknirinn, æm er með í skemtiferðinni, kemur henni heim, fær að annast um hana, og hugur hennar mýkist smámsaman, þangað til henni verður ljós fúlmenska Jósafats. Hún hefir aldrei ætlað sér að giftast honum, enda er hún honum næsta frábrugðin að eðlisfari og hefir óbeitt á öllu hans braski. En hann hefir sýnt henni mikla hugulsemi, og þess vegna þykist hún verða að sýna honum vinsemd og velvild. Hún gengur jafnvel svo langt að fela

honum forræði fjár síns. En þegar hún nú sér, hvernig hann fer með kerlingartetrið hana Grímu, og að hann ver fé sínu, á sama hátt sem öðru fé, til þess að féflétta aðra og græða óhófsamlega, opnast augu hennar til fulla, og hún fer til Gunnsteins að leita aðstoðar hans. Og hann verður henni mikil hjálparhella bæði gegn Jósafat og líka á annan hátt. Hann bjargar henni sjálfri, syni hennar og vinstúlku úr brunanum, og kemur hann fram hér sem hin mesta hetja.

Saga þessi er þannig ein prédikun út af boðorði Jóhannesar postula: »Þér elskaðir, elskum hver annan«. Við eigum allir að lifa í sambylí. Við getum meira að segja ekki, þótt við vildum, slitist okkur úr sambandinu við aðra. Og þetta samband, þetta sambylí nær út yfir gróf og dauða. Gunnsteini finst hann sjálfur standa í sambandi við æðri völd; það eru þau, sem gefa honum þessa öruggu vissu. En hann er dulur og minnst ekki á þetta við nokkurn mann. — Við dánarbeið Jósafats stendur draugurinn, sem einatt hefir elt hann, og ógnar honum með, að hann verði í sambylí við sig hinu megin, eins og hann hefir hingað til verið í lífinu. — Og Sigurður litli, sonur frú Finndal, sem hefir megna óbeit á Jósafat (eins og títt er um börn, að þau hafi ósjálfráða óbeit á sumum mönnum), en aftur á móti hefir hið mesta dálæti á læknum, lifir í áföldu sambylí við Lilla bróður sinn, sem er »fyrir handan tjaldið«. Þessi dularfullu fyrirbrigði, sem hafa sést í seinustu bókum skáldsins, hneyksla suma menn. En það er engin ástæða til að hneykslast. Þetta er trú skáldsins, sem er eins og önnur trú. Ekki rýrir Ásatrúin listagildi eddukvæðanna, né Múhameðstrú listagildi »þúsund og einnar nætur«. Og skáldið heldur engan veglunn trú sinni að okkur, því hann segir ekki frá neinu, sem hefir ekki oft og einatt komið fyrir og hver maður getur skýrt eftir vild.

Og jafnframt er sagan prédikun á móti eigingirninni, sem skáldinu finst, að komi svo átakanlega í ljós í braski því, sem ein-kennir einkum þessa síðustu og verstu tíma — einulig hér. Höfundurinn lætur Jósafat lýsa þessari brallara- og gróðagirnisstefnu — óbeinlínis svo sem skáldi sæmir — með því að verja hana gegn mótbárum frú Finndal. Jósafat segir m. a.: Ef menn fengju ekki fé fyrir hyggjindin, vitið, þá græddu þeir aldrei neitt Viljið þér þá engan gróða, frú Finndal? Allur gróði er fenginn með því að hafa af öðrum Það er allt rangfengið, ef þér viljið leggja á það einhvern hlumneskan mælikvarða. . . . Hvernig

farið þér annars að lifa af efnunum, sem þér hafið fengið eftir manninn yðar? Hvernig haldið þér, að þau séu undir komin? Hann byrjaði bláfátækur eins og eg. Hann dó auðugur maður. Hvernig haldið þér, að hann hafi fengið efnin? Hann fekk þau með því að kaupa alla hluti svo ódýrt og selja alla hluti svo dýrt, sem honum var unt Hann fekk þau með því að sjúga alt af dálítið meira en yður mundi finnst, að honum hafi borið, út úr hverjum manni, sem hann átti viðskifti við.

Hefir skáldið hér gripið á kýlinu, »tekið vandamál til umræðu«, sem reyndar mun erfitt úr að leysa, nema mönnunum lærist að lifa í sambyli hverir við aðra, eins og Einar Kvaran hugsar sér það. Nokkuð mætti þó gera að því að stemma stigu fyrir braskinu eða takmarka það með lögum (sbr. kenningar Henry George), og engin efi er á því, að eitthvað mun gert til að bæta úr þessu misrétti að ófriðnum loknum.

Sambyli er tímabær bók, bók með göfugum hugsjónum, bók með boðskap til okkar allra. Hafi skáldið beztu þökk fyrir hana.

Að nokkru leyti er lík stefna í sögunni Jón á Vatnsenda eftir Sigurð Heiðdal, sem fór svo laglega á stað með Stíklur í fyrra vor. Jón á Vatnsenda er í sagnasafni (eða kafli úr sagnaflokki?), er höfundurinn kallar **Hræður** (Rvík. 1918 Félagið »Hlynur«). Hún er um tvo menn, sem sýnast og líka pykjast vera andstæðingar, þá Jón bónda á Vatnsenda og síra Einar á Stóruvöllum. Það er líka töluverður munur á þeim. Jón er framfaramaður mikill og hefir komið á mörgum umbótum á jörð sinni og búi og er alt af að víða að sér nýjum og nýjum verkfærum og öðrum áhöldum. Altaf er hann á undan öðrum, enda er hann oddviti í sveitinni. Þetta vekur talsverðan úlfabýt í sveitinni. Margir eru íheldnir og líta tortrygnisaugum á þessi fyrirtæki hans, skoða þau hégóma einn, og halda að Jón muni einhvern tíma kafna í skuldasúpunni, því að kostnaðarsöm eru þau. Aðrir ófunda hann og þola honum illa að vera höfði hærri en allur lýður. Hann gengur einnig á undan á andans sviðum; hann er sjálfur mentaður og víðlesinn og gengst fyrir að breiða út kunnáttu og mentun meðal sveitarmanna. Hann stofnar m. a. lestrarfélag og safnar mörgum mönnum í það, og þegar dofna yfir því, stofnar hann glímufélag, sundfélag, söngfélag. En mentun hans hefir gert hann að fríhyggjumanni og fráhverfan kirkjunni. Finnur hann þar helzti mikið af kreddum, er standa hollri þróun mannkynsins fyrir

þrifum, og hræsi. Engin furða, þó þeim lendi saman Jóni og síra Einari.

Presturinn er ungur og vandlátur klerkur, nýkominn í brauðið, og ætlar sér að vekja söfnuðinn úr deyfðinni, er hvílir yfir honum í kirkjumálum og trúmálum. Í því efni geta kenningar Jóns ekki verið honum nema þrándur í götu. Og presturinn mætir samt nógu mikilli mótstöðu í baráttu sinni við gamlar óvenjur og ósiði. Honum er vorkunn, þó hann ráði ekki við gamla saurlífismanninn Hallgrím með tveimur frillunum. En heldur ekki í öðrum málum verður honum mikið ágengt; hann er of grunnhygginn og auðtrúa, er enginn mannþekkjari, og auk þess fer hann alt of geyst. Hann ræðst allþýrmilega á dans unga fólksins í lestrarfélagi Jóns, og þó er hann eiginlega enginn oftrúarmaður og heldur ekki sérlega fastheldinn við gamlar kreddur, getur t. d. vel slakað eitthvað á helvítiskenningunni.

Gallinn er sá, að þessir tveir menn, sem hvorugur vill nema það, sem gott er, eru andstæðingar. Þeir ættu að vera samherjar. Misklíð þeirra hvílir á misskilningi einum. Jón er meira kristinn en hann þykist vera, og ofsinn og mótstaðan blinda augu prestsins. Í raun og veru laðast þeir hvor að öðrum undir niðri. Alt hefði ef til vill farið vel með þeim á endanum, hefðu ekki verið menn til í sveitinni, sem þurftu á þessari misklíð að halda til þess að koma sínu fram. Þessir menn, einkum Hallgrímur á Bergi og Jón ráðsmaður, eru vinir hvorugra og reyna að eins að koma sundrungu á stað. Og þeim tekst það vonum framar. Undirröður þeirra kemur fullum fjandskap á stað í milli þeirra; Jón hefir þungað stúlku á prestasetrinu, Margrétu að nafni, en vill komast undan skyldum sínum og mútar öðrum manni til þess að ganga við faðerninu, og jafnframt tekst honum að sannfæra síra Einar um sakleysi sitt. Margrét hefir — sumpart af hræðslu við prestinn — leitað á náðir Jóns á Vatnsenda. Jón tekur málstað hennar gegn ráðsmanninum, en prestur málstað Jóns ráðsmanns. Og kemur nú svo, að Jón fær það álit á síra Einari, að hann sé mikill niðingur og hræsnari, en prestur heldur, að Jóni gangi að eins til hatur til sín og góðra siða, og álitur hann sér mestan þránd í götu í helztu áhugamálum sínum. Reyndar dofna smámsaman nokkuð yfir þessum fjandskap; þeir mætast jafnvel eftir nokkurn tíma til samvinnu á ýmsum sviðum, en mikill kali helzt þó með þeim um mörg ár. En börn þeirra, sonur Jóns og dóttir síra Einars, draga sig saman og trúlofast á laun; þora ekki að láta þetta uppskátt

við feður sína. Smámsaman breytist nú hugarfar prests, lund hans mýkist — þó fyrst eftir megnar efasemdir og hugarkvalir, sem koma állu hans í mikið uppnám. Hann kemst að þeirri niðurstöðu, að Hallgrímur, sem dáiinn er í syndum sínum, sé líklega einhverstaðar á öræfunum í guðsríki. — Í guðsríki? — Já. Í guðsríki. — Alt var auðvitað í guðsríki. Og þó hefir hann komist að undirferli hans og Jóns ráðmanns við sig.

Bruni — einkar vel lýst — á prestssetrinu verður til þess að sætta Jón á Vatnsenda og síra Einar. Jón kemur á síðustu stund og bjargar prestsdætrum og fær sjálfur töluverð brunasár. Einnig presturinn hefir skaðbrenst nokkuð, og verður þeim nú báðum komið fyrir í þinghúsi hreppsins, og þar »bræða þeir sig saman í bælunum«. Mis-skilningurinn hverfur. Jón er betur kristinn en flestir, sem telja sig kristna, og fer líka að skilja betur, að hann hefir verið helzti ranglátur í garð kirkjunnar og prestanna, og presturinn kannast við að hafa verið of fljótfær og ógætinn í mörgu. Undir niðri hafa þeir altaf verið vinir, og munurinn á þeim er ekki eins mikill og sýnist: » . . . að innanverðu erum við furðu líkir«, segir prestur. »Já, og það hefðum við átt að sjá fyr, síra Einar«.

Fleira þarf ekki að taka fram til þess að sýna, að það er mikill skyldleiki með andanum í þessari bók og andanum í Sambylí og öðrum skáldritum Einars Kvarans. »Ef nokkrir menn eru í raun og veru vondir«, segir síra Einar, og er það eins og Alfhildur frá Sálin vaknar væri hér komin sjálf og talaði. Enda væri nú ekki sérlega merkilegt, þó yngra skáldið hefði orðið fyrir einhverjum áhrifum frá eldri starfsbróður sínum. En Jón frá Vatnsenda er þó engin stæling, heldur sjálfstætt frumrit; enda sýndi Sigurður Heiðdal sjálfstæðar skáldsagnagáfur þegar í Stíklum, einkum í gamansögunni Halastjörnunni, þar sem kom fram gamansemi, sem annars er svo sjaldgæf í íslenskum bókmentum. Ætti skáldið að leggja meiri rækt við þann rithátt. Íslenskar bókmentir eru helzti alvörubrunnar, og þó að íslenskir höfundar bregði alloft fyrir sig allnöpru háði, er gamansemi (humor) afarsjaldgæf. En alvara og gaman eiga vel saman; ekki hégómi og innantómt gítt, en meinlaust gaman, sem jafnaframt lýsir samúð höfundarins með persónum sínum.

Sigurður Heiðdal er ekki eins mikill listamaður og Einar Kvaran, en þó er hann furðu langt kominn. Mál hans er lipurt og tilgerðarlaust, alt orðfærið eðlilegt, mannlýsingar góðar og öll samsetning sögunnar góð og skipuleg. Skal það sérstaklega tekið

fram, hve vel það tekst höfundinum að segja óhlutdrægnislega frá. Fá báðir aðalmenn yfirleitt að njóta sín, án þess að hallað sé á skoðanir annars hvors.

Eg hef notað orðið prédikun í sambandi við bækur þær, er eg nú nefndi. En það er ekki svo að skilja, að hér sé um nokkurn væminn prestavaðal að ræða eða fortalnamærð. Það er talað og rökrætt allmikið í þessum bókum, en þó ekki svo að það spilli listagildi þeirra. Skoðanir höfundanna koma glögglega í ljós, en óbeinlínis; öllu er komið fyrir á eðlilegan hátt samkvæmt öllum listreglum. Samræðurnar verða engan veginn þreytandi, þvert á móti eru þær skemtilegar aflestrar, og fjörlausar kafla er hvergi að finna, nema ef til vill í fyrstu köflum »Jóns á Vatnsenda».

Jóni Trausta — öðru mesta sagnaskáldi Íslendinga nú orðið — hefir stundum verið borið á brún, að honum væri nokkuð gjarnt á það að láta persónur sínar prédika helzti til mikið. Það er nokkuð til í því. Skáldið ber svo mikið í brjósti sér, að honum verður stundum á að halda skoðunum sínum svo fast að lesendunum, að orðfæri og listagildi bóka hans rýrist við það. List Jóns Trausta er heldur ekki falin í djúptækri sálarþekkingu, í skarpheyrn, heldur í skarpskygni. Hann sér betur en hann heyrir, enda er hann gæddur allmiklum hæfileikum til myndalistarinnar. Margar persónur í sögum (einkum sveitasögum) hans standa með skýrum dráttum fyrir hugskotasjónum lesandans löngu eftir lesturinn. Jóni Trausta lætur einkum að lýsa einkennilegum og mikilfenglegum mönnum, sem eru gæddir einbeittum vilja eða hafa skoðanir, er þykja frábrugðnar skoðunum lýðsins, eða þá einkennilegum ræflum, er lifa á skuggahlið tilverunnar. Að sumu leyti er Jón Trausti eins konar íslenskur Charles Dickens — mutatis mutandis.

Bessi Gamli, gamansaga úr Reykjavík (Rvfk 1918. Útg. Þorsteinn Gíslason) afneitar ekki uppruna sínum. Hér er prédikað enn þá meira en í fyrnefndum bókum og víða beinlínis, öll framsetningin miklu hugrænni. Það ber jafnvel meira á þessum einkunnum í þessari sögu en í fyrri bókum höfundarins. Þar sem nú þetta alt er alment talinn ókostur á skáldsögu, skyldu menn halda, að þessi saga væri lélegasta bók höfundarins. En svo er þó eigi. Jón Trausti kallar bókina gamansögu, en saga í eiginlegri merkingu orðsins er hún ekki. Höfundurinn hefir ekki skeytt um að semja reglulega sögu í þetta skifti, hefir óskað að hafa frjálsar hendur. En hann hefir notað söguformið, af því að (það lætur honum best; enda myndi hrein hugvekja eða blaðagreinar

ekki hrífa eins ^íög^u saga. Það ber því ekki að dæma þessa bók sem sögu eða að bera henni á brún hitt og þetta, sem á miður vel við í reglulegri sögu. Annað mál er að mér lízt betur á fleiri önnur ritverk skáldsins. Skal eg þar til nefna söguna *Sýður á keipum* (í »Tvær gamlar sögur«), sem bæði að því, er til orðfærisina og mannlýsinganna kemur, ef til vill er bezta saga skáldsins, og hið gullfallega kvæði *Konan í Hvannadalabjörgum* (í *Íðunni* 1917), og vildi eg heldur kjósa fleiri þess konar sögur og kvæði frá hans hendi. En samt er Bessi gamli allmerkileg bók. Tekur höfundurinn alvarleg mál til umræðu og lýsir ágætlega ýmsum viðburðum og mönnum.

Bókin er aðallega ádeila, árás á lítt hugsaðar umbótarstefnur, svo sem jafnaðarkenningar jafnaðarmenskunnar. Í grein Bessa gamla »Upp með dalina, niður með fjöllin« er dregið dár að þessari kenningu, sem er líka mjög svo heimskuleg. Frelsi og bróðerni; það er alt annað. Þau eiga reyndar oft erfitt uppdráttar, en þó ber að keppa að þessum hugsjónum. En jöfnuður út í yztu æsar er óeðlilegur og lítt eftirsóknarverður. Í þessari grein er allnapurt háð og kímni, sem verður þó stundum of áþreifanleg. Það er enn fremur ráðist á atvinnu-pólitikina, ónýti stjórnumálamanna, lélega blaðamensku, agaleysi barna og bannlögin og ólöghlýðnina við þau o. m. a. Bessi heldur fram öflugum einveldi og öðrum íhaldsskoðunum. En þó að hann segi margt gott og eftirtektavert, þá er mér þó nokkur efi á því, hvort það sé eiginlega íhaldssemi, sem vantar á þessu landi, jafnvel þó menn hér stundum fari nokkuð geyst og ógætilega á sumum sviðum.

Sá, sem segir frá, er ungur háskólagenginn maður, sem í Kaupmannahöfn hefir verið snortinu nokkuð af jafnaðarmenskunni og hefir nú tekið við ritstjórn jafnaðarmannablaðs í Reykjavík. Hann verður þó bráðum hálfleiður á þessu starfi, sér tómleikann í því öllu og öllum dutlingum lýðsins; vill þó ekki kannast við það við vin sinn Björn Sigvaldason, sem einatt er að stríða honum sakir þessarar stöðu hans. Hann þolir þó Birni þetta, einkum af því að hann ann systur hans, enda er Jón í raun og veru ágætur maður. Björn kemur honum í kynni við Bessa gamla, móðurbróður sinn, og hugur hans og skoðanir breytast smámsaman fyrir háð og fortölur gamla mannsins. Áður hefir hann þó litið alt öðrum augum á karlinn, skoðað hann sem argasta andstæðing sinn. En í veislunni á skipinu fær hann nýtt álit á honum, og sagan endar með, að hann lætur af ritstjórn og kvænist Sigríði Sigvaldadóttur,

systurdóttur hans, og verður fyrstur manna aðnjótandi ferðastyrka-
úr sjóð, sem Bessi gamli gefur landinu eftir sínu dag.

Bessi Bessi er merkilegur maður og einkennilegur. Hefir margt
drifið á daga hans. Hann er mjög lærður maður og víðförull og
nafnkunnur bæði utan lands og innan. Hann skrifar margar lærðar
ritgerðir á ýms mál, en líka um »framfarabrauk« og »frelsisgaspur«.
Vitaskuld afla þessi skrif honum megnrar óvildar allmargra
manna heima, sem skilja hvorki skoðanir hans né tilkomu í vísinda-
legu tilliti. En hann kærir sig ekkert um það; hann er nógu auð-
ugur til að vera ekki háður neinum. Aftur á móti er mörgum al-
þýðumönnum skemt með þessum skrifum. Hann er einrænn og
sérlandaður og ómannblendinn; hins vegar er hann mesti fjárhyggju-
maður, verður meðeigandi og meðstjórnandi í botnvörpungafélagi og
stórgræðir á þessu. Í raun og veru er hann framfaramaður; fhal-
samur er hann að eins í stjórnámálum, heldur, að það sé best, að
einn ráði eða fáeinir duglegir og vill leggja þingið niður. Og víst
er það, að mannkynið verður að finna betra stjórnarfyriřkomulag
en meirihluta-fyriřkomulag það, sem nú er uppi. Að taka upp-
einveldið aftur myndi þó varla óskarast. Það var oft og tíðum
mesti gallagripur, en myndi nú enn fremur reynast alveg ófull-
nægjandi í okkar samsettu mannfélögum. En sennilega er þetta
heldur ekki skoðun höfundarins sjálfs, enda þótt Bessi virðist yfir-
leitt tala fyrir munn hans. Bessi er aðalpersóna sögunnar, og er
sagan aðallega ræður hans, og það, sem Björn segir, er bergmál af
skoðunum hans. En það, sem best er við karlinn, er föðurlandsást
hans og áhugi á velferð þess, sem hann sýnir m. a. með því að
gefa Íslandi eigur sínar eftir sinn dag. Þó hefir lýsingin á Bessa
ekki tekist vel. Er hann of samsettur, til þess að sálarþekking
höfundarins ráði við hann.

Önnur persóna, sem kemur allmikið við söguna, er Sokki,
kostuleg skopmynd. Mesti sæmdarkarl, en ekki gáfaður, og
hefir hann tekist miklu betur, er meira að segja jafnvel
einfaldur í meira lagi. Þrátt fyrir það — eða öllu heldur
einmitt af þeirri ástæðu — þjáist hann af einhverri stjórn mála-
ástríðu. Er áskrifandi í blöðin, gefir út smákver um landsins gagn
og nauðsynjar, býður sig fram við hverjar kosningar, en fellur alt
af. Þá eltir hann þingmennina til Reykjavíkur og sezt að á Al-
þingi sem eins kosar auka-þingmaður og hlustar á allar ræðurnar.
Hann heldur, að það nægi til að vera þingmaður að vera meðal-
maður og gera sama sem flestir, og er sá skoðun eigi óalgeng.

Hefir höfundurinn hér skapað nýjan »politísk kandestöber« (Vefara með tólf kónga viti), sem flestir menn kannast við. Sumpart hefir höfundurinn haft sérstaka »lifandi fyrirmynd«. Sokki verður á endanum ritstjóri »Alþýðublaðsins«, sem um leið verður mál gagn bændna.

Agætar eru einnig lýsingarnar á samsætinu í skipinu, á ýms- um mönnum, sem bregður fyrir þar, á ræðunum, sem haldnar eru þar, á ofdrykkjunni, á áfengisinsmygluninni o. fl.

Axel Thorsteinsson er hugsæismaður eins og fyrnefndir höfundar, en bjartsýnn er hann eigi eins og Einar Kvaran og Sigurður Heiðdal, jafnvel ekki eins og Jón Trausti, sem er reyndar stundum nokkuð efunargjarn að því er til sums kemur, sem alment er álitid gott og blessað, en þó er alls ekki bölsýnn. Þó er Axel Thorsteinsson eiginlega ekki svartsýnn, heldur öllu fremur angurvær. Það hvílir angurværðablær yfir flestum sögum hans. Það er líka annað einkenni á þessum höfundi. Hann er ekki að eins hugsæismaður, hann er líka nokkuð rómantískur. Það stendur í sambandi við það, að hann er meira ljóðskáld en hinir, þó að honum hafi hingað til tekist betur að semja sögur en að yrkja kvæði. Það er eins og eitthvað óverulegt, en yndislegt og aðlaðandi við sögur þessa skálds.

Börn dalanna, Nokkrir sögupættir I—II (Rvfk. 1918 Bókaverzlun Ársæls Árnasonar), marka mikla framför í ritstarfi skáldsins. Hér eru tvær sögur, sem þó standa í nokkru sambandi hvor við aðra, gerast í sömu sveit og á sama tíma.

Þegar Högni litli dó (þáttur úr sögu fólksins á Sól- bakka) er litil, látlaus saga um lítinn gáfaðan dreng, sem dreymir um að verða duglegur smiður eins og faðir hans og gleðja foreldra sína og systkin með að búa til ýms smíði og gefa þeim. En draumarnir fá voveiflegan enda. Litli drengurinn ofkælist í þokunni, meðan hann er að sitja hjá, og deyr úr brjósthimnubólgu. Er hann öllum harmdauði. Sagan er bæði átakanleg og gullfalleg. Einkum er snotur lýsingin á kvíða og dapurleika heimamanna, meðan Högni liggur veikur. Náttúrulýsingar eru yndisfagar.

Hin sagan heitir Neisti — og kemur Sólbakkafólkið nokkuð við hana. Neisti er nafn á hesti, sem verður til þess að færa tvö ungmenni saman. Það vill þó svo til — til allrar ógæfu —, að þau eru hálfystkin, og þau verða að skilja.

Ástríður á Fosstúni er gift Högni, en hefir áður elskað Gunnar í Svartárkoti, og Böðvar er sonur þeirra og ekki Högni. Hún

hefir ekki þorað að giftast Gunnari af því, að hann er fátækur, og gerir bæði hann og sjálfa sig óhamingjusöm. Högni er kaldur og rólyndur, en góður maður og gerir henni alt til geðs, og Böðvari er hann hinn bezti faðir, enda veit Böðvar ekki betur, en að hann sé það. Ástríður hefir ekkert sagt honum af þessu, er einatt að draga það á langinn, þvert á móti ráðum bónda síns. Gunnar hefir kvænst Ingibjörgu, og hafa þau eignast eina dóttur: Unni. Hjónabandið er mjög óhamingjusamt. Skuggar fortíðarinnar skyggja á það. Gunnar getur aldrei gleymt Ástríði, og Ingibjörg, sem ann Gunnari, þjáist af afbrýði; en Unnur er þeim báðum ástfólginn.

Þau Ástríður hafa reynt að koma í veg fyrir, að þau hálf systin, Böðvar og Unnur, finnist og kynnist. En forlögin vilja það óðrúfísi. Neisti, hesturinn sem Högni hefir keypt handa Böðvari, strýkur til átthaga sinna einn góðan veðurdag, og Böðvar fer sjálfur að Svartárkoti að sækja hann og kynnist þar með Unni. Þau Gunnar og Ingibjörg farast í jarðskjálfta, og Unnur flytur sig til Sólbakka-fólksins. Þau Böðvar finnast nú á laun og trúlofast á laun. En þegar foreldrar Böðvars fá veður af því, verður Ástríður að segja honum hið sanna, nú er engin undankoma lengur. Böðvar órvílnast, en Unnur vill ekki sleppa honum. »Það getur ekki verið vilji guðs, Böðvar«, segir hún, »að uppræta ástina úr brjóstum okkar. Heldurðu, að hann hafi tendrað hreina, heita og falslausa ást í brjóstum okkar, til þess að láta afbrot annara ræta hana upp!« En Böðvar þorir ekki að kvongast henni, þó hún ögri honum með heigulsnafninu. Það er heldur ekki auðséð, hvernig hægt yrði að framkvæma slíkt hjónaband. Lögin banna það, og það er að búast við því, að þau Högni og Ástríður hefðu ekki þagað. Böðvar fer út í heiminn til þess að deyfa sorg sína, hann er orðinn bólsýnismaður og hefir mist trúna á guð. Og Unnur situr eftir.

Það er brygðarsaga og ekki alveg ný í íslenskum bókmentum (sbr. »Upp við fossa« eftir Þorgils gjallanda). Hið eina nýja er það, að Unnur vill giftast Böðvari þrátt fyrir alt. Það, sem gefur sögu þessari sitt gildi, er yndisblær sá, sem hvílir yfir henni, yfir þeim mörgu fögru náttúrulýsingum, yfir lýsingunni á samdrætti þeirra Böðvars o. s. frv.

Mannlýsingar eru og flestar ágætar. Einkum þykir mér mikið til Höгна koma. Böðvar segir um hann, er hann veit, að hann er ekki faðir hans: »Eg ann honum sem föður. Hann verður aldrei annað í mínum augum. Eg mun alt af kalla hann föðurnafninu.« — Unni er einnig vel lýst. Hún er barn náttúrunnar, saklaus og

látlaus. Þegar hún óvart sér Böðvar nakinn á sundi í Svartá og á hlaupi með fram henni, kemur henni ekkert ljótt í huga, og hún verður ekki sérlega feimin. Enda segir Gunnar við hana: »Þú þarft ekki að hugsa, Unnur mín, að það sé neitt ljótt í því, þótt þú hafir séð hann nakinn. Það er ekkert óhreint við það. Ef um eitthvað óhreint er að ræða, þá er það frá okkur sjálfum. Þá er sál okkar ekki hrein, hugsunarhátturinn spiltur. Fagur líkami er hið allra fegursta af öllu því fagra, sem guð hefir skapað.« Nokkuð ófímlega komist að orði. — Hefir skáldið lesið »Gertrude Coldbjörn-sen« eftir Erik Skram (6. k.), þar sem hugsunin er fimlegar orðuð!

Annars er eitthvað í sögu þessari, sem helzt minnir á sumar sögur Björnstjerne Björnson, nema að norska skáldið notar sterkari liti og skýrari strik. Axel Thorsteinsson er linari. En bæði er blærinn í Neista mjög svipuð þeim, sem er á sögum Björnson, og minna lyndiseisunnir ýmsra persóna einnig á ýmsar persónur í sögum norska skáldsins.

Axel Thorsteinsson er nú kominn í skáldasessinn. Mikils má vænta af honum — ef Ísland fær hann aftur úr heljargreipum.

Gunnar Gunnarsson Smaa Historier. Ny Samling. (Gyldendalske Boghandel 1918). Um Gunnar Gunnarsson er það að segja, að hann getur naumast lengur talist íslenzkur höfundur. Það er ekki það eitt, að hann skrifar sögur sínar á dönsku og verður að láta aðra þýða þær á íslenzku. Andinn í sögum hans er yfirleitt ekki íslenzkur. Það er svo margt, sem kemur Íslendingum, og þeim sem þekkja til þeirra, eitthvað svo kynlega fyrir sjórir. Það getur nú reyndar verið, að sumt af því, sem menn hér (í Reykjavík og víðar) kannast ekki almennilega við, sé austfirzkt, eins og Sigurður Guðmundsson magister hefir bent á. En með því er ekki alt skýrt. Í þessum smásögum get eg ekki fundið neitt, sem gæti ekki eins vel verið danskt, að nöfnunum undanskildum. Er það þess vegna að höfundurinn notar íslenzkar nafnamyndir? Þykja mér þær nokkuð óþægilegar í danskri bók og auk þess óhentugar.¹⁾ Ef við breytum mannanöfnum og staðarnöfnum, verður afarlítið íslenzkt eftir. Getur verið, að lyndiseinkunnir skip-

¹⁾ Danir geta fæstir borið rétt fram önnur eins nöfn og Runki, Sæmundur, Sigmundur, Jón, Snóksdal, Hafliði; munu eflaust segja Runki, Sæmundúr, Sigmundúr, Jón, Snukksdal, Haffliði. Það nær heldur engri átt að nota þágufallið Hamri í danskri bók.

stjóra og stýrimanns á »Solveigu« (í »En pinlig Situation) séu Íslenzkari en danskur. Það er þá alt og sumt. Við Runka er ekkert sérkennilegt, hann er stæling eftir Drachmann. Í sögunni Den sidste Rus, Den evindelige Sejlads og Sandhed er alt óÍslenzkulegt, meira að segja kemur hér fyrir, það sem á nýðönsku hefir verið kallað, sjæleforvridning, þ. e. a. s. það er öfgakent, óeðlilegt.

Yfir höfuð að tala eru þessar sögur ekki sérlega góðar. Það er eitthvert dauft bragð að þeim flestum eða tilgerð. Þá voru smásögurnar í fyrra safninu miklu betri. Að höfundurinn er nokkuð bölsýnn, er ekkert tiltökumál. Hver fugl syngur með sínu nefi. Þó getur maður einskis fremur óskað en að hann vildi aftur gefa okkur aðra eins sögu og Gest eineygða. Þó að tilþrif séu í »Vargi í Véum« (lýsingin á dómkirkjuprestinum), hefir hann aldrei komist eins hátt og í Gest i eineygða.

Efnið í þessum smásögum er þetta: »En pinlig Situation« (Í vandræðum staddur) segir frá skipbroti, er orsakast af þrætu þras skipstjóra og stýrimanns, sem er einnig bæði þrár og bráður. »Da Lykken gik J. J. Snóksdal forbi« (Þá er hamingjan gekk fram hjá J. J. Snóksdal) segir frá ungum manni, sem í einskonar dirfskuvímu dirfist að nálgast auðmanninn Björn Jónsson og hefir mikil áhrif bæði á hann og dóttur hans. En hann missir af hamingjunni af því að hann þorir ekki að biðja hinn mikla mann nógu mikils. Er þessi saga með hinum betri og vel sögð. — »Den sidste Rus« (Síðasta víman) er undarleg saga um ríkan Vestur-Íslending, sem er leiður á lífinu og því óskar eftir — að verða myrtur. Þetta verður líka — þó ekki á þann hátt, sem hann helst hefði kosið. — »Den evindelige Sejlads« (Látlausu siglingin) er enn þá undarlegri, um »demoniskan« kvennasigrara og fyndnibaglara dr. Eigil (sic!) Bjarnason, sem er alóÍslenzkur, um ást og hatur og daður. — »Enkemand« (Ekkil) er smásaga um ekkil, sem er að gráta »sál sína«, látnu eiginkonuna, falleg saga en ömurleg, svo sem títt er höfundinum. — »En Ravnehistorie« (Saga af hrafni einum), um slunginn hrafn, sem gabbar bæði menn og hrafna og verður að lokum hrafna-
konungur æfilangt. — »Grýla« um röska og hugrakka t/ik. Eru þessar tvær síðasttöldu sögur einna Íslenzkastar og allvel sagðar, þó ekki nærri eins vel og dýrasögur þeirra Þorgils gjallanda og Guðmundar Friðjónssonar. — »Et Brev« (Bréf), allósennileg saga um unga stúlku, sem eyðir samning um sölu á fossinum, sem hún áun svo innilega, til Englendinga, sem alls ekki reiðist henni. Þvert

á móti fær hann ást á henni — og hún á honum. — »Sandheden« (Sannleikinn), einnig kynleg saga um morðingja, sem er að leitast við að ræða lífsspeki við ungan dómara sinn um sannleika og sennileika (höf. hefir víst ekki hugað sér hana gerast á Íslandi). — »I Liv og Død« (Í lífi og dauða) segir frá tveim mönnum, Guðmundi og Jóni, sem þurfa að vera í málaprasi hvor við annan, að minsta kosti einu sinni á ári, en eru þess á milli hinir þertu vlnir, geta hreint ekki verið hvor án annars. Allskemtileg saga.

Þó að þessar sögur séu ekki gallalausar, dylst það eigi, að höfundur þeirra getur sagt frá; það er enginn viðvaningsbragur á þeim. Og málið er furðu gott, örfáar villur (ret og slet fyrir slet og ret; Bakken fyrir Bredden [bakki]; om lidt (bls. 71), norskusletta fyrir lidt efter [eftir dálitla stund], om lidt þýðir rjett strax. Smerterne var over fyrir ovre; ét Led fyrir een Led; de maatte have dem en Proces fyrir have sig en Proces). Auðvitað er danskan ekki eins fjölskrúðug og lipur hjá honum eins og hjá úrvalsskáldum Dana. Það er enginn maður, sem getur orðið eins hagrur á útlendu máli eins og á móðurmáli sínu. Ósk mín er að skáldið vildi reyna að vera svolítið eðlilegri og forðast öfgar og ólíkindi. Það getur samt orðið skáldskapur.

Holger Wiehe.

Islandica X. Annalium in Islandia farrago and De mirabilibus Islandiæ by Gísli Oddsson edited by Halldór Hermannsson. (iiij +) XV+84 bls. Ithaca 1917. 8vo.

Þetta bindi *Islandica*-safnsins hefir að geyma tvö rit eftir Gísla Oddsson, byskup í Skálholti (f. 1593, d. 1638), bæði á latínu. Er hið fyrra samtíningur úr íslenskum annálum, einkum lútandi að náttúrufræðum, kynjaviðburðum, kynjadýrum o. s. frv., og tekur yfir árin 1106—1636, en er, eins og búast má við, fyllt um daga höfundar sjálfs. Hefir rit þetta áður verið notað af náttúrufræðingum og öðrum, þótt ekki hafi það verið gefið út fyrr.

Síðari ritgerðin, um undur Íslands, mun þykja öllu merkari. Hún er í rauninni íslensk náttúrufræði, eða, eins og útg. segir í innganginum, útsýni menntaðs manns á 17. öld yfir náttúruna umhverfis hann. Þeim, sem þekkja hugsunarhátt menntamanna á 17. öld, kemur það ekki á óvart, þótt hér kenni nokkurra hindurvitna, en furða er þó, hve oftlega Gísli byskup reynir að finna eðlilegar skýringar á fyrirbrigðum þeim, er hann lýsir.

Fyrir bókinni er liðlegur inngangur um ævi Gísla byskups og

rit þessi, og er óþarft að rekja það nánara hér, með því að ævi-sögu Gísla byskups geta þeir, er ekki ná til þessa rits, nú lesið í Bykupasögum síra Jóns Halldórssonar í Hítardal, sem Sögufélagið hefir gefið út. Aftan við hvora ritgerðina um sig eru athugasemdir, skýringar og orðamunur, að sjálfsögðu mjög til léttis.

Hér sem í öðrum ritum frá hendi Halldórs Hermannssonar kennir vísindalegrar vandvirkni og staðgóðrar þekkingar.

Páll Eggert Ólason.

Halldór Hermannsson: Catalogue of runic literature forming a part of the Icelandic Collection bequeathed by Willard Fiske. viij (+2)+105 bls. Oxford 1918. 4to.

Arið 1914 gaf Halldór Hermannsson út hina miklu skrá sína um Fiskessafn (Fiske Icelandic Collection), skrá um allar bækur þær, sem íslenzkar eru, eftir íslenzka menn eða varða Ísland eða íslenzk efni (sbr. um þessa skrá »Skírnir« 1914, bls. 422—428). Rúnabókmenntir voru þar þó undanskildar, en höf. gaf þá fyrirheilt um að gefa út síðar skrá um rúnarit Fiskessafns. Þetta heit sitt hefir hann nú efnt með skrá þeirri, er nýlega er komin út og hér er nú getið. Skráin er í tvennu lagi, stafrófskrá eftir höfundanöfnum og efnisskrá. Er hún með sama blæ vandvirkni og alúðar, sem einkennir útgáfustarf þessa höf.

Það er ekki tilgangur minn að rita hér nokkurn ritdóm um þetta verk, heldur að eins benda þeim, er stund leggja á þessi fræði, á það, að ritið er nú útkomið og væntanlega fáanlegt hjá bóksölum. Og er það hér með gert.

Páll Eggert Ólason.

Ný rit,

er Skírnir hafa verið send og sumra verður síðar getið:

Þú sögur eftir Guðm. Friðjónsson. Rv. Bókav. Sig. Kristjánssonar 1918.

Jón Arasons religiöse digte udgivne af Finnur Jónsson. Kbh. 1918.

Finnur Jónsson: Islandske fredløse. Et kulturhistorisk udsnit. Særtryk af Edda.

Finnur Jónsson: Axel Olrik. Tale i Videnskabernes Selskabs Møde d. 9. Marts 1918.

Konan í Hvanndalabjörgum. Íslenzk þjóðsaga í ljóðum, eftir Guðm. Magnússon. Sérprentun úr »Íðunni«. Rv. 1917.

Hagskýrslur Íslands 12—16. (Fiskiskýrslur og hlunninda 1915, Verzlunarskýrslur 1914, Alþingiskosningar 1916, Búnaðarskýrslur 1916, Barnafræðsla 1914—15).

Hagtíðindi 3. árg, 1918.

Tvö kvæði eftir Stephan G. Stephansson (Situr lítil eyja úti. Þótt þú langförull legðir). Lögin fyrir karlakór. Eftir Jón Laxdal. Bókav. Guðm. Gamalielssonar. Rv. 1917.

Heimhugi. Kvæði eftir St. G. St. Lag eftir N. L. Sagnér. Bókav. Guðm. Gamalielssonar. Rv. 1917.

Réttur. Tímarit um félagsmál og mannréttindi. III. ár. 1. hefti. Akureyri 1918.

Tímarit íslenzkra samvinnufélaga. XII. ár. Rv. 1918.

Vörður — Málagn barnakennara. Ritstjóri Hallgrímur Jónsson. Rv. 1918.

Prentarinn. Ritstjóri Halbjörn Halldórsson. V. og VI. árg. Rv. 1917 og 1918.

Merkúr. Málagn verzlunarmanna. Ritstjóri Árni Óla. Rv. 1918.

Þróttur: Útgefandi: Íþróttafélag Reykjavíkur. Rv. 1918.

Fylkir: Ritstjóri og útgefandi Frímann B. Arngrímsson. Ak. 1918.

Útilega. Handbók útilegumanna. Rv. 1918.

Skýrsla um Bændaskólann á Hvanneyri 1916—17.

Skýrsla um Bændaskólann á Hólum í Hjaltadal 1914—1918. Ak. 1918.

Åge Meyer Benediclsen: Overblik over det islandske Folks Historie. Dansk-islandsk Samfunds Smaaskrifter, Nr. 3. Kbh. 1918.

Leiðréttingar. Á bls. III. í Skýrslur og reikningar Bókmentafél. 8. l. a. o. les: lofsælt starf, fyrir »farsælt starf«; sömu bls. 9. línu les: heiðursforsetann, f. »heiðursforseta«.

Skýrslur og reikningar

Bókmentafélagsins 1917*).

Bókaútgáfa.

Félagið hefir árið 1917 gefið út þessar bækur og félagsmenn fengið þær fyrir árstillagið, 6 krónur:

Skírnir, 91. ár	kr. 10,80
Fornbréfasafn XI. b. 3. h.	— 4,00
Safn til sögu Íslands V. b. 3. h.	— 2,50
Lýsing Íslands, eftir Þorv. Thoroddsen, III. b. 1. h.	— 3,00
Samtals	kr. 20,30

Reykjavík 17. júní 1918.

F. h. Matthíasar Þórðarsonar
bókav. félagsins.

Guðmundur Jónsson.

Aðalfundur.

Ár 1918, mánudaginn 17. júní, kl. 9 að kveldi var aðalfundur Bókmentafélagsins haldinn í Iðnaðarmannahúsinu.

Fundarstjóri var kosinn prófessor Lárus H. Bjarnason.

I. Forseti gat látins félaga, fyrv. bankastjóra Tryggva Gunnarssonar, og mintust félagsmenn hans með því að standa upp.

*) Frá öllu þessu hefti Skírnis hingað að þessari skýrslu var gengið undir stjórn hins fyrra forseta, B. M. Ólsens, áður Jón Þorkelsson tæki við.

II. Þá skýrði forseti frá bókaútgáfu félagsins á þessu ári, sem yrði með minna móti sakir dýrtíðarinnar.

III. Forseti las upp ársreikning og efnahagsreikning félagsins og hafði sá endurskoðandi, er viðstaddur var, skjalavörður Hannes Þorsteinsson, ekkert haft við þá að athuga. Ennfremur las forseti upp reikninga sjóðs Lehmanns-Filhés og afmælissjóðs hins ísl. Bókmentafélags. Ársreikningur og efnahagsreikningur samþykktir í einu hljóði.

Endurskoðandi félagsins, Hannes Þorsteinsson skjalav., hreyfði nokkrum munnlegum athugasemdum viðvirkjandi reikningunum og beindi þeirri áskorun til stjórnarinnar, að athuga útgáfukostnað Skírnis og hvort eigi væri unt að takmarka stærð ritsins að einhverju leyti. Einnig hreyfði hann því að æskilegt væri, að ritlaun væru jöfn fyrir allar bækur félagsins.

IV. Forseti skýrði frá úrslitum stjórnarkosninga samkvæmt kjörbók félagsins. Forseti var kosinn dr. phil. Jón Þorkelsson Þjóðskjalavörður, og varaforseti dr. phil. Guðmundur Finnbogason prófessor. Í fulltrúaráð voru endurkosuðir: Matthías Þórðarson fornmenjavörður og dr. Guðm. Finnbogason, prófessor.

V. Endurskoðendur félagsins endurkosuðir í einu hljóði: Hannes Þorsteinsson skjalavörður og Klemens Jónsson fyrv. landritari.

VI. Alþingismaður síra Sigurður Stefánsson hreyfði þeirri athugasemd að æskilegt væri, að félagið gæfi sem allra fyrst út registur við Sýslumannaæfir og gerði tillögu í þá átt. Forseti gat þess, að stjórnin mundi hafa hug á að greiða fyrir því svo fljótt sem unt væri.

VII. Fundarstjóri stóð því næst upp og beindi eftirfarandi orðum til fráfarandi forseta og félagsmanna í heild sinni:

»Það hefir viðgengist nú um hríð, að þakka stjórn Bókmentafélagsins úr mínum sporum fyrir liðið ár og lokið ársstarf.

Það er sérstök ástæða til þess nú, er fyrsti forseti óskifta félagsins lætur af stjórn þess.

Fjórum sinnum hefir prófessor B. M. Ólsen verið kosinn forseti félagsins, tvisvar Reykjavíkurdeildarinnar og tvisvar félagsins óskifts.

Margt hefir hann vitanlega unnið félaginu gott og gagnlegt ásamt meðstjórnendum sínum. En tvent hefir sérstaklega fest sig í minni mínu: Viðreisn á fjárhag félagsins og heimflutningur Hafnardeildarinnar.

B. M. Ólsen sá það, að stjórn félagsins, svo sem væntanlega.

hverri annari stjórn, mundi farsælast að vera óskift og að eiga heima heima. Því snerist hann á þá sveifina, að flytja Hafnardeildina heim, og lánaðist það með aðstoð mætra Hafnarfélaga.

Þetta tvent og margt annað hér ónefnt þökkum vér félagsbræður þínir þér, B. M. Olsen, nú, er þú lætur af stjórn félagsins eftir 15 ára forustu þess og um 40 ára starf í þarfir lands og lýðs.

Og við þökkina aukum vér óskum um væra hvíld þér til handa eftir langt og farsælt starf.

Guð blessi gamla forsetann, heiðursfélagann og heiðursforseta. Og guð blessi félagið undir forustu nýja forsetans.

Undir þetta tóku félagsmenn með því að standa upp, en forseti þakkaði með nokkrum orðum.

Fundarbók lesin upp og samþykkt.

Fundi slitið.

Lárus H. Bjarnason.

Jón Aðils.

Reikningur

yfir tekjur og gjöld Hins íslenska Bókmenntafélags fyrir árið 1917.

Tekjur:

1. Eftirstöðvar frá 1916:			
a. Veðdeildarbréf Landsbankans .	kr. 21000 00		
b. Dönsk verðbréf	— 8000 00		
c. Peningar í sparisjóði	— 5600 98		
		kr. 34600 98	
2. Styrkur úr landsjóði	— 2000 00		
3. Seytjándaga greiðsla fyrir handritasafnið	— 1000 00		
4. Greidd tillög meðlima	— 6065 50		
5. Fyrir Skírni og seldar bækur í lausasölu	— 1236 40		
6. Styrkur úr verðlaunasjóði Jóns Sigurðssonar	— 700 00		
7. Fyrir auglýsingar á kaðu Skírnis 1917	— 103 00		
8. Greidd skuld, gömul og óvæntanleg	— 300 00		
9. Endurgreitt af sjókaða-útgjöldum frá 1912	— 4 08		
10. Áravextir af:			
a. 21000 kr. í veðdeildarbréfum			
Landsbankans	kr. 945 00		
Flyt	kr. 945 00	kr. 46009 96	

Fluttar . . .	kr. 945 00	kr. 46009 96
b. 4000 kr. í kreditkassaskulda- bréfum landeigna	— 140 00	
c. 2200 kr. í húskreditkassa- skuldabréfum	— 88 00	
d. 1600 kr. í Þjóðbankahlutabr. —	128 00	
e. 200 kr. í kreditkassaskulda- bréfum jóskra landeigna . . .	— 7 00	
f. peningum í sparisjóði . . .	— 244 36	
		— 1552 36
		kr. 47562 32

Gjöld:

1. Bókagerðarkostnaður:

a. Skírnir:

1. Laun ritstjóra	kr. 500 00	
2. Ritlaun og prófarkalestur . .	— 1140 00	
3. Prentun, pappír, hefting o.fl. —	3917 48	
		kr. 5557 48

b. Aðrar bækur:

1. Ritlaun og prófarkalestur . .	kr. 435 75	
2. Prentun, pappír, hefting o.fl. —	2468 15	
		— 2903 90

2. Afgreiðslukostnaður:

a. Laun bókavarðar

b. Innheimtuuppbót til sama fyrir

árið 1916

c. Burðargjald o. fl.

	kr. 720 00	
	— 315 71	
	— 789 87	
		— 1825 58
3. Kostnaður við prentun á félagsskírteinum . .	— 173 25	
4. Til undirbúnings rita Jónasar Hallgrímssonar .	— 200 00	
5. Brunabótagjald og ýms gjöld	— 132 49	
6. Eftirstöðvar 31. desbr. 1917:		

a. Veðdeildarbréf Landsbankans

b. Kreditkassaskuldabr. landeigna —

c. Húskreditkassaskuldabréf

d. Þjóðbankahlutabréf

e. Kreditkassaskuldabréf jóskra

landeigna

	— 200 00	
Flyt . . .	kr. 29000 00	kr. 10792 70

Fluttar . . .	kr. 29000 00	kr. 10792 70
f. Peningar í sparisjóði . . .	— 7769 62	— 36769 62
		<hr/> kr. 47562 32

Reykjavík 4. maí 1918.

Sigurður Kristjánsson

p.t. gjaldkeri.

Reikning þennan ásamt fylgiskjöllum hefi eg rannsakað og ekkert fundið við hann að athuga.

Reykjavík 30. maí 1918.

Hannes Þorsteinsson.

Efnahagsreikningur

Hins íslenska Bókmentafélags 1. janúar 1918.

Eignir:

1. Samkvæmt ársreikningi 1917:

a. Í verðbréfum	kr. 29000 00	
b. Í peningum í sparisjóði	— 7769 62	
		<hr/> kr. 36769 62
2. Forlagsbækur, samkvæmt skrá, virtar	— 20000 00	
3. Ýmsir munir, samkvæmt skrá, virtir	— 716 00	
4. Útistandandi skuldir	— 2825 97	
		<hr/> kr. 60311 59

Skuldir:

Skuldlaus eign	kr. 60311 59
	<hr/> kr. 60311 59

Reykjavík 14. maí 1918.

Sigurður Kristjánsson

p.t. gjaldkeri.

Við reikning þennan hefi eg ekkert fundið athugavert.

Reykjavík 30. maí 1918.

Hannes Þorsteinsson.

Reikningur

Afmælissjóðs hins íslenska Bókmentafélags fyrir árið 1917.

T e k j u r :

1. Innstæða við árslok 1916	kr. 1014 06
2. Vextir 1917	— 47 96
	<hr/> kr. 1062 02

G j ö l d :

Innstæða í Söfnunarsjóði	kr. 1062 02
	<hr/> kr. 1062 02

Reykjavík 26. apríl 1918.

• *Sigurður Kristjánsson*
p.t. gjaldkeri.

Reikningur þessi er réttur.

Reykjavík 30. maí 1918.

Hannes Þorsteinsson.

Reikningur

sjóðs Margrétar Lehmanns-Filhés fyrir árið 1917.

T e k j u r :

1. Eftirstöðvar við árslok 1916:

a. Stofnfé:

1. Í Söfnunarsjóði	kr. 5261 74
2. Í innlánsbók Íslandsbanka	— 19 36
	<hr/> kr. 5281 10

b. Starfsfé:

Í innlánsbók Íslandsbanka	kr. 550 36
-------------------------------------	------------

2. Vextir 1917:

a. Í Söfnunarsjóði	kr. 248 87
b. Í innlánsbók Íslandsbanka	— 20 36
	<hr/> — 269 23
	<hr/> kr. 6100 69

Gjöld:

Eftirstöðvar við árslok 1917:

a. Stofnfé:

1. Í Söfnunarsjóði	kr. 5323 96	
2. Í innlánsbók Íslandsbanka	— 24 45	
		kr. 5348 41

b. Starfefé:

Í innlánsbók Íslandsbanka	— 752 28	
		kr. 6100 69

Reykjavík 26. apríl 1918.

Sigurður Kristjánsson

p.t. gjaldkeri.

Reikningurinn er réttur.

Reykjavík 30. maí 1918.

*Hannes Þorsteinsson.***HÍÐ íslenska Bókmentafélag.**

VERNDARI:

Kristján konungur hinn tífundi.

STJÓRN:

Forseti: Jón Þorkelsson, þjóðskjalavörður, dr. phil.**Varaforseti:** Guðmundur Finnþogason, próf., dr. phil.**Fulltrúar áð:**

Guðmundur Finnþogason, prófessor, dr. phil.

Matthías Þórðarson, þjóðmenjavörður, bókavörður félagsins.

Einar Arnórsson, prófessor, kjörstjóri félagsins.

Jón Aðils, docent, skrifari félagsins.

Björn Bjarnason, kennari, dr. phil.

Sigurður Kristjánsson, bóksali, r. af dbr., gjaldkeri félagsins.

HEIÐURSFÉLAGAR:

- Anderson, R. B., prófessor, Madison, U. S. A.
 Boer, R. C., prófessor, dr. phil., Amsterdam.
 *Briem, Eiríkur, prófessor, comm. af dbr. m. m., Reykjavík.
 *Briem, Valdimar, vígslubiskup, r. af dbr., Stóra-Núpi.
 Bryce, James, Right Hon., sendiherra Breta í Washington.
 Brögger, W. C., próf., dr. phil., jur. & sc., stkr. af st. Ól. o. m. m.,
 Kristjánú.
 Cederschiöld, Gustaf, prófessor, dr. phil., Lundi.
 Craigie, W. A., prófessor, dr. phil., Oxford.
 Falk, Hjalmar, prófessor, dr. phil., r. af st. Ól. o. m. m., Kristjánú.
 Finnur Jónsson, prófessor, dr. phil., r. af dbr., r. af st. Ól. o., Khöfn.
 Gering, Hugo, dr. phil., leyndarráð, prófessor í Kiel.
 Hafstein, Hannes, fv. ráðherra, comm. af dbr. m. m., Reykjavík.
 Hermann, Paul, prófessor, dr. phil., Torgau.
 Heusler, Andreas, prófessor, dr. phil., Berlín.
 Jón Jónsson, prófastur, Stafafelli.
 *Jón Þorkelsson, dr. phil., þjóðskjalavörður, Reykjavík.
 Kálund, Kr., bókavörður, dr. phil., r. af dbr., Khöfn.
 Ker, W. P., prófessor við háskólann í Lundúnum.
 Kock, Axel, prófessor, dr. phil., Lundi.
 *Kristján Jónsson, háyfirdómari, comm. af dbr. m. m., Reykjavík.
 Löffler, L. Fr., fv. prófessor, dr. phil., Djursholm.
 Matthías Jochumsson, fv. sóknarprestur, r. af dbr. og dbrm., Akureyri.
 Mogk, E., dr. phil., prófessor í Leipzig.
 Noreen, Adolf, prófessor, dr. phil., Uppsölum.
 Ólafur Halldórsson, konferenzráð, r. af dbr. dbrm., Khöfn.
 *Ólsen, Björn M., prófessor, dr. phil. & litt., r. af dbr. og dbrm.,
 Reykjavík.
 Olsen, Magnus, prófessor við háskólann í Kristjánú.
 Pipping, H., prófessor, dr. phil., Helsingfors.
 Poestion, J. C., ríkisbókavörður, birðaráð, comm. af dbr. m. m., Vín.
 Stephan G. Stephansson, skáld, Markerville, Alb., Canada.
 Thomsen, Vilh., próf., dr. phil., r. af fo., stkr. af dbr., dbrm. m. m.,
 Khöfn.
 Thoroddsen, Þorvaldur, prófessor, dr. phil., r. af dbr., Khöfn.
 Wimmer, L. F. A., prófessor, dr. phil. & litt., stkr. af dbr. dbrm.,
 Khöfn.

* = neytti kosningarréttar síns 1918. (Svo einnig í félagatalinu).

FÉLAGAR.

A. Á Íslandi.

Reykjavík.

*Aðils, Jón, docent '17¹⁾
 *Alexander Jóhannesson, dr. phil.
 '17.
 Alexander Jóhannesson '17.
 Andersen, Ludvig, klæðsk. '17.
 Arinbjörn Sveinbjarnarson, bók-
 bindari '17.
 Arnar, Otto B., símritari '17.
 Arndís Kristjánsdóttir '17.
 Arni Jónsson kaupm. '17.
 Arni Sighvatsson kaupm.
 *Arni Sigurðsson, stud. theol. '18.
 *Arsæll Arnason, bókbindari '17.
 *Asgeir Sigurðsson, konsúll '17.
 Bartels, Martin, bankaritari '17.
 Beck, Símon, trésmiður '17.
 *Benedikt Sveinsson alpm. '17.
 Benedikt Þórarinnsson kaupm. '17.
 Bergur Rósinkransson, kaupm. '17.
 Bjarnason, Agúst, próf. dr., '17.
 Bjarnason, Brynj. H., kaupm. '17.
 Bjarnason, Ingibjörg H., forstöðu
 kona kvennaskólans '17.
 *Bjarnason, Lárus H., próf. juris.
 '17.
 Bjarnason, Nicolai, afgrm. '17.
 Bjarnason, Þorleifur H., adjunkt
 '17.
 Bjarni Bjarnason, klæðskeri '17.
 Bjarni Jónsson, lækni '17.
 Bjarni Jónsson dómkirkjupr. '17.
 *Björn Björnsson, bókbindari
 '17.
 Björn Jónsson, verzlunarm.
 Björn Kristjánsson, bankastj. '17.
 Björn Ólafsson, bókarí '17.
 Björnson, Guðm., landlæknir '17.
 Björn Sigurðsson, bankastj. '17.
 Björn Þórðarson, aðstm. í stj. '17.
 Blöndahl, Magnús, kaupm. '17.
 Blöndahl, Sighv., cand. jur. '17.
 Blöndal, Ragnh., ungfrú '17.

*Bogi Ólafsson, kennari '17.
 Bókasafn K. F. U. M. '17.
 Borgþór Jósefsson, bæjargjaldk.
 '17.
 Breiðfjörð, Guðm. '17.
 Briem Eggert, yfirdómari '17.
 *Briem, Sigurður, póstmeistari
 '17.
 Brynjólfur Björnsson, tannl. '17.
 *Brynleifur Tóbiasson, stúdent '17.
 Böðvar Kristjánsson, adjunkt '17.
 *Claessen, Eggert, yfirréttarmála-
 flutningsmaður '17.
 Copland, G., stórkaupm. '17.
 *Courmont, André, ræðism. '17.
 *Eggerz, Sigurður, ráðherra '17.
 Eidesgaard, Niels A., prentari '18.
 *Einar Arnórsson, prófessor '17.
 Einar Finnsson, múrari '17.
 *Einar Gunnarsson, útgef. '17.
 Einar Helgason, garðyrkjuf. '17.
 Einar Magnússon, bókh. '17.
 Einar Pétursson, verzlunarm. '17.
 *Eiríkur Einarsson, cand. jur. '17.
 Eiríkur Ormason trésmiður.
 Erlendur M. Guðmundsson, bréf-
 beri '17.
 *Eyjólfur Jónsson, rakari '17.
 Eyþór Guðjónsson, bókbindari '17.
 *Fjeldsted, Andrés, augnl. '17.
 Fjeldsted, Lárus, cand. jur. '17.
 Friðrik Klemensson, póstafrgm.
 '17.
 *Geir Sigurðsson, skipstjóri '17.
 *Georg Ólafsson, cand. polit. '17.
 Gísl Guðmundsson, gerlafr. '17.
 *Gísl Ísleifsson, fv. sýslum. '17.
 Gísl Jónsson, vélstjóri '18.
 Grimúlfur Ólafsson, ritari '17.
 Gröndal, Ben. P., cand. phil. '17.
 Guðbrandur Jónsson, rithöf. '18.
 *Guðbr. Magnússon, prentari '17.
 Guðjón Jónsson, verzl. '17.

¹⁾ Ártölin aftan við nöfnin merkja að tillag sé afhent bókaverði fyrir það ár síðast.

- *Guðjón Sigurðsson, Hvg. 71 '18.
 Guðm. Asbjörnsson, kaupm. '17.
 Guðm. Bjarnason, klæðskeri '17.
 Guðm. Boðvarsson, kaupm. '17.
 Guðm. Finnbogason, dr. phil. '17.
 *Guðm. Gamalielsson, bóksali '17.
 *Guðm. Guðmundsson, skáld '17.
 Guðm. Guðmundsson, steinmsm. '17.
 Guðm. H. Guðmundsson, beykir 18.
 Guðm. G. Hagalín, stud. art. '18.
 *Guðm. Halldórsson, Njálsg. 52 '17.
 Guðm. Hannesson, prófessor '17.
 *Guðm. Helgason, præg. hon. '17.
 *Guðm. Jónsson, frá Brennu '18.
 Guðm. Kr. Guðmundsson '17.
 Guðm. Loftsson, bankaritari '17.
 Guðm. Magnússon, prófessor '17.
 Guðm. Magnússon, rithöf. '17.
 Guðm. Ólafsson, málflm. '17.
 *Gunnar Sigurðsson, cand. jur. '17.
 Halldór Danielsson, yfirdómari '17.
 *Halldór Kr. Þorsteinsson, skipstjóri '17.
 Halldór Þórðarson '17.
 Hallgrímur Benediktsson, heildsali '17.
 Hallgrímur Jónsson kennari '17.
 Hallgr. Kristinss., landsverzl. fullt.
 *Hannes Þorsteinsson, skjalav '17.
 *Hansen, Jörgen, verzm. '17.
 Hansen, Morten, skólastjóri '17.
 Haraldur Gunnarsson, prentari '17.
 Haraldur Níelsson, prófessor '17.
 Haraldur Sigurðsson, verzm. '17.
 Héðinn Valdemarsson, cand. polit. '17.
 Helgi Helgason, verzlunarstj. '17.
 *Helgi Jónasson, bankarit. '17.
 Helgi Jónsson, dr. phil. '17.
 Helgi Jónasson, verzm. '17.
 Hjörvar, Helgi, kennari '17.
 Hlíðdal, Guðm., verkfr. '17.
 Hólmfríður Arnad., kensluk. '16.
 Ingólfur Jónasson, verzm. '17.
 Ísleifur Jónsson, kennari '17.
 Jacobson, Jón, landsbókav. '17.
 Jakob Jónsson, verzlunarstj. '17.
 Jensen, Thor, stórkaupm. '17.
 Jensson, Sigríður H., frú '17.
 *Jóhann Kristjánsson, ættfr. '17.
 Jóhann Þorsteinss., præg. hon. '17.
 Jóhannes Jóhannesson, bæjarfög.
 Jóhannes L. L. Jóhannesson, præg. hon.
 Jóhannes Sigfússon, adjunkt '17.
 Johnson, Ólafur, konsúll '17.
 Johnson, Ag. J., bankaritari '17.
 Jóna Sigurjónsdóttir, frú '17.
 Jónas Jónsson, kennari '17.
 Jón Arnason, gagnfræðingur '16.
 Jón Guðjónsson, ritari, frá Flat-eyri '18.
 Jón Helgason, dr. theol., biskup '17.
 Jón Hermannsson, lögreglustj. '17.
 *Jón Hj. Sigurðsson, héraðsl. '16.
 Jón Jónsson, stud., Miðstr. 8 '17.
 Jón Kristjánsson, prófessor '17.
 Jón Magnússon, beykir '18.
 Jón Magnússon, ráðherra '17.
 Jón Ólafsson, skipstjóri '17.
 Jón Sigurðsson, ritari '17.
 *Jón Þórarinnsson, fræðslumstj. '17.
 Jón Þorláksson, verkfr. '17.
 *Jörundur Brynjólfsson, kennari, alpm. '17.
 Kaaber, Ludvig, konsúll '17.
 Kennarafélag Barnaskólans '17.
 Klemens Jónsson, fv. landritari '17.
 Kolbeinn Þorsteinsson, skipstjóri '17.
 Konráð Konráðsson, læknir '17.
 *Krabbe, Th., landsverkfr. '17.
 Kristinn Danielsson, præg. hon. '17.
 *Kristinn Jónsson, lyfjafr. '17.
 Kristján Agústsson, prentari '18.
 Kristján Kristjánsson, skipstj. '17.
 Kvaran, Einar, rithöf. '17.
 Lárus Halldórsson, præg. hon. '18.
 Lauganesspítali '17.
 *Laxdal, Jón, stórkaupm. '17.
 Lestrarfélagið «Íþaka» '17.

Lestrarfélag kvenna '17.
 Levi, R. P., kaupm. '17.
 Magnús Arnbj. son, cand. jur. '17.
 Magnús Benjamínsson, úrsm. '17.
 *Magnús Einarson, dýralæknir '17
 Magnús Guðmundsson, skrif-
 stofustj., alpm.
 *Magnús Helgason, skólastj. '17.
 Magnús Jónsson, docent '17.
 *Magnús, M., læknir '17.
 Magnús Magnússon, kennari '17.
 *Magnús Sigurðsson, bankastj. '17
 Magnús Vigfússon, verzl. '17.
 *Matthías Einarsson, læknir '17.
 Matth. Matthíasson, kaupm. '17.
 Matth. Þórðarson forn.m.v. '17.
 Nordal, Jóhannes, íshússtj. '17.
 Oddur Gíslason, yfirréttarmála-
 flutningsmaður '17.
 Oddur Hermannsson, skrifstofu-
 stjóri '17.
 Ólafson, Gísli J., símastj. '17.
 *Ólafur Björnsson, ritstj. '17.
 *Ólafur G. Eyjólfsson, heilds. '17.
 *Ólafur Lárússon, cand. jur. '17.
 Ólafur Ólafsson, umsjónarm. '17.
 Ólafur Runólfsson, bókh. '17.
 Ólafur Þorsteinsson, læknir '17.
 Olgeir Friðgeirsson, verzlstj. '17.
 Óskar Jónsson, prentari '18.
 Páll E. Ólason, ritari '17.
 Páll Halldórsson, skólastj. '17.
 Páll H. Gíslason, kaupm. '17.
 *Páll Jónsson, verzlunarm. '17.
 Páll Ólafsson, kaupm. '17.
 *Páll Stefánsson, heildsali '17.
 *Páll Sveinsson, kennari '18.
 *Palmi Pálsson, yfirkennari '17.
 *Pétur Halldórsson, bóksali '17.
 *Pétur Lárússon, prentari '17.
 Pétur Zophoníasson, ritari '17.
 Péturss, Helgi, dr. phil. '17.
 *Proppé, Carl, verzlunarstj. '17.
 *Richard Torfason, bankab. '17.
 Ríkharður Jónsson, myndh. '18.
 Rósinkranz, Ólafur, kennari '17.
 *Samúel Eggertsson, skrautr. '17.
 *Sighv. Bjarnason, bankastj. '17.
 Sigríður Björnsdóttir '17.

*S. A. Gíslason, cand. theol. '17.
 Sigurður Guðmundsson frá Hof-
 dölum '14.
 *Sigurður Guðmundsson, mag.
 art. '18.
 Sig. Gunnarsson, præg. hon. '17.
 Sigurður Jónsson, bókbindari '17.
 Sigurður Kristjánsson, bóks. '17.
 Sigurður Ólafsson, háskeri '17.
 *Sigurður Sigurðsson, alpm. '17.
 *Sigurður Þórðarson, fv. sýslu-
 maður '17.
 Sigurjón Ólafsson, skipstj. '18.
 Símon Jónsson, kaupm.
 *Sivertsen, Sigurður, próf. '17.
 *Skúli Skúlason, præg. hon. '17.
 Smith, Paul, símaverkfr. '17.
 Snorri Jóhannsson, bókh. '17.
 Steingrímur Arason, kennari '17.
 Steinunn Bjartmarsdóttir, kenslu-
 kona '17.
 *Sveinn Björnsson, málflm. '17.
 Sveinn Jónsson, kaupm. '17.
 Sæmundsen, Karl, stórkaupm. '17
 *Sæm. Bjarnhéðinsson, próf. '17.
 Torfi Hermannsson, trésm. '17.
 Thomsen, Ditlev, ræðism. 17.
 Thoroddson, Sigurður, adj. '17.
 Thors, Haukur, verzlunarm. '17.
 Thorsteinsson, Davíð Scheving,
 læknir.
 Thorsteinsson, H., cand. jur. '17.
 *Thorsteinsson, Th., kaupm. '17.
 Tómas Tómasson, ölg.m. '17.
 Tryggvi Magnússon, verzl. '17.
 *Tryggvi Þórhallsson, ritstj. '17.
 Tulinius, Axel, málaflm. '17.
 Ungmennafél. Reykjavíkur '17.
 Vigfús Einarsson, cand. jur. '17.
 *Vigfús Guðmundsson '17.
 Waage, Ben. G., verzl. 17.
 Waage, Einar G., '18.
 *Waage, Jens B., bankab. 17.
 *Wiehe, Holger, háskólak. '17.
 Zimsen, Knud, borgarstjóri '17.
 *Zoëga, Geir, landsverkfr. '17.
 *Zoëga, Geir, rektor '17.
 Zoëga, Geir, kaupm. '17.
 Þórarinn Arnórsson '17.

Þórður Erlendsson, Rauðarárstíg '17.

*Þórður Sveinsson, lækni '17.

Þorfinnur Kristjánsson, prentari '17.

Þorkell Þorláksson, ritari '17.

Þorlákur Arnórsson '17.

*Þorlákur Vilbjálmsen, búfr. '17.

Þorleifur Jónsson, póstafr.m. '17.

*Þorsteinn Finnbogason, kenn., '17.

*Þorsteinn Gíslason, ritstj. '17.

*Þorsteinn Jónsson, bankar. '17.

Þorst. Sigurgeirsson, verzl.m. '17.

Þorst. Þorsteinsson, cand. jur. '17.

*Þorst. Þorsteinsson, hagst.stj. '17.

*Þorv. Guðmundsson, afgr.m. '17.

Þorvaldur Jónsson, præp. hon.

Þorvarður Þorvarðarson, prent-smiðjustjóri '17.

Gullbringu- og Kjósarsýsla.

Arni Þorsteinsson, prestur á Kálfatjörn '16.

Bræðrafélag Kjósarhrepps '17.

Einar Magnússon, kennari, Gerðum í Garði '17.

*Guðm. Ragnar Ólafsson, Móakoti í Grindavík '18.

*Guðmundur Þorláksson, Korpúlfsstöðum '18.

Heiðdal, Sig. Þ., kennari, Sel-tjarnarnesi '17.

Heilsuhælið á Vífilstöðum '17.

Jóhann Eyjólfss., Brautarholti '17.

Jónas Björnsson, búfr., Gufunesi '17.

*Jónas Jónsson, præp. hon. Út-skálum.

Jón Jónsson, kennari, Hvammi '16.

*Jón Þorbergsson, Bessastöðum '17.

Klemens Egilsson, Óðalsb., Minni-Vogum '17.

Kolbeinn Högnason, kennari, Kollafirði '17.

Lestrarfélag Keflavíkur '16.

Lestrarfélag Kjalnesinga '16.

Lestrarfélag Lágafellssóknar '17.

Lestrarfélag Seltirninga '17.

Magnús Bergmann Jónsson, Fuglavík, Miðnesi '17.

Sigurður Magnússon, lækni, Vífilstöðum '17.

Stefán Jóelsson, verslunarm. Vífilstöðum.

Stefán Sigurfinnsson, Auðnum '16.

Sveinbjörn Guðmundsson, skipstj. Sandgerði '17.

*Sveinbjörn S. Árnason, Kothúsum '17.

Tómas Snorrason, kennari, Keflavík '16.

Þorgrínur Þórðarson, lækni Keflavík '16.

Hafnarfjarðarumboð.

(Uboðsm. Salómon Runólfsson, bókarí Hafnarfirði).¹⁾

Andrés Runólfsson, verslunarm.

Auðunn Níelsson, kaupm.

Bergmann, Danfcl, kaupm.

Bjarni Bjarnason, kennari.

Bjarni Erlendsson, verkstj.

Bjarni Snæbjörnsson, lækni.

Björn Bjarnason, dr. phil.

Einar Þorgilsson, kaupm.

Flygenring, Aug., kaupm.

Guðm. Eyjólfsson, verslunarm.

Guðm. Magnússon, skipstj.

Gunnl. Kristmundsson, kennari.

Hannes Jóhannesson, versl.m.

Ingvar Jóelsson, verkstjóri.

Janus Jónsson, præp. hon.

Jón Gestur Vigfússon, versl.m.

Kristínus Finnbogason, versl.m.

Lárus Bjarnason, kennari.

Lestrarfél. »Framför«.

Magnús Jóhannesson, verkstj.

Magnús Jónsson, sýslum.

Magnús Þorsteinsson, versl.m.

Oddur Ívarsson, póstafr.m.

¹⁾ Skilagrein komin fyrir 1917.

Ólafur Böðvarsson, kaupm.
 Ólafur Sigurðsson, trésm.
 Ólafur V. Davíðsson, framkv.stj.
 *Salómon Runólfason, bókarí.
 Sigfús Bergmann, kaupm.
 Sig. Kristjánsson, sýsluskrifari.
 Sig. Sigurðsson, verzlunarm.
 Skinfaxi, bókas. skólap. í Flensb.
 Steingr. Torfason, bryggjuv.
 Sveinn Jónasson, sjóm.
 Valdimar Sigmundsson.
 Þórður Edlónsson, lækni.
 Þórður Einarsson, verzlunarm.
 Þórður Guðnason, skólastjóri.
 Ögmundur Sigurðsson, skólastj.

Borgarfjarðar- og Mýrasýsla.

Eiríkur Albertsson, prestur, Hesti
 '16.

*Hjörtur Snorrason, alpm., bóndi,
 Arnarholti '16.

Jón Guðmundsson, Kvíslhöfða '18.

Magnús Andrésson, prófastur,
 Gilsbakka '18.

Stefán Guðmundsson, bóndi, Fitj-
 um '17.

Sveinn Guðmundsson, vinnum.
 Brennu '18.

Akraness-umboð.

(Umboðsm. Oddur Sveinsson,
 kennari á Akranesi.)¹⁾

*Axel Böðvarsson, cand. phil.

Björn Lárusson, bóndi á Ósl.
 Finsen, Ólafur, lækni.

*Hervaldur Björnsson, kennari.

Jón Sigmundsson, sjóm.

Jón Sveinsson, prófastur.

*Læstrarfélag Akraness.

Magnús Guðmundsson, kaupm.

*Niels Kristmannsson, sjóm.

Oddur Sveinsson, kennari.

Ottesen, Oddgeir P., kaupm.

*Ólafur B. Björnsson, kaupm.
 Sigurður Símonarson.

Skafti Jónsson, sjóm.

Sumarliði Halldórsson, skógfr.

Thorlacius, Einar, prestur í Saur-
 bæ.

Ungm.fél. »Haukur«, Leirársveit.

Þórður Asmundsson, kaupm.

Borgarness-umboð.

(Umboðsm. Jón Björnsson, kaupm.
 Borgarnesi.)¹⁾

Arni Þorsteinsson, bóndi, Brenni-
 stöðum.

Bjarni Bjarnason, bóndi, Skáney.

Björn Ólafsson, steinsmiður, Kað-
 alstöðum.

Brynjólfur Bjarnason, búfræðing-
 ur, Deildartungu.

Bændaskólinn á Hvanneyri.

Davíð Þorsteinsson, Arnbjargar-
 læk.

Einar Sigurðsson, Stóra-Fjalli.

Einvarður Hallvarðsson, Faskrúð-
 arbakka.

Enok Helgason, Heggstöðum.

Fjeldsted, Sigurður, bóndi,
 Ferjukoti.

Geir Pétursson, Geirshlíð.

Grönfeldt, H. skólastj. Hvítár-
 völlum.

Guðm. Arnason, bóndi, Alftár-
 tungu.

Guðm. Daníelsson, bóndi, Svigna-
 skarði.

Guðm. Illugason, Mýrdal.

Guðm. Jónsson, bóndi, Skelja-
 brekku.

Guðm. Sigurðsson, Landbrotum.

Jóhannes Jónsson, gagnfræð.,
 Efranesi.

Jóhann Magnússon, bóndi, Hamri.

Jón Björnsson, bóndi, Ölvalds-
 stöðum.

Jón Björnsson, kaupm., Borgar-
 nesi.

Jón Ívarsson, bókhaldari, Borg-
 arnesi.

¹⁾ Skilagrein komin fyrir 1917.

Jósef Björnsson, Svarfhóli.
Kristján Fr. Björnsson, bóndi,
Steinum.

Kristján Sigurðsson, Bakkakoti.
Lestrarfélag Alftaneshrepps.
Lestrarfélag Borgarness.

Lestrarfélag Hraunhrepps.
Magnús Einarsson, Munaðarnesi.
Magnús Jónsson, kennari, Borg-
arnesi.

Ólafur Guðnason, Signýjarstöðum.
Páll Jónsson, kennari, Einarsnesi.
Páll Zóphóníasson, kennari,
Hvanneyri.

Runólfur Runólfsson, bóndi, Norð-
tungu.

Sigm. Sigurðsson, Arnarstapa.
Sigurður Þórólfsson, skólastjóri,
Hvítárbakka.

Stefán Jónsson, prestur, Staðar-
hrauni.

Tómas Jónasson, Sólheimatungu.
Ungmennafélagið »Dagrenning«,
Lundarreykjardal.

Þorgeir Bjarnason, búfr., Hvan-
neyri.

Hnappadals- Snæfellsness- og Dalasýslur.

*Benedikt Magnússon, kaupfél.stj.
Tjaldanesi '17.

Benedikt S. Benediktsson, verzl-
unarm., Grundarfirði '17.

Finnbogi Lárusson, kaupm., Búð-
um '18.

Gestur Guðmundsson, bóndi á
Rauðamel '17.

Guðm. Guðjónsson, kennari, Saur-
um '17.

Gunnar Sigurðsson, Hausthúsum,
'17.

Jóhann Hjörleifsson, búfr., Hof-
stöðum í Miklaholtsh. '17.

Jón Ólafsson, Söðulsholti, '18.

*Kristján Eggertsson, oddviti,
Dalsmynni '17.

*Kristján Kristjánsson, kennari,
Rauðkollsstöðum '17.

*Lestrarfél. Sandara '17.

Lestrarfél. Saurbæjarhr. '16

*Magnús Guðlaugsson, lækni,
Bjarnastöðum '15.

Stykkishólms-umboð.
(Umboðsm. Hjálmar Sigurðsson,
kaupmaður í Stykkishólmi.)¹⁾

*Agúst Þórarinnsson, bókhaldari,
Stykkishólmi.

Arni P. Jónsson, Stykkishólmi.

*Asmundur Guðmundsson, prest-
ur, Stykkishólmi.

Asmundur Sigurðsson, bóndi, í
Bár, Eyrarsveit.

*Blöndal, Magnús, kennari, Stykk-
ishólmi.

Bókasafn Vesturamtsins, Stykk-
ishólmi.

*Einar Vigfússon, Stykkishólmi.

Eliás Kristjánsson, Lágafelli.

Gestur Þórðarson, Dal.

Gísli Sigurðsson, Langadal.

Helgi Guðmundsson, Ketilsstöð-
um.

Helgi Guðmundsson, Skógarnesi.

*Hjálmar Sigurðsson, kaupmaður,
Stykkishólmi.

Jón G. Sigurðsson, Hofgördum.

Lestrarfélag Fellastrandar.

Lestrarfélag Hvammsveitar.

Sigurður Daðason, Setbergi.

*Sæm. Halldórsson, kaupmaður,
Stykkishólmi.

Búðardals-umboð.

(Umboðsm. Bogi Sigurðsson,
kaupmaður í Búðardal.)¹⁾

Arni Arnason, lækni, Búðardal.
Björn Bjarnason, sýslum., Sauða-
felli.

Bogi Sigurðsson, kaupm., Búðar-
dal.

¹⁾ Skilagrein komin fyrir 1917.

Johnson, Bjarni P., sýslumaður,
Búðardal.
Jón Guðmundsson, bóndi, Ljár-
skógum.
Jón Guðnason, prestur, Kvenna-
brekku, '16.
Lestrarfélag Miðdæla.
Sigurður Sigurðsson, lækur, Búð-
ardal.

Baðastrandarsýsla.

*Bókasafn Flateyjar á Breiða-
firði '17.
*Guðm. Bergsteinsson, kaupm.,
Flatey á Breiðafirði '17.
Jón Einarsson, trésmiður, Kletti
í Geiradal '17.
Jón Johannsson, Mýrartungu í
Reykhólasveit '18.
*Jón Ólafsson, Króksfjarðarnesi
'17.
Lestrarfélag Bílddælinga '17.
*Lestrarfélag Geiradalshrepps '17.
Magnús Sæbjörnsson, lækur,
Flatey '17.
Steinþór Oddsson, Miðhúsum '17.
Þorbj. Þórðarson, lækur, Bíldu-
dal '17.
Þorarrinn G. Arnason, Miðhúsum
á Reykjanesi, '17.
Þorv. Gíslason, Hóli í Arnarf. '17.
Þorvaldur Jakobsson, prestur,
Sauðlauksdal '17.

Patreksfjarðar-umboð.
(Umboðsm. Jón Kristófersson,
kennari, Sveinseyri í Tálknaf.)¹⁾
Bjarni Símonarson, prófastur,
Brjánslæk.
Bókasafn V.-Baðastrandarsýslu.
Einar Magnússon, stýrim., Pat-
reksfirði.
Eiríkur Kristóferss, Brekkuvelli.
Hallgrímur Jónsson, Bakka.
Jón B. Ólafsson, Hvanneyri.

Jón Hallgrímsson, Bakka.
Jón Kristófersson, kennari,
Brekkuvelli á Baðaströnd.
Jónas Magnússon, Vatneyri.
Kristinn Ólafsson, verzlunarm.,
Vatneyri.
Kristófer Kristófersson, Brjáns-
læk.
Kristján Kristófersson, Haga.
Lestrarfélag Breiðuvíkursóknar.
Lestrarfélag Rauðsendinga.
Lestrarfélag Tálknafjarðar.
Magnús Þorsteinsson, prestur,
Patreksfirði.
Ólafur Magnússon, Kaldabakka.
Svafa Þorleifsdóttir, Bíldudal.

Ísafjarðarsýsla.

Bókasafn Hólshrepps, Bolungavík,
'17.
*Halldór Stefánsson, lækur,
Flateyri '17.
Hjálmar Jónsson, bóndi, Hrafn-
fj.eyri í Grunnavíkurb. '16.
Lestrarfélag Dalmanna, Önundar-
firði '16.
Lestrarfélag Flateyrar '17.
*Sighvatur Grímsson Borgfirð-
ingur, Höfða. Gjaldfrí.
Sveinn Halldórsson, kennari,
Bolungavík '15.

Dýrafjarðar-umboð.
(Umboðsm. Jóh. Proppé, kaup-
maður á Pingeyri)¹⁾.
Andrés Kristjánsson Meðaldal.
*Björn Guðmundsson, kennari
Næfranesi.
Blaðafélagið »Dagvarður«, Keldu-
dal.
*Böðvar Bjarnason, prestur,
Rafnseyri.
*Friðrik Bjarnason, hreppstjóri,
Mýrum.

¹⁾ Skilagrein komin fyrir 1917.

Guðbrandur Guðmundsson, Þingeyri.
 Guðm. A. Guðmundsson, skipstjóri, Alvíðru.
 Guðm. Guðmundsson, kennari, Kirkjubóli í Dýrafirði '18.
 Guðmundur Jónsson, Granda.
 Guðm. J. Sigurðsson, vélasmiður, Þingeyri.
 Guðni Bjarnason, verzlunarm. Þingeyri.
 Guðrún Benjamínsdóttir, kenslukona, Þingeyri.
 Gunnlaugur Þorsteinsson, læknir, Þingeyri.
 Hjaltalína Guðjónsdóttir, kenslukona, Þingeyri '17.
 Jóhannes Davíðsson, Neðra-Hjarðardal.
 Kristinn Guðlaugsson, búfræðingur, Núpi.
 Lestrarfélag Þingeyrarhrepps, Þingeyri.
 Ólafur Hjartarson, járnsmiður, Þingeyri.
 *Ólafur Ólafsson, kennari, Þingeyri.
 *Proppé, Ólafur, kaupm., Þingeyri.
 Sigríður Guðmundsdóttir, kenslukona, Haukadall.
 Sigtryggur Guðlaugsson, prestur, Núpi.
 *Sóphónías Jónsson, gagnfræðingur, Læk.

Ísafjarðar-umboð.

(Umboðsm. Guðmundur Bergsson, bóksali, Ísafirði)¹⁾.
 Aðalbjörg Jónsdóttir, húsfrú, Arngerðareyri.
 Arngrímur Fr. Bjarnason, prentari, Ísafirði.
 Álfur Gíslason, bakari, Ísafirði.

Árni E. Arnason, verzlunarmaður, Bolungavík.
 Asgeir Guðmundsson, Æðey.
 *Baldur Sveinsson, kennari, Ísafirði.
 Bárður Guðmundsson, bókbindari, Ísafirði.
 *Benedikt Bjarnason, húsmáður, Góustöðum.
 Bjarni Eiríksson, Ísafirði.
 *Björn Guðmundsson, kaupmaður, Ísafirði.
 Einarsson, Þóra E., sjúkrah. st.
 Eiríkur Kjerúlf, læknir, Ísafirði.
 Engilbert Kolbeinsson, bóndi, Lónseyri. Gjaldfrí.
 Finnbjörn Hermannsson, verzlunarmaður, Ísafirði.
 *Friðbert Friðbertsson, kennari, Suðureyri í Súgandafirði.
 Friðbert Guðmundsson, Suðureyri.
 Friðrik Hjartarson, kennari, Suðureyri.
 Gísli R. Bjarnason, kennari, Hesteyri.
 Grímur Jónsson, cand. theol., Ísafirði.
 Guðlaugur Kristjánsson, búfræðingur, Ísafirði.
 *Guðmundur Bergsson, bóksali, Ísafirði.
 *Guðm. Geirdal, lögregluþjónn, Ísafirði.
 *Guðmundur Hannesson, konsúll, málaflutningsm., Ísafirði.
 Guðmundur H. Finnbjörnsson, kaupmaður, Sæbóli í Aðalvík.
 *Guðm. Jónsson, cand. theol., Ísafirði.
 Guðmundur Sveinsson, kaupmaður, Hnifsdal.
 Guðrún Tómasdóttir, ljósmóðir, Ísafirði.
 Hálfðan Örnólfsson, hreppstjóri, Hóll í Bolungavík.
 Halldór Bjarnason, verkstjóri, Ísafirði.

¹⁾ Skilagrein komin fyrir 1917.

Halldór Jónsson, búfræðingur,
Laugabóli.

Halldór Jónsson, búfræðingur,
Rauðamýri.

Halldór Ólafsson, kaupm., Ísafirði.

Halldór Pálsson, útvegsbóndi,
Hnífsdal.

*Hannes Halldórsson, verzlunar-
maður, Ísafirði.

Helgi Ketilsson, sjómaður, Ísafirði.

Helgi Sveinsson, bankastjóri, Ísa-
firði.

Ingólfur Arnason, verzlunarmaður,
Bolungavík.

Jens Nielsson, kennari, Bolunga-
vík.

Jóhann Kristjánsson, verzlunarm.,
Bolungavík.

Jóhann Þorsteinsson, kaupmaður,
Ísafirði.

Jónas Halldórsson, Búð, Hnífsdal.

Jónas Þorvarðsson, kaupmaður og
oddviti, Hnífsdal.

Jón Grímsson, verzlstj., Suðureyri.

Jón Jónsson, verzl., Bolungavík.

Jón Maríasson, verzl., Ísafirði.

Jón Sn. Arnason, kaupm., Ísafirði.

Júlíus Hjaltason, Bolungavík.

Karl Olgeirsson, verzlunarstjóri,
Ísafirði.

*Kolbeinn Jakobsson, hreppstjóri,
Unaðsdal.

Kristján A. Kristjánsson, kaupm.,
Suðureyri í Ségandafirði.

Lestrarfélag Bjarndæla og Fjarð-
armanna, Öfundarfirði.

Lestrarfélag Hnífsdælinga, Hnífs-
dal.

Lestrarsalur Ísafjarðar.

Lestrarfélag Seyðfirðinga.

Lestrarfélag Sléttuhrepps.

Lestrarfélag Súðavíkurhrepps,
Alftafirði.

Magnús Bárðarson, útvegsbóndi,
Bolungavík.

Magnús Torfason, sýslumaður og
bæjarfógeti, Ísafirði.

Oddur Guðmundsson, póstafr.m.,
Bolungavík.

Ólafur Arnason, bóndi, Bolungavík.

Ólafur Jónsson, Elliðaey.

*Ólafur Pálsson, verzlstj., Arn-
gerðareyri.

Páll Pálsson, útvegsbóndi, Heima-
bæ, Hnífsdal.

Páll Þórarinnsson, sjómaður, Hnífs-
dal.

Pétur Oddsson, kaupm., Tröð í
Bolungavík.

Sigfús Danielsson, verzlunarstjóri,
Ísafirði.

Sigurbjörn Armannsson.

Sigurður Kristjánsson, kennari,
Ísafirði.

*Sigurður Pálsson, verzlunarstj.,
Hesteyri.

Sig. Sigurðsson, kennari.

Sig. Sigurðsson, málaflutningsm.,
Ísafirði.

Sigurður Þorvaldsson, kennari,
Ísafirði.

*Stefán Sigurðsson, verzl.

Stephensen, Páll, prestur, Holti
í Öfundarfirði.

Svava Guðmundsdóttir, ungfrú,
Ísafirði.

Thordarson, Finnur, konsúll,
Ísafirði.

Valdemar Valdemarsson, formaður,
Hnífsdal.

Valdemar Þorvarðarson, kaupm.,
Ísafirði.

Vilmundur Jónsson, læknir, Ísa-
firði.

Þorvarður Brynjólfsson, prestur,
Stað í Ségandafirði.

Vigur-umboð.

(Umboðsm. Sigurður Stefánsson,
prestur, Vigur)¹⁾.

Bjarni Sigurðsson, ráðsm., Vigur.
Finnbogi Pétursson, Hvítanesl.

¹⁾ Skilgrein komin fyrir 1917.

Jón Guðmundsson, kaupm., Eyrardal.
Sigurður Stefánsson, prestur og alpm., Vigur.

Strandasýsla.

Bárðarson, Guðm. G., Kjörseyri '16.
Björn Magnússon, Borðeyri '17.
Guðjón Guðlaugsson, kaupfélagsstjóri, Hólmavík '18.
Halldór Kr. Júlíusson, sýslumaður, Borðeyri '17.
Lestrarfélag Arneshrepps '17.
*Lestrarfélag Bjarnarfj. og Bala '18
Lestrarfélag Kirkjubólshrepps '15.
Lestrarfélag Kollafjarðar '16.
Lestrarfélag Selstrandar '17.

Húnavatnssýsla.

Eggert Ól. Eiríksson, bóndi, Sveðjustöðum '18.
Guðm. Arason, búfræð., Illugastöðum '16.
Jón Jónsson, bóndi, Stóradal '16.
*Kristján H. Sigurðsson, kennari, Brúastöðum '16.
Lindal, Jakob, Lækjamóti '16.
*Þóroddur Lýðsson, Oddsstöðum, Hrutaf. '17.
Þorvaldur Kristmundsson, búfræðingur, Balkastöðum '16.

Hvammstanga - umboð.
(Umboðsm. Björn P. Blöndal verzlunarm. á Hvammstanga)¹⁾.
Asgeir Magnússon, skólastjóri, Hvammstanga.
Asta Gísladóttir, Geithól.
*Blöndal, Björn P., verzlunarmaður, Hvammstanga.
Bókasafn Vestur-Húnavetninga á Hvammstanga.

Briem, Jóh. Kr., prestur á Melstað.
Guðm. B. Jóhannesson, Þorgrínstöðum.
Guðm. Sigfússon, Króksstöðum.
Gunnar Kristófersson, hreppstj., Valdarási.
Gunnl. Gunnlaugsson, búfræðingur, Syðri-Völlum.
Halldór Magnússon, bóndi, Vatnsból.
Ingunn Eiríksdóttir, Sveðjustöðum.
Ingvar Jakobsson, Harastöðum.
Jón D. Guðmundsson, Barði.
Jón Eiríksson, bóndi, Svertingsstöðum.
Magnús Þorleifsson, Krossanesi.
Ólafur Gunnarsson, lækni, Hvammstanga.
Pétur Gunnarsson, Hvoli.
Pétur Teitsson, Bergstöðum.
Sigurður Jónsson, Stöpum.
Sigurður Pálmason, Hvammstanga
Stefán Björnsson, bóndi, Sporði.
Stefán Díomedesson, Anastöðum.
Þorbjörn Teitsson, Víðidalstungu.

Blönduóss - umboð.
(Umboðsm. Friðfinnur Jónsson, trésmiður, Blönduósi)¹⁾.
Andrés Guðjónsson, kaupmaður, Harastöðum.
Anna R. Þorvaldsdóttir, Blönduósi.
Arnalds, Ari Jónsson, sýslumaður.
Arni Þorkelsson, hreppstjóri, Geitaskarði.
Bjarni Jónasson, barnakennari, Blönduósi.
Bjarni Pálsson, prófastur, Steinnesi.
Björn Stefánsson, prestur, Bergstöðum.
*Daði Davíðsson, Gilá.
Friðfinnur Jónsson, trésmiður, Blönduósi.

¹⁾ Skilagrein komin fyrir 1917.

Hafsteinn Pétursson, bóndi,
Gunnsteinsstöðum.

*Jakob Bjarnason, vinnumaður,
Holtastaðakoti.

Jónas Illugason, bóndi, Bröttuhlið.
Klemens Guðmundsson, Bólstað-
arhlið.

Lárus Ólafsson, trésm., Blönduósi.

*Lestrarfélag Ashrepps.

Lestrarfélag Langdælinga.

Lestrarfélag Svínavatnshrepps.

Lestrarfélag Torfalækjarhrepps.

Levy, Eggert, hreppstj., Ósum.

Magnús Björnsson, Syðra-Hóli.

Magnús Jonsson, bóndi, Sveins-
stöðum.

*Malfundafélagið »Fjölnir« í
Svínavatnshreppi.

Páll Sigurðsson, búfræðingur,
Brúastöðum.

Pétur Theodorsson, sölustjóri,
Blönduósi.

Runeberg Ólafsson, Þórormstungu.

Sigurgeir Björnsson, búfræðing-
ur, Orrastöðum.

Sigvaldi Sveinsson, bóndi, Hösk-
uldsstöðum.

Sýslubókasafn Austur-Húnavatns-
sýslu.

Sæmundsen, Edwald, verzlunar-
stjóri, Blönduósi.

Þórarinn Jónsson, alpm., Hjalta-
bakka.

Þorsteinn Bjarnason, kaupmaður,
Blönduósi.

Skagafjarðarsýsla.

*Björn Jónsson, prófastur, Mikla-
bæ '17.

*Guðm. Davíðsson, Hraunum '16.
Hartmann Asgrímsson, kaupmað-
ur, Kolbeinsárósi '16.

Jóhannes Friðbjarnarson, Stóra-
Holti '16.

Theodór Arnbjarnarson, Lamba-
nesreykjum, '17.

Sauðárkróks-umboð.

(Umboðsm. Margeir Jónsson,
kennari, Ögmundarstöðum)¹⁾.

Anna Kr. Jósefsdóttir, Hofi.

Axel Kristjánsson, verzlunarmað-
ur, Sauðárkróki.

Björn L. Jónsson, bóndi, Stóru-
Seylu.

*Blöndal, Kr., póstafr.m., Sauð-
árkróki.

Bókasafn Skagafjarðar.

Briem, Ólafur, alpm., Alfgeirs-
völlum.

Guðm. St. Jósafatsson, búfr.,
Brandsstöðum.

*Hafstað, Arni J., Vík.

Halldan Guðjónsson, prestur á
Sauðárkróki.

Halldan Jónsson, Þorljótsstöðum.

Halldór Stefánsson, Glaumbæ.

Hjörtur Benediktsson, Stóru-
Seylu.

Jóhann Örn Jónsson, Arnesi.

Jón Guðmann Gíslason, verzlun-
armaður, Sauðárkróki.

Jón Kr. Ólafsson, Dúki.

Jón Sigurðsson, Reynistað.

*Jón Þ. Björnsson, kennari, Sauð-
árkróki.

*Jónas Kristjánsson, lækni, Sauð-
árkróki.

Lestrarfélag Flugumýrarsóknar.

Lestrarfélag Miklabæjarsóknar.

Magnús Sigmundsson, Vind-
heimum.

Margeir Jónsson, kennari, Ög-
mundarstöðum.

Ólafur Kristjánsson, trésmiður,
Glæsibæ.

Ólafur Sigurðsson, Hellulandi.

Pétur Jónsson, búfr., Eyhildar-
holti.

Sigurður Björnsson, bóndi, Veðra-
móti.

Sigurður Jósafatsson, Krossanesi.

Tobías Magnússon, Geldingaholti.

Þorbjörn Björnsson, bóndi, Heiði.

¹⁾ Skilagrein komin fyrir 1917.

Hóla-umboð.

(Umboðsm. Sigurður Sigurðsson, skólastjóri, Hólum)¹⁾.

Árni Guðmundsson, Efra-Asi, Hjaltadal.

Bændaskólinn á Hólum.

Einar Jósefsson, Vatnsleysu.

Jón Sigtryggsson, Framnesi.

Lestrarfélag Hofshrepps.

Lestrarfélag Hólahrepps.

Ólafur Jónsson, Litlahóli.

*Sigurður Sigurðsson, kennari, Hólum.

Eyjafjarðarsýsla.

Siglufjarðar-umboð.

(Umboðsmaður Helgi Hafliðason, Siglufirði)²⁾.

Asgeir Blöndal Bjarnason.

*Bjarni Þorsteinsson, prestur.

Blöndal, Sophus, verzlunarstj.

*Guðmundur Bjarnason, Bakka.

Guðm. Skarphéðinsson, kennari, Siglufirði.

Hafliði Guðmundsson, hreppstj.

Hallgrímsson, Guðm. T., iæknir.

Helgi Guðmundsson, læknir.

*Matthías Hallgrímsson, kaupm.

Þórður Þórðarson, Siglunesi

Eyjafjarðar-umboð.

(Umboðsm. Kristján Guðmundsson, bóksali, Oddeyri)²⁾.

Árni Jóhannesson, Þverá.

Árni Jóhannesson, prestur, Grenivík.

Árni Þorvaldsson, kennari, Akureyri.

Ásmundur Gíslason, próf., Hálsi.

Áxel V. Wilhelmsson, verzlstj., Akureyri.

Benjamin Kristjánsson, Tjörnum.

Bjarni Arason, Grýtabakka.

Bjarni Jónsson, útbússtj., Akureyri.

Björn Arnason, bóndi, Pálagerði.
Björn Jóhannsson, Syðra-Laugalandi.

Bókasafn Gagnfræðaskólans, Akureyri.

Bókasafn Norðuramtsins, Akureyri.

Briem, Þorsteinn, prestur, Hrafnagili.

*Einar Guttormsson, prentari, Ósi við Eyjafjörð.

Eydal, Ingimar, kennari, Akureyri.

Finnur Sigmundsson, Ytra-Hóli.
Framfarafél. Grýtabakkahrepps.

*Friðjón Jensson, læknir, Akureyri.

Garðar Arngrímsson, Geirbjarnarstöðum.

Garðar Halldórsson, Rífkelsst.

Gæstur Jóhannesson, Akureyri.

Gísli Jónsson, hreppstj., Hofi.

Gísli R. Magnússon, Akureyri.

Grímur Grímsson, kennari, Ólafsfirði.

Guðmundur Benediktsson, Aslaksstöðum.

Guðm. Guðmundsson, hreppstjóri, Þúfnavöllum.

Guðm. Ólafsson, kennari, Skógum.
Guðni Jónsson, Akureyri.

Hallgrímur Davíðsson, verzlunarstjóri, Akureyri.

Hallgrímur Pétursson, bókbíndari, Akureyri.

*Hannes Ó. Magnússon, Akureyri.

Haraldur Leósson, kennari, Holtseli.

Havsteen, Jakob, konsúll, etazráð, Akureyri.

Helgi Arnason, prestur, Ólafsfirði.

Helgi Daníelsson, Björk.

Hólmgeir Þorsteinsson, verzlunarmaður, Grund.

Hólm, Magnús A., Saurbæ.

¹⁾ Skilagrein ókomin fyrir 1917. ²⁾ Skilagrein komin fyrir 1917.

Ingibjörg Jóhannesdóttir, Arnesi.
 Ingimar Hallgrímsson, bóndi,
 Litla-Hóli.
 Ingólfur Bjarnason, bóndi, Fjösa-
 tungu.
 Jón Jóhannsson, Skarði, Dals-
 mynni.
 Jón Ólafsson, Snæbjarnarstöðum.
 Jón Ól. Jónsson, Möðrufelli.
 Jón Rógnvaldsson, Fífilgerði.
 Jón Stefánsson, ritstjóri, Akur-
 eyri.
 Júlíus Kr. Valdemarsson, Kambi.
 *Karl Nikulásson, verzlunarstj.,
 Akureyri.
 Kristján Benediktsson, Möðru-
 völlum.
 Kristján Guðmundsson, bóksali,
 Oddeyri.
 Laxdal, Eggert, kaupm., Akur-
 eyri.
 Lestrarfélag Arskógastrandar
 Lestrarfélag Glæsibæjarhrepps.
 Lestrarfélag Hríseyinga.
 Lestrarfélag Kaupangssóknar.
 Lestrarfélag Munkaþverár.
 Lestrarfélag Möðruvallarsóknar.
 Lestrarfélag Svalbarðsstrandar,
 Svalbarði.
 Lestrarfélag Öxndæla.
 Lndal, Björn, cand. jur. Akur-
 eyri.
 Loftur Baldvinsson, Bögguvíst.
 Ólafur Tryggvason, bóndi, Dag-
 verðartungu.
 Páll Einarsson, bæjarfógeti.
 Pétur Einarsson, Grenivík.
 Ragnar Ólafsson, kaupm., Odd-
 eyri.
 Rist, L. J., kennari Akureyri.
 Sigtryggur Davidsson, Hæringss-
 töðum Svarfaðardal.
 Sigtryggur Jónatansson, bóndi,
 Tungu.
 Sigurður Einarsson, dýralæknir,
 Akureyr.
 Sigurður Jónsson, Brún.
 Sigurður Sigurðsson, bókbíndari,
 Akureyri.

Skúli Kristjánsson, búfræðingur,
 Sigríðarstöðum.
 Stefán Jónsson, bóndi, Munka-
 þverá.
 Stefn Kristjánsson, skógræktar-
 stjóri, Vöglum.
 Stefan Sigurðsson, verzlunarmað-
 ur, Akureyri.
 Stefán Stefánsson, skólastj., Ak-
 ureyri.
 *Steffensen, Valdemar, lækni,
 Akureyri.
 *Steingrímur Matthíasson, læk-
 ni, Akureyri.
 Sveinn Þórðarson, verzm., Höfða.
 Tryggvi Sigmundsson, Ytra Hóli.
 Vigfús G. Palmason, Samkomu-
 gerði.
 Vilhjálmur Jóhannesson, kennari,
 Espihóli.
 Pengill Þórðarson, Höfða.
 Þorsteinn G. Hörgdal, Holti.
 Þór. Vilhjálmsen, Bakka, Svarf-
 aðardal.
 Þórður Jónatansson, Öngulsst.
 Þórður Sigurjónsson, Dagverðar-
 tungu.
 Þorkell Þorkelsson, kennari, Ak-
 ureyri.
 Þormóður Sveinsson, verzlunar-
 maður, Akureyri.

Þingeyjarsýsla.

Guðmundur Vilhjálmsen, bók-
 sali, Syðra-Lóni '17.
 Hrólfur Friðriksson, Grímstöð-
 um í Þistillfirði '18.
 Jónas Helgason, Grænavatni.
 Páll Pálsson, kennari, Möðrudal
 á Fjollum.
 Sigfús Hallgrímsson, Vogum við
 Mývatn.
 Snæbjörn Arnljótsson, kaupm.,
 Þórshöfn '17.
 Steinn Emilsson, verzlunarm.,
 Þórshöfn '17.
 *Þorsteinn Arnljótsson, kaupm.,
 Þórshöfn '17.

Húsavík-umboð.
(Umboðsm. Stefán Guðjohnsen, verzlunarstjóri)¹⁾.
Aðalgeir Davíðsson, bóndi, Stóru-Laugum.
Aðalsteinn Kristjánsson, kaupm., Húsavík.
*Ari Jónsson, Húsavík.
*Arni Jakobsson, bóndi, Hólum.
Arni Jónsson, bóndi, Þverá.
Benedikt Bjarnason, kennari, Húsavík.
Benedikt Guðnason, Grænavatni.
*Benedikt Jónsson, sýsluskrifari, Húsavík.
Benjamín Sigvaldason, Gilsbakka í Axarf.
Björn Guðmundsson, bóndi, Grjót-nesi.
Björn Guðmundsson, bóndi, Lóni.
Björn Gunnarsson, Skógum í Ax-arfirði.
Bókasafn Grímseyinga.
Bragi Geirdal, Grímsey.
Egill Sigurðsson, Máná.
*Egill Sigurjónsson, bóndi, Laxa-mýri.
Friðrika Jónsdóttir frá Hriflu.
Guðjohnsen, Stefán, verzlunarstj., Húsavík.
Guðm. Stefánsson, gagnfr., Hriflu.
Guðm. Stefánsson, Hafralæk í Aðaldal.
Halldóra Björnsdóttir, Presthólum
*Hallgrímur Þorbergsson, Hall-dórsstöðum.
*Hallsteinn Karlsson, yngispiltur, Húsavík.
*Haukur Ingjaldsson, Garðshorni.
Helgi Jónsson, yngispiltur, Húsa-vík.
*Hólmgeir Þorsteinsson, bóndi, Vallakoti.
Indriði Þorkelsson, bóndi, Ytra-Fjalli.
Jakob Hálfðánarson, dbrm., Húsavík.

Jóhannes Þorkelsson, hreppstjóri, Syðra-Fjalli.
Jón Björnsson, Skógum, Axarf.
*Jón Jónsson, Húsavík.
Jón Jónsson Gauti, bóndi, Héð-inshöfða.
*Jón Sigurðsson, gagnfr., Yzta-Felli.
Jónas Jónsson, verzl.stj., Flatey.
Karl Arngrímsson, Landamóti.
*Kristján Sigtryggsson, bókbínd-ari, Húsavík.
*Konráð Vilhjálmsson, bóndi, Hafralæk.
Lestrarfél. Keldhverfinga.
Lestrarfél. Kinnunga, Köldukinn.
Lestrarfél. Mývetninga.
Lestrarfél. Sléttunga.
Lestrarfél. Svalbarðshr., Þistilf.
Matthias Eggertsson, prestur, Grímsey.
Óli G. Arnason, Bakka í Keldu-hverfi.
*Páll Einarsson, bókhaldari, Húsavík '17.
Páll Kristjánsson, kaupm., Húsa-vík.
Pétur Jónsson, alpm., Gautlönd-um.
*Sigtryggur Helgason, bóndi, Hallbjarnarstöðum.
Sigurður Gunnarsson, yngispiltur, Skógum.
*Sig. Sigfússon, sölustj., Húsavík.
Sigurður Sigurðsson, hreppstjóri, Halldórsstöðum.
Sigurgeir Friðriksson, bóksali, Skógarseli.
Sigmundur Sigurðsson, lækur, Breiðumýri.
Snorri Jónsson, hreppstj., Þverá.
Stefán Pétursson, Húsavík.
*Steingrímur Jónsson, sýslum., Húsavík.
*Sýslubókasafn Suður-Þingeyinga.
Þorbergur Þórarinnsson, hreppstj., Saldhólum.

¹⁾ Skilagrein komin fyrir 1917.

Þórarinn Jónsson, bóndi, Hall-dórsstöðum.

Þórólfur Sigurðsson, gagnfræðingur, Baldursheimi.

*Örn Sigtryggsson, búfræðingur, Hallbjarnarstöðum.

Norður-Múlasýsla.

Björn Guðmundsson, bóndi, Sleð-brjótsseli '17.

Eiríkur Helgason, Eyjaseli '17.

Gunnlaugur A. Jónsson, verzl.m., Höfn, Bakkafirði '17.

Halldór Pálsson, búfr., Nesi í Loðmundarfirði '17.

Halldór Stefánsson, Hamborg í Fljótsdal '17.

Haraldur Þórarinnsson, prestur, Hofteigi '16.

*Kristján Jónsson, Hríót '17.

Lestrarfél. Fljótsdalshrepps '17.

Lestrarfél. Hjaltastaðahrepps '17.

*Magnús Eiríksson, bóndi, Eyja-seli '17.

*Ólafur Ó. Lárusson, læknir, Brekku '16.

Stefán Benediktsson, Merki á Jökuldal '17.

*Svanhildur Jóhannsd., Brekku '16.

Vopnafjarðar-umboð.

(Umboðsm. Þór. B. Stefánsson verzlunarstjóri)¹⁾.

Árni Jónatansson, Skálanesi.

Árni Jónsson, verzlunarstjóri, Vopnafirði.

Björn Jónasson, bóndi, Hámund-arstöðum.

Einar Jónsson, prófastur, Hofi.

Einar Runólfsson, kaupmaður, Vopnafirði.

Guðm. Guðmundsson, Krossavík.

Hallgrímur Gíslason, Egilsstöðum.

Ingólfur Eyjólfsson, Þorbrande-stöðum.

Ingólfur Gíslason, læknir, Vopna-firði.

Ingólfur Hrólfsson, Vakurstöðum.

Ingvar Nikulásson, prestur, Skeggjastöðum.

Jón Halldórson, præp. hon., Sauðanesi.

Jón Sigurjónsson, bóndi, Hólmum.

Ólafur Metúsalemsson, Bustar-felli.

Sigurður Benediktsson, Hofteigi.

Stefán Friðriksson, Eyvindar-stöðum.

Víglundur Helgason, bóndi, Hauksstöðum.

Þór. B. Stefánsson, verzlunarstj., Vopnafirði.

Þórður Oddgeirsson, prestur, Sauðanesi.

Þorleifur Helgason, kennari, Vopnafirði.

Þorsteinn Sigurðsson, Vopnafirði.

Rangá-r-umboð.

(Umboðsm. Björn Hallsson)¹⁾.

Björn Hallsson, Rangá.

Emil J. Arnason, Blöndugerði.

Gísl Helgason, bóndi, Skógar-garði.

Guðmundur Ólason, búfr., Höfða.

Gunnar Sigurðsson, Hleinagarði.

Sigfús Eiríksson, Rangá.

Sigurður Antóníusson, búfræð-ingur, Sleðbrjót.

Sigurður Þórarinnsson, Brekku.

Sveinn Bjarnason, bóndi, Hey-kollestöðum.

Borgarfjarðar-umboð.

(Umboðsm. Þorst. M. Jónsson, alþm., Borgarfirði)¹⁾.

Anna Guðný Guðmundsd., Hóli.

Björn Jónsson, bóndi, Snotrunesi.

Björn Ólafur Gíslason, verzlunar-stjóri, Borgarfirði.

¹⁾ Skilagrein komin fyrir 1917.

Halldór Asgrímsson, Grund.
 Hallsteinn Sigurðsson, Bakka.
 Jón Björnsson, Steinholti.
 Jón Sigfússon, búfræðingur, Svínafelli.
 Lestrarfélag Borgfirðinga.
 Sigurður Hannesson, trésmiður, Bjargi.
 Steinn Magnússon, Odda.
 Vigfús Ingvar Sigurðsson, prestur, Desjarmýri.
 Þorst. M. Jónsson, alpm., Borgarfirði.
 Þórarinn Björnsson, Húsavík.

Seyðisfjarðar-umboð.
 (Umboðsm. Pétur Jóhannsson, bóksali, Seyðisfirði)¹⁾.

Benedikt Jónasson, verzlunarstj., Seyðisfirði.

Björn Þorláksson, prestur, Dvergasteini.

Einar Pétursson, Kleppjárnast.
 Guðmundur Guðmundsson, bókhaldari, Seyðisfirði.

Guðmundur V. Kristjánsson, úrsmiður, Seyðisfirði.

Hermann Þorsteinsson, skósmiður, Seyðisfirði.

Jón Jónsson, bóndi, Firði.

Jón Sigurðsson, Hjartarstöðum '16.

Jón Sigurðsson, Ketilsstöðum.

Karl Finnbogason, skólastjóri, Seyðisfirði.

Kristján Kristjánsson, læknir, Seyðisfirði.

Lestrarfélagið »Dagsbrún«, Seyðisfirði.

Lestrarfélag Seyðisfjarðarhrepps.
 Pétur Jóhannsson, bóksali, Seyðisfirði.

Sigurður Björgúlfsson, Seyðisfirði.

Sigurður Jónsson, bóndi, Seyðisfirði.

Sigrjón Jóhannesson, kaupm., Seyðisfirði.

Stefán Th. Jónsson, konsúll, Seyðisfirði.

Sveinn Arnason, yfirfiskimatsmaður, Seyðisfirði.

Þórarinn Guðmundsson, kaupm., Seyðisfirði.

Suður-Múlasýsla.

Benedikt Sveinsson, bóksali, Borgareyri við Mjóafjörð '17.

Björgólfur Gunnlaugsson, búfr., Egilsstöðum '17.

Blöndal, Benedikt, búfræðingur, Eiðum '17.

Briem, Ólafur H., Eyjum í Breiðdal.

*Búnaðarskólinn á Eiðum '17.

Eiríkur Sigurðsson, kennari, Hjartarstöðum '15.

Guttormur Pálsson, skógræðingur, Hallormsstað '17.

Guttormur Vigfússon, præp. hon., Stöð í Stöðvarfirði '17.

Hákon Finnsson, bóndi, Arnaldstöðum '17.

Klemensína Klemensdóttir, Norðfirði '16.

Lestrarfélag Mjófirðinga '17.

*Lestrarfélag Stöðfirðinga '17.

Magnús Blöndal Jónsson, prestur, Vallanesi '17.

Magnús Stefánason, búfræðingur, Eiðum '15.

Ólafur B. Jónsson, Egilsstöðum '17.

Pétur Þorsteinsson, prestur, Eyðolum.

Sigrún Páldóttir, Hallormsstað '17.

Sveinn Jónsson, Egilsstöðum '17.

Norðfjarðar-umboð.

(Umboðsm. Þorbergur Guðmundsson, búfræðingur)¹⁾.

Bergur Eiríksson, trésmiður.

¹⁾ Skilagrein komin fyrir 1917.

Helgi Jónsson, skósmiður, Nesi í Norðfirði.

Hjálmar Ólafsson, verzlunarm.

Ingvar Pálmason, útvegsbóndi.

Jónas Andrésson, kaupfélagsstj.

Jón Sveinsson, cand. phil., Nesi í Norðfirði.

Lúðvíg Sigurðsson, kaupmaður.

Páll Guttormsson, kaupmaður.

Sigurjón Magnússon.

Sigurjón Stefánsson, sjómaður.

Stefán Halldórason, verzlunarm.

Sveinn Arnason, trésmiður.

Thoroddsen, Pétur, læknir.

Valdemar Valvesson, kennari.

Vigfús Sigurðsson, trésmiður.

Zoëga, Tómas J., verzlunarm.

Þorbergur Guðmundsson, búfræðingur.

Eskifjarðar-umboð.

(Umboðsmaður Stefán Stefánsson, bóksali á Eskifirði)¹⁾.

Arni Jóhannesson, bankastj., Eskifirði.

Arnesen, J. C. F., konsúll, Eskifirði.

*Arnfinnur Jónason, Eskifirði.

Björn Brynjólfsson, Eskifirði.

Björn R. Stefánason, verzlunarstjóri á Reyðarfirði.

Einar Hálfðanarson, Hafranesi.

Eiríkur Bjarnason, Eskifirði.

Ferd. Magnússon, Reyðarfirði.

Fríðrik Steinason, Eskifirði.

Guðm. Asbjarnarson, Eskifirði.

Gunnar Bóasson, Reyðarfirði.

Hallgrímur Bóasson, Reyðarfirði.

Hallgrímur Guðnason, Eskifirði.

Jón Björnsson, Seljateigi, Reyðarfirði.

Jón Valdemarsson, gagnfræðingur, Seljateigi.

Sigurður Hjörleifsson, læknir, Eskifirði.

Sigurður Vigfússon, kenn., Eskif.

Sigurjón Markússon, sýslumaður, Eskifirði.

Stefán Björnsson, prestur, Hólum.

Sveinbjörn P. Guðmundsson, Hólum í Reyðarfirði.

Fáskrúðsfjarðar-umboð.

(Umboðsm. Marteinn Þorsteinsson, bókhaldari)¹⁾.

Björgvin Þorsteinsson, verzlunarmaður, Fáskrúðsfirði.

Georg Georgsson, læknir, Fáskrúðsfirði.

Guðm. Jónsson, útvegsb., Búðum.

Halldór Pálsson, búfr., Tungu.

Haraldur Jónasson, prestur, Kolfreyjustað.

*Hoskuldur Stefánsson, bóndi, Dölum.

*Jóhannes Þórðarson, vm., Dölum.

Jón Davíðsson, verzlunarmaður, Fáskrúðsfirði.

Jón Stefánsson, verzlunarmaður, Fáskrúðsfirði.

Lestrarfélag Búðarþorps.

Magnús Gíslason, cand. jur., Fáskrúðsfirði.

Marteinn Þorsteinsson, bókhaldari, Fáskrúðsfirði.

Páll Benjamínsson, verzlunarm., Fáskrúðsfirði.

Stefán Gíslason, Kolfreyjustað.

Stefán Guðmundsson, verzlunarfulltrúi, Fáskrúðsfirði.

Djúpavoga-umboð.

(Umboðsm. Ingim. Seingrímsson, póstaðgreiðslum., Djúpavogi)¹⁾.

Elias Jónsson, verzlstj., Djúpavogi

Helgi Einarsson, bóndi, Melrakkanesi.

Ingim. Steingrímsson, póstaðgrmaður, Djúpavogi.

¹⁾ Skilagrein komin fyrir 1917.

Jón Arnason, óðalsbóndi, Múla í Alftafirði.

*Jón Finnsson, prestur, Hrauni við Djúpavog.

Jón Jónsson, lausam., Geithellum.

Sveinn Sveinsson, bóndi, Hofi.

Thorlacius, Olafur, læknir, Búlandnesi.

Skaftafellssýsla.

*Ari Hálfðánarson, hreppstjóri, Fagurhólsmýri, Öræfum '17.

Hornafjarðar-umboð.

(Umboðsm. Þórhallur Daníelsson, kaupm., Höfn í Hornafirði)¹⁾.

Bjarni Guðmundsson, bókhaldari, Höfn í Hornafirði.

Gísli Sigurjónsson, Fornustekkjum.

Guðm. Sigurðsson, söðlasm., Höfn í Hornafirði.

Jón Guðmundsson, kennari, Höfn.

Lestrarfélag Lónsmanna.

Lestrarfélag Mýrahrepps.

Lestrarfélag Suðursveitar.

Pétur Jónsson, prestur, Kálfaellsstað.

Sigurður Sigurðsson, kennari, Hofelli.

Þorleifur Jónsson, alpm., Hólum.

Þórhallur Daníelsson, kaupmaður, Hornafirði.

Víkur-umboð.

(Umboðsm. Jón Ólafsson, kennari, Vík í Mýrdal)¹⁾.

Anna Jónsdóttir, lækuisfrú, Vík.

Bjarni Asgr. Eyjólfsson, Syðri-Steinsmýri.

Bjarni Einarsson, præp. hon., Vík.

Bjarni Kjartansson, kaupm., Vík.

Björn Runólfsson, Holti.

Brynjólfur Einarsson, Keyni.

*Einar Erlendsson, verzlunarm., Elimar Tómasson, vinnumaður, Skammadal.

Eyjólfur Guðmundsson, hreppstj., Hvoli í Mýrdal.

*Gísli Sveinsson, sýslum., Vík '17. Guðgeir Jóhannsson, kennari, Vík. Guðlaugur Br. Jónsson, kaupm., Vík.

Jóel Sigurðsson, Bakkakoti.

Jóhann Sigurðsson, búfræðingur, Breiðabólsstað.

Jón Ólafsson, kennari, Vík.

Lestrarfélag Dyrhólahrepps.

Ólafur J. Halldórsson, verzlunarmaður, Vík '18.

Páll Sigurðsson, Skammadal.

*Sigurjón Kjartansson, kennari, Vík.

Ungmennafél. »Bláfjall« í Skaftártungu.

Þorsteinn Einarsson, verzlun., Vík.

Þorst. Þorsteinsson, kaupm., Vík.

Þórður Stefánsson, vinnumaður, Norður-Vík '18.

Rangárvallasýsla.

Arni Ingvarsson, Núpi '17.

Björgvin Vigfússon, sýsulmaður, Efra Hvoli '17.

Einar Jónsson, hreppstjóri, Kálfsstöðum '17.

*Einar Jónsson, Tjörnum undir Eyjafjöllum '17.

Erlendur Guðjónsson, Hamragörðum '17.

Guðmundur Guðfinnsson, læknir, Stórolfshvoli '17.

Ingimundur Benediktsson, Kaldárholti '17.

Ingimundur Jónsson, búfr., Hala '16.

¹⁾ Skilagrein komin fyrir 1917.

- Jakob Lárusson, prestur, Holti '17.
 Jón Guðmundsson, bóndi, Ægis-
 siðu '17.
 Jón Jónsson, bóndi, Sumarliða-
 bæ '16.
 Lestrarfélag Asáhrepps '17.
 *Lestrarfélag Landmanna '17.
 Magnús Kristjánsson, Dranga-
 hlíð '17.
 *Ólafur Finnason, prestur, Kálf-
 holti '17.
 *Sveinn J. Sveinsson, Dalskoti '18.
 *Thorarensen, Grímur, hrepp-
 stjóri, Kirkjubæ '18.
 Thorarensen, Skúli, Móeiðarhvoli,
 '17.
 Tómas Sigurðsson, hreppstjóri,
 Barkarstöðum '17.
 *Ungmennafélagið »Hekla« '17.
 *Vígfus Bergsteinsson, Brúnum
 '17.
 Þorsteinn Benediktsson, prestur,
 Lundi '17.
 Þorst. Jónsson, oddviti, Moldar-
 tungu '17.

Arnessýsla.

- *Agúst Helgason, bóndi, Birt-
 ingaholti '17.
 *Egbert Benediktsson, hreppstj.,
 Laugardælum '17.
 *Gestur Einarsson, bóndi, Hæli
 '15.
 Gísli Jónsson, Stóru Reykjum '16.
 Gísli Petursson, lèknir, Fyrar-
 bakka '17.
 Guðjon Rögnvaldsson, Tjörn í
 Biskupstungum '17.
 *Guðm. Guðmundsson, bóksali,
 Eyrarbakka '17.
 Guðm. Guðmundsson, Efri-Brú '17.
 Guðm. Lýðsson, bóndi, Fjalli á
 Skeiðum '16.
 Halldór Jónsson bókb., Norður-
 koti, Grímsnesi '15.

- Jóhanna Eiríksdóttir, Haga '17.
 *Jónas Halldórsson, hreppstjóri,
 Hrauntúni '17.
 *Jón Sigurðsson, cand. phil.,
 Kallaðarnesi '17.
 *Kjartan Helgas., prestur, Hruna
 '17.
 Lestrarfélag Baldur, Hrang.hv. '17.
 Lestrarfélag Gnúpverja '16.
 Lestrarfélag »Mímir«, Ölfusi '16.
 *Lestrarfélag Stokkeeyrar '16.
 Páll Lýðsson, hreppstjóri, Hlíð í
 Gnúpverjahv. '15.
 Páll Stefánsson, Ásólfst. '16.
 Sigurður Ólafsson, fv. sýslum.,
 Kallaðarnesi '18.
 Sveinn Guðmundsson, járnsm.,
 Eyrarbakka '17.
 Thorsteinsson, Jón, prestur, Þing-
 velli '16.
 Ungmennafélagið »Hvöta«, Gríms-
 nesi '17.
 *Þorsteinn Þórarinnsson, Drumb-
 oddsstöðum '15.
 *Þórður Ólafsson, Ásgarði '16.

Vestmanneyjasýsla.

- Vestmanneyja-umboð.
 (Umboðsm. Jón Sigvatsson, bóks-
 ali)¹⁾.
 Arni Sigfússon, kaupm.
 *Björn Jónsson, kennari.
 Dal, Sita, verzlunarmær.
 Einar Lárusson.
 Finnur Sigmundsson.
 Guðný Guðjónsdóttir.
 *Gunnar Ólafsson, kaupm.
 Jóhann, P. Jósefsson, kaup-
 maður.
 Johnsen, Arni J., verzlunar-
 maður.
 Johnsen, Gísli J., konsúll.
 Johnsen, Lára, J., verzlunar-
 maður.
 Jón Einarsson, kaupfélagastjóri.
 Jón Jónsson, útvegsbóndi.

¹⁾ Skilagrein komin fyrir 1917.

Magnús Stefánsson, sýsluskrifari.
Páll Oddgeirsson, kaupm.
Sigurður Sigurðsson, lyfsali.

Sigurjón Högnason, gagnfr.
Sigurlaug Guðmundsd., húsfri.
*Sýslubókasafn Vestmanneyja.
Þorbjörn Guðjónsson.

B. Í Vesturheimi.

Kanada og Bandaríkin.

Andrews, A. le Roy, Ithaca N. Y. '16.
Cornell University, Library, Ithaca N. Y. '17.
Halldór Hermannsson, bókavörður, Ithaca N. Y. '15.
Hollander, Dr. Lee M., Madison, Wis. '15.
Newberry Library, Chicago '17.
Þorbergur Þorvaldsson, próf. dr., Saskatoon, Saskatchewan '16.

Vesturheims-umboð.

(Umboðsm. J. J. Bildfell, 520 Union Bank, Winnipeg)¹⁾.

Albert Jónsson, Winnipeg.
Arason, W. B., Husawich.
Arni Eggertsson, Winnipeg.
Arni Sveinsson, Glenboro.
Askdal, K. S., Minneota, Minn.
Bandalag Pembínasafnaðar, N. Dak.
Bergmann, Jonas S., Gardar, Pembina.
Bjarnason, J. M., Bi-marhave, Van.
Björnsson, A. J., Deer Horn, Man.
Björnsson, G. B., Minneota, Minn.
Björn Sveinsson, Svold, N. D.
Blöndahl A. J., Wynyard.
Bókasafn Tjaldubúðarsafn, Winnipeg.
Borgfjörð, Th. S., Vancouver.
Cristophersson, Hernit, Brú, Man.
Davidsson, Charles G., St. Paul, Minn.

Eggert Jóhannesson, Winnipeg.
Eggertsson J., Winnipeg.
Egill Erlends-son, Winnipeg.
Einar Gíslason, Gimli.
Einar Sigvaldason, Baldur.
Eyjólfur S. Guðmundsson, Jacoma, Wash.
Friðrik Hallgrímsson, prestur, Baldur, Man.
Geirmundur B. Olgeirsson, Edinburgh, N. D.
Gestur Jóhannesson, Poplar Park.
Gíslason, Anna, Winnipeg.
Gísl Egilsson, Lögberg, Sask., Can.
Goodman, G. G., Wynyard, Sask.
Goodman, Gísl, Winnipeg.
Gould, Chester N., prófessor, Chicago.
Guðmundur Arnason, prestur, Winnipeg.
Guðni Þorsteinsson, Gimli, Man.
Gunnar Sveinsson, Seattle, Wash.
Gunnlaugur Tr. Jónsson, ritstj., Winnipeg.
Guttormur Guttormsson, prestur, Churchbridge.
Guttormsson, Thorst., Winnipeg.
Halldórsson, M. B., dr., Souris, N. Dak.
Henderson, Joh., Winnipeg.
Hjálmar F. Daníelsson, Otto, Man.
Högni Einarsson, Winnipeg.
Icelandic Library »Mímir«, Pembina, N. Dak.
Jakob Guðmundsson, South Hill, Van.
Jóhannes Sigurðsson, Seattle.

¹⁾ Skilagreininir ókomnar fyrir 1914 — og síðan.

Johann O. Björnsson, Wynyard, Sask.
 Jóhann Pálsson, Clarkleigh, Man.
 Johnson, Arthur A., Mozart, Sask.
 Johnson, Baldur, B. A., Langenburg.
 Johnson, Hallgrímur, B. A., Winnipeg.
 Johnson, Kristján, Duluth.
 Johnson, Magnús, Lundar, Man., Can.
 Johnson, St. E., Otto P. O., Man.
 Jón Arnason, B. A., Wynyard
 Jón Einarsson, Winnipeg.
 Jón J. Hallsson, Hólar, Sask.
 Jónas Danielsson, Winnipeg.
 Jónsson, B. B., prestur, Winnipeg.
 Klemens Jónasson, Selkirk.
 Kristinn Þorfinnss., Gardar, N. D.
 Kristinsson, Kr. Fr., Framnes, Man.
 Kristján Sigurðsson, ritstjóri, Winnipeg.
 Kristján Stefánsson, Winnipeg.
 Lestrarfél. Argaliun, Wild Oak, Man.
 Lestrarfél. Dagsbrún, Lundar, Man.
 Lestrarfél. Dagsbrún, Vidir, Man.
 Lestrarfél. Fjólan- Nes, Can.
 Lestrarfél. Fram, Arnes, Man.
 Lestrarfél. Fróðleikshvöt, Arborg.
 Lestrarfél. Gangleri, Gardar.
 Lestrarfél. Gimlé.
 Lestrarfél. Hafstjarnan, Pt. Roberts, Wash.
 Lestrarfél. Harpa, Blaine, Wash.
 Lestrarfél. Herðubreið, Nariows, Man.
 Lestrarfél. Iðunn, Markerville, Alberta.
 Lestrarfél. Ingólfur, Vancouver.
 Lestrarfél. Ísland, Baldur, Man.
 Lestrarfél. Íslendinga í Cypress-aveit, Glenboro.
 Lestrarfél. Íslendinga í Reykjavík, Reykjavík P. O.

Lestrarfél. Leifar, Candahar S.
 Lestrarfél. Mentahvot, Otto, Man.
 Lestrarfél. Mentun, Anthler S.
 Lestrarfél. Mikleyingá, Ækla, Can.
 Lestrarfél. Mímír, Wynyard.
 Lestrarfél. Morgunstjarnan, Hólar.
 Lestrarfél. Skjaldbreið.
 Lestrarfél. Stjarnan, Selkirk, Man.
 Lestrarfél. Tilraunin, Kewatin, Ont.
 Lestrarfél. Verðandi, Mozart, Sask.
 Lestrarfél. Vestri, Seattle, Wash.
 Lestrarfél. Þjóðernið, Winnipeg, Beach.
 Lestrarfél. Þörfin, Kristnes, Sask.
 Lestrarfél. Æskun, Dakota.
 Long, S. M., Winnipeg.
 Magnús Hinrikss., Churchbridge.
 Magnús S., Duluth.
 Markerville, Jón, Atla.
 Mæri, Jon, Svold, N. Dak.
 Norman, Jakob, Leslie, Sask.
 Oddsson, Th., Winnipeg.
 Olson, A. B., Gimli, Man.
 Ólafsson, K. K., prestur, N. Dak.
 Ólafur Kjartansson, Winnipeg.
 Pétur Hjálmsen, prestur, Markerville, Alberta.
 Pétur Ó. Hallgrímsson, Seattle.
 Pétursson, P. V., Ivanhoe.
 Runóliur Marteiusson, Winnipeg.
 Scheving, S. P., Victoria B. C.
 Sigtryggur Jónasson, Arborg.
 Sigurðsson, Job, Mrs., Upham, N. Dak.
 Sigurður Ólafsson, prestur, Baine, Wash.
 Símon Símonarson, Winnipeg.
 Skáftason, M. J., prestur, Winnipeg.
 Sræbjörn Einarsson, Lundar, Man.
 Stefán Guttormsson, Winnipeg.
 Steingrímur Þorláksson, prestur, Selkirk.
 Styrkár Vesteinn Helgason, Leslie, Sask.
 Sveinn Arnason, Seattle, Wash.
 Swanson, Fred., Winnipeg.
 Thorarensen, Ch., Icel. River.

Thordarson, Ch., verksmiðjueigandi, Chicago.
 Thordarson, Thordur, dr., Minnetota, Minn.
 Thorgerirsson, Mart., Akra, N. Dak.
 Thorlacius, B., Ninth, Man.
 Thorsteinsson, Oddur, Icel. River, Man.
 Toronto University Library, Toronto.

Tómas Jónasson, Icel. River, Man.
 University of North Dak.
 Vídal, Sig. J., Hnausar, Man.
 Victor Eyjólfsson, Icel. River, Man.
 Wilhelm Kristjansson, Otto P. O., Man., Can.
 Þorgerður Þórðardóttir, Winnipeg.
 Þorgils Þorgeirsson, Winnipeg.
 Þórður Arnason, Mozart, Sask.
 Þórir Björnsson, Duluth, Minn.

C. Í öðrum löndum.

(Bókasölu-umboð hefir Gyldendalske Boghandel Nordisk Forlag Klareboderne 3, Kaupmannahöfn¹⁾).

Færeyjar.

Dahl, Jakob, cand. theol., kennari, Thorshavn '16.
 Hallur Hallsson, tannlæknir, Þórshöfn.
 Paterson, Joannes, kongsb., Kirkjubæ '16.
 Símun av Skarði, lýðbáskólastj. Fagralíðar-báskóli '16.
 S. P. úr Konoy, kennari, Gøtu '16.
 Thorshavns literære Samfund, Þórshöfn '16.

Danmörk.

*Blöndal, Sigfús, bókavörður, Amagerbrog. 153, Kh. '17.
 Gad, G. E. C., bóksali, Vimmelsk. 32, Kh. '17.
 Gísli Brynjólfsson, læknir, Dannebrogsg. 1, Kh. '17.
 Guðjón Eiríksson, búfr., Vilhelmsdal, Mörköv St. '17.
 Gunnar Gunnarsson, rithöf., Gl. Kongev. 141⁸, Kh. '18.
 Hafsteinn Pétursson, prestur, Fiolstr. 28, Kh. '17.
 Halldór Kristjánsson, stud. med., Kysthosp. Juelsminde, Jylland '17.

Hammerich, M., málaflutningsm., Schlegels Allé 3, Kh. '17.
 Haraldur Sigurðsson, tannlæknir, Österbrog. 60, Kh. '17.
 Jakob Gunnlögsson, stórkaupm., Niel Juelsg., Kh. '17.
 Johansen, J., Landbrugsskolelærer, Ladelund pr. Vejen '17.
 Jónas Lárusson, veitingam., Perssonbg. Restauration, Kh. '17.
 Jón Sveinbjörnsson, kmjr., Paludan Müllersvej 3, Kh. '16.
 Kristján Björnsson, stud. med., Odenseg. 8, Kh. '17.
 Magnús Jochumsson, stud. mag., Ravnsbg. 5 B St. Kh. '16.
 Magnús Magnússon, prestur, Bregninge pr. Ringk. '17.
 Melsted, Bogi Th., mag. art., Ole Suhrg. 18, Kh. '16.
 Möller, J. V., prentari, Hestemöllestr. 5, Kh. '17.
 Nielsen, Chr. Hein, cand. mag., Bergthorag. 1¹ Kh. B. '17.
 Nordal, Sigurður, dr. phil., Vesterbrog. 20, Kh. '17.
 Pétur Bogason, læknir, Faxinge Sanat. pr. Præstö '17.
 Sigurður Sigtryggsson, cand. mag., Viborg '17.

¹⁾ Skilagrein ókomin fyrir 1917.

Sóreyjarskóla bókasafn, Sorö '17.
 Stefan Stefánsson, cand. jur., Villa
 Christineberg, Sölleröd pr.
 Holte '17.
 Sveinbjörn Sveinbjörnsson, yfir-
 kennari, Aarhus '17.
 Tulinus, Thor E., stórkaupm.,
 Gefionsplads 5, Kh. '17.
 Valtýr Guðmundsson, dócent, dr.
 phil., Amagerbrogade 151,
 Kh. '17.

Noregur.

Bugge, Alexander, fv. prófessor,
 dr. phil., Fyresdal, Telemar-
 ken '17.
 Háskólabókasafnið, Kristiania '17.
 Katedralskolens Bibliotek, Kri-
 stiania '17.
 Kolsrud, Oluf, Universitetssti-
 pendiat, Kristiania '17.
 Skásheim, Anders, bókhaldari,
 Bergen '17.
 Stórþingisbókasafnið í Kristjánú
 '17.
 Vísindafélagið í Prándheimi '17.

Svíþjóð.

Göteborgs stadsbibliotek '17.
 Lunds Universitets Nord. Semi-
 narium '17.
 Söderwall, K. F., prófessor, Lund
 '17.
 Zadig, Viggo, cand. phil., Malmö
 '17.

Pyzkaland.

Anderson, Ernst, godsegare, Al-
 lenstein, Preussen '13.
 Blankenstein, M. v., litt. dr.,
 Berlin '13.
 Erkes, Heinrich, kaupm., Köln '16.
 Gotzen, Jos., dr. phil., Köln '13.

Gruner, Max, dr. phil, Berlin '13.
 Herdersche Verlagshandlung, Frei-
 burg im Breisgau, Baden '18.
 Heydenreich, W., dr. phil.,
 Eisenach '13.
 Mayer, E., prof., dr. phil., Würtz-
 burg '15.
 Meissner, R., prófessor, dr. phil.,
 Bonn '15.
 Staatsbibliothek, München '13.
 Stadtbibliothek, Hamburg '13.
 Universitätsbibliothek, Kiel '17.

England.

(Umboðam. The Viking Society,
 Chelsea, London).
 Banks, Mrs. M. M., London '16.
 Gray, John, prestur, St. Peters,
 Falcon ave., Edinburgh '15.
 Hight, Geo. Ainslie, Oxford '16.
 Johnston, A. W., Chelsea, Lon-
 don '16.
 Lúðvík Jónsson, búfr., London '17.
 Olsen, O. T., dr., Grimsby '16.
 Phillpotts, Miss Bertha S., Tun-
 bridge Wells '16.

Holland, Belgía, Frakkland, Austurríki og Rússland.

Austin, C. K., læknir, París '16.
 Cahen, Maurice, agrégé de l' Uni-
 versité, París '16.
 Hoogt, J. M. van der, litt. cand.
 Wageningen, Nederl. '16.
 Jon Svensson, prestur, Feldkirch.
 Stella m., Vorarlberg, Oster-
 reich '17.
 Krijn, Sophie A., Amsterdam '16.
 Lascaronsky, Bas. Greg., próf.,
 Kiew '14.
 de Vries, J. P. M. L., litt. n. doct.,
 Waatergraafsmeer bei Amster-
 dam '16.

Reykjavík 17. júní 1918.

F. h. Matthíasar Þórðarsonar
 bófav. félagsins.

Guðmundur Jónsson.

Leiðréttingar.

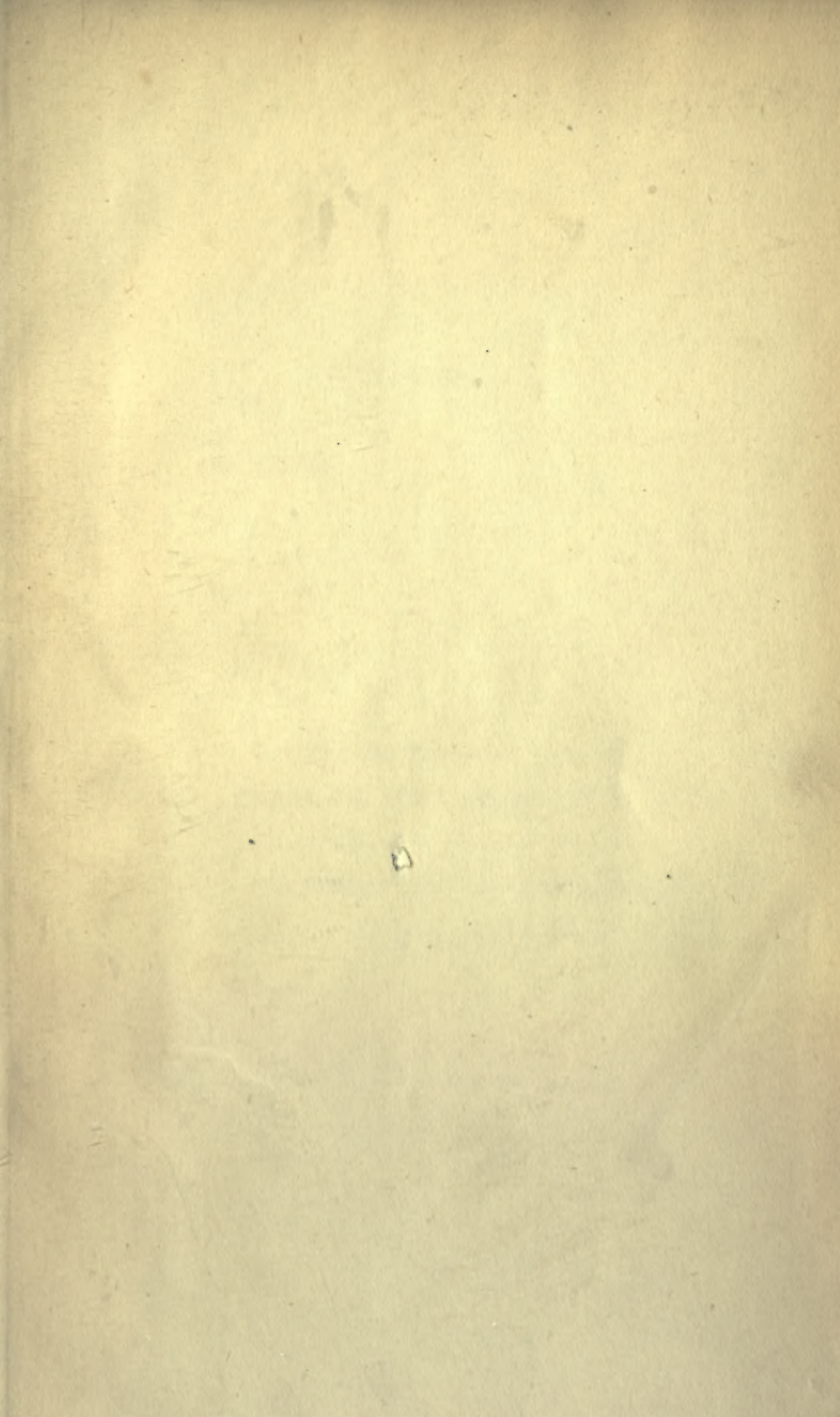
Bls. 90, 17. l. a. o.: „the“ falli burtu.

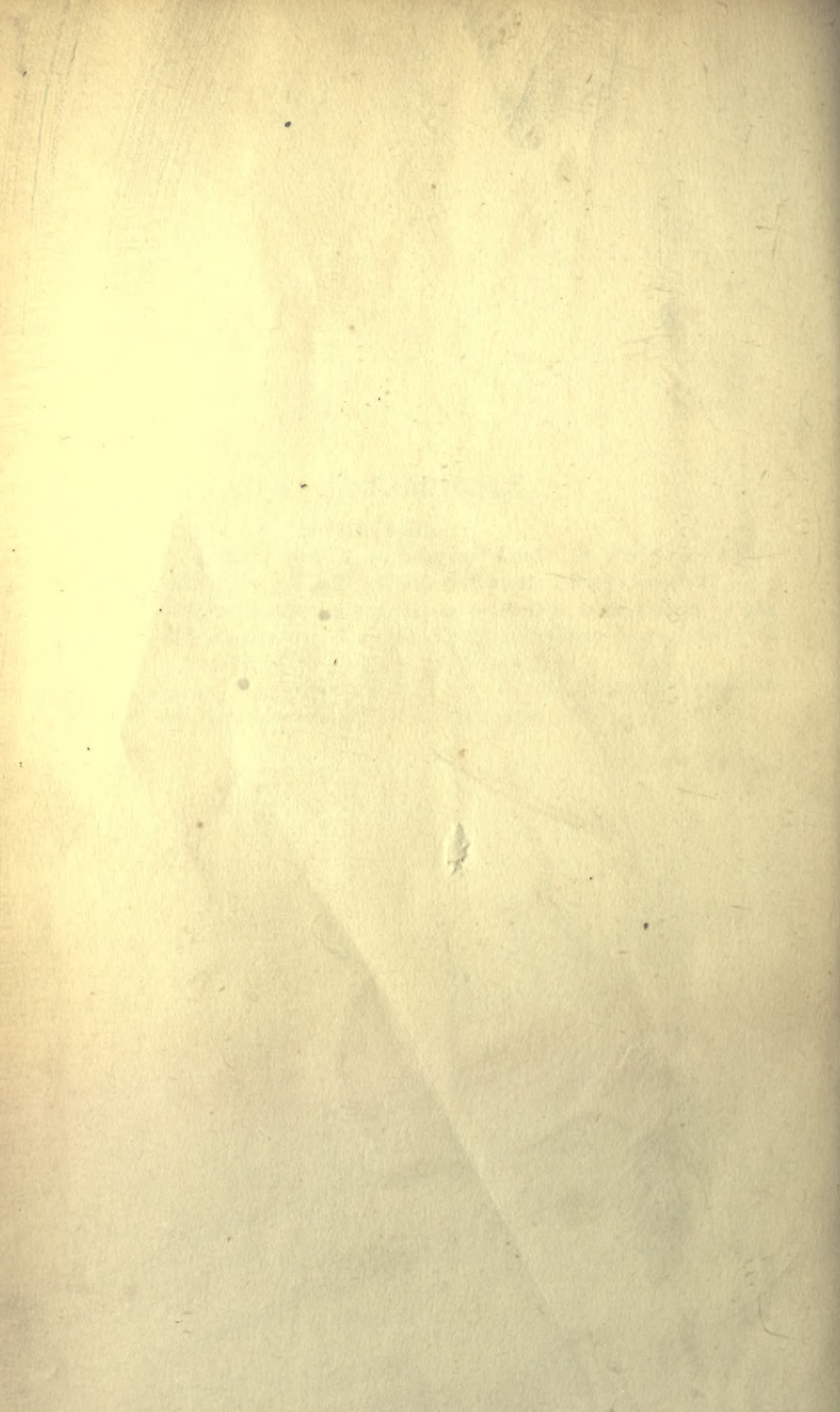
Bls. 95, 8. l. a. n.: Í stað „2. bæjarmaður“ komi: „3. bæjarmaður“.

Bls. 101, 18. l. a. n.: Í stað „2. bæjarm.“ komi: „Bæjarmenn“.

Í framburðarmerkjunum eru fáeinar prentvillur, tveim stöðum — þar sem — á að standa (bls. 97 og 98) og fjórum stöðum — þar sem — á að standa (bls. 99 og 105), en þær villur auðsæjar.

Á bls. 252 hefir brotnað stafur aftan af 5. línu í kvæðinu, eftir að próförk var lesin, sem sé „í“, („eina mannheimum í“).





PT Skirnir
7351
S5
år 90-92

PLEASE DO NOT REMOVE
CARDS OR SLIPS FROM THIS POCKET

UNIVERSITY OF TORONTO LIBRARY
